

THE HARIVAMSA PURĀNAM

श्रीहरिवंशपुराणम्

श्रीहरिवंशपुराणम्
THE HARIVAMŚAPURĀNAM

महापुराणम्

- | | |
|----------------------------|-----------------------------|
| १. ब्रह्ममहापुराणम् | ११. लिंगमहापुराणम् |
| २. पद्ममहापुराणम् | १२. वाराहमहापुराणम् |
| ३. विष्णुमहापुराणम् | १३. स्कन्दमहापुराणम् |
| ४. शिवमहापुराणम् | १४. वामनमहापुराणम् |
| ५. भागवतमहापुराणम् | १५. कूर्ममहापुराणम् |
| ६. नारदीयमहापुराणम् | १६. मत्स्यमहापुराणम् |
| ७. मार्कण्डेयमहापुराणम् | १७. गरुडमहापुराणम् |
| ८. अग्निमहापुराणम् | १८. ब्रह्माण्डमहापुराणम् |
| ९. भविष्यमहापुराणम् | १९. वायुमहापुराणम् |
| १०. ब्रह्मवैवर्तमहापुराणम् | २०. विष्णुधर्मोत्तर पुराणम् |
| वासुकी पुराण :: | देवीभागवत |
| हरिवंश पुराण :: | भृंगोशपुराण |
| | एकाम्रपुराण |

शेनराज ओकुण्णवासेन सम्पादितस्य मुम्बई श्री वकटेश्वरस्टीम मुद्रणालयेन प्रकाशितस्य पुनर्मुद्रण

श्रीहरिवंशपुराणम्

THE HARIVAMŚĀPURĀNAM

दिल्ली विश्वविद्यालयस्य हिन्दू महाविद्यालयस्य डा० राजेन्द्रनाथशर्मा

भूमिका पाठशोधनाभ्यां परिष्कृतम्

नागेश्वर सिंह सम्पादित श्लोकानुक्रमण्या सहितं

PART II



N A G P U B L I S H E R S

11 A/U.A (POST OFFICE BUILDING) JAWAHARNAGAR, DELHI-7.

(This publication has been brought out with the financial assistance from the Government of India, Ministry of Education and Culture)

(If any defect is found in this volume please return the copy per V. P. P. for postage to the Publisher for free exchange.)


© NAG PUBLISHERS

1. 11A/U.A. (Post Office Bldg.) JAWAHARNAGAR, DELHI-7
2. 8A/U.A. 3, JAWAHARNAGAR, DELHI-110007
3. JALALPURMAFI (Chunar, Mirzapur), U.P.

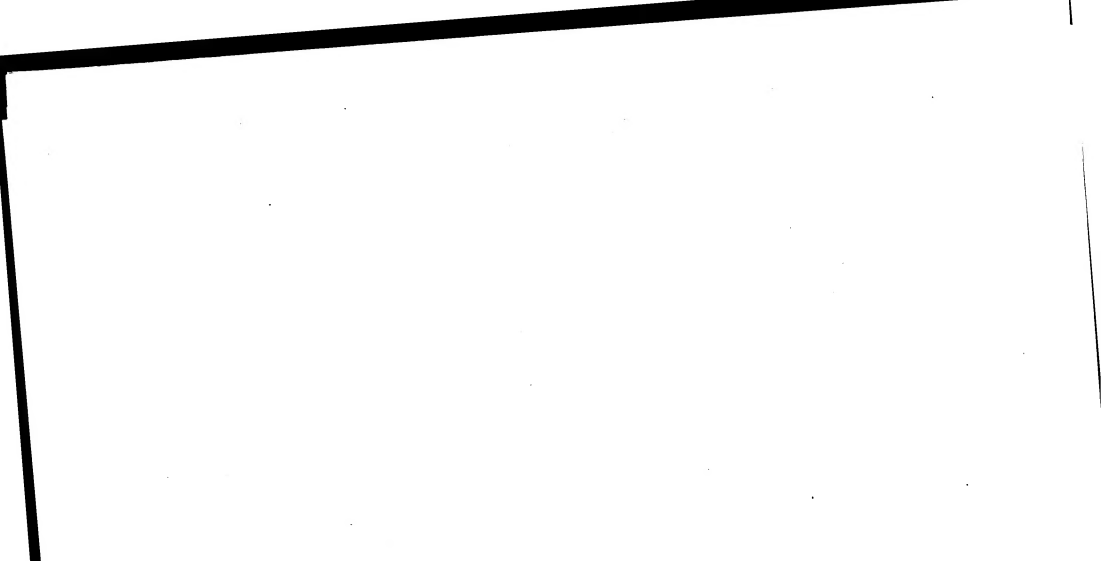
INTRODUCTION, TEXT & VERSE INDEX 1985
PRICE Rs. 133.00 (for 2 Volumes)

(PRINTED IN INDIA)

Published by Nag Sharan Singh for Nag Publishers, Jawahar Nagar, Delhi-7
Text printed at Gian Offset Printers, 308/2, Shahzada Bagh, Dayabasti, Delhi-35
and Verse Index and Introduction at Amar Printing Press, 8/25 Vijay Nagar, Delhi-9.



॥ अथ हरिवंशे भाषाटीकायुतं तृतीयं भविष्यपर्व प्रारभ्यते ॥



श्रीगणेशाय नमः ।

शौनकजी बोले, हे लोमहर्षण

सुत ! जन्मेजयके कितने पुत्र हैं और उनमें महात्मा पाण्डवोंका वंश किसमें प्रतिष्ठित रहा ॥ १ ॥ यह मेरे सुननेकी इच्छा है इस वार्ताके सुननेका मुझे परम कुतूहल है आपके सुखसे मैं सब सुनकर जाननेकी इच्छा करता हूं ॥ २ ॥ सौति बोले, काश्या नाम क्षीमें परीक्षितके पुत्र जन्मेजयके दो पुत्र हुए. राजा चन्द्रापीड और मोक्षमार्गका जाननेवाला सूर्यापीड हुआ ॥ ३ ॥ चन्द्रापीडके उत्तम धनुषधारी सौ पुत्र हुए उनका कुल जानमेजय नामसे

श्रीगोपालकृष्णाय नमः ॥ शौनक उवाच ॥ जनमेजयस्य के पुत्राः पञ्चान्ते लोमहर्षणे ॥ कस्मिन्प्रातिष्ठितो वंशः पाण्डवानां महात्म-
नाम् ॥ १ ॥ एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं परं कौतूहलं हि मे ॥ त्वत्तः कथयतः सर्वं वेदग्रहं तत्परिस्फुटम् ॥ २ ॥ सौतिरुवाच ॥ पारीक्षि-
तस्य काश्यायां द्वौ पुत्रौ संबभूवतुः ॥ चन्द्रापीडश्च नृपतिः सूर्यापीडश्च मोक्षवित् ॥ ३ ॥ चन्द्रापीडस्य पुत्राणां शतमुत्तमधन्वि-
नाम् ॥ जानमेजय इत्येवं क्षात्रं भुवि परिश्रुतम् ॥ ४ ॥ तेषां श्रेष्ठस्तु राजासीत्पुरे वाराणसाह्वये ॥ सत्यकर्णो महाबाहुर्देव्या विपु-
लदक्षिणः ॥ ५ ॥ सत्यकर्णस्य दायादः श्वेतकर्णः प्रतापवान् ॥ अपुत्रः स तु धर्मात्मा प्रविवेश तपोवनम् ॥ ६ ॥ तस्माद्भगता-
द्रर्भं यादवी प्रत्यपद्यत ॥ सुचारोर्दुर्दिता सुभ्रूमांनिनी भ्रातृमालिनी ॥ ७ ॥ स तु जन्मानि गर्भस्य श्वेतकर्णः प्रजेश्वरः ॥ अनागच्छ-
द्रतं पूर्वैर्महाप्रस्थानमच्युतम् ॥ ८ ॥ सा दृष्ट्वा संप्रयान्तं तं मानिनी पृष्ठतोऽन्वियात् ॥ पथे सा सुषुवे सुभूर्वने राजीवलोचनम् ॥ ९ ॥
कुमारं तं परित्यज्य भर्तारं चान्वगच्छत ॥ पतिव्रता महाभागा द्रौपदीव पुरा पतीन् ॥ १० ॥

पृथ्वीमें विख्यात हुआ ॥ ४ ॥ उनमें भेट राजा वाराणसीपुरीमें हुआ. महाबाहु सत्यकर्ण बड़ी दक्षिणाके यज्ञ करनेवाला हुआ ॥ ५ ॥ सत्यकर्णका पुत्र महामतापी श्वेतकर्ण हुआ वह धर्मात्मा अपुत्र होनेसे तपोवनमें प्रविष्ट हुआ ॥ ६ ॥ उस वन जानेवालेके गर्भको यादवीने चारण किया यह सुचारो पुत्री सुन्दरभूयुक्त भ्राताकी हिवकारिणी मानिनी थी ॥ ७ ॥ वह उस गर्भके जन्मसे पहलेही श्वेतकर्ण राजा पूर्वपुरुषोंकी रीतिके अनुसार महाप्रस्थान करता हुआ ॥ ८ ॥ उसको जाता हुआ देख मानिनीजी पीछे पीछे चली मार्गमें उसके कमलओचन कुपारका जन्म हुआ ॥ ९ ॥ उस कुमारको छोड़

कर वह भर्ताके पीछे पीछे चली, वह महाभाग पतिव्रता इस प्रकारसे चली, जैसे द्रौपदी अपने पतिपोंके पीछे गई थी ॥ १० ॥ वह राजकुमार गिरि-
कुंजमें रोने लगा उसके छाया करनेके निमित्त चारों ओरसे मेघ प्रसर हुए ॥ ११ ॥ अविष्ठाके दो पुत्र हुए थे, एक पिप्पलाद और कौशिक इन दोनोंने
वनमें देस छपा कर उस बालकको ग्रहण किया और जलसे प्रक्षालित किया, जिस समय उस बालकके दोनों पार्श्वभाग रुधिरालिप्त शिलापर पड़े
गये ॥ १२ ॥ तौ उसकी पशली श्याम हो गई अर्थात् छागकी समान श्यामवर्ण हो गई और वृद्धिको उसी प्रकार प्राप्त हुई ॥ १३ ॥ इस कारण उन

स तु राजकुमारोऽसौ गिरिकुञ्जे रुरोद ह ॥ छायाय तस्य मेघास्तु प्रादुरासन्समन्ततः ॥ ११ ॥ अविष्ठायाश्च पुत्रौ द्वौ पिप्पलादश्च
कौशिकः ॥ दृष्ट्वा कृपान्वितो गृह्य तं प्रक्षालयतां जलेः ॥ निघृष्टो तस्य तौ पार्श्वौ शिलायां रुधिरप्लुतौ ॥ १२ ॥ अजश्यामो तु
पार्श्वौ तावुभावपि समाहितौ ॥ तथैव तु समारूढौ अजपाश्वस्ततौऽभवत् ॥ १३ ॥ ततोऽजपार्श्व इति तौ चक्राते तस्य नाम ह ॥
स तु वेमकशालायां द्विजाभ्यामभिवर्धितः ॥ १४ ॥ वेमकस्य तु भार्या तमुद्रहत्पुत्रकारणात् ॥ वेमक्याः स तु पुत्रोऽभूद्राक्षणो
सचिवो च तौ ॥ १५ ॥ तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च युगपत्तुल्यजीविनः ॥ स एष पौरवो वंशः पाण्डवानां प्रतिष्ठितः ॥ १६ ॥ श्लोकोऽपि
चात्र गीतोऽयं नाहुषेण ययातिना ॥ जरासंक्रमणे पूर्वं भृशं प्रीतिन धीमता ॥ १७ ॥ आचन्द्रार्कग्रह भूमिर्भवेदपि न संशयः ॥
अपौरवा न तु मही भविष्यति कदाचन ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

दोनोंने उसका नाम आजपार्श्व रखसा उन दोनों ब्राह्मणोंने वेमक नाम ऋषिके आश्रममें उसकी रक्षा कर उसे बड़ाया ॥ १४ ॥ वेमककी भार्याने
उसको अपने पुत्रवत् पालन किया वह वेमकीका पुत्र और वे दोनों ब्राह्मण उसके मंत्री हुए ॥ १५ ॥ उसके पुत्र पौत्र एक साथ जीवनवाले हुए इस
प्रकार यह पौरव वंश पाण्डवोंका प्रतिष्ठित है ॥ १६ ॥ इसमें ययाति नहुष पुत्रने श्लोक गाये हैं जो कि जराके देनेसे परम प्रसन्न हुए थे ॥ १७ ॥ कि
जबतक चन्द्रमा सूर्य ग्रह रिप्त रहेंगे तबतक यह भूमि पुरुवंशियोंके अधिकारमें रहेगी कभी पौरववंशहीन न होगी ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते

स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पंडितज्वालाप्रसादमिश्रकृतभाषायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ शौनकजी बोले, जिस प्रकार व्यासशिष्य वैशंपायनने प्रथम हरि-
 वंशके पर्व कहे हैं; वैसेही आपने हरिवंश और सब पर्व कहे हैं ॥ १ ॥ आपका इतिहाससंयुक्त कथन अमृतकी समान सुखदाई होकर हमारे सब पाप नष्ट
 करता है ॥ २ ॥ सुखश्रवण कथा होनेसे हमारे मनकी प्रसन्नता होती है, हे मृत ! जन्मेजय राजा इस उत्तम आख्यानको सुनकर सर्पसत्रके उपरान्त
 क्या करते हुए ॥ ३ ॥ सौति बोले; जन्मेजय उस आख्यानको श्रवण कर, सर्पसत्रके उपरान्त जो करते हुए सो सुनो ॥ ४ ॥ जब सर्पसत्र समाप्त हो
 शौनक उवाच ॥ उक्तोऽयं हरिवंशस्ते पर्वाणि निखिलानि च ॥ यथा पुरोक्तानि तथा व्यासशिष्येण धर्मिता ॥ १ ॥ तत्कथ्यमानम-
 मितमितिहाससमन्वितम् ॥ प्रीणात्यस्मानमृतवत्सर्वपापविनाशनम् ॥ २ ॥ सुखश्राव्यतया धीर मनो ह्लादयतीव नः ॥ जनमेजयस्तु
 नृपतिः श्रुत्वा चारुख्यानमुत्तमम् ॥ सौते किमकरोत्यश्चात्सर्पसत्रादनन्तरम् ॥ ३ ॥ सौतिरुवाच ॥ जनमेजयस्तु स नृपः श्रुत्वा
 चारुख्यानमुत्तमम् ॥ यदारभत्तदारुणस्ये सर्पसत्रादनन्तरम् ॥ ४ ॥ तस्मिन्सत्रे समाप्तेऽथ राजा पारीक्षितस्तदा ॥ यष्टुं स वाजिमेधेन
 संभारानुपचक्रमे ॥ ५ ॥ ऋत्विक्पुरोहिताचार्यानाह्वयेदमुवाच ह ॥ यक्ष्येऽहं वाजिमेधेन हयसुत्सृज्यतामिति ॥ ६ ॥ ततोऽस्य विज्ञाय
 चिकीर्षितं तदा कृष्णो महात्मा सहसाजगाम ॥ पारीक्षितं द्रष्टुमदानसत्त्वं द्वेपायनः सर्वपरावरज्ञः ॥ ७ ॥ पाराक्षितस्तु नृपतिर्दृष्ट्वा
 तमृषिमागतम् ॥ अर्घ्यपाद्यासनं दत्त्वा पूजयामास शास्त्रतः ॥ ८ ॥ तौ चोपविष्टावभितः सदस्यास्तस्य शौनक ॥ कथा बहुविधा-
 भित्राश्चक्राते वेदसंहिताः ॥ ९ ॥ ततः कथान्ते नृपतिर्नोदयामास तं मुनिम् ॥ पितामहं पाण्डवानामात्मनः प्राप्तिमहम् ॥ १० ॥
 उका तब राजाने अस्वमेध यज्ञ करनेकी इच्छा की ॥ ५ ॥ ऋत्विक् पुरोहित आचार्यको बुलाकर राजाने कहा; मैं अभ्यमेध यज्ञ करूंगा, घोड़ा
 छोड़ना उचित है ॥ ६ ॥ तब इनकी यह चेष्टा देखकर सब परावरके जाननेवाले महात्मा व्यासजी जन्मेजयके देखनेको आये ॥ ७ ॥ जन्मेजय राजाने
 उनको आया देखकर अर्घ्य पाद्य आसन दे शास्त्रद्वारा पूजन किया ॥ ८ ॥ उनके समामें स्थित होनेसे हे शौनक ! वेदसम्बन्धी बहुतसी कथा कहने
 लगे ॥ ९ ॥ कथाके अन्तमें नृपतिने उन मुनिको प्रेरणा की जो कि पाण्डवोंके पितामह और अपने प्रपितामह थे ॥ १० ॥

आपका निर्मित बहुतसे श्रुतिके विस्तारसे युक्त महाभारत सुनकर वह समय निमेषमात्रको समान बीता ॥ ११ ॥ विभूतिका विस्तार करनेवाला सबको यशयुक्त करनेवाला है, हे ब्रह्मन् ! वह आपका निर्मित शंखमें क्षीरकी समान रक्सा है ॥ १२ ॥ स्वर्गसुख और अमृतसे तृप्ति होती है परन्तु इस भारती कथाके श्रवण करनेसे मेरी तृप्ति नहीं होती ॥ १३ ॥ आपको सर्वज्ञ जानकर मैं पूछता हूं, मेरे मतमें कुरूवंशके नाशका कारण राजसूय यज्ञ है ॥ १४ ॥ दुःसह राजोंका ध्वंस इस राजसूयके कारणही कल्पित हुआ है ॥ १५ ॥ हमने सुना है कि, पूर्वकाल सोमने राजसूय यज्ञ किया था उसीके अन्तमें

महाभारतमाख्यानं बह्वर्षं श्रुतिविस्तरम् ॥ निमेषमात्रमपि मे सुखश्रान्त्यतया गतम् ॥ ११ ॥ विभूतिविस्तारकरं सर्वेषां वै यशस्करम् ॥ त्वया सुविहितं ब्रह्मन् शङ्खे क्षीरमिवाहितम् ॥ १२ ॥ अमृतेन तु तृप्तिः स्याद्यथा स्वर्गसुखेन च ॥ तथा तृप्तिं न गच्छामि श्रुत्वेमां भारती कथाम् ॥ १३ ॥ अनुमान्य तु सर्वज्ञं पृच्छामि भगवन्नहम् ॥ हेतुः कुरूणां नाशस्य राजसूयो मतो मम ॥ १४ ॥ दुःसहानां यथा ध्वंसो राजन्यानामुपप्लवे ॥ राजसूयं तथा मन्ये युद्धार्थमुपकल्पितम् ॥ १५ ॥ राजसूयस्तु सोमेन श्रूयते पूर्वमाहृतः ॥ तस्यान्ते सुमहद्युद्धमभवत्तारकामयम् ॥ १६ ॥ आहृतो वरुणेनाय तस्यान्ते सुमहाकृतोः ॥ देवासुरं महायुद्धं सर्वभूतक्षयावहम् ॥ १७ ॥ हरिश्चन्द्रश्च राजर्षिः क्रतुमेनमुपाहरत् ॥ तत्राप्याडीबकं नाम युद्धं क्षत्रियनाशनम् ॥ १८ ॥ ततोऽनन्तरमार्गेण पाण्डवेनातिदुस्तरः ॥ महाभारत आरम्भः संभृतोऽग्निरिव क्रतुः ॥ १९ ॥ तदस्य मूलं युद्धस्य लोकक्षयकरस्य तु ॥ राजसूयो महायज्ञः किमर्थं न निवारितः ॥ २० ॥

तारकामय महासंश्राम हुआ था ॥ १६ ॥ उसके अन्तमें वरुणने महायज्ञ किया था तब सर्वभूतक्षयकारी महान् देवासुरसंश्राम हुआ था ॥ १७ ॥ राजर्षि हरिश्चन्द्रेने यह यज्ञ किया था उस समय आडीबक नाम महाभयंकर क्षत्रियनाशी युद्ध हुआ था, (आडी जलचर पक्षिविशेषरूप वसिष्ठ और बकरूप विश्वामित्र थे, ऋषिरूपसे लज्जाके कारण युद्ध न कर सके, इस कारण इस रूपसे वर्णन किया, इन दोनोंके पक्षपाती राजोंमें संश्राम हुआ) ॥ १८ ॥ इसके उपरान्त पाण्डवोंने इस दुस्तर यज्ञका प्रारंभ किया, इसमें अधिकी समान महाभारतका प्रारंभ हुआ ॥ १९ ॥ सो इस लोकक्षयकारी युद्धका मूल

राजसूय महायज्ञ किस कारण निवारण न किया ॥ २० ॥ राजसूय यज्ञ सर्वांगसहित होना कठिन है. यज्ञांगके मिथ्या प्रणीत होनेमें प्रजाओंका अवश्य नाश होता है ॥ २१ ॥ आपसी सब पूर्वजोंके पितामह हैं. आप अतीत अनागतके स्वामी हमारे आदिकर्ता हो ॥ २२ ॥ आपसे नेता होने-परभी वे बुद्धिमान् नीतिसे किस प्रकार चलायमान हुए. अनाथ अथवा कुशिक्षकही पुरुष अपराध करते हैं ॥ २३ ॥ व्यासजी बोले, तुम्हारे पूर्वपितामह कालानुसारही विपरीतकर्ता हुए थे न उन्होंने मुझसे भविष्य पूछा और बिना पूछे मैं कहता नहीं हूँ ॥ २४ ॥ भविष्यके निवृत्त करनेकी मुझे

राजसूयो ह्यसंहायो यज्ञाङ्गैश्च दुरत्ययेः ॥ मिथ्या प्रणीते यज्ञाङ्गे प्रजानां संक्षयो ध्रुवः ॥ २१ ॥ भवानपि च सर्वेषां पूर्वेषां नः पितामहः ॥ अतीतानागतज्ञश्च नाथश्चादिकरश्च नः ॥ २२ ॥ ते कथं भवता नेत्रा बुद्धिमन्तश्च्युता नयात् ॥ अनाथा ह्यपराद्धचन्ते कुनेतारश्च मानवाः ॥ २३ ॥ व्यास उवाच ॥ कालेन विपरीतास्ते तव पूर्वपितामहाः ॥ न मां भविष्यं पृच्छन्ति न चापृष्टोऽब्रवीम्यहम् ॥ २४ ॥ सामर्थ्यं च न पश्यामि भविष्यस्य निवर्तने ॥ परिहर्तुं न शक्या हि कालेन विदिता गतिः ॥ २५ ॥ त्वया त्विदमहं पृष्टो वक्ष्याम्यामन्तु भावि यत् ॥ अतश्च बल्वान्कालः श्रुत्वापि न कारिष्यसि ॥ २६ ॥ न संरम्भात्र चारम्भात्र वै स्थास्यसि पौरुषे ॥ लेखा हि काललिखिताः सर्वया दुरतिक्रमाः ॥ २७ ॥ अश्वमेधः ऋतुः श्रेष्ठः क्षत्रियाणां परिश्रुतः ॥ तेन भावेन ते यज्ञं वासवो धर्षयिष्यति ॥ २८ ॥ यदि तच्छक्यते राजन्परिहर्तुं कथंचन ॥ देवं पुरुषकारेण मा यजेथाश्च तं ऋतुम् ॥ २९ ॥

सामर्थ्य नहीं है. कालकी विधान की हुई गतिको कोई नष्ट नहीं कर सकता है ॥ २५ ॥ अब तुमने मुझसे पूछा है इस कारण मैं भावि अर्थको कहना हूँ. इससे काल बलवान् है सुनकरभी कोई नहीं मेट सकता ॥ २६ ॥ जय आरंभ उत्साह पुरुषार्थभी कोई कालकी गतिको मेट नहीं सकता. कालकी गति दुरतिक्रम है ॥ २७ ॥ क्षत्रियोंके निमित्त अश्वमेध सर्वश्रेष्ठ यज्ञ कहा है. इसी भावसे तुम्हारे यज्ञको इन्द्र धर्षित करेगा ॥ २८ ॥ हे राजन् ! जो तुम उसे किसी प्रकार परिहरण करनेको समर्थ हो जो देवको पुरुषकारसे मेटनेकी इच्छा करो तो इस यज्ञको मत यज्ञ न करो ॥ २९ ॥

इन्द्र वा तुम्हारे उपाध्यायगणोंका इसमें अपराध नहीं है न तुम यजमानका अपराध है. कालही दुरतिक्रम है ॥ ३० ॥ उस परमेष्ठी कालकीही यह संस्था की हुई है यह प्रजासर्ग युगक्षयमें यथेष्ट गतिको प्राप्त होगा ॥ ३१ ॥ ब्राह्मणभी इसी प्रकार यज्ञके फलके बेचनेवाले होंगे. यह त्रिलोकी चराचर कालकेही आधीन जानो ॥ ३२ ॥ अश्वमेधकी निवृत्तिमें क्या निमित्त होगा उसे सुनकर मैं इसको परिहार करूंगा. यदि आप कहना उचित समझो तो इसे कहिये ॥ ३३ ॥ व्यासजी बोले, हे प्रभो ! इसमें ब्रह्मकोपही निमित्त होगा. सो इसके परिहारका यत्न करो तुम्हारा कल्याण

न चापराधः शक्रस्य नोपाध्यायगणस्य ते ॥ तव वा यजमानस्य कालोऽत्र दुरतिक्रमः ॥ ३० ॥ तस्य संस्थाकृतमिदं कालस्य परमेष्ठिनः ॥ यथादृष्टं प्रजासर्गं गमिष्यति युगक्षये ॥ ३१ ॥ तथा यज्ञफलानां च विक्रेतारो द्विजातयः ॥ तत्प्रणयेन निबोधस्व त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ ३२ ॥ जनमेजय उवाच ॥ निवृत्तावश्वमेधस्य किं निमित्तं भविष्यति ॥ श्रुत्वा परिहरिष्यामि भगवन्वादि मन्यसे ॥ ३३ ॥ व्यास उवाच ॥ निमित्तं भविता तत्र ब्रह्मलोपकृतं प्रभो ॥ यतेथाः परिहर्तुं त्वमित्येतद्भद्रमस्तु ते ॥ ३४ ॥ त्वया वृत्तं कृतं चैव वाजिमेघं परंतप ॥ क्षत्रिया नाहरिष्यन्ति यावद्भूमिर्धरिष्यति ॥ ३५ ॥ जनमेजय उवाच ॥ निवृत्तावश्वमेधस्य ब्रह्मशापाग्नि तेजसा ॥ अहं निमित्तमिति मे भयं तीव्रं तु जायते ॥ ३६ ॥ कथं ह्यकीर्त्या युज्येत सुकृती मद्भिधो जनः ॥ लोकानुत्सहते गन्तुं खं सपाश इव द्विजः ॥ ३७ ॥ यथा ह्यनागतमिदं दृष्टमत्र प्रणाशनम् ॥ यद्यस्ति पुनरावृत्तिर्यज्ञस्याश्वासयस्व माम् ॥ ३८ ॥

हो ॥ ३४ ॥ हे परंतप ! यह तुम्हारा प्रवृत्त किया अश्वमेध पृथ्वीके सम्पूर्ण क्षत्रियोंका हर्ता होगा. अर्थात् तुम्हारे शिवाय फिर और कोई पृथ्वी-पर आगे अश्वमेध यज्ञ न करेगा ॥ ३५ ॥ जनमेजय बोले, अश्वमेधकी निवृत्तिमें ब्राह्मण शापरूप अग्निके तेजमें मैं निमित्त हूं. इसका मुझको महा-भय उपजता है ॥ ३६ ॥ मुझसरीखा सुकृती मनुष्य किस प्रकार अकीर्ति कर कार्यमें प्रवृत्त हो उत्तम लोकमें जा सकता है. जिस प्रकार पाशबैधा पक्षी आकाशमें नहीं उड़ सकता ॥ ३७ ॥ और जो इसमें अनागत दीखता है अर्थात् जिस प्रकार इसमें नष्टता देखी है. फिर इस यज्ञका प्रारंभ

किस प्रकार किया जायगा इस बातसे मुझको आश्वासन दीजिये ॥ ३८ ॥ व्यासजी बोले; उसंहार किया यह अश्वमेध देवता और ब्राह्मणोंमें ज्ञानरूपसे स्थित होगा, जिस प्रकार तेजसे व्याहत तेज अग्निमें स्थित होता है ॥ ३९ ॥ पृथ्वीके खोदनेसे कोई उद्भिज्ज कश्यपगोत्र सेनापति होगा, वह कलियुगमें फिर अश्वमेधको पूरा करेगा ॥ ४० ॥ उस युगमें उसके कुलमें उपजा पुरुष राजसूय यज्ञ करेगा, हे राजेन्द्र ! वह प्रलयकाल श्वेत-वहके उत्पातकी समान हरणकर्ता होगा ॥ ४१ ॥ और वह बळके अनुसार किया करनेवाले मनुष्योंको फल देगा और कंबियोंके छिपाये हुए युगा-

व्यास उवाच ॥ उपात्तयज्ञो देवेषु ब्राह्मणेषूपपत्स्यते ॥ तेजसा व्याहतं तेजस्तेजस्येवावतिष्ठते ॥ ३९ ॥ औद्भिज्जो भविता कश्चित्सेनानीः काश्यपो द्विजः ॥ अश्वमेधं कलियुगे पुनः प्रत्याहरिष्यति ॥ ४० ॥ तद्युगे तत्कुलीनश्च राजसूयमपि क्रतुम् ॥ आहरिष्यति राजेन्द्र श्वेतग्रहमिवान्तकः ॥ ४१ ॥ यथाबलं मनुष्याणां कर्तृणां दास्यते फलम् ॥ युगान्तद्वारमृषिभिः संवृतं विचरिष्यति ॥ ४२ ॥ तदाप्रभृति हास्यन्ति नृणां प्राणाः पुराकृतीः ॥ न निर्वर्तिष्यते लोके वृत्तान्तावतनेष्विह ॥ ४३ ॥ तदा सूक्ष्मो महोदको दुस्तरो दानमूलवान् ॥ चानुराश्रम्यशायिलो धर्मः प्रविचलिष्यति ॥ ४४ ॥ तदा ब्रह्मेण तपसा सिद्धिं प्राप्स्यन्ति मानवाः ॥ धन्या धर्मं चरिष्यन्ति युगान्ते जनमेजय ॥ ४५ ॥ इति श्रीमद्भारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ जनमेजय उवाच ॥ आसन्नं विप्रकृष्टं वा यदि कालं न विद्महे ॥ तस्माद्वापरसंविद्धं युगान्तं स्पृष्ट्वाम्यहम् ॥ १ ॥

न्तद्वारमें विचरण करेगा ॥ ४२ ॥ उस समयसे लेकर मनुष्योंकी इन्द्रिय पुराकृत शिष्टाचारोंके पूर्ववृत्तान्तोंको त्यागन कर देगा, परन्तु वाताओंके आवर्त संसार निवृत्त नहीं होगा ॥ ४३ ॥ तब सूक्ष्म अतितेजवान् दुस्तर दानमूलवाला चारों आश्रमोंका धर्म शिथिल हो जायगा कुछचिद प्रकाशित होगा ॥ ४४ ॥ उस समय मनुष्य थोड़ेही तपसे सिद्धिको प्राप्त होंगे, हे जनमेजय ! युगान्तमें जो धर्मचरण करेंगे वे बड़े धन्य होंगे ॥ ४५ ॥ इति श्रीमद्भारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ जनमेजय बोले; यदि हम आसन्न और विप्रकृष्ट कालको नहीं

जानते हैं आगेका समय महाअधर्मयुग होगा तौ हम दापर सम्बद्ध कलिके सुननेकी इच्छा करते हैं ॥ १ ॥ इस धर्म तृष्णासे हम उस कालको प्राप्त हुए हैं इस कारण अल्पकर्म करके सुखपूर्वक परम धर्मको प्राप्त होवेंगे ॥ २ ॥ शौनक बोले; त्रास और उद्वेग करनेवाला युगांत प्राप्त हुआ है. हे धर्मज्ञ ! प्रणष्ट हुए धर्मको निमित्तद्वारा आप हमसे कहिये ॥ ३ ॥ सौति बोले; इस प्रकार भविष्यकी गति तत्त्वसे चिन्तन करते हुए युगान्तके धर्मोंको भगवान् कहने लगे ॥ ४ ॥ व्यासजी बोले प्रजाकी रक्षा करनेसे रहित बलिभाग ग्रहण करनेवाले अरि रक्षामें निपुण राजा युगान्तमें उत्पन्न

प्राप्ता वयं तु तत्कालमनया धर्मतृष्णया ॥ आदद्यात्परमं धर्मं सुखमल्पेन कर्मणा ॥ २ ॥ शौनक उवाच ॥ त्रासमुद्वेगकरणं युगान्तं समुपस्थितम् ॥ प्रणष्टधर्मं धर्मज्ञ निमित्तेर्वक्तुमर्हसि ॥ ३ ॥ सौतिरुवाच ॥ पृष्ट एवं भविष्यस्य गतिं तत्त्वेन चिन्तयन् ॥ युगान्ते सर्वभूतानां भगवानब्रवीत्तदा ॥ ४ ॥ व्यास उवाच ॥ अरक्षितारो हतारो बलिभागस्य पार्थिवाः ॥ युगान्ते प्रभविष्यन्ति स्वरक्षणपरायणाः ॥ ५ ॥ अक्षत्रियाश्च राजानो विप्राः शूद्रोपजीविनः ॥ शूद्राश्च ब्राह्मणाचारो भविष्यन्ति युगक्षये ॥ ६ ॥ काण्डे स्पृष्टाः श्रोत्रियाश्च निष्क्रियाणि हवींष्यथ ॥ एकपत्तयामशिष्यन्ति युगान्ते जनमेजय ॥ ७ ॥ शिल्पवन्तोऽनृतपरा नरा मद्यामिषप्रियाः ॥ मित्रभार्या भजिष्यन्ति युगान्ते जनमेजय ॥ ८ ॥ राजवृत्तिस्थिताश्चोरा राजानश्चोरशीलिनः ॥ भृत्याश्चानिर्दिष्टभुजो भविष्यन्ति युगक्षये ॥ ९ ॥ धनानि श्लाघनीयानि सतां वृत्तमपूजितम् ॥ अकुत्सना च पतिते भविष्यति युगक्षये ॥ १० ॥

होंगे ॥ ५ ॥ राजा क्षत्रियवंशहीन और ब्राह्मण शूद्रोपजीवी होंगे और शूद्र कलियुगमें ब्राह्मणोंके आचारवाले होंगे ॥ ६ ॥ श्रोत्रिय ब्राह्मण बाणधारी होंगे. हवि पंचयज्ञहीन होंगे. हे जनमेजय ! कलियुगमें सब एक पंक्तिमें बैठकर भोजन करेंगे ॥ ७ ॥ कारीगरोंमें युक्त असत्यभाषी मद्य आमिष प्रिय मनुष्य मित्रकी प्रार्थनासे भोग करनेवाले मनुष्य कलियुगमें होंगे ॥ ८ ॥ चोर राजवृत्तिमें स्थित और राजा चोरोंसे हित करनेवाले होंगे. तथा युगक्षयमें भृत्य स्वामीका द्रव्य चुरानेवाले होंगे ॥ ९ ॥ धनकी श्लाघा होनी स्तुत्योंके आचरण कोई न करेगा तथा कोई

पतित होना तथापि युगक्षयमें उसकी मित्रता न होगी ॥ १० ॥ धर्मधर्मके स्वरूपबोधसे रहित संन्यासी मुक्तकेश विवशा परस्पर मिलकर प्रजा उत्पन्न करेगी तथा दूसरे प्राणी सोलह वर्षसे पहलेही सन्तान उत्पन्न करेंगे ॥ ११ ॥ सब प्राणी अन्न बेचेंगे ब्राह्मण वेदके बेचनेवाले होंगे तथा सौ भग बेचनेवाली कलियुगमें होंगी ॥ १२ ॥ सबही ब्रह्मज्ञानी और सबही वाजसनेयि शास्त्रावाले होंगे कारण कि और शास्त्राओंका छाप हो जायगा और कलियुगमें शूद्र 'भो भगवन्' आदि शब्दोंके उच्चारण करनेवाले होंगे ॥ १३ ॥ ब्राह्मण तप और यज्ञके बेचनेवाले होंगे, युगक्षयमें विपरीत कर्तु

प्रणष्टचेतना मर्त्या मुक्तकेशा विचूलिनः ॥ ऊनषोडशवर्षांश्च प्रजास्यन्ति नराः सदा ॥ ११ ॥ अट्टशूला जनपदाः शिवशूलाश्चतुष्पयाः ॥ प्रमदाः केशशूलाश्च भविष्यन्ति युगक्षये ॥ १२ ॥ सर्वे ब्रह्म वादिष्यन्ति सर्वे वाजसनेयिनः ॥ शूद्रा भोषादिनश्चैव भविष्यन्ति युगक्षये ॥ १३ ॥ तपोयज्ञफलानां च विक्रेतारो द्विजातयः ॥ ऋतवश्च भविष्यन्ति विपरीता युगक्षये ॥ १४ ॥ शुक्रदन्ता जिताक्षाश्च मुण्डाः काषायवाससः ॥ शूद्रा धर्मं चरिष्यन्ति शाक्यबुद्धोपजीविनः ॥ १५ ॥ श्वापदप्रचुरत्वं च गवां चैव परिक्षयः ॥ स्वादूनां विनिवृत्तिश्च विद्यादन्तगते युगे ॥ १६ ॥ अन्त्या मध्ये निवत्स्यन्ति मध्याश्चान्तनिवासीनः ॥ यथानिम्नं प्रजाः सर्वा गमिष्यन्ति युगक्षये ॥ १७ ॥ तथा द्विहायना दम्यास्तथा पल्वलकर्षकाः ॥ चित्रवर्षी च पर्जन्यो युगे क्षीणे भविष्यति ॥ १८ ॥ सर्वे चौरकुले जाताश्चोरयानाः परस्परम् ॥ स्वल्पेनाभ्या भविष्यन्ति यत्किञ्चित्प्राप्य दुर्गताः ॥ १९ ॥

होंगी ॥ १४ ॥ श्वेत दांत मूक्षमदृष्टिवाले मुंडी काषाय वस्त्र पहरे शाक्यमतकी उपजीविका करनेवाले शूद्र धर्मको करेंगे ॥ १५ ॥ हिंस्र जीव अधिक होंगे गौओंका क्षय होगा और युगान्तमें स्वादुरसोंकी हीनता होगी ॥ १६ ॥ अन्त्यजाति म्लेच्छादि मध्य कुरु पांचालादि देशोंमें निवास करेगी और मध्यनिवासी अंत्यमें जा वसेंगे युगक्षयमें प्रजा अधोमार्गकोही प्राप्त होती जायगी ॥ १७ ॥ किसान दो वर्षके बल्लोंको नाथ ढालेंगे तथा वषिया करेंगे तथा युगक्षयमें मेघ कहीं वर्षेंगे नहीं वर्षेंगे ॥ १८ ॥ चोरोंके कुलमें जन्मते हुए सब चोरीही परस्पर करेंगे, थोड़ाही कुछ प्राप्त करनेसे दरिद्र अपनेको धनाढ्य

समझेंगे ॥ १९ ॥ युगान्तमें मनुष्य धर्म नहीं करेंगे, पृथ्वी ऊपर अधिक और चोरोसे बागं आवृत होंगे ॥ २० ॥ कलियुगमें सब वाणिज्य करेंगे पिताके दिये हुए द्रव्यका पुत्र विभाग करेंगे और लाजसे झूठे विरोध कर उसक हरणमें प्रवृत्त होंगे ॥ २१ ॥ सुकुमारता रूपलावण्यताके क्षय होनेमें स्त्रीजन कलियुगमें केशमात्रसे अलंकृत होगी ॥ २२ ॥ निर्विहारभूत गृहस्थको कलियुगमें स्त्रीके सिवाय कोई वस्तु प्रिय न होगी ॥ २३ ॥ स्त्री कुशाल और वृथारूपसे युक्त होगी पुरुष थोड़े और स्त्रियाँ बहुत होंगी ॥ २४ ॥ लोक परस्पर बहुत मांगनेवाले होंगे वर्णान्तरोंसे विना विचार दान ले लेंगे ॥ २५ ॥

न ते धर्मं करिष्यन्ति मानवा निर्गते युगे ॥ ऊषाकबहुला भूमिः पन्थानस्तस्करावृताः ॥ २० ॥ सर्वे वाणिज्यकाश्चैव भविष्यन्ति कलौ युगे ॥ पितृदत्तानि देयानि विभजन्ते सुतास्तदा ॥ हरणाय प्रपत्स्यन्ते लोभानृतविरोधिताः ॥ २१ ॥ सौकुमार्यं तथा रूपे स्त्रे चोपक्षयं गते ॥ भविष्यन्ति युगान्ते च नार्यः केशैरलंकृताः ॥ २२ ॥ निर्विहारस्य भूतस्य गृहस्थस्य भविष्यति ॥ युगान्ते समनुप्राप्ते नान्या भार्यासमा गतिः ॥ २३ ॥ कुशीलनार्यभूयिष्ठं वृथारूपसमान्वितम् ॥ पुरुषालपं बहुस्त्रीकं तद्युगान्तस्य लक्षणम् ॥ २४ ॥ बहुयाचनको लोको न दास्यति परस्परम् ॥ अविचार्यं ग्रहीष्यन्ति दानं वर्णान्तरात्तथा ॥ २५ ॥ राजचौराग्निदण्डातों जनः क्षयमुपेक्ष्यति ॥ सस्यनिष्पत्तिरफला तरुणा वृद्धशीलिनः ॥ इहया सुखिनो लोका भविष्यन्ति युगक्षये ॥ २६ ॥ वर्षासु वाताः परुषा नीचाः शर्करावर्षिणः ॥ संदिग्धः परलोकश्च भविष्यति युगक्षये ॥ २७ ॥ आत्मानश्च दुराचारा ब्रह्मदूषणतत्पराः ॥ आत्मानं बहु मन्यन्ते मन्युरेवाभ्ययाद्विजान् ॥ २८ ॥

राजा चोर अग्नि और दंडसे पीड़ित होकर प्रजा व्याकुल हो जायगी, शस्य सम्पत्ति निष्फल और तरुण वृद्धोंकी समान कार्य करेंगे, युगक्षयमें प्रजा मन-सेही अपनेको सुखी मानेगी ॥ २६ ॥ वर्षामें तीक्ष्ण पवन चलेगी, नीच और शर्करावर्षी होंगे, युगक्षयमें परलोककामी संदेह होगा ॥ २७ ॥ स्वयं दुराचारी स्वयं ब्रह्मदूषण तत्पर अपनेको बहुत माननेवाले ब्राह्मण महाकोपी होंगे ॥ २८ ॥

राजाभी धनधान्योपजीवी वैश्याचारसे जीनेवाले होंगे. युगके अन्तमें इस प्रकार ब्राह्मण होंगे ॥ २९ ॥ विनाशके कारण परस्पर शपथ करने लगेगे. ऋण लेने देनेमें बड़ी अविनय होगी ॥ ३० ॥ प्रसन्नता फलरहित और क्रोध सफल होगा. दूधकी स्थितिके निमित्त बकरीपोंको दूधके निमित्त पालेंगे ॥ ३१ ॥ अशास्त्रीय विद्वान् कहावेंगे. ऐसा उनका स्वभावही होगा और वे पंडितमानी नीतिको अप्रमाण कहेंगे ॥ ३२ ॥ युगक्षयमें शास्त्रोक्तके अपवक्ता होंगे. वृद्धोंकी सेवा किये बिना सब अपनेको सर्वशास्त्रका ज्ञाता कहेंगे ॥ ३३ ॥ युगान्तमें कोई कवितारहित नहीं होगा; वैश्याचाराश्च राजन्या धनधान्योपजीविनः ॥ युगापक्रमणे सर्वे भविष्यन्ति द्विजातयः ॥ २९ ॥ अप्रवृत्ताः प्रपत्स्यन्ते समयाः शपथास्तथा ॥ ऋणं सविनयभ्रंशं युगे क्षीणे भविष्यति ॥ ३० ॥ भविष्यत्यफलो हर्षः क्रोधश्च सफलो नृणाम् ॥ अजाश्च शोपरोत्स्यन्ते पयसोऽर्थे युगक्षये ॥ ३१ ॥ अशास्त्रविदुषां पुंतामेवमेव स्वभावतः ॥ अप्रमाणं वदिष्यन्ति नीतिं पण्डितमानिनः ॥ ३२ ॥ शास्त्रोक्तस्याप्रवक्तारो भविष्यन्ति युगक्षये ॥ सर्वे सर्वं हि जानन्ति वृद्धाननुपसेव्य वै ॥ ३३ ॥ न कश्चिदकविर्नाम युगान्ते समुपस्थिते ॥ नक्षत्राणि नियोक्ष्यन्ति विकर्मस्था द्विजातयः ॥ चौरप्रायाश्च राजानो युगान्ते पशुं पस्थिते ॥ ३४ ॥ कुण्डा वृषा नैकृतिकाः सुरापा ब्रह्मवादिनः ॥ अश्वमेधेन यक्ष्यन्ति युगान्ते जनमेजय ॥ ३५ ॥ अयाज्यान्याजयिष्यन्ति तथाभक्ष्यस्य भक्षिणः ॥ ब्राह्मणा धनतृष्णार्ता युगान्ते समुपस्थिते ॥ ३६ ॥ भोशब्दमभिधास्यन्ति न च कश्चित्पठिष्यति ॥ एकशब्दास्तथा नार्यो गवेर्धुक् पिनद्धकाः ॥ ३७ ॥ नक्षत्राणि वियोगीनि विपरीता दिशस्तथा ॥ संध्यारागोऽथ दिग्दाहो भविष्यत्यवरे युगे ॥ ३८ ॥ विकर्ममें स्थित ब्राह्मण नक्षत्र गिनकर आजीविका करेंगे और युगान्तमें राजा प्रायता करके चोर हो जायेंगे ॥ ३४ ॥ जीवितरति होनेसे जारसे उत्पन्न पुत्र कुंड वृष नैकृत सुरापी ब्रह्मवाद करता होंगे. हे जन्मेजय ! यह अनधिकारी युगान्तमें अश्वमेध करेंगे ॥ ३५ ॥ अयाजोंको यज्ञ करोंके और अभक्ष्यका भक्षण करेंगे युगान्तमें ब्राह्मण तृष्णासे आतं हो जायेंगे ॥ ३६ ॥ कोई विद्या नहीं पढ़ेंगे. परन्तु परस्पर भोशब्द उच्चारण करेंगे. गैवे-धुक तथा चोटली धारण करनेवाली स्त्री होंगी ॥ ३७ ॥ नक्षत्रोंके वर्ण बदल जायेंगे. शास्त्ररहित गति होगी संध्या समय लाली और दिग्दाह युग-

ह.व.

॥ ६ ॥

क्षयमें होगा ॥ ३८ ॥ पिताओंको पुत्र और बहुएं सासोंको कार्यमें नियुक्त करेंगी नीच जातिकी स्त्रियोंसे सब वर्ण भोग करेंगे ॥ ३९ ॥ शिष्य गुरुओंको बाणीरूपी बाणसे जर्जरित करेंगे और प्रमत्त हो पुरुष स्त्रियोंके भुत्सोंमें भोग करेंगे ॥ ४० ॥ बलि वैश्वदेव किये विनाही मनुष्य भोजन करेंगे भिक्षाबलिको विना दिये स्वयं पुरुष भोजन करेंगे ॥ ४१ ॥ सोते हुए पुरुषोंको त्याग स्त्री भोगार्थ अन्यपुरुषोंके पास जायगी और पुरुष सोई स्त्रियोंको त्याग परस्त्रियोंके निकट जायगे ॥ ४२ ॥ सब मनुष्य व्याधित और शूद्रयुक्त होंगे तथा परस्पर बुराई करनेवाले होंगे, युगके क्षीण होनेमें कोई कृति

पितृपुत्रा निषोक्ष्यन्ति वध्वः श्वश्रूश्च कर्मसु ॥ वियोनिषु चरिष्यन्ति प्रमदासु नरास्तदा ॥ ३९ ॥ वाक्शरैस्तर्जयिष्यन्ति गुरुन् शिष्यास्तथैव च ॥ मुखेषु च प्रयोक्ष्यन्ति प्रमत्ताश्च नरास्तदा ॥ ४० ॥ अकृताग्राणि भोक्ष्यन्ति नराश्चैवाग्निहोत्रिणः ॥ भिक्षां बलिमदत्त्वा च भोक्ष्यन्ति पुरुषाः स्वयम् ॥ ४१ ॥ पतीन्सुप्तान्वञ्चित्वा गमिष्यन्ति स्त्रियोऽन्यतः ॥ पुरुषाश्च प्रसुप्तासु भार्यासु च परस्त्रियम् ॥ ४२ ॥ नाव्याधितो नाप्यरुजो जनः सर्वोऽभ्यसूयकः ॥ न कृतिप्रतिकर्ता च काले क्षीणे भविष्यति ॥ ४३ ॥ इति श्रीम० भवि० तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ जनमेजय उवाच ॥ एवं विलुलिते लोके मनुष्याः केन पालिताः ॥ निवर्त्तयन्ति किमाचाराः किमाहारविहारिणः ॥ १ ॥ किं कर्माणः किमीहन्तः किंप्रमाणः किमायुषः ॥ कां च काष्ठां समासाद्य प्रपत्स्यन्ति कृतं युगम् ॥ २ ॥ व्यास उवाच ॥ अत ऊर्ध्वं च्युते धर्मे गुणहीनाः प्रजास्ततः ॥ शीलव्यसनमासाद्य प्राप्स्यन्ते हासमायुषः ॥ ३ ॥ आयुर्हान्या बलमलानिर्बलमलान्या विवर्णता ॥ वैवर्ण्याद्व्याधिसंपीडा निर्वेदो व्याधिपीडनात् ॥ ४ ॥

और प्रतिकर्ता नहीं होगा ॥ ४३ ॥ इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ ७३ ॥ जनमेजय बोले; जब इस प्रकार लोक लुलित होंगे तब मनुष्य किसके द्वारा पालित होंगे तब किस आचार और आहार विहारसे युक्त होंगे ॥ १ ॥ क्या कर्मवाले किस चेष्टावाले, किस प्रमाण और किस अवस्थाके मनुष्य होंगे, किस दशाको प्राप्त होकर वे सब युगको प्राप्त होंगे ॥ २ ॥ व्यासजी बोले धर्महीन होनेसे सब प्रजा गुणहीन हो जायगी, शीलके व्यसनको प्राप्त होकर आयुके हासको प्राप्त होंगे ॥ ३ ॥ आयुकी हीनता होनेसे बलकी हानि और

भा. टी.

प. ३ अ. ४

॥ ६ ॥

बलहानि होनेसे विवर्णता, विवर्णतासे व्याधिपीडा और व्याधिपीडासे निर्वद होता है ॥ ४ ॥ निर्वदसे आत्मसंबोध, संबोधसे धर्मशीलता होती है. इस प्रकार पराकाशको प्राप्त हो प्राणी सत्ययुगको प्राप्त होंगे ॥ ५ ॥ कितने पुरुष किसी उद्देशसे धर्मशील होंगे कोई मध्यस्थताको प्राप्त होंगे. कोई हेतुवादेमें आभ्यर्चकरने वाले ईर्ष्याशील होंगे ॥ ६ ॥ प्रत्यक्ष और अनुमानको निश्चय करनेवाले प्रत्यक्ष प्रमाणही मानकर पंडितार्थका अभिमान करेंगे ॥ ७ ॥ कोई मनुष्य वेदोक्त वाक्यको अप्रमाण करेंगे स्त्रियोंका जीवन योनिसेही होगा ॥ ८ ॥ कोई धर्मलोप नास्तिक होंगे मूढ और पंडितमानी मनुष्य कलिमें होंगे ॥ ९ ॥ प्राणिपोंकी

निवेदादात्मसंबोधः संबोधाद्धर्मशीलता ॥ एवं गत्वा परां काष्ठां प्रपत्स्यन्ति कृतं युगम् ॥ ५ ॥ उद्देशतो धर्मशीलः केचिन्मध्यस्थतां गताः ॥ विमर्षशीलाः केचित्तु हेतुवादकुतूहलाः ॥ ६ ॥ प्रत्यक्षमनुमानं च प्रमाणं चेति निश्चिताः ॥ प्रमाणैकं करिष्यन्ति नेति पण्डितमानिनः ॥ ७ ॥ अप्रमाणं करिष्यन्ति वेदोक्तमपरे जनाः ॥ तदा मुस्रभगाश्चैव भविष्यन्ति स्त्रियोऽपराः ॥ ८ ॥ नास्तिक्यपरमाश्चापि केचिद्धर्मविलोपकाः ॥ भविष्यन्ति नरा मूढा मन्दाः पण्डितमानिनः ॥ ९ ॥ तदात्वमात्रे श्रद्धयाः शास्त्रज्ञानबहिष्कृताः ॥ दाम्भिकास्ते भविष्यन्ति वादशीलकुतूहलाः ॥ १० ॥ तदा विचलिते धर्मे जनाः शेषपुरस्कृताः ॥ शुभान्येवाचरिष्यन्ति दानसत्यसमन्विताः ॥ ११ ॥ सर्वभक्षो ह्यसंशुतो निर्गुणो निरपत्रपः ॥ भविष्यति तदा लोकस्तत्कषायस्य लक्षणम् ॥ १२ ॥ विप्राणां शाश्वतीं वृत्तिं यदा वर्णावरा जनाः ॥ प्रतिपत्स्यन्ति वृत्त्यर्थं तत्कषायस्य लक्षणम् ॥ १३ ॥ कषायोपप्लवे लोके ज्ञानविद्याप्रणाशने ॥ सिद्धिं स्वल्पेन कालेन यास्यन्ति निरुपस्कृताः ॥ १४ ॥

अन्धके बल प्रत्यक्षमें होगी. शास्त्रज्ञानसे रहित होंगे वे वादशील कुतूहलके परवश होकर दाम्भिक हो जायेंगे ॥ १० ॥ इस प्रकार धर्मके चलायमान होनेसे शेष मनुष्य दान सत्यसे युक्त हो शुभ कार्योंको करेंगे ॥ ११ ॥ सब पदार्थोंके खानेवाले निर्गुणी निर्लज्ज लोक हो जायेंगे यही कषायका लक्षण है ॥ १२ ॥ जब ब्राह्मणकी सदा रहनेवाली वृत्तिको शूद्र करने लेंगे यही कषायका लक्षण जानना ॥ १३ ॥ ज्ञानविद्याका नाश होनाही कलिका लक्षण है. परन्तु इस

कालमें घोड़ेही परिणमसे मनुष्य सिद्ध हो जाता है ॥ १४ ॥ महायुद्ध, महानाद, महावर्षा, महाभय युगके क्षीण होनेपर होगा यही कलिका लक्षण है ॥ १५ ॥ ब्राह्मणके रूपमें राक्षस और जुगलीकी बात सुननेवाले राजा होंगे यही पुरुष युगान्तमें पृथ्वीको भोगेंगे ॥ १६ ॥ स्वाध्याय वषट्कारसे हीन अभीतियुक्त अभिमानी ब्राह्मण क्रव्यादरूपसे सर्वजसी और वृथा व्रत करनेवाले होंगे ॥ १७ ॥ मर्ल, स्वार्थी, लोभी, क्षुद्र, क्षुद्राशय, भोजनाच्छादनके व्यवहारमें तत्पर, सनातन धर्मसे पतित ॥ १८ ॥ पराई स्त्री और पराये रत्नोंको हरनेवाले, कामी, दुरात्मा, छली, साहसी ॥ १९ ॥ जब सब

महायुद्धं महानादं महावर्षं महाभयम् ॥ भविष्यति युगे क्षीणे तत्कषायस्य लक्षणम् ॥ १५ ॥ विप्ररूपाणि रक्षसि राजानः कर्णवेदिनः ॥ पृथिवीमुपभोक्ष्यन्ति युगान्ते समुपस्थिते ॥ १६ ॥ निःस्वाध्यायवषट्कारा अनेयाश्चाभिमानिनः ॥ विप्राः क्रव्यादरूपेण सर्वभक्षा वृथाव्रताः ॥ १७ ॥ मूर्खाः स्वाध्यायपरा लुब्धाः क्षुद्राः क्षुद्रपरिच्छदाः ॥ व्यवहारोपवृत्ताश्च च्युता धमाच्च शाश्वतात् ॥ १८ ॥ इतारः पररत्नानां परदारापहारकाः ॥ कामात्मानो दुरात्मानः सापधाः प्रियसाहसाः ॥ १९ ॥ तेषु प्रभवमानेषु तुल्यशीलेषु सर्वतः ॥ अभाविनो भविष्यन्ति मुनयो बहुरूपिणः ॥ २० ॥ उत्पन्ना ये कृतयुगे प्रधानपुरुषाश्चर्याः ॥ कथायोगेन तान्सर्वान्पूजयिष्यन्ति मानवाः ॥ २१ ॥ शरयचोरा भविष्यन्ति तथा चैलापहारिणः ॥ भक्ष्यभोज्यापहाराश्च करण्डानां च हारिणः ॥ २२ ॥ चोराश्चोरस्य इतारो इता इतुर्भविष्यति ॥ चोरोश्चोरक्षये चापि कृते क्षेमं भविष्यति ॥ २३ ॥ निःसारं क्षुभिते लोके निष्क्रिये व्यन्तरस्थिते ॥ नराः श्रयिष्यन्ति वनं करभारप्रपङ्गिताः ॥ २४ ॥

ओरसे इस प्रकारके मनुष्योंका प्रादुर्भाव हो जायगा तब मुनिरूपधारी बहुतसे मनुष्य होंगे ॥ २० ॥ जो सतयुगमें प्रधान पुरुषके आश्रयवाले उत्पन्न हुए हैं, कथाके योगसे मनुष्य उन सबका पूजन करेंगे ॥ २१ ॥ सेती और बैल, वस्त्र, चोरी करनेवालेभी मनुष्य होंगे, भक्ष्य, भोज्य, स्नान, सामग्री तथा वंशपात्रके हरनेवाले होंगे ॥ २२ ॥ चोरोंकी चोरी करनेवाले, मारनेवालोंके मारनेवाले मनुष्य कलियुगमें होंगे चोरोंसे चोरोंका क्षय होंनेपर क्षेम होगी ॥ २३ ॥ जब निःसार निष्क्रिय और क्षुभित संसार हो जायगा तब करभारसे पीड़ित हो मनुष्य वनको चले जायेंगे ॥ २४ ॥

पुत्र सब कर्मोंमें पिताको आज्ञा देंगे बहु सासुओंको युगान्तमें आज्ञा देंगी ॥ २५ ॥ शिष्य गुरुओंको वाणीरूपी बाणसे जर्जरित करेंगे, यज्ञके न होनेसे राक्षस, श्वापद ॥ २६ ॥ कीट, मूषक, सर्प मनुष्योंको धर्षित करेंगे, क्षेम सुनिक्ष आरोग्य बंधुओंमें ममता यह सब आरायसे होंगे ॥ २७ ॥ आपही पालना और आपही चोरी करनेवाले युगसंभारके धारण करनेवाले देशदेशमें मंडल बांधकर विचरण करेंगे ॥ २८ ॥ अपन देशोंसे भट्ट हुए बंधुओंके सहित निस्तार हुए कालक्षयमें सब मनुष्य इस गतिको हो जायेंगे ॥ २९ ॥ तब झुवासे व्याकुल हुए मनुष्य पुत्रोंको कंधोंपर चढ़ाये भयसे कौशिकी नदिके पार होंगे

पितृनाज्ञापयिष्यन्ति पुत्राः कर्मणि सर्वज्ञः ॥ स्तुषा इव श्रूस्तथा चैव युगाति प्रत्युपस्थिते ॥ २५ ॥ वाक्शैररदयिष्यन्ति गुरुन् शिष्याः सम-ततः ॥ यज्ञकर्मण्युपरते रक्षांसि श्वापदानि च ॥ २६ ॥ कीटमूषकसर्पाश्च धर्षयिष्यन्ति मानवान् ॥ क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं सामर्थ्यं वापि बन्धुषु ॥ उद्देशतो नरश्रेष्ठ भविष्यन्ति युगक्षये ॥ २७ ॥ स्वयंपालाः स्वयं चोरा युगसंभारसंभृताः ॥ मण्डलेः प्रच- लिष्यन्ति देशे देशे पृथक् पृथक् ॥ २८ ॥ स्वदेशेभ्यः परिभ्रष्टा नःसाराः सह बन्धुभिः ॥ नराः सर्वे भविष्यन्ति तदा कालपरि- क्षयात् ॥ २९ ॥ तदा स्कन्धे समाधाय कुमारान् विद्रुता भयात् ॥ कौशिकीं प्रतरिष्यन्ति नराः क्षुद्रयपीडिताः ॥ ३० ॥ अङ्गान् वज्रान्कालिङ्गाश्च काश्मीरानथ मेकलान् ॥ ऋषिकान्तगिरिद्रोणीः संश्रयिष्यन्ति मानवाः ॥ ३१ ॥ कूत्सं वा हिमवत्पार्श्वं कूलं च लवणाम्भसः ॥ अरण्येषु च वत्स्यन्ति नरा म्लेच्छगणैः सह ॥ ३२ ॥ नैव शून्या न चाशून्या भविष्यति वसुंधरा ॥ गोप्ताश्चाप्य- गोप्ताः प्रभविष्यन्ति शस्त्रिणः ॥ ३३ ॥ मृगेर्मत्स्यैर्विहंगैश्च श्वापदैः सर्पैर्कीटैः ॥ मधुशाकफलेर्मूलैर्येतयिष्यन्ति मानवाः ॥ ३४ ॥

॥ ३० ॥ अंग बंग कलिंग काश्मीर मेकल ऋषिकान्त और गिरिद्रोणीको प्राप्त होंगे ॥ ३१ ॥ वा सम्पूर्ण हिमालयके पार्श्वमें वा लवणसागरके तटपर वनोंमें मनुष्य म्लेच्छगणोंके साथ निवास करेंगे ॥ ३२ ॥ न तो शून्य न अशून्य इस प्रकारकी पृथ्वी होगी, शस्त्रबारी राक्षक और धरक्षक दोनों प्रकारके होंगे ॥ ३३ ॥ मृग, मत्स्य, विहंग, श्वापद, कीट, मधु, शाक, फल, मूल इनसे मनुष्य अपनी आजीविका करेंगे ॥ ३४ ॥

चीर अनेक प्रकारके पर्ण, वल्कल, अजिन यह सब मुनिजनोंकी समान धारण करेंगे ॥ ३५ ॥ दर्शशीलादिमें हलके द्वारा बीज बोनेकी चेष्टा करेंगे और चकरी, भेड, ऊंट, गधे इनको यत्नसे पालेंगे ॥ ३६ ॥ तटपर आई हुई नदियोंके स्रोत बंद हो जायेंगे. पक्वान्नका व्यवहार तथा वृक्षोंके मूलफलका परस्पर व्यवहार होगा ॥ ३७ ॥ जो सन्तान उत्पन्न होगी वह शुद्धिरहित और कुलके लक्षणोंसे हीन और बहुत सन्तति होगी ॥ ३८ ॥ जब इस प्रकार कालकारित मनुष्य हो जायेंगे तब प्रजामें धर्म हीनसे हीन दशाको प्राप्त होगा ॥ ३९ ॥ उस समय मनुष्योंकी आयु तीस वर्षकी

चीरं पर्णं च बहुलं वल्कलान्यजिनानि च ॥ स्वयंकृतानि वत्स्यन्ति यथा मुनिजनास्तथा ॥ ३५ ॥ बीजानामाकृतिं निम्नेष्वीहन्तः काष्ठशंकुभिः ॥ अजेडकं खरोष्ट्रं च पालयिष्यन्ति यत्रतः ॥ ३६ ॥ नदीं स्रोतांसि रोत्स्यन्ति तोयार्थं कूलमाश्रिताः ॥ पक्वान्नव्यवहारेण विपणन्तः परस्परम् ॥ ३७ ॥ तनूरुद्देर्यथा जातेः समूलान्तरसंवृतेः ॥ बह्वपत्याः प्रजाहीनाः कुललक्षणवर्जिताः ॥ ३८ ॥ एवं भविष्यन्ति तदा मनुष्याः कालकारिताः ॥ हीनाहीनं तदा धर्मं प्रजाः समनुवत्स्यन्ति ॥ ३९ ॥ आयुस्तत्र च मर्त्यानां परं त्रिंशद्भविष्यति ॥ दुर्बला विषमग्लाना रजसा समविप्लुताः ॥ ४० ॥ भविष्यति तदा तेषां रोगैरिन्द्रियसंक्षयः ॥ आयुः प्रक्षयसं- रोधाद्विषादः प्रभविष्यति ॥ ४१ ॥ शुश्रूषो भविष्यन्ति साधूनां दर्शने रताः ॥ सत्यं च प्रतिपत्स्यन्ति व्यवहारोपसंक्षयात् ॥ ४२ ॥ भविष्यन्ति च कामानामलाभाद्धर्मशीलिनः ॥ करिष्यन्ति च संकोचं स्वपक्षक्षयपीडिताः ॥ ४३ ॥ एवं शुश्रूषो दाने सत्ये प्राणा- भिरक्षणे ॥ चतुष्पादः प्रवृत्तश्च धर्मः श्रेयोऽभिपत्स्यते ॥ ४४ ॥

बहुत होगी. दुर्बल विषयोंसे ग्लानियुक्त रजोगुणसे व्याप्त होंगे ॥ ४० ॥ रोगोंसे उनकी इन्द्रियोंका क्षय होगा और आयुक्षयके संरोधसे परम विषा- दको प्राप्त होंगे ॥ ४१ ॥ उस समय साधुओंके दर्शन और टहलकी इच्छा होगी व्यवहारकी निवृत्ति होनेसे सत्य वचनको बोलने लगे ॥ ४२ ॥ कामके न होनेसे धर्मशील हो जायेंगे, भयसे पीडित हो दुराचारताके कारण संकोच करेंगे ॥ ४३ ॥ दान सत्य और प्राणोंकी रक्षामें इस प्रकार

सुश्रूषा करनेवाले जब होंगे तब चतुष्पाद धर्म उनको मंगलकारी होगा ॥ ४४ ॥ उनको जब अन्वय व्यतिरेकसे धर्मधर्म फलोंके मध्यमें प्रवृत्तता होगी धर्मके शिवाय और कोई वस्तु साधु नहीं तब वह धर्मही कहेंगे ॥ ४५ ॥ जैसे क्रमसे हानि प्राप्त हुई है इसी प्रकार क्रमसे वृद्धि होगी सबके धर्म ग्रहण करनेमें सतयुग प्रवृत्त होगा ॥ ४६ ॥ सतयुगमें साधु वृत्त होनेसे कलिकी हानि होती है, वह एकही काल हीन वर्णके चन्द्रमाके समान होता है ॥ ४७ ॥ अर्थात् जैसे वही चन्द्रमा अंधकारसे आवरण होनेके कारण सब नहीं दीखता इसी प्रकार कलि है और अंधकारसे हीन पूर्णचन्द्रमाकी समान सतयुग है ॥ ४८ ॥ परब्रह्म अर्थवाद है, यह वेदार्थ कहा गया है, इसको बिना जाने इस प्रकार होता है जैसे मृत्तिकामें मिला

तेषां लब्धानुमानानां गुणेषु परिवर्तताम् ॥ स्वादु किं न्विति विज्ञाय धर्म एवं वदिष्यति ॥ ४९ ॥ यथा हानिः क्रमात्प्राप्ता तथा वृद्धिः क्रमाद्गता ॥ प्रगृहीते यतो धर्मे प्रपत्स्यन्ति कृतं युगम् ॥ ४६ ॥ साधु वृत्तं कृतयुगे कथाये हानिरुच्यते ॥ एक एव तु कालः स हीनवर्णो तथा शशी ॥ ४७ ॥ छत्रो हि तमसा सोमो यथा कलियुगे तथा ॥ पूर्णश्च तमसा हीनो यथा कृतयुगे तथा ॥ ४८ ॥ अर्थवादः परं ब्रह्म वेदार्थ इति तं विदुः ॥ अनिर्णेतमविज्ञातं दयाद्यमिव धार्यते ॥ ४९ ॥ इष्टवादस्तपो नाम तपो हि स्यात्कृतम् ॥ गुणेः कर्मभिनिर्वृत्तिर्युगास्तथ्येन कर्मणा ॥ ५० ॥ आशीस्तु पुरुषं दृष्ट्वा देशकालानुवर्तिनी ॥ युगे युगे यथाकालमृषिभिः समुदाहृता ॥ ५१ ॥ इह धर्मार्थकामानां देवतानां प्रतिक्रिया ॥ आशिषश्च शुभाः पुण्यास्तथैवायुर्गुणे युगे ॥ ५२ ॥

हुआ सुवर्ण किसीके घर स्थित हो वह उसे बिना जाने दरिद्र मानता है उसके जाननेसे अपनेको धनवान् मानता है, इसी प्रकार ब्रह्मके जाननेसे सर्वे श्रव्य सम्पन्न होता है ॥ ४९ ॥ इष्टवादही तप है, जिसमें स्वर्गादिका अभीष्ट कथन किया है, जो तप स्थावर अनादि अव्यभिचारी फलवान् शास्त्रमें कहा है वह देहादिद्वारा कर्मोंसे सिद्ध होता है, कर्म सत्यादि गुण देहादि कर्मोंसे मुक्ति नहीं होती इस कारण शरीरको ब्रह्माश्रय करे ॥ ५० ॥ एक कर्मसे फलप्राप्ति होती है, यह देशकालको देखकर मुनिजनोंने आशीर्वाणी कही है, यह पुण्यरूप युगयुगमें वर्तती है ॥ ५१ ॥ धर्म अर्थ काम और

देवताओंकी प्रतिक्रिया और पुण्यरूप आशीर्वाद युगयुगमें वर्तते हैं ॥ ५२ ॥ जैसे युगोंका चिरकालसे प्रवृत्त होना विधिके स्वभावसे चिरकालसे चला आता है इसी नियमसे यह लोक क्षय और उदयमें वर्तता हुआ क्षणकालकोभी स्थित नहीं होता है ॥ ५३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे त्रिभ्यर्षिणा भाषायां चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ सूतजी बोले, इस प्रकार राजा जन्मेजयको आश्वासन करते हुए ऋषिके अतीत अनागत वाक्योंको सजाने सुना ॥ १ ॥ महर्षिके वाणीरूपी रससे अमृतके प्रवाह चन्द्रमाकी कान्तिकी समान उनके ओत्र तृप्त हो गये ॥ २ ॥ धर्म अर्थ

यथा युगानां परिवर्तनानि चिरं प्रवृत्तानि विधिस्वभावात् ॥ क्षणं न संतिष्ठति जीवलोकः क्षयोदयाभ्यां परिवर्तमानः ॥ ५३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यर्षिणा चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ सूत उवाच ॥ इत्येवमाश्वासयतो राजानं जनमेजयम् ॥ अतीतानागतं वाक्यमृषेः परिषदा श्रुतम् ॥ १ ॥ अमृतस्येव संवादः प्रभा चन्द्रमतो यथा ॥ अतर्पयत तच्छ्रोत्रं महर्षेर्वाङ्मयोरसः ॥ २ ॥ धर्मकामार्थसंयुक्तं करुणं वीरहर्षणम् ॥ रमणीयं तदाख्यानं कृत्स्नं परिषदा श्रुतम् ॥ ३ ॥ केचिदश्विनि सुसुबुः श्रुत्वा दध्युस्तथापरे ॥ इतिहासं तमृषिणा पाणाविव निदर्शितम् ॥ ४ ॥ सदस्यान्तोऽभ्यनुज्ञाय कृत्वा चापि प्रदक्षिणम् ॥ पुनर्द्रक्ष्याम इत्युक्त्वा जगाम भगवानृषिः ॥ ५ ॥ अनुजग्मुस्तदा सर्वे प्रयान्तमृषिसत्तमम् ॥ लोके प्रवदतां श्रेष्ठं ये विशिष्टास्तपोधनाः ॥ ६ ॥ याते भगवति व्यासे तदा ब्रह्मर्षिभिः सह ॥ ऋत्विजः पार्थिवाश्चैव प्रतिजग्मुर्ग्रन्थागतम् ॥ ७ ॥ पन्नगानां सुघोराणां कृतानां वैरयातनाम् ॥ जगाम रोषमुत्सृज्य राजा विषमिवारेणः ॥ ८ ॥

कामसे संयुक्त करुणा वीर रसके हर्षतासे युक्त यह रमणीय आख्यान सब सजाने सुना ॥ ३ ॥ सुनकर कोई आंसू त्यागने लगे कोई ध्यान करने लगे ऋषिने उस इतिहासको हाथमें रखकर दिखा दिया ॥ ४ ॥ सभाकी आज्ञाको प्राप्त हो प्रदक्षिणा कर मैं फिर आऊंगा ऐसा कह ऋषिराज चले गये ॥ ५ ॥ तब उन ऋषिके पीछे पीछे जो कि बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ थे सब तपोधनजी गये, जो श्रेष्ठ थे ॥ ६ ॥ ब्रह्मर्षियोंके साथ भगवान् वेदव्यासजीके जानमें ऋत्विक् और राजाजी सब अपने २ स्थानोंको गये ॥ ७ ॥ और राजा जन्मेजयभी घोर सर्पोंकी वैरयातनाको पूर्ण

कर सर्पविषकी समान क्रोध त्यागन कर निवृत्त हुए ॥ ८ ॥ होत्र अग्निकी समान दीप्तिमान् शिरवाले तक्षकको बचाकर वह महामुनि
 आस्तीक अपने आश्रमको गये ॥ ९ ॥ राजा अपने सुजनोंके सहित हस्तिनापुर गये और तबसे प्रसन्नताके सहित प्रजा पालन करने लगे ॥ १० ॥
 कुछ समयके उपरान्त राजा जन्मेजयने बड़ी दक्षिणावाले यज्ञका अनुष्ठान किया ॥ ११ ॥ तब सुन्दररूप काशीके राजाकी पुत्री वपुष्टमा जन्मेजयकी
 बी मृतक हुए अश्वके समीपमें स्थित हुई ॥ १२ ॥ उस समय उस सब प्रकार अनिम्बित अंगवालीकी इच्छा की, मृतक बोलेमें प्रवेश हो उसके
 होत्राग्निदीप्तशिरसं परित्राय च तक्षकम् ॥ आस्तीकोऽथाश्रमपदं जगाम स महामुनिः ॥ ९ ॥ राजापि हस्तिनपुरं जगाम स्वजना-
 वृतः ॥ अन्वशासच्च सुदितस्तदा प्रसुदिताः प्रजाः ॥ १० ॥ कस्य चित्त्वय कालस्य स राजा जनमेजयः ॥ वीक्षितो गाजिमेघेन
 विधिवद्भूरिदक्षिणः ॥ ११ ॥ संज्ञतमश्वं तत्रास्य देवी काश्या वपुष्टमा ॥ संविदेशोपगम्योयं विधिदृष्टेन कर्मणा ॥ १२ ॥ एतां तु
 सर्वानवघाज्जीं चक्रमे वासवस्तदा ॥ संज्ञतमश्वमाविश्य तथा मिश्रीबभूव सः ॥ १३ ॥ तस्मिन्विकारे जनिते विदित्वा तत्त्वतश्चै तत् ॥
 असंज्ञतोऽयमश्वस्ते श्वसेत्यश्वयुग्ममवात् ॥ १४ ॥ अश्वयुग्मानसंपन्नस्तदिन्द्रस्य विवेक्षितम् ॥ कथयामास राजर्षेः क्षत्राय सं-
 पुरंदरम् ॥ १५ ॥ जनमेजय उवाच ॥ यद्यस्ति मे यज्ञफलं तपो वा रक्षतः प्रजाः ॥ फडेनानेन सर्वेण ब्रवीमि श्रूयतामिदम् ॥ १६ ॥
 अद्यप्रभृति देवेन्द्रमजितेन्द्रियमस्मिन् ॥ क्षत्रिया गाजिमेघेन न यक्ष्यन्तीति शौनक ॥ १७ ॥ ऋत्विजश्चाववीरक्रुद्धः स राजा
 जनमेजयः ॥ दोर्बल्यं भवतामेतद्यदयं धर्षितः क्रतुः ॥ १८ ॥
 साथ मैथुनमें प्रविष्ट हुआ ॥ १३ ॥ यह विकार उत्पन्न होनेसे उसको तत्त्वज्ञे जानकर राजाने अश्वयुगे कहा, यह घोड़ा मृतक नहीं हुआ है इस
 कारण ध्वंस करनेके योग्य है ॥ १४ ॥ ज्ञानसम्पन्न अश्वयुगे यह राजाकी चेष्टा जानकर राजाने कहा और इन्द्रको शान्त दिया ॥ १५ ॥ जन्मेजय
 बोले, जो कुछ मुझे यज्ञफल प्राप्त है तथा जो मैंने प्रजारक्षा की है इस सबके फलसे जो मैं कहता हूं सो सब कोई सुनो ॥ १६ ॥ आजसे इस आजि-
 तेन्द्रिय चंचलस्वभाव इन्द्रको कोई अश्वमेधसे पूजन नहीं करेंगे ॥ १७ ॥ हे शौनक । इस प्रकार क्रोधित हो जन्मेजयने आपिपोंसे कहा कि यह

मेरे यज्ञमें विघ्न तुम्हारी दुर्बलतासे हुआ है ॥ १८ ॥ तुम हमारे राज्यमें मत बसो कुटुम्बसहित चले जाओ यह कहनेपर क्रोधित हो ब्राह्मणोंने राजाको त्यागन कर दिया ॥ १९ ॥ तब तामसी जन्मेजय क्रोधकर पत्नीशालामें प्राप्त हुई क्षियोंसे बोले ॥ २० ॥ इस असती वपुष्टमारानीको हमारे घरसे निकाल दो जिसने धूरि भरे दोनों चरण मेरे मस्तकपर प्राप्त किये थे ॥ २१ ॥ मेरी शूरता यश और मान सब नष्ट कर दिया. मलीन हुई मालाकी समान मैं इसके देखनेकी इच्छा नहीं करता ॥ २२ ॥ जो पुरुष दूसरेकी मर्दन की हुई भार्याको फिर रख लेता है न वह स्वादु भोजन विषये मे न वस्तुव्यं गच्छध्वं सह बान्धवैः ॥ इत्युक्तास्तत्यजुर्विप्रास्तं नृपं जातमन्यवः ॥ १९ ॥ अमर्षादन्वशासच्च पत्नीशालागताः स्त्रियः ॥ राजा परमधर्मज्ञस्तामसो जनमेजयः ॥ २० ॥ असती वपुष्टमामेतां निर्यातयत मे गृहात् ॥ यया मे चरणौ मूर्ध्नि पातितौ रेणुगुण्ठितौ ॥ २१ ॥ शोण्डीर्यं मे मया भ्रमं यशो मानश्च दूषितः ॥ न चेनां द्रष्टुमिच्छामि परिच्छिन्नामिव स्रजम् ॥ २२ ॥ न स्वादु सोऽश्राति नरः सुखं स्वपिति वा रहः ॥ अन्वास्ते यः प्रियां भार्यां परेण मृदितामिह ॥ २३ ॥ पुनर्नैवोपभुजन्ति श्वावलीढं हविर्यथा ॥ एवमुच्चैः प्रभाषन्तं क्रुद्धं पारिक्षितं नृपम् ॥ गन्धर्वराजः प्रोवाच विश्वावसुरिदं वचः ॥ २४ ॥ विश्वावसुरुवाच ॥ त्रिय-
ज्ञशतयज्वानं वासवस्त्वां न मृष्यते ॥ अप्सरास्तेन पत्नी ते विदितेयं वपुष्टमा ॥ २५ ॥ रम्भानामाप्सरा देवी काशिराजसुता मता ॥ सैषा योषिद्वरा राजन् रत्नभूतानुभूयताम् ॥ २६ ॥ यज्ञे विवरमासाद्य विप्रमिन्द्रेण ते कृतम् ॥ यज्ञा द्यसि कुरुश्रेष्ठ समृद्ध्या वासवोपमः ॥ २७ ॥

कर सकता है न एकान्तमें सुखसे तो सकता है ॥ २३ ॥ जैसे कुत्तेकी छुई हुई हडि फिर नहीं खाई जाती है. ऐसे दूसरेकी भोगी की कामकी नहीं. इस प्रकार क्रोधसे परुष बात कहते हुए जन्मेजयको विश्वावसु गन्धर्वराज इस प्रकारसे कहने लगा ॥ २४ ॥ विश्वावसु बोले, हे राजन्! तीनसौ यज्ञोंके करनेवाले तुमको इन्द्र सहन नहीं कर सकता है इस कारण उसने वपुष्टमास्से अप्सराको तुम्हारी पत्नी बना दिया ॥ २५ ॥ यह रम्भा नाम अप्सरा काशिराजकी पुत्री हुई है. हे राजन्! यह रत्नभूत क्षियोंमें श्रेष्ठ भोगनेके योग्य है ॥ २६ ॥ यज्ञमें छिद्र देखकर इन्द्रने प्रवेश किया. हे कुरु-

भेद ! तू यज्ञ का करनेवाला ऋद्धिमें इन्द्रके समान है ॥ २७ ॥ हे राजन् ! तुम्हारे यज्ञफलसे निरस्कार होनेके कारण इन्द्र तुमसे डरता है. हे भो ! इस कारण इन्द्रने तुम्हारा यज्ञ आवर्तित किया ॥ २८ ॥ यह यज्ञमें विघ्न करनेवाले इन्द्रने मायाही प्रवृत्त करो है. घोड़ेको मृतक देख यज्ञमें विघ्न करनेको प्रवृत्त हुआ ॥ २९ ॥ जिसे वपुष्टमा मानते हो. इन्द्रने उस रंतासेही रति की है और तीन सौ यज्ञ करनेवाले तुम्हारे गुरु शापित करा दिये हैं ॥ ३० ॥ तुम और ब्राह्मण बलसे इन्द्रकी समानतासे भट्ट हुए हैं, तुमसे और दुर्धर्ष तीन सौ यज्ञके करनेवालोंसे ॥ ३१ ॥ इन्द्र सदा डरता

विभेत्यभिभवाच्छक्रस्तव क्रतुफलैर्नृप ॥ तस्मादावर्तितश्चैव क्रतुरिन्द्रेण ते विभो ॥ २८ ॥ मायेषा वासवेनेह प्रयुक्ता विघ्नमिच्छता ॥ क्रतोर्विवरमासाद्य संज्ञतं दृश्य वाजिनम् ॥ २९ ॥ रतमिन्द्रेण रम्भायां मन्यसे यां वपुष्टमाम् ॥ अथ ते गुरवः शतास्त्रियज्ञशतयाजिनः ॥ ३० ॥ अंशितस्त्वं च विप्राश्च बलादिन्द्रसमादिह ॥ त्वत्तश्चैव सुदुर्धर्षास्त्रियज्ञशतयाजिनः ॥ ३१ ॥ विभोति हि सदा त्वत्तो ब्राह्मणेभ्योऽपि वासवः ॥ एकेन वै तदुभयं तीर्णं शक्रेण मायया ॥ ३२ ॥ स एष स महातेजा विजिगीषुः पुरंदरः ॥ कथमन्यैरनाचीर्णं नमुर्दोरानतिक्रमेत् ॥ ३३ ॥ विश्वावसुरुवाच ॥ यथैव हि परा बुद्धिः परो धर्मः परो दमः ॥ यथैव परमैश्वर्यं कीर्तितं हरिवाहने ॥ तथैव त्वयि दुर्धर्षे त्रियज्ञशतयाजिनि ॥ ३४ ॥ मा वासवं मा च गुरुमात्मानं मा वपुष्टमाम् ॥ गच्छ दोषेण काल्ये हि सर्वथा दुरतिक्रमः ॥ ३५ ॥ ऐश्वर्येणाश्वमाविश्य देवेन्द्रेणासि रोषितः ॥ आनुकूल्येन देवस्य वर्तितव्यं सुस्वार्थिना ॥ ३६ ॥

हे. एकही मायासे इन्द्रने वे दोनों कार्य पूर्ण किये ॥ ३२ ॥ नहीं तो यह महातेजस्वी जयशील राजा इन्द्र दूसरे साधारणोंके न करने योग्य कर्म पौत्रकी भार्याको कैसे भोग कर सकता है ॥ ३३ ॥ विश्वावसुने कहा जिस प्रकार परम बुद्धि परम धर्म परम दम परमैश्वर्य और परमकीर्ति इन्द्रमें विद्यमान है इसी प्रकार तीन सौ यज्ञ करनेवाले तुममें यह सब वस्तु विद्यमान हैं ॥ ३४ ॥ इन्द्र गुरु अपनेको और वपुष्टमाकी दोष मत दो कालकी गति किसीसे नहीं जानी जाती ॥ ३५ ॥ अपने ऐश्वर्यमें प्रात होकर इन्द्रने तुमको क्रोधित किया है सुस्वार्थीको दैवके अनुकूल वर्तना

चाहिये ॥ ३९ ॥ जिस प्रकार नदीके प्रवाहमें प्रतिकूलतासे तरना बड़ा कठिन है इसी प्रकार कालकी गति है. इस पापरहित श्रीरत्नको आनंदसे भोगो ॥ ३७ ॥ अपापा स्त्रीके त्यागसे वे शाप देती हैं फिर जिसमें अदुष्ट और विशेष कर दिव्य स्त्री त्यागके योग्य नहीं है ॥ ३८ ॥ सूर्यकी प्रभा अधिकी शिखा, होताकी वेदी और आहुति स्त्री है स्त्रीकी इच्छाके बिना बलत्कारसे भोगी स्त्री दूषित नहीं होती ॥ ३९ ॥ विद्वानोंको स्त्रीका ग्रहण स्तुकार और पूजन सदा करना चाहिये. शीलवती स्त्रियोंको नमस्कार और लक्ष्मी समान पूजन करना चाहिये ॥ ४० ॥ इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु

दुस्तरं प्रतिकूलं हि प्रतिस्रोत इवाम्भसः ॥ स्त्रीरत्नमुपभुङ्क्ष्वेमामपापां विगतज्वरः ॥ ३७ ॥ अशापास्त्यज्यमाना वै त्यजेयुरपि योषितः ॥ अदुष्टास्तु स्त्रियो राजन् दिव्यास्तु सविशेषतः ॥ ३८ ॥ भानोः प्रभा शिखा वह्नेर्वेदी होत्रे तथाहुतिः ॥ परामृष्टाप्य- संसक्ता नोपदुष्यन्ति योषितः ॥ ३९ ॥ ग्राह्या लालयितव्याश्च पूज्याश्च सततं बुधैः ॥ शीलवत्यो नमस्कार्याः पूज्याः श्रिय इव स्त्रियः ॥ ४० ॥ इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु हरिवंश भविष्यपर्वणि पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ सौतिरुवाच ॥ एवं स विश्वावसुना- नुनीतः प्रसादमागम्य वपुष्टमायाः ॥ चकार मिथ्या व्यतिशङ्कितात्मा शान्तिं परां मानवधर्मदृष्टाम् ॥ १ ॥ श्रममभिविनिवर्त- मानसं सः समभिलषजनमेजयो यशः स्वम् ॥ विषयमनुशशास धर्मबुद्धिर्मुदितमना रमयन्वपुष्टमां ताम् ॥ २ ॥ नहि विरमति विप्रपूजनात्न च विनिवर्तति यज्ञदानशीलात् ॥ न विषयपरिरक्षणाच्च्युतोऽभूत्न च परिगृह्णीति तां वपुष्टमां च ॥ ३ ॥ विधिविहि- तमशक्यमन्यथा हि यद्विषयचिन्त्यतया पुरावर्षीत्सः ॥ इति स नृपतिरात्मवांस्तदासौ तदनु विचिन्त्य बभूव कीर्तमन्युः ॥ ४ ॥

हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ सौति बोले, इस प्रकार जब उस राजाको विश्वावसुने सपनाया तब वह वपुष्टमाके प्रति शान्त हुआ और मानवधर्मसे उसने मिथ्या शंकाको त्याग शान्ति ग्रहण किं ॥ १ ॥ मनसे श्रम दूर कर वह जन्मेजय अपने यशकी अभिलाषा करता हुआ धर्मबुद्धिसे देशकी पालना करता हुआ प्रसन्न हो वपुष्टमाके साथ रमने लगा ॥ २ ॥ ब्राह्मणोंकी पूजा और यज्ञ दान शीलसे कभी विरागको प्राप्त न होता देशरक्षासे कभी आलस्ययुक्त न हुआ और न कभी वपुष्टमाकी निन्दा की ॥ ३ ॥ जो प्रारब्धमें है उसे कोई अन्यथा नहीं कर सका जो कि

अचिन्त्यतासे ऋषिने उससे कहा था, इस प्रकार वह ज्ञानी राजा ऋषिकी कही बाणीको स्मरण कर कोषराहिन हुआ ॥ ४ ॥ यहां महात्मा ऋषिका महाकाव्य पाठ करनेसे मनुष्य पूज्यतम हो जाता है वह दीर्घ आयुको प्राप्त हो केतवसे सर्वज्ञताके फलको प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ यह इन्द्रके पार दूर करनेवाले इतिहासको जो मनुष्य बड़े हैं उनके सब पार दूर हो जाते हैं और संतुर्ण कामनाओंको प्राप्त हो अरोगी शरीर होनेसे बहुत काल तक प्रसन्न रहता है ॥ ६ ॥ जैसे पुण्यके उपरान्त फल और उपरके उपरान्त बीज और बीजसे फिर वृक्ष होते हैं इसी प्रकार महापुरुषोंकी प्रगट की बाणी

इदं महाकाव्यमृषेर्महात्मनः पठन्तुर्गा पूज्यतमो भवेन्नरः ॥ प्रकृष्टमायुः समवाप्य दुर्लभं लभेच्च सर्वज्ञफलं च केशवम् ॥ ५ ॥
 शतक्रतोः कल्मषविप्रमोक्षणं पठन्निदं मुच्यते कल्मषान्नरः ॥ तथैव कामान्विविधान्समस्तुते ज्ञात क्लामश्च विधाय नन्दति ॥ ६ ॥
 यथा हि पुष्पप्रभवं फलं द्रुमाः फलत्रयजायन्ति पुनश्च पादपाः ॥ तथा महर्षिप्रभवा इमा गिरः प्रवर्द्धयन्ते तमृषिं प्रवर्द्धिताः ॥ ७ ॥
 पुत्रानपुत्रो लभते सुवर्चस्तपुतः पुनर्विन्दति चात्मनः स्थितिम् ॥ व्याधिं न चाप्नोति चिरं स बन्धनं क्रियां च पुण्यां लभते
 गुणान्वितः ॥ ८ ॥ पतिमभिलभते च सत्सु कन्या श्रवणमुपेत्य शुभा मुनेस्तु वाचः ॥ जनयति च सुतान्गुणैरुपेतान्स्वजनाहिते
 दिषतां प्रमर्दनं च ॥ ९ ॥ विजयति वसुधां च राजवृत्तिर्धनमतुलं लभते दिषजयं च ॥ विपुलमपि धनं लभेच्च वैश्यः सुगतिमि-
 याच्छ्रवणाच्च शूद्रजातिः ॥ १० ॥

दूसरोंको वृद्धित करती हैं ॥ ७ ॥ पुत्र पौत्र कान्तिकी प्राप्ति तथा आत्माकी स्थितिभी प्राप्त होती है तथा वह पुरुष व्याधि और बन्धनको प्राप्त नहीं होता और गुणयुक्त हो पवित्र क्रियाको प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ कन्या श्रेष्ठपतिको प्राप्त होती है, जो यह सुनिकी सुवाणी कर्णोच्चर करता है, वह गुणयुक्त श्रेष्ठ सन्तानोंको प्राप्त होकर सुजनोंका हित और शत्रुओंका नाश करता है ॥ ९ ॥ राजवृत्तिमान् पृथ्वीजय करता है तथा धन धर्म अधिक प्राप्त करता है अतुल धन और शत्रुओंसे जय होता है, वैश्य बहुत धन प्राप्त करता और इसके सुननेसे शूद्रजाति सुगतिको प्राप्त होती

हे ॥ १० ॥ इस महात्माओंके चरित्रसे पूर्ण पुराणके सुननेसे नैष्ठिकी बुद्धि प्राप्त होती है वह सब दुःख छोड़ संगरहित हो वीतराग हो पृथ्वीमें विचरता है ॥ ११ ॥ यह आख्यान आपसे वर्णन किया है, ब्राह्मणपंडलमें यह स्मरण करनेके योग्य है, जो स्थिरता धीरतासे इसे स्मरण करता है वह सुखपूर्वक इस लोकमें विचरता है ॥ १२ ॥ इस प्रकार यह महात्माओंके चरित्र ऋषिनिर्मित अद्भुत वीरताके कर्मसे युक्त हैं यह समास और विस्तारसे वर्णन किये अब क्या सुननेकी इच्छा है ॥ १३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां भविष्यान्तर्ग्रन्थार्थप्रकाशो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

जनमेजय बोले, जिनकी नाभिमें जगत्का पंचचक्र कमल है उनका सृष्टि आदिके रचनेका प्रभाव कहो, जो महद्भूत अनन्तपार पुराणमेतच्चरितं महात्मनामधीत्य बुद्धिं लभते च नैष्ठिकीम् ॥ विहाय दुःखानि विमुक्तसङ्गः स वीतरागो विचरेद्रसुधराम् ॥ ११ ॥ इत्येतदाख्यानमुदाहृतं वै प्रतिस्मरन्तो द्विजमण्डलेषु ॥ स्थेय्येण धेय्येण पुनः स्मरन्तः सुखं भवन्तोऽनुचरन्तु लोकम् ॥ १२ ॥ इति चरितमिदं महात्मनां नृपिकृतमद्भुतवीर्यकर्मणाम् ॥ कथितमिदं हि समासविस्तरेः किमपरमिच्छसि किं ब्रवीमि ते ॥ १३ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भविष्यान्तर्ग्रन्थार्थप्रकाशो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

जनमेजय उवाच ॥ प्रभावं पद्मनाभस्य स्वपतः सागराभसि ॥ पुष्करे वै यथोद्भूता देवाः सर्षिगणाः पुरा ॥ १ ॥ एतदाख्याहि निखिलं योगं योगविदापते ॥ शृण्वतस्तस्य मे कीर्तिं न तृप्तिरभिजायते ॥ २ ॥ कियन्तं चैव कालं वै शयिता पुरुषोत्तमः ॥ किमर्थं शयते कालं तस्य कालस्य संभवः ॥ ३ ॥

एक रसरूप सागरमें शयन करते हैं, जब कि सब चराचर नष्ट हो गया था उस समय केवल शुद्ध ब्रह्म वर्तमान थे, निर्वचन होनेसेही सोना कहा है अर्थात् कैवल्यस्य माधिमेलीयमान मायायुक्तका प्रभाव कहिये और ब्राह्मणमें देवता और ऋषि किस प्रकारके उत्पन्न हुए हैं पुष्कररूपी अम्बरमें अर्थात् स्वम्बररूपी अमृत जो उस महान् में वर्तमान है उसमें देवऋषि इन्द्रिय प्राण सूत्रात्मा किस प्रकार उत्पन्न हुए हैं ॥ १ ॥ हे सब योग और योगज्ञाताओंके पति ! यह आप मुझसे कहिये, उनकी कीर्ति सुनकर मेरी तृप्ति नहीं होती है ॥ २ ॥ कितने कालतक वह पुरुषोत्तम शयन करते हैं किस निमित्त वह शयन करता है जिससे कालकी उत्पत्ति होती है ॥ ३ ॥

वह सुराधिप कितने समयमें जागते हैं और वह भगवान् उठकर जगत्को किस प्रकार रचते हैं ॥ ४ ॥ हे तात ! हे मुने ! पूर्वकालमें कौन प्रजापति हुए हैं और सनातन भगवान्ने किस प्रकार विचित्र जगत्की रचना की ॥ ५ ॥ जब स्थावर जंगमके नष्ट होनेसे एकार्णव हो गया, जब देवता असुर गण उरग राक्षस नष्ट हो गये ॥ ६ ॥ अनल अग्निल आकाश महीतलके नष्ट होनेमें महाभूतके विपर्यय होनेसे पंच महाभूतोंके गह्वरीभूत होनेमें ॥ ७ ॥ हे मुने ! वह प्रभु महाभूतपति महातेजस्वी महाविस्तारवाले सुरगुरु किस प्रकारकी विधि धारण कर स्थित होते हैं ॥ ८ ॥ हे ब्रह्मन् ! यह वार्ता आप

कियता चेत् कालेन प्रदुष्यति सुराधिपः ॥ कथमुत्थाय भगवान्सृजन्नखिलं जगत् ॥ ४ ॥ के प्रजापतयस्तात आसन्पूर्वं महामुने ॥ कथं निर्मितवांश्चैव चित्रं लोकं सनातनः ॥ ५ ॥ एवमेकार्णवे लोके नष्टे स्थावरजंगमे ॥ नष्टे देवासुरगणे प्रणष्टोरगराक्षसे ॥ ६ ॥ नष्टानलानिले लोके नष्टाकाशमहीतले ॥ केवलं गह्वरीभूते महाभूतविपर्यये ॥ ७ ॥ प्रभुर्महाभूतपतिर्महातेजा महातातिः ॥ आस्ते सुरगुरुश्रेष्ठो विधिमाधाय कां मुने ॥ ८ ॥ तन्मे त्वमुपपन्न्याय ब्रह्मन्नेतदसंशयम् ॥ वक्तुमर्हसि धर्मिष्ठ यशो नारायणात्मकम् ॥ ९ ॥ प्रादुर्भावं पुरस्कृत्य भूतं भव्यं महात्मनः ॥ श्राद्धानामुपविष्टानां भगवन्वक्तुमर्हसि ॥ १० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ नारायणयशो-
ज्ञाने या भवेद्भवतः रूपदा ॥ त्वदंज्ञानवपूतस्य कार्यं कुरुकुलर्षभ ॥ ११ ॥ शृणुष्वदिपुराणैर्भ्यो देवताभ्यो यथाश्रुति ॥ ब्राह्मणानां च वदतां श्रुतोऽस्माभिर्महात्मनाम् ॥ १२ ॥ तथा च तपसा दृष्टो बृहस्पतिसमद्युतिः ॥ पाराशर्यस्ततः श्रीमान्गुरुर्द्रैपायनोऽब्रवीत् ॥ १३ ॥

हमसे वर्णन कीजिये, हे धर्मिष्ठ ! नारायणात्मक यश आप हमसे वर्णन कीजिये ॥ ९ ॥ उन महात्मा भूत भविष्य वर्तमानात्मक प्रादुर्भावं हम अज्ञावालोंके निमित्त आप वर्णन कीजिये ॥ १० ॥ वैशम्पायन बोले; जा तुम्हारी इच्छा नारायणके यशके जाननेमें है सो आपके पवित्र वंशके योग्यही है, वही तुम पवित्र कार्य करते हो ॥ ११ ॥ जिस प्रकार अदिपुराणोंमें देवताओंके मुखसे कहते हुए तथा महात्मा ब्राह्मणोंके मुखसे मैंने सुना है सो कहता हूं मुनो ॥ १२ ॥ तथा तपसे जो मैंने देखा है और बृहस्पतिकी समान कांतिवाले पराशरसे उत्पन्न श्रीमान् हमारे गुरु व्यासजीने जो कहा है ॥ १३ ॥

वह बुद्धि और सुननेके अनुसार मैं तुमसे कहता हूँ, क्योंकि मंत्रब्रह्मा कृषिके सम्पूर्ण अर्थ जाननेको मैं समथ नहीं हूँ ॥ १४ ॥ शुद्ध सच्चिदानंद परमात्माको जो नारायण कहे जाते हैं कौन जान सकता है, जिसको तत्त्वसे विश्वात्मा ब्रह्माभी नहीं जान सकते ॥ १५ ॥ जो मैंने विश्वदेवता और सब कृषियोंका रहस्य सुना है वोह उन तत्त्ववादियोंका संवाद ॥ १६ ॥ जो अध्यात्मवादियोंके विचारने योग्य, कर्मियोंका कारणरूप जो सब देवोंमें सद्रूपसे स्थित है, महात्मात्म्य ज्ञानरूप जिसके आनंदसे सब प्राणी जीते हैं ॥ १७ ॥ जो भूतोंमें व्याप्त जो महर्षियोंका परम उपासनीय, जो सत्यस्वरूप, जिसको

ततोऽहं संप्रकथ्यामि यथा प्रज्ञं यथाश्रुतम् ॥ न विज्ञातुं मया शक्यमृषिमात्रेण भारत ॥ १४ ॥ कः समुत्सहते ज्ञातु परं नारायणात्मकम् ॥ विश्वात्मनो यं ब्रह्मापि न वेदयाति तत्त्वतः ॥ १५ ॥ श्रुतं म विश्वदेवानां यद्रहस्यं महर्षिणाम् ॥ तादृदं सर्वदेवानां तत्त्वतस्तत्त्ववादिनाम् ॥ १६ ॥ तदध्यात्मविदां चिन्त्यं कारणं चैव कर्मिणाम् ॥ आधिदैवं च यद्देवं तद्देवमिति संज्ञितम् ॥ १७ ॥ यद्भूतमाधिभूतं च पत्यरं च महर्षिणाम् ॥ यत्तत्त्वं देवदृष्टं च यत्तद्देवविदो विदुः ॥ १८ ॥ यः कर्ता कारको बुद्धिर्मनः क्षेत्रज्ञ एव च ॥ प्रधानं पुरुषः शास्ता एकस्तदभिज्ञान्यते ॥ १९ ॥ कालः कालं स्वपयति द्रष्टा स्वाधीन एव च ॥ प्राणः पञ्चविधश्चैव ध्रुवमक्षय एव च ॥ २० ॥ उच्यते विविधैर्भाषैस्तस्यैवानेन तत्परे ॥ स एव भगवान्सर्वं करोति विकरोति च ॥ २१ ॥ योऽस्मान्कारयते कर्म तेनात्म व्याकुलीकृताः ॥ यजामहे तमेवेक्षं तमेवेच्छाम निर्वृताः ॥ २२ ॥

देवताही देखते हैं, जिसको वेदवादी तत्त्वरूप कहते हैं ॥ १८ ॥ जो कर्ता कारक बुद्धिमान् और क्षेत्रज्ञरूप है, प्रधान पुरुष शास्ता वह एकही शब्दोंसे उच्चारण किया जाता है ॥ १९ ॥ वही कालरूप कालको शयन करनेवाला ब्रह्मा स्वाधीन पांच विध प्राण ध्रुव अक्षय ॥ २० ॥ आदि अनेक भावोंसे उच्चारण किया जाता है, हे पापरहित ! वही अनेक भावोंसे कहा जाता है वही भगवान् सब सृष्टि और संहार करता है ॥ २१ ॥ जो हमसे अनेक कर्म कराता है जिससे हम व्याकुल हो रहे हैं उसी देवका हम यजन करते हैं, उससेही शान्तिकी इच्छा करते हैं ॥ २२ ॥

जो वक्ता और वक्तव्य है वह मैं सब तुमसे कहता हूँ. इसको जो तुम सुनते हो तथा कल्याण वस्तु तथा और जो कुछ कहा जाता है ॥ २३ ॥
जो कथा और गहर श्रुति वर्तमान है विश्व विश्वपति देवता यह सब नारायणात्मक है ॥ २४ ॥ जो सत्य असत्य आदि भक्षर भूत भविष्य वर्तमान चराचर
अव्यय त्रिलोकीमें है वह सब यह पुरुषमेवही है ॥ २५ ॥ इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि माषायां पुष्करप्रादुर्भावे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥
वेशम्पायन बोले, हे जन्मेजय ! चार सहस्र दिव्य वर्षोंका सतयुग होता है और आठ सौ वर्षोंकी उसकी संध्या होती है ॥ १ ॥ उस समय धर्म चार

यो वक्ता यश्च वक्तव्यो यश्चाहं तद्वीमि वः ॥ इदं शृणुत यच्चेमो यच्चान्यत्पारिजल्पथ ॥ २३ ॥ याः कथाश्चैव वर्तन्ते श्रुतयो वाथ
गह्वराः ॥ विश्वं विश्वपतिर्देवाः सर्वं नारायणात्मकम् ॥ २४ ॥ यत्सत्यं यदनृतमादिमक्षरं वै यद्भूतं भवति मिथश्च यद्भविष्यम् ॥
यत्किञ्चिच्चरमचराव्ययं त्रिलोके तत्सर्वं पुरुषवरः प्रभुर्वरिष्ठः ॥ २५ ॥ इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पुष्कर-
प्रादुर्भावे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ वेशम्पायन उवाच ॥ चत्वार्याहुः सहस्राणि वर्षाणां तु कृतं युगम् ॥ तस्य तावच्छती संध्या द्विगुणा
जनमेजय ॥ १ ॥ तत्र धर्मश्चतुष्पादो धर्मः पादविग्रहः ॥ स्वधर्मनिरताः सन्तो यजन्ते चैव मानवाः ॥ २ ॥ स्थिता धर्मपरा विप्रा
राजवृत्तो स्थिता नृपाः ॥ कृष्यामभिरता वैश्याः शूद्राः शूश्रूषवस्तथा ॥ ३ ॥ सदा सत्यं तपश्चैव धर्मश्चैव विवर्धते ॥ सद्भिराचरितं
यच्च क्रियते ख्यायते च यत् ॥ ४ ॥ एतत्कृतयुगे वृत्तं सर्वेषामेव भारत ॥ प्राणिनां धर्मबुद्धीनामपि चेन्नीचपोनिनाम् ॥ ५ ॥
त्रीणि वर्षसहस्राणि त्रेतायुगमिहोच्यते ॥ तस्य तावच्छती संध्या द्विगुणा परिकीर्तिता ॥ ६ ॥

चरणसे झुक और अधर्म एकपाद होता है. मनुष्य अपने धर्ममें तत्पर हो यजन करते हैं ॥ २ ॥ ब्राह्मण धर्म और राजा राजवृत्तिमें स्थित रहते हैं.
वैश्य खेती और शूद्र शूश्रूषामें रत रहते हैं ॥ ३ ॥ सदा सत्य तप और धर्म बढ़ता है जो सत्पुरुषोंका धर्म है वही किया जाता और आरूपान किया
जाता है ॥ ४ ॥ हे भारत ! सतयुगमें यह सबका छत्य होता है धर्मबुद्धि प्राणी तथा नीचयोनिवालेभी धर्म करते हैं ॥ ५ ॥ त्रेतायुग देवताओंके

तीन सहस्र वर्षोंका होता है और ६०० वर्षकी उसकी संख्या होती है ॥ ६ ॥ धर्मके तीन और अधर्मके दो चरण होते हैं. संतमें सत्य और सतयुग यह दोनों संपूर्णरूपसे वर्तते हैं ॥ ७ ॥ परन्तु त्रेतामें इनमें कुछ विकार होता है कारण कि चारों वर्णोंमें धर्मकी फलतोगकी इच्छासे चंचलता होती है इससे बर्दुलता धर्ममें आती है ॥ ८ ॥ यह देवनिर्मित त्रेतायुगकी विधि है. अब द्वापरकी चेष्टाको सुनो ॥ ९ ॥ हे कुरुभेष्ठ ! दो सहस्र वर्षका द्वापर युग होता है और ४०० वर्षकी उसकी संख्या होती है ॥ १० ॥ उसमें ब्राह्मण अर्थमें तत्पर ज्ञानी और रजोगुणी होते हैं तथा शठताको धारण

द्वाभ्यामधर्मः पादाभ्यां त्रिभिर्धर्मो व्यवस्थितः ॥ तत्र सत्यं च सत्त्वं च कृतं सर्वं प्रवर्तते ॥ ७ ॥ त्रेतायां विकृतिं यान्ति वर्णा लोभ्येन संयुताः ॥ चातुर्वर्ण्यस्य वैकृत्याद्यान्ति दोर्बल्यमाश्रिताः ॥ ८ ॥ एष त्रेतायुगविधिर्विहितो देवनिर्मितः ॥ द्वापरस्यापि या चेष्टा तामपि श्रोतुमर्हसि ॥ ९ ॥ द्वापरं द्वे सहस्रं तु वर्षाणां कुरुसत्तम ॥ तस्य तावच्छती संख्या द्विगुणा परिकीर्तिता ॥ १० ॥ तत्राप्यर्थपरा विप्रा ज्ञानिनो रजसावृताः ॥ शठा नैष्कृतिकाः क्षुद्रा जायन्ते कुरुपुङ्गव ॥ ११ ॥ द्वाभ्यां धर्मः स्थितः पद्म्यामधर्म- स्त्रिभिरुत्थितः ॥ विपर्ययं ज्ञानैर्यान्ति कृते ये धर्मसेतवः ॥ १२ ॥ ब्राह्मण्यभावा नश्यन्ति तथास्तिक्यं विशीर्यते ॥ व्रतोपवा- सास्त्यज्यन्ते द्वापरे युगपर्यये ॥ १३ ॥ तथा वर्षसहस्रं तु वर्षाणां द्वे शते तथा ॥ संच्यया सह संख्यातं क्रूरं कलियुगं स्मृतम् ॥ १४ ॥ तत्राधर्मश्चतुष्पादः स्याद्धर्मः पादविग्रहः ॥ कामनिष्ठास्तमश्छन्नाः जायन्ते तत्र मानवाः ॥ १५ ॥

करनेवाले तुच्छ जीव उत्पन्न होते हैं ॥ ११ ॥ धर्मके दो चरण और अधर्मके तीन चरण स्थित होते हैं. सतयुगकी धर्ममर्यादा शनैः २ विपरीत हो जाती है ॥ १२ ॥ ब्राह्मण्य भाव नष्ट होकर आस्तिकता जहां तहां छिन्न होने लगती है द्वापरयुगमें व्रत और उपवास त्याग दिये जाते हैं ॥ १३ ॥ इसके उपरान्त दिव्य एक सहस्र वर्षका कलि और दो सौ वर्षकी उसकी संख्या होती है ॥ १४ ॥ यह क्रूर युग है. इसमें अधर्मके चार चरण और धर्म एक चरणमें स्थित रहता है. इसमें मनुष्य कामनिष्ठावाले अंधकारसे छन्न उत्पन्न होते हैं ॥ १५ ॥

न कोई ब्रती न साधु न सत्य वचन कहनेवाला होता है. कोई मनुष्य आस्तिक और ब्रह्मवक्ता नहीं होता ॥ १६ ॥ अहंकारयुक्त बांधवोंके स्नेहरहित होते हैं ब्राह्मण शूद्राचारवाले और शूद्र श्रेष्ठ आचार करनेवाले होते हैं ॥ १७ ॥ आधम और वर्णधर्मोंके दूषण करनेवाले वर्णसंकरकर्ता कलियुगी पुरुष अगम्या स्त्रियोंमें रमण करनेवाले होंगे ॥ १८ ॥ इस कारण द्वादश सहस्र वर्षोंका एक युग होता है और ऐसे इकहतर युगोंका एक मन्वन्तर होता है ॥ १९ ॥ हे जन्मेत्य ! जैसे यहां वस्तुका प्रादुर्भाव और क्षय देखा जाता है वैसेही अन्य लोकमेंभी

नेवोपवासकृत्कश्चिन्न च साधुर्न सत्यवाक् ॥ आस्तिको ब्रह्मवक्ता वा नरो भवति वै तदा ॥ १६ ॥ अहंकारग्रहीताश्च प्रक्षिण्णै-
हवान्धवाः ॥ विप्राः शूद्रसमाचाराः शूद्रास्त्वाचारलक्षणाः ॥ १७ ॥ दूषकास्त्वाश्रमाणां च वर्णानां चैव संकराः ॥ अगम्येष्वभिरं-
स्यन्ते वर्तन्त्येवं कलौ युगे ॥ १८ ॥ एवं द्वादशसाहस्रं तदेकं युगमुच्यते ॥ तदेकसप्ततिगुणं मन्वन्तरमिहोच्यते ॥ १९ ॥ त्रय्यां
चैव न सन्देहो युगान्ते जनमेजय ॥ दिव्यं द्वादशसाहस्रं युगं तु कवयो विदुः ॥ एतत्सहस्रपर्यन्तं तदहो ब्राह्ममुच्यते ॥ २० ॥
ततोऽहनि गते तस्मिन्सर्वेषामेव देहिनाम् ॥ शरीरनिर्वृतिं दृष्ट्वा लोकः संहारबुद्धिमान् ॥ २१ ॥ देवतानां च सर्वेषां ब्राह्मणानां मही-
पते ॥ देत्यानां मानवानां च यक्षगन्धर्वराक्षसाम् ॥ २२ ॥ देवर्षीणां ब्रह्मर्षीणां तथा राजर्षिणामपि ॥ किन्नराणामप्सरसां भुजङ्गानां
तथैव च ॥ २३ ॥ पर्वतानां नदीनां च पशूनां चैव भारत ॥ तिर्यग्योनिगतानां च सत्त्वानां मृगपक्षिणाम् ॥ २४ ॥ महाभूतपति-
दैवैः पञ्चभूतानि भूतकृत् ॥ जगत्संहारणार्थाय कुरुते वैशसं महत् ॥ २५ ॥

क्षय देखा जाता है इसमें संदेह नहीं दिव्य बारह सहस्र वर्षका एक युग होता है. ऐसे सहस्र युगोंका एक ब्रह्माका दिन होता है ॥ २० ॥
उस दिनके समाप्त होनेमें संपूर्ण प्राणधारियोंकी निर्वृति होती है तब लोकके शरीरकी निर्वृति देखकर लोकसंहारकी इच्छासे बुद्धिमान् ॥ २१ ॥ सब
देवता और ब्राह्मण तथा दैत्य मनुष्य यक्ष गन्धर्व राक्षस ॥ २२ ॥ देवर्षि ब्रह्मर्षि राजर्षि किन्नर अप्सरा भुजंग ॥ २३ ॥ पर्वत नदी पशु तिर्यक्यो
निमें प्राप्त हुए जीव मृगपक्षियोंको हे भारत ॥ २४ ॥ महाभूतपति देव पंच भूत और महाभूतके करनेवाले जगत् संहारके निमित्त महाबीजस्त व्यवाहा

रको करते हैं ॥ २५ ॥ वही सूर्यरूप होकर नेत्रोंको ग्रहण करते हैं वायुरूपसे सब प्राणियोंको संहार करते हैं अग्नि होकर सब लोकोंको जलाते हैं मेघरूप होकर फिर वर्षा करते हैं ॥ २६ ॥ इति श्रीमहाभारते विलेख हरिवंशो भविष्यपर्वणि भाषायां पुष्करप्रादुर्भावे प्रश्नोत्तरं नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ वैशम्पायन बोले; योगी नारायण शुद्ध चिन्मात्र हो अभिकी समान होते हुए मद्ब्रह्म अहंकार पंच तन्मात्रा शरीरसे प्रदीप्त होकर तीक्ष्ण ज्वालारूप किरणोंसे उस स्वरूपसागरको जलाते हुए ॥ १ ॥ सब नदी कूशाविके सहित सागरोंका पान करके अपनी रश्मियोंसे सम्पूर्ण पर्वतोंकाभी जलपान करके ॥ २ ॥

भूत्वा सूर्यश्चक्षुषी चाददानो भूत्वा वायुः संहरन् प्राणिजातम् ॥ भूत्वा वह्निर्दह्यते सर्वलोकान्मेघोभूत्वा भूय एवाभ्यवर्षत ॥ २६ ॥ इति श्रीम० ६० भवि० पुष्करप्रादुर्भावे प्रश्नोत्तरं नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ भूत्वा नारायणो योगी सप्तमूर्तिर्विभावसुः ॥ गभस्तिभिः प्रदीप्ताभिः संक्षोषयति सागरान् ॥ १ ॥ पीत्वार्णवांश्च सर्वान्स नदीकूपांश्च सर्वशः ॥ पर्वतानां च सलिलं सर्वं पीत्वा च रश्मिभिः ॥ २ ॥ भित्त्वा सहस्रशश्चैव महीं नीत्वा रसातलम् ॥ रसातलजलं कृत्स्नं पिबते रसमुत्तमम् ॥ ३ ॥ अप्सु सृजन्नुदेमन्यद्ददाति प्राणिनां ध्रुवम् ॥ तत्सर्वमरविन्दाक्ष आदत्ते पुरुषोत्तमः ॥ ४ ॥ वायुश्च बलवान्भूत्वा स विधूयासिलं जगत् ॥ प्राणोदयं सुराणां च वायुना कुरुते हरिः ॥ ततो देवगणानां च सर्वेषामेव देहिनाम् ॥ ५ ॥ ये चेन्द्रियगणाः सर्वे ये चान्ये च यतोद्भवाः ॥ पूयं प्राणं शरीरं च पृथिवीमाश्रिता गुणाः ॥ ६ ॥ जिह्वा रसश्च क्लेदश्च संश्रिताः सलिलं गुणाः ॥ रूपं चक्षुर्विपाकश्च ज्योतिरेवाश्रिता गुणाः ॥ ७ ॥

सहस्रशः पृथ्वीके सण्ठकर रसातलमें पहुँचाकर सब रससहित पातालका जलपान कर ॥ ३ ॥ जलके क्लेद तथा अन्य वस्तु जो प्राणियोंके निमित्त रची थी वह सब वस्तु कमलनयन पुरुषोत्तम धारण करते हैं ॥ ४ ॥ वह वायु जलवान् होकर सब जगत्को कंपित करके वायुद्वारा देवताओंके प्राणोदयको करते हैं; तब देवगण और सम्पूर्ण देहधारियोंके ॥ ५ ॥ जो इन्द्रियगण हैं और जो विषय उनसे उद्भव हैं गंध घ्राणादि जो कार्यभूत गुण पृथ्वीमें आश्रित हैं ॥ ६ ॥ जिह्वा रस क्लेद जो जलमें स्थित है और रूप चक्षु विपाक जो गुण ज्योतिमें स्थित है ॥ ७ ॥ तत्प्राण चेष्टा यह गुण

पवनमें स्थित हैं. परमेष्ठी वरेण्य यह सब इन्द्रियोंके पति नारायणमें स्थित हैं ॥ ८ ॥ तब उनको प्राप्त होकर भगवान् अन्तर्पामिरासे सूक्ष्म क्रिणोंसे वायुसे आकृष्यमाण हुए परस्पर एकीभावको प्राप्त होते हैं अर्थात् उत्तमोंकी गतिसे कहकर यह मध्यमयोगियोंकी वायुनिरोध गति कहते हैं. वह बलवान् योगी मूलाधारादि सब चक्रोंके भेदनमें समर्थ होकर सम्पूर्ण जगत् पादादि जानुपर्यन्त भूस्थान आदिसे तंत्रोक्त दिशाकी भावना कर शरीरमात्रको विधु वन नीचे नीचे लय करनेके प्रकारसे निरसन कर सहस्र भ्रमण वायुद्वारा योगी गमन करता है ॥ ९ ॥ देवगणोंके संहर्षसे उत्पन्न हुई अग्नि सौ प्रकारसे प्रज्वलित होती हुई सब लोकोंको जलाती प्रवृत्त होती है ॥ १० ॥ पर्वतसहित वृक्ष गुल्म लता वल्ली तृण दिव्य विमान अनेक पुर ॥ ११ ॥ पुण्य

स्पर्शः प्राणश्च चेष्टा च पवनं संश्रिता गुणाः ॥ परमेष्ठिनं वरेण्यं च हृषीकेशं समाश्रिताः ॥ ८ ॥ ततो भगवता तत्र राईमाभिः परिवारिताः ॥ वायुनाकृष्यमाणाश्च रूपान्वोऽन्यसमाश्रयात् ॥ ९ ॥ तेषां संघर्षजोद्धतः पावकः शतधा ज्वलन् ॥ अदहन्निखिलौ-
ल्लोकानुग्रः संवर्तकोऽनलः ॥ १० ॥ सपर्वतास्तत्तुल्यगुल्माल्लतावल्लीस्तृणानि च ॥ विमानानि च दिव्यानि पुराणि विविधानि च ॥ ११ ॥ आश्रमाश्च तथा पुण्यान् दिव्यान् यायतनानि च ॥ यानि चाश्रयणीयानि तानि सर्वाणि सोऽदहत् ॥ १२ ॥ भस्मीभूतास्ततः सर्वाल्लौकाँल्लोकगुरुर्हरिः ॥ भूयो निर्वापयामास जलयुक्तेन कर्मणा ॥ १३ ॥ सहस्रदृष्टं महातेजा भूत्वा कृष्णो महाघनः ॥ दिव्यतोयेन हविषा तर्पयामास मेदिनीम् ॥ १४ ॥ ततः क्षीरनिकाशेन स्वादुना परमाम्भसा ॥ शिवेन पुण्येन मही निर्वाणमगमत्परम् ॥ १५ ॥

आश्रम दिव्यस्थान तथा अन्य स्थान (दहरादि) सबको भस्म करती है ॥ १२ ॥ जब सब लोक भस्मीभूत हो जाते हैं तब लोकगुरु नारायण फिर जलसे उस अग्निको बुझाते हैं (योगी समाधिको प्राप्त हो जल्युक्त अविव्यासंस्कारसे जागृत हो देहपातपर्यन्त संसारमें स्थिति करता है) ॥ १३ ॥ महातेजस्वी वही लुण्ण घनरूप सहस्रदृष्टि होकर दिव्य जलकी हविसे पृथ्वीको तृप्त करते हैं. (योगी विषयभेदमें सहस्र दृष्टिवाला होकर परंजपोतिरूपका संहर्ता होकर चन्द्रमंडलसे निकले जलसे शरीरको प्राप्त होता है अर्थात् पहले शरीरमें चेतना आती है) ॥ १४ ॥ तब क्षीरकी समान स्वादिष्ट उत्तम जलसे जो कि शिव और निर्माणरूप हैं पृथ्वी उससे परम तृप्त होती है, ! योगीका शरीर स्वच्छ निर्मल होनेसे परम शान्तिको प्राप्त होता है जरामृत्युरहित होता है ॥ १५ ॥

तब पर्वत आदिसहित यह पृथ्वी चारों ओर जलसे व्याप्त हो सब प्राणिरहित जलरूप हो जाती है (योगीकी दृष्टिमें वायुपदार्थ भी ब्रह्मरूप धारित हैं) ॥ १६ ॥ सम्पूर्ण महाभूत उस महापराक्रमी परमात्मामें प्रविष्ट हो जाते हैं जब सूर्य पवन नष्ट होकर आकाश सूक्ष्म रूप जनरहित हो जाता है (योगीको सूक्ष्म शुद्धवस्तुही दृष्टिगोचर होती है पवन आदित्य आदि बाह्य पदार्थ दृष्ट नहीं आते) ॥ १७ ॥ सबको शोष और पान करके एक सनातन देव निवास करते हैं यह बुद्धिमान् उस पुराणरूपमें स्थित होते हैं (सब वाणीसे परे योगी ब्रह्ममें स्थित होता है) ॥ १८ ॥ वह योगी योगको प्राप्त हो

ते नगा जलसंछन्नाः पयसः सर्वतोधराः ॥ एकार्णवजला भूत्वा सर्वसत्त्वविवर्जिताः ॥ १६ ॥ महाभूतान्यपि च तं प्रविष्टान्यमितोज-
सम् ॥ नष्टार्कपवनाकाशे सूक्ष्मे जनविवर्जिते ॥ १७ ॥ संशोषयित्वा पीत्वा च वसत्येकः सनातनः ॥ पौराणां रूपमास्थाय किम-
प्यामितबुद्धिमान् ॥ १८ ॥ एकार्णवजले ह्यासीद्योगी योगमुपागतः ॥ अयुतानां सहस्राणि गतान्येकार्णवेऽभसि ॥ न चेनं कश्चि-
द्व्यक्तं व्यक्तं वेदितुमर्हति ॥ १९ ॥ जनमेजय उवाच ॥ एकार्णवविधिः कोऽयं यश्चैव परिकीर्तितः ॥ क एष पुरुषो नाम किंयोगः
कश्च योगवान् ॥ २० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतावन्तमसौ कालमकार्णवविधिं प्रति ॥ करिष्यतीमं भगवानिति कश्चिन्न बुध्यते
॥ २१ ॥ न वै माता न च द्रष्टा न ज्ञाता नैव पाश्वरः ॥ ततोऽवज्ञायते कश्चिद्वृत्ते तं देवमीश्वरम् ॥ २२ ॥

एकार्णव जलमें स्थित होते हैं उस एकार्णव जलमें दश सहस्रों वर्ष स्थित होकर कोई व्यक्त अव्यक्त इनको जाननेको योग्य नहीं है (इसी प्रकार योगीको समाधिमें कोई कुछ नहीं जान सकता) ॥ १९ ॥ जनमेजय बोले, जो आपने एकार्णवविधि कही है यह क्या है यह पुरुष क्या है किस रूपका योग है और कौन योगवान् है अर्थात् उसका सम्बन्धी कौन है ॥ २० ॥ वैशम्पायन बोले, जो भगवान् इतने समयतक एकार्णवविधि करते हैं वह उस समय कोई नहीं जान सकता ॥ २१ ॥ न कोई उसका प्रमाता न दृष्ट न पार्श्वमें चलनेवाला है, उस देव ईश्वरके सिवाय कुछभी विदित नहीं होता है ॥ २२ ॥

कौन योगवान् है इसपर कहते हैं. आकाश पृथ्वी पवनको प्रकाश करते प्रजापति भुवनचर सुरेश्वर पितामह श्रुतिके स्थान महासुनिको शासन करते प्रभुने शयनकी इच्छा की. (इस प्रकार गुणयुक्त नारायणको योगी जीवरूप मनन करके अपने स्वरूपमें लय करता है) ॥ २३ ॥ इति श्रीमन्महाभा-
ते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पुष्करप्रादुर्भावे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ वैशम्पायन बोले, इस प्रकार वह महायशस्वी एकार्णवभूतमें जलकार
उत्सवहार कर शयन करते हैं अर्थात् वह हरि नारायण प्रभु शुद्ध चिन्मात्ररूपसे स्थित रहते हैं ॥ १ ॥ महार्णवकी समान महारजोगुणके मध्यमें रज

नभः क्षितिं पवनमथ प्रकाशयन्प्रजापतिं भुवनचरं सुरेश्वरम् ॥ पितामहं श्रुतिनिलयं महासुनिं शशिसूः शयनमरोचयत्प्रभुः ॥ २३ ॥
इति श्रीमन्महाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पुष्करप्रादुर्भावे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमेकार्णवीभूते
शेते लोके महाश्रुतिः ॥ प्रच्छाद्य सलिलं सर्वं हरिर्नारायणः प्रभुः ॥ १ ॥ महतो रजसो मध्ये महार्णवसमस्य वै ॥ विरजस्को
महाबाहुरक्षरं ब्रह्म यं विदुः ॥ २ ॥ आत्मरूपप्रकाशेन तपसा संवृतः प्रभुः ॥ त्रिकमास्थाय कालं तु ततः सुष्वाप सोऽव्ययः ॥ ३ ॥
पुरुषो यज्ञ इत्येवं यत्परं परिकीर्तितम् ॥ यच्चान्यत्पुरुषाख्यं स्यात्सर्वं तत्पुरुषोत्तमः ॥ ४ ॥ ये च यज्ञपरा विप्रा ऋत्विजा इति
संज्ञिताः ॥ आत्मदेहात्पुराभूता यज्ञेभ्यः श्रूयता तदा ॥ ५ ॥ ब्रह्माणं परमं ब्रह्मादुद्गातारं च सामगम् ॥ होतारमथ चाध्वर्युं
बाहुभ्याममृजत्प्रभुः ॥ ६ ॥ ब्राह्मणो ब्राह्मणत्वाच्च संप्रस्तारं च सर्वशः ॥ तन्मित्रं वरुणं सृष्ट्वा प्रतिष्ठातारमेव च ॥ ७ ॥

रहित महाबाहु जिसको अक्षर ब्रह्म कहते हैं ॥ २ ॥ आत्माके प्रकाशसे तपसे संवृत हो वह प्रभु भूत भविष्य वर्तमानरूप तीन कालमें स्थित हो वह
अविनाशी शयन कर गये ॥ ३ ॥ वह यज्ञपुरुष जो कि परम कहा जाता है और जो कुछभी पुरुष है वह सब पुरुषोत्तमरूप है ॥ ४ ॥ जो विप्र
परब्रह्ममें निष्ठावाले हैं रागादिशून्य ऋत्विक् है तथा तप आदिक वे अनादिसिद्ध उस पुरुषकी देहसे उत्पन्न हुए हैं उनको मुझसे सुनो ॥ ५ ॥ ब्रह्मा
उद्गाता और सामगा तथा होताको प्रभुने मुखसे उत्पन्न किया और अध्वर्युको भुजामे उत्तरन किया ॥ ६ ॥ ब्राह्मण अर्थात् ब्रह्मवेत्ताको प्रस्तार तथा

मित्रावरुणको ब्रह्मत्वे और प्रतिष्ठाता ॥ ७ ॥ तथा प्रतिहर्ता और पोता अच्छावाक मन और नेष्टा ॥ ८ ॥ हाथसे आग्नीध्र सुब्रह्मण्य यज्ञियको तथा ग्रावणको उत्पन्न किया. उन्नेता यज्ञियको भुजाओंसे उत्पन्न किया अर्थात् ब्रह्मा उद्गाता होता अथर्व्यु ब्राह्मणाच्छंसी प्रस्तोता मैत्रावरुण प्रतिप्रस्थाता प्रतिहर्ता पोता अच्छावाक नेष्टा आग्नीध्र सुब्रह्मण्य ग्रावस्तोता उन्नेता यह सोलह ऋत्विज हैं. यह यथाक्रमसे प्रणव तदर्थभावन सत्योक्ति प्राण जप धीतेक्ष्य पूर्वस्मृति आचार अपानजप भाविदुःख चिन्ता ईशपूजा दान योगोत्साह सात्त्विकी श्रद्धा वेदान्तश्रवण इन्द्रियशौर्य योगांगोंकी ऊर्जता चिन्तन करते हैं ॥ ९ ॥ इस प्रकारसे भगवान् ने सम्पूर्ण यज्ञके वक्ता ऋत्विजसंज्ञक सोलह ब्राह्मणोंको अपने अंगोंसे उत्पन्न किया है ॥ १० ॥ यह यज्ञसम्पित पुरुष उदरात्प्रतिहर्तारं पोतारं चैव भारत ॥ अच्छावाकमनोरूपां नेष्टारं चैव भारत ॥ ८ ॥ पाणिभ्यामथ चाग्नीध्रं सुब्रह्मण्यं च यज्ञियम् ॥ ग्रावणमथ बाहुभ्यामुन्नेतारं च यज्ञियम् ॥ ९ ॥ एवमेवैष भगवान् षोडशेतान् जगत्पातिः ॥ प्रवक्तृस्त्वयज्ञानामृत्विजोऽसृजदुत्तमान् ॥ १० ॥ तदेष वै वेदमयः पुरुषो यज्ञसंमितः ॥ वेदाश्च तन्मयाः सर्वे साङ्गोपनिषदक्रियाः ॥ ११ ॥ स्वपित्येकार्णवे चैव यदाश्चर्यमभूत्तदा ॥ श्रूयते तद्यथावृत्तं मार्कण्डेयो यदन्वभूत् ॥ १२ ॥ जीर्णो भगवतस्तस्य कुशावेव महामुनिः ॥ बहुवर्षसहस्रायुस्तस्यैव वरतेजसा ॥ १३ ॥ इति तीर्थप्रसङ्गेन पृथिवीतीर्थगोचरः ॥ आश्रमानपि पुण्याश्च तीर्थान्यापतनानि च ॥ १४ ॥ देशान्राष्ट्राणि चित्राणि पुराणि विविधानि च ॥ जपहोमरतः क्षान्तस्तपो घोरं समाश्रितः ॥ १५ ॥ मार्कण्डेयस्ततस्तस्य शनैर्वक्राद्दिनिःसृतः ॥ निष्कामन्तं न चात्मानं जानात देवमायया ॥ १६ ॥

वेदमय है अंग उपनिषद्की क्रियासहित तन्मय वेद है ॥ ११ ॥ जिस समय वह एकार्णवमें शयन कर गये तब बड़ा आश्चर्य हुआ. उस समयका वृत्तान्त मार्कण्डेयने अनुभव किया है ऐसा सुना है ॥ १२ ॥ उन भगवान् की कुक्षिमें सर्व उपाधिरहित मुनि जीर्ण हो विचरे उनके वरदानसे उनकी बहुत सहस्र वर्षकी आयु हो गई ॥ १३ ॥ एक समय तीर्थप्रसंगसे पृथ्वीके तीर्थोंमें विचरते हुए पवित्र आश्रम और पवित्र तीर्थ ॥ १४ ॥ देश राज्य विविध पुर देखते हुए जप होममें प्रीति करनेवाले शान्त हो घोर तप करते ॥ १५ ॥ शनैः शनैः मार्कण्डेयजी भगवान् के सुखसे निकले, निकल

कर देवमायासे उन्होंने अपनेको न जाना ॥ १६ ॥ उनके मुखसे निकलकर एकार्णव सागरमें मग्न हो गये तब मार्कण्डेयने देखा कि चारों ओर अंधकार व्याप्त हो रहा है ॥ १७ ॥ जब उनको बड़ा भय और अपने जीवनमें संदेह उत्पन्न हुआ, तब देवके दर्शनसे प्रसन्न होकर बड़े विस्मयको प्राप्त हुए ॥ १८ ॥ तब शंकित हो मध्यस्थमें स्थित हुए मार्कण्डेयजी विचारने लगे, यह मुझको मोह है या कोई स्वप्न प्रवृत्त हुआ है ॥ १९ ॥ इसमें ठीकही मेरा ज्ञाव अन्य प्रकारका हो गया है, इस प्रकारका अयुक्त असत्य किसी प्रकारसे सत्य हो नहीं सकता ॥ २० ॥ चन्द्रसूर्यके नष्ट होने पर्वत भूतलके छन्न

निष्क्रान्तस्तस्य वदनादेकार्णवमथो गतः ॥ सर्वतस्तमसाच्छन्नं मार्कण्डेयो निरीक्षते ॥ १७ ॥ तस्योत्पन्नं भयं तीव्रं संशयश्चात्मजी-
विते ॥ देवदर्शनसंहृष्टो विस्मयं चागमत्परम् ॥ १८ ॥ संचिन्तयति मण्यस्थो मार्कण्डेयोऽतिशङ्कितः ॥ किंस्त्रिद्वेदियं चिन्ता मोहः
स्वप्नोऽनुभूयते ॥ १९ ॥ व्यक्तमन्यतमो भावो ह्येतेषां भविता मम ॥ नदीदृशमसंक्रिष्टमयुक्तं सत्यमर्हति ॥ २० ॥ नष्टचन्द्रार्क-
पवने छन्नपर्वतभूतले ॥ कतमः स्यादयं लोक इति चिन्ताव्यवस्थितः ॥ २१ ॥ अपश्यच्चापि पुरुषं शयानं पर्वतोपमम् ॥ तोया-
ढ्यमिव जीमूतं मध्ये मग्नं महागर्भे ॥ २२ ॥ तपन्तमिव तेजोभिर्भास्वन्तमिव वंचसा ॥ जाग्रन्तामिव गाम्भीर्याच्छ्रुतन्तामिव पन्नगम्
॥ २३ ॥ स देवं प्रष्टुमायाति को भवानिति विस्मयात् ॥ तथैव च शनैर्भूया मुनः कुक्षिं प्रवेशितः ॥ २४ ॥ स प्रविष्टः पुनः
कुक्षौ मार्कण्डेयः सुनिश्चितः ॥ तथैव चरते भूयो विज्ञानस्वप्नदर्शनम् ॥ २५ ॥ स तथैव यथापूर्वं पृथिवीमटते पुनः ॥ पुण्यती-
र्थानि पूतानि निरीक्षदिवि भूतले ॥ २६ ॥

होनेमें यह लोक किस प्रकार हो सकता है, इस चिन्तासे व्याकुल हुए ॥ २१ ॥ तब उन्होंने पर्वतकी समान एक पुरुषको शयन करते देखा, जिस प्रकार महासागरमें नील मेघ स्थित हो ॥ २२ ॥ तेजकी सम्पत्तिसे प्रकाशमान हो रहे थे कान्ति फैल रही थी गंभीरतासे जागते हुए सर्पकी समान स्वाश लेते ॥ २३ ॥ देवको पूछनेको चले, आप कौन हो तब यह मुनि शनैः २ उनकी कुक्षिमें प्रविष्ट हुए ॥ २४ ॥ कुक्षिमें प्रविष्ट हो मार्कण्डेयजी स्वप्नदर्शनकी समान उसमें विचरने लगे ॥ २५ ॥ आर वहां पूर्वकालकी समान पृथ्वीमें विचरने लगे और स्वर्ग तथा पृथ्वीमें पवित्र

तीर्थ देखने लगे ॥ २६ ॥ बड़ी बड़ी दक्षिणाओंके यज्ञोंसे यजन करते हुए देवकी कुक्षिमें उन्होंने सेकड़ों ब्राह्मणोंको देखा ॥ २७ ॥ वे ब्राह्मणादि वर्ण सम्पूर्ण सङ्घट्टिमें स्थित थे. चारों आश्रम यथोक्त धर्मका अनुष्ठान करनेवाले थे ॥ २८ ॥ सो सङ्घट्ट वर्तक महामुनि मार्कण्डेयजी पृथ्वीमें विचरते हुए उस कुक्षिको सर्वथा न देख सके ॥ २९ ॥ फिर किसी समय वह उनके मुखसे निकले तब न्यग्रोधकी शाखामें सोते हुए एक बालकको देखा ॥ ३० ॥ एकार्णव जल जो कि नीहारसे व्याप्त था अव्यक्त और सब प्राणियोंके बिना लोक भयानक हो रहा था ॥ ३१ ॥ तब यह फिर

ऋतुभिर्यजमानाश्च समाप्तवरदक्षिणेः ॥ पश्यते देवकुक्षिस्थान्यज्ञियाञ्छतशो द्विजान् ॥ २७ ॥ सद्वृत्तमाश्रिताः सर्वे वर्णा ब्राह्मण-पूर्वकाः ॥ चत्वारश्चाश्रमाः सम्यग्यथोद्दिष्टपदानुगाः ॥ २८ ॥ वर्षाणां शतसाहस्रं मार्कण्डेयो महामुनिः ॥ विचारन् पृथिवीं कृत्स्नां न च कुक्ष्यन्तमेक्षत ॥ २९ ॥ ततः कदाचिदथ वै पुनर्वक्राद्विनिस्सृतः ॥ सुप्तं न्यग्रोधशाखायां बालमेकं निरीक्षते ॥ ३० ॥ यथा चेकार्णवजले नीहारेण वृत्तान्तरे ॥ अव्यक्तभीषणे लोके सर्वभूतविर्जिते ॥ ३१ ॥ स भूयो विस्मयाविष्टः कौतूहलसमन्वितः ॥ बालमादित्यसंकाशं न शक्नोत्युपसर्पितम् ॥ ३२ ॥ सोऽचिन्तयद्येकान्ते स्थित्वा सलिलसन्निधौ ॥ पूर्वदृष्टमिदं नेति शङ्कितो देवमायया ॥ ३३ ॥ अगाधे सलिलस्तन्धे मार्कण्डेयः पुङ्गवमुनिः ॥ न शान्तिं लभते तत्र श्रमात्सन्तस्तविह्वलः ॥ ३४ ॥ तथैव भगवान्हंसो गतो योगेन बालताम् ॥ बभाषे मेघतुल्येन स्वरेण पुरुषोत्तमः ॥ ३५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मा भैर्वत्स न भेतव्य-मिहैवायाहि चान्तिकम् ॥ मार्कण्डेय मुने धीर बालस्त्वं श्रमपीडितः ॥ ३६ ॥

विस्मयको प्राप्त हो कौतूहलयुक्त होकर बालमूर्त्यकी समान प्रकाशमान उनके निकट जानेको समर्थ न हुए ॥ ३२ ॥ तब वह एकान्तमें जलके निकट विचारने लगे मैंने यह पूर्व देखा है या नहीं इस प्रकार देवमायासे शङ्कित हुए ॥ ३३ ॥ अगाध और स्तब्धजलमें पैरते हुए महामुनि मार्कण्डेयजी श्रमसे व्याकुल हो शान्तिको किसी प्रकार प्राप्त न हुए ॥ ३४ ॥ इसी प्रकार भगवान् हंस योगमार्गसे बालअवस्थाको प्राप्त हुए, मेघकी समान गंभीर स्वरसे पुरुषोत्तमने कहा ॥ ३५ ॥ श्रीभगवान् बोले, हे वत्स ! तुम मत डरो और हमारे समीपमें आओ. हे मार्कण्डेय मुनि ! तुम बालक हो.

हे धीर ! इस समय श्रमसे पीड़ित हो ॥ ३६ ॥ मार्कण्डेय बोले, मेरे तपको तिरस्कार करता हुआ मुझे नाम लेकर कौन बुलाता है. बहुत वर्षोंकी आयुको धर्षणा करता हुआ मेरी वय न्यून करता है-॥ ३७ ॥ यह आचार देवताओंमें भी नहीं है मुझको विश्वेश ब्रह्माभी दीर्घायु कह कर बोलते हैं ॥ ३८ ॥ आज कौन मेरे घोरतपको तिरस्कार कर मुझे मार्कण्डेय कहकर मृत्युके देखनेकी इच्छा करता है ॥ ३९ ॥ वैशंपायन बोले, जो मार्कण्डेय मुनिने जब क्रोधसे इस प्रकार कहा तब इनसे भगवान् ने फिर कहा ॥ ४० ॥ श्रीभगवान् बोले, हे वत्स ! मैं तुम्हारा पिता हृषीकेश गुरु हूँ

मार्कण्डेय उवाच ॥ कौ मां नाम्ना कीर्तयते तपः परिभवन्मम ॥ बहुवर्षसन्नायुर्द्वर्षयंश्चैव मे वयः ॥ ३७ ॥ न ह्येषु समुदाचारो देवेष्वपि समाहितः ॥ मां ब्रह्मापि स विश्वेशा दीर्घायुरिति भाषते ॥ ३८ ॥ कस्तपोघाराशिरसो ममाद्य त्यक्तजीवितः ॥ मार्कण्डेयेति मां प्रोक्त्वा मृत्युमीक्षितुमिच्छति ॥ ३९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमाभाषतं क्रोधान्मार्कण्डेयो महासुनिः ॥ अथैनं भगवान् भूयो बभाषे तत्परायणम् ॥ ४० ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अहं ते जनकां वत्स हृषीकेशः पिता गुरुः ॥ आयुःप्रदाता पौराणः किमर्थं नोपसर्पसे ॥ ४१ ॥ मां पुत्रकामः प्रथमं पिता ते ह्यङ्गिरा मुनिः ॥ पूर्वमाराधयामास तपस्तीव्रमुपाश्रितः ॥ ४२ ॥ ततस्त्वां घाराशिरसं दहनोपमतेजसम् ॥ दत्तवानहमात्मघृष्टं महर्षिममितायुषम् ॥ ४३ ॥ तत्र नोत्सहते चान्यो यो न भृत्या ममात्मकः ॥ द्रष्टुमेकाग्रवगतं क्रीडन्तं योगधर्मिणम् ॥ ४४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः प्रसन्नवदनो विस्मयोत्फुल्लज्जनः ॥ मूर्ध्नि बद्धा-जलिपुटो मार्कण्डेयो महातपाः ॥ ४५ ॥

वह आयुके देनेवाले मेरे निकट तुम क्यों नहीं आते ॥ ४१ ॥ प्रथम तुम्हारे पिता अंगिराकृषिने पुत्रकी इच्छासे बड़े तीव्र तपको कर मेरी आराधना की थी ॥ ४२ ॥ तब अधिकी समान घोर शिरवाले बड़े तेजस्वी तुमको मैंने प्रदान किया और दीर्घ आयु प्रदान की ॥ ४३ ॥ जो मेरा भक्त नहीं है वह इस एकार्णव सागरके बीचमें क्रीडा करते हुए मुझे देखनेको समर्थ नहीं है. कारण कि योगधर्मके सिवाय इसे कोई नहीं जान सकता ॥ ४४ ॥ वैशंपायन बोले, तब प्रसन्न वदन विस्मयसे उत्फुल्ल नेत्र हो शिरपर अंजली बांधे महातपस्वी मार्कण्डेयजी ॥ ४५ ॥

नाम तो व सुनकर दीर्घमायु लोकपूजित मार्कण्डेयजीने शिरसे प्रभुको नमस्कार किया ॥ ४६ ॥ मार्कण्डेयजी बोले, हे पापरहित ! आपसे मैं इस मायाके जाननेकी इच्छा करता हूँ जो आप बालरूप एकार्णवमें शयन करते हो ॥ ४७ ॥ हे भगवन् ! आप किस संज्ञासे लोकमें जाने जाते हो आपको मैं महाभूत जानता हूँ इसमें भूत स्थित नहीं हो सकता ॥ ४८ ॥ श्रीभगवान् बोले, मैं नारायण सब देहधारियोंका उत्पत्तिकारण हूँ सब प्राणियोंका उत्पन्न करनेवाला सबका संहार करता हूँ ॥ ४९ ॥ मैं इन्द्रपदमें इन्द्र ऋतुओंका वर्षरूप हूँ मैंही युगमें नामगोत्रे ततः श्रुत्वा दीर्घायुलोकपूजितः ॥ अथाकरोन्नमस्कारं प्रणतः शिरसा प्रभुम् ॥ ४६ ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ इच्छेऽहं तत्त्वतां मायामिमां ज्ञातुं तवानघ ॥ यदेकार्णवमध्यस्थः शेषे त्वं बालरूपवान् ॥ ४७ ॥ किंसंज्ञः कश्च भगवाँल्लोके विज्ञायसेऽनघ ॥ तर्कये त्वां महाभूतं न भूतमिह तिष्ठति ॥ ४८ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अहं नारायणो ब्रह्मा संभवः सर्वदेहिनाम् ॥ सर्वभूतांद्भवकः सर्वभूतविनाशनः ॥ ४९ ॥ अहमैन्द्रे पदे शक ऋतुनामपि वत्सरः ॥ अहं युगे युगाक्षश्च युगस्यावर्त्त एव च ॥ ५० ॥ अहं सर्वाणि सत्त्वानि देवतान्यस्त्रिलानि च ॥ भुजगानामहं शेषस्तादृष्योऽहं सर्वपक्षिणाम् ॥ ५१ ॥ अहं सहस्रशीर्षाद्यैः पदैरभिसंवृतः ॥ आदित्यो यज्ञपुरुषो देवो यज्ञमयो मत्स्यः ॥ अहमग्निर्हव्यवाहो यादसां पतिरव्ययः ॥ ५२ ॥ यत्पृथिव्यां द्विजेन्द्राणां तपसा भावितात्मनाम् ॥ बहुजन्मनिरुद्धात्मा ब्राह्मणो यतिरुच्यते ॥ ५३ ॥ ज्ञानवान् दृष्टविश्वात्मा योगिनां योगवित्तमः ॥ कृतान्तः सर्वभूतानां विश्वेषां कालसंज्ञितः ॥ ५४ ॥ अहं कर्म क्रिया जीवः सर्वेषां धर्मदर्शनः ॥ निष्क्रियः सर्वभूतेषु स्वात्मज्योतिः सनातनः ॥ ५५ ॥ युगाक्ष और युगका आर्वतक हूँ ॥ ५० ॥ मैंही सम्पूर्ण जीव और सब देवतारूप हूँ सर्पोंमें शेष और पक्षियोंमें गरुड हूँ ॥ ५१ ॥ मैं सहस्रशीर्षा आदि पदोंसे युक्त होकर आदित्य यज्ञपुरुष देव यज्ञमय मत्स्यस्वरूप अग्नि हव्यवाह जलपति अविनाशी हूँ ॥ ५२ ॥ जो पृथ्वीमें तपसे भावितात्मावाले तथा बहुत जन्मपर्यन्त जप तप करनेवाले ब्राह्मणोंमें जो यति हैं सो मैं हूँ ॥ ५३ ॥ ज्ञानवान् विश्वात्माका द्रष्टा योग जाननेवालोंमें श्रेष्ठ सब प्राणियोंका अन्त करनेवाले सब जगत्का कालस्वरूप ॥ ५४ ॥ कर्म क्रिया जीव और सबका धर्म देखनेवाला मैं हूँ. सब प्राणियोंमें क्रियारहित आत्मज्योति

सनातन में हूं ॥ ५५ ॥ प्रधानपुरुष देव आदि अक्षय अविनाशी में हूं, मैंही धर्मतत्पर सब आश्रमवासियोंका हूं ॥ ५६ ॥ मैंही हयशिर नामक देव महा क्षीरसागरमें स्थित हुआ ऋत सत्य परम प्रजापतिरूप में एकही हूं ॥ ५७ ॥ मैंही सांख्ययोग और परंपदरूप हूं, मैंही यजनके योग्य शिवस्वरूप विद्याधिप कहा जाता हूं ॥ ५८ ॥ मैं ज्योति वायु भूमि आकाश जल समुद्र नक्षत्र दशों दिशा वर्ष सोम पर्जन्य सूर्यरूप हूं ॥ ५९ ॥ मैंही क्षीरसागर समुद्र वडवामुख हूं, मैंही संवर्त अभि होकर जल पान कर जाता हूं तथा रवि हूं ॥ ६० ॥ मैंही पुराणपुरुष परम परायण हूं, मैंही भविष्यमें होनहा-

प्रधानं पुरुषो देवोऽहमाद्यस्त्वक्षयोऽव्ययः ॥ अहं धर्मस्तपश्चाहं सर्वाश्रमनिवासिनाम् ॥ ५६ ॥ अहं हयशिरो देवः क्षीरोदे यो महार्णवे ॥ ऋतं सत्यं च परममहमेकः प्रजापतिः ॥ ५७ ॥ अहं सांख्यमहं योगमहं तत्परम् पदम् ॥ अहमिज्यो भवश्चाहमहं विद्याधिपः स्मृतः ॥ ५८ ॥ अहं ज्योतिरहं वायुरहं भूमिरहं नभः ॥ अहमापः समुद्राश्च नक्षत्राणि दिशो दश ॥ अहं वर्षमहं सोमः पर्जन्याऽहमहं रविः ॥ ५९ ॥ क्षीरोदः सागरश्चाहं समुद्रो वडवामुखः ॥ वह्निः संवर्तको भूत्वा पिवंस्तोयमहं रविः ॥ ६० ॥ अहं पुराणं रमं तथेवेह परायणम् ॥ भविष्यं चैव सर्वत्र भविष्ये सर्वसंभवः ॥ ६१ ॥ यत्किंचित्पश्यसे चैव यच्छृणोषि च किंचन ॥ यच्चानुभवसे लोके तत्सर्वं मामकं स्मृतम् ॥ ६२ ॥ विश्वं सृष्टं मया पूर्वं सृजेयं चाद्य पश्य माम् ॥ युगे युगे च स्मर्यामि मार्कण्डेयाऽस्तिष्ठं जगत् ॥ ६३ ॥ तदेतदस्तिष्ठं सर्वं मार्कण्डेयावधारय ॥ शुश्रूषुर्मम धर्मेऽसुः कुक्षौ चर सुखी भव ॥ ६४ ॥ मम ब्रह्मा शरीरस्यो देवाश्च ऋषिभिः सह ॥ व्यक्तमव्यक्तयोगं मामवगच्छापरजितम् ॥ ६५ ॥

रूप हूं ॥ ६१ ॥ जो कुछ देखा और सुना जाता है और जो कुछ लोकमें अनुभव किया जाता है वह सब मुझे जानो ॥ ६२ ॥ पहले मैंने जैसा विश्व रचा था देखो वैसाही अब रचूंगा मुझे देखो, हे मार्कण्डेय ! युगयुगमें मैं जगत्की रचना करता हूं ॥ ६३ ॥ हे मार्कण्डेय ! यह सब बातों तुम विचार करो धर्मके सुननेकी इच्छासे मेरी कुक्षिमें सुखपूर्वक विचरो ॥ ६४ ॥ ब्रह्मा मेरे शरीरमें स्थित है, देवता ऋषियोंके सहित स्थित हैं, व्यक्त अव्यक्तसे योगद्वारा मुझे जानकर सुखी हो और अपराजित जानो ॥ ६५ ॥

मैंही अक्षर मंत्र व्यक्षररूप हूं त्रिपद परम और त्रिवर्गके अर्थका निदर्शनरूप हूं ॥ ६६ ॥ वैशंपायन बोले, इस प्रकार महासुनि व्यासने वेदान्त और पुराणोंमें वर्णन किया है जो मार्कण्डेयजीके प्रति कहा गया है. तब महासुनि यह वचन सुन प्रसन्न हुए, उस समय महासुनिको ॥ ६७ ॥ विश्वरूप-धारी प्रभुने अपने जठरमें प्रवेश कराया तब सुनिभेष्ट भगवान् की कुक्षिमें प्रवेश कर गये और अविनाशी हंसकी गाथा श्रवण करनेको सुखसे रमण करने लगे ॥ ६८ ॥ नाशरहित अनेक प्रकारके शरीर धारण करनेवाले चन्द्रसूर्यसे रहित महावर्णवर्मे शनैः शनैः विचरण करते हंसनामक भगवान् प्रलयके अन्तमें अहमेवाक्षरो मन्त्ररूपक्षरश्चैव सर्वज्ञः ॥ त्रिपदश्चैव परमस्त्रिवर्गार्थनिदर्शनः ॥ ६६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमेतत्पुराणेषु वेदान्ते च महासुनिः ॥ वक्त्रं व्याहृतवानाशु मार्कण्डेयं महासुनिम् ॥ ६७ ॥ प्रवेशयामास ततो जठरं विश्वरूपधृक् ॥ ततो भगवतः कुक्षिं प्रविष्टो मुनिसत्तमः ॥ राम सुखमासाद्य शुश्रूषुर्हंसमव्ययम् ॥ ६८ ॥ तदक्षरं विविधमथाश्रितो वपुर्महार्णवे व्यपगतचन्द्रभास्करे ॥ शनैश्चरन्प्रभुरपि हंससंज्ञितोऽसृजजगद्रिसृजति कालपर्यये ॥ ६९ ॥ इति श्रीम० स्विलेषु हरिवंशे भवि० दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ आपवः स विभुर्भूत्वा कारयामास वै तपः ॥ छादयित्वात्मनो देहमात्मना कुम्भसंभवः ॥ १ ॥ ततो महात्माऽतिबलो मतिं लोकस्य सर्जने ॥ महतां पञ्चभूतानां विश्वभूतो व्यचिन्तयत् ॥ २ ॥ तस्य चिन्तयतस्तत्र तपसा भावितात्मनः ॥ निराकाशे तोयमये सूक्ष्मे जगति गह्वरे ॥ ३ ॥ ईषत्संक्षोभयामास सोऽर्णवं सलिले स्थितः ॥ सोऽनन्तरोर्मिणा सूक्ष्ममयच्छिद्रमभूत्तदा ॥ ४ ॥

भगवत्की रचना करते हैं ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते स्विलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ वैशंपायन बोले, वह हंसरूप विभु जलरूप वशिष्ठ होकर अर्थात् अपने कुंभसे उत्पन्न हुए अपने शरीरको समष्टि अभिमानवाले अपने आत्मासे आच्छादन कर तप करने लगे ॥ १ ॥ तब उन महाबली महात्माने लोकके निर्माण करनेकी इच्छा की, महान् और पंच महाभूतकी चिन्ता करने लगा ॥ २ ॥ उन भावितात्मावालेके उस समय चिन्ता करनेपर आकाशरहित जलमय सूक्ष्म जगत्के होनेमें ॥ ३ ॥ जलमें स्थित हो उन्होंने सागरको यत्किंचित् शुभित किया. तब संकल्परूपी

लहरोंसे आकाश नामक सूक्ष्म छिद्र हुआ ॥ ४ ॥ तब वह ईश्वर अन्य संकल्पसे आकाशमें शब्दरूपसे गतिवाला होकर पवनरूप द्रवसे उत्पन्न हो आकाशको प्राप्त होकर अप्राप्त हुएकी समान क्षोभसे रहित हो वायुरूपसे बड़े ॥ ५ ॥ उन बलवान्‌के बढनेसे सागर क्षुब्धित हुआ तब एक दूसरेके वेगसे आहत हो ऊर्मी उसको मथन करने लगी ॥ ६ ॥ महार्णवके क्षुब्धित और जलके मथित होनेसे कान्तिमान्‌ वैश्वानराग्नि प्रभु प्रगट हुआ ॥ ७ ॥ तब अग्निने बहुतसे जलको सुखा डाला, तब सागरमें मूलनेसे छिद्र हुआ उस समय आकाश निकला ॥ ८ ॥ आत्माके तेजसे उत्पन्न हुए अमृतके

तत्र शब्दगतिर्भूत्वा मातृतद्रवसंभवः ॥ स लब्धान्तरमक्षोभ्यो व्यवर्द्धत समीरणः ॥ ५ ॥ विवर्द्धता बलवता तेन संक्षोभितोऽर्णवः ॥ अन्यान्पवेगाभिहता ममन्धुर्धोर्मयो भृशम् ॥ ६ ॥ महार्णवस्य क्षुब्धस्य तस्मिन्नम्भसि मथ्यति ॥ कृष्णवर्त्मा समभवत्प्रभुर्वैश्वानरोर्चिमान् ॥ ७ ॥ तत्र संशोषयामास पावकः सलिलं बहु ॥ क्षयाज्जलनिषेद्धिद्रमभवन्निःसृतं नभः ॥ ८ ॥ आत्मतेजोद्भवाः पुण्या आपोऽमृतरसोपमाः ॥ आकाशं छिद्रसंभूतं वायुराकाशसंभवः ॥ ९ ॥ आज्यसंघर्षणोद्भूतं पावकं चाज्यसंभवम् ॥ दृष्ट्वा प्रीतियुतो देवो महाभूतादिभावनः ॥ १० ॥ दृष्ट्वा भूतानि भगवौल्लोकसृष्ट्यर्थतत्त्ववित् ॥ ऋणो जन्मसहितं बहुरूपो विचिन्वति ॥ ११ ॥ चतुर्युगादिसंस्थान्ते सहस्रयुगपर्यये ॥ यत्पृथिव्य द्विजेन्द्राणां तपसा भावितात्मनाम् ॥ १२ ॥ बहुजन्मानि-रुद्धात्मा ब्राह्मणो यतिरुत्तमः ॥ ज्ञानवान् दृष्टविज्ञात्मा योगिनां योगवित्तमः ॥ १३ ॥

रसकी समान जल हुए और आकाशसे वायु प्रादुर्भूत हुआ ॥ ९ ॥ जलसे अग्नि अग्निसे जल प्रगट हुआ है, यह देखकर देव बहुत प्रसन्न हुए, इस प्रकार भूतभावन देव प्रसन्न होकर ॥ १० ॥ भूतोंको देख तत्त्वज्ञाता प्रभवान्‌ लोककी सृष्टिके निमित्त ब्रह्माके जन्मको विचारने लगे ॥ ११ ॥ चार युगोंकी संस्थासे सहस्र वर्ष पर्यन्त जो पूर्णमें गण करके प्रवृत्त आत्मावाले ॥ १२ ॥ बहुत जन्मोंमें निरुद्ध अज्ञावाले पूर्वोक्त ब्राह्मणोंके मध्यमें उत्तम ज्ञानवान्‌ विश्वात्मा योगियोंमें योग जाननेवालोंमें श्रेष्ठ ॥ १३ ॥

उस योगवान् जानने योग्य सम्पूर्ण ऐश्वर्य और विक्रमसे युक्त पुरुषको जो पूर्वसृष्टिमें सब प्रकारके योग्य था उसे विश्व और ब्रह्मा बनानेके निमित्त ईश्वरने नियुक्त किया ॥ १४ ॥ तब उस महाजलमें ब्रह्माके नियोगके अनन्तर नारायण अपने निर्विशेषरूपको प्राप्त होकर शयन क्रीडा करने प्रसन्न रहते हैं और यह ब्रह्मा कर्मानुसार सृष्टि रचते हैं ॥ १५ ॥ नारायणने अपनी नाभिसे एक कमल उत्पन्न किया जो रजरहित सहस्रदल सुवर्णकी सभान प्रकाशमान था ॥ १६ ॥ अग्निकी जलवी हुई सित्ताकी सभान उज्ज्वल प्रभावाला सुमंधियुक्त शरदकालके उज्ज्वलमुर्यकी सभान प्रकाशमान वह उदार कान्तिमान कमल विराजमान

तं योगवन्तं विज्ञेयं संपूर्णैश्वर्यविक्रमम् ॥ देवो ब्रह्मणि विश्वे च नियोजयति योगवित् ॥ १४ ॥ ततस्तस्मिन्महातोये हविषो हरि-
रच्युतः ॥ स्वप्नं क्रीडंश्च विविधं मोदते चैव पावकिः ॥ १५ ॥ पद्मं नाभ्युद्भवं चैकं समुत्पादितवांस्तदा ॥ सहस्रपत्रं विरजो
भास्कराभं हिरण्मयम् ॥ १६ ॥ हुताशनं ज्वलितशिखोज्ज्वलप्रभं सुगन्धिनं झरदमलार्कतेजसम् ॥ विराजते कमलमुदारवर्चसं
महात्मनस्तनुरुद्धच्छरददर्शनम् ॥ १७ ॥ इति श्रीमद्भारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ वैशम्पायन
उवाच ॥ अथ योगविदां श्रेष्ठं सर्वभूतमनोमयम् ॥ सद्यः सर्वभूतानां ब्रह्माणं सर्वतोमुखम् ॥ १ ॥ तस्मिन् हिरण्मये पद्मे बहुयो-
जनविस्तृते ॥ सर्वतेशोऽगुणमये पार्थिवैर्लक्ष्णेयुते ॥ २ ॥ तच्च पद्मं पुराणज्ञाः पृथिवीरुदसुत्तमम् ॥ नारायणाङ्गसंभूतं प्रवदन्ति
महर्षयः ॥ ३ ॥ या तु पद्मासना देवी पृथिवी तां प्रचक्षते ॥ ये गर्भसाराङ्कुरतस्तान्दिव्यान्पर्वताम्बिबुः ॥ ४ ॥

होने लगा. कारण कि उन महात्माके शरीरसे प्रकाशित हुआ था और सुन्दर दर्शनीय था ॥ १७ ॥ इति श्रीमद्भारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि
एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ वैशम्पायन बोले, तब योगवालोंमें भेद सर्व प्राणियोंके मनोमय सब भूतोंके सदा सन ओरसे मुखशाले ब्रह्माजी ॥ १ ॥
उस बहुत योगियोंके विस्तारवाले सुवर्णमय कमलमें, जो सब तेषोंके गुणमय और सब लक्षणसे लक्षित था ॥ २ ॥ ऋषि और पुराणके जाननेवाले
उस कमलको पृथ्वीरुह और नारायणके अंगसे उत्पन्न कहते हैं ॥ ३ ॥ और उस कमलकी आसन पृथ्वी देवी कही जाती है और उस कमलके अंकु

रौंको दिव्य पर्वत कहते हैं ॥ ४ ॥ हिमालय मेरु नील निषध कैलास सुजवान् गन्धमादन ॥ ५ ॥ पवित्र त्रिशित्तर कान्त मंदर उदय कंदर विंध्य अस्ताचल पर्वत ॥ ६ ॥ यह देवगण और महात्मा सिद्धोंके आश्रम हैं. इन पर्वतोंमें इन पुण्यात्माओंके पवित्र आश्रम हैं ॥ ७ ॥ इनका इतर देश जम्बुद्वीप कहलाता है. यह जम्बुद्वीप कर्मभूमि है. यहीं यज्ञ होते हैं ॥ ८ ॥ जो स्वर्गके गतिसे अपृथक्के रमकी समान जल निर्गत होता है वही दिव्य तीर्थस्नानसे युक्त देवगण कहती है ॥ ९ ॥ जो यह कमलके चारों ओर केशर है वही पृथ्वीमें असंख्यात पातु हैं ॥ १० ॥ हे राजन् ! जो कमलके

हिमन्वतं च मेरुं च नीलं निषधमेव च ॥ कैलासं सुजगन्तं च तथाद्रिं गन्धमादनम् ॥ ५ ॥ पुण्यं त्रिशित्तरं चैव कान्तं मन्दरमेव च ॥ उदयं कन्दरं चैव विन्ध्यमस्तं च पर्वतम् ॥ ६ ॥ एते देवगणानां च सिद्धानां च महात्मनाम् ॥ आश्रमाः पुण्यशीलानां सर्वकामयुतादयः ॥ ७ ॥ एतेषामितरो देशो जम्बुद्वीप इति स्मृतः ॥ जम्बुद्वीपस्य संख्यानं याज्ञिषा यत्र चक्रिरे ॥ ८ ॥ गर्भाद्यत्स्रवते तोयं देवामृतरसोपमम् ॥ दिव्यतीर्थं शतापाङ्गघस्ता दिव्याः सारतः स्मृताः ॥ ९ ॥ यान्येतानि तु पद्मस्य केशराणि समन्ततः ॥ असंख्याताः पृथिव्यां तु विभे ते धातुपर्वताः ॥ १० ॥ यानि पद्मस्य पत्राणि भूरीण्यूर्ध्वं नराधिप ॥ ते दुर्गमाः शैलचिता म्लेच्छदेशा विकल्पिताः ॥ ११ ॥ यान्यथः पद्मपत्राणि वासार्थं तानि भागशः ॥ देत्यानामुरगाणां च पातालं तन्महात्मनाम् ॥ १२ ॥ तेषामधोगतं यत्तदुदकेत्यभिसंज्ञितम् ॥ महापातककर्माणो मचन्ते यत्र मानवाः ॥ १३ ॥ पद्मस्यागते कुशं यत्तदेकार्णवजलं महत् ॥ प्रोक्तास्ते दिक्षु संचाताश्चत्वारो जलसागराः ॥ १४ ॥ ऋषेर्नारायणस्यायं महापुष्करसंभवः ॥ प्रादुर्भाः ॥ १५ ॥ तस्मान्नाम्ना पुष्करसंभवः १५

ऊपरके पत्र हैं, वेही दुर्गम पर्वत म्लेच्छ देशोंमें आवृत्त हैं ॥ ११ ॥ और जो कमलपत्र नीचेकी ओर है वह देव उरग और महात्मा लोगोंके रहनेका स्थान पाताल है ॥ १२ ॥ उस कमलका नीचेका भाग जलरूप है. जहां महाराज करनेवाले मनुष्य डूबते हैं ॥ १३ ॥ पद्मके अन्तर्गत् जो कुश है वह एकार्णव जल है और उसकी चारों दिशाओंमें जलके चार सागर हैं ॥ १४ ॥ यह नारायण ऋषिके महापुष्करका संभव है. उससे उत्पन्न होनेसे

पुष्कर नाम कहाता है ॥ १५ ॥ इस कारणसे उसके जाननेवाले पुरातन ऋषियोंद्वारा तथा यज्ञ और वेदार्थ जाननेवालोंके द्वारा यज्ञमें उनका नाम पद्मचिती कथन किया गया है ॥ १६ ॥ इस प्रकारसे जगवान्ने कमलमें शिबकी परम विधि पर्वत नदी और देवता आदि बनाये हैं ॥ १७ ॥ इस प्रकार महाप्रभावयुक्त जगवान् महात्मा प्रजा करनेवाले स्वयंभूने जगत्की उत्पत्तिके समय जगन्मय कमलका अपने सामर्थ्यसे महार्णवमें प्रगट किया ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे त्रिविम्पशणि भाषायां पुष्करमादुर्भावे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ वैशम्पायन बोले, जिस समय

एतस्मात्कारणात्तन्मोः पुराणेः परमर्षिभिः ॥ यज्ञिर्वैददृष्टार्थैर्यज्ञे पद्मचिती कृतः ॥ १६ ॥ एवं भगवता पद्मे विश्वस्य परमां विधिः ॥ पर्वतानां नदीनां च देवतानां च निर्मितः ॥ १७ ॥ विभुस्तथैवाप्रतिमप्रभावः प्रभाकरो वै भगवान्महात्मा ॥ स्वयं स्वयंभुः शयनेऽसृजत्तदा जगन्मयं पद्मनिधिं महार्णवे ॥ १८ ॥ इति श्रीम० सि० ६० भ० पुष्करमादुर्भावे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ चतुर्युगादिसंभूतौ सहस्रयुगपर्यये ॥ विप्रस्तमसि संभूतौ मधुर्नाम महासुरः ॥ १ ॥ तस्यैव च सहायोऽन्यो भूतो रजसि केतभः ॥ तौ रजस्तमसाविष्टौ संभूतौ कामरूपिणौ ॥ २ ॥ एकार्णवजलं सर्वं क्षोभयन्तौ महासुरौ ॥ कृष्णरक्ताम्बरधरो श्वेतशीतोऽग्रदंष्ट्रिणौ ॥ ३ ॥ उभो मदकटोद्यौ केयूरवलयोज्ज्वलौ ॥ महाविकृतताम्राक्षौ पीनोरस्कौ महाभुजौ ॥ ४ ॥ महच्छिरःसंहननौ जङ्गमाविव पर्वतौ ॥ नीलमेघाभ्रसंकाशावादित्यप्रतिमानौ ॥ ५ ॥

सहस्र चतुर्युगी बीत गई उस समय तमकी प्रबलतासे लपकरी मधु दैत्य प्रगट हुआ ॥ १ ॥ और उसके सहायरूप रजोगुणसे विशेष नामक विप्ररूप केतभ उत्पन्न हुआ. यह रजस्तमयुक्त संसारमें कामरूपी प्रगट हुए ॥ २ ॥ उन महाभसुरोंने सम्पूर्ण एकार्णवसागरको क्षोभित कर दिया वह कृष्ण और रक्त अम्बर धारण किये श्वेत शीत और अग्रदंष्ट्रावाले ॥ ३ ॥ दोनोंही मदके कटसे उदय केयूर वलय (कंकन) पहरे महाविकराल ताम्र नेत्र किये पुष्ट हृदय महाभुजावाले ॥ ४ ॥ महान् शिर और पीनस्कंधयुक्त जंगमपर्वतकी समान नीले मेघकी समान कान्तिमान् आदित्यकी

समान वर्णवाले ॥ ५ ॥ बिजली और बादलकी समान ताम्रवर्ण हाथोंसे भयंकर चरणोंके संचारवेगसे सागरको उत्क्षिप्त करते हुए ॥ ६ ॥ शयन करते हुए नारायणको कंपित करते हुए वे दोनों उस कमलमें विचरने लगे ॥ ७ ॥ उन योगिजनोंमें श्रेष्ठ दीप्तिमान् नारायणकी आज्ञासे प्रजा रचनेको स्थित तथा देवता मनुष्य और मनसे ऋषियोंको उत्पन्न करते हुए ॥ ८ ॥ देवताओंमें श्रेष्ठ ब्रह्माजीसे वे कहने लगे, कारण कि वे दोनों महाअभिमानी क्रोधसे लाल नेत्र किये थे ॥ ९ ॥ वे कहने लगे तुम सफेद पगड़ी बांधे चार भुजावाले कौन हो ? तुम मोहसे हमको नहीं गिनते किस प्रकारसे स्थित हो और

विद्युद्भेदताम्राभ्यां कराभ्यामतिभीषणौ ॥ पादसंचारवेगाभ्यामुत्क्षिपन्तविवाणवम् ॥ ६ ॥ कम्पयन्ताविव हारिं शयानमरिसूदनम् ॥ तो तत्र विहरन्तो स्म पुष्करे विश्वतोमुखम् ॥ ७ ॥ पश्यतां दीप्तवपुषं योगिनां श्रेष्ठमुत्तमम् ॥ नारायणसमाज्ञप्तं सृजन्तमखिलाः प्रजाः ॥ देवतानि च विश्वानि मानसांश्च सुतानृषीन् ॥ ८ ॥ ततस्तावूचतुस्तत्र ब्रह्माणमसुरोत्तमौ ॥ दृप्तौ युयुत्सुको क्रुद्धो रोषसं रक्तलोचनौ ॥ ९ ॥ कस्त्वं पुरुषमध्यस्थः सितोष्णीषश्चतुर्मुखः ॥ आवामगणयन्मोहादासे त्वं विगतज्वरः ॥ १० ॥ पद्मावयोर्बाहुयुद्धं प्रयच्छ कमलोद्भव ॥ आवामभ्यामतिवीराभ्यां न शक्यं स्थातुमाहवे ॥ ११ ॥ कस्त्वं कश्चोद्भवस्तुभ्यं केन वासीह चोदितः ॥ कः स्रष्टा कश्च वे गोप्ता केन नाम्नाभिधीयते ॥ १२ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ यः क इत्युच्यते लोके ह्यविज्ञातः सहस्रशः ॥ तत्संभवं योगवन्तं किं मां नाभ्यवगच्छथः ॥ १३ ॥ मधुकैटभावूचतुः ॥ नावयोः परमं लोके किञ्चिदस्ति महामते ॥ आवां छादयता विश्वं तमसा रजसा तथा ॥ १४ ॥ रजस्तमोमयावावां यतीनां दुःखलक्षणौ ॥ छडको धर्मशीलानां दुस्तरौ सर्वदेहिनाम् ॥ १५ ॥

मय नहीं मानते ॥ १० ॥ हे कमलोद्भव ! आओ हमारे साथ बाहुयुद्ध करो हम वीरोंके साथ आप संशयमें स्थित नहीं हो सकते ॥ ११ ॥ कौन हो तुम किनसे उत्पन्न हो किससे प्रेरित हुए हो कौन तुम्हारा निर्माता और कौन रक्षक है किस नामसे तुम पुकारे जाते हो ॥ १२ ॥ ब्रह्माजी बोले, जो लोकमें ब्रह्मनामसे विख्यात और सहस्रों प्रकारसेभी जाननेको अयोग्य योगरूप परमात्मासे उत्पन्न हुआ हमको जानो ॥ १३ ॥ मधुकैटभ बोले, हे महामते ! लोकमें हमसे परे कोई वस्तु नहीं है हमने तम और रजसे सारा जगत् आच्छादित कर रक्खा है ॥ १४ ॥ हम रज और तमरूप हैं सतरूपी यतियोंको

दुःस्वरूप हैं हम धर्मशीलोंको उलट्टा और सर्व प्राणियोंको दुस्तर हैं ॥ १५ ॥ हम दोनों उच्छिन्नोने सारा लोक दुग्गुणमें मोहित हो जाता है और अर्थ काम तथा सर्व सामग्रियोंसहित यज्ञरुग्नी हम दोनों हैं ॥ १६ ॥ जहां सुख आनंद लक्ष्मी और सब प्रकारकी निवृत्ति हो इनमें जो जो बांछित हो वह हमसे चिन्तन करना उचित है अर्थात् यह सब वस्तु हमारे आधीन है ॥ १७ ॥ ब्रह्माजी बोले, जो योगवालोंमें श्रेष्ठ है और जो मैंने अर्चित किया है वह सब प्रकारसे पुष्ट कर गुणवाला मैं सनोगुणमें स्थित हुआ हूं ॥ १८ ॥ योगयुक्तोंको जो पर अक्षर और सत्त्वरूप है, जो रज तमका निर्माता जिससे जीवका संभव है ॥ १९ ॥ जिससे सात्त्विक तथा इतर प्राणी उत्पन्न होते हैं वही वशी युद्धमें तुमको शान्त करेगा ॥ २० ॥ वैशम्पायन बोले,

आवाभ्यां मुह्यते लोक उच्छिन्नाभ्यां युगे युगे ॥ आवाभ्यांश्च कामश्च यज्ञाः सर्वपरिग्रहाः ॥ १६ ॥ सुखं यत्र मुदो यत्र यत्र श्रीः सन्निवृत्तयः ॥ एषां यत्कांक्षितं चैव तत्तदावां विचिन्तय ॥ १७ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ यत्तद्योगवतां श्रेष्ठं यच्च सर्वं मयार्चितम् ॥ तत्समाधाय गुणवानस्तत्त्वज्ञोऽस्मि प्रतिष्ठितः ॥ १८ ॥ यत्परं योगयुक्तानामक्षरं सत्त्वमेव च ॥ रजस्तमसश्चैव यत्स्रष्टा जीवसंभवः ॥ १९ ॥ यतो भूतानि जायन्ते सात्त्विकानीतराणि च ॥ स एव युक्तः समरे वशी वां शमयिष्यति ॥ २० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः शयानं श्रीमान्तं बहुयोजनविस्तृतम् ॥ पद्मनाभं हृषीकेशं प्रणम्यांश्चाचताबुभौ ॥ २१ ॥ जानीवस्त्वां विश्व गोनिमेकं पुरुषसत्तमम् ॥ तवोपासनहेत्वर्थमिदं नो विद्धि कारणम् ॥ २२ ॥ अमोघदर्शनं सत्यं यतस्त्वां विदुरीश्वरम् ॥ ततस्त्वामभिमतो देव कांक्षावः प्रातिवीक्षितुम् ॥ २३ ॥ तदिच्छावो वरं दत्तं त्वया ह्यावामर्दम ॥ अमोघं दर्शनं देव नमस्तेस्त्वजितंजय ॥ २४ ॥

तब शयन करते हुए श्रीमान् बहुत योजनके विस्तारवाले पद्मनाभ हृषीकेशको वे दोनों प्रणाम कर ॥ २१ ॥ बोले हम आपको विश्वगोनि एक सनातन पुरुष जानते हैं आपकी उपासनाके निमित्तही हमारा कारण है ॥ २२ ॥ आप अमोघदर्शन सत्यरूप हो हम तुमको ईश्वररूप जानते हैं हे देव ! इसी कारण हम आपके देखनेकी इच्छा करते हैं ॥ २३ ॥ हे शत्रुनाशक ! आपके दिये वरकी हम इच्छा करते हैं, हे अजित ! आपका अमोघ दर्शन है आपको नमस्कार है ॥ २४ ॥

श्रीभगवान् बोले, हे असुरश्रेष्ठ ! तुम किस वरकी इच्छा करते हो सो कहो यदि जीनेकी इच्छा है तो मेरी सी हुई आयुसे तुम जियो ॥ २५ ॥
 जो तुम्हारा यह यत्न है तो तुम महाबली हो इस कारण हमारे वध होजाओ यह वचन नारायणने उनसे कहे तब वे दोनों महात्मा बड़े हुए क्षतसे
 वर्जित ॥ २६ ॥ मधुकैटभ कहने लगे, हे विभो ! जिप्त स्थानमें किसीकी मृत्यु नहीं हुई हो वहां हमारी मृत्यु हो, हे सुराधिप ! हम दोनों तुम्हारे पुत्र
 होनेकी इच्छा करते हैं ॥ २७ ॥ श्रीभगवान् बोले, निश्चयही कल्पके प्रारंभमें तुम मेरे पुत्र होंगे इसमें सन्देह नहीं यह मैं सत्य कहता हूं ॥ २८ ॥

श्रीभगवानुवाच ॥ कानिच्छतो द्रुतं ह्यत वरानसुरसत्तमो ॥ दत्तायुषो मया भूयस्त्वहो जीवितुमिच्छथः ॥ २५ ॥ तस्माद्यदेष वां
 यत्नस्तत्प्राकृ (मु) त महाबलो ॥ वधो भवन्तो तु स्यातां तावित्येवान्वदिदरिः ॥ उभावपि मज्ञात्मानावूर्जितो क्षतवर्जितो ॥ २६ ॥
 मधुकैटभावूचतुः ॥ यास्मिन्न काश्चिन्मृतवांस्तस्मिन्देशं विभो वधम् ॥ इच्छावः पुत्रतां यातुं तत्र चैव सुराधिप ॥ २७ ॥ श्रीभगवा-
 नुवाच ॥ बाढं सुतो मे प्रवरो भविष्ये कल्पसंभवे ॥ भविष्यथो न संदेहः सत्यमेतद्ब्रूमीमि वाम् ॥ २८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ वरं
 प्रदायाथ महासुराभ्यां सनातनो विश्वरोत्तमो विभुः ॥ रजस्तमोभ्यां भवभावनापमो ममन्य तावूरुतले सुरारिहा ॥ २९ ॥
 इति श्रीमहा० हरिवंशे भ० मधुकैटभवरप्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ स्थित्वा तस्मिंस्तु कमले ब्रह्मा
 ब्रह्मविदां वरः ॥ ऊर्ध्वबाहुर्महाबाहुस्तपो धोरं समाश्रितः ॥ १ ॥ ज्वलन्निव च तेजस्वी भाभिः स्वाभिस्तमोनुदः ॥ बभासे सर्व-
 धर्मस्थः सहस्रांशुरिवांशुमान् ॥ २ ॥

वैशंपायन बोले, तब वह सनातन प्रभु उन असुरोंको वरप्रदान कर रजतमसे उत्पन्न हुए दोनों दैत्योंको ऊह्नलमें स्थितकर मथने लगे ॥ ३९ ॥ इति
 श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां मधुकैटभवरप्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ वैशम्पायन बोले, यह सब कथा वेदान्तपर
 है, ब्रह्मविदां वर ब्रह्माजी उस कमलमें स्थित होकर ऊर्ध्वबाहु महाबाहु धोरतर्पमें स्थित हुए ॥ १ ॥ वह तेजस्वी अपनी कान्तिसे अम्बकारको दूर

करते हुए मूर्यकी समान कान्तिमान् धर्ममें स्थित हो शोभित हुए ॥ २ ॥ तब वह शम्भु नारायण अविनाशी दूसरे रूपमें स्थित हो वह सनातन अचिन्त्यात्मा आत्मासे आत्माको दो भागकर ॥ ३ ॥ योगाचार्य महातेजस्वी आनकर प्राप्त हुए वह बुद्धिमान् सांख्याचार्य ब्राह्मणोंमें भेठ कपिलजी थे ॥ ४ ॥ यह और वेदज्ञाना ब्रह्माजी ब्रह्मर्षियोंसे स्तुतिको प्राप्त हुए, यह दोनों महात्मा बड़े ऊर्जित और क्षेत्रमें तत्पर थे ॥ ५ ॥ वे दोनों प्राप्त होकर महातेजस्वी ब्रह्माजीसे बोले, यह परमेश्वरके विशेष जाननेवाले परमकृषियोंसे पूजित ॥ ६ ॥ वः ॥ वाक्यरूपा होनेसे दृढाद विश्वात्मा जग-

अथान्यद्रूपमास्थाय शंभुर्नारायणोऽव्ययः ॥ द्विधा कृत्वात्मनात्मानमचिन्त्यात्मा सनातनः ॥ २ ॥ आजगाम महातेजा योगाचार्यो महायशाः ॥ सांख्याचार्यश्च मतिमान्कपिलो ब्राह्मणो वरः ॥ ४ ॥ देवर्षिभिः स्तुतावेतो ब्रह्मब्रह्मवेदां वरो ॥ उभावपि महात्मानावूजितौ क्षेत्रतत्परो ॥ ५ ॥ तौ प्रातावूचतुस्तत्र ब्रह्माणममितोजसम् ॥ परावरविशेषज्ञौ पूजितौ परमर्षिभिः ॥ ६ ॥ बहुत्वादृढपादश्च विश्वात्मा जगतः स्थितिः ॥ ग्रामणीः सर्वलोकानां ब्रह्मा लोकगुरुवरः ॥ ७ ॥ तयोस्तद्रचनं श्रुत्वा तिस्रां व्याहृतयो जपन् ॥ त्रीणिमान्कृतवाँल्लोकान्यथाह ब्रह्मणी श्रुतिः ॥ ८ ॥ यत्र भूतसंज्ञकं चैव समुत्पादितवान्प्रभुः ॥ ततोऽग्रे तद्रतसंज्ञां ब्रह्मा मानसमव्ययम् ॥ ९ ॥ सोत्पन्नस्त्वग्रे ब्रह्माणमुवाच मानसः सुतः ॥ करोमि किं ते साहाय्यं त्रीतु भगवानिति ॥ १० ॥ ब्रह्मोवाच ॥ य एष कपिलो नाम ब्रह्मा नारायणस्तथा ॥ वदते वरदस्त्वां तु तत्कुरुष्व महामते ॥ ११ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ब्रह्मणोक्तस्तदा भूयः संशयं समुपस्थितः ॥ श्रुत्यैषुरस्मि युवयोः किं कुर्मीति कृताञ्जलिः ॥ १२ ॥

तुके स्थितिरूप सब लोकोंका वशमें रखनेवाले सब लोकके गुरु ब्रह्मा ॥ ७ ॥ उन दोनोंके वचन सुन तीनों व्याहृती जपते हुए उन्होंने यह तीन लोक उत्पन्न किये ऐसा ब्राह्मणकी श्रुतिमें लिखा है ॥ ८ ॥ तब प्रभुने भूतसंज्ञक पुत्रको उत्पन्न किया तब वह मृष्टिके स्नेहवाले ब्रह्माके मनसे ॥ ९ ॥ उत्पन्न हो आगे खड़े होकर ब्रह्मासे कहने लगे, हे भगवन् ! मैं आपकी क्या सहायता करूं सो आप कहिये ॥ १० ॥ ब्रह्माजी बोले, वह जो कपिल और नारायण हैं, हे महामते ! यह वरदाता जो कुछ तुमसे कहे सो तू कर ॥ ११ ॥ वैशम्पायन बोले, ब्रह्माके यह वचन सुन वह परम सन्देहको

प्राप्त हुआ और हाथ जोड़ बोला, जो आप कहे वह आपकी आज्ञा सुननेकी इच्छा करता हूं ॥ १२ ॥ वे दोन कपिलनारायण बोले, जो सत्य अक्षर परिणामरहित अमर अठारह प्रकारसे कहा जाता है अर्थात् सांख्यमतमें पांच कर्मेन्द्रिय पांच ज्ञानेन्द्रिय प्राणपंचक विषयादि पांच काम कर्मे अविद्यादिसे अतिरिक्त हैं उस पुरुष अधिकेश्वरस्य तस्य प्रपंचसे पृथक् परम वस्तु सब विशेषशून्य एकरसका तुम ध्यान करो ॥ १३ ॥ वैशंपायन बोले, यह वचन सुन वह उत्तरदिशाको गया और वहां जाकर ज्ञानदृष्टिसे ब्रह्मत्वको प्राप्त हुआ ॥ १४ ॥ तब ब्रह्माने भुव (सूत्रात्मा) नाम दूसरे पुरुषको निर्माण किया, वह महामना ब्रह्मा उसको मनसेही कल्पित कर चुके ॥ १५ ॥ तब उसने पितामहसे कहा, मैं क्या करूं तब ब्रह्मा परमेश्वरावूचतुः ॥ यत्सत्यमक्षरं ब्रह्म ह्यष्टादशविधं स्मृतम् ॥ यत्सत्यममृतं चैव परं तत्समनुस्मर ॥ १३ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ एतद्वचो निशम्याय स यथो दिशमुत्तराम् ॥ गत्वा च तत्र ब्रह्मत्वमगमज्ज्ञानचक्षुषा ॥ १४ ॥ ततो ब्रह्मा भुवं नाम द्वितीयमसृजत्प्रभुः ॥ तं कल्पयित्वा मनसा मनसैव महामनाः ॥ १५ ॥ ततः सोऽप्यब्रवीद्वाक्यं किं कुर्वेति पितामहम् ॥ पितामहसमाज्ञतो ब्रह्माणं समुपस्थितः ॥ १६ ॥ ब्रह्मभ्यां सहितः सोऽयं भूयो भागवर्ती गतः ॥ प्राप्तश्च परमं स्थानं स तयोः पार्श्वमागतः ॥ १७ ॥ तस्मिन्नपि गते पुत्रं तृतीयमसृजत्प्रभुः ॥ मोक्षोपायेऽतिकुशलं भूभुवं नाम तं विभुः ॥ १८ ॥ आसत्ताद स तद्धर्मं तयोरेवागमद्वातिम् ॥ एवं पुत्रास्त्रयोऽप्येते उक्ताः शंभोर्महात्मनः ॥ १९ ॥ तान् गृहीत्वा सुतांस्तस्य प्रययौ स्वां गतिं तथा ॥ नारायणोऽथ भगवान्कपिलश्च यतीश्वरः ॥ २० ॥ यं कालं तौ गतौ मुक्तौ ब्रह्मा तत्कालमेव तु ॥ तेपे घोरतरं भूयः स तपः संशितव्रतः ॥ २१ ॥

जीने कपिलनारायणकी आज्ञा माननेको कहा तब वह पितामहके पितर सांख्ययोगाचार्योंको प्राप्त हो ॥ १६ ॥ उनके निकट हो उनके सहित जाग-वती गतिको प्राप्त हुआ और उनके निकट प्राप्त होनेसे परमस्थानको प्राप्त हुआ ॥ १७ ॥ उसके जानेसे ब्रह्माजीने तीसरा पुत्र उत्पन्न किया, वह भूभुव नाम (ईश्वर सत्त्वोपाधिमान्) मोक्षके उपायमें कुशल हुआ ॥ १८ ॥ यह पुत्रभी उन दोनोंके धर्म और गतिको प्राप्त हुआ अर्थात् “ पुरुषा आपरं किंचित्सा काठा सा परा गतिः ” इस प्रकार महात्मा शंभुके यह तीन पुत्र परमगतिको प्राप्त हुए ॥ १९ ॥ यतीश्वर कपिल और भगवान् नारायण उन तीनों पुत्रोंको लेकर अपनी गतिको गये ॥ २० ॥ जितने कालमें वह जीन हुए उतने समयतक ब्रह्माजी घोर तप करते रहे, जब वह

शंसित व्रत घोर तप करते रहे ॥ २१ ॥ तब इकले तप करनेके कारण उनका मन नहीं लगा तब उन्होंने अपने आधे शरीरसे सुन्दर भार्याको उत्पन्न किया ॥ २२ ॥ तप तेज कान्ति और नियमसे उन्होंने लोकके उत्पन्न करनेमें अपने समान भार्याको उत्पन्न किया ॥ २३ ॥ वह तपोमय ब्रह्मा उसके मंग रमते रहे तब उससे सब प्रजापति सागर और नदियोंको उत्पन्न किया ॥ २४ ॥ तब वेदमाता त्रिपदा गायत्रीको उत्पन्न किया, उस गायत्रीसे चारों वेदोंको उत्पन्न किया ॥ २५ ॥ पितामहने अपने वास्ते लोककर्ता पुत्रोंको बनाया, जो प्रजापति विश्वके देवता हैं जिनसे सब जगत् उत्पन्न हुआ

न रराम ततो ब्रह्मा प्रभुरेकस्तपश्चरन् ॥ शरीराद्धमथो भार्या समुत्पादितवाञ्छुभाम् ॥ २२ ॥ तपसा तेजसा चैव वर्चसा नियमेन च ॥ सदृशीमात्मनो भार्या समर्था लोकसर्जने ॥ २३ ॥ तथा सह ततस्तत्र रेमे ब्रह्मा तपोमयः ॥ सृजत्प्रजापतीन्सर्वान्त्सागरान् सरितस्तथा ॥ २४ ॥ ततोऽसृजद्वे त्रिपदां गायत्रीं वेदमातरम् ॥ अकरोच्चैव चतुरो वेदान् गायत्रिसंभवान् ॥ २५ ॥ आत्मार्थे चासृजत्पुत्राँल्लोककर्तृन्पितामहः ॥ विश्वे प्रजानां पतयां येभ्यो लोका विनिर्मृताः ॥ २६ ॥ विश्वेशं प्रथमं नाम महातपसमात्मजम् ॥ सर्वाश्रमतमं पुण्यं नाम्ना धर्मः स सृष्टवान् ॥ २७ ॥ दक्षं मरीचिमित्रं च पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ॥ वसिष्ठं गौतमं चैव भृगुमाङ्गिरसं मनुम् ॥ २८ ॥ अथर्वभूता इत्येते ख्याता ब्रह्ममहर्षयः ॥ त्रयोदशसुतानां तु ये वंशा वे महर्षिणाम् ॥ २९ ॥ अदितिर्दितिर्दनुः काला द्यनायुः सिंहिका मुनिः ॥ प्रबोधा सुरसा क्रोधा विनता कद्रुवे च ॥ ३० ॥ दक्षस्येता दुहितरः कन्या द्वादश भारत ॥ नक्षत्राणि च भद्रं ते सप्तविंशतिरूर्जिताः ॥ ३१ ॥

हे ॥ २६ ॥ ब्रह्माजीने विश्वेश नामवाला महातपस्वी सब आश्रमोंमें तत्पर प्रथम पुत्रकी रचना की, तथा पवित्ररूप धर्म नाम दूसरे पुत्रको रचा ॥ २७ ॥ दक्ष मरीचि अत्रि पुलस्त्य पुलह क्रतु वसिष्ठ गौतम भृगु अंगिरा मनु ॥ २८ ॥ अथर्व भूत यह ब्रह्ममहर्षि विख्यात हैं, यह तेरह पुत्र महर्षियोंके वंशकर्ता हुए हैं ॥ २९ ॥ अदिति दिति दनु काला अनायु सिंहिका मुनि प्रबोधा सुरसा क्रोधा विनता कद्रु ॥ ३० ॥ यह बारह दक्षकी कन्या हुई, तुम्हारा

मंगल हो यह सचाईस नक्षत्र जो आकाशमें शोभित हैं यहभी दक्षकी कन्या हुई ॥ ३१ ॥ मरीचि ऋषिके तपसे कश्यपजी पुत्र हुए. उनके निमित्त दक्षने पूर्वोक्त बारह कन्या प्रदान कीं ॥ ३२ ॥ और नक्षत्ररूप कन्याओंको दक्षने चन्द्रमाके निमित्त प्रदान किया. हे जन्मेजय ! यह रोहिणी आदि पवित्र कन्या थीं ॥ ३३ ॥ लक्ष्मी कीर्ति साध्या विश्वा कामा देवी मरुत्वती यह पहिले ब्रह्माजीने निर्मित की थीं ॥ ३४ ॥ हे भारत ! यह पांच श्रेष्ठ कन्या धर्म देखनेवाले ब्रह्माजीने सुरश्रेष्ठ धर्मराजके निमित्त प्रदान कीं ॥ ३५ ॥ और जो अपने आवे शरीरसे कामरूपिणी पत्नी निर्माण की थी, वह सुरभी

मरीचिः कश्यपः पुत्रस्तपसा निर्मितः प्रभुः ॥ तस्मै कन्या द्वादशेमा दक्षस्ता अन्वमन्यत ॥ ३२ ॥ नक्षत्राख्यानि सोमाय वसवे दत्तवानृषिः ॥ रोहिण्यादीनि सर्वाणि पुण्यानि जनमेजय ॥ ३३ ॥ लक्ष्मीः कीर्तिस्तथा साध्या विश्वा कामानुगा शुभा ॥ देवी मरुत्वती चैव ब्रह्मणा निर्मिता पुरा ॥ ३४ ॥ एताः पञ्च वरिष्ठा वै सुरश्रेष्ठाय भारत ॥ दत्ता धर्माय भद्रं ते ब्रह्मणा दृष्टधर्मणा ॥ ३५ ॥ या रूपार्द्धमयी पत्नी ब्रह्मणः कामरूपिणी ॥ सुरभिः सा तु गोभूत्वा ब्रह्माणं समुपस्थिता ॥ ३६ ॥ ततस्तामगमद्ब्रह्मा मेथुने लोकपूजितः ॥ लोकसर्जनहेतुज्ञो गवामर्थाय भारत ॥ ३७ ॥ जज्ञे चैकादश सुतान्विपुलान्धर्मसंहितान् ॥ रक्तसंध्याभ्रसदृशान् दहनोपमतेजसः ॥ ३८ ॥ ते रुदन्तो द्रवन्तश्च भगवन्तं पितामहम् ॥ रोदनाद्वावणाच्चैव ततो रुद्रा इति स्मृताः ॥ ३९ ॥ निर्ऋतिश्चैव सर्पश्च तृतीयो ह्यज एकपात् ॥ मृगव्याघः पिनाकी च दहनोऽथेश्वरश्च वै ॥ ४० ॥ अहिर्बुध्न्यश्च भगवान्कपाली चापराजितः ॥ सेनानीश्च महातेजा रुद्रा एकादश स्मृताः ॥ ४१ ॥

गोरूप होकर ब्रह्माके निकट उपस्थित हुई ॥ ३६ ॥ हे भारत ! तब लोकपूजित ब्रह्मा उस सृष्टिके हेतुको विचार उससे मेथुनधर्ममें प्रवृत्त हुए ॥ ३७ ॥ उससे धर्मयुक्त ग्यारह पुत्र उत्पन्न हुए जो लाल संध्याकी सदृश अधिकी समान तेजस्वी थे ॥ ३८ ॥ वे रोते और द्रवते हुए जनवान् पितामहके निकट आये रोदन और धावमान होनेसे रुद्र कहलाये ॥ ३९ ॥ निर्ऋति सर्प तीसरा अज एकपाद मृगव्याघ्र पिनाकी दहन ईश्वर ॥ ४० ॥ अहिर्बुध्न्य भग-

वान् कपाली अपराजित महातेजबाले सेनानी यह ग्यारह रुद्र कहलाते हैं ॥ ४१ ॥ उसी सुरभीसे गोवृष उत्पन्न हुए. आलुष्ट माष सिकता अक्षत प्रभय ॥ ४२ ॥ अज एकवंश उत्तम अमृत प्रवरादि औषधी यह सब उसीसे उत्पन्न हुई हैं ॥ ४३ ॥ धर्मसे लक्ष्मी काम और साध्यनाम देवता उत्पन्न हुए. च्यवन प्रभव ईशान सुरभी ॥ ४४ ॥ अरुंधती अरुणी विश्वावसु बल ध्रुव महिष तनूज विज्ञान ॥ ४५ ॥ मत्सर विभूति यह सब सुरभीकी सन्तान है. सुपर्वत विष नाग इन लोकपूजित देवतोंको साध्याने उत्पन्न किया ॥ ४६ ॥ देवीने वासवसे अनुगत हो इनको उत्पन्न किया.

तस्यामेव सुरभ्यां तु जज्ञे गोवृषभस्तथा ॥ आकृष्टाश्च तथा माषाः सिकताः प्रश्रयोऽक्षताः ॥ ४२ ॥ अजाश्चैकवंशाश्च तथेवानृतमुत्तमम् ॥ औषध्यः प्रवरा याश्च सुरभ्यां ताः समुत्पिताः ॥ ४३ ॥ धर्माच्छ्रम्युद्भवः कामः साध्या साध्यान् व्यजायत ॥ च्यवनं प्रभवं चैवमीशानं सुरभीं तथा ॥ ४४ ॥ अरुन्धत्यारुणी चैव विश्वावसुबलध्रुवौ ॥ महिषं च तनूजं च विज्ञातमनसावपि ॥ ४५ ॥ मत्सरं च विभूतिं च सर्वाः सुरभिस्तनवः ॥ सुपर्वतं विषं नागं साध्या लोकनमस्कृता ॥ ४६ ॥ वासवानुगता देवी जनयामास वै सुतान् ॥ धरं वै प्रथमं देवं द्वितीयं ध्रुवमव्ययम् ॥ ४७ ॥ विश्वावसुं तृतीयं च चतुर्थं सोममीश्वरम् ॥ पञ्चमं पर्वतं चैव योगेन्द्रं तदनन्तरम् ॥ ४८ ॥ सप्तमं च ततो वायुमष्टमं निर्ऋतिं वसुम् ॥ धर्मस्यापत्यमित्येवं सुरभ्यां समजायत ॥ ४९ ॥ विश्वेदेवास्तु विश्वायां धर्माज्जाता इति श्रुतिः ॥ दक्षयज्ञे महाबाहुर्वसुश्च सुत एव च ॥ सुधर्मा च महाबाहुः शङ्खपाञ्च महाबलः ॥ ५० ॥ उक्तश्चैव महाबाहुर्वपुष्मान्श्च तथैव च ॥ चाक्षुषस्य मनोरेते तयानन्तमहीरणौ ॥ ५१ ॥ विश्वावसुसुपर्वाणौ विष्टरश्च महायज्ञाः ॥ रुरुश्च ऋषिपुत्रो वै भास्करप्रतिमद्युतिः ॥ ५२ ॥

धर प्रथम देव दूसरे अविनाशी ध्रुव ॥ ४७ ॥ तीसरे विश्वावसु चौथे ईश्वर सोम पांचवें पर्वत छठे योगेन्द्र ॥ ४८ ॥ सातवें वायु आठवें निर्ऋति वसु यह सुरभीमें धर्मके सन्तान हुए ॥ ४९ ॥ विश्वेदेवा धर्मसे विश्वामें उत्पन्न हुए. दक्ष यज्ञ महाबाहु वसु सुत महाबाहु सुधर्मा महाबली शंखपाद ॥ ५० ॥ महावपुष्मान् अनन्त महीरण यह चाक्षुष मन्वन्तरके अन्तमें ॥ ५१ ॥ विश्वावसु सुपर्वा यशस्वी विष्टर ऋषिपुत्र

सूर्यकी समान कान्तिमान् हुए ॥ ५२ ॥ देवमाताने यह सब जन्मपति विश्वेदेवा निर्माण किये हैं. मरुत्वतीके मरुतसे देवता उत्पन्न हुए ॥ ५३ ॥ अग्नि चक्षु हवि ज्योति सावित्र मित्र अमर शरवृष्टि संक्षय महाभुजावाले ॥ ५४ ॥ विरज शुक्र विश्वावसु विभावसु अश्मन्त चित्ररश्मि निष्कुपित नृप ॥ ५५ ॥ नहुष आहुति चारित्र बहुपन्नग बृहन्त बृहद्रूप परतापन नाम पुत्र हुए. यह मरुतदेवता कहाये मरुत्वतीमें पहले धर्मसे दो पुत्र हुए ॥ ५६ ॥ अदितिमें कश्यपसे आदित्य हुए. इन्द्र विष्णु भग त्वष्टा वरुण अंशु अर्यमा रवि ॥ ५७ ॥ पूषा मित्र वरदायक मनु पर्जन्य यह बारह आदित्य देव-

विश्वेदेवान् देवमाता विश्वेशान् जनयत्सुतान् ॥ मरुत्वती मरुत्वन्तो देवानजनयच्छुभान् ॥ ५३ ॥ अग्निश्चक्षुर्हविष्योतिः सावित्रो मित्र एव च ॥ अमरं शरवृष्टिं च संक्षयं च महाभुजम् ॥ ५४ ॥ विरजं चैव शुक्रं च विश्वावसुविभावसु ॥ अश्मन्तं चित्ररश्मि च तथा निष्कुपितं नृपम् ॥ ५५ ॥ नहुषं चाहुतिं चैव चारित्रं बहुपन्नगम् ॥ बृहन्तं च बृहद्रूपं तथैव परतापनम् ॥ मरुत्वत्यां पुरा धर्माज्ज्ञे पुत्रद्वयं शुभम् ॥ ५६ ॥ आदित्यां जज्ञिरे राजन्नादित्याः कश्यपादय ॥ इन्द्रो विष्णुर्भगस्त्वष्टा वरुणोऽशोऽर्यमा रविः ॥ ५७ ॥ पूषा मित्रश्च वरदो मनुः पर्जन्य एव च ॥ इत्येते द्वादशादित्या वरिष्ठास्त्रिदिवौकसः ॥ ५८ ॥ आदित्यस्य सरस्वत्यां जज्ञे पुत्रद्वयं शुभम् ॥ रूपश्रेष्ठं बलश्रेष्ठं त्रिदिवे रूपिणां वरम् ॥ ५९ ॥ दनुस्तु दानवान् जज्ञे दितिर्देत्यान् व्यजावत ॥ काला-नुकालकेयांश्च असुरान्राक्षसांस्तथा ॥ ६० ॥ अनायुषायास्तनया व्याघयश्चाघयस्तथा ॥ सिंहिका ब्रह्ममाता च गन्धर्वजननी मुनिः ॥ ६१ ॥ प्रबोधाप्सरसां माता सुरसायां सरीसृपः ॥ क्रोधायाः सर्वभूतानि पिशाचाश्चैव भारत ॥ ६२ ॥ तथा यक्षगणाश्चैव गुह्यकाश्च विशां पते ॥ चतुष्पदानि सर्वाणि ऋते गावस्तु सौरभाः ॥ ६३ ॥

ताओंमें श्रेष्ठ हैं ॥ ५८ ॥ आदित्यके सरस्वतीमें दो पुत्र हुए. रूपश्रेष्ठ बलश्रेष्ठ स्वर्गवासियोंमें रूपवान् हुए ॥ ५९ ॥ दनुके दानव दितिके देव हुए. कालामें कालकेय संज्ञक असुर और राक्षस हुए ॥ ६० ॥ अनायुषकी सन्तान आपि व्याधि हुई. सिंहिकामें राहु और मुनिमें गन्धर्व हुए ॥ ६१ ॥ प्रबोधाके अप्सरा सुरसाके सरीसृप हुए क्रोधाके सम्पूर्ण भूत और पिशाच हुए ॥ ६२ ॥ तथा यक्षगण और गुह्यक सब चौपाये गौको छोड़कर सब

कोषाके हुए ॥ ६३ ॥ अरुण और गरुड विनतामें उपजे कडूके महीधर सर्प नाग ॥ ६४ ॥ इस प्रकार संसारमें लोक परस्पर वृद्धिको प्राप्त हुए हैं. हे राजन् ! इस प्रकार इस पुष्कर प्रादुर्भावेमें उत्पत्ति हुई है ॥ ६५ ॥ यह पुष्कर उत्पत्ति पुराणोंमें जो व्यासजीसे सुनी है वह परमार्थियोंका उत्पन्न सब तुमसे वर्णन किया ॥ ६६ ॥ जो इस अष्ट पुराणको सदा अवमन होकर पढ़ता है वह सब कामनाको प्राप्त कर शोकरहित हो परलोकमें स्वर्गफलोंको भोगता है ॥ ६७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रिषायां चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ जन्मेजय बोले, हे ब्रह्मन् ! हमने अपने

अरुणो गरुडश्चैव विनतायां व्यजायत ॥ महीधरान्सर्पनागान् देवी कट्वर्व्यजायत ॥ ६४ ॥ एवं विवृद्धिमगमन्विश्वे लोकाः परस्परम् ॥ तदा पोष्करके राजन्प्रादुर्भावे महात्मनः ॥ ६५ ॥ पुराणं पोष्करे चैव मया द्वैपायनाच्छ्रुतम् ॥ कथितं तेन पूर्वेण यत्कृतं परम-
र्षिभिः ॥ ६६ ॥ यश्चेदमग्र्यं प्रथमं पुराणं सदाप्रमत्तः पठते महात्मा ॥ अवाप्य कामानिह वीतशोकः परत्र स स्वर्गफलानि
भुङ्क्ते ॥ ६७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ जनमेजय उवाच ॥ श्रुतं नः परमं ब्रह्मन्
स्ववंशचरितं महत् ॥ दिव्यमन्योन्यसंभूतं मानितं बहुभिर्गुणैः ॥ १ ॥ छन्दोभिर्वृत्तसंज्ञातैः समासेश्च सविस्तरेः ॥ लघुभिर्मधुरा-
भाषैर्ग्रथितं पदविग्रहैः ॥ २ ॥ त्रिवर्गेणाभिसंपन्नं धर्मेणार्थेन भोगिनाम् ॥ कामेन बहुरूपेण शरीरान्तर्गतेन च ॥ ३ ॥ ब्राह्मणानां
प्रभावेऽथ योधानां च पराक्रमैः ॥ वैरनिर्यातनेऽथ प्रतिज्ञानां च पारगैः ॥ ४ ॥ रिपुस्तवसुसंपन्नेर्नानुबन्धः प्रचोदितः ॥ वंशयो-
निर्विनाशाय नृपेण द्विजविग्रहात् ॥ ५ ॥

वंशका अद्भुत चरित्र सुना जो बड़ा दिव्य और बहुत गुणोंसे पूजित है ॥ १ ॥ वृत्तोंवाले छन्द विस्तारयुक्त समास लघुरूप मधुर वाणियोंसे ग्रथित पदोंके विग्रहसे युक्त ॥ २ ॥ धर्म अर्थ कामसे सम्पन्न शरीरके अन्तर विचरनेवाली इच्छासे सम्पन्न ॥ ३ ॥ ब्राह्मणोंके प्रभाव योधाओंके पराक्रम वैरनिर्या-
तनकी प्रतिज्ञाके पारगानी ॥ ४ ॥ रिपुकी स्तुतिसे संपन्न अनुबन्धसे रहित ब्राह्मणके विग्रहसे दोनों वंशोंके विनाशके निमित्त शीघ्र सुना ॥ ५ ॥

उस महासंग्राममें राजा हत हुए थे. उनके राज्योंमें उनके पुत्र प्रतिष्ठित हुए. जगवान् की आज्ञा माननेवाले राजा .युविष्ठिर सिंहासनपर विराजे ॥ ६ ॥ तीनों वर्णोंकी संप्रदायका धर्म सुना हे द्विजश्रेष्ठ ! स्वर्गका हेतु शूरोंका धर्म सुना ॥ ७ ॥ सो प्राणियोंके अनुग्रहकेही निमित्त .कृश. उद्वेगके निमित्त नहीं. चारों वर्णोंका धर्म पृथक् पृथक् अनेक प्रकारसे कहा ॥ ८ ॥ गर्भवासमें पड़नेवाले प्राणियोंको प्रबोधका वर्णन किया. क्षीणपुण्य होनेपर देवसंचारभी कहा ॥ ९ ॥ दानका संयोगभी बहुत प्रकारसे कहा यह आपने मधुर वचनसे सुझसे कहों है ॥ १० ॥ वह भारतका अध्ययन करनेको मैं

ये च तस्मिन्महारौद्रे संग्रामे निहता नृपाः ॥ तेषां सर्वाणि राष्ट्राणि पुत्राः सर्वे प्रपेदिरे ॥ क्रौरवः प्रथितो राजा भगवच्छासना-
लुगः ॥ ६ ॥ धर्मश्च बहुधा प्रोक्तस्त्रयाणां वर्णसंप्रदाम् ॥ शूराणामपि विख्यातः स्वर्गहेतुर्द्विजवर्षभ ॥ ७ ॥ अनुग्रहार्थं भूतानां
नोत्सेकाय कथंचन ॥ चतुर्णां वर्णसंज्ञानां पृथक् पृथगनेकधा ॥ ८ ॥ गर्भवासे पतन्तश्च भूतानां संप्रबोधितः ॥ पृच्छितां देवसंचारे
क्षीणे पुण्ये च कर्मणि ॥ ९ ॥ दाने यश्चापि संयोगः स चापि बहुधा कृतः ॥ द्वाभ्यां संयोगनिहितो मधुवाग्वचनं तयोः ॥ १० ॥
न तच्छक्यं मयाख्यातुं भारताध्ययनं महत् ॥ एकाहेन महान् ब्रह्मज्ञपि दिव्येन चक्षुषा ॥ ११ ॥ ब्रह्मणोऽहस्तु विस्तारं संक्षेपं च
सुसंग्रहम् ॥ श्रोतुमिच्छामि भगवन्महत्कौतूहलं हि मे ॥ १२ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥
वैशम्पायन उवाच ॥ शृणुष्वैकमना राजन् पञ्चेन्द्रियसमाहितः ॥ कथां कथयतो राजन्निर्विकारेण चेतसा ॥ १ ॥ ब्रह्मसम्बन्धसं-
बद्धमबद्धं कर्मभिर्नृप ॥ पुरस्ताद्ब्रह्म संपन्नं ब्रह्मणो यददक्षिणम् ॥ २ ॥

समर्थ नहीं हूँ हे ब्रह्मन् ! कोई दिव्य चक्षुसेभी एक दिनमें नहीं देख सकता ॥ ११ ॥ इस कारण ब्रह्माके दिनका विस्तार (ब्रह्मपद्म) का वर्णन संक्षेपसे मैं
सुना चाहता हूँ. हे भगवन् ! इसका सुझे परम कौतूहल है सो आप कहिये ॥ १२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि प्रापायां
पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ वैशम्पायन बोले, हे राजन् ! पाँचों इन्द्रियोंको सावधान कर एक मनसे सुनो. हे राजन् ! निर्विकार चित्तसे कथा
सुनो ॥ १ ॥ यह कथा ब्रह्मसंबन्धसे संबन्धित कर्मसंबन्धसे रहित है. ब्रह्म जाननेवालोंको पहिलेही मिला है, इसको सुनो ॥ २ ॥

जो अव्यक्त कारण नित्य सत् असत् आत्मक है, जो निष्कल पुरुष है उससे अहंकारयुक्त आत्मा ब्रह्म ही हुआ है ॥ ३ ॥ वह सर्व भूतपति दिव्य विभु दिव्यशरीरसे प्रादुर्भूत हुआ है, अचिन्त्य अविनाशी युगोंकी उत्पत्ति करनेवाले अव्यय ॥ ४ ॥ न हुआ न उत्पन्न सम्पूर्ण प्राणियोंमें समानताको प्राप्त हुआ, अव्यक्तसे परे जिसको नारायणके ज्ञाता तद्वत् कहते हैं ॥ ५ ॥ सब ओर हाथ चरणसे युक्त सब ओर नेत्र और शिरसे युक्त सब ओर कर्णवाला लोकमें सबको बरे स्थित हो रहा है ॥ ६ ॥ सत् असत्का कारण व्यक्त अव्यक्त रूपमें स्थित जो चलता

अव्यक्त कारणं यत्तन्नित्यं सदसदात्मकम् ॥ निष्कलः पुरुषस्तस्मात्संबभूवात्मयोनिजः ॥ ३ ॥ दिव्यो दिव्येन वपुषा सर्वभूतपतिर्विभुः ॥ अचिन्त्यश्चाव्ययश्चैव युगानां प्रभवोऽव्ययः ॥ ४ ॥ अभूतश्चाप्यजातश्च सर्वत्र समतां गतः ॥ अव्यक्तात्परमं यत्तन्नारायणविदो विदुः ॥ ५ ॥ सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽग्निशिरोमुखम् ॥ सर्वतः श्रुतिर्मेढोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥ ६ ॥ असत्तश्च सत्तश्चैव विज्ञेयं तत्र कारणम् ॥ अव्यक्तो व्यक्तरूपस्थश्चरन्नपि न दृश्यते ॥ ७ ॥ विकारं पुरुषोऽव्यक्तो ह्यरूपी रूपमाश्रितः ॥ चरत्यचिन्त्यः सर्वेषु गृढोऽग्निरिव दारुणः ॥ ८ ॥ भूतभवोद्भवो नाथः परमेश्वरो प्रजापतिः ॥ प्रभुः सर्वस्य लोकस्य नाम चास्येति तत्त्वतः ॥ ९ ॥ अपदात्तु पदो जातस्तस्मान्नारायणोऽभवत् ॥ अव्यक्तो व्यक्तिमापन्नो ब्रह्मयोगेन कामतः ॥ १० ॥ ब्रह्मभावे च तं विद्धि सशब्दं लब्धवान्प्रभुः ॥ प्रभुः सर्वस्य लोकस्य स्थावरस्येतरस्य च ॥ ११ ॥

हुआभी नहीं दीखता है ॥ ७ ॥ विकार पुरुष व्यक्त और रूपसे रहित रूपमें आजित है, वह अचिन्त्य सबमें विचरणे करता हुआ काठमें अग्निकी समान स्थित हो रहा है ॥ ८ ॥ भूत भविष्य वर्तमानका उत्पन्न करनेवाला परमेश्वरी प्रजापति सब लोकका पति अहं नामवाला तत्त्व-युक्त ॥ ९ ॥ उस अपदसे अहंकार हुआ, उससे नारायण हुआ इस प्रकार वह ब्रह्म व्यक्त और अव्यक्तको प्राप्त होकर स्थावर जंगम ब्रह्म स्वामी ब्रह्मरूप हुआ ॥ १० ॥ उसको ब्रह्मभावसे जानो, उस ब्रह्मने शब्दका ग्रहण किया, वही स्थावर जंगम सब जगत्का पिता है ॥ ११ ॥

हे भारत ! वह अहंकारसे युक्त हो मैं प्रजा रचूंगा, ऐसा कहने लगे वही सब प्रजाओंके उत्पत्तिस्थान है, जिनकी यह प्रजा तन्तु रूप है ॥ १२ ॥ स्वभावावसेही सब जगत् उत्पन्न होता है और स्वभावावसेही पूर्वजन्मके वासना उपरान्त वैसा हुआ है, अहंकार स्वभावावसे यह सब जगत् है ॥ १३ ॥ सर्वव्यापी निरालम्ब अग्राह्य अज ध्रुव ब्रह्ममय ज्योति ब्रह्मशब्दसे कही जाती है ॥ १४ ॥ अव्यक्तही व्यक्तिको प्राप्त हुआ है, वह व्यक्तता पांच तत्त्वोंके लक्षणसे हुई है, अनेक प्रकारके चिन्तनसे अनेक वस्तुओंको धारण करता हुआ ॥ १५ ॥ ब्रह्मसे प्रेरित हुआ ब्रह्ममूर्तिको प्राप्त होकर जल निर्मित

अहं त्विति स होवाच प्रजाः स्रक्ष्यामि भारत ॥ प्रभवः सर्वभूतानां यस्य तन्तुरिमाः प्रजाः ॥ १२ ॥ स्वभावाज्जायते सर्वं स्वभावाच्च तथाभवत् ॥ अहंकारः स्वभावाच्च तथा सर्वमिदं जगत् ॥ १३ ॥ सर्वव्यापी निरालम्बो अग्राह्योऽयं ज्यो ध्रुवः ॥ एवं ब्रह्ममयो ज्योतिर्ब्रह्मशब्देन शब्दितः ॥ १४ ॥ अव्यक्तो व्यक्तिमापन्नः पञ्चभिः ऋतुलक्षणैः ॥ धारयन् ब्रह्मणो व्यक्तं विविधं चिन्तितं त्वरन् ॥ १५ ॥ अथ मूर्तिं समाधाय स्वभावाद्ब्रह्मचोदितः ॥ सप्तर्जं सलिलं ब्रह्मा येन सर्वमिदं ततम् ॥ १६ ॥ वायुं पूर्वमयो दृष्ट्वा यो धातुर्धातुसत्तमः ॥ धारणाद्धातुशब्दं च लभते लोकसंज्ञितम् ॥ १७ ॥ तदेतद्वायुसंभूतं कृत्स्नं जगदभूत्पुरा ॥ एतदेवेराति-क्रान्तं पूर्वमेव सरस्वति ॥ १८ ॥ पृथक्त्वं गमितं तोयं पृथिवीशब्दमिच्छता ॥ घनत्वाच्च द्रवत्वाच्च निखिलेनोपलभ्यते ॥ १९ ॥ फलत्वात्सीदमाना च सलिले सलिलोद्भवः ॥ व्याजहार शुभां वार्णां समन्तात्पूरयन्निव ॥ २० ॥

करते हुए, जिससे यह सब जगत् हुआ है ॥ १६ ॥ जलकी मृष्टिसे पाहिले वायुको देख मरीचि आदिने सतलोकमें संकेतित धातुशब्दको धारण किया ॥ १७ ॥ वायुके स्थूल अंश अग्नि आदिसे उत्पन्न हुआ, यह जगत् पार्थिवताको प्राप्त हो तेजसे देव शमादिसे आक्रान्त हुआ समुद्रमें स्थित था ॥ १८ ॥ तब पृथ्वीकी इच्छावाले परमेश्वरने जलसे पृथ्वी अलग की वह घनी और द्रवरूप होनेसे पृथक्तासे युक्त हुई ॥ १९ ॥ कार्यरूप होनेसे जलमें सीदमान होता हुआ जलसे उद्धार होनेकी इच्छासे और चारों ओर वाणीको पूर्ण करता हुआ भूदेवता वाणीको बोला ॥ २० ॥

मैं यहां दुःखी हुआ. बाहर आनेकी इच्छा करता हूं मुझे उद्धार करो इस गंभीर जलमें स्थित हो रहा हूं ॥ २१ ॥ जब मूर्तिधारी देवी सब प्राणियोंकी उत्पन्न करनेवाली यथायोग्य स्थानकी इच्छावाली स्थिरकी इच्छासे पुकारने लगी ॥ २२ ॥ तब उसकी उस सुभाषित वाणीको सुनकर वाराह रूप धारण कर नारायण सागरमें कूदे ॥ २३ ॥ वह पृथ्वीको जलसे निकालकर इस महाकर्मको करके इसे स्थापित कर फिर लीन हो गये दिखाई न दिये ॥ २४ ॥ जो ब्रह्ममय ज्योति आकाशमंज्रावाली है उसमें सब भूतोंके पितामह ब्रह्मा उत्पन्न हुए ॥ २५ ॥ अबभी सब योगके ज्ञाता विधातासे यह मनके द्वारा

उच्चोऽहं स्थातुमिच्छामि संसीदाम्युद्धरस्व माम् ॥ गम्भीरे तोयविवरे मूर्तिक्लिोभितान्तरम् ॥ २१ ॥ ततो मूर्तिधरा देवी सर्वभूत-
प्ररोहिणी ॥ यथायोगेन संभूता सर्वत्र विषयेषिणी ॥ २२ ॥ श्रुत्वा च गदितं तस्या गिरं तां च सुभाषिताम् ॥ वाराहरूपमास्थाय
निपपात महार्णवे ॥ २३ ॥ उद्धृत्य सोऽवनिं तोयात्कृत्वा कर्म सुदुष्करम् ॥ समाधौ प्रलयं गत्वा प्रलीनो न च दृश्यते ॥ २४ ॥
यत्तद्ब्रह्ममयं ज्योतिराकाशमिति संज्ञितम् ॥ तत्र ब्रह्मा समुद्भूतः सर्वभूतपितामहः ॥ २५ ॥ अद्यापि मनसा धात्रा धार्यते सर्वयो-
गिना ॥ ज्ञानयोगेन सूक्ष्मेण प्रजानां हितकाम्यया ॥ २६ ॥ भित्त्वा तु पृथिवीमध्यमुपयाति समुद्रवम् ॥ तपनस्तुर्ध्वमातिष्ठन्
रश्मिभिः स हसन्निव ॥ २७ ॥ तस्य मण्डलमध्यात्तु निःसृतं सोममण्डलम् ॥ स सनातनजो ब्रह्मा सोम्यं सोमत्वमन्वगात् ॥ २८ ॥
सोममण्डलपर्यन्तात्पवनः समजायत ॥ तदक्षरमयं ज्योतिस्तेजोभिरभिर्वर्द्धयन् ॥ २९ ॥ स तु योगमयाज्ञानात्स्वभावाद्ब्रह्मसंभवात् ॥
सृजते पुरुषं दिव्यं ब्रह्मयोनिं सनातनम् ॥ ३० ॥

कच्छ मच्छादि रूपसे धारण की जाती है अर्थात् सूक्ष्म ज्ञानयोगसे प्रजाके हितकी कामनासे ॥ २६ ॥ पृथ्वीके मध्यभागको भेदन कर उत्पन्न होने-
वाला सूर्य अपनी किरणोंसे जलको खचता हुआ प्रगट हुआ ॥ २७ ॥ उस सूर्यमण्डलके मध्यसे सोममण्डल निकला वह सनातन चन्द्रमा ब्रह्मा
होनेसे ब्राह्मणोंका राजा है ॥ २८ ॥ सोममण्डलसे अक्षरात्मक ज्योतिस्तेजसे पृथ्वीको बढाता हुआ पवन उत्पन्न हुआ ॥ २९ ॥ वह सूर्यमण्डल

अधिदैविक अर्थोंका स्रष्टा सोमारूप ईश्वरसे वेदको प्राप्त हो योगमय ज्ञानसे सनातन ब्रह्मज्ञान और दिव्य पुरुषको रचता है ॥ ३० ॥ ब्रह्मरूप जल और घनरूप पृथ्वी है, छिद्र आकाश और ज्योति चक्षु है ॥ ३१ ॥ वायुसे स्पंदता और उसके संघातसे आग्नि होती है और ईश्वरसे पुरुष होकर ॥ ३२ ॥ सनातनरूप भूतात्मा पंचमहाभूतमय होके वसता है और यह सनातनरूप ब्रह्मा बुद्धिरूप गुहाके विषय ज्ञानरूपसे जाना जाता है ॥ ३३ ॥ जो आग्नि देहधारियोंमें वसती है वह सूर्यकाही रूप है वह शरीरमें स्थित हुआ नित्य धातुओंमें रहता है ॥ ३४ ॥ वह स्वभावसेही क्षयको प्राप्त होकर स्वभावसेही बढ़ता द्रवं यत्सलिलं तस्य घनं यत्पृथिवी भवत् ॥ छिद्रं यच्च तदाकाशं ज्योतिर्यच्चक्षुरेव तत् ॥ ३१ ॥ वायुना स्पन्दते चैनं संघाताज्ज्यो-
तिसंभवः ॥ पुरुषात्पुरुषो भावः पञ्चभूतमयो महान् ॥ ३२ ॥ भूतात्मा वै समे तस्मिंस्तस्मिन्देहः सनातनः ॥ गुहायां निहितं ज्ञानं योगाद्यज्ञः सनातनः ॥ ३३ ॥ तपनस्यैव तद्रूपं योऽग्निर्वसति देहिनाम् ॥ शरीरे नित्यशो युक्ते धातुभिः सह संमतः ॥ ३४ ॥ स्वभावात्क्षयमायाति स्वभावाद्भयमेति च ॥ स्वभावाद्भिन्दते शान्तिं स्वभावाच्च न विन्दति ॥ ३५ ॥ इन्द्रियैरतिमूढात्मा मोहितो ब्रह्मणः पदे ॥ संभवं निधनं चैव कर्मभिः प्रतिपद्यते ॥ ३६ ॥ यावत्तद्ब्रह्मविषयं नोपयातीह तत्त्वतः ॥ तावत्संसारमाप्नोति संभवांश्च पुनः पुनः ॥ ३७ ॥ इन्द्रियैर्व्यतिरिक्तो वै यदा भवति योगवित् ॥ तदा ब्रह्मत्वमापन्नः प्रलयाम्ने प्रतिष्ठति ॥ ३८ ॥ प्रतिषिद्धममुं लोकं ब्रह्मवान् स भवत्युत न ॥ च रागव्यययात न च सृजति कर्हिचित् ॥ ३९ ॥ आगतिं त्वं गतिं चैव निधनं संभवं तथा ॥ भूतेभ्यो वेत्ति सर्वज्ञः परां सिद्धिमुपागतः ॥ ४० ॥

हे, स्वभावसेही शान्तिको प्राप्त होता आर स्वभावसेही शान्ता नहीं होता ॥ ३५ ॥ इन्द्रियोंसे मूढात्मा हो ब्रह्मपदमें मोहित हुआ उत्पत्ति और मरणको जीव प्राप्त होता है ॥ ३६ ॥ जबतक तत्त्वसे जीव ब्रह्मविषयको प्राप्त नहीं होता तबतक संसारको प्राप्त हो बारंबार जन्ममरणको प्राप्त होता है ॥ ३७ ॥ जब यह योगज्ञाता इन्द्रियोंसे व्यतिरिक्त होता है तब यह ब्रह्मत्वको प्राप्त हो इन्द्रियादिकोंमें स्वरूपानंदकी प्रतिष्ठाको प्राप्त होता है ॥ ३८ ॥ ब्रह्मज्ञानी इस निषिद्ध लोक आर रागव्ययको कभी प्राप्त नहीं होता ॥ ३९ ॥ आना जाना उत्पत्ति नाश यह दूसरे प्राणियोंको देखकर सर्वज्ञ जानकर परम

तिष्ठिको प्राप्त होता है ॥ ४० ॥ विषयगोचर होनेमें आत्माकी गतिको देखकर कर्मसे निवृत्त हो ब्रह्मके पदमें प्रतिष्ठित होता है ॥ ४१ ॥ कामादिके लोभसे भिन्न हुई पूर्व यातना मनके द्वारा चित्तकी ग्रंथिको रोकती है और इस प्रकारसे भेदन करती है; जैसे सागर वायुसे भिन्न होता है ॥ ४२ ॥ वासनाको रोकनेसे कामादिसे मलीन हुई बुद्धि शुद्ध होती है वेदमें कहे ज्ञानसे यह जीव देहबंधनसे मुक्त हो जाता है ॥ ४३ ॥ तेजमूर्ति योगी विद्यासे लोक रचने और संहार करनेकी सामर्थ्य रखता है और इस लोकको रच सकता है ॥ ४४ ॥ तिर्यग्योनिमें प्राप्त हुए जीवोंको कर्म और नियमोंसे ब्रह्मयुक्त चित्त होनेके आत्मनो गतयश्चैव तथा विषयगोचरे ॥ पुरस्तात्कर्मनिवृत्तेः पदे ब्रह्मा प्रतिष्ठितः ॥ ४१ ॥ विग्रन्थाश्च मनसा रुन्ध्यात्पूर्वाश्च यातनाः ॥ भिद्यमानाः प्रलोभेन वायुभिन्नमिवार्णवम् ॥ ४२ ॥ पच्यते हृदयं नोलं परेभ्यो ज्ञानचक्षुषा ॥ ब्रह्मप्रोक्तामिवात्मा वै विमुक्तो देहबन्धनात् ॥ ४३ ॥ सृजेदपि परं लोकं संहरेदपि विद्यया ॥ तेजोमूर्तिरिवाविद्धमिह लोकं च संसृजेत् ॥ ४४ ॥ तिर्यग्योनौ गताश्चैव कर्मभिर्नियमोपमेः ॥ तान्यपि प्रतिमुच्येत ब्रह्मयुक्तेन चेतसा ॥ ४५ ॥ अक्षरं च क्षरं चैव योगकर्माभिविद्यते ॥ न क्षरं विद्यते तत्र यद्ब्रह्म कर्मभिर्ध्रुवम् ॥ ४६ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ पृथिव्यां यत्कृतं छिद्रं तपनेन विवर्द्धता ॥ तस्मिन्नपस्तोऽय मेनाकः स्वभावविहितोऽचलः ॥ १ ॥ पर्वभिः पर्वतत्वं च लभते नाम संज्ञितम् ॥ अचलादचलत्वं च स्वभावान्मेरुरेव सः ॥ २ ॥ तस्य पृष्ठे सुविस्तीर्णे नगस्य सुमहार्द्धिमान् ॥ तस्मिन्स्तु पुरुषो व्यक्तो वसति ज्योतिसंभवः ॥ ३ ॥

कारण उनको कर्मबंधनसे छुटा सकता है ॥ ४५ ॥ मोक्ष और मोम दोनों वस्तु योगकर्मसे जानी जाती है, जो कर्मसे ब्रह्मपति मिलती है फिर उसका नाश नहीं होता ॥ ४६ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ वैशम्पायन बोले, सृष्टिदेवने जो छिद्र पृथ्वीमें किया था वहां स्वभावसे निर्मित मेनाक पर्वत स्थित है ॥ १ ॥ पर्व होनेसे इनको पर्वत कहते हैं, अचल होनेसे अचल और स्वभावसेही मेरु है ॥ २ ॥ उस विस्तृत पर्वतकी ऊपर महाकाष्ठिमान् वह ज्योतिर्मय दीप्त शरीरवाला पुरुष उस परमात्माद्वारा स्वभावसेही स्थित किया गया है ॥ ३ ॥

और उसके शिरपर जो ब्रह्मय तेज स्थित है उसका ज्योतिर्मय दिव्य पुरुष कहा गया है ॥ ४ ॥ वह मुखसे निकला हुआ तेजसे प्रकाशित चार मुख चार द्विजोत्तमोंके सहित प्रगट हुआ ॥ ५ ॥ उसके मुखसे वेद प्रगट हुआ है, वा तिस देवका मुख वेदसे प्रगट हुआ है इस कारण उस वेदके धारण करनेसे ब्रह्मा ब्राह्मण है, इस प्रकार यह महाभूत फिर पूज्यताको प्राप्त हो गये ॥ ६ ॥ जिन्होंने जलसे पृथ्वी देवीका उद्धार किया है वह ब्रह्माके स्थान (मुक्ति) मेरुपृष्ठको प्राप्त होकर अलोक होकर लोकताको प्राप्त हुआ ॥ ७ ॥ जिसकी पदसंधिमें ब्रह्मलोक मेरुशृंग स्थित है (यह ज्ञानपरत्व है पर्वत कल्पनामात्र है)

विहितश्च स्वभावेन तेनैव परमात्मना ॥ यत्तद्ब्रह्मयं तेजो निहितं शिरसोऽन्तरे ॥ तस्य ज्योतिर्मयं रूपं दीप्तं पुरुषविग्रहम् ॥ ४ ॥
वदनादभिनिष्क्रान्तं ज्वलन्तमिव तेजसा ॥ चतुर्भिर्वदनेर्युक्तं चतुर्भिश्च द्विजोत्तमैः ॥ ५ ॥ वक्त्रं ब्रह्मसमुद्भूतं ब्रह्मा ब्राह्मणपुङ्गवः ॥
तदेव तन्महाभूतं पुनर्भावत्वमागतम् ॥ ६ ॥ उद्भूता पृथिवी देवी पुरस्तात्सालिषायात् ॥ ब्रह्मत्वं ब्रह्मणः स्थानादलोको लोकतां
गतः ॥ ७ ॥ पदसंधौ ब्रह्मलोकं शृङ्गं मेरोस्तदाभवत् ॥ उच्छ्रितं योजनशतं सहस्रशतमेव च ॥ ८ ॥ एवमेव च विस्तारं चतुर्भि-
र्गुणितं गुणेः ॥ अथवा नेव संख्यातुं शक्यं भूतेन केनचित् ॥ समाः सहस्रं बहुभिरपि दिव्येन तेजसा ॥ ९ ॥ चतुर्भिः पार्श्वविस्तारैः
शिलाभिरभिसंवृतैः ॥ नगस्य यस्य राजेन्द्र विस्तारैः शतयोजनैः ॥ १० ॥ कोटिकोटिशतगुणैर्गुणितब्रह्मवादिभिः ॥ योगयुक्तैः सदा
सिद्धैर्नित्यं ब्रह्मपरायणैः ॥ ११ ॥ मरुद्भिः सह देवेन्द्रै रूदेर्वसुभिरेव च ॥ आदित्यैर्विश्वसहितै ररक्ष वसुधाधिपान् ॥ १२ ॥ ररक्ष
पृथिवीं चैव भगवान्विष्णुना सह ॥ विवस्वद्भरुणभ्यां च संघातं गमितां नृप ॥ १३ ॥

यह सौ सहस्र सौ योजन ऊंचा है ॥ ८ ॥ और इस प्रमाणसेही चौखुना प्रमाण मिला जाता है अथवा कोई मनुष्य इसकी संख्या नहीं कर सकता, बहुत सहस्रों वर्षतक दिव्य तेजसे कोई नहीं जानता ॥ ९ ॥ जिस पर्वतमें सौ सौ योजनवाली धर्म ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्यरूप चार शिला हैं ॥ १० ॥ उसमें करोड़ों २ सौ ब्रह्मवादी योगयुक्त नित्य ब्रह्मपरायण निवास करते हैं ॥ ११ ॥ मरुत देवेन्द्र वसुओंके साथ आदित्य विश्वेदेवा सहित पृथ्वीके राजोंकी रक्षा की जाती है ॥ १२ ॥ यह सब भगवान् विष्णुके सहित पृथ्वीकी रक्षा करते हैं, सूर्य और वरुणके साथ मिले हुए अर्थात् जल अग्निसे

संघटित लिंगशरीरसे ब्रह्म निर्विशेषरूपको प्राप्त होता है ॥ १३ ॥ हे भारत ! उस ब्राह्मणशरीरसे ब्रह्मको प्राप्त होकर जो ब्रह्ममें तेज सब ओरसे समताको प्राप्त हो रहा है ॥ १४ ॥ वेदपारगामी ब्राह्मण जिसको ब्रह्म कहते हैं जो सत्यव्रतपरायण अनेक नियमोंसे प्राप्त होता है ॥ १५ ॥ इस प्रकार यह तीनों लोक ब्रह्माके दिनमें स्थित रहते हैं, उस दिनमें अन्धक प्रतिष्ठित ब्रह्मरूप प्रगट हो जीवरूप प्राणमें प्रतिष्ठित होता है ॥ १६ ॥ ईश्वरके प्रभावसे निश्चलित वेदके द्वारा प्रेरित किया जो नित्यकर्म है वह नियतकर्म शुद्धतावसे करनेसे ॥ १७ ॥ सदैव हित करनेवाला है यह वार्ता वेदपारगामी ब्राह्मणोंने कही है जो कर्मसे प्राप्त होता है वह ब्रह्मका पाद लेखमात्र कहा गया है ॥ १८ ॥ और बहुरूप अर्थात् इन्द्र मित्र वरुणरूप होनेसे ब्रह्मभूत सत्य-

तेन ब्राह्मण वपुषा ब्रह्मप्राप्तेन भारत ॥ यत्ताद्विष्णुमयं तेजः सर्वत्र समतां गतम् ॥ १४ ॥ यत्तद्ब्रह्मेति वै प्रोक्तं ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ॥ नियमेर्वहुभिः प्राप्तैः सत्यव्रतपरायणैः ॥ १५ ॥ एवमेते त्रयो लोका ब्राह्मेऽहनि समाहिताः ॥ अहनि ब्रह्म चाव्यक्तं व्यक्तं प्रापे प्रतिष्ठितम् ॥ १६ ॥ ब्रह्मणो नियतं कर्म प्रभावेन प्रचोदितम् ॥ प्रवर्तमानं भावेन शश्वदच्छल्वादिनाम् ॥ १७ ॥ एताद्वितमिति प्रोक्तं ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ॥ यदेकं ब्रह्मणः पादं दिष्टत्वं गमितं पदम् ॥ १८ ॥ बहुत्वाद्विप्रभावानां विश्वशब्दः प्रयुज्यते ॥ ब्राह्मणैर्ब्रह्मभूतात्मा सत्यव्रतपरायणैः ॥ १९ ॥ विश्वरूपं मनोरूपं बुद्धिरूपं च मानयन् ॥ एवं द्रुद्रं स भगवान् प्रथमं मिथुनं सृजत् ॥ २० ॥ स एव भगवान्विश्वो देव्या सह सनातनः ॥ विधाय विपुलान् भोगान् ब्रह्माचरति सानुगः ॥ २१ ॥ स एष भगवान् ब्रह्मा नित्यं ब्रह्मविदां वरः ॥ निर्वणमयगन्तूणामर्किचनपथेषिणाम् ॥ २२ ॥ सोमात्सोमः समुत्पन्नो धारासलिलविग्रहात् ॥ यथाभिषिक्तो भूतानामाधिपत्ये महेश्वरः ॥ २३ ॥

व्रतपरायण ब्राह्मणोंद्वारा विश्वरूप कहा जाता है ॥ १९ ॥ विश्वरूप मनरूप बुद्धिरूप मानते हुए भगवान्ने प्रथम मिथुनको उत्पन्न किया है ॥ २० ॥ वह भगवान् विश्व सनातन देवीके साथ अनेक भोगोंको करता हुआ अनुचरों सहित विचरता है ॥ २१ ॥ यह भगवान् ब्रह्मा नित्य वेदके ज्ञाता निर्वाणमयको प्राप्त होनेवाले और अर्किचन मार्गकी इच्छावाले हैं ॥ २२ ॥ उमारूप विद्याके सहित ज्ञानशक्तिरूप परमेश्वरसे औषधीपति चन्द्रमा उत्पन्न हुआ है, वह जलरूप धारा स्वर्गसे प्रादुर्भूत हुई है, जिससे महेश्वर भूतोंके आधिपत्यमें अभिषिक्त हुए हैं ॥ २३ ॥

भूतेषुको अभिवेक कर स्वाभाविक कर्म करके नाद करती है, इस कारण इसको नदी कहते हैं ॥ २४ ॥ वह मार्गके रोकनेवाले पर्वतोंका तिरस्कार कर सहस्र प्रकारसे युक्त हो स्वर्गसे (गां) पृथ्वीमें प्राप्त होनेके कारण गंगा कहलाई, और गोदावरी आदि रूपसे समुद्र संगममें सात प्रकारकी हुई है ॥ २५ ॥ हे राजेन्द्र ! इस प्रकारसे यह सहस्र प्रकारोंसे वारंवार लोकको बढाती है इस लोक परलोकको संभावित करती है ॥ २६ ॥ इसीसे सब प्राणी और महा-भूत (जराबुजादि जीव) बढते हैं. इसीसे सब बुद्धिमानोंकी क्रियाका आरंभ होता है अर्थात् मनुष्यादि होकर उससे सब क्रिया बढती है ॥ २७ ॥ उस देवके चार मुक्तोंसे निकली हुई अक्षरमयी सिद्धि वेदरूप उपदेशानेको प्राप्त हुई है ॥ २८ ॥ उसका ज्ञानमय पुण्यरूप चतुष्पाद सनातन है. यह

अभिषिच्य भूतेशं कृत्वा कर्म स्वभावतः ॥ नदाति स्म तदा नादं तेन सा ह्युच्यते नदी ॥ २४ ॥ सा ब्रह्मलोकं संभाव्य अभिभूय सहस्रधा ॥ गां गता गगनादेवी सप्तधा प्रससार च ॥ २५ ॥ सहस्रधा च राजेन्द्र बहुधा च पुनः पुनः ॥ इमं लोकममुं चैव भाषयन् क्षरसंभवम् ॥ २६ ॥ ततो भूतानि रोहन्ति महाभूतफलानि च ॥ ततः सर्वे क्रियारम्भाः प्रवर्तन्ते मनीषिणाम् ॥ २७ ॥ चतुर्भिर्वेदाने-स्तस्य मुखपद्मादिनिःसृता ॥ तदाक्षरमयी सिद्धिर्दिशत्वं समुपागता ॥ २८ ॥ तस्य ज्ञानमयं पुण्यं चतुष्पादं सनातनम् ॥ पतित्वे-नाभवद्देवो ब्रह्मा चात्र पितामहः ॥ २९ ॥ पादा धर्मस्य चत्वारो येरिदं धार्यते जगत् ॥ ब्रह्मचर्येण व्यक्तेन गृहस्थेन च पावने ॥ ३० ॥ गुरुभावेन वाक्येन गुह्यगामिनगामिना ॥ इत्येते धर्मपादाः स्युः स्वर्गहेतोः प्रचोदिताः ॥ ३१ ॥ न्यायाद्धर्मेण गुह्येन सोमो वर्धते मण्डले ॥ ब्रह्मणो ब्रह्मचरणाद्देवा वतन्ति शाश्वताः ॥ ३२ ॥

पितामह ब्रह्मा देवताओंके अधिपति हुए ॥ २९ ॥ धर्मके चार चरण हैं जिनसे यह जगत् धारण किया जाता है ब्रह्मचर्य व्यक्तता और पवित्र गृहस्थ-धर्मसे स्थित है अर्थात् वह ईश्वर यज्ञरूप चार चरणवाला है ब्रह्मा उद्गाता होता अथर्वयु यह चारों चरण हैं अर्थात् धर्मका एक पाद ब्रह्मचर्य आश्रम है गृहस्थाश्रम दूसरा पाद है ॥ ३० ॥ वानप्रस्थ तीसरा और संन्यास चौथा पाद है. यह धर्मके चार चरण धर्मके कारण हैं और स्वर्गके हेतु कहे हैं ॥ ३१ ॥ न्याय और गुप्त धर्मके ब्रह्माण्डमें चन्द्रसे अपिष्ठित मन बढता है और देवके द्वारा प्रमाणित योगसे शाश्वत वेद प्रवृत्त होते हैं ॥ ३२ ॥

ह. वं.
॥ ३२ ॥

पूर्वोक्त योगोंके जाननेवालोंसे पितर तृप्त होते हैं और ऋषिभी धर्मसे उस पर्वतके शिखरपर स्थित हैं ॥ ३३ ॥ उस मेरुपर्वतकी उत्तम शिखरको देखकर चरणोंसे वृषणको पीडित कर अर्थात् सिद्धासनसे स्थित हो विचार करते हैं ॥ ३४ ॥ ग्रीवाको निग्रह कर पृष्ठभागको निवारण कर हैंसते हुए नाभि-देशमें हाथोंको रखकरके (अंबालि बांधकर वाममुद्रा कर वामके ऊपर दक्षिण हाथ कर) सम्पूर्ण अंगोंको निग्रह करता हुआ ॥ ३५ ॥ मस्तकमें ब्रह्मको प्राप्त कर ब्रह्माने अधिकारी मनसे योगसे योगेश्वर विष्णुको मृज ॥ ३६ ॥ इन्द्रियोंसे रहित बिंबसे बिंबकी समान विष्णुको उद्धृत करनेसे

गृहस्थानभिवाक्येन तृप्यन्ति पितरस्तथा ॥ ऋष्योऽपि च धर्मेण नगस्य शिरसि स्थिताः ॥ ३३ ॥ नगस्य तस्य संपश्य मेरोः शिखरमुत्तमम् ॥ फद्यां संपीड्य वृषणावृषिभिस्तोर्विचार्यते ॥ ३४ ॥ ग्रीवां निगृह्य पृष्ठं च विनाम्य प्रहसन्निव ॥ नाभिदेशे करो न्यस्य सर्वशोऽङ्गानि संक्षिपन् ॥ ३५ ॥ मूर्ध्नि ब्रह्म समुत्क्षित्य मनसापि पितामहः ॥ असृजन्मनसा विष्णुं योगाद्योगेश्वरस्य च ॥ ३६ ॥ व्यतिरिक्तेन्द्रियो विष्णुर्विम्बाद्विम्बमिवोद्धृतः ॥ तेजोमूर्तिधरो देवो नभसीन्दुरिवोदितः ॥ ३७ ॥ रराज ब्रह्मयोगेन सहस्रांशुरिवापरः विराजन्नभसो मध्ये प्रभाभिरतुलं प्रभुः ॥ ३८ ॥ नोपलभ्यति मूढानां प्रत्यक्षं ब्रह्म स्नाइवतम् ॥ ललाटमध्ये तिष्ठन्तं द्विधाभूतं क्रियां प्रति ॥ ३९ ॥ ज्योतिश्चक्षुषि संबद्धं विम्बं भास्करसोमयोः ॥ बुद्ध्या पूर्वं तु पश्यन्ति अध्यात्मविवये रताः ॥ ४० ॥ ब्रह्मणा वेदविद्भासः सत्यव्रतपरायणः ॥ नेतरे जातु पश्यन्ति अध्यात्मं नावबुध्यते ॥ ४१ ॥ द्विसायोगेरयोगात्मा सर्वप्राणचरैर्नृप ॥ भूतयो भुवि भूतेशो मोहप्राप्तेन चेतसा ॥ ४२ ॥

तेजकी मूर्ति धारण करनेवाला आकाशमें उदित चन्द्रमाकी समान प्रकट होता है ॥ ३७ ॥ वह दूसरे सूर्यकी समान ब्रह्मयोगसे शोभित हुए, वह प्रभु अपनी अतुलप्रभासे आकाशके मध्यमें शोभित हुए ॥ ३८ ॥ मुठोंको वह शाश्वत ब्रह्म प्रत्यक्ष नहीं होता है, वह क्रिया नियम्य और नियामक रूपसे ललाटके मध्यमें स्थित हैं ॥ ३९ ॥ नेत्रोंको प्रकाशित करनेवाली ज्योति सूर्य और चन्द्रमाका विम्ब है, अध्यात्मज्ञानी इसको बुद्धिपूर्वक देखते हैं ॥ ४० ॥ जो वेदके ज्ञाता ब्रह्मण सत्यव्रतमें परायण हैं उन्हींको यह अध्यात्म ज्ञान विदित होता है, दूसरे इसको नहीं जानते ॥ ४१ ॥ जो योगी पृथ्वीमें प्राणि-

भा. टी.
प. ३३. १७

॥ ३२ ॥

योंकी नियम अनुग्रह करते हैं जिनका आत्मा हिंसायोगसे अयोग हो रहा है तथा ऐश्वर्यसे उपजे हुए मोहमें प्राप्त हुए विचित्रे अयोगात्मा ॥ ४२ ॥
 कुत्सित कर्म और प्राणियोंके बचकी इच्छा करनेवाला अपने भोगोंके अर्थ ईश्वरको नहीं जानता ॥ ४३ ॥ हे ब्रह्मन् ! सावधान मनवाला मोक्षप्राप्तिके
 कारण चन्द्रमण्डलके स्थानसे यही चन्द्रसम्बन्धी ज्योतिर्मे ॥ ४४ ॥ हृदयमें प्रवेश कर सगुण ब्रह्मके हृदयके भीतर गर्भसे उपजनेवाले अकार उकार
 मकार और अर्द्धमात्रासे चार प्रकारवाला होकर ॥ ४५ ॥ ब्रह्मतेजयुक्त होकर शाश्वत ध्रुव अविनाशी इन्द्रियगुणोंसे अयुक्त तेजगुणोंसे
 युक्त ॥ ४६ ॥ चन्द्रकिरणकी समान उज्ज्वल प्रकाशमान वर्णकी संज्ञावाले देवने नेत्रोंसे यज्ञके साथ ऋग्वेदको उत्पन्न किया ॥ ४७ ॥

कर्मभिः कुत्सितैरन्यैः सर्वप्राणिष्वेविणाम् ॥ नराणां योगमाधाय त्वेषु मात्रेषु भारत ॥ ४३ ॥ समाहितमना ब्रह्मन् मोक्षप्राप्तये
 हेतुना ॥ चन्द्रमण्डलसंस्थानाज्ज्योतिर्भान्द्रं महत्तवा ॥ ४४ ॥ प्रविश्य हृदयं क्षिप्रं गायत्र्या नयनान्तरे ॥ गर्भस्य संभवो यश्च
 चतुर्धा पुरुषात्मकः ॥ ४५ ॥ ब्रह्मतेजोमयो युक्तः श्लाघ्यतोऽयं ध्रुवोऽव्ययः ॥ न चेन्द्रियगुणैर्बुक्तो युक्तस्तेजोयुगेन च ॥ ४६ ॥
 चन्द्रांशुविमलप्रस्यो भ्रजिष्णुर्वर्णसंस्थितः ॥ नेत्राभ्यां जनयद्देवो ऋग्वेदं यज्ञुषा सह ॥ ४७ ॥ सामवेदं च जिह्वाभ्यादथर्षाणं च
 मूर्द्धतः ॥ जातमात्रस्तु ते वेदाः क्षेत्रं विन्दन्ति तत्त्वतः ॥ ४८ ॥ तेन वेदत्वमापन्ना यस्माद्विन्दन्ति तत्पदम् ॥ ते सृजन्ति तदा
 वेदा ब्रह्म पूव सनातनम् ॥ ४९ ॥ पुरुषं दिव्यरूपाभं त्वैः स्वैर्भाविर्मनोभवेः ॥ अथर्वणस्तु यो योगः शीर्षं यज्ञस्य तत्स्मृतम् ॥ ५० ॥

यह विश्व और तेजसरूप है, जिह्वाके अर्धभागसे सामवेद प्राप्त रूप उत्पन्न हुआ शब्दमात्र गम्यत्व होनेसे जिह्वासे उत्पत्ति कही, मूर्धसे अथर्व हुआ अर्थात्
 इनसे सबसे विलक्षण रूप होनेसे जो मन नेत्रादि इन्द्रियोंके अगोचर है उस सब शुद्धके मूर्धसे हुआ, उत्पन्न होतेही यह वेद अपने क्षेत्रको प्रकाश कर
 उपाधिको ग्रहण करते हैं ॥ ४८ ॥ इसीसे यह वेदत्वको प्राप्त हुए हैं, कारण कि इनसे तत्त्व जाना जाता है, यही वेद सनातन ब्रह्मको जो तुर्यातीत
 है प्रकाश करते हैं ॥ ४९ ॥ इस प्रकार दिव्यकान्तिवाले पुरुषको अपने २ मनोवक्त्र रूप भावोंसे प्रगट करते हैं, अथर्वणको तुर्य धारणायोगका चिर

कहा है ॥ ५० ॥ ग्रीवा और बाहुओंका अन्तर कण्ठान्न है. हृदय और पार्श्वभाग साम कहाता है ॥ ५१ ॥ वास्ति शिर कटि जंघा चरु चरण यह यज्ञकल्पित यजुर्भाग कहलाता है यह पुरुष दिव्यरूप कान्तिमान् चौथे अक्षरसे प्रादुर्भूत है ॥ ५२ ॥ यही वेदमय यज्ञ सब प्राणियोंको सुख देनेवाला है. वह हिंसारहित सनातन यज्ञ दोनों लोकोंका मंगल करनेवाला है अर्थात् सचीन निर्गुण नामसे दो प्रकारका योग है. पहला चार प्रकारका है. वितर्क विचार आनंद स्मृतिरूप जब ब्राह्मणप्रतिमादिमें विच नियमन किया जाता है वह वितर्क कण्ठशब्दसे कहा जाता है और जब स्वयंकी समान अन्तरबुद्धिसे मनोमात्र प्रतिमादिमें कल्पना की जाती है वह विचार यजुशब्दसे कहा जाता है जब इसको छोड़कर तुरंत जानेकी इच्छासे मध्यमें लय होता है वह प्रकृति लीन सामशब्दसे कहा जाता है यह लयरूप होनेसे अयोग है और तुर्यपदको प्राप्त होनेपर जब सम्पूर्ण ऐश्वर्य सर्वज्ञादिका वर्णन किया जाता है

ग्रीवा बाह्वन्तरं चैव ऋग्भागः स भवेत्ततः ॥ हृदयं चैव पार्श्वं च सामभागस्तु निर्मितः ॥ ५१ ॥ वास्ति शीर्षं कटीदेशं जङ्घोरुचरणैः सह ॥ एवमेष यजुर्भागः संचातो यज्ञकल्पितः ॥ पुरुषो दिव्यरूपाभः संभूता ह्यमरात् पयात् ॥ ५२ ॥ स हि वेदमयो यज्ञः सर्वभूतसुखावहः ॥ उभयोर्लोकयोस्तात हिंसावर्ज्यः सनातनः ॥ ५३ ॥ योगारम्भं कर्मसाध्यं ब्रह्मवर्षं सनातनम् ॥ प्रभवः सर्वभूतानां यो विन्दति स वेदवित् ॥ ५४ ॥ स सिद्धः प्रोच्यते लोके सिद्धिरेव न संशयः ॥ निर्मुक्तेः सर्व धर्मभ्यो मुनिभिर्वेदपारगैः ॥ ५५ ॥ वैष्णवे यज्ञमित्येवं ब्रुवते वेदपारगाः ॥ ब्राह्मणा नियमश्रान्ता वेदोपनिषदे पदे ॥ ५६ ॥ जनमेजय उवाच ॥ चेतस्तु पलम्भं हि मनो ब्राह्मणस्य कामतः ॥ कारणं श्रोतुमिच्छामि यथा त्वं मन्यसे मुने ॥ ५७ ॥

वह आनंद कहलाता है और जब अंशकारको छोड़कर मैं हूं इस प्रकारका जो आनंद है वह स्थित है. यह दोनों अर्थशब्दसे कहे जाते हैं. (विस्तार इसका ज्ञानपतमें वेदस्तुतिपर देखो) ॥ ५३ ॥ यह योगारंभ सनातन कर्म ब्रह्मचर्यसे सिद्ध होता है यही सम्पूर्ण भूतोंका उत्पत्तिरूप है जो इसे जानता है वही वेदवित् है ॥ ५४ ॥ वही लोकमें सिद्ध कहाता है उसेही सिद्धि है इसमें सन्देह नहीं. वेदके जाननेवाले मुनियों करके वह सब कर्मोंसे निर्मुक्त कहा गया है ॥ ५५ ॥ इस प्रकार वेदपारगामियोंने यही वैष्णवयज्ञ कहा है. यह वार्ता वेदके जाननेवाले वेद उपनिषद्में श्रान्त जन ब्राह्मण कहते हैं ॥ ५६ ॥ जनमेजय बोले, मनके ग्रहण करनेसे योग चित्तकी कामनासे उपलब्ध होता है. हे मुनिश्रेष्ठ ! सो मैं इसके कारणके सुननेकी इच्छा करता हूं जैसा आप

जानते हैं ॥ ५७ ॥ वैशंपायन बोले, हे भारत ! इसका कारण कुछ बात नहीं है, हे राजन् । इसका कारण शरीरके अन्तर्गत मन है ॥ ५८ ॥
 जिससे संसित ब्रतवाले ब्राह्मण वेद्य कहते हैं, उस अवेद्य और वेद्यको कर्मोंसे नहीं जान सकते ॥ ५९ ॥ हे राजन् । सदा ब्रह्मके सेवन करनेवाले विनीत
 ब्राह्मणद्वारा जो सिद्धिके निमित्त सदा तत्त्वको जानता है ॥ ६० ॥ सदा पवित्र होकर नियत ब्रह्मकर्मसे युक्त हो हाथ जोड़कर ब्राह्मण गुरुके निकट उपस्थित
 हो ॥ ६१ ॥ तत्त्वका जाननेवाला प्रजात और संध्यासमय मोक्षके कर्मोंको करे विनीत और ब्रह्मज्ञानसे सावधान रहे ॥ ६२ ॥ मनसे उत्तम वैष्णव पदको
 वैशम्पायन उवाच ॥ न ह्यस्य कारणं किञ्चिद्वाङ्मं भवति भारत ॥ अन्तर्गतं कारणं तु शरीरं मानसं नृप ॥ ५८ ॥ येन वेद्यं
 विदुर्मर्त्या ब्राह्मणाः संसितव्रताः ॥ अवेद्यमपि वेद्यं च शक्यं वेत्तुं न कर्मणा ॥ ५९ ॥ ब्रह्मणेन विनीतेन सदा ब्रह्मनिषेविणा ॥
 सदा विदिततत्त्वेन सिद्धिहेतोर्महीपते ॥ ६० ॥ सदा चैव शुचिर्भूत्वा नियतो ब्रह्मकर्मणा ॥ उपतिष्ठेत समुक्तं बद्धाञ्जलिपुटो
 द्विजः ॥ ६१ ॥ सायं प्रातश्च तत्त्वज्ञो मोक्षकर्मणि कारयेत् ॥ विनीतो ब्रह्मभावेन समाहितमतिर्मुनिः ॥ ६२ ॥ संप्रपद्येत मनसा वैष्णवं
 पदमुत्तमम् ॥ ध्यायन्नेव प्रसीदेत समाहितमतिर्द्विजः ॥ ६३ ॥ गच्छते परमं ब्रह्म निर्विकारेण चेतसा ॥ अपुनर्भवभावज्ञो निर्ममो
 भावबन्धनात् ॥ ६४ ॥ तद्देवाक्षरमित्यादुर्यत्तद्ब्रह्म सनातनम् ॥ तर्हि तत्कर्मयोगेन विद्यायोगेन दर्शितम् ॥ ६५ ॥ ब्राह्मणानां विनी-
 तानां वैष्णवे पदसंचये ॥ सर्वद्रव्यातिरिक्तानां कामयोगविगर्हिणाम् ॥ ६६ ॥ अपुनर्भाविनां लोकाः कर्मयोगप्रतिष्ठिताः ॥ अनादानेन
 मनसा राजन्कर्मणि कर्मणि ॥ ६७ ॥ आदानाद्व्यते जन्तुर्निरादानात्प्रमुच्यते ॥ ब्राह्मणेभ्यः क्रियावाप्तिर्जन्तोः पूर्वाजिनाधिप ॥ ६८ ॥
 प्राप्त हो, इस प्रकार सावधान मतिशाला ब्राह्मण ध्यान करता हुआ प्रसन्न हो ॥ ६३ ॥ निर्विकार चित्तसे परब्रह्म को प्राप्त होकर फिर न लौटनेके भावका
 जाननेवाला निर्मम होकर भावबंधनसे पृथक् हुआ रहे ॥ ६४ ॥ जो सनातन ब्रह्म है उसीको अक्षर कहते हैं, वह कर्म और विद्यायोगसे दीखता है ॥ ६५ ॥
 विनीत ब्राह्मणोंको वैष्णवपदके संचयके निमित्त सब ऋषींसे अतिरिक्तोंको जो कामयोगकी निन्दा करते हैं ॥ ६६ ॥ जो फिर संसारमें न आनेकी
 इच्छासे कर्मयोगमें प्रतिष्ठित हैं, हे राजन् । वे कर्मोंमें फलके नहीं चाहनेवाले मुक्त होते हैं ॥ ६७ ॥ प्राणी कर्मफलको ग्रहण करनेसे बंधता है त्यागनेसे

छूट जाता है, हे राजन् ! पूर्वजन्मके संस्कारसे ब्रह्मणोंके अर्धे क्रियाओंकी प्राप्ति होती है ॥ ६८ ॥ इंद्रिय बंधनसे मुक्त हुआ परम पदको प्राप्त होकर फिर मनुष्य शरीरमें नहीं आता ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते सिद्धेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ जन्मेजय बोले, उपसर्ग योग और ध्यान करनेके योग पद, इनके प्रतापसे मनुष्य देहको फिर प्राप्त नहीं हो सकता है ॥ १ ॥ वशंपायन बोले, जो तुम ब्रह्मादिक योगियोंकी अनेक प्रकारसे उत्पत्ति देखते हो उसे बुद्धिसे सुनो, जो मनसे ब्रह्मादिकी अनेक प्रकार प्राप्ति होती है ॥ २ ॥ शब्दादि पांच सिद्धियोंके गुण

मुक्तश्चेन्द्रियबन्धेन प्राप्तश्च परमं पदम् ॥ न भूयः पुनरायाति मानुषं देहविग्रहम् ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते सि० हरि० भविष्य-
पर्वणि सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ जनमेजय उवाच ॥ उपसर्गं च योगं च ध्यातव्यं चैव यत्पदम् ॥ न भूयः पुनरायाति मानुषं
देहविग्रहम् ॥ १ ॥ वेशम्पायन उवाच ॥ शृणु विस्तरतः सर्वं यथा पुच्छेसि मेधया ॥ उपपन्नेन मनसा ब्रह्मादीनामनेकधा ॥ २ ॥
पञ्च सिद्धिगुणास्त्यक्त्वा पश्यतो ब्रह्मणा नृप ॥ योगयुक्तेन मनसा पञ्चेन्द्रियनिवासिनः ॥ ३ ॥ ब्रह्मजाश्चित्तवानस्य ब्रह्मपक्षं सना-
तनम् ॥ बहुरूपमनैश्वर्यारप्रवर्तति निरोधनम् ॥ ४ ॥ पञ्चेन्द्रियस्य ग्रामस्य नवद्वारस्य भारत ॥ कामक्रोधस्य लोभस्य तन्नि-
रुद्धस्य मेधया ॥ ५ ॥ तेजसा सृष्टिं बाधाय भूमौ बोधयते महात् ॥ नीललोहितवर्णोभेः पीतेः श्वेतैश्च धातुभिः ॥ ६ ॥

त्याग कर ब्रह्मको देखते हुए योगयुक्त मनसे पञ्चेन्द्रियनिवासी ब्रह्मको चिन्तन करनेसे ॥ ३ ॥ सनातन ब्रह्मपक्षकी प्राप्ति होती है बहुरूप अने-
श्वर्य वैराग्य बलके अभावसे ब्रह्मपक्ष निरोधको प्राप्त होता है ॥ ४ ॥ हे भारत ! नील द्वारयुक्त पंच इंद्रियसमूह काम क्रोध लोभकी मेधासे रुका
हुआ ग्रामरूप शरीरका योग अनेश्वर्यसे रुक जाता है ॥ ५ ॥ भृकुटि नासिकाके मध्यमें चारण किये तेजसे नेत्रोंके प्रणिधान किये चित्तको संयुक्त
कर स्थित हुए योगीके धुआंरूप जल ओसकी समान बहुतसा निकलता है, नील लोहित वर्णकी समान कान्तिवाले पीत श्वेत धातुओंद्वारा ॥ ६ ॥

मंजीठके रंगकी समान कबूतरके रंगकी समान शुद्ध वैदूर्य और पद्मलकी कान्तिकी समान ॥ ७ ॥ स्फटिकमणिके वर्ण नागेशकी सदृश इन्द्रगोपवर्णकी समान चन्द्रकिरण और जलकी समान ॥ ८ ॥ इन्द्रवज्रकी समान बहुत वर्णके धूमसमागमको प्राप्त होनेवाले एकसाथ मेघसन्नातिको प्राप्त होनेवाले ॥ ९ ॥ पक्षोंवाले पर्वतोंकी समान आकाशको रोकनेवाले धूमवर्ण मेघ जलके धारण करनेवाले जलसमूहको उगलने हुए पृथ्वीतलमें प्रवेश करते हैं ॥ १० ॥ शिरमें परमयोगसे युक्त सैकड़ों ज्वालाओंसे युक्त महान् अग्नि मनसे उपजी कंपित होती है ॥ ११ ॥ उसकी सहस्रों सैकड़ों ज्वाला-

माज्जिष्ठरागवर्णाभेः कपोतसदृशेस्तथा ॥ शुद्धवैदूर्यवर्णाभेः पद्मवर्णदलप्रभेः ॥ ७ ॥ स्फटिकैर्मणिवर्णाभैर्नागेन्द्रसदृशेस्तथा ॥ इन्द्रमोपकवर्णाभैश्चन्द्रांशुसलिलप्रभेः ॥ ८ ॥ बहुवर्णैः सुधूमोषैरिन्द्रायुधसमप्रभेः ॥ संपतद्भिश्च युगपन्मघैरिव समागमे ॥ ९ ॥ निरुच्यन्त इवाकाशे पक्षवद्भिरिवाद्रिभिः ॥ ते धूमवर्णाः संघाता घनाः सलिलधारिणः ॥ निर्वसुश्चैव तोयोचान्विविशुर्वसुधातले ॥ १० ॥ मूर्ध्नि चैव महानग्निर्मानसो धूयते प्रभुः ॥ युक्तः परमयोगेन शतशोऽर्चिभिरावृतः ॥ ११ ॥ तस्यार्चैर्विस्फुलिङ्गानां सहस्राणि शतानि च ॥ विसृष्टः सर्वगात्रेभ्यो ज्वलन्निव युगान्नयः ॥ १२ ॥ यावन्त्यो वर्षधारास्तु तावन्त्योऽर्च्योऽनलस्य च ॥ समेयुर्वारिधाराभिर्विपुले वसुधातले ॥ १३ ॥ वर्णाभ्यां युज्यमानस्य वायुदोषूयते महान् ॥ दिव्यसिद्धगुणोद्भूतः सूक्ष्मप्राणविवर्द्धनः ॥ १४ ॥ वेगवान्भीमनिर्घोषो बलवान्प्राणगोचरः ॥ तेरेव चाग्निसंघातेर्धातुभिः सह संगतः ॥ १५ ॥ सहस्रशोऽथ शतशो मूर्तिं कृत्वा पृथग्विधाम् ॥ अग्निर्वायुर्जलं भूमिर्धतवो ब्रह्मचोदिताः ॥ १६ ॥

ओंके विस्फुलिंग प्रलयाग्निकी समान जलते हुए सब शरीरसे निकलते हैं ॥ १२ ॥ जितनी जलकी धारा हैं उतनीही अग्निकी चिनगारी हैं वे विपुल पृथ्वीतलमें जलधारासे मिलते हैं ॥ १३ ॥ श्वेत लोहित वर्णवाले दिव्य सिद्धगुणोंसे युक्त सूक्ष्म प्राणका बढ़ानेवाला ॥ १४ ॥ वेगवान् मयंकर शब्दवाला बलवान् प्राणगोचर उन्हीं अग्निके संघात और धातुओंसे मिला हुआ ॥ १५ ॥ सैकड़ों सहस्रों मूर्ति पृथ्वीमें पृथक् करके अग्नि वायु जल

भूमि धातु ब्रह्मसे प्रेरित हुए ॥ १६ ॥ समवायभावको प्राप्त हो बीजभूत ब्रह्मयोगसे संघातको प्राप्त हो धातुके कारणभावको प्राप्त हुए ॥ १७ ॥ जो ब्रह्म चक्षुके मध्यमें सूक्ष्म विराट्पुरुष है वह सूक्ष्म विराट्से बहुतसे पुरुषोंको रचता है ॥ १८ ॥ यह भगवान् विष्णु सनातन व्यक्त और अव्यक्त है यही सब विद्याओंके आधार और प्रलयमें प्रलयान्त करनेवाले हैं ॥ १९ ॥ उनको शिरमें धातुओंसे नन्द ब्रह्मसे प्रेरित जन प्रवेश करते हैं. वे अन्तर पुरुष सब सुखदुःखके ज्ञाता जीवमें प्रवेश करते हैं ॥ २० ॥ तब वे ब्रह्मसम्मित मूर्ति बेटा करने लगती हैं धरणी देवीको भेदन कर दशों दिशाओंमें

समवायत्वमापन्ना बीजभूता महीपते ॥ संघातं ब्रह्मवेगेन धातवो गमिता नृप ॥ १७ ॥ यद्ब्रह्म चक्षुषोर्मध्ये स सूक्ष्मः पुरुषो विराट् ॥ तयोरन्यान्बहून्सूक्ष्मान्तस्मृजे पुरुषोत्तमः ॥ १८ ॥ स एव भगवान्विष्णुर्न्यक्ताव्यक्तः सनातनः ॥ आधारः सर्वविद्यानां प्रलये प्रलयान्तकृत् ॥ १९ ॥ तं मूर्ध्नि धातुभिर्नदं विशन्ति ब्रह्मचोदिताः ॥ तेऽन्तरा पुरुषाः सर्वे ज्ञातारः सुखदुःखयोः ॥ २० ॥ अथ चेष्टितुमारब्धा मूर्तयो ब्रह्मसंमिताः ॥ भित्त्वा च धरणीं देवीं प्रापद्यन्त दिशो दश ॥ २१ ॥ इत्येते पार्थिवाः सर्वे ऋषयो ब्रह्मनिमिताः ॥ तत्रैव प्रलयं याता भूमित्वमुपयान्ति च ॥ २२ ॥ कर्मक्षयाद्विमुच्यन्ते धातुभिः कर्मबंधनैः ॥ कर्मक्षयाद्विमुक्तत्वादिन्द्रियाणां च बन्धनात् ॥ २३ ॥ तामेव प्रकृतिं यान्ति अज्ञातां कर्मणोचरैः ॥ क्षराद्भ्रमक्षयं चैव अभिगर्भास्तपोमयाः ॥ २४ ॥ येन तन्तुरिवाच्छन्नो भावाभावः प्रवर्तते ॥ धूमादभ्रास्तु संभूता अभ्रातोय सुनिर्मलम् ॥ २५ ॥

प्राप्त होती हैं ॥ २१ ॥ यह सब पृथुभूतसे उत्पन्न होनेसे पार्थिवरूप सब ब्रह्मनिर्मित ऋषि फिर प्रलयको प्राप्त हुए भूमितलमें प्रविष्ट हो जाते हैं ॥ २२ ॥ कर्म क्षय होनेसे छूट जाते हैं कर्मबंधनवाली धातुओंसे छूट जाते हैं कर्मक्षयसे इन्द्रियोंके बंधनसे छूट ॥ २३ ॥ अज्ञानवासे कर्मणोचर होनेके कारण उसी प्रकृतिको प्राप्त हो संसारमें आते हैं. अग्निहोत्रादि कर्म करनेवाले मनुष्य तपोमय लच्छू चान्दायणादि कर्म करनेवाले होते हैं ॥ २४ ॥ जिससे तंतुकी समान अवच्छिन्न भाव अभाव प्रवृत्त होता है धूमसे मेघ और मेघसे निर्मल जल होता है ॥ २५ ॥

जलसे पृथ्वी होती है. पृथ्वीमें फल फलसे रस रससे शरीरधारियोंके प्राण होते हैं ॥ २६ ॥ यज्ञोंमें जो सनातन ब्रह्म है तन्मय ब्रह्म चैतन्य रूप रस है. जो बहुतसे करणोंसे प्रधान ब्रह्म कहा है वह तपसे श्रान्त तपव्रतमें परायण ब्राह्मणोंने प्रधानभूत कहा है ॥ २७ ॥ हे भारत ! वह अपने सावसे अव्यक्तसे व्यक्तताको प्राप्त हुआ सब भूतोंके अन्तरमें विद्याके सहित विचरण करता है ॥ २८ ॥ कर्मकर्ताके विषयमें अनेक प्रकारसे स्थित तपसे दग्धपाप-
वालोंकी चक्षुसे नहीं दीखता ॥ २९ ॥ ब्रह्मवादी ज्ञानियोंको चक्षुसे दीखता है. वह दोनों भृकुटिके मध्यसे मेघयुक्त सूर्यकी समान निकलता है ॥ ३० ॥

जगती जलातु संभूता जगत्पेव च यत्फलम् ॥ फलाद्रसस्तु संजज्ञे रसात्प्राणस्तु देहिनाम् ॥ २६ ॥ रसश्च तन्मयो जज्ञे यत्तद्ब्रह्म
सनातनम् ॥ प्रधानं ब्रह्म चोद्दिष्टं बहुभिः कारणान्तरेः ॥ ब्राह्मणेस्तपसि श्रान्तेः सत्यव्रतपरायणेः ॥ २७ ॥ अव्यक्ताव्यक्तिमापन्नं
स्वेन भावेन भारत ॥ अन्तस्थं सर्वभूतेषु चरन्तं विद्यया सह ॥ २८ ॥ कर्म कर्तेति राजेन्द्र विषयस्तमनेकधा ॥ नोपलभ्येत चक्षुर्भ्यां
तपसा दग्धकिल्बिषैः ॥ २९ ॥ उपलभ्येत चक्षुर्भ्यां ज्ञानिभिर्ब्रह्मवादिभिः ॥ निःसृतस्तु भुजोर्मध्यान्मेघमुक्त इवांशुमान् ॥ ३० ॥
चरद्भिः पक्षिवल्लोके निर्द्वन्द्वेर्निष्परिग्रहेः ॥ योगधर्मेण कौरव्य ध्रुवमासाद्यते फलम् ॥ ३१ ॥ प्रादुर्भावं क्षयं चैव भूतस्य निधनं तथा ॥
विधत्ते शतशो ब्रह्मा संक्षये च भवेत्तदा ॥ ३२ ॥ कर्मणः कर्मयोगज्ञो भूतेभ्यो नात्र संशयः ॥ अविनाशाय लोकस्य धर्मस्त्याग्याय-
नेन च ॥ ३३ ॥ युगं द्वादशसाहस्रं सहस्रयुगसंहितम् ॥ एतद्ब्रह्मयुगं नाम युगानां प्रथमं युगम् ॥ ३४ ॥ सहस्रयुगयोरन्ते सहारः
प्रलयान्तकृत् ॥ सूक्ष्मं भवति लोकानां निर्वािकारमचेतनम् ॥ ३५ ॥

वह लोकमें पक्षकी समान निर्द्वन्द्व विचरता है. हे कौरव्य ! योगधर्मसे अवश्य फल मिलता है ॥ ३१ ॥ भूतोंका प्रादुर्भाव क्षय और निधन ब्रह्माजी
सैकड़ों बार करते हैं. प्रलयके उपरान्त सृष्टि होती है ॥ ३२ ॥ कर्मसे कर्मयोगोंका जलनेवाला भूतोंके कर्मोंका जाननेवाला लोकके अविनाश और
धर्मकी पुष्टिके अर्थ ॥ ३३ ॥ बारह सहस्र युग सहस्रयुगके सहित अर्थात् तेरह सहस्र युगका ब्रह्माका युग प्रथम जानना चाहिये ॥ ३४ ॥ सहस्र
युगके अन्तमें प्रलयान्त करनेवाला संहार उपरिष्ठत होता है. उस समय लोक निर्वािकार अचेतन और सूक्ष्मरूप होता है ॥ ३५ ॥

जब इस प्रकार सब सनातन जगत् प्रलयको प्राप्त होता है तब अपने कारणगुणोंसे सूक्ष्म ब्रह्म स्थित होता है ॥ ३६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायाम् अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ जन्मेजय बोले, हे महामुने ! विस्तारसे मैं प्राग्वंश श्रवण करनेकी इच्छा करता हूँ. हे ब्रह्मन् ! जो सृष्टिब्रह्मको जाननेवाले आद्ययुगोंके विस्तारसे युक्त हैं ॥ १ ॥ वैशम्पायन बोले, जो आप बुद्धिपूर्वक सुननेकी इच्छा करते हैं वह सुमनसे सुनिये. देवके ऊपर विश्वास करनेवाले युक्तमनसे सुनिये ॥ २ ॥ योगात्मा ब्रह्मसंभव जगवान् ऋद्धिको प्राप्त होकर प्राणियोंकी बहुतायत करते हुए ॥ ३ ॥ ब्रह्मासनके ऊपर बैठे

तथा प्रलयमाप्न्नं जगत्सर्वं सनातनम् ॥ ब्रह्म संपद्यते सूक्ष्मं निमित्तं कारणैर्गुणैः ॥ ३६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ जनमेजय उवाच ॥ प्राग्वंशं श्रोतुमिच्छामि विस्तरेण महामुने ॥ आद्ययोर्युगयोर्ब्रह्मन् ब्रह्मप्राप्तस्य सर्वज्ञः ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ शृणु विस्तरज्ञः सर्वं यन्मां पृच्छसि मेधया ॥ उपपन्ने न मनसा देवप्रत्ययसाधिना ॥ २ ॥ ऋद्धिं प्राप्तस्तु भगवान्योगात्मा ब्रह्मसंभवः ॥ भूतानां बहुलत्वं च चक्रास्तेऽश्वरः प्रभुः ॥ ३ ॥ स्थितो ब्रह्मासने ब्रह्मा विशिप्तः सहसा प्रभुः ॥ अचलेनैव भावेन स्थाणुभूतेन भारत ॥ ४ ॥ रक्तश्च मोक्षविषये स च ज्ञानमये पदे ॥ यस्मात्पदसहस्राणि प्रभवन्ति भवन्ति च ॥ ५ ॥ ब्रह्मयज्ञं तु यजते योगाद्देवात्मकं सदा ॥ ब्रह्मणो विपुलं ज्ञानमैश्वर्यं च प्रवर्तते ॥ ६ ॥ ततः प्रथममैश्वर्यं युञ्जानेन प्रवर्तितम् ॥ ब्रह्मणा ब्रह्मभूतेन भूतानां हितमिच्छता ॥ ७ ॥ तदा त्वाकाशमैश्वर्यं युञ्जानस्य प्रवर्तते ॥ ब्रह्मणो ब्रह्मभूतस्य निर्विकारेण कर्मणा ॥ ८ ॥

हुए ब्रह्मा प्रभु सहसा विशिप्त हुए. हे भारत ! उस समय उनका स्थाणुकी समान अचलभाव हो रहा था ॥ ४ ॥ वह ज्ञानरूप मोक्षपदमें स्थित हुए थे कि जिससे सैकड़ों पद निकल कर प्रविष्ट हो जाते हैं ॥ ५ ॥ सब कालमें वेदात्मक ब्रह्मयज्ञको करते हैं उससे ब्रह्माका महाज्ञान और ऐश्वर्य बढ़ता है ॥ ६ ॥ तब ब्रह्मभूत और प्राणियोंके हितकी इच्छा करनेवाले ब्रह्माने प्रथम ऐश्वर्य प्रगट किया ॥ ७ ॥ निर्विकार कर्मसे ऐश्वर्यरूप आकाश

प्रवृत्त किया ॥ ८ ॥ तब निर्मल ब्रह्म अविनाशी अन्तरिक्ष प्राप्त हुआ जो सब प्राणी और ब्रह्मादियों का संहारक है, जहां देहवारी योगके ध्रुव ऐश्वर्यरूप प्राप्त होते हैं ॥ ९ ॥ आकाशमें ऐश्वर्यसे सम्पन्न संपुर्णमें ब्रह्मगरी और उससे प्रवर्तमान ऐश्वर्य वायुमात्रको करता है और बहुतसे विकारोंमें पड़े हुए महाबलोंसे संवृत ॥ १० ॥ और इन विकारोंसे चारों ओर ढके और निरुद्ध हुए ध्रुव ऐश्वर्यको प्राप्त हो ब्राह्मण सिद्ध हो जाते हैं ॥ ११ ॥ तब वह शरीरारिसे निकलकर आकाशमें धावमान होता है, निरालम्ब अनालम्ब्य मनसे ॥ १२ ॥ ऐश्वर्यभूत

तदान्तरिक्षं संप्राप्तं निर्मलं ब्रह्म चाव्ययम् ॥ संहारः सर्वभूतानां नराणां ब्रह्मादिनाम् ॥ ध्रुवमैश्वर्ययोगानां प्रतिपद्यन्ति देहिनः ॥ ९ ॥ आकाशेश्वर्यभूतेन संपुगे ब्रह्मादिना ॥ प्रवर्तमानमैश्वर्यं वायुभूतं करोति च ॥ विकारेर्बहुभिः प्राप्तेः संपत्तद्विर्मलबुद्धेः ॥ १० ॥ एतेर्विकारेः संवृत्तेर्निरुद्धेश्व समन्ततः ॥ ध्रुवमैश्वर्यमापन्नः सिद्धो भवति ब्राह्मणः ॥ ११ ॥ शरीरादभिनिष्क्रम्य आकाशेन प्रवावति ॥ निरालम्बो निरालम्बानालम्ब्य मनसा ततः ॥ १२ ॥ ऐश्वर्यभूतो भूतात्मा चरन्दिवि न दृश्यते ॥ चक्षुर्भिरबुद्धिर्भ्रूलोकेः पुरंदरसमे-
रपि ॥ १३ ॥ ओंकारं ये त्वधीयन्ते मनसा ब्रह्मउत्तमाः ॥ विभक्ताः सर्वकर्मभ्यस्ते यं पश्यन्ति साधवः ॥ १४ ॥ एताद्वि परमं ब्रह्म ब्राह्मणानां मनीषिणाम् ॥ अन्तश्चरति भूतानां विद्धि चेतनया सह ॥ १५ ॥ एष शब्दो महानादः पुराणो ब्रह्मसंभवः ॥ वायु-
भूतोऽक्षरं प्राप्तो वदन्त्येवं द्विजातयः ॥ १६ ॥ अक्षरी रूपतंपन्नो धातुभिः सह संगतः ॥ अन्तश्चरति भूषु कामकारकरो वशी ॥ १७ ॥ एतत्पूर्वमनुष्याय मनसापूरयन्निव ॥ वेदात्मकं तदा यज्ञं चिन्तयन्तो मनीषिणः ॥ १८ ॥

भूतात्मा चरता हुआ स्वर्गमें नहीं दीखता है, चाहे पुरन्दरकी समान चतुष्पी क्यों न हो ॥ १३ ॥ जो ब्राह्मणभेद मनसे ओंकारका ध्यान करते हैं वे महात्मा सब कर्मोंसे रहित होकर उनको देखते हैं ॥ १४ ॥ ब्राह्मण मनीषियों का यही परब्रह्म है, यह चेतनके सहित भूतोंके अन्तरमें फिरता है सो जानो ॥ १५ ॥ यह शब्दरूपी महानाद पुरातन और ब्रह्मसंभव है यह वायुभूत अक्षरको प्राप्त है, इस प्रकार द्विजाने कहते हैं ॥ १६ ॥ स्मरारहित रूपसे सम्पन्न धातुओंसे संगत हुआ काम कर सब कुछ करनेवाला वशी प्राणियोंके अन्तःकरणमें चरता है ॥ १७ ॥ यह प्रथम ध्यान कर मनसे पूर्ण

करता हुआ बुद्धिमान् वेदान्तयज्ञको चिन्ता करता हुआ ॥ १८ ॥ पवित्र ब्राह्मण चतुर उसके यशको प्राप्त होता हुआ ब्रह्मशोकमें उत्तम वैष्णवपदकी इच्छा करता हुआ ॥ १९ ॥ उस पदप्राप्तिके निमित्त विगतज्वर होकर सब किया करता है, हे राजन् ! यह जन्म देनेवाले संसारकी इच्छा नहीं करते ॥ २० ॥ विश्व तेजस प्राप्त इन तीनोंको समर्पण करनेवाले माल्य उपहार आदिसे सत्यपराक्रमवाले परात्मा विष्णुको यजन करते हैं ॥ २१ ॥ वे वेदप्रमाण युक्त यजन और विक्रम करके तथा ब्रह्माजी वेशोक वचनोंसे वैष्णवतेजको प्राप्त हो ॥ २२ ॥ ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मण तथा ब्रह्मयज्ञ करनेवाले ब्राह्मणाः शुचयो दान्ता यज्ञोयुजस्तद्व्या ॥ ब्रह्मलोकं काङ्क्षन्माणा वैष्णवं पदमुत्तमम् ॥ १९ ॥ पदहेतोः क्रिया सर्वाः कुर्वन्ति विगतज्वराः ॥ न ह्येते प्रसवादाने भवमिच्छन्ति भारत ॥ २० ॥ त्रिभिर्माल्योपहारैश्च प्रतिभावैश्च वै द्विजाः ॥ यजन्ति परमात्मानं विष्णुं सत्त्वपराक्रमम् ॥ २१ ॥ यजनं विक्रमं चैव ब्रह्मपूर्वा प्रचक्रिरे ॥ ब्रह्मापि वैष्णवं तेजो वेदोक्तेर्वचनेनृप ॥ २२ ॥ ब्राह्मणैर्ब्रह्म-विद्विश्च ब्रह्मज्ञैर्ब्रह्मवादिभिः ॥ शुचिभिः कर्मनिर्मुक्तैः ॥ सत्यव्रतपरायणैः ॥ २३ ॥ घातुभिर्मौंशकाले च महात्मा संप्रदृश्यते ॥ तदेव परमं ब्रह्म वैष्णवं परमाद्भुतम् ॥ २४ ॥ रसात्मकं तदेवैव्यं विकारान्ते प्रदृश्यते ॥ घोररूपा विकारास्ते व्यययन्ति महात्मनः ॥ २५ ॥ संच्छाद्यातीव तोयेन क्षुभ्यमाणो विचेतनः ॥ कर्मभिश्छाद्यते चैव शीतोष्णाभिर्विकारतः ॥ २६ ॥ महार्णवगतश्चैव दह्यते न च सज्जते ॥ मग्नश्चैव महानद्याः सलिले नैव सीदति ॥ २७ ॥ सीदमानश्च सलिले स शीते पात्यते बलात् ॥ आसनाच्छादनाच्चैव मुच्यमानो विचेतनः ॥ २८ ॥

ब्रह्मवादियोंद्वारा जो पवित्र कर्मसे निर्मुक्त और सत्यव्रतमें परायण हैं ॥ २३ ॥ तेजबलयुक्त ब्रह्मको मोक्षकालमें कोईही महात्मा देखते हैं, वही परम अद्भुत वैष्णवोंका परम स्थान है ॥ २४ ॥ वह रसात्मक पेशर्य प्रकारान्तरमें दीखता है वे घोररूप विकार महात्माको दुःखित करते हैं ॥ २५ ॥ अत्यन्त जलसे आच्छादित और तरंगोंसे क्षुभित विचेतन जीव शीत उष्ण तरंगोंसे क्षुभित किया जाता है ॥ २६ ॥ और महासमुद्रमें गन जीव दग्ध होता है और दग्ध हुई महानदीके जलसे दुःखित होता है ॥ २७ ॥ वह जलमें दुःखी हुआ बलसे शीतमें डाला जाता है तब वह आसन

आच्छादनसे छूटा हुआ विचेतन हो ॥ २८ ॥ मेघमें प्राप्त हुआ जलसे सींचा जाता है और शुक्लवर्णवाले स्रोतोंसे शिरकी ओर वारंवार सींचा जाता हुआ ॥ २९ ॥ ऊर्ध्व ज्योति शुक्ल पीतसे बाधित होता है, गंभीर जलसे पूर्ण बिजलियोंसे प्रकाशित ॥ ३० ॥ इन विकारोंसे संवृत और अनेक प्रकारसे निरुद्ध ध्रुव ऐश्वर्यको प्राप्त होकर ब्राह्मण सिद्ध होता है ॥ ३१ ॥ वह रसात्मक ऐश्वर्य जिह्वाग्रसे निकला हुआ सहस्रधारायुक्त हो मेघत्वको प्राप्त हुआ ॥ ३२ ॥ सब प्राणियोंके हेतुभूत प्राप्तयोग करके धातुओंके अर्थ योगसे सिद्ध ईश्वर अनेक प्रकारके रसोंको मृजता है ॥ ३३ ॥ तेजस्वर

श्वभ्रे प्रपद्यमानश्च तोयेन परिषिच्यते ॥ शुक्लवर्णेन बहुना स्रोतसा मूर्ध्नि सर्वशः ॥ २९ ॥ ऊर्ध्वं ज्योतिरवेक्षंश्च शुक्लेः पीतेश्च वाच्यते ॥ वारिपूर्णैः सुगम्भीरैर्विद्युद्भिरिव भासितैः ॥ ३० ॥ एतेविकारेः संवृत्तेर्निरुद्धैश्चैव सर्वशः ॥ ध्रुवमैश्वर्यमासाद्य सिद्धो भवति ब्राह्मणः ॥ ३१ ॥ रसात्मकं तदैश्वर्यं जिह्वाग्रादभिनिःसृतम् ॥ सदस्रधारं विततं मेघत्वं समुपागतम् ॥ ३२ ॥ रसांश्च विविधान्योगान्त्संसिद्धः सृजते प्रभुः ॥ धात्वर्थं सर्वभूतानां योगप्राप्तेन हेतुना ॥ ३३ ॥ तेजसो रूपमैश्वर्यं विकारेः सह वर्द्धते ॥ आत्मनो विभ्रजननं स्वस्थो ब्राह्मणकारणे ॥ ३४ ॥ उग्ररूपैर्वैरूपैश्च हन्यते दण्डपाणिभिः ॥ घोररूपैः सुगम्भीरैः पिङ्गाक्षैर्नरविग्रहैः ॥ ३५ ॥ नेत्रं समुद्धरन् भीमं जीह्वाग्रं चास्य विन्दति ॥ नदन्ति युगपन्नादं जुम्भमाणाः पुनः पुनः ॥ ३६ ॥ पुनरेव तदा भूत्वा बहुरूपास्तदाभवन् ॥ नृत्यमानाः प्रगायन्ति तर्पयन्तो विशेषतः ॥ ३७ ॥ स्त्रीभूताश्च ततः सर्वे युञ्जानाश्चावलम्बिरे ॥ कण्ठेषु बहुरूपत्वादिघ्नेश्चैव प्रलोभयन् ॥ ३८ ॥

ऐश्वर्य और आत्माके विघ्न करनेवाले विकारोंके सहित बढ़ता है और कारणमें स्वस्वरूप है ॥ ३४ ॥ उग्ररूप विरूप दण्डधारी घोररूप अतिगंभीर पिंगल नेत्रोंवाले पुरुषोंसे तावित हुआ ॥ ३५ ॥ प्रयानक नेत्रोंको निकालता हुआ जिह्वाग्रको छेदन करता है और वारंवार जंभाई लेता हुआ एक साथ शब्द करता है ॥ ३६ ॥ फिर अनेकरूप होता है तब अनेकरूपसे नाचते गाते विशेषकर तृप्त करते हैं ॥ ३७ ॥ और वे सब स्त्रीरूप हुए बहुत लोभसे विघ्नोंसे लोभ देनेवाले कंठमें लटकते हैं ॥ ३८ ॥

३८

और मधुर वचनोंसे डरे हुए पुरुषोंकी समान नहीं बोलते हैं और एककाठमें सब अपना शिर चरणोंमें रखते हैं ॥ ३९ ॥ योगके प्रसादकी आकांक्षा करनेवाले योगके भीतर बहुत प्रकारको कहनेवाले बहुत प्रकार नाचते हुए फिरते हैं ॥ ४० ॥ इन विकारोंसे सब प्रकारके निरुद्ध और आच्छादित हुआ निश्चल ऐश्वर्यको प्राप्त हुआ ब्राह्मण सिद्ध होता है ॥ ४१ ॥ वहां वे जलकी बुँदें सूर्यकी किरणोंकी समान तेजस्वा ऐश्वर्यको प्राप्त होती हैं ॥ ४२ ॥ वही जल मेघरूप हो आकाशमें प्राप्त होकर लोकमें चन्द्रसूर्यकी गतिको प्राप्त हो जाता है ॥ ४३ ॥ जो चन्द्रसूर्यात्मक सवन ज्योति है यही वह ध्रुव

मधुरेराभिधानेश्व व्याहरन्ति न भीतवत् ॥ पतन्ति युगपत्सर्वे पादयोर्मूर्धंभिर्युताः ॥ ३९ ॥ प्रसादं काङ्क्षमाणाश्च योगस्यान्तरविघ्नतः ॥ बहुप्रकारं कथयन्नृत्यन्ति च तरन्ति च ॥ ४० ॥ एतेर्विकारेः संवृत्तेर्निरुद्धेश्व सर्वशः ॥ ध्रुमैश्वर्यमासाद्य सिद्धो भवति ब्राह्मणः ॥ ४१ ॥ तद्विचित्र इवाग्नेया आदित्यस्येव रश्मयः ॥ तेजोरूपकमैश्वर्यं जनितास्तेजविन्दवः ॥ ४२ ॥ ज्योतीषि चैव संवृता आकाशे गुणसंवृताः ॥ चरन्ति लोके सततं सूर्याचन्द्रमसोर्गतिम् ॥ ४३ ॥ चन्द्रसूर्यात्मकं दिव्यं ज्योतिः सचनमुत्तमम् ॥ एतद्विभ्राजते लोके कालचक्रं ध्रुवं वरम् ॥ ४४ ॥ अर्धमासाश्च मासाश्च ऋतुसंवत्सराण्यथ ॥ क्षणा लघा सुहूर्ताश्च कलाः काष्ठास्तथैव च ॥ ४५ ॥ अहोरात्रप्रमाणं च निमेषोन्मेषणं तथा ॥ ताराणां गतयश्चैव ग्रहाणां च विशेषतः ॥ ४६ ॥ अथ पार्थिवमैश्वर्यं विकारग्रहसंभवम् ॥ योगयुक्तास्त्वाभिप्रस्ता यान्त्यन्ते ह्यचलासनात् ॥ ४७ ॥ अलोभाच्छिद्यते सद्यो वेपमानो नु कीर्त्यते ॥ सीदते वसुधामध्ये विद्यमानः पुनः पुनः ॥ ४८ ॥

कालचक्र संसारमें प्रकाशित होता है ॥ ४४ ॥ आधे महीने, महीने, ऋतु, संवत्सर, क्षण, लघ, सुहूर्त, कला, काष्ठा ॥ ४५ ॥ अहोरात्रका प्रमाण निमेष, उन्मेष और विशेषकरके तारे और ग्रहोंकी गति ॥ ४६ ॥ विकारोंके ऐश्वर्यसे उत्पन्न हुआ कालचक्र है। पार्थिव ऐश्वर्यको अभिप्रस्त हुए योगी अतुलरूप आसनसे गिराते हैं ॥ ४७ ॥ अलोभासे ऐश्वर्य छेदित करते हैं और विघ्नसेभी योगी कांपता है और पृथ्वीमें बारंबार भिद्यमान हुआ दुःखी

भा. टी.

प. ३ अ. १९.

३८

होता है ॥ ४८ ॥ भूतोंको अनेकरूप और अन्य लोकवासियोंके विषयोंसे शीघ्र युक्त होता है और संक्षेपसे रुक जाता है ॥ ४९ ॥ फिर सब प्रकारसे पार्थिव ऐश्वर्यको सेवन करता हुआ मूर्तिवाली धातुओंसे मारा जाता है ॥ ५० ॥ शक्ति तोमर निखिंश और अनेक प्रकारकी गदाओंसे तथा असि और अनेक प्रकारकी क्षुरधाराओंसे पातित किया जाता है ॥ ५१ ॥ और सुतीक्ष्ण मर्मभेदी बाणाग्रे भेदन किया जाता है, इस प्रकारके विकारोंसे निवृत्त और सब प्रकारसे निरुद्ध हुआ ॥ ५२ ॥ ऐश्वर्यको प्राप्त हुआ ब्राह्मण सिद्ध होता है तब फिर विकारसे पार्थिव ऐश्वर्यसे रहित है ॥ ५३ ॥ योमी समा-

भूतानां बहुरूपेश्च अन्यैश्च तलवासिभिः ॥ विषयेयुज्यते क्षिप्रं संक्षेपात्समवरोद्धयते ॥ ४९ ॥ ततः पार्थिवमैश्वर्यं सेवमानश्च सर्वतः ॥ मूर्तिमाद्रिश्च बहुधा धातुभिः स च हन्यते ॥ ५० ॥ शक्तितोमरनिखिंशैर्गदाभिश्चाप्यनेकधा ॥ असिभिः पात्यते चैव क्षुरधारेः सङ्घज्ञः ॥ ५१ ॥ भिद्यते चैव बाणाग्रेः सुतीक्ष्णैर्मर्मभेदिभिः ॥ एभिर्विकारेर्निवृत्तैर्निरुद्धैश्चैव सर्वज्ञः ॥ ५२ ॥ ध्रुवमैश्वर्यमापन्नः सिद्धो भवति ब्राह्मणः ॥ ततः पार्थिवमैश्वर्यं निर्मुक्तस्य विकारतः ॥ ५३ ॥ प्रादुर्भवति संजाते समाधौ प्रलयं गते ॥ दिव्यं गन्ध समाग्राय दिव्यार्थास्ताञ्छुणोति च ॥ ५४ ॥ दिव्यरूपेश्च पुरुषोऽिच्छयते न च भिद्यते ॥ गच्छन्तसुकृतिनां चान्तः प्रधानात्मा क्षरन्निव ॥ ५५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततोऽन्यां धारणां गत्वा मनसा स पितामहः ॥ ब्रह्मकर्मसमारम्भं निर्मुक्तनान्तरात्मना ॥ १ ॥ सर्वाङ्गधारणां कृत्वा मनसा प्रहसन्निव ॥ ब्रह्मयोगेन च ब्रह्मा सृजते मनसा प्रजाः ॥ २ ॥

विके नाशमें पगट होकर दिव्यगंधको सुंघता हुआ दिव्य पदार्थोंका अवलोकन करता है ॥ ५४ ॥ दिव्य पुरुषोंसे छेदित होकरभी भेदको प्राप्त नहीं होता है और सुकृतियोंके अन्तःकरणमें प्रविष्ट होता अर्थात् सबके अन्तःकरणमें प्रविष्ट हो जाता है ॥ ५५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्य-पर्वणि भाषायाम् एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ वैशम्पायन बोले, फिर मनसे ब्रह्माजी वृत्तरी धारणाको प्राप्त हुए (अर्थात् योमी निर्मुक्त अन्तरात्मासे ब्रह्मकर्म समारम्भको प्राप्त हो सर्वज्ञ हो जाता है) ॥ १ ॥ सर्वाङ्गकी धारणा करते हुए ब्रह्मयोगसे ब्रह्मा मानसी प्रजा उत्पन्न करते हैं ॥ २ ॥

चक्षुसे वह रूपसंपन्न प्रभु प्रजा रचते हैं. नासिकाके अग्रभागसे गन्धर्व चित्र विचित्र वस्त्रवालोंको रचते हैं ॥ ३ ॥ और तुम्बरु आदि सैकड़ों गन्धर्व नाचने बजानेमें कुशल सामानमें चतुरोंको रचते हैं ॥ ४ ॥ उन योगके जाननेवाले स्वयंभू भगवान् प्रभुने सुन्दर नेत्र और सुन्दर केशोंवाली सुन्दर मुखवाली ॥ ५ ॥ शतपत्रके कमलसे विराजमान सुन्दर सुन्दर वाणीसे सेवणीय ब्राह्मीमूर्तिके आभय लक्ष्मीको ॥ ६ ॥ सब प्रकारसे समाधान चित्ते निर्माण किया. इस प्रकार सब प्राणियोंके धारण करनेवाले भूतात्माने भावयोगसे रचना करके ॥ ७ ॥ नेत्रोंसे रूपसम्पन्न अप्सराओंको बनाया और नासिकाके

चक्षुषा रूपसंपन्ना अप्सराः सृजते प्रभुः ॥ नासिकाग्राच्च गन्धर्वान्सुचित्राम्बरवाससः ॥ ३ ॥ तुम्बरुप्रमुखान्सर्वान्छतशोऽथ सहस्रशः ॥ नृत्यवादित्रकुशलान्कुशलान्सामगीतिषु ॥ ४ ॥ ब्रह्मयोगेन योगज्ञः स्वयंभूर्भगवान्प्रभुः ॥ चारुनेत्रां मुकेशान्तां सुध्वं चारुनिभाननाम् ॥ ५ ॥ पद्मेन शतपत्रेण चारुणा सुविराजिताम् ॥ स्वक्षां शुचिगिरं सेव्यां ब्राह्मीं मूर्तिमतीं श्रियम् ॥ ६ ॥ समृजे मनसा ब्रह्मा सम्पृक्तं प्रोक्तेन चेतसा ॥ भावयोगेन भूतात्मा सर्वप्राणभृतां नृप ॥ ७ ॥ चक्षुषो रूपसंपन्नाः सृजत्सोऽप्सरसः प्रभुः ॥ नासिकाग्राच्च गन्धर्वान्सुवासः सुप्रवादिताम् ॥ ८ ॥ गानप्रभाषं संचके गन्धर्वाणामशेषतः ॥ अन्येषां चैव विप्राणां गानं ब्रह्म प्रभाषितम् ॥ ९ ॥ पद्भ्यां सृजति भूतानि गतिमन्ति ध्रुवाणि च ॥ नरकिन्नरयक्षांश्च पिशाचोरगराक्षसान् ॥ १० ॥ गजान्तिहांश्च व्याघ्रांश्च मृगान्श्चैव सहस्रशः ॥ तृणजातींश्च बहुधा भावहेतोश्चतुष्पदान् ॥ ११ ॥ ये तु हस्तान्निखादन्ति कर्मप्राप्तेन हेतुना ॥ हस्तेभ्यः कर्म समृजे मन्तव्यं मनसा तथा ॥ १२ ॥

अग्रभागसे सुवास श्रेष्ठ बजानेवाले गन्धर्वोंको निर्मित किया ॥ ८ ॥ सम्पूर्ण गन्धर्वोंके निमित्त गानविदाका अधिकार दिया और ब्राह्मणोंके निमित्त सामवेदका गान विधान किया ॥ ९ ॥ चरणोंसे गतिवाले जीव उत्पन्न किये. नर किन्नर यक्ष पिशाच उरग राक्षस ॥ १० ॥ गज सिंह व्याघ्र सहस्रों मृग बहुतसी तृणजाति चौपाये तिनकोंसे जीनेवाले रचे ॥ ११ ॥ जो प्राणी हाथमें लेकर भोजन करते हैं तिनको कर्महेतुसे बहाने अपने हाथोंसे रचा है और मनसे उनकी रचना की है ॥ १२ ॥

और प्राणियोंके सुखको इच्छासे प्राणादि अनेक प्रकारके पवन कार्योंकी सृष्टि हुई ॥ १३ ॥ हृदयसे गौ और बाह्यसे पक्षियोंको निर्माण किया औरभी विशेष जीव उन उन विशेष नटवत् वेषोंद्वारा उत्पन्न किये हैं ॥ १४ ॥ और ज्वलित तेजस्वी अंगिरा ऋषि ब्रह्मवंश करनेवाले दिव्य छः इन्द्रियोंसे युक्तको शरीरसे उत्पन्न किया ॥ १५ ॥ और योगेश्वर प्रभुने योगद्वारा मौके अन्तरसे ब्रह्मवंशके करनेवाले परम धर्मात्मा भृगुको उत्पन्न किया ॥ १६ ॥ ललाटके मध्यसे मिय शरीर नारदजीको उत्पन्न किया, महायोगी पितामहने शिरसे समत्कुमारको उत्पन्न किया ॥ १७ ॥ जो किं

वायुना स विसर्गं च भूतानां सुखमिच्छता ॥ उपतस्थे तत्क्षनंदं पञ्चेन्द्रियसमाधिना ॥ १३ ॥ हृदयादसृजद्वाको बाहुभ्यां पक्षिणस्तथा ॥
अन्यानि चैव सत्त्वानि तैस्तेवैषैः पृथग्विधैः ॥ १४ ॥ ऋषिं त्वद्भिरसं चैव मुनिं ज्वालिततेजसम् ॥ ब्रह्मवंशकरं दिव्यं व्यतिषिक्तव-
दिन्द्रियम् ॥ १५ ॥ ध्रुवोन्तरादजनयद्योगाद्योगेश्वरः प्रभुः ॥ ब्रह्मवंशकरं दिव्यं भृशं परमधार्मिकम् ॥ १६ ॥ लटाटमध्यादसृजन्नारदं
प्रियविग्रहम् ॥ सनत्कुमारं मूर्ध्नि महायोगी पितामहः ॥ १७ ॥ अभिषिक्तं तु सोमं च यौवराज्ये पितामहः ॥ ब्राह्मणानां च राजानं
शाश्वतं रजनीश्वरम् ॥ १८ ॥ तपसा महता युक्तो अद्भ्यः सह निशाकरः ॥ च वार नभसो मध्ये प्रभाभिर्भासयन् जगत् ॥ १९ ॥ स
गात्रैर्भगवान्योगान्मनसा सिद्धिमागतः ॥ ससृजे सर्वभूतानि स्थावराणि चराणि च ॥ २० ॥ तत्र स्थानानि भूतानां योगांश्चैव
पृथग्विधान् ॥ निषत्ते शतशो ब्रह्मा सर्वभूतपितामहः ॥ २१ ॥ एष ब्रह्ममयो यज्ञो योगः सांख्यश्च तत्त्वतः ॥ विज्ञानं च स्वभावं
च क्षेत्रं क्षेत्रज्ञमेव च ॥ २२ ॥

पितामहने सोमको यौवराज्यमें अभिषिक्त किया यह रजनीचर ब्राह्मणोंके राज्यमें अभिषिक्त हुए हैं ॥ १८ ॥ चन्द्रमा ग्रहोंके साथ बड़े तपसे युक्त हो प्रभासे जगत्को प्रकाशित करता हुआ आकाशमें विचरने लगा ॥ १९ ॥ तब अपने शरीरसे भगवान् योगसे सिद्धिको प्राप्त हो रथावर जंघम सब प्राणियोंको निर्मित करने लगे ॥ २० ॥ वहाँके स्थान और प्राणी और अनेक प्रकारके योग सब भूतोंके पितामहने निर्मित किये ॥ २१ ॥ यही ब्रह्ममय

यज्ञ योग सांख्य हे विज्ञान स्वभाव क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ है ॥ २२ ॥ एकपदे पृथक्पदे उत्पत्ति और निघनकाल, कालक्षय अत्यालुप्तविविज्ञान जानना चाहिये ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेडु हरिवंशे भविष्यपर्वणि तापाया विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ जन्मेजय बोले, हे तपवन् ! ब्रह्मभक्तिका कारण प्रथम सतयुग जिसमें सब धर्मका अन्तर्भाव है सुना, हे ब्रह्मन् ! अब क्षत्रियोंका योगधर्म सुननेकी इच्छा करता हूं ॥ १ ॥ संक्षेप विस्तारके सहित बहुत नियमोंसे युक्त उपाय जाननेवालोंसे कथित और यज्ञोंसे शोभित कहे ॥ २ ॥ वैशंपायन बोले, यह वार्ता यज्ञकर्मोंसे अर्चित में

एकत्वं च पृथक्त्वं च संभवो निघनं तथा ॥ कालः कालक्षयश्चैव ज्ञेयो विज्ञानमेव च ॥ २३ ॥ इति श्रीमन्महाभारते सिलेडु हरिवंशे भविष्यपर्वणि विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ जनमेजय उवाच ॥ श्रुतं ब्रह्मयुगं ब्रह्मयुगानां प्रथमं युगम् ॥ क्षत्रस्यापि युगं ब्रह्मश्रोतुमिच्छाम्यहं प्रभो ॥ १ ॥ संक्षेपं सविस्तारं नियमेवंदुभिश्चितम् ॥ उपायज्ञैश्च कथितं कतुभिश्चैव शोभितम् ॥ २ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतत्ते कथयिष्यामि यज्ञकर्मभिरर्चितम् ॥ दानधर्मैश्च विविधैः प्रजाभिरुपशोभितम् ॥ ३ ॥ तेऽङ्गुष्ठमात्रा मुनय अर्दिताः सूर्यराशिभिः ॥ मोक्षप्राप्तेन विधिना निराबाधेन कर्मणा ॥ ४ ॥ प्रवृत्ते चाप्रवृत्ते च नित्यं ब्रह्मपरायणाः ॥ परायणस्य संगम्य ब्रह्मणस्तु महीपते ॥ ५ ॥ श्रीवृताः पावनाश्चैव ब्राह्मणाश्च महीपते ॥ चरितं ब्रह्मचर्याश्च ब्रह्मज्ञानावबोधिताः ॥ ६ ॥ पूर्णं युगसहस्रान्ते प्रभावे प्रलयं गताः ॥ ब्राह्मणा वित्तसंपन्ना ज्ञानसिद्धाः समाहिताः ॥ ७ ॥

तुमसे कहूंगा जो अनेक प्रकारके दान धर्म और प्रजाओंसे शोभित है ॥ ३ ॥ वे ब्रह्मवृत्तियोंसे सम्पन्न ज्ञानसिद्ध सावधान चित्त होते हैं और सूर्यकी किरणोंसे अर्दित हुए अंगुष्ठमात्र मुनि मोक्षप्राप्तिके विधानसे प्रलयको प्राप्त होकर ॥ ४ ॥ यज्ञादि और शमादिमें प्रवृत्त ब्रह्मपरायण एकवेदमें परायण वेदोंके कर्ममें तत्पर ॥ ५ ॥ वित्तसे सम्पन्न श्रीसंज्ञक साम और यजुर्वेदोंकी ऋचाओंसे सम्पन्न ब्रह्मचर्य और ब्रह्मज्ञानमें बोधित ॥ ६ ॥ पूर्ण सहस्रयुगके अन्तमें वित्तसे सम्पन्न और ज्ञानसिद्ध सावधान ब्राह्मण पूर्वकल्पमें लयको प्राप्त हुएही आगेके कल्पमें ब्राह्मण होते हैं ॥ ७ ॥

तिनमेंसे व्यतिरिक्त इन्द्रियवाले योगात्मा विष्णु ब्रह्मसे उत्पन्न हो दक्षप्रजापतिके रूपसे अनेक प्रजाकी सृष्टि करते हैं ॥ ८ ॥ अक्षरसे सौम्य ब्राह्मण और सत्त्वरजोगुण ब्रह्मसे क्षत्रिय रजोगुणके विकारसे वैश्य और तमसे शूद्र हुए हैं ॥ ९ ॥ और सत् रज तम इन तीनों गुणोंसे विष्णुने ब्राह्मण क्षत्रियादि वर्णोंको उत्पन्न किया ॥ १० ॥ वर्णत्वको प्राप्त हो प्रजा लोकमें चार प्रकारसे विभक्त हुई, ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र ॥ ११ ॥ एकलिंगवाले पृथक् धर्मवाले दो चरणवाले परम असुत कर्मफलके भोगनेको सम्पन्न और सब कर्मोंकी गति जाननेवाले हैं ॥ १२ ॥ इनमें तीन वर्णोंकी

व्यतिरिक्तेन्द्रियो विष्णुयोगात्मा ब्रह्मसंभवः ॥ दक्षः प्रजापतिर्भूत्वा सृजते विपुलाः प्रजाः ॥ ८ ॥ अक्षराद्ब्राह्मणाः सौम्याः क्षरात्क्षत्रियबान्धवाः ॥ वैश्या विकारतश्चैव शूद्रा धूमविकारतः ॥ ९ ॥ श्वेतलोहितकैर्वर्णैः पीतैर्नीलैश्च ब्राह्मणाः ॥ अभिनिर्वर्तिता वर्णाश्चिन्तयानेन विष्णुना ॥ १० ॥ ततो वर्णत्वमापन्नाः प्रजा लोके चतुर्विधाः ॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चैव महीपते ॥ ११ ॥ एकलिङ्गाः पृथग्धर्मा द्विपदाः परमाद्भुताः ॥ यातनायाभिसंपन्ना गतिज्ञाः सर्वकर्मसु ॥ १२ ॥ त्रयाणां वर्णजातानां वेदप्रोक्ताः क्रियाः स्मृताः ॥ तेन ब्राह्मणयोगेन वैष्णवेन महीपते ॥ १३ ॥ प्रज्ञया तेजसा योगात्तस्मात्प्राचेतसः प्रभुः ॥ विष्णुरेव महायोगी कर्मणामन्तरं गतः ॥ १४ ॥ ततो निर्माणसंभृताः शूद्राः कर्मविवर्जिताः ॥ तस्मान्नाहन्ति संस्कारं न ह्यत्र ब्रह्म विद्यते ॥ १५ ॥ यथाग्नौ धूमसंघातो ह्यरण्या मध्यमानया ॥ प्रादुर्भूतो विसर्पन्वे नोपयुजति कर्मणि ॥ १६ ॥ एवं शूद्रा विसर्पन्तो भुवि क्वात्सर्प्येन जन्मना ॥ नासंस्कृतेन धर्मेण वेदप्रोक्तेन कर्मणा ॥ १७ ॥

किया वेदके अधीन है, हे राजन् ! उस वैष्णव ब्राह्मण योगसे ॥ १३ ॥ तेज और ऐश्वर्यसे युक्त तथा योगसे युक्त दक्षजी विष्णुरूप महायोगी कर्मके अधिकारमें युक्त होकर सृष्टि करते हैं ॥ १४ ॥ निर्माणसे अर्थात् शिल्प और त्रिवर्णकी सेवासे सम्पन्न कर्मवर्जित शूद्र हुए हैं इस कारण शूद्र संस्कारके योग्य नहीं है कारण कि उसमें वेदकी प्रतिष्ठा नहीं है ॥ १५ ॥ जैसे अरणीके मध्यमेसे धूमका संघात अभिमें होता है, वह फैलता हुआ किसी कर्ममें नहीं प्राप्त होता है ॥ १६ ॥ इसी प्रकार शूद्र जन्मसे पृथ्वीमें विचरते हुए वेदोक्त संस्कारके योग्य नहीं है ॥ १७ ॥

तब फिर ब्रह्मयोनिवाले दूसरे पक्षके पुत्र हुए, वे बड़े बली महाउत्साही महाबली महापराक्रमी हुए ॥ १८ ॥ तब यज्ञकर्मा महात्मा दक्षजीने उनसे कहा; हे पुत्रो ! मैं पृथ्वीका अन्त जाननेकी इच्छा करता हूँ अथवा मैं तुम्हारे शरीरकी उत्पन्न करनेवाली धात्री (जननी) के सिद्धान्त सुननेकी इच्छा करता हूँ. जैसा मैं बली हूँ इस प्रकारकाही तुमको होना चाहिये ॥ १९ ॥ तुम्हारी धात्रीके सिद्धान्तको सुन तुम्हारे बलाबलको जानकर प्रजाको विपुल बल प्रदान करनेका और विपुल मापाके सारको जाननेवाले उन दक्षके पुत्रोंको ॥ २० ॥ उस देवीने नेत्रोंसे अपना रूप न दिखाया यद्यपि उन्होंने सार जाननेकी बड़ी

ततोऽन्ये दक्षपुत्राश्च संभूता ब्रह्मयोनयः ॥ बलवन्तो महोत्साहा महावीर्या महोजसः ॥ १८ ॥ पित्र प्रोक्ता महात्मानो दक्षिणा यज्ञकर्मणा ॥ अन्तमिच्छाम्यहं श्रोतुं धात्र्याः पुत्रा बलो ह्यहम् ॥ १९ ॥ ततो विधास्ये तत्त्वज्ञः प्रजानां विपुलं बलम् ॥ विपुलत्वाद्धि क्षेत्राणां ममापि विपुलाः प्रजाः ॥ २० ॥ न तेषां दर्शयद्देवी चक्षुषा रूपमात्मनः ॥ प्रजापतिमुत्तानां वै विपुलासारमिच्छताम् ॥ २१ ॥ आत्मनो भावनेर्वृत्ते भावे कृतयुगे तदा ॥ जनित्री सर्वभूतानामण्डजानुद्भिजास्तथा ॥ २२ ॥ संवेद जननी धात्री चेति मात्रा प्रचोदिता ॥ अणुतां तनुतां चैव जन्तूनां कर्मभोगिनाम् ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ जनमेजय उवाच ॥ साच्चहं श्रोतुमिच्छामि त्रेतायां ब्राह्मणोत्तम ॥ यज्ज्ञात्वा सर्वविद्यानां परं पश्येयमव्ययम् ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ दक्षस्तु पुनरात्म्य स्त्रीभावं पुरुषोत्तमः ॥ योगाद्योगेऽवरात्मानं विषण्णो गिरिमूर्धनि ॥ २ ॥

इच्छा की थी ॥ २१ ॥ तब तिन दक्षप्रजापतिके पुत्रोंको शुद्धसत्त्वमय भावसे चेतन द्वारा प्रेरित हुई माया अंज और उम्रिजोंको उत्पन्न करनेवाली ॥ २२ ॥ कर्मके भोगनेवाले प्राणियोंको सूक्ष्म विसृष्टभावसे चेतनकी प्रेक्षित हुई माया प्राप्त करती हुई ॥ २३ ॥ इति श्रीम. खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायाम् एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ जनमेजय बोले; इस समय त्रेतामें होनेवाले केवल प्रकृत्यात्मक यज्ञादिरूप धर्मके सुननेकी इच्छा करता हूँ जिसके जाननेसे सब विद्याओंका प्रतिपाद्य अविनाशी जाना जाता है ॥ १ ॥ वैशम्पायन बोले; पुरुषोत्तम योगी दक्ष अपने आत्मासे फिर स्त्रीको प्राप्त करके पर्वतशिख-

रमें दुःखी हुए ॥ २ ॥ सुन्दर जलु पीन जंवा सुन्दर जों कमलकी समान मुखवाली रक्तान्तनेत्र सब प्राणियोंको मनोहर उत्पन्न किया ॥ ३ ॥ उसमें दक्ष प्रजापतिने कन्याओंको उत्पन्न किया, वे कमलकी समान मुखवाली कन्या आधे देहके योगसे उत्पन्न कीं ॥ ४ ॥ फिर दक्ष स्त्रीतावको त्याग पुरुषरूपसे सब भूतोंको दर्शनीय होता हुआ ॥ ५ ॥ हे राजन् ! दक्षजीने उन कन्याओंको ब्रह्मविवाहसे वेदविधिसे प्रदान किया ॥ ६ ॥ दश धर्मको तेरह कन्यपको और सताईस चन्द्रमाको प्रदान कीं ॥ ७ ॥ इस प्रकार दक्षजी उन कन्याओंको प्रदान कर ब्रह्मक्षेत्र (प्रयाग) को प्राप्त हो ब्रह्मसे

सुजातुः पीनजघना सुहृः पद्मनिभानना ॥ रक्तान्तनयना कान्ता सर्वभूतमनरेमा ॥ ३ ॥ दक्षः प्राचेतसस्तस्यां कन्यायां जनयत्प्रभुः ॥ देहार्धयोगविधिना कन्याः पद्मनिभाननाः ॥ ४ ॥ दक्षः पुरुषरूपेण स्त्रीरूपमपहाय वे ॥ दर्शने सर्वभूतानां कान्तः कान्ततरोऽभवत् ॥ ५ ॥ ताः कन्या प्रददौ दक्षः स्वयं प्राचेतसः प्रभुः ॥ ब्रह्मदेयेन विधिना ब्रह्मप्राप्तेन भारत ॥ ६ ॥ प्रददौ दश धर्माय कश्यपाय त्रयोदश ॥ समर्विज्ञाति-सोमाय फनीहेतोः समाहितः ॥ ७ ॥ दक्षो दत्तवाय ताः कन्या ब्रह्मक्षेत्रं प्रपद्य च ॥ ब्रह्मणाध्युषितं पुण्यं समाहितमना मुनिः ॥ ८ ॥ तप्यमानो मृगेः सार्द्धं चचार वसुधां नृप ॥ तृणमूलफलफेडुद्भो वृद्धश्च तपसासकृत् ॥ ९ ॥ मृगास्तु तस्य मोदन्ति फलं मोदन्ति ब्राह्मणाः ॥ दीक्षिताः पुण्यकर्माणस्तपसा दग्धकिल्बिषाः ॥ १० ॥ संग्रामकाले कालज्ञः शरीरादिपतिर्मुनिः ॥ कर्मयज्ञकृतां तत्र सिद्धिं पश्यति लक्षणम् ॥ ११ ॥

सेवित पवित्रदेशमें सावधान मनसे ॥ ८ ॥ मुनिरूपसे मृगोंके साथ तप करते पृथ्वीमें विचरने लगे, तृणमूलफलोंसे वृद्ध हुए तपसे बढने लगे, यह भेताका स्त्रीसंग्रहरूप धर्म है ॥ ९ ॥ उनके तपसे मृग प्रसन्न होते हैं और अहिंसाद्वारा तपके फलको प्राप्त हो ब्राह्मण प्रसन्न होते हैं, वे पुण्यात्मा दीक्षित पवित्र-कर्मा तपसे पाप दूर करनेवाले ॥ १० ॥ संग्रामकालमें कालके जाननेवाले योगसे चित्तके जीतनेवाले शरीरादिके पति मुनि कर्मयज्ञकी प्राप्त हुई सिद्धिको देखने लगे ॥ ११ ॥

दानमानमं प्रवीण उद्योगरहित आमिषभक्षणसे पृथक् स्वीसहित पुत्रवाले मृर्माके साथ जराको प्राप्त होते हैं अर्थात् इस देहको ब्रह्मसेव संज्ञक करते हैं ॥ १२ ॥ और वेदमंत्रोंसे सिद्ध ब्राह्मण प्रथम पद ओंकारमें स्थित ब्रह्मासे युक्त होनेसे वे ब्रह्मसेव कहाये जाते हैं ॥ १३ ॥ कर्मोंसे मुक्त कोषरहित जितेन्द्रिय यतियोंके साथ पृथ्वीमें विचरते हुए, अकिंचन मार्गकी इच्छा करनेवाले ब्राह्मणोंने शरीरमें अध्यात्म प्रभाववर्णन किया है ॥ १४ ॥ और जो मानसी ब्रह्मचारिणी प्रजा पहले ईश्वरमें लप हुई थी वही यह स्वभावसे दुरतिक्रम प्रगटताको प्राप्त हुई ॥ १५ ॥ अर्थात् स्वभावसे अतिक्रमण न दानमानप्रवीणश्च निरुद्धेण निरामिनाः ॥ मृगेः सह जरां यान्ति सपत्नीकाः सुपुत्रिणः ॥ १२ ॥ ब्राह्मणाः स्तोत्रसंसिद्धा जनित्रे प्रथमे पदे ॥ ब्राह्मणाध्युषितत्वाच्च ब्रह्मज्ञेयमिदोच्यते ॥ १३ ॥ यतिभिः कर्मभिर्मुक्तैर्जितक्रोधैर्जितेन्द्रियैः ॥ चरद्भिर्वसुधां विप्रेरकिंचनपथोषिभिः ॥ १४ ॥ या प्रजा पूर्वमारूढा मानसी ब्रह्मचारिणी ॥ सेवेया व्यक्तीमापन्ना स्वभावदुरतिक्रमा ॥ १५ ॥ अव्यक्ता व्यक्तीमापन्ना स्वभावदुरतिक्रमा ॥ व्यक्ताव्यक्तगतिश्चेष्टा कालधर्मान्महीपते ॥ १६ ॥ स्यावरा जङ्गमाश्चैव स्थूलसूक्ष्माश्च भारत ॥ कालयोगेन कालज्ञा भवन्ति न भवन्ति च ॥ १७ ॥ एताश्चेताः प्रजाः सर्वे दक्षकन्यासु जज्ञिरे ॥ कश्यपेनाव्ययेनेह संयुक्ताः कालधर्मणा ॥ १८ ॥ आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः ॥ नागाश्चानेकशिरसः साध्या वै पन्नगास्तथा ॥ १९ ॥ गन्धर्वाः किन्नरा यक्षा सुपर्णाश्च तथाऽपरे ॥ गरुत्मान्सह यज्ञैश्च किन्नराश्च सुवाससः ॥ २० ॥ गावः पशुगणैः सार्द्धं नराश्च वसुधाधिप ॥ चराचराश्च वसुधा धर्तारश्च घराधराः ॥ २१ ॥

होकरभी व्यक्त अव्यक्त भावको प्राप्त हो कालधर्म (समानि काल भेद लक्षणवाले) से व्यक्त अव्यक्तरूपवाली होती है ॥ १६ ॥ हे भारत । स्यावर जंगम स्थूल सूक्ष्म यह सब काल योगसे होते और नहीं होते हैं ॥ १७ ॥ यह सब प्रजा दक्षकन्यामें उत्पन्न हुई है, अविनाशी कश्यपने इसको काल धर्मसे संयुक्त किया है ॥ १८ ॥ आदित्य वसु रुद्र विश्वेदेवा मरुद्गण अनेक शिरके नाम और साध्य पन्नग ॥ १९ ॥ गन्धर्व यक्ष किन्नर सुपर्ण मरुद् और यक्षोंके सुन्दर वस्त्रवाले किन्नर ॥ २० ॥ हे राजन् । नौ पशुगण मनुष्य चराचरके सहित पृथ्वीको धारण करनेवाले पर्वत आदि ॥ २१ ॥

नज सिंह व्याघ्र घोड़े पक्षी गेंडे सींगोंवाले वृष मृग ॥ २२ ॥ चार दांतके हाथी कमलकी समान कांतिवाले वर्णसे भेठ सब लक्षणसे सम्पन्न कामरूपी प्राणी हुए ॥ २३ ॥ उनके रूप शील पराक्रम शरीरसे सनातन धर्म क्षेत्र (भारतवर्ष) में फिर मुनि उत्पन्न हुए ॥ २४ ॥ आत्मामें निठावाले मनमें कल्पित लोकके ज्ञाता धर्मात्मा वेदमोचर ऋषि होते हैं जिनमें उत्पन्न हुए सब देवता स्वर्गलोकमें स्थित हैं ॥ २५ ॥ और जो दूसरे तपसे सिद्ध गृहस्थ हैं वे ब्रह्मचर्यको प्राप्त हो गुरुकी परिचर्या करते हैं ॥ २६ ॥ हे ब्राह्मन् ! जो सिद्धिके निमित्त योगकी गतिको प्राप्त हुए हैं वे अधिक छेयसे प्राप्त हुई कर्मजन्य

गजाः सिंहाश्च व्याघ्राश्च इयाः पक्षधरास्तथा ॥ सङ्गा विषाजिनश्चैव वृषभाश्च मृगास्तथा ॥ २२ ॥ चतुर्विधाणा नागेन्द्रा पद्माभा वर्णतः शुभाः ॥ सर्वलक्षणसंपन्नाः प्राणिनः कामरूपिणः ॥ २३ ॥ तेषां रूपैस्तथा गात्रैस्तेः शिल्पैस्तेः पराक्रमैः ॥ मुनयः पुनरुद्भूता धर्मक्षेत्रे सनातने ॥ २४ ॥ क्षेत्रज्ञा मानसे लोके धर्मिणो वेदमोचराः ॥ यत्रोद्भूताः सुराः सर्वे दिवि लोके प्रतिष्ठिताः ॥ २५ ॥ ये चान्ये तपसा सिद्धा गृहस्था मनुजाधिप ॥ ऋक्षचर्येण संसिद्धाः परिचर्यां गता गुरोः ॥ २६ ॥ ये च योगगतिं प्राप्ताः सिद्धिहेतुर्महीपते ॥ क्लेशाधिकैः कर्मजन्यैर्वृत्तिं लप्स्यन्ति वै द्विजाः ॥ २७ ॥ शिलोञ्छवृत्तयः स्याताः सपत्नीका दृढव्रताः ॥ सर्वे त्वेते दिविचरा भवन्ति चरितव्रताः ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ पितामहं पुरस्कृत्य मेरुपृष्ठे समाहिताः ॥ जटाजिनधरा विप्रस्त्यक्तक्रोधा जितेन्द्रियाः ॥ १ ॥ पर्वतान्तरसंसिद्धे बहुपादपसंवृते ॥ पातुसंराजिताशिले समे निस्तृणकण्टके ॥ २ ॥

गतिको प्राप्त होते हैं ॥ २७ ॥ जो सपत्नीक दृढव्रत होकर शिलोञ्छवृत्ति करते हैं वे व्रतधारी सब स्वर्गमें गमन करते हैं ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २२ ॥ वैशम्पायन बोले, जटा और अजिन बन्धके धारण करनेवाले क्रोधवर्जित जितेन्द्रिय ब्राह्मण ब्रह्माजीको आगे कर मेरुपृष्ठपर सावधान अर्थात् भूधराणके मध्यमें समाधिको प्राप्त हुए कार्यके पिता कारणको आगे करके ॥ १ ॥ पर्वतान्तर (वंश कपाल आस्थि) से सिद्ध बहुत बृक्षों (योगसाधनके धर्म) से संयुक्त पातुओंसे रंजित शिलासमान कांटे और तृणोंसे रहित अर्थात् वातपित्तादि

धातु और मनशिलादिरूप नाभियोंसे युक्त अस्थिवाले जरारोगादि कंटकरोहित ॥ २ ॥ तीन वेदोंके पंचस्वरसे विराजित अर्थात् इडा पिंगला सुषुम्नारूप जीवोपाधिभूत प्राणमार्गके सम्बन्धी पांच प्राणोंकी वृत्तिभेदसे युक्त स्थानमें नित्य मंत्रयज्ञमें परायण (ओंकार जपनिरत) नित्यव्रत (वायुजप) हित (आनंदरूप आत्मामें निरत) ॥ ३ ॥ वे सब ब्राह्मणभेद एकही अग्निको आधान कर सावधान चित्तसे मंत्रद्वारा तीन प्रकारसे भेदित करते हुए ॥ ४ ॥ तीन प्रकार ज्वलित होती हुई प्राणाग्निको रेचक पूरक कुंभक रूप नाडीमार्गोंसे विशेष करते हुए अर्थात् पूरकादि अभ्याससे आत्मतत्त्वको प्राप्त हुए वेद-पारगामी मुनियोंसे तत्त्वको प्राप्त हुए तत्त्व जानते हैं ॥ ५ ॥ एकही वह प्राणाग्नि प्राणायाम अभ्यासवालेको हविद्वारा वृद्धिको प्राप्त करती है, अर्थात् योगयुक्त आहारसे प्राण बलित होता है और कार्यसिद्धिके निमित्त होममंत्रके जाननेवाले नृप स्ववाक्यसे मंत्रको करता हुआ जरारोगरहित होता है त्रयाणां ब्रह्मवेदानां पञ्चस्वरविराजिते ॥ मन्त्रयज्ञपरा नित्यं नित्यं व्रतहिते रताः ॥ ३ ॥ एक एवाग्निमाधाय सर्वे ब्राह्मणपुङ्गवाः ॥ विभिदुर्मन्त्रविष्येः सुसमाहितमानसाः ॥ ४ ॥ त्रिषा प्रणीतो ज्वलन्तो मुनिभिर्वेदपारगैः ॥ अतस्ते तत्त्वमापन्ना यदेकस्त्रिविधः कृतः ॥ ५ ॥ एक एव महानग्निर्हविषा संप्रवर्तते ॥ स्ववाक्येण मन्त्रज्ञ मन्त्राणां कार्यसिद्धये ॥ ६ ॥ स्वयं च दक्षसंप्राप्तो भगवान् भूतसत्कृतः ॥ ब्रह्मा ब्राह्मणनिर्माता सर्वभूतापितामहः ॥ ७ ॥ दण्डी चर्मा शरी खड्गी शिखी पद्मनिभाननः ॥ अभवन्न्यस्तसंतापो जितक्रोधो जितेन्द्रियः ॥ ८ ॥ यजते पुष्करे ब्रह्मा मेघया सह संगतः ॥ इन्द्रप्रोक्तानि सामानि गीयन्ते ब्रह्मवादिभिः ॥ ९ ॥ (इसका विशेष वर्णन हठयोगके ग्रंथोंमें देखो) ॥ ६ ॥ इस रूपसे प्राणियोंसे सत्कृत सूत्रात्मा सब ऐश्वर्योंसे सम्पन्न प्राप्त होता है अर्थात् ध्यानसे प्रथम उकारार्थभूत सूत्रात्माका साक्षात्कार होता है, इस प्रकारका दक्ष ब्रह्मा ब्राह्मणोंका निर्माण करनेवाला पितामह होता है ॥ ७ ॥ पूरकसमयमें नासिकानालिमें दंढाकार पूर्ण होनेसे बड़ी कुंभक अवस्थामें चर्मधारी रेचकअवस्थामें शरयुक्त खड्गकी समान तीक्ष्ण धारावाला संसारवृक्ष छेदनमें समर्थ शिखी प्राणाग्निरूप कमलकी समान मुख प्रसन्नभाव होनेसे संतापरहित स्वभावसे क्रोधाजित और जितेन्द्रिय होता है ॥ ८ ॥ दशरूप ब्रह्मा आत्मतीर्थमें शास्त्राचार्यसे प्राप्त हुई बुद्धियें तान्निष्ठ होकर यजन करता है, जहां ब्रह्मवादियोंद्वारा इन्द्रके कहे साम (अहमन्नमहमन्न) इत्यादि गाये जाते हैं ॥ ९ ॥

धृत क्षीर यव व्रीहि यह सब परमहवि हैं. यह ब्रह्मपदके प्राप्त होने योग्य वेदमोक्ष यज्ञका विधान है ॥ १० ॥ अग्निसम्बन्धी अरणीको मथन कर जो शमीके गर्भसे प्रकट होती है अर्थात् परमेश्वरकी तिरोधान स्थानभूत अविद्याको नाश करके देहमें प्रगट हुए. कारण ब्रह्म अन्तर्यामी अग्निरूपको प्रवृत्त करे अर्थात् देहके अभिमानरहित होनेसे ब्रह्मरूप होता है. ब्रह्माने प्रथम उस सुत्रात्मामें अग्नि प्रवृत्त की ॥ ११ ॥ जिस प्रकार यज्ञकर्ममें अग्नि विधान किया जाता है उसी प्रकार अल्प द्रव्यसे अनेक प्रकारके द्रव्योंको ॥ १२ ॥ और फलोंको योगके जाननेवाले ब्रह्मवादी मुनि हवि कल्पित कर यज्ञमें डालते हैं अर्थात् मानसिक यज्ञमें कल्पना की हुई मानसी सामग्री डालकर मनके अनुसार फलभागी होते हैं ॥ १३ ॥ उस यज्ञमें छः महीने पर्यन्त बृहस्पतिजी चारों

धृतं क्षीरं यवा व्रीहिः सर्वं परमकं हविः ॥ वेदप्रोक्तं मन्त्रे न्यस्तं कल्पितं ब्रह्मणः पदे ॥ १० ॥ निर्मथ्यारणिमाग्नेयीं क्षमीगर्भसमुत्थिताम् ॥ स ब्रह्मा प्रथमं तस्मिन्नग्निमन्यं प्रवर्तयत् ॥ ११ ॥ न ह्यल्पं विहितं द्रव्यं यथाग्निर्यज्ञकर्मणि ॥ प्रवर्तयेद्विभागेर्वाहुतद्रव्यमयं बलम् ॥ १२ ॥ फलानि तेः प्रयुक्तानि हवींषि विततेऽध्वरे ॥ प्रयुज्यते प्रयोगज्ञा मुनयो ब्रह्मवादिनः ॥ १३ ॥ षण्मासांश्चतुरो वेदान्तसंबभाषे बृहस्पतिः ॥ ब्रह्मणो वितते यज्ञे परया ब्रह्मसम्पदा ॥ १४ ॥ शिक्षाक्षरसमेताया मधुरायाः समन्ततः ॥ सानुस्वारितरामायाः सरस्वत्या प्रभाषते ॥ १५ ॥ तेन ब्राह्मणशब्देन ब्रह्मप्रोक्तेन भारत ॥ विभाति स मन्त्रो व्यक्तं ब्रह्मलोक इवापरः ॥ १६ ॥ मन्त्रो ब्रह्मसुखोत्तीर्णो ब्रह्मशब्देरनामयैः ॥ प्रयोगैः संप्रयुक्तस्य जल्पान्नैव विवर्द्धते ॥ १७ ॥ समिद्भिः सोमकलशैः पात्रैश्चैव बहिः खलेः ॥ यवैर्व्रीहिभिराज्यैश्च पूर्णैश्च जलभाजनेः ॥ १८ ॥

वेदोंको पढ़ते हैं, और उस ब्रह्मयज्ञमें अत्यन्त ब्रह्मसम्पदासे युक्त होते हैं अर्थात् छः महीनेके निरन्तर अभ्याससे सिद्धि होती है ॥ १४ ॥ तब अभ्यास किये उस वेदको शिक्षा अक्षरके सहित वहां सरस्वती कथन करती है जिससे उपनिषद्सहित और कर्म उपासनासहित वेद उनके शिष्योंको प्राप्त होता है ॥ १५ ॥ हे भारत ! उस ब्रह्मके कहे वेदशब्दसे वह आध्यात्मिक ब्रह्मलोककी समान प्रकाशित होता है ॥ १६ ॥ वह यज्ञ ब्रह्माके मुखसे निर्गत अनामय ब्रह्मशब्दोंसे और संदेहरहित प्रयोगोंसे कहे हुएकी समान बढ्ता है ॥ १७ ॥ समिधा सोमके कलशे पात्र यव व्रीहि धृत और दूसरे पूर्ण जल-

पात्र ॥ १८ ॥ कर्मके प्राप्त होने योग्य पशु और ब्रह्ममें अर्पणके योग्य कर्म दूधवाली गौ और कोमल वंश और सुवर्णसे युक्त ॥ १९ ॥ हे भारत ! वेदशब्दसे बड़ा हुआ, दक्षिणासे बड़ा हुआ तपसे परिवर्द्धित ब्रह्मज्ञानमें वेदविद्यासे संगत हुआ ॥ २० ॥ मनसे कल्पना की हुई सामिवाहिसे क्रियामूर्ति यज्ञात्मा ब्रह्मा कल्पनाके बिना स्वप्नावसे उत्पन्न हुई घृतादि साम्नीसे मस्त्रजोंके साथ हवन करता है ॥ २१ ॥ हे राजन् ! तेजमूर्ति धारण करनेवाले चिन्मयरूप ब्रह्म देवताओंद्वारा यागरूपसे प्राप्त ब्रह्मयज्ञ सब प्राणियोंके कर्मको स्पर्श न करता हुआ वेदमें कही विधिसे सबसे अधिक होता है ॥ २२ ॥ शमीके गर्भसे उठी अग्निदात्री अरणीको मथकर अग्निहोम यज्ञसे वह प्रभु यजन करता है ॥ २३ ॥ उस यज्ञमें सन्नाके ब्राह्मण मधुरवाणीसे बोलते हैं
 कर्मप्राप्तेऽथ पशुभिः कर्मभिः आपरान्वितैः ॥ गोभिः पयस्विनीभिश्च परिवर्द्धैश्च कोमलैः ॥ १९ ॥ ब्रह्मवृद्धो वयोवृद्धस्तपोवृद्धश्च
 भारत ॥ ब्रह्मज्ञानमयो देवो विद्यया सह संगतः ॥ २० ॥ मानसेऽथ क्रियामूर्तिर्ये च भूताः स्वयं नृप ॥ ब्रह्मा जुहोति तांस्तस्मान्मरुद्भिः
 सहितस्तदा ॥ २१ ॥ तेजोमूर्तिधरैरूपेन च तत्कर्मणास्पृशत् ॥ वेदप्रोक्तेन विधिना सर्वप्राणभृतां वर ॥ २२ ॥ निर्मध्याराणिमाग्नेयां
 शमीगर्भसमुत्पिताम् ॥ क्रतुना यजते पूर्णमग्निहोमेन स प्रभुः ॥ २३ ॥ सवस्येस्तत्सदो व्यक्तं शुशुभे यज्ञकर्मणि ॥ जल्पन्ति
 मधुरा वाचः साजुसाराः क्रियास्तथा ॥ २४ ॥ कर्मभिश्च तपोयुक्तेर्वेदवेदाङ्गपारगैः ॥ सूर्येन्दुसदृशे राजन्विरराज महाक्रतुः ॥ २५ ॥
 ब्रह्मघोषेण महता ब्रह्मवासे ह्वापरः ॥ वसुधामिव संप्राप्तेः सर्वैरेव दिवौकसेः ॥ २६ ॥ वेदवेदाङ्गविद्भिश्च विनीतैर्ब्रह्मवादिभिः ॥
 गतागतेस्तपः श्रान्तेः स्वर्गलोके महीयते ॥ २७ ॥

और अश्वर्य आदिके सहित व्यक्त हुआ यज्ञ शोभाको प्राप्त होता है ॥ २४ ॥ तपयुक्त कर्म करनेवाले वेदवेदाङ्गके पारगामी सूर्य चन्द्रमाके समान
 मुनिजनोंसे वह महायज्ञ शोभित हुआ ॥ २५ ॥ बड़े भारी वेदके शब्दसे दूसरे ब्रह्मलोककी समान सब स्वर्गके देवताओं सहित पृथ्वीमें प्राप्त हुएकी
 समान ॥ २६ ॥ वेदवेदाङ्गके जाननेवाले विनीत ब्रह्मवादी महात्माओंके जो तपसे पूर्ण हो गये हैं आनेजानेसे स्वर्गलोकमें पूजित होता है और मनुष्य
 लोकमें अत्यंत पूजित होता है ॥ २७ ॥

प्रकाशमान तीन ब्राह्मण और तीन यज्ञकी अश्रियोंकरके वह यज्ञ ब्रह्माके ब्रह्मलोककी समाप्त प्रकाशित होता है ॥ २८ ॥ उसमें ब्रह्मवादी ब्राह्मण इन्द्रके कहे सामगान करते हैं और यज्ञके वचनमयोग किये जाते हैं जिससे यज्ञका विस्तार होता है ॥ २९ ॥ तपसे शान्त ब्रह्मपरायण सत्यव्रत क्रियामें सावधान सुनने मात्रसे मनके संकल्पसे आते हैं ॥ ३० ॥ हे राजन् ! यज्ञमें मूर्तिभेदसे होता और ब्रह्मा बृहस्पति हुए सब धर्मवेत्ताओंमें श्रेष्ठ पुरातन ब्रह्मसे उत्पन्न होनेवाला यजमान ॥ ३१ ॥ यज्ञान्तमें विष्णुकी पूजा कर अर्थात् सब कर्म विष्णुको समर्पण कर यज्ञकी महिमासे अदितिके गर्भमें उत्पन्न होता

ज्वलाद्गिरिव विभ्रेस्तेस्त्रिभिरेवाध्वरेऽग्निभिः ॥ ब्रह्मलोक इवाभाति ब्रह्मणः स महाक्रतुः ॥ २८ ॥ इन्द्रप्रोक्तानि सामानि गायन्ति ब्रह्मवादिनः ॥ वचनानि प्रयुक्तानि यज्ञेषु विततेऽध्वरे ॥ २९ ॥ तपःशान्ता ब्रह्मपराः सत्यव्रतसमाहिताः ॥ आययुर्मुनयः सर्वे मनोभिः श्रोत्रवादिभिः ॥ ३० ॥ होता वैवाभवद्राजन् ब्रह्मत्वे च बृहस्पतिः ॥ सर्वधर्मविदां श्रेष्ठः पुराणो ब्रह्मसंभवः ॥ ३१ ॥ यजमानश्च यज्ञान्ते विष्णोः पूजां प्रयुज्य च ॥ अदित्याः पश्चिमे गर्भे तपसा संवृत्ते नृप ॥ ३२ ॥ पदं विष्णुरजो ब्रह्मा निर्द्वन्द्वं निष्परिग्रहम् ॥ यतः पदसद्ब्रह्माणि भविष्यन्त्युद्भवन्ति च ॥ ३३ ॥ अवन्ध्यं चाप्रमेयं च व्यतिरिक्तं च कर्मभिः ॥ आत्मापि यस्य मुनयो भवन्ति निष्परिग्रहाः ॥ ३४ ॥ परिग्रहाश्च विषया दोषप्राप्ता महीपते ॥ दोषाश्च युगपत्सर्वे छादयन्ति मनो बलात् ॥ ३५ ॥ इन्द्रियग्रामविषये चरन्तो निष्परिग्रहाः ॥ परिग्रहं शुभं धर्ममविद्यालक्षणं विदुः ॥ ३६ ॥

हे ॥ ३२ ॥ इस प्रकार कर्मरुल देवताभाव सुख दुःखरूपको कथन कर मोक्षपदरूप विष्णुपदका वर्णन करते हैं कि अजन्मा अर्थात् कर्मप्राप्त ब्रह्मा ब्रह्मवित् निर्द्वन्द्व और निष्परिग्रह जिससे सहस्रों इन्द्रादि पद हुए और होते हैं उस विष्णुके परम पदको प्राप्त होता है ॥ ३३ ॥ वह बंधरहित और अप्रमेय कर्मोंसे व्यतिरिक्त है, जिस विष्णुके परम पद और आत्माको मुनिजन एक कहते हैं ॥ ३४ ॥ हे राजन् ! रूपादि सब विषयरागादि दोषोंसे कल्पित हुए एक कालमें बलसे मनको आच्छादित करते हैं ॥ ३५ ॥ इन्द्रियोंके समूहके रूपरसादि विषयोंमें निष्परिग्रह विचरते हुए मुनिजन परिग्रहवाले सुन्दर

धर्मको अपने विद्यालक्षणसे जानते हैं ॥ ३६ ॥ हे राजन् ! विद्यालक्षणके संयोगसे मन आच्छादित नहीं होता है जो मुनि शब्दकरके ब्रह्मादियोंने ग्रहण किया है ॥ ३७ ॥ हे कुरुभेष्ट ! उस ब्रह्मविद्याके व्रतमें स्नान किये नियममें तत्पर सत्पुरुषोंके स्थान दिव्यलोक हैं वही लोकोंके लोक ॥ ३८ ॥ हे भारत ! जहाँके हवि सेवन करनेवाले देवता क्षयको प्राप्त नहीं होते हैं और यजमानभी अपने भोगोंसे कर्मसे प्राप्त स्थानमें अपनी पत्नियोंके सहित दुःस्वरहित हो निवास करता है ॥ ३९ ॥ यज्ञके अवसानमें प्रभुने ब्राह्मणोंको शैल (दिव्य देह पित्र्य गान्धर्व प्राजापत्य वा ब्राह्म) स्थान दिया यह सब प्राणियोंपर दया करके निर्मल अन्तःकरण करके द्विजोंको दिया ॥ ४० ॥ उस दिव्य वेहस्वी शैलको जो सर्वगात्रात्मक क्षेत्र है

विद्यालक्षणसंयोगान्न मनश्छाद्यते नृप ॥ यदि चेन्मुनिशब्देन गृह्यते ब्रह्मवादिभिः ॥ ३७ ॥ वेदविद्याव्रतस्मात्तेर्नियतेः कुरुसत्तम ॥ दिवि लोकाः सतां स्थानं लोकानां लोक उच्यते ॥ ३८ ॥ यत्र देवा इव्यपुष्टा न क्षयं यान्ति भारत ॥ यजमानश्च भोगैः स्वैः कर्म-प्राप्तोदिते पदे ॥ मोदते सह पत्नीभिर्विज्वरो वसुधाधिप ॥ ३९ ॥ यज्ञावसाने शैलेन्द्रं द्विजेभ्यः प्रददौ प्रभुः ॥ दयया सर्वभूतानां निर्मलेनान्तरात्माना ॥ ४० ॥ तं शैलं सर्वगात्राणि परस्परविशेषिणः ॥ न शोकः प्रविभागार्थं भेतुं सर्वोद्यमेरपि ॥ ४१ ॥ ततस्ते ब्राह्मणगणा निषेदुर्वसुधातले ॥ श्रमेणाभिहताः सर्वे विवर्णवदना नृप ॥ ४२ ॥ सुपाश्वो गिरिसुख्यस्तु वाग्भिर्मधुरभाविता ॥ अत्रवी-त्प्रणतः सर्वाञ्छिरसा तान् द्विजोत्तमान् ॥ ४३ ॥ नहि शक्यो बलाद्भेतुं युष्माभिरसुसद्भिभिः ॥ अपि वर्षशतैर्दिव्यैः परस्पर-विरोधाभिः ॥ ४४ ॥ एकीभूता यदा सर्वे भविष्यथ समाहिताः ॥ अविरोधेन युगपद्भिभजिष्यथ निर्वृताः ॥ ४५ ॥

परस्पर भेददृष्टिसे परस्पर संघटित हुए ब्राह्मण क्षत्रियत्वादिके अजिमानसे सर्वोद्यम अर्थात् कर्मविद्यासे आत्मासे पृथक् निश्चय करनेको समर्थ न हुए ॥ ४१ ॥ तब वे सब ब्राह्मण अपने व्यास विवर्णवदन हो पृथ्वीमें बैठे ॥ ४२ ॥ तब उस पर्वतके पार्श्वभागमें पाप छेदन करनेवालोंमें मुरूप वायु प्रणत हुए उन सब ब्राह्मणोंसे कहने लगा ॥ ४३ ॥ हे ब्राह्मणो ! यह देहाभिमानका पर्वत बल वा हठसे परस्पर विरोधके कारण देह इन्द्रियादिमें मन लगानेसे दिव्य सौ वर्षोंमेंभी भेदन नहीं कर सकते ॥ ४४ ॥ जब तुम समाधिमें सावधानतासे एकीभूत हो जाओगे और कोई विरोध न होगा

तब तुम इसको एकसाथ तोड़ सकोगे ॥ ४५ ॥ स्वभाविक सामर्थ्यको राम और द्वेष नष्ट कर देते हैं और रामदोषसे रहित होनेसे ब्रह्मनिष्ठा बढ़ती है ॥ ४६ ॥ जब मैं स्वर्गको भेदन करनेवाले यहां वहांके जोगसे रहित शिलाओंसे फेंके हुए और सानुओंके गिरनेसे धातुओंके फैलनेसे अर्थात् गुहामें शयन करनेवाला मैं गुरु देहकी आरंभ करनेवाली धातु और उनके कार्य वाक् प्राण मनको विशीर्ण करूंगा (“ अन्नमयं हि सौम्य मनः आपां-मयः प्राणस्तेजोमयी वागिति अतेः ”) और शिखररुद्ध इन्द्रियोंको तापित करूंगा ॥ ४७ ॥ समीप स्थित स्त्री आदि जिन्होंने चित्तमें सर्पकी समान प्रवेश किया है तथा नाग (श्वेतसांपकी तुल्य शास्त्रादि वृषभ व्याल कृष्णसर्पकी तुल्य कामादि वृषभों) से विशीर्ण और प्रेरित हुएको जब गुरु नाशकर बलं हि रागद्वेषाभ्यां वर्द्धते ब्रह्मसत्तमाः ॥ विमुक्तं रागद्वेषाभ्यां ब्रह्म वर्द्धति शाश्वतम् ॥ ४६ ॥ यदाहं भेदयिष्यामि स्वर्गंभिन्नेः शिलाशतेः ॥ धातुभिश्च विसर्पद्भिः शिखरैश्चानुपातिभिः ॥ ४७ ॥ विशीर्णेः पार्श्वविवेकान्गैश्च गलितैर्भुवि ॥ बहुभिर्व्यालरूपैश्च चोद्यमानो गुहाशयेः ॥ ४८ ॥ प्रतिगृह्य च तद्वाक्यं शैलेन्द्रस्य सुभाषितम् ॥ तूर्णान् बभ्रुवुस्ते सर्वे तदा ब्राह्मणसत्तमाः ॥ ४९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ॥ २३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ बलिर्होमाश्च वर्द्धन्ते अहन्यहनि भारत ॥ द्विजानां तपसाढ्यानां गृहधर्मेषु तिष्ठताम् ॥ १ ॥ देवतार्च्यैश्च पूज्यन्ते तदाप्रभृति भारत ॥ तेषां ब्रह्मविदां राजन् पृथिव्यां ब्रह्मवादिभिः ॥ २ ॥ तत्रैव ब्रह्मसदनं समं निस्तृणकण्टके ॥ प्राज्येन्धनंतृणे देशे पुण्ये पर्वतरोधसि ॥ ३ ॥ देता है तब यह कार्यसाधनमें समर्थ होता है ॥ ४८ ॥ इस प्रकार शैलेन्द्रके कहे उस वचनको स्वीकार करके वे सब ब्रह्मभेद मौन हुए अर्थात् वैराग्य न होनेसे आत्माको देहसे पृथक् करनेके व्यापारसे निवृत्त हुए ॥ ४९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे म० ज्ञा० त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ॥ २३ ॥ वैशम्पायन बोले, हे राजन् ! उस समयसे प्रतिदिन तपसे युक्त गृहधर्ममें वर्तनेवाले शैलभेदमें असमर्थ कर्मवाले ब्राह्मणोंका कतिवज्रोंके साथ पृथ्वीमें बलि-होमादि कर्म बढ़ने लगा ॥ १ ॥ हे भारत ! तबसे देवताओंकी पूजा उन ब्रह्मवादियों द्वारा पृथ्वीमें बढ़ती है ॥ २ ॥ उसी पृथ्वीरूप ब्रह्मसदनमें “ अविमुक्तं वै कुरुक्षेत्रं देवानां देवयजनं सर्वेषां भूतानां ब्रह्मसदनम् ” इति श्रुतेः । जो समान और तृणकण्टकसे रहित है (भू और प्राणतन्त्रिके मध्यमें)

विन्ध्यके समीप घृत ईषन तृणसे युक्त ॥ ३ ॥ जगवान्की गतागतिरूप क्रियाको देखकर निवास करते हैं तपके अर्थी महाभाग ब्रह्मचर्य व्रतमें स्थित ॥ ४ ॥ गृहस्थ धर्ममें निरत दानसे शुद्ध यतिभि वहां निवासकी इच्छा करते हैं ॥ ५ ॥ वनके मूलफडसे और कर्मफडसे रत ब्राह्मणभेद अभिहोत्र व्रतमें पारगामी जितक्रोध सावधान चित्त ॥ ६ ॥ देवयुक्त कर्मसे युक्त ब्राह्मणभेद चरित्कलधारी नियत जितेन्द्रिय ॥ ७ ॥ दारुणव्रतमें स्थित हुए ब्रह्मचर्यमें स्थित हो इस क्रमसे सर्वथा वे महात्मा ॥ ८ ॥ क्रमसे पवित्र वेदके पवित्र संस्कारको प्राप्त हो जो कि पुरातन ब्रह्मचारियोंने आचरण किये वासं यत्र प्रकुर्वन्ति दृष्ट्वा भगवतः क्रियाम् ॥ तपोऽर्थिनो महाभागा ब्रह्मचर्यव्रते स्थिताः ॥ ८ ॥ गृहस्थधर्मनिरता वनप्राप्तेन चेतसा ॥ यतयश्चापि कांसन्ति धर्मेणैव विकाक्षिणः ॥ ९ ॥ कन्येः कर्मफलेभ्येव रता ब्राह्मणपुङ्गवाः ॥ अभिहोत्रव्रतज्ञाता जितक्रोधाः समाहिताः ॥ ६ ॥ देवयुक्तेन वा युक्ताः कर्मणा ब्रह्मसत्तमाः ॥ चरित्कलधारी नियता नियतेन्द्रियाः ॥ ७ ॥ चरन्तो ब्रह्मचर्यं च व्रतमास्थाय दारुणम् ॥ अनेन विधिना राजन् क्रमप्राप्तेन सर्वज्ञः ॥ ८ ॥ क्रमाद्ये वेदसंस्कारं पुण्यं प्राप्ताः सनातनम् ॥ पूर्वैराचरितं राजन्सुनिभिर्ब्रह्मवादिभिः ॥ ९ ॥ नावेदविद्वान्नागच्छेन्नापि रोद्रं व्रतं चरेत् ॥ न च त्यागेन गच्छेत् गृहधर्मं न च त्यजेत् ॥ १० ॥ नैवं गच्छेत् दुःस्थानमप्राप्तो वेदसंचयम् ॥ ऋचश्च संचयः पूर्वः सामगानां च भारत ॥ ११ ॥ ये चापि पुत्रिणो न स्युः शुस्थापि प्राप्नुयुः फलम् ॥ ब्राह्मणास्तपसा श्रान्ता गुरोश्च परिचर्यया ॥ १२ ॥ यस्य नैव श्रुतं ब्रह्म गृहीतं विशाप्ते ॥ कामं तं धार्मिको राजा शूद्रकर्माणि कारयेत् ॥ १३ ॥

हैं उनके स्थानको प्राप्त होते हैं ॥ ९ ॥ वेदका न जाननेवाला गृहस्थ धर्मको नहीं प्राप्त होता अर्थात् सम्पूर्ण वेदको बिना जाने गृहस्थ धर्म न करे त्यागके बिना संन्यास न करे, बिना पुत्र उत्पन्न किये गृहस्थधर्मका त्याग न करे ॥ १० ॥ वेदसंचयके प्राप्त हुए बिना संन्यासी न हो, हे भारत ! साम गानेवालोंको पहले ऋच और यजुका संचय करना चाहिये ॥ ११ ॥ और जो पुत्रवाले न हों वे वेदान्तको सुनकर उसके फडको प्राप्त होते हैं, ब्राह्मणजन तपसे श्रान्त हुए गुरुकी परिचर्यासे फलको पाते हैं ॥ १२ ॥ हे राजन् ! जिसने वेदको न सुना न ग्रहण किया उस ब्राह्मणसे राजा शूद्रोंके

कर्म करावे ॥ १३ ॥ जो ब्राह्मण होकर वेदका आदर न करे ऐसा तो होही नहीं सका. जो वेदका अनादर करे वह ब्राह्मणही नहीं है. कारण कि बस-
 चारी और गृहस्थ दोनोंहीका अध्ययनकालमें मन वेदमें लगता है ॥ १४ ॥ इस कारण भूतिसे सम्पन्न अपनी विभूतिकी इच्छा करनेवाला ब्राह्मण
 वेदपूर्वक सब इन्द्रियोंके आरंभोंको सम्यक् प्रकारसे आचरण करे ॥ १५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां चतुर्विंशतित-
 मोऽध्यायः ॥ २४ ॥ वैशम्पायन बोले, वे नारद आदि गन्धर्व और ऋषि वैदिक कर्म अथस्कर हैं और उसके करनेमें राजवण्ड है इस प्रकार जानकर
 वेदप्रधान अपराधरहित नागराजकी प्रकृतिवाले चन्द्रमा और आदित्य (काल) को आगे करके ब्रह्मसे उत्पत्तिवाले देवता और ऋषियोंको वसु हवि
 अथवा नैव विद्येत यद्ब्रह्म नाद्रियेद्विजः ॥ द्वाभ्यां तु श्रोत्रविषये मनः पूर्वं समाहितम् ॥ १७ ॥ एवं सर्वेन्द्रियारम्भात्वेदपूर्वान्तसमा-
 चरेत् ॥ ब्राह्मणो भूतसंपन्नो य इच्छेद्भूतिमात्मनः ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि चतुर्विंशतितमोऽ-
 ध्यायः ॥ २४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ते तु गोब्राह्मणा नागाश्चन्द्रादित्यपुरस्कृताः ॥ ब्राह्मणान्पूजयन् देवान्सुभिर्ब्रह्मसंभवेः ॥ १ ॥
 नारदप्रमुखाश्चैव गन्धर्वा ऋषयो नृप ॥ कुर्वन्ति सततं यज्ञे क्रमप्राप्तं पितामहम् ॥ २ ॥ वचोभिर्मधुराभावेः पञ्चेन्द्रियनिवासिभिः ॥
 सर्वभूतप्रियकरैः सर्वभूतहितैषिभिः ॥ ३ ॥ स्तूयमानश्च यज्ञान्ते पञ्चेन्द्रियसमाहितैः ॥ प्रोवाच भगवान्ब्रह्मा दिष्ट्या दिष्ट्येति
 भारत ॥ ४ ॥ ततः कश्यपमाभाष्य प्रोवाच भगवान्प्रभुः ॥ भवानपि सुतेः सार्द्धं यक्ष्यते वसुधातले ॥ ५ ॥ क्रतुभिः परमप्राप्तेः
 संपूर्णवरदक्षिणेः ॥ यक्षाः सुराश्च ते सर्वे यथा प्रतिगुणेः प्रभो ॥ ६ ॥

दक्षिणादिके सहित पूजन करने लगे ॥ १ ॥ हे राजन् ! वह नारद गंधर्वादि ऋषि ब्रह्माकी पूजाके क्रमसे ब्रह्माको पूजन करते हुए ॥ २ ॥ पंचेन्द्रि-
 यमें निवास करनेवाले मधुरवचनों और सब भूतोंके प्रिय करनेवाले सब प्राणियोंके हितकारी ॥ ३ ॥ वचनोंसे स्तुतिको प्राप्त हो यज्ञान्तमें पंचेन्द्रियसे
 सावधान उस यज्ञको देखकर ब्रह्माजी बोले, तुम धन्य हो भाग्यसेही तुम्हारी यज्ञमें इस प्रकार प्रवृत्ति है ॥ ४ ॥ तब कश्यपसे संभाषण कर भगवान्
 प्रभुने कहा आपसी पृथ्वीतलमें पुत्रोंके सहित पूजित होंगे ॥ ५ ॥ हे प्रभो ! सम्पूर्ण अथर्वदक्षिणावाले यज्ञोंसे यज्ञ असुर अपने २ सात्विक

राजसी तामसी गुणोंसे ॥ ६ ॥ पहले हम यजन करेंगे पहले हम यजन करें, इस प्रकार बलसे दमित परस्पर विवाद करने लगे ॥ ७ ॥ देवता और दैत्य परस्पर जपकी इच्छा करनेवाले अपनी विपुल भुजाओंके आश्रयसे युद्धके निमित्त स्थित हुए ॥ ८ ॥ तबसे पापरहित हुए ऋषियोंसे तथा दूसरे वेदवेदांगके पारगामी ऋषियोंके निवारण करनेपरत्नी वे ॥ ९ ॥ गोकुलमें वृषकी समान युद्ध करने लगे, वे देवता प्राण नामक सूत्रात्माके आश्रित हो कामादि असुरोंके जीतनेको सूत्रात्माके जीतनेको इच्छा करने लगे ॥ १० ॥ तब वे सब प्राणियोंके देखते २ मृत्युके विषयको प्राप्त हुए तब वे महा

वयं यक्षामहे पूर्वं पूर्वं यक्षामहे वयम् ॥ एवमन्योन्यसंरम्भाद्विद्यन्ते बलदर्पिताः ॥ ७ ॥ दैतेयाश्चाप्यदैतेयाः परस्परजयेषिणः ॥ युद्धायेव प्रतिष्ठन्ति प्रगृह्य विपुलौ भुजौ ॥ ८ ॥ निवार्यमाणा ऋषिभिस्तपसा दग्धाकिल्बिषैः ॥ अन्यैश्च विविधैर्विप्रेर्वेदवेदाङ्गपारगैः ॥ ९ ॥ निवार्यमाणा युद्धयन्ते वृषभा इव गोकुले ॥ प्रयुद्धा युद्धसंक्रान्ताः सर्वे प्राणजयेषिणः ॥ १० ॥ पश्यतां सर्वभूतानां मृत्योर्विषयमागताः ॥ ततः शब्देन महता परं कृत्वा महाबलाः ॥ ११ ॥ रुन्धन्ति बाहुभिः क्रुद्धाः सपक्षा इव पक्षिणः ॥ चचाल वसुधा चैव पादाक्त्रन्ता च रोचिभिः ॥ १२ ॥ नोर्यथा पुरुषाक्त्रन्ता निषीदति महाजले ॥ पर्वताश्च विशीर्वन्ते नर्दमाना गजा इव ॥ १३ ॥ चुक्षुभुश्च महानद्यस्ताडिता मातरिश्चना ॥ ततः समभवयुद्धं मघोर्विष्णोश्च भारत ॥ १४ ॥ युगान्तकरणं घोरं सर्वप्राणिभयंकरम् ॥ प्रममाथ बलं विष्णुः समग्रं बलपौरुषम् ॥ १५ ॥

बलवाले अत्यन्त शब्द करके ॥ ११ ॥ पंखवाले पर्वतकी समान बाहुसे एक दूसरेको रोकने लगे (अर्थात् वैराग्यसे कामादिको निवारण करने लगे) उसमेंही विघ्न हुआ उन विषयवात्सनाओंकी ज्वालासे योगभूमि चलायमान हो गई ॥ १२ ॥ जैसे पुरुषोंसे आक्रान्त होकर नौका महाजलमें दुःस्ती होती है इसी प्रकार आसनबंधादिक पर्वतकी तुल्य शब्द करते हुए हाथीकी समान विशीर्ण होते हैं ॥ १३ ॥ पवनसे ताडित होकर महानदी (नाडी) चलायमान हो गई, हे भारत ! उस समय मधु और सत्त्वगुणरूप विष्णुका युद्ध होने लगा ॥ १४ ॥ वह घोर युद्ध युगान्तकी समान सब प्राणियोंको

भयंकर हुआ तब विष्णुने दैत्यका समग्र बल और पौरुष नष्ट कर दिया ॥ १५ ॥ जैसे अग्निके बलको जल शान्त कर देता है इसी प्रकार भगवान्प्रसे वह दैत्य शान्त हो गया ॥ १६ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेखु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भा० पंचविंशतितमोऽध्यायः ॥ २५ ॥ वैतराण्यन बोले, वह भीम पराक्रमी मोहल्लही दैत्य (वासनामय) पाशोंसे महेन्द्ररूपी आत्माको पर्वतान्तररूपी देहमें बांधता हुआ ॥ १ ॥ और उसको हर्षल्लही प्रहादके वचनसे उसके अनुसारी द्वेषरूप लयके लक्षणवाले योगीका पूर्णस्त्वके न जाननेसे उत्तन्न हुआ माह इन्द्ररूप अपनी बुद्धिके क्षय होनेसे भविष्य दैतके अदर्शनरूप

वह्नेरिव बलं दीप्तं श्रमयत्यम्बुना यथा ॥ तथा प्रज्ञामितं तेन भगवत्यपकारिणा ॥ १६ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेखु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ॥ २५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ बलवान्स तु दैतेयो मधुर्भूमिपराक्रमः ॥ बबन्ध पाशैर्निश्चितैर्महेन्द्रं पर्वतान्तरे ॥ १ ॥ तं वै प्रहादकचनलक्षणज्ञश्च भारत ॥ ऐश्वर्यमेन्द्रमाकाक्षन् भविष्यं बुद्धिसंशयात् ॥ २ ॥ बद्धेन्द्रं सहसा मध्ये पाशैर्भूमिर्वर्जितैः ॥ आयसेर्बहुभिश्चित्रैर्बलवद्भिर्विदारणैः ॥ ३ ॥ विष्णुमेवाग्रणी रुद्रमाह्वयद्युद्धकोविदः ॥ मध्ये गणानां सर्वेषां कालस्य वक्ष्यमाणतः ॥ ४ ॥ द्वेषीभूताः काश्यपेया मघोर्वशसुपायताः ॥ युद्धार्थमभ्यधावन्त प्रहृष्टा विपुला गदाः ॥ ५ ॥ गन्धर्वाः किन्नराश्चैव वाद्ये गीते च कोविदाः ॥ प्रनृत्यन्ति प्रगायन्ति प्रहसन्ति च सर्वशः ॥ ६ ॥ तन्त्रीभिः सुप्रयुक्ताभिर्मधुराभिः स्वभावतः ॥ मनो मघोर्विधुन्वन्ति युध्यमानस्य रागिणः ॥ ७ ॥

ऐश्वर्यको इच्छा करता हुआ सुष्ठुनिरूप निर्विकल्पावस्थामें मिराता हुआ ॥ २ ॥ मर्मतेद करनेवाले पाशोंसे भिन्न लोहकी समान हडपाशोंसे इन्द्रको बांधकर ॥ ३ ॥ अग्रणी होकर विष्णु और रुद्रको कालके वशीभूत हो सब मणोंके मध्यमें बुझाने लगा ॥ ४ ॥ तब वह कश्यपकी सन्तान द्वेषीभूत होकर मधुके वशमें हो गई और बड़ी २ गदा ग्रहण कर मधुके सन्मुख धावमान हुई अर्थात् गन्धर्वादि रजप्रधान मधुका मोह नष्ट करने लगे ॥ ५ ॥ गंधर्व और किन्नर बाजे और गानेमें पंडित सब प्रकार नाचने गाने और हँसने लगे ॥ ६ ॥ और स्वभावसे मनोहर वीणा बजाते हुए युद्ध करते हुए

रागी मधुका मन विदीर्ण करने लगे ॥ ७ ॥ मधु दैत्य (तन) के विकारके निमित्त ब्रह्माके नियोगसे सत्यवादी मन्धर्व इन विकारोंको करते हैं ॥ ८ ॥ उस मधुदैत्यका मन उस गंधर्वविद्यामें आसक्त हो गया। दानव और असुर प्रत्यक्ष नाद करने लगे ॥ ९ ॥ इस प्रकार मधुका मन सब ओरसे विषयोंमें लगाकर योगरूपी नेत्रोंसे देखते हुए विष्णुजी सबका यत्न करते काठमें लिपित आग्रीकी समान अन्तर्धान हो गये ॥ १० ॥ मंत्ररूप ऋषि परमात्मारूप विष्णुको अन्तर्हित देखकर व्याकुल हो गये और स्वयंभी पितामह आत्माको आगे करके अन्तर्धान हो गये ॥ ११ ॥ अब विष्णु और दैत्यके भिन्नसे

मधोर्वलार्थं मधुनो नियोगात्पद्मयोनि (गि) नः ॥ एतान्विकारान्कुर्वन्ति गन्धर्वाः सत्यवादेनः ॥ ८ ॥ तत्र शक्तो हि गान्धर्वे तस्मिञ्छन्दे मधुर्मनः ॥ दानवाश्चासुराश्चैव प्रत्यक्षं यान्ति प्राणदम् ॥ ९ ॥ मधोश्च मन आक्षिप्य पश्ययोगेन चक्षुषा ॥ मन्दं प्रयते विष्णुर्युद्धोऽग्निरिव दारुषु ॥ १० ॥ ऋषयो दीप्तमनसं किञ्चिद्विधितमानसाः ॥ पितामहं पुरस्कृत्य क्षणेनान्तरधीयत ॥ ११ ॥ विष्णुं सोऽभ्यहनत्कुद्धो मधुर्मेघुनिभेक्षणः ॥ भुजेन शङ्खदेशान्ते न चक्रम्पे पदात्पदम् ॥ १२ ॥ विष्णुश्चाभ्यहनदैत्यं करग्रेण स्तनान्तरे ॥ स पपात महीं तूर्णं जानुभ्यां रुधिरं वमन् ॥ १३ ॥ न चेनं पतितं हन्ति विष्णुर्युद्धविशारदः ॥ बाहुयुद्धे हि समयं मत्वाचिन्त्यपराक्रमः ॥ १४ ॥ इन्द्रध्वज इवोत्तिष्ठन् जानुभ्यां स महीतलात् ॥ मधू रोषपरीतात्मा निर्दहन्निव चक्षुषा ॥ १५ ॥ परुषाभिस्ततो वाग्भिरन्योन्यमभिगर्जतुः ॥ समीयतुर्बाहुयुद्धे परस्परवधेषिणौ ॥ १६ ॥

विवेक और मोहका युद्ध वर्णन करते हैं। मधुकी समान नेत्रवाले मधुने क्रोधकर विष्णुको ताड़ित किया। वह उसकी मुष्टि शंखदेशमें लगनेसेभी विष्णुजी एकपदभी कंपित न हुए ॥ १२ ॥ विष्णुने दैत्यकी छातीमें धुंसेका प्रहार किया तब वह जानुसे रुधिर वहाता पृथ्वीमें गिरा ॥ १३ ॥ युद्धविशारद विष्णुने उस पतित हुएको न मारा। कारण कि वह अचिन्त्यपराक्रमी बाहुयुद्धके समयको जानते थे ॥ १४ ॥ फिर वह पृथ्वीतलसे इन्द्रध्वजकी समान जानुओंके बलसे उठा और क्रोधसे नेत्रोंद्वारा दग्ध करता हुआ ॥ १५ ॥ फिर दोनों कठोर वचन कहकर गर्जने लगे और परस्पर वधकी

इच्छासे बाहुयुद्ध करने लगे ॥ १६ ॥ दोनों बाहुयुद्धमें बली दोनों तपसे शान्त दोनों सत्य पराक्रमी ॥ १७ ॥ दृढप्रहारवाले दोनों वीर परस्पर एक दूसरेको सँचने लगे और दो पंखवाले पर्वतकी समान युद्ध करने लगे ॥ १८ ॥ एक दूसरेको पृथ्वीमें पकड़कर तिरस्कार करने लगे और दो हाथियोंकी समान हाथके नखोंसे प्रहार करने लगे ॥ १९ ॥ तब शरीरमें व्रण हो जानेसे बहुत रुधिर निकला जैसे ग्रीष्मान्तमें कांचन धातुएं पर्वतसे निकलती हैं ॥ २० ॥ तब शरीरसे निकलते हुए रुधिरसे भीजे हुए दोनों पैरोंके अग्रभागसे पृथ्वीको विदीर्ण करने लगे ॥ २१ ॥ इस प्रकार वे दोनों

उभो तो बाहुबलिनाबुभो युद्धविशारदो ॥ उभो च तपसा क्षान्ताबुभो सत्यपराक्रमो ॥ १७ ॥ दृढप्रहारिणो वीरा वन्योन्यं विचकर्षतुः ॥ शैलेन्द्राविव युद्धयन्तो पक्षेः पाषाणसंनिभेः ॥ १८ ॥ विकर्षन्तो वमन्तो च अन्योन्यं वसुधातले ॥ गजाविव विषाणाग्रैर्नस्त्राग्रैश्च विचरतुः ॥ १९ ॥ ततो व्रणमुखैश्चैव सुस्राव रुधिरं बहु ॥ ग्रीष्मान्ते धातुसंसृष्टं शैलेभ्य इव काञ्चनम् ॥ २० ॥ संसिक्तो रुधिरौषेऽस्रवद्भिः समरजितो ॥ अथोद्यतैः पदाग्रैश्च तो व्यदारयतां महीम् ॥ २१ ॥ अभिहत्य तु तो वीरो परस्परमनेकधा ॥ पतद्भाविष्युच्येतां पक्षाभ्यां मांसशृङ्गिनो ॥ २२ ॥ शुश्रुष्वन्तरिक्षेऽय सर्वभूतानि पुष्करे ॥ सिद्धानां वदनोन्मुक्ताः परया वर्णसम्पदा ॥ २३ ॥ स्तुतयो विष्णुसंयुक्ताः सत्याः सत्यपराक्रमे ॥ शरीरं धातुसंयुक्तं संयुक्तं चेतनेन च ॥ २४ ॥ तद्ब्रह्म इन्द्रियैर्युक्तं तेजोभूतं सनातनम् ॥ ध्रुवं तिष्ठन्ति भूतास्ते सूक्ष्मे प्रलयतां गते ॥ २५ ॥

वीर परस्पर अनेक प्रकारसे प्रहार करके मांसके निमित्त दो पक्षीकी समान युद्ध करने लगे ॥ २२ ॥ तब आकाशमें सब प्राणी सिद्धोंके मुखसे निकली सत्यपराक्रमयुक्त विष्णुकी स्तुति सुनने लगे ॥ २३ ॥ जब सत्यपराक्रम विष्णुकी स्तुति की गई (देहादि अनात्मामें आत्मानिमानका जो मोह है उसके नाश करनेको आत्मासेही आत्माको विवेक स्थलपर आसूठ करे) जो शरीर धातुसंयुक्त और चेतनके साथ संयुक्त है ॥ २४ ॥ वह सनातन तेज युक्त ब्रह्म सनातन है, उस सूक्ष्म और लयको प्राप्त हुएमें सब भूत अवस्थ स्थित होते हैं, अर्थात् माया नष्ट होनेसे ब्रह्मरूपसे स्थित होते हैं ॥ २५ ॥

फिर सब भूतोंका त्रिलोकीमें कामनाका देनेवाला सूक्ष्मरूप और अनेकरूप सब भूतोंसे उत्पन्न होता है ॥ २६ ॥ और वह सबका नियन्ता सुरुप और अनेकरूप होकर लोकोंमें विचरता है, अनेक कारणान्तरसे मामसी रूपमें स्थित होता है ॥ २७ ॥ वह योगात्मा मानसीरूप शेष कूर्मादि धारण कर अनेक दुष्ट निग्रहरूप कारणसे शेषनागरूपसे पृथ्वीको धारण करके बुलोकको धारण करे चार वेद और पांच तत्त्वको सूक्ष्मरूपसे धारण करता हुआ विचरता है ॥ २८ ॥ ब्रह्मरूपसे ब्राह्मणोंमें युद्धरूपसे क्षत्रियोंमें प्रदानकर्मसे वैश्योंमें और सेवाकर्मसे शूद्रोंमें वसता है ॥ २९ ॥ क्षीरदानसे गौओंमें

पुनश्चोद्भवते सूक्ष्मं बहुरूपमनेकधा ॥ प्रबोध्य भावं भूतानां त्रिषु लोकेषु कामदः ॥ २६ ॥ सुरुपो बहुरूपांस्तोल्लोकान्त्संचरते वशी ॥ मानसीं तनुमास्थाय बहुभिः कारणान्तरैः ॥ २७ ॥ योगात्मा धारयन्नुर्वीं नागत्मानं दिवंधरः ॥ ब्रह्मभूतं परं चैव सूक्ष्मेणात्मानमश्रितः ॥ २८ ॥ ब्राह्मेण विप्रावसति युद्धेनेव च क्षत्रियान् ॥ प्रदानकर्मणा वैश्यान्पुत्रान्परिचरेण च ॥ २९ ॥ गावः क्षीरप्रदानेन अश्वान्यज्ञेषु प्रोक्षणैः ॥ पितरश्चोष्मणा वेदहविर्भागेन देवताः ॥ ३० ॥ चतुर्भिर्व्यतिरिक्ताङ्गैस्त्रिभिरन्यैश्च धातुभिः ॥ सप्तभिः पितृभिर्नित्यैर्ह्यल्लोकान्परिरक्षति ॥ ३१ ॥ चन्द्रसूर्यात्मकं नित्यं तद्रूपनिहतात्मकम् ॥ प्रकाशं चाप्रकाशं च निगूढं स्वेन तेजसा ॥ ३२ ॥ त्रयस्तु पितरो नित्यं वर्धयन्ति दिवाकरम् ॥ चतुर्भिः पितृभिश्चैव चन्द्रो वर्धति मण्डले ॥ ३३ ॥ त्रयः पितृगणा नित्यं पिण्डान्पश्चाददन्ति ते ॥ चत्वारोऽन्ये पितृगणाः सिद्धाः पञ्चक आददे ॥ ३४ ॥

यज्ञोंसे प्रोक्षणकर्मद्वारा अश्वोंमें भोजनके गरम प्रदान करनेसे पितरोंमें हविर्भागसे देवताओंमें ॥ ३० ॥ दर्श पौर्णमास पिण्डपितृयज्ञ इन चारमें और मन वाक् प्राण इन तीनमें इस प्रकार सात अज्ञसे पितरोंके साथ तीन लोककी रक्षा करता है ॥ ३१ ॥ यह सप्तक चन्द्रसूर्यात्मक है, इसमें अर्चि-रादि मार्ग प्रकाशरूप और धूमादि मार्ग अप्रकाशरूप हैं यह अपने तेजसे निगूढ कर रखता है ॥ ३२ ॥ मन वाक् प्राण यह तीनों पितर नित्य दिवाकर अर्थात् अर्चिरादि मार्गको बढ़ाते हैं और दर्शादि चार पितरोंसे चन्द्रमण्डल (धूममार्ग) बढ़ाया जाता है ॥ ३३ ॥ पूर्वोक्त तीन पितर नियमसे

नित्य फलभोगके अन्तमें स्थूल सूक्ष्म कारण देहोंको संहार करते हैं अर्थात् मन वाक् और प्राण उपासनाको प्राप्त हो मुक्ति प्रदान करते हैं और दूसरे दर्शादिक पितरोंके गण शरीरके आकारसे परिणामको प्राप्त हो पंच विषयादिक होते हैं अर्थात् दर्शादिका फल देहान्तर प्राप्तिके निमित्त है ॥ ३४ ॥ हे विभो ! तुमही तिन पांचों धर्मोंके रूप हो जैसे सुवर्णके कुंडलादि होते हैं, उस प्रकार सनातन दिव्य शाश्वत ब्रह्मसे सबका संभव है ॥ ३५ ॥ इस कारण आप उस तेजको ग्रहण करते हो, सब प्रकार अग्नि वायुरूप हो उसी कर्मसे तुम आदित्यरूप हो ॥ ३६ ॥ जो अपनी रश्मियोंसे जगत्को भस्म करते हुए प्रक्षालन करते हो, युगान्तकालके प्राप्त होनेसे परम सिद्धिको प्राप्त हुआ ॥ ३७ ॥ पक्ष संधि पूर्णिमा और अमा-
 त्वमेव पञ्च तान्धर्मास्त्वमेवापञ्च तान्विभो ॥ सनातनमयो दिव्यः शाश्वतो ब्रह्मसंभवः ॥ ३५ ॥ तस्मात्तत्तेज आदत्ते अग्निर्वायुश्च
 सर्वज्ञः ॥ अतस्त्वं कर्मणा तेन आदित्यः समपद्यत ॥ ३६ ॥ यदश्रासि जगत्सर्वं रश्मिभिः प्रदहन्निव ॥ युगान्तकाले संप्राप्ते परां
 सिद्धिसुपागतः ॥ ३७ ॥ पक्षसंधावमा वास्यां लोकं चरसि मानुषम् ॥ ऋषिभिः सह गूढात्मा सूर्येन्दुवसुसंभवेः ॥ ३८ ॥ सफलं
 कर्म कुर्वाणं यजतां पुष्टिवर्धनम् ॥ हेतूनामविकाराय मा भूत्कर्मविपर्ययः ॥ ३९ ॥ वनस्पत्योषधीश्चैव युगपत्प्रतिपद्यसे ॥
 बालभावाय वसुधां पक्षे पक्षे जनिस्तव ॥ ४० ॥ भूतानां भुवि भूतेश भाव्यर्थं वसुधातले ॥ वसु यद्भुवि किञ्चिच्च सर्वं तत्त्वमयं
 विभो ॥ ४१ ॥ त्वमेव विविधं धर्मं शाश्वतं वसुधातले ॥ देवयज्ञं मन्त्रवाक्यमात्मयज्ञं समानुषम् ॥ ४२ ॥ द्विविधः स्वर्गमार्गश्च
 सूर्यश्चन्द्रश्च निर्मलः ॥ चन्द्रमाः पितृयानश्च देवयानश्च भास्करः ॥ ४३ ॥

वसमें सूर्य चन्द्रमा वसुके संग गूढात्मा होकर मनुष्यलोकमें विचरते हो ॥ ३८ ॥ फलसहित कर्मको करते हुए पुष्टिवर्धन यजन करते हुए हेतुओंके अविकारके निमित्त कर्मका विपर्यय न हो ॥ ३९ ॥ वनस्पति और औषधियोंमें दर्शादिको पृथ्वीको चन्द्ररूपसे प्राप्त होते हो, बालभाव होनेसे प्रत्येक पक्षमें उत्पन्न होते हो ॥ ४० ॥ हे भूतेश ! भूत भविष्य वर्तमान अर्थोंमें जो कुछ भूतोंका द्रव्य है वह सब तत्त्वरूप है ॥ ४१ ॥ हे भगवन् ! पृथ्वी-
 तलमें आप विविध शाश्वत धर्म करते हो, आप देवयज्ञ में वाक्य आत्मयज्ञ मानुषरूप हो ॥ ४२ ॥ सूर्यचन्द्रमाके भेदसे स्वर्गका दो प्रकारका मार्ग है चन्द्रमा पि पान मार्ग और सूर्य देवयान मार्ग है ॥ ४३ ॥

तुमही पृथ्वी रूप होकर प्राणिरूपसे मर्यादाके सहित विश्वमें विचरते हो. इन्द्रियादिके गुणोंको संक्षेप करके देहमात्ररूपसे दूसरे लोकमें गोचर होता है ॥ ४४ ॥ एकही आप पुराणपुरुष विराटरूप हो अक्षय्य अप्रमेय कर्मकर्ता वशी ॥ ४५ ॥ और तेजरूप होकर चक्षुओंके गोचर होते हो और आकाशचारी वायुजी तुम हो सात महत् अहंकार पंच तन्मात्राओंसे नित्य आच्छादित होकर स्थित होता है ॥ ४६ ॥ साधन निर्माण संहार प्रलय अर्थात् समाधिसाधनकालमें जीवरूपसे निर्वाणमें शुद्धरूपसे संहाररूप दिन प्रलयमें रुद्ररूपसे पालनमें विष्णुरूपसे दिशा वर्णाश्रम मर्यादा चक्षुः-

त्वमेव वसुधायुक्तो विश्वं चरसि समिया ॥ एककृत्य गणान्सर्वान्संक्षिप्यामुत्र संभवः ॥ ४४ ॥ एकस्त्वमसि संभूतः पुराणपुरुषो विराट् ॥ अक्षय्यश्चाप्रमेयश्च कर्मकारकरो वशी ॥ ४५ ॥ मूर्तस्तेजसि संभूतो वायुः पर्येति खेचरः ॥ सप्तभी रूपसंस्थानेनित्यमावृत्य तिष्ठति ॥ ४६ ॥ साधने चापि निर्माणे संहारे प्रलये तथा ॥ धाता धारणकाले च दिशश्चक्षुषि धारिणी ॥ ४७ ॥ सेव्यमानो मुनिगणेनित्यं विगतकिल्बिषैः ॥ कर्मभिः सत्यमाप्तेः समरागेर्जितेन्द्रियैः ॥ ४८ ॥ स्तूयमानेश्च विबुधैः सिद्धैर्मुनिवरेस्तथा ॥ सस्मार विपुलं देहं हरिर्हयशिरो महान् ॥ ४९ ॥ कृत्वा वेदमयं रूपं सर्वदेवमयं वपुः ॥ शिरोमध्ये महादेवो ब्रह्मा तु हृदये स्थितः ॥ ५० ॥ आदित्या रश्मयो बालाश्चक्षुषी शशिभास्करो ॥ जंघे तु वसवः साध्याः सर्वसंधिषु देवताः ॥ ५१ ॥ जिह्वा वैश्वानरो देवः सत्या देवी सरस्वती ॥ मरुतो वरुणश्चैव जानुदेशे व्यवास्थिताः ॥ ५२ ॥

न्द्रियमें चिद्रूपसे वर्तमान तुमही हो ॥ ४७ ॥ नित्य पापरहित कर्मोंद्वारा सत्यताको प्राप्त हुए शत्रुपित्रमें समान दृष्टि रखनेवाले जितेन्द्रिय मुनिजनोंसे सेवित ॥ ४८ ॥ देवता सिद्ध और मुनिजनोंसे स्तूयमान होकर (मधुसे बद्ध हुए महेन्द्र नामक जीवने स्तुतिव्याजसे सिद्ध हो सद्गुरुसे बोधित होकर हरिने) अपने सर्वात्मक देह हयशिरको स्मरण किया ॥ ४९ ॥ वह सर्वदेवमय अपना वेदमय रूप करते हुए शिरके मध्यमें महादेव और हृदयमें ब्रह्मा स्थित हुए ॥ ५० ॥ सूर्यकी किरण बालचन्द्र सूर्य नेत्र हुए वसु साध्य जंघाओंमें और सम्पूर्ण संधियोंमें देवता हुए ॥ ५१ ॥ जिह्वामें अग्नि देवता सत्या

देवी वाणीरूप; मरुत और वरुण जातुदेशमें स्थित हुए ॥ ५२ ॥ इस प्रकार देवताओंको महाअद्भुत रूप करके क्रोधसे लाल नेत्र कर मोहरूपी असुरको पीडित किया ॥ ५३ ॥ उस समय मधुके मेदरूपी जलसे पूर्ण पृथ्वी दीखने लगी, जैसे घनकुचासे युक्त प्रमदा शुक्लवर्ण धारण किये शोभित होती है, त्वचा रुविर मांस मज्जा अस्थि मेद शुक्र धातुओंसे रचित शरीर मोहमें मेदमात्र पयन्त अवशिष्ट रहा अर्थात् अज्ञानलेशसे पूर्ण हुई पृथ्वी दीखने लगी ॥ ५४ ॥ हे राजन् ! तबसे यह पृथ्वी स्निग्धरूप हो मेदिनी नामसे विख्यात हुई और सहस्रों दैत्योंद्वारा यह नाम प्रतिष्ठित किया गया है, यदि अज्ञान न हो तो ज्ञानके होतेही शरीरपात होजाता है ॥ ५५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २६ ॥

एवं कृत्वा तथा रूपं सुराणामद्भुतं मदत् ॥ असुरं पीडयामास क्रोधाद्रक्तान्तलोचनः ॥ ५३ ॥ मधोर्मेदोऽम्बुपूर्णां च प्रयिवा समदृश्यत् ॥ प्रमदेव घना चैव शुक्लांशुकनिवासिनी ॥ ५४ ॥ मेदिनीत्येव शब्दश्च लब्धः पृथ्व्याः नरोत्तम ॥ नामासुरसद्वक्षेण धरण्यां संप्रतिष्ठितम् ॥ ५५ ॥ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि षड्विंशतितमोऽध्यायः ॥ २६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ मधोर्निपतनं दृष्ट्वा सर्वभूतानि पुष्करे ॥ प्रहृष्टानि प्रगायन्ति प्रनृत्यान्ति च सर्वशः ॥ १ ॥ सुपाश्वो गिरिसुख्यस्तु काञ्चनेः शिखरोत्तमेः ॥ बहुधातुविचित्रैश्च संलितस्त्रिचोर्वाभौ ॥ २ ॥ गिरयश्चाभिः शोभन्ते धातुभिः समरजिताः ॥ प्रांशुभिः शिखराग्रैश्च सविद्युत इवाम्बुदाः ॥ ३ ॥ पक्षपातोद्गतो रेणुशूर्णेः साधनवालुकैः ॥ छादयन्पर्वताग्राणि महामेघ इवावभौ ॥ ४ ॥

वैशंपायन बोले, परम व्योमाख्य कारणब्रह्ममें अज्ञान मोहरूप दैत्यका पतन देखकर सम्पूर्ण प्राणी प्रसन्न हो न चने और माने लगे अर्थात् अब उपदेश लगकर कारणब्रह्ममें प्रवेश हो सकेगा ॥ १ ॥ वह पूर्वोक्त सुन्दर पार्श्वबाला गिरिसुख्य अर्थात् दिव्यदेहभी बहुतसी धातुसे विचित्र आकाशको लितता हुआसा प्रकाशित हुआ ॥ २ ॥ उसके निकट धातुओंसे रंजित दूसरे पर्वत शोभित होने लगे, उनके ऊंचे शिखर बिजलीयुक्त बादलकी समान शोभित हुए ॥ ३ ॥ पक्षपवनसे उठी हुई धूरि और चूर्ण और रेतके संग पर्वतके अग्रभागको आच्छादन करती हुई महामेघकी समान शोभित हुई ॥ ४ ॥

मेघोंसे छुए हुए शिखर पक्षसे विक्षिप्त वृक्ष कांचनके उद्वेगसे अधिकतर पर्वत आकाशमें स्थित हुए (आकाश हृदयाकाश) ॥ ५ ॥ पक्षवाले शिखरयुक्त सुवर्णकी धातुओंसे रंजित पवनसे समुद्रत हुए विहंगमोंको आसित करते हैं ॥ ६ ॥ वे संपूर्ण सुवर्णके पर्वत स्फटिक मणियोंसे युक्त सूर्यकान्त चंद्रकांत मणियोंसे निर्मल ॥ ७ ॥ महापर्वत हिमवान् श्वेतधातुओंसे अर्धित सुवर्णकी समान प्रकाशित पर्वतोंके अग्रभाग और सूर्यकी किरणके समान प्रकाशित ॥ ८ ॥ पक्षान्तरसे निकले हुए प्रकाशमान मणियोंसे प्रकाशित ताम्रपुष्प युक्त शिखरोंद्वारा अपने तेजसे

मेघसंछिष्टशिखराः पक्षविक्षिप्तपादपाः ॥ काञ्चनोद्भदबहुलाः स्वेतिष्ठन्ती पर्वताः ॥ ५ ॥ पक्षवन्तः सशिखरा हेमधातुभिरञ्जिताः ॥ पवनेन समुद्रताम्रासयन्ति विहङ्गमान् ॥ ६ ॥ काञ्चनाः पर्वताः सर्वे स्फटिकैर्मणिभिश्चिताः ॥ सूर्यकान्तिश्च बहुभिश्चन्द्रकान्तिश्च निर्मलाः ॥ ७ ॥ हिमवांश्च महाशैलः श्वेतैर्धातुभिराचितः ॥ काञ्चनेः शिखरात्रैश्च सूर्यपादप्रकाशितः ॥ ८ ॥ मणिभिश्च प्रकाशद्भिः पक्षान्तरविनिःसृतेः ॥ ताम्रपुष्पैश्च शिखरैर्दीप्यमानैः स्वतेजसा ॥ ९ ॥ मन्दरश्चोग्रशिखरः स्फटिकैर्मणिभिश्चितः ॥ वज्रगर्भो निरालम्बः स्वर्गोपम इवावभो ॥ १० ॥ सहस्रशृङ्गः कैलासः शिलाधातुविभूषितः ॥ तोरणैश्च निविडैः प्रांशुभिश्चैव पादपैः ॥ ११ ॥ प्रवादयद्भिर्गन्धर्वैः किन्नरैश्च प्रगायिभिः ॥ देवकन्याङ्गरागैश्च प्रकीडादिरिवावभो ॥ १२ ॥ मधुरैर्वाद्यगीतैश्च नृत्यैश्चाभिनयोद्भूतैः ॥ शृङ्गारैः साङ्गहारैश्च कैलासो मदनापते ॥ १३ ॥ आदित्याभासिभिः शृङ्गेर्भिन्नाञ्जनचयोपमेः ॥ विन्ध्यो नीलाम्बुदश्यामो विभिन्न इव तोयदः ॥ १४ ॥

प्रकाशमान ॥ ९ ॥ मन्दर उग्र शिखरवाला स्फटिकमणियोंसे शोभित वज्रगर्भ निरालम्ब स्वर्गकी समान शोभित हुआ ॥ १० ॥ सहस्रशृंग कैलास शिलाधातुओंसे भूषित बड़ी बड़ी घनी तोरणोंसे युक्त ऊंचे वृक्षोंसे व्याप्त ॥ ११ ॥ गन्धर्वोंसे गाया हुआ किन्नरोंके शब्दोंसे परिपूर्ण देवकन्याओंके अंगरागोंसे कीटा करते हुएकी समान शोभित हुआ ॥ १२ ॥ मधुर बाजे और गीतोंसे अभिनय करते हुएकी शृंगार और अंगहारद्वारा कैलास कामरूप हो रहा है ॥ १३ ॥ सूर्यकी समान प्रकाशमान भिन्नाञ्जनचयके समूहोंसे नीलमेघकी समान श्याम भिन्नमेघकी समान विन्ध्याचल

दीखने लगा. (मेरुपृष्ठरूप भूमध्यमेंसे प्रकाश हो निकलता है) ॥ १४ ॥ महाबलिष्ठ मेरुपृष्ठमें सब प्राणियोंकी धातुके निमित्त मेघजालकी समान उत्तम जलको उगलने लगे ॥ १५ ॥ चित्रविचित्र शिला और बहुरूपवाली धातुएं अपने गुहाद्वारसे स्फटिकमाणिकी समान निर्मल जल बहाने लगीं ॥ १६ ॥ ग्रीष्मान्तमें वायुसे संयुक्त हुए बिजलीसहित घनकी समान पुष्पोंसे चित्रविचित्र हुए वृक्ष शोभित होने लगे ॥ १७ ॥ कनकअलंकारसे भूषित हाथी पक्षियोंकी कान्तिसे लीन हुए लता और वृक्षोंमें आश्रय लेने लगे ॥ १८ ॥ लम्बायमान वायुसे चलायमान फूलोंवाले वृक्ष वैशाखमासकी समान ॥ १९ ॥ धात्वर्थ सर्वभूतानां मेरुपृष्ठे महाबले ॥ निर्वैमुर्विमलं तोयं मेघजालैरिवोत्तमैः ॥ १५ ॥ शिलाभिर्बहुचित्राभिधातुभिर्बहुरूपभिः ॥ प्रस्रवद्भिर्गुहाद्वारेः सलिलं स्फटिकप्रभम् ॥ १६ ॥ ग्रीष्मान्ते वायुसंमूढा घना इव सविद्युतः ॥ चित्रैः पुष्पैस्तरुगणाः शोभन्त इव भूषिताः ॥ १७ ॥ नागाः कनकसंभूतैर्विचित्रैरिव भूषिताः ॥ विहंगमाभिर्लीनाश्च लतास्तरुसमाश्रिताः ॥ १८ ॥ विलम्बन्त्यः सपुष्पाश्च नृत्यन्ते वायुघट्टिताः ॥ पवनेन समुद्रता मदता माधवेऽहनि ॥ १९ ॥ मुमुक्षुः पुष्पसंचातं तोयं वेलेव वर्षति ॥ बलवद्भिश्च विपुलेः शाखास्कन्धावरोहिभिः ॥ २० ॥ पादपैर्वर्णबहुलैर्भियते च वसुन्धरा ॥ मधुप्रिया मधुकरा मधुमत्ता विहङ्गमाः ॥ घोषयन्तीव गायन्तः कामस्यागमसंभवम् ॥ २१ ॥ विष्णुर्मघोर्निहन्ता च चकार मधुवाहिनीम् ॥ नदीं प्रस्रवन्निर्भेदां सुतीर्थी बहुलोदकाम् ॥ २२ ॥ अङ्गारवर्णसिक्तां मधुतीर्थी मनोरमाम् ॥ विमलैरम्बुभिः पूर्णां पुष्पसंचयवाहिनीम् ॥ २३ ॥ विवेश पुष्करं सा तु ब्रह्मणो वाक्यचोदिता ॥ ऋषिभिश्चानुचरितां ब्रह्मतन्त्रनिषेविभिः ॥ २४ ॥

फूलोंको त्यागने लगें. जैसे वेलामें जलवर्षा होती है और बड़े बलवाले शाखा और स्कंधमें आरोहण करनेवाले ॥ २० ॥ बहुत सारे वृक्षोंसे पृथ्वी धारित होने लगी. मधुके प्रिय मधुकर मधुमत्त विहंगम गाते हुए मानो कामका आगमन सूचन करते हैं ॥ २१ ॥ मधुहंता विष्णुने बहुत जलसुक्त मधुवाहिनी निर्भेद सुतीर्थ नदी निर्माण की ॥ २२ ॥ जो अंगारवर्णवाली रेतसे युक्त सुतीर्थ और मनोरमा उज्ज्वल जलसे पूर्ण पुष्पसमूहकी बहानेवाली थी ॥ २३ ॥ इस प्रकार वह स्वयंकला मधुमती भ्राम “ नेह नानास्ति किंचन ” इस श्रुतिसे प्रबोधित योगीके हृदयाकाशमें लीन हो गई जो ऋषिरूप

योगियोंद्वारा अनुसरण की गई थी ॥ २४ ॥ इस प्रकार योगके उपसर्ग लीन होनेपर ब्रह्मविद्यासंज्ञक 'अहं ब्रह्मास्मि' वाक्यवाली अन्तःकरणकी वृत्ति उदय होती है। धात्री (मूलप्रकृति) कपिल (त्रिगुणात्मकत्व मिश्रणसे) गौ (आत्मतत्त्व विद्यावृत्ति होकर) पयः क्षरते (ब्रह्मको प्रकाश करती है) मधुर (आनंदमात्र होनेसे) यज्ञे (योगके अधिक विस्तार होनेपर) ब्रह्मवाक्य (अहं ब्रह्मास्मि) से प्रेरित हुई प्रगट होती है ॥ २५ ॥ फिर वह पृथ्वी कूटस्थ वस्तुको धारण करनेमें समर्थ होकरभी अपने उपादान जड़के प्रति प्राप्त होकर गतवती होती हुई उस समय योगी ब्रह्मा निर्विकल्प समाधिसे आत्माको भजता है ॥ २६ ॥ और वेदवाणीसे समुद्भूत ज्ञानमात्र अज्ञानका विरोधी ब्रह्म सर्वदा आकाशमें स्थित है अर्थात् आकाशवासी उसके

धात्री कपिलरूपेण गोर्भूत्वा क्षरते पयः ॥ मधुरं वितते यज्ञे ब्रह्मणो वाक्यचोदिता ॥ २५ ॥ शिरश्च पृथिवी भूतं संपातुं प्राप्तवान्महीम् ॥ शुद्धं च भजते लोकं शाश्वतं परमाद्भुतम् ॥ २६ ॥ सरस्वत्याः समुद्भूतं ब्रह्मक्षेत्रे तमोऽुदम् ॥ मरुतीयमतिक्रम्य पुष्करेषु विसर्पति ॥ २७ ॥ सुचारुरूपा धर्मज्ञा अजरूपेण छादयन् ॥ रूपं कनकवर्णाभं तपोयुक्तेन तेजसा ॥ २८ ॥ अजगन्धकृतोन्मुक्तः संभूतः पर्वतो महान् ॥ गुरुद्वारगुणप्राणः शाश्वतः सिद्धसेवितः ॥ २९ ॥ वेदिकाभिः सुचित्राभिः काञ्चनाभिर्विराजितः ॥ पुष्कराणि परीतानि त्वष्टा विपुलदक्षिणः ॥ ३० ॥

आश्रितही है ॥ २७ ॥ सुन्दररूप धर्मके जाननेवाली अजा (अहंकारादि रूपसे माया) कनकवर्ण ब्रह्मको आच्छादन करनेवाली है वह आच्छादन तपोयुक्त चित्तसे होता है, यह अघ्याप्त अदृष्टवशसे होता है ॥ २८ ॥ वह नदी सन्मात्र लेशसे मुक्त अर्थात् अहंकारादिकोंसे जाग्रत अवस्थामें सत्त्वकी समान जलसमान महापर्वत (गुरुद्वार) शाश्वतरूप सिद्धजनोंसे शोभित सुवर्णके समान रूपको साक्षात् करती है ॥ २९ ॥ जो कहो कि सुषुप्तिआदिमें मनके संयोगान्नावसे संसारी अहमर्थसे प्रकाशित होता है उस समयभी इसको अनात्मत्व नहीं होता उसपर कहते हैं कि वह पर्वत जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति तीन क्रीडाके स्थानवाली वेदिकाओंसे विराजित है, जो चित्रविचित्ररूप है और अहंकारादि उत्थानकारण मूल अज्ञान

विचित्र जगत्के निर्माण करनेवाले ईश्वरसे व्याप्त है. हे राजन् ! चित्प्रकाश चित्स्वभावको नहीं भजता है ॥ ३० ॥ जिस प्रकार उस महापुरुष (शरीर) का रूप पांच धातु (महाभूतशरीरके कारण) से व्याप्त है वह अहंकाररूपसे अद्भुत दर्शन होकर अनिर्वचनीय चेतनासे सम्पन्न होता है ॥ ३१ ॥ फिर शास्त्रदृष्टिसे ब्रह्मरूप हो “अहं मनुरभवम्” इति श्रुतेः । तत्त्वको कथन करता है, यैही इस धर्मचारी देहको मनके संकल्पमात्रसे कलंगा सो केवल देहमात्रही नहीं किन्तु सम्पूर्ण लोकमात्रको कर सकता हूं. तथा पृथ्वी शरीरसम्बन्धिनी चेतनाको बहुत प्रकारसे कर सकता हूं. यह सब मनकेही संकल्पसे हो सकता है यह सब आत्मा है यह इसका तात्पर्य है ॥ ३२ ॥ सर्वज्ञता कहते हैं धातुसंज्ञकवाली पांच इन्द्रियोंसे तीनों

महामेरोर्यथा रूपं पञ्चभिर्धातुभिर्वृतः ॥ चेतनायाभिसंपन्नो रूपेणाद्भुतदर्शनः ॥ ३१ ॥ करिष्याम्यहमप्येतन्मनसा धर्मचारिणम् ॥ रूपं बहुविधं लोके पार्थिवीं चेतनां तथा ॥ ३२ ॥ त्रींश्च लोकान्प्रपद्येयं पञ्चभिर्धातुलक्षणेः ॥ षष्ठेन च सप्तर्जेयं मनसा धर्मचारिणीम् ॥ ३३ ॥ सिद्धेषु भावमोहाभ्यां पश्यन्ति च समृद्धयः ॥ विमुक्ताः सर्वसङ्गेभ्यो धारयन्ति परिग्रहान् ॥ ३४ ॥ न च विन्देत मां कश्चिन्मनसा कामरूपिणम् ॥ पञ्चधातुनिबद्धश्च नानाभाषितचोदनाः ॥ ३५ ॥ ये च विष्णुमधीयन्ते बहुधा कामविग्रहैः ॥ ते मां पश्येयुरव्यक्तं तपसा दग्धकिल्बिषाः ॥ ३६ ॥

लोकोंको जानता हूं (आत्मज्ञान कहते हैं) और छठे मनसे धर्मचारिणी आत्माकी सहाय असंग चिदाकार बुद्धिनी बना सकता हूं ॥ ३३ ॥ दीयमान विद्याके अधिकारियोंको कहते हैं. जो सम्यक् ऐश्वर्यमान् पुरुष है अर्थात् संकल्पमात्र भ्रमत्पसे सिद्धिको देखते हैं इसी कारण सम्पूर्ण संगोंसे विरक्त हुए बुद्धि इन्द्रिय मन प्राणोंको विषयोंसे रोकते हैं वे अधिकारी हैं ॥ ३४ ॥ कामरूपवाले मुझको मन करके कोईभी नहीं जान सकता कारण कि वे पंचेन्द्रियोंसे अनेक प्रकार बंध रहे हैं और “अपामसोममृता भवेम” आदि नानार्थवाद फलमें पड़े हैं ॥ ३५ ॥ जो रामकृष्णादि अनेक रूप धारण करनेवाले विष्णुको प्रणवादि उच्चारण कर देखते हैं अर्थात् प्रथम स्थूल पूजासे अन्तर दृढ़ हो जाय इस कारण वात्सल्यमयीका वर्णन किया

जब सब जगत् लीन हो जाय तब योगीको अव्यक्तरूपका भान हो जाता है ॥ ३६ ॥ जो धर्ममार्गमें स्थित हो मेरे विषे प्राप्त होंगे वे स्वर्गजित होकर क्लमरहित हो मुझको देख सकते हैं ॥ ३७ ॥ और जो मेरुपृष्ठमें प्रांशुरूप पर्वत है अर्थात् भूषणमें समष्टि अहंकार है इसपर स्थित हो अविव्याके संग युद्धमें इन्द्रियरूप प्राणत्यागसे निर्मल हो ॥ ३८ ॥ अप्सराओंके साथ समागमको प्राप्त हो मनकी समान वेगवान् होकर विचरें, इस प्रकार नन्दन और काम्यक वनको प्राप्त हो ॥ ३९ ॥ इस विद्याको प्राप्त हुए मेरे भक्त अनेक प्रकारके बहुतसे व्रत करके शरीरको त्याग करेंगे ॥ ४० ॥ सिद्धिको प्राप्त हो वे मनुष्य इच्छानुसार कामनाओंको प्राप्त होते हैं उस लोक और इस लोकमें यथासुखसे जा सकते हैं ॥ ४१ ॥ जब तपसे उक्त ये च मामभिरोद्देयुर्नरा धर्मपथे स्थिताः ॥ तेऽपि स्वर्गजितः सन्तः पश्येयुर्मा गतक्रमाः ॥ ३७ ॥ यश्चैव पर्वतः प्रांशुर्मेरुपृष्ठे व्यवस्थितः ॥ एतमारुह्य युध्येयुः प्राणत्यागेषु निर्मलाः ॥ ३८ ॥ अप्सरोभिः समागम्य विचरेयुर्मनोजवाः ॥ नन्दनं वनमारुह्य काम्यकं च महद्वनम् ॥ ३९ ॥ इमां विद्यां समास्थाय मद्भक्ताः पुष्करेष्विह ॥ शरीरं क्षपयिष्यान्ति व्रतेर्बहुविधैः कृतेः ॥ ४० ॥ सिद्धिं प्राप्य क्रमेयुस्ते कामैर्बहुविधैर्नराः ॥ इमं लोकममुं चैव संपतेयुर्यथासुखम् ॥ ४१ ॥ गौरी सिद्धेति व्याख्याता त्रिषु लोकेषु विद्यया ॥ प्रभावं तपसा वृत्तं दर्शयन्ति समाहिताः ॥ ४२ ॥ षण्णां ज्ञानाभिसंधीनामभिज्ञानात्ससंग्रहाः ॥ भवेयुस्ते निरारम्भा धातुनिर्मुक्तबन्धनाः ॥ ४३ ॥ सहस्रगुणमप्यत्र दत्त्वा दानफलादिव ॥ अवमानेन विप्राणां मनःशुद्धेन कर्मणा ॥ ४४ ॥ सर्वत्रैवाप्रमेयेण अत्यन्तं फलमामुयुः ॥ असुर्षिर्मल्लोके धर्मज्ञा सह सर्वकुलोद्भवैः ॥ ४५ ॥ प्रकारका प्रभाव हो जाता है तब विद्या अर्थात् शास्त्राचार्यके उपदेशज्ञानसे गौरी परब्रह्मविदको त्रिलोकीमें सिद्ध हुई दीखती है ॥ ४२ ॥ वे योगी जन ज्ञानवृत्तिमें रहनेसे धातुनिर्मुक्त होते हैं अर्थात् उनका बंध छूट जाता है और वे ज्ञान होनेसे निरालम्ब हैं ॥ ४३ ॥ जैसे कोई अपराधी सहस्रगुण राजाको कर देकर दानफलसे राजाकी प्रीतिसे मुक्त होता है इस प्रकार शुद्धमन ब्राह्मणोंके सम्मानसे और शुद्ध कामरहित मनसे बंधनसे मुक्त हो जाते हैं ॥ ४४ ॥ सब जगद् असंकुचित मनसे अत्यन्त दुःखका परिहार परमेश्वरकी प्रीति ब्रह्मलोकमें पूर्वजोंके सहित उनको प्राप्त होती है जो धर्मज्ञ

हैं ॥ ४५ ॥ जिन यजमानोंका ब्राह्मणकुलके साथ यज्ञमें सान्निध्य होता है वे यजमानादिनीं वारंवार यज्ञमें अभिषेकको प्राप्त हो पूर्वोक्त फलको प्राप्त होते हैं ॥ ४६ ॥ जैसे दानयज्ञसे सम्पत्ति मानते हो, तथा ब्रह्मविद्याकी सम्पत्ति तपोधनके आगे स्थित मानते हो तो ऐसा न मानिये, कारण कि भूतोंपर अनुग्रह करनेके निमित्त धर्मचारिणी अर्थात् बाह्य दान यज्ञ दानादिसे बाह्य सम्पत्ति साध्य हैं वह परिमित सम्पत्ति है और मानसी होनेसे अनन्त है ॥ ४७ ॥ यदि ऐसा है तो दानादिक करनेसे क्या लाभ है. यह गौरिरूप आत्मा सत्यस्वरूप और अबाधित है. यह सत्यरूप होगी इसमें सन्देह नहीं. चित्तशुद्धि आदिसे जो इस प्रकार धर्माचरण करता है वह अफलताको प्राप्त नहीं हो सका ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि प्राषायां

येषामिह च सान्निध्यं यज्ञे ब्राह्मणसंकुले ॥ ते भूयो यजमानाद्या अभिषिच्य पुनः पुनः ॥ ४६ ॥ तथा तां मन्यसे गौरीं मनसा धर्मचारिणिम् ॥ अनुग्रहाय भूतानां तन्ममाग्रे तपोधने ॥ ४७ ॥ सत्य एष परोविद्ये भविता नात्र संशयः ॥ नाफलो विद्यते धर्म-
श्रित्ते धर्मचारिणा ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि सप्तविंशतितमोऽध्यायः ॥ २७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ दिशं जिगमिषुर्दिव्यामुत्तरां सत्यसाधनः ॥ तथा स धातुनिचये पुण्ये पर्वतरोधसि ॥ १ ॥ विष्णुः परमधर्मात्मा एकपादेन तिष्ठति ॥ दश वर्षसहस्राणि पुष्करे पुष्करेक्षणः ॥ २ ॥ आत्मन्यात्मानमाधाय तपसा ब्रह्मसंभवः ॥ घटते कर्मणोग्रेण लोकमुत्थानकारणात् ॥ ३ ॥ भासुरो भस्मनाच्छाद्य गात्राणि स्वयमात्मनः ॥ अष्टौ वर्षसहस्राणि सहस्रं च तपोधनः ॥ ४ ॥ तेजसा तेन ज्योतीषि विभाव्य ब्राह्मणपर्वभः ॥ तिष्ठते नभसो मध्ये योगात्मा भावयन् जगत् ॥ ५ ॥

सप्तविंशतितमोऽध्यायः ॥ २७ ॥ वैशम्पायन बोले, मोक्ष अवस्थाको प्राप्त होनेवाले उत्तरदिशारूप मोक्षमें जानेकी इच्छासे उस धातुसमूहवाले पर्वत (नासामूल भूसंधि) में ॥ १ ॥ परम धर्मात्मा विष्णु हृदयरूपी आकाशमें विश्व तैजस प्राज्ञ तुरीय चार चरणोंमेंसे तुरीयपादसे स्थित होता है. अर्थात् निर्विकल्प समाधिसे स्थित होता है. वह पुष्करलोचन दश सहस्र वर्ष स्थित हो ॥ २ ॥ शुद्धआत्मामें मायोपाधिक शरीरको लीन कर उग्रकर्मसे मुक्तिके निमित्त चेष्टा करता है ॥ ३ ॥ भस्मसे अंगोंको आच्छादन कर नौ सहस्र वर्षतक वह तपोधन ॥ ४ ॥ ब्राह्मणभेद अपने तेजसे प्रसिद्ध तारकादि ज्योति-

योंको व्याप्त करके सब जगत्को भावना करते हुए योगात्मा आकाशके मध्यमें स्थित होते हैं ॥ ५ ॥ सोम अर्थात् चन्द्रमाके विषयका अधिकार करके मनसे मनको धारण करके वह धर्मात्मा ब्राह्मी सिद्धिको प्राप्त होकर ॥ ६ ॥ दिवि भुविके मध्यमें सब ओरसे केवल प्रकाश कर्म बहुरूप सम्पदासे करता हुआ ॥ ७ ॥ वह माहेश्वर गूढात्मा वृष (धर्म) रूपसे स्थित होता है, वह धर्म अहिंसागर्भ जादिरूप निष्काम सकाम दक्षिण चरण है और हिंसागर्भ यज्ञादिरूप सकाम निष्काम उत्तर चरण है, उभयमें निष्काम जादिरूप चरणको आगे करके ॥ ८ ॥ नौ सहस्र वर्षतक महायोगी महादेव ब्रह्मसंभव नियमसे युक्त होता है ॥ ९ ॥ अब योगज धर्मसे विश्वको द्योतन करते हुए वृषरूप शंकरसे मेघकी उत्पत्ति कहते हैं, पश्चात् शिवके अन्तर

सोमो विषयमाक्षिप्य मनसा धारयन्मनः ॥ युक्तः परमधर्मात्मा ब्राह्मी सिद्धिमुपागतः ॥ ६ ॥ संप्रपश्यत सर्वत्र दिवि भुव्यन्तरे तथा ॥ ज्योतिष्णु कम कुर्वाणो बहुरूपः स सम्पदा ॥ ७ ॥ महेश्वरोऽतिगूढात्मा वृषरूपेण तिष्ठति ॥ उद्धृत्य दक्षिणं पादं वायुभक्षः समाहितः ॥ ८ ॥ अष्टौ वर्षसहस्राणि सहस्रशतमेव च ॥ महायोगी महादेवो नियमाद्ब्रह्मसंभवः ॥ ९ ॥ अथ वायुर्वर्चनीभूतो अन्ते चरति गोपतेः ॥ फेनीभूतं समुद्रारेः पवनं निर्गिरन्मुखात् ॥ १० ॥ स निष्क्रान्तस्ततो वक्रात्प्राणेन परमात्मवान् ॥ निर्यासभूतो पतितो नैवाद्रौ नैव पार्थिवः ॥ ११ ॥ स फेनो वारिणाविश्य चचार वसुधातले ॥ नैवाद्रौ नैव शुष्काङ्गो वायुसंघातमागतः ॥ १२ ॥ तत्कालफेनमुत्क्षिप्य पवनः सह वारिणा ॥ निराळम्बे निराळं वस्त्वङ्गानि समपद्यत ॥ १३ ॥ ते क्षिपन्ति पयो भूमा वात्मानं स्वेन घट्टिताः ॥ नीलमेघारुणप्रख्या नैवाद्रौ नैव पार्थिवाः ॥ १४ ॥

धनीभूत अर्थात् निरीडित रुईकी तरह धनीभूत हुआ वायु होता है तब फेनीभूत वायुको मुखसे बाहर निकालते हैं ॥ १० ॥ वह प्राणद्वारा मुखसे निकलकर वायुसे वृक्षके मटरूप होकर गिरा न बोह गीला था और न पाषाणाधिकोंकी समान शुष्क था ॥ ११ ॥ वह शिवके मुखसे निकला फेन धर्मकोशाकार जलको ग्रहण कर न गीला न सूखा आकाशमें विचरता वायुके संघातको प्राप्त हो गया ॥ १२ ॥ तब उसी समय वायु जलके सहित फेनको उठाके आभयरहित आकाशमें प्राप्त करता है, जिससे मेघ होते हैं ॥ १३ ॥ वे परस्पर स्वयं विघटित होनेसे घनत्व और नीलवर्णको प्राप्त हुए

सूर्यद्वारा घनीभूत हो पृथ्वीपर जल बरसाते हैं ॥ १४ ॥ फिर सर्वत्र जानेवाला वायु ब्राह्मणेश्वर्यको प्राप्त होकर एक सहस्र वर्षतक तप करता हुआ ॥ १५ ॥ और अग्निभी बहुतसी जटाओंको धारण कर तथा चौर बल्कल वस्त्र पहरे अनाहार उस पुष्करमें तप करने लगा अर्थात् वायुसे अग्नि हुआ ॥ १६ ॥ और उनको तप करते चार सहस्र वर्ष बीच गये तब तपके तेजसे महान् अग्नि प्रवृत्त हुआ ॥ १७ ॥ वह स्वर्गवासी अन्धकारहारी प्रकाश करके स्वर्गमें दिव्य ब्राह्मणरूप धारण कर तप करता रहा ॥ १८ ॥ स्वर्ग प्रकाश करनेवाली अग्निका जो तम है वह मनुष्योंके लोकमें स्थित है अर्थात् धूममार्ग मनुष्योंका है उस तेजका संहार (समूह) रूप सूर्य है ॥ १९ ॥ वह सब भूत और मनुष्योंके तेजको आक्षिप्त करके वर्तता है ब्राह्मी मूर्ति समाधाय वायुः सर्वत्रगो वशी ॥ समाः सहस्रं संपूर्णं चचार विपुलं तपः ॥ १५ ॥ वह्निर्वहुजटी भूत्वा चीरबल्कलवास-भृत् ॥ तपस्तप्यदनाहारो मोनमास्थाय पोष्करे ॥ १६ ॥ वर्षाणां च सहस्राणि त्रीणि चैकं च यत्नतः ॥ तस्याग्नेस्तेजःसंभूतो महानग्निः प्रवर्तते ॥ १७ ॥ स्वर्गप्रकाशं कृत्वा च स्वर्गवासी तमोनुदः ॥ दिवि भूतप्रकाशाख्यस्तपसा ब्रह्मसंभवः ॥ १८ ॥ तत्तमो भुवि राजेन्द्र मानुषेषु प्रतिष्ठितम् ॥ भास्करस्तेजसंहारस्ततो भवति सत्तमः ॥ १९ ॥ मर्त्यानां सर्वभूतानां तेज आक्षिप्य वर्तते ॥ नतु योगबले राजन् ब्राह्मणस्य विशेषतः ॥ २० ॥ तत्तमो नाक्षयेद्रात्रौ नाप्यहो भविताऽद्वयम् ॥ पुष्पमित्रो महातेजा यक्षः सर्वत्रगो वशी ॥ तपश्चरति धर्मात्मा पुष्करेषु समाहितः ॥ २१ ॥ महेन्द्रशिखरद्वारा यावन्त्यो यान्ति मेदिनीम् ॥ तावत्स्वरूपमास्थाय तिष्ठते निखिलाः समाः ॥ २२ ॥

परन्तु योगबलसे ब्राह्मणोंका तेज नहीं हरण करता है ॥ २० ॥ वह उक्त गुणके सूर्य उस अंधकारको रात्रिमें नाश करता हुआ अर्थात् रात्रिमेंभी आस्तघन करनेवालेकी धूमगति नाशते हुए अपनी गति प्रदान करते हैं और दिनमें मृत्युको प्राप्त होनेपरभी अयोगीको अचिरादि मार्गकी प्राप्ति नहीं होती, अद्वैतवादी पुरुषकोही दिनरात किसी समय भरे तोभी श्रेष्ठगति प्राप्त होती है और स्वस्थ कुबेर महातेजस्वी धर्मात्मा आकाशमें स्थित हो तप करता है ॥ २१ ॥ महेन्द्र शिखरसे जितनी धारा पृथ्वीमें आती हैं उतनेही स्वरूपमें स्थित हो बहुत समयतक तप करता है ॥ २२ ॥

और पृथ्वीमें जातुके बलसे स्थित हुआ आकाशमें सहस्र वर्षपर्यन्त बिना पलक लगाये ज्योति देसता हुआ जगत्को देसता है ॥ २३ ॥
और जब सूर्य मध्यमें प्राप्त हुए तब सूर्यकी किरणोंसे उनके अनेक नेत्र प्रकाशित हुए ॥ २४ ॥ वे नेत्रोंकी कान्ति सूर्यमण्डलसे सहस्रों ऐसे प्रकाशित हुई जैसे विद्वानोंके तेजसंयोगसे अधि प्रकाशित होती है ॥ २५ ॥ वह कुबेर विस्फुलिंगयुक्त नेत्र अन्तर्भागसे आदित्यके प्रति वर्तता है और देहारंज कर्म क्षप होनेके पीछे, अथवा युगान्तके समय ॥ २६ ॥ बहुत तापयुक्त फिर होकर वसुधातलमें स्थित हो सूर्यकी किरणोंके आश्रय सहस्र वर्षतक तप करते

जातुभ्यां पतितो भूमौ ज्योतिर्नभासि पश्यति ॥ समासद्वयं निखिलं नेत्रैरनिमिषैर्जगत् ॥ २३ ॥ नेत्राणि बहुधा तस्य नेत्रान्तेराभिनिः-
सृतः ॥ मध्यं दिनकरे प्राप्ते रश्मिवान्तस्य परिग्रहे ॥ २४ ॥ ते रश्मयः प्रभानेत्रैः शतशोऽप्य सहस्रशः ॥ राज तेजः संयोगाद्दिद्रिद्विरिव
पावकः ॥ २५ ॥ स विस्फुलिङ्गैर्नेत्रान्तेरादित्यमनुवर्तते ॥ कर्मणोऽन्ते युगान्ते वा जमतो बहुरूपिणः ॥ २६ ॥ बहुतापः पुनर्भूत्वा
विषण्णो वसुधा तले ॥ स यो रश्मिषु संपूर्णस्तपस्तेपे सुदारुणम् ॥ २७ ॥ निगृहीतेन्द्रियो भूत्वा अप्सरोभिर्लज्जाम ह ॥ मेरोः
शिखरमासाद्य कामं कामेन निर्वमन् ॥ २८ ॥ तपः कामः स यस्तु कुबेरो नरवाहनः ॥ विष्णुरेव तपोऽप्यक्षस्तेजसोऽन्ते
विजृम्भाति ॥ २९ ॥ नहि कश्चित्पुमानस्ति य एवं तप आचरेत् ॥ त्रिषु लोकेषु राजेन्द्र ऋते विष्णुं सनातनम् ॥ ३० ॥ वासुकिर्व-
दुशीर्षस्तु नागेन्द्रो मौनमास्थितः ॥ तप आचरते सम्यक् निधाय मनसा मनः ॥ ३१ ॥

रहे ॥ २७ ॥ निगृहीत इन्द्रिय हो अप्सराओंके साथ रमते रहे, मेरुपर्वतको प्राप्त हो कामको कामके द्वारा भोगते हुए ॥ २८ ॥ तपकी इच्छासे वह
नरवाहन कुबेर तपमें विष्णुरूपही है यह जानना उचित है ॥ २९ ॥ कोईभी पुरुष नहीं है जो ऐसा तप करे, हे राजेन्द्र ! त्रिलोकीमें सनातन विष्णुके सिवाय
कोईभी ऐसा नहीं है ॥ ३० ॥ वासुकी बहुत गिरवाले नागेन्द्र मौनको प्राप्त हो तप करने लगे, मनसे मनको रोक गली प्रकार तप करने लगे ॥ ३१ ॥

शेष सत्यधृति नाम बलवान् ब्रह्मसंभव धर्मात्मा वृक्षपर आरोहण कर नीचेको मुक्त कर लटकते हैं अर्थात् धूमपान करते हैं ॥ ३२ ॥
और विषको त्याग अपनी जिह्वासे शरीरको चाटते हुए पूर्ण सहस्र वर्षतक वह महात्मा निराधार रहे ॥ ३३ ॥ उस समय बहुतसा कालकूट विष
प्राप्त हुआ उसने लोकोको प्राप्त कर लिया कहीं कोई सुखको प्राप्त न हुआ ॥ ३४ ॥ यह तीक्ष्ण विष सब सर्पोंमें अनुगत है और स्थावर जंगम सब भूतोंमें
अनुगत है ॥ ३५ ॥ हे भारत ! परस्पर प्राणघाही क्रोधरूपसे तामसी तपपरिणामको प्राप्त होता है और बड़ा हुआ यह तीक्ष्णतासे अंगोंको नाश कर देता
है ॥ ३६ ॥ तब महाभाग्यवान् ब्रह्माजीने प्राणियोंके हितकी कामनासे ब्रह्माक्षरयुक्त अहिंसावाले मंत्रकी रचना की ॥ ३७ ॥ गुरुमान् सलिल मही
और मेरे जीवनभूत इन्द्रकी रक्षा करे, अथवा ब्रह्मरूपी प्रणव अहिंसकरूप अक्षर हैं, यह अमृतका बीज है विस्तारित दीर्घ पक्ष और स्वरयुक्त वं

शेषः सत्यधृतिर्नामो बलवान् ब्रह्मसंभवः ॥ वृक्षमारुह्य धर्मात्मा अवाकशीर्षोऽवलम्बते ॥ ३२ ॥ जिह्वाभिर्लेलिहानाभिर्मात्रं
विषमुत्सृजन् ॥ समाः सहस्रं सम्पूर्णं निराक्षरस्तपोधनः ॥ ३३ ॥ कालकूटं विषं तादृि सुमहत्समपद्यत ॥ येन लोको ह्यभिग्रस्तो न
सुखं विन्दते नृप ॥ ३४ ॥ सर्वत्रानुगतं तीक्ष्णं भुजङ्गेषु महीपते ॥ जङ्गमं स्थावरं चैव सर्वत्रानुगतं विषम् ॥ ३५ ॥ परस्परविबुद्धेन
हिंसायुक्तेन भारत ॥ नाशयत्यात्मनोऽङ्गानि तेन तीक्ष्णेन भारत ॥ ३६ ॥ अथ ब्रह्मा महाभागो भूतानां हितकाम्यया ॥ मन्त्रं
विसृजते राजन् ब्रह्माक्षरमहिंसकम् ॥ ३७ ॥ गुरुमन्त्रचित्तैः पक्षेर्नैसाग्रेः सलिलं महीम् ॥ समासहस्रं सम्पूर्णं त्रुलाग्रेणावलम्बिना ॥ ३८ ॥

बीज तथा नखाग्ररूपी पंचांग प्रयोगसे युक्त अथवा ॐ वां गुरुमान् हृदयाय नमः अंगुष्ठयोः । ॐ वीं गुरुमान् शिरसे स्वाहा तर्जनीयोः । ॐ वूं गुरुमान्
शिरसाय वषट् मध्यमयोः । ॐ वैं गुरुमान् कवचाय हुम् अनामिकयोः । ॐ वौं गुरुमान् नेत्रत्रयाय वौषट् कनिष्ठयोः । ॐ वः गुरुमान् अक्षाय फट्
करतलकरपृष्ठयोः । इसी प्रकार हृदयादि मूलमंत्र कहे हैं, जल वं दीजरूपी पृथ्वीको सहस्र वर्ष अर्थात् हकार सहस्र हकार सकार रेफोंके कूटवर्ण और
पिछला स्वर मुळाशिला उसके आगे वषट्कारके अवलम्बनसे स्थित है, वषट् पंचाक्षर है इसका ब्रह्मा ऋषिः गायत्री छंदः गुरुमान् देवता वं बीजम् हः
शक्तिः लं कीककं विषनाशने विनियोगः 'पर्णभारैः' यह ध्यानका श्लोक है, वह वर्णके भारसे सब पृथ्वीमें व्याप्त होकर स्थित हो रहे हैं और बाहर
भीतर सूर्य वागादि ज्योतिश्चारा नखाग्रसे अवलम्बन किये व्याप्त है इन विचित्र पर्णोंसे पृथ्वी शोभाको प्राप्त होती है ॥ ३८ ॥

जिसमें ब्रह्म विचार किया जाता है उस वसुधारूप शरीरके गर्भमें विस्तीर्ण सब ओरसे फैले हुए पक्षरूपी इन्द्रियोंके कार्य समूहसे योगियोंकी दृष्टिसे शोभित होते हैं, जिसके यह इन्द्रियरूपी पर्य प्रवृत्त हैं उसका शरीर बहुत प्रकारके विचित्र विषयोंसे शोभित होता है, जो शरीरके अन्तरमें सर्वात्मरूपसे विराजमान होता है जिससे शरीर शोभित होता है ॥ ३९ ॥ मंत्रजापका फल कहते हैं, हे भारत ! जिस मंत्रके आवर्तन करनेसे सब प्राणी जीते हैं, हे मनुष्येन्द्र ! इस लोकमें भी और देवलोकमें भी आवर्तन होता है जिस मंत्रसे निर्विषा पृथ्वी अर्थात् शरीरतलमें फैलनेवाली इन्द्रियादिसे नक्षत्रमुक्त स्वर्गकी समान शोभा होती है ॥ ४० ॥ पुष्करके जलमें अर्थात् मायाशबलके आभयभूत निर्विशेष चैतन्यमें संसाररूपी नदीमें जाग्रत स्वप्न नामक दोनों किनारोंमें चलनेवाला मत्स्वरूप जीव शिर

पर्यभारेण विकचैर्विस्तीर्णैर्वसुधातले ॥ रराज वसुधा चैव पर्णैर्बहुविचित्रितैः ॥ ३९ ॥ येन वृत्तेन जीवियुः सर्वभूतानि भारत ॥ इह लोके मनुष्येन्द्र देवलोकै च भारत ॥ द्यौरिवाचितनक्षत्रा महीतलविसर्पिभिः ॥ ४० ॥ हिमवान् हिमसंपाते भवत्येकं चरो वशी ॥ पुष्कराम्भसि घर्मात्मा मत्स्यो लिखितमूर्द्धजः ॥ ४१ ॥ अथ सुतलमाक्रम्य पृथिवी प्रांशुदेहिनी ॥ तपश्चरति घर्मात्मा बाहुमुख्यस्य दक्षिणम् ॥ ४२ ॥ साम्रं वर्षसहस्रं च शतमेकं च सुव्रत ॥ तपश्चरति संयोगाद्वापुभक्षो समाहितः ॥ ४३ ॥ समाधियोगात्सङ्गाद्वा ब्रह्मयोगस्य भारत ॥ येनेयं पृथिवी राजन् धार्यते ब्रह्मयोनिना ॥ ४४ ॥ अनाद्यन्तेन नित्येन सर्वत्र विषयेषिणा ॥ योऽसौ विष्णुरगाधात्मा परमात्मा निराकृतिः ॥ ४५ ॥ दिने निषण्णो भवति राज्ञो भवति वै स्थिरः ॥ सत्यसन्धः स घर्मात्मा कामकारकरो भवेत् ॥ ४६ ॥

निकाळे हुए निर्विशेष चैतन्यमात्रका प्राप्त होता है ॥ ४१ ॥ पीछे सुतलको प्राप्त हो प्रांशुदेहवाली पृथ्वीसे संगति करके दाहिने बाहुको उठाये (दायादिक करता हुआ) घर्मात्मा तप करता है ॥ ४२ ॥ वह समीचीन योगद्वारा ग्यारह सौ वर्षतक वायुके जक्षण करते महात्मा अनाधात्मा महात्मा विष्णु तप करते हैं ॥ ४३ ॥ हे भारत ! वह ब्रह्मके समाधियोगसे और ब्रह्मयोगसे तप करते हैं जिस ओंकारके कारण यह पृथ्वी धारण की जाती है ॥ ४४ ॥ विषयामिलायी जीवरूपसे वह आदि अन्तरहित नित्य परमात्मा निराकार विष्णु पृथ्वी धारण करता है ॥ ४५ ॥ दिनमें विद्याहीमें स्थित रात्रिमें अवि-

यामें स्थित सत्यमें स्थित धर्मोत्पत्ति विष्णु जगवान् लीलासेही सृष्टि प्रवृत्त करते हैं ॥ ४६ ॥ इन विष्णु जगवान् का पृथ्वीमें भक्तोंके निमित्त उठाया हुआ जो हाथ है सो उच्चार कहनेसे पृथ्वीकी समान है और विद्यामें सूर्य अर्थात् प्रकाश विवेकवाला है ॥ ४७ ॥ वह धर्मरूप चन्द्र मनके विषयोंसे मनके बंधको नाश करता है और ग्रहादिक अर्थात् चक्षुरादि इन्द्रियोंकी गतिको शांत करता है ॥ ४८ ॥ वही धर्म अविद्यारूप रात्रिको स्थित करता है, पृथ्वीविषे दक्षिण हस्त और चित्तकी शुद्धि करनेवाला है ॥ ४९ ॥ वही अविद्या रात्रिरूपा छाया तत्त्वज्ञानसे रहित हो पृथ्वीके छिन्नको प्राप्त हो वृत्तिकी एकामतासे चन्द्ररूप हुई अन्तमें चन्द्रमाकी तादात्म्यताको प्राप्त होती है, वह आकाशमें स्थित होती है अद्भुत है और मिथ्या होनेसे

तस्य यः सोद्यतः पाणिः पृथिव्यां पृथि वीसमः ॥ रात्रौ स तपनो भवति मण्डलं विपुलं नभः ॥ ४७ ॥ स चन्द्रविषयं राजञ्छमयामास रुन्धति ॥ ग्रहाणां गतयश्चैव ताराणां च विशेषतः ॥ ४८ ॥ तां छयामाक्षिपन्त्सोमात्स्रवद्भिर्मण्डलेन वै ॥ पृथिव्यां दक्षिणो हस्तो महायोगी महामनाः ॥ ४९ ॥ सेषा छया शशीभूता शशिमण्डलमाविशत् अलिङ्ग पृथिवीलिङ्गदद्भुतादक्षया दिवि ॥ ५० ॥ अङ्गाङ्गान्पुण्यैव तपश्चरति निश्चयात् ॥ प्रोक्ष्य पादौ तु सतलो पृथिवी तपसि स्थिता ॥ ५१ ॥ सूर्याग्निभिः पीयमानादाक्षिप्यत महितले ॥ महीमिवाम्बुवसनां युगान्ते विष्णुतेजसा ॥ ५२ ॥ रराज सूर्यराडिमभिव्यंतिपित्ता महानदी ॥ स्फाटिकेव शुभा सेषा काञ्चनेर्धातुभिर्वृता ॥ ५३ ॥ आदिन्येन समावृत्ता रश्मिर्तेजोभिसंभवेः ॥ मण्डलान्तर्गता देवी चक्षुषा नोपलभ्यते ॥ ५४ ॥

अपचयशून्य है, हवकी किरणोंकी समान मिथ्या होती है ॥ ५० ॥ पृथ्वी चन्द्ररूप किस प्रकार होती है सो कहते हैं सब अंगोंको एकत्र कर तीर्थ स्नान कर फिर यह पृथ्वी तपमें स्थित हुई ॥ ५१ ॥ इस प्रकार जलसे घनीभाररूप हुई पृथ्वी सूर्यके किरणोंद्वारा धारण होनेसे गंगारूप हुई है, वह पृथ्वी सूर्यकी किरणोंसे पीयमान होनेसे सूर्यसे मिलती हुई युगान्तमें विष्णुके तेजसे यह पृथ्वी जलरूप बसवाली होती है ॥ ५२ ॥ सूर्यकी किरणोंसे मिलनेसे वह महानदी शोभित हुई यह स्फटिकमणिकी समान मणिघातुओंसे युक्त हो महानदीरूपसे स्थित हुई ॥ ५३ ॥ रवितेजसे संभव हुई महानदी

मण्डलके अन्तर्गत होकर नेत्रोंके समक्ष नहीं होती है ॥ ५४ ॥ फिर सूर्यकी किरणोंसे उतरकर जलरूप आत्मा पृथ्वी वेगसे वहन करने लगी तब अनेक जलवाली होनेसे यह आकाशगंगा कहाती है ॥ ५५ ॥ शीत छायावाले वृक्ष सुगंधित लता विविध प्रकारके दिव्यगंधिवाले पवनोसे शोभित है ॥ ५६ ॥ सुवर्णके मुकुटवाली मणियोंकी मेखलावाली पद्मरेणुके समान सित और पीत वर्ण चक्रवाकरूपी कर्णफूलवाली ॥ ५७ ॥ नीलगर्भ सुन्दर केसोंवाली फूलोंके संचयसे व्याप्त वह भूषित प्रमदाकी समान चलती हुई शोभित हुई ॥ ५८ ॥ यह लोक धारण करनेमें रत पृथ्वी सुन्दर तप करती हुई प्रथम चन्द्ररूपसे निष्पन्न हुई पीछे गंगापनको प्राप्त हो पुष्कररूप परमात्मा द्वारा एकीभाषको प्राप्त हो सर्वके पावन करनेरूप तपके फलको प्राप्त होती रश्मिभिः पुनरुत्तीर्णा ततो योगेन धावति ॥ आकाशगङ्गा संवृता विपुलेरम्बुकिम्बेः ॥ ५९ ॥ शीतच्छायेऽथ तरुभिर्लताभिश्च सुगन्धिभिः ॥ पद्मस्रण्डैश्च विविधैः शुशुभे दिव्यगन्धिभिः ॥ ६० ॥ काञ्चनापीडिजघना स्फाटिकान्तरमेखला ॥ पद्मरेणुसिता पीता चक्रवाकावतंसिका ॥ ६१ ॥ नीलगर्भसुकेशान्ता पुष्पसंचयसंकुला ॥ शोभते विप्रसर्पन्ती प्रमदेव विभूषिता ॥ ६२ ॥ तेषां गङ्गा फलं लेभे पुष्करेण समाहिता ॥ सुतपा चन्द्रविहिता लोकानां धारणे रता ॥ ६३ ॥ सरस्वती स्वैर्व्यक्तैरधीते ऋषादिनी ॥ पृष्ठात्प्रयाता शैलेन्द्रे मन्दरे मन्दगामिनी ॥ ६४ ॥ ऋद्धमर्याश्चतुरो वेदान्पादैस्तुर्भिरावृतान् ॥ यजुर्भिः सामभिश्चैव ग्रथिताऽऽह्वया तदा ॥ ६५ ॥ ऊषिभिर्ज्वलनप्रसूयेस्तपसा दग्धकिल्बिषैः ॥ सुपार्श्वस्थ गिरेः पादे परिदायेः सुपारणेः ॥ ६६ ॥ निःस्वनं सर्वभूतानि नियमैश्च न शृण्वते ॥ मन्दराग्रे विसर्पन्तं जगत्कूटमतीन्द्रियम् ॥ ६७ ॥

हुई ॥ ५९ ॥ फिर वह पृथ्वी गंगारूप होकर सरस्वतरूप हो अकार उकार मकारको कहती है और व्यक्तस्वरोंसे वेदोंको कहती है और मन्दरारूप अर्थात् नासा और भुकुटीस्थानमें स्थित होती है ॥ ६० ॥ चार पादोंसे आवृत ऋद्धमय चार वेदोंको शिक्षा करके कहती है अर्थात् ऋक् यजु साम वेदको और अथर्वको शिक्षा कर कहती है ॥ ६१ ॥ तपसे दग्धपाप हुए अधिकी समान तेजस्वी स्थूलसूक्ष्मरूपी पर्वतके एक देश अर्थात् भूनासामें ऋषियोंसे परोक्षार होता है ॥ ६२ ॥ सम्पूर्ण प्राणी इस ब्रह्मारूप नादको नियमसेभी नहीं सुन सकते हैं

वह मन्दररूपी स्थूल प्रपंचके अग्रभागमें अधिक प्रथम अतिस्थूल होनेसे सम्पूर्ण जगत् व्याप कर रक्ता है परन्तु सूक्ष्मरूप होनेसे दुर्भास है ॥ ६३ ॥
 सब प्राणी जुष हुष विरामनियमको प्राप्त हो जाते हैं तब वह सरस्वती नियमसे कुछ नहीं कहती, “यतो वाचो निवर्तन्ते” ॥ ६४ ॥ सुष्ठुति समा-
 धिमें सब प्राणियोंके तूष्णीभूत हो जानेमें फिर कोई बलसे कुछ कहनेको समर्थ नहीं है ॥ ६५ ॥ वह सरस्वती मनभे योगका विभाग करके सब
 भूतोंमें अनुग्रहके वास्ते महास्वन अर्थात् ब्रह्मका ज्ञान करा देती है ॥ ६६ ॥ फिर सरस्वतीके साथ युक्त हो देहधारी शिक्षा ग्रहण करते हैं उसीमें
 फिर वे शिक्षासे आत्माका गायन करते हैं ॥ ६७ ॥ आकृष्य वसु रुद्र मरुत अश्विनीकुमारोंके साथ जटिल चीर वस्त्र पहरे मुंज मेखला धारण
 विरामनियम प्राप्त तूष्णीभूता बभूव ह ॥ न वाचमीरयेदेवी नियमात्सत्यवादिनी ॥ ६४ ॥ अथ भूतानि सर्वाणि तूष्णीं भूतानि
 सर्वशः ॥ न शेकुरभिधानार्थं व्याहृतं वदनेर्बलात् ॥ ६५ ॥ विभज्य योगं मनसा सर्वभूतेष्वनुग्रहम् ॥ सरस्वती तीरयुता व्याजहार
 महास्वनम् ॥ ६६ ॥ सरस्वत्या समापुक्तां शिक्षां गृह्णन्ति देहिनः ॥ तस्मिन्नेवाय ते सर्वे गानं गायन्ति शिक्षया ॥ ६७ ॥
 आदित्या वसवो रुद्रा मरुतश्चाश्विभिः सह ॥ जटिला चीरवस्त्रा मुञ्जमेखलधारिणः ॥ ६८ ॥ गन्धर्वाः किन्नराश्चैव सनामाः सह-
 चाम्भसः ॥ तपश्चरन्ति सहिताः पुष्करेषु मनीषिणः ॥ ६९ ॥ अपि कीटपतङ्गैश्च सह सर्वैः सरीसृपैः ॥ श्लोषयन्ति झरीराणि तप-
 सोम्रेण यत्नतः ॥ ७० ॥ विष्णुर्विष्णुत्वमाप्नो देहान्तरविसृष्टवान् ॥ संरक्षति महायोगी सर्वास्तान्महत्चारिणः ॥ ७१ ॥ पुष्करे
 रमते विष्णुर्विष्णुरेव द्विधा कृतः ॥ दीप्यमानः स्वतेजोभिर्विभूम इव पावकः ॥ ७२ ॥

किये ॥ ६८ ॥ गन्धर्व किन्नर नाग वरुण यह सब महात्मा पुष्करमें तप करते हैं कीट पतंग और सब सरीसृप जीवोंके सहित बड़े तप यत्नसे शरीरको
 सुखाते हैं ॥ ६९ ॥ इस प्रकार शरीररूप पृथ्वीको योगबलसे जलाविभाषमें परिणय करके शब्दादिके आकारसे सब लोकके हितके विमिश्र होती है
 इसी प्रकार शरीराभिमानोंको वाच्यवाचकके अभेद होनेसे जीवसे अन्य कोई ईश्वर नहीं है इसर कहते हैं ॥ ७० ॥ परमात्मा विष्णु व्यापकपनको
 प्राप्त होकरभी देहान्तर चतुर्भुजरूप हो व्यापकरूपसे पालन करनेको अशक्त होकर चतुर्भुजविग्रह यन्त्रादिभोक्ता प्राणियोंके नियन्ता होकर उन आदि-
 त्यादिकी रक्षा करते हैं ॥ ७१ ॥ सर्वकार्यान्महत् जगत्में विष्णुही नारायणरूपसे रमण करता है और भ्रमरहिन अश्विनी सप्तान अपने तेजोंसे व्याप

होता है ॥ ७२ ॥ वह अग्नि मनसे उत्पन्न हुआ पृथ्वीको तापित करता हुआ अर्थात् मनकल्पित गार्हपत्यादिरूप होकर पृथ्वी अग्निमानी देहकी इच्छा करता है फिर अग्निहोत्रादिसे तिस कर्मरूप होकर गति सकर्मरूप होकर गति देता है ॥ ७३ ॥ और वेहआत्मवादी विष्णुकी सामर्थ्यसे मोहादि दग्ध हो जाते हैं और अग्निरूप विष्णु दीप्त रहते हैं ॥ ७४ ॥ और निष्णुरूपमें विषयासक्त हो जाते हैं वे विष्णुर्लिप्त ब्रह्मादिके उल्लंघनमें समर्थ नहीं हैं जिस प्रकार कोई सूर्यको उल्लंघन नहीं कर सकता ॥ ७५ ॥ सो विष्णु अपने बड़े प्रकाशकरके द्रव्य देवतादिको अनेक प्रकारसे स्थित हुआ कति-

सोऽग्निर्मनःसमुद्भूतः पृथिवीं तापयन्निव ॥ प्रधावति समं तेन मण्डलं दशयोजनम् ॥ ७३ ॥ विरराजार्चिभिर्वीतिः पृष्ठतश्चावल-
म्बिभिः ॥ विशीर्णं पार्थिविभवेर्मयूखैरिव दीपितः ॥ ७४ ॥ तस्याग्नेर्विस्फुलिङ्गानां न शेकुर्लङ्घने रताः ॥ विप्रप्रकर्णस्य वसुधामर्या-
दामिव भास्करम् ॥ ७५ ॥ सोऽग्निर्दीप्य विभज्यांश्शुन्विधूम इव पावकः ॥ ऋत्विग्भिर्ज्वलनपत्यैर्विक्रीयत इवाध्वरे ॥ ७६ ॥
सोऽग्निर्धूमागतस्तत्र तिष्ठते विपुलं तदा ॥ यावद्विष्णुः क्रमप्राप्तो नियमस्य समापनात् ॥ ७७ ॥ रक्षां कृत्वा स्थितं विद्याद्विष्णु-
र्विष्णुपराक्रमः ॥ भूत्वा क्षतशरीरो वे नागो बालाहकोऽभवत् ॥ ७८ ॥ तमग्निमात्मसंसृष्टं लेलिहानं महामातिम् ॥ प्रतिप्रवृत्तं
तेजोभिर्भूतानां हितकाम्यया ॥ ७९ ॥ वारिणा सुखशीतेन प्राणिनां प्राणवर्द्धनः ॥ न्यविञ्चदहनं तत्र नागो बालाहकस्तदा ॥ ८० ॥
ततः सिद्धगणैर्जुष्टः पुष्करे तपते तपः ॥ संहृत्य मनसात्मानं महायोगी महाबलः ॥ ८१ ॥

जोद्वारा अनेक प्रकारसे किया जाता है ॥ ७६ ॥ वह अग्नि उस यज्ञमें द्रव्यदेवतादिके रूपासे प्रकाशमान हो निर्धूमअग्निकी समान स्थित होता है और फलरूपसे विष्णु अनन्त पृथ्वीको आक्रमण करता है ॥ ७७ ॥ रक्षा करके स्थित हुए विष्णुको कोई नहीं जानता वह विष्णुही शतशरीर होकर मेघमें स्थित होते हैं अर्थात् यज्ञफलभी विष्णुरूप है ॥ ७८ ॥ और विष्णुही जठराग्निरूप होकर भूतोंके हितके निमित्त वर्षा करता है ॥ ७९ ॥ और उस पुष्करमें उपजी हुई अपनी रची उग्र अग्निको आप प्राणियोंका प्राणरूप मेघ होकर शान्त करता है ॥ ८० ॥ फिर सिद्धगणोंके सहित महा-

योगी महाबली विष्णु मनसे आत्माको ग्रहण करतप करते हैं ॥ ८१ ॥ चरण अंगोंको संकुचित कर मनको शिरमें धारण कर अचलस्थानको प्राप्त हो विष्णुजीने मौन धारण किया ॥ ८२ ॥ जिसमें कोई उपाधि और विकल्प नहीं है यही धर्मोंका धर्म है यही दोनों लोकमें सब प्राणियोंका हित करता है ॥ ८३ ॥ तब हत हुए दैत्य अपने २ शशोंको ग्रहण कर मायासे प्राप्त अनेक नगरोंसे आच्छादित हुए अर्थात् इसमेंभी योगसर्प उपस्थित होते हैं जो कामादि दैत्य योगारंभसे पहले जीते गये वे समग्रकालमें शरीरोंसे आच्छादित हुए अब उठाने लगे ॥ ८४ ॥ उस ज्ञान और प्रकाशित रूप तेजमान् विष्णुको पर्वतादिरूप दिग्बनितादिके शरीरोंसे बुझाने लगे वे दैत्य महाबली बड़े शरीरवाले थे ॥ ८५ ॥

पादमात्राणि संहृत्य मनो मूर्ध्नि विधारयन् ॥ अचलं स्थानमासाद्य तूर्णोभूतो बभूव ह ॥ ८२ ॥ एष धर्मो हि धर्माणां नोपधान-
विकल्पितः ॥ हितः सर्वेषु भूतेषु इह चामुत्र चोभयोः ॥ ८३ ॥ अथ दैत्या इतास्तत्र समागम्योद्यतायुधाः ॥ मायाप्राप्तेर्बहुवि-
धेनैर्गैरविसंवृताः ॥ ८४ ॥ अग्निं दैत्याः पर्वताग्रेरभिघ्नन्ति परंतप ॥ ज्वलन्तं ज्वलनप्रख्या महाकाया महाबलाः ॥ ८५ ॥
मेधीभूताश्च मायाभिर्वर्षन्ति बलदर्पिताः ॥ तस्मिन्नेवाभिसंघाते संघातं महाबलम् ॥ ८६ ॥ ते शैलास्त्वर्चिषा दग्धाः शतशोऽथ
सहस्रशः ॥ युगान्ते प्रभुरादित्यः प्रजा इव दिघक्षति ॥ ८७ ॥ न शेकुरग्निं दैत्यास्ते मायाभिर्मुखमुद्यतम् ॥ आदित्य इव दीप्यन्ते
नभः सूर्योदये यथा ॥ ८८ ॥ विहितैरुद्यमैः सर्वेर्दैत्या भग्नपराक्रमाः ॥ गन्धमादनमासाद्य निषण्णा नगमूर्धनि ॥ ८९ ॥ स चाग्नि-
र्वैष्णवैर्लोकैर्विद्यद्भिः सह संगताः ॥ अन्तरिक्षचरान्दैत्यान्निर्दहन्विचरान्दिवि ॥ ९० ॥

वे मेधीभूत हुए बलदर्पित हो माया कर जल वर्षाने लगे और मिलकर महाबल करने लगे ॥ ८६ ॥ वे सैकड़ों बनितादिक पर्वत इस तेजकी कान्तिसे दग्ध हो गये, जैसे युगान्तमें आदित्य प्रजा भस्म करनेको उद्यत होता है इस प्रकार वह अग्नि दीप्त हुई ॥ ८७ ॥ मायासे वे दैत्य मुक्त उठानेको उनके सन्मुख समर्थ न हुए और सूर्यके उदयमें आकाशकी समान वह प्रदीप्त हुआ ॥ ८८ ॥ अनेक उद्यम करनेपरभी दैत्योंका पराक्रम न चल सका तब वे गन्धमादन पर्वतके शिरोभागमें स्थित हुए ॥ ८९ ॥ और वह अग्नि उस लोकमें वैष्णवतेजयुक्त विद्वानोंसे संगतिको प्राप्त हो अन्तरिक्षमें रहनेवाले

कामादि दैत्योंको दग्ध करता हुआ स्वर्गमें विचरने लगा ॥ ९० ॥ इस प्रकार योगी उपद्रवोंको जीत यज्ञादिकलक्षण धर्मको वृष्टि आदिके द्वारा प्राप्त होता है तब वह विष्णुही ब्रह्मसे वृष्टिरूप हो मेघसंघातको प्राप्त हो पृथ्वीमें वर्षा करते हैं ॥ ९१ ॥ वृष्टिकी अधिष्ठात्री देवता ब्राह्मणोंके सुखादिद्वारा कहे मंत्रोंसे प्रेरित हुआ ब्राह्मणसंताति भूतलोकको जलसे पुण्डित करता है ॥ ९२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायाम् अष्टाविंशति-तमोऽध्यायः ॥ २८ ॥ जनमेजय बोले: तब वे देवता अचलभावको प्राप्त हो परस्पर क्या करने लगे, जो बात तपसे प्राप्त न हो सके वह लोकमें

नागो बलाहकश्चैव मेघसंघातमागतः ॥ मुमोच सखिलं भूमौ पर्जन्य इव वृष्टिमान् ॥ ९१ ॥ मन्त्रैः संचोदितो नागो द्विजेभ्यो वदनोद्भूतैः ॥ मुमोच तोयसंघातं मानयन्विप्रं जनम् ॥ ९२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि अष्टाविंशति-तमोऽध्यायः ॥ २८ ॥ जनमेजय उवाच ॥ संबुज्य तपसा देवाः किमकुर्वन्स्ततः परम् ॥ नहि तद्विद्यते लोके तपसा यन्न लभ्यते ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अथ दीक्षां समास्थाय सर्वे विष्णुमया गणाः ॥ पुष्करादग्निमुद्धृत्य प्रणयि च यथाविधि ॥ २ ॥ जुहुवुर्मन्त्र-विधिना ब्राह्मणा मन्त्रचोदिताः ॥ हविषा मन्त्रपूतेन यथा वै विधिरेव च ॥ ३ ॥ स चाग्निर्विधिवत्तत्र वर्धते ब्रह्मतेजसा ॥ तेजोभिर्बहुलीभूतः प्रभुः पुरुषविग्रहः ॥ ४ ॥ ब्रह्मदण्डी इति ख्यातो वपुषा निर्दहन्निव ॥ दिव्यरूपप्रहरणो ह्यसिचर्मधनुर्धरः ॥ ५ ॥ सगदो लाङ्गली चक्री शरी चर्मी परश्वधी ॥ शूली वज्री खड्गपाणिः शक्तिमान्वरकार्पुकः ॥ ६ ॥ विष्णुश्चक्ररः खड्गी मुसली लाङ्गलायुधः ॥ नरो लाङ्गलमालम्ब्य मुसल च महाबलः ॥ ७ ॥

नहीं है ॥ १ ॥ वैशम्पायन बोले, सम्पूर्ण विष्णुमय गण दीक्षाको प्राप्त हो पुष्करसे यथाविधि अग्निका उद्धार कर ॥ २ ॥ ब्रह्माकी प्रेरणा की हुई मंत्रविधिसे हवन करने लगे, वह हवि मंत्रसे पवित्र हुई विधिपूर्वक दी जाती थी ॥ ३ ॥ वह अग्नि विधिपूर्वक ब्रह्मकान्तिसे युक्त हो बहुत तेजोंके मिलनेसे पुष्कराकार हो गई ॥ ४ ॥ वह ब्रह्मदण्ड नामसे विख्यात शरीरको भस्म करते हुएकी समान दिव्यरूप प्रहारवाला धनुषधारी ॥ ५ ॥ महा लांगल चक्र शर चर्म परशु शूल वज्र लिये खड्ग हाथमें धारे शक्तिमान् सुन्दर धनुष लिये ॥ ६ ॥ विष्णु चक्रधारी मुसल और लांगल हाथमें लिये

नरलांगलको अवलम्बन किये सुसल लिये वह महाबली ॥ ७ ॥ तपके योगसे इन्द्रक वज्रसेनी अधिकें कान्तिपान् वज्र लिये; महादेव शूल और पिनाकको मनसे धारण करते हुए ॥ ८ ॥ मृत्यु दण्डको, वरुण पाशको, और काल शक्तिको ग्रहण करता हुआ, त्वष्टाने फरशा, कुबेरने फरशा ग्रहण किया ॥ ९ ॥ औरभी सैकड़ों निर्विकारताको प्राप्त होते हुए विश्वकर्मा और त्वष्टा अनेक शस्त्रोंको बनाते हुए ॥ १० ॥ इन्द्र अग्नि और सूर्य तथा रुद्रके निमित्त रथप्रदान किया ॥ ११ ॥ वेदरीतिसे त्वष्टाने रथोंकी सेना निर्माण की और विश्वकर्माने बहुतसे विमान बनाये ॥ १२ ॥ सत्यपराक्रमी विष्णुने अव्यय पुष्कर नाम शरीरके अंशसे सेनाको निर्माण किया ॥ १३ ॥ सूर्य और नक्षत्रोंकी स्थितिके अर्थ विष्णुने बाणसे आकाशकी रचना की जिसके पूजन कर संघाममें वज्रमिन्द्रस्तपोयोगाच्छतपर्वाणमक्षिपत् ॥ रुद्रः शूतं पिनाकं च मनसाधारयद्भुवि ॥ ८ ॥ मृत्युर्दण्डं पाशमापः कालः शक्तिरगृह्ण ॥ जग्राह परशुं त्वष्टा कुबेरश्च परश्वधम् ॥ ९ ॥ निर्विकारैः समायुक्ताः शतशोऽप्य सहस्रशः ॥ विश्वकर्मा च त्वष्टा च चक्राते ह्यायुधं बहु ॥ १० ॥ इन्द्रायाग्निरयं प्रादात्सूर्याय च प्रतापिने ॥ परमात्मा ददौ कृष्णो रुद्राय च महात्मने ॥ ११ ॥ छन्दोभिरेव त्वष्टा च स चकाराय वाहिनीम् ॥ विश्वकर्मा विमानानि चकार बहुभिः क्रमैः ॥ १२ ॥ शरीरांशं समुत्पत्य विष्णुः सत्यपराक्रमः ॥ पुष्करात्पर्वाणि वनात्पृतनार्यं प्रवर्तयन् ॥ १३ ॥ यो चैव सर्वैरज्ञाणां वाचा वै समकल्पयत् ॥ यथा स पूज्यः संग्रामे शत्रून्निर्विभिदे रणे ॥ १४ ॥ स तं दण्डं समुचितं निर्विकारं समाहितम् ॥ ब्रह्मा जग्राह विधिना अन्तर्धानगतः प्रभुः ॥ १५ ॥ स्वैः प्रभावेऽथ विधिना सोऽस्त्रग्रामं चतुर्विधम् ॥ ऐन्द्रमाग्नेयवायव्ये रौद्रं रौद्रेण वर्चसा ॥ १६ ॥ एभिर्विकारैः संयुक्ता दितेः पुत्रा महाबलाः ॥ तमसा शिक्षया चैव स्वास्त्रैः प्रहरणेऽपि ॥ १७ ॥ बलेन चतुरङ्गेण वीर्येण सुसमाहिताः ॥ अप्रभृष्या रणे सर्वे समपद्यन्त वै तदा ॥ १८ ॥ शत्रुभेद किये जाते हैं ॥ १४ ॥ वह ब्रह्मरूपी विष्णु अन्तरमें अमुरोंके ऊपर प्रहार किये इन्द्रके दण्डको अन्तर्धान होकर ग्रहण करता हुआ ॥ १५ ॥ वह अपने प्रभाव और विधिसे चार प्रकारके अस्त्रग्रामको ऐन्द्रास्त्र आग्नेयास्त्र वायव्यास्त्र रौद्रास्त्र ॥ १६ ॥ इन विकारोंसे संयुक्त हो वे महाबली दितिके पुत्र तप शिक्षा और अपने अस्त्रोंके प्रहारसे ॥ १७ ॥ चतुरंग बल और वीर्यसे सावधान हुए युद्धसे न भागनेवाले सब विचरने लगे ॥ १८ ॥

६. वं.

६०

वह दितिपुत्र गुह्य सूत्रात्मकस्वरूप छोटकर भोग्यवस्तुयुक्त रथमें स्थित हुए मन्दररूप स्थूल कार्यके एकदेशमें विचरने लगे ॥ १९ ॥ तमके कार्य असुररूपको संहार करके वह महायोगरूप विष्णु पृथ्वीतलमें विचरने लगे ॥ २० ॥ तब फिरभी वे देवता ब्राह्मण आदिके साथ जो चर्म चीर धारण करनेवाले थे फिर महातप करने लगे अर्थात् मुमुक्षु सात्विक धर्मका बारंबार आदर करते हैं ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्य-पर्वणि प्राचायां एकोनविंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥ जन्मेजय बोले, (इस प्रकार तामसजनकी बारंबार संसारप्राप्ति सनकर दयापूर्वक उनकी गति जाननेकी

ते विहाय मुह्यमध्य सभाण्डोपस्करे रथे ॥ मन्दरस्य मिरेः पादे विचेरुर्वसुधातले ॥ १९ ॥ चतुरङ्गं बलं सर्वं संहृत्य तमसः प्रभुः ॥ विष्णुरेव महायोगश्च चार वसुधातले ॥ २० ॥ भूयोऽन्यत्तप आसेदुश्चरन्तो ब्राह्मणेः सह ॥ तैश्च सर्वैः सुरगणैर्धर्मचरिनिवासिभिः ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकोनविंशत्तमोऽध्यायः ॥ २९ ॥ जनमेजय उवाच ॥ ब्रह्मन् खिले वर्तमाने निर्मेर्यादे महाप्रहे ॥ अविनाशे च भूतानां कथमासन्प्रजास्तदा ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अभ्यषिञ्चत्पृथुं कैथं पुरा राज्ये प्रजा-पतिः ॥ राज्याय ऋषिभिः सार्धं प्रजाधर्मपरायणः ॥ २ ॥ एष नः परमो राजा सानुरागादजायत ॥ त्रेतायां संप्रवृत्तायामन्यो-न्यमनुजलिपे ॥ ३ ॥ एष नो वृत्तिदाता च विप्राणां च प्रवर्तिता ॥ निर्माता सर्वभूतानां सत्यप्राप्तेन कर्मण ॥ ४ ॥ एतास्मिन्नतरं देवा गन्धमादनसानुषु ॥ बहुभिर्नियमैः श्रान्ता निषण्णा मिरिसानुषु ॥ ५ ॥

(इच्छासे जन्मेजय बोले) जब शंकुस्तुल्य महाअज्ञान हृदयमें वर्तमान होता है इस अविनाशी कार्यमें कैसे दुःखकी परंपरा हुई कैसे प्रजा हुई ॥ १ ॥ वैशंपायन बोले; पहले प्रजापतिने वैश्वराजाको राज्यमें अतिषेक किया था, वह प्रजाधर्ममें परायण हो ऋषियोंके साथ राज्य करने लगे ॥ २ ॥ यह हमारे परम राजा अनुरामसे हुए हैं इस प्रकार त्रेताकी प्रवृत्तिमें सब कहने लगे ॥ ३ ॥ वृत्तिके देनेवाले ब्राह्मणोंके प्रवृत्त करनेवाले सत्यद्वारा सब भूतोंके निर्माण करनेवाले हैं ऐसा प्रजा कहने लगी ॥ ४ ॥ इसी समय देवता गन्धमादन वर्तकके सानुओंमें बहुतसे शान्त होकर बैठ गये (अपने धर्ममें

स्थित प्रजा होनेसे जो परमात्माके भक्त हैं वेही मुक्ति पाते हैं यह कथा रूपसे वर्णन करते हैं) ॥ ५ ॥ तब देवता और मनुष्य चारों ओरसे गंधिको प्राप्त हो वसन्तसमय प्राप्त होनेपर उस गंधसे दर्पित हुए बोले ॥ ६ ॥ कि यह पवनके द्वारा लाई हुई सुगंधि है या कुछ और है यह मनकी ग्रहण करनेवाली उत्तम पार्थिव गंध है ॥ ७ ॥ वे देख्य उस गंधसे किंचित् विस्मयको प्राप्त हो प्रसन्नमन हो परम सुखी हुए ॥ ८ ॥ उस गंधसे दर्पित हो सब कहने लगे कि पुष्पमात्रकीही क्या यह गन्ध है ॥ ९ ॥ विविध प्रकारके कर्म बुद्धि अनुमानसे जानना चाहिये, बुद्धिके प्रमाणसे शुभाशुभका ज्ञान होता है ॥ १० ॥ जिस कारणसे कि योगफल भेद्य है यह अनुमानसे निश्चय किया है, इस कारणसे पयस्वी अमृत ज्ञानसाधनमें समुद्रतुल्य देहके मध्यमें औषधो

अय गन्धं समासाद्य समन्ताद्देवमानवाः ॥ माधवे समयं प्राप्ते तेन गन्धेन दर्पिताः ॥ ६ ॥ पुष्पमात्रस्य यद्वीर्यं मारुतेन विसर्पितम् ॥ मनोग्राहि सुखं सर्वं पार्थिवं गन्धमुत्तमम् ॥ ७ ॥ ते देत्यास्तेन गन्धेन किंचिद्विस्मयमागतः ॥ प्रसन्नमनसो भूत्वा परं सौख्यमुपागताः ॥ ८ ॥ ऊचुश्च संहिताः सर्वे तेन गन्धेन दर्पिताः ॥ पुष्पमात्रस्य यद्वीर्यं किं तस्य फलतो भवेत् ॥ ९ ॥ अनुमानेन विज्ञेया विविधाः कर्मबुद्ध्यः ॥ शुभाश्चैवाशुभाश्चैव बुद्धिप्राणेन देहिनाम् ॥ १० ॥ तस्माद्वयं पयोमध्ये औषध्यो निर्मयामहे ॥ मन्दरेण विशालेन बलिना कामरूपिणा ॥ ११ ॥ समुद्रमभिसंरम्भान्मथनीमः सोमजं जलम् ॥ पत्वा च संहिताः सर्वे प्रस्थिता कामरूपिणः ॥ १२ ॥ विष्णुरेवाग्रणीस्तेषां भविष्यति महाबलः ॥ दिवं च वसुधां चैव भोक्ष्याम सह शत्रुभिः ॥ १३ ॥ समूलपत्रशाखाश्च सपुष्पाः फलशालिनः ॥ सर्वे ग्रहाश्च गृहीमः सुधां च वसुधातले ॥ १४ ॥

संभव देहको डालकर विवेकद्वारा साधन करें ॥ ११ ॥ इस समुद्रको इस अमृतके निमित्त हम मथन करेंगे और उसे पानकर सब कामरूपही विचरेगे, यह कह सब अविद्यानाशके निमित्त प्रस्थित हुए ॥ १२ ॥ इस कार्यमें महाबली विष्णुही हमारे अग्रणी होंगे उससे हम सत्पुंसकल्प होंगे तब हम स्वर्ग और पृथ्वीको कामादि शत्रुओंको भोंगेंगे ॥ १३ ॥ मूल पत्र शाखा पुष्प फलके खानेवाले हम वसुधातलमें सब ग्रहोंमें ग्रहण करेंगे अर्थात् मूल पित्रादि पत्र भार्यादिक शाखा भ्रातादि पुष्पादि अपत्यादिकोंके सहित सब एकात्मग्रह मोक्षको भोंगेंगे, (बल होकर बलको प्राप्त होता है फिर उसके

माण उत्क्रमण नहीं होते) ॥ १४ ॥ गन्धमादनके सालुतागमें हुए गिरिवृन्नादि उखाड़कर मंदरके कंठमें वचन कहने लगे अर्थात् गुरु शिष्य संकेत-
पूर्वक देहके प्रलापन कर ब्रह्माण्डके अन्तर्गत उसमें निमग्न वासनाके उद्धार करनेका ॥ १५ ॥ पृथ्वीको कंपायमान करते हुए उखाड़नेको धावमान हुए
और इस निश्चयसे वे महावीर्यवाले बड़ी बलिष्ठ भुजाओंसे ॥ १६ ॥ वे दनुवंशमें उत्पन्न हुए उसे उखाड़नेको समर्थ न हुए और शृंगोंको तानकर स्थित
हुए अर्थात् मंदररूप देहके उन्मूलन करनेको बड़ी भुजा प्राणायामादि द्वारा धावमान होने हुए समस्त मेदिनीरूप ब्रह्माण्डको कम्पित करने लगे ॥ १७ ॥
फिर आत्मासे आत्माको समाधान कर तपसे पापराहित होकर कामरूपी शिरोद्वारा ब्रह्माको प्राप्त होते हैं ॥ १८ ॥ सर्व जाननेवाले ब्रह्माजी उनके मनो-
उद्दन्य गिरिपादेभ्यो गन्धमादनसालुजान् ॥ प्रभाष्य वचनं देत्या मन्दरस्य प्रकम्पने ॥ १५ ॥ समुद्धर्तुं प्रधावन्तः कम्पयन्ति स्म
मेदिनीम् ॥ निश्चयेन महावीर्या बाहुभिः परिणाहिभिः ॥ १६ ॥ न शक्नुस्ते समुद्धर्तुं शैलेन्द्रं दनुवंशजाः ॥ निपेतुर्जानुभिर्धृष्टा
विपुले पर्वतान्तरे ॥ १७ ॥ समाधायात्मनात्मानं तपसा दग्धकिल्बिषाः ॥ पितामहं प्रपद्यन्ते शिरोभिः कामरूपिभिः ॥ १८ ॥
तेषां मनोऽभिलषितं ब्रह्मा सर्वत्रगो वशी ॥ ज्ञात्वा बहुविधैर्वाक्यैर्व्याजदार सरस्वतीम् ॥ १९ ॥ अशरीरां शरीरस्थः परया
वर्णसम्पदा ॥ सर्वलोकपतिर्ब्रह्मा लोकानां हितकाम्पया ॥ २० ॥ आदित्यैर्वसुभिश्चैव रुद्रैश्च समरुद्रणैः ॥ देवैर्यक्षैः सगन्धर्वैः किन्नरैश्च
प्रगायिभिः ॥ २१ ॥ समेत्य संहितैः सर्वैः शक्य उद्धरितुं गिरिः ॥ अमृतार्थे महातेजा धातुभिः समराजितः ॥ २२ ॥ सुरासुरगणाः
सर्वे समुत्पाट्य महागिरिम् ॥ हस्तारूढाः प्रपश्यन्ति वीरुधो हिमवद्रसम् ॥ २३ ॥

मिलापको जानकर बहुत प्रकारके वाक्योंसे सरस्वतीको बुलाते हुए ॥ १९ ॥ वह शरीररहित प्रणवरूपी सरस्वती शरीरमें स्थित अन्तर्यामी वैखरी
आदि परम वाणीसे बहुतसे वाक्यों (ओमित्येकाक्षरमिदं सर्वमित्यादौकात्यप्रतिपादकवाक्यों) से उपदेश देते हुए यह ब्रह्माने लोकोंको हितकी काम-
नासे किया ॥ २० ॥ आदित्य वसु रुद्र मरुद्गण देवता यक्ष गन्धर्व किन्नर इन गानेवालोंके साथ ॥ २१ ॥ इकट्ठे अर्थात् मनके एकीभावाको प्राप्त होकर
रत्नी अमृतके निमित्त शरीररूपी पर्वतके उठानेमें समर्थ न हुए वह वातादि धातुओंसे रंजित महातेजयुक्त था ॥ २२ ॥ तब सब सुर असुरगण उस

महापर्वतको उखाड़कर बेलोंके रसोंसे युक्त हाथमें आरूढ देखने लगे (अर्थात् हृदयाकाशमें वासना संततिरूपसे देहांग शून्य देखने लगे) ॥ २३ ॥
यह वचन सुनकर उनके समीपमें बड़े बली दैत्य मन और वाणियोंसे ॥ २४ ॥ क्रीडा करते हुए बहुत प्रकारसे उस समुद्रमें पुष्कर अर्थात् मथनदण्डके
समीपमें स्थित हुए तब देवदानवोंके सहित ॥ २५ ॥ सब सुर असुरगण परस्पर भिलकर पुष्करको मंदर और वासुकीको नेती बनाय ॥ २६ ॥
उसमें औषधी डालकर सहस्र वर्षपर्यन्त मथते रहे अर्थात् सनालकमलके सदृश मथन दण्ड हैं, पुष्कररूप देह है मन समुद्र वासना औषधी उस देहमें
डाल वासुकीरूप सर्पाकार कुंडलीको नेत्रयोगमार्गद्वारा आनयन करके अर्थात् मूलबंधसे कुंडलीको जगाकर १००० वर्षतक मथनेसे अमृत

एतच्छ्रुत्वा च वचनं सर्वेषामन्तिके तदा ॥ दैतेया बाहुबलिनो मनोभिर्वाग्भिरेव च ॥ २४ ॥ विक्रीडभूता बहुधा बभ्रुवुर्लवणाम्भसः ॥
यत्र पुष्करविन्यस्तः सहितैर्देवदानवैः ॥ २५ ॥ सुरासुरगणाः सर्वे सहिता लवणाम्भसः ॥ मन्दरं पुष्करं कृत्वा नेत्रं वासुकिमेव
च ॥ २६ ॥ समाः सहस्रं मथितं जलमौषधिभिः सह ॥ क्षीरभूतं समायोगादमृतं समपद्यत ॥ २७ ॥ तज्जहुरसुराः पूर्वमाक्रान्ता
लोभमन्युना ॥ धन्वन्तरिस्तथा मद्यं श्रीदेवी कौस्तुभो माणिः ॥ २८ ॥ शशाङ्को विमलश्चापि समुत्तस्थुः समन्ततः ॥ उच्चैः श्रवा इयो
रम्यः पांयूषं तदनन्तरम् ॥ २९ ॥

क्षीरकी समान निकला (मन शुद्ध सत्व निर्मल हो गया) ॥ २७ ॥ लोभ और क्रोधसे आक्रान्त हो सम्पूर्ण असुरोंने प्रथम उसे ग्रहण कर लिया
अर्थात् योगके विघ्न प्राप्त हुए उहाँ विघ्नोंको जीतकर योगी सिद्ध होता है, धन्वन्तरि मद्य लक्ष्मी देवी कौस्तुभ माणि ॥ २८ ॥ उज्ज्वल चन्द्र या उच्चैः-
श्रवा घोड़ा यह निकला, उसके उपरान्त अमृत निकला धन्वन्तरि आदिसे तात्पर्य सिद्धिसे है धन्वन्तरिशब्दसे लघुता आरोग्यता अलोलुपता वर्णप्रसाद
स्वरसौष्ठवता विदित होती है, मद्यशब्दसे मधुमयादि योगीके चित्तकी उन्माद करनेवाली भूमि योगशान्तिमें प्रसिद्ध है श्रीसे ऋगादिरूप वेदविद्या कौस्तुभसे
देहकी कान्ति चन्द्रमासे गुणोंद्वारा आह्लादकता उच्चैःश्रवासे दूर दर्शन दूर अवगण पारिजातादिसे सुगन्धिता इनके उपरान्त निर्विशेष कैवल्यरूप प्रवृत्त

होता है इनमें मय असुरोंको और शेष सब देवतोंको प्राप्त हुआ ॥ २९ ॥ अब राहुकी कथाके मुत्ससे कपटी विद्यार्थियोंका नाश कथन करते हैं। जब दैत्योंने अमृत लिया तब विष्णु वंचित कर देवतोंको अमृत देने लगे तब राहु देवतोंकी पंक्तिमें छलसे देवता बन जा बैठा तब उसको देखकर देवताओंने कह दिया यह दैत्य है तब उसको अमृत न मिला इस प्रकार दैत्य और दानव कोई अमृत न पी सके ॥ ३० ॥ तब नारायणने चक्रसे उसका शिर छेदन कर डाला, इस प्रकार पितृगण और सनातन मुनियोंसे नहीं छोड़ा हुआ ॥ ३१ ॥ वह अमृत इन्द्रके हाथ लगा और ब्रह्माक्यसे प्रेरणा की हुई पृथ्वी इन्द्रके हाथ आई अर्थात् ब्रह्माक्य 'तत्त्वमसि' आदि पृथ्वी शिष्यपनको प्राप्त हुई ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेख हरिवंशे भविष्यपर्वणि पञ्चाद्देवास्तदा दातुमुद्यता राहुमब्रुवन् ॥ न तु केचित्पिबन्ति स्म दैत्या नैव च दानवाः ॥ ३० ॥ चिच्छेदाथ हरिः संख्ये राहोश्चक्रेण कं तदा ॥ अनिर्मुक्तं पितृगणैर्मुनिभिश्च सनातनैः ॥ ३१ ॥ तदिन्द्रहस्तादमृतं जहार पृथिवी स्वयम् ॥ जगामाङ्गता देवी ब्रह्माक्य-प्रचोदिता ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेख हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रिशोऽध्यायः ॥ ३० ॥ जनमेजय उवाच ॥ निहते दैत्यसंघाते विष्णोश्चातिपराक्रमे ॥ दैतेया दानवेयाश्च किमिच्छन्ति पराक्रमात् ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ दानवा राज्यमिच्छन्ति पराक्रम्य महाबलाः ॥ तप इच्छन्ति सहिता देवाः सत्यपराक्रमाः ॥ २ ॥ जनमेजय उवाच ॥ कथं कालस्य महतो हिरण्यकाशिपुस्तदा ॥ यजते ब्रह्मणः क्षेत्रे प्रातेश्वर्यः स कामदः ॥ ३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ यजेद्बहुसुवर्णेन राजसूयेन पार्थिवः ॥ ऋतुना दानवश्रेष्ठो वसुधायां महाफलः ॥ ४ ॥ गङ्गायमुनयोर्मध्ये यदभूद्विपुलं तपः ॥ समेयुस्तत्र सहिता यजमाने महासुरे ॥ ५ ॥ भाषायां त्रिशोऽध्यायः ॥ ३० ॥ जनमेजय बोले, विष्णुने जब महापराक्रमी दैत्योंका वध किया तब दैत्य और दानव पराक्रमसे क्या करने लगे अर्थात् मोक्षसे निरस्त हो क्या करने लगे ॥ १ ॥ वैशम्पायन बोले, दानव तो पराक्रमसे राज्यकी इच्छा करते हैं और सत्यपराक्रमी देवता तपकी इच्छा करते हैं ॥ २ ॥ जनमेजय बोले, ऐश्वर्यसे संयुक्त कामनाके देनेवाले हिरण्यकशिपु बलि राजा ब्रह्मक्षेत्र (भूनासिकाक्षप गंगायमुनाके) मध्यमें ऐश्वर्य और कामनावाला यज्ञ करने लगे ॥ ३ ॥ वैशम्पायन बोले, कि वह राजा बहुत सुवर्णकी दक्षिणावाले यज्ञको विधिते करता हुआ वह दानवश्रेष्ठ पृथ्वीमें यजन करने लगा ॥ ४ ॥ गंगायमुनाके बीचमें जो बड़ा तप किया गया था वहां उस महाअसुर यजमानके यज्ञमें ॥ ५ ॥

वेदके ज्ञाता ब्राह्मण महाव्रतपरायण तथा हे भारत । औरभी अनेक सिद्ध योगधर्मसे प्राप्त आये ॥ ६ ॥ और न्यायधर्मसे शोभित वालखिल्यादि ऋषि
 औरभी धर्मपरायण अनेक ब्राह्मण ॥ ७ ॥ महाभागी ऋषि ब्राह्मणोंसे पूजित सहस्रों अनेक प्रकारोंके ऐश्वर्योंसहित इधर उधरसे आये ॥ ८ ॥ पुत्रसाहित
 शुक्राचार्य राजाको यजन कराता था । हिरण्यकशिपु (बलि) के मध्यमें गणांक प्रभुने ॥ ९ ॥ इस प्रकारके वचन वामनजीसे कहे कि मैं तुमको वर
 देता हूं मांगो (इस कथामें यह वार्ता दिसाई है कि मैं जिसके ऊपर उठा करता हूँ उसका प्रथम धन हरण करता हूं) ॥ १० ॥ वामनरूपसे विष्णुजीने
 ब्राह्मणा वेदविद्वांसो महाव्रतपरायणाः ॥ यतयश्चापरे सिद्धा योगधर्मेण भारत ॥ ६ ॥ मुनयो वालखिल्याश्च धन्या धर्मेण शोभिताः ॥
 बहवो हि द्विजा मरुया नित्या धर्मपरायणाः ॥ ७ ॥ ऋषयश्च महाभगा विप्रैः पूज्याः सहस्रशः ॥ विपुलेत्र विभवेर्हि यमाणेस्ततस्ततः ॥ ८ ॥
 शुक्रस्तु सह पुत्रेण देत्यं याजयते प्रभुः ॥ हिरण्यकशिपुं मध्ये गणानां प्रभवः प्रभुः ॥ ९ ॥ हिरण्यकशिपुश्चैव व्याजहार सरस्वतीम् ॥
 कामाद्वरं ददातीति तद्वै संप्रतिपद्यताम् ॥ १० ॥ विष्णुर्वामनरूपेण भिक्षां तां प्रतिगृह्णाति ॥ हिरण्यकशिपोर्द्विस्ताद्रे पदे पदमेव
 च ॥ ११ ॥ ततः क्रमितुमारेभे विष्णुः सत्यपराक्रमः ॥ त्रिलोकान्मुनिभिः कान्तोर्दिव्यं वपुरधारयन् ॥ १२ ॥ हृतराज्याश्च देतेयाः
 पातालविवरं ययुः ॥ ससैन्यगणसंबद्धाः सप्रासाः सास्ति तोमराः ॥ १३ ॥ सयन्त्रलगुडाश्चैव सपताकारयध्वजाः ॥ सचर्मवर्मकोशाश्च
 सायुधाः सपरश्वधाः ॥ १४ ॥ तथेन्द्रविष्णुसहिताः सद्यस्तेऽभ्युत्थिता गणाः ॥ अभ्यविश्वत्प्रमुदिता लोकानामधिपे सुराः ॥ १५ ॥
 स तान्स्वधामृतेनाशु पितृत्वे समन्तर्पयत् ॥ ब्रह्मा तदमृतं दिव्यं महेन्द्राय प्रयच्छति ॥ अक्षयश्चाव्ययश्चैव संतुतस्तेन कर्मणा ॥ १६ ॥
 उससे शिक्षा मांगी और बलिले तीन पग पृथ्वी मांगी ॥ ११ ॥ तब सत्यपराक्रमी विष्णु पृथ्वी नापने लगे, मुनियोंसे प्रार्थित हो उन्होंने त्रिलोकीको
 अतिक्रमण कर लिया ॥ १२ ॥ और राज्यासे भट्ट हो देत्य पातालको गये, वह सेनासहित सम्बद्ध होकर प्राप्त अस्ति तोमर ॥ १३ ॥ यंत्र लगुड
 पताका ध्वज रथ ढाल वर्म कोश आयुध परशे लिये ॥ १४ ॥ इन्द्र विष्णुके साथ शीघ्रतासे वे देवता उठे और लोकोंके आधिपत्यमें बलिको अभिषेक
 करते हुए ॥ १५ ॥ बलि सूर्य इन्द्रे पितरोंको सुधासे तृप्त किया और ब्रह्माने उस अमृतको महेन्द्रके निमित्त दिया वह उस कर्मसे अक्षय और अव्यय

हो गये ॥ १६ ॥ तब शत्रुओंके रुये सडे करनेवाला शंख बजाया गया वह जनितृके प्रथम पदमें शंख बजाया गया ॥ १७ ॥ उस शंखके शब्दको सुन सावधान हुए तीनों लोक इन्द्रस्वामीको प्राप्त हो परम सुख मानते हुए अर्थात् बिन्मयरूप हो परम सुख मानते हुए ॥ १८ ॥ अत्यन्त विषयोंके दूर करनेवाले शत्रोंसे जो अग्नि अर्थात् ब्रह्मसे उत्पन्न हुए थे, अग्निकी समान प्रज्वलित हुए मन्दरके अग्रभाग देहाग्रमें स्थित हुए ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रायायाम् एकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥ वैशम्पायन बोले, तब इस महोदय राज्यके वृत्तान्त स्थित होनेमें देवता और

ततः शंसुमुपाध्मासीद्विषतां लोमहर्षणम् ॥ पितामहकरोद्धतं जनितृप्रथमे पदे ॥ १७ ॥ तं श्रुत्वा शंखशब्दं तु त्रयो लोका समाहिताः ॥ निवृत्तिं परमां प्राप्ता इन्द्रं नाथमवाप्य च ॥ १८ ॥ सर्वैः प्रहरणैश्चैव संयुक्ता वह्निसंभवेः ॥ मन्दराग्रेषु विहितैर्ज्वलद्भिरिव पावकैः ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो महति वृत्तान्ते स्थिते राज्ये महोदये ॥ देवतानां मनुष्याणां सहवासोऽभवत्तदा ॥ १ ॥ एकतः समधीयन्ति सहिताः प्ररुदन्ति च ॥ स्वयं च भागं गृह्णन्ति यज्ञकर्मणि भारत ॥ २ ॥ प्राचेतसं ततो दक्षं दीक्षित्वा वै बृहस्पतिः ॥ वाजिमेधाय भगवानृषिभिः परिवारितः ॥ ३ ॥ तस्मिन्मातामहे यज्ञं दक्षस्याविदितात्मनः ॥ शामित्रमकरोद्रुद्रो भागार्थं सह नन्दिना ॥ ४ ॥ रुद्रस्यैव हि तद्रूपं द्विधाभूतं तदीप्सया ॥ जातः परमधर्मात्मा नन्दी पुरुषविग्रहः ॥ ५ ॥

मनुष्योंका एकत्र संवास होने लगा अर्थात् ब्रह्मज्ञानी होनेसे परस्पर उनमें कुछ भेद न रहा ॥ १ ॥ एकही स्थानमें सबका पठन और शब्द होने लगा, हे भारत ! यज्ञकर्ममें स्वयं भाग ग्रहण करने लगे ॥ २ ॥ तब बृहस्पतिजी प्राचेतस दक्षको दीक्षित करके अभ्यमेध यज्ञ करनेको ऋषियोंसे परिवारित हुए ॥ ३ ॥ उस अविविक्त आत्मावाले दक्षरूप मातामहके यज्ञ प्रवृत्त होनेमें (अर्थात् दक्षकन्याओंसे जगत्की प्रवृत्ति होनेसे मातामहरूप कहा) शिवने उस यज्ञमें दक्षकोही पशुरूपसे कल्पित किया ॥ ४ ॥ उसकी इच्छासे वह रुद्रकाही रूप हो गया, वह परम धर्मात्मा पुरुषरूप नंदी हो गये ॥ ५ ॥

हे राजेन्द्र ! उस योगसे वह जो सनातन ब्रह्म है उन रुद्रने वह वेदवाक्यसे प्रकाशित किया है ॥ ६ ॥ स्वरूप अरूप विरूपाक्ष और घटकी समान उदरवाले ऊर्ध्वनेत्र महाकायावाले विकट और वामन ॥ ७ ॥ तीन शिखावाले जटावाले तीन नेत्र शंकुकर्ण चौरचर्म और कूटमुद्रर हाथमें लिये ॥ ८ ॥ घंटा धारण किये मुंज मेखला धारण किये हाथमें कटक और कुंडल धारण किये ॥ ९ ॥ डिमडिम भेरी मृदङ्ग वेणु इससे परिवृत हुए देव उस यज्ञको विघ्न करने लगे ॥ १० ॥ शंख मुरज तालफल हाथमें उग्र आयुध धारण किये देव अन्तर्कर्क समान बली पिनाकधारी ॥ ११ ॥ कान्तिपोंकरके वह यज्ञवाले शोभाको प्राप्त हुए कालाग्रिकी

तेन योगेन राजेन्द्र यत्तद्ब्रह्म सनातनम् ॥ विहितं सत्यवचनेस्तेनैव परमात्मना ॥ ६ ॥ स्वरूपेश्वरूपेश्वर विरूपाक्षेघंटोदरेः ॥ ऊर्ध्वनेत्रैर्महाकायेर्विकटैर्वामनेस्तथा ॥ ७ ॥ शिखिभिर्जाटिभिश्चैव त्र्यक्षैश्च शंकुकर्णभिः ॥ चौरिभिश्चर्मिभिश्चैव कूटमुद्ररपाणिभिः ॥ ८ ॥ सघण्टाधारिभिश्चैव मुञ्जमेखलाधारिभिः ॥ सहस्तकटकेश्चैव स्वर्णकुण्डलधारिभिः ॥ ९ ॥ साडेण्डिमैः सभेरीकैः समृदङ्गैः सवेणुभिः ॥ एतेः परिवृतो देवो मखं तं समुपारुजत् ॥ १० ॥ सशङ्खमुरजैश्चापि सतालफलपाणिभिः ॥ उग्रायुधधरो देवः सपिनाक इवान्तकः ॥ ११ ॥ विरराजार्चिभिर्दीप्तैर्मखैः मखवतां वरः ॥ कालाग्रिरिव दीप्तार्चिर्जगद्गधुमिवोद्यतः ॥ १२ ॥ नन्दी पिनाकपाणिश्च जघ्नतुर्मखमुत्तमम् ॥ युगान्त इव कालाग्रिः क्षिप्रं दग्धुमिवोद्यतः ॥ १३ ॥ यूपमुत्क्षिप्य धावन्ति निशाचरगणास्तथा ॥ त्रासयन्मुनिसङ्घांश्च चौरचर्मनिवासिनः ॥ १४ ॥ हवींष्यन्ये पिबन्त्येव जिह्वाभिस्ताम्रलोचनाः ॥ भक्षयन्ति पशून्ये रसनान्तावलम्बिभिः ॥ १५ ॥

समान वह दीप्तार्चिवाले जगदके नष्ट करनेको मानो उद्यत हुए ॥ १२ ॥ नन्दी और शिव उस यज्ञको नष्ट करने लगे और कालाग्रि जैसे युगान्तमें प्रज्वलित होती है इस प्रकार यज्ञको नष्ट करने लगे ॥ १३ ॥ निशाचरगण यूप लेकर धावमान होते हैं और चौर चर्मनिवासी मुनिजनोंको त्रास देते हैं ॥ १४ ॥ दूसरे हवि पान करते हुए जिह्वा चाटते हुए ताम्रलोचन दूसरे जिह्वा निकाले अनेक प्रकारके पशुओंको भक्षण करते हुए ॥ १५ ॥

दूसरे स्तम्भोंको नष्ट करते कोई पशुओंपर प्रहार करते कोई जल अग्निके ऊपर छिड़कने लगे ॥ १६ ॥ कोई यज्ञके सोमको हरण करते हुए जो कि ताम्र और जपाकुसुमकी समान वर्णके थे और कमलदलके प्रमाणवाले हाथोंसे कुशाओंको काटने लगे ॥ १७ ॥ कोई घूपके अग्रभागोंको तोड़ते हुए कलशोंको भग्न करने लगे और कोई शांभाके निमिच लगाये सुवर्णके वृक्षोंको नष्ट करने लगे ॥ १८ ॥ वे बाणोंसे भेदकर सुवर्णके पात्रोंको तोड़ने और अरणीको मथने लगे ॥ १९ ॥ कोई प्राग्वंशको तोड़ने लगे और सावधानीसे तोड़ फोड़ करने लगे पुरोडाश खाने और नखाग्रसे चीर फाड़

मुमुचुश्चापरे यूपान्पशवः प्रहरन्ति च ॥ वह्निमध्ये प्रसिञ्चन्ति वारिभिः प्रशमाय च ॥ १६ ॥ सोममध्ये जडुः केचिन्नेत्रैस्ताम्रजपोपमैः ॥ दर्भान्केचिद्विलुम्पन्ति हस्तेः पद्मदलप्रभैः ॥ १७ ॥ बभञ्जिरे च यूषामान्कलशांश्चापि चिक्षिपुः ॥ चिच्छिदुः काञ्चनान्वृक्षाञ्छोभार्य-
मुपकल्पितान् ॥ १८ ॥ विभिदुश्चैव बाणेस्ते मुमुचुश्च हिरण्मयान् ॥ लुलुपुश्चैव पात्राणि ममग्धुधारणीमपि ॥ १९ ॥ अरुजंश्चैव प्राग्वंशं लुलुपुश्च समाहिताः ॥ चत्वादिरे पुसेडाशान्नखाग्रैश्चावर्तिरे ॥ २० ॥ एवं दिवा च रात्रौ च भिद्यमानो महामखः ॥ चुक्रोश च महानादान् भिद्यमान इवार्णवः ॥ २१ ॥ धनुः सशरमादाय पूर्वदत्तं स्वयंभुवा ॥ कृतं कीचकवेणुभ्यां समरे सुमहा-
रथः ॥ २२ ॥ प्रतिगृह्य महादेवः स शरः समयोजयत् ॥ धनुर्विगृह्य जानुभ्यां जघान स महाक्रतुम् ॥ २३ ॥ स विद्धस्तेन बाणेन खं ससुत्पातितः क्रतुः ॥ मृगो भूत्वा नर्दमानो ब्रह्माणमुपधावति ॥ २४ ॥ शरेणाभिहतस्त्राणं न लेभे प्रशमं भुवि ॥ शरणार्थी
ह्ययं प्राप्तः शरेणान्तर्गतेन च ॥ २५ ॥

करने लगे ॥ २० ॥ इस प्रकार दिनरात भिद्यमान होता हुआ महायज्ञ भिद्यमान सागरकी समान बड़ा शब्द करने लगा ॥ २१ ॥ तब पूर्वकालमें ब्रह्माजीके दिये धनुष और बाणको ग्रहण कर जो कीचकजातिके वांसेसे बना हुआ था उसे ले समरमें महारंघी महादेवजीने ॥ २२ ॥ उसे ग्रहण कर जानुपर स्थित हो उस बाणसे यज्ञको प्रहार किया ॥ २३ ॥ उस बाणसे युद्ध हो यज्ञ आकाशमार्गमें उत्पतित हुआ और मृगरूप धारण कर आकाशमार्गसे ब्रह्माके निकट गया ॥ २४ ॥ बाणके भयसे कहीं पृथ्वीमें उसको शान्तिकी प्राप्ति न हुई तब शरसे दुःखी हुआ शरणमें गया ॥ २५ ॥

तब ब्रह्माने उस मृगसे प्रार्थनापूर्वक सुन्दर वचन कहे और गम्भीरतायुक्त उत्तम स्वरसे बोले; इस रूपसे आकाशमें तू महामृगरूपसे स्थित होगा ॥ २६ ॥
 और पर्व लगे हुए बाणसे जीता जानेके कारण रुद्रके साथ नित्य नक्षत्रोंके शिरोभागमें स्थित हो ॥ २७ ॥ अक्षय अविनाशी सोमके साथ वह मृगशिर
 नाम नक्षत्रसे गमन करता है ॥ २८ ॥ वह ज्योतियोंकी ज्योति ध्रुवकाभी महाम्रुव है और बाण लगनेसे जो दिव्य रुधिर निकला है ॥ २९ ॥ और आकाशमें
 फिरनेके कारण पृथ्वीमें मिरा है यह अनेक वर्णवाला मण्डल क्षेत्र भूतोंका निमित्तभूत वर्षाकालमें वृष्टिका देनेवाला इन्द्रधनुष नामसे विरूपात
 होगा ॥ ३० ॥ इसके दर्शनसे प्राणियोंका सुख दुःख प्रवृत्त होता है, इन्द्रियभ्रवणसे आकाशमें यह प्रवृत्त होता है, हे राजन् ! मनुष्योंके नेत्र आकाशमें

तमुवाच मृगं ब्रह्मा शुभं सानुनयं वचः ॥ स्वरेणोत्तमवीर्येण गम्भीरेण सुभाषिणा ॥ एवंप्रूपो नभसि त्वं भविष्यसि महामृगः ॥ २६ ॥
 विजितश्च त्रिपर्वेण शरेणानतपर्वणा ॥ तिष्ठन्नक्षत्रशिरसि सह रुद्रेण नित्यशः ॥ २७ ॥ सोमेन सह संयुक्तो ह्यक्षयेनाव्ययेन च ॥
 दिवि संचारभूतो वै ताराभिः सह संगतः ॥ २८ ॥ ज्योतिर्भूतो ज्योतिषां त्वं ध्रुवश्चैव महाम्रुवः ॥ यच्चैतद्रुधिरं दिव्यं क्षतजादाभिनिः-
 सृतम् ॥ २९ ॥ नभस्युत्पतितं चैव प्रवेगेन प्रधावतः ॥ क्षतजं बहुवर्णं च क्षेत्रं मण्डलसंज्ञितम् ॥ निमित्तभूतं भूतानां वर्षं वर्षप्रदं
 तथा ॥ ३० ॥ सुखं दुःखं च भूतानां दर्शने संप्रवर्तते ॥ इन्द्रियभ्रवणाच्चैव नभसीन्द्रायुधोऽभवत् ॥ ३१ ॥ चक्षुषी मानुषे
 राजन्विस्मयात्समवेक्षत ॥ अद्भुतं बहुचित्रं च मनसा संप्रकल्पितम् ॥ ३२ ॥ न तु रात्रौ प्रदृश्येत स्वे सन्नह्मणि संज्ञितम् ॥ दिनस्यैव
 सदा त्वग्रे महत्कार्यं प्रदृश्यते ॥ ३३ ॥ भूमावेव समुत्तिष्ठेदाकाशे तु विलीयते ॥ शतशश्च समं सर्वे प्रधावन्ति प्रचेतसः ॥ ३४ ॥

इसके देखनेको विस्मयके साथ प्रवृत्त होते हैं, यह बड़ा अद्भुत और विचित्र मनसे कल्पना किया गया है ॥ ३१ ॥ यह सब स्वम वृत्तान्तकी समान
 रात्रिमें अविद्यासे कथन किया है, देहके आत्माभिमानरूपमें यह नहीं दीखता है ॥ ३२ ॥ ब्रह्मसंज्ञक आकाशमें रात्रिके समय यह नहीं दीखता
 अर्थात् अविद्याकी निवृत्तिमें शुद्ध ब्रह्मके उपलब्धिभूत हृदयाकाशमें यह लक्षित होता नहीं ब्रह्मरूप होनेसे दूसरी वस्तुका अवकाश कहाँ ? दिनकेही
 अग्रभागमें यह महाकार्य प्रवृत्त होता है ॥ ३३ ॥ यह अविद्यारूपी रात्रि शरीरमें उत्थित हो आकाशमें लय हो जाती है, (सर्वात्मक ब्रह्म देहात्म-

बुद्धिरूपाविद्या नाशमात्र होतेही अभिलाषके प्रति धावमान होती है) इसी प्रकार दक्षप्रजापतिके भिय सैकड़ों जहां तहां धावमान होने लगे ॥ ३४ ॥
 फिरभी रुद्रके बड़े अनुचर धनुषधारी गण तथा नंदिके साथ रुद्र स्थित हुए, जैसे युगान्तकालके समय अग्नि प्रज्वलित होती है ॥ ३५ ॥
 एक हाथमें शार्ङ्गधनुष और एक हाथमें सुदर्शन चक्र लेकर स्थित हुए ॥ ३६ ॥ दूसरे हाथमें गदा घंटा और खड्ग धारण किये इस प्रकार आयुध लेकर रुद्रके सन्मुख स्थित हुए ॥ ३७ ॥ फिर शृङ्गके अग्रभागकी समान बड़ा धनुष ग्रहण कर अनुपमेय शंस और तीक्ष्ण पर्ववाले बाण ॥ ३८ ॥

भयाद्रुद्रस्य महतो घन्विनो बाणपाणयः॥नन्दी रुद्रगणैः सार्द्धं पिनाकी समतिष्ठत ॥ युगान्तकाले ज्वलितो ब्रह्मदण्ड इषोद्यतः॥३५॥
 विष्णुः संग्रामसंभूतं प्रवृद्ध विपुलं धनुः ॥ प्रातिष्ठत महाबाहुः पाणिना चक्रमादधत् ॥ ३६ ॥ गदां सवण्टामन्येन खड्गमन्येन पाणिना ॥ प्रवृद्ध सोऽग्रतोऽतिष्ठद्रुद्रायोद्यतपाणये ॥ ३७ ॥ ततः शृङ्गाग्रसंभूतं प्रवृद्ध विपुलं धनुः ॥ शृङ्गं चाग्रतिमं लोके शरांश्चानतपर्वणः ॥ ३८ ॥ विष्णुरग्रस्थितो भाति सबलः संहताञ्जलिः ॥ बद्धगोधाङ्गुलित्राणः सचन्द्र इव तोयदः ॥ ३९ ॥ आदित्या वसवश्चैव दिव्ये प्रहरणैः सह ॥ विष्णुमेवाभितः सर्वे तिष्ठन्ति ज्वलनप्रभाः ॥ ४० ॥ मरुतश्चैव विश्वे च रुद्रमेवाभिपेदिरे ॥ गन्धर्वाः किन्नराश्चैव नागा यक्षाः सपन्नगाः ॥ ४१ ॥ ऋषयो न्यस्तदण्डाश्च उभयोः पक्षयोर्हिताः ॥ जपन्ति शान्तये नित्यं लोकानां हितकाम्यया ॥ ४२ ॥ रुद्रः श्रेणाभ्यहनत् विष्णुमेवाग्रणी रणे ॥ हृदि सर्वाङ्गसंधीषु तीक्ष्णाग्रेण सुयन्त्रिणा ॥ ४३ ॥

ग्रहण कर सबल संहत अंजलिवाले विष्णु अर्थात् धर्माधिष्ठातृदेवता विष्णु और ज्ञानाधिष्ठात्री देवता शिव गोधा अंगुलीत्राण बांधे मेघसहित चन्द्रमाकी समान शोभित हुए ॥ ३९ ॥ इनके परस्पर विरोधमें आदित्य वसु विष्णु पक्षके हो ज्ञानका द्वेष करते हैं और यह सब महाकान्तिमान् विष्णुके निकट स्थित होते हैं ॥ ४० ॥ मरुत् और विश्वेदेवा रुद्रकी ओर हुए मन्वर्व किन्नर नाग यक्ष पन्नग ॥ ४१ ॥ और दण्डत्यागी ऋषि समान दृष्टि होनेसे दोनों पक्षके आभित हुए लोगोंकी हित चाहनेके निमित्त शान्तिपाठ करने लगे ॥ ४२ ॥ रुद्रने युद्धमें बाणके प्रहारसे विष्णुको युद्धमें ताड़न

किया और तीक्ष्ण शरीरसे शरीरकी सब संधियोंमें प्रहार किया ॥ ४३ ॥ ब्रह्मसंभव सर्वात्मा विष्णु कंपित न हुए और छः इन्द्रियोंसे व्याप्त हो रोषको प्राप्त न हुए ॥ ४४ ॥ तब विष्णुजीने बाण धारण कर घटुपके ऊपर चढ़ाया और ब्रह्मदण्डीकी समान उस बाणको शिवके जनुदेश (हँसली) में प्रहार किया ॥ ४५ ॥ तब उस बाणसे विद्ध होकर महादेव कंपित न हुए जिस प्रकार वज्रसे मंदरपर्वतकी संधि कोई चलायमान नहीं कर सकता है ॥ ४६ ॥ तब विष्णुने क्रूदकर सनातन रुद्रको कंठदेशमें ग्रहण किया जिससे वह नीलकण्ठ कहलाये, इसका तात्पर्य यह है कि यद्यपि अपनी उत्पत्तिमें ज्ञानको धर्माश्रय है, उत्पन्न ज्ञान धर्मको मूलसे उच्छेद करता है तभी महात्माकोही धर्माधिकार होनेसे ज्ञानके कंठमें शिशुकी समान लग्न है ॥ ४७ ॥

न चकम्पे तदा विष्णुः सर्वात्मा ब्रह्मसंभवः ॥ न च रोषमना नित्यं वृत्तः सर्वैः षडिन्द्रियैः ॥ ४४ ॥ विष्णुश्च घटुरानम्य शरेण समयोजयत् ॥ जनुदेशे सुमोचाशु ब्रह्मदण्डमिवोद्यतम् ॥ ४५ ॥ स विद्धस्तेन बाणेन महादेवो न कम्पते ॥ वज्रेण च महासंधिर्मन्दरस्य न चालयते ॥ ४६ ॥ ततः प्रसभमाप्लुत्य रुद्रं विष्णुः सनातनम् ॥ कण्ठे जग्राह भगवान्ब्रह्मिष्ठस्ततोऽभवत् ॥ ४७ ॥ अनादिनिधनो देवः क्षमतां हि भवान्मम ॥ सर्वभूतागमाचार्यमवलम्ब्य कर्मणाम् ॥ ४८ ॥ कर्मणा चैव कर्ता च विकर्ता चैव भारत ॥ अशेषत्वाच्च भूतानां सर्वभूतेषु चोत्तमः ॥ ४९ ॥ स्वयमेव हि यत्कर्म विधत्ते कर्मयोनिषु ॥ तयोः शुभतमो राजन्स्वयमेव तथाकरोत् ॥ ५० ॥ अन्तरिक्षाच्छुभा वाचः श्रयन्ते परमाद्भुताः ॥ सिद्धानां वदनोन्मुक्ताः सनातन नमोऽस्तु ते ॥ ५१ ॥ नन्दी पिनाकमुग्रम्य बलवान् रुद्रसंभवः ॥ मूर्धन्यभिजघानाजौ विष्णुं क्रोधेन मूर्च्छितः ॥ ५२ ॥

कथाके प्रसंगसे विज्ञानकी स्तुति करते हैं, आदि अन्तरहित सर्व भूत और शास्त्रके आचार्य और महादि भूत कर्मके अचल रखनेवाले ॥ ४८ ॥ कर्मके कर्ता और विकर्ता भूतोंके अशेष सबसे उत्तम ॥ ४९ ॥ हमको क्षमा करो, आप कर्मयोनियोंमें स्वयं कर्मका विधान करते हो और हे राजन् ! जो उनमें शुभतम है वैसाही आप करते हो ॥ ५० ॥ अन्तरिक्षसे सुन्दर वाणी सुनी जाती है, जो सिद्धोंके मुत्तसे निकली हुई थी, हे सनातन देव ! आपको नमस्कार है ॥ ५१ ॥ रुद्रसंभव बलवान् नन्दी पिनाकको उठाकर क्रोधसे मूर्च्छित हुए विष्णुके मस्तकमें प्रहार करते हुए ॥ ५२ ॥

तब सुरोत्तम विष्णु (योगाख्य धर्म) नंदी (क्षुद्रज्ञान) को देखकर हास्य करते हुए और सर्वभूतति हरिने उसको स्तंभित कर दिया ॥ ५३ ॥ विष्णु ब्रह्मकी समान हो तेजसे प्रज्वलित होते हुए क्षमासे युक्त हो स्थाणुकी समान अचल स्थिते हुए अर्थात् सांख्य और योगको जो एक देखता है वही देखता है ॥ ५४ ॥ वह अचिन्त्य अप्रमेय अजेय शत्रुसूदन युगान्ताग्निकी समान होकर वह शान्तात्मा अविनाशी हरिने ॥ ५५ ॥ प्रसन्न हो हरिने रुद्रके निमित्त प्राणकी कल्पना की, कारण कि विष्णु नित्य धर्ममें तत्पर कामना त्याग किये हैं ॥ ५६ ॥ हे राजेन्द्र! विष्णुने उस यज्ञको फिर साधन किया, अर्थात् अनात्मज्ञ दक्षका यज्ञ अक्षारूपी विष्णुसे फिर सन्निधानको प्राप्त हो योगसे आत्मदर्शन और ज्ञानसे आत्मबोध इन दोनोंका विनाश किये हे महीपते !

ततः प्रहसितो विष्णुर्नन्दीं दृष्ट्वा सुरोत्तमः ॥ स्तम्भयामास भगवान्सर्वभूतपतिर्हरिः ॥ ५३ ॥ विष्णुर्ब्रह्मसमो भूत्वा तेजसा प्रज्वल-
न्निव ॥ क्षमया च समायुक्तः स्थितः स्थाणुरिवाचलः ॥ ५४ ॥ अचिन्त्यश्चाप्रमेयश्च ह्यजेयश्चाप्यरिदमः ॥ युगान्ताग्निसमो भूत्वा
शान्तात्मा हरिरव्ययः ॥ ५५ ॥ प्रसन्नः कल्पयामास भागं रुद्राय धर्मिते ॥ विष्णुर्धर्मपरो नित्यं त्यक्तकामः सुरोत्तमः ॥ ५६ ॥
विष्णुना चैव राजेन्द्र स यज्ञः संधितः पुनः ॥ यथापक्षं च ते सर्वे गणास्त्वासन्महीपते ॥ तस्मिन्पुद्गे महाघोरे विष्णुरुद्रस्य चैव
इ ॥ ५७ ॥ यथापक्षं भवद्युद्धं दक्षयज्ञविनाशने ॥ विनाशश्चैव यज्ञस्य तदा लोके प्रतिष्ठितः ॥ ५८ ॥ सर्वभूतेषु राजेन्द्र हितो
यज्ञः सनातनः ॥ दक्षो यज्ञफलं चैव प्राप्तवान्स प्रजापतिः ॥ ५९ ॥ इमां चोदाहृतां दिव्यां कथामिति स बुद्धिमान् ॥ श्रावयेद्यस्तु
विप्रेभ्यः शुचिः प्रयतमानसः ॥ ६० ॥ अधीत्य सर्वमध्यात्मं देवलोके महीयते ॥ एष पौष्करको नाम प्रादुर्भावो महात्मनः ॥ ६१ ॥
वे सब गण यथा पक्षमें स्थित हुए उस विष्णु और रुद्रके महाघोर युद्धमें ॥ ५७ ॥ दक्षयज्ञविनाशी यथापक्ष दोनोंका युद्ध हुआ अर्थात् श्रवण आसनकी
सहायवाले सांख्य और परस्पर योगके विरोध होनेमें यज्ञविनाश और ज्ञानकीही उत्कर्षता हुई, उस समय लोकमें यज्ञविनाशही प्रतिष्ठित हुआ ॥ ५८ ॥
यद्यपि ज्ञान श्रेष्ठ है तथापि उपकारी होनेसे यज्ञ श्रेष्ठ है, नहीं तो द्वारलोप हो जानेसे ज्ञानभी सिद्ध नहीं होता ॥ ५९ ॥ हे राजेन्द्र ! सर्वभूतोंमें
सनातन यज्ञ हितकारी है उस प्रजापति दक्षने यज्ञफलकी प्राप्ति की ॥ ६० ॥ इस दिव्य कथाको कहकर जो बुद्धिमान् पवित्र होकर ब्राह्मणोंके प्राप्ति सुनावे

यह कथा तो एक प्रचलन है परन्तु यह सब अध्यात्मरूप है इसके पाठ करनेसे आत्मस्वरूप देवलोकमें प्रतिष्ठा होती है यह उन महात्माका पुष्करमादु-
र्भाव है ॥ ६१ ॥ यह पुराणोंमें मैंने कृष्णद्वैपायनके मुखसे श्रवण किया है. परमर्षियोंने इसको यथायोग्य संस्कृत किया है ॥ ६२ ॥ जो इस भेद
परमपुराणको सदा अप्रमत्त होकर श्रवण करता है वह सब कामनाको प्राप्त हो शोकरहित होकर दूसरे लोकमें स्वर्गफलको भोगता है ॥ ६३ ॥
इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥ जनमेजय बोले, हे द्विजराज ! हमने पुराणोंमें अभिव तेजवाले

पुराणे पोष्करे चैव मया द्वैपायनेरितः ॥ यथावदनुपूर्वेण संस्कृतः परमर्षिभिः ॥ ६२ ॥ यश्चेनमद्यं पुरुषं पुराणं सदाप्रमत्तः
शृणुयाद्यथोक्तम् ॥ अवाप्य कामानिह वीतशोकः परत्र च स्वर्गफलानि मुक्ते ॥ ६३ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्य-
पर्वणि त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥ जनमेजय उवाच ॥ प्रादुर्भावः पुराणेषु विष्णोरभिततेजसः ॥ सतां कथयतां विप्र वाराह इति नः
श्रुतः ॥ १ ॥ न जानतेऽस्य चरितं न विधिं नैव विस्तरम् ॥ न कर्म गुणवद्भावं न हेतुं न मनीषितम् ॥ २ ॥ किमात्मको वराहोऽसौ-
का मूर्तिः कास्य देवता ॥ किमाचारः किंप्रभावः किं वा तेन पुरा कृतम् ॥ ३ ॥ एतन्मे संशयत्वेन वाराहं श्रुतिविस्तस्म ॥ यज्ञार्थं
च समेतानां द्विजातीनां मध्यत्मनाम् ॥ ४ ॥ वेशम्पायन उवाच ॥ एतत्ते कथयिष्यामि पुराणं ब्रह्मसंमितम् ॥ नानाश्रुतिसमायुक्तं
कृष्णद्वैपायनेरितम् ॥ महावराहचरितं कृष्णस्याद्भुतकर्मणः ॥ ५ ॥

विष्णुका वाराह अवतार सत्पुरुषोंसे सुना है ॥ १ ॥ उसके चरित्र और विधि विस्तारसे नहीं जानता हूं न उनके कर्म गुण भाव और हेतुको जानता
हूं ॥ २ ॥ वह वराह किस आत्मक है यज्ञमय है वा योगमय है क्या मूर्ति है शरीर भौतिक है वा मायिक है इसके अधिष्ठात्री देवता हारि
वाराह हैं क्या आचार आर प्रभाव है अथवा पूर्वमें क्या कृत्य किया था ॥ ३ ॥ हे जनवन् ! यह मुझे सन्देह है वराहचरित्र विस्तारपूर्वक कहिये
यज्ञार्थको इकट्ठे हुए ब्राह्मणोंका चरित्र मुझसे वर्णन कीजिये ॥ ४ ॥ वेशम्पायन बोले, यह ब्रह्मसंमित पुराण मैं तुमसे वर्णन करता हूं. जो अनेक

प्रकारकी श्रुतियोंसे युक्त व्यासजीने वर्णन किया है वह महावराहका चरित्र अद्भुत कर्मा श्रीकृष्णकाही है ॥ ५ ॥ हे राजन् ! जिस प्रकार नारायणने वाराहरूप धारण कर दंष्ट्रासे पृथ्वीका उद्धार किया ॥ ६ ॥ वह चरित उदारवेदकी श्रुतियोंसे अलंकृत है. हे जन्मेव्य ! इस चरित्रको पवित्र होकर मुनो ॥ ७ ॥ यह पुराण पुण्यरूप वेदोंसे सम्मत है अनेक श्रुतियोंसे युक्त है नास्तिकोंके निमित्त देना न चाहिये ॥ ८ ॥ इस संपूर्ण पुराणमें सांख्य और योग सब विधिपूर्वक कहा है. इस रीतिसे सांख्य और योगका अन्तर्भाव है वह विद्वानोंको कोई एक ग्रहण करना चाहिये, जो केवल कथामात्रो-
यथा नारायणो राजन्वाराहं वपुरास्थितः ॥ दंष्ट्राया गां समुद्रस्यामुज्जहारारिसूदनः ॥ ६ ॥ छान्दसीभिरुदाराभिः श्रुतिभिः समलंकृतः ॥ शुचिः प्रयत्नवान् भूत्वा निबोध जनमेजय ॥ ७ ॥ इदं पुराणं परमं पुण्यं वेदेष्वसंमितम् ॥ नानाश्रुतिसमायुक्तं नास्तिकाय न कीर्तयेत् ॥ ८ ॥ पुराणमेतदस्त्रिलं सांख्यं योगं तथैव च ॥ कात्स्न्येन विधिना प्रोक्तं योऽस्यार्थं ज्ञास्यते पुमान् ॥ ९ ॥ विश्वेदे-
वास्तथा साध्या रुद्रादित्यास्तथाश्विनो ॥ प्रजानां पतयश्चैव सप्त चैव महर्षयः ॥ १० ॥ मनःसंकल्पजाश्चैव पूर्वजाश्च महर्षयः ॥ वसवोऽप्सरसश्चैव गन्धर्वा यक्षराक्षसाः ॥ ११ ॥ दैत्याः पिशाचा नागाश्च भूतानि विविधानि च ॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा म्लेच्छादयो भुवि ॥ १२ ॥ चतुष्पदानि सर्वाणि तिर्यग्योनिगतानि च ॥ जङ्गमानि च सत्त्वानि यच्चान्यज्जीविसंज्ञितम् ॥ १३ ॥ पूर्णं युगसहस्रान्ते ब्रह्मेऽहनि तयागते ॥ निर्वाणे सर्वभूतानां सर्वोत्पातसमुद्भवे ॥ १४ ॥ हिरण्यरेतास्त्रिंशत्स्वस्ततो भूत्वा वृषाकपिः ॥ शिखाभिर्विविधोल्लोकान्तसंशोषयति देहिनः ॥ १५ ॥

पर्जिवी है वे अर्थानभिज्ञ हैं ॥ ९ ॥ विश्वेदेवा साध्य रुद्र आदित्य अभिनीकुमार प्रजापति सप्त महर्षि ॥ १० ॥ मनके संकल्पसे उत्पन्न और भी पूर्वज महर्षि वसु अप्सरा गन्धर्व यक्ष राक्षस ॥ ११ ॥ दैत्य पिशाच नाम अनेक प्रकारके भूत ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र म्लेच्छादि ॥ १२ ॥ संपूर्ण चतुष्पद तिर्यग्योनिके जीव सब जंगम जीव और जो जीवसंज्ञक हैं ॥ १३ ॥ सहस्रयुग पूर्ण होनेपर ब्राह्मदिनकी पूर्तिमें सब भूतोंके निर्वाण होनेमें और सब उत्पातोंके प्रादुर्भूत होनेमें ॥ १४ ॥ तब साक्षात् महादेवरूप अपनी शिखाओंसे लोकोंको कंपायमान करता हुआ शोषित करता है ॥ १५ ॥

तब उनकी तेजोराशिसे दग्ध होते हुए विषण्वदन दग्ध अंग बिगड़े हुए वर्णवाले कान्तिवाले मुखोंसे युक्त ॥ १६ ॥ सांग उपनिषद् सहित वेद इतिहा-
सादिके सहित सम्पूर्ण विद्याके आश्रय सत्यधर्ममें परायण ॥ १७ ॥ ब्रह्माको आने किये ईश्वरकी इच्छासे हुए सम्पूर्ण तैत्तिरीय करोड देवता ॥ १८ ॥
उस दिग्गके प्राप्त होनेमें उस हंस, महाअक्षरवाले ब्रह्म नारायणमें प्रवेश कर जाते हैं ॥ १९ ॥ फिर उन प्रवेश करनेवालोंके प्रवेश करनेपर फिर उत्पत्ति
होती है, जैसे सूर्यका उदय और अस्त हुआ करता है ॥ २० ॥ सहस्रयुगके पूर्ण हो जानेमें कल्पका निशेष हो जाता है उसमें कोई जीव अपने कृत्यको

दक्षमानास्ततस्तस्य तेजोराशिभिरग्रतः ॥ विषण्वर्णां दग्धाङ्गा इतार्चिष्माद्रिराननेः ॥ १६ ॥ साङ्गोपनिषदा वेदा इतिहासपुरोगमाः ॥
सर्वविद्याश्रयाश्चैव सत्यधर्मपरायणाः ॥ १७ ॥ ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा छन्दतो विश्वतोमुखम् ॥ सर्वे देवगणाश्चैव त्रयस्त्रिंशश्च कोटयः ॥ १८ ॥
तस्मिन्नदानीं संप्राप्ते त्वं हंसं मद्ब्रह्मणम् ॥ प्रविशन्ति महायोगं हरिं नारायणं प्रभुम् ॥ १९ ॥ तेषां भूयः प्रविष्टानां निधनोत्पत्तिरु-
च्यते ॥ यथा सूर्यस्य सततमुदयास्तमयाविह ॥ २० ॥ पूर्णे युगसहस्रान्ते कल्पो निःशेष उच्यते ॥ तस्मिन् जीवकृतं सर्वं निः-
शेषमवातिष्ठते ॥ २१ ॥ संहृत्य लोकान्तसर्वान्स सदेवासुरपन्नगान् ॥ कृत्वात्मगर्भे भगवानास्त एको जगद्गुरुः ॥ २२ ॥ यः स्रष्टा सर्व-
भूतानां कल्पान्तेषु पुनः पुनः ॥ अव्यक्तः शाश्वतो देवस्तस्य सर्वमिदं जगत् ॥ २३ ॥ नष्टार्ककिरणे लोके चन्द्रादिमविवर्जिते ॥
त्यक्तभूताग्निपवने क्षीणयज्ञवषट्क्रिये ॥ २४ ॥ अपक्षिगणसंचाते सर्वप्राण्यचरे पथि ॥ अमर्यादाकुले रोद्रे सर्वतस्तमसा वृते ॥ २५ ॥
अदृश्ये सर्वलोकेऽस्मिन्नभावे सर्वकर्मणाम् ॥ प्रशान्ते सर्वसंपाते नष्टे वैरपरिग्रहे ॥ २६ ॥

प्राप्त नहीं होता है ॥ २१ ॥ देव असुर पन्नगोंके सहित सम्पूर्ण लोकोंका संहार करके अपने गर्भमें सबको करके वह जगद्गुरु स्थित होते हैं ॥ २२ ॥ जो
कल्पान्तमें बारंवार सब भूतोंकी रचना करते हैं वह अव्यक्त शाश्वत देव हैं उन्हींके यह सब जगत् वशमें है ॥ २३ ॥ जब लोक चन्द्र सूर्यकी किर-
णोंसे रहित हो जाता है भूत अग्नि पवन यज्ञ और वषट्कारके हीन होनेमें ॥ २४ ॥ पक्षी और प्राणिसमूह रहित होनेपर सब मर्यादाहीन होकर रौद्र
और अंधकारसे आच्छादन होनेमें ॥ २५ ॥ सब लोकोंके अदृश्य और सब कर्मोंके अभाव होनेमें सब संतापके शान्त और वैर परिग्रहके नष्ट होनेमें ॥ २६ ॥

नारायणात्मक लोकके अपने स्वभावको प्राप्त होनेमें हृषीकेश परमेष्ठी शयन करनेकी इच्छा करते हैं ॥ २७ ॥ पीतवसन लालनेत्र कृष्णमेघकी समान कान्तिमान् सहस्र शिखायुक्त जटाभारको धारण किये ॥ २८ ॥ श्रीवत्सके पवित्र जलसे युक्त लाल चंदनसे भूषित हृदयवाले बिजलीसे युक्त मेघकी समान प्रकाशमान ॥ २९ ॥ सहस्र कमलोंकी मालासे शोभित अपनी पत्नी लक्ष्मीके देहको आश्रय कर स्थित होनेवाले ॥ ३० ॥ वह धर्मात्मा लोकके पितामह शयन कर जाते हैं, इस प्रकार वह विक्रान्त योगनिद्राको प्राप्त हो ॥ ३१ ॥ सहस्र वर्षके पूर्ण होनेमें स्वयंही विभु होकर

यते स्वभावसंस्थानं लोके नारायणात्मके ॥ परमेष्ठी हृषीकेशः शयनायोपचक्रमे ॥ २७ ॥ पीतवासा लोहिताक्षः कृष्णो जामृतसन्निभः ॥ शिखासहस्रविक्रचं जटाभारं समुद्रहन् ॥ २८ ॥ श्रीवत्सकलिलं पुण्यं रक्तचन्दनभूषितम् ॥ वक्षो विभ्रम्महाबाहुः सविद्युद्विष तोयदः ॥ २९ ॥ पुण्डरीकसहस्रस्य माल्यस्य श्लुशुभे तदा ॥ पत्नी चैव स्वयं लक्ष्मीर्वैदमावृत्य तिष्ठति ॥ ३० ॥ ततः स्वपिति धर्मात्मा सर्वलोकपितामहः ॥ किमप्यमितविक्रान्तो निद्रायोगमुपागतः ॥ ३१ ॥ ततो वर्षसहस्रे तु पूर्णे स पुरुषोत्तमः ॥ स्वयमेव विभुर्भूत्वा बुध्यते विभुषाधिपः ॥ ३२ ॥ ततश्चिन्तयते भूयः सृष्टिं लोकस्य लोककृत् ॥ पितृदेवासुरनरान्पारमेष्ठ्येन कर्मणा ॥ ३३ ॥ ततश्चिन्तयतः कार्यं देवेषु समितिर्जयः ॥ संभवं सर्वलोकस्य विदधाति स जगत्पतिः ॥ ३४ ॥ कर्ता चैव विकर्ता च संहर्ता च प्रजापतिः ॥ धाता विधाता च तथा संयमो नियमो यमः ॥ ३५ ॥ नारायणपरा देवा नारायणपराः क्रियाः ॥ नारायणपरो यज्ञो नारायणपरा श्रुतिः ॥ ३६ ॥

जामृत होते हैं ॥ ३२ ॥ तब वह लोककर्ता स्वयं सृष्टि करनेकी इच्छा करते हैं, पितृ देवता असुर मनुष्योंको परमेष्ठी क्रमसे बनानेकी इच्छा करते हैं ॥ ३३ ॥ तब वह नियामक देवताओंके कार्यकी चिन्ता करते हैं वह प्राणीपति त्रिलोकीके संभवका विधान करते हैं ॥ ३४ ॥ वही प्रजापति कर्ता विकर्ता और संहर्ता है, धाता विधाता संयम नियमरूप वही है ॥ ३५ ॥ सब देवता और सब क्रिया नारायणसे प्रवृत्त हैं सब यज्ञ और श्रुति नाराय-

नपर है ॥ ३६ ॥ मोक्ष नारायणपर और परम गति नारायणसे है धर्म और कृतु नारायणपर हैं ॥ ३७ ॥ यज्ञ तप सत्य परंपद नारायणपर है नारायणसे अधिक कोई देवता न है न होमा ॥ ३८ ॥ वही स्वयंभू ब्रह्मा और भुवनका अधिपति कहाता है वही वायु और वही सनातन यज्ञ है ॥ ३९ ॥ वही सत् असत् यज्ञ और प्रजाका करनेवाला है, जो देवताओंको जानना चाहिये वही यह सबसे भेठ है ॥ ४० ॥ इन भगवान्को प्रजापति सात ऋषि देवताओंके सहित जाननेको समर्थ नहीं हैं ॥ ४१ ॥ कोई इनके अन्तको प्राप्त नहीं हो सकता इससे यह अगन्त कहाताते हैं जो

नारायणपरो मोक्षो नारायणपरा गतिः ॥ नारायणपरो धर्मो नारायणपरः कृतुः ॥ ३७ ॥ नारायणपरं ज्ञानं नारायणपरं तपः ॥ नारायणपरं सत्यं नारायणपरं पदम् ॥ नारायणपरो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ ३८ ॥ स्वयंभूरीति विज्ञेयः स ब्रह्मा भुवनाधिपः ॥ स वायुरीति विज्ञेय एष यज्ञः सनातनः ॥ ३९ ॥ सवसन्न स विज्ञेयः स यज्ञः स प्रजाकरः ॥ यद्वेदितव्यं त्रिविधैस्तदैव परि-
विन्दति ॥ ४० ॥ यच्च वेद्यं भगवतो देवा अपि न तद्विदुः ॥ प्रजानां पतयः सप्त ऋषयश्च सङ्गमरेः ॥ ४१ ॥ नास्यान्तमाधिगच्छन्ति ततोऽनन्त इति श्रुतिः ॥ यदस्य परमं रूपं तत्र पश्यन्ति देवताः ॥ ४२ ॥ प्रादुर्भावेषु तं भूतं यत्तद्वर्चन्ति देवताः ॥ यज्ञं दर्शितवान्वेषः कस्तदन्वेष्टुमर्हति ॥ ४३ ॥ ग्रामणीः सर्वभूतानामग्निमारुतयोगीति ॥ तेजस्तस्तपसश्चैव निधानममृतस्य च ॥ ४४ ॥ चतुराश्रमवर्णेषु चातुर्होत्रफलाशनः ॥ चतुःसागरपर्यन्तश्चतुर्गुणविपत्तकः ॥ ४५ ॥ तदैव संस्तुत्य जगत्कृत्वा गर्भस्थमात्मनः ॥ सुमोक्षाण्डं महायोगी धृतं वर्षसहस्रिकम् ॥ ४६ ॥

इसका परमरूप है उसे देवता देखते हैं ॥ ४२ ॥ जो इनका प्रादुर्भावकर है उसकी देवता अर्चना करते हैं और जो रूप इन देवने नहीं दिखाया उसे कौन देख सकता है ॥ ४३ ॥ यह सब भूतोंका नेता अग्नि और पवनकी मति तेज और तप तथा अमृतके स्थान ॥ ४४ ॥ चार आश्रम और चारों वर्णोंमें चातुर्होत्रके फलभागी हो चार सागर पर्यन्त चारों युगोंके प्रवृत्त करनेवाले ॥ ४५ ॥ इस संसारको संसार कर अपने गर्भमें स्थित कर वह महायोगी सहस्रवर्षपर्यन्त धारण किये इस अण्डेको फिर त्यागन करते हैं ॥ ४६ ॥

सुर असुर ब्राह्मण अप्सराओंके गण महौषधी पर्वत यक्ष गुह्यक प्रजापति श्रुतिधर यक्ष राक्षस आदियोंके कुलको उन्होंने निर्माण किया इस प्रकार प्रभुने सब अपनी आत्मासेही रचा ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥ वैशंपायन बोले, पूर्वमें यह ब्रह्माण्ड सुवर्णरूप था प्रजापतिका मूर्तिरूप था यह वैदिकी श्रुति है ॥ १ ॥ तब सहस्रवर्षके अतन्तर प्रभुने इसके ऊर्ध्वमुखका विभेद किया और लोकोंके उत्पन्न करनेके निमित्त नीचेके मुखका भेद किया ॥ २ ॥ फिर जगत्के उत्पत्तिकारण प्रभुने जगत्को आठ प्रकारसे विभक्त किया इस

सुरासुराद्रिजभुजगाप्सरोगणैर्महौषधिशक्तिधरयक्षगुह्यकैः ॥ प्रजापतिः श्रुतिधररक्षसां कुलं तदासृजजगदिदमात्मना प्रभुः ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ जगदण्डमिदं पूर्वमासीत्सर्वं हिरण्यमयम् ॥ प्रजापतेर्मूर्तिमयमित्येवं वैदिकी श्रुतिः ॥ १ ॥ ततो वर्षसहस्रान्ते विभेदोर्ध्वमुखं विभुः ॥ लोकसंजननार्थाय विभेदाधोमुखं पुनः ॥ २ ॥ भूयोऽष्टधा विभेदाण्डं प्रभुर्वै लोकयोनिकृत् ॥ चकार जगत्स्वात्र विभागं सर्वभागवित् ॥ ३ ॥ यच्छिद्रमूर्ध्वमाकाशं परा सुकृतिनां गतिः ॥ विहितं विश्वयोगेन यदधस्तद्रसातलम् ॥ ४ ॥ यदण्डमकरोत्पूर्वं देवलोकसिसृक्षया ॥ समन्तादष्टधा यानि च्छिद्राणि कृतवांस्तु सः ॥ ५ ॥ विदिशस्ता दिशाः सर्वा मनसेवाकरोद्दिधा ॥ नानारागविरागाणि यान्यण्डशकलानि वै ॥ ६ ॥ बहुवर्णधराश्चित्रा बभूवुस्ते बलादकाः ॥ यदण्डमध्ये स्कन्धं तद्रूपमासीत्समाहितम् ॥ ७ ॥ जातरूपं तदभवत्तत्सर्वं पृथिवीतले ॥ तस्य क्लेदार्णवौषेन प्राच्छाद्यत समन्ततः ॥ ८ ॥

सब जगत्का विभाग उस जाननेवालेने किया अर्थात् वाक् पाणि पाद नाम तीन छिद्र श्रोत्र त्वक् चक्षु जिह्वा घ्राण नामक तीन छिद्र, उपस्थमें अपानका अन्तर्भाव है ॥ ३ ॥ जो ऊपरका आकाशात्मक छिद्र है वह पुण्यात्माओंकी गति है, जो योगसे विधान किया है जो नीचेका है वही रसातलका द्वार है ॥ ४ ॥ जो अण्ड प्रथम देवलोकके रचनेकी इच्छासे बनाया उसके चारों ओर उसने आठ छिद्र किये हैं ॥ ५ ॥ फिर सम्पूर्ण दिशा विदिशा मनसेही दो प्रकार की और स्थूल सूक्ष्मके भेदसे विषयोंके ग्रहण करनेवाली इन्द्रियोंकी रचना की और अनेक प्रकारके राग विराग जो अण्डके खण्ड थे ॥ ६ ॥ वे अनेक वर्णके चित्रविचित्र भेद हुए और जो अण्डके मध्यमें द्रवरूप निकला है ॥ ७ ॥ वह सब पृथ्वीमें सुवर्णनामसे विख्यात है और उसकेही

छेदसे यह चारों ओर पूर्ण स्वरूप ॥ ८ ॥ पृथ्वी युगान्तमें सागरसे पूर्ण हुईसी विदित होती है ॥ ९ ॥ जो देवलोक रचनेकी इच्छासे प्रथम अण्ड निर्माण किया उसमें जहां जहां जल भरा वहीं सुवर्णका पर्वत हुआ ॥ १० ॥ उस जलसे दिशा विविधा सब भर गई अन्तरिक्ष स्वर्ग तथा और जो कुछ है ॥ ११ ॥ वह जल जहां टपका वहीं वहीं पर्वत हो गया, तब सम्पूर्ण पर्वतोंसे पृथ्वी विषम हो गई ॥ १२ ॥ उन बहुत योजनके विस्तारवाले पर्वतजालोंके सहित महापर्वतोंसे पीडित हो व्यथित हुई ॥ १३ ॥ ओ पृथ्वीतलमें नारायणात्मक महाजल है, जो हिरण्यमय उज्ज्वल तेज और रूप-

पृथिवी निखिला राजन्युगान्ते सागरैरिव ॥ ९ ॥ यच्चाण्डमकरोत्पूर्वं देवलोकचिकीर्षया ॥ तत्र तत्सलिलं स्कन्नं सोऽभवत्काञ्चनो गिरिः ॥ १० ॥ तेनाम्भसा प्लुताः सर्वा दिशश्चोपदिशस्तथा ॥ अन्तरिक्षं च नाकं च यच्चान्यत्किञ्चिदन्तरम् ॥ ११ ॥ यत्र यत्र जलं स्कन्नं तत्र तत्र स्थितो गिरिः ॥ शैलेः समस्तेर्गहना विषमा मेदिनी भवत् ॥ १२ ॥ तेः सपर्वतजालोपैर्बहुयोजनविस्तृतैः ॥ पीडित गुरुभिर्देवी पृथिवी व्यथिताभवत् ॥ १३ ॥ महीतले भूरिजलं दिव्यं नारायणात्मकम् ॥ हिरण्यमयं समुद्दिष्टं तेजो विमलरूपितम् ॥ १४ ॥ अशक्ता वै धारयितुमधः सा प्रविवेश ह ॥ पीड्यमाना भगवतस्तेजसा तेन सा क्षितिः ॥ १५ ॥ पृथिवीं विशर्ता दृष्ट्वा तामधो मधुसूदनः ॥ उद्धारार्थं मनश्चक्रे लोकानां हितकाम्यया ॥ १६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मत्तेज एव बलवत्समासाद्य तपस्विनी ॥ रसातलं विशेद्देवी पङ्के गौरिव दुर्बला ॥ १७ ॥ धरण्युवाच ॥ त्रिविक्रमायामितविक्रमाय महानृसिंहाय चतुर्भुजाय ॥ श्रीशार्ङ्गचक्रासिगदाधराय नमोऽस्तु तस्मै पुरुषोत्तमाय ॥ १८ ॥

वाच है ॥ १४ ॥ उन जलोंको पृथ्वी धारण करनेमें समर्थ न हुई इससे पातालमें प्रवेश कर गई इस प्रकार भगवान्के तेजसे पीडित हुई महापृथ्वी प्रवेश करने लगी ॥ १५ ॥ तब मधुसूदन पृथ्वीको प्रवेश करता देख लोकोंके हितकी कामनासे उसके उद्धारकी इच्छा करने लगे ॥ १६ ॥ श्रीभगवान् बोले हे तपस्विनि ! हमारे बलिष्ठ तेजके आश्रय होकर कीचमें दुर्बल गौकी समान तू रसातलमें प्रवेश कराती है ॥ १७ ॥ धरणी बोली; त्रिविक्रम

अमितविक्रम महानृसिंह चतुर्भुज श्रीशार्ङ्ग चक्र नवा वज्रधारी पुरुषोत्तम देवको नमस्कार है ॥ १८ ॥ आपहीसे यह जगत् धारण और संहार किया जाता है. तुम भूतोंको धारण कर प्ररण पोषण करते हो ॥ १९ ॥ जो कुछ तेज और बलसे आपके द्वारा धारण किया जाता है सो आपके प्रसारसे धारण किया जाता है. मैं आपके प्रसारसे धारण करती हूं ॥ २० ॥ तुम्हारी धारण की हुई वस्तुको मैं धारण करती हूं अवृत्तको धारण नहीं करती हूं वह वस्तु संसारमें नहीं है जिसको तुम धारण नहीं करते हो ॥ २१ ॥ हे वीरपुरुष नारायण ! आपही युगयुगमें जगत्के हितको कामनासे मेरा भार उतारते

त्वयात्मना धार्यते वै त्वया संहियते जगत् ॥ त्वं धारयसि भूतानि भुवनं त्वं निभर्षि च ॥ १९ ॥ यत्त्वया धार्यते किंचित्तेजसा च बलेन च ॥ ततस्तव प्रसादेन मया पश्चात्तु धार्यते ॥ २० ॥ त्वया धृतं धारयामि नाधृतं धारयाम्यहम् ॥ नहि तद्विद्यते रूपं यस्त्वया न तु धार्यते ॥ २१ ॥ त्वमेव पुरुषो वीर नारायण युगे युगे ॥ मम भारवतरणं जगतो दितकाम्यया ॥ २२ ॥ तवैव तेजसा क्रान्तां रसातलतलं गताम् ॥ त्रायस्व मां सुरश्रेष्ठ त्वामेव शरणं गताम् ॥ २३ ॥ दानवैः पीडयमानाहं राक्षसेभ्य दुरात्मभिः ॥ त्वामेव शरणं नित्यमुपयामि सनातनम् ॥ २४ ॥ तावम्भेऽस्ति भयं भूयो यवन्न त्वां ककुप्तिनम् ॥ शरणं यामि मनसा शतशोऽप्युपलक्षये ॥ २५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मा भैर्धरणि कल्याणि शान्तिं ब्रज समाहिता ॥ एष त्वासुचितं स्थानमानयामि मनीषितम् ॥ २६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो महात्मा मनसा दिव्यं रूपमचिन्तयत् ॥ किंतु रूपमहं कृत्वा उद्धरामि वसुंधराम् ॥ २७ ॥

हो ॥ २२ ॥ तुम्हारेही तेजसे आक्रान्त हो मैं पातालमें प्रवेश करती हूं. हे सुरश्रेष्ठ ! मेरी रक्षा करो. मैं आपकी शरणमें प्राप्त हुई हूं ॥ २३ ॥ मैं दानव और दुरात्मा राक्षसोंसे पीडित हुई नित्य आपहीकी शरणको प्राप्त होती हूं ॥ २४ ॥ तबहीतक मुझको भय है जबतक मैं उन्नत कंधर तुम्हारी शरणमें जाकर प्राप्त नहीं होती हूं ॥ २५ ॥ श्रीभगवान् बोले; हे कल्याणि धरणि ! तुम जय मत करो; तावधान होकर शान्तिको प्राप्त हो यह मैं तुमको उचित स्थानमें प्राप्त करता हूं ॥ २६ ॥ वैशम्पायन बोले; तब महात्माने मनसे उस दिव्यरूपकी चिन्ता की कि रूप धारण कर

में पृथ्वीका उद्धार कहें ॥ २७ ॥ जिससे जलमें निमग्न हुई पृथ्वीका मैं उद्धार कर सकूं; यह विचार देव उस कार्यमें मति कर ॥ २८ ॥ जलकी-
 डाकी रुचिवाले वाराहरूपका स्मरण करते हुए तब भूमिभृत् भूमिके उद्धारमें युक्त हुए ॥ २९ ॥ सब प्राणियोंको अभृष्यरूप वाङ्मय ब्रह्म (वेद)
 सम्मत दश योजनके विस्तार और सौ योजनके ऊंचे ॥ ३० ॥ नीलमेघको समान मेघके गर्भनेकी समान शब्दवाले महापर्श्वतकी समान संहनन श्वेतव-
 र्णकी दीप्तिमान् उग्र डाढ़ें ॥ ३१ ॥ बिजली और अग्निकी समान प्रकाश सूर्यकी समान तेज पीन गोल चौड़े स्कंध दृप्तशार्दूलकी समान मकन करने-
 जले निमग्न धरणीं येनाहं वै समुदरे ॥ इत्येवं चिन्तयित्वा तु देवस्तत्करणे मतिम् ॥ २८ ॥ जलक्रीडारुचिस्तस्माद्वाराहं रूपम-
 स्मरत् ॥ हरिरुद्धरणे युक्तस्तदाभूदस्य भूमिभृत् ॥ २९ ॥ अभृष्यं सर्वभूतानां वाङ्मयं ब्रह्मसंमितम् ॥ दशयोजनविस्तारमुच्छिस्तं
 शतयोजनम् ॥ ३० ॥ नीलमेघप्रतीकाशं मेघस्तनितनिःस्वनम् ॥ महागिरेः संहननं श्वेतदीप्तोग्रदंष्ट्रिणम् ॥ ३१ ॥ विद्युदग्निप्रती-
 काशमादित्यसमतेजसम् ॥ पीनवृत्तायतस्कन्धं दृप्तशार्दूलगामिनम् ॥ ३२ ॥ पीनोन्नतकटीदेशं वृषलक्षणपूजितम् ॥ रूपमास्थाय
 विपुलं वाराहममिति हरिः ॥ ३३ ॥ पृथिव्युद्धरणार्थाय प्रविवेश रसातलम् ॥ वेदपद्मो यूपदंष्ट्रः क्रतुदन्तश्चितीमुखः ॥ ३४ ॥
 अग्निजिह्वो दर्भरोमा ब्रह्मशीर्षो महातपाः ॥ अहोरात्रेक्षणधरो वेदाङ्गश्रुतिभूषणः ॥ ३५ ॥ आज्यनासः सुवस्तुण्डः सामघोषस्वरो
 महान् ॥ सत्यधर्ममयः श्रीमान् क्रमविक्रमसत्कृतः ॥ ३६ ॥ क्रियासत्रमहाघोणः पशुजातुर्मत्वाकृतिः ॥ उद्गात्रान्त्रो महालिङ्गो
 बीजोषधिमहाफलः ॥ ३७ ॥

वाले ॥ ३२ ॥ पीन और ऊंचा कटिदेश वृषलक्षणसे पूजित इस प्रकार हरि महावाराहका रूप धारण कर ॥ ३३ ॥ पृथ्वीके उद्धारके निमित्त रसा-
 तलमें प्रविष्ट हुए, (इनकी अविष्टानी देवता यज्ञ है इसको कहते हैं) वेद चरण हैं दंष्ट्रा यूप हैं दांत क्रतु और मुख चिती है ॥ ३४ ॥ जिह्वा अग्नि
 रूप दर्भ ब्रह्म शिर महातप अहोरात्र रूपी ईक्षणके देखनेवाले वेदांग श्रुति भूषण ॥ ३५ ॥ घृतरूप नासिका सुवस्तुण्ड सामरूप महास्वर सत्य धर्ममय
 श्रीमान् क्रमविक्रमसे सत्कृत ॥ ३६ ॥ यज्ञकी क्रियारूप महानासिका पशु जातु मुखकी आकृति उद्गात्रान्तरूप महालिङ्ग बीज औषधोरूप महा-

फल ॥ ३७ ॥ वायुरूप अन्तरात्मा मंत्रका स्पर्श करता विक्रम है सोमरूपी रुधिर वेदरूपी स्कंध हविरूप गंध द्रव्यकल्परूप वेगवान् ॥ ३८ ॥ प्राग्वंश
काया कान्तिमान् अनेक दोक्षाओंसे अर्चित दक्षिण हृदययोगी महासत्रमय महान् ॥ ३९ ॥ उपाकर्म्मरूपी ओष्ठ रुचक प्रवर्ग्यरूपी यज्ञ अंगके भूषणवाले
नानाछन्दयुक्त गति ओर गुह्यरूपी उपनिषद्के आसनवाले ॥ ४० ॥ छायारूप पत्नीकी सहायतासे युक्त मणिशृंगकी समान उच्छ्रित वह यज्ञवराह गुरु
जलमें प्रविष्ट हुए ॥ ४१ ॥ वह प्रजापति जलोंसे आच्छादित हुई पृथ्वीका उद्धार करने लगे, जो कि रसातलमें पातालतलमें मग्न हो रही थी ॥ ४२ ॥

वाचन्तरात्मा मन्त्रस्पृक् विक्रमः सोमशोणितः ॥ वेदीस्कन्धो हविर्गन्धो द्रव्यकव्यातिवेगवाक् ॥ ३८ ॥ प्राग्वंशकायो द्युति राज्ञानादी-
क्षाभिरर्चितः ॥ दक्षिणाहृदयो योगी महासत्रमयो महान् ॥ ३९ ॥ उपाकर्म्मोष्ठरुचकः प्रवर्ग्यावर्तभूषणः ॥ नानाछन्दोगतिपथो
गुह्योपनिषदासनः ॥ ४० ॥ छायापत्नीसहायो वै मणिशृङ्ग इवोच्छ्रितः ॥ भूत्वा यज्ञवराहोऽसौ युगपत्प्राविशद्गुरुः ॥ ४१ ॥ अद्भिः
संछादितामुर्वीं स तामाच्छन्तप्रजापतिः ॥ रसातलतले मग्नां पातालान्तरसंश्रयाम् ॥ ४२ ॥ प्रभुलोकहितार्थाय दंष्ट्रप्रेणोजहार गाम् ॥
ततः वस्थानमानीय पृथिवीं पृथिवीधरः ॥ ४३ ॥ सुमोच पूर्वं सहसा धारयित्वा धराधरः ॥ ततो जगाम निर्वाणं मेदिनीं तस्य
धारणात् ॥ ४४ ॥ चकार च नमस्कारं तस्मै देवाय शंभवे ॥ एवं यज्ञवराहेण भूत्वा भूतहितार्थिना ॥ ४५ ॥ उद्धृता पृथिवी देवी
लोकानां हितकाम्यया ॥ अथोद्धृत्य क्षितिं देवो जगतः स्थापनेच्छया ॥ ४६ ॥ पृथिवीप्रविभागाय मनश्चक्रेऽम्बुजेक्षणः ॥ रसातल-
गतामेवं विचिन्त्य स सुरोत्तमः ॥ ४७ ॥

लोकहितके निमित्त प्रभुने उसे दंष्ट्रापर धारण किया तब पृथ्वीधरने उस पृथ्वीको अपने स्थानमें लाकर ॥ ४३ ॥ उसको रत्नकर एक साथ छोड़ दिया
तब उनके धारण करनेसे पृथ्वी निर्माणताको प्राप्त हुई ॥ ४४ ॥ उस देव शंभुके निमित्त नमस्कार किया गया, इस प्रकार प्राणिपोंके हितकारी यज्ञ-
वराहने ॥ ४५ ॥ लोकके हितकी कामनासे पृथ्वीदेवीका उद्धार किया है, इस प्रकार जगती देवीको उद्धार कर जगत्के स्थापनकी इच्छासे ॥ ४६ ॥
पृथिवीके विभागके निमित्त कमललोचनने इच्छा की, इस प्रकार वह देवभेठ रसातलमें गई पृथ्वीके निमित्त विचार करके ॥ ४७ ॥

वह विष्णु वराहरूपधारी वृषाकपि एकही दंष्ट्रापर उन अतुलविक्रमवान् अच्युतने लोकहितके निमित्त पृथ्वीका उद्धार किया ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहा-
भारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥ तब उस सागरके ऊपर यह पृथ्वी नावकी समान स्थित हुई देहके विस्तार
होनेसे यह पृथ्वी फिर जलमें न डूबी ॥ १ ॥ तब प्रभुने पृथ्वीके विभागकी इच्छा की सब पर्वत और नदियोंकी श्रेष्ठता ॥ २ ॥ विलेखन प्रमाणगति
प्रसव और नदियोंके माहात्म्य और विशेषताकी प्रभुने चिन्ता की ॥ ३ ॥ चतुर्दल पद्माकर भरत केतुमाल मद्राक्ष कुरव आदि देशोंकी समुद्रपर्यन्त

ततो विष्णुः प्रवरवराहरूपधृक् वृषाकपिः प्रसभमथैकदंष्ट्रया ॥ समुद्धरद्वारणिमतुल्यविक्रमो महायशो लोकहितार्थमच्युतः ॥ ४८ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥ तस्योपरि जलोचस्य महती नौरिव स्थिता ॥ वितत-
त्वात्तु देहस्य न ययो संप्लवं मही ॥ १ ॥ ततः स चिन्तयामास प्रविभागं क्षितौर्विभुः ॥ समुच्छ्रयं च सर्वेषां पर्वतानां नदीषु च ॥ २ ॥
विलेखनं प्रमाणं च गतिं प्रसवमेव च ॥ माहात्म्यं च विशेषं च नदीनामन्वचिन्तयत् ॥ ३ ॥ चतुरन्तां धरां कृत्वा तथा चैव महार्ण-
वम् ॥ मध्ये पृथिव्यः सौवर्णमकरोन्मेरुपर्वतम् ॥ ४ ॥ प्राचीं दिशमयो गत्वा चकारोदयपर्वतम् ॥ शतयोजनविस्तारं सहस्रं च
समुच्छ्रयम् ॥ ५ ॥ जातरूपमयेः शृङ्गेस्तरुणादित्यसन्निभैः ॥ आत्मतेजोगुणमयैर्वेदिकाभोगकल्पितम् ॥ ६ ॥ विविधांश्च महास्क-
न्धान्काञ्चनान्पुष्करक्षेणः ॥ नित्यपुष्पफलान्वृक्षान्कृतवांस्तत्र पर्वते ॥ ७ ॥ शतयोजनविस्तारं ततस्त्रिगुणमायतम् ॥ चकार स
महादेवः पुनः सौमनसं गिरिम् ॥ ८ ॥ नानारत्नसदृशानां कृत्वा तत्र सुसंचयम् ॥ वेदिकां बहुवर्णां च संध्याभ्राभामकल्पयत् ॥ ९ ॥

कल्पना की पृथ्वीके मध्यमें सुवर्णका पर्वत मेरु स्थित किया ॥ ४ ॥ फिर पूर्वदिशामें जाकर उदयपर्वतकी कल्पना की जिसका सौ योजनका विस्तार
और सहस्र योजनकी ऊंचाई है ॥ ५ ॥ प्रातःकालकी सूर्यकी समान सुवर्ण शृंगोंसे युक्त आत्मतेज गुणमय वेदिका भोगसे कल्पित ॥ ६ ॥ उसमें
अनेक प्रकारके सुवर्ण स्कन्धवाले नित्य पुष्पफलसे युक्त वृक्ष कल्पित किये जो उस पर्वतमें हैं ॥ ७ ॥ सौ योजनका विस्तार त्रिगुना ऊंचा इस प्रका-
रका उस महादेवने सौमनस पर्वत बनाया ॥ ८ ॥ उसमें अनेक प्रकारके सहस्रों रत्नोंका संचय किया और संध्याकालके मेघकी समान उसमें बहुत

वर्णकी वेदिका निर्माण की ॥ ९ ॥ सहस्रशृंग नामक गिरि नागरव और मणिशिलासे युक्त वृक्षोंसे बना साठ योजनके विस्तारमें किया ॥ १० ॥ उसमें सब प्राणियोंसे नमस्कृत्य अत्यन्त सुन्दर आसनमें प्रजापति विश्वकर्माने अपना स्थान कल्पित किया ॥ ११ ॥ फिर हिमसमूहसे युक्त हिमालय महापर्वतको जो कि महादुर्ग महान् कन्दरान्तरसे संज्ञित ॥ १२ ॥ शीत उत्पत्तिका स्थान अनेक नदी और द्विजगणोंसे युक्त पुलिन और वसुधारासे युक्त बनाया ऐसा श्रुति है ॥ १३ ॥ यह नदी अमृतके समान सैकड़ों मुखोंसे संयुक्त हुई शोभित होने लगी और अनेक मुक्तान्तलोंसे विभूषित हो शोभित सहस्रशृङ्ग च गिरिं नानामणिशिलातलम् ॥ कृतवान्वृक्षगहनं षष्टियोजनमुच्छ्रितम् ॥ १० ॥ आसनं तत्र परमं सर्वभूतनमस्कृतम् ॥ कृतवानात्मनः स्थानं विश्वकर्मा प्रजापतिः ॥ ११ ॥ शिशिरं च महाक्षौलं तुषारचयसन्निभम् ॥ चकारं दुर्गगहनं कन्दरान्तरमण्डितम् ॥ १२ ॥ शिशिरप्रभवां चैव नदीं द्विजगणायुताम् ॥ चकार पुलिनोपेतां वसुधारामिति श्रुतिः ॥ १३ ॥ सा नदी निस्सिन्धुं प्राचीं पुण्यां मुखशतैश्चिताम् ॥ शोभयत्यमृतप्रण्येषुक्ताशङ्कविभूषितैः ॥ १४ ॥ नित्यपुष्पफलोपेतैश्छादयाद्रिः सुसंवृतेः ॥ भूषिताभ्यधिकं कान्तेः सा नदी तीरजेर्दुर्गमे ॥ १५ ॥ कृत्वा प्राचीविभागं च दक्षिणायामथो दिशि ॥ चकार पर्वतं दिव्यं सर्वकाञ्चनराजतम् ॥ १६ ॥ एकतः सूर्यसंकाशमेकतः शशिसन्निभम् ॥ स बिभ्रच्छुभेति विद्वौ वर्णौ पर्वतोत्तमः ॥ १७ ॥ तेजसा युगपद्व्याप्तं सूर्याचन्द्रमसाक्वि ॥ वपुष्मन्तमथो तत्र भानुमन्तं महागिरिम् ॥ १८ ॥ सर्वकामफलेर्वृक्षैर्वृतं रम्येर्मनोरमेः ॥ चकार कुञ्जरं चैव कुञ्जरप्रतिमाकृतिम् ॥ १९ ॥

होती है ॥ १४ ॥ जिसको नित्य पुष्प और फलवाले वृक्ष आच्छादन करते हैं, इस प्रकार वह नदी किनारेके वृक्षोंसे भूषित है ॥ १५ ॥ इस प्रकार पूर्वदिशाका विभाग कर दक्षिण दिशाका विभाग कर उसमें सम्पूर्ण कांचन और चांदीके पर्वत निर्माण किये ॥ १६ ॥ एक चन्द्रमा और एक सूर्यकी समान वर्णोंसे दोनों पर्वत अत्यन्त शोभित हुए ॥ १७ ॥ और सूर्यचन्द्रमाके समान तेजसे एकसाथ व्याप्त हो गये, यह वपुष्मन्त और भानुमन्त पर्वत ॥ १८ ॥ सब कामनाओंके देनेवाले मनोरम वृक्षोंसे युक्त हैं इसको बनाकर कुञ्जरके आकार कुञ्जरपर्वतको बनाया ॥ १९ ॥ जिसकी बहुत

योजनके विस्तारमें सुवर्णकी गुहा थीं और ऋषभकी समान ऋषभपर्वतको बनाया ॥ २० ॥ जो सुवर्णके वृक्षोंसे शोभित पुष्पहाससे युक्त था, फिर तो योजन ऊंचा महेन्द्र पर्वत बनाया ॥ २१ ॥ जिसके सुवर्णके शृंग और फूलोंवाले वृक्ष महाशोभित थे, मेदिनीमें यह अचल पर्वत शोभित हुए ॥ २२ ॥ नाना रत्नोंसे युक्त सूर्यचन्द्रमाकी समान कान्तिमान् चन्द्रमाकी समान मलय पर्वतको चित्रविचित्र किया ॥ २३ ॥ फिर शिलाजालसे युक्त मैनाक महापर्वतको निर्माण किया, इस प्रकार दक्षिणादिशामें अचल पर्वत स्थापित किया ॥ २४ ॥

सर्वतः काञ्चनगुहं बहुयोजनविस्तृतम् ॥ ऋषभप्रतिमं चैव ऋषभं नाम पर्वतम् ॥ २० ॥ हेमकाञ्चनवृक्षाढ्यं पुष्पहासं स सृष्टवान् ॥ महेन्द्रमथ शैलेन्द्रं शतयोजनमुच्छ्रितम् ॥ २१ ॥ जातरूपमयैः शृङ्गैः सपुष्पितमहाद्रुमम् ॥ मेदिन्यां कृतवान्देवः प्रतिक्षोभमिवाचलम् ॥ २२ ॥ नानारत्नसमाकीर्णं सूर्येन्दुसदृशप्रभम् ॥ चकार मलयं चाद्रिं चित्रपुष्पितपादपम् ॥ २३ ॥ मैनाकं च महाशैलं शिलाजालसमावृतम् ॥ दक्षिण रथां दिशि शुभं चकाराचलमायतम् ॥ २४ ॥ सहस्रशिरसं विन्ध्यं नानाद्रुमलताकुलम् ॥ नदीं च विपुलावर्त्ता पुलिनश्रोणिभूषिताम् ॥ २५ ॥ क्षीरसंकाशसलिलां पयोधारामिति श्रुतिः ॥ सुरम्यां तोयकलिङ्गं विहितां दक्षिणां दिशम् ॥ २६ ॥ दिव्यां तीर्थंशतोपेतां प्रावयन्तीं शुभाम्भसा ॥ दिशं याम्यां प्रतिष्ठाप्य प्रतीचीं दिशमागमत् ॥ २७ ॥ अकरोत्तत्र शैलेन्द्रं शतयोजनमुच्छ्रितम् ॥ शोभितं सिसरेश्वित्रैः सुप्रवृद्धैर्हिरण्मयैः ॥ २८ ॥ काञ्चनीभिः शिलाभिश्च गुहाभिश्च विभूषितम् ॥ समाकुलं सूर्यनिभैः शैलेस्तालैश्च भास्वरैः ॥ २९ ॥

फिर सहस्रशिरवाले विन्ध्याचलको जो विविध वृक्षोंसे युक्त है बनाया, उसमें महाभावर्तयुक्त श्रोणीभूषित नदी निर्माण की ॥ २५ ॥ उसकी नदियोंका जल दुग्धकी समान निर्मल है यह श्रुति है, दक्षिण विशाका जल बहुतही मनोहर किया ॥ २६ ॥ वे नदियें अपने जलसे दिव्य अनेक तीर्थोंको प्रापित करती हैं, इस प्रकार दक्षिण दिशा कर फिर पश्चिममें आये ॥ २७ ॥ वहां सौ योजनके विस्तारवाले चित्रशिखरोंसे शोभित बड़े सुवर्णराशियोंसे युक्त ॥ २८ ॥ सुवर्णकी शिला और गुहाओंसे भूषित सूर्यकी समान प्रकाशित शाल और तालोंसे व्याप्त ॥ २९ ॥

सुवर्णकी बनी मनोहर वेदियोंसे सम्पन्न वहां साठ सहस्र पर्वतोंको सन्निवेशित किया है ॥ ३० ॥ वे सुवर्णकी समान कान्तिमान् प्रभासे दीप्त हो रहे हैं. सहस्र जलधारासे युक्त वह मेरुकी समान पर्वत है ॥ ३१ ॥ अनेक पुण्यतीर्थके समूहसे युक्त भगवान्ने उस सन्निवेशित किया है. उसका साठ योजनका विस्तार और इतनाही ऊंचाव है ॥ ३२ ॥ उसका नाम अपने आत्मतुल्य वाराह रक्खा और भी दिव्य वैदूर्यके पर्वतकी रचना की ॥ ३३ ॥ जहां सुवर्ण और चांदीके दिव्य शिखर हैं. वहांही चक्रके सदृश चक्रवन्त महाबल युक्त ॥ ३४ ॥ सहस्रकूट पर्वतको भगवान्ने निर्मित किया शंखकी समान श्वेत राजतपर्वतको बनाया ॥ ३५ ॥

शुशुभे जातरूपश्च श्रीमद्भिस्त्रिवेदिकैः ॥ पाष्टिं गिरिसहस्राणि तत्रासौ संन्यवेशयत् ॥ ३० ॥ मेरुप्रतिमरूपाणि वपुषा प्रभया सह ॥ सहस्रजलधारं च पर्वतं मेरुसन्निभम् ॥ ३१ ॥ पुण्यतीर्थगुणोपेतं भगवान्त्संन्यवेशयत् ॥ षष्टियोजनविस्तारं तावदेव समुच्छिन्नम् ॥ ३२ ॥ आत्मरूपोपमं तत्र वाराहं नाम नामतः ॥ निवेशयामास गिरिं दिव्यं वैदूर्यपर्वतम् ॥ ३३ ॥ राजताः काञ्चनाश्चैव यत्र दिव्याः शिलोच्चयाः ॥ तत्रैवं चक्रसदृशं चक्रवन्तं महाबलम् ॥ ३४ ॥ सहस्रकूटं विपुलं भगवान्त्संन्यवेशयत् ॥ शङ्खप्रतिमरूपं च राजतं पर्वतोत्तमम् ॥ ३५ ॥ सितद्रुमसमाकीर्णं शंखं नाम न्यवेशयत् ॥ सुवर्णं रत्नसंभूतं पारिजातं महाद्रुमम् ॥ ३६ ॥ महतः पर्वतस्याग्रे पुष्पहासं न्यवेशयत् ॥ शुभामतिरसां चैव घृतधारामिति श्रुतिः ॥ ३७ ॥ वराहः सरितं पुण्यां प्रतीच्यामकरोत्प्रभुः ॥ प्रतीच्यां संविधिं कृत्वा पर्वतान्काञ्चनोज्ज्वलान् ॥ ३८ ॥ गुणोत्तरानुत्तरस्यां संन्यवेशयदग्रतः ॥ ततः सौम्यगिरिं सौम्यमन्तारिक्षप्रमाणतः ॥ ३९ ॥ रुक्मधातुप्रतिच्छन्नमकरोद्भास्करोपमम् ॥ स तु देशो विसूर्योऽपि तस्य भासा प्रकाशते ॥ ४० ॥

वह श्वेतवृक्षोंसे युक्त है इस कारण उसका नाम शंखही रक्खा. उसमें सुवर्णरत्नसे युक्त पारिजात महावृक्ष है ॥ ३६ ॥ उस पर्वतके आगे बड़ा पुष्प-समूह स्थित रहता है वहां शुभ और रसीली घृतधारा बहती है यह श्रुति है ॥ ३७ ॥ पश्चिम दिशामें प्रभुने पवित्र वाराहनदी निर्माण की है. इस प्रकार प्रतीर्चीमें प्रभुने कांचनके उज्ज्वल पर्वत निर्माण किये ॥ ३८ ॥ फिर गुणोंमें श्रेष्ठ उत्तर दिशाका विभाग किया इसके उपरान्त सौम्यपर्वतको निर्माण किया ॥ ३९ ॥ वह सुवर्णकी धातुओंसे प्रतिच्छन्न सूर्यकी समान प्रकाशित है उसकी प्रभासे वह देशभी प्रकाशित होता है. जहां सूर्यका

प्रकाश नहीं होता ॥ ४० ॥ उसकी अधिक लक्ष्मी तपाये हुए सूर्यकी समान शोभित थीं. वह सूक्ष्म लक्षणसे तपते हुए सूर्यकी समान प्रकाशित होता है ॥ ४१ ॥ सहस्र शिखर और अनेक प्रकारके तीर्थोंसे युक्त अनेक रजोंसे सम्पन्न उस पर्वतको निर्माण किया ॥ ४२ ॥ वह मनोहरगुणोंसे युक्त उत्तम मन्दराचल बड़े पुष्पगन्धयुक्त गन्धमादन पर्वतको ॥ ४३ ॥ बनाया उसके सुवर्णके शृंगपर जम्बू जाम्बूनदनिर्मित अनंत और अद्भुत दर्शनवाली किया ॥ ४४ ॥ शिखर पर्वत और उत्तम शृंगसे युक्त पुष्करपर्वत बनाया शुभ पांडुवर्ण मेघकी समान कैलासकी ॥ ४५ ॥ तथा दिव्यधातुसे युक्त

तस्य लक्ष्म्याधिकं भाति तपसा रविणा यथा ॥ सूक्ष्मलक्षणविज्ञेयस्तपतीव दिवाकरः ॥ ४१ ॥ सहस्राशिखरं चैव नानातीर्थसमाकुलम् ॥ चकार रत्नसंकीर्णं भूयोऽस्तं नाम पर्वतम् ॥ ४२ ॥ मनोहरगुणोपेतं मन्दरं चाचलोत्तमम् ॥ उद्दामपुष्पगन्धं च पर्वतं गन्धमादनम् ॥ ४३ ॥ चकार तस्य शृङ्गेषु सुवर्णरससंभवम् ॥ जम्बूं जाम्बूनदमयीमनन्ताद्भुतदर्शनाम् ॥ ४४ ॥ गिरिं च शिखरं चैव तथा पुष्करपर्वतम् ॥ शुभ्रं पाण्डुरमेघाभं कैलासं च नगोत्तमम् ॥ ४५ ॥ हिमवन्तं च शैलेन्द्रं दिव्यधातुविभूषितम् ॥ निवेशयामास हरिर्वाराहीं तनुमास्थितः ॥ ४६ ॥ नदीं सर्वगुणोपेतामुत्तरस्यां दिशि प्रभुः ॥ मधुधारां स कृतवान् दिव्यामृषिशताकुलाम् ॥ ४७ ॥ सर्वे चैव क्षितिधराः सपक्षाः कामरूपिणः ॥ तदा कृता भगवता विचित्राः परमेष्ठिना ॥ ४८ ॥ स कृत्वा प्रविभागं तु पृथिव्या लोकभावनः ॥ देवासुराणामुत्पत्तो कृतवान्बुद्धिमक्षयाम् ॥ ४९ ॥ सर्वासु दिक्षु क्षतजोपमाक्षश्चकार शैलान्विविधाभिधानान् ॥ हिताय लोकस्य स लोकनाथः पुण्याश्च नद्यः सलिलोपगूढाः ॥ ५० ॥ इति श्री० सि० ह० भवि० पञ्चविंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

पर्वतश्रेष्ठ हिमालयकी रचना हरिने वाराहशरीरका आश्रय कर की ॥ ४५ ॥ सम्पूर्ण गुणोंसे युक्त प्रभुने उत्तरदिशामें नदियें स्थापन कीं जिनके जल महामिष्ट हैं और सैकड़ों ऋषि जिनके किनारेपर वास करते हैं ॥ ४७ ॥ सब पर्वत कामरूपधारी और पंखोंसे युक्त थे. वह परमेष्ठी विधाताने सब कुछ किया ॥ ४८ ॥ इस प्रकार लोकभावनने पृथ्वीका विभाग कर देवता असुरोंकी सृष्टि अक्षयबुद्धियुक्त की ॥ ४९ ॥ इस प्रकार सम्पूर्ण दिशाओंमें पर्वतोंको करके उन लोकनाथने पवित्र नदियें निर्माण कीं ॥ ५० ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे सविष्यपर्वणि भाषायां पंचविंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

वैशंपायन बोले, तब वह देव जगत् रचना करनेके निमित्त विचार करने लगे तब विचार करते हुए उनके मुससे पुरुष निकला ॥ १ ॥ तब वह पुरुष देवके सामने स्थित हो बोला; हे देव । मैं क्या कहूं उससे देवदेव हैंसते हुए बोले ॥ २ ॥ तुम अपनेको विभाग करो यह कह प्रभु अन्तर्धान हो गये; जिस समय वह देव अन्तर्धान हो गये ॥ ३ ॥ उनके अन्तर्हित होनेसे प्रभुकी गति नहीं जानी जाती है तब भगवान्की कही वाणीको वह प्रभु विचार कर ॥ ४ ॥ वह हिरण्यगर्भ भगवान् जो वेदमें विल्यात हैं यही प्रथम सबके अधिपति प्रजापति हुए हैं ॥ ५ ॥ उसी समयसे उनको यज्ञभाग वैशम्पायन उवाच ॥ जगत्स्रष्टुमन्ना देवश्चिन्तयामास पूर्वजः ॥ तस्य चिन्तयतो वक्रान्निःसृतः पुरुषः किल ॥ १ ॥ ततः स पुरुषो देवं किं करोमीत्युपस्थितः ॥ प्रत्युवाच स्मितं कृत्वा देवदेवो जगत्पतिः ॥ २ ॥ विभजात्मानमित्युक्त्वा गतोऽन्तर्धान-मीश्वरः अन्तर्हितस्य देवस्य सशरीरस्य भारत ॥ ३ ॥ प्रज्ञान्तरूपेव दीपस्य गतिस्तस्य न विद्यते ॥ ततस्तेनेरितां वाणीं सोऽन्वचिन्तयत प्रभुः ॥ ४ ॥ हिरण्यगर्भो भगवान्य एष च्छन्दसि श्रुतः ॥ एष प्रजापतिः पूर्वमभवद्भुवनाधिपः ॥ ५ ॥ तदाप्रभृति तस्याद्यो यज्ञभागो विधीयते ॥ प्रजापतिरुवाच ॥ विभजात्मानमित्युक्तस्तेनास्मि सुमहात्मना ॥ ६ ॥ कथमात्मा विभज्यः स्यात्संशयो ह्यत्र मे महान् ॥ इति चिन्तयतस्तस्य ओमित्येवोत्थितः स्वरः ॥ ७ ॥ स भूमावन्तरिक्षे च नाके च कृतवांस्ततः ॥ तं चेवाभ्यसतस्तस्य मनःसारमयः पुनः ॥ ८ ॥ हृदयाद्देवदेवस्य वषट्कारः समुत्थितः ॥ भूम्यन्तरिक्षनाकानां भूर्भुवः सुवरात्मिकाः ॥ ९ ॥ महास्मृतिमयाः पुण्या महाव्याहृतयोऽभवन् ॥ छन्दसां प्रवरा देवी चतुर्विंशक्षराभवत् ॥ तत्पदं संस्मरन् दिव्यं सावित्रीमकरोत्प्रभुः ॥ १० ॥ विधान किया जाता है, प्रजापति बोले; जब कि उन महात्माके कहनेसे आत्माका विभाग करनेकी इच्छा की ॥ ६ ॥ तब मुझको संदेह हुआ कि आत्माका विभाग किस प्रकार हो सकता है यह विचार करतेमें ओं यह स्वर प्रगट हुआ ॥ ७ ॥ वह पृथ्वी अन्तरिक्ष और स्वर्गमें व्याप्त हो गया, उस सारमय शब्दको अङ्ग्रास करते हुए ॥ ८ ॥ देवदेवके हृदयसे वषट्कार प्रादुर्भूत हुआ वह भूमि अन्तरिक्ष और स्वर्गमें भूर्भुवः स्वः इन तीन रूप-का हुआ ॥ ९ ॥ वह महास्मृतिमय पुण्यरूप महाव्याहृतियें हुई, उसीसे छंदोंमें अष्ट चौबीस अक्षरात्मक देवी प्रगट हुई, उस दिव्य पदको स्मरण

करते हुए प्रभुने सावित्री की ॥ १० ॥ फिर प्रभुने ऋग् यजु साम अथर्व इन चार वेदोंको ब्रह्मयुक्त कर्मसे प्रगट किया ॥ ११ ॥ फिर उन्हीके मनसे सनक सनातन और सनंदन ॥ १२ ॥ सनत्कुमार विभु और सनातनको उत्पन्न किया, यह छः पूर्वमहर्षि मनसेही उत्पन्न किये हैं ॥ १३ ॥ ब्रह्मा और कपिलपर्यन्त यह छः योगी हैं, यह योगतंत्रोंमें यति विख्यात हैं, जिनको द्विजाति स्तुति करते हैं ॥ १४ ॥ फिर मरीचि अत्रि पुलस्त्य पुलह क्रतु भृगु अंगिरा प्रजापति मनु ॥ १५ ॥ सब भूतोंके पितर देवता असुर राक्षस और महर्षि इन आठोंको शंभुने निर्माण किया ॥ १६ ॥ यह सह-

ऋक्सामाथर्वयजुषश्चतुरो भगवान्प्रभुः ॥ चकार निखिलान्वेदान्ब्रह्मयुक्तेन कर्मणा ॥ ११ ॥ ततस्तस्यैव मनसः सनः सनक एव च ॥ सनातनश्च भगवान्वरदश्च सनन्दनः ॥ १२ ॥ सनत्कुमारश्च विभुस्तत्र जज्ञे सनातनः ॥ मानसाश्चैव पूर्वोद्या इत्येते षण्महर्षयः ॥ १३ ॥ ब्रह्माणं कपिलं चैव पडेटांश्चैव योगिनः ॥ यतयो योगतन्त्रेषु यान्स्तुवन्ति द्विजातयः ॥ १४ ॥ ततो मरीचिर्मत्रि च पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम् ॥ भृगुमाङ्गिरसं चैव मनुं चैवं प्रजापतिम् ॥ १५ ॥ पितृंश्च सर्वभूतानां देवतासुररक्षसाम् ॥ महर्षीन्सृजच्छंभुरष्टदेवतांश्च मानसान् ॥ १६ ॥ एते युगसहस्रान्ते याश्चेषामभवत्प्रजाः ॥ कल्पे निःशेषभुक्ते तु ततो गच्छन्ति निर्वृतिम् ॥ १७ ॥ भूयो वर्षसहस्रान्ते उत्पत्तिस्तु विधीयते ॥ एतेषामेव देवानां प्रजाकर्तृषु वै तदा ॥ १८ ॥ किं तु कर्मविशेषेण देवतानां युगे युगे ॥ नामजन्मविशेषाश्च तथैव युगपर्यये ॥ १९ ॥ अद्भुष्टादक्षिणादक्ष उत्पन्नो भगवाननृषिः ॥ तस्यैव तु पुनर्भार्या वामाद्भुष्टादजायत ॥ २० ॥ तस्य तत्राभवत्कन्या विश्रुता लोकमातरः ॥ याभिर्व्यातास्त्रयो लोकाः प्रजाभिर्भुजाधिप ॥ २१ ॥

त्रयुगके अन्तमें प्रजा पालन कर जब कल्प पूर्ण हो जाता है तब स्वयं निवृत्तिको प्राप्त हो जाते हैं ॥ १७ ॥ फिर सहस्र वर्षके उपरान्त इनकी उत्पत्ति होती है इन देवताओंकी जो प्रजाके करनेवाले हैं ॥ १८ ॥ उत्पत्ति कर्मविशेषसे युगयुगमें हुआ करती है केवल नामजन्ममें विशेषता होती है ॥ १९ ॥ यही युगसमाप्तिमें होता है, उनके दक्षिण अंगुष्ठसे दक्ष और भगवानृषि उत्पन्न हुए और वाम अंगुष्ठसे उनकी भार्या हुई ॥ २० ॥ उसकी कन्या विख्यात और लोककी मातायें हुई, हे राजन्! जिनकी प्रजासे त्रिलोकी व्याप्त हो रही है ॥ २१ ॥

अदिति दिति काला अनायु सिंहिका मुनि प्राधा क्रोधा सुरभी विनता सुरसा ॥ २२ ॥ दनु और कडु यह प्रजावृद्धिके अर्थ दक्षने कश्यपजीको प्रदान कीं ॥ २३ ॥ अरुन्धती वसु यामी लम्बा भानु मरुत्वती संकल्पा मुहूर्ता साध्या विश्वा ॥ २४ ॥ यह दश कन्या प्रजापति दक्षने मनुको दीं तब यह सम्पूर्ण शरीरसे उत्तम कमललोचनी ॥ २५ ॥ पूर्णचन्द्रमाकी समान सुखवाली दिव्यगंधसे युक्त मनोरम कीर्ति लक्ष्मी धृति पुष्टि बुद्धि मेधा क्षमा ॥ २६ ॥ मति लज्जा वसु यह दक्षने धर्मके वास्ते दीं और अत्रिकुमार चन्द्रमा ॥ २७ ॥ सहस्रांशु अंधकारनाशकको उस दक्षने अपनी कन्या प्रदान कीं ॥ २८ ॥

अदिति च दिति कालामनायुं सिंहिकां मुनिम् ॥ प्राधां क्रोधां च सुराभिं विनतां सुरसां तथा ॥ २२ ॥ दनुं कडुं च दुहितुः प्रददौ कश्यपाय तु ॥ प्रजां संचिन्त्य मनसा गतिज्ञेनान्तरात्मना ॥ २३ ॥ अरुन्धतीं वसुं यामीं लम्बां भानुं मरुत्वतीम् ॥ संकल्पां च मुहूर्तां च साध्यां विश्वां च भारत ॥ २४ ॥ मनवे ब्रह्मपुत्राय कन्या दक्षो ददौ दश ॥ ततः सर्वानवद्याङ्गयः कन्याः कमललोचनाः ॥ २५ ॥ पूर्णचन्द्रानना दिव्या गन्धवत्यो मनोरमाः ॥ कीर्तिं लक्ष्मीं धृतिं पुष्टिं बुद्धिं मेधां क्षमां तथा ॥ २६ ॥ मतिं लज्जां वसुं चैव दक्षो धर्माय वै ददौ ॥ आत्रेयस्तु ततो भूतस्तस्य तोयात्मकः शशी ॥ २७ ॥ पुत्रो ब्रह्माणामधिपः सहस्रांशुस्तमिस्रहा ॥ तस्मै नक्षत्रयोगिन्यः सप्तविंशतिरुत्तमाः ॥ २८ ॥ रोहिणीप्रमुखाः कन्या दक्षः प्राचेतसो ददौ ॥ एतासां पुत्रपौत्रं च प्रीच्यमानं मया शृणु ॥ २९ ॥ कश्यपस्य मनोश्चैव धर्मस्य शशिनस्तथा ॥ अर्यमा वरुणो मित्रः पूषा धाता पुरंदरः ॥ ३० ॥ त्वष्टा भगोऽशुः सविता पर्जन्यश्चेति विश्रुताः ॥ अदित्यां जज्ञिरे देवाः कश्यपाष्टोक्तभावनाः ॥ ३१ ॥ दित्याः पुत्रद्वयं जज्ञे कश्यपादिति नः श्रुतम् ॥ हिरण्यकशिपुश्चैव हिरण्याक्षश्च वीर्यवान् ॥ द्वावप्यमितविक्रान्तो तपसा कश्यपोपमो ॥ ३२ ॥

यह रोहिणी आदि सत्तार्वस कन्या उनको प्राप्त हुईं, इनके पुत्रपौत्रोंका विस्तार मुझसे सुनो ॥ २९ ॥ कश्यप मनु धर्म और चन्द्रमाकी सन्तान मुझसे सुनो, अर्यमा वरुण मित्र पूषा धाता पुरन्दर ॥ ३० ॥ त्वष्टा ऋग अंशु सविता पर्जन्य यह विरूपाक्ष सूर्य कश्यपसे अदितिमें उत्पन्न हुए ॥ ३१ ॥ और दितिमें कश्यपसे दो पुत्र हुए ऐसा हमने सुना है, हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष यह दोनों बड़े बली तपसे कश्यपकी समान थे ॥ ३२ ॥

हिरण्यकशिपुके महाबली पांच पुत्र हुए. प्रहाद संहार अनुहाद ॥ ३३ ॥ हर और पांचवां अनुहर उनमें प्रहाद पूर्वज और अनुहर छोटा था ॥ ३४ ॥ प्रहादके महाबली तीन पुत्र हुए विरोचन अंज और सुजंत ॥ ३५ ॥ विरोचनका पुत्र बलि और बलिके बाण और बाणका शत्रुनाथी इन्द्रदमन हुआ ॥ ३६ ॥ दनुके पुत्र इस वंशमें विख्यात बहुत हुए उसमें पहला विप्रचिति उनका राजा हुआ ॥ ३७ ॥ क्रोधाके गण हुआ और उसके पुत्र पौत्र अनन्त हुए. क्रोधाके क्रोधवशा क्रूरकर्मा सन्तान हुई ॥ ३८ ॥ सिंहाके चन्द्रसूर्यका दुःख देनेवाला राहु हुआ. वह चन्द्रमा और सूर्यका शास करता

हिरण्यकशिपोः पुत्राः पञ्चैव सुमहाबलः ॥ प्रहादश्चैव संहारस्तथानुहाद एव च ॥ ३३ ॥ हदश्चैव तु विक्रान्तः पञ्चमोऽनुहदस्तथा ॥ प्रहादः पूर्वजस्तेषामनुहादस्तथा परः ॥ ३४ ॥ प्रहादस्य त्रयः पुत्रा विक्रान्ताः सुमहाबलाः ॥ विरोचनश्च जम्भश्च सुजम्भश्चेति विश्रुताः ॥ ३५ ॥ बलिर्विरोचनसुतो बाण एको बलेः सुतः ॥ बाणस्य चेन्द्रदमनः पुत्रः परपुंजयः ॥ ३६ ॥ दनोः पुत्रास्तु बहवो वंशे ख्याता महासुराः ॥ विप्रचितिः प्रथमजस्तेषां राजा बभूव ह ॥ ३७ ॥ गणः प्रजज्ञे क्रोधायाः पुत्रपौत्रमनन्तकम् ॥ रोद्राः क्रोधवशा नाम क्रूरकर्माण एव च ॥ ३८ ॥ सिंहाका सुषुवे राहुं ग्रहचन्द्रार्कमर्दनम् ॥ ग्रस्तारं चैव चन्द्रस्य सूर्यस्य च विनाशनम् ॥ ३९ ॥ कालायाः कालकल्पस्तु गणः परमदारुणः ॥ अभवद्दीप्तसूर्यांशो नीलमेघसमप्रभः ॥ ४० ॥ सहस्रशीर्षा शेषश्च वासुकिस्तक्षकस्तथा ॥ बहूनां कद्रुपुत्राणामेते प्राधान्यमागताः ॥ ४१ ॥ धर्मात्मानो वेदविदः सदा प्राणिहिते रताः ॥ लोकतन्त्रधराश्चैव वरदाः कामरूपिणः ॥ ४२ ॥ तार्क्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च गरुडश्च महाबलः ॥ अरुणिश्चारुणिश्चैव विनतायाः सुताः स्मृताः ॥ इमाश्चाप्सरसः पुण्या विविधाः पुण्यलक्षणाः ॥ ४३ ॥

हे ॥ ३९ ॥ कालको कालकी समान परम दारुण गण हुआ. यह सूर्यांश नीलमेघकी समान महाकान्तिमान् हुआ ॥ ४० ॥ सहस्र शिरवाले शेष वासुकि और तक्षक यह बहुतसे कद्रुपुत्रोंमें प्रधानताको प्राप्त हुए ॥ ४१ ॥ धर्मोत्तमा वेदके जाननेवाले सदा प्राणी हितमें निरत लोकतन्त्रधारी वरदाता कामरूपी ॥ ४२ ॥ तार्क्ष्य अरिष्टनेमि महाबली गरुड अरुणि आरुणि यह विनताके पुत्र हुए, यह पवित्र अप्सरा अनेक पुण्यहोषिणी हैं ॥ ४३ ॥

ह. सं.
॥ ७६ ॥

यह आठ महाभागा देवर्षिपूजित प्राधाके उत्पन्न हुईं. निन्दारहित अतृणा अरुणप्रिया अनुगा सुभगा भासी यह बी प्राधाके उत्पन्न हुईं ॥ ४४ ॥ अलम्बुषा मिश्रकेशी पुण्डरीका तिलोत्तमा सुरूषा लक्षणा क्षेमा मनोरमा रमा ॥ ४५ ॥ अतिता सुबाहु सुवृता सुमुखी सुप्रिया सुगन्धा सुरसा प्रमाथिनी ॥ ४६ ॥ काश्या शारद्वती यह अप्सरा मुनिकी सन्तान कहलाई, विश्वावसु भरण्य यह विस्वाम गन्धर्व ॥ ४७ ॥ मेनका सहजन्म्या पर्णिका पुञ्जिकस्थला घृतस्थला नाची विश्वाची उर्वशी ॥ ४८ ॥ अनुम्लोचा प्रम्लोचा यह दश विस्वाम अप्सरा हैं. मनोवती वैदिकी अप्सरा ॥ ४९ ॥ यह

सुषुवेऽष्टौ महाभागा प्राधा देवर्षिपूजिता ॥ अनवद्यामनूका च अनूनामरुणप्रियाम् ॥ अनुगा सुभगा भासी स्त्रियः प्राधा व्यजा-
यत ॥ ४४ ॥ अलम्बुषा मिश्रकेशी पुण्डरीका तिलोत्तमा ॥ सुरूषा लक्षणा क्षेमा तथा रमा मनोरमा ॥ ४५ ॥ अतिता च सुबाहुश्च
सुवृता सुमुखी तथा ॥ सुप्रिया च सुगन्धा च सुरसा च प्रमाथिनी ॥ ४६ ॥ काश्या शारद्वती चैव मौनेयाप्सरसः स्मृताः ॥
विश्वावसुर्भरण्यश्च गन्धर्वाश्चैव विश्रुताः ॥ ४७ ॥ मेनका सहजन्म्या च पर्णिका पुञ्जिकस्थला ॥ घृतस्थला घृताची च विश्वाची
चोर्वशी तथा ॥ ४८ ॥ अनुम्लोचेत्यभिरूपाता प्रम्लोचेति च ता दश ॥ मनोवती चापि तथा वैदिक्योऽप्सरसस्तथा ॥ ४९ ॥
प्रजापतेस्तु संकल्पात्संभूता भुवनप्रियाः ॥ अमृतं ब्रह्मणा गावो रुद्राश्चेति चतुष्टयम् ॥ ५० ॥ सुरभ्यपत्यमित्येतत्पुराणे निष्ययो
महान् ॥ एतद्रे कश्यपापत्यं मनोर्वंशं निबोध मे ॥ ५१ ॥ संक्षेपेणैव तत्सर्वं कीर्तयिष्यामि तेऽनघ ॥ विश्वेदेवास्तु विश्वायाः साध्या
साध्यान्व्यजायत् ॥ ५२ ॥ मरुत्वत्या मरुत्वन्तो वसोस्तु वसवः स्मृताः ॥ भानोस्तु भानवस्तात सुहृताश्च सुहृत्तजाः ॥ ५३ ॥

सुषुप्रिय अप्सरा प्रजापतिके संकल्पसे उत्पन्न हुई हैं. अमृत ब्राह्मण गौ रुद्र यह चारों ॥ ५० ॥ सुरभीसे उत्पन्न हुई हैं. यह कश्यपाका वंश है अब
मनुवंश सुनो ॥ ५१ ॥ हे पापरहित ! तुम्हारे आगे संक्षेपसे कीर्तन करता हूँ. विश्वाके विश्वेदेवा साध्याके साध्य ॥ ५२ ॥ मरुत्वतीके मरुत वसुके
वसु भानुके भानु सुहृत्तके सुहृत् उत्पन्न हुए ॥ ५३ ॥

भा. टी.
प. २७. २६

॥ ७६ ॥

लक्ष्मीके घोष जागीके नागवीथी मरुत्पतीके पृथ्वीविषयक सब पदार्थ हुए ॥ ५४ ॥ हे राजन् ! संकल्पाके संकल्प हुए और धर्मसे लक्ष्मीमें जगत्प्रिय कामदेव हुआ ॥ ५५ ॥ यश हर्ष यह दो पुत्र कामसे रतिमें हुए सोमका पुत्र रोहिणीमें महाकान्तिमान् वर्चा हुआ ॥ ५६ ॥ जिससे उदय होकर चन्द्रमा महातेजस्वी प्रतीत होता है और पुरुरवासे उर्वशीका संयोग हुआ है ॥ ५७ ॥ उस प्रकार स्त्रीजनोंके परस्पर सहस्रो पुत्र उत्पन्न हुए हैं, इतनाही जगत्का मूल है जिसमें तीनों लोक प्रतिष्ठित हैं ॥ ५८ ॥ भगवान् प्रजापतिने गुणोंसे मनुष्योंको देख सबको योगद्वारा आधिपत्यमें

लम्बा घोषं विजज्ञेऽथ नागवीथी च जाभिजा ॥ पृथिव्यां विषमं सर्वं मरुत्पत्यामजायत ॥ ५४ ॥ संकल्पायास्तु कौरव्य जज्ञे संकल्प एव च ॥ धर्मस्य पुत्रो लक्ष्म्यास्तु कामो जज्ञे जगत्प्रभुः ॥ ५५ ॥ यशो हर्षश्च कामस्य रत्यां पुत्रद्वयं स्मृतम् ॥ सोमस्य पुत्रो रोहिण्यां जज्ञे वर्चा महाप्रभः ॥ ५६ ॥ उदयन्नेव भगवान्वर्चस्वी येन जायते ॥ पुरुरवाश्च भगवानुर्वशी येन युज्यते ॥ ५७ ॥ एवं पुत्रसहस्राणि स्त्रीणां चैव परस्परम् ॥ एतावन्तु जगन्मूलं यत्र लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥ ५८ ॥ प्रजापतिस्तु भगवान् गुगतः प्रेक्ष्य देहिनः ॥ आधिपत्येषु युक्तेषु नियोजयति योगवित् ॥ ५९ ॥ दिशो दश क्षितिमृषयोऽर्णवान्नगान्द्रुमौषधीरुग्गत्तारिस्तुरामुरान् ॥ प्रजापतिर्भुवनसृजो नभोभुवः क्रियामस्त्रानथ कृतवान् गिरिंश्च सः ॥ ६० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ त्रयाणामपि लोकानामादित्यानां च भारत ॥ चकार शक्रं राजानमादित्यसमते-जसम् ॥ १ ॥ स वज्री कवची विष्णुरदित्यामभिजज्ञिवान् ॥ स्मृतेः सहायो ह्युतिमान्यथा सोऽध्वर्युभिः स्तुतः ॥ २ ॥

नियुक्त किया है ॥ ५९ ॥ दश दिशा पृथ्वी अपि समुद्र वृक्ष औषधी सर्प नदी देवता दैत्य लोकोंके रक्षणेवाले प्रजापति आकाश पाताल क्रिया यज्ञ पर्वत यह सब भगवान्ने किये हैं ॥ ६० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥ वैशम्पायन बोले, हे राजन् ! तीनों लोक और सब देवताओंके आधिपत्यमें सूर्यकी समान तेजस्वी इन्द्रको अधिष्ठित किया ॥ १ ॥ वज्रकवच धारण किये विष्णुरूपे अदितिमें जन्में वह कान्तिमान् स्मृतिकी सहायताको प्राप्त हो अध्वर्युजनोंसे स्तुतिको प्राप्त हुए ॥ २ ॥

उत्पन्न होतेही भगवान् इन्द्र कुशा धारण किये ब्राह्मणोंसे धारण किये गये उसी दिनसे देवेशका नाम कौशिक हुआ ॥ ३ ॥ सहस्राक्ष इन्द्रको देवराजत्वमें अभिषेक कर ब्रह्मा क्रमसे सब राज्य विभाग करने लगे ॥ ४ ॥ यज्ञ तत्र ग्रहनक्षत्र औषधी ब्राह्मणोंका राजा चन्द्रमाको किया ॥ ५ ॥ दक्षको प्रजापतिपोंका वरुणको जलोंका पितरोंका सर्वनिधन अग्निको जिसको काल वैश्वानर प्रभु कहते हैं ॥ ६ ॥ गंध और सब भूत शरीरधारियोंका शब्द आकाश और बलका अधिपति वायुको किया ॥ ७ ॥ सब भूत पिशाच मृत्यु गौ उत्पन्न ग्रहरोग व्याधी ॥ ८ ॥ और सम्पूर्ण व्रतोंका अधिपति महादेवको किया. यक्ष राक्षस गुरुक

जातमात्रोऽथ भगवान्स कुशेर्ब्राह्मणेर्धृतः ॥ तदामभृति देवेशः कौशिकत्वमुपागतः ॥ ३ ॥ अभिषिञ्चाधिराज्ये तु सहस्राक्षं पुरंदरम् ॥ ब्रह्मा क्रमेण राज्यानि व्यादेष्टुमुपचक्रमे ॥ ४ ॥ यज्ञानां तपसां चैव ग्रहनक्षत्रयोस्तथा ॥ द्विजानामौषधीनां तु सोमं राज्येऽभ्यषेचयत् ॥ ५ ॥ दक्षं प्रजापतीनां तु अम्भसां वरुणं पतिम् ॥ पितॄणां सर्वनिधनं कालं वैश्वानरं प्रभुम् ॥ ६ ॥ गन्धानां चैव सर्वेषां भूतानां च शरीरिणाम् ॥ शब्दाकाशबलानां च वायुरीशस्तदा कृतः ॥ ७ ॥ सर्वभूतपिशाचानां मृत्युनां च मवां तथा ॥ उत्पातग्रहरोगाणां व्याधीनां तु तथैव च ॥ ८ ॥ व्रतानां चैव सर्वेषां महादेवः कृतः प्रभुः ॥ यक्षाणां राक्षसानां च गुरुकानां धनस्य च ॥ ९ ॥ रत्नानां चैव सर्वेषां कृतो वैश्रवणः प्रभुः ॥ सर्वेषां दंष्ट्रिणां शेषो नागानामथ वासुकिः ॥ १० ॥ सरीसृपाणां सर्वेषां प्रभुर्वै तक्षकः कृतः ॥ सागराणां नदीनां च मेघानां वर्षणस्य च ॥ आदित्यानामवरजः पर्जन्योऽधिपतिः कृतः ॥ ११ ॥ गन्धर्वाणामधिपतिस्तथा चित्ररथः कृतः ॥ सर्वाप्सरोगणानां च कामदेवः प्रभुः कृतः ॥ १२ ॥

धन ॥ ९ ॥ और सम्पूर्ण रत्नोंका पति कुबेरको किया. सब दंष्ट्रावालोंका अधिपति शेष, नागोंका वासुकी ॥ १० ॥ सब सरीसृप रिंगनेवाले जीवोंका पति तक्षक सागर नदी मेघ वर्षाका पति, आदित्योंका छोटा पर्जन्य किया ॥ ११ ॥ गन्धर्वोंका अधिपति चित्ररथ सम्पूर्ण अप्सराओंका अधिपति कामदेव किया ॥ १२ ॥

सब चतुष्पद और बाहनोंका स्वामी महेश्वर षड्ज श्रीमान् गोवृष किया ॥ १३ ॥ दैत्योंका अधिराजि महातेजस्वी हिरण्यशक्ष किया. हिरण्यकशिपुको युवराज्यमें अभिषिक्त किया ॥ १४ ॥ कालकेयवणोंका अधिपति काल किया. अनायुषाके पुत्रोंका अधिपति वृत्रको किया ॥ १५ ॥ सिंहिकापुत्र महाअसुर राहु सम्पूर्ण उत्पात और अशुभोंका राजा किया गया ॥ १६ ॥ सम्पूर्ण ऋतु सुहूर्त पक्ष महीना युग तिथि पर्व ॥ १७ ॥ कडा काठा मुहूर्त गति अयन योग गणितका राजा संवत्सरको किया ॥ १८ ॥ पक्षी और चक्षुका स्वामी महाबल भोगियोंका अधिपति गरुड ॥ १९ ॥ जपापुष्पकी समान कान्तिमान् गरुडके माई

चतुष्पदानां सर्वेषां वाहनानां च सर्वेशः ॥ महेश्वरषड्जः श्रीमान् गोवृषोऽधिपतिः कृतः ॥ १३ ॥ दैत्यानां च महातेजा हिरण्यशक्षः प्रभुः कृतः ॥ हिरण्यकशिपुश्चैव योवराज्येऽभिषेचितः ॥ १४ ॥ गणानां कालकेयानां महाकालः प्रभुः कृतः ॥ अनायुषायाः पुत्राणां वृत्रो राजा तदा कृतः ॥ १५ ॥ सिंहिकातनयो यस्तु राहुर्नाम महासुरः ॥ उत्पातानामनेकानामशुभानां प्रभुः कृतः ॥ १६ ॥ ऋतूनामथ सर्वेषां युगानां चैव भारत ॥ पक्षाणां चैव मासानां तथैव तिथिपर्वणाम् ॥ १७ ॥ कलाकाष्ठासुहूर्तानां गतेरयनयोस्ततः ॥ कृतः संवत्सरो राजा योगस्य गणितस्य च ॥ १८ ॥ पक्षिणां चैव सर्वेषां चक्षुषां च महाबलः ॥ सुपर्णो भोगिनां चैव गरुडोऽधिपतिः कृतः ॥ १९ ॥ अरुणो गरुडप्राता जपापुष्पचयप्रभुः ॥ योगानां चैव सर्वेषां साध्यानामधिपः कृतः ॥ २० ॥ पुत्रोऽस्य विरयो नाम कश्यपस्य प्रजापतेः ॥ राजा प्राच्यां दिशि तथा वासवेनाधिपः कृतः ॥ २१ ॥ आदित्यस्य विभोः पुत्रो धर्मराजो महायशः ॥ दक्षिणस्यां दिशि यमो महेन्द्रेणैव सत्कृतः ॥ २२ ॥ कश्यपस्यौरसः पुत्रः सलिलान्तर्गतः सदा ॥ अम्बुराज इति ख्यातः प्रतीच्यां दिशि पार्थिवः ॥ २३ ॥ पुलस्त्यपुत्रो द्युतिमान्महेन्द्रप्रतिमः प्रभुः ॥ एकाक्षः विङ्गत्रे नाम सौम्यायां दिशि पार्थिवः ॥ २४ ॥

अरुण सब योग और साध्योंके अधिपति किये गये ॥ २० ॥ कश्यप प्रजापतिकी पुत्र विरय उसको इन्द्रने पूर्व दिशाका अधिराजि किया ॥ २१ ॥ आदित्यका पुत्र महायशस्वी विभु यम दक्षिण दिशाका अधिपति इन्द्रने किया ॥ २२ ॥ कश्यपका औरस पुत्र जलमें प्राप्त हुआ. अम्बुराज नाम पश्चिम दिशाका अधिपति किया गया ॥ २३ ॥ पुलस्त्यका पुत्र द्युतिमान् महेन्द्रकी समान कान्तिमान् एकाक्ष विङ्गल नाम कुचेर उत्तर दिशाके

अधिपति किये ॥ २४ ॥ लोक उत्पन्नकर्ता स्वयम्भूने इस प्रकार राज्योंका विभाग कर दिव्यलोक पृथक् पृथक् देवताओंको दिये ॥ २५ ॥ किसीको सूर्यकी समान किसीको अग्निकी समान किसीको बिजलीकी समान किसीको चन्द्रकी समान निर्मल किया ॥ २६ ॥ अनेक वर्णोंवाले यथाकाम गमन करनेवाले सैकड़ों जन उनमें रहते हैं. यह पुण्यात्माओंके लोक पापियोंको दुर्लभ है ॥ २७ ॥ यह ग्रह और तारणोंके समान प्रकाशित होते हैं. यह पुण्यकर्म करनेवाले महात्माओंके लोक है ॥ २८ ॥ जो पवित्र यज्ञ बड़ी दक्षिणाओंसे समान करते हैं जो अपनी श्रियोंमें निरत शान्त शान्त सीधे

एवं विभज्य राज्यानि स्वयंभूर्लोकभावनः ॥ लोकांश्च त्रिदिवे दिव्यान् ददत्त पृथक् पृथक् ॥ २५ ॥ कस्यचित्सूर्यसंकाशात्कस्य-
चिद्राहिसन्निभान् ॥ कस्यचित्सुष्टुविद्योतान्कस्यचिच्चन्द्रनिर्मलान् ॥ २६ ॥ नानावर्णान्कामगमानेकशतशो जनान् ॥ स तान्सुकृ-
तिनां लोकान्पापदुष्कृतिदुर्लभान् ॥ २७ ॥ येषां भासो विभान्त्यग्रे सौम्यास्तारागणा इव ॥ एते सुकृतिनां लोका ये जाताः पुण्यक-
र्मिणः ॥ २८ ॥ ये यजन्ति मत्स्यैः पुण्यैः समाप्तवरदक्षिणैः ॥ स्वदारनिरताः क्षान्ता ऋजवः सत्यवादिनः ॥ २९ ॥ दीनानुग्रहकतारो
ब्रह्मण्या लोभवर्जिताः ॥ संत्यक्तजसः सन्तो यान्ति तत्र तपोमलाः ॥ ३० ॥ एवं निपुण्य तनयान्स्वयं लोकपितामहः ॥ पुष्करं
ब्रह्मसदनमारूरोह प्रजापतिः ॥ ३१ ॥ सर्वे स्वयंभुदत्तेषु पालनेषु दिवौकसः ॥ रेमिरे स्वेषु लोकेषु महेन्द्रेणाभिपालिताः ॥ ३२ ॥
स्वयंभुवा शक्रपुरःसरा सुराः कृता यथाई प्रतिपालनेषु ते ॥ यशो दिवं च प्रतिपेदिरे शुभं मुदं च जगुर्मलभागभोजिनः ॥ ३३ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

सत्यवादी हैं ॥ २९ ॥ दीनोंपर अनुग्रह करनेवाले ब्रह्मण्या लोभरहित रजोगुण त्यागे हुए हैं वह तपसे निर्मल होकर वहां जाते हैं ॥ ३० ॥ इस प्रकार लोकपितामह ब्रह्मा अपने पुत्रोंको नियुक्त कर अपने पुष्कर नाम ब्रह्मस्थानमें प्राप्त हुए ॥ ३१ ॥ वे देवता ब्रह्माके दिये स्थानोंमें महेन्द्रसे पालित हो रमण करने लगे ॥ ३२ ॥ ब्रह्माने इन्द्रको आदि ले सम्पूर्ण देवताओंको जगत्की पालनामें तत्पर किया इससे उनको परम यशकी प्राप्ति हुई और यज्ञ-
भाग पानेवाले आनंदसे निज निज स्थानको गये ॥ ३३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

वैशम्पायन बोले, एक समय पृथ्वीको धारण करनेवाले वे पर्वत परमेश्वरकी मायासे पृथ्वीको त्यागकर उठ गये ॥ १ ॥ एक समय हिरण्याक्षसे पाण्डित
 असुरोंके स्थानको प्राप्त हो वे पर्वत प्रतीची दिशामें प्राप्त हो नजकी समान हरमें स्नान करते हुए ॥ २ ॥ और उन पर्वतोंने असुरोंसे स्वर्गका ऐश्वर्य वर्णन
 कि या यह सुनकर असुरोंने स्वर्गमें जानेका उद्योग किया ॥ ३ ॥ वे महाकर बुद्धि कर पृथ्वीहरणमें रत हुए और उन भयंकर पराक्रमवालोंने सम्पूर्ण
 आयुध ग्रहण किये ॥ ४ ॥ चक्र अशनि खड्ग भुशुण्डी धनुष प्राप्त पारा शक्ति सुसल गदा ॥ ५ ॥ ग्रहण कर कवच धारण कर सज्जीभूत हुए कोई
 वैशम्पायन उवाच ॥ कदाचित्तु सपक्षास्ते पर्वता धरणीधराः ॥ प्रस्थिता धरणीं त्यक्त्वा नूनं तस्यैव मायया ॥ १ ॥ तदासुराणां
 निलयं हिरण्याक्षेण पालितम् ॥ दिशं प्रतीचीमागम्य हृदेऽभ्यन्यथा गजाः ॥ २ ॥ तत्रासुरेभ्यः शंसन्त आधिपत्यं सुराश्रयम् ॥
 तच्छ्रुत्वायासुराः सर्वे चक्रुद्योगमुत्तमम् ॥ ३ ॥ क्रूरा च बुद्धिमतुला पृथिवीहरणे रताः ॥ आयुधानि च सर्वाणि जगद्गुर्भीमवि-
 क्रमाः ॥ ४ ॥ चक्राशनीस्तथा खड्गान्भुशुण्डीश्च धनुषि च ॥ प्रासान्पाशांश्च शक्तीश्च सुसलानि गदास्तथा ॥ ५ ॥ केचित्कवाचिनः
 सञ्चा मत्तनार्गास्तथा परे ॥ केचिदश्वरथान्युक्ता अपरेऽश्वान्महासुराः ॥ ६ ॥ केचिदुर्घास्तथा खड्गान्महिषान् गर्दभानपि ॥ स्वबा-
 हुबलमास्थाय केचिच्चापि पदातयः ॥ ७ ॥ परिवार्य हिरण्याक्षं तलवद्धाः कलापिनः ॥ इतश्चेतश्च निश्चेरुर्दृष्टाः सर्वे युयुत्सवः ॥ ८ ॥
 ततो देवगणाः पश्चात्पुरंदरपुरोगमाः ॥ दैत्यानां विदितोद्योगाश्चक्रुद्योगमुत्तमम् ॥ ९ ॥ महता चतुरङ्गेण बलेन सुसमाहिताः ॥ बद्ध-
 गोषाङ्गुलित्राणास्तूणवन्तः समार्गणाः ॥ १० ॥ उग्रायुधधरा देवाः स्वेष्वनीकेष्ववस्थिताः ॥ ऐरावतगतं शक्रमन्वगच्छन्त पृष्ठतः ॥ ११ ॥
 हाथीपर चढे कोई छोटे रथोंपर स्थित हुए कोई अश्वोंपर स्थित हुए ॥ ६ ॥ कोई ऊंट खड्ग महिष गर्दभोंपर स्थित हुए कोई अपने बाहुबलके आश्रय
 हो पैदल स्थित हुए ॥ ७ ॥ सब कोई हिरण्याक्षको घेर युद्धकी इच्छासे शिरके जुड़े बांधे हुए इधर उधर विचरने लगे ॥ ८ ॥ तब देवगण इन्द्रको
 आगे कर दैत्योंकी इच्छा जान स्वयं उद्योग करने लगे ॥ ९ ॥ बड़ी भारी चतुरंग सेनाके बलसे युक्त हो गोषा अंगुलीत्राण बांधे तूणवन्त बाण
 लिये ॥ १० ॥ उग्रायुध धारण करनेवाले देवता अपनी सेनाओंमें स्थित हुए, ऐरावतपर चढे इन्द्रके पीछे पीछे देवता चलने लगे ॥ ११ ॥

तब तूर्य और भेरीके महाशब्दोंसे हिरण्याक्ष देवराज इन्द्रके ऊपर झपटा ॥ १२ ॥ तीक्ष्ण परशे निक्षिप्त नवा तोमर शक्ति सुसल और पट्टियोंके प्रहारसे इन्द्रको आच्छादन कर दिया ॥ १३ ॥ तब अक्षबलसे बड़ी वेगवान् आँचिष्मान् दारुण घोररूप बाणवर्षा होने लगी ॥ १४ ॥ और भेठ बली दैत्य सितवारवाले परशे लिये परिघ लोहनिर्मित सङ्ग और क्षेपणीय सुदूर ॥ १५ ॥ अनेक प्रकारके तेजयुक्त गण्डशैल पर्वतकी समान पत्थर और मारनेवाली बड़ी बड़ी शतघ्नी ॥ १६ ॥ युगाकर अक्ष यंत्रके द्वारा छोड़े जानेवाले अक्ष अर्थात् पाषाण वर्षानेवाले आग्नेयादि अस्त्रोंसे दैत्य

ततस्तूर्योनिनादेन भेरीणां च महास्वनेः ॥ अभ्यद्रवद्विरण्याक्षो देवराजं पुरंदरम् ॥ १२ ॥ तीक्ष्णैः परशुनिक्षिप्तैर्गदातोमरशक्तिभिः ॥ मुशलेः पट्टिशैश्च च्छादयामास वासवम् ॥ १३ ॥ ततोऽक्षबलवेगेन सार्चिष्मत्यः सुदारुणाः ॥ घोररूपा महावेगा निपेतुर्बाण-
वृष्टयः ॥ १४ ॥ शिष्टाश्च दैत्या बलिनः सितधारैः परश्वधैः ॥ परिवैरायसैः सङ्गैः क्षेपणीयेश्च सुदूरैः ॥ १५ ॥ गण्डशैलेश्च विविधै रश्मिभि-
श्चाद्रिसन्निभैः ॥ घातनीभिश्च गुर्वाभिः शतघ्नीभिस्तथैव च ॥ १६ ॥ युगेयन्त्रैश्च निमुक्तैरगलैश्च विदारणैः ॥ सर्वान्देगणान्दैत्याः सन्नि-
जघ्नुः सवासवान् ॥ १७ ॥ धूम्रकेशं हरिस्मश्रुं नानाप्रहरणायुधम् ॥ रक्तसंघ्याभ्रसंकाशं किरीटोत्तमधारिणम् ॥ १८ ॥ नीलपीता-
म्बरधरं शितदंष्ट्रोर्ध्वधारिणम् ॥ आजानुबाहुं ह्ययं वैदूर्याभरणोज्ज्वलम् ॥ १९ ॥ समुद्यतायुधं दृष्ट्वा सर्वे देवगणास्तदा ॥ ते हिरण्या-
क्षमसुरं दैत्यानामग्रतः स्थितम् ॥ २० ॥ युगान्तसमये भीमं स्थितं मृत्युमिवाग्रतः ॥ प्रविव्यधुः सुराः सर्वे तदा शक्रपुरोगमाः ॥ २१ ॥

सम्पूर्ण देवगणोंसे इन्द्रके सहित ताडन करने लगे ॥ १७ ॥ धूम्रकेश हरिस्मश्रु अनेक आयुध प्रहार करनेवाले रक्तसंघ्याके अभ्रकी समान उत्तम किरीट धारे ॥ १८ ॥ नील पीताम्बरधारी श्वेतदंष्ट्रा ऊर्ध्व कृपे आजानुपर्यन्त लम्बावनान भुजा प्रकाशित वैदूर्यमणिके भूषण पहरे ॥ १९ ॥ आयुध उठाकर आगे स्थित हुए हिरण्याक्षको सब देवता देखकर ॥ २० ॥ युगान्तकालमें मृत्युकी समान स्थित जानते हुए और इन्द्रादिक सम्पूर्ण देवता व्यथित हुए ॥ २१ ॥

चलते पर्वतकी समान हिरण्याक्षको आता देखकर देवताओंने उद्दिग्ध मन हो शरासन ग्रहण किये ॥ २२ ॥ और इन्द्रको आगे कर संग्राममें
 स्थित हुए वह सुवर्ण कवच पहरे उज्ज्वल सेना शोभित हुई ॥ २३ ॥ जिस प्रकार नक्षत्रोंसे शरदृष्टकी राशि शोभित होती है वे परस्पर सेनामें
 मारते हुए प्रहार करने लगे ॥ २४ ॥ बाहुयुद्धमें भुजा तोड़ने लगे, नदापातसे प्रपन्न अंग और बाणोंसे व्यथित हृदय हो गये ॥ २५ ॥ कोई पृथक्
 हो गिर पड़े कोई एक दूसरेको मारने लगे कोई रथोंको तोड़ने लगे कोई रथोंसे चर्च हो गये ॥ २६ ॥ कोई ऐसी रोकमें प्राप्त हुए कि उनका रथ चला-
 दृष्ट्यान्तं हिरण्याक्षं महाद्रिमिव जङ्गमम् ॥ देवाः संविग्रमनसः प्रवृद्धीतशरासनाः ॥ २२ ॥ सहस्राक्षं पुरस्कृत्य तस्थुः संग्राममूर्धनि ॥
 सा च दैत्यचमू रेजे हिरण्यकवचोज्ज्वला ॥ २३ ॥ प्रवृद्धनक्षत्रगणा शरदा द्यौरिवामला ॥ तेऽन्योन्यमपि संपेतुः पातयन्तः परस्पर-
 रम् ॥ २४ ॥ बभञ्जुर्बाहुभिर्बाहून् द्रुमन्ये युयुत्सवः ॥ मदानिपाते भङ्गाङ्गा बाणैश्च व्यथितोरसः ॥ २५ ॥ विनिपेतुः पृथक्केचि-
 त्तयान्येऽपि विजगिरे ॥ बभजिरे रयान्कोचित्केचित्समर्दिता रयैः ॥ २६ ॥ संबाधमन्ये संप्राप्ता न शोकुश्चलितं रयात् ॥ दानवेन्द्रवलं
 तत्र देवानां च महद्बलम् ॥ २७ ॥ अन्योन्यबाणवर्षेण युद्धदुर्द्दिनमावभौ ॥ हिरण्याक्षस्तु बलवान् क्रुद्धः स दितिनन्दनः ॥ २८ ॥
 व्यवर्द्धत महातेजाः समुद्र इव पर्वाणि ॥ तस्य क्रुद्धस्य सदसा मुस्त्रान्निश्चेरुरर्चिषः ॥ २९ ॥ शस्त्रजाले बद्धविधेर्धनुर्भिः परिघेतापि ॥
 सर्वमाकाशमावृत्रे पर्वतैरुत्थितैरिव ॥ ३० ॥ बहुभिः शस्त्रनिर्घ्निर्घ्निश्चित्रभिन्नाशिरोरसः ॥ न शोकुश्चलितुं देवा हिरण्याक्षार्दिता
 युधि ॥ ३१ ॥ सर्वे वित्रासिता देवा हिरण्याक्षेण संयुगे ॥ न शोकुर्यत्रवन्तोऽपि यत्नं कर्तुं विचेतसः ॥ ३२ ॥
 यमान न हो सका उस समय दानवेन्द्र और देवताओंकी बड़ी सेनाके ॥ २७ ॥ परस्पर बाण वर्षानेसे वह दिन युद्धके कारण दुर्द्दिन हो गया, बलवान्
 हिरण्याक्ष बड़ा क्रोध कर ॥ २८ ॥ महातेजस्वी पर्वके समुद्रकी समान बढ़ने लगा, क्रोध करनेपर उसके मुससे अग्निकी चिनमारी निकलने लगी ॥ २९ ॥
 अनेक प्रकारके शस्त्रजाल धनुष परिवोंसे उठे हुए पर्वतोंकी समान सब आकाश भर गया ॥ ३० ॥ बहुतसे शस्त्रजालोंसे हृदय शिर छिन्नभिन्न हो गये हिरण्या-
 क्षसे अर्दित हो देवता चलनेको समर्थ न हुए ॥ ३१ ॥ हिरण्याक्षने युद्धमें सब देवता जमा दिये वे यत्न करकेभी विचेतन हो कुछ न कर सके ॥ ३२ ॥

उत्तमे अक्षते इन्द्रको युद्धमें स्तंभित कर दिया, ऐरावतपर स्थित हुआ इन्द्र चलनेको समर्थ न हुआ ॥ ३३ ॥ वह दानव इस प्रकार सब देवताओंको पराजित कर देवेशको स्तंभित कर सब जगत् अपने वशीभूत मानने लगा ॥ ३४ ॥ वोह मेघकी समान मंजीर शब्द करता मत्तमातंगकी समान शरीर धारे महाकान्तिमान् धनुष कंपित करता हुआ देवताओंको दीक्षने लगा ॥ ३५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेष्टु हरिवंशे भाविष्यपर्वणि भाषायां अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥ वैशंपायन बोले; इन्द्रके निष्प्रयत्न और देवताओंके धर्षित होनेपर चक्रगदाधारी नारायणने हिरण्याक्षके मारनेका विचार किया ॥ १ ॥

तेन शक्रः सहस्राक्षः स्तम्भितोऽस्त्रेण धीमता ॥ ऐरावतगतः संख्ये नाशकञ्चलितुं भयात् ॥ ३३ ॥ सर्वाश्च देवानसिष्ठान्स पराजित्य दानवः ॥ स्तम्भयित्वा च देवेशमात्मस्थं मन्यते जगत् ॥ ३४ ॥ सतोयमेघप्रतिमोग्रानिःस्वनं प्रभिन्नमातङ्गविलासविग्रहम् ॥ धनुर्विधुन्वन्तमुदारवर्चसं तदा सुरेन्द्रं ददृशुः सुराः स्थिताः ॥ ३५ ॥ इति श्रीम० सि० ह० भ० वा० अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ निष्प्रयत्ने सुरपतो धर्षितेषु सुरेषु च ॥ हिरण्याक्षवधे बुद्धिं चक्रे चक्रगदाधरः ॥ १ ॥ वाराहः पर्वतो नाम यः पूर्वं समुदाहृतः ॥ स एष भूत्वा भगवानाजगामासुरान्तकृत ॥ २ ॥ ततश्चन्द्रप्रतीकाशमगृह्णच्छङ्खमुत्तमम् ॥ सहस्रारं च तच्चक्रं चक्रपर्वतसन्निभम् ॥ ३ ॥ महादेवो महाबुद्धिर्महायोगी महेश्वरः ॥ पठ्यते योऽमरेः सर्वैर्गुह्यैर्नामभिरव्ययः ॥ ४ ॥ सदसच्चात्मनि श्रेष्ठः सद्भिर्यः सेव्यते सदा ॥ इज्यते यः पुराणैश्च त्रिलोके लोकभावनः ॥ ५ ॥ यो वैकुण्ठः सुरेन्द्राणामनन्तो भोगिनामपि ॥ विष्णुर्यो योगविदुषां यो यज्ञो यज्ञकर्मणाम् ॥ ६ ॥

जो वाराह नामका पर्वत प्रथम कहाहै वही रूप धारण कर जनवान् असुरनाशक आये ॥ २ ॥ तब चंद्रकी समान कान्तिमान् श्वेत शंख और चक्र पर्वतकी समान सहस्रधारवाले सुदर्शनचक्रको धारण किये ॥ ३ ॥ महादेवी महाबुद्धि महायोगी महेश्वर जिसको देवता दिव्य नामसे स्तुति करते हैं ॥ ४ ॥ सत् असद्गुण श्रेष्ठ आत्मा जिनकी सत्पुरुष सदा सेवा करते हैं, जो पुराणोंमें स्तुतिको प्राप्त होताहै सब लोकोंका एकभावनहै ॥ ५ ॥ सुरेन्द्रोंमें वैकुण्ठरूप भोगियोंमें

अनन्तरूप योगियोंमें विष्णु यज्ञकर्मोंमें यज्ञस्वरूप है ॥ ६ ॥ जिसके प्रसादसे यज्ञ कर देवता स्वर्गमें स्थित हुए हैं और महर्षियोंद्वारा दी हुई घृतकी आहुति पान करते हैं. अग्नि ब्राह्मण मुख आदिमें आहुति देनेसे तीन प्रकारकी आहुति कही है ॥ ७ ॥ जो देवता दैत्योंकी परा गति और सुरोंकी परम गति है जो पवित्रोंका पवित्र स्वयंभू अव्यय विभु है ॥ ८ ॥ जिसके चक्रसे दानव युगयुगमें पीसे जाते हैं. जिनके पराक्रमको देख कुल अकुलताको प्राप्त हो जाते हैं वे आये ॥ ९ ॥ तब उन्होंने दैत्योंको भय देनेवाला पुरातन उत्तम शंस मुखपर धरकर बजाया. जिससे दैत्योंका जीवन नष्ट होता

मखे यस्य प्रसादेन भुवनस्था दिवौकसः ॥ आज्यं महर्षिभिर्देतमश्नुवन्ति त्रिधा हुतम् ॥ ७ ॥ यो गतिर्देवदैत्यानां यः सुराणां परा गतिः ॥ यः पवित्रं पवित्राणां स्वयंभूरव्ययो विभुः ॥ ८ ॥ यस्य चक्रप्रविष्टानि दानवानां युगे युगे ॥ कुलान्याकुलतां यान्ति यानि दृष्टानि वीर्यतः ॥ ९ ॥ ततो दैत्यद्रवकरं पौराणं शंसमुत्तमम् ॥ घमन्वक्रेण बलवानाक्षिपदैत्यजीवितम् ॥ १० ॥ श्रुत्वा शङ्कस्वनं घोरमसुराणां भयावहम् ॥ क्षुभिता दानवाः सर्वे दिशो दश व्यलोकयन् ॥ ११ ॥ ततः संरक्तनयनो हिरण्याक्षो महासुरः ॥ क्रोऽयमित्यब्रवीद्रोषान्नारायणमुदेक्षत ॥ १२ ॥ वाराहरूपिणं देवं संस्थितं पुरुषोत्तमम् ॥ शंसचक्रोद्यतकरं देवानामार्तिनाशनम् ॥ १३ ॥ रराज शंसचक्राभ्यां ताभ्यामसुरसूदनः ॥ सूर्याचन्द्रमसोर्मध्ये यथा नीलपयोधरः ॥ १४ ॥ ततोऽसुरगणाः सर्वे हिरण्याक्षपुरोगमाः ॥ उद्यतायुधनिर्झिंशा हता देवमुपाद्रवन् ॥ १५ ॥ पीडयमानोऽतिबलिभिर्दैत्यैः सर्वायुधोद्यतेः ॥ न चचाल हरियुद्धेकम्पमान इवाचलः ॥ १६ ॥

है ॥ १० ॥ असुरोंके भय देनेवाले शंसका घोर शब्द सुनकर क्षुब्ध हो दानव दशों दिशाको अवलोकन करने लगे ॥ ११ ॥ तब महाअसुर हिरण्याक्ष लाल नेत्र कर यह कौन है ऐसा कह क्रोधसे नारायणको देखने लगा ॥ १२ ॥ उन पुरुषोत्तमको वाराहरूपमें देख कि वे देवताओंके दुःखनाशक हाथमें शंस लिये हैं ॥ १३ ॥ वह शत्रुसूदन शंसचक्रसे शोभित होते थे. जैसे सूर्यचन्द्रमाके बीचमें नीलमेघ हो ॥ १४ ॥ तब सब असुर हिरण्याक्षको आगे कर आयुध उठाये हम हो देवके ऊपर झपटे ॥ १५ ॥ वह बली दैत्योंके सम्पूर्ण आयुधोंसे पीड़ित होकरभी अचलकी समान

नारायण युद्धमें चलायमान न हुए ॥ १६ ॥ तब दानवने प्रज्वलित शक्तिको प्रभुके हृदयमें महातेज और बलयुक्त निपातन किया ॥ १७ ॥ उस शक्तिके प्रभासे ब्रह्माग्नी विस्मित हो गये उस महाशक्तिको निकट आई देल महाबली ॥ १८ ॥ प्रभुने हुंकारसेही झिठककर पृथ्वीमें गिरा दिया. उस शक्तिके नष्ट होनेपर ब्रह्माने धन्य धन्य कहा ॥ १९ ॥ जो सबके प्रभु हैं उन वराहको उसने ताडित किया तब भगवान्ने सूर्यकी समान चक्र ग्रहण किया ॥ २० ॥ और उत्तमकर्मा दानवेन्द्रके शिरपर मारा तब उसका शिर कट पृथ्वीमें गिरा. जैसे वज्रसे हत हुआ सुवर्णमय मेरुशृंग गिरता

ततः प्रज्वलितां शक्तिं वाराहोरासे दानवः ॥ हिरण्याक्षो महातेजाः पातयामास वीर्यवान् ॥ १७ ॥ तस्या शक्त्या प्रभावेण ब्रह्मा विस्मयमागतः ॥ समीपमागतां दृष्ट्वा महाशक्तिं महाबलः ॥ १८ ॥ हुंकारेणैव निर्भत्स्य पातयामास भूतले ॥ तस्या प्रतिहतायां तु ब्रह्मा साध्विति चाब्रवीत् ॥ १९ ॥ यः प्रभुः सर्वभूतानां वराहस्तेन ताडितः ॥ ततो भगवता चक्रमाविध्यादित्यसन्निभम् ॥ २० ॥ पातितं दानवेन्द्रस्य शिरस्युत्तकर्मणा ॥ ततः स्थितस्यैव शिरस्तस्य भूमौ पपात ह ॥ हिरण्मयं वज्रहतं मेरुशृङ्गमिषोत्तमम् ॥ २१ ॥ हिरण्याक्षे हते दैत्ये शेषा ये तत्र दानवाः ॥ सर्वे तस्य भयत्रस्ता जम्बूराशु दिशो दश ॥ २२ ॥ स सर्वलोकाप्रतिचक्रचक्रो महाहवेष्वप्रतिमोग्रचक्रः ॥ बभौ वराहो युधि चक्रपाणिः कालो युगान्तेष्विव दण्डपाणिः ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥ वैष्णवायन उवाच ॥ विद्राव्य तु रणे सर्वानसुरान्पुरुषोत्तमः ॥ सुमोच तत्र बद्धास्तान्पुरंदरमुत्तान्तुरान् ॥ १ ॥ ततः प्रकृतिमापन्नाः सर्वे देवगणास्तथा ॥ पुरंदरं पुरस्कृत्य नारायणमुपस्थिताः ॥ २ ॥

हो ॥ २१ ॥ हिरण्याक्ष दैत्यके मरनेपर शेष रहे दानव उनके भयसे दशों दिशामें भाग गये ॥ २२ ॥ जिस प्रकार कालका सब लोकोंमें अप्रतिहत आज्ञाचक्र चलता है. इस प्रकार महायुद्धमें उपमाराहित चक्र धारण किये भगवान् वाराहजी शोभित हुए. जैसे दण्डपाणि काल शोभित होता है ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥ वैष्णवायन बोले, इस प्रकार पुरुषोत्तम युद्धमें सब असुरोंको मचाकर इन्द्रावि देवताओंको बंधनसे छुड़ाते हुए ॥ १ ॥ तब सम्पूर्ण देवता अपनी प्रकृतिको प्राप्त हुए इन्द्रको आने कर नारायणके सन्मुख

स्थित हुए ॥ २ ॥ देवता बोले, हे भगवन् ! आपके प्रसाद और आपके बाहुबलसे हम कालके सुखसे निकट जीवित हुए हैं ॥ २ ॥ हे भगवन् ! आपकी आज्ञासे हम देवता क्या करें, हे सनातन ! आपके चरणकी सेवा करनेकी इच्छा करते हैं ॥ ४ ॥ वेंचंपायन बोले, कपललोचन उनके यह वचन सुन शत्रुहन्ता देवताओंसे प्रसन्न हो वचन कहने लगे ॥ ५ ॥ श्रीभगवान् बोले, तुम जिसके निमित्त मैंने जित्त लोककी कत्तना की है उसको यन्पूर्वक पालन कर वेदाज्ञा मानते रहो ॥ ६ ॥ और यज्ञभागकी प्राप्ति हो अग्ने ऐश्वर्यको भोगो और मेरी निर्देश की हुई आज्ञाकी पालन करो ॥ ७ ॥

देवा ऊचुः ॥ त्वत्प्रसादेन भगवन् तव बाहुबलेन च ॥ जीवामोऽद्य महाबाहो निष्क्रान्ताश्चान्तकाननात् ॥ २ ॥ त्वच्छासनादि भगवन् किं कुर्वन्त्यदिते सुताः ॥ इच्छामः पादशुश्रूषां तव कर्तुं सनातन ॥ ४ ॥ वैष्णम्पायन उवाच ॥ तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां पुण्डरीकानिभेक्षणः ॥ उवाच वचनं देवान्सुदा युक्तो हताद्विषः ॥ ५ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ यो यस्य भक्तो लोको मयैव विहितः पुरा ॥ पाल्यतां स तु यत्नेन वियोगश्च क्वचित् क्वचित् ॥ ६ ॥ ऐश्वर्यं प्रतिपन्नाः स्य ऋतुभागपुरस्कृतम् ॥ मयैव पूर्वं निर्दिष्टो नियोगः प्रतिपाल्यताम् ॥ ७ ॥ शक्रं चोवाच भगवान्वचनं दुन्दुभिस्वनः ॥ इदं यथावत्कर्तव्यं सत्सु चासत्सु च त्वया ॥ ८ ॥ गच्छन्तु तपसा स्वर्गं मुनयः शंसितव्रताः ॥ तव लोकं सुरश्रेष्ठ सर्वकामदुषं सदा ॥ यायजूकाश्च ये केचिद्राक्षणाः क्षत्रिया विश्वः ॥ तेषां कामदुषा लोकाः स्वर्गमादिमनोहराः ॥ यज्ञैरिद्धा यायजूकाः फलं ते प्राप्नुक्वु च ॥ ९ ॥ भावः सद्धर्मशीलानामभावः पापकर्मणाम् ॥ सन्तः स्वर्गजितः सन्तु सर्वाश्रमनिवासिनः ॥ १० ॥

किर भगवान् मेघवत् गंजीरस्वरसे इन्द्रसे बोले, हे इन्द्र ! तुम यथायोग्य कर्तव्यकर्मको करो ॥ ८ ॥ व्रत करनेवाले मुनि तपसे स्वर्गको प्राप्त हो, हे सुरश्रेष्ठ ! तुमको सब कामना देनेवाले लोक प्राप्त होंगे जो कोई ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य यज्ञ करनेवाले हैं उनके निमित्त स्वर्गादि कामना देनेवाले मनोहर लोक हैं यज्ञको प्राप्त होकर फल प्राप्त होंगे ॥ ९ ॥ जहां धर्मशीलोंका भाव और पापियोंका अभाव है वे सर्व आश्रमके निवासी सन्त स्वर्गको प्राप्त

होते हैं ॥ १० ॥ सत्यशूर युज्यशूर दानशूर जो मनुष्य हैं तथा जो किसीकी निन्दा नहीं करते वह मनुष्य स्वर्गको प्राप्त होते हैं ॥ ११ ॥ जो पुरुष अश्रद्धावाले कामी अर्थमें तत्पर और शठ हैं अश्रद्धावाले तथा नास्तिक हैं वे मनुष्य नरकको प्राप्त हों ॥ १२ ॥ हे देवेश ! यह तुम ह्वारे कहे वचन मानो, तब मेरे स्थित होते हुए कोई शत्रु तुमको बाधा नहीं दे सकेगा ॥ १३ ॥ ऐसा कह शंखधारी नारायण अन्तर्धान हो गये और सम्पूर्ण देवताओंको बड़ा विस्मय हुआ ॥ १४ ॥ देवता इस अद्भुत वाराहचरित्रको देख वाराहको नमस्कार कर स्वर्गको गये ॥ १५ ॥ तब सत्यशूरा रणे शूरा दानशूराश्च ये नराः ॥ ते नराः स्वर्गमश्नुत सदा ये चानसूयवः ॥ ११ ॥ अभ्रह्मणाः पुरुषाः कामिनोऽर्षपराः शठाः ॥ अश्रद्धाया नास्तिकाश्च नरकं यान्तु मानवाः ॥ १२ ॥ एतावत्क्रियतां वाक्यं मयोक्तं त्रिदशेश्वराः ॥ ततो मायि स्थिते सर्वान्वाधिष्यन्ते न चारयः ॥ १३ ॥ इत्युक्त्वान्तर्हितो देवः शङ्खचक्रगदाधरः ॥ देवतानां च सर्वेषामभवादिस्मयो महान् ॥ १४ ॥ एतदत्यद्भुतं दृष्ट्वा वाराहचरितं सुराः ॥ नमस्कृत्वा वराहाय नाकपृष्ठमितो गताः ॥ १५ ॥ ततः स्वान्याधिपत्यानि प्रतिपन्नानि देवतेः ॥ सर्वलोकाधिपत्ये च प्रतिष्ठां वासवो गतः ॥ १६ ॥ विमुक्ता दानवगणैः प्रकृतिं धरणी गता ॥ स्वैर्यदेतोर्धरण्यास्तु ज्ञात्वा चागस्कृतान् गिरीन् ॥ १७ ॥ स्वेषु स्थानेषु संस्थाप्य पर्वतानां पुरंदरः ॥ चिच्छेद् भगवान्पक्षान्वज्रेण शतवर्षणा ॥ १८ ॥ सर्वेषामेव पक्षा वै छिन्नाः शक्रेण धीमता ॥ एकः सपक्षो मेनाकः सुरैस्तत्समयः कृतः ॥ १९ ॥ एष नारायणस्यायं प्रादुर्भावो महात्मनः ॥ वाराह इति विप्रेन्द्रैः पुराणे परिकीर्तितः ॥ २० ॥

देवता अपने २ अधिकारको प्राप्त हुए और इन्द्र सब लोकके अधिराजत्वको प्राप्त हुए ॥ १६ ॥ और दानवगणोंसे मुक्त हो पृथ्वी अपने स्वभावको प्राप्त हुई, पृथ्वीके स्थिति करनेके निमित्त उन अपराध करनेवाले पर्वतोंको ॥ १७ ॥ इन्द्रने उन उन स्थानोंमें स्थित कर दिया और उस अपराधसे तीक्ष्ण धारावाले वज्रसे उनके पंख छेदन कर डाले ॥ १८ ॥ इस प्रकार बुद्धिमान् इन्द्रने सबके पंख छेदन कर डाले, एक पंखवाला मेनाक रहा जिसके रक्षणार्थ देवताओंकी प्रतिज्ञा थी ॥ १९ ॥ यह महात्मा नारायणका प्रादुर्भाव है, विप्रेन्द्रोंने पुराणोंमें इसको वाराहचरित्र कहा है ॥ २० ॥

यह व्यासजीको अभिमत अनेक श्रुतियोंसे सम्मत है. यह अशुचि छतन्न और नृशंससे न कहना ॥ २१ ॥ क्षुद्र नीच छलद्वेषकारी अशिष्य और
 छतन्नको न देना ॥ २२ ॥ आयु यश पृथ्वी जयकी कामनावाले पुरुषोंको यह देवताओंकी जय श्रवण करनी चाहिये ॥ २३ ॥ यह पुराण वेदसे
 सम्बद्ध कल्याणरूप स्वस्तिदायक है सब जीवाँका शोधक और तत्काल विजयका देनेवाला है ॥ २४ ॥ हे कौरव्य ! यह तत्त्वसे समस्त तुमको
 कहा है. हे नृपश्रेष्ठ ! इस प्रकार वाराहप्रादुर्भावकी कथा है ॥ २५ ॥ जो पवित्र यज्ञोंसे देवता पितरोंका यजन करते हैं जो आत्माका आत्मासे
 कृष्णद्वैपायनमतं नानाश्रुतिसमाहितम् ॥ नाशुचेर्न कृतप्राय न नृशंसाय कीर्त्तयेत् ॥ २१ ॥ न क्षुद्राय न नीचाय न गुरुद्वेषकारिणे ॥
 नाशिष्याय तथा राजन्न कृतप्राय चैव हि ॥ २२ ॥ आयुष्कामेयंशः कामैर्महीकामैश्च मानवेः ॥ जयेषिभैश्च श्रोतव्यो देवानामेष वै
 जयः ॥ २३ ॥ पुराणवेदसंबद्धः शिवः स्वस्त्ययनो महान् ॥ पावनः सर्वसत्त्वानां तत्कालविजयप्रदः ॥ २४ ॥ एष कौरव्य
 तत्त्वेन कथितस्त्वनुपूर्वशः ॥ वाराहस्य नृपश्रेष्ठ प्रादुर्भावो महात्मनः ॥ २५ ॥ ये यजन्ति मत्सैः पुण्यैर्देवतानि पितृनपि ॥
 आत्मानमात्मना नित्यं विष्णुमेव यजन्ति ते ॥ २६ ॥ लोकायनाय त्रिदंशायनाय ब्रह्मायनायात्मभवायनाय ॥ नारायणायात्म-
 हितायनाय महावाराहाय नमस्क्रुरुष्व ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वाराहप्रादुर्भावे चत्वारिंशत्तमोऽ-
 ध्यायः ॥ ४० ॥ वैशंपायन उवाच ॥ वाराह एष कथितो नारसिंहमतः शृणु ॥ यत्र भूत्वा मृगेन्द्रेण हिरण्यकशिपुर्हतः ॥ १ ॥
 पुरा कृतयुगे राजन्हिरण्यकशिपुः प्रभुः ॥ दैत्यानामादिपुरुषश्चकार सुमहत्तपः ॥ २ ॥
 यजन करते हैं वे नित्य विष्णुका यजन करते हैं ॥ २६ ॥ लोकके स्थान देवताओंके स्थान ब्रह्म और आत्माके स्थान नारायण आत्माके हितकारी
 महावाराहजीको प्रणाम करो ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वाराहप्रादुर्भावे चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४० ॥
 वैशंपायन बोले, यह वाराहचरित्र कहा अब नृसिंहचरित्र सुनो. जिसमें मृगेन्द्ररूपसे भगवान् ने हिरण्यकशिको मारा ॥ १ ॥ हे राजन् ! सत्ययुगमें बली
 हिरण्यकशिपु दैत्योंके आदिपुरुषने बड़ा तप किया ॥ २ ॥

भारह सहस्र पांच सौ वर्षतक मौन हो वह जलमें स्थिति करता हुआ ॥ ३ ॥ शम दम और ब्रह्मचर्यसे तप और नियमसे ब्रह्माजी उत्तर प्रसन्न हो गये ॥ ४ ॥ तब स्वयंभू भगवान् स्वयं उस स्थानमें हंसयुक्त प्रकाशमान विमानपर चढ़कर आये ॥ ५ ॥ आदित्य वसु साध्य रुद्र मरुत विश्वेदेवा यक्ष राक्षस किन्नर उनके साथ थे ॥ ६ ॥ दिशा विदिशा नदी सागर नक्षत्र सुहूर्त आकाशचारी महाप्रह ॥ ७ ॥ देवर्षि ब्रह्मर्षि सिद्ध सप्तर्षि पुण्यत्मा राजर्षी गन्धर्व अप्सराओंके साथ ॥ ८ ॥ चराचरके गुरु देवताओंसे युक्त श्रीमान् ब्रह्मज्ञानियोंमें भेठ ब्रह्माजी यह वचन उससे बोले ॥ ९ ॥ ब्रह्माजी बोले, हे सुव्रत !

दश वर्षसहस्राणि शतानि दश पञ्च च ॥ जलवासी समभवत्स्थानमौनव्रतस्थितः ॥ ३ ॥ ततः शमदमाभ्यां च ब्रह्मचर्येण चैव हि ॥ ब्रह्मा प्रीतोऽभवत्तस्य तपसा नियमेन च ॥ ४ ॥ ततः स्वयंभूर्भगवान्स्वयमागम्य तत्र ह ॥ विमानेनार्कवर्णेन हंसयुक्तेन भास्वता ॥ ५ ॥ आदित्यैर्वसुभिः साध्यैर्मरुद्भिर्देवतेः सह ॥ रुद्रैर्विश्वसहायैश्च यक्षराक्षसकिन्नरैः ॥ ६ ॥ दिग्भिश्चाथ विदिग्भिश्च नदीभिः सागरेस्तथा ॥ नक्षत्रैश्च सुहूर्तैश्च स्वचरैश्च महाप्रहैः ॥ ७ ॥ देवैर्ब्रह्मर्षिभिः सार्द्धं सिद्धैः सप्तर्षिभिस्तथा ॥ राजर्षिभिः पुण्यकृद्भिर्गन्धर्वैरपसुरोगणैः ॥ ८ ॥ चराचरगुरुः श्रीमान्वृतो देवगणैः सह ॥ ब्रह्मा ब्रह्मविदां श्रेष्ठो देव्यं वचनमब्रवीत् ॥ ९ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ प्रीतोऽस्मि तव भक्तस्य तपसानेन सुव्रत ॥ वरं वरय भद्रं ते यथेष्टं काममाप्नुहि ॥ १० ॥ ततो हिरण्यकशिपुः प्रीतात्मा दानवोत्तमः ॥ कृताञ्जलिपुटः श्रीमान्वचनं चेदमब्रवीत् ॥ ११ ॥ हिरण्यकशिपुरुवाच ॥ न देवासुरगन्धर्वा न यक्षोऽसुरराक्षसाः ॥ न मानुषाः पिशाचाश्च निहन्तुर्मां कथंचन ॥ १२ ॥ ऋषयो नैव मां क्रुद्धाः सर्वलोकपितामह ॥ शत्रुषुस्तपसा युक्ता वर एष वृतो मया ॥ १३ ॥ न शस्त्रेण न चास्त्रेण गिरिणा पादपेन च ॥ न शुष्केण न चाद्र्रेण स्यान्न चान्येन म वधः ॥ १४ ॥

तुझ भक्तके इस तपसे मैं प्रसन्न हूँ. तुम्हारा जो यथेष्ट हो सो वर मांगो ॥ १० ॥ तब दानवोत्तम हिरण्यकशिपु प्रसन्न हुआ और हाथ जोड़कर वचन कहने लगा ॥ ११ ॥ हिरण्यकश्यप बोला, देव असुर गन्धर्व यक्ष राक्षस मनुष्य पिशाच इनसे किसी प्रकार मेरी मृत्यु न हो ॥ १२ ॥ और महातपसे युक्त ऋषियोंका शापभी मुझको न लगे यही वर मेरे लिये चाहिये ॥ १३ ॥ शस्त्र अस्त्र गिरि वृक्ष शुष्क गीली किसी वस्तुसे मेरा वध न हो ॥ १४ ॥

स्वर्ग पाताल आकाश पृथ्वीके अन्तर रातदिनेमें मेरा वध न हो ॥ १५ ॥ जो एकही हाथके प्रहारसे भृत्य बल वाहन सहित नष्ट करनेको समर्थ हो उससे मेरी मृत्यु हो ॥ १६ ॥ मैं सोम सूर्य वायु अग्नि जल अन्तरिक्ष नक्षत्र दशों दिशा क्रोध काम वरुण इन्द्र और यमके समान हो जाऊं ॥ १७ ॥ धनाध्यक्ष कुबेर यक्ष किंपुरुषोंका अधिपति हो जाऊं और युद्धके समय दिव्य अस्त्र मूर्तिमान् होकर मेरे निकट उपस्थित हों हे ब्रह्माजी ! यह वर मुझको दीजिये ॥ १८ ॥ ब्रह्माजी बोले, हे तात ! यह दिव्य वर मैंने तुमको दिये तुम अच्छी प्रकार सब कामनाओंको प्राप्त होने, इसमें सन्देह नहीं है ॥ १९ ॥

न स्वर्गेऽप्यथ पाताले नाकाशे नावनिस्थले ॥ न चाभ्यन्तरराज्यहोर्न चाप्यन्येन मे वधः ॥ १५ ॥ पाणिप्रहारेणैकेन सभृत्यबलवा-
हनम् ॥ यो मां नाशयितुं शक्तः स मे मृत्युर्भविष्यति ॥ १६ ॥ भवेयमहमेवार्कः सोमो वायुर्हुताशनः ॥ सलिलं चान्तरिक्षं च
नक्षत्राणि दिशो दश ॥ अहं क्रोधश्च कामश्च वरुणो वासवो यमः ॥ १७ ॥ धनदश्च धनाध्यक्षो यक्षकिंपुरुषाधिपः ॥ मूर्तिमन्ति च
दिव्यानि ममास्त्राणि महाहवे ॥ उपतिष्ठन्तु देवेश सर्वलोकपितामह ॥ १८ ॥ पितामह उवाच ॥ एते दिव्या वरास्तात मया दत्तास्त-
वाद्भुताः ॥ सर्वान्कामानल्पभावात्प्राप्स्यासि त्वं न संशयः ॥ १९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमुक्त्वा स भगवान् जगामाकाशमेव
च ॥ वैराज्यं ब्रह्मसदनं ब्रह्मर्षिगणसेवितम् ॥ २० ॥ ततो देवाश्च नागाश्च गन्धर्वा मुनिभिः सह ॥ वरप्रदानं श्रुत्वेव पितामह-
मुपस्थिताः ॥ २१ ॥ देवा ऊचुः ॥ वरेणानेन भगवन्वाधिष्यति स नोऽसुरः ॥ तत्प्रसीदस्व भगवन्वचोऽप्यस्य शिचिन्त्यताम् ॥ २२ ॥
वैशम्पायन उवाच ॥ भगवान्सर्वभूतानामादिकर्ता स्वयं प्रभुः ॥ स्रष्टा च हव्यकृष्यानामव्यक्तमहातृप्तिधुवः ॥ २३ ॥

वैशम्पायन बोले, यह कह ब्रह्माजी उस विराटरूप ब्रह्मसदन अपने स्थानको चले गये जो ब्रह्मर्षियोंसे सेवित है ॥ २० ॥ तब देवता और नाम गन्धर्व तथा मुनियोंके साथ इस वरका वृत्तान्त सुन ब्रह्माजीके पास आये ॥ २१ ॥ देवता बोले, हे भगवन् ! वह असुर हम सबको वरके कारण वध करेगा इस कारण हे भगवन् ! प्रसन्न हो आप इसके वधका उपाय विचारो ॥ २२ ॥ वैशम्पायन बोले, भगवान् सर्वभूतोंके आदिकर्ता स्वयं प्रभु हैं, वह हव्य

कव्योंके झट्टा अव्यक्त प्रकृति ध्रुवरूप हैं ॥ २३ ॥ वह प्रजापति सब लोकके हितकारी वचन सुनकर उन देवताओंको मनोहर वचनोंमें आश्वासन करने लगे ॥ २४ ॥ हे देवताओ ! वह तरेके फडको अवश्य प्राप्त होगा. तपके अन्तमें प्रमथान् विष्णु उसका वध करेंगे ॥ २५ ॥ सर्वे देवता कमलनाभ ब्रह्माजीका वचन सुन प्रसन्न हो अपने दिव्य स्थानोंको गये ॥ २६ ॥ वैशम्पायन बोले, वह दैत्य वरको प्राप्त हो सब प्रजाको बाधा देने लगा वह हिरण्यकशिपु दैत्य वरदानसे मोहित हो गया ॥ २७ ॥ सब मुनि और शंसितव्रताले ब्राह्मणोंके आश्रम तथा सत्यधर्मरत सर्वलोकहितं वाक्यं श्रुत्वा देवः प्रजापतिः ॥ आश्वासयामास सुरान्स शीतेवचनाम्बुभिः ॥ २४ ॥ अत्रिंशं त्रिंशस्तेन प्राप्तं तपसः फलम् ॥ तपसोऽन्ते स भगवान्वधं विष्णुः करिष्यति ॥ २५ ॥ एतच्छ्रुत्वा सुराः सर्वे वाक्यं पङ्क्तमजन्मनः ॥ स्वानि स्थानानि दिव्यानि प्रतिजग्मुर्मुदान्विताः ॥ २६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ लब्धमात्रे वरे तस्मिन्सर्वाः सोऽवाधत प्रजाः ॥ हिरण्यकशिपुर्दैत्यो वरदानने दार्पितः ॥ २७ ॥ आश्रमेषु मुनिर्सर्वान् ब्राह्मणान्संशितव्रतान् ॥ सत्यधर्मरतान्दान्तान्धर्षयामास वीरवान् ॥ २८ ॥ देवास्त्रिभुवनस्थाश्च पराजित्य महासुरः ॥ त्रैलोक्यं वशमानीय स्वर्गे वसति दानवः ॥ २९ ॥ यदा वरमदोन्मत्तश्चोदितः कालधर्मणा यज्ञियानकरोद्दैत्यान्देवतानप्ययाज्ञियान् ॥ ३० ॥ तदादित्याश्च साध्याश्च विश्वे च वसवस्तथा ॥ रुद्रा देवगणा यक्षा देवद्विजमहर्षयः ॥ ३१ ॥ शरण्यं शरणं विष्णुमुपतस्थुर्महाबलम् ॥ देवं देवमयं यज्ञं ब्रह्मदेवं सनातनम् ॥ ३२ ॥ भूतं भव्यं भविष्यं च प्रजालोकनमस्कृतम् ॥ देवां ऊचुः ॥ नारायण महाभाग देव त्वां शरणं गताः ॥ ३३ ॥

दान्त चतुरोंको धर्षित करने लगा ॥ २८ ॥ इस प्रकार वह असुर त्रिलोकीके देवताओंको जीत त्रिलोकीको वशमें कर स्वर्गमें रहने लगा ॥ २९ ॥ महाबली जब विष्णुकी वरदानसे मदोन्मत्त हो कालधर्मसे प्रेरित हुआ तब दैत्योंको यज्ञभागभोगी और देवताओंको यज्ञभागरहित करता हुआ ॥ ३० ॥ तब आदित्य साध्य विश्वेदेवा वसु रुद्र देवगण यज्ञ देव द्विज महर्षि ॥ ३१ ॥ शरणामतस्तल शरणमें उपस्थित हुए जो देवदेव यज्ञमय ब्रह्मदेव सनातन हैं ॥ ३२ ॥ भूत भव्य भविष्यरूप प्रजा लोकसे नमस्कृत है उनके निकट जाय देवता बोले

हे नारायण महात्मान देव ! हम आपकी शरण हैं ॥ ३३ ॥ तुमही हमारे परमघाता गुरु और ब्रह्मादिकोंके देव हो ॥ ३४ ॥ तुमही कमललोचन शत्रु-
ओंको मय देते हो हे प्रभु ! आप दैत्योंके नाशक और हमारे मंगलकर्ता हो ॥ ३५ ॥ हे प्रभो ! दैत्येन्द्र हिरण्यकशिपुको मारकर हमारी रक्षा करो
विष्णु बोले, हे देवताओ ! मय त्पानो में तुमको अमय देता हूं ॥ ३६ ॥ हे देवताओ ! तुम बहुत शीघ्र अपने स्थानको प्राप्त होगे, मैं उस वरदार्पित
दैत्यको गणसहित ॥ ३७ ॥ जो देवताओंसे अवध्य है वध कर डालूंगा, वैशंपायन बोले, यह कह भगवान् ने देवताओंको विदा कर ॥ ३८ ॥ हिरण्यक-

त्वं हि नः परमो घाता त्वं हि नः परमो गुरुः ॥ त्वं हि नः परमो देवो ब्रह्मादीनां सुरोत्तम ॥ ३४ ॥ त्वं पद्मामलपत्राक्ष शत्रुपक्षभ-
यावह ॥ क्षयाय दितिवंशस्याक्षयाय भव नः प्रभो ॥ ३५ ॥ त्रायस्व जहि दैत्येन्द्रं हिरण्यकशिपुं प्रभो ॥ विष्णुरुवाच ॥ भयं
त्यजध्वममरा अभयं वो ददाम्यहम् ॥ ३६ ॥ तथैव त्रिदिवं देवाः प्रतिपत्स्यथ मा चिरम् ॥ एष तं सगणं दैत्यं वरदानेन दधि-
तम् ॥ ३७ ॥ अवध्यममरेन्द्राणां दानवेन्द्रं निहन्म्यहम् ॥ वैशंपायन उवाच ॥ एवमुक्त्वा स भगवान्विसृज्य त्रिदिवोक्तसः ॥ ३८ ॥
वधं संकल्पयित्वा तु हिरण्यकशिपां प्रभुः ॥ ३९ ॥ सोऽचिरं तेन कालेन हिमवत्पार्श्वमागतः ॥ किंतु रूपं समाख्याय निहन्म्येनं
महासुरम् ॥ ४० ॥ यत्सिद्धिकरमाशु स्यादध्याय विबुधादिवः ॥ अनुत्पन्नं ततश्चक्रे सोऽत्यन्तं रूपमास्थितः ॥ ४१ ॥ नारसिं-
हमनाघृष्यं दैत्यदानवरक्षसाम् ॥ सहायं तु महाबाहुजंग्राहोकारमेव च ॥ ४२ ॥ अर्षोकारसहायोऽसौ भगवान्विष्णुरव्ययः ॥
हिरण्यकशिपोः स्थानं जगाम प्रभुरीश्वरः ॥ ४३ ॥

शिपुके वधका संकल्प कर ॥ ३९ ॥ थोड़ेही समयमें हिमालयके सर्गिण आये और विचार किया कैसे करके धारण कर इस दैत्यको मारूं ॥ ४० ॥
जो उसके वधमें शीघ्र सिद्धिका देनेवाला हो तब वह अपूर्वरूपको धारण करते हुए ॥ ४१ ॥ जो देवदानवोंसे अपृथग् नारसिंह नामसे विख्यात है और
सहायके निमित्त महाबाहुने सर्वात्मा ओंकारको लिया ॥ ४२ ॥ प्रभु अविनाशी विष्णु ओंकारकी सहाय ले हिरण्यकशिपुके स्थानको गये ॥ ४३ ॥

सूर्यकी समान तेज चन्द्रमाकी समान कान्ति आधा। मनुष्य और आधा सिंहका शरीर कर ॥ ४४ ॥ नारसिंहशरीर हाथसे हाथ स्पर्श किये बड़ी दिव्य मनोहर विस्तारवाली ॥ ४५ ॥ सब कामसे युक्त हिरण्यकशिपुकी सभाको देखते हुए जो सौ योजनके विस्तार और एक सौ पचास योजन चौड़ी थी ॥ ४६ ॥ आकाशमें फिरनेवाली यथेष्ट ममन करनेवाली पांच योजन ऊंची जरा शोक क्लमसे रहित कंपरहित मनोहर शुभ ॥ ४७ ॥ सुंदर आसनवाली मनोहर तेजसे प्रकाशमान अन्तरजलसे युक्त विश्वकर्माकी यनाई दिव्य रत्नमय वृक्ष पुष्पफलोंसे युक्त ॥ ४८ ॥ नील पीत सित श्याम सित लाल अवतान तेजसा भास्कराकारः कान्त्या चन्द्र इवापरः ॥ नरस्य कृत्वाद्दतनुं सिंहस्याद्दतनुं विभुः ॥ ४९ ॥ नारसिंहेन वपुषा पाणि संस्पृश्य पाणिना ॥ ततोऽपश्यत विस्तीर्णा दिव्या रम्या मनोरमाम् ॥ ५० ॥ सर्वकामयुतां शुभ्रां हिरण्यकशिपोः सभाम् ॥ विस्तीर्णा योजनशत शतमध्याद्भुच्छ्रिताम् ॥ ५१ ॥ विद्यायुतां कामगमां पञ्चयोजनमुच्छ्रिताम् ॥ जराशोकक्लमत्यक्तां निष्प्रकम्पां शिवां शुभाम् ॥ ५२ ॥ शुभासनवती रम्या ज्वलन्तीमिव तेजसा ॥ अन्तःसलिलसंयुक्तां विदितां विश्वकर्मणा ॥ दिव्यरत्नमयेवृक्षैः फलपुष्पप्रदेयुताम् ॥ ५३ ॥ नीलपीतासितश्यामैः सितैर्लोहितकैरपि ॥ अवतानैस्तथा गुल्मेर्मञ्जरीशतधारिभिः ॥ ५४ ॥ सितान्धवनसंकाशां पुवन्तीवाप्सु दृश्यते ॥ धन्यासनवती रम्या ज्वलन्ती इव तेजसा ॥ ५५ ॥ प्रभावती भास्वरा च दिव्यगन्धमनोरमा ॥ नासुखा न च दुःखा सा न शीता न च धर्मदा ॥ ५६ ॥ न क्षुत्पिपासे न ग्लानिं प्राप्य तां प्राप्नुवन्ति हि ॥ नानारूपैर्विरचिता विचित्रैरतिभास्वरेः ॥ ५७ ॥ स्तम्भेर्मणिमयेर्दिव्यैः शाश्वती चाक्षता च सा ॥ अतिचन्द्रं च सूर्यं च पावकं च स्वयंप्रभा ॥ ५८ ॥ (ज्ञानर) गुल्म (गुच्छे) शतधाराकी मंजरीसे युक्त ॥ ५९ ॥ श्वेतमेवकी समान जलमें पैरती हुईसी बसती है। वह भेठ आसनवती तेजसे प्रज्वलित दीखती थी ॥ ६० ॥ वह प्रभावती प्रकाशमान दिव्य मंथसे मनोरम सुस्वरूप दुःस्वरहित न शीत न गरमीसे युक्त ॥ ६१ ॥ उसमें रहनेवाले क्षुधा पिपासा ग्लानिको प्राप्त नहीं होते हैं। वह अनेक प्रकारके चित्र विचित्र कान्तिमान् रूपोंसे प्राप्त थी ॥ ६२ ॥ उसमें दिव्य मणिमय स्तम्भ लगे थे। सब प्रकारसे स्वच्छ थी कहींसे टूटी फूटी न थी। चन्द्रसूर्यके तेजको अतिक्रमण करनेवाली स्वयं कान्तिमान् अग्निसे अधिक तेजयुक्त ॥ ६३ ॥

और स्वर्गमें स्थित हुई सूर्यकी भर्त्सना करती हुई प्रकाशित है. सम्पूर्ण काम जो दिव्य और जो मातृष है ॥ ५४ ॥ वे बड़े बड़े रससे युक्त और अक्षय भक्ष्य भोज्य पवित्र गन्धवाली माला और नित्य पुष्पफलवाले वृक्ष हैं ॥ ५५ ॥ उष्ण और शीतल जल शीत और उष्ण पदार्थ हैं पुष्पित अग्रभागवाले महाशास्त्रायुक्त प्रवाल अंकुर धारण किये ॥ ५६ ॥ लता और वितानों युक्त नदी और सरोवरोंमेंसे बड़ी मनोहरता प्रभुने देली ॥ ५७ ॥ अनेक प्रकारके द्रुम और मृगेन्द्र देखे गये. नृप ले पुष्प और रसवाले फल ॥ ५८ ॥ शीतल जलवाले जहाँ तहाँ सरोवर और उन्नत सप्तामें प्रभुने अनेक

दीप्यते नाकपृष्ठस्था भर्त्सयन्तीव भास्करम् ॥ सर्वे च कामाः प्रचुरा ये दिव्या ये च मातृषाः ॥ ५४ ॥ रसवन्तः प्रभूताश्च भक्ष्यभोज्यं तथाक्षयम् ॥ पुष्पगन्धाः स्रजस्तत्र नित्यपुष्पफलद्रुमाः ॥ ५५ ॥ उष्णे शीतानि तोयानि शीते चोष्णानि सन्ति वै ॥ पुष्पिताग्रान्महाशास्त्रान्प्रवालाङ्कुरधारिणः ॥ ५६ ॥ लतावितानसंछिन्नान्सरित्सु च सरःसु च ॥ मनोहराश्च विविधान् वृक्षान् स तदा प्रभुः ॥ ५७ ॥ द्रुमान्बहुविधास्तत्र मृगेन्द्रो वृक्षो द्रुतम् ॥ गन्धवन्ति च पुष्पाणि रसवन्ति फलानि च ॥ ५८ ॥ तानि शीतानि तोयानि तत्र तत्र सरांसि च ॥ अपश्यत्सर्वतीर्थानि सभायां शतशो विभुः ॥ ५९ ॥ नल्लिनेः पुण्डरीकेषु शतपत्रैः सुगन्धिभिः ॥ रक्तेः कुवलयैर्नीलेः कुमुदेः संयुतानि च ॥ ६० ॥ सकान्तेर्षार्तिराष्ट्रेषु राजहंसेः सुरप्रियैः ॥ कादम्बेश्चक्रवाकेश्च सारसेः कुरोरपि ॥ ६१ ॥ विमलरूपटिकाभानि पाण्डुराहदलानि च ॥ कलहंसोपनीतानि सारिकाभिरुतानि च ॥ ६२ ॥

तीर्थ देखे ॥ ५९ ॥ नल्लिप पुण्डरीक शतपत्र सुगंधिवाले पदार्थ रक्त कुवलय नील वणक कुवलय कुमुदोंसे संयुक्त ॥ ६० ॥ कान्तिमान् हंस देवप्रिय राजहंस कादम्ब चक्रवाक सारस कुरर ॥ ६१ ॥ विमल रूपटिक मणिकी समान पाण्डुवर्णके अहदल कमल मनोहर शब्द करनेवाले तोते और सारका हंसादिके शब्दोंसे व्याप्त ॥ ६२ ॥

६. १.
॥ ८६ ॥

गंधवाली सुन्दर पुष्पमंजरीधारिणी वृक्षोंके अग्रभागमें अनेक प्रकारकी पुष्प धारण करनेवाली छता ॥ ६३ ॥ केतक अशोक सरल पुत्राग तिलक
अर्जुन आम नीप नागपुष्प कदम्ब बहुल धव ॥ ६४ ॥ मियंछु पाटलीवृक्ष शाल्मकी हरिद्रक शाल ताल मियाल मनोहर चंपक ॥ ६५ ॥ तथा
औरभी पुष्पोंवाले वृक्ष उस समामें शोभित थे, बिंदुमके लज्जिम वृक्ष दावामित्री समान काम्तिवाले ॥ ६६ ॥ रक्तचवाले सुन्दर शाखासे बहुत तालकी बराबर

भा. बी.

प. १३. ४६

गन्धवत्यः शुभास्तत्र पुष्पमञ्जरिधारिणीः ॥ दृष्टवान्पादपात्रेषु नानापुष्पधरा लताः ॥ ६३ ॥ केतकाशोकसरलाः पुत्रागतिलकार्जुनाः ॥
चूता नीपा नागपुष्पाः कदम्बबहुला धवाः ॥ ६४ ॥ प्रियङ्गुपाटलीवृक्षाः शाल्मल्यः सहरिद्रकाः ॥ शालास्तालाः प्रियालाश्च
चम्पकाश्च मनोरमाः ॥ ६५ ॥ तथा चान्ये व्यराजन्त सभायां पुष्पिता द्रुमाः ॥ वेदुमाश्च द्रुमानीका दावामिञ्जलितप्रभाः ॥ ६६ ॥
स्कन्धवन्तः सुशाखाश्च बहुतालसमुद्भवाः ॥ अञ्जनाशोकवर्णाभा भान्ति वंजुलका द्रुमाः ॥ ६७ ॥ वरणा वत्सनाभाश्च पनसाश्चन्दनेः
सह ॥ नीलाः सुमनसश्चैव पीताम्लाश्चत्यतिन्दुकाः ॥ ६८ ॥ प्राचीनामलका लोभ्रा मल्लिका भद्रदारवः ॥ आम्रातकास्तथा
जम्बूलकुचाः शैलवालुकाः ॥ ६९ ॥ सर्षार्जुनाः कन्दुरवाः पतङ्गाः कुटजास्तथा ॥ रक्ताः कुरवकाश्चैव नीपाश्चामरुभिः सह ॥ ७० ॥
कदम्बाश्चैव भव्याश्च दाडिमिवीजपूरकाः ॥ कालीयका दुकुलाश्च दिङ्गवस्तेलपर्णिकाः ॥ ७१ ॥ खर्जूरं नालिकेराश्च पूगवृक्षा
हरितकी ॥ मधूकाः सप्तपर्णाश्च बिल्वाः पारावतास्तथा ॥ ७२ ॥

ऊंचे अंजन और अशोककी समान वर्णवाले वंजुल वृक्ष शोभित होते हैं ॥ ६७ ॥ वरण वत्सनाम पनस चंदन नील सुमन पीत इमली अरवत्य तिलुक ॥ ६८ ॥
प्राचीन आमलक लोभ्र मल्लिका भद्रारु आम्रातक जम्बूलकुच शैलवालु ॥ ६९ ॥ सर्ष अर्जुन कंदुर पतंग कुटज रक्तकुरवक नीप अमरु ॥ ७० ॥
कदम्ब भव्य दाडिम बीजपूरक कालीयक दुकुल हिंछु तेलपर्णिक ॥ ७१ ॥ खजर नारिकेल सुपारीके वृक्ष इरै मधूक सप्तपर्ण बेल पारावत ॥ ७२ ॥

॥ ८६ ॥

पनस तमाल अनेक गुल्मलताओंसे युक्त और अनेक प्रकारकी लता पत्र पुष्प फलवाली ॥ ७३ ॥ इससे आदि लेकर औरभी बहुतसे वनके वृक्ष अनेक प्रकारके पुष्प फलोंसे युक्त विराजित होते थे ॥ ७४ ॥ चकोर शतपत्र मतवाली कोकिलाओंसे युक्त सारिका फूले फले महावृक्ष सुक रहे हैं ॥ ७५ ॥ रक्त पीत लाल वर्णके पक्षी पेड़ोंपर बैठे हैं और प्रसन्न मन हो परस्पर एक दूसरेको देख रहे हैं ॥ ७६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥ वैशंपायन बांटे, उस सभामें वह दैत्येन्द्र हिरण्यकश्यप चार सौ हाथके लम्बे चौड़े

पनसाश्च तमालाश्च नानागुल्मलतावृताः ॥ लताश्च विविधाकाराः पत्रपुष्पफलोपगाः ॥ ७३ ॥ एते चान्ये च बहवस्तत्र काननजा द्रुमाः ॥ नानापुष्पफलोपेता व्यराजन्त समन्ततः ॥ ७४ ॥ चक्रोराः शतपत्राश्च मत्तकोकिलसारिकाः ॥ पुष्पितान्फलिताग्राश्च संपतन्ति महाद्रुमान् ॥ ७५ ॥ रक्तपीतारुणास्तत्र पादपाग्रगता द्विजाः ॥ परस्परमवेक्षन्त प्रहृष्टा जीवजीवकाः ॥ ७६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तस्यां सभायां दैत्येन्द्रो हिरण्यकशिपुः प्रभुः ॥ आसीन आसने दिव्ये नल्वमात्रे प्रमाणतः ॥ १ ॥ दिवाकरनिभे रम्ये दिव्यास्तरणसंभृते ॥ रराज शुचिरं राजन् ज्वलत्क्राञ्चनकुण्डलः ॥ २ ॥ तस्य दैत्यपतेर्मन्दं विरजस्कं समन्ततः ॥ दिव्यगन्धवद्भस्तत्र मारुतः सुमुखो ववो ॥ ३ ॥ तत्र देवाः सगन्धर्वा गणेरप्सरसा वृताः ॥ दिव्यतालेन दिव्यानि जगुर्गीतानि गायनाः ॥ ४ ॥ विश्वाची सहजन्धा च प्रम्लोचेत्य- भिविश्रुता ॥ दिव्या च सौरभेया च समोची पुञ्जिकस्थला ॥ ५ ॥ मिश्रकेशी च रम्भा च चित्रसेना शुचिस्मिता ॥ चारुनेत्रा घृताची च मेनका चोर्वशी तथा ॥ ६ ॥

सिंहासनमें स्थित था ॥ १ ॥ सूर्यकी समान कान्तिमान् दिव्य बिछौमे उसपर बिछ रहे थे, उसपर प्रकाशमान कानोंमें कुंडल पहरे ॥ २ ॥ उस दैत्यपतिके मंदमंद रजरहित दिव्य गंधवाली पवन सन्मुख बहने लगी ॥ ३ ॥ वहां देवता गंधर्व अप्सराओंके गणोंसे युक्त दिव्य तालस्वरसे अनेक प्रकारके गीत गाने लगे ॥ ४ ॥ विश्वाची सहजनी प्रम्लोचा दिव्या सौरभेया सभीची पुंजिकस्थला ॥ ५ ॥ मिश्रकेशी रम्भा चित्रसेना शुचिस्मिता

चारुनेत्रा घृताची मेनका उर्वशी॥६॥ इससे आदि ले औरभी सहस्रों अप्सरा नृत्यगीतमें चतुर राजा हिरण्यकश्यपके समीप स्थित होती हैं॥७॥ और वहा हिरण्यकश्यप विचित्र वस्त्र भूषण धारण किये सहस्र क्रियोसे परिवृत ज्वलितकुंडल स्थित हुए ॥ ८ ॥ वहां बैठे हुए महाबाहु प्रभु हिरण्यकश्यपको बड़े बड़े बली दानव उपासना करते थे ॥ ९ ॥ बालि वैरोचन नरक पृथ्वीजय प्रह्लाद विप्रचित्ति महाबली गविष्ठ ॥ १० ॥ अहंता क्रोधहंता सुमना सुमति स्वर षटोदर महापार्श्व क्रयन पिठर ॥ ११ ॥ विश्वरूप रूप विरूप महाद्युति रावण वाली मेघवात महारव ॥ १२ ॥ कटाभ विकटाभ संहार इन्द्रतापन दैत्यदा-

एताः सहस्रशश्चान्या नृत्यगीतविशारदाः ॥ उपतिष्ठन्ति राजानं हिरण्यकशिपुं तदा ॥७॥ हिरण्यकशिपुस्तत्र विचित्राभरणाम्बरः ॥ स्त्रीसहस्रेः परिवृतस्तस्थौ ज्वलितकुण्डलः ॥८॥ तत्रासीनं महाबाहुं हिरण्यकशिपुं प्रभुम् ॥ उपासन्ति दितेः पुत्राः सर्वे लम्बवराः पुरा ॥ ९ ॥ बालिवैरोचनस्तत्र नरकः पृथिवीजयः ॥ प्रह्लादो विप्रचित्तिश्च गविष्ठश्च महासुरः ॥ १० ॥ अहंता क्रोधहंता च सुमनाः सुमतिः स्वरः ॥ षटोदरो महापार्श्वः क्रयनः पिठरस्तथा ॥ ११ ॥ विश्वरूपश्च रूपश्च विरूपश्च महाद्युतिः ॥ दशग्रीवश्च वाली च मेघवात महारवः ॥ १२ ॥ कटाभो विकटाभश्च संहारश्चेन्द्रतापनः ॥ दैत्यदानवसंघाश्च सर्वे ज्वलितकुण्डलाः ॥ १३ ॥ स्रग्विणो वाग्मिनः सर्वे सर्वे सुचरितव्रताः ॥ सर्वे लम्बवराः शूराः सर्वे विगतमृत्यवः ॥ १४ ॥ एते चान्ये च बहवो हिरण्यकशिपुं प्रभुम् ॥ उपासन्ते महात्मानं सर्वे दिव्य पीरच्छदाः ॥ १५ ॥ विमानैर्विविधैरग्रेभ्राजमानैरिवाचिभिः ॥ स्रग्विणो भूषणधरा यान्ति चायागतिं हेलया ॥ १६ ॥ विचित्राभरणोपेता विचित्रवसनास्तथा ॥ विचित्रशस्त्रकवचा विचित्रध्वजवाहनाः ॥ १७ ॥

नवोंके समूह सम्पूर्ण ज्वलित कुंडल पहरे ॥ १३ ॥ सब मालाधारी बड़े बोलनेवाले सबही सचरित्र सबही वर पाये और सबही मृत्युके भयसे रहित ॥ १४ ॥ इनके सिवाय औरभी बहुतसे प्रभु हिरण्यकश्यप महात्माको दिव्य वस्त्र पहरे उपासना करते थे ॥ १५ ॥ अनेक विमान कान्तिमान् विराजमान थे. वे माला भूषणधारी आते और जाते थे ॥ १६ ॥ विचित्र आभरण और विचित्र वस्त्र पहरे विचित्र शस्त्र कवच और विचित्र ध्वज और

बाहनवाले ॥ १७ ॥ महेन्द्रधनुषकी समान विचित्र अंगद धारण किये भूषित अंग दानव कैय नित्य हिरण्यकश्यपकी उपासना करते थे ॥ १८ ॥ उस
 दिव्य सभामें पर्वतकी समान असुर सुवर्णके मुकुट पहरे सूर्यकी समान कान्तिमान् ॥ १९ ॥ सुवर्णमणियोंकी बनी विचित्र वेदिकामें जहां सहस्रों रत्न
 जटित थे, हाथीशान्तके झरोखे लगे हुए उस सभाको मृगेन्द्रने देखा ॥ २० ॥ कि सोनेके विमल द्वारसे भूषित अंग सूर्यकी किरणोंकी समान प्रकाशित
 सहस्रों असुरोंसे निषेधित मृगराजने सभामें हिरण्यकश्यपको देखा ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां नारसिंहे द्विचत्वारिंशोऽ-
 महेन्द्रचापसंकाशेर्विचित्रैरङ्गदैवैरेः ॥ भूषिताङ्गा दितेः पुत्रास्तमुपासन्ति नित्यशः ॥ १८ ॥ तस्यां सभायां दिव्यायामसुराः पर्वतो-
 पमाः ॥ हिरण्यमुकुटाः सर्वे दिवाकरसमप्रभाः ॥ १९ ॥ कनकमणिविचित्रवेदिकायामुपाहितरत्नसदृशवीथिकायाम् ॥ स ददर्श
 मृगाधिपः सभायां सुरुचिरदन्तगवाक्षसंवृतायाम् ॥ २० ॥ कनकविमलद्वारभूषिताङ्गं दितितनयं स मृगाधिपो ददर्श ॥ दिवसकर-
 करप्रभं ज्वलन्तमसुरसदृशगणैर्निषेध्यमाणम् ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नारसिंहे द्विचत्वारिंशोऽ-
 ध्यायः ॥ ४२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो दृष्ट्वा महाबाहुं कालचक्राम्बिषाणतम् ॥ नारसिंहवपुच्छन्नं भस्मच्छन्नमिवानलम् ॥ १ ॥
 विकुञ्चितसटं तस्य नारसिंहस्य भारत ॥ रूपोदार्यं बभौ तत्र सदृशशशिसन्निभम् ॥ २ ॥ अहो रूपमिदं चित्रं शंसकुन्देन्दुम-
 न्निभम् ॥ अनुवन् दानवाः सर्वे हिरण्यकशिपुश्च सः ॥ ३ ॥ एवं हि ब्रुवतां तेषां निर्दग्धानां महात्मनाम् ॥ नारसिंहेन चक्षुर्भूयां
 चोदिताः कालधर्मणो ॥ ४ ॥ हिरण्यकशिपोः पुत्रः प्रह्लादो नाम वीर्यवान् ॥ दिव्येन चक्षुषा सिंहमपश्यद्देवमागतम् ॥ ५ ॥
 रिशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥ वैशम्पायन बोले, तब उन कालचक्रकी समान आते हुए महाभुजावाले राक्षसे डके अधिकी समान नृसिंहशरीरधारीको
 देखा ॥ १ ॥ हे राजन् ! उनकी केसरके बाल टेढ़े थे और सहस्र चन्द्रमाकी समान उनके रूपकी उदारता थी ॥ २ ॥ आगे यह कुन्द और इन्दुकी
 समान बड़ा विचित्ररूप है ऐसे वे सब दानव हिरण्यकश्यपसे कहने लगे ॥ ३ ॥ इस प्रकार कहते हुए उन महात्माओंको कालधर्मसे प्रेरित कर नृसिं-
 हजी अपनी दृष्टिसे भस्म करने लगे ॥ ४ ॥ हिरण्यकश्यपका वीर्यवान् प्रह्लाद पुत्र दिव्य दृष्टिसे देखकर नृसिंहजीको देव मानता हुआ ॥ ५ ॥

उनका सुवर्णपर्वतके समान अपूर्व शरीर देखा सब दानव और द्विरण्यकश्यपजी विस्मित हो गया ॥ ६ ॥ प्रह्लाद बोले, हे राजराज महाबाहो ! हे दैत्योंके प्रथम ! इस प्रकारका नारसिंह शरीर न हमने देखा न सुना ॥ ७ ॥ क्या यह दिव्यरूप अव्यक्तसे प्रगट है हमारे मनमें यह बात आती है कि यह घोर दैत्योंके नाशक है ॥ ८ ॥ देवता इनके शरीरमें स्थित हैं सागर नदी हिमालय पारियात्र तथा और जो दूसरे पर्वत हैं ॥ ९ ॥ नक्षत्रोंके सहित चन्द्रमा आदित्य अश्विनीकुमार कुबेर वरुण यम राक्षसपति इन्द्र ॥ १० ॥ मरुत देव गन्धर्व तपोधन मुनि नाग यक्ष पिशाच भीमपराक्रमी राक्षस ॥ ११ ॥

तं दृष्ट्वा रुक्मशैलाभमपूर्वा तनुमास्थितम् ॥ विस्मिता दानवाः सर्वे द्विरण्यकशिपुश्च सः ॥ ६ ॥ प्रह्लाद उवाच ॥ महाराज महाबाहो दैत्यानामादिसंभव ॥ न श्रुतं नैव दृष्टं च नारसिंहमिदं वपुः ॥ ७ ॥ अव्यक्तप्रभवं दिव्यं किमिदं रूपमद्भुतम् ॥ दैत्यान्तकरणं घोरं शंसतीव मनांसि नः ॥ ८ ॥ अस्य देवाः शरीरः सागराः सरितस्तथा ॥ हिमवान्पारियात्रश्च ये चान्ये कुलपर्वताः ॥ ९ ॥ चन्द्रमाः सह नक्षत्रैरादित्याश्चाश्विनो तथा ॥ धनदो वरुणश्चैव यमः शक्रः शचीपतिः ॥ १० ॥ मरुतो देवगन्धर्वा मुनयश्च तपोधनाः ॥ नागा यक्षाः पिशाचाश्च राक्षसा भीमविक्रमाः ॥ ११ ॥ ब्रह्मदेवः पशुपतिर्लज्जतस्तथा विभ्रान्ति वै ॥ स्थावराणि च भूतानि जङ्गमानि तथैव च ॥ १२ ॥ भवाश्च सदितोऽस्माभिः सर्वे दैत्यगणैर्जुतः ॥ विमानश्चतस्रंकीर्णा तथाभ्यन्तरजा सभा ॥ १३ ॥ सर्वत्रिभुवनं राजन् लोकधर्मश्च शाश्वतः ॥ दृश्यते नारसिंहेऽस्मिन्यथेन्दो विमलं जगत् ॥ १४ ॥ प्रजापतिश्चात्र मनुर्महात्मा ग्रहाश्च योगाश्च मही नभश्च ॥ उत्पातकालश्च धृतिः स्मृतिश्च रजश्च सत्त्वं च तपो दमश्च ॥ १५ ॥ सनत्कुमारश्च महानुभावो विश्वे च देवाप्सरसश्च सर्वाः ॥ क्रोधश्च कामश्च तथैव हर्षो दर्पश्च मोहः पितरश्च सर्वे ॥ १६ ॥

ब्रह्मदेव पशुपति इनके ललाटमें लक्षित होते हैं तथा स्थावर जंगम प्राणी ॥ १२ ॥ आपसी सब दैत्यगणोंके सहित सैकड़ों विमानोंसे संयुक्त यह सभा ॥ १३ ॥ हे राजन् ! सम्पूर्ण त्रिलोकी लोकके शाश्वत धर्म इन नारसिंहमें दीखते हैं चन्द्रमामें जगत्की छाया दीखती है ॥ १४ ॥ इनमें प्रजापति महात्मा मनु ग्रह योग पृथ्वी आकाश उत्पात काल धृति स्मृति रज सत्त्व तप दम ॥ १५ ॥ महानुभाव सनत्कुमार विश्वेदेवा अप्सरा क्रोध

काम हर्षदो मोह वितर इनमें दीखते हैं ॥ १६ ॥ यह वचन प्रह्लादने हिरण्यकशिपुसे कहे और वह देरपुत्र कुछ काल तक नीचेको मुत किये ध्यान करता रहा ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां नारसिंहे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥ वैशम्पायन बोले, हिरण्यकशिपु इस प्रकार प्रह्लादके वचन सुन वह गणाधिप सब दानवांसें कहने लगा ॥ १ ॥ इस अपूर्वशरीरधारी मृगेन्द्रको शीघ्र पकड़ लो और जो कोई सन्देह हो तो इस वनमें फिरनेवालेको मार डालो ॥ २ ॥ यह सुन वह सब दानव उस भीमपराक्रमी मृगेन्द्रके ऊपर बड़े वेगसे अस्त्रोंका प्रहार

इत्येवमुक्त्वा स च देत्यराजं हिरण्यनामानमाविस्मयेन ॥ दध्यौ च देत्येश्वरपुत्र उग्रं महामातः किञ्चिदधोमुखः प्राक् ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नारसिंहे त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ प्रह्लादस्य च तच्छ्रुत्वा हिरण्यकशिपुर्वचः ॥ उवाच दानवान्सर्वान्सगणांश्च गणाधिपः ॥ १ ॥ मृगेन्द्रो गृह्यतां शीघ्रमपूर्वां तनुमास्थितः ॥ यदि वा संशयः कश्चिद्रथ्यतां वनगोचरः ॥ २ ॥ तच्छ्रुत्वा दानवाः सर्वे मृगेन्द्रं भीमविक्रमम् ॥ परिक्षिप्तो मुदितास्त्रासयामासुरोजसा ॥ ३ ॥ सिंहनादं नदित्वा तु पुनः सिंहो महाबलः ॥ बभञ्ज तां सभां रम्यां व्यादितास्य इवान्तकः ॥ ४ ॥ सभायां भग्यमानायां हिरण्यकशिपुः स्वयम् ॥ चिक्षेपास्त्राणि सिंहस्य शेषव्याकुललोचनः ॥ ५ ॥ सर्वास्त्राणामथ श्रेष्ठं दण्डमस्त्रं सुभैरवम् ॥ कालचक्रं तथात्पुमं विष्णुचक्रं तथैव च ॥ ६ ॥ धर्मचक्रं महच्चक्रमजितं नाम नामतः ॥ चक्रमेन्द्रं तथा घोरमृषिचक्रं तथैव च ॥ ७ ॥ पितृमहं तथा चक्रं त्रैलोक्यमादितस्वनम् ॥ विचित्रामशनीं चैव शुष्कार्द्रं चाशनिद्वयम् ॥ ८ ॥

करने लगे ॥ ३ ॥ तब वह महाबली सिंह सिंहनाद करके मुख फैलाये कालकी समान उस सभाको तोड़ते हुए ॥ ४ ॥ उस सभाके दूटनेसे स्वयं हिरण्यकश्यप क्रोधसे लालनेत्र कर सिंहके ऊपर अस्त्र प्रहार करने लगा ॥ ५ ॥ तब सम्पूर्ण अस्त्रोंमें श्रेष्ठ भैरवदण्ड कालचक्र विष्णुचक्र ॥ ६ ॥ धर्मचक्र महच्चक्र अजितचक्र घोर इन्द्रचक्र तथा ऋषिचक्र ॥ ७ ॥ पितृमहचक्र त्रिलोकीमें महाशब्द करानेवाले विचित्र अशनि शुष्क और आर्द्र

इ. वं.
॥८९॥

अशनी ॥ ८ ॥ रौद्ररथं शूल कंकालं मुशलं ब्रह्मशिरं अस्त्रं ब्रह्मास्त्रं ॥ ९ ॥ ऐषीकास्त्रं इन्द्रास्त्रं आग्नेयास्त्रं शिशिरास्त्रं वायव्यं कपालं और किंक-
रास्त्रं ॥ १० ॥ अपूर्वं शक्ति और अस्त्रं इयशिरास्त्रं सौम्यास्त्रं ॥ ११ ॥ पिशाचास्त्रं अद्भुतं सर्पास्त्रं मोहनं शोषणं सन्तापनं और विलापनं अस्त्रं ॥ १२ ॥
जुम्भणं प्रापणं दारुणं त्वाष्ट्रं अस्त्रं अक्षोभ्यं कालमुद्गरं दूसरोंकी सेनाको क्षुभित करनेवाला ॥ १३ ॥ संवर्तनं मोहनं मायाधरं गंधर्वास्त्रं असिरत्नं नंदनं
अस्त्रं ॥ १४ ॥ प्रस्वापनं प्रमथनं वारुणास्त्रं अप्रतिहतं गतिवाला पाशुपतास्त्रं ॥ १५ ॥ इत्यादि अनेक अस्त्रं हिरण्यकशिपुने अग्निमें आहुतिकी समान

रोद्रं तदुग्रं शूलं च कङ्कालं मुशलं तथा ॥ अस्त्रं ब्रह्मशिरश्चैव ब्राह्ममस्त्रं तथैव च ॥ ९ ॥ ऐषीकमस्त्रमेन्द्रं च आग्नेयं शोशिरं तथा ॥
वायव्यं मथनं नाम कपालमथ किंकरम् ॥ १० ॥ तथाचाप्रतिमां शक्तिं क्रौञ्चमस्त्रं तथैव च ॥ अस्त्रं इयशिरश्चैव सौम्यमस्त्रं तथैव
च ॥ ११ ॥ पेशाचमस्त्रममितं सार्वभौमस्त्रं तथाद्भुतम् ॥ मोहनं शोषणं चैव सन्तापनविलापने ॥ १२ ॥ जुम्भणं प्रापणं चैव त्वाष्ट्रं
चैव सुदारुणम् ॥ कालमुद्गरमक्षोभ्यं क्षोभणं तु महाबलम् ॥ १३ ॥ संवर्तनं मोहनं च तथा मायाधरं परम् ॥ गान्धर्वमस्त्रं दयि-
तमसिरत्नं च नन्दकम् ॥ १४ ॥ प्रस्वापनं प्रमथनं वारुणं चास्त्रमुत्तमम् ॥ अस्त्रं पाशुपतं चैव यस्याप्रतिहता मतिः ॥ १५ ॥
एतान्यस्त्राणि सर्वाणि हिरण्यकशिपुस्तदा ॥ विश्लेषं नरसिंहस्य दीप्तस्याग्नेर्यथाद्भुतिः ॥ १६ ॥ अस्त्रैः प्रज्वलितैः सिंद्वावृणोदसु-
राधिपः ॥ विवस्वान्धर्मसमये हिमवन्तमिवांशुभिः ॥ १७ ॥ सद्यमर्षानिलोद्भूतो दैत्यानां सैन्यसागरः ॥ क्षणेन प्रावपन्सिंहं मेना-
कमिव सागरः ॥ १८ ॥ प्राप्तेः पाशैस्तथा शूलैर्गदाभिर्मुंशैस्तथा ॥ षड्रैरशनिकल्पैश्च शिलाभिश्च महाद्रुमेः ॥ १९ ॥

नृसिंहजीके ऊपर छोड़े ॥ १६ ॥ असुरराजने इन अस्त्रोंसे नृसिंहजीको आच्छादन कर दिया जैसे गरमीमें सूर्य अपनी किरणोंसे हिमवान्को आच्छा-
दन करते हैं ॥ १७ ॥ यह दैत्योंकी सागररूप सेना उनके क्रोधरूप पवनसे क्षणमात्रमें नृसिंहको ढकने लगी, जैसा सागरने मैनाकको आच्छादन
किया था ॥ १८ ॥ प्राप्त पाश शूल गदा मुशल अशनि तुल्य वज्र शिला वृक्ष ॥ १९ ॥

भा.टी.
प २ अ. ४४

॥८९॥

मुद्गर कूट पाश शूल उल्लूखल पर्वत दीप्त शतघ्नी वारुण बंठोंसे ॥ २० ॥ सब ओरसे उन्हें घेर प्रहार करने लगे, उन महात्माका उससे थोड़ाभी अपकार न हुआ ॥ २१ ॥ वे दानव हाथमें पाश लिये महेन्द्रके वज्र और अश्विनिकी तुल्य वेगवाले सब ओरसे बाहुओंमें शस्त्र उठाये तीन शिरवाले सर्पकी समान स्थित हुए ॥ २२ ॥ सुवर्णकी मालाओंसे भूषित शरीर अनेक मदा और शस्त्रोंसे शरीर सज्जित किये मोतियोंकी मालासे भूषित शरीर विशालपंखवाले हंसोंकी समान शोभित होते थे ॥ २३ ॥ वायुकी समान पराक्रमी उनके बाजूबंद मांडा बलय (कंकन) सङ्घुप उत्तम शरीरमें महाशोभाको प्राप्त होते थे, जो प्रभातकालके

मुद्गरेः कूटपाशैश्च शूलोल्लूखलपर्वतैः ॥ शतघ्नीभिश्च दीप्ताभिर्वण्डेरपि सुदारुणैः ॥ २० ॥ परिवार्य समन्तात् निमग्नस्त्रेहैरि तदा ॥ स्वरूपमप्यस्य न क्षुण्णमूर्जितस्य महात्मनः ॥ २१ ॥ ते दानवाः पाशगृहीतहस्ता महेन्द्रवज्राशनितुल्यवेगाः ॥ समन्ततोऽभ्युद्यत-
बाहुशस्त्राः स्थितास्त्रिशिर्षा इव पद्मगेन्द्राः ॥ २२ ॥ सुवर्णमालाकुञ्जभूषिताङ्गा नानाङ्गशोभोगपिनद्रगात्राः ॥ मुक्तावलीदामविभूषि-
ताङ्गा इंसा इवाभान्ति विशालपक्षाः ॥ २३ ॥ तेषां तु वायुप्रतिमोज्ज्वाला वै केयूरमालावलयोत्कटानि ॥ तान्युत्तमाङ्गान्याभितो
विभान्ति प्रभातसूर्यांशुसमप्रभाणि ॥ २४ ॥ तेः प्रक्षिपद्भिर्ज्वलतानोपमेर्महास्त्रपुणैः स समावृतो बभौ ॥ गिरिर्यथा संततवर्षिभिर्धनेः
कृतान्धकारो द्रुतकन्दरद्रुमः ॥ २५ ॥ तेहंभ्यमानोऽपि महास्त्रजालैः सर्वैस्तदा दैत्यगणैः समेतैः ॥ नाकम्पताजो भगवान् प्रतापवान्
स्थितः प्रकृत्या हिमवान्निवाचलः ॥ २६ ॥ संतापितास्ते नरसिंहरूपिणा दितेः सुताः पावकदीप्ततेजसा ॥ भयाद्विचेतुः पवनोद्धता
यथा महोर्मयः सामरवारिसंभवाः ॥ २७ ॥

सूर्यकी समान शोभित होते थे ॥ २४ ॥ वह सूर्यकी समान बड़े बड़े अक्षोंको जो अग्निकी तुल्य प्रभाववाले थे प्रहार करते, शोभित हुए जिस प्रकार
निरन्तर वर्षावाले पनोंसे अंधकारको प्राप्त हों कंदराके वृक्ष शोभित होते हैं ॥ २५ ॥ उन सम्पूर्ण दैत्योंके मिलकर एकसाथ बाणप्रहार करने पर भगवान्
प्रतापवान् संभ्राममें कंपित न हुए और हिमालयकी समान स्वभावमें स्थित रहे ॥ २६ ॥ जब अधिकी समान नृसिंहजीने रितिके पुत्रोंको तापित किया

तब वह भयसे चलायमान हुए, जैसे पवनसे पेरणा की सागरकी तरंगें चलायमान होती हैं ॥ २७ ॥ वह बड़े वेगसे सौ धनुषोंद्वारा युगान्तकालकी समान बाणोंको एकसाथ नृसिंहके ऊपर छोड़ने लगे क्रोधसे असुरोंके अंग दीमिमान् हो गये ॥ २८ ॥ इति आम्हाभारते खिलेडु हरिवंशे भविष्यपर्वणि माषापां नारसिंहे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥ वैशम्पायन बोले, स्तर स्तरमुख मकर सर्पमुख ईहामृग वराहमुख ॥ १ ॥ बालसूर्यकी समान मुख-वाले भूमकेतुकी समान मुखवाले चन्द्र अर्धचन्द्र प्रदीप्ताग्निमुख ॥ २ ॥ इंस कुकुटमुख मुख फैलाये भयावने पंचमुख जीम चाटते हुए काक और शतैर्धनुर्भिः सुमहातिवेगा युगान्तकालप्रतिमाञ्छरोचान् ॥ एकायनस्या मुमुबुर्नृसिंहे महाभुराः क्रोधविदीपिताङ्गाः ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेडु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नारसिंहे चतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ स्वराः स्तरमुत्ताश्चैव मकराशीविषाननाः ॥ ईहामृगमुत्ताश्चान्ये वराहसदृशाननाः ॥ १ ॥ बालसूर्यमुखश्चैव भूमकेतुमुत्तास्तथा ॥ चन्द्रार्द्धचन्द्रवक्राश्च प्रदीप्ताग्निमुखस्तथा ॥ २ ॥ इंसकुकुटवक्राश्च व्यादितास्या भयावहाः ॥ पञ्चास्या लेलिहानाश्च काकगृध्रमुखस्तथा ॥ ३ ॥ विद्युज्जिह्वास्त्रिशिर्षाश्च तथोलकासन्निभाननाः ॥ महामादग्निभाश्चान्ये दानवा बलदर्पिताः ॥ ४ ॥ कैलासवपुवस्तस्य शरीरे शरवृष्टयः ॥ अवध्यस्य मृगेन्द्रस्य न व्यथा चक्राहवे ॥ ५ ॥ एवं भूयोऽपरान्धोरानसृजन्दानवाः शरान् ॥ मृगेन्द्रस्योरासि कुद्रा निःश्वसन्त इवोरमाः ॥ ६ ॥ ते दानवशरा घोरा मृगेन्द्राय समीरिताः ॥ वि उग्रं जगमुराकाशे स्वद्योता इव पर्वते ॥ ७ ॥ ततश्चक्राणि दिशानि दैत्याः क्रोधसमान्विताः ॥ मृगेन्द्रायाक्षिपन्त्याशु प्रज्वलन्तीव सर्वशः ॥ ८ ॥ तैरासीद्वगनं चक्रेः संपताद्विः समावृतम् ॥ युगान्ते संप्रकाशद्विश्चन्द्रसूर्यप्रदोरिव ॥ ९ ॥ गृध्रोंके मुखवाले ॥ ३ ॥ विद्युज्जिह्वा त्रिशिर्ष उलकामुख महामाहकी समान बलदर्पित दानव ॥ ४ ॥ कैलासकी समान शरीरवाले नृसिंहमीके शरीरमें बाण वर्षा करने लगे, परन्तु वह अवध्य मृगेन्द्रके शरीरमें व्यथा न कर सके ॥ ५ ॥ इस प्रकार वह दानव शरवर्षा करते हुए मृगेन्द्रके हृदयमें क्रोधकर सर्पकी समान बाणप्रहार करने लगे ॥ ६ ॥ वे नृसिंहजाँके ऊपर छोड़े हुए दानवोंके बाण आकाशमें ऐसे लीन हो गये जैसे पर्वतमें लव्योत ॥ ७ ॥ तब वे दैत्य क्रोधकर दिव्यचक्र प्रज्वलित होते हुए नृसिंहजाँके ऊपर प्रहार करने लगे ॥ ८ ॥ उनके पतनसे चारों ओर आकाश व्याप्त हो गया, जैसे

युगान्तमें चन्द्रमा और सूर्य प्रकाश करते हैं ॥ ९ ॥ वह चक्र उनके मुखमें ऐसे प्रवेश करने लगे, जैसे मेघकी गुहामें अथवा जैसे चन्द्रसूर्य मेघोंमें प्रवेश कर जाते हैं ॥ १० ॥ महात्मा मृगेन्द्रने अग्निकी समान प्रदीप वे सब चक्र निगल लिये ॥ ११ ॥ हिरण्यकशिपुने फिर एक महाबोर अग्निकी समान प्रज्वलित शक्ति उनके ऊपर छोड़ी ॥ १२ ॥ मृगेन्द्रने उस शक्तिको आता देस अपने महाहुंकारसेही उसको नष्ट कर डाला ॥ १३ ॥ मृगेन्द्रने तोड़ी हुई वह शक्ति पृथ्वीमें शोभित होने लगी, जैसे विस्फुलिंगों सहित जलती हुई उल्का पृथ्वीमें गिरती है ॥ १४ ॥ वह नाराचोंकी पांके उन मृग-

तानि चक्राणि वदनं प्रविशन्ति विभान्ति वै ॥ मेघोदरदरीं घोरं चन्द्रसूर्यग्रहा इव ॥ १० ॥ तानि चक्राणि सर्वाणि मृगेन्द्रेण महात्मना ॥ निगीर्णानि प्रदीप्तानि पावकार्चिःसमानि वै ॥ ११ ॥ हिरण्यकशिपुर्देत्यो भूयः प्रामृजदूर्जिताम् ॥ शक्तिं प्रज्वालितं घोरं हुताशनसमप्रभाम् ॥ १२ ॥ तामापतन्तीं संप्रेक्ष्य मृगेन्द्रः शक्तिमुत्तमाम् ॥ हुंकारेणैव रोद्रेण बभञ्ज भगवांस्तदा ॥ १३ ॥ रराज भग्ना सा शक्तिर्मृगेन्द्रेण महीतले ॥ सार्विस्फुलिङ्गा ज्वलिता महोल्केव नभश्च्युता ॥ १४ ॥ नाराचपङ्क्तिः सिंहस्य सृष्टा रेजे विदूरतः ॥ नीलोत्पलपलाशानां मालेवोज्ज्वलदर्शना ॥ १५ ॥ गर्जित्वा तु यथाकामं विक्रम्य च यथासुखम् ॥ तत्सेन्यमुत्सारितवान् तृणाग्राणीव मारुतः ॥ १६ ॥ ततोऽश्मवर्षं दैत्येन्द्रा व्यसृजन्त नभोवताः ॥ नगमात्रैः शिलाखण्डैर्गिरिकूटैर्महाप्रभैः ॥ १७ ॥ तदश्मवर्षं सिंहस्य गात्रे निपतितं महत् ॥ दिशो दश प्रकीर्णं हि खद्योतप्रकरो यथा ॥ १८ ॥ तदश्मोवोर्दिते सुतास्तदा सिंहमारिदम् ॥ प्रच्छादयन् यथा मेघो घाराभिरिव पर्वतम् ॥ १९ ॥ न च तं चालयामासुर्देत्योषा देवमास्थितम् ॥ भीमवेगा बलश्रेष्ठं समुद्रा इव पर्वतम् ॥ २० ॥

न्द्रने दूरही शोभित हुई, जैसे नीले कमलोंकी माला शोभित होती है ॥ १५ ॥ यथायोग्य गर्जना और आना विक्रम कर नृसिंहजीने ऐसे उस सेनाको नष्ट कर दिया जैसे पवन तृणको नष्ट कर देती है ॥ १६ ॥ तब दैत्य आकाशसे पत्थरोंकी वर्षा करने लगे वह पर्वतोंकी समान शिलाखण्ड महाकाण्तिमान् पड़ने लगे ॥ १७ ॥ वह पत्थरोंकी वर्षा नृसिंहजीके शरीरपर होने लगी. दशों दिशा खद्योतकी समान उससे प्रकाशित होने लगी ॥ १८ ॥ तब दितिकुमार महापर्वतोंसे सिंहको ऐसे आच्छादन करने लगे, जैसे मेघ घाराओंसे पर्वतोंको आच्छादन करते हैं ॥ १९ ॥ उन देवको दैत्यसमूह

चलायमान करनेको समर्थ न हुए, जैसे समुद्र पर्वतको चलायमान नहीं कर सकते हैं ॥ २० ॥ तब पर्वतोंकी वर्षा होनेमें निरन्तर जलकी वर्षा होती होने लगी, अक्षमात्र धारा चारों ओरसे पतित होने लगी ॥ २१ ॥ आकाशसे बड़ी तीक्ष्ण जलधारा सहस्रों गिरने लगीं उनसे दिशा विदिशा आकाश सब ओरसे व्याप्त हो गया ॥ २२ ॥ धाराके संपात और वायुके स्फूर्जनसे तथा वर्षाके बेगसे कुछभी विदित नहीं होता था ॥ २३ ॥ वह आकाशसे पतित हुए धारा पृथ्वीमें पड़ती थीं पृथ्वीमें गिरकर उनको स्पर्श नहीं करती थीं ॥ २४ ॥ बाहरसेही जल वर्षता था मेघके ऊपरसे नहीं तब मायासे वह मृगे-
ततोऽश्मवर्षे निहते जलवर्षमनन्तरम् ॥ धाराभिरक्षमात्राभिः प्रादुरासीत्समन्ततः ॥ २१ ॥ नभसः प्रच्युता धारास्तिग्मवेगाः सहस्रशः ॥ आवृण्वन्त्सर्वतो व्योम दिशश्चोपदिशस्तथा ॥ २२ ॥ धाराणां सन्निपातेन वायोर्विस्फूर्जितेन च ॥ वर्द्धता चैव वर्षेण न प्राज्ञायत किंचन ॥ २३ ॥ धारा दिवि च संसक्ता वसुधायां च सर्वशः ॥ न स्पृशन्ति स्म तं तत्र निपतन्त्योऽनिशं भुवि ॥ २४ ॥ बाह्यतो ववृषे वर्षं नोपरिष्ठात्तु तोषदः ॥ मृगेन्द्रप्रतिरूपस्य स्थितस्य युधि मायया ॥ २५ ॥ इतोऽश्मवर्षे तुमुले जलवर्षे च शोषिते ॥ समृजुर्दानवा मायामग्निं वायुं च सर्वशः ॥ २६ ॥ नभसः प्रच्युतश्चैव तिग्मवेगः समन्ततः ॥ ज्वालामाली महारोद्रो दीप्ततेजाः समन्ततः ॥ २७ ॥ स सृष्टः पावकस्तेन दैत्येन्द्रेण महात्मना ॥ न ज्ञाशक महातेजा दग्धुमप्रतिमोजसम् ॥ २८ ॥ तमिन्द्रस्तो-
यदेः सार्द्धं सहस्रांशोऽमितयुतिः ॥ महतो तोयवर्षेण श्मयामास पावकम् ॥ २९ ॥ तस्यां प्रतिदत्तायां तु मायायां युधि दानवाः ॥ समृजुर्धोरसंकाशं तमस्तीव्रं समन्ततः ॥ ३० ॥ तमसा संवृते लोके दैत्येष्वान्तायुधेषु वै ॥ स्वतेजसा परिवृतो दिवाकर इवाबभौ ॥ ३१ ॥
नभसे युद्ध करनेको स्थित हुआ ॥ २५ ॥ जब पत्थर और जलवर्षा शान्त हो गई तब दानवोंने मायासे अग्नि और वायुकी रचना की ॥ २६ ॥ तब चारों ओर आकाशसे तीक्ष्णतेजसे युक्त ज्वालामालासे युक्त महारौद्र अग्नि पतित होने लगी ॥ २७ ॥ जब महात्मा दैत्येन्द्रेने अग्निकी रचना की तथापि वह अग्नि उन महातेजस्वीको जलानेको समर्थ नहीं हुआ ॥ २८ ॥ उसको सहस्राक्ष महाकान्तिमान्ने बड़ी भारी जलवर्षासे शान्त कर दिया ॥ २९ ॥ दानव उस मायाके नष्ट होनेसे महाघोर अंधकारकी रचना करते हुए ॥ ३० ॥ जब अंधकार व्याप्त कर दैत्योंने अन्न उठाये तब

यह नृसिंह अपने तेजसे व्याप्त हो सूर्यकी समान शोभित हुए ॥ ३१ ॥ दामव रणमें इनका त्रिशिखा भुकुटी देखने लगे जैसे ललाटरूपी त्रिकूटमें त्रिप-
थगामिनी गंगा स्थित हो ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां नारसिंहे पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥ वैशंपायन
बोले; जब सम्पूर्ण माया नष्ट हो गई तब दैत्य व्याकुल हो हिरण्यकशिपुकी शरणमें गये ॥ १ ॥ तब क्रोधसे जलते और तेजसे दग्ध करते हुए हिर-
ण्यकशिपु दैत्यने क्रोधसे पृथ्वीको चलायमान कर दिया ॥ २ ॥ उस समय जलके आकर सागर चलायमान हो गये और वनके कानन हुए सब चला-

त्रिशिखां भुकुटीं चास्य ददद्गुर्दानवा रणे ॥ ललाटस्थ्यां त्रिकूटस्थ्यां गङ्गां त्रिपथगामिव ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे
भविष्यपर्वणि नारसिंहे पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः सर्वासु मायासु इतासु दितिनन्दनाः ॥ हिरण्य-
कशिपुं सर्वे विषण्णाः शरणं गताः ॥ १ ॥ ततः प्रज्वलितः क्रोधात्प्रदहन्निव तेजसा ॥ हिरण्यकशिपुर्दैत्यश्चालयामास मेदिनीम् ॥ २ ॥
ततः प्रक्षुभिताः सर्वे सागराः सलिलाकराः ॥ चलिता गिरयः सर्वे सकाननवनद्रुमाः ॥ ३ ॥ तस्मिन् कुद्रे तु दैत्येन्द्रे तमोभूतमभू-
जगत् ॥ तमसा समभूच्छन्नं न प्राज्ञायत किञ्चन ॥ ४ ॥ अवहः प्रवदश्चैव विवदश्च समरिणः ॥ पराहः संवदश्चैव उद्वहश्च महाबलः ॥ ५ ॥
तथा परिवहः श्रीमान्मारुता भयशंसिनः ॥ इत्येते क्षुभिताः सप्त मारुता गगनेचराः ॥ ६ ॥ ये ग्रहाः सर्वलोकस्य ह्यये प्रादु-
र्भवन्ति वै ॥ ते ग्रहा गगने दृष्टा विचरन्ति ययासुखम् ॥ ७ ॥ अयोगतश्च तारासु सर्वेष्वृक्षेषु संगताः ॥ सग्रहं सदनक्षत्रं प्रज्ज्वाल
नभो नृप ॥ ८ ॥ विवर्णत्वं च भगवान् गतो दिवि दिवाकरः ॥ कूष्णः कबन्धश्च महालक्ष्म्यते च नभस्तले ॥ ९ ॥

यमान हो गये ॥ ३ ॥ उस दैत्यके क्रोध करनेपर जगत् अंधकारमय हो गया और अंधकार व्याप्त होनेसे कुछ दिशाई नहीं देता था ॥ ४ ॥
आवह प्रवह विवह पराह संवह उद्वह महाबल ॥ ५ ॥ परिवह यह जयदायक पवन चलने लगी, यह आकाशचारी सारों पवन शोभित हो गई ॥ ६ ॥
जो ग्रह सब लोकके हयमें प्रादुर्भूत होते हैं वे ग्रह प्रसन्न हो आकाशमें विचरने लगे ॥ ७ ॥ गियत गतिवाले तारा नक्षत्र अनियत गतिवाले हो
गये ग्रह नक्षत्र सहित आकाश जल उठा ॥ ८ ॥ सूर्यभी आकाशमें कान्तिहीन हो गया आकाशमें काला कबन्ध दीखने लगा ॥ ९ ॥

४. १.

■ १२ ■

सूर्यसे काला धूम निकलने लगा और आकाशमें वारंवार सूर्य तापित होने लगे ॥ १० ॥ सात सूर्य धूमवर्ण आकाशमें स्थित हुए सात यह चन्द्रमाके शृंगामी हुए ॥ ११ ॥ अर्थात् वाम और दक्षिणमें शुक्र और बृहस्पति स्थित हुए, शनैश्वर और लाल सूर्यकी समान कान्तिमान् मंगल ॥ १२ ॥ यह सब एकसाथ कठिन मार्गमें आरोहण करने लगे, इनके सुवर्णमय शृंग युगान्तकी समान दीप्तने लगे ॥ १३ ॥ चन्द्रमा नक्षत्र और सात ग्रहोंसे आवृत हुआ और चराचरके विनाशके निमित्त रोहिणीसे प्रसन्न नहीं हुआ ॥ १४ ॥

अमुञ्चन्नासितां सूर्यो धूमवर्ति भयावहाम् ॥ गगनस्थश्च भगवानभीक्ष्णं परितप्यते ॥ १० ॥ सप्तधूमनिभा घोराः सूर्या दिवि समुत्थिताः ॥ सोमस्य गगनस्यस्य ग्रहास्तिष्ठन्ति शृङ्गाः ॥ ११ ॥ वामे च दक्षिणे चैव स्थितो शुक्रबृहस्पती ॥ शनैश्वरो लोहिताङ्गो लोहितार्कसमद्युतिः ॥ १२ ॥ समं समभिरोहन्ति दुर्गाणि गगनेचराः ॥ शृङ्गाणि कनकैर्घोरा युगान्तावर्तका ग्रहाः ॥ १३ ॥ चन्द्रमाः सप्त नक्षत्रैर्ग्रहेः सप्तभिरावृतः ॥ चराचराविनाशार्थं रोहिणीं नाभ्यनन्दत ॥ १४ ॥ गृहीतो राहुणा चन्द्र उल्काभिरभिहन्यते ॥ उल्काः प्रज्वलिताश्चन्द्रे प्रचेलुर्घोरदर्शनाः ॥ १५ ॥ देवानामपि यो देवः सोऽभ्यवर्षत शोणितम् ॥ अपतन् गगनावुल्का विद्युद्रूपाः सनिःस्वनाः ॥ १६ ॥ अकाले पादपाः सर्वे पुष्पन्ति च फलन्ति च ॥ लताश्च सफलाः सर्वा याः प्राहुर्देव्यनाशनम् ॥ १७ ॥ फले फलान्यजायन्त पुष्पे पुष्पं तथैव च ॥ उन्मीलन्ति निर्मीलन्ति इसन्ति च रुदन्ति च ॥ १८ ॥ विकोशन्ति च मग्भीरं धूमयन्ति ज्वलन्ति च ॥ प्रतिमाः सर्वदेवानां कथयन्ति युगक्षयम् ॥ १९ ॥

राहुसे गृहीत हुआ चन्द्रमा उल्कासे ताड़ित होने लगा और चन्द्रमासे घोररूप उल्का चलायमान होने लगी ॥ १५ ॥ देवादिदेव मेघोंसे रुधिर वर्षने लगा विजलीकी समान शब्द करती उल्का आकाशसे गिरी ॥ १६ ॥ अकालमें वृक्षोंमें फूल फल लगे आपे और फलवती होकर सब लता दैत्यका नाश कथन करने लगी ॥ १७ ॥ फलमें फल पुष्पमें पुष्प लगने लगे आसँ खोलती मीचती हंसती रोती ॥ १८ ॥ चिल्लाती धूम छोडती ज्वलित होती

ता. टी.

प. ३ अ. ४ क

■ १२ ■

हुई सब देवताओंकी प्रतिमा युगक्षय कीर्तन करने लगी ॥ १९ ॥ अरण्यपशु पक्षियोंका ग्राम्यपशुओंसे संयोग हुआ और मृगेन्द्रके उपास्थित होनेमें भयंकर स्वरसे शब्द करने लगे ॥ २० ॥ नदियोंका जल मैला और प्रतिकूल गमन करने लगा अपराहमें प्राप्त होकरभी सूर्यकी छाया न परिवर्तित हुई ॥ २१ ॥ दिशा रेणुसे व्याप्त हो प्रकाशित न हुई पूजनयोग्य वनस्पातियोंका पूजन नहीं हुआ ॥ २२ ॥ वायुवेगसे चलकर वस्तुओंको तोड़ने लगा उस समय किसीभी प्राणीकी छायाका परिवर्तन न हुआ ॥ २३ ॥ सूर्यके अपराहमें प्राप्त होनेपर युगक्षय दीखने लगा तब हिरण्यकशिपु दैत्यके आरण्येः सह संसृष्टा ग्राम्याश्च मृगपक्षिणः ॥ चुक्रुशुर्भैरवं तत्र मृगेन्द्रे समुपस्थिते ॥ २० ॥ नद्यश्च प्रतिलोमा हि वहन्ति कलुषोदकाः ॥ अपराहगते सूर्ये लोकानां क्षयकारके ॥ २१ ॥ न प्रकाशन्ति च दिशो रक्तेषु तमाकुलाः ॥ वानस्पत्या न पूज्यन्ते पूजनाद्वाः कथञ्चन ॥ २२ ॥ वायुवेगेन हन्यन्ते भिद्यन्ते प्रणुदन्ति च ॥ तदा च सर्वभूतानां छाया न परिवर्तते ॥ २३ ॥ अपराहगते सूर्ये लोकानां च युगक्षये ॥ तदा हिरण्यकशिपौ दैत्यस्योपरि वेद्मनः ॥ २४ ॥ भाण्डागारायुधागारे निविष्टमभवन्मधु ॥ तथैव चायुधागारे धूमराजिरदृश्यत ॥ २५ ॥ स च दृष्ट्वा महोत्पातान् हिरण्यकशिपुस्तदा ॥ पुरोहितं तदा शुक्रं वचनं चेदमब्रवीत् ॥ २६ ॥ किमर्थं भगवन्नेते महोत्पाताः समुत्पिताः ॥ श्रोतुमिच्छामि तत्त्वेन परं कौतूहलं हि मे ॥ २७ ॥ शुक्र उवाच ॥ शृणु राजन्नवहितो वचनं मे महासुर ॥ यदर्थमिह दृश्यन्ते महोत्पाता महाभयाः ॥ २८ ॥ यस्यैते संप्रदृश्यन्ते राज्ञो राष्ट्रे महासुर ॥ देशो वा ह्रियते तस्य राजा वा बन्धमर्हति ॥ २९ ॥

ऊपरके स्थानके ॥ २४ ॥ भाण्डागार और आयुधागारमें शहतकी मक्खी छत्ता रखने लगी और इसी प्रकार आयुधागारमें धूमराजि दीखने लगी ॥ २५ ॥ तब हिरण्यकशिपु इन महाउत्पातोंको देख अपने पुरोहित शुक्रसे यह वचन बोले ॥ २६ ॥ हे भगवन् ! यह महाउत्पात किस कारणसे होते हैं यह मैं तत्त्वसे सुननेकी इच्छा करता हूं इसमें मुझको परम कौतूहल है ॥ २७ ॥ शुक्र बोले, हे राजन् ! हमारे हितके वचन सुनो, जिस कारण यह भय देनेवाले महाउत्पात दिखाई देते हैं ॥ २८ ॥ हे महासुर ! जिसके राज्यमें इस प्रकारके उत्पात सुनाई वा दिखाई देते हैं या उसका देश हरण होत।

हे वा राजा बंधनमें पड़ता है ॥ २९ ॥ इससे बुद्धिपूर्वक विचारनेसे सर्वथा विदित होता है इसमें संदेह नहीं कि बड़ा भय आनकर प्राप्त होगा ॥ ३० ॥ जब शुक्रने हिरण्यकशिपुसे यह वचन कहे तब स्वस्ति कहकर वह दैत्यपतिसे विदा हो अपने स्थानको गया ॥ ३१ ॥ उनके जानेपर वह दैत्येन्द्र बहुत समयतक विचार करता रहा और दीन हो वह ब्रह्माके वचनोंको स्मरण करने लगा कि असुरोंका नाश और सुरोंका विजय होगा ॥ ३२ ॥ इसीके कारण यह घोर उत्पात सुनाई आते हैं तथा औरगी अनेक उत्पात दीस्तते हैं ॥ ३३ ॥ यह कालनिर्मित उत्पात दैत्योंके नाश करनेकोही

अतो बुद्ध्या समीक्षस्व यथा सर्वं प्रणश्यति ॥ बृहद्भयं हि न चिराद्भविष्यति न संशयः ॥ ३० ॥ एतावदुक्त्वा शुक्रस्तु हिरण्यक-
शिपुं तदा ॥ स्वस्तीत्युक्त्वा तु दैत्येन्द्रं जयाम स्वं निवेशनम् ॥ ३१ ॥ तस्मिन् गते स दैत्येन्द्रो ध्यातवान्सुचिरं तदा ॥ आसां-
चक्रे सुदीनात्मा ब्रह्मवाक्यमनुस्मरन् ॥ असुराणां विनाशाय सुराणां विजयाय च ॥ ३२ ॥ दृश्यन्ते विविधोत्पाता घोरा घोरानि-
र्शनाः ॥ एते चान्ये च बहवो घोरा ह्युत्पातदर्शनाः ॥ ३३ ॥ दैत्येन्द्राणां विनाशाय दृश्यन्ते कालनिर्मिताः ॥ ततो हिरण्यकशिपुर्मदा-
मादाय सत्वरम् ॥ ३४ ॥ अभ्यद्रवत वेगेन धरणीमनुकम्पयन् ॥ हिरण्यकशिपुर्दैत्यो यदा संसृष्टवान्महीम् ॥ ३५ ॥ संवृष्टोऽपुटः
कोचाद्ग्राह इव पूर्वजः ॥ मेदिन्यां कंपमानायां दैत्येन्द्रेण महात्मना ॥ ३६ ॥ महीधरेभ्यो नामोद्रा निपेतुर्भयविह्वलाः ॥ विषज्वाला-
कुलेर्वैर्विसुञ्चन्तो हुताशनम् ॥ ३७ ॥ चतुर्शीर्षाः पञ्चशीर्षाः सप्तशीर्षाश्च पत्रगाः ॥ वासुकिस्तक्षकश्चैव कर्कोटकधनंजयो ॥ ३८ ॥

दास्तते हैं तब हिरण्यकशिपुने बहुत शीघ्र गदाको ग्रहण कर ॥ ३४ ॥ धरणीको कंपायमान करते बहुत शीघ्रतासे गमन किया, जिस समय दैत्य हिरण्यकशिपुने पृथ्वीका स्पर्श किया ॥ ३५ ॥ तब अपने होठसे होठ चाटते हिरण्याक्षकी समान जब उस दैत्यने मेदिनी कंपित की ॥ ३६ ॥ तब पीठित हो पृथ्वीमेंसे बड़े बड़े सर्प निकलने लगे और विषकी ज्वालासे व्याकुल हो अधिको वमन करने लगे ॥ ३७ ॥ चार पांच तथा सात शिरके सर्प वासुकि तक्षक कर्कोटक धनंजय ॥ ३८ ॥

एलापत्र काळीय महापद्म सहस्रशिरके नाम हेमतालव्यज प्रभु ॥ ३९ ॥ हे राजन् । रोष अनन्त दुष्प्रकम्प प्रकंपित दीनजलके अन्तरमें रहनेवाले पुण्यके
 धारण करनेवाले निकले ॥ ४० ॥ क्रोध कर दैत्यने यह सब कंपित कर दिये पातालतलमें विचरनेवाले नामतेजधारी मंगलरूप ॥ ४१ ॥ और जलभी
 सहसा क्रोध करनेसे कंपहीने हुए भागीरथी नदी सरयू कौशिकी ॥ ४२ ॥ यमुना कावेरी कृष्णा वेणी सुवेणा महाभागा गोदावरी ॥ ४३ ॥ चर्मण्वती
 नदनदीपति सिंधु मेकलप्रभव शोण मणिनिभोदक ॥ ४४ ॥ सुसोता नर्मदा वेत्रवती गोमती गोकुलसे आकीर्ण पूर्णा सरस्वती ॥ ४५ ॥

एलापत्रश्च काळीयो महापद्मश्च वीर्यवान् ॥ सदस्रशीर्षधृङ्गनागो हेमतालव्यजः प्रभुः ॥ ३९ ॥ ज्योऽनन्तो महीपालो दुष्प्रकम्पः
 प्रकम्पितः ॥ दीप्तान्यन्तर्षलस्थानि पृथिवीधरणानि च ॥ ४० ॥ तदा क्रुद्धेन दैत्येन कम्पितानि समन्ततः ॥ पातालतलचारिण्यो
 नागतेजोधराः शिवाः ॥ ४१ ॥ आपश्च सदसा क्रुद्धा दुष्प्रकम्प्यरसाः शुभाः ॥ नदी भागीरथी चैव सरयूः कौशिकी तथा ॥ ४२ ॥
 यमुना चैव कावेरी कृष्णा वेणा तथैव च ॥ सुवेणा च महाभागा नदी गोदावरी तथा ॥ ४३ ॥ चर्मण्वती च सिन्धुश्च तथा
 नदनदीपतिः ॥ मेकलप्रभवश्चैव शोणो मणिनिभोदकः ॥ ४४ ॥ सुसोता नर्मदा चैव तथा वेत्रवती नदी ॥ गोमती गोकुलाकीर्णा
 तथा पूर्णा सरस्वती ॥ ४५ ॥ मही कालनदी चैव तमसा पुण्यवाहिनी ॥ सिता चेशुमती चैव वेदिका च महानदी ॥ ४६ ॥
 जम्बुद्वीपं रत्नवन्तं सर्वरत्नोपशोभितम् ॥ सुवर्णकूटकं चैव सुवर्णाकरमण्डितम् ॥ ४७ ॥ महानदश्च लोहित्यः शैलकाननशोभितः ॥
 पत्तनं कौशिकारण्यं द्रविडं रजताकरम् ॥ ४८ ॥ मागधांश्च महाग्रामानङ्गान्वद्वांस्तथैव च ॥ सुस्नाग्मल्लान्निवेदांश्च मालवांश्चाक्षिको-
 सलान् ॥ ४९ ॥ भुवनं वेनतेयस्य सुवर्णस्य च कम्पितम् ॥ कैलासशिसराकारं यत्कृतं विश्वकर्मणा ॥ ५० ॥

मही कालनदी तमसा पुण्यवाहिनी सिता शशुमती महानदी वेदिका ॥ ४६ ॥ रत्नवाला जम्बुद्वीप सब रत्नोसे शोभित सुवर्णकूट सुवर्ण आकरसे मंडित
 ॥ ४७ ॥ महानद लोहित्य शैलकाननसे शोभित कौशिकवन पत्तन द्रविड रजताकर ॥ ४८ ॥ मागध महाग्राम अंग वंग कर्लिन सुह नल विदेह मालवान
 काशी कोसल ॥ ४९ ॥ मल्लका मदन सुवर्णका कंपित कैलासके शिसरके आकार विश्वकर्माका बनाया हुआ ॥ ५० ॥

ह. वं.
॥ १४ ॥

रक्ततोप भीमवेग लोहित्य सागर (लालसमुद्र) सुन्दर पांडुवर्ण मेघको समान कान्तिवान् क्षीरसागर ॥ ५१ ॥ हे राजेन्द्र ! सी योजन ऊंचा उदय पर्वत
नागपक्षसे सेवित सुवर्णवेदिक ॥ ५२ ॥ सूर्यकी समान प्रकाशित जातरूपमय वृक्ष शाल ताल तपाल और कर्णिकारके पुष्पोत्ते युक्त ॥ ५३ ॥ विपुल
अयोमुख और सब प्रकार धातुसे मंडित तमाल वनगंध सुन्दर मलयपर्वत ॥ ५४ ॥ सुराष्ट्र सुबाह्वीक शोज पांडु रंग कलिन ताम्रलित ॥ ५५ ॥
अंध पुंश्च वामचूड केरल देशोंसहित उस दैत्यने अप्सरा और दैत्योंको श्रुतित कर डाला ॥ ५६ ॥ अम्य पूर्वनिर्मित अवस्थपतवन मित्र चारणोंके
रक्ततोयो भीमवेगो लोहित्यो नाम सागरः ॥ शुभः पाण्डुरमेघाभः क्षीरोदधेव सागरः ॥ ५१ ॥ उदयधेव राजेन्द्र उच्छ्रितः
शतयोजनम् ॥ सुवर्णवेदिकः श्रीमान्नागपक्षिनिषेवितः ॥ ५२ ॥ भ्राजमानोऽर्कसदृशैर्जातरूपमयेर्दुर्गैः ॥ शालैस्तालैस्तमालैश्च
कर्णिकाभिश्च पुष्पितैः ॥ ५३ ॥ अयोमुखश्च विपुलः सर्वतो धातुमण्डितः ॥ तमालवनगन्धश्च पर्वतो मलयः शुभः ॥ ५४ ॥
सुराष्ट्राश्च सुबाह्वीकाः शूराभीरास्तयेव च ॥ भोजाः पाण्ड्याश्च वज्राश्च कलिङ्गास्ताम्रलितकाः ॥ ५५ ॥ तथैवान्ध्राश्च पुण्ड्राश्च
वामचूडाः सकेरलाः ॥ क्षोभितास्तेन दैत्येन सदेवाः साप्सरोगणाः ॥ ५६ ॥ अगस्तिभुवनं चैव वदमम्यं पुरा कृतम् ॥ सिद्धचारणस-
द्वैश्च सेवितं सुमनोहरम् ॥ ५७ ॥ विचित्रनागविहंगं सुपुष्पितलताकुलम् ॥ जातरूपमयैः शृङ्गेरस्यरोगणसेवितम् ॥ ५८ ॥ गिरिः
पुष्पितकश्चैव लक्ष्मीवाग्निप्रियदर्शनः ॥ उत्थितः सागरं भित्त्वा वयस्यश्चन्द्रसूर्ययोः ॥ ५९ ॥ रराज सुमहाशृङ्गेर्गगनं विलिखन्निव ॥ सूर्य-
चन्द्रांशुसंकाशैः सागराम्बुसमावृतः ॥ ६० ॥
समूहोत्ते सेवित ॥ ५७ ॥ विचित्र नाम विहंगमोत्ते युक्तं पुष्पित लतावाले वृक्षोंसे व्याप्त सुवर्णके शंखवाले पर्वत अप्सराओंसे सेवित ॥ ५८ ॥ पुष्पोत्ते
व्याप्त पर्वत लक्ष्मीकी समान मियदर्शन सागरको भेदकर चंद्रसूर्यकी समान ठठा ॥ ५९ ॥ और महाशृंगोंसे आकाशको छिलना हुआसा शोभित हुआ
चन्द्रसूर्यकी समान कान्तिवाले सागरके जलसे व्याप्त ॥ ६० ॥

१ अंग्रेजीमें इसीको रेड सी (RED SEA) कहते हैं.

भा. टी.

प ३ अ. ४६

॥ १४ ॥

विद्युद्दान् भीमान् पर्वत सौ योजन ऊंचा कि जिस पर्वतपर बारंबार बिजलीका पात होता है ॥ ६१ ॥ सचमे श्रेष्ठ भीमान् ऋत पर्वत कुंवर पर्वत जिसपर अमस्त्यजीका बड़ा घर है ॥ ६२ ॥ विशाल नलीवाली दुर्धष सपोंकी पुरी तथा भोगवती पुरी उस दैत्यके भयसे कंपित हो गई ॥ ६३ ॥ महामेघ पारियात्र पर्वत चक्रवाक गिरि वाराहपर्वत ॥ ६४ ॥ प्राग्ज्योतिषपुर जो सुवर्णमय है जिसमें दुष्टात्मा नरक नाम दैत्य निवास करता है ॥ ६५ ॥ पर्वतमेठ मेरु महागंगीरं शब्दसे युक्त है राजन् । जिसके चारों ओर साठ सहस्र पर्वत हैं ॥ ६६ ॥ तरुणसूर्यकी समान महेन्द्र पर्वत वह पर्वतराज

विद्युद्दान्पर्वतः श्रीमानायतः शतयोजनम् ॥ विद्युता यत्र संपाता निपात्यन्ते नगोत्तमे ॥ ६१ ॥ ऋषभः पर्वतश्चैव श्रीमानृषभसंस्थितः ॥ कुञ्जरः पर्वतश्चैव यत्रागस्त्यगृहं महत् ॥ ६२ ॥ विशालरथ्या दुर्धषा सर्पाणामालया पुरी ॥ तथा भोगवती चापि दैत्येन्द्रेणाभिकम्पिता ॥ ६३ ॥ महामेघगिरिश्चैव पारियात्रश्च पर्वतः ॥ चक्रवाक गिरिः श्रेष्ठो वाराहश्चैव पर्वतः ॥ ६४ ॥ प्राग्ज्योतिषपुरं चैव जातरूपमयं शुभम् ॥ यस्मिन्वसति दुष्टात्मा नरको नाम दानवः ॥ ६५ ॥ मेरुश्च पर्वतश्चैव मेघगम्भीरनिःस्वनः ॥ षष्टिं तत्र सहस्राणि पर्वतानां विशांते ॥ ६६ ॥ तरुणादित्यसंकाशो महेन्द्रश्च महागिरिः ॥ देवावासः शुभः पुण्यो गिरिराजो दिवं गतः ॥ ६७ ॥ हेमशृङ्गो महाशैलस्तथा मेघसखो गिरिः ॥ कैलासश्चापि दुष्कम्पो दानवेन्द्रेण कम्पितः ॥ ६८ ॥ यक्षराक्षसगन्धर्वैर्नित्यं सेवितकन्दरः ॥ श्रीमान्मनोहरश्चैव नित्यं पुष्पिनपादपः ॥ ६९ ॥ हेमपुष्करसंछन्नं तेन वैखानसं सरः ॥ कम्पितं मानसं चैव राजहर्सेर्निषेवितम् ॥ ७० ॥ विशृङ्गः पर्वतश्चैव कुमारी च सरिद्रा ॥ तुषारचयसंकाशो मन्दरश्चैव पर्वतः ॥ ७१ ॥ उशीरबीजश्च गिरी रुद्रोपस्थस्तथाद्रिद्राद ॥ प्रजापतेश्च निलयस्तथा पुष्करपर्वतः ॥ ७२ ॥

देवताओंका निवासस्थान होनेसे मानो स्वर्गमें प्राप्त है ॥ ६७ ॥ हेमशृंग महापर्वत मेघसखा और दुष्कम्प कैलासको भी दानवेन्द्रेने कंपित कर दिया ॥ ६८ ॥ जिसकी कंदरा नित्य यक्षराक्षसोंसे सेवित हैं श्रीमान् मनोहर नित्य पुष्पिनवृक्षोंवाले ॥ ६९ ॥ तथा हेमकमलसे व्याप्त वैखानस सरोवर और राजहर्षोंसे सेवित मानससरोवरभी कंपित कर दिया ॥ ७० ॥ विशृंग पर्वत नदीश्रेष्ठ कुमारी तुषारसमुहकी समान मंदर पर्वत ॥ ७१ ॥ उशीर बीज पर्वत रुद्रके

ह. व.

॥ १५ ॥

निवासका स्थान पर्वतराज प्रजापतिका स्थान पुष्कर पर्वत ॥ ७२ ॥ देवावृत पर्वत वालुकपर्वत कौंच समर्पित तथा धूमपर्वत ॥ ७३ ॥ यह पर्वत तथा देश और जनपद नदी और सागर सब उस दानवने कंपित कर दिये ॥ ७४ ॥ महीपुत्र व्याघ्राक्ष और कपिल आकाशचारी निशाके पुत्र पातालतलके निवास करनेवाले ॥ ७५ ॥ रुद्रके गण मेघनाद करनेवाले अंकुश हाथमें लिये ऊर्ध्वगामी भीमवेगवान् सबही कंपित कर दिये ॥ ७६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रायाणां नारसिंहे षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥ वैशंपायन बोले; आदित्य साय्य विश्वेदेवा मरुत रुद्र देव देवावृतपर्वतश्चैव तथा वै वालुकागिरिः ॥ कौञ्चः समर्पिणोऽथ धूमवर्णश्च पर्वतः ॥ ७२ ॥ एते चान्ये च गिरयो देशा जनपदास्तथा ॥ नद्यश्च सागराश्चैव दानवेन्द्रेण कम्पिताः ॥ ७४ ॥ कपिलश्च महीपुत्रो व्याघ्राक्षश्चैव कम्पितः ॥ लेचराश्च निशापुत्राः पातालतलवासिनः ॥ ७५ ॥ गणास्तथा परे रोद्रा मेघनादाङ्कुशयुधाः ॥ ऊर्ध्वगो भीमवेगश्च सर्व एवामिकाम्पिताः ॥ ७६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नारसिंहे षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तत्रादित्याश्च साय्याश्च विश्वे च मरुतस्तथा ॥ रुद्रा देवा महात्मानो वसवश्च महाबल्यः ॥ १ ॥ आमम्य ते मृगेन्द्रस्य सकाशं सूर्यवर्षसः ॥ उजुः संव्रस्तमनसो देवा लोकक्षयादिताः ॥ २ ॥ जहि देव दितेः पुत्रं दानवं लोकनाशनम् ॥ दुर्वृत्तमसदाचारं सह सर्वमिहासुरैः ॥ ३ ॥ त्वं ह्येषामन्तकृन्नान्यो दैत्यानां दैत्यनाशन ॥ तन्नाशाय हितायां लोकानां स्वस्ति वै कुरु ॥ ४ ॥ त्वं गुरुः सर्वलोकानां त्वमिन्द्रस्त्वं पितामहः ॥ ऋते त्वदन्यच्छरणं न भूतं न भविष्यति ॥ ५ ॥ तच्छ्रुत्वा वचनं देवो देवानामादिसंभवः ॥ ननाद सुमहानादमतिगम्भीरानिःस्वनम् ॥ ६ ॥ महात्मा वसु महाबली ॥ १ ॥ वै सूर्यकी समान प्रकाशमान मृगेन्द्रके निकट आकर लोकक्षयसे व्याकुलमन हो नारायणसे बोले ॥ २ ॥ हे देव ! लोकनाशी इस दितिके पुत्र दैत्यको मारो, यह बड़ा दुर्वृत्त असदाचारसे युक्त सब असुरोंसे युक्त है ॥ ३ ॥ हे दैत्यनाशन ! तुमही इन दैत्योंके नाशक हो अन्य कोई नहीं है सो लोकके हितके निमित्त इसको मारकर जनतका मंगल करो ॥ ४ ॥ तुम सब लोकोंके गुरु इन्द्र और पितामह हो, तुम्हारे सिवाय न कोई शरणदाता है न होगा ॥ ५ ॥ देवोंके आदिसंभव देव यह देवताओंके वचन सुन अतिगम्भीर शब्दोंसे महानाद करने लगे ॥ ६ ॥

भा. टी.

प. ३ अ. ४

॥ १५ ॥

इस महासिंहनादसे नृसिंहजीने असुरोंके हृदय फाट डाले और मन व्याकुल कर दिये ॥ ७ ॥ क्रोधकण्ड नाम गण कालकेय वेम वैमलेय महाबली सिं-
 केय ॥ ८ ॥ संह्रादीय महानाद महावेगवान् कपिल महीपुत्र व्याघ्राक्ष क्षितिकम्पन ॥ ९ ॥ खेचर निशापुत्र पातालतलनिवासी गण परम रौद्र मेघनाद अंकुश
 आयुध ॥ १० ॥ ऊर्ध्वगामी भीमवेग भीम सूर्यलोचन वज्री शूली कराल हिरण्यकशिपु ॥ ११ ॥ घनमेघकी समान प्रकाशमान, मेघकी समान वेग-
 वान् घने बारलकी समान शब्द तथा मेघकी समान कान्तिवाले रक्षित दैत्यगण मृगेन्द्रके प्रति घावमान हुए ॥ १२ ॥ देवारि बितिपुत्र क्रोधकर नृसिंहके
 पाष्टितान्यसुरेन्द्राणां मृगेन्द्रेण महात्मना ॥ सिंहनादेन महता हृदयानि मनांसि च ॥ ७ ॥ गणः क्रोधवशो नाम कालकेयस्तथा परः ॥
 वेगश्च वेगेलयश्च सिंहेकेयश्च धीर्यवान् ॥ ८ ॥ संह्रादीयो महानादो महावेगस्तथा परः ॥ कपिलश्च महीपुत्रो व्याघ्राक्षः क्षिति
 कम्पनः ॥ ९ ॥ खेचराश्च निशापुत्राः पातालतलचारिणः ॥ गणस्तथा परो रौद्रो मेघनादोऽङ्कुशायुधः ॥ १० ॥ ऊर्ध्वगो भीमवेगश्च
 भीमकर्मार्कलोचनः ॥ वज्री शूली करालश्च हिरण्यकशिपुस्ततः ॥ ११ ॥ जीमूतघनसंकाशो जीमूत इव वेगवान् ॥ जीमूतघनसं
 नादो जीमूतसदृशद्युतिः ॥ हस्तेर्दैत्यगणेस्तुष्टो मृगेन्द्रेण महात्मना ॥ १२ ॥ देवारिर्वितिजो हस्तो नृसिंहं समुपाव्रवत् ॥ समुत्पत्य
 ततस्तीक्ष्णेर्मृगेन्द्रेण महानखैः ॥ १३ ॥ तत्रोक्तासहायेन विदार्य निहतो युधि ॥ १४ ॥ मही च लोकश्च शशी नभश्च ग्रहाश्च सूर्यश्च
 दिक्षश्च सर्वाः ॥ नद्यश्च झोलाश्च महार्णवाश्च गताः प्रकाशां दितिपुत्रनाक्षात् ॥ १५ ॥ ततः प्रमुदिता देवा ऋषयश्च तपोधनाः ॥
 तुष्टुर्विविधैः स्तोत्रैरादिदेवं सनातनम् ॥ १६ ॥ देवा ऊचुः ॥ यत्तया विहितं देव नारसिंहमिदं वपुः ॥ एतदेवार्चयिष्यन्ति परावर-
 विदो जनाः ॥ मृगेन्द्रत्वं च लोकेषु सर्वसत्त्वेषु वा विभो ॥ १७ ॥

ऊपर झपटा तब इसके आनेपर मृगेन्द्रने अपने तीक्ष्ण महानखोंसे ॥ १३ ॥ ओंकारकी सहायता द्वारा विदीर्घ कर डाला ॥ १४ ॥ मही लोक चन्द्रमा
 आकाश ग्रह सूर्य सम्पूर्ण दिशा नदी शैल उस दैत्यके मरनेसे प्रकाशित हुए ॥ १५ ॥ तब प्रसन्न हो देवता और तपोधन ऋषि आदि देव सनातन
 नारायणको अनेक स्तुतियोंसे प्रसन्न करते हुए ॥ १६ ॥ देवता बोले, हे देव ! जो आपने नृसिंहशरीर धारण किया है इसको परमवरके जानेनवाले

पूजन करेंगे, हे विभो ! आप आजसे सब जीवोंमें तथा प्राणियोंमें अधिक होनेसे मृगेन्द्र हुए ॥ १७ ॥ तुमको मुनि नित्य मृगेन्द्र कहकर गावेंगे हे विभो ! आपके प्रसादसे हम अपने स्थानको प्राप्त हुए ॥ १८ ॥ देवताओंके ऐसे कहनेपर महापनवाले नृसिंहजी प्रसन्न हुए और प्रसन्न हो ब्रह्माजी विष्णुकी स्तुति करने लगे ॥ १९ ॥ आपही अक्षर अव्यक्त अचिन्त्य गुह्य तथा उत्तम हो कूटस्थ अकृत कर्ता सनातन अनामय हो ॥ २० ॥ जो तत्त्वार्थमें निष्ठित सांख्य योगकी बुद्धि है वह उसके द्वारा आपही वेद विद्यात्मा पुरुष निरन्तर ध्रुव जाने

गायन्ति त्वां च मुनयो मृगेन्द्र इति नित्यशः ॥ त्वत्प्रसादात्स्वकं स्थानं प्रतिपन्नाः स्म वै विभो ॥ १८ ॥ पञ्चमुक्तो देवसंचेनरसिंहो महामनाः ॥ ब्रह्मा च परमप्रीतो विष्णोः स्तोत्रमुदीरयत् ॥ १९ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ भवानक्षरमव्यक्तमाचिन्त्यं गुह्यमुत्तमम् ॥ कूटस्थः सकृतं कर्तुं सनातनमनामयम् ॥ २० ॥ सांख्ययोगे च या बुद्धिस्तत्त्वार्षपरिनिष्ठिता ॥ तां भवान्वेद विद्यात्मा पुरुषः शाश्वतो ध्रुवः ॥ २१ ॥ त्वं व्यक्तश्च तथाव्यक्तस्त्वत्तः सर्वमिदं जगत् ॥ भवन्मया वयं देव भवानात्मा भवान्प्रभुः ॥ २२ ॥ चतुर्विभक्तमूर्तिं स्त्वं सर्वलोकविभुर्गुरुः ॥ चतुर्युगसहस्रेण सर्वलोकान्तकान्तकः ॥ २३ ॥ प्रतिष्ठा सर्वभूतानामनन्तबलपौरुषः ॥ कपिलप्रभृतीनां च यतीनां परमा गतिः ॥ २४ ॥ अनादिमध्यनिधनः सर्वात्मा पुरुषोत्तमः ॥ स्रष्टा त्वं त्वं च संहर्ता त्वमेको लोकभावनः ॥ २५ ॥ भवान्ब्रह्मा च रुद्रश्च महेन्द्रो वरुणो यमः ॥ भवान्कर्त्ता विकर्त्ता च लोकानां प्रभुरव्ययः ॥ २६ ॥

जाते हो ॥ २१ ॥ आप व्यक्त अव्यक्त स्वरूप हो तुमसेही यह सब जगत् स्थित है हम त्वन्मय हैं, हे देव ! आपही सबके आत्मा प्रभु हो ॥ २२ ॥ आप चतुर्विभक्तमूर्ति और सब लोकके गुरु हो चार सहस्र देवयुग बीचनेसे जगत् का अन्त करते हो ॥ २३ ॥ आपसेही सब भूतोंकी प्रतिष्ठा है आपमेंही अनन्त बल और पुरुषार्थ है आपहां कपिल आदि यतियोंकी परम गति हो ॥ २४ ॥ आपही अनादि मध्य निधन सर्वात्मा पुरुषोत्तम हो आपही उत्पन्न और संहार करनेवाले एकही लोकभावन हो ॥ २५ ॥ आप ब्रह्मा रुद्र महेन्द्र वरुण यम हो आपही कर्ता विकर्ता लोकोंके अविनाशी प्रभु

हो ॥ २६ ॥ परम सिद्ध परम मंत्र परम मन परम धर्म परम यश अथ पुराणपुरुष आपहीको कहते हैं ॥ २७ ॥ परम सत्य परम हवि परम पवित्र परम मार्ग परम यज्ञ परम होत्र अथ पुराणपुरुष आपको कहते हैं ॥ २८ ॥ परम शरीर परम धाम परम योग परम वाणी परम रहस्य परम गति अथ पुराणपुरुष आपको कहते हैं ॥ २९ ॥ परंपरेसे भी परे जिससे कोई परे नहीं परमदेव परंपरासे परे प्रभु आपको अथ और पुराणपुरुष कहते हैं ॥ ३० ॥ परंपरेसे भी परे परम प्रधान परेसे परे तत्त्व परसे परे धाता अथ पुराणपुरुष आपको कहते हैं ॥ ३१ ॥ परेसे परे परम रहस्य परेसे परे परम तप अथ पुराण

परां च सिद्धिं परमं च देवं परं च मन्त्रं परमं मनश्च ॥ परं च धर्मं परमं यज्ञश्च त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ २७ ॥ परं च सत्यं परमं हविश्च परं पवित्रं परमं च मार्गम् ॥ परं च यज्ञं परमं च होत्रं त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ २८ ॥ परं शरीरं परमं च धाम परं च योगं परमां च वाणीम् ॥ परं रहस्यं परमां गतिं च त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ २९ ॥ परं परस्यापि परं च यत्परं परं परस्यापि परं च देवम् ॥ परं परस्यापि परं प्रभुं च त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ ३० ॥ परं परस्यापि परं प्रधानं परं परस्यापि परं च तत्त्वम् ॥ परं परस्यापि परं च धाता त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ ३१ ॥ परं परस्यापि परं रहस्यं परं परस्यापि परं परं यत् ॥ परं परस्यापि परं तपो यत्त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ ३२ ॥ परं परस्यापि परं परायणं परं च गुह्यं च परं च धाम ॥ परं च योगं परमं प्रभुत्वं त्वामाहुर्ग्र्यं पुरुषं पुराणम् ॥ ३३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमुक्त्वा स भगवान्सर्वलोकपितामहः ॥ स्तुत्वा नारायणं देवं ब्रह्मलोकं गतः प्रभुः ॥ ३४ ॥ ततो नदत्सु तूर्येषु नृत्यन्तीष्वप्सरःसु च ॥ क्षीरोदस्योत्तरं कूलं जगाम प्रभुरीश्वरः ॥ ३५ ॥ नारसिंहीं तलुं त्यक्त्वा स्थापयित्वा च तद्वपुः ॥ पौराणं रूपमास्थाय ययौ स गरुडच्वजः ॥ ३६ ॥

पुरुष आपको कहते हैं ॥ ३२ ॥ परंपरेसे परे परायण परम गुह्य परम धाम परम योग परम प्रभु आपको अथ पुरातन पुरुष कहते हैं ॥ ३३ ॥ वैशम्पायन बोले; इस प्रकार सब लोकके पितामहने जब कहा तब नारायणदेवकी स्तुति कर अपने ब्रह्मलोकको चले गये तब बाजोंके बजने और अप्सराओंके नृत्य करनेपर भगवान् क्षीरसागरके उत्तर तटपर चले गये ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ वहां उस नारसिंहशरीरको अदृश्य कर उसकी प्रतिमा स्थापन कर

पुराण चतुर्भुजरूपमें स्थित हो नारायण चले गये ॥ ३६ ॥ आठ चक्रके विभूति शोभित विमान अर्थात् श्रुतिमसिद्ध शब्द ओत्रादि ग्रह अतिग्राह्यरूपसे निरन्तर चाल्यमान देहहारी साधनसे वे अव्यक्त प्रकृति आठ आकारवाली है, उस अहंकारसे निकट देवात्मा नृसिंहहारी अपने स्थान चिन्मात्रस्वरूपको प्राप्त हुए ॥ ३७ ॥ इस प्रकार नृसिंहरूपधारी इन महात्माने पूर्वकालमें हिरण्यकशिपु दैत्यका वध किया था ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहा० सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पंडितज्वालाप्रसादमिश्रकृतज्ञापायां नारसिंहप्रादुर्भावे हिरण्यकशिपुवधकथनं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥ वैशंपायन बोले; नृसिंहचरित्र वर्णन किया अब फिरती इसके उपरान्त वामनचरित्र वर्णन क ते हैं जिसमें रूप धारण करनेवालोंमें श्रेष्ठ नारायणने वामनरूप धारण किया ॥ १ ॥

अष्टचक्रेण यानेन भूतियुक्तेन शोभिना ॥ अव्यक्तः प्रकृतिर्देवः सस्थानमगमत्प्रभुः ॥ ३७ ॥ एवं महात्मना तेन नृसिंहवपुषा तदा ॥ देवेन निहतः पूर्वं हिरण्यकशिपुश्च सः ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नारसिंहप्रादुर्भावे हिरण्यकशिपुवधकथनं नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४७ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ नृसिंह एष कथितो भूयोऽयं वामनो परः ॥ यत्र वामनमास्थाय रूपं रूपविदां वरः ॥ १ ॥ बलेर्बलवतो यज्ञे बलिना विष्णुना पुरा ॥ विक्रमेस्त्रिभिराक्रम्य त्रैलोक्यमखिलं हृतम् ॥ २ ॥ समुद्रवसना चोर्वी नानानगविभूषिता ॥ हत्वा दत्त्वा सुरेन्द्राय शक्राय प्रभविष्णुना ॥ ३ ॥ जनमेजय उवाच ॥ अत्र मे संशयो ब्रह्मत्रय कोटुहलं महत् ॥ कथं नारायणो देवो वामनत्वमुपागतः ॥ ४ ॥ यः पुराणे पुराणात्मा भूत्वा नारायणः प्रभुः ॥ पद्मनाभो महाबाहुर्लोकानां प्रकृतिर्ध्रुवः ॥ ५ ॥ अनादिमध्यनिघनत्रैलोक्यादिः सनातनः ॥ देवदेवः सुराध्यक्षः कृष्णो लोकनमस्कृतः ॥ ६ ॥

बलि बलिके यज्ञमें महाबली विष्णुने अपने विक्रमसे त्रिलोकीको वशीभूत कर लिया था ॥ २ ॥ समुद्रपर्यन्त यह पृथ्वी अनेक पर्वतोंसे युक्त हरण कर विष्णुने सुरेन्द्रके निमित्त प्रदान की थी ॥ ३ ॥ जनमेजय बोले; हे ब्रह्मन्! इसमें मुझे परम कुतूहल और संदेहजी है कि नारायणदेवने क्यों वामन-शरीर धारण किया ॥ ४ ॥ जो पुराणोंमें पुराणात्मा गाया जाता है वह नारायण प्रभु पद्मनाभ महाबाहु लोकोंकी प्रकृति ध्रुवरूप ॥ ५ ॥ अनादि मध्य निघन त्रैलोक्यके आदि सनातन देवदेव सुरोंके अध्यक्ष कृष्ण लोकसे नमस्कृत ॥ ६ ॥

हव्य कव्य ले जानेवाले भीमान् हव्यकव्यभोजी अविनाशी है वह देवमाता अदितिके गर्भमें कैसे प्राप्त हुए जो इन्द्रकेभी सखा हैं वह किस प्रकार वासवके अनुज हुए ॥ ७ ॥ वह उत्पन्न हो देवेश किस प्रकार विष्णुत्वको प्राप्त हुए. हे विप्र ! आप उन महात्माका प्रादुर्भाव सुझसे कहिये ॥ ८ ॥ वेशंपापन बोले; कषिभेष्टोंसे पूजित इस कथाको श्रवण कीजिये जो पुराणोंमें विद्वानोंने कही है और ब्रह्माकी प्रेरणासे है अर्थात् नारायणका देवताओंमें पक्षपात नहीं है. सत्त्वप्रधानरूप देवताओंके हैं, रजप्रधानरूप यक्षराक्षसोंके, तमप्रधानरूप भूत प्रेत पिशाचादिके होते हैं, सतोद्युज सतोद्युजको आकर्षण करता है, इस कारण नारायण देवताओंकी ओर सत्त्वगुणोंको प्राप्त होते हैं इन्द्रकेही पृथ्वीके बीज अंकुर तरुफलकी समान पांच रूप हैं अर्थात्

हव्यकव्यवहः श्रीमान् हव्यकव्यभुगव्ययः ॥ अदित्या देवमातुश्च कथं गर्भेऽभवत्प्रभुः ॥ सखा यो वासवस्यापि स कथं वासवानुजः ॥ ७ ॥ प्रसूतो देवदेवेशो विष्णुत्वं प्राप्तवान्कथम् ॥ एतदाचक्ष्व मे विप्र प्रादुर्भावं महात्मनः ॥ ८ ॥ वेशम्पायन उवाच ॥ शृणु राजन्कथां दिव्यामर्चितामृषिपुङ्गवैः ॥ पुराणैः कविभिः प्रोक्तां ब्रह्मोक्तां ब्राह्मणेरीताम् ॥ ९ ॥ मारीचस्य सुरेशस्य कश्यपस्य प्रजापतेः ॥ अदितिर्वित्तिर्द्वे भार्ये भगिन्यो जनमेजय ॥ १० ॥ अदित्यां जज्ञिरे देवाः कश्यपस्य महात्मनः ॥ धातार्यमा च मित्रश्च वरुणोऽशो भगस्तथा ॥ ११ ॥ इन्द्रो विवस्वान्पूषा च पर्जन्यो दशमस्तथा ॥ तथैकादशमस्त्वष्टा द्वादशो विष्णुरुच्यते ॥ १२ ॥

शुच शबल सूत्र विराट् विष्णुसंज्ञक उत्तमं शुच निर्विशेष है विष्णु सर्वविशेषमें युक्त है और राजाकी समान शिष्टोंपर अनुग्रह दुष्टोंपर निग्रह करता है यद्यपि सब उसीके अंग हैं परन्तु (त्याज्यो दुष्टः प्रियोऽप्यासीदंगुलीबोरगता) अर्थात् सर्पसे काटी हुई अपनी अंगुलीभी तो त्याज्य है दुष्टकी तो कौन कहे इसी न्यायसे दुष्टोंका निग्रह करते हैं ॥ ९ ॥ देवताओंके ईश मरीचपुत्र कश्यपके अदिति और दिति यह दो विख्यात भार्या थीं ॥ १० ॥ महात्मा कश्यपसे अदितिमें देवता हुए धाता अर्यमा मित्र वरुण अंश भन ॥ ११ ॥ इन्द्र विवस्वान् पूषा और दशवां पर्जन्य म्यारहवां त्वष्टा और बार-

हवां विष्णु कहलाता है ॥ १२ ॥ दितिके बलवान् हिरण्यकश्यप हुआ उसका अनुज महाप्रतापी हिरण्याक्ष हुआ ॥ १३ ॥ हिरण्याक्षशिपुके चोर पराक्रमी पांच पुत्र हुए प्रह्लाद अनुह्लाद जम्भ अनुह्लाद और संह्लाद ॥ १४ ॥ प्रह्लादके विरोचन और उसका पुत्र बलि हुआ उनके बड़े बली पुत्र और पौत्र अनेक हुए ॥ १५ ॥ वे तेजस्वी सुरारि दैत्येन्द्र मनस्वी जनोके अनेक गण देशदेशमें स्थित हो गये ॥ १६ ॥ जब उन्होंने यह देखा कि नारसिंहेने हिरण्यकशिपुको मार डाला तब दैत्योंने देवताओंके वधके निमित्त बलिको इन्द्र किया ॥ १७ ॥ इनको धर्ममें तत्पर सत्यवाक् जितेन्द्रिय श्रुता

दित्यां जातो हि बलवान् हिरण्यकशिपुः प्रभुः ॥ तस्यानुजस्य दैत्येन्द्रो हिरण्याक्षः प्रतापवान् ॥ १३ ॥ हिरण्यकशिपोः पुत्राः पञ्च घोरपराक्रमाः ॥ प्रह्लादश्चानुह्लादश्च जम्भः संह्लाद एव च ॥ १४ ॥ विरोचनश्च प्राह्लादिस्तस्य पुत्रो बलिः स्मृतः ॥ पुत्रपौत्रं च बलवत्तेषामक्षयमव्ययम् ॥ १५ ॥ तेजस्विनां सुरारीणां दैत्येन्द्राणां मनस्विनाम् ॥ गणाः सुबहुशो राजन् देशे देशे सहस्रशः ॥ १६ ॥ ते हृष्टा नारसिंहेन हिरण्यकशिपुं हतम् ॥ दैत्या देववधार्थाय बलिमिन्द्रं प्रचक्रिरे ॥ १७ ॥ हृष्टा धर्मपरं नित्यं सत्यवाक्यं जितेन्द्रियम् ॥ शौर्याध्ययनसंपन्नं सर्वज्ञानविशारदम् ॥ १८ ॥ परावरगृहीतार्थं तत्त्वदर्शिनमव्ययम् ॥ तेजस्विनं सुररिपुं हिरण्यकशिपुं यथा ॥ १९ ॥ अभिषेकेण दिव्येन बलिं वैरोचनिं तथा ॥ दैत्याधिपत्ये दितिजास्तदा सर्वेऽभ्यपूजयन् ॥ २० ॥ अभिषिक्तस्तदा दैत्यैर्बलिर्बलवतां वरः ॥ ब्रह्मणा चैव तुष्टेन हिरण्यकशिपोः पदे ॥ २१ ॥ अभिषिक्तोऽसुरगणेर्बलिवैरोचनिस्तदा ॥ काञ्चनेः कलशैः स्फीतैः सर्वतीर्थाम्बुसंवृतैः ॥ २२ ॥

अध्ययनमें सम्पन्न सम्पूर्ण ज्ञानमें विशारद देखकर ॥ १८ ॥ कि पर अपरके अर्थ ग्रहण करनेमें समर्थ तत्त्वदर्शी अग्नय तेजस्वी सुररिपु हिरण्यकशिपुकी समान देखा ॥ १९ ॥ तब विरोचनपुत्र बलिको दिव्य अभिषेक किया सभ दानवोंने उसको दैत्योंके आधिपत्यमें पूजन किया ॥ २० ॥ तब इस प्रकार दैत्योंने महाबली बलिका अभिषेक किया ब्रह्माकी संतुष्टतासे हिरण्यकशिपुके पदमें स्थापित किया ॥ २१ ॥ इस प्रकार असुरोंने सब

तीर्थोंसे सोनेके कलशोंमें जल लाकर बलिको अभिषेक किया ॥ २२ ॥ अभिषेक करके फिर दानव जयशब्द करने लगे जब कि अतुलबलवान् बली सिंहासनपर स्थित हुए थे ॥ २३ ॥ इस प्रकार बली बलिको यह दैत्य अभिषेक कर अपने शिर पृथ्वीमें मुकाकर प्रार्थना करने लगे ॥ २४ ॥ दैत्य बोले, हे दैत्येन्द्र ! आपको विदित है जिस प्रकार हिरण्यकशिपुके वशवर्ती स्थावर जंगमात्मक त्रिलोकी थी ॥ २५ ॥ नारायणने उन तुम्हारे पितामहको मारकर त्रिलोकी हरण कर इन्द्रको अभिषेक किया है ॥ २६ ॥ सो आप अपने पितामहके राज्य लौटानेको योग्य है, हे नाथ !

जयशब्दं ततश्चक्रुरभिषिक्तस्य दानवाः ॥ बलेरतुल्यवीर्यस्य सिंहासनगतस्य वै ॥ २३ ॥ कृत्वेन्द्रं दानवाः सर्वे बलिं बलवतां वरम् ॥ ततो विज्ञापयामासुः शिरोभिः पतिताः क्षितौ ॥ २४ ॥ दैत्या ऊचुः ॥ विदितं तव दैत्येन्द्र हिरण्यकशिपोर्यथा ॥ त्रैलोक्यमासीदखिलं जगत्स्थावरजङ्गमम् ॥ २५ ॥ पितामहं तु इत्वा ते सुरेश्वरानिषूदन ॥ हृतं तदेव त्रैलोक्यं शक्रश्चेवाभिषेचितः ॥ २६ ॥ तत्पितामहराज्यं त्वं प्रत्याहर्तुमिदार्हसि ॥ अस्माभिः सहितो नाथ त्रैलोक्यमिदमव्ययम् ॥ २७ ॥ प्रत्यानयस्व भद्रं ते राज्यं पैतामहं प्रभो ॥ २८ ॥ असुरगणसदस्रसंवृतस्त्वं जय दिवि देवगणान्महानुभावान् ॥ अमितबलपराक्रमोऽसि राजन्नतिशयसे स्वगुणैः पितामहं स्वम् ॥ २९ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामने बलेरभिषेको नाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ निशम्य तेषां वचनं महामतिर्बलिस्तदा प्रीतमना महाबलः ॥ आज्ञापयामास स दैत्यकोटिं त्रैलोक्यमथैव जयाम सर्वम् ॥ १ ॥

हमारे सहित यह त्रिलोकी ॥ २७ ॥ आप फेर लीजिये आपका मंगल हो पितामहका राज्य स्वीकार करो ॥ २८ ॥ सहस्रों असुरगणोंके सहित तुम स्वर्गमें रहनेवाले महाशुभाष देवताओंको जीतो, हे राजन् ! तुम अमितबल और पराक्रमसे युक्त हो और गुणोंमें अपने पितामहसे अधिक हो ॥ २९ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने बलेरभिषेको नाम अष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥ वैशम्पायन बोले, महाबली उनके यह वचन सुन बहुत प्रसन्न हुए और वह दैत्यसमूहको आज्ञा देता हुआ कि हम सब अभी त्रिलोकीका जय करें ॥ १ ॥

इत प्रकार विरोचनपुत्र बलिके वचन सुग युद्धवर्षद दानव परम उद्योग करने लगे ॥ २ ॥ महापद्म निकुंभ कुंभकर्ण कांचनाक्ष कपित्कंध मेनाक क्षितिकंपन ॥ ३ ॥ शितकेश ऊर्ध्ववक्र वज्रनाभ शिलाजटावाला सहस्रबाहु विकट व्याघ्राक्ष विषदर्शन ॥ ४ ॥ एकाक्ष एकपाद मुंड विद्युदक्ष चतुर्भुज गजोदर गजशिरा गजस्कंध गजेश्वर ॥ ५ ॥ अष्टदंष्ट्र चतुरवक्र मेघनादी जलंधर कराळ ज्वालजिह्वामुख शतांग शतलोचन ॥ ६ ॥ सहस्रपाद सुमुख कृष्ण महाअसुर रणोत्कट दानपति शैलकम्पी कुलाकुली ॥ ७ ॥ समुद्र रभस चण्ड महाअसुर धूम्र गोत्रज गोक्षुर रौद्र गोदन्त स्वस्तिक

तस्य तद्वचनं श्रुत्वा बलैर्विरोचनस्य तु ॥ उद्योगं परमं चक्रुर्दानवा युद्धवर्षदाः ॥ २ ॥ महापद्मो निकुम्भश्च कुम्भकर्णश्च वीर्यवान् ॥ काञ्चनाक्षः कपित्कण्डो मेनाकः क्षितिकम्पनः ॥ ३ ॥ शितकेशोर्ध्ववक्रश्च वज्रनाभः शिली जटी ॥ सहस्रबाहुर्विकटो व्याघ्राक्षः प्रियदर्शनः ॥ ४ ॥ एकाक्ष एकपाङ्गुण्डो विद्युदक्षश्चतुर्भुजः ॥ गजोदरो गजशिरा गजस्कन्धो गजेश्वरः ॥ ५ ॥ अष्टदंष्ट्रश्चतुर्वक्रो मेघनादी जलंधरः ॥ कराळो ज्वालजिह्वास्यः शताङ्गः शतलोचनः ॥ ६ ॥ सहस्रपादः सुमुखः कृष्णश्चैव महासुरः ॥ रणोत्कटो दानपतिः शैलकम्पी कुलाकुलिः ॥ ७ ॥ समुद्रो रभसश्चण्डो धूम्रश्चैव महासुरः ॥ गोत्रजो गोक्षुरो रौद्रो गोदन्तः स्वस्तिको ध्रुवः ॥ ८ ॥ मांसलो मांसभक्षश्च वेगवान्केतुमाञ्छिविः ॥ पङ्कदिग्धशरीरश्च बृहत्कीर्तिर्महाहनुः ॥ ९ ॥ समप्रभो विकुम्भाण्डो विरूपाक्षो महोदरः ॥ श्वेतशीर्षश्चन्द्रहनुश्चन्द्रहा चन्द्रतापनः ॥ १० ॥ विहरो दीर्घबाहुश्च मय्यपो मारुताशनः ॥ तालजङ्घो महाभागः सरभः शलभः क्रथः ॥ ११ ॥ समुद्रमयनो नादी विततश्च महाबलः ॥ प्रलम्बो नरको व्याली धेनुकः काललोचनः ॥ १२ ॥ वरिष्ठश्च गरिष्ठश्च भूतलोमा तथा विधुः ॥ दुष्प्रसादः किरीटी च सूचीवक्रो महासुरः ॥ १३ ॥

ध्रुवः ॥ ८ ॥ मांसल मांसभक्ष वेगवान् केतुमान् शिषि पङ्कदिग्धशरीर बृहत्कीर्तिवाले महाहनु (ठोरी) वाले ॥ ९ ॥ समप्रभ विकुम्भाण्ड विरूपाक्ष महोदर श्वेतशीर्ष चन्द्रहनु चन्द्रहा चन्द्रतापन ॥ १० ॥ विहरो दीर्घबाहु मय्यपो मारुताशन तालजंघ महाभाग सरभ शलभ क्रथ ॥ ११ ॥ समुद्रमयन नादी वितत महाबल प्रलम्ब नरक व्याली काललोचन ॥ १२ ॥ वरिष्ठ गरिष्ठ भूतलोमा विधु दुष्प्रसाद किरीटी सूचीवक्र महाअसुर ॥ १३ ॥

सुबाहु कंजबाहु करण कलशोदर सोमपा देवपाजी प्रवर वीरमर्दन ॥ १४ ॥ सुपथ सण्डमुक्ति शिशिनेत्र शिशिध्वज यह मरीचिके कीर्ति बढानेवाले
 देत्य कहे ॥ १५ ॥ इनके सिवाय औरभी नानाभूषणोंसे भूषित अनेक सहस्रों रथोंमें स्थित हो युद्ध करनेको चले ॥ १६ ॥ यह दैत्य दिव्यवस्त्र
 और दिव्यमाला अनुलेपन किये दिव्य कवच पहरे दिव्य अस्त्रधारोंसे युक्त ॥ १७ ॥ दिव्य आयुधधारी दैत्य मेघकी समान गर्जन करते बड़े बड़े रथ-
 समूहोंसे पृथ्वीको चलायमान करते ॥ १८ ॥ महाबली दिव्य बलवाले अस्त्रधारी सर्पके शरीरकी समान महाभुजाओंसे व्याप्त दुर्जय दैत्योंमें भेठ सुरारि

सुबाहुः कञ्जबाहुश्च करणः कलशोदरः ॥ सोमपा देवपाजी च प्रवर वीरमर्दनः ॥ १४ ॥ सुपथः सण्डमुक्तिश्च शिशिनेत्रः
 शिशिध्वजः ॥ यथास्मृति मया प्रोक्ता मरीचेः कीर्तिवर्चनाः ॥ १५ ॥ एते चान्ये च बह्वो नानाभूषणभूषिताः ॥ रथोर्वेवदुसहस्रेय-
 युर्यादुमारिदमाः ॥ १६ ॥ दिव्याम्बरधरा दैत्या दिव्यमाल्यानुलेपनाः ॥ दिव्यैश्च कवचेर्नृद्धा दिव्यैश्चोच्छ्रितैर्ध्वजैः ॥ १७ ॥ दिव्यायु-
 धधरा दैत्या मर्जमाना यथाम्बुदाः ॥ बृहद्भी रथचोषैश्च चालयन्तो वसुन्धराम् ॥ १८ ॥ महाबला दिव्यबलास्त्रधारिणो भुजङ्गभो-
 गप्रतिभेर्महाभुजैः ॥ सुदुर्जया दैत्यवृषाः सुरारयो दितिप्रिया लोहितलोहितेक्षणाः ॥ १९ ॥ ते जगमुरकंजवलनेन्द्रवीर्या महेन्द्रवज्राश-
 नितुल्यवेगाः ॥ विवृद्धदंष्ट्रा हरिधूम्रकेशा विवर्द्धमानाः शरदीष मेघाः ॥ २० ॥ सहस्रबाहुर्वाणश्च बडेः पुत्रा महाबलः ॥ रथातिरथ-
 क्रोट्या वै सन्नद्धत महाबलः ॥ २१ ॥ सर्वे मायाधरा दैत्याः सर्वे दिव्यास्त्रयोधिनः ॥ सर्वे मदबलोरसिकाः सर्वे लब्धवराः पुरा ॥ २२ ॥
 सर्वे काञ्चनशोलाभाः पतिकोशेयवाससः ॥ किरीटोष्णीषमुकुटा दिव्यभूषणभूषिताः ॥ २३ ॥

दितिप्रिय लोहितवर्ण लाल नेत्र किये ॥ १९ ॥ सूर्यके प्रकाशकी समान पराक्रमी महेन्द्रके वज्रकी तुल्य वेगवाले बड़ी डाढ हरित वर्णके धुमेले केश
 बड़े हुए शरत्कालके मेघकी समान ॥ २० ॥ बलिका पुत्र सहस्र भुजावाला बाण जो 'करोड़ों' अतिरथियोंसेभी महाबली था ॥ २१ ॥ यह सब
 दैत्य मायाके जाननेवाले दिव्य अस्त्रधारी मदके बलसे उत्तिक सम्पूर्ण वरदान पाये हुए ॥ २२ ॥ सब सुवर्गके पर्वतकी समान कान्तिमान् पीत
 रेशमी वस्त्र पहरे किरीट पगड़ी मुकुट दिव्य भूषणोंसे भूषित ॥ २३ ॥

सबके सुवर्णके कवच सुवर्णकी ध्वजा आकाशमें शरहतुके ग्रहोंकी समान रथमें स्थित विराजमान होते थे ॥ २४ ॥ तथापे हुए उत्तम सुवर्ण और अग्निकी समान कान्तिमान् सुवर्ण पर्वतपर स्थित टेमूके फूलकी समान शोभित होते थे ॥ २५ ॥ उनके मणियों चौपासेके उठे हुए मेघकी समान बाण शोभित होता था और शक्ति गदा हाथमें लिपे त्रिनल (१२०० हाथके) प्रमाण रथमें स्थित था ॥ २६ ॥ उनमें विचित्र चित्रित ध्वजा और विचित्र रचना थी वह रथ गदा और परिघसे सम्पूर्ण सुवर्णजालसे विभूषित था ॥ २७ ॥ दैत्य इस प्रकार उसके साथ थे जैसे सूर्यके संग बालसित्य ऋषि

हिरण्यकवचाः सर्वे हिरण्यध्वजकेतवः ॥ स्यन्दनस्था व्यराजन्त शारदा इव स्वे ग्रहाः ॥ २४ ॥ तापनीयेर्वैरेनिष्कैरनलज्जालितप्रभैः ॥ हेमपर्वतशृङ्गस्थाः पुष्पिता इव किंशुकाः ॥ २५ ॥ तेषां मध्यगतो बाणः प्रावृषीवोत्थितो वनः ॥ स्थितः शक्तिगदापाणिस्त्रिनल-
प्रतिमे रथे ॥ २६ ॥ विचित्राश्च ध्वजयुगे चित्रभक्तिविराजिते ॥ गदापरिघसंपूर्णे हेमजालविभूषिते ॥ २७ ॥ अन्वीयमानो दितिजैर्वा-
लसित्यैरिवांशुमान् ॥ नानाप्रहरणैर्घोरिस्तीक्ष्णदैर्गैरिवोरगेः ॥ २८ ॥ पञ्च तस्य महावर्षा दानवा युद्धबुर्मुदाः ॥ ररक्षु रथमव्यग्रा-
व्यादितास्या भयावहाः ॥ २९ ॥ सुबाहुर्मेघनादश्च भीमगर्भश्च वीर्यवान् ॥ तथा कनकमूर्धा च वेगवान्केतुमानिति ॥ ३० ॥
कनकरजतभक्तिचित्रपार्श्वे पतंगपतिप्रतिमे रथे स्थितोऽभूत् ॥ लज्जानिनकुतुल्यनेमिघोषे सुरगणसैन्यवधाय दानवेन्द्रः ॥ ३१ ॥
अनायुषायाः पुत्रस्तु बलो नाम महासुरः ॥ वृतः शतसदृशेण रथानां भीमवर्चसाम् ॥ ३२ ॥ युक्तमृशसदृशेण रथमास्त्रं वीर्यवान् ॥
नीलायसमयं घोरं वायसाङ्गं सुदुर्जयम् ॥ ३३ ॥

गमन करते हैं अनेक प्रकारके घोर प्रहारयुक्त तीक्ष्ण दंष्ट्रावाले सर्पोंकी समान थे ॥ २८ ॥ पांच महावीर युद्धदुर्धर दानव महाप्रपावना सुल फैलाये उसके रथकी रक्षा करते थे ॥ २९ ॥ सुबाहु मेघनाद वीर्यवान् भीमगर्भ कनकमूर्धा वेगवान् केतुमान् ॥ ३० ॥ सुवर्ण और चांदीकी भक्ति (रथना) जिस रथके पार्श्वभागमें होती थी वह गरुडकी समान वेगवान् उस रथमें स्थित हुआ जिसकी नेमिका शब्द मेघकी समान होता है इस प्रकार दानवेन्द्र-
रथमें स्थित हुआ ॥ ३१ ॥ अनायुषाका पुत्र महाबली महासुर भयंकर सौ हजार रथोंसे युक्त ॥ ३२ ॥ जिसमें सहस्रकक्ष जुते हुए थे नीले लोह

मय घोर वायस अंकवाले परम दुर्जय थे ॥ ३३ ॥ वह श्रीमान् नीलाम्बरधारी वैदूर्य पर्वतकी समान दानव बडे वेगसे धावमान हुआ ॥ ३४ ॥ वहां वह सागररूपी सेनाके मध्यमें शोभित हुआ जैसे प्रातःकाल सागरके समीप सूर्य शोभित होता है ॥ ३५ ॥ तपाये हुए सुवर्णकी समान कान्तिमान् चन्द्रमाके समान आकार और बिजलीकी तुल्य गुणसे युक्त मुरख किरिटसे शोभायमान जैसे शृंगोंसे पर्वत शोभित होता है ॥ ३६ ॥ साठ सहस्र रथ नमुचि असुरके साथ चले जिनमें खर जुते जिनका मेघकी समान शब्द होता था ॥ ३७ ॥ वे सब चित्रयोधी अनेक प्रकारके पहार करनेवाले थे सब नीलाम्बरधरः श्रीमान्वैदूर्याचलसन्निभः ॥ महाता रथवेगेन प्रययो दानवस्तदा ॥ ३८ ॥ तत्रैकाग्रवसंकाशे सेन्यमध्ये व्यराजत ॥ प्रभातसमये श्रीमान्समुद्रस्य इषांशुमान् ॥ ३९ ॥ सुतप्तजाम्बूनदतुल्यवर्चसा निशाकराकारतडिङ्गणाकरः ॥ किरिटमुख्येन विभाति शोभिना यथा गिरिः शृङ्गवरेण भास्वता ॥ ४० ॥ षष्ठी रथसहस्राणि नमुचेरसुरस्य वै ॥ खरयुक्तानि सर्वाणि मेघतुल्यरवाणि च ॥ ४१ ॥ नानाप्रहरणाः सर्वे सर्वे ते चित्रयोधिनः ॥ महाभ्रवनसंकाशा वेगवन्तो महाबलाः ॥ ४२ ॥ रथो व्याघ्रसदृशेण युक्तः परमवेगवान् ॥ नमुचेरसुरेन्द्रस्य सर्वरत्नाविभूषितः ॥ ४३ ॥ शार्दूलचिह्नः शुशुभे तस्य केतुर्द्विरण्मयः ॥ रथमध्ये सुरेशस्य मध्यदिनरविर्यथा ॥ ४४ ॥ स भीमवेगश्च महाबलश्च प्रगृह्य चापं हिमवानिव स्थितः ॥ नीलाम्बरः काञ्चनपट्टनद्धो दिशागजो यद्वदुपेतकक्षः ॥ ४५ ॥ किङ्किणीजालनिषेधं तपनीयविभूषितम् ॥ सपताकध्वजोपेतं ससंध्यमिव तोयम् ॥ ४६ ॥ चक्रैश्चतुर्भिः संयुक्तमष्टनल्लायतान्तरम् ॥ हेमजालाकुलं दीप्तं कालचक्रमिवोदितम् ॥ ४७ ॥

महामेघकी समान वेगवाले महाबली थे ॥ ३८ ॥ वह सहस्र व्याघ्र जुने रथमें स्थित हो परम वेगवान् नमुचि असुरका रथ सम्पूर्ण रत्नोंसे भूषित था ॥ ३९ ॥ उसकी हिरण्य ध्वजा शार्दूलके चिह्नमें शोभित थी और उसके रथमें शोभा मध्याह्नके सूर्यकी समान थी ॥ ४० ॥ वह भीमवेगवान् महाबली तपकर चाप लेकर हिमालयकी समान स्थित हुआ नीलाम्बर सुवर्णके पट्टसे जड़ित जैसे कक्षसहित दिशाका हाथी हो तद्वत् शोभित हुआ ॥ ४१ ॥ किङ्किणीसमूहका शब्द सुवर्णसे भूषित पताका ध्वजासे युक्त संध्याकालीन मेघकी समान ॥ ४२ ॥ चार पहियोंसे संयुक्त आठ नल्ल

(३२०० हाथ) के अन्तरवाला सुवर्णजालसे आकुल और दीप्त कालचक्रकी समान उदित ॥ ४३ ॥ अनेक प्रकारके घोर आयुध धारे व्याघ्रचर्मसे मढ़े ईहामृगोंके समूहोंसे युक्त चित्र रचनासे विराजित ॥ ४४ ॥ बाणोंसे पूर्ण तूणीर शक्ति तोमरसे संकुल गदा मुद्गरसे युक्त धनुषरत्नसे विभूषित ॥ ४५ ॥ लम्बायमान केशर और कान्तिवाले सहस्रों ऋत्योंसे युक्त और सुवर्ण बड़ी सिंहध्वजाओंसे शोभित ॥ ४६ ॥ उस मयकी मायासे युक्त उस रथमें दैत्य शोभित हुआ और रथमें स्थित हो उदय हुए सूर्यकी समान शोभित हुआ ॥ ४७ ॥ उसमें उज्ज्वल रजतके बिंदु

नानायुधधरं घोरं व्याघ्रचर्मपरिष्कृतम् ॥ ईहामृगगणाकीर्णं चित्रभक्तिविराजितम् ॥ ४३ ॥ तूणीरशरसंपूर्णं शक्तितोमरसंकुलम् ॥ गदामुद्गरसंबाधं चापरत्नविभूषितम् ॥ ४४ ॥ युक्तमृशसहस्रेण लम्बकेशरवर्चसा ॥ राजतेन विकीर्णं शोभितं सिंहकेतुना ॥ ४५ ॥ स तेन शुशुभे दैत्यो मयो मायाविसर्पिणा ॥ रथरत्ने स्थितः श्रीमानुदयस्थ इवांशुमान् ॥ ४६ ॥ विमलरजतकिन्दुशोभिताङ्गं मणिकनकोज्ज्वलचारुभक्तिचित्रम् ॥ अयुतशतसहस्रमूर्जितानां मयमनुयाति तदा महारथानाम् ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे मयस्य युद्धाभिमग्नं नामैकोनपञ्चाशत्तोऽध्यायः ॥ ४९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ पुलोमा तु महादैत्यस्तिमिराकारगह्वरम् ॥ आरुरोहायसं घोरं रथं पररथारुजम् ॥ १ ॥ उत्कर्णपर्वताकारं लोहजालान्तरान्तरम् ॥ नेमिचोषेण महता क्षुभ्यन्तमिव सामरम् ॥ २ ॥ गदापरिचनिर्झिडोः सतोमरपरश्वधेः ॥ शक्तिमुद्गरसंकीर्णं सतोयमिदं तोदयम् ॥ ३ ॥

शोभित होते थे उज्ज्वल सुवर्णकी विचित्र रचना हो रही थी सौ दश सहस्र महारथी उस मयके पीछे पीछे चलें ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे मयस्य युद्धाभिमग्नं नामैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥ वैशम्पायन बोले, पुलोमा नाम महादैत्य लोहेके बने तिमिरके समान महामहद्वर रथमें चढ़ा जो रथ दूसरेके रथोंका तोड़नेवाला था ॥ १ ॥ उठे पर्वतके आकारवाला लोहजालके अन्तरसे युक्त बड़े भारी पहियोंके शब्दसे सामरको क्षुभित करता हुआसा ॥ २ ॥ गदा परिवर्तित शक्ति तोमर परश्वे शक्ति मुद्गरोंसे संकीर्ण जल भरे

मेवकी समान प्रकाशित ॥ ३ ॥ सहस्र कंट जुते वायुकी समान वेगवान् रथमें चढ़कर पुलोमा चला ॥ ४ ॥ इस युद्धबुद्धि महारथी पुलोमाके साथ तेजसे सुवर्णकी समान प्रकाशमान साठ सहस्र रथ चले ॥ ५ ॥ बड़ी भारी सङ्ग और राजाओंसे युक्त पर्वतमें स्थित, सूर्यकी समान रथमें स्थित हुए शोभित होता था ॥ ६ ॥ सुन्दर सुवर्णकी पट्टियोंसे जड़ित कालकी समान वह महागदाको ग्रहण कर शत्रुके मध्यमें विराजित पैसे हुआ मानो केतु काली लोहेकी गदा लिये पृथ्वीमें स्थित हो रहा है ॥ ७ ॥ बलवान् हयग्रीव, हयग्रीव नामक महाअसुरोंके सहित ५० सहस्र रथोंसे युक्त ॥ ८ ॥

रथमुष्टसहस्रेण संयुक्तं वायुवेगिना ॥ पुलोमारुह्य युद्धाय प्रस्थितो युद्धबुद्धिः ॥ ४ ॥ षष्टि रथतटव्राजि पुलोमानं महारथम् ॥ अन्वयुः सूर्यवर्णानि प्रदीप्तानीव तेजसा ॥ ५ ॥ सङ्गध्वजेन महता तप्तकाञ्चनवर्चसा ॥ आजते रथमध्यस्थः पर्वतस्थ इवाशु-
मान् ॥ ६ ॥ सुचारुचामीकरपट्टनद्धां महागदां कालनिभां महाबलः ॥ प्रयुज्य ब्राज स शत्रुमध्ये कार्णायसीं केतुरिवास्थितो-
भ्याम् ॥ ७ ॥ हयग्रीवस्तु बलवान् हयग्रीवैर्महासुरैः ॥ वृतः शतसहस्रेण रथानां रथिसत्तमः ॥ ८ ॥ धराधरनिभाकारं सपत्नान्नि-
चमर्दनम् ॥ स्यन्दनं भीममास्थाय युद्धायाभिमुखः स्थितः ॥ ९ ॥ श्वेतशूलप्रतीकाशः श्वेतकुण्डलभूषणः ॥ शुशुभे रथमध्यस्थः
श्वेतशृङ्ग इवाचलः ॥ १० ॥ महता सप्तशीर्षेण शोभितो नागकेतुना ॥ वैदूर्यमणिचित्रेण प्रवालाङ्कुरशोभिना ॥ ११ ॥ अमित-
बलपराक्रमाकृतीनां वररायिनामनुजमुत्तुर्जितानाम् ॥ असुरगणशताभिगच्छमानं त्रिदशगणा इव वासवं प्रयान्तम् ॥ १२ ॥

पर्वतके समान आकार शत्रुकी सेनाका मर्दन करनेवाले महासंपंकर रथमें स्थित हो युद्ध करनेको चला ॥ ९ ॥ श्वेतपर्वतकी समान श्वेत कुंडल भूषण धारण किये श्वेत शृंग पर्वतकी समान रथके मध्यमें स्थित हुआ ॥ १० ॥ बड़ी भारी सात शिरवाली नागकेतुसे शोभित चित्र वैदूर्यमणिके अंकुरसे शोभित ॥ ११ ॥ अमित बल और पराक्रमकी आकृतिवाले बड़े बड़े रथी उसके साथ चले जिनके पीछे सैकड़ों असुरगण चलने से जैसे हन्रके पीछे

देवता चलते हैं ॥ १२ ॥ सर्वशास्त्रमें विद्यारद महापंडित प्रह्लाद सब मायाधारी श्रीमान् सौ यज्ञका कर्ता ॥ १३ ॥ अग्निकी समान कान्तिमान् मेघोंके गर्जनाकी समान बड़ी भारी रथांकिते युक्त ॥ १४ ॥ उनके अभिनवीर्यवान् शूर सुवर्णके कुंडल धारण करनेवाले सहस्रों देवोंके साथ देवोंके सहित ब्रह्माजीकी समान प्रकाशित ॥ १५ ॥ अपने वीर्यसे अग्रणी बड़े दन मतवाले हाथीकी समान विक्रमवाले सब देवताओंकी सेना भुजित करनेको स्थित हुए ॥ १६ ॥ अपने वीर्यसे सागरकी समान दीप्ताग्निकी समान प्रज्वलित तेजमें सूर्यके आकार क्षणमें पृथ्वी समान ॥ १७ ॥ ताल ध्वजवाले प्रह्लादस्तु महाप्राज्ञः सर्वशास्त्रविशारदः ॥ सर्वमायाधरः श्रीमान्यष्टा कनुशतेरपि ॥ १८ ॥ समनघ्नत तेजस्वी पावकाचिः समप्रभः ॥ रथानीकेन महता दुर्दिनाम्भोदनादिना ॥ १९ ॥ शूरेणामितवीर्येण हेमकुण्डलधारिणा ॥ वृत्तो दैत्यसद्वस्त्रेण देवैरिव पितामहः ॥ १९ ॥ स्ववीर्योदग्रणीर्हस्तो मत्तवारणविक्रमः ॥ सुरसेन्यस्य सर्वस्य प्रतिशोभ इव स्थितः ॥ १६ ॥ स्ववीर्येणोदधेस्तुल्यः प्रदीप्ताग्निरिव ज्वलन् ॥ तेजसा भास्कराकारः क्षमया पृथिवीसमः ॥ १७ ॥ तालध्वजेन दीप्तेन रथेनातिविराजता ॥ तं यान्तमनुषान्ति स्म दानवाः शतसंघशः ॥ १८ ॥ सर्वे हिरण्यकवचाः सर्वे रत्नविभूषिताः ॥ दिव्याङ्गरागाभरणाः समरेष्वनिवर्तिनः ॥ १९ ॥ जाम्बूनदविचित्राङ्गा वैदूर्यविकृताङ्गाः ॥ दिव्यस्यन्दनमध्यस्थाः स्वस्था इव महाग्रहाः ॥ २० ॥ आचारवांश्चैव जितेन्द्रियश्च धर्मे रतः सत्यपरोऽनसूयः ॥ स्थितोऽग्नितोयाम्बुदवायुकल्पो रूपी यथा सर्वहरः कृतान्तः ॥ २१ ॥ शम्बरस्तु महामायो रथयूथपयूथपः ॥ आरुरोह रथं दिव्यं सर्वयुद्धविशारदः ॥ २२ ॥

दीप्तिमान् रथसे विराजित उनके चलनेपर अनेक दानव उनके पीछे चले ॥ १८ ॥ सब सुवर्णके कवचवाले सबही रथोंसे भूषित दिव्य अंगरामके आभरणवाले समरसे निर्वृत्त न होनेवाले ॥ १९ ॥ जाम्बूनदकी समान विचित्र अंग वैदूर्य मणिजटित बाजूबंद पहरे दिव्य स्पन्दनके मध्यमें स्थित स्वस्थ हुए महाग्रहोंकी समान स्थित ॥ २० ॥ आचारवान् जितेन्द्रिय धर्मरत सत्यमें तत्पर असूयारहित अग्नि जल वायुके समाव स्थित हुए जैसे कृतान्त स्थित होता है ॥ २१ ॥ महामायी शम्बर रथी यूथगतिपोंका यूथपति सब युद्धका जाननेवाला दिव्य रथपर चढा ॥ २२ ॥

वह महाबाहु लालनेत्र किये तपे सुवर्णके कुण्डल धारण किये मेघकी समान वर्ण दिव्यमाला पहरे दिव्य अनुलेपन लगाये ॥ २३ ॥ बिजली और ज्योतिके समान सूर्यकान्तिवाले मुकुटसे विराजित विचित्र मणि रत्न और वैदूर्यसे शोभित ॥ २४ ॥ महातपे सुवर्णके कवचसे विराजित सन्ध्याके लाल बादलोंसे संच्छन्न पर्वतकी समान ॥ २५ ॥ तीस सहस्र चित्रयोधाओंका समूह जो बली और कालकी समान था शम्बरके पीछे चला ॥ २६ ॥ शुक्लवर्णके सहस्र रथोंसे युक्त कौंच ध्वजयुक्त संग्रामशोभी रथसे व्याप्त ॥ २७ ॥ जिसमें अनेक वैदूर्य मणि और सुवर्णजाल शोभित हो रहे हैं अनेक प्रकारके

लोहिताक्षो महाबाहुः प्रतप्तोत्तमकुण्डलः ॥ जीमूतघनसंकाशो दिव्यस्त्रगनुलेपनः ॥ २३ ॥ विद्युज्ज्योतिर्निर्काशेन मुकुटेनार्कवर्चसा ॥ मणिरत्नाविचित्रेण वैदूर्यवरशोभिना ॥ २४ ॥ तपनीयेन महता कवचेन विराजता ॥ संध्याभ्रेणैव संच्छन्नः श्रीमानस्तशिखो-
च्चयः ॥ २५ ॥ त्रिशंखतसहस्राणि दैत्यानां चित्रयोधिनाम् बलिनां कालकल्पानामन्वयुः शम्बरं तदा ॥ २६ ॥ युक्तं दयसहस्रेण शुक्लवर्णेन राजता ॥ क्रौञ्चध्वजेन दीप्तिं रथेनाहवशोभिना ॥ २७ ॥ व्यासक्तवैदूर्यसुवर्णजालं नानाविहङ्गैरपि भक्तिचित्रम् ॥ विद्युत्प्रभं भीमरवं सुवेगं रथं समारुह्य रराज दैत्यः ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे शम्बरा-
दिदैत्यसन्नहनं नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अनुहादश्च तत्रैव दैत्यः परमदुर्जयः ॥ हिरण्यकशिपोः पुत्रः प्रययो युद्धलालसः ॥ १ ॥ चतुश्चक्रेण यानेन त्रिनल्वप्रतिमेन तु ॥ युक्तेनाश्वैर्महावीर्यैः सिंहकैरजिह्वगैः ॥ २ ॥ भीमगम्भी-
रनौदेन नेमिघोषेण वीर्यवान् ॥ चालयन्वसुधां सर्वां सशैलवनकाननाम् ॥ ३ ॥

विहंगोंकी रचना हो रही है बिजलीकी समान भीमवेगवान् रथमें वह दैत्यराज चढा ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामनप्रादुर्भावे शम्बरादिदैत्यसन्नहनं नाम पञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥ वैशम्पायन बोले; परम दुर्जय अनुहाद दैत्य हिरण्यकशिपुका पुत्र युद्ध करनेकी इच्छासे चला ॥ १ ॥ उसका रथ चार पहिपेका (१२०० हाथके) विस्तारमें था सिंहके मुखवाले अकुटिल चलनेवाले घोड़े उसमें जुते थे ॥ २ ॥ उसके पहिपोंका शब्द बड़ा गम्भीर होता था शैल वन कानन सहित सब पृथ्वीको चलायमान किये देता था ॥ ३ ॥

उस समय दैत्यसमूह नर्जना करते हुए अनुहादके पीछे चले सुवर्णके सैकड़ों सहस्र रथ उनके पीछे चले ॥ ४ ॥ परिच भिन्दिपाल जल पारो परसे अनेक आयुधधारी शूल मुद्गर हाथमें लिये ॥ ५ ॥ सुवर्णजालमें लगे हुए वज्रोसे अलंकृत चित्रकवच पहरे रथोंसे सज्जमान महाअसुर चले ॥ ६ ॥ उस समय बड़े विशाल पर्वतकी तुल्य चित्रित अंगवाले रथमें जो उसके अनुरूपही था वह दैत्यपति स्थित हुआ जिसकी समान और रूप नहीं था ॥ ७ ॥ बलवान् अग्निकी समान काम्निमान् विरोचन सर्व अक्षमें कुशल बड़े भारी रथमें स्थित ॥ ८ ॥ व्यूहोंके विनियोगका जाननेवाला ज्ञानविज्ञानके विनर्हमाना दैत्योषा अनुवादं ययुः शुभाः ॥ ज्ञतं ज्ञतसहस्राणां रथानां हेममालिनाम् ॥ ४ ॥ परिचैर्भिन्दिपालेश्च भलेः पाशैः परश्वधैः ॥ विविधायुधइस्तास्ते शूलमुद्गरपाणयः ॥ ५ ॥ सुवर्णजालनिर्मुक्तैर्वज्रैश्च समलंकृताः ॥ रथैश्चित्रैश्च कवचैः सज्जमाना महासुराः ॥ ६ ॥ तदा विशालेऽम्बितशैलरूपे बभौ रथे काञ्चनचित्रिताङ्गे ॥ दैत्याधिपः सत्त्वबलानुरूपे समास्थितस्त्वप्रतिमे मुरूपे ॥ ७ ॥ विरोचनश्च बलवान्नेश्वानरसमद्युतिः ॥ महता रथवंशेन सर्वास्त्रकुशलः शुचिः ॥ ८ ॥ व्यूहानां विनियोगज्ञो ज्ञानविज्ञानतत्त्ववित् ॥ बलेः पिता सुरवरः सुराणामिव वासवः ॥ ९ ॥ सर्वायुधसमोपेतं किङ्किणीजालभूषितम् ॥ युक्तानां त्रिजि- मुख्यानां सहस्रेणाशुगामिनाम् ॥ १० ॥ रथमारुह्य दैत्येन्द्रो बभौ मेरुरिवापरः ॥ किङ्किणीजालपर्यन्तं गजेन्द्रध्वजशोभितम् ॥ संस्थाभ्रसमवर्णाभिः पताकाभिरलंकृतम् ॥ ११ ॥ प्रवालजाम्बूनदभक्तिचित्रं व्यालं विकारान्तरनेमिघोषम् ॥ रथं समारुह्य किरी- टमाली ययौ स युद्धाय महासुरेन्द्रः ॥ १२ ॥ विरोचनानुजश्चैव कुजम्भो नाम दानवः ॥ स्यन्दनेर्बहुसाहस्रैर्मणिकाञ्चनभूषितैः ॥ १३ ॥ तत्त्वका ज्ञाता बलिका पिता असुरेभ्यो भ्रेष्ठ देवताभ्यो हन्त्रकी समान ॥ ९ ॥ सम्पूर्ण आयुधोंसे युक्त किङ्किणीजालसे भूषित सहस्र वेगगामी घोड़ोंसे युक्त ॥ १० ॥ रथमें चढ वह दैत्येन्द्र मेरुकी समान स्थित हुआ किङ्किणीजाल पर्यन्त महेन्द्र ध्वजसे शोभित सन्ध्याकालसे मेवकी समान पताकाओंसे शोभित ॥ ११ ॥ मुँगे और सुवर्णकी रचनासे व्याप्त सपके बंधने युक्त पहियोंके महाशब्दसे युक्त किरीटधारी दैत्येन्द्र रथपर स्थित हो युद्ध करनेको चला ॥ १२ ॥ विरोचनका अनुज कुजम्भ नाम दानव अनेक सहस्रों मणिकंचनसे भूषित रथसे ॥ १३ ॥

युक्त महाबली शत्रुनाशी प्राप्त प्रायः महाहाथमें लिये युद्धाकांक्षी दानवोंके सहित ॥ १४ ॥ पर्वतकी समान आकार काले अंजनकी छुटिकाकी समान कान्तिमान् विराजमान किरीटकी कान्तिसे व्याप्त ॥ १५ ॥ सर्व रत्न जड़े कवचसे युक्त बड़े भारी कान्तिमान् शरीरसे रथमें सूर्यचन्द्रमाकी समान शोभित ॥ १६ ॥ बड़े भारी सुवर्णके बने तालवृक्षसे शोभित रथमें मेरुमें स्थित सूर्यकी समान विराजित ॥ १७ ॥ रणपटु अतिवीर्यवान् सत्त्वबुद्धि समरमें शीघ्रतासे देवताओंके सम्मुख जानेवाले असुरमणोंसे आहुत कुजंत देवताओंसे व्याप्त इन्द्रकी समान शोभित हुआ ॥ १८ ॥ इसी प्रकार पर्वत

वृत्तो मदबलोत्सितैर्देवारिभिरारिदमः ॥ प्राप्तपाशगदाहस्तेर्दानवैर्युद्धकाक्षिभिः ॥ १४ ॥ स पर्वतानिभाकारो भिन्नाञ्जनचयप्रभः ॥ महता भ्राजमानेन किरीटेन सुवर्चसा ॥ १५ ॥ सर्वरत्नविशिष्टेण कवचेन च संवृतः ॥ महता दीप्तवपुषा रथेनेन्दुरिवाञ्जुमान् ॥ १६ ॥ शासकौम्भेन महता तालवृक्षेण केतुना ॥ रराज रथमध्यस्थो मेरुस्थ इव भास्करः ॥ १७ ॥ रणपटुरतिवीर्यसत्त्वबुद्धिः सुरसमराभिमुखः प्रयाति तूर्णम् ॥ असुरगणसमावृतः कुजम्भस्त्रिविधगणैरिव वृजदामरैन्द्रः ॥ १८ ॥ असिलोमा च तत्रैव दानवः पर्वतायुधः ॥ दारुणं वपुरास्थाय दारुणो दारुणाननः ॥ १९ ॥ रौद्रः शकटचक्राक्षो महाकायो महाबलः ॥ कृष्णवासा महादंष्ट्रः किरीटी लोहिताननः ॥ २० ॥ वृत्तो देत्यसहस्रोपैर्गिरिपादपयोधिभिः ॥ नानारूपधरेर्हस्तेर्देत्यैस्त्रिविधशत्रुभिः ॥ २१ ॥ ते शूलहस्ता गगने चरन्त इतस्तत्तस्तोयद्वन्द्व- तुल्याः ॥ स्रं छादयन्तस्तपनीयानिष्का यथोन्नताः प्रावृषि काल्मेषाः ॥ २२ ॥ अनायुषायाः पुत्रस्तु वृत्रो नाम महासुरः ॥ देवशत्रुर्महाकायस्ताम्रास्यो निर्नेतोदरः ॥ २३ ॥ दीप्तजिह्वो हरिश्मश्रुर्ऊर्ध्वरोमा महाहनुः ॥ नीलाङ्गो लोहितमुखः किरीटी लोहिताम्बरः ॥ २४ ॥ आयुधवाला असिलोमा देत्य दारुण मुक्त दारुण शरीर ॥ १९ ॥ रौद्र शकट चक्राक्ष महाकायावान् महाबली कृष्ण वस्त्र धारे महाहातसे युक्त किरीट- धारी लोहितानन ॥ २० ॥ सहस्रों देत्योंसे व्याप्त जो गिरि और वृत्तोंसे युक्त करते थे अनेक रूपधारी हत देवताओंके शत्रु देत्योंके साथ ॥ २१ ॥ जो शूल हाथमें लिये आकाशनामी इधर उधर मेघोंकी समान विचरनेवाले अपनी सुवर्णतुल्य कान्तिसे आकाशको आच्छादन करते वर्षाकालके मेघकी समान उन्नत ॥ २२ ॥ और अनायुषाका पुत्र वृत्र नाम दानव देशशत्रु महाकाय ताम्रास्य निर्नेतोदर ॥ २३ ॥ दीप्तजिह्व हरिश्मश्रु ऊर्ध्वरोमा महाहनु

नीलांग लोहितमुख किरीटी लोहितान्धर ॥ २४ ॥ आज्ञालुचाहु विक्रान्त श्वेतदंष्ट्र विभीषण महामाया धारण करनेवाला भीम सुवर्णकेयूर भूषणधारी ॥ २५ ॥
बड़े भारी मणिजटित कवचसे युक्त हेममालाधारी रौद्र चक्रकेतु अमर्षण ॥ २६ ॥ सैकड़ों किङ्कणीजालसे युक्त सुवर्णके भूषणसे विभूषित
ध्वजा पताकायुक्त सहस्र घोड़े जुते रथमें ॥ २७ ॥ बहुतसी रथोंकी सेना ले युद्ध करनेको गया वह दैत्योंका आनंद बढ़ानेवाला दिग्पररथमें स्थित हो
चला ॥ २८ ॥ तपाये सुवर्णबिंदुकी समान पिंगलनेत्रवान् रितिपुत्र दैत्योंकी सेनाका रक्षक खिले कमलकी समान सुन्दर नेत्रवान् श्वेतदन्तवाला रथके
आज्ञालुचाहुर्विकृतः श्वेतदंष्ट्रो विभीषणः ॥ महामायाधरो भीमो हेमकेयूरभूषणः ॥ २५ ॥ महता मणिचित्रेण कवचेन तु संवृतः ॥
हेममालाधरो रौद्रश्चक्रकेतुरमर्षणः ॥ २६ ॥ किङ्किणीशतसंघुष्टं तपनीयविभूषितम् ॥ युक्तं हयसदस्त्रेण रक्तध्वजपताकिनम् ॥ २७ ॥
रथानकिंन महता युद्धायाभिमुखो ययौ ॥ दिव्यं स्यन्वनमास्थाय दैत्यानां नन्दिवर्द्धनः ॥ २८ ॥ तपितकनकविन्दुपिङ्गलाक्षो
दितितनयोऽसुरसैन्ययुद्धनेता ॥ विकसितकमलाभचारुचक्षुः सितदशनः शुशुभे रथासनस्थः ॥ २९ ॥ एकचक्रस्तु तत्रैव सूर्यचक्र
इवोदितः ॥ कालचक्रसमो रौद्रश्चायुध इवोद्यतः ॥ सर्वायसमयं दिव्यं रथमास्थाय भासुरम् ॥ ३० ॥ वृत्तो दैत्यगणैर्हतेः कालायस-
शिलायुधैः ॥ तस्याशीतिसहस्राणि रथिनां चित्रयोधिनाम् ॥ ३१ ॥ सर्वे कालान्तकप्रख्या रुधिराक्षा महाबलाः ॥ आपसेः काञ्चनेश्वरैः
सन्नद्धा वरषर्णिनः ॥ ३२ ॥ व्यराजन्तान्तरिक्षस्था नीला इव पयोधराः ॥ सर्वे कालान्तकप्रख्या धीराः समरदुर्जयाः ॥ ३३ ॥ सागरो-
दरगम्भीरा नीलवक्त्रा दुरासदाः ॥ रेजुर्यान्तो सुरवरा वेलातीता इवार्णवाः ॥ ३४ ॥

ऊपर शोभित हुआ ॥ २९ ॥ एकचक्र दानव सूर्यचक्रकी समान उदय हुआ और कालचक्रकी समान महारौद्र चक्रायुधकी समान स्थित हुआ
जिसका कान्तिमान् लोहनिर्मित रथ था उसमें स्थित हुआ ॥ ३० ॥ काले लोह और शिलाके आयुध लिये दैत्य उसके साथ हुए उसके साथ विचि-
त्रपोषा अस्ती सहस्र रथी चले ॥ ३१ ॥ सबही कालकी समान रुधिराक्ष महाबली लोह और कांचनके वस्त्र पहरे भेष्ट ॥ ३२ ॥ नीले पयोधरकी
समान अन्तरिक्षमें विराजमान थे सम्पूर्ण कालान्तककी समान धीर और समरदुर्जय थे ॥ ३३ ॥ सागरके उदरकी समान गंभीर नील मुख दुरासद

वे असुर बेला त्याने हुए सागरकी समान शोभित हुए ॥ ३४ ॥ वे भीममायाके जाननेवाले बडे करीरवाले किरीटवाले सुपर्णसे भूषित शरीर अपने आयुव उठाये दीप्तिमान् हस्तवाले पंखयुक्त पर्वतकी समान आकाशमें शोभित हुए ॥ ३५ ॥ तब बलिपुत्रने वृत्रभाताको देवताओंकी सेना नाश करनेकी आज्ञा दी ॥ ३६ ॥ वह तैयार हुआ सुवर्णके तालवृक्षकी समान उच्छ्रित बडी ठाठोवाला मालावान् रुचिर कुंडलोंसे युक्त ॥ ३७ ॥ लालमाला पत्नोंको धारे प्रचंड समरमें दुर्जय महाबली वृत्तनेत्र किरीट धनुषधारी प्रतिज्ञ मातंग और शार्दूलकी समान पराक्रमी ॥ ३८ ॥ महातालकी समान चाप और रुचिर

ते भीममायाः सुसमृद्धकायाः किरीटिनः काञ्चनभूषिताङ्गाः ॥ ययुस्तदा वायुधदीप्तहस्ता नभः सपक्षा इव पर्वतेन्द्राः ॥ ३५ ॥ संदिष्टो बलिपुत्रेण वृत्रभाता महासुरः ॥ वधाय सुरसेन्यस्य संनह्यस्वेति वीर्यवान् ॥ ३६ ॥ हेमताली महादंष्ट्रः स्रग्वी रुचिरकुण्डलः ॥ रक्तमाल्याम्बरधरश्चण्डः समरदुर्जयः ॥ ३७ ॥ सुमहावृत्तनयनः स किरीटी धनुर्धरः ॥ प्रभिन्न इव मातङ्गः शार्दूलसमविक्रमः ॥ ३८ ॥ महातालनिभं चापं तथा रुचिरसायकम् ॥ विस्फारयन्महावेगं वज्रानिष्पेषनिःस्वनम् ॥ ३९ ॥ रथेन स्त्रययुक्तेन ध्वजेन भुजगेन ह ॥ शुशुभे स्यन्दनस्थः स संध्यागत इवांशुमान् ॥ ४० ॥ रथेस्तु बहुसाहस्रैर्हेमपट्टविभूषितैः ॥ कूटमुद्गरसंपूर्णैर्जलपूर्णैरिवाम्बुदैः ॥ स दैत्येन्द्रोऽभिचक्राम तस्मिन्पुद्ग उपस्थिते ॥ ४१ ॥ पवनसमगतिर्विशालवक्षा निकसितपङ्कजचारुगर्भगौरः ॥ प्रवररथगतो ययौ स तूर्णं त्रिदशगणैरभिलक्षितप्रभाषः ॥ ४२ ॥ सिंहिकातनयश्चैव राहुर्नाम महासुरः ॥ विकटः पर्वताकारः शतशीर्षा शतोदरः ॥ ४३ ॥

बाण धारे वज्रकी समान महावेगयुक्त धनुषको विस्फारण करते ॥ ३९ ॥ स्त्रययुक्त रथ और सर्पकी ध्वजासे युक्त रथमें स्थित हुआ संध्याकालीन सूर्यकी समान स्थित हुआ ॥ ४० ॥ हेमपट्टसे विभूषित अनेकों सहस्र रथ कूट मुद्गरसे सम्पूर्ण जलपूर्ण भेषकी समान वह दैत्येन्द्र उपस्थित हो उस युद्धकी ओर चला ॥ ४१ ॥ पवनकी समान गतिमान् चौडी छातीवाला सिले हुए कमलकी समान गौरवर्ण रथपर स्थित हो वह बहुत शीघ्रतासे चला और देवताभी उसके प्रभावसे चमत्कृत थे ॥ ४२ ॥ सिंहिकापुत्र राहु नामक महाअसुर विकट पर्वताकार सौ शिर और सौ उदरवाला ॥ ४३ ॥

पीतमाला और पीतवस्त्र धारण किये सुवर्णसे विभूषित स्निग्ध वैदूर्यमणि और कमलपत्रकी समान नेत्रवान् ॥ ४४ ॥ सम्पूर्ण काञ्चनसे युक्त मणिजालसे विभूषित सौ पताका और परमवाजियोसे युक्त ॥ ४५ ॥ रथमें वह महावीर्यवान् दैत्य स्थित हुआ और पृथ्वीतलको कंपित करता महानाद करन लगा ॥ ४६ ॥ मयने उसकी सुवर्णकी दिव्यकेतु निर्माण की थी और मोरपक्षकी समान दिव्य लोहका कवच निर्माण किया ॥ ४७ ॥ दूसरेभी भीम-वेगवाले दिव्य रथ और अनेक प्रकारके आयुधोंसे सेव्यमान महाबली ॥ ४८ ॥ असुरगणोंका स्वामी अतिरथ महाअसुरोंका शरणदाता शत्रुओंके

पीतमाल्याम्बरधरो जाम्बूनदविभूषितः ॥ स्निग्धवैदूर्यसंकाशः पद्मपत्रनिभेक्षणः ॥ ४४ ॥ सर्वकाञ्चनसंयुक्तं मणिजालपरिष्कृतम् ॥ पताकाशतसंकीर्णं युक्तं परमवाजिभिः ॥ ४५ ॥ आरुरोह रथं दिव्यं दैत्यः परमवीर्यवान् ॥ ननाद च महानादं कम्पयन्वसुधातलम् ॥ ४६ ॥ मयेन विहितो दिव्यस्तस्य केतुर्हिरण्यः ॥ मयूरपक्षसंकाशं कवचं चायसं महत् ॥ ४७ ॥ भीमवेगरवैश्वान्ये रथेर्दिव्येः सुरासुरैः ॥ नानाप्रहरणाकीर्णैः सेव्यमानो महाबलः ॥ ४८ ॥ असुरगणपतिर्गजैन्द्रगामी अतिरभसगतिर्महासुराणाम् ॥ अरिगणमभितो विभुः प्रयातो गिरिवरमस्तमिवांशुमान्स्तुषीतः ॥ ४९ ॥ विप्रचित्तिस्तु तत्रैव दनोर्वैश्विर्वर्धनः कश्यपस्यात्मजः श्रीमान् ब्रह्मणस्तेजसा समः ॥ ५० ॥ यथा क्रतुसहस्राणां वेदवित्तपसान्वितः ॥ स्वयंभुवा दत्तवरो वरदश्च स्वयंभुवः ॥ ईशित्वं च महत्त्वं च वशित्वं च महाद्युतेः ॥ ५१ ॥ ऐश्वर्यगुणसंपन्नो ब्रह्मेव स्वयमुज्जितः ॥ सार्धं पुत्रैश्च पौत्रैश्च संनद्यत महाबलः ॥ ५२ ॥ सर्वे मायाधराः शूराः कृतास्त्रा रणवुर्जयाः ॥ सर्वे कमलवर्णाभा हेमकूटोच्छ्रयोच्छ्रयाः ॥ ५३ ॥

सामनेको चला जिस प्रकार सूर्य अस्ताचलको प्राप्त होते हैं ॥ ४९ ॥ इस प्रकार दनुवंशका बढानेवाला विप्रचित्ति दानव कश्यपका पुत्र तेजमें ब्रह्माकी समान ॥ ५० ॥ सहस्रों यज्ञोंका कर्ता वेदवित् तपसे युक्त ब्रह्मासे वरदान पाये स्वयं वरका देनेवाला ईशपना महत्तना और वशपना यह उस महाकान्तिमानमें था ॥ ५१ ॥ ऐश्वर्यके गुणसे सम्पन्न स्वयं ब्रह्माजीकी समान पुत्रों तथा पौत्रोंके साथ वह महाबली तैयार हुआ ॥ ५२ ॥ सब मायाधारी शूर कृतास्त्र रणवुर्जय कमलकी समान वर्णवाले सबही हेमकूटके शिखरकी समान ऊंचे ॥ ५३ ॥

सब रजतकी समान वर्णवाले कैलासशिलरकी समान उनके रथ मयने स्वयं मायासे बनाये थे ॥ ५४ ॥ वह विचरते हुए शरदके मेघकी समान शोभित हुए सब श्वेत हंसकी घञ्जावाले श्वेतदण्डसे युक्त ॥ ५५ ॥ श्वेत वस्त्र धारण करनेवाले दैत्य श्वेतमालाओंसे विभूषित सब श्वेतछत्र धारे और श्वेत कुंडल पहरे हुए थे ॥ ५६ ॥ मोतियोंके हार पहरे स्वर्गपतिकी समान शोभित होते थे महाप्रहोंकी समान शत्रुओंके लोम लगे करनेवाले ॥ ५७ ॥ लालवर्णके चित्रवस्त्र पहरे विविध आभरणोंसे विभूषित वह वीर्यवान् त्रैलोक्यविजय नामवाले रथमें स्थित होकर ॥ ५८ ॥ जो

सर्वे रजतसंकाशाः कैलासशिलरोपमाः ॥ मयेन निर्मितास्तेषां सर्वे मायामया रथाः ॥ ५४ ॥ विचरन्तो व्यराजन्त शारदा इव तोषदाः ॥ सर्वे हंसज्वाः श्वेताः श्वेतदण्डसमुच्छ्रयाः ॥ ५५ ॥ श्वेताम्बरधरा दैत्याः श्वेतमाल्यविभूषिताः ॥ श्वेतातपत्रा सर्वे ते श्वेतकुण्डलमण्डिताः ॥ ५६ ॥ मुक्ताहारवृत्तोरस्का भान्ति नाकेश्वरा इव ॥ महाप्रहनिभाकाराः शत्रूणां लोमद्वर्षणाः ॥ ५७ ॥ रक्तचित्राम्बरधराश्चित्राभरणभूषिताः ॥ त्रैलोक्यविजयं नाम रथमास्थाय वीर्यवान् ॥ ५८ ॥ कैलासशिलराकारमष्टनस्वाषट्पतान्तरम् ॥ मुक्तं वाजिसदृशेण सितेन शिववर्चसा ॥ पताकाशतसंच्छन्नं नानायुधविकल्पितम् ॥ ५९ ॥ हिमांशुकुन्दप्रतिमं विशालं सितातपत्रं वृत्तमेव रस्य ॥ विभाति तस्योपरि धार्यमाणं श्वेताद्रिसूक्ष्मोपगतः शशाङ्कः ॥ ६० ॥ केशी दानवमुख्यस्तु जिह्मस्ताम्राक्षदर्शनः ॥ नीलमेघव्यप्रलयः कालः पुरुषविग्रहः ॥ ६१ ॥ महाप्रहनिभाकारः शत्रूणां लोमद्वर्षणः ॥ चित्रमाल्याम्बरधरो रक्ताभरणभूषितः ॥ ६२ ॥ श्मशानः शतबाहुश्च हरिश्चमश्रुर्मेघावलः ॥ शंकुकर्णो महानादो वपुषा घोरदर्शनः ॥ ६३ ॥

कैलासके शिलरकी समान आठ नल्ल (३२०० हाथकी) श्वेतकान्तिमान् सहस्र चोड़ोंसे संयुक्त सैकड़ों पताका और अनेक आयुधोंसे संयुक्त थे ॥ ५९ ॥ चन्द्रमा और कुंदके फूलकी समान विशाल छत्र दनुजपतिके ऊपर धारण किया गया उसकी ऐसी शोभा होती थी जैसे हिमालयके ऊपर चन्द्रमा ॥ ६० ॥ मुख्य केशी दानव जिह्म ताम्राक्ष दर्शन नीलमेघकी समान कालही मानो पुरुषशरीर धारण किये है ॥ ६१ ॥ महाप्रहके समान आकार और शत्रुओंको मथदाता चित्र माला और वस्त्र पहरे लाल आभरणसे विभूषित ॥ ६२ ॥ शताक्ष शतबाहु महाबली हरिश्चम शंकुवर्ण महानाद शरीरसे घोरदर्शन ॥ ६३ ॥

दिव्यमहिषोंकं गलेमें बंधे अनेक घंटाख शब्दसे विराजित महावारिधरके आकारवाले रथमें स्थित हो ॥ ६४ ॥ नील केशरकी कान्तिवाले उष्ट्रद्वजसे शोभित अनेक प्रकारकी पताकाओंसे विराजित ॥ ६५ ॥ सौ सहस्र महाकान्तिमान् रथोंके समूह उस अश्वेन्द्रके पीछे हुए जिनकी महाकान्ति थी ॥ ६६ ॥ वे काले अंजन पर्वतकी समान उसके पीछे जाते हुए शोभित होते थे दंष्ट्रासे अर्धचन्द्रके समान प्रकाशित उनके मुख बगले सहित मेघकी समान लक्षित होते थे ॥ ६७ ॥ वैदूर्यमणि और सुवर्णसे जडित बिजुलीकी समान सूर्यकी किरणोंकी तुल्य पर्वतार स्थित अधिकी समान उसका मुकुट युक्तं महिषकेर्दिव्यैर्घण्टाकोटिकृतस्वनम् ॥ महावारिधराकारमास्थाय रथमुत्तमम् ॥ ६४ ॥ ध्वजेनोद्रेण महता नीलकेसरवर्चसा ॥ नानारागविचित्राभिः पताकाभिर्विभूषितम् ॥ ६५ ॥ द्विपञ्चाशत्सहस्राणि रथानामुग्रवर्चसाम् ॥ ययुस्तस्यासुरेन्द्रस्य प्रयातस्य सुराप्रति ॥ ६६ ॥ भान्ति भिन्नाञ्जननिभाः प्रयातस्य महात्मनः ॥ दंष्ट्राद्धचन्द्रवदना सबलाका इवाम्बुदाः ॥ ६७ ॥ तत्तस्य वैदूर्य-सुवर्णचित्रं विद्युत्प्रभं भास्करराश्मिमुल्यम् ॥ किरिटमाभात्यसुरोत्तमस्य दावाभिदीप्तं शिखरं यथादेः ॥ ६८ ॥ वृषपर्वासुरश्चैव श्रीमांश्च सुरसूदनः ॥ आरुरोह रथं दिव्यं मेरुशृङ्गमिवांशुमान् ॥ ६९ ॥ प्रवालजाम्बूनदचित्रकूबरं महारथं भारसहं महार्हम् ॥ स्वलंकृतं राजतहमकुण्डलं गभास्तिनक्षत्रताडिन्निकाशम् ॥ ७० ॥ केयूरयुक्ताङ्गद्वन्द्वबाहुः सहस्रतारेण च चर्मणा तः ॥ सांग्रामि-केराभरणेश्च चित्रैर्मध्याह्नसूर्यप्रतिमो बभूव ॥ ७१ ॥ महाबलो बद्धतलाङ्गुलित्रो बलोत्कटः किंशुकलोहिताक्षः ॥ प्रणय चामीकरचारु-चित्रं चापं स्थितो वृत्तविशालनेत्रः ॥ ७२ ॥

शोभित होता था ॥ ६८ ॥ सुरसूदन श्रीमान् वृषपर्वा असुर मेरुशृंगपर सूर्यकी समान स्थित हुआ ॥ ६९ ॥ जिस रथका मुँगे और सुवर्णजडित कूबर था वह महाभारका सहन करनेवाला था चांदी और सुवर्णके कुंडलोंसे अलंकृत किया गया सूर्य नक्षत्र और बिजुलीकी समान ॥ ७० ॥ केयूर अंगद बाजूबंदोंसे शोभित भुजा सहस्र तार और चर्मसे बंधा संग्रामके विचित्र आभरणोंसे शोभित दुपहरके सूर्यकी समान लक्षित हुआ ॥ ७१ ॥ यहां बली अंगुलीत्राण बांधे बलसे उद्धत टेमूके फूलकी समान लालनेत्र सुवर्णका बड़ा धनुष ग्रहण किये विशाल नेत्रवाला वृत्र असुर स्थित हुआ ॥ ७२ ॥

महाअसुरेन्द्र और महाअसुरोंसे युक्त बलि रथके ऊपर स्थित हुआ वह उसका रथ वेदूर्य मणि और सुवर्णसे जटित सोलह नत्वका था ॥ ७३ ॥
 उसमें घुरे आकारवाले हाथीके मुखवाले सहस्र दानव लगे थे जिनके हृदयमें सुवर्णके भूषण थे और चौमासेके मेघोंकी समान शब्द करते थे ॥ ७४ ॥
 वंदे महारथ देवरथकी समान सहस्र मायावाले मयने बनाया था इंद्रासुरोंके क्रीडाकी रचनासे युक्त दिग्घरथ कि जिसके पीछे दिग्घरथ चलते थे ॥ ७५ ॥
 बड़ी विशाल विस्तारवाली किंकिणी सुवर्णके सैकड़ों कमलोंसे युक्त बलि सुवर्णकी चित्रितपुष्पोंकी माला पहरे देवताओंसे युद्ध करनेको चला ॥ ७६ ॥

महासुरेन्द्रश्च महासुरैर्वृतो बलिस्तदा स्यन्दनमारुरोह ॥ वेदूर्यदेमोपचितं विशालं विद्युत्प्रभं षोडशनत्वमात्रम् ॥ ७३ ॥ युक्तं सहस्रेण
 दितेः सुतानां गजाननानां विकृताकृतीनाम् ॥ चामीकरोरःस्थलभूषितानां प्रनर्दतां प्रावृषि चाम्बुशानाम् ॥ ७४ ॥ महारथं देव-
 रथप्रकाशं सहस्रमायेन मयेन सृष्टम् ॥ इंद्रासुराक्रीडितभक्तिचित्रं दिव्यं रथं दिग्घरथातुयात्तम् ॥ ७५ ॥ सकिङ्किणीकं विमलं
 सुविस्तृतं हिरण्मयेः पद्मशतैरलंकृतम् ॥ अभ्याददे वैजयिणीं जयाय स्रजं बलिर्देमविचित्रपुष्पाम् ॥ ७६ ॥ अवध्यमालां प्रभया
 विचित्रां बलिस्तदा भाति भुजैर्विशालैः ॥ रराज तैः सर्वसमृद्धियुक्तेर्महाविंषा सूर्य इवाम्बरस्थः ॥ ७७ ॥ स्रजं तदावध्यति चास्य
 दुर्गा सर्वासुराणामिव हारभूताम् ॥ वेरोचनिः सर्वश्रियाभिजुष्टो विभ्राजतेऽसौ शरदीव चन्द्रः ॥ ७८ ॥ मेरोस्तटेर्वा ज्वलनप्रकाशे-
 रादित्यसंयुक्तमिवाभ्रजालम् ॥ प्रासाश्च पाशाश्च हिरण्यबद्धा वर्माणि खड्गाश्च परश्वपाश्च ॥ ७९ ॥ धनुंषि वज्रायुधसप्तभागि दिव्या
 गदा वज्रमुखाश्च शक्तयः ॥ दिव्याश्च खड्गा विशिस्ताश्च दीप्ता नाराचपूर्णा विविधाश्च तूणाः ॥ ८० ॥

पन्नासे विचित्र अवध्य माला पहरे समृद्धिमान् विशाल भुजाओंसे बलि ऐसे शोभित हुआ जैसे आकाशमें सूर्य अपनी किरणोंसे शोभित होता है ॥ ७७ ॥
 सम्पूर्ण असुरोंकी हारभूत मालाको बांधे बलि सम्पूर्ण लक्ष्मीसे युक्त शरत्कालीन चन्द्रमाकी समान विराजमान हुआ ॥ ७८ ॥ जैसे मेरुके तटमें
 अपनी किरणोंसे सूर्य प्रकाशित होता है प्रास पाश मुद्गर्णदं बांधे वम खड्ग तथा परशु लिये ॥ ७९ ॥ धनु वज्र आयुध दिव्य गदा वज्रमुख शक्ति

दिव्य खड्ग विशिख दीप्त नाराच और पूर्ण विधानके तरकस ॥ ८० ॥ उस दैत्यके रथमें शस्त्र उत्कापातकी समान प्रकाशित होते थे वे चामर और पीठसे युक्त सुवर्ण मोती हेममणियोंसे प्रकाशित होते थे ॥ ८१ ॥ रथकी वेदिकाओंमें बैठे महाअमुर नम्र हुए व्यजन करते थे अयःशिर अश्वशिर बड़े दुस्रह शिविर मंतंग विशिर शताक्ष ॥ ८२ ॥ अय निकुम्भ और क्रथन दानव यह दश उस दानव अधिपतिकी रक्षा करते थे और आगे सैकड़ों घोषा पैदल उस दानवराजकी रक्षा करते थे ॥ ८३ ॥ शतघ्नी चक्र अशनि शक्ति हाथमें लिये वह पवनकी तुल्य वेगनामी चले उसमें उस समय बंटे

धृता रथे दैत्यवृषस्य तस्य चकाशिरे प्रज्वलिता यथोल्काः ॥ ते चामरापीडधराः सुवृष्टाः सुवर्णमुक्ता मणिहेमचित्राः ॥ ८१ ॥
वीज्यन्ति बालव्यजनैर्विनीता महासुराः स्पन्दनवेदिकास्थाः ॥ अयःशिराः अश्वशिरा दुरापः शिविर्मतङ्को विशिराः शताक्षः ॥ ८२ ॥
अयो निकुम्भः क्रथनश्च दानवो रराक्षिरे ते दश दानवाधिपम् ॥ पुराश्चराश्चैव सङ्घशोऽसुराः पदातयो दानवराजराक्षिणः ॥ ८३ ॥
शतभिचक्राशनिशक्तिपाणयः प्रजम्गुरग्रेऽनिलतुल्यवेगिनः ॥ घण्टाः सुशब्दास्तपनीयबद्धा आढम्बरागर्गरडिण्डिमाश्च ॥ ८४ ॥
महारवा दुन्दुभयश्च नेदू रथप्रयाणे दितिजेश्वरस्य ॥ तस्योत्थितः काञ्चनवेदिकाद्यो हिरण्मयो दिव्यमहापताकः ॥ ८५ ॥ महा-
ध्वजो वै तपनीयनद्धो रराज वरिस्य यथा विवस्वान् ॥ समुच्छ्रितं काञ्चनमात्रपत्रं स्रक्काञ्चनी वक्षसि चास्य भाति ॥ ८६ ॥ समन्त-
तश्चाप्यसुराश्चरन्ति दैत्यर्षयः प्राञ्जलयो जयन्ति ॥ पुरोहिताः शत्रुवधे समाहितास्तथैव चान्ये श्रुतशीलवृद्धाः ॥ ८७ ॥ जपेश्व
मन्त्रेश्च तयोषधीभिर्महात्मनः स्वस्त्ययनं प्रचक्रुः ॥ स तत्र वस्त्राणि शुभाश्च गावः फलानि पुष्पाणि तथैव निष्कान् ॥ ८८ ॥

और डिमडिमका शब्द बराबर होता था ॥ ८४ ॥ महाशब्दशाली दुन्दुभी बजने लगी जिस समय उस दैत्याधितिका रथ चला, उसकी कांचन बेदीसे बड़ी दिव्य रथकी पताका स्थित थी ॥ ८५ ॥ वह महाध्वजा सुवर्णसे मढी सूर्यकी समान विराजमान थी सूर्यका छत्र हो रहा था और सुवर्णकी माला इसकी छातीपर शोभित थी ॥ ८६ ॥ चारों ओर उसके अमुर चले और दैत्योंके जयशब्द ऋषि करने लगे पुरोहित शत्रुवधका अनुष्ठान करने लगे इसी प्रकार और शास्त्राढी महात्मा स्थित थे ॥ ८७ ॥ जब मंत्र और औषधीसे इन महात्माकी स्वस्ति॥ वन करने लगे वह वस्त्र गौ सुन्दर फल

फूल और अशरफी ॥८८॥ बांसगोंके निमित्त प्रदान करने लगा और कुबेरकी समान शोभित होने लगा सहस्र सूर्य समान प्रकाशित बहुत किंकिणीसे युक्त उत्कृष्ट मुवर्णसे चित्रित ॥८९॥ सहस्र चन्द्रमा और अनन्त तारकाओंकी समान तथा अग्निकी समान रथमें वह वीर दानव धनुष बाण ग्रहण कर शोभित हुआ ॥९०॥ देवताओंकी सेनाको डराता हुआ बड़े भयंकर रूपको धारण करना हुआ वह वेगवान् वीर रथसमूहसे युक्त दैत्यसागर देवताओंके प्रति चला ॥९१॥ जिस प्रकार महासागरमें तरंगें उठती हैं तैसे वे भयंकर शरीरसे त्रिलोकके विनाश करनेवाले वे दैत्य बालिके रथके आगे चले वे महा-

बलिर्द्विजेभ्यः प्रयतः प्रयच्छन्विराजतेऽतीव यथा धनेशः ॥ सहस्रसूर्यो बहुकिङ्किणीकः पराद्धर्जान्ब्रूनदहेमचित्रः ॥ ८९ ॥ सहस्र-
चन्द्रायुनारकश्च रथो बल्लरग्निरिवावभाति ॥ तमास्थितो दानवसंगृहीतं महाबलः कार्मुकधृक्सबाणः ॥ ९० ॥ चद्रर्तपिष्यन्
त्रिदशेन्द्रसेनामतीव रोद्रं स विभर्ति रूपम् ॥ स वेगवान्वीररथोवसंकुलः प्रपाति देशं प्रति दैत्यसागरः ॥ ९१ ॥ महार्णवो वीचि-
तरङ्गतंकुलो यथा जलोपैर्युगसंक्षये तथा ॥ त्रैलोक्यविनाशकरैर्वपुर्भिस्तान्यग्रतो यान्ति बले रथस्य ॥ महाबलान्युच्छिन्नकार्मुकाणि
सपर्वतानोव वनानि राजन् ॥ ९२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि बलेरुद्योगो नामैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥
वैशम्पायन उवाच ॥ श्रुतस्ते दैत्यसैन्यस्य विस्तरो जनमेजय ॥ भूयस्त्रिदशसैन्यस्य शृणु विस्तरमादितः ॥ १ ॥ सुराधिपस्तु
भगवानाज्ञापयत वै सुरान् ॥ मरुद्गणास्तथादित्यान्विश्वान्देवांश्च वासवः ॥ २ ॥ वसुनष्टो भृशं सर्वान्यक्षरक्षोमहोरगान् ॥ विद्याधर-
गणान्तसर्वान् गन्धर्वांश्च महाबलान् ॥ ३ ॥ महार्णवांश्च शैलांश्च तथा रुद्रान्महोजसः ॥ यमवैश्रवणो चोभो वरुणं च जनाधिपम् ॥ ४ ॥

बली धनुष हुप पर्वत और वनकी समान शोभित हुए ॥ ९२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां बलेरुद्योगो नामैकपञ्चा-
शत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥ वैशम्पायन बोले, हे जन्मेजय ! दैत्योंकी सेनाका विस्तार सुनाया अब देवताओंकी सेनाका विस्तार सुनो ॥ १ ॥ भगवान् इन्द्रने
देवताओंको आज्ञा दी मरुद्गण आदित्य विश्वेदेवा ॥ २ ॥ आठ वसु यक्ष रक्ष महोरग विद्याधर महाबली गन्धर्व ॥ ३ ॥ महार्णव शैल रुद्र यम वरुण ॥ ४ ॥

सिद्ध महात्मा पितर मनस्वी सैकड़ों योगसिद्ध राजर्षि ॥ ५ ॥ सबको वीर्यवान् इन्द्रने आज्ञा दी कि आप दैत्योंके नाश करनेको तैयार हो ॥ ६ ॥ शक्रके वचन सुन सब देवता इन्द्रकी समान पराक्रमी सब तैयार हो गये ॥ ७ ॥ सब अनेककवच और विचित्र ध्वजा धारण किये अनेक आयुध लिये मव हाथीकी समान ॥ ८ ॥ कोई व्याघ्र कोई हाथी कोई नाग और कोई वृषोपर चढ़े ॥ ९ ॥ हरितनेत्र हरितरश्मि ऐरावतसे आवृत ध्वजा हरित वर्णके घोड़ोंवाले रथमें चढ़ इन्द्र युद्धको गया ॥ १० ॥ सूर्यकी समान वर्ण मलीनतारहित स्वच्छ त्वष्टाके बनाये हुए रथमें कि जिसमें अनेक सुवर्णके

ये तु सिद्धा महात्मानः पितरश्च मनस्विनः ॥ राजर्षयश्च शतशो योगसिद्धास्तथैव च ॥ ५ ॥ त्रिदशाज्ञापकः शक्र आज्ञापयति वीर्यवान् ॥ भवन्तो देत्यनाशाय सन्नहन्तामिति प्रभुः ॥ ६ ॥ शक्रस्य वचनं श्रुत्वा ततः सर्वे दिवौकसः ॥ सन्नहन्ते महात्मानः शक्रस्य सम-
विक्रमाः ॥ ७ ॥ नानाकवचिनः सर्वे विचित्रकवचध्वजाः ॥ नानायुधोद्यतत्करा मत्ता इव महागजाः ॥ ८ ॥ केचिदारुरुहुर्गजान्
केचिदारुरुहुर्गजान् ॥ केचिदारुरुहुर्गजान् केचिदारुरुहुर्वृषान् ॥ ९ ॥ हरिनेत्रो हरिश्मश्रुर्द्विरेरावृतध्वजम् ॥ रथं हरिहयैर्युक्तं स प्राया-
त्समरं प्रति ॥ १० ॥ आदित्यवर्णं विरजं सुधौतं त्वष्ट्रा स्वयं निर्मितमीश्वरार्थम् ॥ जालेश्च जाम्बूनदभक्तिचित्रैरलंकृतं काञ्चनशाम-
भम्भम् ॥ ११ ॥ सकृबरोपस्करबन्धुरेषं विद्युत्प्रभाभिः कृतमाभिताम्रम् ॥ केअसशृंगोपमभिर्द्रयानं सुचारुचारुप्रतिचक्रचक्रम् ॥ १२ ॥
तारिसहस्रेः सचितं ज्वलद्भिर्देवार्हमाल्यार्चितसर्वदेहम् ॥ समुच्छ्रितं श्रीध्वजमक्षयाक्षं प्रज्वाल्यमानं पुरुषोत्तमेन ॥ १३ ॥ आस्थाय
तं भास्करमाशुवेमं शचीपतिलोकपतिः सुरेशः ॥ वज्रस्य धर्ता भुवनस्य गोप्ता ययो महात्मा भगवान्महेन्द्रः ॥ १४ ॥

झरोले और सुवर्णकी माला शोभित थी ॥ ११ ॥ कूबर उपस्करसे बिजुलीकी प्रभाकी समान शोभित थी सुन्दर पहियोंसे युक्त इन्द्रका रथ कैलासके समान प्रकाशित होता था ॥ १२ ॥ सहस्र ताराओंकी समान प्रकाशित मालाओंसे आर्चित सम्पूर्ण देह समुच्छ्रित श्री अक्षय ध्वज और पुरुषोत्तमसे प्रकाशमान ॥ १३ ॥ सूर्यकी समान वेगवान् रथमें स्थित हो शचीपति लोकपति सुरेश वज्रका धारण करनेवाला भुवनका गोप्ता महेन्द्र चला ॥ १४ ॥

अश्विनी समान प्रकाशवाले सहस्र ताराओंसे युक्त वर्मको पहरेकर सूर्यकी समान कान्तिमान् किरीट और जांझुनदयुक्त वैजयन्ती माला पहरे ॥ १५ ॥
 त्वाष्ट्रके किये सूर्यकी किरणकी समान तीक्ष्ण घोर धारवाले असुरोंके रुधिरसे लिप्त सौ पर्ववाले वज्रको ग्रहण कर ॥ १६ ॥ महाप्रह्वकी समान दो
 महा अशनि और अमोघ उग्रशक्ति और महाचक्र ग्रहण कर इन्द्र युद्ध करनेको चले ॥ १७ ॥ सहस्रदृक् भूतपति सनातन सनातनकेनी सनातन और
 स्वज्ञ तथा व्याघ्रचर्म लेकर ॥ १८ ॥ तथा जो भूषण क्षीरसागरके मथनेसे उत्पन्न हुए थे जो देवताओंने असुरोंसे जीते थे चन्द्र सूर्य नक्षत्र विजु-

आमुच्य वर्माथ सहस्रतारं हुताशनादित्यसमप्रभावम् ॥ सूर्यप्रभं चासुमुचे किरीटं मालां च जाम्बूनदवैजयन्तीम् ॥ १५ ॥ त्वष्ट्रा कृतं
 भास्कररश्मिदीप्तं सुतीक्ष्णघोरामलतीव्रधारम् ॥ महासुराणां रुधिरार्द्रमुग्रं प्रगृह्य वज्रं शतपर्व भीमम् ॥ १६ ॥ महाशनी द्वे च
 महाग्रहाभे दीप्ताममोघां च स शक्तिमुग्राम् ॥ चक्रं तथेन्द्रं सुमहत्प्रतापं प्रगृह्य शक्रः प्रययौ रणाय ॥ १७ ॥ सहस्रदृग्भूतपतिः
 सनातनः सनातनानामपि यः सनातनः ॥ स्वज्ञं च देवाधिपतिर्महात्मा वैयाघ्रमादाय च चर्म चित्रम् ॥ १८ ॥ क्षीरोदधिभोमसमु-
 च्छित्तानि पुरामृतादुत्तमभूषणानि ॥ देवासुराणां समनिर्जितानि सोमार्कनक्षत्रतडित्प्रभाणि ॥ १९ ॥ तत्तान्यदित्या मणिकुण्डलानि
 युद्धं प्रयातस्य सुरेश्वरस्य ॥ तैर्भूषितो भाति सहस्रचक्षुरुद्योतयद्दे विदिशो दिशश्च ॥ २० ॥ हरिः प्रभुर्नेत्रसहस्रचित्रो विभाति युद्धा-
 भिमुखः सुरेन्द्रः ॥ यथा सितं शारदमभ्रकल्पं नभस्तलं ऋक्षसहस्रचित्रम् ॥ २१ ॥ स्तुवन्ति यान्तं विपुलेर्वचोभिर्जयाशिषा चोजि-
 तसत्त्ववीर्यम् ॥ अत्रिर्वसिष्ठो जमदग्निरुर्वो बृहस्पतिर्नारदपर्वतो च ॥ २२ ॥

लीकी समान कान्तिवाले ॥ १९ ॥ तथा युद्धमें जाते हुए अदितिके कुंडलोंसे युक्त इन्द्र इस प्रकार शोभित हुआ कि मानो दशों दिशाओंको प्रकाशित
 कर रहा है ॥ २० ॥ हरि प्रभु इन्द्र सहस्रनेत्रवान् युद्धके सन्मुख जाता महाशोभित हुआ जिस श्वेत शरवके मेघोंके बीचमें चित्रवर्ण आकाश तारोंसे
 शोभित होता है ॥ २१ ॥ इन्द्रके चलनेपर अत्रि वसिष्ठ जमदग्नि उर्व बृहस्पति नारद और पर्वत अनेक प्रकारके आशीर्वादोंसे और भेठ वचनोंसे इन्द्रकी
 स्तुति करने लगे ॥ २२ ॥

उनके पीछे देवगण महेन्द्र सूर्यकी समान कान्तिमान् चले विश्वेदेवा मरुत साध्य आदित्यगण यह सब चले ॥ २३ ॥ और देवराज पुरन्दरके मातलिसे संगृहीत किये अश्व देवेश्वरको वहन कर आकाशमें पदविश्र करत चले ॥ २४ ॥ ब्रह्मर्षि महर्षि राजर्षि क्षीणपुण्यवाले लोक यह सब सहसा इन्द्रके पीछे तेजसे प्रकाशित होते चले ॥ २५ ॥ शूल परशु और विचित्र अश्वनि ग्रहण कर सूर्यकी कान्तिकी समान सुवर्णके कवच पहरे चले ॥ २६ ॥ इसी प्रकार कुबेरजी सर्व भेठ सहस्र घोड़े जुते रथमें स्थित हो दीप्तिमान् गदा हाथमें ग्रहण कर युद्ध करनेको चले ॥ २७ ॥ अग्निकी समान भूप्रवर्णवाले

तमन्वयुर्देवगणा महेन्द्रं प्रयान्तमादित्यसमानवर्चसम् ॥ विश्वे च देवा मरुतस्तथैव साध्यास्तथादित्यगणाश्च सर्वे ॥ २३ ॥ ते देव-
राजस्य पुरंदरस्य इयाश्च ये मातलिसंगृहीताः प्रयान्ति देवेश्वरमुद्रहन्तो नभस्तलं पद्भिरिवाक्षिपन्तः ॥ २४ ॥ ब्रह्मर्षयश्चैव महर्ष-
यश्च राजर्षयश्चाक्षयपुण्यलोकाः ॥ सर्वेऽनुजग्मुः सहसा ज्वलन्तं तेजोऽन्वितं शक्रमभिप्रसादम् ॥ २५ ॥ प्रगृह्य शूलाश्च परश्वर्षाश्च
दीप्तानि चापान्यशनीर्विचित्राः ॥ वमाणि चामुच्य हिरण्मयानि प्रयान्ति सूर्याशुसमप्रभाणि ॥ २६ ॥ तथा कुबेरोऽश्वसहस्रयुक्तं
श्रेष्ठं रथं सर्वसहं महार्दम् ॥ दिव्यं समारुह्य रणाय यातो घनेश्वरो दीप्तगदाग्रहस्तः ॥ २७ ॥ निशाचराः पावकधूमकाया रक्षोवृषा
रुद्रसस्यस्य तस्य ॥ विशालनानायुधदीप्तहस्ता यान्त्यग्रतो वैश्रवणस्य राज्ञः ॥ २८ ॥ ते लोहिताक्षाः परिवार्य देवं व्रजन्ति भिन्ना-
अनघूर्णवर्णाः ॥ यक्षोत्तमा यक्षपतिं घनेशं रक्षन्ति वै पाशगदासिहस्ताः ॥ २९ ॥ पुण्यः प्रभुः प्राणपतिर्जितात्मा वैवस्वतो धर्म-
मृतां वरिष्ठः ॥ तडिद्गणाभं शतवाजियुक्तं रथं समारोहत सूर्यकल्पम् ॥ ३० ॥ तं लोकपालं पितरोऽनुजग्मुर्विविक्तपापा ज्वलितास्त-
पोभिः ॥ सर्वे च भूता भुवनप्रधाना नानायुधव्यग्रकराः सुभीमाः ॥ ३१ ॥

राक्षसवृष रुद्रके सत्ता विशाल अनेक प्रकारके आयुध हाथमें लिये कुबेरके आगे २ चले ॥ २८ ॥ वे लालनेत्र किये देवको घेरकर भिन्न अंजनकी समान
वर्णवाले चले यक्षोंमें उत्तम यक्षपति घनेशको गदा पाश खड्ग हाथमें लिये चले ॥ २९ ॥ पुण्य प्रभु प्राणपति जितात्मा वैवस्वत धर्मधारियोंमें भेठ
बेजलीकी समान प्रकाशित सौ घोड़ोंसे युक्त सूर्यकी समान प्रकाशित रथमें चढा ॥ ३० ॥ उनके पीछे पावरहित तपसे प्रकाशमान पितर गये यह

सब भुवनप्रधान मानात्तयंकर आयुष हाथमें लिये थे ॥ ३१ ॥ यह देव महाभक्त दण्डको हाथमें लिये जो साक्षात् लोकके निग्रहका अंकुश था और गलेमें सुवर्णके बने हुए कमलोंकी माला पढी हुई थी ॥ ३२ ॥ अस्थि मेद आमिषसे लित शरीर सब असुरोंको मारनेमें विरूप तेजोमय उग्ररूप मुद्गर हाथमें लिये उसे सँचते भूषनेत्र ॥ ३३ ॥ तैकबों व्याधिपोंसे युक्त हरितश्मश्रु उदारसत्त्व व्याधिपति काल महाअसुरोंके मारनेकी इच्छा करने लगे ॥ ३४ ॥ तीन शिरके सर्प उस रथको बहन करते थे सब सुवर्णनिर्मित रथ था उस रथमें कुंड और चन्द्रमाकी समान प्रकाशमान जलेश स्थित

दण्डं महाबलं परिप्लव्य देवो लोकाङ्कुशं निग्रहनिश्चितार्थम् ॥ हिरण्मयानां कमलोत्पलानां मालां मनोज्ञामवसृज्य कण्ठे ॥ ३२ ॥ स्थितोऽस्थिमेदामिषलोहितार्द्रं सर्वासुराणां निधनं विरूपम् ॥ तेजोमयं मुद्गरमुग्ररूपं विकर्षमाणोऽरुणभूषनेत्रः ॥ ३३ ॥ सम-
विन्वतो व्याधिशतैरनैकैर्ययो हरिश्मश्रुरुदारसत्त्वः ॥ महासुराणां निधनाय बुद्धिं चक्रे तदा व्याधिपतिः कृतान्तः ॥ ३४ ॥ तत्तस्मिंशी-
र्षेभ्युज्जगैर्बृहद्भिर्युक्तं रथं हेमचितं महात्मा ॥ आस्थाय कुन्देन्दुनिभं जलेशो ययो रणायासुरदर्पहन्ता ॥ ३५ ॥ वैदूर्यमुक्तामणिभू-
षिताङ्गस्तेजोमयः पाशगृहीतहस्तः ॥ महासुराणां निधनाय देवः प्रयाति रूप्याङ्गद्वन्द्वबाहुः ॥ ३६ ॥ कैलासशृङ्गप्रतिमोऽप्रमेयः
समुद्रनाथोऽमृतपो महात्मा ॥ महोरगेः स्वेस्तनयेः सुगुप्तो ययो रथेनार्कसमप्रभेण ॥ ३७ ॥ युद्धाय तं यान्तमदीनसत्त्वं नभस्तले
चन्द्रमिषातिक्रान्तम् ॥ पश्यन्ति भूतानि महानुभावं संहृष्टरोमाणि कृताञ्जलीनि ॥ ३८ ॥ घातार्थमांशोऽथ भगो विवस्वान्पर्जन्यमित्रो
च शशी च देवः ॥ त्वष्टा तथैवोर्जितविश्वकर्मा पूषा च साक्षाद्विवि देवराजः ॥ ३९ ॥

होकर असुरोंका र्प पूर्ण करनेको चले ॥ ३५ ॥ वैदूर्य मुक्तामणिसे भूषित शरीर तेजोमय पाश हाथमें लिये रूपके बाजू हाथमें बांधे बरुणजी महासुरोंके मारनेको चले ॥ ३६ ॥ कैलासके शृंगकी समान समुद्रपति अमृत पीनेवाले महात्मा बरुण महासर्प और अपने पुत्रोंसे रक्षित हुए सूर्यकी समान रथमें स्थित हो गये ॥ ३७ ॥ युद्धके निमित्त जाने वे ऐसे शोभित हुए जैसे आकाशमें चन्द्रमा जाता है उन महालुभावको प्रसन्न चित्तसे हाथ जोड़कर सब प्राणी देखने लगे ॥ ३८ ॥ घाता अर्थवा अंत मय विवस्वान् पर्जन्य मित्र शशी देव त्वष्टा ऊर्जित विश्वकर्मा पूषा और साक्षात् देव-

राज ॥ ३९ ॥ यह सब सूर्यके ढकनेवाली ध्वजा किंकिणीसे युक्त वैदूर्य और अशरफीके कंठे कंठमें बांधे इन्द्रके रथको प्रकाश करनेवाले सुन्दर घोड़ोंसे जुते रथमें यह देवता स्थित हुए ॥ ४० ॥ कोई सूर्यके समान आकारवाले कोई अश्विकी समान प्रभावाले कोई चन्द्रमाकी समान काम्तिमान् कोई बिजलीकी समान प्रकाशित ॥ ४१ ॥ कोई नील प्रकाशित मेघकी समान कोई लुण्णलोहकी समान दिव्यकान्तिमान् वस्त्र धारण किये जो उत्तम प्रकाशमान विश्वकर्माके बनाये थे ॥ ४२ ॥ जो सुवर्णपुष्पाकी माला पहरे जलपवनकी समान वेगसे चलते थे दोनों अश्विनीकुमार महातुभा

सौरच्छदेः सच्चजकिङ्किणीकैर्वैदूर्यनिष्केचितहेमकण्ठैः ॥ इयैर्वैरेः शक्ररथप्रकाशैर्युक्तान् रथानारुह्यः सुरास्ते ॥ ४० ॥ दिवाकराकार-
निभानि केचिद्भुताश्नार्विःप्रतिमानि केचित् ॥ निशाकरांशुप्रतिमानि केचित्तिडिद्रणोद्योतनिभानि केचित् ॥ ४१ ॥ नीलांशुमेघ-
प्रतिभानि केचित्कार्णायसाकारनिभानि केचित् ॥ वर्माणि दिव्यानि महाप्रभाणि त्वष्टा कृतान्युत्तमभातुमान्ति ॥ ४२ ॥ आशुच्य
मालाश्च सुवर्णपुष्पाः प्रयान्ति तोयानिलतुल्यवेगाः ॥ द्वावश्विनो चैव महातुभावो रूपोत्तमो धर्मभृतां वरिष्ठो ॥ ४३ ॥ रथं समारुह्य
सुवर्णचित्रं रणं गतो काञ्चनतुल्यवर्णो ॥ भानोः सुता वै वसवश्च सर्वे बलोत्कटा दैत्यवधाय देवाः ॥ ४४ ॥ रथाश्च नार्गाश्च महाप्र-
माणानास्त्याय जग्मुः सुशुभास्त्रहस्ताः ॥ रुद्राश्च सर्वेऽरुणधूमवर्णाः श्वेतैर्ययुर्गोपतिभिर्बृहद्भिः ॥ ४५ ॥ महोजसः सर्वयुजोपपन्ना
दीप्तात्मनो भाभिरिव ज्वलन्तः ॥ नानासुधव्यग्रकैर्भुजैस्तेलोकान्तसमस्तानिव निर्दहन्तः ॥ ४६ ॥

रथमें अतिश्रेष्ठ धर्म धारण करनेवालोंमें परम श्रेष्ठ ॥ ४३ ॥ कांचनकी तुल्य वर्णवाले दोनों सुवर्णके रथमें चढकर युद्ध करनेको गये भालुके पुत्र आठों
पल्लु बली दैत्याँके वध करनेको चले ॥ ४४ ॥ यह सुन्दर अश्व धारण किये महाप्रमाणवाले रथ और हाथियोंमें स्थित होकर चले अरुण धूमवर्णवाले
सम्पूर्ण रुद्र श्वेत प्रकाशमान वृषके ऊपर स्थित हो चले ॥ ४५ ॥ यह महापराक्रमी सम्पूर्ण युजोंसे उत्पन्न दीप्तिमान् अपनी कान्तिसे प्रकाशित होते हुए
अनेक आयुषोंसे पूर्ण भुजावाले सम्पूर्ण लोकोंको भस्म करते हुए ॥ ४६ ॥

तपनीय कवच पहरे विजलीयुक्त बादलकी समान चले और तपसे प्रकाशमान विश्वेदेवा सूर्यकी किरणोंकी समान वर्णवाले तपसे प्रकाशित भेद्य बली ॥ ४७ ॥ आयुषोंसे दुर्निवार्य सेना साथ लेकर चले यह बडे बली सहस्र कमलोंकी माला पहरे सुवर्णके रथसे युक्त जिनमें मुक्तामणि विचित्र जटित थी ॥ ४८ ॥ वे अनेक प्रकारके आकारवाले श्वेतछत्र धारे जो तेजोमय सुवर्णसे चित्रित और निर्मल थे तथा अग्निकी समान कान्तिमान् थे ॥ ४९ ॥ हृदय आच्छादन करनेवाली वस्तु धारे ध्वजा किंकिणीसे युक्त वायुसमान वेगगामी घोड़ों तथा कैलासके शृंग और दिशाके हाथियोंकी

ययुः ससेन्यास्तपनीयिनद्धाः सविद्युतस्तोयधरा यथैव ॥ विश्वे च देवास्तपसा ज्वलन्तो वीर्योत्तमाः सूर्यमरीचिवर्णाः ॥ ४७ ॥ ययुः ससेन्या युधि दुर्निवार्या बलोत्कटा पद्मसहस्रमालाः ॥ रथेः सुयुक्तेस्तपनीयवर्णैर्वैदूर्यमुक्तामणिदामचित्रैः ॥ ४८ ॥ नानाविधाकार-समाकुलास्ते पारिप्लवैश्चैव सितातपत्रैः ॥ तेजोमयैः काञ्चनचारुचित्रैः सुनिर्मलैः पावकसन्निभास्ते ॥ ४९ ॥ उरच्छदेः सध्वजकिङ्किणी-कैर्द्वयेश्च वायोः समवेगवद्भिः दिक्षां गजेश्चैव महाबलेस्तेः कैलासशृङ्गप्रतिमेर्महाद्भिः ॥ ५० ॥ प्रजगुरुप्रायुधचापहस्ताश्चतुर्युगान्ते ज्वलिता इवोल्काः ॥ साध्याश्च देवाः सुमहाप्रभावाः स्वार्धनिचक्राः प्रतिदीप्तवक्राः ॥ प्रयान्ति जाम्बूनदभूषिताङ्गा गाङ्गोघमात्रैर्गङ्गे-बलेधैः ॥ ५१ ॥ विद्योतयन्तो विदिशो दिशश्च महाबलास्ते जयतां वरिष्ठाः ॥ वरिष्ठपुष्टोष्ठभुजाः सुहृता वैश्वानरार्कप्रतिमप्र-भावाः ॥ ५२ ॥ ते ब्रह्मविद्भिश्च समस्यमानाः संपूज्यमानाश्च सुरैः सशक्रैः ॥ गन्धर्वसंचैरनुगम्यमाना वधाय तेषामसुराधिपानाम् ॥ ५३ ॥ वैदूर्यवज्ररुफटिकाग्रचित्रैर्ध्वजैः सुवर्णैश्च परिष्कृतानाम् ॥ रूपं बभौ चोत्कटभूषणानां दैत्येन्द्रनाशाय विभूषितानाम् ॥ ५४ ॥

समान महाहाथी ॥ ५० ॥ यह सब हाथमें धनुष तथा दूसरे आयुध लिये चतुर्युगके अन्तमें प्रज्वलित उल्काकी समान चले महाप्रभाववाले साध्य देवता अपनी आशीन सेनावाले प्रदीप्त मुख सुवर्णसे भूषित अंग गंगाके समूहकी समान बड़ी सेना लिये आकाशमें चले ॥ ५१ ॥ दशों दिशाओंको प्रकाशित करते महाबली तेजसे प्रदीप्तिमान् हम पुष्ट भुजावाले सूर्य और अग्निकी समान प्रभाववाले ॥ ५२ ॥ ब्रह्मज्ञानियोंसे समस्यमान देवता तथा इन्द्रसे पूजित गन्धर्वसेनाको साथ लिये दैत्योंके मारनेको चले ॥ ५३ ॥ वैदूर्य वज्र और रुफटिकमणियोंसे युक्त सुवर्णसे अलंकृत अनेक भूषण पहरे

उप दैत्योंके नाश करनेवालोंका रूप महाशोभित हुआ ॥ ५४ ॥ युद्धमें उत्कट अपनी कान्तियोंसे तथा अंधकार दूर करनेवाली कवचोंकी कान्तिसे उत्तम ध्वजा और अपने शरीरकी कान्तिसे तथा उज्ज्वल प्रभाओंसे ॥ ५५ ॥ साध्यों सहित वे देवता शंस बजाते शोभित होते थे ॥ ५६ ॥ वे महा-
पला महारथी देवता रथोंमें बैठकर दैत्योंसे युद्ध करनेको चले वे उग्रकाय देवता हाथोंमें महाअस्त्र लिये दैत्योंके मारनेको चले ॥ ५७ ॥ इसी प्रकार
और दूसरे महाबली बलोत्कट समर करनेवाले महामेघकी समान वर्णवाले चक्र हाथमें लिये मेघकी समान शब्द करनेवाले ॥ ५८ ॥ महेन्द्रकी केतुकी
आत्मप्रभाभिश्च रणोत्कटाभिर्वर्मप्रभाभिश्च तमोनुदाभिः ॥ च्वजोत्तमाभिः ॥ स्वशरीरभाभिर्महाप्रभाभिश्च महोज्ज्वलाभिः ॥ ५९ ॥
विभान्ति ते देववराः सप्ताध्याः प्रध्मातशङ्खस्वनसिंहनादाः ॥ ५६ ॥ महारथस्थास्त्रिदिवौकसस्ते महाबलाः शत्रुबलं प्रयान्ति ॥ महास्र-
इस्ता ययुरुग्रकाया महासुराणां निधनाय देवाः ॥ ५७ ॥ तथैव सर्वे महतोऽतिवर्या बलोत्कटास्ते समरं प्रतीताः ॥ ययुर्महामेघसमान-
वर्णाश्चक्रायुधास्तोयदनादनादाः ॥ ५८ ॥ महेन्द्रकेतुप्रतिमा महाबलाः प्रगृह्य सर्वासुरसूदनां गदाम् ॥ रणोत्कटा छेदितचन्दनाक्ताः
सहेममाल्याम्बरभूषिताङ्गाः ॥ ५९ ॥ ते युद्धशोण्डाः सुभुजास्त्रवीर्या बलोत्कटाः क्रोधविलोडिताक्षाः ॥ ययुः सजाम्बूनदपद्ममाला
यथेष्टनानाविधकामरूपाः ॥ स्वप्रभाश्यामलितासपीठाः पुरंदरं वै परिवार्य देवाः ॥ ६० ॥ वैदूर्यचामीकरचारुरूपान्यावध्य गात्रेषु
महाप्रभाणि ॥ वर्माणि दैत्यास्त्रनिवारणानि प्रयान्ति युद्धाय सपत्नसाहाः ॥ ६१ ॥ तेरुत्थितेः काञ्चनवेदिकाद्यैर्वरध्वजैर्भास्करराडिम-
वर्णैः ॥ ययौ सुराणां पृतनोग्रभासा समुन्नदन्ती युधि सिंहनादान् ॥ ६२ ॥

समान महाबली सब असुरसंहारिणी गदाको ग्रहण करे युद्धमें बड़े वीर लाल चंदन लगाये सुवर्णकी माला और भेदवस्त्रोंसे भूषित ॥ ५९ ॥ युद्धके वीर
भुजाओंमें शस्त्र लिये क्रोधसे लाल नेत्र किये सुवर्णके कमलोंकी माला पहरे कामरूप शस्त्रकी कान्तिसे कंधेको श्यामवर्ण किये इन्द्रको घेरे सब
देवता ॥ ६० ॥ वैदूर्य मणियोंसे जड़े सुवर्णके महाकान्तिमान् बलतर पहरे दैत्योंके निवारण करनेवाले देवता युद्ध करनेको चले ॥ ६१ ॥ सुवर्णकी
वेदिकाओंमें जड़ी सुवर्णकी ध्वजा जिनका सूर्यकी समान प्रकाश था उससे युद्ध देवताओंकी सेना महासिंहनाद करती चली ॥ ६२ ॥

इस प्रकार इन्द्रकी महामनाबशादी सेना बली वे असुरोंके जय करनेको और उनके मारनेके विभिन्न चले ॥ ६३ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेडु हरि-
वंसे ऋषिपर्वणि भाषायां वामनप्रादुर्भावे द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५२ ॥ वैशम्पायन बोले, उस समय देवता और दैत्योंका विग्रह अद्भुत रूप दीप्तने
लगा जैसे युगान्तमें अपनी मर्यादाको त्याग कर दो समुद्र मिलते हैं ॥ १ ॥ अनेक प्रकारके आयुधोंकी ज्योतिमें प्रदीप्त शरीर महाबली धनुष चढ़ाये
युद्धमें उत्सुक हाथीकी सूंढकी समान हाथवाले दुर्जयमेवकी समान शब्दवाले ॥ २ ॥ सहसा धनुषको चढ़ाये सूर्यकी समान कांतिमान् चक्र लिये

इत्येवमुक्तं त्रिदिवेश्वरस्य सैन्यं तदासीत्सुमहत्प्रभावम् ॥ युद्धं प्रयातस्य जयावहस्य वधाय तेषामसुराधिपानाम् ॥ ६३ ॥ इति श्रीम-
हाभारते सिलेडु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे द्विपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः प्रवृत्तोऽसुर-
देवविग्रहस्तदद्भुतो भाति सुरासुराकुलः ॥ वेलामतिक्रम्य युगान्तकाले महार्णवान्योन्यमिवाश्रयन्तः ॥ १ ॥ नानायुधोद्योतविदीपि-
ताङ्गान् महाबलान्यायतकार्मुकास्ते ॥ रणोत्सुका वारणहस्तहस्ताः सुदुर्जयास्तोयदनादनादाः ॥ २ ॥ विस्फारयन्तः सहसा धनुषि
चक्राणि चादित्यसमप्रभाणि ॥ समुत्क्षिपन्तो ह्यशनीश्च घोरान्खड्गाश्च ते वज्रमुखाश्च शक्तीः ॥ ३ ॥ महागदाः काञ्चनपट्टनदास्तथा-
यसान्कार्मुकसुद्वराश्च ॥ शूलाश्च वृक्षाश्च विगृह्य दीप्तान्नदन्ति शूराः शतशो रणस्थाः ॥ ४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतस्मिन्नन्तरे
तेषामन्योन्यमभिनिघ्नताम् ॥ द्रुन्दयुद्धान्यवर्तन्त देवानां दानवैः सह ॥ ५ ॥ मरुतां पञ्चमो यस्तु स बाणेनाभ्ययुध्यत ॥ महाबलः
सुरवरः सावित्र इति यं विदुः ॥ ६ ॥ अनायुषायाः पुत्रस्तु बलो नाम महासुरः ॥ सोऽयुध्यत रणेऽपुत्रो ध्रुवेण वसुना सह ॥ ७ ॥

घोर अग्नि फेंकते लङ्ग और वज्रमुक्त शक्ति छोड़ते ॥ ३ ॥ सुवर्णकी पट्टियोंसे जड़ी महागदा लोहेके धनुष और सुद्वर शूल और वृक्ष ग्रहण कर
रणमें स्थित हो मत हुए सैकड़ों शूर शब्द करने लगे ॥ ४ ॥ वैशम्पायन बोले, इस समय परस्पर प्रहार करते उन देवता और दानवोंका वंद युद्ध
होने लगा ॥ ५ ॥ मरुतोंमें जो पांचवां है वह बाणके साथ युद्ध करने लगा महाबली देवताओंमें भेड जिसको सावित्र कहे हैं ॥ ६ ॥ अनायुषाका

पुत्र बल नाम महासुर वह महाउग्र वसुके साथ युद्ध करने लगा ॥ ७ ॥ नमुचि असुरभेद धरके संग युद्ध करने लगा भेद देवताओंके विश्वकर्मा
प्रवरके संग युद्ध करने लगे ॥ ८ ॥ महादेत्य पुलोमा वायुके साथ युद्ध करने लगा वह पर्वताकार सेनासहित युद्ध करने लगा ॥ ९ ॥ हयग्रीव दितिपुत्र
पूषाके साथ युद्ध करने लगा वह शर महावीर्यवान् सूर्यकी समान कान्तिमान् थे ॥ १० ॥ महादेत्य महामाया करनेवाला महाअसुर शम्बर युद्धदुर्मद
भगदेवताके साथ युद्ध करने लगा ॥ ११ ॥ शरन्न और शलन्न दैत्योंमें चन्द्रसूर्यकी समान सोमसे शैशिरास्त्रद्वारा युद्ध करने लगे ॥ १२ ॥ बलवान्
नमुचिश्चासुरश्रेष्ठो धरेण सह युध्यत ॥ प्रवरो विश्वकर्माणो रुषातो देवासुरेश्वरो ॥ ८ ॥ पुलोमा तु महादेत्यो वायुना सह युध्यत ॥
ससेन्यः पर्वताकारो रणेऽयुध्यत दंशितः ॥ ९ ॥ हयग्रीवस्तु दितिजः सह पूष्णा त्वयुध्यत ॥ शूरेणामितवीर्येण भास्कराकारवर्चसा ॥ १० ॥
शम्बरस्तु महादेत्या महामाया महासुरः ॥ भगेनायुध्यत तदा सहितो युद्धदुर्मदः ॥ ११ ॥ शरभः शूडभश्चैव दैत्यानां चन्द्रभास्करो ॥
प्रयुद्धो सह सोमेन शैशिरास्त्रेण धीमता ॥ १२ ॥ विरोचनस्तु बलवान्बलैर्बलवतः पिता ॥ विष्वक्सेनेन साध्येन देवेन च स
युध्यत ॥ १३ ॥ कुजम्भस्तु महातेजा हिरण्यकशिपोः सुतः ॥ अंशेनायुध्यत तदा प्राप्तप्रहरणेन वै ॥ १४ ॥ असिलोमा तु बलिना
मारुतेन समं विभो ॥ तदायुध्यत दीप्तास्यो विकृतः पर्वतायुधः ॥ १५ ॥ अनायुषायाः पुत्रस्तु वृत्रो नाम महासुरः ॥ अश्विभ्यां
देवैवेद्याभ्यां सह युध्यत संयुगे ॥ १६ ॥ एकचक्रस्तु दितिजश्चक्रदस्तो दुरासदः ॥ सदायुध्यत देवेन साध्येन दितिजारिणा ॥ १७ ॥
बलस्तु मधुपिङ्गाक्षो वृत्रभ्राता महासुरः ॥ मृगव्याघ्रेण रुद्रेण सदायुध्यत वीर्यवान् ॥ १८ ॥
विरोचन बलिका पिता विष्वक्सेन साध्यदेवके संग युद्ध करने लगा ॥ १३ ॥ महातेजस्वी कुजं हिरण्यकश्यका पुत्र प्राप्तप्रहारद्वारा अंशके संग युद्ध
करने लगा ॥ १४ ॥ असिलोमा महाबलि मारुतके संग युद्ध करने लगा तब पर्वत आयुध लिये दीप्तमुख युद्ध करने लगा ॥ १५ ॥ अनायुषाका पुत्र
वृत्रनामक महाअसुर देवैव्य अश्विनीकुमारोंके संग युद्ध करने लगा ॥ १६ ॥ एकचक्र दितिपुत्र चक्र हाथमें लिये दुरासद दैत्योंके शत्रु साध्यके साथ
युद्ध करने लगे ॥ १७ ॥ मधुपिङ्गलनेत्र वृत्रका भ्राता बल महाबली मृगव्याध रुद्रके साथ युद्ध करने लगा ॥ १८ ॥

विष्णुताकार राहु शतशीर्षकासहोदर अजय हो अजेकपादके संग युद्ध करने लगा ॥ १९ ॥ दानवश्रेष्ठ केशी वर्षाकालीन मेघकी समान कान्तिमान् भीम धनेश्वरके साथ संग्राम करने लगा ॥ २० ॥ बली वृषपर्वा महारणमें निकुम्भके साथ युद्ध करने लगा विश्वेदेवके संग बली विश्वेदेवका युद्ध होने लगा ॥ २१ ॥ महाबली महाद अपने बार पुत्रोंसे युक्त रणमें दूसरे कालकी समान कालसे युद्ध करने लगा ॥ २२ ॥ अनुहाद धनद कुबेरसे संग्राम करने लगा यह गदा हाथमें लिये रिपुबाहिनीको शोभित करते द्युत करने लगे ॥ २३ ॥ दैत्य विप्रचित्ति महात्मा वरुणके साथ दैत्योंके आनन्दका बढ़ानेवाला रण करनेको प्रवृत्त हुआ ॥ २४ ॥

राहुस्तु विष्णुताकारः शतशीर्षा सहोदरः ॥ अजेकपादेन रणे सहायुध्यत दंशितः ॥ १९ ॥ केशी तु दानवश्रेष्ठः प्रावृट्कालाम्बुदप्रभः ॥ धनेश्वरेण भीमेन सहायुध्यत संयुगे ॥ २० ॥ वृषपर्वा तु बलिना निकुम्भेन महारणे ॥ विश्वेदेवेन विश्वेशः सहायुध्यत वीर्यवान् ॥ २१ ॥ प्रह्लादस्तु महावीर्यो वीरः स्वैस्तनयेवृतः ॥ युयुधे सह कालेन रणे काल इवापरः ॥ २२ ॥ अनुहादः कुबेरेण धनदेन महारणे ॥ गंदादस्तेन युयुधे शोभयन् रिपुबाहिनीम् ॥ २३ ॥ विप्रचित्तिस्तु दैतेयो वरुणेन महात्मना ॥ प्रवृत्तो वै रणं कर्तुं दैत्यानां नन्दि-
वर्द्धनः ॥ २४ ॥ बलिस्तु सह शक्रेण सुरेशेन महात्मना ॥ युयुधे देवराजेन बलिना बलवान्नणे ॥ २५ ॥ शेषा देवाश्च दैत्याश्च जघ्नुरन्योन्यमाहवे ॥ विनर्दन्तो महानादान् प्रासासिंशरशक्तिभिः ॥ २६ ॥ अदृश्यन्त महोत्पाता ये प्रोक्ता जगतः क्षये ॥ मारुताः सप्त ते क्षुब्धा व्यशीर्यन्त महीधराः ॥ २७ ॥ सप्त चैवोत्थिताः सूर्याः शोषयन्तो महार्णवान् ॥ बहुनाभिद्यत धरा वायुना मथिता यथा ॥ २८ ॥ व्युत्थिताश्च महामेघाः शक्रचापाङ्कितोदराः ॥ प्रणेतुः सर्वभूतानि सर्वाः सतिमिरा दिशः ॥ २९ ॥

महाबली राजा बली युद्धमें देवराज इन्द्रके साथ संग्राम करने लगा ॥ २५ ॥ शेष देवता और दैत्य परस्पर एक दूसरेको मारने लगे प्राप्त शक्ति बाण हाथमें लिये शब्द करने लगे ॥ २६ ॥ उस समय जगत्क्षयकारक अनेक उत्पात होने लगे सातों पवन वेगसे चलने लगे सागर क्षुभित हो गये ॥ २७ ॥ महासागर सोलनेको सात सूर्य उदय हो गये और वायुसे मथित हो पृथ्वी चलायमान होने लगी ॥ २८ ॥ चक्रकी पांक्तिवाले अनेक मेघ उदय हो

मये सब भूत शब्द करने लगे और दिशाओंमें अंधकार छा गया ॥ २९ ॥ उस समय कालनिर्मित देवताओंकी घोर अजय दिखाई देने लगी युगान्त-
कालकी समान घोर उत्पात दिखाई देने लगे ॥ ३० ॥ उस समय अन्तरिक्ष दिशा भूमि सूर्य भूत उठनेके कारण नहीं दीखते थे पवन वेगसे चली जिससे
धुमेली हो दिशा अंधकारसे आच्छादित हो गई ॥ ३१ ॥ इस प्रकारसे बहुतसे उत्पात देवनिर्मित भूमि और अन्तरिक्षमें दिखाई देने लगे ॥ ३२ ॥
वह देवता और देवोंका प्रयंकर युद्ध भेठ देवताओंको साथ लिये सुरगुरु ब्रह्माजी देखते थे ॥ ३३ ॥ अंगोसहित चार वेद तथा चौदह विद्याओंके
देवानामजयो घोरो दृश्यते कालनिर्मितः ॥ घोरोत्पातः समुद्भूतो युगान्तसमये यथा ॥ ३० ॥ न ह्यन्तीरक्षं न दिशो न भूमिर्न
भास्करोऽदृश्यत रेणुजालैः ॥ वपुश्च वातास्तुमुलाः सुधूमा दिशश्च सर्वास्तिमिरोपगुढाः ॥ ३१ ॥ एते चान्ये च बहवो दृश्यन्ते
देवनिर्मिताः ॥ भूमौ तथान्तरिक्षे च महोत्पातः समन्ततः ॥ ३२ ॥ तद्युद्धं देवदेत्यानां भीमानां भीमदर्शनम् ॥ अपश्यत
गुरुर्ब्रह्मा सर्वैरेव सुरैः सह ॥ ३३ ॥ वेदैश्चतुर्भिः साङ्गैश्च विद्याभिश्च सनातनः ॥ पद्मयोनिर्वृतः श्रीमान्सिद्धैश्च परमर्षिभिः ॥ ३४ ॥
नानामणिस्तम्भसङ्घचित्रमारुह्य यानं दृष्टो स्वयंभूः ॥ सुभास्वरं भूतसहस्रयुक्तं प्रदीप्यमानं वपुषा वरेण ॥ ३५ ॥ सुतप्तजाम्बूनदभ-
क्तिचित्रमानन्दभेरीशतसंप्रणादम् ॥ नक्षत्रचण्डांशुभिरंशुमन्तं वैदूर्यसोमार्कविभूषिताङ्गम् ॥ ३६ ॥ तमात्मजो वै पुलहः
पुलस्त्यस्तथा मरीचिर्भृगुरङ्गिराश्च ॥ ऋक्सामभिः सम्यगभिष्टुवन्तः सेवन्ति देवं वरदं विमाने ॥ ३७ ॥ तं पावका लोकयुद्धं
स्वयंभुवं सांगाश्च वेदा मखदेवताश्च ॥ सेवन्ति देवं भुवनेश्वरेशं भूतानि चान्यानि महानुभावम् ॥ ३८ ॥

सहित वह सनातन पद्मयोनि परमर्षियोंके साथ ॥ ३४ ॥ अनेक प्रकारकी मणियोंसे जटित सहस्र स्तंभवाले विमानमें स्थित होकर जो कि महाका-
न्तिमान् सहस्र भूतोंसे युक्त शरीरकी कान्तिसे प्रकाशमान् ॥ ३५ ॥ तथापे हुए सुवर्णकी भक्तिसे चित्रित अनेक भेरियोंके शब्दोंसे शब्दायमान नक्ष-
त्रोंकी प्रभासे प्रभावयुक्त वैदूर्यमणिसे युक्त चन्द्रसूर्यकी समानतासे विभूषित ॥ ३६ ॥ उनके पुत्र पुलह पुलस्त्य मरीचि भृगु अंगिरा ऋक्सामादि
वेदोंसे स्तुतिको प्राप्त हुए तथा देवताओंसे सेवित वरदाता विमानमें स्थित थे ॥ ३७ ॥ उन लोकयुद्ध स्वयंभूको अग्नि अंगोसहित वेद मख देवता

सेवन करते थे तथा औरगी प्राणी उन महाब्रह्म भुवनेश्वरकी सेवा करते थे ॥ ३८ ॥ यह महर्षिसमुह वैश्वामर पावकपोनिवाले देवपुरोहित यह सब देवता और दैत्योंका युद्ध देखनेकी इच्छासे गये ॥ ३९ ॥ सनक सनक्षन सनातन सनत्कुमार कपिल जैषीषव्य यह छः योगीश्वर सूर्यकी समान कान्तिमान् अनेक भूषण धारण किये तथा नर और नारायण यह आकाशमें अन्तर्हित स्थित हुए युद्ध देखने लगे ॥ ४० ॥ सम्पूर्ण चन्द्रमाकी समान कान्तिमान् सुखोंमें चारों वेद धारण किये ब्रह्माजीने शरदके चन्द्रमाकी समान सब दिशा निर्मल कर दीं ॥ ४१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां देवासुरयुद्धे सनकादिगमनं नाम त्रिंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥ वैशम्पायन बोले, हे राजन् ! दोनों सेनाओंका फिर युद्ध होने

एते बभूवुश्च महर्षिसंवा वैश्वानराः पावकयोनयश्च ॥ सर्वे ययुर्देवपुरोहिताश्च युद्धोत्सुकाः सर्वसुरासुराणाम् ॥ ३९ ॥ योगेश्वराः षट् च दिवाकराभा विभूषणेभूषितसर्वदेहाः ॥ अन्तर्हिता वै ददृशुर्नभस्थानारायणश्चैव नरश्च देवाः ॥ ४० ॥ वक्रैश्चतुर्वेदधरेश्चतुर्भिः संपूर्ण-चन्द्रप्रतिमेः सुकान्तेः ॥ सर्वा दिशो निस्तिमिराश्चकार नवोदितोऽसौ शरदीव चन्द्रः ॥ ४१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि देवासुरयुद्धे सनकादिकागमनं नाम त्रिपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५३ ॥ वैशम्पायन आच ॥ उभयोः सेनयो राजन् भूयो युद्धमवर्तत ॥ नादेन संचालयतां त्रैलोक्यमिदमव्ययम् ॥ १ ॥ गोमुखआडम्बराणां च भेरीणां सुरजैः सह ॥ झल्लरीडिण्डिमानां च व्यश्रूयन्त महास्वनाः ॥ २ ॥ प्रवृत्तो युद्धयज्ञस्तु तुमुलो लोमहर्षणः ॥ रणमध्ये महानादः स्वर्गीयः शूरसंमतः ॥ ३ ॥ युद्धयज्ञस्य नेताभूत्प्रह्लादो दैत्यसत्तमः ॥ विरोचनस्तथाष्वर्युद्धयज्ञप्रवर्तकः ॥ ४ ॥ होतु चैवात्र नमुचिर्बुध्नः स्तोत्रोपकल्पकः ॥ मन्त्रा दैत्याः समाखुयाता यज्ञकर्मणि तत्र वै ॥ ५ ॥ अनुयातश्च पितृभिरधिको वा पराक्रमैः ॥ यज्ञे तत्राभवद्वाणः संयुगे चोपतिष्ठते ॥ ६ ॥

लगा उनके बादसे त्रिलोकी चलायमान हो गई ॥ १ ॥ गोमुख आडम्बर भेरी मुरज झल्लरी डिमडिमका महाशब्द होने लगा ॥ २ ॥ वह बड़ा तुमुल और लोमहर्षण युद्ध यज्ञ फिर प्रवृत्त हुआ वह रणमें महानाद स्वर्गीय और शूरसम्मत हुआ ॥ ३ ॥ दैत्यभेद प्रह्लाद उस युद्धयज्ञका नेता हुआ और युद्ध यज्ञका प्रवृत्त करनेवाला था विरोचन अश्वर्यु हुआ ॥ ४ ॥ नमुचि होता और बुध्न स्तोत्राठ करनेवाला उस यज्ञकर्ममें दैत्य मंत्ररूप हुए ॥ ५ ॥ पितरोंके पीछे गमन करने वा उससेभी अधिक पराक्रमी उस युद्धरही यज्ञमें बाण यथा हुआ ॥ ६ ॥

ऐन्द्र पाशुपत और महा दुर्जय स्थूणाकर्ण हुआ अनुहादके प्रेरण किये मंत्र उसमें वर्तते थे ॥ ७५ ॥ शत्रुओंको भय देनेवाला भीमान् मयें उद्गाता हुआ और वह अत्र वैश्य गर्जना कर देवताओंकी सेनाको विदीर्ण करने लगा ॥ ८ ॥ और कान्तिमान् बलि राजा जप होमसे संयुक्त हो ब्रह्मापन करते थे ॥ ९ ॥ युद्धाग्निसे प्रज्वलित घोर वैररूपी ईंधनको ढालने लगा उस प्रकार ये अमुर देवता और विष्णुके सहित हवन करते थे ॥ १० ॥ शंख और मोरियोंके महाशब्दही उसमें वेदके शब्द होते थे ॥ ११ ॥ बल बलक महाअमुर पुलोमा यह सम्पूर्ण रजःमिको चमत्ता पात्र विधान कर गली ऐन्द्रं पाशुपतं ब्राह्मं स्थूणाकर्णं सुदुर्जयम् ॥ मन्त्रास्तत्राभ्यवर्तन्त साध्वनुहादयोऽबिताः ॥ ७ ॥ उद्गाता च मयः श्रीमान् स्थितः शत्रुभयंकरः ॥ विनदन्दिजश्रेष्ठो देवानीकं व्यदारयत् ॥ ८ ॥ बलिस्तु राजा युतिमान्स्त्वयं तत्र महासुरः ॥ जाप्यैर्होमैश्च संयुक्तो ब्रह्मत्वमकरोत्प्रभुः ॥ ९ ॥ रणाग्निर्ज्वलितो घोरो वैरेन्धनसमीरितः ॥ हूयते त्वसुरेस्तत्र देवो विष्णुः सुरैः सह ॥ १० ॥ शङ्खशब्दैः सुतुमुल्लेर्भरीणां च महास्वनैः ॥ उद्दृष्ट विमलं चैव ब्रह्मण्यं सुप्रयुज्यते ॥ ११ ॥ बलश्च बलकश्चैव पुलोमा च महासुरः ॥ प्रशस्तं च समं कृत्वा सत्रं सम्यक् प्रचक्रिरे ॥ १२ ॥ कल्माषदण्डविमला विपुला रथपंतयः ॥ यूपाश्च समकल्पन्त युद्धयज्ञे महाफले ॥ १३ ॥ कर्णनालीकनाराचा कत्सदन्तोपबृंहिकाः ॥ तोमराः सोमकलश विचित्राणि धनुषि च ॥ १४ ॥ अस्थिन्वित्र कपालानि पुरोडाशाः शिरांसि च ॥ आग्न्यं च रोद्रे रुधिरं तस्मिन् यज्ञेऽभिहूयते ॥ १५ ॥ इध्माः परिधयस्तत्र प्रस्तारा विपुला गदाः ॥ हयग्रीवोऽसिलोमा च राहुः केशी च दानवः ॥ १६ ॥ विरोचनश्च जम्भश्च कुजम्भश्च महाबलः ॥ सदस्यास्तत्र तु मखे विप्रचित्तिस्तु वीर्यवान् ॥ १७ ॥ प्रकारसे पक्ष करते थे ॥ १२ ॥ कल्माष अर्थात् चित्र विचित्र दंडोंसे उज्ज्वल सहस्रो रथसमूह उस युद्धयज्ञमें युरस्थानमें कल्पित थे ॥ १३ ॥ कर्णनाली और नाराच कत्सदन्त और उपबृंहिका ये तोमर और विचित्र धनुष सोमकलश ये ॥ १४ ॥ अस्थि भिक्षुमें कपाल और शिर पुरोडाश-स्थानमें थे रुधिर घृत उस यज्ञमें हवन किया जाता था ॥ १५ ॥ सेनाका मंडल होमका काष्ठ और गदाओंका परिस्तरण होता हुआ हयग्रीव असिलोमा राहु और केशी दानव ॥ १६ ॥ विरोचन जंभ और महाबली कुजम्भ उस यज्ञसमामें बैठनेवाले थे, और इसी प्रकार महाबली विप्रचित्ति था ॥ १७ ॥

रथोंके ध्रुवोंकी सहाय बाण खुदा हुए तथा धनुषकी कोटि और ज्या यहनी सम्पूर्ण झुक हुए ॥ १८ ॥ वृषपर्वा इसमें प्रतिप्रस्थानकर्म करता
 था और अपनी सेनारूप महाक्षीके सहित बालि इसमें दीक्षित था ॥ १९ ॥ दितिपुत्र शम्बर शामित्रकर्म करता था, इस प्रकार वह अतिरात्र
 यज्ञकर्म होनेमें ॥ २० ॥ उस यज्ञकी दक्षिणा कालनेमि महाअनुर हुआ। हे राजन् ! बैतानयज्ञकर्ममें जो हव्यवाट् नामसे विख्यात है ॥ २१ ॥ वह
 मृतक हुए देवताओंके शरीरोंसे यज्ञामिषेवन होने लगा उन यज्ञों दैत्योंका निर्धन सवन होने लगा ॥ २२ ॥ दैत्य देवताओंका रुधिर पान करने लगे
 इषवस्तु सुवास्तत्र रथाक्षसदृशाः शुभाः ॥ धनुष्कोत्थो धनुर्ज्याश्च सुचस्तत्र महामखे ॥ १८ ॥ प्रतिप्रस्थानिकं कर्म वृषपर्वा-
 करोदिह ॥ दीक्षितस्तत्र तु बलिस्तस्य पत्नी महाचमूः ॥ १९ ॥ शम्बरस्तत्र शामित्रमकरोदिति नन्दनः ॥ अतिरात्रे महाबाहुर्वितते
 यज्ञकर्मणि ॥ २० ॥ दक्षिणास्तस्य यज्ञस्य कालनेमिर्महासुरः ॥ बैताने कर्मणि विभो यः ख्यातो हव्यवाटिव ॥ २१ ॥ त्रिदशानां
 तु तेन्यस्य शरीरेर्गतजीवितैः ॥ तस्मिन्यज्ञे तु सवनं वर्धत दैत्यनिर्भेतम् ॥ २२ ॥ देवानां रुधिरं संख्ये पपुरुषा दितेः सुताः ॥
 नर्दमानाः प्रमुदिताः सोमपानं रणाध्वरे ॥ २३ ॥ यदा बलिर्महादैत्या विजेता समरे सुरान् ॥ तदा ह्यवभृथो यज्ञे भविष्याति न
 संशयः ॥ २४ ॥ महासुरैर्द्रुपतयो यज्ञानो भूरिदक्षिणाः ॥ वेदवन्तो वृत्तवन्तः शूरा सर्वे तनुत्यजः ॥ २५ ॥ त्रैलोक्यहरणे सृष्टा
 युद्धयज्ञाय दीक्षिताः ॥ बद्धकृष्णाजिनाः सर्वे त्रिभिर्नो मुञ्च शारिणः ॥ २६ ॥ एकनिश्चयकार्याश्च त्रैलोक्यजयकाङ्क्षिणः ॥ सुरदानव-
 दैत्यानां शब्दः समभवन्महान् ॥ २७ ॥ नानायुद्धादिहस्तानां त्वरितानां प्रधानताम् ॥ क्षोडितोत्कुष्टनिर्देगेजबुद्धितानिःस्वनैः ॥ २८ ॥
 वही उसका महागर्जनाके सहित सोमपान होता था ॥ २३ ॥ जिस समय महारथ बालि समरमें देवताओंको जीतेगा उस समय यज्ञका अवशुथ स्रान
 हो जायगा इसमें सन्देह नहीं ॥ २४ ॥ महाअनुरेन्द्रानि भूरिदक्षिणात्रे यज्ञ करने लगा वे सब वेदके ज्ञाता वीर शूर इस यज्ञमें शरीर त्यागनेमें तत्पर
 थे ॥ २५ ॥ त्रैलोक्यके हरण करनेमें तत्पर युद्धयज्ञों दीक्षित सब कृष्णाजिन बांधे और सब वीर मुंनधारी ॥ २६ ॥ एकही निश्चयसे कार्य कर-
 नेवाले त्रिलोकीके जयकांक्षी उन देवता दानव और दैत्योंका महासङ्घ होने लगा ॥ २७ ॥ नाना आयुध हाथमें लिये शीघ्रतासे धावमान होनेवाले

ताल ठोकनेमें तत्पर और हाथियोंकी समान शब्द करनेवाले ॥ २८ ॥ चारों ओरसे रथके पहियोंका घरघर शब्द होने लगा कहीं शंस और दुंदुतीका
 शब्द कहीं घोड़ोंके हिंसनेका शब्द होने लगा ॥ २९ ॥ घोड़ेके हिंसने और दानवाँके गर्जनेसे ताल ठोकने हाथ पैरोंके पटकनेके शब्द करनेसे ॥ ३० ॥
 शस्त्रवाले दानवाँकी सेना तय्यकर कर्मसे प्रकाशित होने लगी ॥ ३१ ॥ तब नाग और रथ जाम्बूनदसे विभूषित बिजलीसहित मेघकी समान विराजमान
 होने लगे ॥ ३२ ॥ ऋष्टि शक्ति तीक्ष्ण नदा शूल शक्ति परसे यह सब पृथक् पृथक् सेनामें विराजमान होने लगे ॥ ३३ ॥
 रथनेमिस्वनेषोरैस्तुमुलः सर्वतोऽभवत् ॥ शङ्खदुन्दुभिनिर्घोषैर्ह्यहेषितानिःस्वनेः ॥ २९ ॥ इयानां हेषनाणानां दानवानां च गर्ज-
 ताम् ॥ क्ष्वेडितोत्कुण्ठनिन्देः पाणिपादरवेस्तया ॥ ३० ॥ दानवानां परेषां च शस्त्रवन्ति मृगान्ति च ॥ समरे भीमकर्माणि
 सेन्यानि प्रचकाशिर ॥ ३१ ॥ ततो नागा रथाश्चैव जाम्बूनदविभूषिताः ॥ भ्राजन्तानां व्यराजन्त मेघा इव सन्निवृतः ॥ ३२ ॥ ऋष्टि-
 शक्तिगदास्तीक्ष्णशूडशक्तिपरशवाः ॥ चारु विभ्राजिरै तत्र तेष्पनीक्रेषु भागशः ॥ ३३ ॥ रथा बहुविधाकाराः शनशोऽय सद्गन्तव्यः ॥
 हेमप्रच्छन्नाशिलरा ज्वलन्त इव पावकाः ॥ ३४ ॥ दानवानां सुराणां च समाजोऽयमनेकाः ॥ काश्चोः कनचेः सर्वे ज्वलितार्कसम-
 प्रभेः ॥ ३५ ॥ सन्नद्धाः समदृश्यन्त ज्योतीर्विगमने यथा ॥ उद्यतेरायुधैश्चित्रैस्तलवद्भाः कलापिनः ॥ ३६ ॥ ऋषभाश्च सुराणाश्चमू-
 सुत्तगता बभूवुः ॥ नानावर्णाः पताकाश्च ध्वजमालाश्च संयुगे ॥ ३७ ॥ युद्धयन्तं रणशोण्डा तामोरियापात मारुतः ॥ ध्वजाङ्कारव-
 स्त्राणि कवचानि च रश्मिभिः ॥ ३८ ॥ आसयामास सर्वाणि रश्मिवर्णानि रश्मिजान् ॥ सर्वेषामप्रमेयाणां वज्रानां पादचारिणाम् ॥ ३९ ॥
 अनेक प्रकारके सैकड़ों रथ शिखरमें सुवर्ण जड़े अग्निकी समान प्रज्वालित ॥ ३४ ॥ दानव और देवताओंके रथ सेनाके लोग देखने लगे सब कांचनके
 कवच सूर्यकी समान प्रकाशमान पहरे थे ॥ ३५ ॥ वह इस प्रकार दीखते थे जैसे आकाशमें तारे आयुध चित्रविचित्र उठाये तलवद्भा कलापयुक्त
 ऋषभाश्च देवताओंके समूह सेनामें प्राप्त हो शोभित हुए ॥ ३६ ॥ अनेक वर्णकी ध्वजा पताका ध्वजसमूह युद्धमें शोभित हुए ॥ ३७ ॥ उन वीरोंका
 युद्ध होते २ बड़ा दारुण हो गया ध्वजा अलंकार वस्त्र कवचोंकी कान्तिसे ॥ ३८ ॥ सब स्थान कान्तिमान् हो गये दोनों ओरके महाबली पादच-

रियोंके ॥ ४९ ॥ युद्धसे उठी हुई रजने दिशाओंका आच्छादन कर दिया सब दिव्य आयुधधारी और दिव्य बल पहरे हुए ॥ ४० ॥ एक दूसरेकी
 सेनाको स्तंभित करने लगे उस समय वे देव दानव पर्वतके कूटकी समान ऊँचे ॥ ४१ ॥ विषयोधी रणमें स्थित हो एक दूसरेको मारने लगे बड़े सशिर
 तीक्ष्ण बाण दुरासरोसे ॥ ४२ ॥ सुदूर सुशाल शूल जो सोहनिमित्त थे तिनसे अश्विनकी समान बल खड्ग और दूँतोंसे ॥ ४३ ॥ उन अद्भुत पराक-
 र्मियोंका महापराक्रमयुक्त संघाम होने लगा तब सावित्रीको मारनेके छिये बाणने धनुष धारण किया ॥ ४४ ॥ और दिव्य बाणसमूहोंसे देवताओंको
 रजः प्रच्छन्नव्यामास पञ्चोर्ण पाण्डुरं विह्वलः ॥ विह्वलायुधधराः सर्वे क्षीतायुधपरिच्छिन्नाः ॥ ४० ॥ प्रतितस्तम्भिरेऽभ्योभ्यमनीकं
 प्रत्यनीकतः ॥ गिरिकृत्योष्मयाः सर्वे तदा ते देवदानवाः ॥ ४१ ॥ अभ्योभ्यमभिनिग्नस्तो रणस्याभित्रयोधिनः ॥ बाणेः सुरुचिरे-
 स्तीक्ष्णैः पद्मबाणैर्दुरासवैः ॥ ४२ ॥ सुदूरेर्लुप्तशलेः शूलैरयस्तुण्डैरुलूखलेः ॥ वज्रैरश्विनिकल्पेभ्यः खड्गवृक्षादिभिस्तथा ॥ ४३ ॥
 तथा प्रवर्तिते तेषां विमर्देऽद्भुतविक्रमे ॥ सावित्रस्य वधं प्रेम्सुर्बाणो जग्राह कालुष्यम् ॥ ४४ ॥ शरजालेन दिव्येन च्छादयानः
 सुरोत्तमम् ॥ मन्त्रैर्हुत इवाग्निष्मान्संप्रजज्वाल तेजसा ॥ ४५ ॥ सागराभां महासेनां देवानां देत्यपुङ्गवः ॥ संशोषयति बाणो वैरकी-
 शुभिरिवार्णवम् ॥ ४६ ॥ मारुतः सुमहावेनः सावित्रः शक्तिसुत्तमाय ॥ चित्तेप बलिपुत्राय शक्रोऽश्वनिमिवाग्रये ॥ ४७ ॥ आपतन्ती
 च सा शक्तिर्महोल्का ज्वलिता इव ॥ द्विधा छिन्ना क्षुरग्रेण बाणेनाद्भुतकर्मणा ॥ ४८ ॥ इतायामथ शक्त्यां तु सावित्रो देवसत्तमः ॥
 विश्वकर्मकृतं दिव्यं सुतीक्ष्णं दानवार्दनम् ॥ ४९ ॥ सुपानधारं विमलं बिपुलं चन्द्रवर्णसम् ॥ अगृह्णान्निशितं खड्गमाशीविषमिवोरगम् ॥ ५० ॥
 आच्छादन करने लगा मंत्रोंसे हुवन की हुई अश्विनी समान बल तेजसे जल उठा ॥ ४५ ॥ देवताओंकी समुद्रकी समान महासेनाको वह देत्य बाणोंसे
 पैसे सोलने लगा जैसे सूर्य किरणोंसे सागरको सोलता है ॥ ४६ ॥ सब सावित्र मारुतने शक्ति ग्रहण कर बड़े वेगसे बलिके पुत्रके ऊपर महार की
 जैसे पर्वतपर इन्द्रका बल पड़े ॥ ४७ ॥ महाउल्काकी समान जलती हुई उस महाशक्तिको देख उस बाणसे क्षुरग बाणसे बीचमें काट दी ॥ ४८ ॥
 शक्तिके हुन होनेसे देवनेत्र सावित्रने विश्वकर्माके बनाये दिव्य तीक्ष्ण दानवोंके नाश करनेवाले ॥ ४९ ॥ पुष्टधारवाले उज्ज्वल चन्द्रमाकी समान कान्ति-

मान् सूर्यकी समान महासङ्गको ग्रहण किया ॥ ५० ॥ उस महाकान्तियुक्त प्रज्वलित सङ्गको ग्रहण कर वह महातेजस्वी बाणासुरके आगे स्थित हुआ ॥ ५१ ॥ बाणने उसको अपने निकट स्थित देख कि महाशरीर और लाल नेत्र किये है बड़ा शब्द किया ॥ ५२ ॥ फिर सूर्यकी समान कान्तिमान् बज्रसरीसे सर्पकी समान तीक्ष्ण बाणोंको धनुषपर चढ़ाया ॥ ५३ ॥ जिनके पुंस्त्वमें सुवर्ण जडित सब प्रकारसे अलंकृत महावेगवान् उग्र बाणोंको कानपर चढ़ाकर छोड़ा ॥ ५४ ॥ वे अधिकी तुल्य बाण दृढ चापसे छोड़े हुए कैलासके मेघकी समान सावित्रको आच्छादन करने लगे ॥ ५५ ॥

तं गृहीत्वा रणमुत्से प्रज्वलन्तं महाप्रभम् ॥ बाणाभ्यासे महातेजाः सङ्गपाणिरवस्थितः ॥ ५१ ॥ स तं स्थितमयालक्ष्य सावित्रं बलिनन्दनः ॥ छेदिताक्षं महाकायं चिक्षेप च ननाद च ॥ ५२ ॥ ततोऽर्ककिरणाकारान्शनिप्रतिमाच्छितान् ॥ संदधे चाशु बाणो-
घानाशीविषाशिलीमुत्तान् ॥ ५३ ॥ रुक्मपुंस्तान्प्रदीप्ताग्रानुग्रवेगानलंकृतान् ॥ आकर्णपुरांश्चिक्षेप शरानुमन्तसमन्ततः ॥ ५४ ॥ दृढचापप्रमुक्तास्ते शरा वैश्वानरप्रभाः ॥ सावित्रं छादयामासुः कैलासमिव तोयदाः ॥ ५५ ॥ संच्छद्यमानः शस्त्रोपैर्वाणेन बलि-
सुतुना ॥ पराङ्मुखः सुरवरः प्रयातः सरयष्वजः ॥ ५६ ॥ पराजित्य स सावित्रं बाणः परमहर्षितः ॥ प्रवृत्तः कार्मुकं घोरं गतः शक्ररथं प्रति ॥ ५७ ॥ बलश्याप्यसुरश्रेष्ठः प्रवृत्तः महतीं गदाम् ॥ ध्रुवाय वसवे सूर्ये रोद्रीं चिक्षेप दानवः ॥ ५८ ॥ तस्य निर्माधि-
तस्त्वंसो हेमाचित्रं च वर्म वै ॥ गदावेगेन भीमेन ध्रुवस्य समरे तदा ॥ ५९ ॥ शेषाश्च वसवः सर्वे दिव्यास्त्रेघोरदर्शनेः ॥ प्राच्छादयन्ने-
वेत्यमादित्यमिव तोयदाः ॥ ६० ॥

बलिपुत्र बाणके अक्षों तथा बाणोंसे आच्छादित हो वह देवताओंमें भेठ और रथ पञ्चाके सहित युद्धसे पराङ्मुख हो गया ॥ ५६ ॥ इस प्रकार सावित्रको पराजय कर बाणासुर परम हर्षित हुआ तथा घोर धनुष ग्रहण कर इन्द्रके रथके सम्मुख चला ॥ ५७ ॥ और असुरनेत्र बलनेत्री महानदाको ग्रहण कर ध्रुव बलुके शिरपर उस गदाका प्रहार किया ॥ ५८ ॥ उससे उसका सुवर्णनिर्मित वस्त्र चूर्ण हो गया इस प्रकार भीम नदाके वेगसे ध्रुवका ॥ ५९ ॥ वस्त्र चूर्ण किया तब शेष घोरदर्शन बलु रणमें देवोंको ऐसे आच्छादन करने लगे जैसे

सूर्यको मेघ आच्छादन करते हैं ॥ ६० ॥ तब दानवभेद बल बाणोंसे सम्मर्दित होने लगा और रथसे उतर गदा ले बढे वेगसे दौड़ा ॥ ६१ ॥ और महा असुरने वह गदा अपने शत्रुओंके शिरपर मारी उस महानदाने शत्रुओंको दिसा विदिसाओंमें पलायन करवा दिया ॥ ६२ ॥ वह पेसी पतित हुए मानों इन्द्रने वज्र मारा उसके विजलीकी समान शब्दको सुनकर वे सब कंपित हो गये ॥ ६३ ॥ रथोंसे भ्रष्ट हो रथी पलायन करने लगे बोह रथोंकी सेना सूर्यकी समान कान्तिमान् होकर मेघवत् शब्द करती पलायन कर गई ॥ ६४ ॥ तब फिर देवताओंने चारों ओरसे बाणवर्षा करनी आरंभ की

ततः संमर्दितो बाणेर्वलो दानवसत्तमः ॥ अवातरज्यात्तस्माद्गदासुधम्य वेगवान् ॥ ६१ ॥ पातयामास शत्रूणां समाविष्य महासुरः ॥ विशः प्राद्रावयत्सर्वास्त्रिदशान्त्सा महागदा ॥ ६२ ॥ इन्द्राक्षानिर्विन्द्रेण प्रवृद्धा सुमहास्वना ॥ तस्याः सविद्युद्धोक्तास्तेन शब्देन वेपिताः ॥ ६३ ॥ व्यद्रवन्त परिभ्रष्टा रथेभ्यो रथिनस्तेवा ॥ तद्युदीर्ण रथानीकं सूर्याभं मेघानिःस्वनम् ॥ ६४ ॥ देवानां शरघाराभिः समन्तादभ्यवर्षत ॥ क्षुरकैर्विशिखैर्भङ्गैर्वत्सवन्तैः शिलीमुखैः ॥ ६५ ॥ मुहुर्मुहुर्महातेजाः प्रत्यविष्यन्महासुरान् ॥ बलाकस्तु गदापाणिर्व्यादितास्य इवान्तकः ॥ ६६ ॥ तडिद्वणार्कसदृशो वैश्वानर इवापरः ॥ पिबन्निव शरोषांस्तान्देवेषामसमुच्छ्रितान् ॥ ६७ ॥ अभ्यद्रवन्त दैत्येन्द्रा महापर्णव इवापरः ॥ अवस्फूर्जन्विदुः सर्वाः स्वेन क्षीयेण दानवः ॥ ६८ ॥ अरुजंस्त्रिदशान्देत्यः सिन्धुवेगान्नना इव ॥ समुद्रस्तरसा देवान्वायुवृक्षानिवीजसा ॥ ६९ ॥ क्षामयंश्च महेष्वान्त्वसुभ्यां समसज्जत ॥ आपश्चेवानिलश्चैव पवर्षतुररिन्दमो ॥ ७० ॥

क्षुरक विशिख मल्ल वत्सवर्ग बाणोंसे ॥ ६५ ॥ वह महातेजस्वी महाअसुर फिर प्रहार करने लगा और बलक दैत्य गदा हाथमें लिये कालकी समान मुख फैलाये ॥ ६६ ॥ विजलीके समूह तथा सूर्य और अग्निकी समान उन देवताओंके छोटे हुए बाणोंको पान करता हुआ ॥ ६७ ॥ दूसरे महासुरकी समान वह दैत्येन्द्र पावमान हुआ और वह दानव अपने वीर्यसे सम्पूर्ण दिशाओंको शब्दापमान करता हुआ ॥ ६८ ॥ दैत्य देवताओंको इस प्रकार भेदन करने लगा जैसे सिन्धुनदीका वेग पर्वतोंको नष्ट करता है, वा जैसे वायुका वेग वृक्षोंको भग्न करता है ॥ ६९ ॥ इस प्रकार वसुओंके छोटे

हुए बाणोंको शान्त कर फिर वह आप और अनिल नामक दो वसुओंके साथ संग्राम करने लगा ॥ ७० ॥ वह दोनों महातेजस्वी मेवोंकी समान बाण प्रहार करने लगे तत्काल उस देवने उन बाणोंको अन्तरिक्षमेंही छोड़ कर दिया ॥ ७१ ॥ इस कर्मको सहन न करके ध्रुव उस देवके समुत्पन्न हुआ तब वे महाशरवर्षणसे परस्पर एक दूसरेको प्रहार करने लगे ॥ ७२ ॥ वह उत्तम शूर देवता देव्य परम यशस्वी नलोंसे शाद्वल और दांतोंसे हाथीकी समान ॥ ७३ ॥ रथकी शक्तियोंद्वारा परस्पर एक दूसरेके ऊपर बाण प्रहार करते थे और बाणप्रहारसे एक दूसरेके शरीरको विदीर्ण करने लगे ॥ ७४ ॥

शरवणाणि दीप्तानि मेघाविष परंतपो ॥ क्षिप्तांस्तान्विशिखान्दीप्तानन्तरिक्षे स चिच्छिन्दे ॥ ७१ ॥ अमृष्यमाणस्तत्कर्म ध्रुवस्तम-
भिवुद्भवे ॥ तो पृथक् शरवर्षाभ्यामन्योन्यमभिजग्रतुः ॥ ७२ ॥ उत्तमाभिजना शूरो देवदेव्यो यशस्करो ॥ तो नखोरिव शाद्वलो
दन्तेरिव महाद्रियो ॥ ७३ ॥ रथशक्तिभिरन्योन्यं विशिखैश्चाप्यकून्तताम् ॥ निर्भिन्दन्तो च गात्राणि धिलिखन्तो च सायकैः ॥ ७४ ॥
स्तम्भयन्तो च बलिनो प्रतुदन्तो स्थितो रणे ॥ चरन्तो विविधान्मार्गान्मण्डलानि च भागशः ॥ ७५ ॥ सुद्वेजेग्रतुः क्रुद्धावन्यो-
न्यमभिमानीनो ॥ असिभ्यां चर्मणी दिव्ये विपुले च शरासने ॥ ७६ ॥ निकृष्याचलसंकाशौ बाहुयुग्मं प्रचक्रतुः ॥ व्यूढोत्स्को
दीर्घभुजौ निशुलक्रुशकाबुधौ ॥ ७७ ॥ बाहुभिः समसंज्जेतामायसेः पार्ष्णेरिव ॥ तपोराक्षीदुग्धापातैर्निग्रहः प्रग्रहस्तथा ॥ ७८ ॥
अतीव भीमः संहृद्यो वज्रपर्वतयोरिव ॥ द्विपाविष विषाणाग्नेः शृंगोरिव महावृषौ ॥ ७९ ॥

वे दोनों एक दूसरेको स्तम्भित करते तथा जेदन करते अनेक प्रकारके वेत्रे बदलकर विचरण करने लगे ॥ ७२ ॥ फिर दोनों अभिमानी परस्पर कोच कर सुद्वेजे मारने लगे फिर डाल तलवार तथा दिव्य शरासन द्वारा युद्ध होने लगा ॥ ७३ ॥ फिर दो पर्वणोंकी समान बाहु दृढ़ करने लगे चौड़ी छाती दीर्घ भुजा युद्धमें दोनों क्रुशक ॥ ७४ ॥ आपस अर्थात् छोड़ेके सुद्वेजेकी समान भुजाओंसे युद्ध करने लगे भुजाओंके आघातसे उनका निग्रह और प्रग्रह (वेरबंधन) होते हुए ॥ ७५ ॥ तथा वज्र मिरते हुए पर्वतकी समान महाबोर शब्द होता हुआ जैसे दावोंसे दो हाथी और क्षीणोंसे दो बैल युद्ध करते

हो ॥ ७९ ॥ इस प्रकार परस्पर दोनोंका युद्ध तथा दो बहीलक बराबर होता रहा अन्त्यर्धे हुए वसु, देव्यो पराजित हो युद्धसे पराङ्मुख हो गया ॥ ८० ॥ इति श्रीमहाभारते शिखंडे हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रिपदायां देवामुरमुद्धे वसुपञ्चासत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥ देवतापनजी बोले, फिर क्रोधको भात हुए नमुचि और पर इन दोनोंको बड़ा दाकड़ें युद्ध होने लगा ॥ १ ॥ और बड़ी भुजाओंवाले और बड़े वसुओंको धारण करते हुए और वसुओंको दबन करनेवाले क्रोधको धारण करे वेबोले प्रत्य करते हुए परस्पर देखने लगे ॥ २ ॥ सुपर्वकी पीठवाले महाकठोर दुरास

अभ्योन्ममभिसंरब्धौ युद्धं पर्यकर्षताम् ॥ ततः पराजितो देवो बलाकेन तथा ध्रुवः ॥ रथं त्यक्त्वा भवात्तस्य प्रवृत्तः प्राङ्मुखो वसुः ॥ ८० ॥ इति श्रीमहाभारते हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्राप्तुर्भावे वसुपञ्चासत्तमोऽध्यायः ॥ ५४ ॥ वैष्णव्यायन उवाच ॥ पुनरेव तु तत्रासीन्महायुद्धं सुदारुणम् ॥ क्रुद्धस्य नमुचेऽथ परस्य च महात्मनः ॥ १ ॥ संरब्धौ च महानाह मोह्यासावरिण्यमो ॥ परस्परमुद्भेता बहन्ताविव लोचनेः ॥ २ ॥ विस्मयं च महाकापं हेमपुष्टं दुरासदम् ॥ संरम्भात्त वसुभ्रेऽस्त्यक्त्वा प्राणानमुद्यत ॥ ३ ॥ स सायकमयेर्जाडैर्धरो देव्यरथं प्रति ॥ आनुमन्निः शिलाघोतैर्भानोः प्राच्छादयत्प्रभाम् ॥ ४ ॥ ततः प्रहस्य नमुचिर्धरस्य च शिलाक्षितान् ॥ असृजत्सायकान्दीप्तान्भिमवेगान्दुरासदान् ॥ ५ ॥ महातेजा महानाहुर्महावेगो महाः ॥ विध्वापातिवज्रो देव्यो नवभिर्निक्षितैः शूरेः ॥ ६ ॥ स तोत्रैरिव मातङ्गो वार्यमाणः पतत्रिभिः ॥ अभ्यधावच्च संकुद्धो नमुचिं वसुसत्तमः ॥ ७ ॥

महावसुधकी चढाकर वह पर अपने प्राणोंका मोह त्यागकर नमुचिके संग युद्ध करने लगा ॥ ३ ॥ और प्रकाशमान शिलाकी समान निर्मल बाणरूपी जालोंको वह पर नमुचिदेव्यके रथके प्रति छोड़ता हुआ सूर्यकी प्रभाको आच्छादन करने लगा ॥ ४ ॥ और शिलाओंकी समान तीक्ष्ण दीप्तिमान् बड़े वेगवाले असह्य बाणोंको नमुचि हँसता हुआ धरपे छोड़ने लगा ॥ ५ ॥ महातेजस्वी बड़ी भुजाओंवाले महोदधवान् महारथी और अतिरथी नमुचिने पने २ नव बाणोंसे करको धेवन किया ॥ ६ ॥ और जैसे अंकुरोंसे नेदन किया हुआ हस्ती क्रोधित

होता है तैसेही बाजोंके बेपनसे क्रोधित हुआ वसुभेठ धर नमुचिके सम्मुख दौड़ा ॥ ७ ॥ और बेपनसे आते हुए धरको वर नमुचि देस ऐसे सम्मुख
धावमान हुए कि जैसे मरुन्मत्त हस्तीके प्रति मरुन्मत्त हस्ती ॥ ८ ॥ तब सौ जेरियोंके समान शब्दवाले शंखको बजाय और उछलते हुए समु-
द्रकी तुल्य शत्रुकी सेनाको अत्यन्त क्षोभ कर ॥ ९ ॥ और भेठ वर्णवाले शत्रुके घोड़ोंसे अपने हंसकी तुल्य कांतिवाले घोड़ोंको मिलाता हुआ नमुचि
बाजोंकी वर्षासे धरको आच्छादन करने लगा ॥ १० ॥ और नमुचि और धर इन दोनोंके रथोंको परस्परमें मिले हुए देस देवताओंकी सेना अत्यन्त

तमापतन्तं वेगेन संरम्भाद्भुची रणे ॥ दैत्यः प्रत्यसरदेवं मत्तो मत्तमिव द्विपम् ॥ ८ ॥ ततः प्राध्याप्यच्छङ्कुं भेरीक्षतनिनावितम् ॥
विशोभ्य तद्रुतं हर्षोवुद्धतामैवसंप्रभम् ॥ ९ ॥ अश्वानुशसवर्णाभान्वंसवर्णैः सुवाणिभिः ॥ मिश्रयन्तसमरे दैत्यो वसुं प्राच्छावय-
च्छेः ॥ १० ॥ समाश्लिष्टावधान्योन्यं वसुदानवयो रथौ ॥ दृष्ट्वा प्राकम्पत मुहुस्त्रिवक्षानां मद्वलम् ॥ ११ ॥ क्रोधसंरम्भता-
ब्राह्मो प्रेक्षमाणो मुहुर्मुहुः ॥ गर्जन्ताविव शार्ङ्गलो प्रभिन्नाविव वारणो ॥ १२ ॥ महामेषोपमं रौद्रमासिदायोधनं तयोः ॥ रथाभवरसंवाधं
मत्तवारणसंकुलम् ॥ १३ ॥ समाजमिव तं दृष्ट्वा प्रेक्षमाणा महारथाः ॥ आशंसन्तो जयं ताभ्यां योषा नैकप्रसंश्रयाः ॥ १४ ॥
तयोः प्रेक्ष्यन्त संरम्भं सन्निकृष्टं महास्त्रयोः ॥ सिद्धगन्धर्वमुनयो वेक्क्षानवयोस्तदा ॥ १५ ॥ तौ च्छादयन्तावधान्योन्यं समरे निक्षितेः
शूरेः ॥ क्षरजालावृतं व्योम चक्रस्तुश्च महाबलौ ॥ १६ ॥

कांपने लगी ॥ ११ ॥ और क्रोधपुलक लाल ९ नेत्रोंसे परस्परमें दीखते हुए और शार्ङ्गलोंकी तुल्य गर्जते हुए और वच हस्तिपोंकी तुल्य जेरन
करते हुए ॥ १२ ॥ इस प्रकार दोनों योद्धाओंका मनुष्य हस्ती घोड़ोंसे व्याप्त महामेषोंकी समान गर्वकर युद्ध होने लगा ॥ १३ ॥ तिस युद्धको
समाजकी भाँति देखते हुए महारथी तिन्होंके जयको कहते हुए ॥ १४ ॥ युद्धमें समूहके समूह रियत होते हुए और सिद्ध तथा गन्धर्व और मुनि ये
सम्पूर्ण समीपमें प्राप्त हो और महाअश्वोंको धारण करते हुए उनको देवता और दानव युद्धमें देखने लगे ॥ १५ ॥ वे दोनों महाबली बाजोंकी वर्षा

करते हुए शरोंके जालोंसे आकाशको आच्छादन करने लगे, और परस्पर एक दूसरेको आच्छादन करने लगे ॥ १६ ॥ और तीक्ष्ण बाणोंसे पर-
स्पर हनन करते हुए दोनों महारथी रणमें बाण वर्षति जलोंकी वर्षा करते हुए मेवोंकी समान दीखते लगे ॥ १७ ॥ और वे दोनों शत्रुनाशक सुवर्णसे
जटित बाणोंको छोड़ते हुए ऊर्काओंसे आकाशको सूर्यकी समान प्रकाशमान करने लगे ॥ १८ ॥ नमुचि और घर इन दोनोंके बाण आकाशमें ऐसे
प्रकाशमान होने लगे कि जैसे शरहतके आकाशमें मनवाले सारसोंकी पंक्ति शोभित होती है ॥ १९ ॥ मरे हुए देवता बोड़े हाथियोंसे पृथ्वी ऐसे

तावन्त्योन्यं जिघांसन्तो श्रेस्तीक्ष्णैर्महारथैः ॥ प्रेक्षणीयतमावास्तां वृष्टिमन्तापिवाम्बुदौ ॥ १७ ॥ सुवर्णविकृतान्बाणान्प्रमुञ्चन्ताव-
रिन्दमौ ॥ भास्कराभं तदाकाशमुल्काभिरिव चक्रतुः ॥ १८ ॥ तयोः शराः प्रकाशन्ते देवदानवोस्तदा ॥ पतयः शरदमत्तानां
सारसानामिवाम्बरे ॥ १९ ॥ त्रिदशाम्भजनानां हि शरीरैर्गतजीवितैः ॥ क्षणेन संवृता भूमिर्मघैरिव नभस्तलम् ॥ २० ॥ ततः सुधारं
ज्वलितं सूर्यमण्डलसन्निभम् ॥ धराय वसवे मुक्तं चक्रं नमुचिना रणे ॥ पतता तेन चक्रेण धरस्य स्यन्दनोत्तमः ॥ २१ ॥ सध्वजः
सायुधः सान्धो दग्धोऽर्ककिरणप्रभः ॥ स त्यक्त्वा स्यन्दनं देवः प्रदीप्तं चक्रेतेजसा ॥ २२ ॥ भयात्तस्यासुरेन्द्रस्य मतः स्वयहमुत्त-
मम् ॥ पराजित्य सुरं दैत्यो नमुचिर्बलगर्वितः ॥ २३ ॥ प्रयातः स्वेन सैन्येन भूयः सुरचमूं प्रति ॥ यो तो मयश्च त्वष्टा च
देवदैत्येषु विश्रुतो ॥ २४ ॥

व्याप्त हो गई कि जिस प्रकार मेघोंसे आकाश ॥ २० ॥ तब तीक्ष्ण धारवाले सूर्यके मंडलकी तुल्य कांविमान् जलते हुए चक्रको नमुचि दैत्यने घरके
सन्मुख छोड़ा ॥ २१ ॥ ध्वजा आयुध घोड़ोंसे युक्त सूर्यकी समान प्रकाशमान रथको नमुचिके चक्रने दग्ध किया; तब वह घर चक्रके तेजसे दग्ध
हुए रथको त्याग ॥ २२ ॥ नमुचिके भयसे अपने घरको चला गया; तब घर देवताको जीत नमुचिदैत्य बलने गर्वित हो ॥ २३ ॥ अपनी सेनाके
संग ले फिर देवताओंकी सेनाके सन्मुख चला जो दोनों विरूपात और भेष्ठ देवता और दैत्योंमें भेष्ठ महात्मा त्वष्टा देवता और मय ॥ २४ ॥

श्रेष्ठ विश्वकर्माको सैकड़ों मायाके जाननेवाले दैत्य इन्होंका महाबोर दारुण युद्ध होने लगा ॥ २५ ॥ वह बिरकाठसे युद्धमें एक दूसरेकी तरफ़ा करते हुए थे उस समय त्वष्टा तीक्ष्ण बाणोंसे बलदर्शित दैत्यको ॥ २६ ॥ तीन सौ बाणोंसे वेधन करने लगा इस प्रकार आते हुए बाणोंको देख मय-नेत्री बहुत तीक्ष्ण बाणोंसे त्वष्टाको बिड़किया ॥ २७ ॥ बेगवाले वेधनेवाले सुवर्णजटित बाणोंसे मयदैत्य त्वष्टाको वेधन कर गजने लगा ॥ २८ ॥ त्वष्टा क्रोधित हो तीक्ष्ण बाणोंसे मयको जेदन कर दैत्योंकी सेनाके प्राणोंको सोनका डुप्रासा क्रोधसे सुवर्ण और मणियोंसे जटित विचित्र दंडवाली प्रचरो विश्वकर्माणो मायाशतविशारदो ॥ घोरस्तयोः संप्रहारः प्रावर्त्तत सुदारुणः ॥ २९ ॥ अन्योन्यस्पर्द्धिनोस्तत्र चिरात्प्रभृति संयुगे ॥ त्वष्टा तु निक्षिप्तेर्बाणेर्दैत्यं तु बलदर्शितम् ॥ २६ ॥ पराक्रान्तं पराक्रम्य विव्याध त्रिशतेः शूरेः ॥ मयस्तु प्रतिविव्याध त्वष्टारं निक्षितेः शूरेः ॥ २७ ॥ सुघातेः सुप्रसन्नाग्नेः शतकुम्भविभूषितैः ॥ ननाद दितिजश्रेष्ठो हतस्त्वष्टुः शूरेर्मयः ॥ २८ ॥ संकुद्धो दैत्यस्तेन्यस्य विचिन्वान्निव जीवितम् ॥ शक्तिं कनकवैडूर्यचित्रदण्डां महाप्रभाम् ॥ २९ ॥ देवो गृहीत्वा समरे दैत्येन्द्रं समपातयत् ॥ भीमां सर्वायसीं दृष्ट्वा पुरंदर इवास्नानिम् ॥ ३० ॥ तां त्वष्टुर्भुजनिर्मुक्तामर्कवेश्वानरप्रभाम् ॥ मयाश्चिच्छेद् तीक्ष्णाग्नेस्तूर्णं सप्त-भिराशुगेः ॥ ३१ ॥ ततः क्षुण्वन्निव प्राणांस्त्वष्टुः कोपान्महासुरः ॥ प्रेषयामास संरब्धः झरान्बाह्विगवासनः ॥ ३२ ॥ चिच्छेद् बाणांस्त्वष्टा तान् ज्वलितैर्नतपर्वभिः ॥ दैत्यस्य सुमहाकणोः सुवर्णविकृतेः शूरेः ॥ ३३ ॥ तो वृषावि नन्दतो बलिनो वासितान्तरे ॥ झाड़ूलाविव चान्योन्यं प्रसक्तावभिजग्नतुः ॥ ३४ ॥

महाकान्तिवाली शक्तिकी ॥ २९ ॥ युद्धमें ग्रहण कर दैत्यपति मयके ऊपर छोड़ी, वह मयंकर लोहनिर्मित पुरन्दरके कवचकी समान थी ॥ ३० ॥ त्वष्टाकी भुजाओंसे छुटी हुई अधिकी समान कांतिवाली शक्तिकी मयदैत्यने वेगवान् तीक्ष्ण बाणोंसे छेदन कर दिया ॥ ३१ ॥ और त्वष्टाके प्राणोंके हरनेको मयदैत्यने क्रोधित हो तीक्ष्ण बाणोंको छोड़ा ॥ ३२ ॥ तब त्वष्टाने अपने प्रकाशमान बाणोंसे मयके महावेगवाद् सुवर्णनिर्मित बाणोंको छेदन कर दिया ॥ ३३ ॥ महाबली वृषोंकी समान गजंते और सिंहोंकी तुल्य पराक्रमोंको करते हुए और परस्परमें दाव देखते हुए परस्पर मारने लगे ॥ ३४ ॥

परस्पर युद्ध करते एक दूसरेके वधकी इच्छा करनेवाले विपैले सर्पकी समान परस्पर देखने लगे ॥ ३५ ॥ इस प्रकार बड़े विस्तारवाले धनुषसे छोटे
 हुए बाणोंसे मारने लगे कि जैसे दाँतोंके अग्रभागसे मशोन्मस हस्ती युद्ध करते हो ॥ ३६ ॥ तब बड़े विस्तारवाली, मकासमान सुषर्मेके बाहुओंवाली
 सम्पूर्णोंके प्राणोंको हरनेवाली नदाको ग्रहण कर त्वष्टापर लोड़ी ॥ ३७ ॥ उससे क्रोधी मयदैत्यने उचप घोड़ोंवाले त्वष्टाको ताड़न किया जैसे इन्द्र
 वज्रसे पर्वतोंको विदीर्ण करता है ॥ ३८ ॥ फिर युद्धमें कोपित हुआ मयदैत्य बहुतसे तोड़ग बाणोंसे ॥ ३९ ॥ त्वष्टाके रथको ध्वजाको छेदन कर
 अन्धोन्ध प्रतियुध्यन्तावन्धोन्धवधकांक्षिणो ॥ अन्धोन्धमभिधीसन्तो क्रुद्धावासीविषावि ॥ ४० ॥ महामजाविवासाद्य विषाणामैः
 परस्परम् ॥ सूरैः पूर्णायतोत्सृष्टैरन्योन्यमभिजघ्नतुः ॥ ४१ ॥ ततः सुविपुलां दीप्तां मयो रुद्राङ्गो गङ्गाम् ॥ त्वष्टारि प्राहिणोत्क्रुद्धः
 सर्वप्राणहरां रणे ॥ ४२ ॥ तथा जघानातिरथस्त्वष्टुहन्तमवाजिनः ॥ गङ्गा दानवः क्रुद्धो वज्रेणैन्द्र इवाचञ्च ॥ ४३ ॥ ततः क्रुद्धो
 महादैत्यः क्षुराभ्यामथ संयुगे ॥ पुनर्द्रोभ्यां क्षुराभ्यां तु निक्षिप्ताभ्यां महारणे ॥ ४४ ॥ ध्वजं त्वष्ट्राय च्छित्त्वा सूतं निर्वेयमक्षयम् ॥
 महाबलान्महावेगान्तदध्वान् गङ्गाङ्गनत् ॥ ४५ ॥ दृष्ट्वा त्वष्टा हतं सूतमर्थाश्च विनिपातितान् ॥ इताश्च रथमुत्सृज्य सूतं च पतितं
 भुवि ॥ ४६ ॥ विस्फारयन्महाचापं स्थितो भूमाविवाचलः ॥ इताश्चसूतं विरथं दृष्ट्वा रिपुमत्रस्थितम् ॥ ४७ ॥ जयश्रिया सेव्यमानो
 दीप्यमान इवानलः ॥ मयः कालान्तकप्ररूपश्चापपाणिरदृश्यत ॥ ४८ ॥ प्रादहदेवसेन्यानि दावाग्निरिव काननम् ॥ त्वष्टुः सोऽक्षिपता-
 नुग्रान्नाराचांस्तिग्मतेजसः ॥ ४९ ॥

सारथीको यमलोकमें पहुँचा दिया, फिर बड़े शरीरवाले और बड़े वेगवान् भ्रेष्ठ घोड़ोंको गङ्गासे मारा ॥ ४० ॥ वह त्वष्टा रणमें भेदन की हुई ध्वजा
 और सूतको मृतक देख घोड़े तथा सूतरहित रथको त्याग पृथ्वीमें स्थित हुआ ॥ ४१ ॥ युद्धके निमित्त आने महान् धनुषको टंकारता पृथ्वीमें
 पर्वतकी समान स्थित हुआ, घोड़े सूत और रथहीन शत्रुको उपस्थित देख ॥ ४२ ॥ जयरुपी शोभाको प्राप्त हो युद्धमें दीप्तिमान् आग्नि और कालकी
 तुल्य प्रसिद्ध हाथमें धनुषको धारण किये मयदैत्य ॥ ४३ ॥ देवताओंकी सेनाको दग्ध करता हुआमा दीक्षने लगा, कि, जैसे वनको दग्ध करता

हुआ शवाग्रि तत्र अत्यन्त तेजवाले शिलापै पैनाये हुए ॥ ४४ ॥ अनेक प्रकारकी आकृतिवाले चौदह बाण ॥ ४५ ॥ मयदैत्यने छोड़े; वे सुवर्णके महनोंवाले बाण त्वष्टाकी सेनाके रुधिरको ऐसे पीते हुए; जैसे कालसे प्रेरणा किये हुए सर्प हों, रुधिरमें भीगे हुए वे बाण ऐसे शोभाको प्राप्त हुए ॥ ४६ ॥ कि जैसे आधे प्रवेश हुए क्रोधयुक्त बिलोंमें महान् सर्प हों, सुवर्णसे भूषित हुए बाणोंसे त्वष्टानेही मयदैत्यको वेदन कर ॥ ४७ ॥ अत्यन्त उग्र चौदह बाणोंसे उस दैत्यकी सव्यभुजाको विदारण किया ॥ ४८ ॥ वे बाण मयदैत्यकी सव्य भुजाको भेदन कर और भूमिमें सर्पकी समान प्राप्त हुए प्रकार

चतुदश शिलाघातान्तायकान्निविधाकृतान् ॥ ते पपुस्तस्य सेन्यस्य शोणितं रुक्मभूषणाः ॥ ४५ ॥ आशीविषा इव कुद्रा भुजङ्गाः कालबोदेताः ॥ ते क्षितिं समवर्तन्त शोभन्ते रुधिराक्षिताः ॥ ४६ ॥ अर्द्धप्रविष्टाः संख्या विळानोव महोरगाः ॥ तं प्रत्यविष्यत्त्वष्टा तु जाम्बूनदविभूषितैः ॥ ४७ ॥ चतुर्दशभिरत्युग्रैर्नाराचैरभिदारयन् ॥ ते तस्य दैत्यस्य भुजं सव्यं निर्भिद्य पात्रिणः ॥ ४८ ॥ विदार्य विविशुभूर्मि पन्नगा इव वेगतः ॥ ते प्रकाशन्त नाराचाः प्रविशन्तो वसुंधराम् ॥ ४९ ॥ अस्तं गच्छन्तमादित्यं प्राविशन्त इवांशवः ॥ मयास्त्रिभिरयानच्छत्त्वष्टारं तु पतत्रिभिः ॥ ५० ॥ सुपर्णवेगैर्विकृतेर्ज्वलद्भिः प्राणनाशनेः ॥ त्वष्टाय मयनिर्मुक्तेः सायकै- रादितः प्रभुः ॥ ५१ ॥ अयानो रणं हित्वा व्रीडयाभिसमाश्रितः ॥ तं तत्र इतमृतं च भुजङ्गा इव निर्विषम् ॥ ५२ ॥ त्वष्टारं विरमं कृत्वा मुदितः स तु दानवः ॥ विस्फार्यमाणो रुचिरं चापं रुक्माङ्गदं दृढम् ॥ ५३ ॥

करने लगे ॥ ४९ ॥ जैसे अस्ताचलको जाते हुए सूर्यमें प्रवेश होती-किरण; तब मयने तीन बाणोंसे त्वष्टाको भेदन किया ॥ ५० ॥ वे रुधिरको भोजन करनेवाले और अत्यन्त उग्र चलते हुए ऐसे प्राणनाशी थे और मयदानवके बाणोंसे पीड़ित हुआ त्वष्टा ॥ ५१ ॥ युद्धको त्याग लजित हुआ रणसे चला गया, मृत और वोगोंके मारनेसे विषरहित सर्पकी नाई ॥ ५२ ॥ त्वष्टाको विरम कर मयदानव अत्यन्त आनंदको प्राप्त हुआ; और अत्यन्त सुन्दर और सुवर्णके बाजुओंवाले और अत्यन्त दृढ़ ऐसे धनुषको टंकारता हुआ ॥ ५३ ॥

रणमें वह दैत्य प्रकाशमान अग्निकी समान स्थित हुआ; तब बलमें स्थावरीय मरुन्मत्त पुलोमा दानव ॥ ५४ ॥ श्वेत घोड़ोंवाले रथमें स्थित हो रणमें दीक्षा और सम्पूर्ण प्राणियोंके शरीरमें स्थित होनेवाले ॥ ५५ ॥ और कालकी तुल्य बलवान् वायुदेवताके संग युद्ध करने लगा पुलोमा दैत्यके धनुषकी ज्याके शब्दको सुन पवन देवता ॥ ५६ ॥ ऐसे नहीं सह सके कि जैसे मरुन्मत्त हस्तीके शब्दको मरुन्मत्त हस्ती और पुलोमा दैत्यके छोटे हुए बाणोंसे दशों दिसा ऐसे आच्छादन हो गई ॥ ५७ ॥ जैसे सूर्यकी किरणोंके जालसे आकाशसहित जगत् हो जाता है, वह तांबेकेसे

रणे व्यतिष्ठदैत्येन्द्रो ज्वलन्निव हुताशनः ॥ पुलोमा तु बलश्लाघी दृप्तो दानवसत्तमः ॥ ५४ ॥ रथे श्वेतद्वयेनेह सार्द्धं युष्याति वायुना ॥ सर्वेषामेव भूतानां यः प्राणः कथ्यते द्विजैः ॥ ५५ ॥ बलिना कालकल्पेन वायुना सह संगतः ॥ पुलोमस्तत्र पवनः श्रुत्वा ज्यातलानिःस्वनम् ॥ ५६ ॥ नामृष्यत यथा मत्तो गजः प्रतिगजस्वनम् ॥ दैत्यचापच्युतेर्बाणैः प्राच्छद्यन्त दिशो दश ॥ ५७ ॥ रश्मिजालेरिवार्कस्य विततं साम्बरं जगत् ॥ स ताम्रनयनः क्रुद्धः श्वसन्निव महोरगः ॥ ५८ ॥ वृत्तो दैत्यशतेर्बाणैः रश्मिवानिव भास्करः ॥ दैत्यचापभुजोत्सृष्टाः शरा बर्हिणवाससः ॥ ५९ ॥ रुक्मपुंस्ताः प्रकाशन्त इंसाः श्रोणीकृता इव ॥ चापध्वजपताकाभ्यः शस्त्रा दीप्तमुक्ताश्च्युताः ॥ ६० ॥ प्राप्तवन्तश्च दृश्यन्ते दैत्यस्यापततः शराः ॥ एवं सुतीक्ष्णान्स्वचराञ्छलभानिव पावके ॥ ६१ ॥ सुवर्णविकृतान् चित्रान्मुमोच दितिजः शरान् ॥ तमन्तकमिव क्रुद्धमापतन्तं स मारुतः ॥ ६२ ॥

नेत्रवाला महान् सर्पकी नाईं श्वास लेता हुआ ॥ ५८ ॥ सैकड़ों दैत्योंसे विरकर वायुदेवता ऐसे शोभाको प्राप्त हुआ कि जैसे किरणोंसे सूर्य और दैत्यकी भुजाओंद्वारा धनुषसे छोड़े हुए धोरके पंखोंकी तुल्य वर्णवाले ॥ ५९ ॥ सुवर्णके पंखोंवाले बाण हंसोंकी पंक्तिकी समान प्रकाशित हुए चाप ध्वजा पताकाओंसे निकले हुए दीप्तिमान् शस्त्र ॥ ६० ॥ वे दैत्योंके निकट प्राप्त हुए दीखने लगे; इस प्रकार तीक्ष्ण बाणोंको अग्निमें पतंगकी समान छोड़ता हुआ ॥ ६१ ॥ वे सुवर्णसे विकृत और चित्रविचित्र बाण छोड़ते क्रोधित हो कालकी समान आते हुए पुलोमा दैत्यको पवनने देख ॥ ६२ ॥

प्राणपनसे नव बाणोंसे उसे बेधन किया; तब सनातन वायुने तिसका असह्य वेग देख ॥ ६३ ॥ उच्च पराक्रममें स्थित हो उसके बाणसमूहको नष्ट किया ॥ ६४ ॥ और बलवान् पवनने शरोंके जालको नष्ट कर पैने मुखोंवाले बीस बाणोंसे पुलोमा दैत्यको बेधन किया, और पवनोंके गर्णोंमें श्रेष्ठ और पराक्रमवाले दश देवता ॥ ६५ ॥ वेगसे धन्य धन्य कह सिंहनाद करने लगे; उस तुमुल और रोमहर्षको उवजानेवाले शब्दको सुन ॥ ६६ ॥ वे पौलोम संज्ञक दैत्य क्रोधमें मूर्च्छित हुए पवनके सन्मुख धावमान हुए, और पवनको प्राप्त हो शरोंकी वर्षासे आच्छादन करने लगे ॥ ६७ ॥ कि जैसे वर्षाकालमें

त्यक्त्वा प्राणानतिक्रम्य विव्याध नवभिः शरैः ॥ तस्य वेगमसंहार्य दृष्ट्वा वायुः सनातनः ॥ ६३ ॥ उत्तमं जवमस्थाय व्यघमत्सा-
यकव्रजान् ॥ तेजो विधम्य बलवाञ्छाब्जालानि मारुतः ॥ ६४ ॥ विव्याध दैत्यं विंशत्या विशिखैर्नतपर्वभिः ॥ मरुद्गणानां प्रवरा
दश दिव्या महोजसः ॥ ६५ ॥ साधु साध्विति यांगेन सिंहनादं प्रचकिरे ॥ तस्मिन्समुत्थिते शब्दे तुमुले लोमहर्षणे ॥ ६६ ॥
अभ्यधावन्त दितिजाः पौलोमाः क्रोधमूर्च्छिताः ॥ ते समासाद्य पवनं समावृण्वन् शरोत्तमैः ॥ ६७ ॥ पर्वतं वारिधाराभिः प्रावृषीव
बलाहकाः ॥ ते पीडयन्तः पवनं क्रुद्धाः सप्त महारथाः ॥ ६८ ॥ प्रजासंहरणे घोराः सामं सप्त ग्रहा इव ॥ ततो दक्षिणमक्षाभ्यं
नानारत्नविभूषितम् ॥ ६९ ॥ करं गजकराकारमुद्यम्य युधि मारुतः ॥ तेषां मूर्द्धसु दैत्यानां पातयामास वीर्यवान् ॥ ७० ॥
निहता वायुवेगेन तेन सप्त महारथाः ॥ त्यक्त्वा प्राणान् पुलोमा तु विव्याध नवभिः शरैः ॥ ७१ ॥

जलोंकी धारासे पर्वतको मेघ आच्छादन करते हैं, क्रोधित हुए ऐसे सात महारथी पवनको पीडित करने लगे ॥ ६८ ॥ कि जैसे प्रलयकालमें महाघो-
ररूप सात ग्रह चन्द्रमाको पीडित करते हैं, तब अक्षोभ्य अपने दक्षिण हाथको उठाव जो अनेक प्रकारके रत्नोंसे भूषित ॥ ६९ ॥ हस्तीकी शृङ्गाकी
तुल्य था; युद्धमें दैत्योंके मस्तकमें उस बलीने मारा ॥ ७० ॥ अपने वायुके वेगसे सात महारथोंको फेंक दिया; और वह पुलोमा प्राणको त्याग नव

बाणोंसे बायुको बेचन करता हुआ ॥७१॥ बायुरेवताको प्रकाश करते हुए अर्चित्य बलयुक देस और ज्वलित होते हुए पुलोमाके बाणोंके समूहको
 देस उम महात्मा दानवोंके तेजोंको विदीर्ण किया, तब वे रुधिरमें भीगे हुए मुकुटोंवाले गेरुके पर्वतके समान भिन्न दीले ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ और छिन्न
 भुजा बर्म अस्थियोंवाले सम्पूर्ण दानव युद्धभूमिमें पड़े हुए शोभित हुए; और भेदन किये हुए मरीन्मच हाथी जिस प्रकार शोभाको प्राप्त हुए कि जैसे फूले
 हुए वृक्ष ॥७४॥ और महात्मा दानवोंके कटे हुए शरीरोंसे रौद्ररूप बड़ी भयानक नदी प्रवृत्त हुई ॥ ७५ ॥ और डरनेवालोंके मयको बढानेवाली नदी
 प्रदर्शितमसंहार्य दृष्ट्वा बायुं सनातनम् ॥ असंचित्य सुरोवास्तान् ज्वलितांश्च पुलोमतः ॥ ७२ ॥ तेषां विदार्य तेजांसि दानवानां
 महात्मनाम् ॥ शोषिताक्लिन्नमुकुटा गेरिकाक्ता इवाद्रयः ॥७३॥ ते भिन्नवर्मास्थिभुजाः पतन्तो भान्ति दानवाः ॥ मातङ्गयूथसंभगाः
 पुष्पिता इव पादपाः ॥७४॥ तेषां विदारितेर्देहदानवानां महात्मनाम् ॥ ततः प्रावर्त्तत नदी रौद्ररूपा भयावहा ॥७५॥ प्रस्रवन्ती रणे
 रक्तं भीरूणां भयवर्द्धिनी ॥ देवदेत्यगजाश्चानां रुधिरौषपरिप्लुता ॥ रणभूमिरभूद्रोद्रा तत्र तत्र सहस्रशः ॥७६॥ सभूता मतसत्त्वैश्च
 यक्षराक्षसस्त्रेचरेः ॥ सानुगेः सपताकैश्च सोपासङ्गरथध्वजेः ॥७७॥ शीर्णकुम्भैस्तथा नागेर्षण्डाभिस्तु विभूषितैः ॥ सुवर्णपुद्गे-
 र्जलितैर्नाराचेस्तिग्मतेजसैः ॥७८॥ देवदानवनिर्मुक्तैः सविषैरुरगैरिव ॥ प्राप्तोमरनाराचेः शक्तिसङ्गपरश्वधैः ॥७९॥ सुवर्ण-
 विकृतैश्चापि गदामुशलपट्टिशैः ॥ कनकाङ्गदकेयूरैर्मणिभिश्च सकुण्डलैः ॥८०॥ तनुत्रैः सतलत्रैश्च हारैर्निष्कैश्च शोभनैः ॥ इतैश्च
 दितिजेस्तत्र शस्त्रस्यन्दनवर्जितैः ॥८१॥ पतितैरापि विद्वैश्च शतशोऽथ सहस्रशः ॥ निपातितध्वजरथो हतवाजिरथद्विपः ॥८२॥
 वहने लगी, देवता और दानव हस्ती और घोडोंके रुधिरसे वह रणभूमि बड़ी भयानक होती हुई सहस्रों जीवयुक्त हुई ॥ ७६ ॥ और गतमाणोंवाले राक्षस
 स्त्रेचर और धनुष यक्ष और ध्वजा रथ ॥७७॥ घंटाओंसे भूविन फूटे हुए मस्तकोंवाले हस्ती और प्रकाश करते हुए सुवर्णकी पंखोंवाले बाण ॥७८॥
 देव दानवोंसे छोटे हुए विपैले सर्पोंकी समान प्राप्त और तोमर नाराच और भाले शक्ति फरसे खज्ज ॥७९॥ सुवर्णसे जटित धनुष गदा और मुशल पट्टिस
 सुवर्णके बाण मुकुट शोभायमान कुंडल ॥८०॥ तनुत्र, तलत्र, हार, धुकधुकी शस्त्र रथोंसे रहित भेदन किये हुए दैत्योंसे वह ॥८१॥ जो कि बिन्द और पतित

थे गिरे हुए पञ्चरात्र रथ घोड़े और हाथियोंसे ॥ ८२ ॥ रणभूमि शोभाको प्राप्त हुई; घोड़े हस्तिबोंके मरनेसे देवता और दैत्योंका युद्ध बराबर शोभाको प्राप्त हुआ; तब महाअसुरपालोंसे सहस्रों दैत्योंको साथ ले ॥ ८३ ॥ गदा और सुगर्जनोंको धारण कर वायुदेवताको घेरता हुआ ॥ ८४ ॥ और वे दानवोंमें अष्ट एक लाख दैत्य पवनदेवताको हनन करते हुए, और तिन दैत्योंसे ताड़ना किया हुआ पवन अंकुशसे ताड़ना किये हस्तीकी समान शोभित हुआ ॥ ८५ ॥ वह महाबाहु पवन आठ सौ दैत्योंको मार मार्ग कर बड़ा शब्द करते हुए ॥ ८६ ॥ वह मार्ग अबतकनी दीखता है; उस वायुपंथा नाम मार्गको विमर्दों देवदैत्यानां सदृशः कर्मणा बभौ ॥ अथ दैत्यसद्वत्त्रेण पौलोमेन महासुरः ॥ ८७ ॥ संवृतः पवनः श्रीमङ्गदामुशला-
णिना ॥ ८८ ॥ ते जघ्नुः शतसाहस्राः पवनं दानवोत्तमाः ॥ तैर्वध्यमानः स बभौ समन्तादपितेः शरेः ॥ ८९ ॥ इत्वाष्टौ तत्र योधानां शतानि पवनः प्रभुः ॥ कृत्वा मार्गं सुरश्रेष्ठो ननाद सुमहारथः ॥ ९० ॥ अद्यापि च सुविस्तीर्णः पन्थाः संदृश्यते दिवि ॥ नाम्ना वायुरथो नाम सिद्धाः पर्यन्ति तं दिवि ॥ ९१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ हयग्रीवस्तु दितिजः पूषाणं प्रति वीर्यवान् ॥ ननाद सुमहानादः सिंहनादं महारथः ॥ ९२ ॥ विस्फार्य सुमहच्चापं हेमजालविभूषितम् ॥ पूषाणं दितिजोऽपश्यत्कुब्जो घोरं चक्षुषा ॥ ९३ ॥ भुजाभ्यामाददानस्य संदधानस्य वै शरान् ॥ मुञ्चतः कर्षतो वापि ददृशुस्तत्र नान्तरम् ॥ ९४ ॥ अग्निचक्रोपमं दीप्तं मण्डलीकृत-
कार्मुकम् ॥ तदासीद्दानवेन्द्रस्य सव्यदक्षिणमस्यतः ॥ ९५ ॥ रुक्मपुंखेस्ततस्तस्य चापमुक्तेः शितेः शरेः ॥ प्राञ्छयन्त शिला-
घोतेर्दिशः सूर्यस्य च प्रभाः ॥ ९६ ॥

सिद्धजनही सदा देखते हैं ॥ ८७ ॥ वैशंपायनजी बोले; हे राजन् ! महाबली हयग्रीवदैत्य पूषाको प्राप्त हो सिंहकी समान नाद करने लगा ॥ ८८ ॥ सुवर्णके जालोंसे भूषित धनुषको टंकोर और क्रोधित हो घोरनेत्रोंसे पूषाको देखने लगा ॥ ८९ ॥ और बाणोंको भुजाओंसे छेता हुआ संघाता हुआ छोड़ता हुआ सँचता हुआ ऐसा कर्म करने लगा कि हयग्रीवके बीचमें अंतर नहीं दीखता था ॥ ९० ॥ और दाहिने बाँये हाथसे फेंके हुए बाणोंका ऐसा चक्र हो गया कि जैसे घुमाया हुआ अग्निका चक्र हो ॥ ९१ ॥ सुवर्णके पंखोंवाले शिलाने पेंनाये हुए धनुषसे छोड़े हुए बाणोंसे सूर्य

और दिशाओंको आच्छादन कर दिया ॥ ९२ ॥ तब सुवर्णके पंखोंवाले और पैनी धारोंवाले ऐसे बाणोंके ॥ ९३ ॥ आकाशमें उन आकाशचारि-
 योंके बहुत समूह दीखने लगे, और पर्वतके शिखरकी तुल्य आकारवाले ध धसे छोटे हुए भ्रेष्ठ बाण ॥ ९४ ॥ और पंक्तिरूप हुए आकाशमें जाते
 हुए प्रकाश करने लगे कि जैसे आकाशमें जाते हुए कौंच गृध्रपक्षसे युक्त शिलापै पैनाये हुए सुवर्णसे भूषित ॥ ९५ ॥ और महावेगवाले प्रशस्त बाण
 हयग्रीवने छोड़े, और धनुषके बलसे घुमाये हुए सुवर्णसे भूषित ॥ ९६ ॥ और बहुत पैने बाण पूषाके शरीरको सब ओरसे आच्छादन कर सुवर्णसे
 ततः कनकपुंसानां शराणां नतपर्वणाम् ॥ ९७ ॥ नभश्चराणां नभसि दृश्यन्ते बहवो ब्रजाः ॥ गिरिकूटनिभाच्चापात्प्रभवन्तः
 शरोत्तमाः ॥ ९८ ॥ श्रेणीभूताः प्रकाशन्ते यान्तः श्वेना इषाम्बरे ॥ गृध्रपत्राच्छिन्नाधोतान्कार्तस्वरविभूषितान् ॥ ९९ ॥ महा-
 वेगान्प्रशस्ताग्रान्मुमोच दितिजः शरान् ॥ ततश्चपबलोद्भूताः शातकुम्भविभूषिताः ॥ १०० ॥ देहे समवकीर्यन्त पूष्णः सन्निहिताः
 शराः ॥ ते व्योम्नि रुक्मविकृताः संप्रकाशन्त सर्वशः ॥ १०१ ॥ स्वद्योता इव घर्मान्ते स्वे चरन्तः समन्ततः ॥ शिलाधोताः प्रसन्नाग्राः
 पूषाणं सिषिचुः शराः ॥ १०२ ॥ पर्वतं वारिधाराभिर्यथा प्रावृषि तोयदाः ॥ ततः प्रच्छादयामास पूषाणं शरवृष्टिभिः ॥ १०३ ॥ पर्वतं
 वारिधाराभिश्चादयन्निव तोयदः ॥ ततः स पूष्णो देवस्य बलं वीर्यं पराक्रमम् ॥ १०४ ॥ व्यवसायं च सत्त्वं च पश्यन्ति त्रिदशा-
 द्रुतम् ॥ तां समुद्रादिवोद्भूतां शरवृष्टिं समुत्थिताम् ॥ १०५ ॥ नमश्चिन्तयत्तदा पूषा देत्यं चाभ्यद्रवद्रणे ॥ हेमपृष्ठं महानादं पूष्ण
 आसीन्महाधनुः ॥ २ ॥

जटित हुए वे बाण आकाशमें ऐसे प्रकाशित हुए ॥ ९७ ॥ कि जैसे वर्षाकालमें आकाशमें जाते हुए सहस्रों पटबीजने, शिलापै पैनाये हुए और पैने
 अग्रभागोंवाले ऐसे बाण पूषाको बंधन करने लगे ॥ ९८ ॥ जैसे वर्षाकालीन बादल पर्वतको आच्छादन करते हैं, इस प्रकार हयग्रीवने बाणोंकी
 वर्षासे पूषाको आच्छादन कर दिया ॥ ९९ ॥ जलधारासे पर्वतकी समान पूषाको आच्छादन किया तब वीर्य पराक्रम ॥ १०० ॥
 और परिश्रम श्रुताको सम्पूर्ण देवता आभ्यर्च्य देखने लगे, हयग्रीवके धनुषसे होती हुई शरोंकी वर्षाको ॥ १०१ ॥ पूषा कुछभी चिंता न करता

हुआ क्रोधसे हयग्रीवके सामने धावमान हुआ; सुवर्णकी पृष्ठको बड़े शब्द करनेवाले पूषाका धनुष था ॥ २ ॥ उस इन्द्रके वज्रकी समान मंडलाकार धनुषको पूषा ग्रहण कर बाणोंसे आकाशको आच्छादन करने लगा ॥ ३ ॥ पूषाके धनुषसे सुवर्णके पंखोंवाले बाणोंकी आकाशमें विस्ताररूप माला हो गई ॥ ४ ॥ जब पूषाके छोटे हुए बाणोंकी महाघोर वर्षा प्रारंभ हुई तब सब ओर आकाशमें बाणजाल विस्तारित हो गये ॥ ५ ॥ पीछे उन शरोंके जालोंको हयग्रीवने तीक्ष्ण बाणसे नष्ट किया, तब सुवर्णके पंखोंवाले और कंकणके वर्णकी समान वस्त्रोंवाले ॥ ६ ॥

विकृतं मण्डलीभूतं शक्राक्षनिमिवापरम् ॥ ततः शराः प्रादुरासन्पूरयन्त इवाम्बरम् ॥ ३ ॥ सुवर्णपुंखाः पूष्णस्ते प्रभवन्तः शरा-
सनात् ॥ मालेव रुक्मपुंखानां वितता व्योम्नि पत्रिणाम् ॥ ४ ॥ प्रादुरासीन्महाघोरा बृहती पूषकार्मुकात् ॥ ततो व्योम्नि विभक्तानि
शरजालानि सर्वशः ॥ ५ ॥ आहतानि व्यक्षीर्यन्त शरैः सन्नतपर्वभिः ॥ ततः कनकपुङ्खानां छिन्नानां कङ्कवाससाम् ॥ ६ ॥ पततां
पान्यमानानां स्वमासीञ्चावृतं रणं ॥ पूषा प्रापूरयद्बाणेर्हयग्रीवं शिलाशितैः ॥ ७ ॥ नामाङ्कुरकंसदृशेर्दिव्यहेमपरिष्कृतैः ॥ ततो
व्यसृजदुग्धाणि शरजालानि दानवः ॥ ८ ॥ अमर्षा बलवान् क्रुद्धो दिधक्षन्निव पावकः ॥ पूष्णस्त्वाजौ ध्वजं चैव पताकां धनुरेव
च ॥ ९ ॥ रश्मीन् योक्राणि चाश्वानां हयग्रीवो रणेऽच्छिनत् ॥ अथाप्यश्वान्पुनर्हत्वा चतुर्भिः सायकोत्तमैः ॥ ११० ॥ सारार्थं
सुमहातेजारथोपस्थादपातयत् ॥ कृतस्तु विरथः पूषा हयग्रीवेण संयुगे ॥ ११ ॥

गिरते हुए हयग्रीवके बाणोंसे आकाश आच्छादन हो गया और शिलापै पैनाये हुए ॥ ७ ॥ अपने नामसे अंकित और सूर्यके तेजकी समान तेजवाले और सुवर्णसे जटित बाणोंसे पूषा हयग्रीवपै फिर वर्षा करने लगा, तब हयग्रीवभी उग्र शरोंकी वर्षा करने लगा ॥ ८ ॥ महाक्रोधी बड़े दैत्य अग्निकी समान जलता हुआ संग्रामम पूषाके ध्वजा पताका और धनुष ॥ ९ ॥ रथी सृत घोड़ोंको नष्ट कर दिया और चार बाणोंसे फिर घोड़ोंको मार ॥ ११० ॥ उस महातेजस्वीने रथसे फिर सृतको पृथ्वीमें गिरा दिया, जब हयग्रीवने शुद्धमें पूषाको विजय कर दिया ॥ ११ ॥

तब पूषा जयतीत हो उसके निकटसे चला गया; और मृत्बुके मुखसे निकलेकी समान इन्द्रके रथके समीप चला गया ॥ १२ ॥ तब शंबर और भगका फिर घोर और बड़ा दाहण अद्भुत युद्ध होने लगा ॥ १३ ॥ सात हाथ प्रमाण बारह बिलस्त चौड़ा इन्द्रके वज्रकी तुल्य शब्दवाले दृढ़ ज्यावाले, बहुत भारको सहनेवाले धनुषको धारण कर रथके धुरेकी समान बाणोंको युद्धमें छोड़ने लगा ॥ १४ ॥ क्रोधसे रक्त नेत्र किये सम्पूर्ण योगके जाननेवाले शंबर दैत्यने देवताओंकी सेना विनाशित कर दी ॥ १५ ॥ और वह सेना समुद्रकी तरंगोंकी समान कंपित हुई तब बुरे नेत्रोंवाले मयानक रूप शंबरको आता

पूषा तस्य रथाभ्यास्तास ययो तेन वै जितः ॥ गतः शक्ररथाभ्याशं मुक्तो मृत्युमुखादिव ॥ १२ ॥ तत्राद्भुतमिदं भूयो युद्धं वर्तत दारुणम् ॥ कृतप्रतिकृतं घोरं शम्बरस्य भगस्य च ॥ १३ ॥ सप्तकिण्डुपरीणाहं द्वादशारत्निकार्मुकम् ॥ चापं चाक्षनिनिर्घोषं दृढज्यं भारसाधनम् ॥ विक्षिप्तशस्त्रदृष्टान्वयमृजत्सायकान्वहन् ॥ १४ ॥ क्रोधसंरक्तनयनः शम्बरः सर्वयोगवित् ॥ तेन वित्रास्थमानानि देवसैन्यानि सर्वशः ॥ १५ ॥ समकम्पन्त भीतानि सिन्धोरिव महोर्मयः ॥ तमापतन्तं संप्रेक्ष्य विरूपाक्षं विभीषणम् ॥ १६ ॥ भगः प्रस्फुरमाणोष्ठस्त्वरमाणो व्यदारयत् ॥ ततो भगो महेष्वासो दिव्यं विस्फारयन् धनुः ॥ १७ ॥ अवाकिन्दैत्यगणाञ्छरजालेन छादयन् ॥ तमभ्यगाद्भगो दैत्यं तूर्णमस्यन्तमन्तिकात् ॥ १८ ॥ मातङ्गमिव मातङ्गो वृषं प्रति वृषो यथा ॥ तौ प्रवृक्ष महावेगो धनुषी भारसाधने ॥ १९ ॥ प्राच्छादयेतामन्योन्यं तक्षमाणौ रणे शरैः ॥ तयोः सुनुमुलं युद्धमासीद्वोरं महारणे ॥ १२० ॥ भगशम्बरयोर्भीममप्रमेयं महात्मनोः ॥ अथ पूर्णायतोत्सृष्टैः शरैः सन्नतपर्वभिः ॥ २१ ॥

देख ॥ १६ ॥ क्रोधसे होठोंको कंपावमान करते भगदेवताने शीघ्रतासे शंबर दैत्यको निवारण किया, तब बड़े धनुषवाले भगदेव दिव्यधनुषको टंको-रता हुआ ॥ १७ ॥ धनुषकी ज्याके खँचनेसे सम्पूर्ण दिशाओंको शब्दावमान करता हुआ दैत्योंपर बाणजाल विस्तार करने लगा, शंबर दैत्यके सम्मुख भग शीघ्रतासे चला ॥ १८ ॥ जैसे हस्तीके प्रति हस्ती, और वृषके प्रति वृष जाता हो; और महावेगशाले वे दोनों महामारी धनुषोंको ग्रहण कर ॥ १९ ॥ परस्पर आच्छादन करते हुए बाणोंसे छेदन करने लगे, तब भग और शंबरका तुमुल और घोर युद्ध होने लगा ॥ १२० ॥ यह युद्ध महा-

भयंकर और अप्रमय हुआ, और बड़े पैने धारवाले और बड़े वेगसे छोटे हुए ऐसे बाणोंसे ॥ २१ ॥ परस्परमें हनन करने लगे, दोनोंके वस्त्र
टूट गये सर्वांग विरुद्ध होनेसे रुधिरसे पूर्ण हो गये ॥ २२ ॥ भेदन किये अंगोंवाले रथोंमें बैठे हुए मदोन्मत्त हुए पैने बाणोंसे परस्परमें छेदन करते हुए
दोनोंके परस्परमें देखनेको समर्थ नहीं हुए ॥ २३ ॥ और क्रोधसे लाल २ नेत्र किये कालधर्मराज की तुल्य शीघ्रतासे शंबर दैत्यने बाणोंसे भगको भेदन
किया ॥ २४ ॥ कि जैसे महान् सर्पोंको गरुड आकाशमें पकड़ता हो, शंबरके प्रेरित ॥ २५ ॥ उन बाणोंको अधिकी समान प्रकाशमान वेगवाले और सूर्यकी

व्यदारयेतामन्योन्यं क्राण्यं निर्भय चर्मणी ॥ तो तु विकृतसर्वाङ्गो रुधिरण समुक्षितो ॥ २२ ॥ संप्रेक्षमाणो राघिनावुभो परमदुर्मदो ॥
तक्षमाणो सितैर्बाणैर्न वीक्षितुमशक्नुताम् ॥ २३ ॥ अथ विव्याध समरे त्वरमाणोऽसुरो भगम् ॥ नाराचैः क्रोधताम्राक्षः काला-
न्तकयमोपमः ॥ २४ ॥ गरुत्मानिव चाकाशे पोथयानो महोरगम् ॥ नाराचा न्यपतन्देहे, तूर्णं शम्बरचोदिताः ॥ २५ ॥ तान-
न्तरिक्षे नाराचान् भगश्चिच्छेद पत्रिभिः ॥ ज्वलन्तमचलप्रेष्य वैश्वानरसमप्रभम् ॥ २६ ॥ ततो भगं चतुःषष्ट्या विव्याधासुर-
सत्तमः ॥ शिलीमुखैर्महावेगैर्जाम्बूनदविभूषितैः ॥ २७ ॥ तदा तत्सुचिरं कालं युद्धं सममिवाभवत् ॥ शम्बरस्य च मायाभिर्ना-
दृश्यत ततोऽम्बस्म ॥ २८ ॥ दोभ्यां चिक्षिपतश्चापं रणे विष्टभ्य तिष्ठतः ॥ श्रूयते धनुषः शब्दो विस्फूर्जितमिवाशनेः ॥ २९ ॥
स भगस्य इयान्दत्त्वा सारथिं च महादवे ॥ अभ्यवर्षच्छेतेरेन पर्जन्य इव वृष्टिमान् ॥ १३० ॥ न तस्यासिदिनिभिन्नं गात्रे द्रव्यकुलम-
न्तरम् ॥ भगदेवस्य दैत्येन शम्बरेणास्त्रघातिना ॥ ३१ ॥

सम कान्तिवाले देख भगदेवताने अपने बाणोंसे उनको आकाशमें छेदन कर दिया ॥ २६ ॥ तब अत्यन्त तीक्ष्ण सुन्दर तीक्ष्ण मुखोंवाले अत्यन्त वेगवाले ऐसे
चौंसठ बाणोंसे शंबर दैत्यने भगको वेधन किया ॥ २७ ॥ तब बहुत कालपर्यन्त मायावी शंबर और भगदेवता दोनोंका बराबर युद्ध होता रहा जिससे
आकाश नहीं दीप्तता था ॥ २८ ॥ और भुजाओंसे धनुषको धारण करता हुआ रणमें स्थित हुआ, वज्र की तुल्य धनुषोंका शब्द सुना जाता था ॥ २९ ॥
शंबर दैत्य भगके घोड़े और सारथीको मारकर मेघकी समान इनपर वर्षा करने लगा ॥ १३० ॥ अस्त्रवाती शम्बर दैत्यके बाणोंसे सूर्यरूपी भगदेवताके

शरीरमें बिना छिद्रके दो अंगुलीकाभी अंतर नहीं रहा ॥ ३१ ॥ महाबली मायाधारी शंबर दैत्यके दिग्ग अत्रको अपने दिग्ग अक्षसे धारण करता हुआ, तब दैत्य मायायुद्धसे अन्तर्हित हुआ ॥ ३२ ॥ तब अपनी माया और लावतासे जगदेवताको वंचित किया; भगने उसके रथ और घोड़ेको बाणोंसे आच्छादन कर दिया ॥ ३३ ॥ एक सहस्र मायाओंका धारनेवाला कान्तिमान् देवताओंकी सेनाको भेदन करनेवाला शंबर दैत्य सौ बाणोंसे आच्छादित दीखने लगा ॥ ३४ ॥ और वह महाबली शंबर फिर प्राणोंसे रहित हुआ सा पृथ्वीमें पड़ा हुआ दीखने लगा, और फिर सौ पर्वतोंकी तुल्य युद्ध करता दीखने लगा ॥ ३५ ॥ फिर वह बली दिग्गज हस्तीपर स्थित हुआ दीखने लगा फिर प्रादेशमात्र रूप धारण कर फिर पर्वतकी समान दीखने दैत्यस्य चोद्धतं दिव्यमस्त्रमस्त्रेण धारयन् ॥ मायायुद्धेन मायावी शम्बरः ॥ ३२ ॥ अवश्ययद्गं दैत्यो मायाभिर्ला-
 धवेन च ॥ भगस्तस्य रथं सार्धं शरवर्षैर्वाकिरत् ॥ ३३ ॥ सहस्रमायो युतिमान्देवसेनां निषूदयन् ॥ अदृश्यत शरैश्छत्रः
 शम्बरः शतशो रणे ॥ ३४ ॥ अदृश्यन्पतितो भूमौ गतचेता ह्वासुरः ॥ अथ स्म युच्यते भूयः शतधा शैलसन्निभः ॥ ३५ ॥
 दिशागजेन्द्रमारुढो दृश्यते स पुनर्बली ॥ प्रादेशमात्रश्च पुनः पुनर्भवति शैलवत् ॥ ३६ ॥ महामेघ इव श्रीमान् तिर्यगूर्ध्वं च सोऽ-
 भवत् ॥ पुनः कृत्वा विरूपाणि विकृतानि च सर्वशः ॥ ३७ ॥ सर्वा भीषयते सेनां देवानां भीमदर्शनः ॥ ते भीताः प्रपलायन्ते
 सिद्धं दृष्ट्वा मृगा यथा ॥ ततः सोऽन्यं वरं देहं कृत्वा प्रांशुतरं पुनः ॥ ३८ ॥ गच्छन्त्यूर्ध्वगतिं घोरो दिशः शब्देन पूरयन् ॥ नभ-
 स्तलगत्तश्चापि वर्षते वासवो यथा ॥ ३९ ॥ संवर्त्तकाम्बुदप्रख्यः पूरयन्पृथिवीतलम् ॥ संवर्त्तकोऽनलश्चैव भूत्वा भीमपराक्रमः ॥ १४० ॥
 लगा ॥ ३६ ॥ और महामेघका रूप धारण कर कभी ऊपर और कभी तिरछा दीखने लगा; और फिर घोर विरूप और विकृत भयानक रूपको धारण कर ॥ ३७ ॥ और संपूर्ण देवताओंकी सेनाको डराने लगा और देवता उसके जयसे दौड़ने लगे कि जैसे सिंहसे मृग और फिर वह सूक्ष्म नवीन देह धारण कर ॥ ३८ ॥ दिशाओंको शब्दसे पूर्ण करता हुआ ऊंचा बढ़ने लगा, और आकाशमें प्राप्त हो और प्रलयकालके संवर्त्तकमेघकी तुल्य भूमिको जलसे पूर्ण करता हुआ ॥ ३९ ॥ इन्द्रकी तुल्य वर्षने लगा; और पराक्रमवाला सौ आवतोंवाले सौ शिखाओंवाले फिर संवर्त्तकअग्नि हो ॥ १४० ॥

फिर सम्पूर्ण देवताओंको दहन करने लगा; फिर सौ मांगोंवाला और सौ गुफाओंवाला दो घड़ीमें पर्वत दीखने लगा ॥ ४१ ॥ और गिरता हुआ आकाशमें थीमता हुआ सौ शृंगोंके पर्वतकी समान दीखने लगा; जिससे अदित्य और साध्य और विश्वेदेवा और देवताओंके ॥ ४२ ॥ फेंके हुए अश्वोंको प्रसन्ना हुआ और रणमें युद्ध करता हुआ और अपने रथसहित ॥ ४३ ॥ गन्धर्वनगरकी समान उसी जगह अंतर्धान हो गया, तब देवता भयभीत हो भीमपराक्रुही होकर उसे देखने लगे ॥ ४४ ॥ सहस्र मायाओंको धारण करनेवाले शंबर दैत्यको देखने लगे, शंबरके युद्धमें स्थित भगदेवताभी

शतवर्त्मा शतशिखो ददाह च पुनः सुरान् ॥ सुहृताच्च महाशैलः शतशीर्षा शतोदरः ॥ ४१ ॥ अदृश्यत दिवस्तम्भः शतशृङ्ग इवाचलः ॥ येऽन्ये दैत्याश्च साध्याश्च ये च विश्वे च देवताः ॥ ४२ ॥ क्षिपन्त्यस्त्राणि दिव्यानि तानि सोऽग्रसत्तासुरः ॥ युद्धयमानश्च समरे सरथः सोऽसुरोत्तमः ॥ ४३ ॥ गन्धर्वनगराकारस्तत्रैवान्तरधीयत ॥ ते भीताः समुदीक्षन्त त्रिदशा भीमविक्रमाः ॥ ४४ ॥ सहस्रमायं समरे शम्बरं चित्रयोधिनम् ॥ स भगो भयसंत्रस्तो दानवेन्द्रस्य संपुगे ॥ ४५ ॥ रथं त्यक्त्वा महाभागो महेन्द्रं शरणं गतः ॥ पराजित्य तु तं देवं दानवेन्द्रः प्रतापवान् ॥ ४६ ॥ गतो यत्र महातेजा जातवेदा महाप्रभः ॥ स वह्निर्वाभिरुग्राभिः क्रुद्धस्तर्जयते बली ॥ भवाम्येष हि ते मृत्युरित्युक्त्वान्तरधीयत ॥ ४७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतस्मिन्नन्तरे भूत्वा ब्राह्मणेन्द्रो महाबलः ॥ जघान सोमः शीतास्त्रो दानवानां चमूं रणे ॥ ४८ ॥ कैलासशिखराकारो द्युतिमद्भिर्गणैर्वृतः ॥ अवधीदानवान् दृष्ट्वा दण्डपाणिरिवान्तकः ॥ ४९ ॥

भयभीत हो ॥ ४५ ॥ रथ छोड़ इन्द्रकी शरणमें गया, और प्रतापी शंबर दैत्य युद्धमें भगदेवताको जीत ॥ ४६ ॥ प्रकाश करता हुआ अग्निदेवताके सम्मुख गया; और अग्निदेवताको मैं तेरा मारनेवाला हूँ ऐसे कठोर वचनोंसे तर्जनी कर अंतर्धान हो गया ॥ ४७ ॥ वैशम्पायन बोले, इसी अन्तरमें ब्राह्मणोंका राजा महाबली शीत भस्मोंवाला चंद्रमा दैत्योंकी सेनाको हनन करने लगा ॥ ४८ ॥ कैलासके शिखरकी तुल्य आकारवाले महाकांतिवाले ग्रहोंसे युक्त चंद्रमा दानवोंको दंडपाणि कालभयुकी समान हनन करने लगा ॥ ४९ ॥

वह प्रभु रथोंको तोड़ते और घोड़ोंको मारते दैत्योंमें प्रलयकालमें बलवन्त कालकी समान विचरने लगे ॥ १५० ॥ और बड़े वेगसे रथोंको तोड़ते हुए चंद्रमा दैत्योंको ऐसे दण्ड करने लगे जैसे वनको दावाग्रि जलाती है ॥ ५१ ॥ राधियोंसे रथी हाथियोंसे हाथी घुड़सवारोंसे घुड़सवार पैदलोंसे पैदलोंको मारकर पृथ्वीमें गिराने लगे ॥ ५२ ॥ सम्पूर्ण दानवोंकी सेनाको शीतसे दहन करने लगे कि जैसे वृक्षोंको वायु नष्ट करता है, महातेजस्वी चंद्रमा दानवोंकी सेनाको ऐसे नष्ट करने लगा ॥ ५३ ॥ और चंद्रमाका अस्र शत्रुओंके रुधिरसे ऐसे भीज गया कि जैसे क्रोधसे पशुओंको मारता हुआ महादे-

पोथयद्रथवृन्दानि वाजित्वन्दानि वै प्रभुः ॥ दैत्येषु विचरन्भ्रमीमान्युगान्ते कालवद्वली ॥ १५० ॥ सोऽमर्षाद्रथजालानि उरुवेगेन चन्द्रमाः ॥ वदाह दानवान्तर्वाग्दावाग्रिरिव चोदितः ॥ ५१ ॥ मृदव्रयेभ्यो राधिनो गजेभ्यो गजयोधिनः ॥ साधिनश्चाश्वपृष्ठेभ्यो भूमौ चापि पदातिनः ॥ ५२ ॥ शीतेन व्यधमत्सर्वांन्वायुर्वृक्षानिवोजसा ॥ चन्द्रमाः सुमहातेजा दानवानां महाचमूम् ॥ ५३ ॥ तदस्त्रमभक्तस्य प्रदिग्धं शत्रुशोणितैः ॥ पिनाकमिव रुद्रस्य क्रुद्धस्याभिघ्नतः पशून् ॥ ५४ ॥ युगान्तकोपमः श्रीमान् दैत्येषु व्यचरद्वली ॥ आचार्यमहतीं सेनां प्राद्रवन्ती पुनः पुनः ॥ ५५ ॥ चन्द्रं मृत्युमिवायान्तं दृष्ट्वा योधा विसिष्मियुः ॥ यतो यतः प्रक्षिपति शिशिरास्त्रं तमोनुदः ॥ ५६ ॥ ततस्ततो व्यशीर्यन्त दैत्यसैन्यानि संयुगे ॥ व्यदारयत्स सैन्यानि स्वबलेनाभिसंवृतः ॥ ५७ ॥ असमानमनीकानि व्यादितास्यमिवान्तकम् ॥ तं तथा भीमकर्माणं गृहीतास्त्रं महाहवे ॥ ५८ ॥

वका अस्र हो ॥ ५४ ॥ और बार २ पलायन की हुई देवताओंकी सेनाको निवारण कर कालप्रभुकी तुल्य महाबली चंद्रमा दैत्योंकी सेनामें विचरने लगा ॥ ५५ ॥ मृत्युकी नाई आता हुआ चंद्रमाको देख योधा विस्मयको प्राप्त हो गये और अंधकारको दूर करनेवाला शिशिरास्त्रको चंद्रमा जहां २ प्रेरणा करने लगा ॥ ५६ ॥ तहां २ सम्पूर्ण दैत्योंकी सेना नष्ट होने लगी; इस प्रकार अपनी सेनासे युक्त हुआ दैत्योंकी सेनाको विदारण करने लगा ॥ ५७ ॥ सुषको फाड़े कालकी नाई दैत्योंकी सेनाको ग्रस्ते हुए और भयानक कर्म करते हुए अस्त्रोंको धारण किये महायुद्धमें ॥ ५८ ॥

आते हुए चंद्रमाको देख वे दैत्योंमें चंद्रमा और भास्कररूप तालवृक्षके प्रमाणमात्र धनुषोंको आकर्षण करते हुए ॥ ५९ ॥ महाबलीदे योद्धा बाणोंसे चंद्रमाको वर्षा करते हुए महामेवकी समान आच्छादन करते और सुरासुरोंके धनुष्योंको खेंवनेसे ॥ ६० ॥ दशों दिशामें बड़ा शब्द हुआ, हस्तियोंके गर्जने और घोड़ोंके हँसनेसे ॥ ६१ ॥ भेरीशंख मृदंगके बजनेसे आकाशमें महादुसुख शब्द हुआ; युद्ध तथा जय और यशकी इच्छा करते हुए योधा ॥ ६२ ॥ परस्पर गर्जने लगे जैसे गोशालाओंमें गोवृष; और पैने बाणोंसे छेदन किए हुए दशों सेनाओंके शिरोंकी ॥ ६३ ॥

दृष्ट्वा शशांकमायान्तं दैत्याभं चन्द्रभास्करो ॥ तालमात्राणि चापानि कर्षमाणो महाबलो ॥ ५९ ॥ छादयेतां शरैश्चन्द्रं वृष्टि-
मन्ताविबाम्बुदो ॥ अथ विस्फार्यमाणानां कार्मुकाणां सुरासुरैः ॥ ६० ॥ अभवत्सुमहाशब्दो दिशः सत्रादयान्निव ॥ विन-
दद्भिर्महानागैर्दपमाणैश्च वाजिभिः ॥ ६१ ॥ भेरीशंखनिनादैश्च तुमुलं सर्वतोऽभवत् ॥ युयुत्सवस्ते संरब्धा जगृद्वा यश-
स्विनः ॥ ६२ ॥ अन्योन्यमभिगर्जन्तो गोष्ठेष्विव महावृषाः ॥ शिरसां पात्यमानानां समरे निक्षितैः शरैः ॥ ६३ ॥ अश्मवृष्टिरि-
वाकाशे ह्यभवत्सेनयोस्तयोः ॥ कुण्डलोष्णीषधारीणि जातरूपस्रजांसि च ॥ ६४ ॥ पतितानि स्म दृश्यन्ते शिरांसि रणमूर्धनि ॥
विशिखैर्मथितैर्गात्रैर्बाहुभिश्च सकार्मुकैः ॥ ६५ ॥ सहस्राभरणैश्चान्यैर्विचित्रैरुधिराक्षितैः ॥ कवचैरावृतेर्गात्रैरुहभिश्चन्दनो-
क्षितैः ॥ ६६ ॥ मुखैश्च चन्द्रसंकाशैस्तत्कुण्डलभूषणैः ॥ गजशानिमनुष्याणां सर्वगात्रैः समन्ततः ॥ ६७ ॥ आसीत्सर्वा
समाकीर्णा मुहूर्तेन वसुंधरा ॥ चापमेवाश्च विपुलाः शस्त्रविद्युत्प्रकाशिनः ॥ वाहनानां च निर्घोषः स्तनयितुसमोऽभवत् ॥ ६८ ॥

आकाशमें पत्थरकी समान वर्षा होने लगी; और कुंडल और पगडियोंको धारण करे हुए सुवर्णकी मालासे युक्त ॥ ६४ ॥ शिर रणमें पड़े हुए शीखने लगे; और बाणोंसे छेदित शरीर और धनुषोंसे युक्त भुजा ॥ ६५ ॥ और रुधिरमें भीगे हुए सहस्रों भूषण और कवचोंसे युक्त शरीर और जांघ तथा चंदनसे प्रकाशमान ॥ ६६ ॥ सुवर्णके कुंडलसे शोभित मुखोंसे और हस्ती मनुष्य घोड़ोंके शरीरोंसे ॥ ६७ ॥ भूमि एक मुहूर्तमें भरपूर हो

गर्भ, धनुषरूपी घटाको शबलोत्पत्ती बिजली और बाहनोंका शब्द मेघकी समान होने लगा ॥ ६८ ॥ इस प्रकार युद्धमें देवता और असुरोंका वह रुधिरको बहानेवाला कठिन संग्राम होने लगा ॥ १६९ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पंचपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५५ ॥ वैशंपायन बोले; तुमुल और रोमहर्षोंको करनेवाले मयानक महायुद्धमें देवता और दानव क्रोध करते हुए बाणोंकी वर्षा करने लगे ॥ १ ॥ सवार हत होनेसे हस्ती बाणोंसे पीड़ित हुए बड़े शब्द करने तथा घोड़े दशों दिशाओंमें भागने लगे ॥ २ ॥ देवता और दानवोंके हाथों घोड़े उस युद्धमें बाणोंकी वर्षासे पीड़ित संप्रहारस्तुमुलः कटुकः शोणितोदकः ॥ प्रावर्तत सुराणां च दानवानां च संयुगे ॥ १६९ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे पञ्चपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५५ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ तस्मिन्महाहवे रोद्रे तुमुले लोमहर्षणे ॥ ववर्षुः शरतर्षाणि संख्या देवदानवाः ॥ १ ॥ व्याक्रोशन्त गजास्तत्र शरघातप्रपीडिताः ॥ अश्वाश्च पर्यधावन्त इतारोहा दिशो दश ॥ २ ॥ उत्पत्य निपतन्त्यन्ये शरवर्षप्रपीडिताः ॥ देवानां दानवानां च गजाश्वरायिनां रणे ॥ ३ ॥ समरे तत्र शूराणामन्योन्यमभिधावताम् ॥ धनुषां तलशब्देन न प्राज्ञायत किंचन ॥ ४ ॥ शरशक्तिगदाभिस्ते खड्गैश्चामिततेजसः ॥ निजघ्नुर्महतीं सेनामन्योन्यस्य परंतप ॥ ५ ॥ बाहुनामुत्तमाङ्गानां कार्मुकाणां च संयुगे ॥ राशयस्तत्र दृश्यन्ते देवदैत्यसमागमे ॥ ६ ॥ अश्वानां कुञ्जराणां च रथानां च वरूथिनाम् ॥ नान्तं समभिगच्छन्ति निहतानां सुरासुरैः ॥ ७ ॥ गदाभिरसिभिः प्राप्तेर्भल्लैः सन्नतपर्वभिः ॥ योधास्तत्राभ्यहन्यन्त हस्त्यश्वं चामितं बहुः ॥ ८ ॥

हुए ऊपरको उछल २ कर पृथ्वीमें गिरते थे ॥ ३ ॥ रथपै चढ़े हुए देवता और दानवोंके ज्याके शब्दोंसे रणमें कोई जाना नहीं जाता था ॥ ४ ॥ बाण शक्ति गदा और खड्गोंसे अत्यन्त तेजवाले शूर वीर दोनों सेनाओंको हनन करने लगे ॥ ५ ॥ बहुतोंके भुजा और उचम अंग तथा धनुषोंके समूह पड़े हुए देवता और दानवोंके युद्धमें दीखने लगे ॥ ६ ॥ देवता दैत्योंके बाणोंसे मरे हुए घोड़ा हस्ती और रथोंका अंत नहीं मिला था ॥ ७ ॥ गदा असि प्रास बाणोंसे योधा औरभी बहुतसे हस्ती और घोड़ोंको मारने लगे ॥ ८ ॥

केशरूपी शैवाल और वृषवाली, बड़े बेगके तरंगोंवाली सनेहोंके मध्यमें रुधिरकी घोररूप नदी बहने लगी ॥ ९ ॥ और रणमें दानवोंसे हनन किये हुए देवताओंका महा हाहाकार शब्द होने लगा ॥ १० ॥ वैशंपायन बोले, भयको देनेवाला महाघोररूप विकृत रौद्र युद्ध देवताओंका दैत्योंके संग होने लगा ॥ ११ ॥ लाल नेत्र किये परम धनुषको धारण किये विष्वक्सेन नामवाले साध्यदेवताको रणमें विरोचनने हनन किया ॥ १२ ॥ तब विरोचनको आता देख देवताओंसे आवृत्त महाबली विष्वक्सेनने तीन बाण धनुषपर चढाय उसकी छातीमें मारे ॥ १३ ॥ और विष्वक्सेनके बाणोंसे अंकुशसे

प्रावर्तत नदी घोरा शोणितोघा तरङ्गिणी ॥ तदा मध्ये तु सेन्यानां केशशैवलशादृल ॥ ९ ॥ हाहाकारो महाशब्दो योधानामभव-
त्तदा ॥ दानवेर्ह्यमानानां त्रिदशानां महारणे ॥ १० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तेषां तदभवद्युद्धं देवानामसुरैः सह ॥ विभीषणं महा-
राट्रं विकृतं भूमिदर्शनम् ॥ ११ ॥ विरोचनस्तु तत्रैव विष्वक्सेनं महाहवे ॥ जघान रुधिराभाक्ष साध्यं परमधन्विनम् ॥ १२ ॥
तमायान्तमभिप्रेक्ष्य विष्वक्सेनः सुरैर्वृतः ॥ अमेयात्मा सुरश्रेष्ठः प्रत्यविष्यत् स्तनान्तरे ॥ १३ ॥ साध्यस्य बाणाभिहतस्तोत्रा-
र्दित इव द्विपः ॥ विरोचनः प्रज्ज्वाल क्रोधेनाग्निरिवाचरे ॥ १४ ॥ स कामुर्कविनिर्मुक्तैः शूरेर्दानवसत्तमः ॥ विष्वक्सेनं विभेदाजो-
दीप्तेः सप्तभिराशुगैः ॥ १५ ॥ सोऽतिविद्धो बलवता दानवेन सुरोत्तमः ॥ मूर्च्छामभिजगामाशु ध्वजं चाप्याश्रयत्प्रभुः ॥ १६ ॥ ततः स
पुनराश्वास्य साध्यो युद्धे मनो दधे ॥ विरुफार्य च महाचापं दैत्यमध्ये व्यवस्थितः ॥ १७ ॥ विरोचनस्तु बलवानभ्ययुच्यत सर्वशः ॥
क्षोभयन्त्सुरसेन्यानि समन्ताग्निशिखैः शूरेः ॥ १८ ॥

हाथीकी समान हनन किया हुआ विरोचन क्रोधसे पक्षमें अग्निकी समान जल जडा ॥ १४ ॥ तब प्रकाशमान बेगशले सात बाणोंको विरोचनने अपने धनुषपर चढाय युद्धमें विष्वक्सेनको सात बाणोंसे मारा ॥ १५ ॥ वह बलवान् विरोचनसे अत्यन्त विद्ध होकर विष्वक्सेन मूर्च्छाको प्राप्त हो पृज्ज्वाले आश्रय स्थित हुआ ॥ १६ ॥ फिर सावधान हो धनुषको टंकार दे फिर दैत्योंके मध्यमें स्थित हुआ ॥ १७ ॥ और वह विरोचन तीक्ष्ण बाणोंसे देव-

ताओंकी सेनाको क्षोभित करता हुआ सब ओर युद्ध करने लगा ॥ १८ ॥ युद्ध करते हुए विरोचन दैत्यका युद्धमें गर्जते हुए मेघकी समान बड़ा शब्द सुनाई आने लगा ॥ १९ ॥ तब वह विरोचन देवताओंकी सेनाको हनन करता हुआ ऐसे गर्जने लगा कि जिस प्रकार ओलोंकी वर्षा करता हुआ विजलियोंसहित चंड मेघ गर्जता हो ॥ २० ॥ युद्धमें अश्वोंको उठाय बाणोंकी वर्षासे सम्पूर्ण देवताओंकी सेनाको युद्धमें भगाने लगा ॥ २१ ॥ रथोंपैसे रथी घोड़ोंपैसे सवार, और प्यादे ये सम्पूर्ण विरोचनके भयसे भाग गये ॥ २२ ॥ वज्रके शब्दकी तुल्य धनुषके शब्दको सुन भयसे रणमें

ततस्तस्यासुरेन्द्रस्य युध्यमानस्य संयुगे ॥ श्रूयते तुमुलः शब्दो जम्भूतस्येव गर्जतः ॥ १९ ॥ जगर्ज च महाघोषो विनिघ्नन्देव-
दिनीम् ॥ चण्डेषगाश्मवर्षी च सविद्युस्तनयिस्तुमान् ॥ २० ॥ दिशो विद्रावयामास शरवर्षेण दानवः ॥ सर्वसैन्यानि देवानामु-
द्यतास्त्रो महाहवे ॥ २१ ॥ ते प्राद्रवन्त वित्रस्ता रथेभ्यो रथिनस्तदा ॥ सादिनश्चाश्वपृष्ठेभ्यो भूमौ चापि पदातयः ॥ २२ ॥ श्रुत्वा
कार्मुकनिर्घोषं विस्फूर्जितमिवाशनेः ॥ सर्वसैन्यानि भित्तानि विव्यलीयन्त संयुगे ॥ २३ ॥ विरोचनभयत्रस्ता रथेभ्यो रथिनस्तदा ॥
पदातीनां ययुः संधा यत्र देवः शचीपातिः ॥ २४ ॥ विष्वक्सेनस्य साध्यस्य सर्वतः सुमहाबलः ॥ पादे रक्षःसहस्राणि निजघान
चतुर्दश ॥ २५ ॥ अश्ववृन्देषु नागेषु रथानिकेषु चाभिभूः ॥ पदातीनां च संधेषु विनिघ्नन् प्रत्यहृष्यत ॥ २६ ॥ वितत्य
इयेनवत्पक्षौ सर्वतः स वरूथिनीम् ॥ भित्त्वा च्छित्त्वा महाबाहुः शिरास्याजो ह्यकृन्तत ॥ २७ ॥ सादिनश्च पदातीश्च इतशेषा
रथास्तथा ॥ विष्वक्सेनेन सहिता विरोचनमथाद्रवन् ॥ २८ ॥

सम्पूर्ण देवताओंकी सेना छिप गई ॥ २३ ॥ विरोचनके भयसे डरते हुए रथी और प्यादेके समूह इन्द्रके समीप प्राप्त हुए ॥ २४ ॥ उस समय उस
महाबली विरोचनने विष्वक्सेनके चौदह सहस्र पाँठकी रक्षा करनेवालोंको हनन कर डाला ॥ २५ ॥ घोड़े, हाथी, रथ, प्यादेके समूहमें वह विरोचन
हनन करता हुआ दीखने लगा ॥ २६ ॥ और वह विरोचन मिकारीकी समान पंखोंको फैलाता हुआ देवताओंकी सेनाको मारता २ शिरोंको छेदन
करने लगा ॥ २७ ॥ घोड़ोंके सवार और प्यादे मरनेसे बचे हुए रथी ये सम्पूर्ण विष्वक्सेनके संग हो विरोचनके सम्मुख हुए ॥ २८ ॥

सङ्ग ढाल गदा शक्ति परिघ प्राप्त तोमर इन हथियारोंसे हनन करते हुए सिंहनाद करने लगे ॥ २९ ॥ वह विरोचन फिर अपनी तलवारको ग्रहण कर बड़े वेगसे रथियोंका शिर और धनुषको काटने लगा ॥ ३० ॥ रथ हस्ती घोड़ोंके समूहमें स्थित और शत्रुओंको मर्दन करनेवाला विरोचन इक्कीस प्रकारके मार्गोंसे विचरने लगा ॥ ३१ ॥ और भ्रांत उद्भ्रांत आविष्ट आप्लुत संपात समुदीर्ण इन्होंको दिसाता हुआ ॥ ३२ ॥ कोई महात्मा विरोचनकी तीक्ष्ण तलवारसे भय कवचोंवाले देवता गर्जते हुए और कितने एक प्राणोंसे रहित हो पृथ्वीमें गिरे ॥ ३३ ॥ इस प्रकार महात्मा बलिसे छेदन किये

तेऽसिचर्मगदाशक्तिपरिघप्राप्तोमरेः ॥ तमेकमभ्यधावन्तं सिंहनादं प्रचक्रिरे ॥ २९ ॥ ततः सोऽसिं समुद्यम्य जवमास्थाय दानवः ॥ चकर्त रथिनामाजौ शिरांसि च धनुंषि च ॥ ३० ॥ रथनागाश्ववृन्देषु बलवानरिसूदनः ॥ विरोचनश्चरन्मार्गान्प्रकारानेकविंशतिम् ॥ ३१ ॥ भ्रान्तमुद्भ्रान्तमाविष्टमाप्लुतं विप्लुतं युगम् ॥ संपातं समुदीर्णं च दर्शयामास दानवः ॥ ३२ ॥ केचिद्भ्रासिना रुग्णा दानवेन महात्मना ॥ विनेदुश्छन्नवर्माणो निपेतुश्च गतासवः ॥ ३३ ॥ छिन्नपृष्ठा इतारोदा दानवेन महात्मना ॥ विव्रुताः स्वान्यनीकानि जघ्नुस्त्रिदशवारणाः ॥ ३४ ॥ निपेतुरुर्व्यामाकाशे निकृता दृढधन्विना ॥ विविधास्तोमराश्चापामहामात्रशिरांसि च ॥ ३५ ॥ प्रतीपमाहरन्नागानश्चाश्च दृढविक्रमान् ॥ आप्लुत्य रथिनः कांश्चित्परामृश्य महाबलः ॥ ३६ ॥ सूतांश्चिच्छेद स्वज्जेन रथानपि च दानवः ॥ सुदुरुत्पततो दिक्षु धावतश्च यशस्विनः ॥ ३७ ॥ मार्गाश्चरति वै वित्रान् विस्मयन्तस्ततोऽसुरान् ॥ निजघान पदा कांश्चिदाक्षिप्यान्यानपोथयत् ॥ ३८ ॥

हुए बाहनोंसे रहित किये देवताओंके हस्ती उलटे दौड़ते हुए अपनी सेनाको मारने लगे ॥ ३४ ॥ दृढ धनुषधारी विरोचनके छेदन किये हुए अनेक प्रकारके तोमर धनुष पीलवानोंके शिर आकाशसे भूमिमें गिरने लगे ॥ ३५ ॥ और वह विरोचन दृढविक्रमी हाथी और घोड़ोंको मारता हुआ कितनेक रथियोंका तिरस्कार कर ॥ ३६ ॥ और क्रुद्ध अपने सङ्गसे सूत और रथोंको छेदन करने लगा, बारंवार क्रुद्धता हुआ धावमान होता हुआ यशस्वियोंके ॥ ३७ ॥ चित्र विचित्र मार्गोंको विचरने लगा ऐसे विरोचनको देख सम्पूर्ण सुर विस्मयको प्राप्त हो गये किसीको पैरसे मारकर किसीको

एक दूसरेके ऊपर दे मारा ॥ ३८ ॥ किसीको खड्गसे छेदन कर किसीको शब्दसे भयभीत किया; और कोई ऊरुस्तंभसे गृहीत हुए विरोचनको देस प्राणोंको त्याग पृथ्वीपर गिरे ॥ ३९ ॥ और रथोंके समूह चोड़े हस्ती और देवतोंके नाश होनेमें ॥ ४० ॥ दैत्योंमें अष्ट जंभ दैत्य अंशदेवतासे वृषकी समान युद्ध करने लगा ॥ ४१ ॥ पर्वतके सम रूपवाला और मत्तहस्तीकी तुल्य पराक्रमी जंभ दैत्य और वेगवन्त बहुत बाणोंसे अंशदेवताको वेधन करने लगा ॥ ४२ ॥ रथोंसे सहित देवताओंकी सहस्रोंही सेना जंभके बाणरूपी मार्गमें प्राप्त हो चलनेको समर्थ न हुई ॥ ४३ ॥ और सम्पूर्ण खड्गेन चान्याश्चिच्छेद नादेनान्याश्च भीषयन् ॥ ऊरुस्तम्भगृहीताश्च निपतन्त्यपरे भुवि ॥ अपरे दैत्यमालोक्य भयात्प्राणानवा-
सृजन् ॥ ३९ ॥ तस्मिन्स्तथा वर्तमाने युद्धे मदाति दारुणे ॥ रथोघगजपत्तीनां सुराणां च महाक्षये ॥ ४० ॥ कुजम्भो दानवश्रेष्ठो
क्षिप्तुमादित्यमाहवे ॥ योधयामास समरे वृषः प्रतिवृषं यथा ॥ ४१ ॥ जघानाचलसंकाशो मत्तवारणविक्रमः ॥ स्फुरद्भिर्निशितेस्ती-
क्ष्णक्षरेर्बहुभिराशुगेः ॥ ४२ ॥ देवसेन्यसहस्राणि सरथानि महाहवे ॥ तस्य बाणपथं प्राप्य नाभ्यवर्तन्त सर्वशः ॥ ४३ ॥ प्रणेतुः
सर्वभूतानि बभूवुस्तिमिरा दिशः ॥ देवानामजयः क्रूरः प्रत्यपद्यत दारुणः ॥ ४४ ॥ अंशस्तु दानवेन्द्रस्य जघानोत्तमविक्रमः ॥
अनीकं दशसाहस्रं कुञ्जराणां तरस्विनाम् ॥ ४५ ॥ आपतन्तं गजानीकं कुजम्भो वीक्ष्य दानवः ॥ गदापाणिरवारोद्ग्रथोपस्थाद-
रिदमः ॥ ४६ ॥ अद्रिसारमयीं गुर्वीं प्रगृह्य मर्दतीं गदाम् ॥ अभ्यद्रवद्रुजानीकं ध्यादितास्य इवान्तकः ॥ ४७ ॥ स गजान् गदया
निघ्नन्व्यचरत्समरे बली ॥ कुजम्भो दानवश्रेष्ठो गदापाणिर्बलाधिकः ॥ ४८ ॥

प्राणी दुःखसे शब्द करने लगे; और दिशा अधिकारयुक्त हो गई और देवताओंकी बड़ी दारुण पराजय दीखने लगी ॥ ४४ ॥ तब देवताओंमें अष्ट उत्तम पराक्रमी अंशदेवता जंभदैत्यकी बड़ी वेगवाली दश सहस्र हस्तिपोंकी सेनाको मारने लगा ॥ ४५ ॥ और शत्रुओंको दमन करनेवाला कुजंभ दैत्य आती हुई हस्तिपोंकी सेनाको देस और हाथमें गदा धारण कर अपने रथसे नीचे उतरकर स्थित हुआ ॥ ४६ ॥ पर्वतकी तुल्य सारवाली बड़ी गदाको ग्रहण कर हस्तिपोंकी सेनामें सुल फैलाये कालकी समान दौड़ा ॥ ४७ ॥ और दानवोंमें अष्ट महाबली कुजंभ दैत्य अपनी गदासे हस्तिपोंको हनन

करता हुआ रणमें दंडको हाथमें लिये विचरने लगा ॥ ४८॥ दानवोंमें अत्र महाबली कुजंभ हस्तिपोंके दांत और मस्तकोंको गिनगिनकर भेदन करता हुआ ॥ ४९॥ टूटे दांतोंवाले भेदित मस्तकोंवाले अनेक हस्ती कुजंभ दैत्यके भेदित किये हुए दशों दिशाओंमें फिरने लगे ॥ ५०॥ और कुजंभ दैत्यके जो घोर पराक्रमी मंत्री थे वे तीक्ष्ण बाणोंकी वर्षा कर गजयोधियोंको मारने लगे ॥ ५१॥ धुर धुर भा भाले दात्र और अंजलिक इथियारोंसे कुजंभ दैत्य देवताओंके अंगोंको छेदन करने लगा ॥ ५२॥ और गिरते हुए शिरोंकी वर्षासे आकाश ओलोंकी वर्षाके समान पूर्ण हो गया और महा-

विशीर्णदन्ताश्च बहून् भिन्नकुम्भाश्च दारुणान् ॥ अकरोद्दानवश्रेष्ठ उद्दिश्योद्दिश्य तान्बली ॥ ४९॥ विशीर्णदन्ता बहवो भिन्नकुम्भा-
स्तथा परे ॥ कुजम्भेनार्दिता नागा व्यद्रवन्त दिशो दश ॥ ५०॥ कुजम्भस्य च येऽमात्या दानवा घोरविक्रमाः ॥ नाराचेर्विविधे-
स्तीक्ष्णैरपास्तगजयोधिनः ॥ ५१॥ धुरेः धुरैर्भेदैश्च पातेरञ्जलिकैः शितैः ॥ चिच्छेद चोत्तमाङ्गानि कुजम्भो दानवोत्तमः ॥ ५२॥
शिरोभिः प्रपतद्भिस्तु गगनं प्रत्यपूर्यत ॥ अश्मवृष्टिरिवाकाशे बहुभिश्च सदाङ्कुशैः ॥ ५३॥ कृतोत्तमाङ्गाः स्कन्धेषु गजानां गजयो-
धिनः ॥ अदृश्यन्त महाराज ताल्य विशिरसो यथा ॥ ५४॥ आपतन्तं महानागमंशस्यासुरसत्तमः ॥ जघानैकेषुणा क्रुद्धस्ततः स
विमुखोऽभवत् ॥ ५५॥ विगाह्येवं गजानीकं कुजम्भो दानवोत्तमः ॥ विनिघ्नप्रवरान्तेन्यान्गदया बलिनां वरः ॥ ५६॥ एकप्रहारा-
भिहतान्कुजम्भेन महामजान् ॥ अपश्यन्त सुराः सर्वे पर्वतानिष पातितान् ॥ ५७॥ कुजम्भस्य च मार्गेषु विशीर्णास्ते महागजाः ॥
वज्राहता इवेन्द्रेण विशीर्णा इव पर्वताः ॥ ५८॥

अंकुशोंसे हत ॥ ५३॥ हस्तिपोंपै बैठे हुए देवता शिरोंसे रहित ऐसे दीखने लगे कि जैसे शिरोंविना तालके वृक्ष ॥ ५४॥ सन्मुख आते हुए मदोन्मत्त अंशदेवताके हस्तीको जंभ दैत्यने एक बाणसेही ऐसा वेधन किया कि वह हस्ती पीछे फिर गया ॥ ५५॥ दानवोंमें अत्र गदायुद्धका जाननेवाला कुजंभ दैत्य हस्तिपोंकी सेनाको मर्दन कर और गदासे देवताओंको हनन करने लगा ॥ ५६॥ कुजंभके एकही प्रहारसे मारे हुए पर्वतकी समान पड़े हुए हस्ति-
पोंको सम्पूर्ण देवता देखने लगे ॥ ५७॥ कुजंभके आगे हस्ती ऐसे वेधित हुए कि जैसे हन्त्रके वज्रसे पर्वत विदीर्ण हो ॥ ५८॥

और देवता उसको मूर्तिमान् कालकी समान देखने लगे और सिंहसे जैसे मृग डरते हैं इस प्रकार उससे हस्ती डरने लगे ॥ ५९ ॥
 हस्तियोंके रुधिरसे भीगी हुई लोहेकी गदाको धारण करे मुखको फाड़े कुजंभ दैत्य कोचकर बड़ा भयानक रहा धारण कर गर्जने
 लगा ॥ ६० ॥ प्रलयकालमें प्रजाके नाशके अर्थ कालकी समान क्रोधित कुजंभ अपनी गदासे रणमें क्रीडा करने लगा ॥ ६१ ॥ गोपा-
 लकी समान दंडको धारण किये हस्तियोंको दौडाता और बड़े पराक्रमी दंडको उठाये ॥ ६२ ॥ कुजंभ दैत्यको सम्पूर्ण देवता क्रोधित कालकी समान
 अपश्यंस्त्रिदशाः सर्वे मूर्तिमन्तमिवान्तकम् ॥ गजास्तथा व्यदीर्यन्त सिंहस्येवेतरे मृगाः ॥ ५९ ॥ स बभौ तां गदां बिभ्रत्प्रोक्षितां
 गजशोणितैः ॥ व्यादितास्यो नदत्कुद्रो रौद्ररूपो भयानकः ॥ ६० ॥ यथा हि भगवान् क्रुद्धः प्रजानां संक्षये पुरा ॥ विक्रीडमानो
 गदयारणमध्ये महासुरः ॥ ६१ ॥ गोपाल इव दण्डेन कालयन्स महागजान् ॥ क्रुद्धं कालमिवाकाले दण्डमुद्यम्य दानवम् ॥ ६२ ॥
 अपश्यन्त सुराः सर्वे कुजम्भं भीमविक्रमम् ॥ इतारोहास्तु तत्रान्ये प्रभिन्ना वारणोत्तमाः ॥ ६३ ॥ ते हन्यमाना गदया बाणैश्च
 भृशविक्षताः ॥ असहन्तः कुजम्भस्य गदावेगं महाहवे ॥ ६४ ॥ स्वान्यनीकानि गृहन्तः प्राद्रवन्तः महागजा ॥ महावात इवाग्नि
 विधमन्गदया गजान् ॥ अतिष्ठत्समरे दैत्यः कालः संवर्त्तको यथा ॥ ६५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि
 कुजम्भोत्कर्षवर्णनं नाम षट्षष्ठांशतमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः सर्वाणि सैन्यानि देवराजस्य शासनात् ॥
 अभ्यद्रवन्त दितिजान्नदन्तो भैरवान्नवान् ॥ १ ॥ तं बलौघमपर्यन्तं देवानां सुदुरासदम् ॥ रथनागाश्च कलिं शंसदुन्धुभिनिस्वनम् ॥ २ ॥
 देखने लगे, आरोही और हाथी अनेक नष्ट हो गये ॥ ६३ ॥ वे गदासे हन्यमान और बाणोंसे महोपडित हो कुजंभके वेगको संप्राममें सहनेको समर्थ
 न हुए ॥ ६४ ॥ अपनी सेनाको मारते हुए हाथी दौड़े, वह गदासे हाथियोंको ऐसे जगाने लगा जैसे पवन नेव हो जगाती है वह दैत्य रणमें कालकी
 समान स्थित हुआ ॥ ६५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां षट्षांशतमोऽध्यायः ॥ ५६ ॥ वैशम्पायनजी बोले, तब
 सम्पूर्ण देवताओंकी सेना बड़े भयानक शब्दोंको करती हुई और दैत्योंके सन्मुख इन्द्रकी आज्ञासे चली ॥ १ ॥ असह्यरथ, हस्ती घोड़ेसे व्याप्त शंस

नकारोंसे शब्दायमान वेगसे आती हुई देवताओंकी अपार और दुस्सह सेना दीखी ॥ २ ॥ धूलिसे सब ओर व्याप्त दुष्पार सेनाको आता देख वह सैन्य सागर अक्षोभ्य वेलावाले समुद्रकी समान दीखी ॥ ३ ॥ आश्चर्यरूप अंतरहित बड़ी अद्भुत रथ हस्ती घोड़ोंसे व्याप्त देवताओंकी उदीर्ण महासेनाको ॥ ४ ॥ रोक वह महाबली कुजंभ रणमें सुमेरु पर्वतकी समान स्थित हुआ ॥ ५ ॥ और कुजंभसे गदाद्वारा निवारण की हुई देवताओंकी सेना विह्वल और निरुद्यम हो गई ॥ ६ ॥ उस दारुण संग्रामके वर्तमान होनेमें दानवोंका अभिपति असिलोमा ॥ ७ ॥ और देवताओंकी सेनाको धूमकेतुकी समान उदय

आपतन्तं सुदुष्पारं रजसा सर्वतो वृतम् ॥ सैन्यसागरमक्षोभ्यं वेलेव मकरालयम् ॥ ३ ॥ तदाश्चर्यं पश्यन्त अश्रद्धेयमिवाद्भुतम् ॥ उदीर्णां पृतनां सर्वां साक्षां सरथकुञ्जराम् ॥ ४ ॥ आचार्यः समरेऽतिष्ठत्कुजम्भस्तरसा बली ॥ सैन्यार्णवं देवतानां गिरमैरुः वाचलः ॥ ५ ॥ अनीकिर्नो कुजम्भस्तु गदया स न्यवारयत् ॥ सा तथा वारिता सेना विह्वला धूमनिरुद्यमा ॥ ६ ॥ तस्मिंस्तथा वर्तमाने संप्रहारे सुदारुणे ॥ असिलोमा तु बलवान्दानवो दानवाधिपः ॥ ७ ॥ देवसैन्यस्य सर्वस्याधुमेकेतुरिवोत्थितः ॥ तमांस्यर्क इषापोह्यत्सुरसैन्यानि संयुगे ॥ ८ ॥ सहस्ररश्मिप्रतिमो दानवस्य रथोत्तमः ॥ शरैर्मैव इवावर्षद्देवानां किं प्रतापवान् ॥ ९ ॥ शरोषर- रश्मिभिर्दीप्तेः प्रतप्तो चोरविक्रमः ॥ रोद्रः क्रूरो दुराधर्षो दुरापो ध्वजिनीमुखे ॥ १० ॥ युध्यते देवतेः सार्द्धं असमान इव प्रभुः ॥ उग्रेषुर्यवदनः समारुह्य महागजम् ॥ ११ ॥ सुराणामुत्तमाङ्गानि प्रचिनोति महाबलः ॥ असन्वेतसैन्यानि शरदंष्ट्रः प्रतापवान् ॥ १२ ॥

होता हुआ महाक्रोध कर दैत्य देवताओंकी सेनाको ऐसे नष्ट करने लगा कि जैसे अंधकारको सूर्य नष्ट करता है ॥ ८ ॥ सहस्र सूर्योंकी तुल्य कांति-वाला मायारूपी प्रतापी असिलोमा दैत्यका रथ देवताओंकी सेनापर मेघकी समान शरोंकी वर्षा करने लगा ॥ ९ ॥ बाणरूपी रश्मियोंसे प्रदीप्त प्रतप्त चोर दर्शनवाला रुद्ररूप सेनामें वह दुःखसे निवारण होनेवाला क्रूर ॥ १० ॥ कालकी समान असता हुआ असिलोमा देवताओंके संग युद्ध करने लगा मयानक मुखवाले हाथीपर चढ़ महान् हस्तियोंका मर्दन करने लगा ॥ ११ ॥ महाबली असिलोमा दैत्य देवताओंके एक शिरका ऊँचा ढेर बनाने लगा तथा

देवताओंको प्रसन्नता हुआ शरोंकेसी बाँधोंवाली महाप्रतापी ॥ १२ ॥ तलवारकी समान जीतवाला धनुषकी समान मुख फाड़े फरसेको धारण किये मृद-
गके तुल्य शब्द करता हुआ ॥ १३ ॥ और दानवोंमें व्याघ्ररूप असिलोमा रणमें स्थित हुआ, मोर्वीका शब्द मेघरूप और बड़ा महान् हुआ और
सेनाका समूह घोर समुद्ररूप हुआ ॥ १४ ॥ धनुषकी ज्याका कंपित होना बिजलीरूप महामेघकी समान चार और बाणरूपी घोर सागर और भुजा-
रूपी घोर ग्राह ॥ १५ ॥ कार्मुकरूपी तरंगें बाणोंका आवर्त तलावरूप गदा तलवार मच्छरूप धनुषकी ज्या तटहर ॥ १६ ॥ और पदाति मीनरूपमें
इस प्रकार महागर्जता हुआ सेनारूपी समुद्रमें घोड़े हस्ती प्यादे रथ शूर वीर बहुत महारथोंको ॥ १७ ॥ वह दानवेश्वर असिलोमा युद्धमें

असिजिह्वश्चक्रहस्तश्चापव्यात्ताननोऽसुरः ॥ परश्वधनस्त्रः श्रीमान्मृदङ्गापूरितध्वनिः ॥ १३ ॥ तिष्ठते दानवश्रेष्ठः संयुगे व्याघ्रवद्वली ॥
मोर्वीघोषः स्तनयितुः पृषत्कः प्रथितो महान् ॥ १४ ॥ धनुर्वैद्युद्गणश्चापो महामेघ इवापरः ॥ इष्वस्रसागरो घोरो बाहुग्राहो
दुरासदः ॥ १५ ॥ कार्मुकमितरङ्गेष्वैर्वाणावर्तमहाहदः ॥ मदासिमकरो रोद्रो ज्यावेळः शिक्षयोद्धतः ॥ १६ ॥ पदातिमीनः सुमहान्
गर्जितोत्कुष्टघोषवान् ॥ इयान् गजान् पदातींश्च रथांश्च सहसा बहून् ॥ १७ ॥ न्यमज्जयत समरे परवीरान्महारथान् ॥ आप्लावयत्स
देवोषान् दारुणो दानवेश्वरः ॥ १८ ॥ प्रावर्तत युधि श्रीमान् युधि श्रेष्ठो युधिष्ठिरः ॥ अपश्यंस्त्रिदशाः सर्वे शुद्धजाम्बूनदप्रभम् ॥ १९ ॥
सन्नद्धं तत्र युध्यन्तं ज्वलन्तमिव पावकम् ॥ मध्यंदिनगतं सूर्यं ज्वलन्तमिव तेजसा ॥ २० ॥ न शेकुः सर्वभूतानि दानवं प्रसमीक्षि-
तुम् ॥ यथा प्ररूढं घर्मान्ते दहेत्कक्षं हुताशनः ॥ २१ ॥ तथासुरवरो दैत्यो ददति स्म सुतेजसा ॥ देवानां दानवानां च बलं मर्हति
दारुणम् ॥ २२ ॥ विरूढमभवत्सर्वमाकुलं च समन्ततः ॥ शूराश्च ते बलोदग्रा इस्त्यश्वरथधूर्गताः ॥ २३ ॥

अपने शत्रुओंको डुबोता हुआ, इस प्रकार शरुण दैत्यने देवसमूहोंको घुावित किया ॥ १८ ॥ श्रीमान् दैत्योंमें भेठ महाबली असिलोमाको
सम्पूर्ण देवता शुद्ध सुवर्णकी तुल्य कांतिवाले कवचको धारण किये युद्ध करते ॥ १९ ॥ अग्निकी तुल्य जलते हुए मध्याह्नकालके
सूर्यकी समान तेजसे युक्त न देख सके ॥ २० ॥ तब असिलोमा दैत्यको सम्पूर्ण सेना देखनेको समर्थ नहीं हुई, और ग्रीष्मऋतुमें बड़ा
हुआ अग्नि जैसे फूँसको जलाता है ॥ २१ ॥ तैसही देवताओंको असिलोमा अपने तेजसे दहन करने लगा ॥ २२ ॥ और देवता और दानवोंकी

सेना मर्दन करने लगा, तब सेना भयानक शब्द करने लगी; और सम्पूर्ण शूर वीर व्याकुल और मूढ़ हो गये; हस्ती रथ घोडार स्थित हुए ॥ २३ ॥
मेघ बुद्धिमें स्थित हो वे शूर वीर रणको नहीं त्यागते हुए; वह व्याकुलता और रोमोंको उपजानेवाला दारुण युद्ध हुआ ॥ २४ ॥ रुधिरकी नदी
और कीच देवता और दानवोंके महाघोर युद्धमें हो गई; और भयवशी ग्राहते पीड़ित हुए सम्पूर्ण दिशाको न जान सके ॥ २५ ॥ अनेक प्रकारसे
किये हुए दानवोंके शस्त्रपातको न जानकर महारणमें मूढचित्त और व्याकुल हुए परस्पर हनन करने लगे शस्त्रोंके तेजसे विमूढ़ हुए अपने और पराजितोंको

आर्या बुद्धि समास्थाय न त्यजन्ति महारणम् ॥ तदुत्पिञ्जलकं युद्धमभवद्रोमहर्षणम् ॥ २४ ॥ देवदानवयोः संख्ये रुधिरस्रावकर्मणम् ॥

न दिशः प्रत्यजानन्त भयग्राहनिपीडिताः ॥ २५ ॥ शस्त्रपातांश्च विविधान् दानवानां महारणे ॥ अन्योन्यं मूढचित्तास्ते निजघ्नव्या-

कुलीकृताः ॥ स्वान्परात्राभियानन्ति विमूढाः शस्त्रपाणयः ॥ २६ ॥ शिरोरुहेषु संगृह्य कबिच्छूरस्य संयुगे ॥ शूरश्छिनत्ति मूर्धानं

संदष्टोष्ठपुटाननम् ॥ २७ ॥ बाहुभिर्मुष्टिभिश्चैव वज्रकल्पैः सुदारुणैः ॥ प्रहरन्ति रणे वीरा आतशस्त्राः परस्परम् ॥ २८ ॥ योधप्राणहरे

रौद्रे स्वर्गद्वारे नृपावृते ॥ संकुले तुमुले युद्धे वर्तमाने महाभये ॥ २९ ॥ हयो हयं गमो नागं वीरो वीरं महाहवे ॥ अभ्यद्रवन्निष्ठासन्तो

ह्यसमञ्जसमाहवे ॥ असुराश्च सुराश्चैव विक्रमाब्जा महारथाः ॥ ३० ॥ जुहुवुः समरे प्राणात्रिजघ्नुरितरेतरम् ॥ मुक्तकेशा विक्रवा

विरथाश्छिन्नकर्मुकाः ॥ ३१ ॥ हस्तेः पादैश्च युध्यन्ते दानवास्त्रिदशैः सह ॥ हरिस्तु निशितं भलं प्रेषयामास संयुगे ॥ ३२ ॥ स

तस्य धनुषः कोटिं छित्त्वा भूमावपातयत् ॥ पुनश्चापि पृषत्कानां शतानि नतपर्वणाम् ॥ ३३ ॥

नहीं जानते हुए ॥ २६ ॥ कोईक शूर वीर होठोंको दाबते हुए किसी शूरवीरके केशोंको ग्रहण कर युद्धमें शिरको छेदन करने लगे ॥ २७ ॥ और शस्त्रोंको
त्याग वज्रकी तुल्य महादारुण भुजा और मुष्टियोंसे रणमें प्रहार करने लगे ॥ २८ ॥ इस प्रकार संकुल तुमुल भयके उपजानेवाले महायुद्धमें ॥ २९ ॥
घोडे घोडोंको हस्ती हस्तिपोंको शूरवीर शूरवीरोंको बड़े वेगसे भगाने लगे इस प्रकार असुर और देवता महाराक्षसी और महारथी ॥ ३० ॥
प्राणोंको त्यागते हुए परस्पर हनन करने लगे; खुले केशोंवाले कवचोंसे और रथोंसे रहित छिन्न धनुषोंवाले ॥ ३१ ॥ दानव देवताओंके संग हाथ और
पैरोंसे युद्ध करते हुए; तब हरिने अपने पैने भाले युद्धमें फेंके ॥ ३२ ॥ वह भाला उसके धनुषकी कोटीको छेदन कर पृथ्वीमें गिरा, फिर पैनी धारों-

बाले सौ बाण ॥ ३३ ॥ असिलोमाके ऊपर छोटे और छोटे हुए ॥ ३४ ॥ वे बाण पवनके वेगसे बड़े वेगवन्त हुए असिलोमाके देहमें गड़े हुए बिलमें
अध मग्न सर्पकी समान शोभित हुए तब उसके छेदित शरीरसे रुधिर गिरने लगा ॥ ३५ ॥ उन अंगोंसे वह असिलोमा ऐसे शोभायमान हुआ जैसे गैर-
कादि धातुओंको त्यागता हुआ सुमेरु पर्वत, तब फिर और बड़े तीक्ष्ण बाण उसके ऊपर प्रहार किये ॥ ३६ ॥ तब असिलोमा क्रोधित हो और
फिर अन्य धनुषको धारण कर सुवर्णके पंखोंवाले बहुत पने बाणोंको हरिके ऊपर छोड़ने लगा ॥ ३७ ॥ सर्प अग्नि और विषकी तुल्य बाणोंसे हरिके
मर्मको वेधन कर ऐसे आच्छादन करता हुआ जैसे पर्वतको भेध डकते हैं ॥ ३८ ॥ और कालकी समान सुवर्णकी पंखोंवाले सूर्यकी तुल्य कांतिवाले सौ

प्राहिणोत्सहसा तस्य दानवेन्द्रस्य संयुगे ॥ तस्य देहविमुक्तास्ते मारुतेन समीरिताः ॥ ३४ ॥ मग्नार्द्धकाया विविशुः पन्नगा इव पर्वते ॥
स तेर्निपतितैर्गात्रैः क्षराद्भिरसृगावलीः ॥ ३५ ॥ बभौ दैत्यो महाबाहुर्मैरुधांतुमिवोत्सृजन् ॥ पुनश्चापि पृषत्कानां शतानि नतपर्व-
णाम् ॥ ३६ ॥ ततोऽसिलोमा संक्रुद्धः प्रगृह्यान्ममहाधनुः ॥ रुक्मपुङ्डाश्च निशितान् प्रेषयामास सायकान् ॥ ३७ ॥ तेस्तु मर्मसु
विव्याध सपौनलविषोपमेः ॥ गात्रं संच्छादयामास महाभ्रैरिव पर्वतम् ॥ ३८ ॥ भूयः संधाय च शरं मुचोचान्तकसंनिभम् ॥ सुपुङ्गुं
सूर्यसंकाशं बाणमप्रतिमं रणे ॥ ३९ ॥ तेन बाणप्रहारेण संयुगे भीमकर्मणा ॥ सुमोह सहसा देवो भूमौ चापि पपात ह ॥ ४० ॥ ततो
हाहाकृताः सर्वे देवे भूतलमाश्रिते ॥ जगत्सदेवमाविमं यथार्कपतनं तथा ॥ ४१ ॥ परिवारं तु समरे तस्य हत्वा महासुरः ॥ एकत्रिं-
शत्सहस्राणि योधानां दानवोत्तमः ॥ ४२ ॥ जयश्रिया सेव्यमानो दीप्यमान इवाचलः ॥ प्रगृह्य कार्मुकं घोरं गतः शक्रस्थं प्रति ॥ ४३ ॥
बाणोंको फिर धनुष्यपर संचान कर हरिके ऊपर छोड़े ॥ ३९ ॥ तिन बाणोंके प्रहारसे युद्धमें वेधित हुए हरि मोहको प्राप्त हो पृथ्वीमें गिरे ॥ ४० ॥ तिस
समय सब देवता हाहाकार करने लगे और सूर्यके गिरनेकी समान जगत् भग्न हुआ ॥ ४१ ॥ उस दानवोंमें भेष्ठ असिलोमाने इकतीस हजार हरिके परि-
वाररूप देवताओंको मार डाला ॥ ४२ ॥ और जयश्रयी शोभासे सेवित हुआ अग्निकी तुल्य प्रकाशमान अपने घोर धनुष्यको धारण कर इन्द्रके रथके
प्रति गया ॥ ४३ ॥

और उसी युद्धमें दोनों अश्विनीकुमार देवताओंके शत्रु महावकी वृत्रासुरसे युद्ध करने लगे ॥ ४४ ॥ तर्कश धनुष धारण करे युद्धमें प्राणोंको त्यागने-
वाला वृत्रासुर अश्विनीकुमारोंको प्राप्त हो युद्धमें पर्वतकी समान अवल स्थित हुआ ॥ ४५ ॥ युद्धमें शत्रुओंके रोमोंको खड़ा करनेवाले शंखको
बजाकर धनुषकी ज्याके शब्दोंसे सम्पूर्ण प्राणियोंको मोहित करता हुआ ॥ ४६ ॥ हर्षित रोमोंवाले यज्ञ और देवताओंके समूह ये सम्पूर्ण समुद्रके
शब्दकी तुल्य शब्दवाले शंखके शब्दको सुनते हुए ॥ ४७ ॥ गदा परिव अन्न शक्ति त्रिशूल फरसा ये समूर्ण हथियार यज्ञ राक्षसोंकी भुजाओंमें
तथैव तु महायुद्धे सतेन्यावश्विनावुभौ ॥ प्रयुद्धो सह वृत्रेण बलिना देवतारिणा ॥ ४४ ॥ बाणसङ्घमुष्पाणिः समरे त्यक्तजीवितः ॥
आसाद्य सोऽश्विनो दैत्यः स्थितो गिरिरिवाचलः ॥ ४५ ॥ ततः शंखमुपाध्माय द्विषतां लोमहर्षणम् ॥ ज्याघोषतलशब्दैश्च सर्व-
भूतान्यवेजयत् ॥ ४६ ॥ ततः संहृष्टरोमाणः शंखशब्दं विशुश्रुवुः ॥ यक्षराक्षसदेवोवा वृत्रस्यापि च निःस्वनम् ॥ ४७ ॥ गदा-
तोमरनिस्त्रिशूलशक्तिपरश्वधाः ॥ प्रगृहीता व्पराजन्त यक्षराक्षसबाहुभिः ॥ ४८ ॥ तेः प्रमुक्तान्महाकायेः शूलशक्तिपरश्वधान् ॥
भलेर्वृत्रपरिच्छेदभीमवेगरेस्तथा ॥ ४९ ॥ अन्तरिक्षचराणां च भूमिस्थानां च गर्जताम् ॥ शरेर्विव्याध गात्राणि देवानां प्रियद-
र्शिनाम् ॥ ५० ॥ वृत्रासुरभुजोत्सृष्टैर्बहुधा यक्षरक्षसाम् ॥ निकृत्तान्येव दृश्यन्ते शरीराणि शिरांसि च ॥ ५१ ॥ अथ रक्तमहावृ-
ष्टिरभ्यवर्षत मेदिनीम् ॥ गदापरिधभिन्नानां देवानां गात्रसंभवा ॥ ५२ ॥ प्रच्छादयन्तं बाणोर्ध्वैर्वृत्रं भीमपराक्रमम् ॥ ददृशुः सर्वभू-
तानि भानुमन्तमिवाशुभिः ॥ ५३ ॥

शोभाको प्राप्त होने लगे ॥ ४८ ॥ बड़े शरीरोंवाले योद्धाओंकी तिन भुजाओंसे फेंके हुए त्रिशूल शक्ति फरसा हथियारोंको वह वृत्रासुर अपने बड़े
वेग और शब्दोंको करनेवाले जालोंसे भेदन करने लगे ॥ ४९ ॥ और वह वृत्रासुर आकाश और पृथ्वीमें विचरते हुए और गर्जते हुए देवताओंके
शरीरोंको छेदन करने लगे ॥ ५० ॥ वृत्रासुरकी भुजाओंसे छोड़े हुए बाणोंसे छेदन किये हुए बहुतसे यज्ञ और राक्षसोंके शरीर और शिर पृथ्वीपे
दीखने लगे ॥ ५१ ॥ गदा परिधोंसे भेदन किये हुए देवताओंके शरीरोंसे रुधिरकी महावर्षा पृथ्वीको सेवन करने लगी ॥ ५२ ॥ और बड़े भीम

पराक्रमवाले वृत्रासुरको सम्पूर्ण प्राणी देवताओंके समूहसे ऐसे आच्छादित देखने लगे कि जैसे मेघोंसे सूर्य ॥ ५३ ॥ और महाबली सूर्यकी समान तपता हुआ वृत्रासुर मर्मवेधी बाणोंसे अश्विनीकुमारोंको वेधन करने लगे ॥ ५४ ॥ और देवताओंके बाणोंसे वेधित होकर अनेक प्रकारके शर्मोंको करते हुए वृत्रासुरको जयगीत देवता कूछभी नहीं देखते हुए ॥ ५५ ॥ और खड्ग शक्ति गदा शरिष प्राप्त तोमर फरसा त्रिशूल हथियारोंकी वे सम्पूर्ण देवता वृत्रासुरपर वर्षा करने लगे ॥ ५६ ॥ तब सत्यपराक्रमी महाबली तीन बाणोंसे वेधित हुआ वृत्रासुर क्रोधित हो और सम्पूर्ण देवताओंपर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥ ५७ ॥ वेधन किये हुए महाआयुधोंसे आच्छादित महारथी देवता वृत्रासुरके जयसे पीड़ित हुए और घोर आर्तनाद करने लगे ॥ ५८ ॥ गदा शक्ति त्रिशूल खड्ग तीक्ष्णरश्मिरिषादित्यः प्रतपन्सर्वदेवताः ॥ अश्विनोर्बल्वान् क्रुद्धः सायकैर्मर्मभेदिभिः ॥ ५८ ॥ नदतो विविधान्नादानर्हितस्मपि सायकैः ॥ न मोहमसुरेन्द्रस्य ददृशुस्त्रिदशा रणे ॥ ५९ ॥ तेऽसिचर्मगदाभिश्च परिघप्रासतोमरैः ॥ परश्वधैश्च शूलैश्च प्रववर्षुर्महारथाः ॥ ५६ ॥ ततो वृत्रः सुसंकुदस्तेस्तदाभ्यर्दितो बली ॥ अभ्यवर्षच्छिन्नेर्बाणेस्तान्तर्त्तान्तसत्यविक्रमः ॥ ५७ ॥ तेन वित्रासिता देवा विप्रकीर्णमहायुधाः ॥ घोरमार्तस्वरं चक्रुर्वृत्रासुरभयार्दिताः ॥ ५८ ॥ उत्सृज्य ते गदाशक्तिशूलैर्घृषिर्घांशनीन् ॥ उत्तरां दिशमाजमुस्त्रासिता दृढधन्विना ॥ ५९ ॥ शूलशक्तिगदापाणिर्व्यूढेरस्को महाभुजः ॥ प्रावर्तते रणे वृत्रस्त्रासयानश्चराचरान् ॥ ६० ॥ तत्रैकस्तु महाबाहुरसिशूलधरः प्रभुः ॥ अभ्यघातत दैत्येन्द्रं वृत्रमप्रतिमं रणे ॥ ६१ ॥ तमापतन्तं संप्रेक्ष्य निर्भिन्नमिव वारणम् ॥ वत्सदन्तैस्त्रिभिः पाङ्गैर्विव्याध सुरसत्तमम् ॥ ६२ ॥ सोऽतिविद्धो मदेष्वासः श्रेयमिति विक्रमः ॥ गदां जग्राह बलवान् गदायुद्धविशारदः ॥ ६३ ॥ परसा हथियारोंको त्याग वृत्रासुरके श्राससे सम्पूर्ण देवता उच्चरदिशमें चले गये ॥ ५९ ॥ दीर्घ छातीवाला महाभुजाओंवाला त्रिशूल गदाको हाथमें धारण किये वृत्रासुर चराचरसहित सम्पूर्ण देवताओंको श्रास देता हुआ विचरने लगा ॥ ६० ॥ और रणमें धीर्यतासे स्थित हुआ, तब महाभुजावाले त्रिशूलको धारण किये अश्विनीकुमार रणमें स्थित हुए और दैत्योंका अधिपति तुल्यतासे रहित वृत्रासुरके उनके सन्मुख दौड़ा ॥ ६१ ॥ भेदित किये हस्तीकी समान अश्विनीकुमारने धनुष धारण कर बछेके दांतके तुल्य तीक्ष्ण तीन बाणोंसे वृत्रासुरको पार्श्वमें वेधन किया ॥ ६२ ॥ वह महाबली बाणोंसे

महाविद्ध होकर युद्धमें गदायुद्ध जाननेके कारण गदा ग्रहण करता हुआ ॥ ६३ ॥ पर्वतकी तुल्य सारवाली और बड़ी हठ और मयानक गदाको ग्रहण कर उसके वेगसे अश्विनीकुमारको ताड़न किया ॥ ६४ ॥ प्रकाशमान दीर्घ हठ और रोमहर्षोंको उपजानेवाले त्रिशूलको अश्विनी-कुमारने धारण कर वृत्रासुरको रा ॥ ६५ ॥ उस गदायुद्धको जाननेवाला वृत्रासुर अपनी गदाके अग्रभागसे त्रिशूलको भेदन कर वेगसे अश्विनीकुमारके ऊपर दौड़ा, जैसे सर्पके प्रति गरुड ॥ ६६ ॥ वृत्रासुरने आकाशमें कूद पर्वतके शिखरकी तुल्य गदाको घुमाय अश्विनीदेवताकी छातीमें मारी ॥ ६७ ॥

तां प्रगृह्य महाभीमामयः सारमयीं दृढाम् ॥ अश्विनो सहस्रागम्य ताडयामास वीर्यवान् ॥ ६४ ॥ दीप्यमानं ततः शूलमश्वी सुविपुलं दृढम् ॥ प्रासृजद्वृत्रेदेत्याय सहसा रोमहर्षणम् ॥ ६५ ॥ भट्क्त्वा शूलं गदाग्रेण गदायुद्धविशारदः ॥ अश्विनं सहसाभ्यर्च्य गरुत्मानिव पन्नगम् ॥ ६६ ॥ सोऽन्तरिक्षात्समुत्पत्य विधूय महतीं गदाम् ॥ नासत्योपरि चिक्षेप गिरिशृङ्गोपमां बली ॥ ६७ ॥ गदयाभिहतः सोऽश्वस्त्यक्त्वा शूलमनुत्तमम् ॥ प्रयातः सहसा तत्र यत्र युद्धयाति वासवः ॥ ६८ ॥ पराजित्य तु संग्रामे अश्विनं भीमविक्रमम् ॥ जयाश्रिया सेव्यमानो वृत्रो युद्धे व्यवस्थितः ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वृत्रासुरोत्कर्षवर्णनं नाम सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तत्रैव तु महायुद्धे रणाजिदेवसत्तमः ॥ युध्यते सह दैत्येन एकचक्रेण धीमता ॥ १ ॥ प्रच्छाद्य रथपन्थानमुत्क्रोशंश्च महाबलः ॥ एकचक्रस्य सेन्यं तच्छरवर्षैरवाकिरत् ॥ २ ॥ महासुरा महावीर्या महापाटिशयोधिनाः ॥ शूलानि च भुशुण्डीश्च क्षिपन्ति स्म महारणे ॥ ३ ॥

तब गदासे हनन हुआ अश्विनीदेवता त्रिशूलको त्याग वेगसे वहां गया जहां इन्द्र युद्ध करता था ॥ ६८ ॥ इस प्रकार बड़े पराक्रमी अश्विनीदेवताको रणमें जीत जयरूप शोभासे सेवित हुआ वृत्रासुर युद्धमें स्थित हुआ ॥ ६९ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां सप्तपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५७ ॥ वैशम्पायनजी बोले, हे जनमेजय ! देवताओंमें श्रेष्ठ रणाजि नाम देवता तिसी युद्धमें एकचक्र दैत्यके संग युद्ध करने लगा ॥ १ ॥ वह रणाजि रथके पंथको रोक बड़े शब्दोंको करनेवाली एकचक्रकी सेनाको बाणोंकी वर्षासे आच्छादित करने लगा ॥ २ ॥ महावीर्यवाले और महापाटि-

सोंसे युद्ध करनेवाले महासुर त्रिशूल भुशुंडी शस्त्रोंको रणमें देवताओंके सन्मुख फेंकने लगे ॥ ३ ॥ गदाशक्तिसे मिली हुई अकल्याणरूप दैत्योंकी की हुई ऐसी त्रिशूलकी वर्षा चराचरको दुर्निवार्य होने लगी ॥ ४ ॥ और महापर्वतोंके शिखरोंकी तुल्य आकारवाले, महापराक्रमोंवाले महारथो देवता और असुर परस्पर सन्मुख हो युद्ध करने लगे ॥ ५ ॥ एकचक्र दैत्य रथमें सैकड़ों घोड़े युक्त कर हिरण्यकाशिपुके रथकी तुल्य रथमें स्थित हो युद्ध करने लगा ॥ ६ ॥ घोड़ोंके पैरोंसे और रथके पहियोंके शब्दसे एकचक्रके बाणोंसे सैकड़ों देवता मृत्युको प्राप्त हो गये ॥ ७ ॥ छोटे चित्राविचित्र और

तच्छूलवर्ष सुमहद्गदाशक्तिसमाकुलम् ॥ अविशदितिजैर्मुक्तं दुर्निवार्यं चराचरेः ॥ ४ ॥ अन्योन्यमभिवर्तन्ते देवासुरगणा युधि ॥ महाद्रिशिखराकारा वीर्यवन्तो महाबलाः ॥ ५ ॥ तुरङ्गमाणां तु शतं युक्तं तस्य महारथे ॥ महासुरवरस्येव हिरण्यकाशिपोर्युधि ॥ ६ ॥ तेषां चरणपातेन चक्रनेमिस्त्वेन च ॥ तस्य बाणनिपातैश्च हता वै शतशः सुराः ॥ ७ ॥ ततः स लघुभिस्त्रिभैः शरैः सन्नतपर्वाभिः ॥ सायुधानच्छिन्नत्कुद्धः शतशोऽथ सहस्रशः ॥ ८ ॥ बध्यमानाः शरैस्तीक्ष्णै रथद्विरदबाजिनः ॥ गमिताः प्रक्षयं केचिन्निदशैर्दानवा रणे ॥ ९ ॥ ततः प्रक्षयिमाणांस्तानुपप्रेक्ष्य दितेः सुताः ॥ त्यक्त्वा बाणाव्यवर्तन्त प्रगृहीतवरायुधाः ॥ १० ॥ ते दिशो विदिशश्चैव प्रति- युद्धप्रहारिणः ॥ अभ्यग्नन्निशितैः शस्त्रैर्देवान्दितिसुता रणे ॥ ११ ॥ रणाद्विचलितं घोरं परमं तिग्मतेजसम् ॥ मुमोचास्त्रं महाबाहुर्मथनं नाम संयुगे ॥ १२ ॥ ततः शस्त्राणि शूलानि निशितानि सहस्रशः ॥ अतिवीर्येण महता दितिजः संप्रचिच्छिदे ॥ १३ ॥

मोटी गांठोंवाले बाणोंसे वह रणाजि देवता सैकड़ों हजारों योधाओंको छदन करने लगे ॥ ८ ॥ देवताओंके तीक्ष्ण बाणोंसे बध किये हुए हस्ती घोड़े दानव मृत्युको प्राप्त हो गये ॥ ९ ॥ क्षीयमाण दैत्योंको देख और घनुषोंको धारण करते हुए अन्य दैत्य देवताओंको निवृत्त करते हुए ॥ १० ॥ प्रहार करते हुए दैत्य दिशा और विदिशाओंमें स्थित हो और पाने २ बाणोंसे देवताओंको हनन करने लगे ॥ ११ ॥ जलने हुए अत्यन्त तेजवाले घोररूप मथन नाम अस्रको रणाजि दैत्योंपर छोड़ता हुआ ॥ १२ ॥ तब अस्र और त्रिशूल सहस्रों हथियारोंको वह एकचक्र अपने अस्त्रसे छेदन करने लगे ॥ १३ ॥

और सम्पूर्ण त्रिशूलोंको छेदन कर वह एकचक्र महासुर पैंने २ दश बाणोंसे तिस रणाजिको वेधन करता हुआ ॥ १४ ॥ और वह एकचक्र शशोंके वेगका हनन कर जलते हुए वेगवान् अश्वोंसे देवताओंके सहस्रों सेनापतियोंका मारने लगा ॥ १५ ॥ छेदन किये हुए तिन्होंके शरीरसे रुधिर निकलने लगा कि जैसे वर्षाकालमें पर्वतोंके शिखरपरसे जल गिरता हो ॥ १६ ॥ और इन्द्रके वज्रकी तुल्य स्पर्शवाले वेगवंत कुटिलतारहित ऐसे दैत्योंसे हनन किये हुए देवता त्रासको प्राप्त हो गये ॥ १७ ॥ एकचक्रके रथमें स्थित मज्जयुधको देखते हुए जो सम्पूर्ण आभूषणोंसे शब्दायमान और समुद्रके शब्दकी छित्त्वा शूलेन तान्सर्वानेकचक्रो महासुरः ॥ अभ्यविध्यत तं साध्यं दशभिर्निशितैः शूरेः ॥ १४ ॥ अस्त्रवेगेन इत्थेव सोऽस्त्रैस्तस्यानु-
सेनिकान् ॥ ज्वलितेरपरेः शीघ्रिस्तानविध्यत्सहस्रशः ॥ १५ ॥ तेषां छिन्नानि गात्राणि विसृजन्ति स्म शोणितम् ॥ प्रावृषीवाम्बुवृष्टीनि
शृङ्गाणि धरणीभृताम् ॥ १६ ॥ इन्द्राशनिसमस्पर्शैर्निपतद्भिरजिह्वगेः ॥ दितिर्जैर्वेध्यमानास्ते वित्रेसुः सुरसत्तमाः ॥ १७ ॥ एकचक्रे
रथे तिष्ठन्नपश्यद्गजयूयपम् ॥ वराभरणनिहादान्तसमुद्रस्वननिःस्वनान् ॥ १८ ॥ मत्तान्सुविहितान् दृष्टान्महामात्रैरधिष्ठितान् ॥
कुलीनान्वीर्यसंपन्नान् प्रति द्विरदधातिनः ॥ १९ ॥ शिक्षितान् गजशिक्षायाभैरावतसमान्युधि ॥ न्यहनत्सुरसेन्यस्य गजान् गज
इवासुरः ॥ २० ॥ विक्षरन्तो महानागान्भीमवेगास्त्रिधा मदम् ॥ मेघस्तनितनिर्घोषान्महाद्रीनिव चोत्थितान् ॥ २१ ॥ सहस्रसंमितान्
दिव्याजाम्बूनदपरिष्कृतान् ॥ सुवर्णजालैर्विततांस्तरुणादित्यवर्चसः ॥ २२ ॥ एकचक्रो गदापाणिर्बलवान्गदिनां वरः ॥ उत्सारयामास
गजान्महाभ्राणीव मारुतः ॥ २३ ॥

तुल्य शब्दवाले ॥ १८ ॥ मदोन्मत्त और भ्रष्ट पीलवानोंसे युक्त अच्छे कुलोंमें उत्पन्नवाले और बड़े पराक्रमीवाले दूसरे हाथियोंको मारनेवाले ॥ १९ ॥ और गजशिक्षामें निपुण बैरावत हस्तिपोंकी तुल्य हस्तिपोंको वह एकचक्र अपने फरसों और शरोंसे हनन करने लगा कि जैसे हस्तीको हस्ती मारता है ॥ २० ॥ और भयानक रूपवाले तीन जगहसे मदोंको झिरते हुए मेघके गर्जितकी समान शब्द करने लगे, और पर्वतकी नई ऊंचे ॥ २१ ॥ सहस्रों भ्रष्ट और सुवर्णके गहनोंवाले, और तरुण सूर्यकी तुल्य कांतिवाले ॥ २२ ॥ हस्तिपोंको गदायुद्ध करनेवालोंमें भ्रष्ट हाथमें गदाको धारण किये एकचक्र

ऐसे लगाने लगा जैसे मेवोंको बायु ॥ २३ ॥ हस्तियोंको हनन करनेवाला एकचक्र गदासे सम्पूर्ण हस्तियोंको हनन कर फिर घोड़ोंके समूहको देखने लगा ॥ २४ ॥ तोतेकी समान वर्णवाले कच्छ मोरकी तुल्य वर्णवाले कबूतर और हंसके सम वर्णवाले ॥ २५ ॥ मल्लिकाकी तुल्य नेत्रोंवाले और कौंचकी तुल्य वर्णवाले मनकी तुल्य वेगवाले घोड़ोंकी सेनाको वह महाबाहु ॥ २६ ॥ एकचक्र अपनी गदासे भेदन करने लगा; और रणाजि रणमें एकचक्रके कर्मको देख ॥ २७ ॥ वह श्रीमान् अचिन्त्यपराक्रमी रणमें उपरामको प्राप्त हो देवताओंकी सेनामें गया; गदायुद्धमें कुशल रथोंके समूहोंका पति ॥ २८ ॥

निहत्य गदया सर्वास्तांगजांगजमर्दनः ॥ भूयोऽश्वसंचान्तस बली निरेक्षत महासुरः ॥ २४ ॥ शुक्रवर्णानृष्यवर्णान्मयूरसदृशास्तथा ॥ पारावतसवर्णाश्च हंसवर्णास्तथैव च ॥ २५ ॥ मल्लिकाक्षान्विरूपाक्षान् कौश्रवर्णान्मनोजवान् ॥ अश्वसेन्यं महाबाहुस्तदप्रतिमपोरुषः ॥ २६ ॥ निषूदयामास बली गदया भीमविक्रमः ॥ रणाजिस्तस्य समरे सर्वान्दृष्ट्वा सुरद्विषः ॥ २७ ॥ अचिन्त्यविक्रमः श्रीमानभ्ययादेववाहिनीम् ॥ गदायुद्धेषु कुशलो रथेन रथयूथपः ॥ २८ ॥ दृष्टसेन्यां महाबाहुः प्रस्थितः शक्रसन्निधौ ॥ त्रिशच्छतसहस्राणि रथानां विनिहत्य सः ॥ २९ ॥ रणेऽतिष्ठत दैत्येन्द्रो विधूम इव पावकः ॥ तस्मिन्नेव तु संग्रामे बलवत्तो महासुरः ॥ ३० ॥ मृगव्याधं महात्मानं योधयत्यजितं रणे ॥ मृगव्याधस्य रुद्रस्य महापारिषदास्तथा ॥ ३१ ॥ समुत्पेतुर्बल दृष्ट्वा हुताग्निसमतेजसः ॥ गजेर्मते रथेर्दिव्यैर्वाजिभिश्च महाजवेः ॥ ३२ ॥ अस्त्रैश्च निशितैर्बाणैः शरैश्चानलसन्निभैः ॥ ददृशुस्ते ततो वीरा दीप्यमानं महासुरम् ॥ ३३ ॥ रश्मिवन्तमिवोद्यन्तं सुतेजोरश्मिमालिनम् ॥ संग्रामस्थं महावेगं महासत्त्वं महाबलम् ॥ ३४ ॥

महाबाहु रणाजि इन्द्रके समीप गया; और वह एकचक्र तीस सहस्र योधाओंको मार ॥ २९ ॥ रणमें ऐसे स्थित हुआ कि जैसे धूमरहित अग्नि, और उसी संग्राममें बलनाम दैत्य ॥ ३० ॥ मृगव्याध महात्मा रुद्रके संग युद्ध करने लगा; और होमी हुई अग्निके तुल्य तेजवाले मृगव्याधके पार्षद ॥ ३१ ॥ हुताग्निकी समान तेजवाले मनकी समान वेगवान् हस्ती रथ घोड़ोंसे सवार हो और बलको देख सन्मुख दौड़े ॥ ३२ ॥ पाने अस्त्र और तीक्ष्ण भालेसे युक्त हुए उस महाबली असुरको देवता देखने लगे ॥ ३३ ॥ प्रकाशमान सूर्यकी समान उदय होते हुए सूर्यकी किरणोंके तुल्य महावेगवान् महाबली ॥ ३४ ॥

और महामति बड़े उत्साहयुक्त बड़े शरीर और बड़े रथवाले महायोध संपूर्ण दिशाओंमें स्थित बलको देख ॥ ३५ ॥ एकवार चारों ओरसे संप्रहार करने लगे; और सब प्रकार लोहेके बने पीतरंजवाले तीक्ष्ण मुखोंवाले ॥ ३६ ॥ बाणोंको वह मृगव्याध बलके महापर्वतकी समान शिरमें मारता हुआ, और शिरमें मारे हुए सात बाणोंसे वेधित हुआ ॥ ३७ ॥ बल दैत्य दशों दिशाओंको शब्दायमान करता हुआ आकाशमें उछला तब धनुषको चढ़ाये महाबली रथमें स्थित मृगव्याधने ॥ ३८ ॥ प्रसन्न हो आकाशमें बलके पीछे गमन किया; और तिस बलको आकाशमें बाणोंकी वर्षासे ऐसे आच्छादन

महामतिं महोत्साहं महाकायं महारथम् ॥ समीक्ष्य तं महायोधं दिक्षु सर्वास्त्ववस्थितम् ॥ ३५ ॥ ततः प्रहरणेघोरैरभिपेतुः समन्ततः ॥ तस्य सर्वायसास्तीक्ष्णाः शराः पीतमुक्ताः, श्विताः ॥ ३६ ॥ शिरस्येद्रिप्रतीकाशे मृगव्याधेन पातिताः ॥ तैश्च सप्तभिराविष्टाः शरैः शिरसि चार्पितेः ॥ ३७ ॥ उत्पपात तदा व्योम्नि दिशो दश विनादयन् ॥ ततस्तं त्रिदशो वीरः सरथः सज्जकार्मुकः ॥ ३८ ॥ अनुवव्राज संहृष्टः स्वे तदा स महाबलः ॥ असुरं छादयामास तं व्योम्नि शरवृष्टिभिः ॥ ३९ ॥ वृष्टिमानेव जीमूतो निदाघान्ते धराधरम् ॥ अर्धमानस्तत्तस्तेन मृगव्याधेन दानवः ॥ ४० ॥ चकार निनदं घोरमम्बरे जलदो यथा ॥ स दूरं सदसोत्पत्य मृगव्याधरथं प्रति ॥ ४१ ॥ निपपात महावेगः पक्षवातेरिगिरिण्या ॥ बभञ्ज च ततो दैत्यो भ्रमेषाकूबरं रथम् ॥ ४२ ॥ मृगव्याधः परित्यज्य स्थितो भूमौ महाबलः ॥ विरथं प्रेक्ष्य रुद्रं तु तस्य पारिषदाः शुभाः ॥ ४३ ॥ उत्थिता घोररक्ताक्षा व्योम्नि मुद्गरपाणयः ॥ स तु तैः सदसोत्थाय वेष्टितो विमलेऽम्बरे ॥ ४४ ॥

करता हुआ ॥ ३९ ॥ कि जैसे ग्रीष्मकालके अंतमें पर्वतको मेघ आच्छादन करते हैं; मृगव्याधसे पीडित हुआ वह बल दैत्य ॥ ४० ॥ आकाशमें मेघकी तुल्य बड़ा शब्द कर बल दैत्य आकाशमें ऊंचे चढ़ और मृगव्याधके रथपर ऐसे गिरा ॥ ४१ ॥ कि जैसे पत्तोंवाला पर्वत गिरता हो, उससे मृगव्याधका रथ चूर्ण हो गया ॥ ४२ ॥ और टूटे हुए रथका परित्याग कर वह मृगव्याध भूमिमें स्थित हुआ, उनके पार्षद रुद्रको विरथ देख ॥ ४३ ॥ हाथोंमें मुद्गरोंको धारण करे क्रोधयुक्त लाल २ नेत्रोंवाले आकाशमें क्रूरे, और वह बलभी शीघ्र उठकर आकाशमें युद्ध करने लगा ॥ ४४ ॥

और उनके मुद्रोंसे ऐसे मर्दित हुआ जैसे फरसोंसे वृक्ष, और नरुडकी समान पराक्रमवाला वह बल दैत्य तिन गणांके वेगसे हनन हुआ ॥ ४५ ॥ फिर भूमिमें गिरा वह बल शाखाओंसे युक्त सालवृक्षको उखाड़ ॥ ४६ ॥ और सम्पूर्ण रुद्रके गणोंको हनन करने लगा और तिन गणांसे छेदन किया हुआ और रुधिरके समूहोंसे युक्त हुआ ॥ ४७ ॥ उदय होते हुए बालसूर्यकी समान दानव शोभित हुआ और मृग सर्प, वृक्षसाहित पर्वतके शिखरको उखाड़ ॥ ४८ ॥ वह दानव बलसे पूर्ण रुद्रके पार्श्वोंको हनन करने लगा, तब उन महापार्श्वोंके नष्ट होनेसे ॥ ४९ ॥ वह वीर्यवान् शेष सेनाको नाश करने लगा, मुद्गरैरर्दितो भीमैर्वृक्षः परशुभिर्यथा ॥ तेषां वेगवतां वेगं निहत्य स महारथः ॥ ४९ ॥ निपपात पुनर्भूमौ सुपर्णसमविक्रमः ॥ स सालवृक्षमुत्पात्य महाशाखं महाबलः ॥ ४६ ॥ सर्वान्पारिषदान्त्संख्ये सुदयामास दानवः ॥ स तैर्वीजितदेहस्तु रुधिरौघपरिप्लुतः ॥ ४७ ॥ शुशुभे दानवश्रेष्ठो बालसूर्य इवेदितः ॥ अथोत्पात्य गिरेः शृङ्गं समृगव्यालपादपम् ॥ ४८ ॥ जवान तान्पारिषदान्त्समरे दानवेश्वरः ॥ ततस्तेषु च भग्नेषु महापारिषदेषु वै ॥ ४९ ॥ बलं तदवशेषं तु नाशयामास वीर्यवान् ॥ अश्वैश्चाङ्गजैर्नागान्याधान्याधै रथात्रयेः ॥ ५० ॥ दानवः सुदयामास युगान्तेऽन्तकवत्प्रजाः ॥ हतैरश्वैश्च नागैश्च भग्नैश्च महोरथैः ॥ ५१ ॥ त्रिदशैश्चाभवद्भूमौ रुद्रमार्गा समन्ततः ॥ एवं बलः स दैत्येन्द्रो मृगव्याधश्च वीर्यवान् ॥ ५२ ॥ युधि प्रवृद्धो बलिनौ प्रभिन्नावित्र वारणौ ॥ ५३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तत्रैव युध्यते रुद्रो द्वितीयो राहुणा सह ॥ विश्रुतस्त्रिषु लोकेषु क्रोधात्मा ह्यज एकपात् ॥ ५४ ॥ तद्यथा सुमहयुद्धं तुमुलं लोमहर्षणम् ॥ आसीत्प्रतिभयं रौद्रं वीराणां जयमिच्छताम् ॥ ५५ ॥

घोड़ोंसे घोड़ोंको हस्तियोंसे हस्तियोंको और योधाओंसे योधाओंको रथोंसे रथोंको ॥ ५० ॥ यह बल ऐसे हनन करने लगा कि जैसे प्रलयकालमें प्रजाको काल मारता है, और हनन किये हुए घोड़े हस्तों रथोंसाहित ॥ ५१ ॥ देव दानवसे सम्पूर्ण पृथ्वी भयानक मार्गवाली होती हुई, इस प्रकारसे बल दैत्य मृगव्याध रुद्र ये दोनों बली ॥ ५२ ॥ रणमें ऐसे युद्ध करने लगे जैसे मतवाले दो हाथी लड़ने हों ॥ ५३ ॥ वैशम्पायन बोले, तीनों लोकोंमें विख्यात क्रोधकी मूर्ति और एक पैरवाला दूसरा अज नाम रुद्र तिसी रणमें राहुके संग युद्ध करने लगा ॥ ५४ ॥ उस समय जयकी इच्छा

६. ६.
॥ १३६ ॥

करते हुए तिन दोनों शूरवीरोंका बड़ा तुमुल और रोमहर्षोंकी उपजानेवाला भयानक रौद्र युद्ध होने लगा ॥ ५५ ॥ देवता और दानवोंके शरीरोंसे बड़ी दुस्तर और केशरूपी दूबोंको वहानेवाली शरीरोंके समूहोंको वहाती हुई रुधिरकी नदी बहने लगी ॥ ५६ ॥ भयानक आळतिवाले समर्थ क्रोधित हुए रुद्र शत्रुओंकी सेनाको विदारण करनेवाले सौ सुखोंवाले राहुको युद्धमें हनन करने लगे ॥ ५७ ॥ और देशोंके बाणोंसे क्रोधित हुए भीमान् रुद्र राहुके घोड़े सारथिसहित सुवर्णजडित रथको भेदन करते हुए ॥ ५८ ॥ महाबली एक रुद्रके पार्षदने प्रसन्न हो रणमें अपनी शक्तिसे राहुकी छातीमें वेधन किया ॥ ५९ ॥ और दानवोंमें भेद क्रोधसे मूर्च्छित भिन्नगात्र राहु आते हुए रुद्रके रथको ॥ ६० ॥ तलमहारसे क्रोधित और मूर्च्छित हो देवदानवेदेहेस्तु दुस्तरा केशशाङ्गला ॥ शरीरसंघातवहा प्रसृता लोहितापगा ॥ ६१ ॥ आजघानाय संकुद्धो रुद्रो रौद्राकृतिः प्रभुः ॥ राहुं शतमुखं युद्धे शत्रुसैन्यनिवारणम् ॥ ६२ ॥ तस्य काञ्चनचित्राङ्गं रथं साश्वं ससाराथिम् ॥ जघन समरे श्रीमान् कुद्धो दैत्यस्य सायकैः ॥ ६३ ॥ तस्य पारिषदस्त्वेकः शरशक्त्या महाबलः ॥ बिभेद समरे दृष्टो दानवं तं स्तनान्तरे ॥ ६४ ॥ स भिन्नगात्रो रुद्रेण तथा पारिषदैरपि ॥ रुद्रस्य रथमायान्तं स राहुर्दानवोत्तमः ॥ ६५ ॥ प्रमथ्य तलेनाशु सङ्घाता क्रोधमूर्च्छितः ॥ भिन्नगात्रं शरेस्तीक्ष्णैर्मैरु सूर्य इवांशुभिः ॥ ६६ ॥ इतैर्दानवमुख्यैस्तु रुद्रेणामिततेजसा ॥ रुद्रपारिषदान्तसंनिजघान महासुरः ॥ ६७ ॥ वर्तमाने महाघोरे संग्रामे लोमहर्षणे ॥ रुधिरौघा महावेगा महानद्यः प्रसुखुवुः ॥ ६८ ॥ दानवं समरे रुद्रो नीलाञ्जनवयोपमम् ॥ निर्विभेद शरेस्तीक्ष्णैर्मैरु सूर्य इवांशुभिः ॥ ६९ ॥ इतैर्दानवमुख्यैश्च शक्तिशूलपरश्वधैः ॥ पतितैः पर्वताभेश्च दानवैः कामरूपिभिः ॥ ७० ॥ उसने मथन किया वह सूर्यकी किरणोंके समान तीक्ष्ण बाणोंसे भिन्न शरीर हो गया ॥ ७१ ॥ राहुने तीक्ष्ण बाणोंसे रुद्र और रुद्रके पार्षदोंको वेगसे वेधन किया ॥ ७२ ॥ और रोमहर्षोंको उपजानेवाले रौद्र वर्तमान युद्धमें रुधिरके समूहोंको बहनेवाली बहुतसी महानदी वेगसे बहने लगी ॥ ७३ ॥ और नीले पर्वतकी समान राहु दानवने तीक्ष्ण बाणोंसे रुद्रको ऐसे वेधन किया कि जैसे किरणोंसे मेरुपर्वतको सूर्य ढकता है ॥ ७४ ॥ और विशुद्ध शक्ति फरसेसे हनन हुए पर्वतकी समान पृथ्वीमें गिरे हुए इच्छापूर्वक विचरनेवाले ॥ ७५ ॥

भा. ६.
५. १३६

॥ १३६ ॥

दानवोंमें मुख्य दानवोंसे किया हुआ रोमहर्षोंको उपजानेवाला महाघोर युद्ध हुआ. उसमें दैत्य टेसूके फूलकी समान दीखने लगे, महामेरु, मृदंग, पणव ॥ ६६ ॥ शंख और पटहसे मिलकर महाशब्द हो गया, और शब्दको करते हुए मरे हुए दैत्य ॥ ६७ ॥ और देवोंका उस रणमें दारुण शब्द सुनाई आने लगा, और घोड़ोंको सुम और रथकी पुटीसे उठी हुई ॥ ६८ ॥ पृथ्वीकी रज सम्पूर्ण योधाओंका मार्ग और नेत्रोंको रोकती हुई सब पृथ्वी उस समय शस्त्ररूपी पुष्पोंके उपहारवाली हो गई ॥ ६९ ॥ दुःखपूर्वक दर्शनवाली और दुःखसे प्राप्त होनेको योग्य मांसरुधिरकी कीचवाली रणभूमि हो गई, और

वर्तमाने महाघोरे संग्रामे लोमहर्षणे ॥ विरेजुस्ते तदा दैत्याः पुष्पिता इव किंशुकाः ॥ महाभेरिमृदङ्गानां पणवानां च निःस्वनः ॥ ६६ ॥ शङ्खेषु स्वनोन्मिश्रः संबभूवादुतोष्मः ॥ इतानां स्वनतां तत्र दैत्यानां चापि निःस्वनः ॥ ६७ ॥ देवानां च तथा तत्र शुश्रुवे दारुणो महान् ॥ तुरङ्गमसुरोत्कीर्णं रथनेमिसमुत्थितम् ॥ ६८ ॥ क्रोधं मार्गं योधानां चक्षुषि च धराजः ॥ शस्त्रपुष्पोपहरा सा तत्रासी युद्धमेदिनी ॥ ६९ ॥ दुर्दृशा दुर्विभाषा च मांसशोणितकर्दमा ॥ भग्नैः खड्गैर्मदाभिश्च शक्तितोमरपाटिभ्यैः ॥ ७० ॥ अपविद्धैश्च भग्नैश्च रथैः सांग्रामिकैर्दतैः ॥ निहतैः कुञ्जरेर्मतैस्तथा त्रिदशदानवैः ॥ ७१ ॥ चक्राक्षयुगशस्त्रैश्च भग्नैरवनिपातितैः ॥ बभूवायोधनं घोरं पिशिताशनसंकुलम् ॥ ७२ ॥ उत्पेतुश्च कबन्धानि दिक्षु सर्वासु संयुगे ॥ अन्योन्यबद्धवैराणां दैत्यानां जयगृह्णिनाम् ॥ ७३ ॥ संप्रहारस्तथा युद्धे वर्तन्तेऽतिभयंकरः ॥ सेन्यानां संप्रयुद्धानां शूराणामनिवर्तिनाम् ॥ ७४ ॥ अजस्य चेकपादस्य राहोश्चैव महात्मनः ॥ तेषां तु तत्र पततां क्रुद्धानामतिनिःस्वनः ॥ ७५ ॥

भाला, खड्ग, गदा, शक्ति, तोमर, पाटिश ॥ ७० ॥ हथियारोंसे हनन हुए संग्रामके करनेवाले सैकड़ों रथ और मतशाले हस्ती और देवता दानव ॥ ७१ ॥ चक्रशस्त्रसे भग्न और निपातित हुए, मांसके भोजन करनेवालोंसे व्याप्त और महाघोर युद्ध हो गया ॥ ७२ ॥ जयकी इच्छा करते हुए परस्पर बद्ध-वैरोवाले शूरवीरोंके सम्पूर्ण शिरोंसे रहित कबन्ध दिशाओंमें उछलने लगे ॥ ७३ ॥ और युद्धमें पीठ न देनेवाले सम्यक् प्रकारसे युद्ध करनेवाले शूरवीरोंका बड़ा भयंकर प्रहार होने लगा ॥ ७४ ॥ एकपैरवाले अज और महात्मा युद्धमें बल प्रकाश करने लगे सम्पूर्ण सेनाका शब्द होने

लगा ॥ ७५ ॥ जैसे प्रलयकालमें मर्यादाको छोड़े हुए समुद्रोंका होता है, उनमें एक महाबली और बड़ा भीम ऐसा धूम्राक्ष नाम रुद्र ॥ ७६ ॥ मदा परिघ
शूल धारण किये युद्धमें केशीको भेदन करता हुआ; और अनेक प्रकारसे प्रहार करनेवाले और जयानक दर्शनोंवाले ॥ ७७ ॥ रुद्रके प्यारे पार्षद केशिके
सन्मुख दौड़ने लगे; और शोभायमान तपे हुए सुवर्णके कुंडलोंवाला दानव रथमें स्थित हो ॥ ७८ ॥ दानवोंने युक्त दुर्जय केशी रुद्रसे; युद्ध करने लगा;
और संग्राममें चतुर उग्र पराक्रमवाला युद्ध करता हुआ ॥ ७९ ॥ केशिके मुखसे विस्तार करती हुई अग्निकी ज्वाला निकलती हुई सिंहकी तुल्य ऊंचे

उद्वर्त्त इव भूतानां समुद्राणां तु शुश्रुव ॥ तत्रैकस्तु सुधूम्राक्षः श्रामान् रुद्रो मुनीश्वरः ॥ ७६ ॥ विभेद केशिनं शक्त्या गदापरिघशूलभृत् ॥
नानाप्रहरणा घोरा भीमाख्या भीमविक्रमाः ॥ ७७ ॥ निष्पेतु रुद्रदायिता महापारिषदास्तथा ॥ रथमास्थाय च श्रीमांस्तत्तत्काञ्चन-
कुण्डलः ॥ ७८ ॥ दानवैः संवृतः केशी युध्यते युद्धदुर्जये ॥ तस्य संग्रामशोण्डस्य संग्रामेषु युयुत्ततः ॥ ७९ ॥ निपेतुरुग्रवीर्यस्य
ज्वाला हि प्रसृता मुखात् ॥ स तु सिंहर्षभस्कन्धः शार्दूलसमाविक्रमः ॥ ८० ॥ महाजलदसंकाशो मृदङ्गवानिनिःस्वनः ॥ तस्य निष्पत-
मानस्य दानवैः संवृतस्य च ॥ ८१ ॥ बभूव सुमहानादः क्षोभ्यंस्त्रिदिवं यथा ॥ तेन शब्देन विजस्ता त्रिविशानां महाचमूः ॥ ८२ ॥
द्रुमशैलप्रहरणा योद्धुमेवाभ्यवर्त्तत ॥ तेषां च देवदेत्यानां युयुत्सूनां परस्परम् ॥ सन्निपातः सुतुमुलो रौद्रो लोकभयावहः ॥ ८३ ॥
तेषां युद्धं महाघोरं संजज्ञे लोमहर्षणम् ॥ देवदानवसंचानां प्राणास्त्यक्त्वा महाहवे ॥ सर्वे ह्यतिबलाः शूराः सर्वे पर्वतसन्निभाः ॥ ८४ ॥

कंधेवाला शार्दूलकी समान पराक्रमी ॥ ८० ॥ महामेघकी तुल्य कांतिमान् और मृदंगके तुल्य शब्दवाला दानवोंने युक्त युद्धके सन्मुख आता हुआ केशी
दैत्यका ॥ ८१ ॥ स्वर्गको क्षोभ कराता हुआ महान् शब्द होता हुआ उस शब्दसे देवताओंकी सेना डर गई ॥ ८२ ॥ पहाड और पर्वतोंके प्रहारवाला
महायुद्ध हुआ उन देवता और दैत्योंके परस्पर लड़नेका तुमुल शब्द होने लगा; और लोकोंको जयका देनेवाला हो गया ॥ ८३ ॥ तिन्होंका युद्ध
महाघोर और रोमोंको हर्ष करानेवाला हो गया; तिस महान् युद्धमें देवता और दानवोंके समूहके प्राणोंका नाश होने लगा; वे सब अतिबलवाले

शरवीर पर्वतके समान कांतिवाले ॥ ८४ ॥ सब अस्त्रविद्याओंमें निपुण सब शस्त्रोंको उठाये हुए देवता और दानव आपसमें मारनेकी इच्छा करनेवाले प्राप्त हुए; तिन्होंके गर्जनेका शब्द मेघके गर्जनेकी समान होने लगा ॥ ८५ ॥ और महाघोर शब्द जंगम और स्थावर जगत्को कंशनेवाला सुनाई आगे लगा; रक्तकांतिवाली भयंकर धूलि उत्पन्न हुई; और तिन देवते और दैत्योंके समूहोंमें उठी हुई रजसे दशों दिशा रुकती हुई ॥ ८६ ॥ रेशमी वस्त्रकी समान लाल और पांडुवर्णवाली तिस धूलिसे ॥ ८७ ॥ और बहुरूपसे ढक्कनेसे कुछ न दीक्षा, न ध्वजा न पताका न वर्म न घोडा ॥ ८८ ॥ न

सब सर्वास्त्रविद्वांसः सर्वे सर्वायुधोद्यताः ॥ त्रिदशा दानवाश्चैव परस्परजिघांसवः ॥ तेषां वै नदतां शब्दः संयुगे मेघनिःस्वनः ॥ ८५ ॥ शुश्रुवंऽतिमहाघोरश्चरस्थावरकम्पनः ॥ रेणुश्चारुणसंकाशो भीमः स समपद्यत ॥ ८६ ॥ उद्धृतो देवदैत्योधः संरुधो दिशो दक्ष ॥ अन्योन्यं रजसा तेन कौशेयारुणपाण्डुना ॥ ८७ ॥ संवृता बहुरूपेण ददृशुर्न च किंचन ॥ न ध्वजो न पताकाश्च न वर्म तुरगोऽपि वा ॥ ८८ ॥ आयुधं स्यन्दनो वापि दृश्यते नैव सारथिः ॥ स शब्दस्तुमुलस्तेषामन्योन्यं समघावताम् ॥ ८९ ॥ निपेतुरुग्रवीर्यस्य ज्वाला हि प्रसृता मुखात् ॥ स तु सिंहर्षभस्कन्धः शार्दूलसमविक्रमः ॥ ९० ॥ तस्य निष्पतमानस्य दानवैः संवृतस्य च ॥ श्रूयते तुमुलः शब्दो न रूपाणि चकाशिरे ॥ ९१ ॥ दानवास्तत्र संकुद्रा दानवानेव जघ्निरे ॥ त्रिदशास्त्रिदशाश्चैव निजघ्नस्तुमुले तदा ॥ ९२ ॥ न (ते) परांश्च विनिघ्नन्तः स्वांश्च युद्धे महासुरान् ॥ रुधिरार्द्रां तथा चक्रुर्मैदिनीं च महासुराः ॥ ९३ ॥ ततस्तु रुधिरौघेण संसिक्तमुदितं रजः ॥ शरीरशतसंकीर्णं बभूव धरणीतलम् ॥ ९४ ॥

आयुध, न रथ, न सारथी दीक्षता था केवल आपसमें दौडते हुआका शब्द सुनाई देता था ॥ ८९ ॥ और उस उग्रवीर्यके मुखसे अग्नि निकलने लगी; वह सिंहकी समान कंधेवाला शार्दूलकी समान पराक्रमी ॥ ९० ॥ दानवोंसे युक्त युद्धमें झपटा तब बड़ा तुमुल शब्द हुआ जिससे रूप प्रकाशित न हुए ॥ ९१ ॥ और क्रोध कर आपसमें दैत्यही दैत्योंको मारने लगे; और देवतेही देवतोंको काटने लगे ॥ ९२ ॥ ऐसे देवते और दैत्य दूसरोंकी न मार अपनोंहीपर प्रहार कर रुधिरसे गीली पृथ्वीको करते हुए ॥ ९३ ॥ पीछे लोहके समूहसे लीजी हुई धूलि कोमल हो गई, और पृथ्वीतलमें सैकड़ों शव

गिर गई ॥ ९४ ॥ शूल शक्ति गदा तलवार परिघ प्राप्त तोमरोंसे देवते और दैत्य आपसमें काटने लगे ॥ ९५ ॥ और परिवोंके आकार बाहुओंसे रुद्रके पार्षद दैत्योंको पीड़ित करने लगे और दानवभी बड़े २ वृक्ष पत्थर और सूर्यकी ममान प्रकाशित शरोंसे ॥ ९६ ॥ रुद्रके पार्षदोंको काटने लगे इसी अंतरमें कोधी हुआ दैत्य ॥ ९७ ॥ संग्राममें महाबोर अपनी सेनाको प्रसन्न करता हुआ परम क्रोध हर वज्रास्त्र लेकर ॥ ९८ ॥ दिव्यरूप वज्रास्त्रसे रुद्रके पार्षदोंको काटने लगा ॥ ९९ ॥ तब पीड़ित और भ्रांत हुए रुद्रके पार्षद पृथ्वीमें ऐसे गिरे जैसे वज्रने हत हुए पर्वत और छिन्न वृक्ष गिरते

शूलशक्तिगदास्त्रद्वारिघप्राप्ततोमरेः ॥ त्रिदशा दानवाश्चैव जघ्नुरन्योन्यमाहवे ॥ ९५ ॥ बाहुभिः परिघाकारेर्निघ्नन्तः परिघैस्तथा ॥ रुद्रपारिषदान्सर्वान्त्सुदयन्ति स्म दानवाः ॥ रुद्रपारिषदाश्चैव महाद्रुममहाश्मभिः ॥ ९६ ॥ व्यदारयन्नतिक्रम्य शस्त्रैश्चादित्यसंनिभैः ॥ एतस्मिन्नन्तरे क्रुद्धः केशी दानवसत्तमः ॥ ९७ ॥ संग्राममणीं घोरः स स्वान्यनीकानि हर्षयन् ॥ तेषां परमसंकुद्धो वज्रमस्त्रमुदीरयत् ॥ ९८ ॥ वज्रेणास्त्रेण दिव्येन शस्त्रेण च महात्मना ॥ महापारिषदाः सर्वे निहता युधि दुर्जयाः ॥ ९९ ॥ वज्रास्त्रपीडिता भ्रान्ता रुद्रपारिषदा युधि ॥ विप्रकीर्णद्रुमाः पेतुः शैला वज्रहता इव ॥ १०० ॥ एवं सुतुमुलं युद्धमभवल्लोमहर्षणम् ॥ केशिनः सह रुद्रेण तदद्भुतमिवाभवत् ॥ १०१ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे केशिरुद्रयुद्धकथनं नामाष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ वृषपर्वा तु दैत्येन्द्रो विश्वमद्भुतदर्शनम् ॥ निष्कुम्भं योधयामास लोहितार्कसमद्युतिम् ॥ १ ॥ क्रोधमूर्च्छितवक्त्रस्तु ध्रुवन्परमकार्मुकम् ॥ घनुषि प्रेक्ष्य स्रज्जणां सारथिं त्वरितोऽब्रवीत् ॥ २ ॥

हों ॥ १०० ॥ इस प्रकार केशीका रुद्रके साथ तुमुल और रोमहर्षण युद्ध हुआ यह बड़ा युद्ध हुआ ॥ १०१ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे अष्टपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५८ ॥ वैशम्पायन बोले; हे जनमेजय ! वृषपर्वा दैत्योंका राजा लालसूर्यके समान कांतिवाले निष्कुम्भसे युद्ध करने लगा ॥ १ ॥ क्रोधसे मूर्च्छित मुख वृषपर्वा अपने घनुषको कैपाता हुआ शत्रुकी सेनाको देख सारथीसे वेगसे कहने लगा ॥ २ ॥

हे सारथे ! इस भेरे रथको यहीं तुम प्राप्त करो, यह सब देवते मेरी सेनाका नाश करते हैं ॥ ३ ॥ इस कारण युद्धमें श्लाघावाले इन देवताओंको मैं मारनेकी इच्छा करता हूं और इन्हीं देवताओंने दानवोंकी सेनामें बड़ा छिद्र कर दिया है ॥ ४ ॥ तब अतिवेगवाले रथमें स्थित हुआ वह भ्रेष्ठ रथी दैत्य बाणोंसे शत्रुओंको मारने लगा ॥ ५ ॥ तब देवते सन्मुख ठहरनेको समर्थ न हुए युद्धकी तौ कौन कहे; वृषपर्वाके बाणोंसे हत हुए देवते भागने लगे ॥ ६ ॥ तब मृत्युके वशमें प्राप्त हुए तिन देवताओंको देख जातियोंको पीड़ित विचारके महाबलवाला निष्कुंभ युद्ध करनेको तैयार हुआ ॥ ७ ॥ तिस निष्कुंभको अत्रैव तावत्त्वारितं नय मे सारथे रथम् ॥ एते देवाश्च सहिता प्रन्ति नः समरे बलम् ॥ ३ ॥ एतान्निहन्तुमिच्छामि समरश्लाघिनो रणे ॥ एतेहिं दानवानीकं कृतच्छिद्रमिदं महत् ॥ ४ ॥ ततः प्रजविताश्वेन रथेन रथिनां वरः ॥ अरीनभ्यहनत्कुद्रः शरंजालैर्महासुरः ॥ ५ ॥ न स्थातुं देवताः शक्ताः किं पुनर्येष्टुमाहवे ॥ वृषपर्वेषुनिर्भिन्नाः सर्व एवाभिदुद्रुवुः ॥ ६ ॥ तान्मृत्युवंशमापन्नान्वेवस्वतवशं गतान् ॥ समीक्ष्य निहतान् ज्ञातीनवतस्थे महासुरः ॥ ७ ॥ दृष्ट्वा तं तत्र निष्कुम्भं सर्वे ते त्रिदशोत्तमाः ॥ समेत्य सहिताः सर्वे द्रुतं तं पर्यवाश्यन् ॥ ८ ॥ व्यवस्थितं तु निष्कुम्भं दृष्ट्वा त्रिदशसत्तमम् ॥ बभूवुर्बलवन्तो वे तस्यास्त्रबलतेजसा ॥ ९ ॥ वृषपर्वा तु शैलाभं निष्कुम्भं समरे स्थितम् ॥ महेन्द्र इव धाराभिः शरवर्षैरवाकिरत् ॥ १० ॥ अचिन्तयित्वा तु शराञ्छरीरे पतितान्बहून् ॥ स्थितश्च प्रमुखे श्रीमान्ससैन्यः स महाबलः ॥ ११ ॥ संप्रहस्य महातेजा वृषपर्वाणमाहवे ॥ अभिदुद्राव वेगेन कम्पयन्निव मेदिनीम् ॥ १२ ॥ तस्य त्वाधावमानस्य दीप्यमानस्य तेजसा ॥ बभूव रूपं दुर्धर्षं दीप्तस्येव विभावसोः ॥ १३ ॥

देख बहुतसे देवता इकट्ठे हो निष्कुंभके चारों तरफ सहायता करने लगे ॥ ८ ॥ तब उस निष्कुंभको देवताओंमें भ्रेष्ठ स्थित देख उसके अस्त्रबलके तेजसे सब देवते बलवाले होने लगे ॥ ९ ॥ तब पर्वतके समान स्थित हुए निष्कुंभको वृषपर्वा देख बाणोंकी वर्षा इस प्रकार करने लगा जिस तरह पर्वतपर जलधारा गिरती हो ॥ १० ॥ तब शरीरमें लगते हुए बाणोंको विचारकर सेनाके मुखमें स्थित हुआ महाबली निष्कुंभ ॥ ११ ॥ महातेजस्वी हंसकर पृथ्वीको कंपाता हुआ वेगसे वृषपर्वाकी ओर दौढ़ने लगा ॥ १२ ॥ उस तेजसे दीप्तिमान् दौढ़ते हुए निष्कुंभका रूप प्रकाशमान अग्नि की समान

प्रकाशित हुआ ॥ १३ ॥ उस महातेजस्वीने रथको त्याग क्रोधको प्राप्त हो बड़ी शाखावाले और बहुत ऊंचे वृक्षको उखाड़कर ॥ १४ ॥ वृषपर्वाकी ओर
फेंका, दानवने तिस वृक्षको एकही हाथसे ग्रहण कर ॥ १५ ॥ बहुतसा शब्द कर उसे भमाके वृषपर्वाके हाथी पीलवान रथ और रथमें बैठेवाले ॥ १६ ॥
देवताओंको दानवने मारा; उस प्राणोंके हरनेवाले क्रोधी धर्मराजके समान ॥ १७ ॥ वृषपर्वाको प्राप्त हो सब देवते भागने लगे, और देवताओंको
मय देनेवाले वृषपर्वाको आते हुए ॥ १८ ॥ देखकर धनुषधारी निष्कुंज शब्द करने लगा, और क्रोधको प्राप्त हो मर्मको भेदन करनेवाले पेने तीस
रथं त्यक्त्वा महातेजाः सक्रोधः समपद्यत ॥ वृक्षमुत्पाटयामास महातालं महोच्छ्रयम् ॥ १४ ॥ ततश्चिक्षेप तं वृक्षं निष्कुम्भो
वृषपर्वणः ॥ तं गृहीत्वा महावृक्षं पाणिनेकेन दानवः ॥ १५ ॥ विनद्य सुमहानादं भ्रामयित्वा च वीर्यवान् ॥ सगजान्सगजारोहा-सर-
थात्रयिनस्तथा ॥ १६ ॥ जघान दानवस्तेन शाखिना त्रिदशांस्तदा ॥ तमन्तकामिव कुदं समरे प्राणहारिणम् ॥ १७ ॥ वृषपर्वा-
णमासाद्य त्रिदशा विप्रदुद्रुवुः ॥ तमापतन्तं संकुदं त्रिदशानां भयावहम् ॥ १८ ॥ आलोक्य धन्वी निष्कुम्भश्चक्रो ध च ननाद च ॥
स तत्र निशितेवाणोल्लिखद्भिर्मर्मभेदिभिः ॥ १९ ॥ निर्विभेद महावीर्यो निष्कुम्भो दानवाधिपः ॥ शरशक्तिभिरुग्रभिर्दंष्ट्रानामधिपं
प्रभुम् ॥ २० ॥ त्रिदः समरमध्यस्थो रुधिरं प्रास्त्रवद्बहु ॥ उद्विग्ना मुक्तकेशास्ते भग्नदर्पाः पराजिताः ॥ २१ ॥ श्वत्न्तो दुद्रुवुः सर्वे भयादे
वृषपर्वणः ॥ अन्योन्यं प्रममन्थुस्ते आसिता वृषपर्वणा ॥ २२ ॥ पृष्ठवक्राः सुसंवित्राः प्रेक्षमाणा सुदुर्मुहुः ॥ त्यक्तहरणाः सर्वे
कृतास्ते वृषपर्वणा ॥ २३ ॥ संग्रामे युद्धशोण्डेन तदा निष्कुम्भसेनिकाः ॥ तत्रैव तु महावीर्यः प्रहादः कालमाहवे ॥ २४ ॥
बाणोसे ॥ १९ ॥ वृषपर्वा महाबली दानवपतिको निष्कुंजने विद्व क्रिया और उग्र शर शक्तिसे दैत्योंके अधिपानिको विद्व क्रिया ॥ २० ॥ तत्र पीडित
हुआ निष्कुंज युद्धमें शरीरसे बहुतसा रुधिर बहाने लगा; वे उद्विग्न और छूटे बालोंवाले गर्वसे रहित और पराजित ॥ २१ ॥ शासको लेते हुए देवते
वृषपर्वा दैत्यके मयसे भागने लगे, और वृषपर्वासे दुःस्वित किये देवते आपसमें विलोडन करने लगे ॥ २२ ॥ दुःस्वमे मूढ़ हुए पीछेको वारंवार देखने लगे
ऐसे युद्धमें वृषपर्वा ने सब देवताओंके शस्त्र गिरा दिये ॥ २३ ॥ उसी काल संग्रामयुद्धमें निष्कुंजके सैनिक स्थित हुए, उसी समय और महावीर्यवान् ॥ २४ ॥

हिरण्यकशिपुका पुत्र महाद लाल नेत्र किये युद्ध करने लगा और उस दानव वीर महादके हाथसे युद्धकालमें जय प्राप्त किया ॥ २५ ॥ शुक्राचार्य
जयको देनेवाली किया बहुत शीघ्रतासे करने लगे, और अग्निमें हवन करनेसे और मांस गोंको नमस्कार करनेसे ॥ २६ ॥ उस मांस अग्निमें गंधको
पढ़नेवाली सुंर पवन चलने लगी, जयके अर्थ अग्निमंत्रित कर अनेक प्रकारकी मालाओंको ॥ २७ ॥ स्वयं शुक्राचार्यने महादके शुभ्र पिता वंशी,
उस महात्माके युद्धके समय ॥ २८ ॥ अतिवीर्यवाले महादके निमित्त शुक्राचार्य शान्तिकर्म करने लगे, अर्थात् शुक्राचार्यके दश हजार शिष्य महात्मा

योधयामास रत्नाक्षो हिरण्यकशिपोः सुतः ॥ तस्य दानववीरस्य युद्धकाले जयक्रियाः ॥ २५ ॥ चक्रार त्वरया युक्तो भार्गवा जि-
यावदाः ॥ हुताशनं तर्पयतो ब्राह्मणाश्च नमस्यतः ॥ २६ ॥ आज्यगन्धप्रतिवहो मारुतः सुरभिर्वहो ॥ स्रजश्च विविधाश्चित्रा जपार्थ-
मभिमन्त्रिताः ॥ २७ ॥ प्रह्लादस्य शुभे मूर्धन्यावनन्धोशना स्वयम् ॥ कालेन सह संग्रामे प्रयुद्धस्य महात्मनः ॥ २८ ॥ प्रह्लादस्या-
तिवीर्यस्य शान्तिं चक्रे स भार्गवः ॥ दश शिष्यसहस्राणि भार्गवस्य महात्मनः ॥ २९ ॥ यानि दानववीराणां जेषुः शान्तिमनुत्त-
माम् ॥ अयर्वाणमथो दिव्यं ब्रह्मसंस्तवचोदितम् ॥ ३० ॥ रणप्रवेशसदृशं कर्म वैजयिकं कृतम् ॥ ततः सर्वास्त्रविदुषः समरंश्चानि-
वर्तिनः ॥ ३१ ॥ विद्यया तपसा युक्ताः कृतस्वस्त्ययनक्रियाः ॥ धनुर्हस्ताः क्वचिनो वेगेनाप्लुत्य दानवाः ॥ बलिमभ्यर्च्य राजानं
प्रह्लादं पर्यवारयन् ॥ ३२ ॥ आस्थाय परमं दिव्यं रथं पररथारुजम् ॥ नानाप्रहरणाकीर्णं स्रजमिव पर्वतम् ॥ ३३ ॥

दानव वीरकी ॥ २९ ॥ दैत्योंकी जयके अर्थ शान्तिकर्म जाप करने लगे, दिव्य और ब्रह्माकी स्तुतिसे भरित अथर्ववेदके मंत्रसे ॥ ३० ॥ विजयका
देनेवाला रणप्रवेशकी समान वेदकी रीतिसे कर्म करवाता था, तब सब अस्त्रोंको जाननेवाले और युद्धमें नहीं भागनेवाले ॥ ३१ ॥ विद्यावृत्तिसे युद्ध,
और कल्याणरूप कर्मोंसे युद्ध स्वस्तिवाचन किये और धनुर्बोको हाथोंमें धारण करनेवाले और क्वचोंको पढ़ने हुए सब दैत्य बलि राजाकी पूजा कर
प्रह्लादके चारों ओर स्थित हुए ॥ ३२ ॥ तब दिव्य और शत्रुके रथको जय देनेवाले नानाप्रकारके शस्त्रोंसे आकीर्ण वज्रसहित पवनकी समान रथमें

स्थित हुए ॥ ३३ ॥ तब एक मुहुर्तमें सेनाका कोलाहल होने लगा; जैसे मेघके आगममें मेहके विलरपर बिजली प्रकाशित होती है ॥ ३४ ॥ तब अनेक प्रकारकी सेना प्रकाशित होने लगी; तब कमलके फूलोंकी मालाओंसे विभूषित दैत्य युद्ध करनेके अर्थ अपने २ भ्राताओंसे मिलकर तैयार होते रणमें आये कारण कि ये रणप्रिय थे ॥ ३५ ॥ और बड़े २ शकोंके धारण करनेवाला श्रीमान् सुन्दर कचको धारण करनेवाला; श्लिम टोप पहने धनुषको हाथमें लिये परमदुर्जय ॥ ३६ ॥ सेनासे संयुक्त और रथोंके बाजेसहित सहस्रों दैत्य उसके आगे चलने लगे ॥ ३७ ॥ उसके परम दुर्जय रथ

तद्रथैव मुहुर्तेन क्ष्वेडितास्फोटिताकुलम् ॥ मेरोः शिखरमाकीर्णं द्यौरिवाम्बुधरागमे ॥ ३४ ॥ स्रजः पद्मपलाशानामामुच्य सुविभूषिताः ॥ बाणधान्यसंपरित्यज्य निपतन्ति रणप्रियाः ॥ ३५ ॥ महायुधधरः श्रीमान्मुभचर्मधरः प्रभुः ॥ शिरस्त्राणतनुत्राणी धन्वी परमदुर्जयः ॥ ३६ ॥ सिंहासार्द्धवर्षाणां गदतां किङ्किणीकिनाम् ॥ तस्य दैत्यसहस्राणि प्रयान्त्यग्रे महारणे ॥ ३७ ॥ सैन्यपक्षद्वितास्तस्य रथाः परमदुर्जयाः ॥ सप्ततिर्वै सहस्राणि गजास्तावन्त एव च ॥ ३८ ॥ मध्ये व्यूहोदरस्थस्तु कालनेमिमहासुरः ॥ धनुर्विस्फारयामास ननाद प्रणदास च ॥ ३९ ॥ तस्मिन् शतसहस्राणि पुरो यान्ति महाद्युतेः ॥ दानवानां बलवतां शक्रप्रतिमतेजसाम् ॥ ४० ॥ स समं वर्तमानस्तु पक्षाभ्यां विस्तृतो महान् ॥ अभवद्दानवव्यूहा दुर्भेद्यः सर्वदेवतेः ॥ ४१ ॥ पृथी रथसहस्राणि दानवानां धनुर्भूताम् ॥ नानाप्रहरणानां च परिमाणं न विद्यते ॥ ४२ ॥ गदापरिघनिर्घ्रिणोः शूलमुद्गरपट्टिशोः ॥ प्रगृहीतेर्व्यराजन्त दानवाः पर्वतोपमाः ॥ ४३ ॥

शत्रुकी सेनाको मारने लगे; और सत्तर सहस्र रथ और सत्तर सहस्र हाथीके ॥ ३८ ॥ मध्यमें स्थित धनुषको कँपाता हुआ कालनेमि दैत्य शब्द करने और हँसने लगा ॥ ३९ ॥ उस महाद्युतिमान्के आगे इन्द्रकी समान बली सैकड़ों दानव चलने लगे ॥ ४० ॥ यह पक्षोंसे महाविस्तारको प्राप्त हो एकसाथ वर्तमान होता हुआ दानवोंका व्यूह सब देवताओंको दुर्भेद्य हो गया ॥ ४१ ॥ साठ सहस्र रथी संग्राममें नहीं लौटनेवाले धनुषचारी दैत्योंका परिमाण नहीं था ॥ ४२ ॥ गदा, परिघ, निर्घ्रिण, शूल, पट्टिश, मुद्गरोंको ग्रहण किये दैत्य पर्वतकी समान शोभित होने लगे ॥ ४३ ॥

शब्द करते हुए पुकारते हुए और महावीर्यवाले दैत्य युद्ध करने लगे ॥ ४४ ॥ सहस्रों प्रकारके बाजे बजने लगे, अतिवेगवाले घोड़े और हाथियोंके गर्जनेसे ॥ ४५ ॥ और नकारोंके बजनेसे आकाशके गर्जनेके समान शब्द होने लगा; और नकारे मेरी आदिके शब्द सुनाई देने लगे ॥ ४६ ॥ उस शंस और मेरी तुर्यके शब्द तथा रथोंके शब्दोंसे आकाश क्षुब्धित होने लगा ॥ ४७ ॥ सागरके स्फुल्ल सेनासे परितुल्य और कालके समान प्रहार युद्ध करने लगा ॥ ४८ ॥ तब महापराक्रमी प्रह्लादके चोर शब्द करके प्राणी और त्रिलोकी विह्वल स्वरसे हाहाकार करने लगे ॥ ४९ ॥

गर्जन्तो विनदन्तश्च विक्रोशन्तः पुनः पुनः ॥ अयुध्यन्त महावीर्याः समरेष्वनिवर्तिनः ॥ ४४ ॥ तत्र तुर्यसहस्राणि मेरीशङ्कराणि च ॥ हयानां च गजानां च गर्जतामतिवेगिनाम् ॥ ४५ ॥ दुन्दुभीनां च निर्घोषः पर्जन्यनिनदोपमः ॥ शुश्रुवे शङ्खशब्दश्च पटहानां च निःस्वनः ॥ ४६ ॥ तेन शंसनिनादेन मेरीतुर्यरवेण च ॥ निर्घोषेण रथानां च क्रोशतीव नभस्तलम् ॥ ४७ ॥ सागरप्रतिमोघेन बलेन महता वृतः ॥ प्रह्लादोऽयुद्धयत रणे कालान्तकयमोपमः ॥ ४८ ॥ तस्य नादेन रोद्रेण चोरेणाप्रतिमोजसः ॥ विनेदुः सर्वभूतानि त्रेलोक्यविकृतेः स्वनेः ॥ ४९ ॥ अन्तरिक्षात्परं त्यक्त्वा वायुश्च परुषो ववौ ॥ वमन्त्यः पावकं घोरं शिवाश्चैव ववासिरे ॥ ५० ॥ प्रह्लादस्तु महावीर्यः प्रहसन्पुद्गदुर्भदः ॥ उवाच वचनं श्रीमांस्तत्कालक्षममुत्तमम् ॥ ५१ ॥ अद्याहं दर्शयिष्यामि स्वबाहुबलमू-जितम् ॥ अद्य मद्बाणनिहतान्नेवान्द्रक्ष्यथ संयुगे ॥ ५२ ॥ बान्धवा निहता येषां त्रिदशैरिह संयुगे ॥ अद्य निर्वत्तयिष्यन्ति शत्रुमांसानि दानवाः ॥ ५३ ॥

आकाशसे उल्का गिरने लगीं, कठिन वायु चलने लगा, अधिको प्रगट करती हुई शिवामी प्रकाशित होने लगी ॥ ५० ॥ तब महावीर्यवान् दुर्मद भीमान् प्रह्लाद हैंसकर उस कालके योग्य उत्तम वचन कहने लगा ॥ ५१ ॥ अब मैं अपनी बाहुके बलको दिखाऊंगा; हे दैत्यो ! अब मेरे बाणोंसे मेरे हुए देवताओंको तुम देखोगे ॥ ५२ ॥ जिन दैत्योंके बांधव देवतोंने मारे हैं अब उन शत्रुओंके मांसोंको वह दैत्य खावेंगे ॥ ५३ ॥

इस युद्धमें जो यह उठी हुई धूलि, उसको शत्रुओंके लोहूके छिड़कनेसे शांत कहेगा ॥ ५४ ॥ अंधेराके समूहसे हत हुए सूर्य; और सेनाकी धूलिसे लोहित हुए आकाशमें पक्षीजनेके समान भरे बाण गिरने ॥ ५५ ॥ और हे दैत्यो ! अब तुम सब प्रसन्न होकर देवताओंसे भयको त्यागो, और अब मैं कालक्षी इन्द्रको अपने धनुषसे मारूंगा ॥ ५६ ॥ और उग्रबाणोंकरके सब देवताओंको युद्धमें जीतूंगा ॥ ५७ ॥ क्योंकि मेरे पास तूण और सर्पोंके समान बाण अक्षय्य हैं और मेरे अगाड़ी युद्धमें जीनेकी इच्छावाले कौन ठहरनेको समर्थ हैं ॥ ५८ ॥ शत्रुओंके समूहको मारकर

इममद्य समुद्रतं रेणुं समरमूर्द्धनि ॥ अहं तु शमयिष्यामि शत्रुशोणितविस्रवेः ॥ ५४ ॥ तिमिरोघटार्कं तु सैन्यरेण्वरुणीकृतम् ॥ आकाशं संपतिष्यन्ति स्वद्योता इव मे शराः ॥ ५५ ॥ हृष्टाः संपरिमोदध्वं देवेभ्यस्त्यज्यतां भयम् ॥ अद्याहं निहनिष्यामि कालेन्द्रं धनुषा रणे ॥ ५६ ॥ तोषयिष्यामि राजानं बलिं बलवतां रणे ॥ त्रिदशान्तसगणान्द्रक्ष रणे चान्तकमन्तिकात् ॥ ५७ ॥ अक्षयाः सन्ति मे तूणाः शराश्चाशीविषोपमाः ॥ स्यातुं मे पुरतः शक्ताः के रणे जीवितेष्ववः ॥ ५८ ॥ इत्वा रिपुगणांस्तुष्टि-
नुरागश्च राजसु ॥ इतस्य त्रिदिवे वासो नास्ति युद्धसमा गतिः ॥ ५९ ॥ तद्भयं पृष्ठतः कृत्वा रणे दानवसत्तमाः ॥ निहत्येमान-
रीन्सर्वांश्मोदध्वं नन्दने वने ॥ ६० ॥ एवमुक्त्वा महत्सैन्यं प्रहादो दानवोत्तमः ॥ कालसेन्यं महारोद्रं तरसामर्दतासुरः ॥ ६१ ॥ सर्वास्त्रविद्वान्वीरश्च नित्यं चाप्यपराजितः ॥ युद्धे ह्यभिमुखो नित्यं स्वबाहुबलदर्पितः ॥ ६२ ॥ षष्टिं रथसहस्राणि विविधायुध-
धारिणाम् ॥ प्रहादस्यातिवीर्यस्य ते तस्य तनया निजाः ॥ ६३ ॥

राजाकी प्रसन्नता कहंगा और युद्धमें मेरे हुओंका स्वर्गलोकमें वास होता है इस कारण युद्धके समान उत्तम गति नहीं है ॥ ५९ ॥ इस कारण सब दैत्य भयको छोड़कर शत्रुओंको मारकर नन्दनवनमें आनंद करो ॥ ६० ॥ ऐसे दानवभेद प्रहाद दैत्य अपनी सेनासे कहकर वेगसे कालकी महारौद्र सेनाको मर्दित करने लगा ॥ ६१ ॥ सब अस्त्रोंको जाननेवाला शूर नित्य अपराजित युद्धमें सम्मुख रहनेवाला और अपनी बाहुके बलसे गर्वित ॥ ६२ ॥ प्रहादके युद्धमें सम्मुख सबेरे होनेमें नानाप्रकारके शस्त्रोंको धारण करनेवाले दैत्योंके साथ सहस्र रथ स्थित हुए और बहुवसे प्रहादके पुत्र स्थित हुए ॥ ६३ ॥

नानामकारके यज्ञोंके करनेसे क्षमावाले और धर्म करनेवाले और नित्यप्रति व्रतोंमें परायण ॥ ६४ ॥ दाता और भियं वचनको कहनेवाले और शास्त्रोंको पाननेवाले अपनी स्त्रियोंमें रत और इन्द्रियोंको जीतनेवाले दाता बालगमक, सत्य बोलनेवाले ॥ ६५ ॥ नित्यप्रति यज्ञ करनेवाले बाण और अश्व-
विद्यामें चतुर बहुतसे पराक्रमवाले दृढ विक्रमी ॥ ६६ ॥ और मदहाले हाथीकी समान चञ्चलनेवाले और शत्रुकी सेनओंको मर्दन करनेवाले, अपने चर-
णोंसे वृक्षोंको विदीर्ण करनेवाले ॥ ६७ ॥ युद्ध करनेकी इच्छावाले क्रोधसे रंजित नेत्रोंवाले और अपने २ ओष्ठके पुटोंको दशनेवाले, अपनी २

तेस्तु क्रतुशतेरिष्टं विपुलेराप्तदक्षिणेः ॥ क्षान्ता धर्मपरा नित्यं सत्यव्रतपरायणाः ॥ ६४ ॥ दातारः प्रियवक्तारो वक्तारः शास्त्रस्तुषु ॥
स्वदारनिरता दान्ता ब्रह्मण्याः सत्यसङ्गराः ॥ ६५ ॥ यष्टारः क्रतुभिर्नित्यं नित्यं चाध्ययने रताः ॥ इष्वस्त्रकुशलाः सर्वे बहुशो दृढ-
विक्रमाः ॥ ६६ ॥ मत्तवारणविक्रान्ताः शस्त्रैस्तैः प्रमर्दकाः ॥ दारयन्तः पदाक्षेपैः सुघोरान्वातरेचकान् ॥ ६७ ॥ युद्धोत्सुकधिया नित्यं
क्रोधरञ्जितलोचनाः ॥ संदष्टोष्ठपुष्टा दैत्या विनेदुर्भीमविक्रमाः ॥ क्षोडितास्फोटितरैरेन्योन्यं समदर्पयन् ॥ ६८ ॥ वेणुसंस्तरवैश्वेव
सिंहनादैश्च पुष्कलेः ॥ आप्लुत्याप्लुत्य सहसा रणे बहूनेकशः ॥ ६९ ॥ तालमात्राणि चापानि विहृष्य सुमहाबलाः ॥ अमृष्यमाणाः
सहसा दानवाश्चापपाणयः ॥ ७० ॥ सुरासुरैरप्यजितं योधयन्ति रणेऽन्तकम् ॥ प्रतप्तैर्माभरणाः सर्वे ते श्वेतवाससः ॥ ७१ ॥ दानवा
मानिनः सर्वे सर्वे स्वर्गाभिकांक्षिणः ॥ सर्वे जयेषिणो वीराः सर्वे शत्रुवधोद्यताः ॥ ७२ ॥

भुजाओंको बजाकर परस्पर प्रसन्न होनेवाले महापराक्रमी दैत्य शब्द करने लगे ॥ ६८ ॥ शंस वेणु आदि अनेक प्रकारके शस्त्रों और बड़े २ सिंह-
नादोंको करके क्रूद २ दो युद्धमें प्राप्त हो गईने लगे ॥ ६९ ॥ और कितनेक दैत्य ताडवृक्षके समान लम्बे २ धनुषोंको खेंचने लगे; और कितनेक
धनुषबाणोंको हाथमें लिये असह्यशील ॥ ७० ॥ सुरअसुरोंसे अजित कालमें युद्ध करनेमें प्रवृत्त हुए; और तपाये हुए सोनेके महनोंको धारण
किये वे सब सफेद वस्त्रोंको धारण किये ॥ ७१ ॥ अतिबानी और स्वर्गकी इच्छा और जपकी इच्छा करनेवाले शत्रुओंके मारनेमें पुरुषार्थ करने-

काले कालसे युद्ध करने लगे ॥ ७२ ॥ तब पताका ध्वजा मालासे संयुक्त हाथी घोड़े रथोंसे पूर्व और धर्मके मार्गकी इच्छा करनेवाली गर्वित
दैत्योंकी सेना शोभायमान हुई ॥ ७३ ॥ तब भीमपराक्रमी बहुत शब्द करता हुआ बड़े शरीरवाला और बहून्नी व्याधियोंसे युक्त काल चला ॥ ७४ ॥
उसने बलवान् गर्वसे पूर्ण सन्मुख गर्जनेवाले दैत्योंकी बड़ी सेनाको देखा ॥ ७५ ॥ और तिस दैत्योंकी बेगवार सेनाको आती हुई देख व्याधियोंके
सहित कालने प्रतिलोभ प्रकारसे घेर लिया ॥ ७६ ॥ तब दैत्योंकी सेनामें प्रवेश कर लोहके समान लाल नेत्रोंसे अपनी सेनासे युक्त कालने दैत्योंकी

शुशुभे सा चमूदीप्ता पताकाध्वजमालिनी ॥ गजाश्वरथसंवाधा स्वर्गमार्गाभिकांक्षिणी ॥ ७२ ॥ ततः कालः सुनिर्यातो भीमो
भीमपराक्रमः ॥ निनदन्सुमहाकायो व्याधिभिर्बहुभिर्वृतः ॥ ७३ ॥ ददर्श महतीं सेनां दानवानां बभ्रवसाम् ॥ अभिसंजातदर्शानां
कालं समभिगर्जताम् ॥ ७४ ॥ तदायान्तं तदानीकं दानवानां तरस्विनाम् ॥ प्रतिलोभं चकाराशु व्याधिभिः सहितोऽन्तकः ॥ ७५ ॥
प्रविश्य ध्वजिनीं चेष्टां पातयामास दानवान् ॥ कालो रुधिररक्ताक्षः स्वेनानीकेन संवृतः ॥ ७६ ॥ प्रह्लादबलमत्स्यं प्रह्लादं च
महाबलम् ॥ आजघान रणे कालो दण्डमुद्गरपट्टिशैः ॥ ७७ ॥ शरशतशृङ्खिलांश्च सुशानि मुशशानि च ॥ गदाश्च परिघाश्चैव
विचित्राश्च परश्वधाः ॥ ७८ ॥ धनुषि च विचित्राणि शतघ्नीश्च स्थिरायसीः ॥ पात्यन्ते व्याधिभिर्बुद्धे दानवानां चमूमुखे ॥ ७९ ॥
बहवो व्याधयो युद्धे बहून्सुरपुङ्गवान् ॥ व्याधीनापि च दैत्योपा निजप्लुर्बहवो बहून् ॥ ८० ॥

सेनाका नाश किया ॥ ७७ ॥ और सेनाको आनंद देनेवाले प्रह्लाद दैत्यको दंड मुद्गर पट्टिशसे मारने लगा ॥ ७८ ॥ शर शक्ति ऋषि तलवार शूल
मुसल मदा परिघ विचित्र फरसा ॥ ७९ ॥ धनुष विचित्र लोहेकी बनी शतत्रिशोंसे सब व्याधियें दैत्योंकी सेनाको मारने लगीं बहुतसी व्याधी युद्धमें
दैत्योंको मारने लगीं और बहुतसे दैत्यभी बहुतसी व्याधियोंको मारने लगे ॥ ८० ॥ कोई शूउभे और कोई कोई फरसोंसे और परमायुध ॥ ८१ ॥

परिचसे, कोई तलवारसे कटे हुए तडफने पृथ्वीमें भिरे ॥ ८२ ॥ इस प्रकार व्याधियोंने दानवोंको अनेक अङ्गोंसे विदीर्ण किया, और वेनी अनेक आयुधोंसे व्याधियोंको मारने लगे, वे दैत्य उत्तम आयुधवाली व्याधियोंसे ॥ ८३ ॥ खड्ग सुशल तीक्ष्ण प्राप्त तोमर मुद्गरोसे अर्जरित हो फरसोंसे कट पृथ्वीमें भिरने लगे ॥ ८४ ॥ कितनेक मुद्गरोसे आर कितनेक पाट्टियोंसे कटे हुए, कितनेक शस्त्रोंसे कटे हुए और कितनेक मुक्तोंसे मथित हुए ॥ ८५ ॥ और कितनेक दैत्य नेत्रोंसे रहित हुए लोहकी धार मुससे बहाने लगे, तब कितनेक आर्त शब्द करने लगे, कितनेक सिंहकी समान गर्जने लगे ॥ ८६ ॥

शूलेः प्रमथिताः केचित्केचिच्छिन्नाः परश्वधैः ॥ परिघैराहताः केचित्केचिच्च परमायुधैः ॥ केचिद्विधा कृताः खड्गैः स्फुरन्तः पतिता भुवि ॥ ८२ ॥ व्याधयो दानवैरेव नानाशस्त्रैर्विदारिताः ॥ ते चापि व्याधिभिः सर्वे विविधैरायुधोत्तमैः ॥ ८३ ॥ खड्गैश्च मुशलेस्तीक्ष्णैः प्राप्ततोमरमुद्गैः ॥ भिन्नाश्च दानवाः सर्वे निकृताश्च परश्वधैः ॥ ८४ ॥ मुद्गैः पाट्टिभ्यश्चैव व्याधिभिश्च महाबलैः ॥ कृत्वा शस्त्रैरनेकैश्च मुष्टिभिश्च हता भृशम् ॥ ८५ ॥ वेष्टुः शोणितमन्योन्यं विष्टब्धदशनक्षणाः ॥ आर्तस्वरं च नदतां सिंहनादं च गर्जताम् ॥ ८६ ॥ बभूव तुमुलः शब्दः संग्रामे लोमहर्षणे ॥ मुष्टिभिश्चोत्तमाङ्गानि तलेर्मात्राणि चासकृत् ॥ ८७ ॥ सादितानि महीं जग्मुस्तिष्ठतामेव संयुगे ॥ अस्त्रफेना ध्वजावर्तां च्छिन्नबाहुमहोरगा ॥ ८८ ॥ शूलशक्तिमहामत्स्या चापग्राहसमाकुला ॥ रथेषूपलसंबन्धा ध्वजद्रुमलतावृता ॥ ८९ ॥ सशब्दघोरवित्तारा लोहितोदाभवन्नदी ॥ स्वधनुःशक्रधनुषौ काञ्चनाङ्गदविद्युतौ ॥ ९० ॥ तौ दैत्यकालजलदौ शरधारां व्यमुञ्चताम् ॥ तौ महामेषसंकाशौ रथनागगतौ तदा ॥ ९१ ॥

उनको युद्धमें लोमहर्षण उग्रशब्द होने लगा, कितनेक मुक्तोंकी मारसे शिरहीन हो पृथ्वीतलमें भिरे ॥ ८७ ॥ तब आसुरूपी ज्ञागोंवाली और ध्वजारूप भँवरवाली कटे हुए बाहुरूप सर्पोंवाली ॥ ८८ ॥ शूल शक्तिरू महामञ्जोंवाली, धनुषरू ग्राहोंसे संयुक्त रथरूपी पत्थरोंसे संयुक्त ध्वजारूप वृक्षोंसे पूर्ण भूमि हो गई ॥ ८९ ॥ अपने काञ्चनानंद बिजलीकी समान तथा शक्रधनुषकी समान दोनों धनुषोंको ॥ ९० ॥ धारण कर काल और

ह. वं.
॥ १४३ ॥

प्रह्लाद बाणोंकी वर्षा करने लगे; वे दोनों महामेवकी समान रथ और हाथीर चढे ॥ ९१ ॥ जलमरे बादलकी समान कुद हुए तमसुवर्णके बने वस्तर दिव्यहारसे भूषित ॥ ९२ ॥ सूर्य और वैशानर अग्निकी समान शोभित हुए वे दोनों महाबली सेनामें एक दूसरेको ॥ ९३ ॥ वज्रके समान बाणोंसे काटने लगे; परस्परके सम्पर्कसे वह युद्ध दारुण हो गया ॥ ९४ ॥ तब दोनोंके युद्धमें योधाओंकेभी यह निश्चय हुआ कि अब जीना कठिन है तब कितनेक बाणोंसे कटे हुए सब अंगोंवाले और कितनेक प्राणोंसे रहित; और कितनेक लोहूते मीमी हुई छातीवाले योधा पृथ्वीमें गिरने लगे ॥ ९५ ॥

बभ्रुकुरभिकुद्रो साम्बुगर्भाविबाम्बुदो ॥ तप्तकाञ्चनसन्नाहो दिव्यहारविभूषितो ॥ ९२ ॥ तो विरेजतुण्यतो सूर्यवैशानरोपमो ॥ तो महाबलसंकाशावन्योन्यस्य चमुमुत्से ॥ ९३ ॥ शक्राग्निमसमस्पर्शैर्वाणैर्वज्रपुराहवे ॥ परस्परं समाद्यन्त तपोर्धुषि दुरासदम् ॥ ९४ ॥ नाशंसन्त तदा योधा जीवितान्यपि संयुगे ॥ शरीरैर्भिन्नवर्जङ्गा युधि प्रसीगवान्बभूवुः ॥ निपेनुष्योषमुल्लासन्तु रुषिरोक्षितवृक्षतः ॥ ९५ ॥ पतितैर्निष्पताद्भिश्च पात्यमानैश्च संयुगे ॥ बभ्रुव भूः समाकीर्णा योधैरुद्धतस्त्रिजैः ॥ ९६ ॥ अट्टहन्त शरान्घोरास्ते च संदधतोरस्तयोः ॥ अन्तरं ददृशे कश्चित्प्रयतादपि संयुगे ॥ ९७ ॥ लघुत्वाच्च महाबाहु युद्धशौण्डौ महाबलो ॥ मण्डलीभूतधनुषौ सकृदेव बभ्रुवतुः ॥ ९८ ॥ प्रह्लादस्य च बाणोषेर्दुद्रावान्तकवाहिनी ॥ चक्षमाना बलवता वायुनेत्राभ्रमण्डलम् ॥ ९९ ॥ हतदर्पं तु विज्ञाय प्रह्लादः कालमाहवे ॥ अपयातं च समरे द्विषन्तं संप्रतर्क्य तम् ॥ १०० ॥ मत्वा वशगतं चैव प्रह्लादो युद्धदुर्गदः ॥ तत्रैशान्यां चमूं भूयः संममर्द महासुरः ॥ १०१ ॥

गिरने गिरानेवालोंके गिरने गिरानेसे उन प्राणरहितोंसे पृथ्वी समाकीर्ण हो गई ॥ ९६ ॥ कोईही उग्र सपय उा दोनोंका यह अन्तर नहीं देख सका; कि वे कब धनुष चढाते और बाण छोडते हैं ॥ ९७ ॥ शीघ्रानेसे दोनों महाबाहु महाबलवाले मंड शीला धनुषोंको धारण करे एकसेही दीखने लगे ॥ ९८ ॥ प्रह्लादके बाणोंके समूहसे कालकी सेना कटती हुई भागने लगी जैसे वायुसे भेवसमूह भागते हैं ॥ ९९ ॥ तब प्रह्लादने कालको हतदर्प जानकर कि अब समरसे भागा चाहता है और द्वेषयुक्त है ऐसा उसको विचार कर ॥ १०० ॥ अगने वशमें जानकर युद्धों दुर्मद प्रह्लाद धर्मराजकी सेनाको फिर

भा. टी.

प. १ अ. १९

॥ १४३ ॥

मर्दन करने लगा ॥ १ ॥ काल और प्रहादका परस्पर ऐसा युद्ध होने लगा कि न कभी पहले हुआ और न कभी अगली होगा ॥ २ ॥ अद्भुतवर्षिवाला
महारणमें प्रहार करनेवाला प्रहाद वृद्धिको प्राप्त हुआ, और काल युद्धसे चला गया ॥ ३ ॥ इति श्रीमहाभारते लिखेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने
देवासुरयुद्धे एकोनषष्टितमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥ वैशम्पायन कहने लगे, प्रहादका छोटा भाजा अनुहाद अपनी सेनाको ले यज्ञोंकी सेनाको क्षोभित करता
हुआ कुबेरके संग युद्ध करने लगा ॥ १ ॥ अर्थात् बहुतसी सेनाको ले अति प्रतापवाला धनाढ्यस्य कुबेरको पीड़ित करने लगा ॥ २ ॥ और यज्ञोंको

कालप्रहादयोर्युद्धमभवद्यादृशं पुरा ॥ तादृशं सर्वलोकेषु न भूतं न भविष्यति ॥ २ ॥ एतमद्भुतवर्षीया महारणकृतत्रणः ॥ प्रहा-
दस्त्वथ वृद्धोऽत्र कालस्त्वपसृतो रणात् ॥ १०३ ॥ इति श्रीमहाभारते लिखेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कालप्रहादयुद्धे एकोनषष्टि-
तमोऽध्यायः ॥ ५९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ धनाढ्यस्यमनुहादः प्रहादस्यानुजो बली ॥ ससैन्यं योषयामास क्षोभयन्पुत्रादि-
नीम् ॥ १ ॥ महता च बलीचेन त्वनुहादोऽसुरोत्तमः ॥ अर्दयामास संकुद्रो धनाढ्यस्य प्रतापवान् ॥ २ ॥ अमृष्यमाणास्त्रिदशानाह-
वस्थानुदायुधान ॥ चकार कदनं घोरं धनुष्पाणिर्महासुरः ॥ ३ ॥ आवर्त इव संवृते बलस्य महतो महान् ॥ क्षुभितस्याग्नेरस्य
सागरस्येव संप्लवः ॥ ४ ॥ त्रिदशानां शरीरेस्तु दानवानां च मेदिनी ॥ बभूव निचिता घोरैः पर्वतैरेव संप्लवे ॥ ५ ॥ मेरुशृङ्गं तु
रक्तेन रञ्जितं संप्रकाशते ॥ सर्वतो माघवे मासि पुष्पितैरेव किंशुक्लैः ॥ ६ ॥ ह्येवैरेणैवैरश्वैः प्रावर्तत महानदी ॥ शोणितेषा महा-
घोरा यमराष्ट्रविदिनी ॥ ७ ॥ शक्रमेदोमहापङ्कः संप्रकीर्णान्वक्षेत्रा ॥ अत्र ह्यपश्चिरोमीना अङ्गावपयश्चाद्रजः ॥ ८ ॥

धारण करनेवाले और युद्धमें स्थित देवताओंको नहीं सहता हुआ अनुहाद देव धनुषको हाथमें लेकर देवताओंकी सेनाको काटने लगा ॥ ३ ॥
उस समय सेनाका बड़ा घमसान हुआ, जैसे प्रलयमें सागर क्षुभित हो जाता है ॥ ४ ॥ तब देवते और देवोंके शरीरोंसे पृथ्वी पर्वतोंकी समान व्याप्त
हो गई ॥ ५ ॥ और मेरुपर्वतका पृष्ठभाग लोहसे रंगा हुआ प्रकाशित होने लगा जैसे वैशालमें टेमूके फूलोंसे चारों ओर प्रकाश होता है ॥ ६ ॥
तब मेरुदुर्ग वीर हाथी और घोडोंसे व्याप्त महाघोर यमराष्ट्रकी नदी प्रवृत्त हुई ॥ ७ ॥ विष्ठा और मेदस्त्य की चवाली और आंतराती सेनासे युक्त

छिन्नकायावाले शिरस्त्र मछलियोंसे व्याप्त अंगके अवयवरूप शाइलसे पूर्ण ॥ ८ ॥ कंक सारस आदि पक्षियोंसे शक्तिवत वसाह्य ज्ञानोंसे आकीर्ण और
मेघोंके समान शब्द करनेवाली ॥ ९ ॥ कायर पुरुषोंको दुष्कार लोहकी नदी गरवीके अवसानमें हंससमूहसे युक्त वीखने लगी ॥ १० ॥ उस नदीको
दैत्य और देवते तिरने लगे, जैसे पद्मरजसे स्वस्त हुई कमलिनीको हाथी तरते हैं ॥ ११ ॥ पीछे बाणोंको छोड़नेवाले रथमें स्थित और यक्षोंकी सेनाको
मारनेवाले अनुहादको देखकर ॥ १२ ॥ क्रोधको प्राप्त हो कुबेर दैत्योंकी सेनाको कारमे लगा जैसे वायु आकाशसे मेघोंको जमाती है ॥ १३ ॥

गृध्रहंससमाकीर्णं केकिसारसनादिता ॥ वसाफेनसमाकीर्णं प्रोत्कृष्टस्तानितस्वरा ॥ ९ ॥ तां कापुरुषदुस्तारा युद्धभूमौ महानदीम् ॥
नदीमिवातपापाये हंससंघोपशोभिताम् ॥ १० ॥ त्रिदशा दानवाश्चैव तेरुस्ते दुस्तरा नदीम् ॥ यथा पद्मरजोऽधस्तां नलिनीं
गजयूथपाः ॥ ११ ॥ ततः सृजन्तं बाणोचाननुहादं रथे स्थितम् ॥ ददर्श तरसा देवो निघ्नन्तं यक्षवाहिनीम् ॥ १२ ॥ क्रुद्धस्ततो
दैत्यबलं सूदयामास कित्तपः ॥ विक्षिपन्निव स्वे वायुर्महाभ्रपटलं बलात् ॥ १३ ॥ समीक्ष्य तुमुलं युद्धमनुहादश्च वीर्यवान् ॥ रथेना-
दित्यवर्णेन कुबेरमभिदुद्बुधे ॥ १४ ॥ स धनुर्धन्विनां श्रेष्ठो विकृष्य रणमूर्धानि ॥ उत्ससर्ज शिताम्बाणान्वित्तेऽशस्य महात्मनः ॥ १५ ॥
कुबेरं प्राप्य ते बाणा निर्भेद्य सुसमाहिताः ॥ अपरान्यृष्टतो जघ्नुर्व्यासक्तान्यक्षराक्षसान् ॥ १६ ॥ देवः शरैरभिहतो निंशितेर्ज-
लनोपमेः ॥ अनुहादं प्रत्युदियात्संकुद्धः परमाह्वे ॥ १७ ॥ ततो वेश्रवणो राजा क्रुद्धो यक्षगणेः सह ॥ ववर्ष शरवर्षाणि दानवं प्रति
वीर्यवान् ॥ १८ ॥ तद्यथा झारदं वर्षं गोवृषः शीघ्रमामतम् ॥ अपारम्यन्वारयितुं प्रतिगृहन्निमीलितः ॥ १९ ॥

तब तिस उग्र युद्धको देख अनुहाद दैत्य आदित्य वर्णवाले रथमें स्थित हो कुबेरके सम्मुख चला ॥ १४ ॥ धनुषविद्यावालोंमें श्रेष्ठ अनुहाद युद्धमें
धनुष सँचकर पैने २ बाणोंकी वर्षा महात्मा कुबेरके ऊपर करने लगा ॥ १५ ॥ तब वे बाण कुबेरको वेधकर पृष्ठभागमें स्थित हुए यक्षराक्षसोंकोभी
मारने लगे ॥ १६ ॥ अग्निके समान प्रकाशवाले और पैने बाणोंसे हत हुए कुबेरजी युद्धमें क्रोधको प्राप्त हो अनुहाद दैत्यके सम्मुख धावमान हुए ॥ १७ ॥
तब बहुतसी यक्षोंकी सेनासे युक्त अतिवीर्यवान् दानवपर कुबेर बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥ १८ ॥ पीछे जैसे शरद्वृष्टिमें वर्षाकी बूँदोंको गाव और बेल

शिरपर सहते हैं तेसे वह अनुहाद दैत्य बाणोंकी वर्षाको नेत्र बीच सहन करने लगा ॥ १९ ॥ इस प्रकार वह महाभसुर कुबेरकी दारुण बाणवर्षाको सहता नेत्र बीचकर सहन करने लगा ॥ २० ॥ तब बाणोंकी वर्षासे क्रोधको प्राप्त हुआ अनुहाद दैत्य अपने सन्मुख इन्द्रकी केतुके समान प्रकाश-
वान् ॥ २१ ॥ बड़ी दुर्घ शाखाओंवाले फलोंसे युक्त वृक्षको देख उसी समय उसाठ हाथमें ग्रहण कर ॥ २२ ॥ महात्मा कुबेरके अतिवेगवाले घोड़ोंको मारता हुआ; तब अनुहादके इस महत् कर्मको देखकर सब महाभसुर ॥ २३ ॥ सिंहोंके समान शब्द करने लगे, पीछे अनुहाद और कुबे-

एवमेव कुबेरस्य शरवर्ष महासुरः ॥ निमीलिताक्षः सहसा दैत्यः संहति दारुणम् ॥ २० ॥ रोषितः शरवर्षेण घनदेन महासुरः ॥ इन्द्रके-
तुप्रतीक्षामभितोऽपश्यत् द्रुमम् ॥ २१ ॥ प्रवृद्धशाखाषट्पं तरुणाङ्कुरपल्लवम् ॥ उत्पात्य कुपितो दैत्यस्तरुं फलसमन्वितम् ॥ २२ ॥
निजघान द्वाभ्याम्प्रेष्ठान्कुबेरस्य महात्मनः ॥ तस्य कर्म महाघोरं दृष्ट्वा सर्वे महासुराः ॥ २३ ॥ सिंहनादं नदन्ति स्म अनुहादप्रहर्षिताः ॥
तयोस्तु पुमुलं युद्धं संजज्ञे देवदैत्ययोः ॥ २४ ॥ ततस्तौ क्रोधरत्नाक्षान्यान्यवधकाक्षिणौ ॥ अन्योन्यं विविधैः शस्त्रैर्घोरैर्जघ्नतु-
राद्वे ॥ २५ ॥ त्रिदश दानवान्सर्वे मयित्वा प्राणदंस्तदा ॥ दानवैस्त्रिदशाश्चापि कुद्धेर्भुवि निपातिताः ॥ २६ ॥ दानवास्त्वय
संकुद्धास्त्रिदशान्निशितैः शरैः ॥ विध्यधुर्वज्रसंकाशैः कङ्कपत्रैरजिह्वगैः ॥ २७ ॥ विदार्यमाणा दैत्योषेस्त्रिदशास्तु महाबलाः ॥ अमर्षि-
ततराश्चकुर्वुर्द्वकर्मण्यभीतवत् ॥ २८ ॥ ते गदाभिः सुभीमाभिः पट्टिशैः शूलमुद्गरैः ॥ परिचैश्च सुतीक्ष्णाग्नेर्दानवाः पीडिताः शरैः ॥ २९ ॥

रका दारुण युद्ध परस्पर होने लगा ॥ २४ ॥ तब क्रोधसे लालनेत्रोंवाले परस्पर मारनेकी इच्छावाले दोनों नानाप्रकारके घोरशस्त्रोंसे युद्धमें काटने लगे ॥ २५ ॥ बलवाले देवताओंने बहुतसे दैत्य मार दिये; और क्रोधको प्राप्त हुए दैत्योंने बहुतसे देवते पृथ्वीतलमें मार दिये ॥ २६ ॥ क्रोधको प्राप्त हुए दैत्य अग्निके समान प्रकाशवाले और कंकपशीकी पांखोंसे संपुक्त रहे नहीं चलनेवाले पैने बाणोंसे देवतोंको भीधने लगे ॥ २७ ॥ तब दैत्योंके समूहसे कटते हुए देवता क्रोध कर भयपे रहित हो कर्म करने लगे ॥ २८ ॥ भयंकर गदा पट्टिश शूल मुद्गर तीक्ष्ण परिच बाणोंसे दैत्योंको पीटा देने

लगे ॥ २९ ॥ बाणोंसे भिन्न शरीर छातीवाले शशोंसे पीड़ित हुए दैत्य पत्थर और वृक्षोंको ग्रहण कर ॥ ३० ॥ बारंबार वीर्यसे लाखों देवताओंको तर्जनी कर सहस्रों लाखोंको मर्दन करने लगे ॥ ३१ ॥ तब बड़े २ पत्थर और बड़े २ वृक्षोंसे उनका घोर युद्ध होने लगा ॥ ३२ ॥ परिघ पट्टिश जिदिपाल फरसोंसे कितनोंके शिर काटे गये, और कितनोंके शरीर काटे गये ॥ ३३ ॥ और कितनेक मरके लोहसे तंगे हुए पृथ्वीमें गिरे, और कितनेक परस्पर प्राणते हुए ॥ ३४ ॥ और कितनोंके हृदय कटते हुए, और कितनेक पैरोंके कट जानेसे पृथ्वीमें गिरे, कोई त्रिशूल लगनेसे प्राणरहित

शरणिर्भिन्नगात्राश्च सङ्गविच्छिन्नवक्षसः ॥ जगद्गुप्ते शिलाश्चैव द्रुमाश्चासुरसत्तमाः ॥ ३० ॥ ते भीमसंगा दितिजा नर्दमानाः पुनः पुनः ॥ ममन्धुस्त्रिदशान्कीर्याच्छतशोऽय सद्मशः ॥ ३१ ॥ ततस्तु तुमुलं युद्धं तेषां समभिवर्तत ॥ शिलाभिर्निपुलाभिश्च शतशश्चैव पादपैः ॥ ३२ ॥ परिवैः पट्टिशैर्भण्डैर्भण्डिपालैः परस्वपैः ॥ केचिन्निर्कृतशिरसाः केचिच्च विदलीकृताः ॥ ३३ ॥ केचिद्विनिहता भूमौ रुधिराद्राः सुरासुराः ॥ केचिद्रणजिरान्नष्टाः परस्परवधादिताः ॥ ३४ ॥ विभिन्नहृदयाः केचिच्छिन्नपादाश्च शेरते ॥ विदारितास्त्रिशूलेश्च केचित्तत्र गतासवः ॥ ३५ ॥ तत्सुभीमं महद्युद्धं देवदानवसंकुलम् ॥ बभूव तुमुलं युद्धं शिलापादपसंकुलम् ॥ ३६ ॥ धनुर्ज्यातन्निमधुरं द्विकातालसमन्वितम् ॥ आर्तस्तनितघोषाढ्यं युद्धं गान्धर्वमाबभौ ॥ ३७ ॥ कुबेरः स धनुष्पाणिर्दानवान् रणमूर्धनि ॥ दिशो विद्रावयामास संकुदः शरवृष्टिभिः ॥ ३८ ॥ कुबेरेणादितं सैन्यं विद्रुतं प्रेक्ष्य दानवः ॥ अभ्यद्रवदनुहादः प्रगृह्य महतीं शिलाम् ॥ ३९ ॥ क्रोधाद्विगुणरक्ताक्षः पितृतुल्यपराक्रमः ॥ शिर्षां तां पातयामास कुबेरस्य रथोत्तमे ॥ ४० ॥

हुए ॥ ३५ ॥ इस प्रकार देवता और दैत्योंका शिलावृक्षोंसे महाघोर युद्ध हुआ ॥ ३६ ॥ तन्वीकी समान शब्दधमान धनुषकी ज्या हिचकीरुपी ताल आर्तस्वरसे वह युद्ध गान्धर्वकी समान शोभित हुआ ॥ ३७ ॥ तब कुबेर धनुषको धारण कर क्रोधको प्राप्त हो बाणोंकी वर्षासे दैत्योंको दिशाओंमें जमाने लगा ॥ ३८ ॥ तब कुबेरसे पीड़ित प्राणती हुई सेनाको देख अनुहाद एक बड़ी शिला ग्रहण कर ॥ ३९ ॥ क्रोधसे दुगुने लालनेत्र कर

और पिता हिरण्यकशिपुके समान पराक्रमीने उस शिलाको ग्रहण कर कुबेरके उत्तम रथपर फेंका ॥ ४० ॥ तब गदाको धारण करनेवाले कुबेर आती हुई शिलाको देख वेगसे रथसे कूद पृथ्वीमें प्राप्त हुए ॥ ४१ ॥ तब चक्र कूबर ध्वजा बोधे शरासन आदिसे संयुक्त रथको तोड़ वह शिला पृथ्वीमें गिरी ॥ ४२ ॥ इस प्रकार कुबेरके रथको तोड़ अनुहाद दैत्य वृक्षोंसे देवताओंकी सेनाको मारने लगा ॥ ४३ ॥ तब कटे हुए शिरोंवाले लोहसे भीजे हुए बहुतसे देवता पृथ्वीमें गिरे ॥ ४४ ॥ इस प्रकार देवताओंकी सेनाको काटकर पर्वतके बड़े शृंगोंको ग्रहण कर अनुहाद कुबेरके ऊपर

आपतन्तां शिलां दृष्ट्वा गदापाणिर्धनाधिपः ॥ रथादाप्लुत्य वेगेन वसुधायां व्यतिष्ठत ॥ ४१ ॥ सचक्रकूबरद्वयं सध्वजं सशरासनम् ॥ भङ्गत्वा रथोत्तमं तस्य निपपात शिला भुवि ॥ ४२ ॥ विमथ्य तु कुबेरस्य प्रहादस्यानुजो रथम् ॥ शूराणां कदनं चक्रे सस्कन्ध-
विटपैर्दुर्मेः ॥ ४३ ॥ निर्भिन्नशिरसो भग्नास्त्रिदशाः शोणितोक्षिताः ॥ द्रुमप्रव्याथितांगाश्च निपेतुर्धरणीतले ॥ ४४ ॥ विद्राव्य
विपुलं सैन्यमनुहादो महासुरः ॥ गिरिशृंगं गृहीत्वा तु कुबेरमभिदुदुवे ॥ ४५ ॥ तमापतन्तं धनदो गदामुद्यम्य वीर्यवान् ॥ विन-
दित्वा ह्वयामास दानवेन्द्रं महाबलम् ॥ ४६ ॥ तस्य दैत्यस्य संक्रुद्धो गदां तां बहुकण्टकाम् ॥ न्यस्तयत वित्तेशो दानवस्योरसि
प्रभो ॥ ४७ ॥ दैत्यः संक्रोधताम्राक्षस्तं प्रहारमचिन्तयत् ॥ वित्तेशस्योपरि तदा गिरिशृङ्गमपातयत् ॥ ४८ ॥ स विह्वलित-
सर्वाङ्गो गिरिशृङ्गेण ताडितः ॥ पपात सहसा भूमौ विशीर्ण इव पर्वतः ॥ ४९ ॥ वित्तेशं विह्वलं दृष्ट्वा सर्वे ते यक्षराक्षसः ॥ परिवार्य
महारमानं ररक्षुर्भीमविक्रमाः ॥ ५० ॥ सुदुर्तं विह्वलो भूत्वा पुनर्विश्रवसः सुतः ॥ उपतस्थे च सहसा धनदः क्रोधमूर्च्छितः ॥ ५१ ॥
अपटा ॥ ४५ ॥ उस आते हुए दैत्योंको देख गदाको धारण कर कुबेरने उस दानवेन्द्रको डुलाया ॥ ४६ ॥ और क्रोधकर उस दैत्यकी बहुत कांटोंसे
युक्त गदाको कुबेरने दानवके ऊपर प्रहार किया ॥ ४७ ॥ दैत्यने क्रोधकर उस प्रहारको न विचारकर कुबेरके ऊपर गिरि शृंगका प्रहार किया ॥ ४८ ॥
तब पर्वतके शृंगसे ताडित और विह्वल हो पीले नेत्रोंवाले कुबेर पृथ्वीमें गिरे जैसे छिन्न पर्वत ॥ ४९ ॥ तब विह्वलरूप कुबेरको देख सब यक्ष और
राक्षस चारों तरफसे महात्माको घेर रक्षा करते हुए ॥ ५० ॥ दो घड़ीतक विह्वल रहकर विश्रवसके पुत्र वेगसे क्रोधकर उठे ॥ ५१ ॥

और त्रिलोकीको सन्धित करता हुआ कुबेर फिर शब्द करने लगा जिससे पर्वत कंपित होने लगे ॥ ५२ ॥ उस कुबेरके फिर उठनेसे और अपनी ओर आया देख अवग्यरूप जानकर दानव पलायन कर गये ॥ ५३ ॥ तिन ज्ञाते हुए दैत्योंसे अनुहाद कहने लगा कि दर्पयुक्त कालनेमि सुनेमि महानेमि दैत्योंको ॥ ५४ ॥ अपनेको अपने वीर्यको और अपने कुलको भूलकर जयसे प्राप्त मनुष्योंकी समान कहां जाने जाते हो ॥ ५५ ॥ हे महावीर्यो ! कहां गमन करते हो लौट आओ, क्या प्राणोंकी रक्षा करते हो, यह कुबेर युद्धके अर्थ समर्थ नहीं

स ननाद महानादं त्रैलोक्यमभिनादयन् ॥ जनयन्निव निर्वोषं विधमन्निव पर्वतान् ॥ ५२ ॥ तमवध्यं तु विज्ञाय निहन्तुं पुनस्तथितम् ॥ प्रेक्ष्य पिङ्गाक्षमायान्तं दानवा विप्रदुद्रुवुः ॥ ५३ ॥ तांस्तु विद्रवतो दृष्ट्वाऽनुहादो ह्यसुरो ब्रवीत् ॥ कालनोमिं दानवं च वीर्यदर्पसमान्वितम् ॥ ५४ ॥ आत्मानं चैव वीर्यं च विस्मृत्याभिजनं तथा ॥ क मच्छय भयत्रस्ताः प्राकृता इव दानवाः ॥ ५५ ॥ निवर्तय महावीर्यो ! किं प्राणान् परिरक्षय ॥ नाऽं युद्धाय यक्षोऽयं महतीयं विभीषिका ॥ ५६ ॥ एतां विभीषिकामद्य दानवानां समुत्थिताम् ॥ विक्रम्य विधमिष्यामि निवर्तय महासुराः ॥ ५७ ॥ तेऽसुराः सन्निवृत्ताश्च समदा इव कुञ्जराः ॥ निजघ्नुः परमरुद्धा देवसेन्यं महासुराः ॥ ५८ ॥ क्षीणप्रहरणाः केचिन्महामेघनिभस्त्वनाः ॥ दर्पोत्कटा भुजैरेव संप्रहारं प्रचक्रिरे ॥ ५९ ॥ प्रांशुभिश्चैव काष्ठैश्च शिलाभिश्च महाबलाः ॥ बाहुभिश्च तथान्योन्यमाक्षिपन्ति स्म वेगिताः ॥ ६० ॥ मुष्टिभिश्च तलैश्चैव नक्षपातेर्महाबलाः ॥ पादपैश्च महाशस्त्रैरप्युच्यन्त रणाब्जिरे ॥ ६१ ॥

हे ॥ ५६ ॥ और यह हमारी सेना बड़ी जय मानती है; अपने पराक्रमसे दानवोंको जयदायक इस महानायको विक्रम करके माहंगा तुम सब चले आओ ॥ ५७ ॥ तब सब दैत्य उलटे फिरकर क्रोधको प्राप्त हो मतवाले हाथीकी समान वेवताओंकी सेनाको मारने लगे ॥ ५८ ॥ और जब युद्धमें शस्त्र टूट गये तब गर्भके प्रतापसे भुजाओंके द्वारा प्रहारकर महामेघकी समान गर्जने लगे ॥ ५९ ॥ और कितनेक धूलि और कितनेक काष्ठोंसे और कितनेक हाथोंसे वेगसे मारने लगे ॥ ६० ॥ और कितनेक मुठ्ठों, कितनेक नखों और कितनेक महाशस्त्रवाले वृक्षोंसे दैत्य और देवते युद्ध करने

लगे ॥ ६१ ॥ तब कोचको प्राप्त हुआ अनुहाद दैत्य देवताओंकी महासेनाको वनकी अग्निकी समान जलाने लगा ॥ ६२ ॥ तब लोहसे भीजे हुए
 बहुतसे घोषा मिरने लगे और लाल फूलवाले वृक्षोंकी समान पृथ्वीमें गिरे ॥ ६३ ॥ कुबेरने कोचकर सर्पोंके समान बाणोंसे अनुहाद दैत्यको बाँधा,
 तब अनुहादके मुससे बहुतसी अग्नि निकलने लगी ॥ ६४ ॥ पीछे अनुहाद दैत्य कुबेरको सहस्रों बाणोंसे कोचकर कालके समान बाँधने लगा ॥ ६५ ॥
 तब बाणोंसे बाँधे हुए और चारों तरफसे लोहसे भीजे हुए कुबेरके शरीरसे बहुतसा लोह पर्वतके झरनेकी समान झरने लगा ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ तब

अनुहादस्तु संक्रुद्धो देवतानां महाचमूम् ॥ ममन्य परमायत्तो वनान्यग्निरिवोत्थितः ॥ ६२ ॥ रुधिराद्रांस्तु बहवः शरेते योषसत्तमाः ॥
 विकृताः पतिता भूमौ ताम्रपुष्पा इव द्रुमाः ॥ ६३ ॥ अनुहादश्च विक्रान्तो देवांस्त्वाशीविषोपमान् ॥ युध्यमानस्य समरे व्यसृजन्नि-
 शिताञ्छरान् ॥ ६४ ॥ धनाधिपेन विद्वस्य अनुहादस्य संयुगे ॥ अङ्गारमिश्राः क्रुद्धस्य मुस्तान्निश्चेरुरर्चिषः ॥ ६५ ॥ अथ बाणसहस्रेण
 वित्तेशं दानवोत्तमः ॥ विव्याध स श्रेः क्रुद्धो दण्डपाणिरिवान्तकः ॥ ६६ ॥ कुबेरस्तु शरोभिन्नः समन्तात्क्षतजोक्षितः ॥ रुधिरं
 परिमुञ्चाव गिरिः प्रस्रवणेनैव ॥ ६७ ॥ लब्ध्वा स तु पुनः संज्ञां रोषरक्तेक्षणः सुरः ॥ गदामय समासाद्य भीमां भीमपराक्रमः ॥ चिक्षेप
 दैत्यमुद्दिश्य बलात्क्रोधेन मूर्च्छितः ॥ ६८ ॥ आप्राप्तमन्तरे सोऽयं तां गदां गदयासुरः ॥ बभञ्ज विनदन् क्रुद्धस्तदाश्चर्यमभूत्तदा ॥ ६९ ॥
 प्रवृत्त्य तु गदां भूयो ह्यभिदुद्राव दानवम् ॥ तमापतन्तं दृष्ट्वैव अनुहादो महाबलः ॥ ७० ॥ गिरिशृङ्गमिवोत्पाट्य कैलासाचलस-
 त्निभम् ॥ धनाधिपं प्रदुद्राव व्यादितास्य इवान्तकः ॥ ७१ ॥

फिर संज्ञाको प्राप्त हो महापराक्रमी कुबेरने गदाको ग्रहण कर लाल आँसे कर बड़े कोचसे दैत्यके गदा मारी ॥ ६८ ॥ तब अनुहादने अपनी गदासे वह
 गदा पारमेंही तोड़ दी, और महाशब्द किया यह बड़ा आश्चर्य हुआ ॥ ६९ ॥ फिर दूसरी गदाको ग्रहण कर कुबेर दैत्यके सन्मुख जाने लगे महाबली
 अनुहाद उसे आता देख ॥ ७० ॥ तब कैलासपर्वतके समान कांतिकाले पर्वतके शृंगको ग्रहणकर अनुहाद कुबेरके सन्मुख मुख फैलाये कालकी समान

चला ॥ ७१ ॥ सम्पूर्ण देवताओंसे अजेय कालकी समान उसे आता देख कुबेर युद्ध छोड़ इन्द्रके निकट गये ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ इस प्रकार कुबेर उस महाकर्मको देख जयसे इन्द्रके समीप चला गया ॥ ७४ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने देशासुरयुद्धे षष्ठितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥ केशंपायन बोले, दैत्योंका स्वामी विप्रचित्ति दैत्य प्रकाशरूप और सर्पोंके समान बाणोंसे अविनाशी वरुणको धींचने लगा ॥ १ ॥ तब दैत्यके बाणोंसे दग्ध होते हुए वरुणने युद्धमें कर्तव्यको नहीं जाना ॥ २ ॥ जैसे सर्वलोकके स्वामी विष्णुके अगाड़ी ब्रह्माजी स्थित

तमन्तकमिवायान्तमजेयं सकलेः सुरैः ॥ असन्तमिव तं दैत्यं त्रैलोक्यमसिलं रुषा ॥ ७२ ॥ तमालोक्य तथाभूतं घनाप्यक्षो रणं भयात् ॥ अपहाय ययौ तत्र यत्र शक्रः सुराधिपः ॥ ७३ ॥ तस्य चापि महत्कर्म दृष्ट्वा वित्तपतिस्तदा ॥ जगाम भयसंत्रस्तो यत्र देवः शचीपतिः ॥ ७४ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे अनुवादकुबेरयुद्धवर्णनं नाम षष्ठितमोऽध्यायः ॥ ६० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ विप्रचित्तिस्तु वरुणं दैत्यानामादिरव्ययम् ॥ जघानेषुगणेः क्रुद्धो दीप्तिरिव महोरगेः ॥ १ ॥ स दह्यमानो दैत्येन दीप्तिः शरगभस्तिभिः ॥ नाभ्यजानत कर्तव्यं संग्रामे स जलेऽवरः ॥ २ ॥ सर्वलोकेभ्यस्तस्यैव परमेष्ठी प्रजापतिः ॥ न शक्नोत्यग्रतः स्यातुं विप्रचित्तेर्जलाधिपः ॥ ३ ॥ वज्रो नाम महाव्यूहो निर्भयः सर्वतोमुखः ॥ तं व्यूहं प्रत्ययुध्यन्त दानवा देववाहिनीम् ॥ ४ ॥ वह्निज्वालासमं तत्र रविमण्डलसन्निभम् ॥ मुखमाभाति दैत्यस्य विप्रचित्तेर्महात्मनः ॥ ५ ॥ वरुणस्तु महातेजा विप्रचित्तिं महासुरम् ॥ प्रवहन्निव तेजोभिर्जिगीषुः प्रत्यवेक्षत ॥ ६ ॥

होनेको समर्थ नहीं है, तैसै विप्रचित्ति दैत्यके सम्मुख वरुण स्थित होनेको समर्थ नहीं हुए ॥ ३ ॥ और वज्रनाभ व्यूहको रचकर सब दैत्य देवताओंकी सेनाके संग युद्ध करने लगे ॥ ४ ॥ और अग्निकी लटाके समान प्रकाशित और सूर्यके मण्डलके समान तेजवान् विप्रचित्ति दैत्यका मुख उस समयमें हो गया ॥ ५ ॥ तब महातेजवाले वरुण विप्रचित्ति दैत्यको अपने नेत्रोंके तेजसे दग्ध करते

हुए; और जीतनेकी इच्छासे दैत्यके सन्मुख दीखने लगे ॥ ६ ॥ और मालाआदियोंसे भूषित केयूर अंगदवाले दैत्यने पांच अंगुलके अंतरसे युक्त और कैलासपर्वतके शिखरकी समान परिघ ग्रहण किया ॥ ७ ॥ जो सोनेकी डोरियोंसे बंधा हुआ धर्मराजके दंडके समान दैत्योंके भय दूर करनेवाला था ॥ ८ ॥ उस परिघशस्त्रको जो इन्द्रध्वजकी समान था क्रोधसे विप्रचित्ति दैत्य ग्रहण कर भ्रमाने लगा और मुख फैलाकर शब्द करने लगा ॥ ९ ॥ तब कुंडमें स्थित धुकधुकी और भुजाओंमें स्थित बाजुओंसे और विचित्ररूप कुंडलों और विचित्र मालाओंसे ॥ १० ॥ इस प्रकार भूषण और तिस

स्रग्दाममालाभरणः केयूराङ्गदभूषणः ॥ जग्राह परिघं दैत्यः कैलासशिखरोपमम् ॥ ७ ॥ पिनद्धं काञ्चनेः पट्टेर्हममालिनमावृतम् ॥ यमदण्डोपमं घोरं दैत्यानां भयनाशनम् ॥ ८ ॥ भ्रामयामास संक्रुद्धो महाशकध्वजोपमम् ॥ विननाद विवृत्तास्यो विप्रचित्तिर्महासुरः ॥ ९ ॥ स कण्ठस्थेन निष्केण भुजस्येरापि चाङ्गदेः ॥ कुण्डलाभ्यां विचित्राभ्यां भ्राजते काञ्चनस्रजा ॥ १० ॥ दानवो भूषणैर्भाति परिघेणायतेन च ॥ यथेन्द्रधनुषा मेघः सविद्युस्तनयितुमान् ॥ ११ ॥ प्रस्फुटपरिवास्त्रेण वातस्कन्धान्महास्वनः ॥ जन्वाळ च सधूमार्चिः साङ्कर्षण इवानलः ॥ १२ ॥ विद्याधरागणैः सार्द्धं गन्धर्वनगरैरपि ॥ सह चैवामरावत्या सिद्धलोकेस्तथा सह ॥ १३ ॥ ग्रहनक्षत्ररचितं सार्कचन्द्रविभूषितम् ॥ दैत्येन्द्रपरिचोदृतं भ्रमतीव नभस्तलम् ॥ १४ ॥ दुरासदः सुसंजज्ञे परिघाभरणक्षमः ॥ सुरेन्धनोऽसुरेन्द्राग्रियुगान्ताग्रिवोत्थितः ॥ १५ ॥

लोहेके परिघसे विप्रचित्ति शोभित होने लगा जैसे इन्द्रके धनुष बिजली और गर्जनसे मेघ शोभित हों ॥ ११ ॥ उस महापरिवास्त्रसे स्फुरायमान पवनकी समान महाशब्दायमान होता हुआ प्रलयशिकी समान क्रोधसे जल उठा ॥ १२ ॥ तब आकाशचारी विद्याधरके समूह गन्धर्वनगर और अमरावती और सिद्धलोकोके सहित ॥ १३ ॥ ग्रहनक्षत्रसे रचित सूर्य और चंद्रमासे विभूषित आकाश विप्रचित्तिसे परिघसे फेंकनेसे भ्रमने लगा ॥ १४ ॥ वह परिघ बड़ा दुरासद हो गया कोई उसको धारण न कर सका; देवतारूपी ईश्वरको जलानेवाली असुरोंकी अग्नि कालाशिकी समान स्थित हुई ॥ १५ ॥

तब वरुण और सब देवते भयसे वहां ठहरनेको समर्थ न हुए; तहां अकेला इन्द्रही निर्भय हो स्थित रहा सूर्यके समान तेजवाले घोर क्रूर दर्शन उस परिषको विप्रचिन्ति दैत्यने ॥ १६ ॥ वरुणकी सेनापर फेंका, वह संग्राममें गिरकर महात्मा वरुणकी ॥ १७ ॥ एक लक्ष सेनाको नष्ट करता हुआ अर्थात् देवताके शरीरोंके सहस्रों टुकड़े हो गये ॥ १८ ॥ और विशीर्यमाण हुए आकाशमें ऊँकाकी समान प्रकाशित हुए तब फिर घुमाकर वरुणपर फेंका ॥ १९ ॥ तब तिस प्रकारके पढ़नेसे वरुणके शरीरसे वह टूट गया; और वरुणका शरीर क्षत विक्षत हो गया ॥ २० ॥ उसके लगनेसे वरुण चलायमान न हुआ.

त्रिदश वरुणश्चैव न शेकुः स्पन्दितुं भयात् ॥ तत्रासीन्निर्भयस्त्वेकः कौशिको वासवः प्रभुः ॥ भास्करप्रतिमं घोरं परिघं रोद्रदर्शनम् ॥ १६ ॥ पातयामास सेनायां जलेशस्य स दानवः ॥ पतता तेन संग्रामे जलेशस्य महात्मनः ॥ १७ ॥ भूतानां श्रुतसाहसं परिषेण समाहृतम् ॥ तेषां गात्राणि चासाद्य व्यशीर्यन्त सहस्रशः ॥ १८ ॥ विशीर्यमाणं विनभावुल्काशतमिवाम्बरे ॥ भूयश्चैनं तदाभ्राम्य वरुणाय न्यपातयत् ॥ १९ ॥ पात्यमाने तदा तस्मिञ्छरिरे वारुणे तदा ॥ स भिन्नः परिघो घोरो देवमात्रे व्यशीर्यत ॥ २० ॥ शीर्यमाणस्य चूर्णानि खद्योता इव चाम्बरे ॥ स तु तेन प्रहारेण न चंचाल जलाधिपः ॥ २१ ॥ परिषेण इतः संरूपे यथा वज्रहतोऽचलः ॥ स्वसेन्येष्वपि भग्नेषु भिन्नदेहेषु चाहवे ॥ २२ ॥ मुहूर्तमभवत्क्षोभ्यनपाम्पतिरमर्षणः ॥ सोऽमर्षं च समापन्नो वरुणोऽमितविक्रमः ॥ २३ ॥ सर्वसंहारमकरोत्स्वपक्षस्यारिमर्दनः ॥ स सागरेऽथतुर्भिश्च वृतो दीप्तिपन्नमे ॥ २४ ॥ शङ्खमुक्तामणिचितो विभ्रत्तोयमयं वपुः ॥ पाण्डुरोद्भूतवसनो नानास्त्रविभूषितः ॥ २५ ॥

जैसे भूमिकंपमें पर्वत ॥ २१ ॥ और वह युद्धमें परिषसे वज्रसे हत हुए पर्वतकी समान ताठिन हुए तब संग्राममें अपनी सेनाको भिन्न देसकर ॥ २२ ॥ दो घड़ोंतक अतिबलवान् वरुण कोषको प्राप्त हो महापराक्रमी जलपति ॥ २३ ॥ शत्रुओंका संहार करने लगे, और चार समुद्रोंसे परिवृत बहुतसे प्रकाशवान् सर्पोंसे युक्त ॥ २४ ॥ शंख मोती मणिसे शोभित जलमय शरीरको धारण किये सफेद बत्तोंको धारण किये नानाप्रकारके रत्नोंसे अटित ॥ २५ ॥

बाजुबंधको धारण किये फांसियोंको लिये बछुवे और मच्छियोंसे युक्त वरुण क्रोधको प्राप्त हो अपनी सेनाको देख ॥ २६ ॥ कहने लगे कि हे देवताओ !
 दैत्योंको मारनेकी इच्छा करके युद्ध करो; और मैं इस विप्रचिचिको मारुंगा, इस कारण भयको त्यागकर लडो ॥ २७ ॥ तब वे समुद्रमें वसनेवाले सब
 सर्प युद्धमें दैत्योंको मारने लगे और शब्द करने लगे ॥ २८ ॥ नालीक बाण गदा मूसलोंसे प्रसन्न हो वरुणकी सेना दैत्योंको काटने लगी ॥ २९ ॥ तब क्रोधको
 प्राप्त हो महाबली पराक्रमी विप्रचिचि दैत्य सर्पोंके शरीरोंको धुनने लगा ॥ ३० ॥ गरुड जम्ब तथा सर्पोंके खानेवाले गरुडोंसे समरमें बह दानवभेद सर्पोंको

वरुणः पाशधृक् श्रीमान्कूर्ममीनसमाकुलः ॥ वरुणस्तु तदा क्रुद्धस्तान्निरीक्ष्य स्वसेनिकान् ॥ २६ ॥ उवाच हृष्टा युष्यन् दानवानां
 जिघांसया ॥ अहमेनं हनिष्यामि भयं मुक्त्वा तु युष्यत ॥ २७ ॥ ततस्ते पन्नगाः सर्वे महार्णवबलश्रयाः ॥ जञ्जुर्देत्यान्नपुत्रे नदन्तो
 जयगृद्धिनः ॥ २८ ॥ ते तु नालीकनाराचेर्गदाभिर्मुञ्जलेस्तथा ॥ अभ्यग्रन्दानवान् हृष्टा मुक्त्वा वरुणानुवाः ॥ २९ ॥ विप्रचितिस्तु
 संकुदो महाबलपराक्रमः ॥ पन्नगानां शरीराणि व्यधमद्युद्धदुर्मदः ॥ ३० ॥ गारुडेनापि चास्त्रेण पन्नगान्दानवोत्तमः ॥ समरे घातयामास
 गरुडेः पन्नगाशनैः ॥ ३१ ॥ स शूरेः सूर्यसंकाशैः शातकुम्भविभूषितैः ॥ पन्नगान्समरे वीरः प्रममाद्य सुवर्जयान् ॥ ३२ ॥ समरे भिन्न
 गात्रास्ते पन्नगाः शरपीडिताः ॥ पेतुर्मथितसर्वाङ्गा मजा इव महामजेः ॥ ३३ ॥ तपन्तं तमिवादित्यं वीर्षिर्वाण्यभास्तिभिः ॥ अभ्य-
 घातत संकुदः समरे वरुणः प्रभुः ॥ ३४ ॥ ततस्तु दानवास्तत्र भिन्नदेहाः सहस्रशः ॥ व्यथिता विद्रवन्ति स्म दिशो दश विचेतसः ॥ ३५ ॥

मारने लगा ॥ ३१ ॥ वे सुवर्णसे भूषित सूर्यकी समान प्रकाशमान बाणोंसे युद्धमें दुर्जय सर्पोंको मथन करने लगा ॥ ३२ ॥ तब बाणोंसे पीड़ित सर्पोंसे
 मथित कटे हुए शरीरोंवाले सर्प पृथ्वीमें गिरने लगे, जैसे अतिबलवाले हाथियोंसे मथित हो अल्पबलवाले हाथी गिरते हैं ॥ ३३ ॥ पीछे दीमरूप बाणोंको
 लिये क्रोधको प्राप्त हो वरुण सूर्यकी समान तपते हुए युद्धमें विप्रचिचिके ऊपर चला ॥ ३४ ॥ तब वरुणके बाणोंसे कटे हुए सहस्रों दैत्य दशां दिशामें

अचेत हो भागने लगे ॥ ३५ ॥ इस प्रकार पराक्रमी वरुण इन्द्रके निमित्त युद्ध करता हुआ; और वरुणके युद्धमें शब्द करते हुए युद्ध करने लगे ॥ ३६ ॥ तब वरुणके सर्प समरमें उत्कंड हो पत्थरोंसे और घुकोंसे विप्रचित्ति दैत्यको चारों तरफ मारने लगे ॥ ३७ ॥ तब अनेक प्रकारके शस्त्र और पत्थरोंसे महातेजस्वी विप्रचित्ति दैत्यभी वरुणकी सेनाको भागने लगा ॥ ३८ ॥ तब अग्निके समान प्रकाशवाले शीघ्र चलनेवाले ऐसे बाणोंसे महावेगवाले वरुणके घोड़ोंको विप्रचित्ति दैत्यने बाँधा ॥ ३९ ॥ तिस कर्मसे विप्रचित्ति दैत्यका तेज ऐसे बढ़ता हुआ जैसे घृतकी आहुतास इन्द्रस्थायें पराक्रम्य वरुणस्त्यक्तजीवितः ॥ विनर्दमानो युयुधे समरे पाशभृद्भरः ॥ ३६ ॥ वरुणः पत्रगाश्चैव मुष्टिभिः संमरोत्कटाः ॥ अभ्यवर्तन्त समरे विप्रचित्ति महासुरम् ॥ ३७ ॥ ततोऽस्त्रैश्च शिलाभिश्च प्राहरत्स बलोत्कटः ॥ व्यपोहत महातेजा विप्रचित्ति-महासुरः ॥ ३८ ॥ ततः पावकसंकाशैः स मुक्तैः शीघ्रगामिभिः ॥ वरुणस्य महावेगान्बिभेद समरे हयान् ॥ ३९ ॥ कर्मणा तेन महता विप्रचित्तेर्महात्मनः ॥ अग्रेराज्याद्भुतस्येव तेजः समभिवर्धत ॥ ४० ॥ स शरैः सूर्यसंकाशैः सुमुक्तैः शीघ्रगामिभिः ॥ वारुणीं तां महासेनां निर्ममन्थ महाबलः ॥ ४१ ॥ क्षीणास्त्रां सायकाक्रान्तां शरजालेन मोहिताम् ॥ शूलशक्त्यष्टिभिर्ना च चक्रारुधिरोक्षिताम् ॥ ४२ ॥ स शरेर्वह्निं संकाशैः सुमुक्तैर्नतपर्वभिः ॥ वरुणस्य महावेगात् बिभेद समरे हयान् ॥ ४३ ॥ अभिदु-त्तोऽथ दैत्येन ससेन्यः सलिलाधिपः ॥ महेन्द्रं शरणं प्राप्नो विप्रचित्तेर्भयादितः ॥ ४४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामने विप्रचित्तिपुद्गं नामैकषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

अग्निका तेज बढ़ता है ॥ ४० ॥ पीछे सूर्यकी समान प्रकाशवाले शीघ्रगामी बाणोंसे महाबली विप्रचित्ति दैत्य वरुणकी सब सेनाको मथने लगा ॥ ४१ ॥ तब क्षीणशस्त्रवाली बाणोंसे आक्रांत और बाणोंके जालसे मोहित शूल शक्ति ऋष्टि इन्द्रोंसे कटी हुई लोहसे प्रीनी हुई वरुणकी सेना हो गई ॥ ४२ ॥ अग्निकी समान प्रकाशमान छोटे हुए जेठ बाणोंसे बड़े वेगसे वरुणके घोड़ोंको मार डाला ॥ ४३ ॥ तब दैत्यसे भयमान अपनी सेनाके सहित वरुण भागकर इन्द्रकी शरणमें जाकर स्थित हुआ ॥ ४४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने द्वांसुरपुद्गे एकषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६१ ॥

वैशंपायन बोले, देवताओंके पराजयको देख ब्रह्मर्षियोंसे स्तुति किये देवताओंमें उत्तम अग्नि देवोंके मारनेको मन करते हुए ॥ १ ॥ अर्थात् स्वयंप्रभा नामवाली शांडिलीका पुत्र और हव्यको बहनेवाला और हिरण्यरूप वीर्यवान् पीले नेत्रोंवाले और देवदूत आहुतिको सानेवाले ॥ २ ॥ और लाल रंगवाले और लाल शीवावाले, इर्ता, दाता, हवि और कवि पावक और विश्वभुक् देव इन नामोंवाले और सब देवताओंके मुत्स एक राजा ॥ ३ ॥ प्रभु, ब्रह्मात्मा, सुवर्चस सहस्रार्चि विभावसु कृष्णवर्त्मा चित्रभानु देवराट् ॥ ४ ॥ देवाग्रचित्र लोकसाक्षी ब्राह्मणके हाथकी आहुति

वैशम्पायन उवाच ॥ पराजयं तु देवानां दृष्ट्वाग्निर्देवसत्तमः ॥ चकार बुद्धिं देवानां वचे ब्रह्मर्षिभिः स्तुतः ॥ १ ॥ स्वयंप्रभायाः शाण्डिल्या यः पुत्रो हव्यवाहनः ॥ हिरण्यरेताः पिङ्गनक्षो देवदूतो हुताशनः ॥ २ ॥ रोहितो लोहितग्रीवो इर्ता दाता हविः कविः ॥ पावको विश्वभुग्देवः ॥ सर्वदेवाननः प्रभुः ॥ ३ ॥ सुब्रह्मात्मा सुवर्चस्कः सहस्रार्चिर्विभावसुः ॥ कृष्णवर्त्मा चित्रभानुर्देवानामपि देवराट् ॥ ४ ॥ लोकसाक्षी द्विजदुतः सदाचिन्मान्वषट्कृतः ॥ हव्यभक्षः शमीगर्भः स्वपोनिः सर्वकर्मकृत् ॥ ५ ॥ पावनः सर्वभूतानां त्रिदशानां तपोनिधिः ॥ शमनः सर्वपापानां लेलिहानस्तपोमयः ॥ ६ ॥ प्रदक्षिणावर्तशिल्पः शुचिरोमा मस्ताकृतिः ॥ हव्यभुक् भूत-भक्ष्येशो यज्ञभागहरो हरिः ॥ ७ ॥ सोमयः सुमहातेजा भूतेशः सुमहातपाः ॥ अधृष्यः पावको भूतेर्भूतात्मा वै स्वधाधिपः ॥ ८ ॥ स्वाहापतिः सामगीतः सोमपूताशनोऽद्रिधृक् ॥ देवदेवो महाक्रोधो रुद्रात्मा ब्रह्मसंभवः ॥ ९ ॥ लोहिताश्वं वायुचक्रं रथमास्थाय भूतधृक् ॥ धूमकेतुधूमशिल्पो नीलवासाः सुरोत्तमः ॥ १० ॥

प्रेमसे ग्रहण करनेवाले अर्चिष्मान् वषट्कृत हव्यभक्ष शमीगर्भ स्वपोनि और सब कर्मोंको करनेवाला ॥ ५ ॥ और सब भूतोंको पवित्र करनेवाला और देवताओंकी तपकी खान और सबके पापोंको शांन करनेवाला और लेलिहान और तपोमय ॥ ६ ॥ और प्रदक्षिणावर्त शिल्पा शुचिरोमा मस्ताकृति हव्यभुक् भूत भक्ष्येश हव्यभागहर हरि ॥ ७ ॥ सोमय महातेजा भूतेश महातपस्वी सर्वभूतपात और अधृष्य और पावकभूती भूतात्मा स्वधाधिप ॥ ८ ॥ स्वाहापति सामगीत सोमपूताशन अर्चिधृक् देवदेव महाक्रोध रुद्रात्मा ब्रह्मसंभव ॥ ९ ॥ धूमकेतु धूमशिल्प सुरोत्तम नामोंवाला अग्नि लालघोषोंसे

लुता हुआ और बापुके समान पहियोंवाले रथमें नीले वस्त्रोंको पहनकर बैठा ॥ १० ॥ और दिव्य आग्नेय अस्त्रको ग्रहणकर आग्निदेव दैत्योंके सहस्र लाख अर्ब ॥ ११ ॥ सेनाको प्रलयकालकी अग्निके समान जलाने लगा; और सब प्राणियोंका प्राणरूप होकर देहमें पांच प्रकारसे स्थित होने-वाला ॥ १२ ॥ अग्निकी सारथी और मित्र प्रभु ईश्वर सब लोकोंका प्रसन्नरूप और युगान्तमें सबोंको नाशनेवाला ॥ १३ ॥ जिसकी योनि सात स्वरोके द्वारा वाणीसे उच्चारित की जाती है; और आकाशमें रहनेवाला और दूर गमन करनेवाला और शब्दके उपजानेवाला ॥ १४ ॥ और कर्ता, विकर्ता, उद्यम्य दिवमाग्नेयं शस्त्रं देवो रणे महान् ॥ दानवानां सहस्राणि प्रयुतान्यबुधैर्ज्ञाने च ॥ ११ ॥ ददाह भगवान्वाह्निः संकुदः प्रलये यया ॥ प्राणो यः सर्वभूतानां देहे तिष्ठति पञ्चधा ॥ १२ ॥ यन्ता यश्च हुताशश्च सखा च प्रभुरीश्वरः ॥ प्रभञ्जनेयो लोकानां युगान्ते सर्व-नाशनः ॥ १३ ॥ सप्तस्वरगता यस्य योनिर्गीर्भिरुदीर्यते ॥ यो ह्यकाशमयो देवो दूरगः सर्वसंभवः ॥ १४ ॥ यश्च कर्ता विकर्ता च गतिर्गतिमतां प्रभुः ॥ वेदकर्ता समो लोके ब्रह्मणा यः सनातनः ॥ १५ ॥ अमूर्तिमन्तं यं प्राहुर्महाभूतं महत्तरम् ॥ सोऽग्निं समीरयामास शमीशर्भं समीरणः ॥ १६ ॥ त्रिदिशरोहिभिर्ज्वालैर्जृम्भमाणो दिशो दृश ॥ दानवानामभावाय युगान्ताग्निरिवोत्थितः ॥ १७ ॥ मेवोमज्जामहापङ्कां केशशेखलशालिनीम् ॥ योयशीर्षोपलव्हां मृताद्विपतटोत्कटाम् ॥ १८ ॥ शोषितोदां रणे दृष्ट्वा संग्रामसरितं विभुः ॥ बाह्निः प्रस्कन्दयामास दैत्यानां भयवर्द्धनः ॥ १९ ॥ ततोऽग्निर्द्विजान्तसर्वान्प्रहादप्रमुखांस्तथा ॥ पराजयानः स विभुः श्लोक्षमानो महामृधे ॥ २० ॥

और गतिवालोंकी गति और वेदकर्ता और ब्रह्माके समान लोकमें सनातन ॥ १५ ॥ जिसको मूर्तिसे रहित महाभूत कहते हैं वह वायु अग्निकी सहा-यता करता हुआ ॥ १६ ॥ स्वर्गको प्राप्त होनेवाली ज्वालाओंसे दशों दिशाओंमें जृम्भमाण अग्नि दैत्योंके नाशके अर्थ प्रलयकी अग्निके समान हो उठा ॥ १७ ॥ तब मेद मज्जारूप कीचड़वाली केशरूप हरियाई और काईसे संयुक्त और योद्धाओंके शिररूप पत्थरोंसे संयुक्त और मरे हुए हाथीरूप तटसे संयुक्त ॥ १८ ॥ लोहकी बहती हुई नदीको देखकर दैत्योंको भय देनेवाला अग्निदेव बल करने लगा ॥ १९ ॥ तब प्रहाद औंदि सब दैत्योंको यह

अग्नि जीतने लगा, और युद्धमें महाशब्द करने लगा ॥ २० ॥ कितने एक दैत्य जलते हुए केशोंसे संयुक्त और कितने एक दैत्य जलते हुए सम्पूर्ण अंगोंसे संयुक्त होने लगे; और कितनेक दैत्योंके हाथ सुस्त जलने लगे ॥ २१ ॥ कितने एक दैत्योंकी जांघ जलने लगी, और कितने एक दैत्योंके छत्र ध्वजा रथ जलने लगे इस प्रकाशित हुए अग्निसे सब दैत्य दग्ध होने लगे ॥ २२ ॥ तब मयसे पीड़ित दैत्य सब प्रकारके शस्त्र ध्वजा रथारिको छोड़ अग्निसे पराजित हो दशों दिशाओंको भागने लगे ॥ २३ ॥ और युद्धमें प्रकाशमान अग्निको नहीं देखते हुए दानव दिशा आकाश पृथ्वी मेघ इन सबोंको जलते हुए

केचित्प्रदीप्तैर्भुङ्कुटेः केचिद्दीप्तैः शिरोरुहेः ॥ केचित्प्रदीप्तवसनेः केचिद्दीप्तैर्भुजाननेः ॥ २१ ॥ केचित्प्रदीप्तैरुरुभिः केचिच्छत्रैर्वर्ज-
रथैः ॥ असुरास्तत्र दृश्यन्ते प्रदीप्तेनाग्निना वृताः ॥ २२ ॥ त्यक्त्वायुधानि सर्वाणि सध्वजाश्च रथोत्तमान् ॥ प्रयान्ति समरे भीताः
पावकेन पराजिताः ॥ २३ ॥ न च पश्यन्ति ते वह्निं प्रदीप्तध्वजिनीमुखे ॥ दिशः स्वं च मेघांश्च दीप्तान्पश्यन्ति दानवाः ॥ २४ ॥
ध्रुवः स्वयंभुवा सृष्टो युगान्तस्तोययोनिना ॥ इत्येवं दानवाः सर्वे मेनिरे व्रस्तचेतसः ॥ २५ ॥ मयश्च शम्बरश्चैव महामायाधरो तदा ॥
पार्जन्यवारुणी माये सृजतां वारिविशरे ॥ २६ ॥ ताभ्यां वह्निः स मायाभ्यां सिच्यमानः समन्ततः ॥ तोयोधैः पर्वतनिभैर्मृद्वर्चिरभव-
द्रणे ॥ २७ ॥ शाम्यमाने तु समरे पावके दैत्यनाशिनि ॥ बृहत्कीर्तिर्बृहत्तेजा वह्निमाह बृहस्पतिः ॥ २८ ॥ गुरुवाच ॥ हिरण्यरेतः
सुमुख ज्वलनाह्वय सर्वभुक् ॥ सप्तजिह्वानन क्षाम लेलिहान महाबल ॥ २९ ॥

देखने लगे ॥ २४ ॥ तब सब दैत्य व्याकुल हो कहने लगे कि निश्चय ब्रह्माजीने यह युगान्त अग्नि रचा है ॥ २५ ॥ तब मय और शम्बर महामा-
यावाले दैत्य पानीको झिरानेवाली पार्जन्य और वारुणी नामोंवाली दो मायाओंको रचते हुए ॥ २६ ॥ तब तिन दोनों मायाओंके प्रतापसे पर्वतके
समान पानीकी धारासे सिच्यमान हो अग्नि युद्धमें कोमलतेजवाला होने लगा ॥ २७ ॥ तब दैत्योंको नाशनेवाले युद्धमें कोमलतेज होनेवाले अग्निसे
बड़ी कीर्तिवाले अतितेजस्वी बृहस्पतिजी कहने लगे ॥ २८ ॥ गुरु बोले, हे हिरण्यरेत ! हे सुशिक्ष ! हे ज्वलन ! हे असप ! हे सर्वभुक् ! हे सप्त-

जिह्व ! हे अनल ! हे क्षाम ! हे लोलिहान ! हे महाबल ! ॥ २९ ॥ हे विभो ! तेरा वायु आत्मा है घास तेरा शरीर है और जल तेरी योनि है और जलकी तू योनि है ॥ ३० ॥ हे महाभाग ! तेरी लटा ऊपरको व नीचेको व पार्श्वको व चारों तरफ विचरती हैं ॥ ३१ ॥ हे अग्ने ! सर्वरूप तूही है और तेरे विषय सब यह जगत् है और सर्वप्राणियोंको धारण करनेवाला तूही है ॥ ३२ ॥ और इस संसारको भरनेवाला तूही है; और परम हविरूप द्रव्यभी तूही है; और यज्ञोंमें तुझेही सब कालमें संत पूजते हैं ॥ ३३ ॥ और तूही प्राणियोंके शरीरोंमें अन्नको खाता है, और जलको

आत्मा वायुस्तव विभो शरीरं सर्ववीरुधः ॥ योनिरापश्च ते प्राक्ता योनिस्त्वमासि चाम्भसः ॥ ३० ॥ ऊर्ध्वं चाधश्च गच्छन्ति संचरन्ति च पार्श्वतः ॥ अर्चिषस्ते महाभाग सर्वतः प्रभवन्ति च ॥ ३१ ॥ त्वमेवाग्ने सर्वमासि त्वयि सर्वमिदं जगत् ॥ त्वं धारयासि भूतानि भुवनं त्वं विभर्षि च ॥ ३२ ॥ त्वमग्ने इव्यवादेकस्त्वमेव परमं हविः ॥ यजन्ति च सदा सन्तस्त्वामेव परमाश्वरे ॥ ३३ ॥ त्वमन्नं प्राणिनां भुङ्क्षे जग्धपतितासि त्वं प्रभो ॥ त्वयि प्रवृत्तो विजयस्त्वयि लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥ ३४ ॥ सर्वाल्लोकांस्त्रीनिमान् इव्यवाह प्राप्ते काले त्वं पचस्येव दीप्तः ॥ त्वमेवैकस्तपसे जातवेदो नान्यस्त्वत्तो विद्यते गोषु देव ॥ ३५ ॥ वृषाकपिः सिन्धुपतिस्त्वमग्ने महामत्से-
ष्वद्वपहरस्त्वमेव ॥ विश्वस्य भूम्नस्त्वमासि प्रसूतिस्त्वं च प्रतिष्ठा भगवन् प्रजानाम् ॥ ३६ ॥ सृजस्यपो रश्मिभिर्जातवेदस्तथोषधीरो-
पधीनां रसांश्च ॥ विश्वं त्वमादाय युगान्तकाले स्रष्टा भवस्यानल सर्गकाले ॥ ३७ ॥

पीता है; और तेरेसेही यह विजय प्रवृत्त हुआ है और तेरे विषे यह सब लोक प्रतिष्ठित हैं ॥ ३४ ॥ इन तीन लोकोंके रचनेके समयपै पकनेवाला तूही है, और तपके अर्थ जातवेद नामसे विख्यातभी तूही है; और तेरे सिवाय अन्नतमा कोई भी नहीं है ॥ ३५ ॥ तूही शिवरूप और तूही समुद्रोंका पति है और यज्ञोंमें अग्रभागकोभी हरनेवाला तूही है; और तुझसे संसार उपजा है तेरेहीमें सम्पूर्ण संसार स्थित होता है ॥ ३६ ॥ हे अग्ने ! अपनी किरणोंसे जलको रचे हे और औषधीभी तूही है और औषधियोंका रसभी तूही है और

प्रलयकालमें इस संसारको तूही ग्रहण करता है और उत्पत्तिकालमें तूही इस जगत्को रचनेवाला है ॥ ३७ ॥ हे अग्ने ! सब प्राणियोंकी योनि तूही वेदमें गाया गया है; सो देवताओंके कल्याणके अर्थ तैने बहुतसे दैत्योंका नाश किया है ॥ ३८ ॥ तू इस जलसे उपजा है सो यज्ञकी कांतिवाले पावक जलको प्राप्त हो क्यों शिथिल होता है ॥ ३९ ॥ हे देवसत्तम ! इन देवताओंको दैत्योंके भयसे रक्षा कर और हे युगांतान् अर्थात् प्रलयकी अग्निके समान; हे दैत्योंका नाश करनेवाले, विश्वकर्म, सहस्रभुक्, पिपाक्ष, लोहितग्रीव, कृष्णवर्त्म, हुताशन, हे अग्ने ! तूही रक्षा करनेके योग्य है ॥ ४० ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि मायायां देवासुरयुद्धे द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥ वैशम्पायनजी बोले; बृहस्पतिजीके सत्यवचनको त्वमग्ने सर्वभूतानां योनिर्वेदेषु गीयते ॥ त्वया देव क्षितार्याय निहता दानवा रणे ॥ ३८ ॥ स्वयोनिस्ते महातेजस्तोयं मल्लशतार्चितम् ॥ तां स्वयोनिं समासाद्य किं विषीदसि पावक ॥ ३९ ॥ त्रायस्व समरे देवान्दैत्येभ्यः सुरसत्तम ॥ पिङ्गलक्ष लोहितग्रीव कृष्णवर्त्मन् हुताशन ॥ ४० ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनेऽग्निस्तवो नाम द्विषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ बृहस्पतेस्तु वचनं श्रुत्वा सत्यं समीरितम् ॥ भूयः प्रज्ज्वाल रणे हविषेव महामखे ॥ १ ॥ इतास्तु माया दैत्यानां प्रदी-
तेनाग्निना रणे ॥ इतमाया इतबल बलिं ते समुपस्थिताः ॥ २ ॥ पराजितेषु दैत्येषु बह्विनाद्भुतकर्मणा ॥ प्रह्लादस्तुत्तरं वाक्यमाह दैत्यपतिं बलिम् ॥ ३ ॥ भवानग्निश्च वायुश्च भास्करः सलिलं शशी ॥ नक्षत्राणि दिशो व्योम भूश्च दानवसत्तम ॥ ४ ॥ भविष्यं चैव भूतं च भवञ्चासुरसत्तम ॥ दत्तं चैतज्जगवता वरदेन स्वयंभुवा ॥ ५ ॥

सुनकर युद्धमें फिर अग्नि प्रज्वलित हुआ जैसे घृतसे यज्ञमें प्रज्वलित होता है ॥ १ ॥ तब अग्निने सब दैत्योंकी माया नाश कर दी; तब माया और सेनासे रहित बहुतसे दैत्य बलिराजाके पास प्राप्त हुए ॥ २ ॥ अद्भुतकर्मवाले अग्निने जब सब दैत्य जीत लिये तब प्रह्लाद दैत्योंका राजा राजा बलिते कहने लगा ॥ ३ ॥ हे दैत्यसत्तम ! तूही अग्नि है तूही वायु है तूही सूर्य है, तूही जल है और तूही चंद्रमा है, और तूही नक्षत्ररूप है और तूही आकाशरूप है ॥ ४ ॥ तूही विश्वरूप है तूही पृथ्वीरूप है, तुमही भूत हो और तुमही वर्तमान हो. हे महात्मान् ! ब्रह्माजीने तुम्हें वरदान दिया है ॥ ५ ॥

तितसे तुम इन्द्रपनेको और अमरपनेको और सुखमें जीतकर ऐश्वर्यको और सबको वशमें करनेको और अपरिमित बलको तुम प्राप्त हुए हो ॥ ६ ॥ हे देवराज ! सब भूतोंका ईश्वर तुममेंही प्राप्त है, और सब कालमें प्रभुभी तुमही हो, और महायोगियोंके ईश्वरभी तुमही हो और युद्धमें शूरवीरभी तुमही हो ॥ ७ ॥ और सात्त्विक युगभी तुमही हो, ऐसे तुम इन्द्र और सब देवताओंको जीतो ॥ ८ ॥ कारण कि ब्रह्माजीने जैसे कहा है. हे राजन् ! तैसेही होना और अव्यथा नहीं होना, तब प्रह्लादके वचनको सुन परमप्रसन्न हो बलिराज अपने रथपर चढ़ा ॥ ९ ॥ जहां इन्द्रका रथ सड़ा इन्द्रत्वं चामरत्वं च युद्धे चाप्यपराजयः ॥ ईक्षित्वं च वशित्वं च बलं चैवामितं शुभम् ॥ ६ ॥ सर्वभूतेश्वरत्वं च देवराज सदा तव ॥ महायोगीश्वरत्वं च शूरत्वं च महामृधे ॥ ७ ॥ अणिमा लघिमा चैव ये चान्ये सात्त्विका गुणाः ॥ तत्पराजित्य देत्येन्द्र देवान्सर्वाश्च सानुगान् ॥ ८ ॥ यथोक्तं ब्रह्मणा राजंस्तत्तथा न तदन्यथा ॥ तस्य तद्वचनं श्रुत्वा प्रह्लादस्य महात्मनः ॥ बलिः परमसंतुष्टः प्रायाच्छक्ररथं प्रति ॥ ९ ॥ ततः प्रयान्तं त्रिदशेन्द्रसन्निधौ महासुरेन्द्रं बलिसुत्तमश्रियम् ॥ तमञ्जसा जग्मुरभिप्रदक्षिणं द्विजाश्च पुण्याः पशवश्च सत्तमाः ॥ १० ॥ महाजटाभारधरास्तपस्विनस्तदा तमाहुर्विधिमन्त्रमङ्गलैः ॥ अभिष्टुवन्तः कषयः स्वलंकृतं बलिं प्रयान्तं रणमुद्धेन स्थिताः ॥ ११ ॥ प्रतप्तजाम्बूनदचित्रभूषणैर्विभ्यश्च रत्नैर्विविधैरलंकृतः ॥ विराजमानः परमेण धर्षसा रणे विभात्याग्नि-क्षिप्तेष्वदानवः ॥ १२ ॥ स वै तदा शत्रुबलार्दितं बलं बलिर्देवर्षात्तमसस्त्वर्धिर्यवान् ॥ जलागमे श्रीमद्विवाभ्रमण्डलं विशृण्वमाणं नभसीव वायुना ॥ १३ ॥

था तहां जाकर प्राप्त हुए, जब इन्द्रके समीपमें देवोंका इन्द्र और उत्तम शोभावाला बलिराजा गमन करने लगा तब बलिराजाकी मंगलरूप पत्नी और मंगलरूप पशु परिक्रमा करने लगे ॥ १० ॥ और गमन करनेके समय बड़ी जटाको धारण करनेवाले तपस्वी और कवि नानाप्रकारके मंगलरूप मंत्रोंसे बलिराजाकी स्तुति करने लगे ॥ ११ ॥ तपायमान सुवर्णके चित्रभूषण और नानाप्रकारके दिव्य रत्नसे अलंकृत और उत्तमतेजसे शोभित ऐसा बलि राजा अधिके समान प्रकाशित होने लगा ॥ १२ ॥ तब उत्तम वीर्य और पराक्रमवाले बलिराजाने शत्रुओंकी सेनासे पीड़ित अपनी सेनाको देखा, जैसे

वायुसे आकाशमें बादल नष्ट होते हैं ॥ १३ ॥ चारों ओरसे युद्धमें अग्निसे रक्षित देवताओंकी सेनाको देख बड़े उच्छ्रित और शीघ्रतासे महार होनेवाले पर्वसंधिमें समुद्रके वेगकी समान ॥ १४ ॥ शूल बरछी कहि गदा तलवार बाणोंकी शत्रुओंकी सेनामें फैकने लगा, और मदोन्मत्त हाथीकी तरह शब्द करने लगा, जैसे वर्षाके समयमें बादल शब्द करते हैं ॥ १५ ॥ पीछे दिग्ग अस्त्ररूप धूमवाला और भुजाओंके वेगरूप वायुवाला महाबली पौरुष और पराक्रमरूप इन्धनयुक्त बली बोररूप अग्निके समान युद्धमें प्रकाशित हुआ, जैसे प्रजाको दग्ध करनेवाले कालाग्नि हो ॥ १६ ॥ इति श्रीमहाभारते

ततो वदशांष बलानि सर्वतो रणे प्रयुक्तानि हुताशनेन वै ॥ समुच्छ्रितान्युग्रतराणि तत्र वै समुग्रवेगानिव पर्वसन्धिषु ॥ १३ ॥
सशूलशकटपृष्टिगदासिसायकान् क्षिपन् रिपूणां समरे महात्मनाम् ॥ ननाद सिंहवर्षभमत्तनागवज्जलागमे तोयदवश वीर्यवान् ॥ १४ ॥
दिव्यास्त्रधूमः सुभुजोऽग्रबाहुर्महाबलः पौरुष विक्रमेन्धनः ॥ प्रजा विपक्षमिष कालवह्निः सुबोररूपो विबभौ रणे बलिः ॥ १५ ॥ इति
श्रीमहाभारते स्तिलेषु हरिवंशो भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे त्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ बलिना तु सुराः
सर्वे वर्जयित्वा सुराधिपम् ॥ रणे शरशतोभिन्नाः ससैन्या वै पराजिताः ॥ १ ॥ विमुक्ता याति देत्येन्द्रैर्वैष्यमाना महाचमूः ॥ जितास्तु
बलिना देवाः शक्रमाहुर्महाबलम् ॥ २ ॥ देवा ऊचुः ॥ भवानिन्द्रश्च धाता च लोकानां प्रभुरव्ययः ॥ त्वमप्रतिमकर्मा च तथैवातुप-
मश्रुतिः ॥ ३ ॥ विद्रुतानीह सैन्यानि सदास्माभिः सुरेश्वर ॥ रथचक्रज्वालाणि विभिन्नानि महासुरैः ॥ ४ ॥

स्तिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने देवासुरयुद्धे त्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥ वैशम्पायन बोले, तब बलिराजाने एक इन्द्रके बिना सैकड़ों बाणोंसे सब देवते बाँधे और सेनासहित जीत लिये ॥ १ ॥ तब देवोंसे मरते हुए और बालिके जीते हुए सब देवते महाबलवाले इन्द्रसे कहने लगे ॥ २ ॥ देवता बोले कि, हे इन्द्र ! तुमही हमारे इन्द्र हो और तुमही धाता हो और लोकोंके प्रभु भी तुमही हो ॥ ३ ॥ और तुमही अविनाशी हो और अप्रतिम कर्म करनेवाले भी तुमही हो और उत्तमकीर्तिवाले भी तुमही हो ॥ ४ ॥

सो हे देवताओंके ईश्वर ! सब देवताओंसहित सेना जागी जाती है और रथ हाथों छोड़े घोषा सहस्रों प्यादे गदा मूखल पट्टियोंसे सैकड़ों छिन्नभिन्न कर दिये हैं ॥ ५ ॥ बलिराजाने ऐसा भयानक रूप कर्म युद्धमें किया है; सो दैत्योंसे मरती हुई अपनी सेनाको अब क्यों त्यागते हैं ॥ ६ ॥ हे देवभ्रेत्र ! हे शरण्य ! शरणको प्राप्त हुए देवताओंकी रक्षा करो, इन्द्र देवताओंके वचनको सुन ॥ ७ ॥ संवर्तक अग्निके समान क्रोधको प्राप्त हो सब दैत्योंको दग्ध करने लगा, अर्थात् सूर्यकी किरणोंके समान प्रकाशवाले मुकुटको धारण करनेवाले ॥ ८ ॥ और वैदूर्य रत्नके समान कांतिवाले और

रथहस्त्यन्धयोधाश्च पदाताश्च सहस्रशः ॥ भिन्नाच्छिन्नाश्च शतशो गदामुशलपट्टिशैः ॥ ५ ॥ महाभैरवरूपं हि दैत्येन्द्रेण कृतं रणे ॥ किमुपेक्षसि दैत्येन्द्रेऽन्यमानां महाचमूम् ॥ ६ ॥ त्रायस्व त्रिदशश्रेष्ठ शरण्यः शरणागतान् ॥ श्रुत्वा तु वचनं तेषां देवानाममराधिपः ॥ ७ ॥ संवर्त्तामिसमक्रुद्धः सर्वान्दहति दानवान् ॥ दिवाकरकराकारं किरीटं धारयन्प्रभुः ॥ ८ ॥ वैदूर्यवर्णसंकाशो नानारत्नचिताङ्गदः ॥ मयूररोमा रक्ताक्षः शतबाहुः सहस्रदृक् ॥ ९ ॥ हरिरेको हरिश्मश्रुनानाकेतुर्महाबलः ॥ वज्रप्रहरणः श्रीमान्योगी शतशिरोधरः ॥ १० ॥ सधनुर्बद्धसन्नाहः शतादित्यसमप्रभः ॥ देवगन्धर्वयक्षो वैरनुयातः सहस्रशः ॥ ११ ॥ सामगेश्व जपेश्चापि स्तूयमानो महर्षिभिः ॥ शतर्ष्व महारोद्रं स्फोटनं सर्वतोमुखम् ॥ १२ ॥ प्रवृत्त रुचिरं वज्रं दीप्तं रोद्राट्टहासिनम् ॥ दैत्यानयोधयत्सर्वान्महेन्द्रः पाकशासनः ॥ १३ ॥

अनेक प्रकारके रत्नोंसे जटित बाजबंदको धारण करनेवाले और धुम्रनेत्रोंवाले और सौ बाहु और सहस्र नेत्रोंवाले ॥ ९ ॥ अकेले हरि बादीवाले अनेक केतुष्वजावाले महाबली वज्रका प्रहार करनेवाले, योगी सौ शिरोको धारण करनेवाले ॥ १० ॥ धनुष कबचको धारण करनेवाले; सौ सूर्योंके समान तेजबोल देवते मन्धर्व यक्षोंके समूहसे परिवृत ॥ ११ ॥ सामवेदके गाने और जाप करनेवाले महर्षियोंसे स्तुति किये और सौ पर्वोंसे संयुक्त महारुद्र सब तर्फको मुखवाले ॥ १२ ॥ महाकांतिमान् रौद्र हासयुक्त वज्रको धारण करनेवाले पाकरिपु इन्द्र सब दैत्योंसे युद्ध करने लगे ॥ १३ ॥

सब भूतोंसे अहस्य अदितिके प्रियपुत्र थे तैयार हुए बलि और इन्द्रका आपसमें उग्र युद्ध होने लगा ॥ १४ ॥ वह दोनोंका संग्राम बड़ा अत्यन्त हुआ वह दोनों बड़े वीर मरसे उदग्र थे इस कारण बड़ा तुमुल संग्राम हुआ ॥ १५ ॥ तब प्रह्लाद दैत्यने सैकड़ों स्तुतिरूप जयके देनेवाले कर्मोंसे बलिराजाको प्रबोधित किया, तब वह अग्निके समान प्रकाशित हुए ॥ १६ ॥ इन्द्र और बलिराजाके लोमहर्षण युद्धको देख दैत्य और देवताओंका फिर युद्ध होने लगा ॥ १७ ॥ फिर अश्वोंसे इन्द्र बलिको बाँधने लगे, तब बलिराजाने शस्त्रोंके सौ सौ टुकड़े कर दिये ॥ १८ ॥ पीछे क्रोधको प्राप्त हो बड़ी इन्द्रने

अधृष्यः सर्वभूतानामदित्या दयितः सुतः ॥ ततः प्रवृत्तः संग्रामो बलिवासवयोस्तदा ॥ १४ ॥ उभाभ्यां देवदेत्याभ्यामाचिरान्मद्व-
द्रुतः ॥ अतिवीर्यबलोदग्रस्तुमुलो लोमहर्षणः ॥ १५ ॥ प्रह्लादेन स्तुतिशतैः कर्मभिर्जयसंमतैः ॥ प्रबोधितो दैत्यपतिरग्निरिद्ध इवा-
बभौ ॥ १६ ॥ सुरासुरेन्द्रयोर्दृष्ट्वा संग्रामं लोमहर्षणम् ॥ देवानां दानवानां च भूयो युद्धमभूत्तदा ॥ १७ ॥ ततोऽविष्यन्महेन्द्रस्तं
बलिमस्त्रैर्महाबलम् ॥ तान्यस्त्राणि महाबाहुश्चिच्छेद शतधा रणे ॥ १८ ॥ ततः क्रुद्धः पुनस्तत्र निजग्रे दानवं महत् ॥ आग्नेयमथ
शत्रुं चिक्षेपेन्द्रो महाबलः ॥ तं दृष्ट्वा खे समागच्छत्प्रलयानलसन्निभम् ॥ १९ ॥ पातयामास तच्चैन्द्रं वारुणास्त्रेण धीमता ॥ संकुद्रो
मघवा वज्रमगृह्णात्पर्वतोपयम् ॥ २० ॥ हंतुकामो रणश्लाघी बलिं दैत्याधिपं रणे ॥ ततः शुश्राव देवेन्द्रः क्रोशिको हरिवाहनः ॥ २१ ॥
अशरीरां शुभांवाणीं तस्मिन्महाते वैशसे ॥ निवर्तस्व महाबाहो सुराणां नन्दिवर्धन ॥ २२ ॥ पुरंदर सुरश्रेष्ठ न जेष्यासि रणे बलिम् ॥
तपसात्युत्तमो दैत्यो वरदानेन चाधिकः ॥ २३ ॥

द्वारारणरूप आग्नेयास्त्रको बलिके ऊपर छोड़ा, प्रलयकी अग्निके समान अस्त्रको आते हुए आकाशमें देख वारुणास्त्रने उसे बलिके मिरा दिया ॥ १९ ॥ फिर क्रोधको प्राप्त हो इन्द्रने बलिराजाके मारनेको पर्वतके समान वज्रको ग्रहण किया ॥ २० ॥ जब बलिके मारनेको वज्र उठाया तब हरिवाहन इन्द्रने आकाशवाणी सुनी ॥ २१ ॥ आकाशसे अशरीरणी श्रुतवाणी कहने लगी, हे अशितिनंदन ! युद्धमें निवृत्त हो ॥ २२ ॥ इस बलिराजाको युद्धमें तुम नहीं जीत सकोगे, कारण कि तपसे बलिराजा तुमसे उत्तम है, और ब्रह्माजीके वरदानसे ॥ २३ ॥

ह. पं.
॥ १५४ ॥

स्वयंभूके परितोषसे सत्य बोलनेसे और धर्मोंके करनेसे बलिराजा तुमसे अधिक है. हे देवेश ! तब देवताओंसाहित तुम इसको नहीं जीत सकते ॥ २४ ॥ जो इसको जीतनेवाला सनातन है तिनको तुम भवण करो; जो ब्रह्माका सर्वस्व और देवताओंकी परम गति है ॥ २५ ॥ धर्मका परम रहस्य और परसे परे श्रीमान् गतिरूप, व्यक्त और अव्यक्त महाभूत और भूत भविष्य वर्तमानक जाननेवाला ॥ २६ ॥ सहस्रों शिरो-वाला, सहस्र पैरोंवाला, सहस्रों नेत्रोंवाला शंख चक्र गदा पद्मको धारण करनेवाला पीछे वक्त्रोंको धारण करनेवाला और दैत्योंको मारनेवाला ॥ २७ ॥

स्वयंभूः परितोषाच्च सत्यधर्माच्च वासव ॥ नैष शक्यस्त्वया जेतुं त्रिदशैर्वा सुरेश्वर ॥ २४ ॥ यो ह्यस्य जेता भगवांस्तं शृणुष्व समाहितः ॥ ब्रह्मणः स हि सर्वस्वं देवानां चैव सा गतिः ॥ २५ ॥ परं रहस्यं धर्मस्य परस्य च परा गतिः ॥ परात्परतरः श्रीमान् परावरगतिः प्रभुः ॥ २६ ॥ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥ शङ्खचक्रगदापाणिः पीतवासाः सुरारिहा ॥ २७ ॥ जेता जेयो जयः श्रीमान्सोऽस्य जेता भविष्यति ॥ श्रुत्वा दिव्यां तु मधुरां वार्णां तामहरीरिणीम् ॥ २८ ॥ अपयातो रणाच्छक्रः सार्धं सर्वैः सुरोत्तमैः ॥ अपयाते तु देवेन्द्रे कौशिके हरिवाहने ॥ २९ ॥ सिंहनादो महानासीद्दानवानां महामृषे ॥ ततः किलाकिलाशब्दः क्ष्वेडितास्फोटितस्वनः ॥ ३० ॥ शंखानां निनदश्चात्र योधानां वलितस्वनः ॥ वाकित्राणां च निर्घोषस्तुमुलम्बाभवत्तदा ॥ ३१ ॥ जयशब्दरवाश्चैव देवानां तु पराजये ॥ ससैन्यो देत्यराजस्तु स्तूयमानः सुहृद्गणैः ॥ बलीग्रो विबभौ दैत्यो हिरण्यकशिपु-र्यथा ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामने देवासुरसंग्रामो नाम षतुःषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

और सबको जीतनेवाला और आप किसीसे जीतमें नहीं आनेवाला पुरुष इस बलिराजाको जीतेना, तब ऐसी दिव्यरूप वालीको सुनकर ॥ २८ ॥ सब देवताओंके सहित इन्द्र युद्धसे निवृत्त हो गया हरिवाहन इन्द्र जब चला गया ॥ २९ ॥ तब सब दैत्य युद्धमें उग्र सिंहनाद करने लगे, अर्थात् किलाकिलशब्द और अपने २ भुजाओंको बजानेका शब्द ॥ ३० ॥ शंखोंके शब्द और योधाओंकी टेढ़ी बोलीके शब्द और अनेक प्रकारके बाजोंके महाशब्द होने लगे ॥ ३१ ॥ पीछे देवताओंके हारनेमें जयजय शब्द करते हुए दैत्योंसे संयुक्त द्रुपतिको प्राप्त हो बलिराजा अपने स्थानमें प्राप्त हुए, और हिरण्यकशिपु दैत्यके समान प्रकाशित होने लगे ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि साक्षात् वामने देवासुरसंग्रामो नाम षतुःषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

भा. टी.

८६ क. ६४

॥ १५४ ॥

पयाने चतुःषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥ वैशंपायन बोले, जब देवता प्रयत्नसे रहित हो गये और त्रिलोकी दैत्योंने रक्षित हुई और मय शंबर तथा बलवाले बलिकी जय हुई ॥ १ ॥ सब दिशा शुद्ध हो गई, और धर्म कर्म प्रवृत्त होने लगे, और अधर्मके मार्ग दूर होने लगे ॥ २ ॥ प्रह्लाद शंबर मय अनुह्लाद इन्होंने चारों दिशा रक्षित होने लगी, और सब दैत्योंने आकाशकी पालना होने लगी ॥ ३ ॥ और अपनी प्रकृतिमें लोक स्थित होने लगा और सन्मार्ग प्रवृत्त होने लगा ॥ ४ ॥ और सब पापोंका अभाव होने लगा और प्रायकी स्थिरता होने लगी और सिद्धोंका तप प्रवृत्त होने

वैशम्पायन उवाच ॥ निष्प्रयत्नेषु देवेषु त्रैलोक्ये दैत्यपालिते ॥ जये बलेर्बलवतो मयश्शम्बरयोस्तथा ॥ १ ॥ सुताधु दिक्षु सर्वासु प्रवृत्ते धर्मकर्मणि ॥ अपवृत्ते चन्द्रमसि अयनस्थे दिवाकरे ॥ २ ॥ प्रह्लादश्शम्बरमयैरनुह्लादेन चैव हि ॥ दिक्षु सर्वासु गुप्तासु गगने दैत्यपालिते ॥ ३ ॥ दैत्येषु मत्स्यलोभाश्च स्वर्गार्थं दर्शयत्सु च ॥ प्रकृतिस्थे तदा लोके वर्तमाने च सत्पथे ॥ ४ ॥ अभावे सर्वपापानां भावे चैव तथा स्थिते ॥ भावे तपसि सिद्धानां सर्वत्राश्रमरक्षिषु ॥ ५ ॥ चतुष्पादे स्थिते धर्मे अधर्मे पादविग्रहे ॥ प्रजापालनयुक्तेषु भ्राजमानेषु राजसु ॥ ६ ॥ स्वधर्मसंप्रयुक्तेषु सर्वाश्रमनिवासिषु ॥ अभिविक्तोऽसुरैः सर्वदैत्यराजो बलिस्तदा ॥ ७ ॥ हृष्टेष्वसुरसंघेषु नदत्सु मुदितेषु च ॥ अथाभ्युपगता लक्ष्मीर्बलिं पद्मासने स्थिता ॥ ८ ॥ पद्मोद्यतकरा देवी वरदाऽसुरमोहिनी ॥ श्रीरुवाच ॥ बले बलवतां श्रेष्ठ महाराज महाद्युते ॥ ९ ॥

लगा और पापकर्मवालोंका अभाव होने लगा ॥ ५ ॥ और चार पैरवाला धर्म स्थित होने लगा, और एक पैरवाला पाप स्थित होने लगा, और प्रजाकी पालना करनेमें युक्त राजा होने लगे ॥ ६ ॥ और सब आश्रमनिवासी अपने २ धर्मोंमें स्थित होने लगे ऐसे कालमें देवराजपै दैत्योंने बलिराजाका अभिषेक किया ॥ ७ ॥ असुरोंके प्रसन्न होकर शब्द करनेमें पद्मासनमें स्थित और पद्मोंको हाथमें धारण करनेवाली लक्ष्मी देवी ॥ ८ ॥ और वरके देनेवाली और शूरवीरको सेवनेवाली लक्ष्मी बलिराजाको प्राप्त होकर कहने लगी, भी बोली, हे बलबालोंमें भेठ ! महाकान्तिमान् दैत्यराज ॥ ९ ॥

देवताओंके पराजयसे मैं तुमपर प्रसन्न हुई हूं तुम्हारा भंगल प्राप्त होगा; तुमने अपने बलसे युद्धमें इन्द्रको जीत लिया ॥ १० ॥ तब तुम्हारे उच्चम बलको देखकर मैं तुम्हारे पास आपही प्राप्त हुई हूं. हे दैत्यश्रेष्ठ ! हिरण्यकशिपुके कुलमें उपजे हुए तेरे ऐसे कर्मोंमें आश्चर्य नहीं ॥ ११ ॥ सुरेंद्रको जय करनेवाला तुम्हारा कर्म है. हे राजन् ! तुम्हारे पितामह हिरण्यकशिपुने ॥ १२ ॥ यह संपूर्ण त्रिलोकी भोगी है. परन्तु तिससे तुम धर्ममार्गमें विशेष हो ॥ १३ ॥ इस कारण तुमही इस त्रिलोकीको भोगोगे, ऐसे कह वर देनेवाली और सौम्य लक्ष्मी बलि राजाके शरीरमें प्रविष्ट हुई ॥ १४ ॥

प्रीतास्मि तव भद्रं ते देवतानां पराजये ॥ यस्त्वया युधि विक्रम्य देवराजः पराजितः ॥ १० ॥ दृष्ट्वा ते परमं सत्त्वं ततोऽहं स्वयमागता ॥ नाश्चर्यं दानवश्रेष्ठ हिरण्यकशिपोः कुले ॥ ११ ॥ प्रसूतस्यासुरेन्द्रस्य तव कर्मदमद्विग्रहम् ॥ विशेषतस्त्वया राजन्दैत्येन्द्रः प्रपितामहः ॥ १२ ॥ येन भुक्तं हि निखिलं त्रैलोक्यमिदमव्ययम् ॥ विशेषतस्तव विभो सर्वं धर्मपथे स्थिताः ॥ १३ ॥ तेन त्रैलोक्यसुरस्येन भोक्ष्यस्यमितविक्रम ॥ एवमुक्त्वा तु सा देवी लक्ष्मीर्दैत्यपतिं बलिम् ॥ १४ ॥ प्रविष्टा वरदा सौम्या सर्वभूतमनोरमा ॥ शिष्टाश्च देव्यः प्रवरा ह्यीः कीर्तिर्द्युतिरेव च ॥ १५ ॥ प्रभा धृतिः क्षमा भूतिर्नीतिर्विद्या दया स्मृतिः ॥ स्मृतिर्लज्जा तथा मेधा लक्ष्मीरीहा गतिस्तथा ॥ १६ ॥ श्रुतिः प्रीतिरिला कीर्तिः शान्तिः पुष्टिः क्रियास्तथा ॥ सर्वाश्चाप्सरसो दिव्या नृत्यगीतविशारदाः ॥ १७ ॥ पतिं प्राप्ताः सुदैतेयं त्रैलोक्ये सचराचरे ॥ प्राप्तमैश्वर्यममितं बलिना ब्रह्मवादिना ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे पञ्चषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६५ ॥

जब वह सौम्या सब प्राणियोंका जो मनोहर रूप उसमें प्रविष्ट हुई, तब शेष देवी और ही कीर्ति द्युति ॥ १५ ॥ प्रभा धृति क्षमा भूति नीति दया मति स्मृति मेधा पुष्टि मुक्ति ॥ १६ ॥ श्रुति प्रीति इला कीर्ति शान्ति पुष्टि यह सब और दिव्य अप्सरा नृत्य और गीतमें कुशल ॥ १७ ॥ अपने पति बलि राजाको प्राप्त हुई. इस प्रकार ब्रह्मवादी बलि राजाने दैत्योंके संग चराचर त्रिलोकीका ऐश्वर्य प्राप्त किया ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे

भविष्यपर्वणि भाषायां वामने देवासुरयुद्धे पंचषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६५ ॥ जन्मेजय बोले, कि हे ब्राह्मणो । दैत्योंने पराजित हुए देवता क्या करने लगे ?
 और देवताओंने फिर स्वर्गलोक कैसे प्राप्त किया ॥ १ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि तिस आकाशवाणीको इन्द्र सुनकर देवताओंको संग ले अदितिके
 उत्तम स्थानमें प्राप्त होनेके लिये पूर्व दिशामें अदितिके स्थानमें गया ॥ २ ॥ पीछे अदितिके स्थानको प्राप्त हो जो युद्धमें आकाशवाणीके सुस्वसे सुना
 था, वह सब वृत्तान्त अदितिसे कहने लगा ॥ ३ ॥ तब अदिति कहने लगी कि, हे पुत्र ! जो ऐसा है तो तुमसे विरोचनका पुत्र बलिराजा युद्धमें नहीं
 जनमेजय उवाच ॥ पराजिताः सुरा दैत्यैः किमकुर्वत वै मुने ॥ कथं च त्रिदिवं लब्धं भूयो देवैर्द्विजोत्तम ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥
 श्रुत्वा वाणीं तु तां दिव्यां सह देवैः सुराधिपः ॥ प्राग्दिशं प्रस्थितः श्रीमानदित्यालयमुत्तम ॥ २ ॥ प्राप्यादित्यालयं शक्रः कथयामास
 तां गिरम् ॥ अदित्यां सा यथा युद्धे तेन वाणी पुरा श्रुता ॥ ३ ॥ अदितिरुवाच ॥ यद्येवं पुत्र युष्माभिर्न शक्यो इन्तुमाहवे ॥
 बलिर्विरोचनसुतः सर्वैश्चैव मरुद्गणैः ॥ ४ ॥ सहस्रशिरसा इन्तुं केवलं शक्यतेऽसुरः ॥ तेनैकेन सहस्राक्ष न ह्यन्येन क्षतक्रतो ॥ ५ ॥
 तद्गः पृच्छस्व पितरं कश्यपं सत्यवादिनम् ॥ पराजयार्थं दैत्यस्य बलेस्तस्य महात्मनः ॥ ६ ॥ ततोऽदित्या सह सुराः संप्राप्ताः
 कश्यपान्तिकम् ॥ अपश्यन्कश्यपं तत्र मुनिं दिव्यतपोनिधिम् ॥ ७ ॥ आद्यं देवं गुरुं दिव्यं छिन्नं त्रिषवणाम्बुभिः ॥ तेजसा भास्करा-
 कारं गौरमग्निशिखाप्रभम् ॥ ८ ॥ न्यस्तदण्डं तपोयुक्तं बद्धकृष्णाजिनोत्तरम् ॥ बलकलाजिनसंवीतं प्रदीप्तं ब्रह्मवर्चसा ॥ ९ ॥
 हुताशमिव दीप्यन्तमाज्यमन्त्रपुरस्कृतम् ॥ स्वाध्यायनिरतं शान्तं वपुष्मन्तमिवानलम् ॥ १० ॥

पर सकता है ॥ ४ ॥ वह सहस्राक्ष सहस्र मस्तकशाले परमेश्वरके हाथसे निश्चय मरेगा अन्यत्रसे नहीं ॥ ५ ॥ सो मैं महत्त्वा बलिराजाके पराजयके
 निमित्त ब्रह्मवादी कश्यपजी तुम्हारे पिताके समीप जाकर पूछती हूँ ॥ ६ ॥ तब अदितिके सहित सम्पूर्ण देवता कश्यपजीके निकट प्राप्त हो दीप्त तपके
 निधि ॥ ७ ॥ आद्य और देवताओंके गुरु दिव्य तेजसे सूर्यके आकार और अग्निकी शिखाके समान काण्तिशाले ॥ ८ ॥ और न्यस्तदण्ड तपसे युक्त
 कृष्णमृगछाळाको कांधेपर धारण करनेवाले वृक्षके बलकलोंको शरीरपर धारण करनेवाले और जटाके समूहसे भूषित ॥ ९ ॥ आज्य मंत्रपुरस्कृत तथा अग्निकी

समान दीप्यमान और स्वाध्यायमें रत और साक्षात् आग्निके समान प्रकाशित ॥ १० ॥ ब्रह्मादियोंमें भेद देव व दैत्योंके गुरु और तते हुए सूर्यकी समान तेजवाले मरीचि ऋषिके पुत्र ॥ ११ ॥ और सर्व प्राणियोंके रचनेवाले प्रजाके पति आत्मभावसे विशेष करके तोंसरे प्रजापति ॥ १२ ॥ कश्यपजीको देखते हुए पीछे अदिति सहित सब देवता प्रणाम कर अंजलि बांध वचन कहने लगे जैसे ब्रह्माजीने ब्रह्माजीके पुत्र कहते हैं ॥ १३ ॥ और जो युद्धमें आकाशवाणीसे इन्द्रने अवण किया था कि सब देवताओंसे बलि देत्य जीतनेमें नहीं आ सकता. यह सब वृत्तान्त कहते हुए ॥ १४ ॥ तब तिन पुत्रोंके वचनको तं ब्रह्मादिनां श्रेष्ठं सुरासुरगुरुं प्रभुम् ॥ प्रतपन्तमिवादित्यं मारीचं दीप्ततेजसम् ॥ ११ ॥ यः स्रष्टा सर्वभूतानां प्रजानां पतिरुत्तमः ॥ आत्मभावविशेषेण तृतीयो यः प्रजापतिः ॥ १२ ॥ ततः प्रणम्य ते वीराः सहादित्याः सुरर्षभाः ॥ ऊचुः प्राञ्जलयः सर्वे ब्रह्माणमिव मानसाः ॥ १३ ॥ तच्छ्रुतं युधि शक्रेण सरस्वत्या समीरितम् ॥ अजेयस्त्रिदशैः सर्वैर्बलिदानवसत्तमः ॥ १४ ॥ श्रुत्वा तु वचनं तेषां पुत्राणां कश्यपस्तदा ॥ चकार गमने बुद्धिं ब्रह्मलोकाय लोककृत् ॥ १५ ॥ कश्यप उवाच ॥ गच्छाम ब्रह्मसदनं ब्रह्मघोषनिनादितम् ॥ यथाश्रुतं च तत्रैव ब्रह्मणे वदतानघाः ॥ १६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततोऽदित्या सह सुरा यान्तं कश्यपमन्वयुः ॥ प्रार्थितं ब्रह्मसदनं देवर्षिगणसेवितम् ॥ १७ ॥ ते मुहूर्तेन संप्राप्ता ब्रह्मलोकं दिवोकसः ॥ दिव्यैः कामगमैर्यानिर्महार्हैः सुमनोहरैः ॥ १८ ॥ दिदृक्षवस्ते ब्रह्माणं तपसो राक्षिमव्ययम् ॥ अभ्यगच्छन्त विस्तीर्णा ब्रह्मणः परमां सभाम् ॥ १९ ॥ षट्पदोद्गीतनिनदां सामगीतविमिश्रिताम् ॥ श्रेयस्करीममित्रघ्नीं दृष्ट्वा संजहन्मुदा ॥ २० ॥

सुनकर लोकोंके रचनेवाले कश्यपमुनि ब्रह्मलोकमें गमन करनेके लिये बुद्धि करने लगे ॥ १५ ॥ कश्यप मुनि कहने लगे, हे पुत्रो! ब्रह्मलोकमें हम सब चलेगे, सो जैसे तुमने आकाशवाणीसे सुना है वह सब ब्रह्माजीके सम्मुख वर्णन करना ॥ १६ ॥ वैशम्पायन बोले, देवर्षिगणोंसे सेवित ब्रह्मलोकको कश्यपजीके संग अदिति और संपूर्ण देवता गमन करने लगे ॥ १७ ॥ तब दिव्यरूप विमानमें बैठकर वे सब देवता एक मुहूर्तेन ब्रह्मलोकमें जाकर प्रात हुए ॥ १८ ॥ तब यथायोग्य तपस्वी राशि और अविनाशी ब्रह्माजीको देखनेके लिये वही विस्तारवाची ब्रह्माजीकी सभामें गये ॥ १९ ॥ गीतोंके मानसे संयुक्त और सामवेदके

मानसे मिली हुई कल्याणको करनेवाली और शत्रुओंको नाशनेवाली ब्रह्माजीकी सत्ताको देखकर प्रसन्न हुए ॥ २० ॥ वेद और वेदाङ्गके पारको जानने-
वाले ऋच और बह्वच यज्ञसंबंधी नामोंसे विख्यात ब्राह्मणोंके विस्तारित किये अक्षर ॥ २१ ॥ कर्मोंमें अनेक प्रकारकी वाणीको अवण करते और यज्ञ
वेदांग आदि कर्मको जाननेवाले तथा पदके क्रमको जाननेवाले ॥ २२ ॥ ब्रह्मर्षियोंके शब्दसे शब्दित होते हुए और यज्ञकी स्तुतिको जाननेवाले और
शिक्षावाले ॥ २३ ॥ २४ ॥ और शब्दके पदार्थ अर्थको जाननेवाले और संपूर्ण विद्याओंमें कुशल और मीमांसासूत्र वाक्योंको जाननेवाले और सब

ब्राह्मणेश्व महाभागोर्वेदवेदाङ्गपारगैः ॥ ऋचो बृचसुर्यैश्च शिक्षाविद्विस्तथा द्विजैः ॥ शब्दनिर्वचनार्थं च प्रेर्यमाणपदाक्षराः ॥ २१ ॥
शश्रुबुस्तेऽमरव्याघ्रा विततेषु च कर्मसु ॥ यज्ञवेदाङ्गविदुषां पदकमाविदां तथा ॥ २२ ॥ घोषेण परमर्षीणां सा बभूव निनादिता ॥
यज्ञसंस्तवाविद्विश्च शिक्षाविद्विस्तथा द्विजैः ॥ २३ ॥ शब्दनिर्वचनार्थज्ञैः सर्वविद्याविशारदैः ॥ मीमांसाहितवाक्यज्ञैः सर्ववादविशा-
रदैः ॥ २४ ॥ हृष्टपुष्टस्वरेस्तत्र द्विजेन्द्रैर्बल्यवादिभिः ॥ नादितं ब्रह्मसदनं प्रवरं देवसंघमत् ॥ २५ ॥ ते तत्र समनुप्राप्य शृण्वन्तो वे-
ज्जनिं सुराः ॥ पूतान्यात्मशरीराणि मेनिरे तु न संशयः ॥ २६ ॥ तूर्णीभूता एकाचित्ता ब्रह्मण्यगतमानसाः ॥ विस्मयोत्फुल्लनयना
निरीक्षन्तः परस्परम् ॥ २७ ॥ नमस्कुर्वन्ति च पुनर्बुद्धं लोकगुरुं प्रभुम् ॥ मनसेव सुरश्रेष्ठाः पुरस्कृत्य तु कश्यपम् ॥ २८ ॥ पुनः
संपूज्य परमं वेदोच्चारणनिःस्वनम् ॥ गम्भीरोदारमधुरं सुस्वरं हंसगद्गदम् ॥ २९ ॥ ऐक्यनानात्वसंयोगसमवायविशारदैः ॥ लोका-
यतिकमुल्यैश्च शश्रुबुः स्वनमीरितम् ॥ ३० ॥

प्रकारके वेदोंके वादको जाननेवाले ॥ २५ ॥ हृष्ट पुष्ट स्वरवाले ब्राह्मणोंके शब्दोंसे शब्दित वह ब्रह्मलोक देवलोककी समान शब्दायमान हो रहा था ॥ २६ ॥
ऐसे उत्तम ब्रह्मलोकमें वेदोंकी ध्वनिको सुनते हुए, सब देवता पहुँचे और सब देवता अपने अपने शरीरको पवित्र मानते हुए इसमें संशय नहीं ॥ २७ ॥
पीछे मौनको धारण करनेवाले और ब्रह्माजीमें मनको लगाये आश्चर्यसे फूले हुए नेत्रोंवाले देवता आपसमें देखने लगे ॥ २८ ॥ इसके उपरान्त मनसे
प्रसन्न हुए सब देवता कश्यपजीको जाने कर जनतके स्वामी ब्रह्माजीको प्रणाम करने लगे ॥ २९ ॥ ऐक्य और नानाप्रकार संयोग समवायके जाननेवाले

जगत्प्राणिमाणां देवताओंके अनेक प्रकारके शब्दोंको भवण करते हुए ॥ ३० ॥ जहां तहां ब्रह्मलोकमें उत्तम व्रतको धारण करनेवाले और जप होय
आदि कर्मोंको करनेवाले ब्राह्मणोंको देखने लगे ॥ ३१ ॥ इस सभामें लोकके पितामह देवता और दैत्योंके गुरु और दिव्य मायासे सेवित विविपूर्वक
उपास्यमान थे ॥ ३२ ॥ तिस ब्रह्माजीको प्रजापति दक्ष प्रचेता पुलह मरीचि ब्राह्मण ॥ ३३ ॥ भृगु, अत्रि, वसिष्ठ, गौतम, नारद, मनु, आकाश, वायु,
तेज, जल, पृथ्वी ॥ ३४ ॥ सद्, स्पर्ध, रूप, रस, गंध, प्रकृति, विकृति और सब प्रकारके पृथ्वीके कारण ॥ ३५ ॥ अंग उपांगोंसहित चारों वेद सब

तत्र तत्र च विप्रेन्द्राप्रियतान् संश्रितव्रतान् ॥ जपहोमपरान्मुख्यान्ददृशुः कश्यपात्मजाः ॥ ३१ ॥ तस्यां सभायामास्ते स्म ब्रह्मा
लोकपितामहः ॥ सुरासुरगुरुः श्रीमान्विष्वदेवमायया ॥ ३२ ॥ उपासते च तत्रैनं प्रजानां पतयः प्रभुम् ॥ दक्षः प्रचेताः पुलहो
मरीचिश्च द्विजोत्तमः ॥ ३३ ॥ भृगुरत्रिर्वसिष्ठश्च गौतमो नारदस्तथा ॥ मनुर्द्यौरन्तरिक्षं च वायुस्तेजो जलं मही ॥ ३४ ॥
शब्दस्पर्शौ च रूपं च रसो गन्धस्तथैव च ॥ प्रकृतिश्च विकाराश्च यच्चान्यत्कारणं महत् ॥ ३५ ॥ साङ्गोपाङ्गाश्चतुर्वेदाः सरहस्य-
पद्ममाः ॥ क्रियाश्च कृतवश्चैव संकल्पः प्राण एव च ॥ ३६ ॥ एते चान्ये च बहवः स्वयंभुवमुपास्थिताः ॥ अयों धर्मश्च कामश्च
द्वेषो दर्पश्च नित्यदा ॥ ३७ ॥ शक्रो बृहस्पतिश्चैव संवर्तो बुध एव च ॥ शनैश्चरोऽय राहुश्च ग्रहाः सर्वे ब्रह्मोपतः ॥ ३८ ॥ मरुतो
विश्वकर्मा च नक्षत्राणि च भारत ॥ दिवाकरश्च सोमश्च ब्रह्माणं समुपासते ॥ सावित्री दुर्गतरणी वाणी सप्तविधा तथा ॥ ३९ ॥ सर्वाणि
श्रुतिस्मार्त्ताणि गाथाश्च नियमास्तथा ॥ भाष्याणि सर्वज्ञास्त्राणि देववन्ति विशांपते ॥ क्षणा ल्वा मुहूर्ताश्च दिवा रात्रिश्च भारत ॥ ४० ॥

क्रिया, सब यज्ञ, संकल्प प्राण ॥ ३६ ॥ इसके अतिरिक्त औरभी स्वयंभूके निकट उपस्थित हुए अर्थ, धर्म, काम, द्वेष, दर्प ॥ ३७ ॥ शुक, बृहस्पति,
संवर्त, बुध, शनैश्चर, राहु, शेष रहे सब ग्रह ॥ ३८ ॥ मरुत, विश्वकर्मा, सब नक्षत्र, सूर्य, चंद्रमा, यह सब ब्रह्माजीकी उपासना करते हैं नायबी, सात
प्रकारकी वाणी ॥ ३९ ॥ सब स्मृति, शास्त्र, सब गाथा, सब निगम, देहवाले सब भाष्यरूप, शास्त्र, और क्षण, लव, मुहूर्त, दिन, रात्रि ॥ ४० ॥

पक्ष मास, छः ऋतु, संवत्सर, छतयुग, त्रेतायुग, द्वापर, कलियुग, संध्या, महीना, रात ॥ ४१ ॥ दिव्य कालचक्र, ये सब और अन्यत्री दिव्य बहुतसे ब्रह्मा-
 जीके समीपमें स्थित थे ॥ ४२ ॥ ऐसी दिव्यरूप और सब कामना देनेवाले ब्रह्मसन्नायें अपने धर्मात्मा पुत्र देवताओंसहित कश्यप ऋषि प्रविष्ट हुए ॥ ४३ ॥
 वह सब प्रकारके तेजसे संयुक्त दिव्य और ब्रह्मर्षिगणोंसे सेवित ब्रह्माके योग्य लक्ष्मीसे प्रकाशित, चिन्ता और ग्लानिसे रहित ॥ ४४ ॥ और परम आस-
 नपर स्थित ब्रह्माजीको देख गिरसे प्रणाम करने लगे ॥ ४५ ॥ अपने अपने शिरोंसे ब्रह्माजीके चरणोंका स्पर्श कर सब पापोंसे विमुक्त शांतिरूप कश्य-
 प अर्चमासाश्च मासाश्च ऋतवः षट् तथैव च ॥ संवत्सराश्चतुर्युगं मासा रात्रिश्चतुर्विधा ॥ ४१ ॥ कालचक्रं च यद्विव्यमनित्यं ध्रुव-
 मव्ययम् ॥ एते चान्ये च बहवः स्वयंभुवमुपस्थिताः ॥ ४२ ॥ ते प्रविष्टाः सर्वा दिव्या ब्रह्मणः सर्वकामदाम् ॥ कश्यपस्त्रिदशैः
 सार्द्धं पुत्रैर्धर्मविशारदैः ॥ ४३ ॥ सर्वतेजोमयी दिव्या ब्रह्मर्षिगणसेविताम् ॥ ब्राह्म्या श्रिया दीप्यमानमचिन्त्यं विगतकुमम् ॥ ४४ ॥
 ब्रह्माणं वीक्ष्य ते सर्वे आसीनं परमासने ॥ अग्न्यर्धं शुभो पादौ ब्रह्मणस्ते दिवोक्तसः ॥ ४५ ॥ क्षिरोभिः स्पृश्य चरणौ तस्य ते
 परमेष्ठिनः ॥ विमुक्ताः सर्वपापेभ्यः शान्ता विगतकल्मषाः ॥ ४६ ॥ दृष्ट्वा तु तान्सुरान्सर्वान्कश्यपेन सहागतान् ॥ आह ब्रह्मा
 महातेजा देवानां प्रसुरीश्वरः ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६६ ॥
 ब्रह्मोवाच ॥ यदर्थमिह संप्राप्ता भवन्तः सर्वे एव हि ॥ विजानाम्यहमव्यग्र एतत्सर्वं महाबलः ॥ १ ॥ भविष्यति च वः सोऽर्थः
 काक्षितो यः सुरोत्तमः ॥ बलेर्दानवमुत्स्यस्य यो विजेता भविष्यति ॥ २ ॥
 पसहित सब देवता हो गये ॥ ४६ ॥ तब कश्यपके सहित सब देवताओंके आगमनको देख अति तेजवान् और सब देवताओंके ईश्वर ब्रह्माजी कहने
 लगे ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि प्रापायां वामने ब्रह्मलोकमगने षट्षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६६ ॥ ब्रह्माजी बोले, हे
 देवताओ ! जिस प्रयोजनके अर्थ तुम यहां आकर प्राप्त हुए हो. हे महाबलवालो ! तिस अर्थको मैं यथार्थ जानता हूं ॥ १ ॥ तुम्हारा वांछित मनोरथ
 होगा, बलिदैत्यको जीतनेवाला उत्पन्न होगा ॥ २ ॥

सो सब देवोंकाही जीतनेवाला नहीं, किन्तु त्रिलोकीका जीतनेवाला और देवताओंमें भेद ॥ ३ ॥ और सब प्राणियोंको पालनेवाला, विश्वकी योगि, सनातन जिसके पूर्वदेहको हिरण्यगर्भ कहते हैं ॥ ४ ॥ और सबोंसे बड़ा और किसीकी जीतमें नहीं आनेवाला विभु ॥ ५ ॥ और अतिवीर्यवाले बलिराजाको और विश्वको जीतनेवाला ॥ ६ ॥ सबका उत्पत्तिकारण मुक्तमेही पूर्व होनेवाला, इस जनतकी उत्पत्ति करनेवाला और अचिन्त्य और विश्वात्मा और योगयुक्त तत्त्वही जिसको महाज्ञान देवताभी नहीं जान सकते कि कौन है. यह वेशात्मा विश्व और पुरुषोत्तम रूप है ॥ ७ ॥

न खल्वसुरसंचानामेको जेता स विश्वकृत् ॥ त्रैलोक्यस्थापि जेतासौ देवानामपि चोत्तमः ॥ ३ ॥ घाता चैव हि लोकानां विश्वयोगिः सनातनः ॥ पूर्वदेहं सदा प्रादुर्हेमगर्भनिदर्शनम् ॥ ४ ॥ आत्मा देवेन विभुना कृतो जेयो महात्मना ॥ बलेरसुरमुखस्य विश्वस्य जमतस्तथा ॥ ५ ॥ प्रभवः स हि सर्वेषामस्माकमपि पूर्वजः ॥ अचिन्त्यः स हि विश्वात्मा योगयुक्तः परंतपः ॥ ६ ॥ तं देवापि महात्मानं न विदुः कोऽप्यसाविति ॥ वेदात्मानं च विश्वं च स देवः पुरुषोत्तमः ॥ ७ ॥ तस्यैव तु प्रसादेन प्रवक्ष्येऽहं परां गतिम् ॥ यत्र योगं समास्थाय तपश्चरति दुश्चरम् ॥ ८ ॥ क्षीरोदस्योत्तरे कूले उदीच्यां दिशि देवताः ॥ अमृतं नाम परमं स्थानमाहुर्मनीषिणः ॥ भवन्तस्तत्र वै गत्वा तपसा संशितव्रताः ॥ ९ ॥ अमृतं स्थानमासाद्य तपश्चरत दुश्चरम् ॥ तत्र श्रोष्यथ विस्पष्टां स्निग्धगम्भीरानिःस्वनाम् ॥ १० ॥ उष्णगे तोयपूर्णस्य तोयदस्य समस्वनाम् ॥ युक्ताक्षरपदस्निग्धां रम्यामभयदां शिवाम् ॥ ११ ॥

जिसके प्रसादसे परमगतिको मैं कहता हूं. जिससे योगको प्राप्त हो दुश्चर तप किया जाता है ॥ ८ ॥ क्षीर सागरके उत्तर कूलपै उत्तर दिशामें अमृतनामसे विख्यात जिस देवका स्थान है वहां तुम सब व्रतधारी जाके ॥ ९ ॥ अमृतस्थानमें प्राप्त हो घोर तप करो, वहां तुम विस्पष्ट स्निग्ध और गंभीर सम्बवाली ॥ १० ॥ और गरभीमें समुद्रकी समान मर्जनेवाली दिव्य, स्पष्ट अक्षर और पदोंसे युक्त रमणीय अक्षरकी देवेवाली और पवित्र ॥ ११ ॥

और सत्य और परम संस्कारों युक्त दिव्य और सब पापोंको नाशनेवाली वरदायक ॥ १२ ॥ साक्षात् अवतार लेनेवाला देवादिदेव ईश्वरकी कही हुई वाणीको तप व्रतके अन्तमें तुम अवण करोगे ॥ १३ ॥ उन विश्वके देव महात्माकी यह अमोघ वाणी होगी कि हे देवताओ ! तुम्हारा आमनन मेरे निकट सफल है ॥ १४ ॥ सो मैं किसके अर्थ किस वरको दूँ ? और वरको देनेवाला मैं स्थित हूँ, तब अदिति और कश्यप देवसे यह वर माँगे ॥ १५ ॥ उनके चरणोंमें शिरसे प्राणम करके कहें, हे देव योगात्मा ! तुम साक्षात् हमारे पुत्र हो जाओ इसमें संदेह न हो ॥ १६ ॥ तब वह देव यही वरदान

वाणी परमसंस्कारां वरदां ब्रह्मवादिनीम् ॥ दिव्यां सरस्वतीं सत्यां सर्वकल्लिषनाशिनीम् ॥ १२ ॥ सर्वदेवाधिदेवस्य भाषितां भावितात्मनः ॥ तस्य व्रतसमाप्तौ तु यावद्भूतविसर्जनम् ॥ १३ ॥ अमोघस्य तु देवस्य विश्वेदेवा महात्मनः ॥ स्वागतं वः सुरश्रेष्ठा मत्सकाशे व्यवस्थिताः ॥ १४ ॥ कस्य किं वा वरं देवा ददामि वरदः स्थितः ॥ तं कश्यपोऽदितिश्चैव वरं गृहीत वे ततः ॥ १५ ॥ प्रणम्य शिरसा पादौ तस्मै योगात्मने तदा ॥ भवानेव च नः पुत्रो भवत्विति न संशयः ॥ १६ ॥ उक्तश्च परया भक्त्या तथास्त्विति स वक्ष्यति ॥ देवा ब्रुवन्तु तं सर्वे भ्राता नस्त्वं भवेति ह ॥ १७ ॥ तथास्त्विति च स श्रीमान्वक्ष्यते सर्वलोककृत् ॥ १८ ॥ तस्मादेवं गृहीत्वा तु वरं त्रिदशसत्तमाः ॥ कृतकृत्याः पुनः सर्वे गच्छन्त्वं स्वं स्वमालयम् ॥ १९ ॥ तथास्त्विति सुराः सर्वे कश्यपोऽदितिरेव च ॥ वन्दित्वा ब्रह्मचरणौ गताः सौम्यां दिशं प्रति ॥ २० ॥ ते चिरेणैव संप्राप्ताः क्षीरोदस्योत्तरं तटम् ॥ यथोद्दिष्टं भगवता ब्रह्मणा ब्रह्मवादिना ॥ २१ ॥ तेऽतीत्य सागरान्सर्वान्पर्वतांश्च बहुक्षणात् ॥ नद्यश्च विविधा दिव्याः पृथिव्यां सुरसत्तमाः ॥ २२ ॥

देने और सब देवता उनसे कहें कि आप हमारे भ्राता हो ॥ १७ ॥ सब लोकके रचनेवाले भगवान् उनसे तथास्तु कहेंगे ॥ १८ ॥ तिस ईश्वरसे वरको प्राप्त हो कृतकृत्य हुए सब देवता अपने अपने स्थानोंको गमन करें ॥ १९ ॥ ऐसेही हो, यह कहके सब देवता और कश्यप अदिति यह सब ब्रह्माजीके चरणारविन्दोंमें नमस्कार कर उत्तर दिशाको जाने लगे ॥ २० ॥ और थोड़ेसेही कालमें ब्रह्मवादी ब्रह्माजीके कहे हुए क्षीरसागरको प्राप्त हुए ॥ २१ ॥ वे बहुतसे समुद्र, पर्वत, वन, दिव्यरूप नदीको क्षणमें उलंघन कर अनेक प्रकारकी नदी और पृथ्वी देखते हुए ॥ २२ ॥

तथा चोर रूप और सब प्राणियोंसे वर्जित सूर्यके प्रकारसेही रहित, मर्यादाहीन, अंधेरेसे आच्छादित दिशाको देखते कश्यपसहित सब देवता अमृतस्थानको प्राप्त हुए ॥ २३ ॥ कश्यपजीके सहित सब देवता दीक्षाको ग्रहण कर व्रतको सहस्रों वर्षोंतक धारण किये रहे ॥ २४ ॥ देवताओंका ईश, योगरूप और नारायण देव सहस्रनेत्रोंवाले ईश्वरको प्रसन्न करनेको ब्रह्मचर्य मोनस्थान आसन शान्ति दमस्ते देवता उग्र तप करने लगे ॥ २५ ॥ और महात्मा कश्यपजी उस ईश्वरको प्रसन्न करनेके अर्थ वेदोक्त उत्तम स्तोत्रको कहने लगे, जिसको परम स्तव कहते हैं ॥ २६ ॥

पश्यन्ति च सुषोरां वै सर्वसत्त्वविवर्जिताम् ॥ अभास्कराममर्यादां तमसा संवृतां दिशम् ॥ अमृतं स्थानमासाद्य कश्यपेन सुरैः सह ॥ २३ ॥ दीक्षिताः कामदं दिव्यं व्रतं वर्षसहस्रकम् ॥ प्रसादार्थं सुरेशाय तस्मै योगाय धीमते ॥ नारायणाय देवाय सहस्राक्षाय धीमते ॥ २४ ॥ ब्रह्मचर्येण मोनेन स्थानवीरासनेन च ॥ दमेन च सुराः सर्वे तपो दुश्चरमास्थिताः ॥ २५ ॥ कश्यपस्तत्र भगवान्प्रसादार्थं महात्मनः ॥ उदीरयति वेदोक्तं यमाहुः परमं स्तवम् ॥ २६ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे सप्तषष्ठितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥ कश्यप उवाच ॥ नमोस्तु १ देवदेवेश एकशृङ्ग वराह वृषार्चिष ४ वृषसिन्धो ५ वृषाकपे सुरवृषभ सुरनिर्मित अनिर्मित भद्रकपिल विष्वक्सेन ध्रुव धर्म धर्मराज वैकुण्ठ त्रेतावर्त्त १७ अनादिमध्यनिघन धनंजय शुचिश्रवः अग्निज २१ वृष्णिज अज अजय मृतेशय सनातन विधातस्त्रिकाम त्रिधाम त्रिकुत् ३० ककुभिन् दुन्दुभे ३२ महानाभ लोकनाभ पद्मनाभ विरिञ्चे वरिष्ठ बहुरूप विरूप विश्वरूपाक्षयाक्षय सत्याक्षर हंसाक्षर ४३ हव्यभुक् खण्डपरशो शुक्र मुञ्जकेशो हंस महाहंस महद-इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषापां वामने सप्तषष्ठितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥ अब वेदोक्त स्तोत्र कहा जाता है. कश्यप उवाच । नमोस्तु १ ते देवदेवेश एकशृङ्ग वराह वृषार्चिष (धर्मके लंभ) ४ वृषसिन्धो (धर्मसागर) ५ वृषाकपे सुरवृषभ सुरनिर्मित अनिर्मित भद्र कपिल विष्वक्सेन ध्रुव धर्म धर्मराज वैकुण्ठ त्रेतावर्त्त (औत्तकर्मसे त्रेतायुगके प्रवर्त्तक) १७ अनादिमध्यनिघन धनंजय शुचिश्रवः अग्निज (कार्तिकेय) २१ वृष्णिज अज अजय मृतेशय सनातन विधातस्त्रिकाम त्रिधाम त्रिकुत् (धर्म, ज्ञान, वैराग्यके स्कंध) ३० ककुभिन् दुन्दुभे (विजयके शब्दवाले) ३२ महानाभ लोकनाभ पद्मनाभ विरिञ्चे वरिष्ठ बहुरूप विरूप विश्वरूपाक्ष, क्षयाक्षय सत्याक्षर हंसाक्षर (अजपामंत्र) ४३ हव्यभुक्, खण्ड-

परमो, शुक्रमुंजकेय, हंस महाहंस, महदक्षर, हृषीकेश सूक्ष्म, परमसूक्ष्म तुरापाट् विश्वमूर्तं सुरायज, नील, निस्तमो, विरजस्तमोरजः सत्त्वधाम, सर्व लोक सर्वलोकप्रतिष्ठ शिपिविष्ट सुतप, तपोग्र, अग्र, अग्रज, धर्मनाभ गभस्तिनाभ, धर्मनेम, सत्यधाम, सत्याक्षर, गभस्तिनेमे विपाप्मन् चन्द्ररथ (समष्टिमनोविरुद्ध विराडात्मा) ७४ विपाप्मन् त्वमेव समुद्रवास (आपही समुद्रमें निवास करते हो) अजेकपाट् सहस्रशीर्षं सहस्रसंमित, महाशीर्षं, सहस्रदंष्ट्र, सहस्रपाट् अधोमुख, महामुख महापुरुष, पुरुषोत्तम, सहस्रबाहो, सहस्रमूर्त, सहस्राक्ष, सहस्राक्ष, सहस्रभुज, सहस्रभुव, सहस्रशस्त्रामाहुर्वेदाः (वेदआपके सहस्रों रूप कहता है) विश्वदेव, विश्वसंभव, सर्वेषामेव देवानां सौभग आदौ गतिः (धर्मरूप) ९७ विश्वं त्वमाप्यायनः विश्वं त्वामाहुः (तुम विश्वरूप हो)

क्षर हृषीकेश सूक्ष्म परसूक्ष्म तुरापाट् विश्वमूर्तं सुरायज नील निस्तमो विरजस्तमोरजः सत्त्वधाम सर्वलोकप्रतिष्ठ शिपिविष्ट सुत-
पस्तपोग्र अग्र अग्रज धर्मनाभ गभस्तिनाभ धर्मनेम सत्यधाम सत्याक्षर गभस्तिनेमे विपाप्मन् चन्द्ररथ ७४ त्वमेव समुद्रवासाः
अजेकपाट् सहस्रशीर्षं सहस्रसंमित महाशीर्षं सहस्रदंष्ट्र सहस्रपाट् अधोमुख महामुख महापुरुष पुरुषोत्तम सहस्रबाहो सहस्रमूर्त
सहस्राक्ष सहस्राक्ष सहस्रभुज सहस्रभुव सहस्रशस्त्रामाहुर्वेदाः विश्वदेव विश्वसंभव सर्वेषामेव देवानां सौभग आदौ गतिः ९७ विश्वं
त्वमाप्यायनः विश्वं त्वामाहुः पुष्पहास परमवरदस्त्वमेव त्वमेव वौषट् ओंकारवषट्कारं त्वामेकमाहुरद्वयं मत्तभागप्राशिनम् शत-
धार १०५ सहस्रधार १०६ भुवद् भुवद् स्वद् भूर्भुवःस्वद् त्वमेव भूतं भुवनं त्वं स्वधा त्वमेव ब्रह्मेश्वर ब्रह्ममय ब्रह्मादिस्त्वमेव
द्यौरसि पृथिव्यसि पूषासि मातरिश्वासि धर्मोसि मघवासि होता पोता नेता हन्ता मन्ता होम्यहोता परात्परस्त्वम् होम्यहोता
त्वमेव आपोसि विश्ववाक् धात्रा परमेण धाम्ना त्वमेव दिग्भ्यः सुक् १३२ सुग्माण्ड १३३ त्वं गण इष्टोसि इज्योसि ईड्योसि
पुष्पहास परमवरदस्त्वमेव (तुमही परम वरदाता हो) त्वमेव वौषट् ओंकारवषट्कारं त्वामेकमाहुरद्वयं मत्तभागप्राशिनम् (आपहीको अग्र और यज्ञ-
भागका भोक्ता कहते हैं) शतधार १०५ सहस्रधार १०६ भुवद् भुवद् स्वद् भूर्भुवःस्वद् त्वमेव भूतं भुवनं त्वं स्वधा त्वमेव ब्रह्मेश्वर ब्रह्ममय ब्रह्मादिस्त्वमेव
द्यौरसि पृथिव्यसि (स्वर्ग पृथ्वी तुम हो) पूषासि मातरिश्वासि (पवन हो) धर्मोसि मघवासि (इन्द्र हो) होता पोता नेता हन्ता मन्ता होम्यहोता
परात्परस्त्वं होम्य होता त्वमेव (होमकी वस्तु और होता तुम हो) आपोसि विश्ववाक् धात्रा परमेण धाम्ना त्वमेव दिग्भ्यः सुक् १३२ सुग्माण्ड १३३ त्वं

गण इहोसि इज्योसि ईदृचोसि त्वष्टा त्वमसि समिद्धस्त्वमेव गतिर्गतिमतामसि (गतिशालोकी आप गति हो) मोक्षोसि योगोसि गुह्योसि सिद्धोसि धन्योसि धातासि परमोसि यज्ञोसि सोमोसि यूपोसि दक्षिणासि दीक्षासि विश्वमसि स्थविष्ठ स्थविर विश्वतुराषाट् हिरण्यगर्भं हिरण्यनाभं हिरण्यनारायणं नारायणांतरं, नृणामयन आदित्यवर्णं आदित्यतेजः महापुरुषं सुरोत्तमं आदिदेवं पद्मनाभं पद्मेक्षयं पद्माक्षं पद्मगर्भं हिरण्याग्रकेय शुक्रं विश्वेदेवं विश्वतोमुखं, विश्वाक्षं विश्वसंभवं विश्वभुक् त्वमेवं (यह सब आपही हो) भूरिविक्रमं चक्रकमं त्रिभुवनं सुविक्रमं स्वर्विक्रमं बभ्रुः सुविभुः प्रभाकरं शंभुः

त्वष्टा त्वमसि समिद्धस्त्वमेव गतिर्गतिमतामसि मोक्षोसि योगोसि गुह्योसि सिद्धोसि धन्योसि धातासि परमोसि यज्ञोसि सोमोसि यूपोसि दक्षिणासि दीक्षासि विश्वमसि स्थविष्ठ स्थविर विश्व तुराषाट् हिरण्यगर्भं हिरण्यनाभं हिरण्यनारायणं नारायणान्तरं नृणामयन आदित्यवर्णं आदित्यतेजः महापुरुषं सुरोत्तमं आदिदेवं पद्मनाभं पद्मेक्षयं पद्माक्षं पद्मगर्भं हिरण्याग्रकेय शुक्रं विश्वेदेवं विश्वतोमुखं विश्वाक्षं विश्वसंभवं विश्वभुक् त्वमेव भूरिविक्रमं चक्रकमं त्रिभुवनं सुविक्रमं स्वर्विक्रमं बभ्रुः सुविभुः प्रभाकरं शंभुः स्वयंभूश्च भूतादिः भूतात्मन् महाभूत विश्वभुक् त्वमेव विश्वगोप्तासि विश्वंभरं पवित्रमसि हविर्विशारदं हविकर्मा अमृतेन्धनं सुरासुरगुरो महादिदेवं नृदेवं ऊर्ध्वकर्मन् २०२ पूतात्मन् अमृतेऽशं दिवस्पृक् विश्वस्य पते घृताच्यसि २०७ अनन्तकर्मन् २०८ द्रुहिणवंशं स्ववंशं विश्वपास्त्वं त्वमेव विश्वं बिभर्षि वरार्थिनो नम्रायस्वेति २१३ ॥ इति श्रीमद्भारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे अष्टषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६८ ॥

स्वयंभूश्च, भूतादिः भूतात्मन्, महाभूत, विश्वभुक् त्वमेव विश्वगोप्तासि (आपही संसारके रक्षक हो) विश्वंभर, पवित्रमसि, हविर्विशारद, हविकर्मा अमृतेन्धन, सुरासुरगुरो महादिदेवं नृदेवं ऊर्ध्वकर्मन् २०२ पूतात्मन् अमृतेऽशं दिवस्पृक् विश्वस्य पते घृताच्यसि २०७ अनन्तकर्मन् २०८ द्रुहिणवंशं स्ववंशं विश्वपास्त्वं त्वमेव विश्वं बिभर्षि वरार्थिनो नम्रायस्वेति ॥ इस स्तोत्रके पाठसे हे देव । तू हमारी रक्षा कर २१३ ॥ इति श्रीम० सिलेषु ह०

भविष्यपर्वणि त्रापायां वामने महापुरुषस्तवे अष्टषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६८ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि वेदको जाननेवाले कश्यपजीके सुससे कहे हुए इस
 स्तोत्रको सुनकर तमवान् नारायण ॥ १ ॥ मेघके समान शब्दवाले और स्निग्ध मंजीर रूप ऐसे देवताओंके शब्दको सुनकर प्रीतियुक्त मनसे स्पष्ट-
 रूप ॥ २ ॥ वचनको महात्मा देवताओंके प्रति कहने लगे वह बाणी स्वच्छ पद अक्षरयुक्त थी, आकाशसे शब्द सुनने लगा और विष्णुका साक्षात्
 दर्शन नहीं हुआ, वह श्रीमान् देव विष्णु प्रसन्न हो कहने लगे ॥ ३ ॥ तमवान् बोले, कि हे देवताओ ! तुम्हारे निम्नयसे मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हुआ
 वैशम्पायन उवाच ॥ नारायणस्तु भगवान्द्रुत्वैतत्परमं स्तवम् ॥ ब्रह्मज्ञेन द्विजेन्द्रेण कश्यपेन समीरितम् ॥ १ ॥ स्निग्धगम्भीरनि-
 र्घोषजीमूतस्वननिःस्वनम् ॥ मनसा प्रीतियुक्तेन विबुधानां महात्मनाम् ॥ २ ॥ उवाच वचनं सम्पन्नदृष्टपुष्टपदाक्षरम् ॥ आकाशाच्छु-
 श्रुवे शब्दो दर्शनं नोपलभ्यते ॥ श्रीमान् प्रीतमना देवः प्रोवाच प्रभुरीश्वरः ॥ ३ ॥ विष्णुरुवाच ॥ प्रीतोऽस्मि वः सुरश्रेष्ठाः सर्वे
 मत्तो विनिश्चयम् ॥ वरं वृणुत भद्रं वो वरदोऽस्मि सुरोत्तमाः ॥ ४ ॥ कश्यप उवाच ॥ यदेव भगवान् प्रीतः सर्वेषाममरोत्तमः ॥
 तदेव कृतकृत्याः स्म त्वं हि नः परमा गतिः ॥ ५ ॥ यदि प्रसन्नो भगवान् दातव्यो वा वरो यदि ॥ वासवस्यानुजो भ्राता ज्ञातीनां
 नन्दिवर्द्धनः ॥ ६ ॥ अदित्या वामनः श्रीमान् भगवानस्तु वै सुरः ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अदितिर्देवमाता च एतमेवार्थमुत्तमम् ॥
 पुत्रार्थं वरदं प्राह भगवन्तं वरार्थिनी ॥ ७ ॥ अदितिरुवाच ॥ याचे त्वां पुत्रकामा वै भवान्पुत्रो भवत्विति ॥ निःश्रेयसाय सर्वेषां
 देवानां हि महात्मनाम् ॥ ८ ॥

हूं, सो वर मांगो, तुम्हारा कल्याण हो मैं तुमको वर देनेवाला हूं ॥ ४ ॥ कश्यपजी बोले, कि हे देवमेठ ! जो इस सबोंपर तुम प्रसन्न हुए हो तो
 हमभी सब कृतकृत्य हुए कारण कि तुमही हमारी परमगति हो ॥ ५ ॥ जो आप प्रसन्न होकर वर देना चाहते हो तो इन्द्रके छोटे भाता देवताओंके
 आनंदको बढ़ानेवाले ॥ ६ ॥ तुम मेरे पुत्र वामननामसे अदितिके शरीरमें जन्म लो, वैशम्पायन बोले, कि देवताओंकी माता अदितिजी पुत्र होनेके
 निमित्त वर मांगने लगी ॥ ७ ॥ अदिति बोली, कि हे देव ! तुम मेरे पुत्र हो जाओ और संपूर्ण देवताओंका मंगल करो ॥ ८ ॥

महात्मा देवता कहने लगे कि हमारे कल्याणके अर्थ हे देव ! हमारे भ्राता, स्वामी, भर्ता, धाता और शरण तुमही हो. हे देव ! जब तुम अवितिके पुत्र-
भावको प्राप्त होने, तब इन्द्र आदि सब देवता तुमको देव कहकर बोलेंगे, इस कारण तुम कश्यपजीके पुत्र हो ॥ ९ ॥ वैशम्पायन कहने लगे; कि इन पूर्वोक्त
वचनोंको सुन विष्णुभगवान् देवता और कश्यपमुनिसे कहने लगे कि, ऐसेही होगा, और तुम्हारे मंगलकी प्राप्ति होनी ॥ १० ॥ तुम मनोवांछित
कामनाको प्राप्त होगे और जो तुम्हारे शत्रु हैं, वे सब एक मुहूर्तभी मेरे सन्मुख स्थित नहीं रहेंगे, सब दैत्योंके समूहको और शेष रहे देवशत्रुओंको मारके

क्वेऽ ऊचुः ॥ भ्राता भर्ता च दाता च शरणं च भवस्व नः ॥ अदित्याः पुत्रतां याते त्वायि देवाः सवासवाः ॥ देवशब्दं वहिष्यन्ति
कश्यपस्त्यात्मजो भव ॥ ९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततस्तानब्रवीद्विष्णुर्देवान् कश्यपमेव च ॥ एवं भवतु भद्रं वो यथेष्टं काममा-
प्नुत ॥ सर्वेषामेव युष्माकं ये भविष्यन्ति शत्रवः ॥ १० ॥ मुहूर्तमपि ते सर्वे न स्थास्यन्ति ममाग्रतः ॥ इत्वासुरगणान्तसर्वान्ये
चान्ये देवशत्रवः ॥ ११ ॥ करिष्ये देवताः सर्वा यज्ञभागग्रभोजिनः ॥ हव्यादांश्च सुरान्तसवान् कव्यादांश्च पितृनपि ॥ १२ ॥
करिष्ये विबुधश्रेष्ठाः पारमेष्ठ्येन कर्मणा ॥ यथागतेन मार्गेण निवर्तध्वं सुरोत्तमाः ॥ १३ ॥ देवमातुस्तथादित्याः कश्यपस्त्यामि-
त्मनः ॥ यथामनीषितं कर्ता गच्छध्वं स्वं स्वमालयम् ॥ १४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमुक्ते तु वचने विष्णुना प्रभविष्णुना ॥
देवाः प्रहृष्टमनसः पूजयन्ति स्म सर्वशः ॥ १५ ॥ विश्वेदेवा महात्मानः कश्यपोऽदितिस्त्रे च ॥ साध्या मरुद्गणाश्चैव शक्रश्चैव महा-
बलः ॥ नमस्कृत्य गुरोऽज्ञाय तस्मै देवाय रंहसे ॥ १६ ॥

देवताओंको यज्ञभागमें अग्राही भोजन करनेवाला कहंगा ॥ ११ ॥ और हे देवभेदो ! हव्यके खानेवाले देवताओंको और कव्यके खानेवाले पितरोंको
कहंगा ॥ १२ ॥ वह कार्य प्राजापत्य विधानसे कहंगा. हे देवताओ ! जिस मार्गसे तुम आये हो उसी मार्गके द्वारा तुम गमन करो ॥ १३ ॥ देवता-
ओंकी माता अदितिका और महात्मा रूप कश्यपजीका मनोवांछित सफल कहंगा इस कारण तुम अपने अपने स्थानको प्राप्त हो ॥ १४ ॥ वैशम्पायन
बोले; विष्णु भगवान् के यह वचन सुनकर प्रसन्न हुए देवता भली प्रकारसे विष्णुको पूजने लगे ॥ १५ ॥ फिर विश्वेदेवा, कश्यपजी, अदिति, साध्य देवता

मल्लघ्न महाबली इन्द्र यह सब तिस विष्णुदेवको प्रणाम कर ॥ १६ ॥ पूर्वदिशामें कश्यपजीके आश्रममें प्राप्त हुए तब ब्रह्मर्षिगणोंसे सेवित कश्यपजीके आश्रममें जाकर वेदशास्त्रका पाठ करते इस इच्छासे सब देवता विचरने लगे कि अदिति कब गर्भको धारण करेगी ॥ १७ ॥ तब देवताओंकी माता अदितिने भूतात्मा महात्मा अतितेजवाले गर्भको दिव्य सहस्र वर्षोंतक धारण किया ॥ १८ ॥ जब दिव्य सहस्र वर्ष पूर्ण हो गये तब देवताओंके भयको दूर करनेवाले और दैत्योंको नाशनेवाले ॥ १९ ॥ उत्तम गर्भको जनानी हुई और गर्भस्थित विष्णुने त्रिलोकीके तेजोंको ग्रहण कर

प्रयाताः प्राग्दिशं दिव्यं विपुलं कश्यपाश्रमम् ॥ गत्वा त आश्रमं तत्र ब्रह्मर्षिगणसेवितम् ॥ चेरुः स्वाध्यायनियता अदित्या गर्भमीप्सवः ॥ १७ ॥ अदितिर्देवमाता च गर्भं दध्रेऽतितेजसम् ॥ भूतात्मानं महात्मानं दिव्यं वर्षसहस्रकम् ॥ १८ ॥ पूर्णं वर्षसहस्रे तु प्रसूता गर्भमुत्तमम् ॥ सुराणां शरणं देवमसुराणां विनाशनम् ॥ १९ ॥ गर्भस्थेन तु देवेन परित्राताः सुरास्तदा ॥ आददानेन तेजांसि त्रैलोक्यस्य महात्मना ॥ २० ॥ तस्मिन् जाते तु देवेशे त्रैलोक्यस्य सुखावदे ॥ भयदे दैत्यसंचानां सुराणां नन्दिवर्द्धने ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे एकोनसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ६९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ प्रजानां पतयः सप्त सप्त चैव महर्षयः ॥ तस्य देवस्य जातस्य नमस्कारं प्रचक्रिरे ॥ १ ॥ भरद्वाजः कश्यपो गौतमश्च विश्वामित्रो जमदग्निर्वसिष्ठः ॥ यशोदितो भास्करे संप्रणष्टे सोऽप्यत्रात्रिर्भगवानाजगाम ॥ २ ॥ मरीचिराङ्गिरा-
श्वेव पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः ॥ दक्षप्रजापतिश्चैव नमस्कारं प्रचक्रिरे ॥ ३ ॥

सब देवताओंकी रक्षा की ॥ २० ॥ जब त्रिलोकीके आनन्ददाता नारायणने जन्म लिया तब देवताओंको आनंद और दैत्योंको महामय हुआ ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनायामेकविंशोऽध्यायः ॥ ६९ ॥ वैशम्पायन कहने लगे, कि जब वामनजीका जन्म हुआ तब सात प्रजापति और सात महर्षि उनके नमस्कार करने लगे ॥ १ ॥ भरद्वाज, कश्यप, गौतम, विश्वामित्र, जमदग्नि, वसिष्ठ और भास्करके कर्ता अत्रि आये ॥ २ ॥ मरीचि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष प्रजापति नमस्कार करने लगे ॥ ३ ॥

वसिष्ठका पुत्र, ओर्व, स्तम्ब, कश्यप, कपीबान्, अकपीबान्, दत्तात्रेय, अत्रि, ज्यवन ॥ ४ ॥ वसिष्ठ नामसे विख्यात सात वसिष्ठके पुत्र हिरण्यगर्भके पुत्र ॥ ५ ॥ तेजस्वी गार्ग्य, पृथु, अम्बज्य, वामन, देवबाहु, यदुध्र, सोमको पुत्र पर्जन्य ॥ ६ ॥ हिरण्यरोमा, वेदशिरा, सत्यनेत्र, विश्वेदेवा, अति-विश्व, दूसरा ज्यवन, सुधामा, विरजा ॥ ७ ॥ अतिनाम, सहिष्णु, यह सब नमस्कार करने लगे और प्रकाशमान शरीरवाले और संपूर्ण गहनोंसे

ओवां वसिष्ठपुत्रश्च स्तम्बः कश्यप एव च ॥ कपीवानकपीवांश्च दत्तोऽत्रिर्यवनस्तथा ॥ ४ ॥ वसिष्ठपुत्राः सप्तासन्वासिष्ठः इति विश्रुताः ॥ हिरण्यगर्भस्य सुताः पूर्वजाताः सुतेजसः ॥ ५ ॥ गार्ग्यः पृथुस्तथैवान्यो ज्यो वामन एव च ॥ देवबाहुयदुध्रश्च पर्जन्यश्चैव सोमजः ॥ ६ ॥ हिरण्यरोमा वेदशिराः सप्तनेत्रस्तथैव च ॥ विश्वोऽतिविश्वश्च्यवनः सुधामा विरजास्तथा ॥ ७ ॥ अतिनामा सहिष्णुश्च नमस्कारमकुर्वत ॥ उद्योतमाना वपुषा सर्वाभरणभूषिताः ॥ ८ ॥ उपतृप्त्यन्ति देवेशं विष्णुमप्सरसां वराः ॥ ततो गन्धर्वतूर्येषु प्रणदत्सु विहायसि ॥ ९ ॥ बहुभिः सह गन्धर्वैः प्रागायत च तुम्बुरुः ॥ महाश्रुतिश्चित्रशिरा ऊर्णायुरनघ-स्तथा ॥ १० ॥ गोमायुः सूर्यवर्चाश्च सोमवर्चाश्च सप्तमः ॥ युगपस्तृणपः कार्त्तिकर्नेन्दिश्च त्रिशिरास्तथा ॥ ११ ॥ त्रयोदशः शालिशिराः पर्जन्यश्च चतुर्दशः ॥ कलिः पञ्चदशश्चात्र तत्रैव तु महीपते ॥ १२ ॥ दश पञ्च त्विमे प्रोक्ता नारदश्चैव षोडशः ॥ हाहा हूहूश्च गन्धर्वौ हंसश्चैव महाद्युतिः ॥ १३ ॥

भूषित ॥ ८ ॥ अप्सराओंके गणनी नृत्य करने लगे और गन्धर्व अपने बाजोंको बजाने लगे ॥ ९ ॥ और आकाशमें गन्धर्वोंके संग तुम्बुरु गन्धर्व गान करने लगा और महाश्रुति, चित्रशिरा, ऊर्णायु, अनघ ॥ १० ॥ गोमायु, सूर्यवर्चा, सोमवर्चा, सप्तम युगप, तृणप, कार्त्तिक, नंदि, त्रिशिरा ॥ ११ ॥ तेरहवां शालिशिरा, चौदहवां पर्जन्य, कलि पन्द्रहवां ॥ १२ ॥ यह पन्द्रह और सोलहवें नारदजी, हाहा हूहू गन्धर्व और अतिकीर्तिवाले हंस ॥ १३ ॥

यह देव, गन्धर्व, केशवका गान करने लगे और प्रसन्न हुई और सब प्रकारके गहनोंसे भूषित ऐसी अप्सरा ॥ १४ ॥ सुंदर शरीर, सुन्दर जंघावाली, सर्वांग शुभ दर्शनवाली बड़े नेत्रोंवाली नृत्य और गान करने लगी ॥ १५ ॥ अनेक सुमध्या, चारुमध्या, मिषा, मुख्या, वरानना, अनूका, जामी, मिश्रकेशी, अलंबुषा ॥ १६ ॥ मरीचि, शुचिका, विद्युत्पूर्णा, तिलोत्तमा, अद्रिका, लक्ष्मणा, रम्भा, मनोरमा ॥ १७ ॥ असिता, सुबाहु, सुप्रिया, सुभगा, उर्वशी, चित्रलेखा, सुग्रीवी, सुलोचना ॥ १८ ॥ पुण्डरीका, सुगंधा और सुरथा, प्रमाथिनी, नन्दा, शारद्वती और भी सर्वे ते देवगन्धर्वा उपगायन्ति केशवम् ॥ तथेवाप्सरसो हृष्टाः सर्वालंकारभूषिताः ॥ १८ ॥ वपुष्मन्तः सुजघनाः सर्वाङ्गशुभ-दर्शनाः ॥ ननृतुश्च महाभागा जगुश्चायतलोचनाः ॥ १९ ॥ सुमध्याश्चारुमध्याश्च प्रियमुख्या वराननाः ॥ अनूकाश्च तथा जामी मिश्रकेशी त्वलम्बुषा ॥ १६ ॥ मरीचिशुचिकाश्चैव विद्युत्पूर्णा तिलोत्तमा ॥ अद्रिका लक्ष्मणा चैव रम्भा तद्वन्मनोरमा ॥ १७ ॥ असिता च सुबाहुश्च सुप्रिया सुभगा तथा ॥ उर्वशी चित्रलेखा च सुग्रीवा च सुलोचना ॥ १८ ॥ पुण्डरीका सुगंधा च सुरथा च प्रमाथिनी ॥ नन्दा शारद्वती चैव तथान्यास्तत्र संघशः ॥ १९ ॥ मेनका सहज्या च पर्णिका पुञ्जिकस्थला ॥ एताश्चाप्सर-सोऽन्वाश्च प्रनृत्यन्ति सहस्रशः ॥ २० ॥ धातार्यमा च मित्रश्च वरुणोऽशो भगस्तथा ॥ इन्द्रो विवस्वान् पूषा च त्वष्टा च सविता तथा ॥ २१ ॥ कषितो विष्णुरित्येवं काश्यपेणो गणस्तथा ॥ इत्येते द्वादशादित्या ज्वलन्तः सूर्यवर्चसः ॥ २२ ॥ चक्रुस्तस्य सुरेशस्य नमस्कारं महात्मनः ॥ मृगव्याधश्च सर्पश्च निर्ऋतिश्च महाबलः ॥ २३ ॥ अनेकपादादिर्बुध्न्यः पिनाकी चापराजितः ॥ दहनोऽथेश्वरश्चैव कपाली च विशांपते ॥ २४ ॥

अनेकों ॥ १९ ॥ मेनका, सहज्या, पर्णिका, पुञ्जिकस्थला यह भी और अन्य भी सहस्रों अप्सरा नृत्य करने लगी ॥ २० ॥ धाता, अर्षमा, मित्र, वरुण, अंश, मन, इन्द्र, पूषा, विवस्वान्, त्वष्टा, सविता ॥ २१ ॥ विष्णु, वह काश्यपमण कल है और अद्रिके समान तेजवाले बारह सूर्य ॥ २२ ॥ उन अन्धे हुए सुरेशको नमस्कार करने लगे और मृगव्याध सर्प निर्ऋति ॥ २३ ॥ अनेकपाद, अहिर्बुध्न्य,

तिनाकी, अपराजित, दहन, ईश्वर, कपाली ॥ २४ ॥ स्थाणु तप मनवान् रुद्र स्थित हुए और दोनों अश्विनीकुमार, आठ वसु महाबलवाले मरुत ॥ २५ ॥ विश्वेदेवा, साध्य यह हाथ जोड़कर स्थित हुए और शेषनागजीके छोटे भाता महाभाग वासुकी आदि ॥ २६ ॥ अपहर्ता, महाबली तक्षक अचल नामोंवाले महाक्रोधी महाबलवाले सर्प ॥ २७ ॥ औरभी बहुतसे सर्प सब अंजली बांधकर तिन जन्मे हुए ईश्वरको नमस्कार करने लगे तार्क्ष्य, अरिष्टनेमि और महाबली मरुड ॥ २८ ॥ और अरुण, आरुणि, गरुड अंजली बांधकर स्थित हुए और लोककर्ता श्रीमान् ब्रह्माजीभी स्वयं स्थाणुभंगश्च भगवान्द्रास्त्रावतस्थिरे ॥ अश्विनौ वसवश्चाष्टौ मरुतश्च महाबलाः ॥ २९ ॥ विश्वेदेवाश्च साध्याश्च तस्य प्राञ्जलयः स्थिताः ॥ शेषानुजा महाभामा वासुकिप्रमुखास्तथा ॥ २६ ॥ कच्छपश्चापहर्ता च तक्षकश्च महाबलः ॥ अधृष्टास्तेजसा युक्ता महाक्रोधा महाबलाः ॥ २७ ॥ एते नागा महात्मानस्तस्मै प्राञ्जलयः स्थिताः ॥ तार्क्ष्यश्चारिष्टनेमिश्च मरुडश्च महाबलः ॥ २८ ॥ अरुणश्चारुणिश्चैव वैनतेया ह्युपस्थिताः ॥ पितामहश्च भगवान्स्वयमागम्य लोककृत् ॥ प्राह चैवं गुरुः श्रीमान्सह सर्वैर्महात्मभिः ॥ २९ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ यस्मात्प्रमुयते लोकः प्रभविष्णुः सनातनः ॥ तस्माल्लोकेश्वरः श्रीमान्विष्णुरेव भवत्वयम् ॥ ३० ॥ एकमुक्त्वा तु भगवान्सार्द्धं देवर्षिभिः प्रभुः ॥ नमस्कृत्वा सुरेशाय जगाम त्रिदिवं पुनः ॥ ३१ ॥ स तु जातः सुरेशानः कश्यपस्यात्मजः प्रभुः ॥ नवदुर्दिनमेघाभो रक्ताक्षो वामनाकृतिः ॥ ३२ ॥ श्रीवत्सेनोरासि श्रीमान् रोमजातेन राजता ॥ उत्फुल्लोज्ज्वलाः सर्वाः पश्यन्त्यप्सरसरस्तदा ॥ ३३ ॥ दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता ॥ यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासा तस्य महात्मनः ॥ ३४ ॥ सब महात्माओंके संग आकर तहां कहने लगे ॥ २९ ॥ ब्रह्माजी बोले, कि जिससे यह लोक उत्पन्न होता है वह सनातन विष्णु यही है और लोकोंके ईश्वर श्रीमान् विष्णुजी यही है ॥ ३० ॥ यह कहकर देवर्षियोंके सहित ब्रह्माजी नमस्कार कर स्वर्गको चले गये ॥ ३१ ॥ और देवताओंके स्वामी कश्यपके पुत्र नवीन दुर्दिनमें मेघके समान कान्तिवाले लालनेत्रवाले वामनरूपको धारण किये ॥ ३२ ॥ श्रीवत्सेने शोभित वामनजी उत्पन्न हुए; तब उत्फुल्लनेत्रोंवाली सब अप्सरा उनको देखने लगीं ॥ ३३ ॥ यदि आकाशमें सहस्र सूर्योंसे एकवेर जो कान्ति उपजती है, तैसीही कान्ति उन महात्माकी

थी ॥ ३४ ॥ और देवर्षियोंके समान श्रीमान् भूत भविष्यत् वर्तमानको जाननेवाले, शुद्धरोमोंवाले, बड़ी छाती सब प्रकारके तेजोंसे संयुक्त ॥ ३५ ॥ पुण्यशीलोंके गतिरूप, पापकर्मशालोंको अगतिकार, योगको जाननेवाले ॥ ३६ ॥ महात्मा जिनको जानते हैं आठ गुणोंवाले देवताओंमें भेठ और मोक्षकी इच्छावाले ब्राह्मण जिनको प्राप्त हो ॥ ३७ ॥ सबकीही जन्म और मरणसे छूट जाते हैं, और सब आश्रमनिवासी जिसको तप कहते हैं ॥ ३८ ॥ और जिसको उप व्रत करनेवाले मुनि सेवते रहते हैं, और सर्वोंमें अनन्त नामसे विख्यात और सब प्रकारके सर्वोंकरके सेवित ॥ ३९ ॥ सहस्र गिरों-

सुरर्षिप्रतिमः श्रीमान्धुर्धुवो भूतभावनः ॥ शुचिरोमा महास्कन्धः सर्वतेजोमयः प्रभुः ॥ ३५ ॥ या गतिः पुण्यकीर्तीनामगतिः पापकर्म-
णाम् ॥ योगसिद्धा महात्मानो यं विदुर्योगमुत्तमम् ॥ ३६ ॥ यस्याष्टगुणमैश्वर्यं यमाहुर्देवसत्तमम् ॥ यं प्राप्य श्लाघ्यं विप्रा नियता
मोक्षकाङ्क्षिणः ॥ ३७ ॥ जन्मनो मरणाच्चैव मुच्यन्ते भवभीरवः ॥ यदेतत्तप इत्याहुः सर्वाश्रमनिवासिनः ॥ ३८ ॥ सेवन्ते यं
यतादारा दुश्चरं व्रतमास्थिताः ॥ योऽनन्त इत नागेषु सेव्यते सर्वभोगिभिः ॥ ३९ ॥ सहस्रमूर्धा रक्ताक्षः शेषादिभिरनुत्तमैः ॥
यो यज्ञ इति विप्रेन्द्रैरिज्यते स्वर्गलिप्सुभिः ॥ ४० ॥ नानास्थानगतः श्रीमानेकः कविरनुत्तमः ॥ यं वेदा गान्ति वेत्तारं यज्ञ भागप्रदा-
यिनम् ॥ ४१ ॥ वृषार्चिश्चन्द्रसूर्याक्षं देवमाकाशविग्रहम् ॥ स प्राह त्रिदशान्सर्वान्वाचा ये परया विभुः ॥ ४२ ॥ जानन्नपि महातेजा
गतो योगेन बालताम् ॥ किं करोमि सुरश्रेष्ठाः कं वरं च ददामि वः ॥ ४३ ॥ यत्काङ्क्षितं वै सर्वेषां तद्वै ब्रूत मुदा युताः ॥ तस्य
तद्वचनं श्रुत्वा वामनस्य महात्मनः ॥ ४४ ॥

वाले लाल नेत्रोंवाले, स्वर्गके अर्थ इच्छा करनेवाले ब्राह्मणोंसे पूजित यज्ञकार ॥ ४० ॥ नानाप्रकारके स्थानोंमें प्राप्त श्रीमान् अतिउच्चम कवि जिसको वेदवेत्ता कहते हैं और सबके अर्थ यज्ञभागको प्राप्त करनेवाले ॥ ४१ ॥ चन्द्रमा सूर्यरूप दो नेत्रोंवाला, धर्मकान्ति, देव और आकाश विग्रहवाले मधु-
रवाणीसे सब देवताओंसे कहने लगे वह जानकरभी योगभावसे बालभावको प्राप्त हुए बोले, कि हे देवश्रेष्ठो ! मैं क्या करूं ? और किस वरको तुम्हारे
अर्थ दूं ? ॥ ४२ ॥ जो तुमको बांछित हो, वह प्रसन्न होकर तुम कहो तब उन महात्मा वामनजीके वचनको सुनकर ॥ ४३ ॥ यज्ञजनन हो इन्द्र

आदि संपूर्ण देवता अंजलि बांधकर वामनजीसे कहने लगे ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ब्रह्माजीके वरदानसे और तप और बडे पराक्रमसे बलिराजाने हमारा यह संपूर्ण जगत हर लिया है ॥ ४६ ॥ और वह बलिराजा हम सबोंसे अवध्य है, देवोंमें मुख्य और महात्मा है ॥ ४७ ॥ सो तुम उसका तिरस्कार करनेके योग्य हो, अन्य कोई नहीं, इस कारण हम सब तुम्हारी शरण हैं; आप सब देवताओंका भय हरनेवाले हैं ॥ ४८ ॥ हे सुरेश्वर ! कृपियोंके व लोकोंके हितके अर्थ अदिति और कश्यपके प्यारके अर्थ ॥ ४९ ॥ पितरोंको कव्य और देवताओंको हव्य प्रवृत्त करनेको और हे महाबाहो ॥ ५० ॥

सर्वे ते हृष्टमनसो देवाः कश्यपनन्दनम् ॥ ऊचुः प्राञ्जलयो विष्णुं सुराः शक्रपुरोगमाः ॥ ४५ ॥ ब्रह्मणो वरदानेन हृतं नो निखिलं जगत् ॥ तपसा महता चैव विक्रमेण दमेन च ॥ ४६ ॥ बलिना देत्यमुख्येन सर्वज्ञेन महात्मना ॥ अवध्यः किल सोऽस्माकं सर्वेषां देवसत्तमं ॥ ४७ ॥ भवान्प्रभवते तस्य नान्यः कश्चन सुव्रत ॥ यत्प्रपद्यामहे सर्वे भवन्तं शरणार्थिनः ॥ शरण्यं वरदं देवं सर्वदेवभया-पहम् ॥ ४८ ॥ ऋषीणां च हितार्थाय लोकानां च सुरेश्वर ॥ प्रियार्थं च तथादित्याः कश्यपस्य तथैव च ॥ ४९ ॥ कव्यं पितृणासु-चितं सुराणां हव्यमुत्तमम् ॥ प्रवर्तते महाबाहो यथापूर्वं सुरोत्तम ॥ ५० ॥ आनृण्यार्थं सुरेशस्य वासवस्य महात्मनः ॥ प्रत्यानय महेन्द्रस्व त्रेलोक्यमिदमव्ययम् ॥ ५१ ॥ क्रतुना वाजिमधेन यजते स हि दानवः ॥ यत्प्रत्यानयने युक्तं लोकानां तद्विचिन्तय ॥ ५२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमुक्तस्तदा देवैर्विष्णुर्वामनरूपधृक् ॥ प्रहर्षयन्नुवाचाथ सर्वान्देवानिदं वचः ॥ ५३ ॥ विष्णुरुवाच ॥ तस्य यज्ञसकाशं मां मदर्थिवेदपारगः ॥ बृहस्पतिर्महातेजा नयत्वङ्गिरसः सुतः ॥ ५४ ॥

आप प्रवृत्त हूजिये महात्मा इन्द्रका कण दूर करनेको इस त्रिलोकीको इन्द्रके अर्थ फिर प्राप्त कीजिये ॥ ५१ ॥ इस समयमें बलिराजा अश्वमेध यज्ञ करता है, सो जिस प्रकार लोकोंका फिर राज्य इन्द्रको मिले, ऐसा चिन्तन करो ॥ ५२ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार संपूर्ण देवताओंके वचनको अवगण कर सर्व देवताओंको प्रसन्न करनेवाले वामनरूपको धारण कर विष्णु वचन कहने लगे ॥ ५३ ॥ विष्णु बोले, कि हे देवताओ ! वेदके

पारको जाननेवाले बड़े ऋषि और उग्रतेजवाले अंगिरा ऋषिके पुत्र बृहस्पति मुझे बलिके पत्रमें ले चले ॥ ५४ ॥ तहां मैं प्राप्त होकर यथायोग्य त्रिलो-
कीके हरनेके लिये यज्ञभूमिमें विचरण करूंगा ॥ ५५ ॥ वैशंपायन बोले, कि तब श्रीमान् बृहस्पति जहां बलिराजाका यज्ञ हो रहा था, वहां वामन-
जीको लावे ॥ ५६ ॥ अर्थात् मुंजकी तांगड़ी धारण किये यज्ञोपवीत धारण करे छत्र, दण्ड, मृगछाला, धूम्र और लालरंग नेत्रोंवाले, बालकरूप धारण
किये वामनजी ॥ ५७ ॥ उस ब्रह्मर्षिगणोंसे सेवित यज्ञघाटमें जाकर भगवान् स्वयं उस यज्ञका वर्णन करने लगे ॥ ५८ ॥ लोकेश्वरोंकेभी ईश्वर ब्रह्मादि
देवताओंके भेजे हुए बालक होकरभी बृहोंके समान कर्म करनेवाले ॥ ५९ ॥ इस प्रकार वह अचिन्त्यात्मा वामनजी दैत्योंके पति विरोचन बलिराजाके

तस्याहं समनुप्राप्तो यज्ञघाटं सुरोत्तमाः ॥ विचारिष्ये यथायुक्तं त्रैलोक्यहरणाय वै ॥ ५९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो बृहस्पतिर्धी-
माननयद्रामनं प्रभुम् ॥ यज्ञघाटं महातेजा दानवेन्द्रस्य धीमतः ॥ ६० ॥ मौञ्जी यज्ञोपवीती च छत्री दण्डी ध्वजी तथा ॥ वामनो
धूम्ररक्ताक्षो भगवान्बालरूपधृक् ॥ ६१ ॥ तं गत्वा यज्ञघाटं च ब्रह्मर्षिगणसंकुलम् ॥ आत्मना चैव भगवान्वर्णयामास तं क्रतुम् ॥ ६२ ॥
लोकेश्वरेश्वरः श्रीमान्सुरैर्ब्रह्मपुरोममैः ॥ अप्यास्यमानो भगवान्वृद्धोऽप्यथ वृद्धवत् ॥ ६३ ॥ दानवाधिपतेस्तस्य बलेर्धरोचनस्य च ॥
यज्ञघाटमचिन्त्यात्मा जगाम सुरसत्तमः ॥ ६४ ॥ पालितोऽपि हि दैतेयैः सांश्रामिकपरिच्छदेः ॥ द्वारे दानवसंवाधे सहसैव विवेश
ह ॥ ६५ ॥ ऋषिभिश्चैव मन्त्राद्यैः सर्वतः परिवारितम् ॥ दैत्यदानवराजेन्द्रमुपतस्थे बलिं बली ॥ ६६ ॥ वर्णयित्वा यथान्यायं यज्ञं
यज्ञसनातनः ॥ विस्तरेण नरश्रेष्ठ प्रयोगैर्विविधैस्तथा ॥ ६७ ॥ शुक्रादीन् त्विजश्चापि यज्ञकर्मविचक्षणान् ॥ सर्वानेव निजग्राह चक्र
च निरुत्तरान् ॥ ६८ ॥ आरादथ बलेस्तस्य ऋत्विजामभितस्तथा ॥ यज्ञमात्मानमेवाप्तो हेतुभिः कारणं विभुः ॥ ६९ ॥

यज्ञस्थानमें प्राप्त हुए ॥ ६० ॥ युद्धके योग्य सामग्रीवाले दैत्योंसे आच्छादित यज्ञद्वारमेंभी वामनजी वेगसे प्रवेश कर पड़े ॥ ६१ ॥ तहां मंत्रोंको
उच्चारण करनेवाले ऋत्विक् जनोंसे चारों ओर परिवारित, दैत्योंके बलिराजा बलिके समीपमें वह बली स्थित हुए ॥ ६२ ॥ और ब्रह्मर्षिगणोंसे सेवित
स्थित तिस यज्ञभूमिमें प्राप्त हो यज्ञकी सराहना करने लगे और यथायोग्य यज्ञका वर्णन कर विस्तारपूर्वक नानाप्रकारके प्रयोगोंसे ॥ ६३ ॥ शुक्राचार्य
आदि यज्ञकर्मके जाननेवाले ऋत्विजोंको वामनजी अपने वाक्पोंसे उत्तर देनेको असमर्थ करते हुए ॥ ६४ ॥ पीछे सब ऋत्विक् बलिराजाके समीपमें

आत्मात्स्य इस यज्ञको कारणसहित विभु ॥ ६५ ॥ अप्रकाशरूप वैदिक मंत्रोंसे ऋषिके समूहोंके प्रत्यक्ष वर्णन करने लगे ॥ ६६ ॥ तब सब वृद्धरूप उपाध्याय और मुनियोंको जब बालकरूप महाबली वामनजीने उत्तर देनेको असमर्थ कर दिया ॥ ६७ ॥ तब विरोचनके पुत्र बलिने वामनजीको अद्भुत माना और मस्तकसे अंजलिको बांध विस्मित हो बलि कहने लगा ॥ ६८ ॥ कि तुम कहाँसे आये और कौन हो ? किसके शिष्य हो और यहां किस प्रयोजनसे आये हो ? ऐसे उत्तम ज्ञानवाले ब्राह्मण पहले कभी मैंने नहीं देखे, बालक और बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ, ज्ञान और विज्ञानको जानने-वाला ॥ ६९ ॥ बुद्धिबालोंमें श्रेष्ठ ज्ञानविज्ञानमें श्रेष्ठ हो, शिष्टोंकी वाणी और रूपसे संपन्न मनोहर और प्रियदर्शन हो ॥ ७० ॥ इस प्रकारके पुत्र

वैदिकैरप्रकाशैश्च पुनरप्यथ भारत ॥ प्रत्यक्षमृषिसंघानां वर्णयामास चित्रगुः ॥ ६६ ॥ ततो निरुत्तरान्दृष्ट्वा सोपाध्यायानृषींश्च तान् ॥ अवृद्धेनापि वृद्धास्तान् वामनेन महोजसा ॥ ६७ ॥ अद्भुतं चापि मेने स विरोचनमुतो बली ॥ मूर्ध्ना कृताञ्जलिश्चेदमब्रवीद्विस्मितो वचः ॥ ६८ ॥ कुतस्त्वं कोऽसि कस्यासि किं ते हास्ति प्रयोजनम् ॥ नैवंविधः परिज्ञातोऽदृष्टपूर्वो मया द्विजः ॥ ६९ ॥ बाला मतिमतां श्रेष्ठो ज्ञानविज्ञानकोविदः ॥ शिष्टवाङ्मयसंपन्नो मनोज्ञः प्रियदर्शनः ॥ ७० ॥ नेष्टृशाः सन्ति देवानामृषीणामपि सुनवः ॥ न नागानां न यक्षाणां नासुराणां न रक्षसाम् ॥ ७१ ॥ न पितॄणां न सिद्धानां गन्धर्वाणां तथैव च ॥ योऽसि सोऽसि नमस्तेऽस्तु ब्रूहि किं करवाप्सि ते ॥ ७२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ उक्त एवं ब्रूचिर्ग्यात्मा बलिना वामनस्तदा ॥ प्रोवाचोपायतत्त्वज्ञः स्मितपूर्वमिदं वचः ॥ ७३ ॥ इति श्रीमहाभारते हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

देवता और ऋषियोंकेभी नहीं हैं। नाग, यक्ष, देव, राक्षस, पितर और गंधर्वोंकेभी पुत्र तेरे समान नहीं हैं ॥ ७१ ॥ जैसा तुम्हारा रूप है ऐसा पितर सिद्ध और गंधर्वोंका नहीं होता, तुम जो कोईभी हो मैं तुमको नमस्कार करता हूँ कहो तुम्हारा क्या भिय कलं ? ॥ ७२ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार बलिराजाके वचन श्रवण कर उपायके तत्त्वको जाननेवाले वामनजी मंद मुसकान सहित कहने लगे ॥ ७३ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामनप्रादुर्भावे सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

विष्णु बोले, कि बहुत खानेके पदार्थोंसे युक्त और सुंदर संस्कारोंसे व्याप्त असुरेश बलिराजाका यज्ञ हो रहा है ॥ १ ॥ यह अति असुत है, जैसे पहले ब्रह्माजीका यज्ञ हुआ था तथा असुरेशशत्रु इन्द्र, वरुण, यमके यज्ञ थे, हे दैत्येन्द्र बलिराजा ! देवताओंके स्वामी इन्द्र, यम, वरुणकेभी यज्ञोंसे तैने विशेष यज्ञ किये हैं ॥ २ ॥ और स्वर्गमार्गको दिखानेवाले सब यज्ञोंमें उत्तम अश्वमेध यज्ञसे सब पापोंके नाशके अर्थ तुम पूजा करते हो ॥ ३ ॥ सो ब्रह्मवादियोंने सर्व कामनासे संयुक्त और संपूर्ण यज्ञोंमें उत्तम और अश्वमेध नामसे विरूपात तुम्हारा यज्ञ माना है, यह श्रुति है कि अश्वमेध सब

विष्णुरुवाच ॥ अहो यज्ञोऽसुरेशस्य बहुभक्षः सुसंस्कृतः ॥ पितामहस्येव पुरा यजतः परमेष्ठिनः ॥ १ ॥ सुरेशस्य च शक्रस्य यमस्य वरुणस्य च ॥ विशेषितस्त्वया यज्ञो दानवेन्द्र महाबल ॥ २ ॥ यजता वाजिमेधेन ऋतूनां प्रवरेण तु ॥ सर्वपापविनाशाय त्वया स्वर्गप्रदर्शिता ॥ ३ ॥ सर्वकाममयो ह्येष संमतो ब्रह्मवादिनाम् ॥ ऋतूनां प्रवरः श्रीमानश्वमेध इति श्रुतिः ॥ ४ ॥ सुवर्णशृङ्गो हि महानुभावो लोहशूरो वायुजवो महारथः ॥ स्वर्गेक्षणः काञ्चनगर्भगौरः स विश्वयोनिः परमो हि मेघ्यः ॥ ५ ॥ आस्थाय वै वाजिनमश्वमेधमिद्धा नरा दुष्कृतमुत्तरन्ति ॥ आहुश्च यं वेदविदो द्विजेन्द्रा वैश्वानरं वाजिनमश्वमेधम् ॥ ६ ॥ यथाश्रमाणां प्रवरो गृहाश्रमो यथा नराणां प्रवरा द्विजातयः ॥ यथाऽसुराणां प्रवरो भवानिह तथा ऋतूनां प्रवरोऽश्वमेधः ॥ ७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतच्छ्रुत्वा तु वचनं वामनेन समीरितम् ॥ मुदा परमया युक्तः प्राह दैत्यपतिर्वलिः ॥ ८ ॥

यज्ञोंसे उत्तम है ॥ ४ ॥ सुवर्णके शृंगोंसे संयुक्त महानुभाववाला और वायुके समान वेगवान्, महात्मा लोहशूरनामक वायुके समान वेगगामी और सत्यरूप नेत्रोंवाला सुवर्णके गर्भकी समान गौर वर्ण और विश्वयोनि परम अश्वमेध है अर्थात् पवित्र है ॥ ५ ॥ और अश्वमेध यज्ञसे मनुष्य पापोंको तिरते हैं, अश्वमेधयज्ञके घोड़ेको वेदके जाननेवाले ब्राह्मण अग्रिहूत कहते हैं ॥ ६ ॥ जैसे सब आश्रमोंमें उत्तम गृहाश्रम है, जैसे सब मनुष्योंमें उत्तम ब्राह्मण है, जैसे सब दैत्योंमें उत्तम तुम हो, तैसेही संपूर्णयज्ञोंमें उत्तम यह अश्वमेध यज्ञ है ॥ ७ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार वामनजीके कहे

वचनोंको अवण कर आनंदसे प्रसन्न हुआ दैत्योंका पति बलिराजा कहने लगा ॥ ८ ॥ बलि बोले, कि हे ब्राह्मणोंमें भेट ! तुम किसके शिष्य हो ? और क्या इच्छा करते हो, जो मैं तुमको वर दूं, तुम्हारा मंगल हो; मुझसे वर मांगो. मुझसे तुम मनवांछित लक्ष्मी प्राप्त होने ॥ ९ ॥ वामन कहने लगे; मैं राज्य असवारी, रत्न भार्याको नहीं मांगता हूं जो तुम मुझपर प्रसन्न हो और धर्ममें बुद्धि है ॥ १० ॥ तो गुरुके प्रयोजन सिद्ध करनेके लिये मुझे तीन चरण पृथ्वी दो, यही परम वर है यह वामनजीके वचन सुन दैत्यराज बलिराजा कहने लगा ॥ १ ॥ कि हे विप्रेन्द्र ! तीन पैग पृथ्वीसे

बलिरुवाच ॥ कस्यासि ब्राह्मणश्रेष्ठ किमिच्छसि ददामि ते ॥ वरं वरय भद्रं ते यथेष्टं काममाप्नुहि ॥ २ ॥ वामन उवाच ॥ न राज्यं न च यानानि न रत्नानि न च स्त्रियः ॥ कामये यदि तुष्टोऽसि धर्मे च यदि ते मतिः ॥ १० ॥ गुर्वर्थं मे प्रयच्छस्व पदानि त्रीणि दानव ॥ त्वमग्निशरणार्थाय एष मे प्रवरो वरः ॥ वामनस्य वचः श्रुत्वा प्राह दैत्यपतिर्बलिः ॥ ११ ॥ बलिरुवाच ॥ त्रिभिः किं तव विप्रेन्द्र पदेः प्रवदतां वर ॥ शतं शतसहस्राणां पदानां मार्गतां भवान् ॥ १२ ॥ शुक्र उवाच ॥ मा ददस्व महाबाहो न त्वं वेत्सि महासुर ॥ एष मायाप्रातिच्छन्नो भगवान्प्रवरो हरिः ॥ १३ ॥ वामनं रूपमास्थाय शक्रप्रियदितेऽस्य ॥ त्वां वञ्चयितुमायातो बहुरूपधरो विभुः ॥ १४ ॥ एवमुक्तः स शुक्रेण चिरं संचिन्त्य वै बलिः ॥ प्रहर्षेण समायुक्तः किमतः पात्रमिष्यते ॥ १५ ॥ प्रशुभं हस्ते संभ्रान्तो भृङ्गारं कनकोद्भवम् ॥ बलिरुवाच ॥ विप्रेन्द्र प्राङ्मुखास्तिष्ठ स्थितोऽस्मि कमलेक्षण ॥ १६ ॥

तुम्हें क्या लाभ होगा, वर दीस लाख पैग पृथ्वीको मांगो ॥ १२ ॥ तब शुकाचार्य कहने लगे; हे राजन् ! हे महाबाहो ! ! पृथ्वीका दान तुम मत करो, इनको तुम नहीं जानते हो, यह मायासे आच्छादित साक्षात् विष्णु हैं ॥ १३ ॥ सो वामनरूपको धारण कर इन्द्रका प्रिय करनेके निमित्त तुम्हें ठगनेके अर्थ बालकका रूप धर आये हैं, यह विभु बहुरूपधारी हैं ॥ १४ ॥ इस प्रकार शुकाचार्यके वचनको अवण कर बहुत कालतक चिन्ता कर आनंदित हुआ बलिराजा वामनजीसे अधिक अन्य पात्रको न जानकर ॥ १५ ॥ हाथमें सुवर्णकी झारीको ले बलिराजा कहने लगा. बलि बोले;

कि हे विद्येन्द्र ! कमलनेत्र ! मैं पूर्वको सुख करे स्थित हूँ ॥ १६ ॥ और आप उच्चरको सुख कीजिये, और तीन पैग पृथ्वीका ग्रहण करनेके अर्थ मेरे हाथसे जल की प्राप्ति करो, क्योंकि तेरे सुहृद्दी वांछा पूर्ण होनी चाहिये ॥ १७ ॥ तब फिर शुक्राचार्य कहने लगे; कि हे दैत्य ! इसके अर्थ पृथ्वीका दान मत दे, मैंने जान लिया कि यह साक्षात् विष्णु हैं, सो तुझको ठगता है, तुम ठगाईमें मत आओ ॥ १८ ॥ तब बलिराजा बोला; कि इस यज्ञमें साक्षात् आप आनकर प्राप्ति हो गये हैं, जिस बातकी इच्छा यह विष्णु भगवान् करेंगे, सोही मैं दूंगा ॥ १९ ॥ क्योंकि इस विष्णुसे

प्रतीच्छ देहि किं भूमिं का (किं) मात्रा भोः पदत्रयम् ॥ दत्तं च पातय जलं नैव मिथ्या भवेद्भूः ॥ १७ ॥ शुक्र उवाच ॥ भो न देयं कुतो दैत्य विज्ञातोऽयं मया ध्रुवम् ॥ कोऽयं विष्णुरहो प्रीतिर्षाञ्चितस्त्वं न वञ्चितः ॥ १८ ॥ बलिरुवाच ॥ कथं स नाथोऽयं विष्णुर्यज्ञे स्वयमुपस्थितः ॥ दास्यामि देवदेवाय यद्यदिच्छत्ययं विभुः ॥ १९ ॥ को वान्यः पात्रभूतोऽस्माद्विष्णोः परतरो भवेत् ॥ एवमुक्त्वा बलिः शीघ्रं पातयामास वै जलम् ॥ २० ॥ वामन उवाच ॥ पदानि त्रीणि दैत्येन्द्र पर्याप्तानि ममानय ॥ यन्मया पूर्वमुक्तं हि तत्तथा न तदुपयथा ॥ २१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ इत्येतद्वचनं श्रुत्वा वामनस्य महोजसः ॥ कृष्णाजिनोत्तरीयं स कृत्वा वैरोच- निस्तदा ॥ २२ ॥ एवमस्तिवाति दैत्येशो वाक्यमुक्त्वारिसूदनः ॥ ततो वारिसमापूर्णं भृङ्गारं स परामृशत् ॥ २३ ॥ वामनो ह्यसु- रेन्द्रस्य चिकीर्षुः कदनं महत् ॥ क्षिप्रं प्रसारयामास दैत्यक्षयकरं करम् ॥ २४ ॥

उपरान्त अन्य उत्तम कौन पात्र है, इस प्रकार कह उस समय बलिराजाने अपने हाथमें जल ग्रहण किया ॥ २० ॥ तब वामनजी कहने लगे; कि हे दैत्येन्द्र ! मेरे पैरोंसे नापी हुई तीन पैग पृथ्वी तुझको दो, अन्य पदार्थकी अभिलाषा नहीं है ॥ २१ ॥ वैशम्पायन बोले; कि इस प्रकार वामनजीके वचनको श्रवण करके काले मृगकी छालाको कंधेपर धारण करनेवाले बलिराजा कहने लगे ॥ २२ ॥ ऐसेही होगा, तब जलसे पूरित शरीरको अच्छी प्रकार हाथमें धारण कर लिया ॥ २३ ॥ तब बलिराजाके राज्यको खोनेकी इच्छासे वामनजीने तिसी समय अपना दैत्यका क्षय करने-

बाला हाथ फैलाया ॥ २४ ॥ जब पूर्वको सुखकर बलिराजाने मनसे ज़ारीसहित जलको वामनजीके हाथमें दिया ॥ २५ ॥ तब तिस अचिन्त्य अतिपरा-
क्रम करनेवाले और बलिराजाकी लक्ष्मीका हरनेवाले महात्मा वामनजीके अद्भुतरूपको देख ॥ २६ ॥ लक्ष्मीको जाननेवाले बुद्धिमान् प्रहाद वचन
कहने लगे. प्रहाद बोले, कि हे राजन् ! वामनरूपा धारण करनेवाले इस बालकके हाथमें जल मत दो ॥ २७ ॥ यह वही विष्णु है, जिसने तुम्हारे प्रपि-
तामह हिरण्यकशिपुका मारा है सोई तुमको ठगनेके लिये इस स्थानमें प्राप्त हुए हैं ॥ २८ ॥ बलिराजा बोले, कि इस देवके अर्थमें प्रतिग्रह दूंगा

प्राङ्मुखापि दैत्यैश्च तस्मै सुमनसा जलम् ॥ दातुकामः करे यावत्तावत्तं प्रत्येषेधयत् ॥ २५ ॥ तस्य तद्रूपमालोक्य द्युचिन्त्यं च
महात्मनः ॥ अभूतपूर्वं च हरेर्जिहीर्षोः श्रियमासुरीम् ॥ २६ ॥ इङ्कितज्ञोऽग्रतः स्थित्वा प्रहादस्त्वब्रवीद्विचः ॥ प्रहाद उवाच ॥ मा
ददस्व जलं हस्ते बटोर्वामनरूपिणः ॥ २७ ॥ स त्वसौ येन ते पूर्वं निहतः प्रपितामहः ॥ विष्णुरेष महाप्राज्ञस्त्वां वञ्चायितुमा-
गतः ॥ २८ ॥ बलिरूपाच ॥ हन्त तस्मै प्रदास्यामि देवायेमं प्रतिग्रहम् ॥ अनुग्रहकरं देवमीदृशं जगतः प्रभुम् ॥ २९ ॥ ब्रह्म-
णोऽपि गरीयांसं पात्रं लप्स्यामहे वयम् ॥ अवश्यं चासुरश्रेष्ठ दातव्यं दीक्षितेन वै ॥ ३० ॥ इत्युक्त्वासुरसंघानां मध्ये वैरोचनिस्तदा ॥
देवाय प्रददौ तस्मै पदानि त्रीणि विष्णवे ॥ ३१ ॥ प्रहाद उवाच ॥ दानवेश्वर मा दास्त्वं विप्रायास्मै प्रतिग्रहम् ॥ नेमं विप्रशिशुं
मन्ये नेदृशो भवति द्विजः ॥ ३२ ॥ रूपेणानेन दैत्येन्द्र सत्यमेवं ब्रवीमि ते ॥ नारासिंहमहं मन्ये तमेवं पुनरागतम् ॥ ३३ ॥

और यदि यह साक्षात् विष्णु है, तो बड़ी अच्छी बात है ॥ २९ ॥ ब्रह्माजोसेमी उत्तम यह पात्र हमको प्राप्त हुआ. हे असुरश्रेष्ठ ! दीक्षित पुरुषको
अवश्य दान देना चाहिये ॥ ३० ॥ इस प्रकार दैत्योंके समूहमें कह बलिराजा तीन पैग पृथ्वी वामनजीके अर्थ दान करने लगे ॥ ३१ ॥ जिस समय
वामनजीके हाथमें बलिराजा जल देने लगा, तब प्रहाद बोला, कि हे दैत्यराज ! इस बालकके अर्थ प्रतिग्रह मत दो, इस बालकको मैं ब्राह्मणका पुत्र
नहीं जानता, ऐसा ब्राह्मण नहीं होता है ॥ ३२ ॥ और हे दैत्येन्द्र ! इस रूपसे फिर मैं तिस नृसिंहजीके आगमनको मानता हूं, यह मैं सत्यही कहता

हूँ ॥ ३३ ॥ बलिराजा हँसकर घुडकता हुआ प्रहारसे कहने लगा; कि हे दैत्यजी ! ब्राह्मण दानकी याचना करे, और दाता दान नहीं दे; तब दोनोंकी अलक्ष्मी यजमानके शरीरमें प्रवेश करती है ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ जो यजमान ब्राह्मणके अर्थ प्रतिज्ञा करके प्रतिग्रह नहीं देता है, वह पापी मित्र गोत्रसे संयुक्त नरकमें जाता है ॥ ३६ ॥ इस कारण अलक्ष्मीके भयसे भयभीत हुआ मैं इस पृथ्वीका दान करता हूँ, इस ब्राह्मणसे अधिक कोई दान लेने-वाला नहीं है ॥ ३७ ॥ इस कारण इसे अवश्य दान दूंगा. हे दानव ! इस समय मेरा हृदय अत्यन्त प्रसन्न है ॥ ३८ ॥ वामनरूपको धारण करनेवाले

एवमुक्तस्तदा तेन प्रह्लादेनामितौजसा ॥ प्रह्लादमब्रवीद्वाक्यमिदं निर्भर्त्सयन्निव ॥ ३४ ॥ बलिरुवाच ॥ देहीति याचते यो हि प्रत्या-
ख्यातिं च योऽसुर ॥ उभयोरप्यलक्ष्म्या वै भागस्तं विंशते नरम् ॥ ३५ ॥ प्रतिज्ञाय तु यो विप्रे न ददाति प्रतिग्रहम् ॥ स याति
नरकं पापी मित्रगोत्रसमन्वितः ॥ ३६ ॥ अलक्ष्मीभयभीतोऽहं ददाम्यस्मै वसुंधराम् ॥ प्रतिग्रहीता चाप्यन्यः कश्चिदस्माद्विजोऽय
वै ॥ ३७ ॥ नाधिको विद्यते यस्मात्तददामि वसुंधराम् ॥ हृदयस्य च मे तुष्टिः परा भवति दानव ॥ ३८ ॥ दृष्ट्वा वामनरूपेण
याचन्तं द्विजपुङ्गवम् ॥ एष तस्मात्प्रदात्यामि न स्यास्यामि निवारितः ॥ ३९ ॥ भूयश्च प्राब्रवीदेवं वामनं विप्ररूपिणम् ॥
स्वल्पेः स्वल्पमते किं ते पदैस्त्रिभिरनुत्तमम् ॥ ४० ॥ कृत्स्नां ददामि ते विप्र पृथिवीं सागरेर्वृताम् ॥ वामन उवाच ॥ न पृथ्वीं
कामये कृत्स्नां संतुष्टोऽस्मि पदैस्त्रिभिः ॥ एष एव रुचिष्यो मे वरो दानवसत्तम ॥ ४१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तथास्त्विति बलिः
प्रोच्य स्पर्शयामास दानवः ॥ पदानि त्रीणि देवाय विष्णवेऽभिततेजसे ॥ ४२ ॥

इस उत्तम ब्राह्मणको देखकर अग्नी में दान देता हूँ, किसीके कहनेसे मैं निवारित नहीं हूँगा ॥ ३९ ॥ इस प्रकार कहकर फिर वामनजीसे बलिराजा कहने लगे, कि हे स्वल्पमते ! तीन पैग पृथ्वीसे तुमको क्या होगा ॥ ४० ॥ सच संसृष्टोसे पार्वतुन इस संपूर्ण पृथ्वीको मैं तुम्हारे अर्थ देता हूँ लो, तब वामनजी कहने लगे, कि संपूर्ण पृथ्वीको लेनेकी मेरी इच्छा नहीं है, मैं तीन पैग पृथ्वीमें प्रसन्न हूँ हे दानवभेष्ट ! यह वरदान मुझे देना चाहिये ॥ ४१ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि ऐसेही होगा, यह वचन बलिराजा कह तीन पैग पृथ्वी वामनजीके अर्थ देनेको अपने हाथसे दाहिनासाहिन जलको वामन-

ह. वं.

॥ १६८ ॥

जीके हाथमें छोटे हुए ॥ ४२ ॥ जब वामनजीके हाथमें जलका स्पर्श हुआ, तब वामनजीने वामनरूपको त्याग सर्वदेवमय रूपको
दिसाया ॥ ४३ ॥ अर्थात् पृथ्वी दोनों चरण, आकाश मस्तक, चन्द्रमा और सूर्य नेत्र, पिशाच पैरोंकी अंगुली, गुह्यक हाथोंकी
अंगुलि ॥ ४४ ॥ और विश्वेदेवा जानु गोद, साध्य देवता और यक्ष नख, अप्सरा लेल और विजली दृष्टि, सूर्यकी किरणें केश ॥ ४५ ॥ ४६ ॥
रोम विदिशा, दिशा कान, दोनों अश्विनीकुमार कानके भीतर सुननेका शब्द, वायु नासिका ॥ ४७ ॥ चंद्रमा प्रसाद, धर्म मन, सत्य वाणी, सरस्वती
तोये तु पतिते हस्ते वामनोऽभूद्वामनः ॥ सर्वदेवमयं रूपं दर्शयानास वै विभुः ॥ ४३ ॥ भूः पादो द्यौः शिरश्चास्य चन्द्रादित्यो च
चक्षुषी ॥ पादाङ्गुल्यः पिशाचाश्च हस्ताङ्गुल्यश्च गुह्यकाः ॥ ४४ ॥ विश्वेदेवाश्च जानुस्था जङ्घे साध्याः सुरोत्तमाः ॥ यक्षा नखेषु
संभूता लेखाश्चाप्सरस्तथा ॥ ४५ ॥ तडिद्वृष्टिः सुविपुला केशाः सूर्याश्चस्तथा ॥ तारका रोमकूपाणि रोमाणि च महर्षयः ॥ ४६ ॥
बाह्वो विदिशाश्चास्य दिशः श्रोत्रे तथैव च ॥ अश्विनौ त्वणो चास्य नासा वायुर्महाबलः ॥ ४७ ॥ प्रसादश्चन्द्रमाश्चैव मनो धर्म-
स्तथैव च ॥ सत्यमस्याभवद्वाणी जिह्वा देवी सरस्वती ॥ ४८ ॥ ग्रीवादितीर्महादेवी तालुः सूर्यश्च दीप्तिमान् ॥ द्वारं स्वर्गस्य नाभिर्दे-
वित्रस्तृष्ठा च वै भुवो ॥ ४९ ॥ मुखं वैश्वानरश्चास्य वृषणो तु प्रजापतिः ॥ हृदयं भगवान्ब्रह्मा पुंस्त्वं वै विश्वतोमुनिः ॥ ५० ॥
पृष्ठेऽस्य वसवो देवा मरुतः पादसंधिषु ॥ सर्वच्छन्दांसि दक्षना ज्योतीषि विमलाः प्रभाः ॥ ५१ ॥ ऊरू रुद्रो महादेवो धैर्यं चास्य
महार्णवः ॥ उदरे चास्य गन्धर्वा भुजगाश्च महाबलाः ॥ ५२ ॥ लक्ष्मीर्मेघा धृतिः कान्तिः सर्वविद्या च वै कटिः ॥ ललाटमस्य
परमं स्थानं च परमात्मनः ॥ ५३ ॥

जिह्वा ॥ ४८ ॥ अदिति ग्रीवा, प्रकाशमान् सूर्य तालु, स्वर्गका द्वार नाभि, मित्र और त्वष्टा दोनों तृकुटी ॥ ४९ ॥ अग्नि मुख, दक्षप्रजापति वृषण,
ब्रह्मा हृदय, कश्यपजी पुरुषगण ॥ ५० ॥ पृष्ठभागमें वसु देवता, मरुत देवता सब संधियोंमें, और सब छंद दांतोंके स्थानमें और ज्योतिर्गण प्रभा ॥ ५१ ॥
महादेव ऊरू, समुद्र धैर्य, गंधर्व और दिव्य बली सर्प उदरमें ॥ ५२ ॥ लक्ष्मी मेघा धृति कान्ति विद्या ये कटिमें, और परमात्माका परम स्थान

भा. टी.

प. ३ अ. ७१

॥ १६८ ॥

मस्तक हे ॥ ५३ ॥ सप्त ज्योतिष तप और देवताओंका राजा इन्द्र उन महात्माका तेज है ॥ ५४ ॥ स्तन और कांसमें चारों वेद, पशुबंध तथा ब्राह्म-
जोंकी चेष्टा दृष्टि है ॥ ५५ ॥ इस प्रकार उन विष्णुके रूपको बेल कोधको प्राप्त हुए महादेव्य समीपमें प्राप्त होने लगे जैसे पतंग अग्निमें जाते हैं ॥ ५६ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां वामने विश्वरूपप्रकाशे एकसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७१ ॥ वैशम्पायन बोले, कि हे जन्मेजय !
तिन दैत्योंके नाम रूप आभरण और मुख्य शस्त्रोंको श्रवण करो ॥ १ ॥ विप्रचित्ति, शिवि, शंकु, अयःशंकु, अयःशिरा, अश्वशिरा, बली, हयग्रीव ॥ २ ॥

सर्वज्योतीषि यानीह तपः शक्रस्तु देवराट् ॥ तस्य देवाधिदेवस्य तेजो ब्राह्मणस्यैव ॥ ५४ ॥ स्तनौ कक्षौ च वेदाश्च ओष्ठौ
चास्य मस्ताः स्थिताः ॥ इष्टयः पशुबन्धाश्च द्विजानां चेष्टितानि च ॥ ५५ ॥ तस्य देवमयं रूपं दृष्ट्वा विष्णोर्महासुराः ॥ अभ्यस-
पन्त संकुद्धाः पतङ्गा इव पावकम् ॥ ५६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावे एकसप्ततितमोऽ-
ध्यायः ॥ ७१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ शृणु नामानि सर्वेषां रूपाण्यभिजनानि च ॥ आयुधानि च मुख्यानि दानवानां महात्मनाम् ॥ १ ॥
विप्रचित्तिः शिविः शङ्करयः शङ्कुस्तथैव च ॥ अयःशिरा अश्वशिरा हयग्रीवश्च वीर्यवान् ॥ २ ॥ वेगवान्केतुमानुग्रः सोमग्र्यग्रो महा-
सुरः ॥ पुष्करः पुष्कलश्चैव साश्वोऽश्वपतिरेव च ॥ ३ ॥ प्रहादोऽश्वशिराः कुम्भः सहादो गगनप्रियः ॥ अनुहादो हरिहरो वाराहः
संहरोरुजः ॥ ४ ॥ वृषपर्वा विरूपाक्षो अतिचन्द्रः सुलोचनः ॥ निष्प्रभः सुप्रभः श्रीमांस्तथैव च निरुदरः ॥ ५ ॥ एकवक्रो महा-
वक्रो द्विवक्रः कालसंनिभः ॥ शरभः शलभश्चैव कुणपः कुलपः क्रयः ॥ ६ ॥ बृहत्कीर्तिर्महामर्भः शङ्कुकर्णो महाध्वनिः ॥ दीर्घ-
जिह्वोऽर्कवदनो मृदुबाहुर्मृदुम्रियः ॥ ७ ॥

वेगवान्, केतुमान्, उग्र, सोम, व्यग्र, पुष्कर, पुष्कल, साश्व, अश्वपति ॥ ३ ॥ प्रहाद, अश्वशिरा, कुंभ, सहाद, गगनप्रिय, अनुहाद, हरि, हर, वाराह,
संहर, अरुज ॥ ४ ॥ वृषपर्वा, विरूपाक्ष, सुनर्द, चंद्रलोचन, निष्प्रभ, सुप्रभ, निरुदर ॥ ५ ॥ एकवक्र, द्विवक्र, महावक्र, कालसंनिभ, शरभ, शलभ,
कुणप, कुलप, क्रय ॥ ६ ॥ बृहत्कीर्ति, महामर्भ, शंकुकर्ण, महाध्वनि, दीर्घजिह्व, अर्कवदन, मृदुबाहु, मृदुम्रिय ॥ ७ ॥

वायु, मविष्ठ, नमुचि, सम्बर, महान् विशर, चंद्रहंता, क्रोधहंता, क्रोधवर्धन ॥ ८ ॥ कालक, कालकाश, वृत्र, क्रोध, विमोक्षण, गरिष्ठ, हविष्ठ, प्रलंब, नरक, पृथु ॥ ९ ॥ चन्द्रतापन, वातापी, केतुमान्, चर्द्धाति, अमिलोमा, पुडोमा, वाष्कल, प्रमद ॥ १० ॥ मद, शृगालवदन, कराल, केशि, एकाक्ष, एकबाहु, तुहुंड, सृमल, सृप ॥ ११ ॥ इनको आदि ले और भी बहुतों देत्य महाविष्णु को घेरकर स्थित हुए ॥ १२ ॥ कितनेही फांसीको हाथों में लिये और कोई सुखको फैलाये, कितनेही गंधके समान शब्द करनेवाले, कितनेही शस्त्रा, वज्र और चक्रको हाथों में लिये ॥ १३ ॥

वायुर्गविष्ठो नमुचिः शम्बरो विशरो महान् ॥ चन्द्रहन्ता क्रोधहन्ता क्रोधवर्धन एव च ॥ ८ ॥ कालकः कालकाशश्च वृत्रः क्रोधो विमोक्षणः ॥ मविष्ठश्च हविष्ठश्च प्रलम्बो नरकः पृथुः ॥ ९ ॥ चन्द्रतापनवातापी केतुमान् चर्द्धातिः ॥ असिलोमा पुडोमा च वाष्कलः प्रमदो मदः ॥ १० ॥ शृगालवदनश्चैव करालः केशिरेव च ॥ एकाक्षश्चैकबाहुश्च तुहुण्डः सृमलः सृपः ॥ ११ ॥ एते चान्ये च बहवः क्रममाणं त्रिविक्रमम् ॥ उपतस्थुर्ब्रह्मात्मानं विष्णुं देत्यगणास्तदा ॥ १२ ॥ प्रासोद्यनकराः केचिद्व्यादिनास्याः स्वस्वनाः ॥ शनम्री-चक्रहस्ताश्च वज्रहस्तास्तथा परे ॥ १३ ॥ रुद्रपट्टिशहस्ताश्च परश्वधधराः परे ॥ प्रासमुद्गरहस्ताश्च तथा परिषपाणयः ॥ १४ ॥ महाशनिन्यग्रकरा मोक्षलास्तु महाबलाः ॥ महावृक्षाद्यतकरास्तथैव च धनुर्धराः ॥ १५ ॥ गदाभुशुण्डिहस्ताश्च वज्रास्तास्तथा परे ॥ महापट्टिशहस्ताश्च तथा परिषपाणयः ॥ १६ ॥ असिकम्पनहस्ताश्च दानवा युद्धदुर्मदाः ॥ नानाप्रहरणा घोरा नानावेष्टा महाबलाः ॥ १७ ॥ कूर्मकुण्डलकाश्च हस्तिवक्रारतथा परं ॥ सरोध्रवदनाश्च वराहवदनास्तथा ॥ १८ ॥

और कितनेही खड्ग, पट्टिश, फरसेको धारण किये, कितनेही प्राण, सुद्गर, परिवोंको हाथों में लिये ॥ १४ ॥ और कोई महाशनि, शिला, मृशाल और वहावृक्षोंको तथा महाधनुषोंको हाथों में धारण करनेवाले ॥ १५ ॥ गदा भुशुण्डी हाथों में लिये, वज्र लिये, महापट्टिश परिष लिये ॥ १६ ॥ कितनेही तलवारोंको हाथों में किरानेवाले, कितनेही अनेक प्रकारके प्रहारोंको धारण करनेवाले और कितनेही युद्धमें दुर्मद, कितनेही अनेक प्रकारके वेशोंको धारण करनेवाले ॥ १७ ॥ कितनेही कटुए तथा सुरंगके मुखके समान मुखवाले,

कितनेही हाथीके समान मुखवाले, कितनेही गधे और ऊँटके समान मुखवाले कितनेही शूकरके समान मुखवाले ॥ १८ ॥ कितनेही भयंकर मुख मच्छके समान मुखवाले और कितनेही शिशुमार, मच्छके समान मुखवाले ॥ १९ ॥ कोई चित्राव तोनेके समान दीर्घमुखवाले ॥ २० ॥ कोई मृग, मृग ऊँटसे दीर्घमुख, नकुल, कबूतर ॥ २१ ॥ कौब, चकवा, मोवा, मत्स्य, ऋक्ष, शार्ङ्गल, गेंडा, निह, भेड, भैंसके समान मुखवाले ॥ २२ ॥ और कितनेही हाथीके चर्मके बल्लोंको ओढ़े, कितनेही मृगछाताके बल्लोंवाले कितनेही चारहा बल्लोंवाले और कितनेही वृक्षोंके बल्लोंके पत्तों-

भीमा मकरवक्राश्च शिशुमारमुखास्तथा ॥ मांजोरशुकवक्राश्च दीर्घवक्राश्च दानवाः ॥ १९ ॥ गरुडाननाः खड्गमुखा मयूरवदनास्तथा ॥ अश्ववक्रा बभ्रुवक्रा घोरा मृगमुखास्तथा ॥ २० ॥ उग्रशूल्यकवक्राश्च दीर्घवक्राश्च दानवाः ॥ नकुलस्येव वक्राश्च पारावतमुखास्तथा ॥ २१ ॥ चक्रवर्कमुखाश्चैव गोधवक्रास्तथा परे ॥ तथा मृगाननाः शूरा गोजादिमहिषाननाः ॥ २२ ॥ कुक्कासमुखाश्चैव व्याघ्रवक्रास्तथा परे ॥ ऋक्षशार्ङ्गलवक्राश्च सिद्धवक्रास्तथा परे ॥ २३ ॥ गजेन्द्रचर्मवसनास्तथा कृष्णाजिनाम्बराः ॥ चिरसंवृतगात्राश्च तथा फलकवाससः ॥ २४ ॥ उष्णीषिणो मुकुटिनस्तथा कुण्डलिनोऽमुराः ॥ किरीटिनो लम्बशिक्षाः कम्बुग्रीवाः सुवर्चसः ॥ २५ ॥ नानावेषधरा दैत्या नानामाल्यानुलेपनाः ॥ स्वान्यायुधानि दीप्तानि प्रगृह्यासुरसत्तमाः ॥ २६ ॥ क्रममाणं हृषीकेशमुपातिष्ठन्त दानवाः ॥ प्रमथ्य सर्वान्दैतेयान्पादहस्ततलैः प्रभुः ॥ २७ ॥ रूपं कृत्वा महाकायं जहाराशु स मेदिनीम् ॥ त्रेलोक्यं क्रममाणस्य द्युतिरादित्यसंभवा ॥ २८ ॥

वाले ॥ २३ ॥ कितनेही पगडी बांधनेवाले कितनेही मुकुटको धारण करनेवाले, कितनेही कुण्डलोंको पहननेवाले, कितनेही दीर्घ चोटीवाले, कितनेही शंखके समान ग्रीवावाले, और कितनेही सुंदर तेजवाले थे ॥ २४ ॥ २५ ॥ कितनेही अनेक प्रकारके वेषोंको धारण करनेवाले, कितनेही अनेक प्रकारकी माला और चंदन आदि अनुलेपोंको धारण करनेवाले सब दैत्य अनेक प्रकारके प्रकाशितरूप अपने शस्त्रोंको ग्रहण कर ॥ २६ ॥ पैरोंसे पृथ्वीको नापनेवाले विष्णुके समीपमें प्राप्त हुए, तब पैर और हाथोंके तलवोंसे प्रभुने सब दैत्योंको मचकर ॥ २७ ॥ तब वह महाकायरूप करके

पृथ्वीको हरण करते हुए, त्रिलोकीको हरनेके समय विस्तृत रूपवाले विष्णुकी कान्ति सूर्यके समान हुई ॥ २८ ॥ और पृथ्वीको विक्रमण करनेके समय चंद्रमा और सूर्य विष्णुके दोनों स्तनोंके मध्यस्थानमें स्थित हुए और आकाशमें प्रक्रमण करनेके समय विष्णुके संधिदेशमें चंद्रमा और सूर्य स्थित हुए, अर्थात् कटिके नीचे आकाश स्थित हुआ ॥ २९ ॥ विष्णुके अतिविक्रमण करनेके समय चंद्रमा और सूर्य पादमूलमें स्थित हुए ऐसे अमितवीर्यवाले विष्णुके पशुको ब्राह्मण कहते हैं कि सब लोकोंको जीतकर और बहुतसे दैत्योंको मारकर ॥ ३० ॥ लोकनमस्कृत विष्णु भगवान् इन्द्रको पृथ्वी देते भये और पृथ्वीतलके नीचे सुतल नामक पाताल ॥ ३१ ॥ बलवान् विष्णु भगवान्ने बलिराजाके निवासको दिया, तब बालि-
तस्य विक्रमतो भूमिं चन्द्रादित्यो स्तनान्तरे ॥ नभः प्रक्रममाणस्य संधिदेशे व्यवस्थितो ॥ परं विक्रममाणस्य जानुदेशे व्यवस्थितो ॥ २९ ॥ विष्णोरामितवीर्यस्य वदन्त्येवं द्विजातयः ॥ जित्वा लोकत्रयं कृत्स्नं इत्वा चासुरपुङ्गवान् ॥ ३० ॥ ददौ शक्राय यमुधां हरिर्लोकनमस्कृतः ॥ सुतलं नाम पातालमधस्तादसुधातले ॥ ३१ ॥ बलेर्दत्तं भगवता विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ तदवाप्या-
सुरश्रेष्ठश्चकार मतिमुत्तमाम् ॥ ३२ ॥ रसातलतले वसमकरोदसुराधिपः ॥ तत्रस्थश्च महातेजा ध्यानं परममास्थितः ॥ ३३ ॥ उवाच वचनं धीमान् विष्णुं लोकनमस्कृतम् ॥ किं मया देव कर्तव्यं ब्रूहि सर्वमशेषतः ॥ ततो दैत्याधिपं प्राह देवो विष्णुः सुरो-
त्तमः ॥ ३४ ॥ विष्णुरुवाच ॥ ददामि ते महाभाग परितुष्टोऽस्मि तेऽसुर ॥ वरं वरय भद्रं ते वयं क्वं काममाशुहि ॥ ३५ ॥ मा च शक्रस्य वचनं प्रतिहासीः कथंचन ॥ अहमाज्ञाप्यामि त्वां श्रेयश्चैवमवाप्स्यसि ॥ ३६ ॥
राजा उत्तम मतिको प्राप्त हो पातालमें वास करने लगे ॥ ३२ ॥ और तहां परम ध्यानमें स्थित हुआ बलिराजा ॥ ३३ ॥ लोकनमस्कृत विष्णु भगवान्से वचन कहने लगा, कि हे देव ! मुझे क्या करना चाहिये ? सो आप विस्तारसे कहिये तब बलिराजासे विष्णु भगवान् कहने लगे ॥ ३४ ॥ हे महाभाग ! तेरे निमिच वर दूंगा, तू वरको मांग मैं प्रसन्न हुआ हूँ तेरा कल्याण हो और मनोवांछित फलको प्राप्त हो ॥ ३५ ॥ और इन्द्रके वचनको कभीभी न हँसना, मैं तुझे आज्ञा देता हूँ, तू सुखको प्राप्त होगा ॥ ३६ ॥

इस प्रकार कहकर फिर बलिराजाको मधुरवाणीसे सात्वत करनेवाले और सब लोकको करनेवाले वरेण्य विष्णु कहने लगे ॥ ३७ ॥
 जो तैने अपने हाथसे जल दिया और मैंने वह जल ग्रहण किया, इस कारण दैत्य और देवताओंसे तुमको नप न होगा ॥ ३८ ॥ हे
 महाभसुर ! सुतलनामक पाताल लोकमें सब दैत्यगणोंके संग तुम मेरे प्रसादसे वास करो ॥ ३९ ॥ और देवताओंके देव अति-
 तेजस्वी इन्द्रकी शिक्षाका कभी नाश नहीं करना, यह मेरी आज्ञा मानना ॥ ४० ॥ हे महाभसुर ! तुमको सब देवताओंकी पूजा करनी योग्य है, हे महाभाग !

अथ दैत्याधिपं प्राह विष्णुर्देवाधिपानुजः ॥ वाचा परमया देवो वरेण्यः प्रभुरीश्वरः ॥ ३७ ॥ यत्त्वया सलिलं दत्तं गृहीतं पापिना
 मया ॥ तस्मात्ते दैत्यदेवेभ्यो नास्ति नातु भयं क्वचित् ॥ ३८ ॥ सुतलं नाम पातालं तत्र त्वं सानुगो वस ॥ सर्वदैत्यगणैः सार्द्धं
 मत्प्रसादान्महाभसुर ॥ ३९ ॥ न च ते देवदेवस्य शक्रस्यामिततेजसः ॥ ज्ञासनं प्रतिहन्तव्यं स्मरता ज्ञासनं मम ॥ ४० ॥ देवताश्चापि
 ते सर्वाः पूज्या एव महाभसुर ॥ भोगांश्च विविधान्सम्यक् यज्ञांश्च सद्दाक्षिणान् ॥ ४१ ॥ प्राप्स्यसे च महाभाग दिव्यान्कामान्यथे-
 प्सितान् ॥ इह चासुत्र चाक्षय्यान्विविधांश्च परिच्छदान् ॥ ४२ ॥ दैत्याधिपत्यं च सदा मत्प्रसादादवाप्स्यसि ॥ यदा चेतां मया
 प्रोक्तां मर्यादां चालयिष्यसि ॥ वधिष्यन्ति तदा हि त्वां नागपाशैर्महाबलाः ॥ ४३ ॥ नमस्कार्याश्च ते नित्यं महेन्द्राद्या दिवौकसः ॥
 मम ज्येष्ठः सुरश्रेष्ठः ज्ञासनं प्रतिगृह्यताम् ॥ ४४ ॥ बलिरुवाच ॥ देवदेव महाभाग अङ्गचक्रगदाधर ॥ सुरासुरगुरो श्रेष्ठ सर्वलौ-
 कमहेश्वर ॥ तत्रासतो मे पाताले भागं ब्रूहि सुरोत्तम ॥ ४५ ॥

तुम दक्षिणासहित यज्ञके फलको प्राप्त होगे ॥ ४१ ॥ मनोवांछित रूप दिव्यकामनाओंको तुम प्राप्त होमे और इस लोकमें तथा परलोकमें सुखको और
 अनेक प्रकारके स्थानोंको ॥ ४२ ॥ दैत्योंके राजगणको और अनेक प्रकारके जोगोंको तुम मेरे प्रसादसे प्राप्त होगे, और जब तुम मेरी कही इस मर्यादाको
 उल्लंघन करोगे तो तुमको अतिबलवाले सर्प अपने फणोंसे मारेंगे ॥ ४३ ॥ इस कारण तुम महेन्द्रादिको नित्य नमस्कार करना, मेरे बड़े भ्राता देवताओंमें
 श्रेष्ठ इन्द्रकी शिक्षा सब कालमें ग्रहण करनी चाहिये ॥ ४४ ॥ बलि कहने लगा, कि हे देवदेव ! हे महाभाग ! हे शंख चक्र गदाधर ! हे सुरासुरगुरुश्रेष्ठ !

हे सर्वलोकमहेश्वर ! पातालमें वास करनेवाले मुझे ज्ञानकी कल्पना कीजिये ॥ ४५ ॥ और किस प्रकार मैं तहां स्थिति कहूं ? मुझे भोजनके लिये क्या मिलेगा जिससे मेरी अक्षय्य तृप्ति होवे, विष्णु जगवान् बोले ॥ ४६ ॥ हे दैत्यसूतन ! वेदके जाननेवालेके बिना आद्य किया और दाके बिना वेदका पाठ किया और दक्षिणारहित पक्ष और ऋत्विक्के बिना हवन और अन्नाके बिना दान किया और संस्कारके रहित हविर्गन्ध यह छः ज्ञान तुम्हारे हैं, इनका फल तुमको मिलेगा ॥ ४७ ॥ मुझसे वैर करनेवालोंका और मेरे भक्तोंसे वैर करनेवालोंका पुण्य और कयविक्रय करते अग्निहोत्रियोंका

ममान्नमशनं देव प्राशनार्थमर्द्धम ॥ तद्वदस्व सुरश्रेष्ठ तृप्तिर्येन ममाक्षया ॥ ४६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ अश्रोत्रियं श्राद्धमधीतमव्रतम-
दाक्षिणं यज्ञमननर्त्विजा द्रुतम् ॥ अश्रद्धया दत्तमसंस्कृतं हविरंते प्रदत्तास्तव दैत्य भागाः ॥ ४७ ॥ पुण्यं सदोषितं यच्च मद्भागद्वेषिणां
तथा ॥ क्रयविक्रयसक्तानां पुण्यं यच्चाग्निहोत्रिणाम् ॥ ४८ ॥ अश्रद्धया च यद्दानं ददतां यजतां तथा ॥ तत्सर्वं तव दैत्येन्द्र
मत्प्रसादाद्भाविष्यति ॥ ४९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतच्छ्रुत्वा तु वचनं बलिर्द्विष्णोर्महात्मनः ॥ एवमस्तिवति तं प्रोक्त्वा पाताल-
मसुरोत्तमः ॥ ५० ॥ प्रविवेश महानादो देवाह्नां प्रतिपालयन् ॥ भगवानपि राज्यानां प्रविभार्गाश्चकार ह ॥ ५१ ॥ ददौ पूर्वा दिक्षं
चेन्द्रां शक्रायामिततेजसे ॥ याम्यां यमाय देवाय पितृराज्ञे महात्मने ॥ ५२ ॥ पश्चिमां तु दिक्षं प्रादाद्रुणाय महात्मने ॥ उत्तरां च
कुबेराय यक्षाधिपतये दिक्षम् ॥ ५३ ॥ अधस्तां नागराजाय सोमायोर्द्धा दिक्षं ददौ ॥ एवं विभज्य त्रेलोक्यं विष्णुर्बलवतांवरः ॥ ५४ ॥

पुण्य ॥ ४८ ॥ और अन्नासे रहित दान और पूजन यह सब हे दैत्येन्द्र ! मेरे प्रसादसे तेरा ज्ञान होना ॥ ४९ ॥ वैशम्पायन कहने लगे कि इस प्रकार विष्णुके वचनको सुनकर “वेसेही हो ” इस वचनको कहकर असुरभेठ ॥ ५० ॥ विष्णुकी आज्ञाको प्रतिपाठन कर बलि पाताललोकमें प्रवेश कर गया और विष्णुने देशोंका विज्ञान किया ॥ ५१ ॥ अर्थात् इन्द्रकी पूर्व दिशाको अमिततेजवाले इन्द्रके अर्थ देते हुए और दक्षिणदिशाको पितरोंके राजा यमराजके अर्थ दिया ॥ ५२ ॥ और पश्चिम दिशा रुद्रजीको दी, उत्तर दिशा यक्षोंके राजा कुबेरको दी ॥ ५३ ॥ और नीचेके लोक रोप-

नामको दिये, और ऊर्ध्वदिशाको चंद्रमाके अर्थ दिया, इस प्रकार बलबालोंमें उचम विष्णुजी त्रिलोकीका विनाश कर ॥ ५४ ॥ देवताओंके शोकको दूर कर सब प्राणिपोंमें इन्द्रकी प्रतिष्ठा कर महर्षियोंसे पूज्यमान सर्वश्रेष्ठ वामनजी स्वर्गको गये ॥ ५५ ॥ अतितेजस्वी दुर्धर्ष वामनजी जब चले गये तब सब देवता इन्द्रको आने कर आनंदित हुए ॥ ५६ ॥ वैशंपायनजी बोले, कि जब वामनजी बहिराजाको सात सिरोंवाले और कंबल अन्धतर आदि सर्पोंसे बांधकर स्वर्गमें चले गये ॥ ५७ ॥ तब नामोंके बंधनसे पीड़ित हो बहिराजाके समीपमें सहज्यासे नारद मुनि प्राप्त हुए ॥ ५८ ॥ तब

जगाम त्रिदिवं देवः पूज्यमानो महर्षिभिः ॥ वामनः सर्वभूतेशः प्रतिष्ठाप्य च वासवम् ॥ ५५ ॥ तस्मिन्प्रयाते दुर्धर्षे वामनेऽमितते-
जासि ॥ सर्वे मुमुदिरे देवाः पुरस्कृत्य झतकृतुम् ॥ ५६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ गते तु त्रिदिवं कृष्णे बद्धा वैरोचनिं बलिम् ॥ नामैः
सप्ताशिरोभिश्च कम्बलाश्वतरादिभिः ॥ ५७ ॥ नागबन्धनदुःस्वार्तं बलिं वैरोचनिं ततः ॥ यदृच्छयासौ देवर्षिर्नारदः प्रत्यपश्यत् ॥ ५८ ॥
स तं कृच्छ्रगतं दृष्ट्वा कृपयाभिरिप्लुतः ॥ उवाच दावनश्रेष्ठं मोक्षोपायं ददामि ते ॥ ५९ ॥ स्तवं देवादिदेवस्य वासुदेवस्य धीमतः ॥
अनादिनिघनस्यास्य अक्षयस्याव्ययस्य च ॥ ६० ॥ तमधीष्वाथ दैत्येन्द्रः विशुद्धेनान्तरात्मना ॥ तद्रतस्तन्मना भूत्वा द्रुतं
मोक्षमवाप्स्यसि ॥ ६१ ॥ ततो विरोचनमुतः प्रयतः प्राञ्जलिः शुचिः ॥ मोक्षार्थिश्चकमव्यग्रो नारदात्समर्पितकच्छ ॥ ६२ ॥
तमधीत्य स्तवं दिव्यं नारदेन समीरितम् ॥ पृथिवीं चोद्धृता येन तं जजाप महासुरः ॥ ६३ ॥

संकटमें बहिराजाको देख दयासंयुक्त नारदमुनि कहने लगे, कि हे दानवश्रेष्ठ ! मैं तेरे अर्थ इस पीडासे छूटनेका उपाय देता हूं ॥ ५९ ॥ देवादिदेव वासुदेवका स्तव कहता हूं वह आदि और अंतरहित अक्षय अविनाशी है ॥ ६० ॥ हे दैत्यराज ! उसे तुम शुद्ध अंतरात्मासे मनको लगाय पाठ करो, तत्काल इस दुःखसे छूट जाओगे ॥ ६१ ॥ तब विरोचनका पुत्र बहिराजा अंजलि बांध मोक्षार्थिश्चकमव्यग्रो नारदजीसे पहले लगा ॥ ६२ ॥ उस नारदजीके कहे दिव्य स्तोत्रको पढ़कर उन पृथ्वीके उद्धार करनेवालेका स्तोत्र जपने लगे ॥ ६३ ॥

६. वं.

६१७२॥

जिस करके इस पृथ्वीका उद्धार हुआ था अब जिस स्तोत्रको बलिराजाने जगा है वह स्तोत्र वर्जन किया जा। है, ॐ अनन्तराति अक्षय महात्मा जल-
शायी पद्मनाभ विष्णुके लिये नमस्कार है ॥ ६४ ॥ आप सात सूर्यकी समान शरीर करके बिलोकीको आकाश किये हो, हे भगवन् । आप काल-
केमी काल हो, इस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ६५ ॥ चन्द्र, सूर्य, आकाश, यज्ञ, तप, क्रियाके षष्ठ होनेसे आप फिर लोकोंकी चिन्ता करते हो, इस
सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ६६ ॥ ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र, वायु, अग्नि, सारित, भुजंग, पर्वत, द्विजेन्द्रने यह आपमें स्थित देखा, इस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ६७ ॥ पहले

ॐ नमोस्त्वनन्तपतये जलशाय महात्मने ॥ जलशयाय देवाय पद्मनाभाय विष्णवे ॥ ६४ ॥ सप्तसूर्यवपुः कृत्वा त्रीलोकान् क्रान्त-
वानसि ॥ भगवान्कालकालस्त्वं तेन सत्येन मोक्षय ॥ ६५ ॥ नष्टचन्द्रार्कमनने क्षीणयज्ञतपःक्रिये ॥ पुनश्चिन्तयसे लोकान्स्तेन
सत्येन मोक्षय ॥ ६६ ॥ ब्रह्मरुद्रेन्द्रवायवग्निसरिद्रुजगपर्वताः ॥ त्वत्स्या दृष्ट्वा द्विजेन्द्रेण तेन सत्येन मोक्षय ॥ ६७ ॥ मार्कण्डेन
पुरा कल्पे प्रविश्य जठरं तव ॥ चराचरगतं दृष्टं तेन सत्येन मोक्षय ॥ ६८ ॥ एको विद्यासहायस्त्वं योगी योगयुष्मत्तः ॥ पुनश्चे-
लोकयमुत्सृज्य तेन सत्येन मोक्षय ॥ ६९ ॥ जलशय्यामुपासीनो योगनिद्रासुषामतः ॥ लोकान्श्चिन्तयसे भूयस्तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७० ॥
वाराहं रूपमास्थाय वेदयज्ञपुरस्कृतम् ॥ घरा जलोद्धृता येन तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७१ ॥ उद्धृत्य दंष्ट्रया यज्ञास्त्रिं पिबान्कृतवानसि ॥
त्वं पितृणामपि हरे तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७२ ॥ प्रदुद्रुवुः सुराः सर्वे हिरण्याक्षभयार्दिताः ॥ परित्रातास्त्वया देव तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७३ ॥

कल्पमें मार्कण्डेय आपके शरीरमें प्रविष्ट हुए थे, और आपमें चराचर जगत् देखा था उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ६८ ॥ एक आप योगी विद्यासहाय
होकर योगको प्राप्त हुए हो, फिर बिलोकी छोड़ते हो, उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ६९ ॥ जलशय्यामें बैठे योगनिद्राको प्राप्त हुए फिर आप लोककी
चिन्ता करते हो उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७० ॥ आपने वाराहरूप धारण कर वेदयज्ञको आगे कर जिस सत्यसे पृथ्वी उद्धार की उससे मुझे
छुड़ाओ ॥ ७१ ॥ आपने दंष्ट्रासे उद्धार कर यज्ञके तीन पिंड किये तुम पितरोंके उद्धारक हो उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७२ ॥ सब देवता हिरण्या-

गा. ६१

५.३.७२

११७२६

क्षके भयसे भागे थे, हे देव ! आपनेही उनकी रक्षा की थी उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७३ ॥ दीर्घमुखवाले रूपसे युद्धमें हिरण्यक्षका चक्रसे शिर
 काटा उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७४ ॥ पहले हिरण्यकश्यप मित्र शिर अस्थि होकर गिरा था उसे आपने हुंकारसे नष्ट किया उस सत्यसे मुझे
 बचाओ ॥ ७५ ॥ जब ब्रह्माके देसते दानवोंने वेदका हरण किया, हे देव ! तब आपनेही उसे छुड़ाया उस सत्यसे मुझे छुड़ाइये ॥ ७६ ॥ आपने हयशिररूप
 धारण कर मधुकैटभको मार ब्रह्माको वे वेदादि बिये, उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७७ ॥ देव, दानव, राक्षस, यक्ष, सिद्ध, महोरग तुम्हारा अन्त कोई
 दीर्घवक्त्रेण रूपेण हिरण्याक्षस्य संयुगे ॥ शिरो बह्मर चक्रेण तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७८ ॥ भग्नमूर्द्धास्थिमस्तिष्को हिरण्यकशिपुः
 पुरा ॥ हुंकारेण हतो दैत्यस्तेन सत्येन मोक्षय ॥ ७९ ॥ दानवाभ्यां हता वेदा ब्रह्मणः पश्यतः पुरा ॥ परित्रातास्त्वया देव तेन
 सत्येन मोक्षय ॥ ८० ॥ कृत्वा हयशिरोरूपं हत्वा तु मधुकैटभो ॥ ब्रह्मणे तेऽर्पिता वेदास्तेन सत्येन मोक्षय ॥ ८१ ॥ देवदानवगन्धर्वा
 यक्षसिद्धमहोरगाः ॥ अन्तं तव न पश्यन्ति तेन सत्येन मोक्षय ॥ ८२ ॥ अप्रांतरतमा नाम जातो देवस्य वै सुतः ॥ कृताश्च तेन
 वेदार्थास्तेन सत्येन मोक्षय ॥ ८३ ॥ वेदयज्ञाग्निहोत्राणि पितृयज्ञइवापि च ॥ रहस्यं तव देवस्य तेन सत्येन मोक्षय ॥ ८४ ॥ ऋषिर्दीर्घ-
 तमा नाम जात्यन्धो बुरुक्षापतः ॥ त्वत्प्रसादाच्च चक्षुष्मास्तेन सत्येन मोक्षय ॥ ८५ ॥ ग्राह्यस्तं गजेन्द्रं च दीनं मृत्युवशं गतम् ॥
 भक्तं मोक्षितवांस्त्वं हि तेन सत्येन मोक्षय ॥ ८६ ॥ अक्षयश्चाव्ययश्च त्वं ब्रह्मण्यो भक्तवत्सलः ॥ उच्छ्रितानां नियन्तासि तेन
 सत्येन मोक्षय ॥ ८७ ॥

नहीं देखते, उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७८ ॥ अप्रांतरतमा नामवाला देवपुत्र हुआ था, उसने वेदार्थ किया था उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ७९ ॥
 वेद, अग्निहोत्र, पितृ, यज्ञ, हवि और जो वेदमें आपका रहस्य है, उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ८० ॥ दीर्घतमा नामक ऋषि गुरुके शापसे अंधजाति
 आपकेही प्रसादसे नेत्रवान् हुआ उसी सत्यसे मुझे बचाओ ॥ ८१ ॥ ग्राह्यसे गृहीत मृत्युके परीभूत अपने भक्त गजेन्द्रको आपने छुड़ाया उस सत्यसे
 मुझे छुड़ाओ ॥ ८२ ॥ आप अक्षय अविनाशी ब्रह्मण्य भक्तवत्सल हो आप उच्छ्रितोंके नियन्ता हो उस सत्यसे मुझे छुड़ाओ ॥ ८३ ॥

शंख, चक्र, गदा, तूण, शार्ङ्ग धनुष और गरुडको मैं शिरसे प्रणाम करता हूँ. वे इससे मुझे छुड़ावें ॥ ८४ ॥ शंख, चक्र, गदा, तूण, शार्ङ्ग, गरुडादिक यह सब बंधनसे बलिको छुटानेके निमित्त भगवान्‌से प्रार्थना करने लगे ॥ ८५ ॥ तब भगवान्‌ने प्रसन्न हो गरुडजीको राजा बलिके बंधन सोलनेकी आज्ञा दी ॥ ८६ ॥ तब अतुलपराक्रमी गरुड पंखोंको फैलाये हुए जहां बलिराजा स्थित था. उस पृथ्वीके मूलमें प्राप्त हुए ॥ ८७ ॥ तब गरुडजीके आगमनको जान बलिराजाको छोड़कर गरुडजीके जपसे पीड़ित सब सर्प भोगवती पुरीमें प्राप्त हुए ॥ ८८ ॥ फिर विष्णुके प्रसादसे छुटे हुए शार्ङ्ग चक्र गदा पद्म शार्ङ्ग गरुडमेव च ॥ प्रसादयामि शिरसा ते बन्धान्मोक्षयन्तु माम् ॥ ८९ ॥ शङ्खचक्रगदातूणशार्ङ्ग च गरुडादयः ॥ प्रसादयामासुर्हर्षं बलिं मोक्षय बन्धनात् ॥ ९० ॥ ततः प्रसन्नो भगवानादिदेस्य स्वर्गेश्वरम् ॥ गरुडं नागदन्तारं बलिं मोक्षय बन्धनात् ॥ ९१ ॥ ततो विशिष्य गरुडः पक्षावतुलविक्रमः ॥ जगाम वसुधामूलं यत्रास्ते संयतो बलिः ॥ ९२ ॥ आगमं तस्य विज्ञाय नागा मुक्त्वा महासुरम् ॥ ययुः पुरीं भोगवतीं वेनतेयभयाद्विताः ॥ ९३ ॥ मुक्तं कृष्णप्रसादेन चिन्तयानमघोमुखम् ॥ भ्रष्टश्रियमुवाचेदं गरुत्मान्पद्मगाशनः ॥ ९४ ॥ गरुड उवाच ॥ दानवेन्द्र महाबाहो विष्णुस्त्वामब्रवीत्प्रभुः ॥ मुक्तो निवस पातालं सपुत्रजनबान्धवः ॥ ९५ ॥ इतस्त्वया न गन्तव्यं गव्यूतिमपि दानव ॥ समयं यदि भिन्यास्त्वं मूर्धा ते शतधा भवेत् ॥ ९६ ॥ पक्षीन्द्रवचनं श्रुत्वा दानवेन्द्रोऽब्रवीदिदम् ॥ स्थितोऽस्मि समये तस्य अनन्तस्य महात्मनः ॥ ९७ ॥ जीवोपायं तु भगवान्मम किञ्चित्करोतु सः ॥ इहस्थोऽहं सुखासीनो येनाप्याये स्वर्गेश्वर ॥ ९८ ॥

विष्णुको चिन्तन करते लक्ष्मीसे भ्रष्ट सर्पोंके बंधनसे रहित बलि राजासे गरुडजी कहने लगे ॥ ८९ ॥ हे दानवेन्द्र ! हे महाबाहो ! विष्णुने तुमसे कहा है कि तुम मुक्त होकर पुत्र जन बांधवोंसहित पातालमें वास करो ॥ ९० ॥ और यहांसे हे दानव ! तुम इस देशसे दो कोश आगेभी न जाना, जो इस प्रतिज्ञाको भेदन करोगे तो तुम्हारे मस्तकके सौ सौ टुकड़े होंगे ॥ ९१ ॥ गरुडजीके वचन सुन बलिराजा कहने लगे, कि मैं विष्णुकी आज्ञाको माने समयपर स्थित हूँ ॥ ९२ ॥ परन्तु वे ईश्वर मेरे जीवनके अर्थ भोजनकाभी उपाय करेंगे,

जिससे यहीं स्थित हुआ मैं पुष्ट होता रहूँगा ॥ १३ ॥ बलिके वचन सुन करुणजी कहने लगे, कि हे राजन् । तुम्हारे जीवनका उपाय पहलेही विष्णुने कर दिया है ॥ १४ ॥ अर्थात् विधिको नहीं जाननेवाले, और प्रायश्चित्तको नहीं जाननेवाले तथा ऋत्विक्संज्ञासे भिन्न ब्राह्मण जो यज्ञको करने वह यज्ञज्ञान तुम्हें है ॥ १५ ॥ अर्थात् तिस यज्ञज्ञानको देवता नहीं ग्रहण करेंगे इस करके पुष्ट हुए तुम सुखपूर्वक यहाँ रहो ॥ १६ ॥ हे दानवेन्द्र ! इस प्रकारसे त्रिलोकभावन विष्णुने तुमको संदेशा दिया है ॥ १७ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार यह पापनाशक पूर्वोक्त स्तोत्र

बलेस्तु वचनं श्रुत्वा गरुत्मानिदमब्रवीत् ॥ पूर्वमेव कृतस्तेन जीव्योपायो महात्मना ॥ १४ ॥ वर्तयिष्यन्ति ये यज्ञा विधिहीना न ऋत्विजः ॥ प्रायश्चित्तमजानन्तो यज्ञभागस्ततस्तव ॥ १५ ॥ न तेषां यज्ञभागं वै प्रतिगृह्णन्ति देवताः ॥ अनेनाप्यापितव्रतः सुखमात्रं निवत्स्यासि ॥ १६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ संदेशपेतं भगवान्दत्तज्ञानं कृष्णपात्मजः ॥ दानवेन्द्रं महाबाहो विष्णुप्रेत्रो-
क्त्यभावनः ॥ १७ ॥ इमं स्तवमनन्तस्य सर्वपापप्रमोचनम् ॥ यः पठेत् नरो भक्त्या तस्य नश्यति क्लिष्टम् ॥ १८ ॥ गोहत्यायाः प्रमुच्येत ब्रह्मघ्नो ब्रह्महत्यया ॥ अपुत्रो लभते पुत्रं कन्या चैवेप्सितं पतिम् ॥ १९ ॥ सद्यो गर्भात्प्रमुच्येत गर्भिणी जनयेत्सुतम् ॥ ये च मोक्षैषिणो लोके योगिनः सांख्यकापिडाः ॥ १०० ॥ स्तवेनानेन गच्छन्ति श्वेतद्वीपमकल्मषाः ॥ सर्वकामप्रदो ह्येष स्तवोऽ-
नन्तस्य कीर्त्यते ॥ १ ॥ यः पठेत्प्रातरुत्थाय शुचिः प्रयतमानसः ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति मानवो नात्र संशयः ॥ २ ॥

जो पढ़ेगा, तिसके सब पाप नाशको प्राप्त होंगे ॥ १८ ॥ गायका मारनेवाला गोहत्यासे छूट जायगा, ब्राह्मणका मारनेवाला ब्रह्महत्यासे छूट जायगा और जिसके पुत्र नहीं होता हो वह पुत्रको प्राप्त होगा और कन्या वांछित वरको प्राप्त होगी ॥ १९ ॥ और लग्नगर्तवाली स्त्री गर्भसे छूट जायगी और गर्भिणी स्त्री पुत्रको जनेगी, और इस स्तोत्रके प्रतापसे मोक्षकी इच्छावाले योगी कपिलशास्त्र सांख्यके ज्ञाता ॥ १०० ॥ इससे पापरहित हो श्वेतद्वीपमें जायकर प्राप्त होंगे. यह विष्णुका स्तोत्र सब कामनाओंका देनेवाला है ॥ १ ॥ पवित्र हो जो मनुष्य प्रातः उठकर इस स्तोत्रका पाठ

ह. वं.

॥ १७४ ॥

करेगा, वह मनुष्य सब कामनाओंको प्राप्त होगा इसमें संशय नहीं ॥ २ ॥ यह वामन अवतार वेदको जाननेवाले ब्राह्मणोंसे कहने योग्य है, वेद-
वादी ब्राह्मण इसका पाठ करते हैं ॥ ३ ॥ इस वामनजीके दिव्य आरूपानको पर्वकालमें भक्तिसहित नित्य अर्चन करे तो ॥ ४ ॥ राजा सुनकर
शत्रुओंको निश्चय जीते, जैसे महाबली विष्णुने जय की इससे उत्तम यश और बड़े धनको प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ वह सद्गतिको प्राप्त हो सब प्राणि-
योंका प्रिय होता है, धन धान्य और सद्गुणी पुत्रोंकी वृद्धि होती है, तथा आरोग्यता होती है ॥ ६ ॥ और इस स्तोत्रके पठन करनेवाले
मनुष्यपर सब कामनाओंको देनेवाले विष्णु भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं ऐसे वेदव्यासजीने कहा है ॥ १०७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे
भविष्यपर्वणि त्रिपदायां वामनप्रादुर्भावो नाम द्विषप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७२ ॥ धन्य उपाख्यानसे आरंभ कर बाणासुरके जयपर्यन्त श्रीकृ-
ष्ण वे वामनो नाम प्रादुर्भावो महात्मनः ॥ वेदविद्विद्विजैरेव पच्यते वैष्णवं यशः ॥ ३ ॥ यस्त्विदं वामनं दिव्यं प्रादुर्भावं महात्मनः ॥
शृणुयान्नियतो भक्त्या सदा पर्वसु पर्वसु ॥ ४ ॥ परान् विजयते राजा यथा विष्णुर्महाबलः ॥ यशो विमलमाप्नोति विपुलं चाप्नुते वसु ॥ ५ ॥
प्रियो भवति भूतानां सर्वेषां वामनो यथा ॥ पुत्रपौत्राश्च वर्द्धन्ते आरोग्यं गुणसंपदः ॥ ६ ॥ प्रीयते पठतश्चास्य देवदेवो जनार्दनः ॥
सर्वकामयुतश्चैव कृष्णद्वैपायनोऽब्रवीत् ॥ १०७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि वामनप्रादुर्भावो नाम द्विषप्त-
तितमोऽध्यायः ॥ ७२ ॥ जनमेजय उवाच ॥ किमर्थं भगवान्विष्णुर्देवदेवो जनार्दनः ॥ गतः कैलासशिखरमालयं शंकरस्य च ॥ १ ॥
णकी उत्कर्षतः वर्णन की उनके प्रादुर्भावमें उनके निर्गुण अगुण स्वरूपका व्याख्यान कर भारत अरण्य फलश्रुति दर्शनपर्यन्त समाप्त किया, बाणयुद्धमें
हरिहरका अभेद कहा (स च ममात्मा भद्रसेन इतिवत्) इनका अत्यन्त अभेद माननेसे शास्त्रशासकभाव सिद्ध नहीं होता इसीसे वह अभेद औप-
चारिक है ऐसा माननेवाला मंदमति पुरुषोंकी मतिको शोषन करनेके लिये अब कैलासयात्रा और त्रिपुरवधतक ग्रंथ आरंभ करते हैं उन दोनोंकी
सर्वोत्तमता वर्णन करके जैसे योगीके कायब्यूह देहके विद्यमान होनेमें ऐकात्म्यता सिद्ध होती है, देहभेदसे ऐकात्म्य नष्ट नहीं होता, कर्मोंकी सर्वोत्तम
अद्वैत योग्य है. सो अनुशासनपर्वमें श्रीकृष्ण शंकरका आराधन करनेको कैलास गये, यह संक्षेपसे कहकर अब विस्तारसे कहते हैं कि सच्चिदानंद

भा. टी.

प. ३ अ. ७३

॥ १७४ ॥

जैसे अल्पसुखके लिये तप करनेके लिये नये वे हम पूछते हैं जन्मेजय कहने लगे, कि देवताओंके देवता विष्णु भगवान् महादेवके आलयरूप कैलासशिखरमें किस कारण प्राप्त हुए ॥ १ ॥ नारद आदि तपोवर्धित तपस्विनवयोंने नीललोहित शंकर महादेवको देखा ॥ २ ॥ और हे विप्र ! उत्तम तपको करनेवाले देवदेव केशव भगवान्ने महादेवका पूजन व तप किया है, यह मैंने सुना है ॥ ३ ॥ पुरातन जगन्नाथ महादेव और विष्णुकी इन्द्र आदि देवताओंने पूजा करी है ॥ ४ ॥ एक आत्मावाले जगत्की योनि सृष्टि और संहार करनेवाले वह दोनों एकही दो रूपसे दीक्षते हैं ॥ ५ ॥ परस्परके समावेशसे जगत्की पालनामें स्थित हरि और महादेव इन दोनोंका जैसे कैलासपर्वतमें वृत्तान्त

नारदाद्येस्तपोवृद्धैर्मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ तत्र दृष्टो महादेवः शंक्रो नीललोहितः ॥ २ ॥ केशवेन पुरा विप्र कुर्वता तप उत्तमम् ॥ अर्चितो देवदेवेन शंकरश्चेति नः श्रुतम् ॥ ३ ॥ देवो तत्र जगन्नाथो दृष्टवन्तो पुरातनो ॥ अर्चयाञ्चक्रिरे देवा इन्द्राद्याः शंकरं हरिम् ॥ ४ ॥ तौ हि देवो महादेवावेकीभूतो द्विधा कृतौ ॥ एकात्मानो जगद्योनी सृष्टिसंहारकारकौ ॥ ५ ॥ परस्परसमावेशाजगतः पालने स्थितौ ॥ तयोस्तत्र यथावृत्तं कैलासे पर्वतोत्तमे ॥ ६ ॥ ऋषयः किमचेष्टन्त दृष्ट्वा तौ पुरुषोत्तमौ ॥ एतत्सर्वमशेषेण वक्तुमर्हसि सत्तम ॥ ७ ॥ यथा गतो हरिर्विष्णुः कृष्णो जिष्णुः पुरातनः ॥ तथा च शंकरः साक्षात्कृतवान्नागभूषणः ॥ एतत्सर्वं विप्रवर्यं ब्रूहि तत्त्वेन यन्नतः ॥ ८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ शृणुष्वविदितो राजन्यया कृष्णो गतो नगम् ॥ यथा च दृष्टो देवेशः शंक्रो वृषवाहनः ॥ ९ ॥ यथा चचार स तपो यथा त मुनयो गताः ॥ एवं तयोर्यथा वृत्तं तथा शृणु नरोत्तम ॥ १० ॥

हुआ है ॥ ६ ॥ और इन दोनों पुरुषोत्तमोंको देखकर सब ऋषियोंने क्या चेष्टा की ? हे भट्ट ! यह सब विशेषकर तुम हमसे कहो ॥ ७ ॥ जैसे पुरातन विष्णुरूप कृष्ण कैलासमें प्राप्त हुए और जैसे सर्पोंके भूषणवाले महादेवजीने कुछ कर्त्तव्य किया, यह सब यत्नसे वर्णन करो ॥ ८ ॥ वैशम्पायन बोले, कि हे राजन् ! जिस प्रकार कृष्ण भगवान् कैलासको प्राप्त हुए और जैसे महादेवजीको देखा, तिस वृत्तान्तको तुम सावधान होकर सुनो ॥ ९ ॥ और जैसे कृष्ण भगवान्ने तप किया, और जैसे मुनिजनभी प्राप्त हुए, ऐसे इन दोनोंके वृत्तान्तको हे नरोत्तम ! अवण करो ॥ १० ॥

जैसे वेदोंपासजीने मुझसे कहा है, उन गुरुवाहनवाले श्रीकृष्णचंद्रको नमस्कार कर मैं कहता हूं ॥ ११ ॥ यह आख्यान यथाशक्ति जैसा सुना है, कहता हूं, शुश्रूषासे रहित और नृशंस व तपसे रहित ॥ १२ ॥ तथा मूलके आगे यह पुण्यकथा कहनी उचित नहीं है, और यह आख्यान पुण्यवानोंको पुण्यरूप है. स्वर्ग और यशका देनेवाला धन्य सब कालमें बुद्धि और शुद्धिका करनेवाला है ॥ १३ ॥ पुण्यात्माओंको नित्यप्रति ध्यान करने योग्य है, कारण कि यह वेदके अर्थोंसे निश्चित है, उपनिषदोंमें इसका वर्णन है, जिसकी महात्मा जन आलोचना करते हैं कार्यकारणमें प्राप्त हुए हरिहरको जीवेशरूपसे वर्णन करते हैं, जीवईश्वरमें सर्वथा अनेक शास्त्रोंमें प्रतिपादन किया है, किसी पुराणमें विष्णु, किसीमें शिव पक्ष लेकर वर्णन द्वेपायनोऽथ भगवान्यथा प्रोवाच मां तथा ॥ नमस्कृत्य प्रवक्ष्यामि केशवं स्वगवाहनम् ॥ ११ ॥ यथाशक्ति यथाप्रज्ञं शृणु यत्नेन सुव्रत ॥ न चाशुश्रूषवे वाच्यं नृशंसायातपस्विने ॥ १२ ॥ नानधीताय वक्तव्यं पुण्यं पुण्यवतां सदा ॥ स्वर्ग्यं यशस्यं धन्यं च बुद्धिशुद्धिकरं सदा ॥ १३ ॥ ध्येयं पुण्यात्मनां नित्यमिदं वेदार्थनिश्चितम् ॥ अनेकारण्यसंयुक्तं सेवन्ते नित्यमीदृशम् ॥ १४ ॥ मुनयो वेदनिरता नारदाद्यास्तपोधनाः ॥ अत्यद्भुतं महापुण्यं वृत्तं कैलासपर्वते ॥ १५ ॥ शिवयोर्देवयोस्तत्र हरेश्चैव भवस्य ह ॥ हतेष्वसुरसंघेषु नरकादिषु भूमिषु ॥ १६ ॥ हतेष्वथ नृपेष्वेवं किंचिच्छिष्टेषु शत्रुषु ॥ ज्ञासति स्म सदा विष्णुः पृथिवीं पुरुषोत्तमः ॥ १७ ॥ द्वावत्यां जगन्नाथो वसन्वृष्णिभिरीश्वरः ॥ रुक्मिण्या संगतो देवो वसन्स्तत्र पुरे हरिः ॥ १८ ॥ कदाचिच्च तथा सार्द्धं ज्ञेते राज्ञो जगत्पतिः ॥ विहरंश्च यथायोगं प्रीतः प्रीतियुजा तथा ॥ १९ ॥

किया है, इसमें विष्णु जीवरूप और शिव ईश्वररूपसे प्रतिपादन किया जाता है ॥ १४ ॥ इस आख्यानको वंदनिरत नारद आदि मुनि नित्य सेवते हैं, और कैलासपर्वतमें ॥ १५ ॥ विष्णुका और शिवका अद्भुतरूप वृत्तान्त हुआ है, जब नरकासुर आदि दैत्योंके समूह मारे गये ॥ १६ ॥ और राजाओंके मरणपर कुछेक शत्रु बाकी रह गये, तब श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम भगवान् पृथ्वीमें शिक्षा देने लगे ॥ १७ ॥ और द्वारकापुरीमें वृष्णियोंके साथ वह जगन्नाथ वास करते रुक्मिणीके संग रहने लगे ॥ १८ ॥ किसी समयमें रुक्मिणीके संग राज्ञिमें क्रीडा करनेवाले और प्रसन्न हुए जगत्पति

विष्णु शयन करने लगे ॥ १९ ॥ उस समय सुवर्णके भूषण पहरे रुक्मिणी कहने लगी कि हे देवेश ! हे माधव ! सोनेके गहनोंको धारण करनेवाले, आनन्दके देनेवाले ॥ २० ॥ अतिबलवान् और रूपसे संपन्न तुम्हारे समान रूपवाले वृष्णिवंशवालोंके नेता और अतिवीर्यवान् और तपोनिधि ॥ २१ ॥ सब शास्त्रके अर्थमें दक्ष और राजविद्यामें प्रवीण आदि गुणोंसे युक्त पुत्रकी इच्छा करती हूं, सो हे भेठ ! सो तुम देनेको योग्य हो ॥ २२ ॥ आपमें सबका दातृत्व स्थित है, तुम सब जगत्के कर्ता हो, दाता हो भोक्ता हो, और जगत्पति हो ॥ २३ ॥ विशेषकर शुश्रूषा करनेवाले भृत्योंके तुमही

अथोवाच तदा देवी रुक्मिणी रुक्मभूषणा ॥ पुत्रमिच्छामि देवेश त्वत्तो माधव नन्दनम् ॥ २० ॥ बलिनं रूपसंपन्नं त्वयेव सदृशं प्रभो ॥ वृष्णीनामपि नेतारं वीर्यवन्तं तपोनिधिम् ॥ २१ ॥ सर्वशास्त्रार्थकुशलं राजविद्यापुरस्कृतम् ॥ एवमादिगुणैर्युक्तं दातुमर्हसि सत्तम ॥ २२ ॥ त्वयि सर्वस्य दातृत्वं नित्यमेव प्रातिष्ठितम् ॥ त्वं हि सर्वस्य कर्ता च दाता भोक्ता जगत्पतिः ॥ २३ ॥ विशेषतस्तु भृत्यानां शुश्रूषा नियतात्मनाम् ॥ वक्तव्यं किमु देवेश यदि भक्तास्मि केशव ॥ २४ ॥ अनुग्रहो यदि स्यान्मे देवदेव जगत्पते ॥ दातुमर्हसि पुत्रं त्वं वीर्यवन्तं जनार्दन ॥ २५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ इत्युक्तो देवदेवेशः प्रियया प्रीयमाणया ॥ तया महिष्या रुक्मिण्या रुक्मिशत्रुर्यदृढहः ॥ २६ ॥ प्रोवाच वचनं काले रुक्मिणी यादवेश्वरः ॥ दातास्मि तादृशं पुत्रं यं त्वमिच्छसि भामिनि ॥ २७ ॥ नित्यं भक्तासि मे देवि नात्र कार्या विचारणा ॥ अवश्यं तव दास्यामि पुत्रं शत्रुनिवर्हणम् ॥ २८ ॥ पुत्रेण लोकात् जयति सतां काम-दुषा हि ये ॥ नरकं प्रुदिति ख्यातं दुःखं च नरकं विदुः ॥ २९ ॥

स्वामी हो, हे देवेश ! विशेष क्या कहूं, आपमें मेरी पूर्ण भक्ति है ॥ २४ ॥ यदि मुझपर अनुग्रह है तो हे जनार्दन ! वीर्यवाले पुत्रको तुम देनेको योग्य हो ॥ २५ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार प्रिया रुक्मिणीके वचन सुन रुक्मके शत्रु और यदुवंशमें उत्पन्न होनेवाले ॥ २६ ॥ श्रीकृष्ण रुक्मिणीसे समयके अनुसार कहने लगे कि हे भामिनी ! जैसे पुत्रकी तुम इच्छा करती हो वैसेही पुत्रको मैं तुम्हें दूंगा ॥ २७ ॥ तुम मेरी नित्य भक्तिवाली हो इसमें संशय नहीं कर विषयही शत्रुओंको जीतनेवाला तुम्हें पुत्र दूंगा ॥ २८ ॥ पुत्रसे उच्चम लोकमें मनुष्य प्राप्त होते

हैं, पुत्र सत्पुरुषोंको कामवेत्तु है, और पुत्राग्न नरकका है अथवा दुःखका है ॥ २९ ॥ तिसरे जो रक्षा करे तिसको पुत्र कहते हैं, ऐसे पुत्रको इस लोकमें और परलोकमें चाहते हैं. हे प्रिये ! पुत्रवाले पुरुषको अनन्त शुभरूप लोक प्राप्त होते हैं ॥ ३० ॥ और प्रथम पति प्रार्थामें प्रवेश करता है, फिर माताके पेटमें गर्भरूप होकर रहता है, फिर नये रूपको धारण कर दशवें महीनेमें जन्मता है ॥ ३१ ॥ पुत्रवाले मनुष्यसे इन्द्रजी भय मानता है, और पुत्रसे रहित मनुष्य उच्चम लोकोंको नहीं प्राप्त हो सकता, परन्तु कुपुत्रसे बंध्या प्रार्थ्या रहनी उत्तम है ॥ ३२ ॥ कुपुत्रसे नरक होता है, और सुपुत्रसे

पुद्गलाणात्ततः पुत्रमिहेच्छति परत्र च ॥ अनन्ताः पुत्रिणो लोकाः पुरुषस्य प्रिये शुभाः ॥ ३० ॥ पतिर्जायां प्रविशति गर्भे भूत्वा स मातरम् ॥ तस्यां पुनर्नवो भूत्वा दशमे मासि जायते ॥ ३१ ॥ पुत्रवन्तं विभेतीन्द्रः किन्तु तेनाजितं भवेत् ॥ नापुत्रो किन्तु लोकां कुपुत्राद्वन्ध्यता वरा ॥ ३२ ॥ कुपुत्रो नरके यस्मात्सुपुत्रात्स्वर्ग एव हि ॥ तस्मादिनीतं सत्पुत्रं श्रुतवन्तं दयापरम् ॥ ३३ ॥ विद्या विनये यस्माद्विद्यायुक्तं सुधार्मिकम् ॥ इच्छन्पुत्रं पुत्रकामः पुरुषो यत्नवान्बुधः ॥ ३४ ॥ तस्मादास्यामि ते पुत्रं विद्यावन्तं सुधार्मिकम् ॥ एष गच्छामि पुत्रार्थं कैलासं पर्वतोत्तमम् ॥ ३५ ॥ तत्रोपास्य महादेवं शंकरं नीललोहितम् ॥ ततो लब्ध्वास्मि पुत्रं ते भवद्भूतहिते रतात् ॥ ३६ ॥ तपसा ब्रह्मचर्येण भवं शंकरमव्ययम् ॥ तोषयित्वा विरूपाक्षमादिदेवमजं विभुम् ॥ ३७ ॥ गमिष्याम्यहमद्येव द्रष्टुं शंकरमव्ययम् ॥ स च मे दास्यते पुत्रं तोषितस्तपसा मया ॥ ३८ ॥

स्वर्ग होता है, इस कारण विनीत श्रुतवाला दयावान् हो ॥ ३३ ॥ विद्यासे विनय होती है, इसलिये विद्यावान् धार्मिक पुत्रकी पुरुष इच्छा करे ॥ ३४ ॥ इस कारण विद्यावान् धार्मिक पुत्रको तुम्हें दूंगा, अब पुत्रकी प्राप्तिके अर्थ पर्वतोंमें उच्चम कैलासपर्वतको जाता हूं ॥ ३५ ॥ तहां नीललोहितरूप महादेवजीकी उपासना कर प्राप्तिपर दया करनेवाले महादेवजीसे पुत्रको प्राप्त करूंगा ॥ ३६ ॥ और तपसे ब्रह्मचर्यसे अविनाशी विरूपाक्ष आविर्देव अज विभुको प्रसन्न करूंगा ॥ ३७ ॥ अविनाशी महादेवजीके देखनेको मैं अभी गमन करता हूं, तपसे प्रसन्न हो महादेवजी मुझे पुत्र देने ॥ ३८ ॥

तहां जाय पार्वतीसहित महादेवको नमस्कार कर पवित्र मुनियोंसे युक्त तपोमयी ॥ ३९ ॥ अग्निहोत्रोंसे आकुल, दिव्य मंजाबलसे प्रावित मृग और पक्षियोंसे युक्त, सिंह और हाथियोंके समूहसे व्याप्त ॥ ४० ॥ झड़बेरीके फलोंसे पूरित और वानरोंसे शोभित वृक्षोंवाली, तथा नेत्र आदिसे आरूढ महावृक्षोंवाली, केलोंसे मण्डित ॥ ४१ ॥ वेदोंके तत्त्वार्थके विचारमें निपुण और प्रमाणमें कुशल ॥ ४२ ॥ मुनियोंसे युक्त यह एक है और यह तत्त्व है, ऐसे निश्चित मनवाले मुनियोंसे उपास्यमान ॥ ४३ ॥ और इतिहास पुराणके जाननेवाले महर्षि और सिद्धोंसे सेव्यमान और स्वर्गको जानेके

तत्र गत्वा महादेवं नमस्कृत्य सहोमया ॥ प्रविश्य बदरीं पुण्यां मुनिजुष्टां तपोमयीम् ॥ ३९ ॥ अग्निहोत्राकुलां दिव्यां गङ्गाम्बुप्रावितां सदा ॥ मृगपक्षिसमायुक्तां सिद्धिप्रशताकुलाम् ॥ ४० ॥ बदरीफलसंपूर्णां वानरक्षोभितद्रुमाम् ॥ वेत्रारूढमहावृक्षां कदलीखण्डमण्डिताम् ॥ ४१ ॥ मुनिभिर्वेदतत्त्वार्थविचारनिपुणेः सदा ॥ वेदनिश्चिततत्त्वार्थैः प्रमाणकुशलेर्युताम् ॥ ४२ ॥ इदमेकमिदं तत्त्वमिति निश्चितमानसेः ॥ उपास्यमानामन्यत्र सिद्धेः सिद्धार्थतत्परेः ॥ ४३ ॥ इतिहासपुराणज्ञैः सेव्यमानां महर्षिभिः ॥ गच्छद्भिः स्वर्गनिलयं परित्यज्य कलेवरम् ॥ ४४ ॥ प्रसिद्धां महतीं देवीं यास्यामि सुकृतालयाम् ॥ इत्युत्तवा विररामेव देवदेवो जनार्दनः ॥ ४५ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भवि० कैलासयात्रायां त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ प्रभातायां तु सर्वयां गन्तुमेच्छन् जनार्दनः ॥ दुताग्निः कृतकल्याणः समाप्तवरदक्षिणः ॥ १ ॥ गश्च दत्वाथ विप्रेभ्यो नमस्कृत्य द्विजोत्तमान् ॥ आस्थानमण्डपं कृष्णः प्राक्विश जगत्पतिः ॥ २ ॥ आसनं महादास्थाय वृष्णीनाहूय सर्वशः ॥ बलभद्रं शिनेः पुत्रं हार्दिक्यं शुक्रसारणौ ॥ ३ ॥

समय इस शरीरको ॥ ४४ ॥ त्यागनेवाले जनोंसे पूर्ण शक्ति सुकृत देवस्थानरूप बदरीपुरीमें प्रवेश कर स्थित हुंगा, इस प्रकार कहकर देवदेव जनार्दन श्रीकृष्ण विरामको प्राप्त हुए ॥ ४५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि प्राषाणं कैलासयात्रायां त्रिसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७३ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि जब रात्रि खतीत हो गई, प्रजात हुआ, तब मनन करनेकी इच्छावाले श्रीकृष्ण अग्निमें इवन कर और दक्षिणा दान दे ॥ १ ॥ ब्राह्मणोंको मोदान देकर ब्राह्मणोंको नमस्कार कर जगत्पति श्रीकृष्ण अपने बैठनेके स्थानमें प्रवेश करते हुए ॥ २ ॥ तहां सुंदर आसनपर स्थित हो

सब वृष्णिवंशको और बलदेव, सात्यकि, कृतवर्मा, शुक, सारण ॥ ३ ॥ उग्रसेन और नीतिमें कुशल महाबुद्धिमान् उद्वह किं जिसकी बुद्धिके आभय हो सब यादव सुखपूर्वक जीते हैं ॥ ४ ॥ सब यदु और सब वृष्णियोंके नेता और धर्ममें तत्पर और जिस महात्माकी नीतिसे देवताभी भय मानते हैं ॥ ५ ॥ जिसकी बुद्धिके वशसे विष्णु सब पृथ्वीको शिक्षित करते हुए उन वृष्णियोंमें अठ बीर और देवताओंकी समान कान्तिवाले उद्वह ॥ ६ ॥ और अन्यभी सब यादवोंसे श्रीकृष्ण भगवान् कहने लगे, कि हे यादवो ! मेरे वचनको तुम सब श्रवण करो, हे उद्वह ! मेरे पिताने जो मेरे अर्थ वचन कहा है, वहभी

उग्रसेनं महाबुद्धिसुद्धं नीतिमत्तरम् ॥ यस्य बुद्धिं समाश्रित्य जीवते यादवाः सुखम् ॥ ४ ॥ नेता च यदुवृष्णीनां स तु धर्मपरो यदा ॥ यस्य विभ्यति देवाश्च नीतिस्तस्य महात्मनः ॥ ५ ॥ यस्य बुद्धिश्चाद्विष्णुः शशास पृथिवीं सदा ॥ तं च वृष्णिवरं वीरसुद्धं देवसुप्रभम् ॥ ६ ॥ अन्यानपि यदुन्सर्वानुवाच भगवान् हरिः ॥ शृण्वन्तु मम वाक्यानि यादवाः सर्व एव हि ॥ शृणु चापि वचो मम पितरुद्वह मे सखे ॥ ७ ॥ बाल्यात्प्रभृति यो यन्नो मम दुष्टनिवर्हणे ॥ प्रत्यक्षं भवता दृष्टं पूतनानिघनं नृप ॥ ८ ॥ केशी च निहतो बाल्ये मया बालेन यादवाः ॥ गोवर्द्धनोद्धतः शैले मापश्च परिपालिताः ॥ ९ ॥ अभिषिक्तोऽस्मि शक्रेण देवानामग्रतः स्थितः ॥ कंसोऽपि निघनं नीतो मया चाणूरमुष्टिको ॥ १० ॥ उग्रसेनोऽभिषिक्तश्च कृता द्वापवती मया ॥ अन्ये चापि नृपा राजन्वलिनो निहता मया ॥ ११ ॥ योऽपि वीरो जरासन्धो निगृहीतो बलान्मया ॥ भीमेन बाल्मिकी राजन्नयेन मम यादवाः ॥ १२ ॥ शृगालो निहतः संख्ये गोमन्ताद्वच्छता मया ॥ योऽपि वीरो दुरात्माऽसौ दानवो नरको हतः ॥ १३ ॥

सुनो ॥ ७ ॥ मैंने दुष्टोंके निग्रह करनेमें बाल्यअवस्थासे यत्न किया है सो प्रथम पूतना मारी है, यह प्रत्यक्ष आपने देखा है ॥ ८ ॥ पीछे केशी मैंने बालकपनेमें मारा, गोवर्द्धन पर्वत धारण किया है, और गायोंकी पालना की ॥ ९ ॥ फिर इन्द्रने मेरा अभिषेक किया है, इसके पीछे चाणूर मुष्टिक करके सहित कंसभी मारा है ॥ १० ॥ और उग्रसेनका अभिषेक कर द्वारकापुरी बसाई, औरभी बहुतसे बलवाले राजा मैंने मारे ॥ ११ ॥ और जरासंध राजाभी बलवाले भीमसेनके हाथसे मैंने मरवा दिया ॥ १२ ॥ गोमंतपर्वतसे नमन करते मैंने युद्धमें शृगालराजाकोभी मारा, बड़े वीर दुरात्मा

नरकासुरकोभी मैंने मारा ॥ १३ ॥ इस प्रकार यह लोक मैंने निष्कण्टक कर दिया है, परन्तु जौमासुरका सखा वीर नृप हुआ है ॥ १४ ॥ वह पौंड्र वीर्यवालोंका नेता और सब कालमें मेरा बैरी, द्रोणाचार्यका शिष्य, और बली ब्रह्मासुरको जाननेवाला पण्डित ॥ १५ ॥ शासकोंको जाननेवाला, नीतिमान्, सबोंका नेता और यत्नवाला योधा, युद्धप्रिय, दूसरे परशुरामजीकी समान ॥ १६ ॥ हमारा एकांत द्वेषी, सब कालमें मेरे छिद्रको ढूँढनेवाला पौंड्र राजा छिद्रको प्राप्त होतेही हमारी पुरीको पीड़ित करेगा ॥ १७ ॥ और वह अल्पसाध्य राजा नहीं है, वह बड़ा बली पुंड्रेव है. उससे

निष्कण्टकमिमं लोकं कृतवाव्राजसत्तमाः ॥ किं तु वीरो नृपो यज्ञे सखा भौमस्य यादवाः ॥ १४ ॥ पौण्ड्रो वीर्यवतां नेता द्रष्टा चातो सदा मम ॥ शिष्यो द्रोणस्य राजेन्द्रो बली ब्रह्मासुरविकृती ॥ १५ ॥ सास्त्रज्ञो नीतिमान्द्रोणाशत्रेता सर्वस्य यत्नवान् ॥ योद्धा युद्धप्रियो राजा जामदग्न्य इवापरः ॥ १६ ॥ एकान्तशत्रुरस्माकं छिद्रान्वेषी सदा मम ॥ ब्रह्मधिष्वते पुरीं योद्धा छिद्रं यदि लभेत सः ॥ १७ ॥ न ह्यल्पसाध्यो बलवान् पुण्ड्रस्येशो नृपोत्तमाः ॥ यत्ता भवन्तस्तिष्ठन्तु प्रगृहीतशरासनाः ॥ १८ ॥ यथा न बाधते राजा पुरीं यदुकुलाश्रयाम् ॥ अहं तु यास्ये कैलासं कुतश्चित्कारणानृपाः ॥ १९ ॥ शंकरं द्रष्टुकामोऽस्मि भूतभावनभावनम् ॥ यावदाममनं मह्यं तावद्यत्ता भवन्तिह ॥ २० ॥ मया विरहितां चेमां यदि जानाति पुण्ड्रकः ॥ आगमिष्यति राजेन्द्रो योत्स्यते च पुरीमिमाम् ॥ २१ ॥ इमां निर्यादवीं कर्तुं अक्रोतीति च मे मतिः ॥ यत्ता भवत राजेन्द्राः स्वङ्गे पाशैः परश्वधैः ॥ २२ ॥

हे यादवो ! तुम धनुष बाण आदिसे सावधान रहियो ॥ १८ ॥ जिससे पौंड्रक राजा इस द्वारकापुरीको बाधा नहीं दे. हे यादवो ! मैं किसी कारणसे कैलासको ॥ १९ ॥ भूतभावन महादेवजीके देखनेको जाता हूँ, जबतक बेरा आगमन हो, तबतक सावधान रहो ॥ २० ॥ अज्ञरहित यदि इस पुरीको जान लेगा तो पौंड्रराजा इस पुरीमें आकर युद्ध करेगा ॥ २१ ॥ और वह राजा इस पुरीको यादवोंसे रहित कर सकता है, यह मैं मानता हूँ, इस कारण तलवार, पाश, फरसा, भिदिपाल, पाषाण कर्षक मंत्रादिसे स्वस्तिकादिसे तैयार हो. शत्रुओंको धारण कर सदा सावधान रहो ॥ २२ ॥

द्वारकापुरीके सब दरवाजोंको फिवालोंसे बंद कर दो ॥ २३ ॥ एक बड़े द्वारको जाने आनेके निमित्त खुला रूख हो और जो राजाके सम्मुख गमन करे, वह छापा लगवाकर गमन कर सके ॥ २४ ॥ और छापेसे रहित द्वारपालके देखते कोईभी प्रदेश नहीं कर सके, जबतक मेरा आममन न हो, तबतक ऐसे होना चाहिये ॥ २५ ॥ और न शिकार खेलनेको जाना चाहिये और न पुरीसे बाहर क्रीडा करनी चाहिये और आनेजानेमें अपने पराये पुरुषको सदा जानना चाहिये ॥ २६ ॥ जबतक मेरा आममन हो, तबतक यह सब करना इस प्रकार सब यादवोंसे कहकर फिर सात्यकिसे कहने लगे ॥ २७ ॥

पाषाणेः कर्षणीयैश्च सन्नद्धा भवत स्वकैः ॥ पिपाय च कषाटानि महाद्वाराणि यत्नतः ॥ २३ ॥ एक एव महाद्वारो गमनागमने सदा ॥ मुद्रया सह गच्छन्तु राज्ञो ये गन्तुमीप्सवः ॥ २४ ॥ न चासुद्रः प्रवेष्टव्यो द्वारपालस्य पश्य ॥ यावदागमनं मह्यं तावदेवं भविष्यति ॥ २५ ॥ मृगया नात्र कर्तव्या न च क्रीडा बहिः पुरात् ॥ ज्ञातव्याश्च परे स्वे च गमनागमने सदा ॥ २६ ॥ एवमादिक्रिया कार्या यावदागमनं मम ॥ इत्युक्त्वा यादवान्सर्वान् सात्यकिं पुनराह च ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ सात्यके शृणु मद्वाक्यं यत्तो भव युधांवर ॥ त्वं तु खड्गी गदी भूत्वा चापपाणिस्तनुव्रवान् ॥ १ ॥ तिष्ठ यत्नेन रक्षस्व पुरीं बहुनृपाश्रयाम् ॥ न च निद्रा त्वया कार्या राज्ञो यदुवृषप्रभो ॥ २ ॥ न च व्याख्या त्वया कार्या शास्त्राणां शास्त्रतत्पर ॥ न च वादस्तव्याः कार्यो वादिभिः सह वृष्णिष ॥ ३ ॥ त्वं हि योद्धा बलिर्ज्ञाता धनुर्वेदाख्यवेदवित् ॥ तथा कुरु यथा वीर नोपहास्या भवेदियम् ॥ ४ ॥

इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि मापायां कैलासयात्रायां चतुःसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७४ ॥ श्रीकृष्ण भगवान् बोले कि हे सात्यके । मेरे वाक्यको श्रवण करो. हे युधांवर ! सावधान हो और तलवार गदा धनुष आदि हथियारोंको ग्रहण करो ॥ १ ॥ इस यत्नसे पुरीकी रक्षा करो और हे प्रिय यदुव्रष्ट ! तुम रात्रिमें शयन न करना ॥ २ ॥ हे शास्त्रकुशल ! उस समय शास्त्रकी व्याख्याभी न करना हे वृष्णिपति ! वादीजनोंके संग वादभी न करना ॥ ३ ॥ और तुमही योद्धा हो, तुमही बली हो और तुमही धनुर्वेदको जाननेवाले हो हे वीर ! ऐसे करना जिस प्रकार हम उपहास्यताको प्राप्त न हो ॥ ४ ॥

तब सात्यकि बोला कि हे जनार्दन ! अपनी शक्तिपूर्वक तुम्हारे वचनों को करूंगा. हे जगन्नाथ ! तुम्हारी आज्ञा में सब कालमें धारण करूंगा ॥ ५ ॥
 हे माधव ! बलदेवजीके भृत्यके समान होकर विचरूंगा और जबतक आपका आगमन होगा तबतक यत्नसे रहूंगा ॥ ६ ॥ हे गोविंद ! तुम्हारी कृपा
 जो मुझपर रहेगी, तो शत्रुओंके निग्रह करनेमें मुझे कुछभी दुस्साध्य नहीं ॥ ७ ॥ जो इन्द्र, धर्मराज, कुबेर, वरुण यह आवें तो इन देवताओंकोभी
 जीत सकता हूं फिर एक मनुष्यरूप पौंड्रराजाके जीतनेकी कौन कथा है ॥ ८ ॥ हे प्रिय ! तुम अपने कार्यको गमन करो. मैं निरन्तर सावधान हूं

सात्वकिरुवाच ॥ करिष्यामि क्वस्तुभ्यं यथाशक्ति जनार्दन ॥ आज्ञा तव जगन्नाथ धार्या यत्नेन मे सदा ॥ ५ ॥ भृत्यवत्प्रचरिष्यामि
 कामफलस्य माधव ॥ यावदागमनं तुभ्यं तावत्स्थास्यामि यन्नतः ॥ ६ ॥ प्रसादस्तव गोविन्द यदि स्यान्मयि माधव ॥ किं नाम
 मे च दुःसाध्यं शत्रूणां निग्रहे रणे ॥ ७ ॥ यदि शक्यं यमं वापि कुबेरमपि पाशिनम् ॥ सर्वानेतन्निजेष्यामि किमु पोण्डं नृपो-
 त्तमम् ॥ ८ ॥ मच्छ कार्यं कुरुष्वेदं यतोऽहं सततं हरे ॥ उद्धवं पुनराहं कृष्णः पद्मनिभेक्षणः ॥ ९ ॥ शृणुद्व त्वं वाक्यं मे
 कुर्यास्त्वेतत्प्रयत्नवान् ॥ रक्ष्या नयेन राजेन्द्र पुरीं द्वाखती त्वया ॥ १० ॥ यतो भव सदा तात कुरु साहाय्यमत्र नः ॥ लब्धा मम
 समुत्पन्ना वदतस्तव साम्प्रतम् ॥ ११ ॥ त्वं हि नेता समन्तस्य विद्यापारस्य सर्वतः ॥ को नु शक्ष्यति मेधावी वक्तुं विद्यावतः
 पुरः ॥ १२ ॥ यत्कार्यं तद्भवान्वेत्ति ह्यकार्यं वापि सर्वतः ॥ अतोऽहं विरमे तात वक्तुं संप्रति वृष्णिषु ॥ १३ ॥ उद्धव उवाच ॥
 किमिदं तव गोविन्द वृत्तं मां प्रति प्रभो ॥ अहो प्रसन्नता मया किं तु प्रीतिरियं तव ॥ १४ ॥

फिर कमललोचन भीष्म उद्धवजीसे कहने लगे ॥ ९ ॥ हे उद्धव ! तुम यत्नपूर्वक मेरे वचन करना नीतिपूर्वक इस पुरीकी रक्षा करना तुमको
 उचित है ॥ १० ॥ हे तात ! सावधान होकर हमारी सहाय्य करना और तुम्हारे आगे कहनेमें मुझे लाज आती है ॥ ११ ॥ क्योंकि सब विद्याके
 पारगामी तुमही नेता हो, इस कारण विद्यावालेके सम्मुख कौन शिक्षा देनेको समर्थ है ॥ १२ ॥ कार्य और अकार्यको तुम भली भाँतिसे जानते हो.
 हे वृष्णिपाठ ! इस कारण आपके सम्मुख कुछ विशेष कहना उचित नहीं ॥ १३ ॥ उद्धवजी बोले कि हे गोविंद ! यह आप कैसे वचन मुझसे

कहते हो या तो आपकी प्रसन्नता है, या भीतिसे कहते हो ॥ १४ ॥ हे जगन्नाथ ! आपके विस्तारको मैं जानता हूं, जिसपर तुम प्रसन्न होते हो तिसको क्या नहीं होता, तुम मुझपर प्रसन्न होनेसे यह कहते हो ॥ १५ ॥ तुमही सब जन्मदके कर्ता और हर्ता हो, तथा सब कार्योंके उत्पत्ति-स्थान हो, वक्ता श्रोता और प्रमाणको जाननेवाले धाता ध्यानव्य और ध्येय ऐसा तुमको ब्रह्म जाननेवाले कहते हैं आप शत्रुओंके जीतनेवाले और देवताओंकी रक्षा करनेवाले हो ॥ १६ ॥ १७ ॥ तुम्हारीही कृपासे इतनेही होकर हम जीते हैं नीतिको जाननेवालेभी तुम हो, और सब कार्योंके जानाम्यहं जगन्नाथ प्रसादस्यैष विस्तरः ॥ यस्य प्रसन्नो भवसि तस्य किं नास्ति केशव ॥ १५ ॥ त्वं हि सर्वस्य जगतः कर्ता हर्ता प्रधानतः ॥ प्रभवः सर्वकार्याणां वक्ता श्रोता प्रमाणवित् ॥ १६ ॥ ध्याता ध्यानमयो ध्येय इति ब्रह्मविदो विदुः ॥ जेता देवारिपूणां च गोप्ता नाकसर्दा भवान् ॥ १७ ॥ त्वं नाथा वयमेवेति जीवामो निहतद्विषः ॥ इयं नीतिस्त्वं मन्ये नेता नीतिर्यतो भवान् ॥ १८ ॥ को नु नाम नयो वेद त्वां विना साम्प्रतं वद ॥ नीतिस्त्वं सर्वकार्याणामिति मे निश्चिता मतिः ॥ १९ ॥ दुर्गाढो नवमार्गोऽयमित्याहुस्तद्विदो जनाः ॥ चतुर्धा प्रोच्यते नीतिः सामदाने जनार्दन ॥ २० ॥ दण्डो भेदो मनुष्याणां निग्रहावग्रहे सदा ॥ दण्डयेषु दण्डमिच्छन्ति सामान्यं तु नये हरे ॥ २१ ॥ बलवत्स्वथ दानं तु त्रयाणामप्यगोचरे ॥ प्रयोक्तव्यो महाभेद इति नीतिमतां मतम् ॥ २२ ॥ तेषु तेष्वथ सर्वेषु प्रमाणं त्वां विदुर्बुधाः ॥ किमत्र बहुनोक्तेन सर्वं त्वयि समर्पितम् ॥ २३ ॥

नीतिरूप आप तुम हो ॥ १८ ॥ और तुम्हारे सिवाय नीतिको जाननेवाला कौन है सो तो आप कहिये आप सब कार्योंकी नीति हो, यह मेरी निश्चित मति है ॥ १९ ॥ यह नीतिपार्श्व दुर्घट है ऐसा नीतिके जाननेवाले कहते हैं, हे जनार्दन ! चार प्रकारसे नीति कही है साम, दान ॥ २० ॥ दण्ड, भेद, यह मनुष्योंके निग्रह अवग्रहमें प्रयोग किया जाता है, दंडके देने योग्योंको दंड देना उचित है, और साधान्यको साम उचित है ॥ २१ ॥ और बलवानोंमें दानका देना उचित है और इन तीनोंसे जो वशमें नहीं आवे तो भेद करना उचित है, ऐसे नीतिवालोंका मत है ॥ २२ ॥ और तहां तहां सब कार्योंमें विद्वान् आपको प्रमाणरूप मानते हैं, बहुत कहनेसे क्या है, सब कार्य आपहीमें समर्पित है ॥ २३ ॥

वैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार कह नीतिको जाननेवाले उद्धवजी शान्त हो गये तब भगवान् श्रीकृष्ण ॥ २४ ॥ यादवोंकी सभामें बड़ी भुजावाले ॥ ल-
देवजी और राजा उग्रसेनसे कहने लगे ॥ २५ ॥ पीछे फिर श्रीकृष्ण बलदेवजीसे कहने लगे कि आप प्रमाद नहीं करना सब कालमें यत्नवान् रहना ॥ २६ ॥
हे महाबाहो ! जहां तुम स्थित रहोगे, तहां जगत्को क्या पीड़ा हो सकती है ? इस कारण हे आर्य ! सब कालमें नदाको धारण करना, न पीड़ा न
करना ॥ २७ ॥ सब यत्नसे इस द्वारकापुरीकी रक्षा करो और जैसे हम उपहास्यताको प्राप्त न हों तैसे करो नदा ग्रहण करो ॥ २८ ॥ और सब कालमें उत्साह

वैशम्पायन उवाच ॥ इत्युत्तवा विररामेव उद्धवो नीतिमत्तरः ॥ ततः स भगवान्विष्णुदेवमेव नृपोत्तम ॥ २४ ॥ कामपालं महत्वा-
दुमुवाच यदुसंसादि ॥ उग्रसेनं नृपं राजंस्तथा हार्दिक्यमेव च ॥ २५ ॥ कामपालं पुनर्विष्णुरिदं प्रोवाच तत्त्ववित् ॥ न प्रमादस्त्वया
कार्यः सर्वदा यत्नवान् भव ॥ २६ ॥ स्थिते त्वयि महाबाहो का पीडा जगतो भवेत् ॥ गदी भव सदा त्वार्यं न क्रीडा सर्वदा भवेत् ॥ २७ ॥
रक्ष त्वं सर्वदा यत्नात्पुरीं द्वारवतीं प्रभो ॥ नोपहास्या यथा स्याम तथा कुरु गदी भव ॥ २८ ॥ उत्साहः सर्वदा कार्यों
निरुत्साहो न यत्नतः ॥ बाढमित्यब्रवीद्रामः कृष्णं वृष्णि कुलोद्भवम् ॥ २९ ॥ वृष्णयः सर्वं पृथैते स्वं स्वं सद्यः समापयुः ॥ गन्तु-
मेच्छन्मन्त्रायः कैलासं पर्वतोत्तमम् ॥ ३० ॥ इति श्रीम० स्त्रिलेखे हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७५ ॥
वैशम्पायन उवाच ॥ ततः संचिन्तयामास गरुडं पक्षिपुद्भवम् ॥ आगच्छ त्वारितं ताक्ष्यं इति विष्णुर्जगत्पतिः ॥ १ ॥ ततः स
भगवान्ताक्ष्यो वेदराशिरिति स्मृतः ॥ बलवान्विक्रमी योगी शास्त्रनेता कुरुद्रुह ॥ २ ॥

करना और यत्नसे भी उत्साहका त्याग न करना, इस वचनको सुन बलदेवजी श्रीकृष्णसे कहने लगे कि आपका कहना ठीक है सब किशोरा जायना ॥ २९ ॥
इसके उपरान्त सब यादव अपने अपने स्थानको चले गये तब श्रीकृष्ण भगवान् कैलासपर्वतमें गमन करनेकी इच्छा करने लगे ॥ ३० ॥
इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेखे हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां पञ्चसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७५ ॥ वैशम्पायन कहने लगे, तदनंतर श्रीकृष्णने
पक्षियोंमें श्रेष्ठ गरुडजीको स्मरण किया अर्थात् यह विचार जगत्पतिने किया कि हे गरुड ! शीघ्र आ ॥ १ ॥ हे राजन् ! उसी समय वेदोंके जानने-

वाले अतिबलवान् और योगशास्त्रके ज्ञानेवाले ॥ २ ॥ यज्ञमूर्ति, पुराणात्मा, साममूर्द्धा और त्रिविध ऋग्वेद रूप पंखोंवाले विंगड और जटिलकी आल-
तिवाले ॥ ३ ॥ ताबेके समान तुंडवाले अमृतको हरनेवाले शत्रुओंको जीतनेवाले महाशिरवाले और साँके पेरी कमलके फूलोंकी समान नेत्रोंवाले
साक्षात् दूसरे विष्णु भगवान् ॥ ४ ॥ विष्णु श्रीकृष्णके वाहन दैत्योंकी शिष्टियोंकी गर्तको खंडन करनेवाले राक्षस और दैत्योंके समुद्रको पंखोंके बलसे
जीतनेवाले ॥ ५ ॥ महाबली गरुडजी श्रीकृष्णके अपने प्रगट हो गोटोंसे पृथ्वीमें पड बोले, हे विष्णु ! हे जाः ! ॥ ६ ॥ हे देवदेवेश ! हे स्वामिन् !

यज्ञमूर्तिः पुराणात्मा साममूर्द्धा च पावनः ॥ ऋग्वेदपञ्चवापशी पिङ्गलो जटिआकृतिः ॥ ३ ॥ तात्रुण्डः सोमहरः शक्रजेता महा-
शिराः ॥ पद्मनाभः पद्मनेत्रः साक्षाद्विष्णुस्त्रिवापरः ॥ ४ ॥ वाहनं देवदेवस्य दानवीगर्भकृन्तनः ॥ राक्षसासुरसंघानां जेता पञ्चबलेन
यः ॥ ५ ॥ प्रादुरासीन्महावीर्यः केशवस्याश्रितस्तदा ॥ जातुभ्यामपतद्भूमौ नमो विष्णो जगत्पते ॥ ६ ॥ नमस्ते देवदेवेश हरे स्वामि-
न्निति ब्रुवन् ॥ पश्य पश्य पाणिना कृष्णः स्वागतं ताक्ष्यपुङ्गवम् ॥ ७ ॥ इत्युवाच तदा ताक्ष्य यास्ये कैलासपर्वतम् ॥ शूलिनं द्रष्टु-
मिच्छामि शंकरं शाश्वतं शिवम् ॥ ८ ॥ बाढमित्यब्रवीत्ताक्ष्य आरुह्येन जनार्दनः ॥ तिष्ठत्वमिति होवाच यादवान्पार्श्ववर्तिनः ॥ ९ ॥
ततो ययो जगन्नाथो दिक्षं प्रागुत्तरा हरिः ॥ खेण महता ताक्ष्येलेख्यं समकम्पयत् ॥ १० ॥ सागरं क्षोभयामास पद्भ्यां पक्षी
व्रजस्तदा ॥ पक्षेण पर्वतान्सर्वान्वहन् देवं जनार्दनम् ॥ ११ ॥

हे हरे ! इस प्रकार कहते हुए नमस्कार करने लगे तब श्रीकृष्णने अपने हाथसे स्पर्श कर कहा; हे गरुड ! तुम्हारा सुंदर आगमन हुआ ॥ ७ ॥ और
हे प्रिय ! मैं महादेवजीके देखनेको कैलासपर्वतमें गमन कलंगा, उन शाश्वत शूलधारी शिवके देखनेकी इच्छा करता हूँ ॥ ८ ॥ तब गरुडजीने कहा
बहुत अच्छा तब श्रीकृष्ण गरुडपर चढ समीपमें खडे हुए यादवोंसे कहने लगे कि हे प्रियो ! तुम स्थित रहो ॥ ९ ॥ तब ऐशान्य दिशाको भगवान्
गमन करने लगे गरुडजी बडे वेगसे त्रिलोकीको कंपावमान करते हुए चले ॥ १० ॥ पैरोंसे गरुडजीने समुद्रको क्षोभित किया और पंखोंसे सब पर्वतोंको

कंपाते श्रीकृष्णको बहन करने लगे ॥ ११ ॥ गरुडजी समुद्रको क्षोभित करते चले तब आकाशमें स्थित देवता और गंधर्व इष्टरूप वाणियोंसे श्रीकृष्णकी स्तुति करने लगे ॥ १२ ॥ जय देव जगन्नाथ जय जगत्पति विष्णु, हे अजेय ! आपकी जय हो, हे भूतभावन ॥ १३ ॥ परमसिंहरूप दैत्य-दानवोंके मारनेवाले हो आपको नमस्कार है हे अजेय ! योगिध्येय परागते ! आपकी जय हो ॥ १४ ॥ नारायण देव हरे कृष्ण जगत्पते आदिकर्ता पुराणात्मन् ब्रह्मयोनि सनातन ॥ १५ ॥ सबके ईश निर्गुण गुणात्मा भक्तिप्रिय दानवनाशक ऋकके निमित्त नमस्कार है ॥ १६ ॥ अचिन्त्यमूर्ति

ततो देवाः सगन्धर्वा आकाशेऽधिष्ठितास्तदा ॥ तुष्टुबुः पुण्डरीकाक्षं वाग्भिरिष्टाभिरिश्वरम् ॥ १२ ॥ जय देव जगन्नाथ जय विष्णो जगत्पते ॥ जयाजेय नमो देव भूतभावनभावन ॥ १३ ॥ नमः परमसिंहाय दैत्यदानवनाशन ॥ जयाजेय हरे देव योगिध्येय परागते ॥ १४ ॥ नारायण नमो देव कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥ आदिकर्तः पुराणात्मन् ब्रह्मयोनि सनातन ॥ १५ ॥ नमस्ते सकलेशाय निर्गुणाय गुणात्मने ॥ भक्तिप्रियाय भक्ताय नमो दानवनाशन ॥ १६ ॥ अचिन्त्यमूर्तये तुभ्यं नमस्ते तत्कलेश्वर ॥ इत्यादिभिस्तदा देवं वाग्भिराज्ञानमव्ययम् ॥ १७ ॥ तुष्टुबुद्धेः सगन्धर्वा ऋषयः सिद्धचारणाः ॥ शृण्वन्नेव जगन्नाथः स्तुतिवाक्यानि तानि च ॥ १८ ॥ ययो सार्द्धं सुरगणैर्मुनिभिर्वेदपारगैः ॥ यत्र पूर्वं स्वयं विष्णुस्तपस्तेपे सुदारुणम् ॥ १९ ॥ लोकवृद्धिकरः श्रीमान्छोकानां हित-क्लाम्यया ॥ वर्षायुतं तपस्तप्तं विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ २० ॥ यत्र विष्णुर्जगन्नाथस्तपस्तप्त्वा सुदारुणम् ॥ द्विधाकरोत्स्वमात्मानं नरनारायणारुयया ॥ २१ ॥ गङ्गा यत्र सरिच्छ्रेष्ठा मध्ये धावति पावनी ॥ यत्र शक्रः स्वयं हस्ता वृत्रं वेदार्थतत्त्वगम् ॥ २२ ॥

सबके ईश्वर आपके निमित्त नमस्कार है, इस प्रकारकी वाणियोंसे अविनाशी ईशान देवकी ॥ १७ ॥ देवता, गंधर्व, ऋषि, सिद्ध, चारण, श्रीकृष्णकी स्तुति करते हुए जनार्दन देव इस प्रकार स्तुति वाक्योंको सुनते हुए ॥ १८ ॥ श्रीकृष्ण देवता और मुनियोंके संग गये, जहां पहले दारुण तप किया था ॥ १९ ॥ लोकोंके हितकी कामनासे लोकवृद्धिके निमित्त श्रीमान् समर्थ विष्णुने स्वयं दशसहस्र वर्षतक उग्र तप करके ॥ २० ॥ अर्थात् जहां जगन्नाथ विष्णुने दारुण तप करके नर नारायण नामसे अपनी आत्माको दो प्रकारसे किया ॥ २१ ॥ जहां सब नदियोंमें भेद्य पवित्र गंगाजी मध्य-

प्रागमें चलती है, और जहां वेदार्थोंके तत्त्वको जाननेवाले वृत्रासुरको इन्द्रने मारकर ॥ २२ ॥ ब्रह्महत्या दूर करनेको दश सहस्र वर्षोंतक तप किया था और जहां विष्णुका ध्यानकर असिद्ध सिद्ध होते हैं ॥ २३ ॥ और जहां लोक दुःखदाई रावणको मारकर रामचन्द्रजीने शिक्षा देनेको इच्छासे घोरतप किया था ॥ २४ ॥ जहां पवित्ररूप देवता और मुनि सिद्धिको प्राप्त होते हैं और जहां नित्यप्रति साक्षात् केशव विष्णु वसते हैं ॥ २५ ॥ जहां मुनिगणोंके सहित यज्ञ होते हैं; और जिसके स्मरण करनेसे मनुष्य स्वर्गको गमन करते हैं ॥ २६ ॥ जिसको मुनिजन

ब्रह्महत्याविनाशार्थं तपो वर्षाद्युतं चरत ॥ यत्र सिद्धाश्च सिद्धाः स्युर्व्यात्वा देवं जनार्दनम् ॥ २३ ॥ यत्र इत्वा रणे रामो रावणं लोकरावणम् ॥ एतच्छासनमिच्छंश्च तपो घोरमतप्यत ॥ २४ ॥ देवाश्च मुनयश्चैव सिद्धिं यास्यति शुचिव्रताः ॥ यत्र नित्यं जगन्नाथः साक्षाद्भसति केशवः ॥ २५ ॥ यत्र यज्ञाः प्रवर्तन्ते नित्यं मुनिगणैः सह ॥ यस्याः स्मरणमात्रेण नरः स्वर्गं गमिष्यति ॥ २६ ॥ स्वर्गसोपानमिच्छन्ति यां पुण्यां मुनिसत्तमाः ॥ ज्ञत्रवो मित्रतां यान्ति यत्र नित्यं नृपोत्तम ॥ २७ ॥ यामाहुः पुण्यशीलानां स्थानमुत्तमधर्मेणाम् ॥ यत्र विष्णुं समाराध्य देवाः स्वर्गं समाययुः ॥ २८ ॥ सिद्धक्षेत्रमिदं प्रादुर्लभ्यो वीतमत्सराः ॥ विशालां बदरीं विष्णुस्तां द्रष्टुं सकलेश्वरः ॥ २९ ॥ सायाह्ने चामरगणैर्मुनिभिस्तत्त्वदर्शिनैः ॥ प्रविवेश महापुण्यमृषिजुष्टं तपोवनम् ॥ ३० ॥ अग्निहोत्राकुले कालं पक्षिव्याहारसंकुले ॥ नीलस्थेषु विदंगेषु दुग्धमानासु गोषु च ॥ ३१ ॥ ऋषिष्वप्यथ तिष्ठत्सु मुनिविरिषु सर्वतः ॥ समाधिस्थेषु सिद्धेषु चिन्तयत्सु जनार्दनम् ॥ ३२ ॥

साक्षात् स्वर्गकी सीढ़ी मानते हैं, और जहां वास कर शत्रुघ्नी मित्रभावको प्राप्त हो जाते हैं ॥ २७ ॥ जो पुण्यशीलोंका और उत्तमधर्मवालोंका परम स्थान है, और जहां विष्णुकी आराधना कर देवता स्वर्गमें प्राप्त हुए हैं ॥ २८ ॥ और जिसको मत्सररता रहित मुनिजन सिद्धक्षेत्र कहते हैं; ऐसी विशाला बदरीको देखनेके अर्थ ॥ २९ ॥ सबके ईश्वर विष्णु सायंकालमें देवताओंके गण और तत्त्वोंको जाननेवाले मुनियोंके संग ऋषियोंसे जुष्ट और महापवित्र तपोवनमें प्रवेश करते हुए ॥ ३० ॥ जो अग्निहोत्रोंसे आकुल पक्षियोंके बोलनेसे संकुल है, सब पक्षी अपने अपने घोंसलोंमें स्थित हो रहे हैं, और गायें दुही जाती हैं ॥ ३१ ॥ अपने आसनोंपर मुनिजन स्थित हो रहे हैं, और समाधिमें स्थित होनेवाले मुनिजन विष्णुके चिंतन करनेमें लग रहे हैं जहां

घृत गरम हो रहा है, जहां अग्नि प्रज्वलित हो रहा है और जहां चारों ओर अग्निमें हवन हो रहा है ॥ ३२ ॥ और जहां अनियिक्ती पूजा हो रही है, ऐसे संध्यासमयमें देवताओंके संग श्रीकृष्ण ॥ ३३ ॥ मुनियोंसे जुष्ट और तपोमयी ऐसी बदरीपुरी अर्थात् बद्रीकाश्रममें प्रवेश करने लगे ॥ ३४ ॥ तब आश्रमके मध्यभागमें श्रीकृष्ण प्रवेश कर ॥ ३५ ॥ गरुडग्रीध्रे उत्तर दीपिकाओंसे दीर्घत प्रदेशमें प्रवेश कर देवताओंके साथ स्थित हुए ॥ ३६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रायाणां कैलासयात्रायां षट्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥ वैशम्पायन बोले, कि तब देवताओंके देवता अधिश्रितेषु इविषु ज्वालयमानेषु चाग्निषु ॥ ह्यमानेषु तत्रैव पावकेषु समन्ततः ॥ ३३ ॥ अतियो पूज्यमाने च संध्याविष्टे जगन्मये ॥ स तस्यामय वेलायां देवैः सह जनार्दनः ॥ ३४ ॥ विवेश बदरीं विष्णुर्मुनिजुष्टां तपोमयीम् ॥ आश्रमस्याय मध्यं तु प्रविश्य हरिरीश्वरः ॥ ३५ ॥ गरुडादवरुद्धाय दीपिकादीपिते तदा ॥ प्रदेशे पुण्डरीकाक्षः स्थितस्तावत्सहामरैः ॥ ३६ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां षट्सप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो मुनिगणा दृष्ट्वा देवदेवमुपस्थितम् ॥ समाप्य चाग्निहोत्राणि संयुज्यातिथिसत्तमान् ॥ १ ॥ मुनयो दीर्घतपसः समाधौ कृतनिश्चयाः ॥ जटिनो मुण्डिनः केचिच्छिराधमनिसंतताः ॥ २ ॥ निर्मजा नीरसाः केचिद्वेताला इव केचन ॥ अश्मकुट्टाश्चनफराः पर्णभक्षास्तथा परे ॥ ३ ॥ वेदविद्याव्रतस्नाता निराहारा महातपाः ॥ स्मरन्तः सर्वदा विष्णुं तद्भक्तास्तत्परायणाः ॥ ४ ॥ आसन्नमुक्तयः केचित्केचिद्विद्यानेकतत्पराः ॥ ध्यानेन मनसा विष्णुं दृष्टवन्तस्तपोधनाः ॥ ५ ॥

श्रीकृष्णको आया देख मुनिगण अग्निहोत्रोंको समाप्त कर और अतिथियोंका पूजन कर ॥ १ ॥ दीर्घकालसे तप करनेवाले, कोई समाधिमें निश्चय करनेवाले, जटाको धारण करनेवाले, मुंडोंको मुंडानेवाले और कोई नसोंसे व्याप्त ॥ २ ॥ कितनेही मजासे रहित, कितने रससे रहित, कितनेही वेतालोंकी समान रहनेवाले, कितनेही पत्थरसे कूटे हुए पदार्थको खानेवाले, और कितनेही परमिहारा करनेवाले ॥ ३ ॥ कितनेही वेदविद्याव्रतसे स्नात किये, कितनेही भोजनको नहीं करनेवाले और कितनेही सब कालमें विष्णुका स्मरण कर उनमें भक्ति करनेवाले ॥ ४ ॥ और कितनेही निष्कट मुक्तिवाले

कितनेही ध्यानमें तत्पर, कितनेही ध्यानमें मनसे विष्णुको देखनेवाले, कोई तपकोही घन माननेवाले ॥ ५ ॥ और कितनेही एकवर्षमें भोजन करनेवाले, कितनेही जलमें विचरनेवाले, और कितनेही इन्द्रकोभी भय देनेवाले और कितनेही श्रुतिस्मृतिमें परायण ॥ ६ ॥ वसिष्ठ, वामदेव, रेम्य, धूम्र, जाबालि, कश्यप, कण्व, भरद्वाज, गौतम, ॥ ७ ॥ अत्रि, अश्वत्थिरा, भद्र, शंखनिधि, कुणि, वेदव्यास, पवित्राश, महाशन, याज्ञवल्क्य ॥ ८ ॥ कशीवाश, अंगिरा, दीर्घतपा, असित, देवल और महातप करनेवाले वाल्मीकि ॥ ९ ॥ इनके सिवाय औरभी मुनि अर्बको ग्रहण कर श्रीकृष्णके देखनेको अपनी संवत्सराग्निः केचित्केचिज्जलविचारिणः ॥ शक्रस्य भयदातारः श्रुतिस्मृतिपरायणाः ॥ ६ ॥ वसिष्ठो वामदेवश्च रेम्यो धूम्रस्तथैव च ॥ जाबालिः कश्यपः कण्वो भरद्वाजोऽथ गौतमः ॥ ७ ॥ अत्रिश्चक्षिरा भद्रः शङ्खः शङ्खनिधिः कुणिः ॥ पाराशर्यः पवित्राशो याज्ञवल्क्यो महामनाः ॥ ८ ॥ कशीवानङ्गिराश्चैव मुनिर्दक्षितपास्तथा ॥ असितो देवलस्तात वाल्मीकिश्च महातपाः ॥ ९ ॥ एते चान्ये च मुनयो ब्रह्ममीश्वरमव्ययम् ॥ आदायार्थं यथायोग्यमुदजातत्वात्सनायतुः ॥ १० ॥ ते च गत्वा हरिं कृष्णं विष्णुमाशु जनार्दनम् ॥ भक्तिनम्रास्तदा देवं प्रणेषुर्भक्तवत्सलम् ॥ ११ ॥ नमोऽस्तु कृष्ण कृष्णेति देव देवेति केशवम् ॥ प्रणवात्मन् जगन्नाथ नताः स्म शिरसा हरे ॥ १२ ॥ कृष्ण विष्णो हृषीकेश केशवेति च सर्वदा ॥ प्रणामप्रवणा विप्राः प्राहुरित्थं जगत्पतिम् ॥ १३ ॥ इदमर्घ्यमिवं पाद्यमिवं विष्टमेव च ॥ कृतार्थाः सर्वदा देव प्रसन्नो नो जगत्पतिः ॥ १४ ॥ किं कुर्मः किं नु नः कृत्यं कश्चिद्रोषः प्रभो हरे ॥ इति प्राञ्जलयः सर्वे प्राहुर्देवस्य पश्यतः ॥ १५ ॥

अपनी कुटियोंसे आये ॥ १० ॥ भक्तिये नम्र हुए मुनि भक्तवत्सल ईश्वर, विष्णु, जनार्दन ओष्णको प्रणाम करते हुए ॥ ११ ॥ कहने लगे, हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे देवदेव ! हे प्रणवात्मन् ! हे जगन्नाथ ! हे हरे ! हम शिरसे नमस्कार करते हैं ॥ १२ ॥ हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे विष्णु ! हे केशव ! हे हृषीकेश ! तुमको सब मुनि जगत्का पति मानते हैं, और प्रणाम करते हैं ॥ १३ ॥ यह अर्घ्य, यह पाद्य और यह आसन ग्रहण करो, तुमने हम सबको कृत कृत्य कर दिया इस कारण हे देव ! हमपर प्रसन्न रहो ॥ १४ ॥ और हम क्या करें ? क्या हमारा कृत्य है ? क्या हमसे कोई दोष हुआ है ? इस प्रकार

सब हाथ जोड़ श्रीकृष्णके देखते हुए कहने लगे ॥ १५ ॥ तब सब देवताओंसे युक्त श्रीकृष्ण कहने लगे कि, हे मुनिवरो ! तुम लोगोंने सब सुकृत किया है, इस कारण तुम्हारा उत्तम तप बढ़ता रहे ॥ १६ ॥ इस प्रकार कहते हुए तिन गरुडजीके संग प्रसन्न हुए रात्रिमें श्रीकृष्ण आसनको प्राप्त हुए ॥ १७ ॥ फिर सब मुनियोंसे अग्निहोत्रमें, तपमें, गृह्यमें कुशल पूछने लगे ॥ १८ ॥ तब सब मुनि श्रीकृष्णसे कुशल कहते हुए ॥ १९ ॥ इसके उपरान्त नीवार धान्य, फल, मूल, आदिसे सब देवताओंका और विशेष कर श्रीकृष्णका मुनिजन आतिथ्य करने लगे. सो आतिथ्यको प्राप्त होकर

कृष्णोऽपि तद्यथायोगमुपयुज्य सहामरे ॥ कृतं सर्वं मुनिवरा वर्द्धतां तप उत्तमम् ॥ १६ ॥ इति ब्रुवन् पुराणात्मा प्रीतिस्तेन गरुत्मता ॥ आसनं लम्भयामास राज्ञो देवो जनार्दनः ॥ १७ ॥ कुशलं पृष्टवान् भूयो मुनीनां भावितात्मनाम् ॥ अग्निहोत्रेषु तपासि तथा भृत्येषु सर्वतः ॥ १८ ॥ एवमादि जगन्नाथः पृष्टवानीश्वरस्तदा ॥ सर्वत्र कुशलं तेऽत्र ब्रुयुः कृष्णस्य सर्वतः ॥ १९ ॥ आतिथ्यं चक्रिरे ते तु नीवारैः फलमूलकैः ॥ देवानामप्य सर्वेषां विष्णोः कृष्णस्य यत्नतः ॥ आतिथ्यमुपयुज्जानस्ततः प्रीतोऽभवद्भारिः ॥ २० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥ वैष्ण्वायन उवाच ॥ ततः स भगवान्विष्णुर्दुर्विज्ञेयमतिः प्रभुः ॥ तत्र पूर्वं तपस्तप्तमात्मना यादवेश्वरः ॥ १ ॥ गङ्गायाञ्चोत्तरे तीरे देशं द्रष्टुमुपागतः ॥ स्वयमेव हरिः साक्षात्प्रविवेक्ष्य तपोवनम् ॥ २ ॥ प्रविश्य सुचिरं देशं ददर्श च मनोरमम् ॥ निषसाद् ततस्तस्मिन्नाश्रमे पुण्यवर्द्धनः ॥ ३ ॥ समाधौ योजयामास मनः पद्मनिभेक्षणः ॥ किमप्येष जगन्नाथो ज्ञात्वा देवेश्वरः स्थितः ॥ ४ ॥

श्रीकृष्ण अतिप्रसन्न हुए ॥ २० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नापायां कैलासयात्रायां सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥ कथं प्रसन्न कहने लगे कि, तब अकल्पमति विष्णु भगवान्ने जहां पहले तप किया था ॥ १ ॥ गंगाजीके उत्तर तीरपर तिस देशके देखनेको साक्षात् हरि भगवान्ने तपोवनमें प्रवेश किया ॥ २ ॥ तहां मनोरम देशमें प्रवेश कर उत्तम आश्रममें पुण्य बढ़ानेवाले स्थित हुए ॥ ३ ॥ कमललोचन श्रीकृष्णने समा-

धिमें मनको युक्त कर तब देवताओंके ईश्वर श्रीकृष्ण ध्यानमें कुछ विचारने लगे ॥ ४ ॥ जब देवगुरु समाधिमें दीपककी नाई प्रकाशित हुए, तब महा-
 धोररूप शब्द चारों ओरसे होने लगा ॥ ५ ॥ कि साओ साओ प्रसन्न हो इन मृगोंको प्राप्त हो, और श्रीकृष्णके प्रसादसे सब कुत्तोंको मैं प्रेरता
 हूँ ॥ ६ ॥ यह विष्णु कृष्ण हरि ईश अच्युत स्थित है, हे विष्णो ! हे देवेश ! हे स्वामिन् ! हे माधव ! हे केशव ! तुमको नमस्कार हो ॥ ७ ॥
 इत्यादि महारात्रिमें धोर शब्द प्रगट हुआ फिर दोबरे हुए मृगोंके पीछे भागते हुए व्यापका ॥ ८ ॥ कुत्तोंका और प्रयत्नाले मृगोंका और क्लेशोंका
 स्थिते देवपुरो तच्च समाधौ दीप्तिदरो ॥ तत्र शब्दो महाधोरः प्रादुरासीत्समन्ततः ॥ ५ ॥ खाद खादत मोदेत यात यात मृगानि-
 मान् ॥ प्रेक्षेह पुनः सर्वान्प्रसादाच्छाङ्गधन्वनः ॥ ६ ॥ एष विष्णुरयं कृष्णो हरिरीशः स्मृतोऽच्युतः ॥ नमोऽस्तु विष्णो देवेश
 स्वामिन् माधव केशव ॥ ७ ॥ इत्यादिशब्दः सुमहानाविरासीत्तदा निशि ॥ ततश्च सुमहानादः सिंहाणां मृगविदिषाम् ॥ ८ ॥
 धावतां च शूनां राजन्मृगाननुविनर्दताम् ॥ मृगाणां भीतियुक्तानामृक्षाणां द्वीपिनां तथा ॥ ९ ॥ गजानां नवतां राजन्वृद्धितं च
 ततस्ततः ॥ महावातसमुद्भूतधुभितस्येव वारिधेः ॥ १० ॥ नादश्चेत्येक्यवित्रासः प्रादुरासीत्तदा निशि ॥ श्रुत्वा शब्दं हरिदेवस्तादृशं
 तत्र विधितः ॥ ११ ॥ समाधिक्षोभमासाद्य विश्वस्य च जगत्पतिः ॥ ततः संवित्तयामास कोऽयमेष महास्वनः ॥ १२ ॥ कस्यायमी-
 दृशः शब्दः स्तुतियुक्तो मम त्विति ॥ अहोऽस्मिन्मृगयाशब्दः शूनां संचरतां वने ॥ १३ ॥ मृगाणामथ सर्वेषां नादश्च सुमहानयम् ॥
 व्यामिश्रस्तुतियुक्ताभिर्वाग्भिर्मम समन्ततः ॥ १४ ॥

गडोंका ॥ ९ ॥ और गर्जनेवाले हाथियोंका जहां तहांसे बढता हुआ और महावायुसे धुभित हुए समुद्रके शब्दकी समान ॥ १० ॥ त्रिलोकीमें त्रासका
 देनेवाला शब्द रात्रिमें प्रगट होने लगा तब समाधिमें स्थित श्रीकृष्ण यह शब्द सुन ॥ ११ ॥ समाधिके श्रोतको प्राप्त हो जनस्तति श्वात् ले चिन्ता
 करने लगे कि यह महाशब्द क्या है ॥ १२ ॥ मेरी स्तुतिसे संयुक्त यह किसका ऐसा शब्द है ? और आश्चर्य है कि इस वनमें शिकारके अर्थ विचरते
 हुए कुत्तोंका शब्द ॥ १३ ॥ सब मृगोंका शब्द और मेरी स्तुतिसे मिला हुआ शब्द चारों ओर हो रहा है ॥ १४ ॥

इस प्रकार मनमें चिन्ता कर सब दिशाओंको चारों ओरसे देख उसका कारण देखनेको स्थित हुए ॥ १५ ॥ तब जहां श्रीकृष्ण स्थित थे तहां भागते हुए मृग आये और तिनके पीछे कुनोंका समूह भागता हुआ आया ॥ १६ ॥ जहां सैकड़ों सहस्रों दीपकोंसे चांदना हो रहा था इस कारण अंधेरेका नाश हो दिनका समय हो गया ॥ १७ ॥ तब भूतोंके समूह सब ओर दीखने लगे और महाघोर पिशाच राक्षस करने लगे ॥ १८ ॥ और मांसको ग्रहण करते हुए लोहको पीते हुए और विकृत मुलोंवाले महाघोर पिशाच प्रगट हुए ॥ १९ ॥

इति संचिन्त्य मनसा दिशो विप्रेक्ष्य सर्वतः ॥ तत आस्ते हरिस्तत्र ज्ञातुं तस्य समुद्रवम् ॥ १५ ॥ ततो मृगाः समाधावन्यत्र तिष्ठति केशवः ॥ तान्श्चैवानुचरो राजन् समणः समपद्यत ॥ १६ ॥ अथ वै दीपिका राजन् ततोऽप्य सहस्रशः ॥ ततस्ततोऽपि व्यनशदिवैव समपद्यते ॥ १७ ॥ ततो नु भूतसंघाश्च समदृश्यन्त तत्र ह ॥ पिशाचाश्च महाघोरा नदन्तो बहु विस्वनम् ॥ १८ ॥ भक्षयन्तोऽपि पिशितं पिवन्तो रुधिरं बहु ॥ प्रादुरासन्महाघोराः पिशाचा विकृताननाः ॥ १९ ॥ इत्यमाना इता राजन्पतन्तः पतिता मृगाः ॥ इतश्चेतश्च धावन्तो बाणैर्विद्धा मृगा द्विपाः ॥ २० ॥ ततो मृगसहस्राणि समुदीर्णानि भारत ॥ यत्रासौ तिष्ठते देवस्तत्र याता निरन्तरम् ॥ २१ ॥ अन्तरीकृत्य देवेशं स्थितानीत्यनुशुश्रुम ॥ पिशाच्यो विकृताकाराः कराळा रोमदर्वणाः ॥ २२ ॥ पुत्रवत्यः समापेतुर्यत्र तिष्ठति केशवः ॥ श्वगणस्तत्र राजेन्द्र चरत्येवं ततस्ततः ॥ २३ ॥ ततः स भगवान्विष्णुः सर्वमालोक्य वेष्टितः ॥ विस्मयं परमं गत्वा पश्यन्नास्ते स्म केशवः ॥ २४ ॥

और जहां तहांसे भयसे भागते हुए बाणोंसे बिंधे हुए मरनेके तुल्य और मृतक हुए मृग पड़ने लगे ॥ २० ॥ हे राजन् ! तब सहस्रों मृग तहां प्राप्त हुए जहां देव श्रीकृष्ण स्थित थे ॥ २१ ॥ और श्रीकृष्णको चारों ओरसे घेरकर स्थित हुए यह हमने सुना है विकृत आकारवाली पिशाचनी कराळरूप-वाली जिनको देखनेसे रोमावली अर्थात् रूख खड़े हो जाय ॥ २२ ॥ पुत्रवती पिशाचोंकी स्त्रियों श्रीकृष्णके निकट प्राप्त हुई हे राजेन्द्र ! तहां चारों ओरसे कुत्तोंके गण विचरने लगे ॥ २३ ॥ तब श्रीकृष्ण भगवान् सबोंको घेरा हुआ देख परम आश्चर्यको प्राप्त हो उन्हें देखने तहांही स्थित

रहे ॥ २४ ॥ और कहने लगे किसका यह विस्तारपूर्वक शब्द है और किसका यह कुटुम्ब यहां मान हुआ है, और कौन मेरी भक्ति व स्तुति कर रहा है किसपै मैं प्रसन्न हुंगा ॥ २५ ॥ और जब मैं प्रसन्न हुआ, तब किसी मुक्ति दुर्लभ है. इस प्रकार विन्यास करके मनुष्यकी चेष्टासे जनमानस स्थित हुए ॥ २६ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां अष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥ वैशम्पायनजी बोले, कि जब उनके पीछे विकृत मुखवाले और धूरिको उड़ानेवाले भिन्नलंगोर्धोवाले लम्बी जिह्वा और बड़ी ठोड़ीवाले ॥ १ ॥ लम्बे केश, विरूप नेत्र, हीही हाहा

कस्येप विस्तृतो नादः कस्य वायं जनोऽपतत् ॥ को नु मां स्तोति भक्त्या वे भविष्ये प्रीतिमान् म ॥ २५ ॥ कस्य मुक्तिः समायाता प्रीति मयि सुबुद्धिभा ॥ इति संचिन्त्य भगवानास्ते प्राकृतवदरिः ॥ २६ ॥ इति श्रीमहाभारतः सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि अष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ तेषामनुमदाधरो पिशाचो विकृताननो ॥ प्राक्षुः पिङ्गलरोमाणो दीर्घजिह्वो महादन्तु ॥ १ ॥ लम्बकेशो विरूपाक्षो हा हा हा इति वादिनो ॥ सादन्तो मांसपटिकं पिबन्तो रुधिरं बहु ॥ २ ॥ आन्त्रवेष्टितसर्वाङ्गो दीर्घो कृशकृतोदरो ॥ लम्बमानमहाप्रान्तशूलप्रोतशिरोधरो ॥ ३ ॥ कर्षन्तो श्वयूयानि बाहुभ्यां तत्र तत्र ॥ इसन्तो विविधं हासं स्वजातिसहस्रं नृप ॥ ४ ॥ वदन्तो बहुरूपाणि वचांसि प्राकृतानि च ॥ कम्पयन्तो महालृषानुरुपादप्रचट्टनैः ॥ ५ ॥ सुक्लिणी लोहिदन्तो च दन्तान्कटकटायिनो ॥ अस्थिस्रापुसमाकीर्णो घमनीरज्जुसंततो ॥ ६ ॥

बोलनेवाले मांसकी पेटकी सानेवाले बहुतसे रुधिरको पीनेवाले ॥ २ ॥ आंतोंसे वेष्टित अंगोंवाले लम्बे और ऊँच उदरवाले. लम्बायमान शूल प्रोत-पट शिरको धारण करनेवाले ॥ ३ ॥ दोनों भुजाओंसे मुरखोंके शिरोंको लँचनेवाले और अनेक प्रकारके हाथको करते अपनी जातिके सहस्र चेष्टा करनेवाले ॥ ४ ॥ बहुतसे लपोंसे संयुक्त प्राकृत वचनोंको कहनेवाले, अपनी जंवाओंसे बड़े बड़े वृक्षोंको कपानेवाले ॥ ५ ॥ और सुक्लिणी जर्पाद अपने ओष्ठमांत देशको अपनी जीभसे चाटनेवाले, दांतोंको चबानेवाले, अस्थि और क्खोंसे आकीर्ण घमनीरूप रज्जुमे विस्तृत ॥ ६ ॥

हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! हे मावव ! इन वचनोंको सदा कहेनेवाले और किस समय विष्णु दीखेंगे, वह विष्णु अब कहाँ स्थित हैं ॥ ७ ॥ हमारे स्वामी श्रीकृष्ण कहाँ स्थित हैं, कैसे देखनेको हम यत्न करें ? और किस देशमें वह देवैतरूप ईश्वर बसते हैं ॥ ८ ॥ कमलके पत्तोंकी सदृश त्रेत्रोंवाले साक्षात् इन्द्रके छोटे भ्राता कहाँ है ? जिसको ब्रह्मके भाननेवाले विद्वान् साक्षात् ब्रह्म कहते हैं ॥ ९ ॥ उन जन्मसे रहित और विश्वके रचनेवाले ईश्वरके देखनेको हम यत्न करते हैं और अंतकालमें इसी ईश्वरमें तीनों जगत् लय होते हैं ॥ १० ॥ उस अत्र विश्वके कर्ताको अब कहाँ देखेंगे जिनका विस्तार किया यह

वदन्तो कृष्ण कृष्णेति माचरोति स संततम् ॥ कदा नु द्रक्ष्यते विष्णुः स इदानीं कं तिष्ठति ॥ ७ ॥ स्वामिनः कुत्र वसतिः कुतो ब्रह्मं यतामहे ॥ अत्र वा कुत्र देवेशः कुतो नु स्यात्स्यते हरिः ॥ ८ ॥ कुतः पद्मपलाशाक्षः साक्षाद्विद्राजो हरिः ॥ यमाहुः पुष्करिकाक्षं ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः ॥ ९ ॥ तमजं पुरुषं विष्णुं ब्रह्मभृद्युद्यता वयम् ॥ अन्तर्काले जगन्नाथं प्रविशेन्न जगन्नयम् ॥ १० ॥ तमजं विश्वकर्तारं कुतो द्रक्ष्याम साम्प्रतम् ॥ बस्य विस्तार एवैष लोकः प्राणिनिवासिनः ॥ ११ ॥ तं ब्रह्म देवमीशानं यतामः साध्यतं हरिम् ॥ दक्षा घोरतमा लोके विद्रिष्टा सर्वबन्तुभिः ॥ १२ ॥ पैशाचीयं समुत्पन्ना कथं नो आत्रिशद्वलात् ॥ नस्मांसास्त्रिकलुषा सर्वभीतिप्रदायिनी ॥ १३ ॥ अहो नो दुष्कृतं कर्म प्राक्तने कर्मसंचये ॥ अत्रैव महती प्रीतिर्वर्तते सर्वज्ञ तथा ॥ १४ ॥ यथग्नौ दुष्कृतं कर्म तापत्स्यास्यति तादृशी ॥ दक्षा सा सर्वविद्रिष्टा प्राणिपीडनकारिणी ॥ १५ ॥

लोक प्राणियोंका निवासरूप है ॥ ११ ॥ ऐसे ईश्वरको शीघ्र हम कैसे देखेंगे, कैसे जतन करेंगे संसारमें हमारी दया बड़ी घोर है, और सब जंतुओंसे त्यागी हुई है ॥ १२ ॥ और पिशाचोंके योग्य मनुष्योंके मांस और हाड आदिको ग्रहण करानेवाली और सब प्रकारके भयको देनेवाली ऐसी बुरी दया बलसे कैसे हमारेको प्राप्त हुई आश्चर्य है ॥ १३ ॥ पूर्वजन्ममें हम लोगोंने बहुत बुरे कर्म किये हैं, जिससे इन पूर्वोक्त बुरे कर्मोंमेंगी हमारी प्रीति सब कालमें बनी रहती है ॥ १४ ॥ और जबतक हम उस दोनोंसे किया बुरा कर्म स्थित रहेगा तबतक प्राणियोंको पीडा करनेवाली और सबोंसे त्यागी

हुई दशा हमारी रहेगी ॥ १५ ॥ बहुत जन्मोंमें हमसे दुराही कर्म बन आया है, इस कारण यह घोररूप फल अवगती निश्च नहीं होता ॥ १६ ॥ क्यों कि कुत्तोंके सबूतोंके संग प्राणियोंको मारनेके अर्थ हम सावधान हैं, और बाल्य अवस्थासेही इसमें रत है ॥ १७ ॥ अज्ञानसे आवृत चित्तवाले प्राणी कृत्य और अकृत्यको नहीं जानते और यौवन अवस्थामें विषयोंसे प्रमित हुए ॥ १८ ॥ चित्तोंवाले मनुष्य अपने कल्याणके लिये यत्न नहीं करते कारण कि उनके चित्त विषयवासनामें रत हैं ॥ १९ ॥ और बृद्ध अवस्थामें घोररूप दुःखदाता ज्वर आदि अनेक सर्वथा दुष्कृतं कर्म बहुभिर्जन्मसंचयेः ॥ तथा हि तत्फलं घोरमद्यापि न निवर्तते ॥ १६ ॥ यताः स्म प्राणिनो इत्तुं श्रमणेः सह साम्प्रतम् ॥ तथा हि प्राणिनो लोके बाल्यमादौ समास्थिताः ॥ १७ ॥ अज्ञानावृत्तचित्ताश्च कृत्याकृत्यं न जानते ॥ तथा यौवनिनो भ्रान्ता विषयेर्बहुलीकृताः ॥ १८ ॥ यतन्ते श्रेयसे नैव ततो विषयसंस्थिताः ॥ विषयाविष्टचित्ता हि मनुष्या न विजानते ॥ १९ ॥ तथा च बृद्धभावे तु व्याधिभिर्बहुभिर्वृताः ॥ ज्वरादिभिर्महाघोरेर्नानादुःखविधायिभिः ॥ २० ॥ यतन्ते न हि वै श्रेयो विनष्टेन्द्रियगोचराः ॥ ततो मृता गर्भवासे वसन्ति सततं नराः ॥ २१ ॥ विष्णुत्रकलिले घोरे दुःखैर्बहुभिराचिताः ॥ ज्यवन्ते तु ततो घोराद्गर्भात् संसारमण्डले ॥ २२ ॥ परस्परं विहिंसन्तः कुर्वन्तः कर्मसंचयम् ॥ महत्येवं सदा घोरे संसारे दुःखसंकुले ॥ २३ ॥ पापानि बहुरूपाणि कुर्वन्तेऽज्ञानतस्तदा ॥ संसारस्येप महिमा विस्तृतः सर्वजन्तुषु ॥ २४ ॥ अच्छेद्यः शस्त्रसंपातेरुपायेर्बहुभिः सदा ॥ एतस्मान्न निवर्तन्ते मर्त्याः प्राकृतबुद्धयः ॥ २५ ॥

प्रकारकी व्याधियोंसे पीडित ॥ २० ॥ यह इन्द्रियोंवाले होकर मनुष्य कल्याणके अर्थ यत्न नहीं करते हैं, फिर मरकर गर्भवास करते हैं अर्थात् ॥ २१ ॥ विद्या और मूत्रसे युक्त गर्भमें निरंतर वसते हैं, पीछे बहुतसे दुःखोंसे व्याप्त हुए घोर रूप गर्भसे संसारमण्डलमें जन्मते हैं ॥ २२ ॥ अब परस्परमें हिंसा करते हुए और कर्मका संचय करते हुए इस दुःखयुक्त घोरसंसारमें ॥ २३ ॥ अज्ञानसे बहुतसे पापोंको करते हैं, ऐसे संसारकी महिमा प्राणि-योंमें विस्तृत है ॥ २४ ॥ यह शस्त्र आदि अनेक प्रकारके उपायोंसे अच्छेद्य अर्थात् कटनेके योग्य नहीं है, इस कारण प्राकृत बुद्धिवाले मनुष्य इस

संसारसे निवृत्त नहीं होते ॥ २५ ॥ इस मनुष्येन्द्रको मारकर मैं इसके धनको हूँ और इसके धनको जुराकर मैं अपना बना लूँ ॥ २६ ॥ और इस शतरूप मनुष्यको शिथिलकर धनको हूँगा, इत्यादि मनोरथोंसे व्याकुल हुए मूर्ख प्राणियोंको पीटा देनेके अर्थ यत्न करते हैं ॥ २७ ॥ इस दुःखके मूलरूप संसारकी सब कालमें शंस चक्र मदाको धारण करनेवाले नारायणही औपवी है ॥ २८ ॥ कारण कि वह आदिदेव पुराणात्मा और ब्रह्म जाननेवाले आत्मा, विष्णु हैं, इस कारण हम सब यत्नसे तिन विष्णुको देखेंवे ऐसे बोलते हुए दोनों पिशाच विष्णुके आगे प्रणत हुए ॥ २९ ॥

इमं हत्वा मनुष्येन्द्रमिदमस्माद्वराम्यहम् ॥ चोरयित्वा धनमिदं हरिष्याम्याददाम्यहम् ॥ २६ ॥ निर्भत्स्येनमिमं शान्तं हरिष्यामि धनं वली ॥ इत्यादिव्याकुला मूर्खा यतन्ते प्राणिपीडनम् ॥ २७ ॥ अस्येव दुःखमूलस्य संसारस्य सदा हरिः ॥ भेषजं सर्वथा देवः शङ्खचक्रगदाधरः ॥ २८ ॥ आदिदेवः पुराणात्मा आत्मा ब्रह्मविदा सदा ॥ ते वयं सर्वयत्नेन द्रक्ष्यामः सर्वथा हरिम् ॥ इत्थं पिशाचो भाषान्तो प्रादुरास्तां हरः पुरः ॥ २९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायामेकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥ ७९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः स भगवान्विष्णुः पिशाचो मांसभक्षको ॥ ददृशांय महाघोरो दीपिकाचारिणो हरिः ॥ १ ॥ विलोक्याच्चक्रनुस्तौ पिशाचो देवकीसुतम् ॥ स्थितं सुस्तासने विष्णुं दृष्ट्वा लोकेश्वरेश्वरम् ॥ २ ॥ तौ च मत्वा समुद्देशं पिशाचो केशवस्य ह ॥ ततस्तावूचतुर्विष्णुमन्तरीकृत्य केशवम् ॥ ३ ॥

इति श्रीम० खिलेषु ह० भ० नाषायां कैलासयात्रायामेकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥ ७९ ॥ वैशम्पायन बोले कि, इसके उपरान्त विष्णु जनवान्ने मांसको भक्षण करनेवाले और दीपकको धारण करनेवाले महाघोर रूप दो पिशाचोंको देखा ॥ १ ॥ और वह दोनों पिशाच सुंदर आसनपर स्थित हुए देवकी पुत्र लोकेश्वर विष्णुको देखते हुए ॥ २ ॥ तब लोकेश्वरोंके ईश्वररूप विष्णुको देखकर और विष्णुके समीपमें जायकर और विष्णुको मध्यमें

कर दोनों पिशाच कहने लगे ॥ ३ ॥ हे मनुष्य ! तुम कौन हो और किसके शिष्य हो ? और कहाँसे आये हो ? मृगोंसे व्याप्त ॥ ४ ॥ और मनुष्योंसे रहित हाथियोंसे आकृत, पिशाचगणोंसे सेवित और श्वापदप्राणियोंसे और सिंहोंसे सेव्यमान ॥ ५ ॥ वनमें तुम किस कारण आये हो ? कुमारअवस्थायुक्त सुंदर अंगवाले साक्षात् दूसरे विष्णुकी समान पद्मके पत्तोंकी समान नेत्रोंवाले श्याम और कपड़ेके समान कान्तिवाले और स्वयं लक्ष्मीपति ॥ ६ ॥ हमसे प्रीति करनेवाले हो तुम देव, यक्ष, गंधर्व वा किन्नर हो ॥ ७ ॥ वा इन्द्र, कुबेर, यम वा वरुण हो, ध्यानार्पित मनवालेकी समान को भगवान्कस्य वा मर्त्यः कुतश्चागम्यते त्वया ॥ किमर्थमिह संप्राप्तो वने घोरे मृगाकुले ॥ ४ ॥ निर्मनुष्ये द्विपितृते पिशाचगणसेविते ॥ श्वापदेः सेव्यमाने च विपिने व्याघ्रसंकुले ॥ ५ ॥ सुकुमारोऽनवद्याङ्गः साक्षाद्विष्णुस्त्वापरः ॥ पद्मपत्रेक्षणः ड्यामः पद्माभिः श्रीपतिः स्वयम् ॥ ६ ॥ अस्मात्प्रीतिकरः साक्षात्प्राप्तो विष्णुस्त्वापरः ॥ देवो वा यदि वा यक्षो गन्धर्वः किन्नरोऽपि वा ॥ ७ ॥ इन्द्रो वा धनदो वापि यमोऽथ वरुणोऽपि वा ॥ एकाकी विपिने घोरे ध्यानार्पितमना इव ॥ ८ ॥ ब्रूहि मर्त्यं वयात्तत्त्वं ज्ञातुमिच्छामि मानव ॥ एवं पृष्टः पिशाचाभ्यामाह विष्णुरुक्मः ॥ ९ ॥ क्षत्रियोऽस्मीति मामाहुर्मनुष्याः प्रवृत्तिस्तियत्नः ॥ यदुवंशे समुत्पन्नः क्षात्रं वृत्तमनुष्ठितः ॥ १० ॥ लोकानामथ पातास्मि शास्ता दुष्टस्य सर्वदा ॥ कैलासं मनुकामोऽस्मि द्रष्टुं देवमुमापतिम् ॥ ११ ॥ इत्येवं मम वृत्तान्तः कथ्यतां को युवामिति ॥ युवामिह समायातो किमर्थं ब्राह्मणाश्रमम् ॥ १२ ॥ एषा हि महती पुण्या नानाविप्रनिषेविता ॥ बदरीयं समाख्याता न क्षुद्रैराश्रिता कश्चित् ॥ १३ ॥

इस वनमें अकेले तुम कैसे हो ? ॥ ८ ॥ हे मनुष्य ! पदार्थ वर्णन करो, मैं जाननेकी इच्छा करता हूँ इस प्रकार पिशाचोंसे पूछे हुए महापराक्रमी श्रीकृष्ण कहने लगे ॥ ९ ॥ कि यदुवंशमें उत्पन्न होनेवाले और क्षात्रवृत्तमें अनुष्ठित मैं क्षत्रिय हूँ ऐसा प्रकृतिमें स्थित मनुष्य कहत हूँ ॥ १० ॥ लोकोंकी रक्षा करनेवाला और सब कालमें दुष्टोंकी शिक्षा देनेवाला मैं क्षत्रिय हूँ, सो महादेवजीको देखनेके लिये कलामपर्वतको गमन करनेवाला हूँ ॥ ११ ॥ यह मेरा वृत्तान्त है, परंतु तुम दोनों कौन हो ? यह कहो, और इस ब्राह्मणाश्रममें तुम किस कारण आये हो ? ॥ १२ ॥ पवित्र और

अनेक प्रकारके विपोंसे सेवित यह बदरीपुरी विख्यात है, यह भुद्र पुरुषोंसे कहींभी सेवित नहीं हो सकती ॥ १३ ॥ तपस्वियोंसे जुष्ट और सिद्धोंसे सेवित यह बदरीकाणम है यहां कुत्तोंके नष्ट और मांसको भोजन करनेवाले पिशाच नहीं दीखते हैं ॥ १४ ॥ और यहां मृग मारनेके योग्य नहीं हैं, और यहां शिकार नहीं लेखा जाता है. और भुद्र कृतघ्न नास्तिकोंका प्रवेश यहां नहीं हो सकता है ॥ १५ ॥ और इस देशका मैं रक्षा करनेवाला हूं, इसमें संशय नहीं, जो व्यतिक्रम करेगा, मैं बलसे उसकी शिक्षा करूंगा ॥ १६ ॥ तुम दोनों कौन हो ? कहां जाते हो और किसकी यह बड़ी सेना है ? और यहांसे अमाठी तुम प्रवेश नहीं करना, कारण कि ऋषिजन व्रतते हैं ॥ १७ ॥ और तपस्वियोंके तपमें विघ्न हो सकता है. इस कारण प्रथम तपस्विभिस्तपोयुक्तेर्जुष्टा सिद्धनिषेविता ॥ श्वमणा नात्र दृश्यन्ते पिशाचा मांसभोजनाः ॥ १४ ॥ न हन्तव्या मृगाश्चात्र मृगया नात्र वर्तते ॥ न तु क्षुद्रैः प्रवेष्टव्या न कृतघ्नैर्न नास्तिकैः ॥ १५ ॥ अहमस्य तु देशस्य रक्षिता नात्र संशयः ॥ व्यतिक्रमो यदि भवेत्तस्य शास्तास्मि यत्नतः ॥ १६ ॥ कौ भवन्तो क्व तु युवां कस्येषं महती चमूः ॥ नातः परं प्रवेष्टव्यमृषयस्तत्र संस्थिताः ॥ १७ ॥ विघ्नस्तत्र प्रवर्तेत तपस्तपु च तपस्विनाम् ॥ इहेव स्थीयतां तावद्वत्क्रव्यं च ततः सुखम् ॥ १८ ॥ अन्यथाहं निषेद्धा स्यां बलाद्वक्ष्ये-स्तथैव च ॥ वेश्मपायन उवाच ॥ एवं पृष्ठो पिशाचो तु वक्तुमेवोपचक्रतुः ॥ १९ ॥ तयोरेको महाघोरः पिशाचो दीर्घबाहुकः ॥ उवाच क्वचनं तत्र यथा हृदि समर्पितम् ॥ २० ॥ पिशाच उवाच ॥ श्रूयतामभिधास्यामि समाहितमना भव ॥ नमस्कृत्य जगन्नाथं हरिं कृष्णं जगत्पातिम् ॥ २१ ॥ आदिदेवमजं विष्णुं वरेण्यमनघं शुचिम् ॥ वक्ष्यामि सकलं यद्वत्तथा शृणु यदीच्छसि ॥ २२ ॥ यहाँ स्थित रहो और फिर सुस्तपूर्वक बोलो ॥ १८ ॥ और यदि मेरे वचनको नहीं मानोगे तो बलसे और वाक्यसे रोक दूंगा. वेश्मपायन बोले; कि इस प्रकार पूछे हुए दोनों पिशाच कहनेको समीपमें पहुँचे ॥ १९ ॥ परन्तु तिन दोनोंमें जो एक महाघोर, दीर्घ भुजाओंवाला पिशाच था; वह हृदयमें स्थित वचन कहने लगा ॥ २० ॥ पिशाच कहने लगा, अनघके नाथ और जगदकं पति हरि कृष्णको नमस्कार कर मैं वर्णन करता हूं, तुम सावधान मन होकर सुनो ॥ २१ ॥ आदिदेव अज वरेण्य अनघ और पवित्र विष्णुका ज्ञान कर मैं सब कहूंगा. जो तुम्हारी इच्छा है वो सुनो ॥ २२ ॥

मांस खानेवाला, चोर दर्शन, विकृत चोर मृत्युके समान मानो दूसरी मृत्यु में घंटाकर्ण नाम पिशाच हूं ॥ २३ ॥ महादेवके भिन्न साक्षात् कुबेरका अनुचर हूं, और वह मेरा छोटा भाई है और मैं अंतककाजी अंतक हूं ॥ २४ ॥ और यह बड़ी मृगया विष्णुकी पूजाके अर्थ है, और यह मेरी सेना है, और कुबोंका गणभी मेराही है ॥ २५ ॥ और मैं भूतसेवित कैलासपर्वतसे आया हूं, पाप करनेवाला मैं पिशाचके वेषसे युक्त हूं ॥ २६ ॥ पूर्व कालमें मैं निरन्तर विष्णुको दूषित करता हुआ दोनों कालोंमें घंटे बांधकरके कि मेरे कालोंमें विष्णुका नाम प्रवेश न करे, इस प्रकार विचार

घंटाकर्णोऽस्मि नाम्नाहं पिशाचो चोरदर्शनः ॥ मांसादो विकृतो चोरः साक्षान्मृत्युरिवापरः ॥ २३ ॥ घनदस्यानुगन्ताहं साक्षाद्दुष्ट-
सत्तस्य च ॥ ममायमनुजः साक्षादन्तकस्यान्तको ह्यहम् ॥ २४ ॥ मृगययं सुमहती विष्णोः पूजार्थमित्युत ॥ ममेयं वर्त्तते सेना-
श्रमणोऽपि ममेव तु ॥ २५ ॥ आगतोऽहं महाज्ञेअत्कैलासाद्गतसेवितात् ॥ अहं पिशाचवेषेण संविष्टः पापकर्मकृत् ॥ २६ ॥ सततं
दूषयन्विष्णुं घण्टामाबध्य कर्णयोः ॥ मम न प्रविशेन्नाम विष्णोः सिति विचिन्तयन् ॥ २७ ॥ अहं कैलासनिलयमासाद्य वृषभध्वजम् ॥
आराध्य तं महादेवमस्तुवं सततं शिवम् ॥ २८ ॥ सतः प्रसन्नो मामाह वृणीष्वेति वरं हरः ॥ ततो मुक्तिर्मया तत्र प्रार्थिता देवस-
न्निधौ ॥ २९ ॥ मुक्तिं प्रार्थयमानं मां पुनराह त्रिलोचनः ॥ मुक्तिप्रदाता सर्वेषां विष्णुरेव न संशयः ॥ ३० ॥ तस्माद्भूत्वा च बदरीं
तत्राराध्य जनार्दनम् ॥ मुक्तिं प्राप्नुहि गोविन्दान्नरनारायणश्रमे ॥ ३१ ॥ इत्युक्तो देवदेवेन शूलिना ज्ञातवानहम् ॥ तमेव परमं मत्वा
गोविन्दं गरुडध्वजम् ॥ ३२ ॥

कर ॥ २७ ॥ कैलासपर्वतमें जायकर महादेवजीकी आराधना कर निरंतर महादेवजीकी स्तुति करने लगा ॥ २८ ॥ तब प्रसन्न हुए महादेव मुझसे कहने लगे कि वर मांग, तब मैंने महादेवके समीपमें मुक्तिकी प्रार्थना करी ॥ २९ ॥ तब मुक्तिकी प्रार्थना करनेवाले मुझसे महादेव कहने लगे कि सबको मुक्तिका देनेवाला विष्णु है, इसमें संशय नहीं ॥ ३० ॥ इस कारणसे ब्रह्माश्रममें नरनारायणके आश्रममें जायकर विष्णु जगवान्की आराधना करनेसे तू मुक्तिको प्राप्त होगा ॥ ३१ ॥ इस प्रकार महादेवजीके कहनेसे तिसी विष्णुको परम मानकर गरुडध्वजरूप गोविन्दको जानता

हुआ ॥ ३२ ॥ तिनमे सुकिर्की प्रार्थना करनेवाला मैं इस देशमें प्राप्त हुआ हूं, औरतों मेरा कार्य सुनो. जो तुमको सुननेकी अभिलाषा है ॥ ३३ ॥
 पश्चिमसमुद्रके तटपर यदुवृष्णिपोंसे आकीर्ण और समुद्रकी तरंगोंसे आकुल द्वारवती पुरी है ॥ ३४ ॥ तिस पुरीमें हरि जगवान् पुरुषोत्तम
 लोकोंका हित करनेके निमित्त बसते हैं. तिनको देखनेके अर्थ ॥ ३५ ॥ इन अनुचरोंके संग निकलकर प्राप्त हुए हैं, सो सबोंके ईश्वरत्वं
 विष्णुको अब हम देखेंगे ॥ ३६ ॥ लोकोंके उत्पत्तिस्थान और संसारकी रक्षा करनेवाले, कर्ता, हर्ता और जगत्के पति और आदिकेभी
 आदि सबोंके उत्पत्तिस्थान और कारण ॥ ३७ ॥ सबोंकी रक्षा करनेवाले, सबोंके पापोंको धरनेवाले, पुरातन प्रभुओंकेभी प्रभु और
 तस्मात्प्रार्थयमानस्तन्मुक्तिदेशमसुं गतः ॥ अन्यच्च शृणु मे कार्यं यदि कीदृशलं तव ॥ ३३ ॥ पुरी द्वारवती नाम पश्चिमस्योदधे-
 स्तटे ॥ यदुवृष्णिसमाकीर्णं सागरोर्मिसमाकुलाम् ॥ ३४ ॥ अध्यास्ये स हरिर्विष्णुस्तां पुरीं पुरुषोत्तमः ॥ द्रष्टुं लोकहितायां वसन्तं
 द्वारकापुरे ॥ ३५ ॥ निर्गताः साम्प्रतं मत्स्यं वयमेतैः सदानुगैः ॥ विष्णुः सवन्धरः साक्षाद्दृष्टव्योऽस्माभिरयं वै ॥ ३६ ॥ लोकानां
 प्रभवः पाता कर्ता हर्ता जगत्पातिः ॥ आदिः स हि समस्तस्य प्रभवः कारणं हरिः ॥ ३७ ॥ कर्ता समस्तस्य हरिः पुरातनः प्रभुः
 प्रभूणामपि यः सदात्मकः ॥ तदादिदेवं वरदं वरेण्यं द्रष्टुं हरिं संप्रति संयताः स्मः ॥ ३८ ॥ यस्य प्रसादाज्जगदेवमासीत्स्वप्राणिगन्धर्व-
 महोरगेषु ॥ देवं जगद्योनिमजं जनार्दनं द्रष्टुं हरिं संप्रति संयताः स्मः ॥ ३९ ॥ यस्योदयाद्विश्वमिदं प्रभूतं लयं च तस्मिन्समुपेति
 कल्पे ॥ तस्यैव साक्षाद्भवति विश्वं द्रक्ष्याम देवं पुरुषोत्तमं हरिम् ॥ ४० ॥

सत्यमात्मावाले, वर देनेवाले, आदिदेव विष्णुको देखनेके अर्थ अब हम रुत यत्न कर रहे हैं ॥ ३८ ॥ और जिसके प्रसादसे प्राणी मंथर्व महासर्पके
 समूहरूप जगत् हो गया है, देव और जगत्के योनि, अजन्मा और दुष्टजनोंके पीडा देनेवाले विष्णुको देखनेके लिये अब हम यत्न कर रहे हैं ॥ ३९ ॥
 और जिसके उदरसे यह विश्व उत्पन्न हुआ है, और प्रलयमें जिसके शरीरमें यह जगत् लय होगा, और जिसके साक्षात् वरकर्मों संसार है, ऐसे पुरुषो-
 त्तरूप विष्णुको देखेंगे ॥ ४० ॥ और जो सब संसारके रचनेवाले पालनेवाले देव हर्ता और भुवनके ईश्वर हरि पुरातन और आद्यमें होनेवाले अवि-

नाशी विष्णुको हम देखेंगे ॥ ४१ ॥ महा आदिको करनेवाले, भुवनके रक्षक पृथ्वीके कर्ता एकही नारायण जिनकी उपासे योगियोंको शुद्ध बुद्धिकी प्राप्ति होती है, उन नारायणका दर्शन हम करेंगे ॥ ४२ ॥ वह जगत्पति इस संपूर्ण जगत्को निगलकर भास्वात् बालककी समान होकर शयन कर सबके पत्रमें स्थित हो पैरोंके चलाते हैं, और हाथोंको कँपाते हैं ॥ ४३ ॥ जिसके ऊपरमें पुरातन मार्कण्डेय मुनि प्रवेश कर मायासहित सब लोकोंके देखने हुए और फिर बाहर आकरभी यह सब कुछ देखते हुए ॥ ४४ ॥ वही महात्मा जगत्के आदि कालमें संसारको पेटमें रखकर शयन कर जाते

स्रष्टा च योऽसौ सकलस्य देवः पाता च इतां च हरिः स एव ॥ ब्रह्मयाम नित्यं भुवनेश्वरं हरिं पुराणमाद्यं प्रभविष्णुमव्ययम् ॥ ४१ ॥

अजस्य कर्ता भुवनस्य गोप्ता भुवश्च कर्ता हरिरैक एव ॥ तं योगिनो योगविशुद्धबुद्धिं उभेम तेनैव मतिः समाकुला ॥ ४२ ॥ निगीर्य

विश्वं सकलं जगत्पातिः श्रेते शिशुत्वं समवाप्य साक्षात् ॥ वटस्य पत्रे जगतां निवासः पादौ च विशिष्य करो विभुन्वन् ॥ ४३ ॥ यत्स्यो-

दरं ववसुनिः पुस्तनो ववर्श लोकानसिङ्गान्स मायया ॥ प्रविश्य विश्वं सकलं यथावद्ब्रह्मिण्या भूतमभूविदं महत् ॥ ४४ ॥ निगीर्य

विश्वं जगदादिकाळे श्रेते महात्मा जलधेर्जलोधे ॥ देव्या श्रिया चामरलोलहस्तया निषेव्यमाणः पुरुषोत्तमस्तदा ॥ ४५ ॥ नाभेश्च

यस्याविरभूत्सपत्रं पद्मं महत्काञ्चनसप्रभं प्रभोः ॥ जन्मात्पदं लोकसुरोयदासीद्विस्तारं पद्मं जगदाविसृष्टौ ॥ ४६ ॥ वधार यो

भूतपतिर्महाम्नां वंशप्रसंस्थापितकठमुलाम् ॥ नवम्भामेष इवादिक्काले कुर्वन्वराहो मुनिगीतसूतिः ॥ ४७ ॥ हरिः पुराणः पुरुषोत्तमः

प्रभुः कर्ता समस्तस्य समस्तसाक्षी ॥ यज्ञात्मको यज्ञपतिर्जगत्पतिर्ब्रह्मं तमीशं वयमुद्यताः स्मः ॥ ४८ ॥

हैं, उस समय सानरमें देवी लक्ष्मी चमर हाथमें लिये उन पुरुषोत्तमकी सेवा करती है ॥ ४५ ॥ और जिसकी नाभसे सूर्यकी सरय काण्तिवाला पद्मोत्पलित कमल प्रगट हुआ, तिस विस्तारित कमलमें जगत्की सृष्टिके अर्थ महाजी जन्मे हैं ॥ ४६ ॥ और भूतपति जो अपनी दाहके अवमानपर पृथ्वीको रख स्थापित कर महामेघकी समान शब्द करते हुए वाराहजी पृथ्वीको धारण करते हुए जिनकी कीर्ति मुनि गाते हैं ॥ ४७ ॥ और वही वाराह हरि पुराण पुरुषोत्तम प्रभु सबके करनेवाले, सबके साक्षी, यज्ञात्मक, यज्ञपति, जगत्पति हैं, उनको देखनेके लिये हम उद्यत हुए हैं ॥ ४८ ॥

किन्नेही इस देवको बहुतकरोसे वर्जन करते हैं, और वेदान्त करके संस्थापित सत्त्वसंयुक्त विज्ञ ईश्वरके देसनेको हम उच्यत होते हैं ॥ ४९ ॥ और श्रुति, स्मृति, न्यायसे निविष्ट चित्तवाले बहुतसे बहुत प्रकारसे कहते हैं, और जबन्मा साक्षात् आत्मा है, ईश्वरके देसनेको हम सब उच्यत हुए हैं ॥ ५० ॥ जो आद्य वरका देनेवाला, भेद प्रकाशवाला, और एकान्त तत्त्ववाला सब प्राणिपौमें स्थित और देव, दुष्टोंको पीडा देनेवाला है. जिसको पुरातन मुनि ऐसा कहते हैं, ऐसे ईश्वरके हम देसनेको यत्न करते हैं ॥ ५१ ॥ और आदिकालमें जिस जनस्मृतिमें यह विश्व स्थित है जिसके देसनेको हम साव-

केचिद्ब्रह्मत्वेन वदन्ति देवमेकात्मना केचिदिमं पुराणम् ॥ वेदान्तसंस्थापितसत्त्वयुक्तं ब्रह्मं तमीक्षं वयमुच्यताः स्मः ॥ ४९ ॥ अनेकमेकं बहुधा वदन्ति श्रुतिस्मृतिन्यायनिविष्टचिन्ताः ॥ आधुर्यमात्मानमजं पुराविदो ब्रह्मं तमीक्षं वयमुच्यताः स्मः ॥ ५० ॥ यं प्रादुरीक्यं वरदं वरेण्यमेकान्ततत्त्वं सुनयः पुरातनाः ॥ यं सर्वगं देवमजं जनार्दनं ब्रह्मं हरिं संप्रति संयताः स्मः ॥ ५१ ॥ यस्मिन्विश्वमिदं प्रोतमादिकाले जगत्पतो ॥ तं ब्रह्ममभितवृताः किं नु वक्ष्याम साम्प्रतम् ॥ ५२ ॥ गच्छामो वयमन्यत्र गच्छ त्वं काममन्यतः ॥ नियमोऽप्यस्ति नो मर्त्यं यथेष्टं गच्छ साम्प्रतम् ॥ ५३ ॥ रात्रिमध्यमनुप्राप्तं नात्र कार्या विचारणा ॥ इत्युक्त्वा घोररूपोऽसौ पिशाचो विकृताननः ॥ ५४ ॥ तस्मिन्नेव समे देशे पीत्वा च रुधिरं बहु ॥ भक्षयित्वा यथाकामं मांसराशिं विचक्षणः ॥ ५५ ॥ अपः संपृश्य तत्रैव पार्श्वे संस्थाप्य साधनम् ॥ आन्त्रपाशं महाघोरं संस्थाप्य विपुलं महत् ॥ ५६ ॥

धान हैं, और अब हम क्या कहें ॥ ५२ ॥ हे मनुष्य ! अब हम अन्य जगह गमन करते हैं, और तू अन्य जगह गमन कर और जिधर इच्छा हो, उस यथेष्ट देशको चला जा ॥ ५३ ॥ बहुत घोर रात्रि है, इसका विचार न करना इस प्रकार कहकर विहृत सुखवाला घोररूप शिवाच ॥ ५४ ॥ इस देशमें बहुतसे रुधिरका पान कर और यथायोग्य मांसके समूहका भक्षण कर ॥ ५५ ॥ और जलके कुत्ते कर और समीपमें सब प्रकारके साधन और महाघोर रूप अन्त्रपाशको स्थापन कर ॥ ५६ ॥

कुशके आसनोंको बिछा, पानीसे आप पवित्र हो और सब कुत्तोंके गणोंको त्याग बड़े यत्नसे ॥ ५७ ॥ आसनपर स्थित हो समाधिके लिये यत्न करने लगा। फिर एकाग्रचित्त होकर विष्णुको नमस्कार कर घोररूप पिशाच प्रकटत्सल प्रभवान्के इस मंत्रका पाठ करने लगा ॥ ५८ ॥ प्रभवान्को नमस्कार है। वासुदेव और चक्रवर्त्ताको धारण करनेवालेको नमस्कार है ॥ ५९ ॥ ॐ नारायणके अर्थ नमस्कार है, विष्णु और प्रभविष्णुको नमस्कार है, हे केवल ! तुम्हारे कीर्तनसे मेरे आत्माकी शुद्धि हो ॥ ६० ॥ और यह घोररूप जन्म मेरे मत हों, हे गोपते ! तुम्हारे स्मरणसे मैं देवदूत हो जाऊँ ॥ ६१ ॥

आसनं कुशसंयुक्तं कृत्वा चाभ्युक्ष्य वारिणा ॥ उत्सार्य स्वर्णान् सर्वाभ्यन्तेन महता तदा ॥ ५७ ॥ सुखासनं समास्थाय समाधौ यतते श्वपः ॥ एकचित्तस्तदा भूत्वा नमस्कृत्य च केशवम् ॥ इमं मन्त्रं पठन्घोरः पिशाचो भक्तवत्सलम् ॥ ५८ ॥ नमो भगवते तस्मै वासुदेवाय चक्रिणे ॥ नमस्ते गदिने तुभ्यं वासुदेवाय धीमते ॥ ५९ ॥ ओं नमो नारायणाय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ मम भूयान्मनःशुद्धिः कीर्तनात्तव केशव ॥ ६० ॥ जन्मेदमीदृशं घोरं मा भून्मम दुरासदम् ॥ देवदूतो भविष्यामि स्मरणात्तव गोपते ॥ ६१ ॥ तव चक्रप्रदारेण कायो नश्यतु मामकः ॥ मम भूयो भवो मा भूदेवा मे प्रार्थना विभो ॥ ६२ ॥ अर्थिनां कल्पवृक्षोऽसि दाता सर्वस्य सर्वदा ॥ यत्र यत्र भवेज्जन्म तत्र तत्र भवान्हाविः ॥ ६३ ॥ वर्त्ततां मम देवेभ्यः प्रार्थनेषा ममापरा ॥ नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं भवत्वेवं सदा मम ॥ ६४ ॥ निर्विघ्ना प्रार्थना देव नमस्तेऽस्तु सदा मम ॥ यदा मे मरणं भूयात्तदा मां भूत्स्मृतिभ्रमः ॥ ६५ ॥ दिने दिने क्षणं चित्तं त्वयि संस्थं भवत्विति ॥ एवं प्रेरय मां देव मा भूते चित्तमीदृशम् ॥ ६६ ॥

और तुम्हारे चक्रके प्रहारसे मेरा शरीर नष्ट हो जाय और फिर मुझे यह संसार न मिले हे विभो ! यह मेरी प्रार्थना है ॥ ६२ ॥ आप अर्थियोंके कल्पवृक्ष हो और सब कालमें सबोंके दाता तुमही हो, हे देव ! जहाँ जहाँ मेरा जन्म हो, तहाँ तहाँ मेरे हृदयमें तुम स्थित रहो ॥ ६३ ॥ यह दूसरी मेरी प्रार्थना है, सो पूरी हो, तुम्हें मेरा बारंबार नमस्कार है ॥ ६४ ॥ हे देव ! विघ्नोंसे रहित सदा मेरी प्रार्थना हो, तुम्हें नमस्कार है, अब मेरी मृत्यु हो जाय, तबभी स्मृति बनी रहे ॥ ६५ ॥ दिनरात्रिमें और क्षणक्षणमें मेरा चित्त तुममें स्थित रहे, हे देव !

ऐसे मेरेको प्रेरित कर और ऐसा तुम्हारा चित्त न हो कि ॥ ६६ ॥ यह नृसंस्वरूप पिशाच है, इसपर क्या दया करनी उचित है. हे देव ! आप इस बातका विचार करो यह हमारा दास है ॥ ६७ ॥ हे विभो ! मेरा मन पराई पीढाके अर्थ मत न हो. हे भगवन् ! हे प्रभो ! आपको नमस्कार है. और सब इन्द्रिये इन्द्रियोंके अर्थोंको न भजें ॥ ६८ ॥ हे केशव ! तुम्हारे प्रसादसे अंतकालमें यह हो, पृथ्वी मेरी नास्तिकाकी रक्षा करे, और जल मेरी जिह्वा रक्षा करे ॥ ६९ ॥ सूर्य मेरे नेत्र रक्षा करे और वायु मेरे स्पर्शकी रक्षा करो, आकाश मेरे कानोंकी रक्षा करो और

नृक्षंसोऽयं पिशाचोऽयं दयास्मिन्का भवेदिति ॥ एवं चिन्तय मां देव भृत्यो ममामिति प्रभो ॥ ६७ ॥ परपीडा न मतोऽस्तु नमस्ते भगवन्प्रभो ॥ इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु मा भूवन् साम्प्रतं हि मे ॥ ६८ ॥ अन्तकाले ममाप्येवं प्रसादात्तव केशव ॥ पृथिवी यातु मे प्राणं रक्षतां यातु मे पथः ॥ ६९ ॥ सूर्यश्च यातु मे चक्षुः स्पर्शं यातु च मातुतः ॥ श्रोत्रमाकाशमप्येतु मनः प्राणं च मच्छतु ॥ ७० ॥ जलं मां रक्षतां नित्यं पृथिवी रक्षतां हरे ॥ सूर्यो मां रक्षतां विष्णो नमस्ते सूर्यतेजसे ॥ ७१ ॥ वायुर्मां रक्षतां दुःखादाकाशं च जनार्दन ॥ न मनः सर्वगं देव रक्षतां विषयान्तरे ॥ ७२ ॥ मनो विपर्यये घारे पुरुषान् इति नित्यज्ञः ॥ पापेषु योजयेत्पुंसः पापी-
डात्मकेषु च ॥ ७३ ॥ मनस्तद्रक्षतां देव भूयो भूयो जनार्दन ॥ मा भून्मनासि कालुष्यं मनो मे निर्मलं भवेत् ॥ ७४ ॥ कलुषं तस्य यच्चित्तं नरके पातयत्वमुत् ॥ बाह्यानि निर्मलान्येवमिन्द्रियाणि भवन्त्युत् ॥ ७५ ॥

मन मेरे प्राणोंकी रक्षा करो ॥ ७० ॥ जल, पृथ्वी, सूर्य, वायु, आकाश दुःखोंसे मेरी रक्षा करो. सूर्यके समान वेज्जवी ! आपको नमस्कार है ॥ ७१ ॥ हे जनार्दन ! वायु और आकाश दुःखसे मेरी रक्षा करें. हे देव ! मेरा मन विपर्ययमें नहीं लगे. ऐसी मेरी रक्षा करो ॥ ७२ ॥ मनके विपर्यय होनेसे पुरुषोंका नाश होता है, और यही मन मनुष्यको पापोंमें और परपीडामें युक्त करता है ॥ ७३ ॥ इस कारण हे देव ! बारंबार मेरे मनकी रक्षा करो. मेरे मनमें कालिप्त मत रहो और मेरा मन निर्मल हो जाय ॥ ७४ ॥ जिसका चित्त

काचित्से संडुक होता है वह नरकमें वास करता है, और बाह्यइन्द्रियें तो निर्मल होतीही हैं ॥ ७५ ॥ परन्तु जिसका मन काचित्से संडुक होता है, तहां यह इन्द्रियें कुछ कार्य नहीं कर सकतीं, जिसकी बुद्धिमें अपवित्र वस्तु है उसकी अंगशुद्धि क्या करेंगे ॥ ७६ ॥ हे केशव ! उसके बाहरसे स्नान करनेसे क्या है ? उसका बाह्यगोचर स्नान व्यर्थ है ॥ ७७ ॥ इस कारण हे जनार्दन ! सब प्रकार मेरे पित्रकी तुम रक्षा करो, हे देव ! यह इन्द्रियोंका समूह बलवान् है, इसके विषयोंकोभी निवारण करो ॥ ७८ ॥ हे जननाथ ! परबादसे बाणीही रक्षा करो, और हे जनार्दन ! पराये

न तानि कार्यवन्तीह मनश्चेत्कलुषं भवेत् ॥ नाङ्गानि मुष्टिना मेघं गृहीत्वा यो व्यवस्थितः ॥ ७६ ॥ बहिः प्रक्षालनं कुर्वन् किं भवे-
त्तस्य केशवः ॥ व्यर्थं हि केवलं तस्य प्रग्रहं बाह्यगोचरः ॥ ७७ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन चित्तं रक्ष जनार्दन ॥ बलवानिन्द्रियग्रामो
वारयेन जनार्दन ॥ ७८ ॥ परीवादाज्जगन्नाथ वाचं रक्ष बुरुष्वाय ॥ परब्रह्म्यात्मनो रक्ष परद्वारात्मनार्दन ॥ सर्वत्र मे क्या भूयात्प्रसा-
दात्तव केशव ॥ ७९ ॥ स्वयमेव भक्तिरचला भूयाद्भूतेषु मे क्या ॥ बहुनात्र किमुक्तेन शृणुष्वेवं वचो मम ॥ ८० ॥ सुखे दुःखे च
रागे च भोजने गमने तथा ॥ जाग्रत्स्वप्नेषु सर्वत्र स्वयमेव रमतां मनः ॥ ८१ ॥ मामकं देवदेवेश नमस्तेऽस्तु जनार्दन ॥ इति
बुध्णोरतमो जात्या हीनो न चिन्तितः ॥ ८२ ॥ पिशाचो भगवन्नृकः समाधिं समपद्यत ॥ दृढं बन्धात्मनः काममात्रपाशेन
मासयः ॥ ८३ ॥ निश्चलेनैव मनसा सुखमास्ते स्म संयतः ॥ ध्यायन् हरिं जनघोषिं विष्णुं पीताम्बरं शिष्य ॥ ८४ ॥

प्रपसे और पराई चीजे मेरी रक्षा करो, हे केशव ! तुम्हारे प्रसादसे सब जनह क्या ॥ ७९ ॥ तुममें अबलता भक्ति रहे, और बहुत कहनेसे क्या है हे जनपद ! तुम मेरे एक बचनको सुनो ॥ ८० ॥ सुख, दुःख, पीति, भोजन, वन, जानने और सोने, इन सबमें मेरा मन तुममेंही लगा रहे ॥ ८१ ॥ और हे जनार्दन देवदेवेश ! आपको नमस्कार है ऐसा कह चोरतम जातिहीन विचार छोड ॥ ८२ ॥ वह पिशाच भगवत्का भक्त होकर समाधिको प्राप्त हुआ अर्थात् आतोंकी फांसीसे अपने शरीरको दृढ बांध ॥ ८३ ॥ निश्चलत्व मन करके सुखपूर्वक बैठे हुआ हरि जनघोषि विष्णु पीताम्बर

शिव ॥ ८४ ॥ मुकुन्द, आदिपुरुष एककार्य अनामय नित्यशुद्ध, ज्ञानगम्य, सब प्राणियोंके कारण ॥ ८५ ॥ श्रीकृष्णका ध्यान करता हुआ और ओंकाररूप सनातन वेदको पढ़ता हुआ, नासिकाके अग्रभागको देखता हुआ निर्वाण दीपकी समान अचल हो ओंकार उच्चारण करता ॥ ८६ ॥ निरंतर एकाग्र चित्तको विष्णुमें समर्पित करके ॥ ८७ ॥ विकल्पसे रहित चित्तको हृदयके मध्यमें प्राप्त कर कपलरूप हृदयमें जगत्पति विष्णुको स्थापन कर ॥ ८८ ॥ और तीन प्रकारसे सनातन विष्णुको जपता हुआ मांसभक्षी पिशाच सुस्तपूर्वक महायोगी होकर स्थित हुआ ॥ ८९ ॥ इति श्रीम-

मुकुन्दमादिपुरुषमेकाकारमनामयम् ॥ नित्यं शुद्धं ज्ञानगम्यं कारणं सर्वदेहिनाम् ॥ ८५ ॥ नासिकाग्रं समालोक्य पठन् ब्रह्म सनातनम् ॥ निर्वातस्थो यथा दीपः प्रोच्चरन् प्रणवं सदा ॥ ८६ ॥ प्रणवं वाचकं मत्वा वाच्यं ब्रह्मेति निश्चितः ॥ एकाग्रं सततं कृत्वा चित्तं विष्णो समर्पितम् ॥ ८७ ॥ विकल्परहितं चित्तं हृदि मध्ये न्यवेशयत् ॥ पुण्डरीके शुभदले समावेश्य जगत्पतिम् ॥ ८८ ॥ आस्ते सुखं महायोगी पिशिताशस्तदा महान् ॥ त्रिधामानं जपन्तत्र स्मरन्विष्णुं सनातनम् ॥ ८९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासपात्रायां घण्टाकर्णचित्तसमाधिर्नामाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः स भगवान् विष्णुः पिशाचं दृष्ट्वास्तदा ॥ चिन्तयन्तं स्वमात्मानं शुद्धिबुद्धिसमन्वितम् ॥ १ ॥ आत्मन्यवास्थितं साक्षात्पठन्तं प्रणवं सकृत् ॥ प्रार्थयन्तं स्वमात्मानमेकान्ते नियतं हरिः ॥ २ ॥ अचिन्तयज्जगन्नायः कारणं पुण्यसंचये ॥ ध्यात्वा तु सुचिरं विष्णुः कारणं पुण्यकर्मणः ॥ ३ ॥

हाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासपात्रायां घण्टाकर्णचित्तसमाधिर्नामाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥ वैशम्पायन बोले, इस प्रकार भगवान् विष्णुने पिशाचको देखा कि अपने आत्माको चिन्तन करता, शुद्ध और बुद्धिसे युक्त ॥ १ ॥ आत्मामें स्थित अकेले ओंकारको पढ़ता और अपने आत्मासे प्रार्थना करनेवाला था, उसे देख हरि ॥ २ ॥ जगन्नाथ उसके पुण्यसंचयका कारण विचारने लगे और चिरकालमें ध्यान कर ॥ ३ ॥ कि

कुचेरेके उपदेशस यह पृथ्वीमें यह शब्द पढ़ता है मुझे पृथ्वीर्ष वासुदेव, ऊष्ण, माषव नामसे पुकारते हैं ॥ ४ ॥ जनार्दन, हरी, विष्णु, भूतभावन, मातृ, नरकारि, जगन्नाथ, नारायण, परायण, ॥ ५ ॥ इन नामोंसे दिनरात सोता हुआ, जलता हुआ स्थित हुआ जो नन करता हुआ, नमन करता हुआ और कहता हुआ ॥ ६ ॥ मेरा जप करता है और मांसकी बोटीको खाता हुआ, छोड़को पीता हुआ और बहुतसे मृगोंको मारता हुआ ॥ ७ ॥ मारनेमें, भोजन करनेमें, जागने सोनेमें सब कार्योंमें मैंही करता हूं, ऐसे मानता है ॥ ८ ॥ सो इस घोर कर्मका पाक यही है, इस प्रकार निश्चय

घनदस्योपदेशेन पठन्सुबहुशः क्षितौ ॥ वासुदेवेति कृष्णेति माषवेति च मां सदा ॥ ४ ॥ जनार्दन हरे विष्णो भूतभावन भावन ॥ नमस्कारि जगन्नाथ नारायण परायण ॥ ५ ॥ इति मां नामभिर्नित्यं पठत्येव दिवानिशम् ॥ स्वप्न जाग्रतस्था तिष्ठन् भुञ्जन् मच्छन्स्तथा वदन् ॥ ६ ॥ भक्षयन्मांसपिटकं पिबञ्छोणितमेव वा ॥ बाधमानं च सुखिरं इत्वा चापि मृगान्वहन् ॥ ७ ॥ इनने भोजने चैव जाग्रत्स्वप्ने तथैव च ॥ सर्वेष्वपि च कार्येषु कर्ताहमिति मन्यते ॥ ८ ॥ एतस्य कर्मणः फल एव घोस्वय कर्मणः ॥ निश्चित्येवं जगन्नाथः प्रीतस्तस्य बभूव ह ॥ ९ ॥ अदर्शयत्स्वमात्मानमननस्य जगत्पतिः ॥ शुद्धेऽन्तःकरणे तस्य पिशाचस्यापि भूमिष ॥ १० ॥ स च घोरः पिशाचोऽपि ददर्शात्मानि केशवम् ॥ पीतकौशेयवसनं पद्माक्षं श्यामलं हरिम् ॥ ११ ॥ शङ्किनं चक्रिणं विष्णुं स्रग्विणं गदिनं विभुम् ॥ किरीटिनं कौस्तुभिनं श्रीवत्साच्छादितोरसम् ॥ १२ ॥ नीलमेघनिभं कान्तं गरुडस्थं प्रभञ्जनम् ॥ चतुर्भुजं शुभगिरं निश्चलं सर्वगं शिवम् ॥ १३ ॥

कर जगन्नाथ अर्थात् श्रीकृष्ण प्रसन्न होकर ॥ ९ ॥ अपने स्वरूपको दिखाते हुए, हे राजन् ! उस पिशाच का अंतःकरण शुद्ध हो गया था, इससे दर्शन पाया ॥ १० ॥ जब वह घोररूप पिशाच अपनेही आत्मामें पीले रेशमी वस्त्रोंको धारण करनेवाले कपलके समान नेत्रोंवाले और श्याम रंग-वाले ॥ ११ ॥ शंख, चक्र, गदा, माला, मुकुट, कौस्तुभमणिको धारण करनेवाले और श्रीवत्सचिन्हसे आच्छादित छातीवाले ॥ १२ ॥ नील-मेघके समान कानिमान्, प्रकाशित और गरुडपर स्थित और चार भुजावाले सुंदर वाणीवाले और निश्चल सर्वग और कल्याणरूप ॥ १३ ॥ आदि-

अंतरहित, नित्य और मायावी, मायासे रहित सत्यरूप, सब कालमें शुद्ध और बुद्धिमें प्राप्त होनेके योग्य और सब कालमें मलसे रहित ॥ १४ ॥
 जीलुष्णको अनेक प्रकारसे मनमें देखकर फिर नेत्रोंको बंदकर मैं ऊतार्थ हुआ, ऐसा मानता हुआ ॥ १५ ॥ और कहने लगा कि अब साक्षात्
 विष्णुको मैंने देखा और विष्णु मुझसे प्रसन्न हैं, इस कारण मुझे विष्णुके दर्शन हुए हैं ॥ १६ ॥ और मेरे जन्मका कृत्य सिद्ध हुआ, इसके उपरान्त
 मेरे कोईभी कृत्य नहीं है मेरे हृदयकी ग्रन्थी छूट गई है, वशमें मेरी इन्द्रियें बंधी हो गई हैं ॥ १७ ॥ और विशेष करके मैंने मनघी जीत लिया है,
 अनादिनिधनं नित्यं मायाविनममायिनम् ॥ सत्ययुक्तं सदा शुद्धं बुद्धिगम्यं सदामलम् ॥ १४ ॥ मनस्येवं जगन्नाथं दृष्ट्वा विष्णु-
 मनेकधा ॥ अनुमील्यैव नयने कृतार्थोऽस्मीत्यमन्यत ॥ १५ ॥ अथ दृष्टो हरिर्विष्णुः साक्षात्सर्वजगः शुभः ॥ प्रसन्नो हि हरिर्मह्यं
 तेनाहं दृष्टवान्हरिम् ॥ १६ ॥ सिद्धं मे जन्मनः कृत्यं किमतः कृत्यमस्ति मे ॥ ग्रन्थयो मम निर्भिन्ना वक्ष्यान्त्येवेन्द्रियाणि मे ॥ १७ ॥
 प्रायेण जितमित्येव मनो मन्ये स्मृते हरो ॥ ईषणा च निरस्ता मे प्रसन्नोऽहं तथाभवम् ॥ १८ ॥ एतेभ्योऽपि पिशाचेभ्यो निर्मुक्तः
 साम्प्रतं तथा ॥ योऽसौ ममानुजः साक्षात्स च भक्तस्तथा हरो ॥ १९ ॥ कालेन चैव निर्मुक्तो विष्णोः सायुज्यमाप्नुयात् ॥ इत्येवं चिन्त
 यित्वा स आत्त्रपाशं विभेद्य च ॥ २० ॥ क्रमेण प्राणानुमुच्य विडोक्त्य च दिशस्तथा ॥ शरीरं सुगमं कृत्वा प्राविशत्स सुखेन
 ह ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां पिशाचस्य विष्णुसाक्षात्कारो नाम एकाशीतितमोऽ-
 ध्यायः ॥ ८३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ पिशिताशो जगन्नाथं ददर्शाथ जगद्गुहम् ॥ समाधौ च यथादृष्टं भूमौ चापि तथा हरिम् ॥ १ ॥
 और मेरी इच्छा दूर हो गई है, और मैं प्रसन्न हो गया हूं ॥ १८ ॥ और इन पिशाचोंसेभी मैं अलग हो गया हूं, और जो मेरा छोटा भाता है, वहभी
 मेरी समान विष्णु भगवान्का भक्त है ॥ १९ ॥ और समय पाकर निर्मुक्त हुआ मैं विष्णुके समीप प्राप्त हुंगा, ऐसा विचार कर आत्रपाशको भेदन
 कर ॥ २० ॥ क्रमसे अपने प्राणोंको छोड़ और सब दिशाओंको देख और शरीरको समस्त कर सुखसे संयुक्त हुआ ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते
 खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि मायायां कैलासयात्रायां घंटाकर्णस्य विष्णुसाक्षात्कारो नाम एकाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥ वैशम्पायन बोले, कि जैसे

उग्र पिशाचने समाधिमें श्रीलङ्गको देखा. तेसेही पृथ्वीमेंनी स्थित हुए श्रीलङ्गको देखा ॥ १ ॥ “ यह विष्णु है यह विष्णु है ” इस प्रकार वह पिशाच कहने लगा, जैसा समाधिमें देखा था वैसा प्रत्यक्ष देखता हूं इस प्रकार कह नाचना और हँसना हुआ फिर बोला ॥ २ ॥ कि चक्र शर शार्ङ्ग वलुप ध्वजा गदा रथ तूणयुक्त शकोंको हाथमें धारण किये, सहस्रशिरोवाले और सब देवताओंके स्वामी जगत्के निवास विष्णु भगवान् यही हैं ॥ ३ ॥ सबोंको जीतनेवाले, जगत्के स्वामी, पुरातन पुरुषोंमें उत्तम, विश्वके ईश और विश्वके कर्ता सनातन विष्णु यही हैं ॥ ४ ॥ इन्हीं विष्णुके दोनों स्तनोंके अयं विष्णुरयं विष्णुरित्युचे पिञ्जिताशनः ॥ समाधौ च यथा दृष्टः सोऽयमत्रापि दृश्यते ॥ त्युक्त्वा च पुनर्ब्रूते नृत्यान्निव हसन्निव ॥ २ ॥ अयं स चक्री शरशार्ङ्गधन्वा गद्दी रथी सध्वजतूणपाणिः ॥ सहस्रमूर्द्धा सकलामरेशे जगत्प्रसूतिर्जगतां निवासः ॥ ३ ॥ विष्णुर्जिष्णुर्जगन्नाथः पुराणः पुरुषोत्तमः ॥ विश्वात्मा विश्वकर्ता यः सोऽयमेव सनातनः ॥ ४ ॥ अस्यैव देवस्य हरेः स्तनान्तरं विराजते क्रौस्तुभरवदीपः ॥ यस्य प्रसादाच्चगदेतदादौ विराजते चन्द्रमसेव रात्रिः ॥ ५ ॥ योऽसौ पृथ्वीं दधाराशु दंष्ट्रया जलसंचयात् ॥ योऽयमेव हरिः साक्षाद्भाराहं वपुरास्थितः ॥ ६ ॥ बद्धा तथा दानवमुग्रपौरुषं ददौ च शक्राय ततोऽनु राज्यम् ॥ बलिं बलादेव हरिः स वामनः स्तुतश्च भक्त्या मुनिभिः पुरातनैः ॥ ७ ॥ दंष्ट्राकरालः सुमहान् इत्वा यो दानवान्रणे ॥ निःशोकमखिलं लोकं चकारासौ जनादनः ॥ ८ ॥ आदौ दधारेकभुजेन मन्दरं निर्मित्य सर्वानसुरात्महार्णवे ॥ ददौ च शक्राय सुधामयं महान् स एव साक्षादिह मामवस्थितः ॥ ९ ॥

बीचमें क्रौस्तुभपाणि विराजमान है, जिससे चंद्रमाकी समान रात्रि प्रकाशित हो रही है ॥ ५ ॥ जिन्होंने जलके समूहसे पृथ्वीका अपनी डांडपर रखकर बाहर निकला था. वह साक्षात् वाराहरूपको धारण करनेवाले विष्णु यही हैं ॥ ६ ॥ इन्हीं भगवान्ने उग्र पौरुषवाले बलि दैत्यको बांधकर इन्द्रके अर्थ उनका राज्य दिया. उस समय पुरातन मुनियोंसे स्तुतिको प्राप्त हुए बली विष्णु यही हैं ॥ ७ ॥ जो बड़ी डाढ़ोंवाले कराल बड़े रूपको धारण करनेवाले युद्धमें दैत्योंको मार शोकसे रहित इस लोकको करते हुए वह विष्णु यही हैं ॥ ८ ॥ जो आदिमें एकभुजासेही मंदराचल पर्वतको

धारण कर समुद्रके सब दैत्योंको जीत इन्द्रको अमृत देते हुए वह विष्णु यही स्थित हैं ॥ ९ ॥ मधुकैटभ दैत्यको बधकर समुद्रमें शेषनागत्प शय्यापर
 शयन करते हैं ॥ १० ॥ जिसको विद्वान् आद्य जगत्पति सबका धाता अजन्मा अन्योंको जीतनेवाला सूक्ष्मसे सूक्ष्म और स्थूलसे स्थूल कहते हैं,
 वह विष्णु यही हैं ॥ ११ ॥ और संहार कालमें यह जगत् जिसमें स्थित होता है, और आरम्भ जिससे उत्पन्न होता है वह विष्णु यही हैं ॥ १२ ॥
 और जिसकी इच्छासे यह जगत् प्रवृत्त और निवृत्त हो जाता है, सो पुरुषोत्तम शिव यादवेश्वर विष्णु यही मेरे समीप स्थित हैं ॥ १३ ॥ जो भृगु-
 यः शोते जलघो नागे देव्या लक्ष्म्या सुखावहे ॥ इत्वा तो दानवो घोरा मधुकैटभसंज्ञितो ॥ १० ॥ यमाहुराद्यं विबुधा जगत्पतिं
 सर्वस्य धातारमजं जनित्रम् ॥ अणोरणीषांसमतिप्रमाणं स्थूलात्स्यविष्टं हरिमेव विष्णुम् ॥ ११ ॥ यत्र स्थितमिदं सर्वं प्राप्ते
 लोकस्य नाशने ॥ आदौ ब्रह्मात्समुत्पन्नं सोऽयं विष्णुरिति स्थितः ॥ १२ ॥ यस्येच्छया सर्वमिदं प्रवृत्तं प्रवर्तते चापि जनार्दनस्य ॥
 अयं स विष्णुः पुरुषोत्तमः शिवः प्रवर्तते मामिह यादवेश्वरः ॥ १३ ॥ भृगोर्वक्षे समुत्पन्नो जामदग्न्य इति श्रुतः ॥ शिष्यत्वं समवाप्येव
 मृगव्याधस्य यः स्थितः ॥ १४ ॥ जवान वीर्योद्भूतिं महारणे कुठारस्त्रेण निरीक्ष्य शिष्यः ॥ सहस्रबाहुं कृतवीर्यसंभवं इयेर्गजैश्चैव
 रथैश्च निर्भतम् ॥ १५ ॥ कुक्षेत्रं समासाद्य यश्चकार पितृक्रियाम् ॥ निःक्षत्रियमिमं लोकं कृतवानेकविंशतिः ॥ १६ ॥ रघोरथ
 कुले जातो रामो नाम जनार्दनः ॥ सीतया च श्रिया युक्तो ऋमणानुचरः कृती ॥ १७ ॥ कृत्वा च सेतुं जलघो जनार्दनो इत्वा च
 रक्षःपतिमाश्रुतेः शूरेः ॥ दत्त्वा च राज्यं स विभीषणाय दक्षायश्चमेघरथञ्च योऽसौ ॥ १८ ॥

सभे जबदबिके पुत्र परशुराम नामसे उत्पन्न हो जो मृगव्याधके शिष्यत्वको प्राप्त हो अर्थात् ॥ १४ ॥ महादेवजीके शिष्य होकर युद्धमें करता ठे महाबली
 कृतवीर्यके पुत्र, घोड़े, हाथी, रथमें बैठनेवाले सहस्रबाहुको मारवे हुए ॥ १५ ॥ पीछे इक्कीसवार इस लोकको क्षत्रियोंसे रहित कर कुक्षेत्रमें प्राप्त हो
 पितृक्रिया की वह विष्णु यही है ॥ १६ ॥ जो रघुवंशमें उत्पन्न हो सीता और शोभासे संयुक्त अनुगामी लक्ष्मण भातासे संयुक्त विद्वान् ॥ १७ ॥ रामचंद्र
 समुद्रमें सेतुको बनाय और तीक्ष्ण बाणोंसे रावणको मार और विभीषणको राज्य दे पीछे दश अश्वमेधयज्ञ करते हुए, वह विष्णुजी यही हैं ॥ १८ ॥

और वसुदेवके कुलमें जन्म लेनेवाले वासुदेव नामसे विख्यात जो बलदेवजीके संग गोकुलमें क्रीडा करते थे ॥१९॥ सीधे शयन करते बालरूप धारण करनेवाले श्रीकृष्ण पूतनाके दिये हुए स्तनको पी पूतनाको मारकर फिर सुखपूर्वक वास करते हुए ॥ २० ॥ दूधके पीने और नैनीघृतके खानेसे क्रोधको प्राप्त हुई माताने रस्तीसे इन विष्णुको बांध दिया ॥२१॥ तब दृढरूप रस्तीसे बंधे हुए यमछाजुन वृक्षोंको गिराया और गोकुलमें वास कर गोपियोंके संग सुख और स्तनको आच्छादित कर क्रीडा करी ॥ २२ ॥ विष्णु भगवान् वृन्दावनमें गोकुलवासियोंके साथ निवास करते केशीनामक अश्व (घोड़े) को वसुदेवकुल जातो वासुदेवेति शब्दितः ॥ गोकुले क्रीडते योऽसौ संकर्षणसहायवान् ॥ १९ ॥ उत्तानशायी शिशुरूपधारी पतिः स्तनं पूतनिकाप्रदत्तम् ॥ व्यसुं चकाराशु जनार्दनस्तदा दनोः सुतां तामवसत्सुखं हरिः ॥ २० ॥ पयःपानं तथा कुर्वन् भक्षयन् शिपिण्डकम् ॥ दाम्ना बद्धोदरो विष्णुर्मात्रा रुषितया दृढम् ॥ २१ ॥ ततश्च दाम्ना सुदृढेन बद्धो जवान योऽसौ यमछाजुनो च ॥ क्रीडन्हरिर्गोकुलवासवासी गोपीभिरास्वाद्य सुखं स्तनं च ॥ २२ ॥ वृन्दावने वसन्विष्णुर्गोपैर्गोकुलवासिभिः ॥ तत्र हत्वा हयं राजन् विरराजांशुमानिव ॥ २३ ॥ यः क्रीडते नागफणौ जनार्दनो निषेव्यमाणः सह गोपदारकैः ॥ महाहृदे नागपतिं जगत्पतिर्ममर्द वीर्यातिशयं प्रदर्शयन् ॥ २४ ॥ यो धेनुकं तालवने तत्फलेः सममच्छिनत् ॥ हत्वा दानवमुग्रं तं गोपान्विस्मापयत्यसौ ॥ २५ ॥ दधार यो गोधरमुग्रपौरुषान्महामतिर्मेघसमागमे सति ॥ निदम्बयच्छक्रवटं प्रमोदयन् गोपांश्च गोपीश्च स गोकुलं हरिः ॥ २६ ॥ गोपीनां स्तनमध्ये तु क्रीडते काममीश्वरः ॥ योऽसौ पिबंस्तदधरं मायामानुषदेहवान् ॥ २७ ॥

मार सूर्यकी समान प्रकाशित हुए ॥ २३ ॥ गोर्षोंके बालकोंके संग यमुनामें कालियसर्पके फनोंपर क्रीडा करी और वीर्यके अतिशयको दिखानेके लिये कालियसर्पको जगन्नाथने नाथा ॥२४॥ और तालवनमें उग्ररूप धेनुक दानवको तिसी वनके फलोंसे मार गोर्षोंको आश्रय दिखाया ॥२५॥ जब इन्द्रने क्रोधकर वज्रपर जल बरसाया, तब श्रीकृष्णने उनकी रक्षा की, और गोप गोपी गोकुलको आनंदित किया और उग्ररूप गोवर्द्धन पर्वतको धारण किया ॥ २६ ॥ और मायासे मनुष्यदेहको धारण करनेवाले गोपियोंके अधरामृतको पीनेवाले तथा गोपियोंके स्तनोंमें इच्छापूर्वक क्रीडा करने

वाले ॥ २७ ॥ तथा गोपियोंके अधराप्रतका पान कर उनके संग एकान्तस्थानमें शयन करनेवाले उनके स्तनोंके आलिंगनसे प्रसन्न हुए ॥ २८ ॥
 अक्रूरके संग बुलाये हुए मार्गमें चलनेके समय अक्रूरने यमुनाके जलमें जो ईश्वर देखे वही रथमें देखे ॥ २९ ॥ मथुरापुरीमें चलने हुए बलवान् जनार्दन मार्गमें अपने बलभे उग्ररूप रजक (घोड़ी) को मारकर वह ईश्वर मनोशान्ति वशोंको ग्रहण कर बलदेवजीके संग मथुरापुरीमें विचरे ॥ ३० ॥
 और मालाकारकी बहुतसी मालाओंको ग्रहण कर तिसको वरदान दे कुब्जासे सुंदर अनुलेपन ग्रहण कर उसको सुंदर रूपवाली बना दिया ॥ ३१ ॥
 गोपीभिरास्वाद्यमुखं विविक्ते शोते स्म रात्रौ सुखमेव केशवः ॥ स्तनान्तरेष्वेव तदा च तासां कामी च कान्ताधरपल्लवं पिबन् ॥ २८ ॥
 अक्रूरेण समाहृतस्तेन गच्छन् हि यामुने ॥ जडे यो ह्यर्चितस्तेन नागल्लेके स एव हि ॥ २९ ॥ ततश्च गच्छन्बलवान् जनार्दनो हता
 तमुग्रं रजकं बलात्पथि ॥ हत्वा च वस्त्राणि यथेष्टमीश्वरो ययौ सरामो मथुरां पुरीं हरिः ॥ ३० ॥ लब्ध्वा च दामानि बहूनि कामशे
 दत्त्वा वरं माल्यकृते महान्तम् ॥ लब्ध्वातुलेपं सुरभिं च यादवः कुब्जां चकाराशु महाहंरूपाम् ॥ ३१ ॥ योऽसौ चापं समादाय मध्ये
 च्छित्त्वा महद्भुतः ॥ सिंहनादं महाश्वके कल्पान्ते जलदो यथा ॥ ३२ ॥ इत्वा गजं घोस्मुदग्ररूपं विषाणमादाय ततोऽनु केशवः ॥
 ननर्त रङ्गे बहुरूपमीश्वरः कंसस्य दत्त्वा भयमुग्रशीर्यः ॥ ३३ ॥ योऽसौ हत्वा महामल्लं चाणूरं निहतद्विषम् ॥ यादवैभ्यो ददौ प्रीतिं
 कंसस्येव तु पश्यतः ॥ ३४ ॥ जघान कंसं रिपुपक्षघातिनं पितृद्विषं यादवनामधेयम् ॥ संस्थाप्य राज्ये हरिरुग्रसेनं सांदीपिनं
 काश्यपमुपागतो यः ॥ ३५ ॥ विद्यामवाप्य सकलां दत्त्वा पुत्रं महामुनेः ॥ सायजोऽय जगामाशु मथुरां यादवीं पुरीम् ॥ ३६ ॥
 इसके उपरान्त रंगसमाजमें जाकर बलुषको ग्रहण कर बीचसे तोड़ सिंहके शब्दकी समान शब्द कर कि जिस प्रकार कल्पके अंतमें मेवोंका शब्द होता
 है ॥ ३२ ॥ फिर उदग्र रूपवाले कुबलयापीठ हाथीको मार तिसके दाँतोंको ग्रहण कर रंगसमाजमें विचरते हुए केशवने कंसको अति भय दिखाया ॥ ३३ ॥
 फिर कंसके देखते हुए महामल्ल चाणूरको मारकर यादवोंको प्रसन्न किया ॥ ३४ ॥ तिसके पीछे शत्रुके पक्षको मारनेवाले पिताके वैरी कंसको मार
 उग्रसेन राजाको राज्यपर स्थित कर सांदीपिनी नामक गुरुके शीष प्राप्त हुए ॥ ३५ ॥ तहां संपूर्ण विद्याको प्राप्त हो दक्षिणामें गुरुको पुत्रका दान दे

बल्लभजीके संग श्रीकृष्ण मथुरामें प्राप्त हुए ॥ ३६ ॥ और मिशुंन नरकासुर दैत्यको मारकर और दैत्योंको पीटा देकर संभाम कर ब्राह्मण सुनियोंके समूह देवतोंकी जगत्पतिने रक्षा की ॥ ३७ ॥ ऐसे विष्णु भगवान्को अब मैंने देखा है सो कृतकृत्य हुआ और मैं मोक्षको प्राप्त हुंवा ॥ ३८ ॥ कारण कि जिसने साक्षात् विष्णुको देख लिया, उसके हाथमें सुक्ति स्थित है, वह यह विष्णु मेरे सन्मुख स्थित है ॥ ३९ ॥ निश्चयही मैंने पूर्वजन्ममें बहुत धर्मका संचित किया जिससे यह विष्णु भगवान्का दर्शन मुझे प्राप्त हुआ है ॥ ४० ॥ सर्वथा मैं पुण्यवान् हूं मेरे संसारके बंधन नष्ट हो गये, और क्या

हत्वा निशुम्भं नरकं महामतिः कृत्वा सुषोरं कदनं जनार्दनः ॥ ररक्ष विप्रान्मुनिदीरसंधान्देवांश्च सर्वान् जगतो जगत्पतिः ॥ ३७ ॥ स एष भगवान्विष्णुरद्य दृष्टो जनार्दनः ॥ कृतकृत्योऽस्मि संजातः सायुज्यं प्राप्तवानहम् ॥ ३८ ॥ येन दृष्टो हरिः साक्षात्तस्य सुक्तिः करे स्थिता ॥ सोऽयमेष हरिः साक्षात्प्रत्यक्षमिह वर्तते ॥ ३९ ॥ नूनं जन्मान्तरे पूर्वं धर्मः संचित एव मे ॥ यस्य पाकः समुत्पन्नो येनासौ दृश्यते मया ॥ ४० ॥ सर्वथा पुण्यवानस्मि नष्टसंसारबन्धनः ॥ किमस्मै दीयते वस्तु किं नु वक्ष्यामि साम्प्रतम् ॥ करिष्ये किमहं विष्णो वदस्वाद्य यथेप्सितम् ॥ ४१ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ इत्युक्त्वा विस्तरं नन्दं नन्दं बहुशस्तदा ॥ जहास विकृतं भूयो ननर्त पिशिताशनः ॥ ४२ ॥ नमो नमो हरे कृष्ण यादवेश्वर केशव ॥ प्रत्यक्षं च हरेस्तत्र ननर्त विविधं नृप ॥ ४३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि केलासयात्रायां घण्टाकर्णस्तुतिर्नाम व्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८२ ॥

वस्तु मैं इनको हूं ? क्या अब कहूं ? ॥ ४१ ॥ हे विष्णो ! मैं अब क्या करूं ? जो अब वांछित हो सो कहो ॥ ४२ ॥ वैशम्पायनजी बोले कि, इस प्रकार ऊंचे स्वरसे कहकर वह पिशाच फिर बड़े वेगसे गर्जकर नाचने लगा ॥ ४३ ॥ हे हरे ! हे केशव ! हे कृष्ण ! हे यादवेश्वर ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, ऐसे कहता हुआ श्रीकृष्णके सन्मुख नानाप्रकारसे नाचने लगा ॥ ४४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रापायां केलासयात्रायां घंटाकर्णस्तुतिर्नाम व्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८२ ॥

वैशम्पायन बोले कि इस प्रकार वह पिशाच बारंबार हँसकर फिर भरे हुए ब्राह्मणके शरीरको लाकर ॥ १ ॥ उसके दो हाथकर उस महाघोर बालमुक्तको ले पानीसे शुद्ध कर ॥ २ ॥ सुंदर पात्रमें घर भीरुका नमस्कार कर अंजलि बांध वन्न हो देवेशसे योग्य इस प्रकार कहने लगा ॥ ३ ॥ हे जगन्नाथ ! हे प्रभो ! तुम्हारे योग्य वह भक्ष्य पदार्थ है, इसको ग्रहण कीजिये और हे हरे ! तुम्हारे सरीसोंको यह पदार्थ सब प्रकारसे ग्रहण करना चाहिये आप सर्वात्मा हो ॥ ४ ॥ हे विष्णो ! हम भक्तिसे वन्न हैं, इसमें विचार नहीं करना चाहिये, जो भक्तिनम्र

वैशम्पायन उवाच ॥ विदस्य विकृतं भूयः प्रनृत्य च यथाबलम् ॥ ब्राह्मणस्य इतस्तथा शवमादाय सत्वरः ॥ १ ॥ द्विधाकृत्य महाघोरं पिशितं केशशतद्वलम् ॥ ततः सण्डं समादाय अद्भिरभ्युक्ष्य यन्नतः ॥ २ ॥ विधाय पात्रे सुशुभे नमस्कृत्य जनार्दनम् ॥ इदं प्रोवाच देवेशं प्राञ्जलिः प्रणतः स्थितः ॥ ३ ॥ गृहाण मे जगन्नाथ भक्ष्यं योग्यं तव प्रभो ॥ भवादृशैर्जगन्नाथ ग्राह्यं सर्वात्मना हरे ॥ ४ ॥ भक्तिनम्रा वयं विष्णो नात्र कार्या विचारणा ॥ दत्तं यद्भक्तिनम्रेण ग्राह्यं तत्स्वामिना हरे ॥ ५ ॥ नवं सुसंस्कृतं भक्ष्यं ब्रह्मण्यं शवमुत्तमम् ॥ अस्माकं पिशिताक्षानां शास्त्रे नियतमेव हि ॥ ६ ॥ तस्माद्गृहाण भगवन् यदि दोषो न विद्यते ॥ इत्युक्त्वा विकृतं भूयो विदस्य स तु कामतः ॥ ७ ॥ दातुमेच्छतदा सण्डमस्पृश्यं तु शवस्य ह ॥ ततः प्रीतोऽभवत्तस्मै मनसा पूजयच्च तम् ॥ ८ ॥ अहोऽस्य स्नेहकारुण्यं मायि सर्वत्र वर्तते ॥ इति संचिन्त्य मनसा प्रोवाच यदुपुद्भवः ॥ ९ ॥

पुरुष है, वह स्वामीको ग्रहण करना उचित है ॥ ५ ॥ नवीन अच्छी प्रकार संस्कारित किया ब्राह्मणका शरीररूप मुरदा भक्ष्य हमारे शास्त्रमें उच्च कहा है ॥ ६ ॥ इस कारण हे भगवन् ! जो दोष नहीं हो तो आप ग्रहण कीजिये, इस प्रकार वात्सवार विकृत कहकर और हँसकर ॥ ७ ॥ नहीं स्पर्श करनेके योग्य उस मुरदेके टुकड़ेको भीरुका लिये देनेकी इच्छा करने लगा तब तिस पिशाचके अर्थ प्रसन्न हुए भीरुका तिसको बचसे पूजते हुए ॥ ८ ॥ कहने लगे कि आश्चर्य है ! इसका स्नेह मेरे विषे सब स्थानोंमें है इस प्रकार मनमें चिंतवन करके भीरुका कहने लगे ॥ ९ ॥

हे पिशाच ! इसको मुझे मत दो, मुझ सरीखे मनुष्य ब्राह्मणकी शक्का स्पर्श नहीं करते ॥ १० ॥ कारण कि धर्मकी आकांक्षावाले सब मनुष्योंकी सब कालमें ब्राह्मण पूजने योग्य है, और घोरकर्मवाले पिशाच ब्राह्मणके मारनेमें यत्न करते हैं ॥ ११ ॥ किसी कालमेंभी ब्राह्मण मारनेके योग्य नहीं है, क्योंकि कि ब्राह्मणके मारनेसे निश्चय नरक होता है इस कारण इसको यह सुरदा स्पर्श करना योग्य नहीं है, इसमें संशय नहीं करना ॥ १२ ॥ परन्तु तेरा कल्याण हो, मैं तेरी प्रीतिसे प्रसन्न हुआ, और जिस प्राकृतिसे तेरा मन निर्मल हुआ, और जिसका मन शुद्धिको प्राप्त हो, तिसपर मैं प्रसन्न हो जाता हूँ ॥ १३ ॥ और इस कीर्तनसे निरंतर तेरा अंतःकरण शुद्ध प्रतीत होता है, सो मैं तुझसे अति प्रसन्न हूँ,

अलभेतेन सर्वत्र पिशाच पिशिताशन ॥ अस्पृश्यं मादृशैरेतद्ब्रह्मण्यं श्वमुत्तमम् ॥ १० ॥ ब्राह्मणः सर्वथा पूज्यो जन्तुभिर्धर्मका-
ह्विभिः ॥ पिशाचा घोरकर्माणो यत्नन्ते ब्रह्महिंसने ॥ ११ ॥ न हन्तव्याः सदा विप्रास्तादिसा नरकावहा ॥ तस्मादस्पृश्यमस्माभिर्नात्र
कार्या विचारणा ॥ १२ ॥ भक्त्या प्रीतोऽस्मि भद्रं ते मनोनिर्मलता मया ॥ मनःशुद्धिं यदा यत्नं ततः प्रीतोऽस्मि मांसप ॥ १३ ॥
अस्मात्संकीर्तनाच्छब्दच्युद्धं हि करणं तव ॥ अतीव ममसा प्रीत इत्युक्त्वा भगवान् हरिः ॥ १४ ॥ पस्पृशाङ्गं तदा विष्णुः पिशाच-
स्याय सर्वतः ॥ करेण मृदुना देवः पापान्निर्मोचयद्हरिः ॥ १५ ॥ ततस्तस्याभवद्रूपं कामरूपसमप्रभम् ॥ दीर्घकुञ्चितकेशाढ्यो
दीर्घबाहुः सुलोचनः ॥ १६ ॥ समाङ्गुलिः समनखः समवक्रः समुन्नतः ॥ पद्माक्षः पद्मवर्णाभः पद्मकेशरभूषणः ॥ १७ ॥ केयूरी
चाङ्गदी चैव कोशेयवसनस्तदा ॥ ज्ञानवान्सत्त्वसंपन्नः साक्षादिन्द्र इवापरः ॥ १८ ॥

ऐसे कहकर भगवान् हरि ॥ १४ ॥ श्रीकृष्ण उस पिशाचके सब अंगोंको चारों ओरसे कोमल हाथसे स्पर्श करते हुए और पापोंसे उस पिशाचको छुटाते हुए ॥ १५ ॥ तब उसका रूप कामदेवके समान कांतिमान् लंबे केशोंवाला लम्बी भुजाओंवाला और सुंदर नेत्रोंवाला ॥ १६ ॥ समान अंगुलियोंवाला और समान नखोंवाला समान मुख सम्यक् प्रकारसे ऊंची नासिकावाला और कमलके समान नेत्रवाला और कमलके वर्णकी समान कांति और कमलके केशरकी समान भूषित ॥ १७ ॥

और केयूर बाजूबंदको धारण करनेवाला, रेशमी कपड़ोंको पहने हुए, ज्ञानमाला और सत्कृत्योंसे संभूत, साक्षात् इन्द्रके समान मानो दूसरा इन्द्र ॥ १८ ॥ गंधर्वके समान गानेवाला और सिद्धके समान सिद्ध वह पिशाच होता हुआ अर्थात् श्रीकृष्णके कोमल हाथके छूनेसे ॥ १९ ॥ जैसा रूप उस पिशाचको मिला, तैसे रूपको उग्रतप करनेवाले मुनिजनभी प्राप्त नहीं हो सकते ॥ २० ॥ जो बड़ा घोर परमदाहण तप करके रूप प्राप्त होता है, यह उस पिशाचने पाया ॥ २१ ॥ हे राजन् ! ऐसा कौन जन है जो श्रीकृष्णके आश्रित होकर दुःखी रहे, वह सर्वत्र कल्याणको प्राप्त होता है, जो नित्य जनार्दनको ॥ २२ ॥ नित्यप्रति ध्यान करता पढ़ता जप करता है, तो ऐसी क्या वस्तु है, जिसकी उसे प्राप्ति नहीं हो सकती है,

गन्धर्व इव गायंस्तु सिद्धः सिद्ध इव स्वयम् ॥ साक्षात्स्पृष्टं तदा विष्णोः करेण मृदुपूर्वकम् ॥ १९ ॥ न नूनं तादृशं रूपमासीत् कालान्तरेष्वपि ॥ अद्यापि नैव मुनयो लभन्ते तादृशं वपुः ॥ २० ॥ कृत्वा सुबहुशो घोरं तपः परमदाहणम् ॥ यच्च लब्धं तदा तेन पिशाचेन नृपोत्तम ॥ २१ ॥ को नु नाम जगन्नाथमाश्रितः सीदते नृप ॥ स हि सर्वत्र कल्याणो यो हि नित्यं जनार्दनम् ॥ २२ ॥ ध्यायन्पठन् जपन्वापि तस्य किं नास्ति भूषते ॥ ततः प्रोवाच भगवान् स्थितं काममिवापरम् ॥ २३ ॥ अस्यैः सर्ववासस्ते यावदिन्द्रो वसिष्यति ॥ तावत्स्वर्गी भवानस्तु शासनान्मम नान्यतः ॥ २४ ॥ नष्टे शक्ने ततः स्वर्गात्सायुज्यं मम गच्छतु ॥ योऽयं भ्राता तव स्वर्गी यावदिन्द्रो भवेत्तदा ॥ २५ ॥ वरं वरय भद्रं ते यस्ते मनसि वृत्तं ॥ दातस्मि सर्वं सर्वत्र नात्र कार्या विचरणा ॥ २६ ॥ घण्टाकर्ण उवाच ॥ यश्चेमं संगमं देव संस्मरन्नियतात्मवान् ॥ भक्तिस्तस्याचला देव त्वयि भूयाज्जनार्दन ॥ २७ ॥ मनःशुद्धिर्भवेत्तस्य मा भूत्कलुषता हरे ॥ कालुष्यं मनसस्तस्य मा भूदेष वरो मम ॥ २८ ॥

कामदेवके समान रूपको धारण करनेवाले पिशाचसे श्रीकृष्ण कहने लगे ॥ २३ ॥ कि जबतक इन्द्र स्वर्गमें वास करेगा तबतक तुम्हीं स्वर्गमें वसेना यह मेरी आज्ञा है, इसमें अन्यथा न होगा ॥ २४ ॥ और जब इन्द्र नष्ट हो जायगा, तब तू मेरे समीपमें प्राप्त होगा और तेरा भ्राताभी तेरे संग स्वर्गमें वास करेगा ॥ २५ ॥ तेरा कल्याण हो, जो तेरे मनमें हो सो तू मांग और मैं सब जगह सब वरोंको दूंगा, इसमें संशय नहीं ॥ २६ ॥ घंटाकर्ण बोला, हे देव ! जो निरंतर इस मेरे तुम्हारे संगमका स्मरण करे, उस मनुष्यकी तुममें अचल भक्ति हो ॥ २७ ॥ तिसके मनकी शुद्धि रहे

६. १.
॥ ११६ ॥

और तिसके मनमें द्वेष न रहे, उसके मनमें कलुषता न हो. यही वर दो ॥ २८ ॥ तब श्रीकृष्ण कहने लगे कि ऐसेही होना और तू स्वर्गमें नयन कर और इन्द्रका अतिथि हो जा. अर्थात् तुझे देसकर इन्द्र प्रसन्न होगा ॥ २९ ॥ इस प्रकार कह श्रीकृष्णने उस ब्राह्मणको जो पिशाचने पहले भेंटमें दिया था उसको जिवाया और उस ब्राह्मणसे स्तुतिको प्राप्त हो श्रीकृष्ण उस ब्राह्मणको पूजकर ॥ ३० ॥ फिर उस देशसे उठ श्रीकृष्ण जहां अभिहोत्र करनेवाले सिद्ध और मुनि वास करते थे, तहां प्राप्त हुए ॥ ३१ ॥ और वह घंटाकर्णजी श्रीकृष्णकी आज्ञासे स्वर्गमें प्राप्त हुआ. इस कारण हे राजन् ! यदि तू न मनकी

एवमस्त्विति देवेशः स्वर्गं मच्छेति केशवः ॥ इन्द्रातिथिर्भवानस्तु त्वां प्रतीक्ष्य हरिः स्थितः २९ ॥ इत्युक्त्वा भगवान् कृष्ण उत्थाप्य ब्राह्मणं तदा ॥ तेन स्तुतो जगन्नाथः पूजयित्वा च तं द्विजम् ॥ ३० ॥ ततो विसृज्य मोक्षं दत्तस्माद्देशादुपगमत् ॥ यत्र ते मुनयः सिद्धा जग्निहोत्रसमन्विताः ॥ ३१ ॥ स च स्वर्गं ततः स्वर्गमाज्ञया केशवस्य ह ॥ तस्मात्पठ सदा राजन् मनःशुद्धिं यदिच्छसि ॥ मनश्च शुद्धं भवति पठतस्ते जगत्पते ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि घण्टाकर्णकृत्तिप्रदानं नाम त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः स भगवान्विष्णुर्मुनिभ्यस्तत्त्वमादितः ॥ कथयामास यद्वृत्तं पिशाचस्य महात्मनः ॥ १ ॥ तच्छ्रुत्वा मुनयः सर्वे विस्मयं परमं गताः ॥ अहोऽस्य कर्मणः पाकस्तव संदर्शनादिति ॥ २ ॥ अर्चिता मुनिभिः सर्वैः प्रीतः प्रीतिमतां प्रियः ॥ ततः प्रभाते विमले सूर्ये चाभ्युदिते सति ॥ ३ ॥

शुद्धिकी इच्छा करते हो. तो सब कालमें इस आस्थानका पाठ करो इसके पाठ करनेसे निष्पन्न मन शुद्ध हो जाता है ॥ ३२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि आषाढायां कैलासपञ्चायां घंटाकर्णबोले त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥ वैशम्पायन बोले, तब श्रीकृष्णने पिशाचके वृत्त जो वृत्ताम्ब हुआ, वह सब मुनियोंसे कहा ॥ १ ॥ तब सब मुनियोंने सुनकर अविभाष्यर्ष माना और बोले आपके दर्शनसे उस पिशाचका जन्म सफ्त हुआ. यह अतिउत्तम हुआ ॥ २ ॥ पीछे सब मुनिजनोंसे अर्चित किये श्रीकृष्णजी अत्यन्त प्रसन्न हुए फिर प्रातःकाल सूर्यके उदय होनेपर ॥ ३ ॥

॥ ११६ ॥

॥ ११६ ॥

मन्मथ चढ विष्णु कैलासपर्वतको गये और मुनिजनोंसे कहने लगे कि, तुमकोभी तहाँ नमन करना योग्य है ॥ ४ ॥ जहाँ तप करनेवाले विष्णुके ईश्वर सिद्ध वास करते हैं और जहाँ साक्षात् कुबेर महादेवजीकी उपासना करते हैं ॥ ५ ॥ जहाँ मानससरोवर नामक हंसोंका स्थान है और जहाँ भृंगीरिटि शिवकी उपासना करके ॥ ६ ॥ गणोंके स्वाभिभावको प्राप्त होकर महादेवजीके सखीपथे विचरते हैं, और जहाँ सिद्ध, वराह, हाथी, बैल, यून ॥ ७ ॥ यह परस्पर विनयावसे क्रीडा करते हैं और जहाँ समुद्रमें जानेवाली गंगा आदिक नदियें उत्पन्न हुई हैं ॥ ८ ॥ जहाँ महादेवजीने

आरुह्य गरुडं विष्णुर्ययो कैलासमुत्तमम् ॥ भवद्भिस्तत्र मन्तव्यमित्युक्त्वा मुनिसत्तमान् ॥ ४ ॥ यत्र विश्वेश्वराः सिद्धास्तपस्यन्ति यतव्रताः ॥ यत्र वैश्रवणः साक्षादुपास्ते शंकरं सदा ॥ ५ ॥ यत्र तन्मानसं नाम सरो हंसालयं महत् ॥ यत्र भृङ्गीरिटिदैकमुपास्ते शंकरं शिवम् ॥ ६ ॥ गाणपत्यमवाप्स्याथ हरपार्श्वचरः सदा ॥ यत्र सिद्धा वराहाश्च द्विपद्वीपिमृगेः सह ॥ ७ ॥ क्रीडन्ति वन्यरतयः परस्परहिते रताः ॥ यत्र नद्यः समुत्पन्ना गंगाद्याः सागरं गमाः ॥ ८ ॥ यत्र विश्वेश्वरः शम्भुरच्छिन्नद्रवणः क्षिरः ॥ यत्रोत्पन्ना महावेजा भूतानां दण्डतां ययुः ॥ ९ ॥ उमया यत्र सहितः शंकरो नीलजोहितः ॥ ऋषिभिः प्रार्थितः पूर्वं ददौ यत्र गिरिः सुताम् ॥ १० ॥ शंकराय जगद्धात्रे शिवाय जगतीपते ॥ यत्र लेभे हरिश्चक्रमुपास्य बहुभिर्दिनेः ॥ ११ ॥ पुष्करैः शतपत्रैश्च नेत्रेण च जगत्पतिम् ॥ युदां यत्र समाश्रित्य क्रीडन्ते सिद्धकिन्नराः ॥ १२ ॥ प्रियाभिः सह मोदन्ते पिवन्ते मधु चोत्तमम् ॥ यमुद्धृत्य भुजेः सर्वैः पोलस्त्यो विरराम ह ॥ १३ ॥ तमारुह्य महाशैलं देवकीनन्दनो हरिः ॥ मासनस्योत्तरं तीरं जगाम यदुनन्दनः ॥ १४ ॥

ब्रह्माजीके पंचम शिरको छेदन किया था और जहाँ उत्पन्न हुए बड़े बड़े नेत्र प्राणिपोंकी दण्डताको प्राप्त होते हैं ॥ ९ ॥ और जहाँ पार्वतीके संग नीलजोहित महादेवजी वास करते हैं, और जहाँ ऋषियोंकी प्रार्थनासे हिमाचलमें जगद्धाता शंकर महादेवजीके अर्थ अपनी पुत्राको दिया ॥ १० ॥ जहाँ बहुत दिनोंतक कमलोंसे महादेवजीकी उपासना कर एकनेत्र चढाय विष्णु भगवान् ने चक्र पाया था जिसका सुफाओंमें आभित हो सिद्ध किन्नर क्रीडा करते हैं ॥ ११ ॥ १२ ॥ अपनी अपनी भार्याओंके संग क्रीडा करते और आनंदित हो उच्चम मधुका पान करते हैं, और जिसको रावण सब भुजाओंमें उठा नहीं सका ॥ १३ ॥ ऐसे कैलास पर्वतमें आरोहण कर देवकीनंदन हरि मानस सरोवरके उत्तर तीरपर गये ॥ १४ ॥

पीछे केशोंको बढ़ाये चार वसन धारे, मनुष्य शरीर धारण किये ॥ १५ ॥ तपमें बल लगावे श्रीकृष्ण वेदसंमत गुरुदत्ते उतर कर पृथ्वीमें स्थित हुए ॥ १६ ॥
 तब हरिने बारह वर्षतक तप करनेका मनमें विचार किया और शुद्ध भूमिमें स्थित हुए फाल्गुनके महीनेमें श्रीकृष्णने तपका आरंभ किया ॥ १७ ॥
 शाकोंका प्रोजन करनेवाले मंत्रोंको जपनेमें तत्पर वेदोंके अध्ययनमें तत्पर विष्णु किस उद्देशसे तप करते हैं ॥ १८ ॥ उसे कोई यथेष्ट न जान सका ईश्वरकी
 चिन्तना दुर्ज्ञेय है, इस प्रकार भूतसेवित पर्वतमें श्रीकृष्णके तप करनेपर ॥ १९ ॥ कश्यपके पुत्र गरुड तप करते हुए श्रीकृष्णके समीपमें होम करनेके
 तपश्चर्तुं किल हरिर्विष्णुः सर्वेश्वरः शिषः ॥ जटी चीरी जगन्नाथो मानुषं वपुरास्थितः ॥ १५ ॥ तपसे धृतचित्तस्तु शुचौ भूमावुपा-
 विशत् ॥ अवरुण ततो यानाद्गरुडाद्वेदसंमितात् ॥ १६ ॥ द्वादशाब्दं तपश्चर्तुं मनो दध्रे ततोऽहरिः ॥ फाल्गुनेन तु मासेन समारंभे
 जमत्पतिः ॥ १७ ॥ शाकभक्षः कृतजपो वेदाध्ययनतत्परः ॥ किमुद्दिश्य जगन्नायस्तपश्चराति मानवः ॥ १८ ॥ तं न विद्मो
 यथाकामं दुर्ज्ञेयेश्वरचिन्तना ॥ तपस्यति तदा विष्णो पर्वते भूतसेविते ॥ १९ ॥ गरुडः कश्यपसुत इन्वनानि समाचिनोत् ॥ होमार्थं
 वासुदेवस्य चरतस्तप उत्तमम् ॥ २० ॥ चक्रराजोऽथ पुष्पाणि संचिनोति तदा इरेः ॥ दिक्षु सर्वासु सर्वत्र ररक्ष जलजस्तदा ॥ २१ ॥
 खड्ग आहत्य यत्नेन कुशान्सुबहुशस्तदा ॥ मदा कौमोदकी चैव परिचर्या चकार ह ॥ २२ ॥ धनुःप्रवरमत्युग्रं शार्ङ्गं दानवभीषणम् ॥
 स्थितं हि पुरतस्तस्य यथेष्टं भृत्यवत्स्वयम् ॥ २३ ॥ जुहोति भगवान्विष्णुरेधोभिर्वहुभिः सदा ॥ आज्यादिभिस्तदा इव्येरग्निं
 संपूज्य माधवः ॥ २४ ॥ सप्ताचिषः समार्तिं च समस्तव्यस्ततः कृती ॥ एकस्मिन्नेकदा मासे भुञ्जानो नियतात्मवान् ॥ २५ ॥
 लिये ईशनोंको इकठा करने लगे ॥ २० ॥ सुदर्शन चक्र श्रीकृष्णके समीपमें पुष्पोंको इकठे करने लगा, और संपूर्ण दिशाओंमें पांचजन्य गंज रक्षा करने
 लगा ॥ २१ ॥ और यत्नेसे नंदक खड्ग बहुतसी कुशाओंको श्रीकृष्णके समीप लाकर गेरता था कौमोदकी मदा श्रीकृष्णकी सेवा करती थी ॥ २२ ॥
 और दैत्योंको भय देनेवाला शार्ङ्ग धनुष श्रीकृष्णके सन्मुख यथेष्ट कृत्यके समान स्थित हुआ ॥ २३ ॥ भगवान् विष्णु अनेक प्रकारके
 कांडों और वृतआदिसे हवन कर अग्निकी पूजा करने लगे ॥ २४ ॥ वह सूर्यकी समान कांतिवाले कृतकृत्य एक महीनेमें एक दिन प्रोजन करते

ये ॥ २५ ॥ फिर दो महीनेके उपरान्त फिर तीन चार पांच छैः महीने पीछे जोवन करते थे फिर एक वर्षमें एक दिन ऐसे जोवन किया इस प्रकार जगत्पति श्रीकृष्ण एक महीना कम बारह वर्षतक ॥ २६ ॥ २७ ॥ अग्निमें हुकन कर मंत्रका पाठ करते हुए महादेवजीका ध्यान करते हुए, आरण्यक विधिको पढ़ते हुए साक्षात् सर्वेश्वर हरि ओंकारका विचार करते हुए ध्यानमें तत्पर हो स्थित हुए ॥ २८ ॥ इति श्रीम० सिलेडु० इ० भविष्य-
पर्वणि प्राचायां कैलासप्राचायां चतुरशीतिनमोऽध्यायः ॥ ८४ ॥ वैशंपायनजी बोले कि, तब साक्षात् इन्द्र ऐरावत हाथीपर चढ़कर तप करनेवाले

द्वितीये त्वय पर्याये भुञ्जन्नेकेन केशवः ॥ एकस्मिन्वत्सरे भुञ्जन्त्येवैकेन केनचित् ॥ २६ ॥ समाप्य तत्तपः सर्वमेवमेव जगत्पतिः ॥
द्वादशान्दे तथा पूर्णे ऊनमासे जगत्पतिः ॥ २७ ॥ जुह्वन्नाग्निं समास्थाय पठन्मन्त्रं जनार्दनः ॥ आरण्यकं पठन्विष्णुः साक्षात्सर्वेश्वरो
हरिः ॥ आस्ते ध्यानपरस्तत्र पठन्प्रणवमुत्तमम् ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेडु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासप्राचायां कृष्ण
तपोवर्णनं नाम चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥ ८४ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ तत इन्द्रः स्वयं तत्र आरुह्य गजमुत्तमम् ॥ द्रष्टुं सर्वेश्वरं
विष्णुं तपस्थन्तं समाययो ॥ १ ॥ ततो यमस्तु भगवानारुह्य मद्विषं वरम् ॥ किंकरैश्च स्वयं साक्षादाययो नमसुत्तमम् ॥ २ ॥
प्रचेता हंसमारुह्य वारुणेश्च समन्वितः ॥ श्वेतच्छत्रसमायुक्तः श्वेतव्यजनवीजितः ॥ ३ ॥ ययो कैलासशिखरं द्रष्टुं केशवमञ्जसा ॥
अन्ये चापि तथा देवा आदित्या वसवस्तथा ॥ ४ ॥ रुद्राश्चैव तथा राजन्द्रष्टुं केशवमाययुः ॥ सिद्धाश्च मुनयश्चैव गन्धर्वा यक्ष-
किन्नराः ॥ ५ ॥ सर्वाश्चाप्सरसो राजनृत्यगीतविशारदाः ॥ ततो देवगणाः सर्वे कैलासं समपद्यत ॥ ६ ॥

विष्णुके देखनेको प्राप्त हुआ ॥ १ ॥ इसके उपरान्त तैसेपर चढ़कर धर्मराज अपने दूतोंसहित कैलासपर्वतमें प्राप्त हुए ॥ २ ॥ फिर श्वेतछत्रको
लगानेवाला और श्वेत बीजनासे बीजित वरुणजी हंसपर चढ़ ॥ ३ ॥ अपने भृत्योंके सहित श्रीकृष्णके देखनेको कैलासपर्वतमें प्राप्त हुए, हे राजन् !
अन्यभी देवता आदित्य, सब वसु ॥ ४ ॥ और सब रुद्र श्रीकृष्णके देखनेको आये, सिद्ध, मुनि, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर ॥ ५ ॥ नृत्यगीतमें विशारद

अप्सरा और सब देवता कैलासपर्वतमें आये ॥ ६ ॥ पर्वत, नारदऋषि और दूसरे मुनिजन विस्मयसे चलायमान नेत्रवाले ऋषि और देवगण ॥ ७ ॥ यह सब श्रीकृष्णके देखनेको कैलासपर्वतमें आये और सब कहने लगे कि ऐसा आश्चर्य है कि न हुआ न हांगा, तिसको देखो कि योगिजनोंको ध्यान करनेके योग्य और सबके बढेगी श्रीकृष्ण आप तप करते हैं ॥ ८ ॥ ऐसा समय कब होगा, ऐसे सब गज मानने लगे जब जगत्पतिको बारह वर्ष तप करते पूर्ण हो गये तब सब जगत्के ईश्वर महादेव पार्वती और भूतसंघके संग लोकहितकारी श्रीकृष्णके देखो मे आये ॥ ९ ॥ कुबेर छलकोंके संग

पर्वतो नारदश्चैव तथान्ये मुनिसत्तमाः ॥ विस्मयस्थितलोलाक्षाः सर्वदेवगणास्तथा ॥ ७ ॥ आश्चर्यं खलु पश्यच्च न भुतं न भविष्यति ॥ योगिष्येयः स्वयं कृष्णो यत्तप्यति गुरुः स्वयम् ॥ ८ ॥ कोऽन्वत्र समयो भूषादिति ते मेनिरे गणाः ॥ ततः समाप्ते सकले जगत्पतेर्व्रते समूले सकलेश्वरः शिवः ॥ द्रष्टुं हरिं लोकहितैषिणं प्रभुं ययौ भवान्प्रा सद् भूतसयैः ॥ ९ ॥ सार्द्धं कुबेरेण सगुह्यकेन सस्या प्रियेण प्रभुसीश्वरः शिवः ॥ स्वयं जटी भूतपिशाचसंवृतः शरी च खड्गी शशिसण्डशेखरः ॥ १० ॥ करेण विभ्रत्सह दर्भ-कुण्डिकां करेण साक्षादपरेण दीपिकाम् ॥ अन्येन विभ्रन्महतीं स टिण्डिमां शूलं च विभ्रन्नपरेण बाहुना ॥ ११ ॥ गुणान्स रुद्राश्च कृतात्समुद्रहन् जटाभिरापिङ्गलताम्रमूर्तिः ॥ विराजमानः प्रभुरिन्दुशेखरो वृषेण युक्तः स सितेन शंकरः ॥ १२ ॥ उमास्तनद्वन्द्व-समर्पिताननस्तथा समाश्लिष्य निपीडिताधरः ॥ गङ्गाम्बुविशालितचन्द्रशेखरस्तां चापि वक्षिन्बहुस्तदा शिवः ॥ १३ ॥

सासिके पितृ जटाको धारण करनेवाले पिशाचोंसे परिकृत शर और खड्गको धारण करनेवाले और चन्द्रमाको मस्तकमें धारण किये ॥ १० ॥ एक हाथमें हाथके समूहको धारण किये दूसरेमें दीपिका लिये तीसरे हाथमें बड़ी टिण्डिमा धारे और चौथे हाथमें त्रिशूलको लिये ॥ ११ ॥ रुद्राशोंकी मालाओंको पहरे पीली जटाओंको धारे पार्वतीसे संयुक्त, ताम्रमूर्ति सफेद रंगके बेलसे संयुक्त, विराजमान चन्द्रशेखर ॥ १२ ॥ और पार्वतीजीके दोनों स्तनोंके बीचमें मिलापकर अश्वरामृतको पीछन करनेवाले गंगाजलसे शालित शिर और पार्वतीजीकी ओर वारंवार देखते हुए ॥ १३ ॥

तस्य आदि मुत्तपर लेप किये और महासर्पोंसे जटाओंको बांधे, नरके चिरोंकी माछा धारे, शिवजी केशवके देखनेको आये ॥ १४ ॥ जिसको सांख्यवादी
 अन्य महापुरुष पुरातन कहते हैं और चित्तके उत्तम चौबीस तत्त्वगुण हैं, उस देवके संपूर्ण गुण कौन जान सकता है ॥ १५ ॥ और जिसको एक पुरातन
 पुरुष कणाद अज महेश्वर कहते हैं, जिसने दक्षके यज्ञका नाश कर देवता और दैत्योंको मारा जो सनातन हैं ॥ १६ ॥ भूतोंके तत्त्वोंको जाननेवाला
 भूतेश, भूतभावन, वामदेव, विरूपाक्ष जिसको तत्त्व जानेनवाले कहते हैं ॥ १७ ॥ महादेव, सहस्राक्ष, कालमूर्ति, चतुर्भुज, रुद्र, रोदन, विश्वेश्वर, शिव
 भस्माङ्गरागेरुलेपिताननो महोरमेर्बद्धजटः सनातनः ॥ शिरः कपालैः परिशोभितस्तदा द्रष्टुं हरिं केशवमभ्ययाच्छिवः ॥ १४ ॥ यमाहु-
 रग्र्यं पुरुषं महान्तं पुरातनं सांख्यनिबद्धदृष्टयः ॥ यस्यापि देवस्य गुणान्समग्रास्तत्त्वांश्चतुर्विंशतिमाहुरेके ॥ १५ ॥ यमाहुरेकं पुरुषं
 पुरातनं कणादनामानमजं महेश्वरम् ॥ दक्षस्य यज्ञं विनिहत्य यो वै विनाश्य देवानसुरान् सनातनः ॥ १६ ॥ यं विदुर्भूततत्त्वज्ञं भूतेशं
 भूतभावनम् ॥ वामदेवं विरूपाक्षमाहुस्तत्त्वविदो जनाः ॥ १७ ॥ महादेवं सहस्राक्षं कालमूर्तिं चतुर्भुजम् ॥ रुद्रं रोदननामानमाहुर्विश्वे-
 श्वरं शिवम् ॥ १८ ॥ अप्रमेयमनाधारमाहुर्महेश्वरा जनाः ॥ नम्रं नम्रपरीतं तु नागिनं त्वग्निवर्चसम् ॥ १९ ॥ आहुर्विश्वेश्वरं शान्तं शिवमादिं
 सनातनम् ॥ तस्य मूर्तिरिमाः सर्वा घराद्याः सकला नृप ॥ २० ॥ भूमिरापोनलो वायुः स्व सूर्यश्च तथा शशी ॥ अग्निश्च यजमानश्च
 प्रकृतिश्चैवमष्टधा ॥ २१ ॥ महादेवो महायोगी गिरीशो नीललोहितः ॥ आदिकर्त्ता महाभर्त्ता शूलपाणिरुमापतिः ॥ द्रष्टुं विश्वेश्वरं विष्णुं
 भूतसंघैः समाययो ॥ २२ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भवि० कैलासयात्रायां शिवागमनकथनं नाम पञ्चाशीतिमोऽध्यायः ॥ ८५ ॥
 नाम जिनको कहते हैं ॥ १८ ॥ सब महात्मा जिनको अप्रमेय अनन्तार नम्र नामोपवीत, नागी, अग्निवर्चा ॥ १९ ॥ शांत, विश्वेश्वर, शिव, आ
 सनातन कहते हैं. हे जनार्दन ! जिसकी मूर्ति यह पृथ्वी आदि सब पदार्थ हैं ॥ २० ॥ अर्थात् पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा,
 यजमान यह उसकी आठ प्रकृति हैं ॥ २१ ॥ महादेव महायोगी, गिरीश, नीललोहित, आदिकर्त्ता, महाभर्त्ता, शूलपाणि, उमापति महादेव भूतगणोंके
 संग विश्वके ईश्वररूप विष्णुके देखनेको आये ॥ २२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रायायां कैलासयात्रायां शिवागमनकथनं नाम

पंचाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८५ ॥ वैरापायनजी बोले कि; उन महादेवजीके अगाडी सहस्रों भूतोंके समूह और घंटाकर्ण, विरूपाक्ष, कुण्डधार, कुमुदह ॥ १ ॥ दीर्घरोमा, दीर्घभुज, दीर्घबाहु, निरंजन, उरुवक्र, शतमुख, शतशीव शतोदर ॥ २ ॥ कुंडोदर, महाशीव, रथुअजिह्व, द्विबाहुक, पार्श्ववक्र, सिंहमुख, उन्नतांस, महाहनु ॥ ३ ॥ त्रिबाहु, पंचबाहु, व्याघ्रवक्र, शतानन इत्यादि बहुतसे दीर्घमुखोंवाले और दाँवभुजोंवाले और दीर्घनेत्रोंवाले ॥ ४ ॥ नृत्य करते हुए बैठते हुए परस्पर स्फोटन करते हुए और कितनेही घोररूप कितनेही विकृतमुखोंवाले ॥ ५ ॥ प्रेतोंके प्रक्षय करनेवाले और प्रेतोंको बहानेवाले, मांस और रुधिरका वैशम्पायन उवाच ॥ तस्याग्रे समपद्यन्त भूतसंघाः सहस्रशः ॥ घण्टाकर्णो विरूपाक्षः कुण्डधारः कुमुदहः ॥ १ ॥ दीर्घरोमा दीर्घभुजो दीर्घबाहुनिरंजनः ॥ उरुनेत्रः शतमुखः शतशीवः शतोदरः ॥ २ ॥ कुण्डोदरो महाशीवः रथुलजिह्वो द्विबाहुकः ॥ पार्श्ववक्रः सिंहमुख उन्नतांसो महाहनुः ॥ ३ ॥ त्रिबाहुः पञ्चबाहुश्च व्याघ्रवक्रः सिताननः ॥ एते चान्ये च बहवो दीर्घास्या दीर्घलोचनाः ॥ ४ ॥ नृत्यन्तः प्रहसन्तश्च स्फोटयन्तः परस्परम् ॥ तथान्ये घोररूपाश्च तथान्ये विकृताननाः ॥ ५ ॥ प्रेतभक्षाः प्रेतवाहा मांसशोणितभोजनाः ॥ शवानि सुबहून्यास्तु भक्षयन्तस्ततस्ततः ॥ ६ ॥ पिबन्तो रुधिरं घोरं खण्डयन्तः शवान्बहून् ॥ कराला वितता दीर्घा घमनिस्त्रायु- संतताः ॥ ७ ॥ नानाविधाः सुवीराश्च शूलाग्रप्रोतमानुषाः ॥ शिरोमालावृताः केचिद्वान्त्रपाशावपाशिताः ॥ ८ ॥ डिण्डिमैरट्टहासेश्च नादयन्तो वसुधराम् ॥ कपालिनो भैरवाश्च जटिला मुण्डिनस्तथा ॥ ९ ॥ एवं बहुविधा घोराः पिशाचा विकृताननाः ॥ तथान्ये मुनिविराश्च ध्यायन्तः परमेश्वरम् ॥ १० ॥

भोजन करनेवाले बहुतसे सुरदोंको प्रक्षय करनेवाले ॥ ६ ॥ घोररूप लोहको पीनेवाले और बहुतसे सुरदोंको खण्डित करनेवाले, कराल, विस्तृत, लम्बी नाडी और नसोंसे व्याप्त ॥ ७ ॥ नानाप्रकारकी आकृतिवाले घोर शूलके अग्रभागमें मनुष्योंको लटकाये और शिरोकी मालाको पहननेवाले, कितनेही आन्त्रपाशको धारण करनेवाले ॥ ८ ॥ और डिण्डिम तथा अट्टहासोंसे इस पृथ्वीको शक्ति करते, कपालोंको धारण करनेवाले भय देनेवाले, जटाधारी, मुंड मुंडाये हुए ॥ ९ ॥ बहुत प्रकारके घोरमुख पिशाच महादेवजीके अगाडी स्थित हो रहे हैं और बहुतसे मुनिजन परमेश्वरका ध्यान कर गयीं हुए ॥ १० ॥

देव और वेदके अंगोंका विधिपूर्वक पठन करनेवाले कोई कुंडिका और कोई कुशाके चीरोंको धारण किये ॥ ११ ॥ कोई कौपीनमात्र वस्त्रोंको धारण किये
 और कितनेही काषाय वस्त्रोंको धारण किये, कितनेही भक्तिसे माहेश्वरके स्तोत्रोंसे महादेवजीकी स्तुति करते मुभिजनोंके गण और महादेवजीके गण
 और सिद्ध अपनी अपनी स्त्रियोंको लिये ॥ १२ ॥ यह और वे मुनिगण दूसरी ओर दूसरे गण अपनी स्त्रियोंके साथ ॥ १३ ॥ गंधर्व तथा नृत्यकर्म
 और नायनकर्ममें चतुर कन्या, विद्याधर यह सब महादेवजीकी स्तुति गान कर रहे हैं ॥ १४ ॥ और गमन करते हुए महादेवजीके आगे अग्निसरा-
 पठन्तो वेदवाक्यानि सांगानि दिविधानि च ॥ कुण्डिकास्थकराः केचित्केचित्कुशविचारिणः ॥ ११ ॥ कौपीनवसनाः केचित्के-
 चित्काषायसंवृताः ॥ स्तुवन्तः शंकरं भक्त्या स्तोत्रैर्माहेश्वरेस्तथा ॥ १२ ॥ एकत्र ते मुनिगणा अपरत्र गणास्तथा ॥ अन्यत्र सिद्ध-
 गन्धर्वाः प्रियाभिः सह संगताः ॥ १३ ॥ नृतयन्ति नृत्यकुशला गायन्ति स्म च कन्यकाः ॥ विद्याधरास्तथाप्यत्र स्तुवन्तः शंकरं
 शिवम् ॥ १४ ॥ ननृतुस्तस्य पुरतो गच्छन्तोऽग्निसरां गणाः ॥ एवमेतैर्महाधारेः पिशाचैर्भूताकिन्नरैः ॥ १५ ॥ मुनिभिश्चैव प्रमथैः समं
 शर्वः समाययो ॥ यत्र विश्वेश्वरो विष्णुस्तपस्तेपे सुशरुणम् ॥ १६ ॥ यत्र ते लोकपालाश्च तिष्ठन्ति स्म दिदृक्षया ॥ उमया लोकभा-
 विन्या मंगया चन्द्रशेखरः ॥ १७ ॥ स सर्वलोकप्रभवो भवो विभुर्जटी च साक्षात्प्रणवात्मकः कृती ॥ द्रष्टुं हरिं विष्णुमुदारविक्रमो
 ययौ ययेष्टं पिशितास्त्रैर्वृत्तः ॥ १८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां महादेवागमने षडशी-
 तितमोऽध्यायः ॥ ८६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवं बहुविधैर्भूतैः पिशाचेरुग्रैः सह ॥ आगत्य भगवान्नुद्रः शंकरो वृषवाहनः ॥ १ ॥
 ओंके गण नाच रहे हैं इस प्रकार महाधोर पिशाच भूत, किन्नर ॥ १५ ॥ मुनि, प्रमथगण, आदिके सहित शिवजी, जहां विष्णु दारुण तप करते थे,
 वहां आये ॥ १६ ॥ जहां वे लोकपाल महादेवजीके देखनेकी इच्छासे स्थित थे वहां लोकपालिनी उमा और गंगाको साथ लिये ॥ १७ ॥ सब
 लोकके उत्पन्न करता विभु जटाधारी साक्षात् ओंकारात्मक कृती उदार विक्रम पिशाचादिके सहित विष्णुके देखनेको आये ॥ १८ ॥ इति श्रीमहा-
 भारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां महादेवागमने षडशीतितमोऽध्यायः ॥ ८६ ॥ वैशम्पायन बोले, इस प्रकार बहुतसे भूत

पिताच व सपोंको संग लिये बैलपर चढ़े जनवान् महादेवजीने आनकर ॥ १ ॥ उचय तप तपते देवताओंके पति पवित्र हव्यका अधिमें हवन करते ॥ २ ॥ और नन्दजीसे हवनके काठको इकट्ठे कराये हुए, जटा और पुराने वस्त्रको धारण किये चक्रसे पुष्पोंको इकट्ठा कराते, सबसे कुशाको संग्रह कराते ॥ ३ ॥ नदासे समाचारको कराते हुए और इन्द्र आदिक देवताओंके समूहसे और मुनिगणोंसे युक्त ॥ ४ ॥ सब जीवोंको अचिन्त्य, कुच्छेक ध्यान करते हुए विष्णुको वृषभपर स्थित भूतभावन जनवान् शिवने देखा ॥ ५ ॥ तब प्रसन्न हुए प्रसन्नात्मा, मस्तकमें तिसरे नेत्रवाले उमापति प्राप्त हुए, तब, भूत, पिशाच, राक्षस, एतक ॥ ६ ॥ ब्राह्मणोंमें भेठ मुनि यह सब जयशब्द करने लगे, हे देव ! हे जगन्नाथ ! हे देव रुद्र ! हे ददर्श विष्णुं देवेशं तपन्तं तप उत्तमम् ॥ जुह्वानमग्निं विधिवद्ब्रह्मैर्मैष्यैर्जगत्पतिम् ॥ २ ॥ गरुडाहृतकाष्ठं तु जटिलं चरिषाससम् ॥ चक्रेणानीतकुसुमं सज्जानीतकुशं तथा ॥ ३ ॥ गदाकृतसमाचारं देवदेवं जनार्दनम् ॥ इन्द्रायैर्वैवसंवेक्ष्य वृतं मुनिगणेः सह ॥ ४ ॥ अचिन्त्यं सर्वभूतानां ध्यायन्तं किमपि प्रभुम् ॥ अवरुद्ध वृषाच्छर्वो भगवान् भूतभावनः ॥ ५ ॥ ततः प्रीतः प्रसन्नात्मा ललाटाक्ष उमापतिः ॥ ततो भूतपिशाचाश्च राक्षसा युष्मकास्तथा ॥ ६ ॥ मुनयो विप्रवर्षाश्च जयशब्दं प्रचक्रिरे ॥ जय देव जगन्नाथ जय रुद्र जनार्दन ॥ ७ ॥ जय विष्णो हृषीकेश नारायण परायण ॥ जय रुद्र पुराणात्मन् जय देव हरेश्वर ॥ ८ ॥ आदिदेव जगन्नाथ जय शंकर भावन ॥ जय कौस्तुभदीप्तांग जय भस्मविराजित ॥ ९ ॥ जय चक्रगदापाणे जय शूलिखिलोचन ॥ जय मोक्तिकदीप्तांग जय नागविभूषण ॥ १० ॥ इति ते मुनयः सर्वे प्रणामं चक्रिरे हरिम् ॥ तत उत्थाय भगवान् दृष्ट्वा देवमवस्थितम् ॥ ११ ॥

जनार्दन ! आपकी जय हो ॥ ७ ॥ हे विष्णो ! हे इन्द्रियोंके ईश ! हे पूण्यात्मन् ! हे हरेश्वर ! आपकी जय हो ॥ ८ ॥ हे आदिदेव जगन्नाथ ! हे शंकर भावन ! हे कौस्तुभमणिको धारण करनेवाले ! हे भस्मविराजित ! आपकी जय हो ॥ ९ ॥ चक्र गदा हाथमें लिये आपकी जय हो त्रिशूलधारी त्रिलोचन आपकी जय हो, मोतियोंसे प्रकाशित अंगवाले आपकी जय हो नागोंके आभूषण धारण करनेवाले देव तुम्हारी जय हो ॥ १० ॥ इस प्रकार वह सब मुनि हरिजनवान्की स्तुति करने लगे (इन विशेषणोंसे यहां अनेक दिखाया है) ऐसे स्तुति भजन कर विष्णु भगवान् उठकर स्थित हुए

भगवान् ॥ ११ ॥ वृषध्वजावाले, विरूपाक्ष, शंकर नीले वं रक्त वर्णवाले शिवजीको देख मसज हो रतुति करने लगे ॥ १२ ॥ भीमभगवान् बोले,
हे शीतकण्ठ ! हे नीलघ्रीव ! हे वेधा ! हे शोषिण ! हे उपवासिन् ! तुमको नमस्कार है ॥ १३ ॥ हे मीतुष ! हे गदिन् ! हे नदाधारी हर ! तुमको
नमस्कार है, हे विश्वतीर्तु ! हे वृषरूपी ! आर्षिको नमस्कार है ॥ १४ ॥ हे अमूर्त्तदेव ! हे पिनाकिन् ! कुब्ज कूप शिव ! शिवरूपिन् ! आपके अर्थ
नमस्कार है ॥ १५ ॥ हे तुष्टय ! हे तुंड ! हे तुटितुंड ! आपके अर्थ नमस्कार है, और शांतरूपी शिव गिरीश आपके अर्थ नमस्कार है, और पर्वतमें

वृषध्वजं विरूपाक्षं शंकरं नीललीहितयं ॥ तंतो हृष्टमना विष्णुस्तुष्टाव हरमीश्वरम् ॥ १२ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ नमस्ते शितिकण्ठाय
नीलघ्रीवाय वेधसे ॥ नमस्ते शोचिषे अस्तु नमस्ते उपवासिने ॥ १३ ॥ नमस्ते मीतुषे अस्तु नमस्ते गदिने हर ॥ नमस्ते
विश्वतनवे वृषाय वृषरूपिणे ॥ १४ ॥ अमूर्त्ताय च देवाय नमस्तेऽस्तु पिनाकिने ॥ नमः कुब्जाय कूपाय शिवाय शिवरूपिणे ॥ १५ ॥
नमस्तुष्टयाय तुष्टाय नमस्तुटितुष्टाय च ॥ नमः शिवाय शान्ताय गिरिशाय च ते नमः ॥ १६ ॥ नमो हराय विप्राय नमो
हरिहराय च ॥ नमोऽघोराय घोराय घोरघोरप्रियाय च ॥ १७ ॥ नमोऽघण्टाय घण्टाय नमो घटिघटाय च ॥ नमः शिवाय शान्ताय
गिरीशाय च ते नमः ॥ १८ ॥ नमो विरूपरूपाय पुराय पुरहारिणे ॥ नम आध्याय बीजाय शुचयेऽष्टस्वरूपिणे ॥ १९ ॥ नमः
पिनाकहस्ताय नमः शूलसिधारिणे ॥ नमः सदाङ्गहस्ताय नमस्ते कृत्तिवाससे ॥ २० ॥

सयन करनेवाले आपके अर्थ नमस्कार है ॥ १६ ॥ हे हर ! हे विम ! हे हरिहर ! हे घोर ! हे अघोर ! हे घोरघोरप्रिय ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार
है ॥ १७ ॥ घंटा अघंटाक्षय, घटिघटक्षय तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, शांतिरूप सर्वरूप भूतोंके अधिपति आपको नमस्कार है ॥ १८ ॥ विरूपवान्
रूपवान्, पुररूप, पुरनाशक, आद्य, विघ्न, शुचि, अष्टस्वरूपी आपको नमस्कार है ॥ १९ ॥ पिनाक धनुष और शूल सदाङ्गको धारण करनेवाले,
और सदाङ्गके अंग अर्थात् पाया आदिको हाथमें धारण करनेवाले, और चर्मके बलोंको धारण करनेवाले तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ २० ॥

हे देव देव आकाशमूर्ति । हे हरिरूप ! हे हर तीक्ष्णतेजको धारण करनेवाले ! आपके अर्थ नमस्कार है ॥ २१ ॥ हे भक्तप्रिय ! भक्तोंको वर देनेवाले ! भक्त आकाशमूर्ति देव । हे अभिमूर्ति जनक की मूर्तिको धारण करनेवाले । तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ २२ ॥ हे चंद्रदेव ! हे सूर्यदेव ! हे प्रधानदेव ! हे भूतपति ! आपके अर्थ नमस्कार है ॥ २३ ॥ हे कराल ! हे मुंडरूप ! हे विकृतजटाको धारण करनेवाले ! हे अज ! हे भूतभाव ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ २४ ॥ हे हरिकेश ! हे पिंजरारूप ! हे अजीषु अर्थात् अश्वदिकोंकी रश्मिको हाथमें धारण करनेवाले हर ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है

नमस्ते देवदेवाय नम आकाशमूर्तये ॥ इराय हरिरूपाय नमस्ते तिमतेजसे ॥ २१ ॥ भक्तप्रियाय भक्ताय भक्तानां वरदायिने ॥ नमोऽभ्रमूर्तये देव जगन्मूर्तिधराय च ॥ २२ ॥ नमश्चन्द्राय देवाय सूर्याय च नमो नमः ॥ नमः प्रधानदेवाय भूतानां पतये नमः ॥ २३ ॥ करालाय च मुण्डाय विकृताय कपादेने ॥ अजाय च नमस्तुभ्यं भूतभावनभावन ॥ २४ ॥ नमोऽस्तु हरिकेशाय पिङ्गलाय नमो नमः ॥ नमस्तेऽभीषुहस्ताय भीरुंभीरुदराय च ॥ २५ ॥ इराय भीतिरूपाय घोरानां भीतिदायिने ॥ नमो दक्षमस्तमाय भगनेत्राप-
हारणे ॥ २६ ॥ उमापते नमस्तुभ्यं कैलासनिधयाय च ॥ आदिदेवाय देवाय भवाय भवरूपिणे ॥ २७ ॥ नमः कपालहस्ताय नमोऽजमयनाय च ॥ त्र्यम्बकाय नमस्तुभ्यं त्र्यक्षाय च शिवाय च ॥ २८ ॥ वरदाय वरेण्याय नमस्ते चन्द्रशेखर ॥ नम इध्माय द्विविधे ध्रुवाय च कुशाय च ॥ २९ ॥ नमस्ते शक्तियुक्ताय नाममाश्रयाय च ॥ विरूपाय सुरूपाय मद्यपानप्रियाय च ॥ ३० ॥

हे ॥ २५ ॥ भयंकर रूपको धारण करनेवाले हर घोरपुरुषोंको भय देनेवाले और दक्ष प्रजापतिके यज्ञनाशक, भगके नेत्रोंके हरनेवाले तुम्हारे लिये नमस्कार है ॥ २६ ॥ हे उमापति ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, और कैलासमें स्थान करनेवाले आदिदेव और भवरूपी तुम्हारे लिये नमस्कार है ॥ २७ ॥ कपाल हाथमें रखनेवाले त्र्यम्बक त्र्यक्ष शिव तुम्हारे लिये नमस्कार है ॥ २८ ॥ वर देनेवाले, वरेण्य, चन्द्रशेखर, इच्छारूप, हविरूप, ध्रुव, कृष्ण तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ २९ ॥ शक्तियुक्तके अर्थ नमस्कार है, नाममाश्रयके प्रिय विरूप सुरूप, मद्यपानप्रिय तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ ३० ॥

नित्य स्मशानमें प्रीति करनेवाले और जयशब्दके प्रिय, सरप्रिय वामनरूप स्वर स्वरूपी आपके अर्थ नमस्कार है ॥ ३१ ॥ भद्रप्रिय, भद्र, भद्रत्वको धारण करनेवाले तुम्हारे अर्थ नमस्कार है, और विरूप, स्वरूप, महाधोर ॥ ३२ ॥ घट, घटभूषी, घंटेकी आभूषण करनेवाले तीव्र तीव्ररूप और तीव्रप्रिय तुम्हारे अर्थ नमस्कार है ॥ ३३ ॥ और नम्र, नम्ररूप, नम्ररूपप्रिय, भूतवास, आपको नमस्कार है, सब आवासरूप आपको नमस्कार है ॥ ३४ ॥ सर्वात्मा भूतिदायक, आपके अर्थ नमस्कार है और वामदेव महादेव आपके अर्थ नमस्कार है ॥ ३५ ॥ हे स्तुतिमतां ! तुम्हारी स्तुति

श्मशानरतये नित्यं जयशब्दप्रियाय च ॥ स्वरप्रियाय स्वर्णाय स्वराय स्वररूपिणे ॥ ३१ ॥ भद्रप्रियाय भद्राय भद्ररूपधराय च ॥ विरूपाय सुरूपाय महाधोराय ते नमः ॥ ३२ ॥ घण्टाय घण्टभूषाय घण्टभूषणभूषिणे ॥ तीव्राय तीव्ररूपाय तीव्ररूपाप्रियाय च ॥ ३३ ॥ नम्राय नम्ररूपाय नम्ररूपाप्रियाय च ॥ भूतवास नमस्तुभ्यं सर्वावास नमो नमः ॥ ३४ ॥ नमः सर्वात्मने तुभ्यं नमस्ते भूतिदायक ॥ नमस्ते वामदेवाय महादेवाय ते नमः ॥ ३५ ॥ का तु वाक् स्तुतिरूपा ते को तु स्तोतुं प्रशक्यात् ॥ कस्य वा स्फुरते जिह्वा स्तुतो स्तुतिमतां वर ॥ ३६ ॥ ह्रस्व भगवन्देव भक्तोऽहं त्राहि मां हर ॥ सर्वात्मन् सर्वभूतेश त्राहि मां सततं हर ॥ ३७ ॥ रक्ष देव जगन्नाथ लोकान् सर्वात्मना हर ॥ त्राहि भक्तान् सदा देव भक्तप्रिय सदा हर ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां विष्णुकृतेश्वरस्तुतिर्नाम सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो वृषध्वजो देवः शुली साक्षादुमापतिः ॥ करं करेण संस्पृश्य विष्णोश्चक्रधरस्य ह ॥ १ ॥

करने योग्य कौन वाणी है ? और कौन तुम्हारी स्तुति करनेको समर्थ है, और तुम्हारी स्तुति करनेमें किसकी निष्ठा पुस्ती है ॥ ३६ ॥ हे हर ! त्राणा करो, मैं तुम्हारा भक्त हूँ, मेरी रक्षा करो, हे सर्वात्मन् ! हे सर्वभूतेश ! मेरी सदा रक्षा करो ॥ ३७ ॥ हे देव ! हे जगन्नाथ ! तुम सर्वात्मा होकर लोकोंकी रक्षा करो, हे महादेव ! हे भक्तप्रिय ! तुम निरंतर भक्तोंकी रक्षा करो ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रायायां कैलासयात्रायां ईश्वरस्तुतौ सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥ वैशम्पायनजी बोले, तब वह वृषध्वज, शुली सत्स्वरूप

उमापति शिव चक्रको धारण करनेवाले विष्णु भगवान्‌के हाथको हाथसे स्पर्श करके ॥ १ ॥ भगवान्‌ स्व स्व देवता और भावितात्मावाले मुनियोंके सुनते हुए परब्रह्मज केशवसे कहने लगे ॥ २ ॥ हे देवदेव । हे चक्रपाणे । हे जनार्दन । यह क्या है किस कारण यह तपश्चर्या तुम करते हो । और हे विभो । तुम्हारी क्या प्रार्थना है ॥ ३ ॥ तुम आप विष्णु हो, हे हरे । आपही तप हो हे देव । हे जनार्दन । तुम्हारी यह तपश्चर्या पुत्रके निमित्त है ॥ ४ ॥ सो हे जगत्पते । मैंने पहले तुमको पुत्र दिया है, हे कारणात्मक । इसमें कारण सुनो ॥ ५ ॥ हे हरे । मधुसूत युगमें मैं किसी समय

प्रोवाच भगवान्‌ऋषेः केशवं गरुडध्वजम् ॥ शृण्वतां सर्वदेवानां मुनीनां भावितात्मनाम् ॥ २ ॥ किमिदं देवदेवेश चक्रपाणे जनार्दन ॥ तपश्चर्या किमर्थं ते प्रार्थना तव क्वा विभो ॥ ३ ॥ स्वयं विष्णुर्भवान्नित्यस्तपस्त्वं तपसा हरे ॥ प्रार्थय यदि ते देव तपश्चर्या जनार्दन ॥ ४ ॥ पुत्रो दत्तो मया देव पूर्वमेव जगत्पते ॥ शृणु तत्रापि भगवन्कारणं कारणात्मक ॥ ५ ॥ तपश्चर्या प्रवृत्तोऽहं कुतश्चित्कारणाद्धरे ॥ वर्षायुतं महाघोरं पुरा कृतयुगे तदा ॥ ६ ॥ भवानी तत्र मे देव, परिचर्तुं तयाभवत् ॥ पित्रा नियुक्ता देवेश उमेषा वरवर्णिनी ॥ ७ ॥ भीतिं हन्वस्तदा देव मारं मां प्रेषयत्तदा ॥ मधुना सह संयुक्तो, मारो मामागतस्तदा ॥ ८ ॥ लक्ष्यं मामकरोत्तत्र बाणस्थं प्रेषितस्य ह ॥ एषा मां सेवते तत्र दानात्पुष्पादिनां हरे ॥ ९ ॥ तंतः क्रुद्धोऽहं भवं हृष्टा मारं तयाविवम् ॥ क्रुद्धयतो मम देवेश नेत्रादग्निः पंपात ह ॥ १० ॥ सोऽयमग्निस्तदा मारं भस्मसात्कृतवान् हरे ॥ अचिन्तयं तदा विष्णो शक्येत्येतादृशं किंपितम् ॥ ११ ॥

वशसहस्र वर्षतक महाघोर तप करनेकी प्रवृत्त हुआ ॥ ६ ॥ और हे देव । पिता हिमाचलसे ही हुई वह वरवर्णिनी उमों पार्वती मेरी परिचर्या करने लगी ॥ ७ ॥ हे देव । तब मयभीत हुए इन्द्रने मेरे प्रति कामदेवकी प्रेरण किया फिर वह कामदेव पुष्परसोंसे संयुक्त हुआ मेरे सम्मुख आया ॥ ८ ॥ फिर मंपने पुष्परूपी बाणोंसे लक्ष्य कर झुझको मारने लगा तब यह पार्वती झुझको पुष्पादिकोंसे सेवने लगी ॥ ९ ॥ तब मैं विस प्रकार विधिवाले कामदेवको देव क्रोशित हुआ तो मेरे क्रोध करते हुए नेत्रोंसे अग्नि निकली ॥ १० ॥ हे हरे । फिर उस अग्निने कामदेवको प्रत्यक्ष कर दिया, हे विष्णो ।

पीछे वह इन्द्रका कर्तव्य सुझको विदित हुआ ॥ ११ ॥ हे देवेश ! तब सुझको दया आने लगी और हे विष्णु ! फिर मैंने प्रत्यक्ष हो ब्रह्माको बेरित किया ॥ १२ ॥ हे जगत्पते ! तब मैंने पुरुषरूप करके तुम्हारा बड़ा पुत्र उसे विधान किया है और वह प्रद्युम्ननामसे विख्यात है ॥ १३ ॥ सो हे देव ! उसको तुम कामदेव जानो, इसमें संदेह नहीं, इस प्रकार वह शिवजी कहकर फिर अपने देहको याथात्म्य दिखानेकी इच्छा करते हुए याथात्म्य ॥ १४ ॥ सुनेकी इच्छावाले सुनियोंके मध्यमें विष्णुको उद्देश लेकर हाथोंमें अंजली बांधकर ॥ १५ ॥ पार्वतीके संग शिवजी यथार्थ आत्माके वर्णन करके

ततः प्रभृति देवेश दया तं प्रति वर्तते ॥ ब्रह्मणा च नियुक्तोऽस्मि प्रीतस्तत्र जनार्दन ॥ १२ ॥ नियुक्तः पुत्ररूपेण स ते देव जगत्पते ॥
 ण्येषस्तव सुतो देव प्रद्युम्नेत्यभिविश्रुतः ॥ १३ ॥ स्मरं तं विद्धि देवेश नात्र कार्या विचारणा ॥ इत्युक्त्वा पुनरादेवं याथात्म्यं
 दर्शयन्निव ॥ १४ ॥ मुनीनां श्रोतुकामानां याथात्म्यं तत्र सत्तमः ॥ अञ्जलिं संपुटं कृत्वा विष्णुमुद्दिश्य झंकरः ॥ १५ ॥ उभया
 सांद्रं मीक्षानो याथात्म्यं बलुमेव ॥ इरे कुर्वति तत्रैवमञ्जलिं कुरुसत्तम ॥ १६ ॥ मुनयो देवगन्धर्वाः सिद्धाश्च सहस्रकिन्नराः ॥ अञ्जलिं
 चक्रिरे विष्णो देवदेवेश्वरे इरो ॥ १७ ॥ महेश्वर उवाच ॥ यत्तत्कारणमाहुस्तत्सांख्याः प्रकृतिसंज्ञकम् ॥ ततो महान् समुत्पन्नः प्रकृति-
 र्यस्य कारणम् ॥ १८ ॥ त्रिधा भूतं जगद्योनिं प्रधानं कारणात्मकम् ॥ सत्त्वं रजस्तमो विष्णो जगदण्डं जनार्दन ॥ १९ ॥ तस्य
 कारणमाहुस्त्वां सांख्यप्रकृतिसंज्ञकम् ॥ तद्रूपेण भवान्विष्णो परिणम्याधितिष्ठति ॥ २० ॥

इच्छा करने लगे, हे क्रुरुमेव ! उस समय नारायणको हाथ जोड़कर ॥ १६ ॥ मुनि देव गंधर्व सिद्ध किन्नर यह सब देवदेवेश्वर विष्णुकी अंजली बांधने लगे ॥ १७ ॥ शिवजी बोले, जो कुछ प्रकृतिसंज्ञक कारण सांख्यके जाननेवाले कहते हैं, उससे महान् उत्पन्न हुआ जो प्रकृतिका कारण है ॥ १८ ॥ तीन प्रकार जगत्की योनि प्रधान कारणात्मक कहते हैं और सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुणको इस जगत्रूपी अण्डका कारण कहते हैं, हे जनार्दन ! ॥ १९ ॥ इन सबोंके कारण सांख्यके जाननेवाले तुम्हींको कहते हैं तिसी रूपसे तुम विष्णु परिणामके अधिष्ठाता हो ॥ २० ॥

६५.
॥२०३॥

तिससे महाघोर अधिष्ठातासे अहंकार उत्पन्न हुआ सो हे जगन्नाथ ! तुम आदिमें जनमके परिणाम हो ॥ २१ ॥ हे प्रभो ! अहंकारसे महान् कारण उत्पन्न हुए हैं और पश्चात् तन्मात्रा हुई हैं और पंचतत्त्व हुए हैं ॥ २२ ॥ सो हे जगत्पते ! तिन पांच तत्त्वोंको तुम्हाराही रूप कहने हैं पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, अग्नि ये पांच तत्त्व हैं ॥ २३ ॥ चक्षु, घ्राण, स्पर्श, जिह्वा, श्रोत्र वह पांच इन्द्रियें हैं और हे देव ! इनका प्रेरनेवाला छटा मन है ॥ २४ ॥ हे जनार्दन ! वाक् आदिक अन्य कर्मेन्द्रियें हैं, उन सबोंको नियंता आत्मा होकर नियन्ता तुम्हीं हो ॥ २५ ॥ हे हरे ! अपने अपने

तस्मात्तु महतो घोरादहंकारो महान्भूत् ॥ स त्वमादौ जगन्नाथ परिणामस्तथा हि सः ॥ २१ ॥ अहंकारात्प्रभो देव कारणानि महान्ति च ॥ तन्मात्राणि तथा पञ्च भूतानि प्रभवत्युत ॥ २२ ॥ तानि त्वमादुरीक्षानं भूतानीह जन्मन्ते ॥ पृथिवी वायुराकाशमापो ज्योतिश्च पञ्चमम् ॥ २३ ॥ चक्षुर्घ्राणं तथा रूपश्रोत्रं स्पर्शश्च श्रोत्रमेव च ॥ मनः षष्ठं तथा देव प्रेरकं तत्र तत्र ह ॥ २४ ॥ कर्मेन्द्रियाणि चान्यानि वागादीनि जनार्दन ॥ त्वमेव तानि सर्वाणि करोषि नियतात्मवान् ॥ २५ ॥ त्वेषु त्वेषु जगन्नाथ विषयेषु तथा हरे ॥ निवेशयसि देवेश योग्यामिन्द्रियफल्दातिम् ॥ २६ ॥ यदा त्वं रजसा युक्तस्तदा भूतानि सृष्टवान् ॥ यदा च सत्त्वयुक्तोऽसि तदा पाता जगत्रयम् ॥ २७ ॥ तदा त्वं तमसाकृष्टस्तदा संहारसे जगत् ॥ त्रिभिरेव गुणैर्युक्तः सृष्टिरक्षारविनाशने ॥ २८ ॥ वर्तसे विविधां भूतिमादाय नियतात्मवान् ॥ इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु नियोजयसि माधव ॥ २९ ॥

विषयोंमें इन इन्द्रियोंको तुम प्रवेश करते हो ॥ २६ ॥ जब तुम रजोगुणसे युक्त होते हो, तब जीवोंको रचते हो और जब सत्त्वगुणसे युक्त होते हो, तब तीनों लोकोंकी पालना करते हो ॥ २७ ॥ और जब तमोगुणसे युक्त होते हो तब जगत्का संहार करते हो, इस प्रकार तीन गुणोंसे युक्त हुए तुम सृष्टिकी रक्षा और विनाश करते हो ॥ २८ ॥ हे माधव ! नियत आत्मावाले तुम तीन प्रकारके प्रेरकको प्राप्त होकर इन्द्रियोंको इन्द्रियके अर्थमें नियुक्त करते हो ॥ २९ ॥

भा. ६
१. १०८८

॥२०३॥

हे जगद्गुरो ! प्राणियोंके उपभोगको अन्न रचकर फिर सब भोगोंवाले तुम सब जीवोंमें वर्तते हो ॥ ३० ॥ सृष्टिकालमें तुम नष्टा हो और स्थितिकालमें विष्णु हो जाते हो और संहारसमय तुम रुद्र नामवाले हो, ऐसे तुम तीन धामवाले हो ॥ ३१ ॥ हे देव ! पृथ्वी, वायु, जल, अग्नि, आकाश, मन, बुद्धि, यह तुम्हारी प्रकृति मुझसे सर्वत्र भिन्न है ॥ ३२ ॥ सहस्र पुरुष अर्थात् ईश्वर और सहस्रनेत्र, सहस्रचरण, सहस्र प्रकार, सहस्र मुख, सहस्रात्मा और स्वर्गके पति हो ॥ ३३ ॥ तुम इस सब भूमिको व्याप्त होकर और सातों द्वीप व सागरोंमें व्याप्त हो और सूक्ष्मरूपसे सब जगह वशांतुल परितः

प्राणिनामुपभोगार्थमन्तः स्थित्वा जगद्गुरो ॥ तस्मात्सर्वत्र भूतेषु वर्तसे सर्वभोगवान् ॥ ३० ॥ ब्रह्मा त्वं सृष्टिकाले तु स्थितो विष्णुरसि प्रभो ॥ संहारे रुद्रनामसि त्रिधामा त्वमसि प्रभो ॥ ३१ ॥ भूमिरापोऽनलो वायुः सं मनो बुद्धिरेव च ॥ एताः प्रकृतयो देव भिन्नाः सर्वत्र ते ह्ये ॥ ३२ ॥ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपादः ॥ सहस्रधारः सहस्री सःस्रात्मा दिवस्पतिः ॥ ३३ ॥ भूमिं सर्वांमिमां प्राप्य सप्तद्वीपां ससागराम् ॥ अणुः सर्वत्रगो भूत्वा अत्यतिष्ठदशाङ्गुलम् ॥ ३४ ॥ त्वमेवेदं जगत्सर्वं यद्भूतं यद्भविष्यति ॥ त्वत्तो विराट् प्रादुरभूत्सम्राट् चैव जनार्दन ॥ ३५ ॥ तव वक्त्राजगन्नाथ ब्राह्मणो लोकरक्षकः ॥ प्रादुरासीत्पुराणात्मन् षट्कर्मनिश्चतः सदा ॥ ३६ ॥ राजन्यस्तु तथा बाह्वोरासीत्क्षत्रक्षणे रतः ॥ ऊर्वोर्वैश्यस्तथा विष्णोः पादाञ्छून् उदाहृतः ॥ ३७ ॥ एवं वर्णा जगन्नाथ तव देहजनार्दन ॥ मनसस्तव देवेश चन्द्रमाः समपद्यत ॥ ३८ ॥ सुखकृतसर्वभूतानां शीतांशुरामितप्रभः ॥ अक्ष्णोः सूर्यः सस्रुत्पन्नः सर्वप्राणिविजोचनः ॥ ३९ ॥

देवमें स्थित हो ॥ ३४ ॥ जो जगत् हो गया है, और जो होना, सो तुम्ही हो, हे जनार्दन ! तुमहीसे विराट् रूप उत्पन्न है, और तुमसेही सम्राट् रूप उत्पन्न है ॥ ३५ ॥ हे जगन्नाथ ! तुम्हारे मुखसे लोककी रक्षा करनेवाले षट्कर्मोंमें रत ब्राह्मण उत्पन्न हुए हैं ॥ ३६ ॥ और रक्षा करनेमें तत्पर क्षत्री तुम्हारी भुजाओंसे हुए हैं, और जाँबोंसे वैश्य उत्पन्न हुए हैं, और पैरोंसे शूद्र हुए हैं ॥ ३७ ॥ हे जगन्नाथ देव ! इस प्रकार सब वर्ण तुम्हारे देहसे उत्पन्न हुए हैं और तुम्हारे मनसे चन्द्रमा हुआ है ॥ ३८ ॥ जो सब भूतोंको सुख करनेवाला, शीतल किरणोंसे युक्त अप्रभुके समान और जिनसे सब

प्राणियोंका नेत्ररूप सूर्य हुआ है, जिसकी कान्तिसे संपूर्ण जगत् प्रकाशमान हो रहा है ॥ ३९ ॥ और सुप्तसे अग्नि और प्राणसे वायु उत्पन्न हुई है ॥ ४० ॥ नाभिसे अन्तरिक्ष और शिरसे महाघोरा स्वर्ग उत्पन्न हुआ है ॥ ४१ ॥ चरणोंसे पृथ्वी उत्पन्न हुई है, हे जगत्पते ! तुम्हारे कानोंसे विशा हुई हैं, इस प्रकार सब जगत्को तुम रचकर फिर विसीमें तुम व्याप्त होकर अब स्थित हो रहे हो ॥ ४२ ॥ हे केशव ! तुम इन सब लोकोंको व्याप्त होकर स्थित हो रहे हो, क्योंकि इसी कारण तुम्हारा विष्णु नाम है कि विष्णु अर्थात् सब स्थानमें व्याप्त ॥ ४३ ॥ नार नाम, जलोंके समूहका है, और उनके अपन नाम प्रवृत्त करनेवाले तुमही हो, इस कारण तुमको नारायण कहते हैं ॥ ४४ ॥ और हे देव ! तुम जीवोंको हरते हो, इस कारण

यस्य भासा जगत्सर्वं भासते भातुमानसौ ॥ मुखादिन्द्रश्च अग्निश्च प्राणाद्वायुरवायत ॥ ४० ॥ नाभेरभूदन्तरिक्षं तव देव जनार्दन ॥ घोरासीत्तु महाघोरा शिरसस्तव गोपते ॥ ४१ ॥ पद्भ्यां भूमिः समुत्पन्ना दिशः श्रोत्राज्जगत्पते ॥ एवं सृष्ट्वा जगत्सर्वं व्याप्य सर्वं व्यवस्थितः ॥ ४२ ॥ व्याप्य सर्वानिमोक्षोक्तान् स्थितः सर्वत्र केशव ॥ ततश्च विष्णुनामासि घातोर्व्याप्तेश्च दर्शनात् ॥ ४३ ॥ नारा आपः समाख्यातास्तासामयनमादितः ॥ यतस्त्वं भूतभव्येश तन्नारायणशब्दितः ॥ ४४ ॥ हरसि प्राणिनो देव ततो हरिरिति स्मृतः ॥ शंक्रोऽसि सदा देव ततः शंकरतां मतः ॥ ४५ ॥ बृहत्त्वादबृंहणत्वाच्च तस्माद्ब्रह्मेति शब्दितः ॥ मधुरिन्द्रियनामेति ततो मधुनिषूदनः ॥ ४६ ॥ हृषीकाणीन्द्रियाण्याहुस्तेषामीक्षो यतो भवान् ॥ हृषीकेशस्ततो विष्णो रूपातो देवेषु केशव ॥ ४७ ॥ क इति ब्रह्मणो नाम ईशोऽहं सर्वदेहिनाम् ॥ आवां तवाङ्गसंभूतो तस्मात्केशवनामवान् ॥ ४८ ॥

तुमको हरि कहते हैं, हे देव ! तुम सदा शं अर्थात् मंगल करते हो इस कारण तुमको शंकर कहते हैं ॥ ४५ ॥ ॥ बृहत् होनेसे और बृंहण अन्योको बढ़ानेवाले होनेसे तुम ब्रह्म कहलाते हो, और मधु इन्द्रियोंका नाम है, इस कारण तुम मधुनिषूदन कहते हो ॥ ४६ ॥ हृषीक नाम इन्द्रियोंका है तिनके तुम ईश हो सो हे केशव ! इस कारण तुम देवताओंमें हृषीकेशनामसे विख्यात हो ॥ ४७ ॥ क यह ब्रह्मका नाम है मैं सर्वदेहधारियोंका ईश हूं इस दोनों तुम्हारे अंगसे प्रगट हैं इस कारण केशव नाम है ॥ ४८ ॥

या नाम विद्याका है इसके आप ईश हो इस कारण माधव नाम है षव नाम स्वामीका है ॥ ४९ ॥ गौ नाम वाणीका है उसको आप जानते हो इस कारण आप गोविन्द नामसे कहे जाते हो ॥ ५० ॥ त्रि नाम तीन वेदोंको जो यथार्थ नामसे आक्रमण करता है इस कारण आपको त्रिविक्रम कहते हैं ॥ ५१ ॥ अणु होनेसे आपको वामन कहते हैं मननसे मुनि और यमसे पति कहलाते हो ॥ ५२ ॥ जिस कारण कि आप तप करते हो इससे तपस्वी कहाते हैं आपमें सब प्राणी निवास करते हैं इस कारणसे आप भूतावास कहे जाते हो ॥ ५३ ॥ हे हरे ! आप सब भूतोंके ईश हो इससे ईश्वर

मा विद्या च हरे प्रोक्ता तस्या ईशो यतो भवान् ॥ तस्मान्माधवनामासि घञः स्वामीति शब्दितः ॥ ४९ ॥ गौरेषा तु यतो वाणी तां च वेद यतो भवान् ॥ गोविन्दस्तु ततो देव मुनिभिः कथ्यते भवान् ॥ ५० ॥ त्रिरित्येव त्रयो वेदाः कीर्तिता मुनिसत्तमैः ॥ क्रमते तास्तथा सर्वास्त्रिविक्रम इति श्रुतः ॥ ५१ ॥ अणुर्वा मननामासि यतस्त्वं वामनाख्यया ॥ मननान्मुनिरेवासि यमनाद्यतिरुच्यते ॥ ५२ ॥ तपश्चतसि यस्मात्त्वं तपस्वीति च शब्दितः ॥ वसन्ति त्वायै भूतानि भूतावासस्ततो हरे ॥ ५३ ॥ ईशस्त्वं सर्वभूतानामीश्वरोऽसि ततो हरे ॥ प्रणवः सर्ववेदानां माधवी छन्दसां प्रभो ॥ ५४ ॥ अक्षराणामकारस्त्वं स्फोटस्त्वं वर्णसंश्रयः ॥ रुद्राणामहमेवासि वसुनां पञ्चको भवान् ॥ ५५ ॥ अश्वत्थो वृक्षजातीनां ब्रह्मा लोकगुरुर्भवान् ॥ मेरुस्त्वं पर्वतेन्द्राणां देवर्षीणां च नारदः ॥ ५६ ॥ दानवानां भवान्देव्यः प्रह्लादो भक्तवत्सलः ॥ सर्पाणामेव सर्वेषां भवान्वासुकिस्तंजितः ॥ ५७ ॥ गुह्यकानां च सर्वेषां भवान्घनद एव च ॥ वरुणो यादसां राज्ञ गङ्गा त्रिपथभागभवान् ॥ ५८ ॥

हो आप सब वेदोंमें प्रणव और छन्दोंमें माधवी हो ॥ ५४ ॥ आप अक्षरोंमें अकार और वर्णोंके संश्रयमें स्फोट हो रुद्रोंमें मेरा रूप वसुओंमें आप अग्नि हो ॥ ५५ ॥ वृक्षोंकी जातिमें अश्वत्थ (पीपल) लोकगुरु ब्रह्मा आप हो तुम पर्वतोंमें मेरु और देवर्षियोंमें नारद हो ॥ ५६ ॥ दानवोंमें आप देव्य और भक्तवत्सल प्रह्लाद हो सब सर्पोंमें आप वासुकी हो ॥ ५७ ॥ सब गुह्यकोंमें आप कुबेर हो जलोंके राजा आप वरुण हो त्रिपथना आप

रंगा हो ॥ ५८ ॥ आप सर्वभूतोंकी आदि हो आपसे सब संसार होकर आपहीमें लय हो जाता है ॥ ५९ ॥ हे देव ! मैं और तुम सर्वगामी हैं. हे जनार्दन ! जो आप हो सो मैं हूं. हे जगत्पते ! शम्भुअर्थकी समान हममें तुममें भेद नहीं है ॥ ६० ॥ हे गोविंद ! लोकमें आपके जितने नाम हैं वेही मेरे नाम हैं इसमें संदेह नहीं ॥ ६१ ॥ हे जगन्नाथ ! आपकी उपासना मेरी हो. हे देवेश ! जो आपसे द्वेष करता है इसमें संदेह नहीं कि वह मुझसे द्वेष करता है ॥ ६२ ॥ हे देव ! जो तुम्हारा विस्तार है वही मैं भूतपति हूं. हे हरे ! ऐसी कोई वस्तु नहीं जो तुम्हारे बिना हो ॥ ६३ ॥ हे जगत्पते !

आदिस्त्वं सर्वभूतानां मध्यमन्तस्तथा भवान् ॥ त्वत्तः समभवद्विश्वं त्वयि सर्वं प्रलीयते ॥ ५९ ॥ अहं त्वं सर्वगो देव त्वमेवाहं जनार्दन ॥ आद्योरन्तरं नास्ति शब्देरर्थैर्जगत्पते ॥ ६० ॥ नामानि तव गोविन्द यानि लोके महान्ति च ॥ तान्येव मम नामानि नात्र कार्या विचारणा ॥ ६१ ॥ त्वदुपासा जगन्नाथ सेवास्तु मम गोप्ते ॥ यश्च त्वां द्रष्टुं देवेश स मां द्रष्टुं न संशयः ॥ ६२ ॥ त्वद्विस्तारो यतो देव अहं भूतपतिस्ततः ॥ न तदस्ति विना देव यत्ते विरहितं हरे ॥ ६३ ॥ यदासिद्धिर्न ते यच्च यच्च भावि जगत्पते ॥ सर्वं त्वमेव देवेश विना किंचित्त्वया नहि ॥ ६४ ॥ स्तुवन्ति देवाः सततं भवन्तं स्वैर्गुणैः प्रभो ॥ ऋचत्वं यजुरेवासि सामासि सततं प्रभो ॥ ६५ ॥ किमुच्यते मया देव सर्वं त्वं भूतभावन ॥ नमः सर्वात्मना देव विष्णो माधव केशव ॥ ६६ ॥ नमस्करोमि सर्वात्मनमस्तेऽस्तु सदा हरे ॥ नमः पुष्करनाभाय वन्दे त्वामहर्माश्रय ॥ ६७ ॥ इति श्रीम० सि० इ० भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां शिवकृतविष्णुस्तुतिर्नामाष्टाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८८ ॥

जो हो गया और जो होगा. हे देवेश ! वह सब कुछ तुमही हो तुम्हारे बिना कुछ नहीं है ॥ ६४ ॥ हे विभो ! आपके गुणोंके कारण देवता नित्य आपकी स्तुति करते हैं. हे प्रभो ! तुम ऋक यजु तथा सामरूप हो ॥ ६५ ॥ हे भूतभावन ! मैं क्या कहूं सब आपहीका रूप है. हे भूतभावन ! सर्वात्मा केशव माधव आपको नमस्कार है ॥ ६६ ॥ हे सर्वात्मन् ! हे हरे ! मैं आपको सदा नमस्कार करता हूं पुष्करनाभनाम ईश्वररूप आपके लिये नमस्कार है ॥ ६७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेष्ट हरिवंशे भविष्यपर्वणि साषायां कैलासयात्रायां शिवकृतविष्णुस्तुतिर्नामाष्टाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८८ ॥

वेशपायन बोले, देवदेवेशके प्रति इस प्रकार कहकर फिर शिवजी मुनियोंसे कहने लगे, हे विप्रो ! जो भक्त देवसेको आपे हैं वे इस प्रकार जाने ॥ १ ॥ यही परम वस्तु है इससे परे और कुछ नहीं है तुम इसीको जानो कारण कि यही परम है ॥ २ ॥ हे विप्रो ! इसीका निरन्तर मनमें ध्यान करना चाहिये, यही तुम्हारा परम भेष और यही तुम्हारा परम धन है ॥ ३ ॥ यही तुम्हारे जन्मका कृत्य और यही तुम्हारे तपका फल है यही तुम्हारा पुण्यस्थान और यही सनातन धर्म है ॥ ४ ॥ यही मोक्षदाता और यही मार्ग यही पुण्यदाता और यही साक्षात् कर्मोंका फल है ॥ ५ ॥ इसीको विद्वान् ब्रह्मवादी वैशम्पायन उवाच ॥ इत्युक्त्वा देवदेवेशं मुनीनाह पुनः शिवः ॥ एवं जानीत हे विप्रो ये भक्ता द्रष्टुमागताः ॥ १ ॥ एतदेव परं वस्तु नैकस्मात्परमस्ति वः ॥ एतदेव विजानीष्वमेतद्गः परमं तपः ॥ २ ॥ एतदेव सदा विप्रो ध्येयं सततमानसेः ॥ एतद्गः परमं श्रेय एतद्गः परमं धनम् ॥ ३ ॥ एतद्गो जन्मनः कृत्यमेतद्गस्तपसः फलम् ॥ एष वः पुण्यनिलय एष धर्मः सनातनः ॥ ४ ॥ एष वो मोक्षदाता च एष मार्ग उदाहृतः ॥ एष पुण्यप्रदः साक्षादेतद्गः कर्मणां फलम् ॥ ५ ॥ एतदेव प्रशंसन्ति विद्वांसो ब्रह्मवादिनः ॥ एष त्रयीमतिर्विप्रोः प्राथ्यो ब्रह्मविदां सदा ॥ ६ ॥ ॥ एतदेव प्रशंसन्ति सांख्ययोगसमाश्रिताः ॥ एष ब्रह्मविदां मार्गः कथितो वेदवादिभिः ॥ ७ ॥ एवमेव विजानीत नात्र कार्या विचारणा ॥ हरिरिकः सदा ध्येयो भवाद्विः सत्त्वमास्थितेः ॥ ८ ॥ नान्यो जगति देवोऽस्ति विष्णोर्नारायणात्परः ॥ ओमित्येवं सदा विप्रो पठत ध्यात केशवम् ॥ ९ ॥ ततो निःश्रेयसप्राप्तिर्भविष्यति न संशयः ॥ एवं ध्यातो हरिः साक्षात्प्रसन्नो वो भविष्यति ॥ १० ॥

प्रशंसा करते हैं हे ब्रह्मणो ! यही कर्मकाण्डसे प्रार्थनीय यही सदा ब्रह्मज्ञानियोंसे प्रार्थनीय है ॥ ६ ॥ सांख्ययोगके आश्रित पुरुष इसीकी प्रशंसा करते हैं वेदवादियोंने कहा है यही ब्रह्मज्ञानियोंका मार्ग है ॥ ७ ॥ इसीको जानना चाहिये और विचार करनेकी आवश्यकता नहीं सतोऽगुणमें आश्रित हुए तुमको एक नारायणकाही सदा ध्यान करना चाहिये ॥ ८ ॥ विष्णु नारायणसे अधिक जगत्में कोई और देवता नहीं है, हे विप्रो ! ॐ इस प्रकार उच्चारण कर सदा केशवका ध्यान और पाठ करो ॥ ९ ॥ इसमें संदेह नहीं तब आपको मंगलकी प्राप्ति होगी इस प्रकार ध्यान करनेसे साक्षात् हरि

८६
॥२०६॥

तुमपर प्रसन्न होंगे ॥ १० ॥ यह हरि निश्चय संसारका बंधन छुड़ानेवाले हैं जो आप अश्रुतके प्राप्त होनेकी इच्छा करते हो तो सदा अश्रुतका ध्यान करो ॥ ११ ॥ यह गुरु संसाररोगका नाश करेंगे तुम सदा विष्णुका स्मरण करो ब्रह्मादि तीन शरीर धारण करनेवालेका ध्यान करो ॥ १२ ॥ हे ब्राह्मणो ! सदा यत्नसे मनका संयमन करो, हे तपोधनो ! शुद्ध अन्तःकरण होनेसे विष्णु प्रसन्न होते हैं ॥ १३ ॥ मुझे सब यत्नसे ध्यान करकेही केशवको जानोगे मैं सदा उपास्य हूं इन हरिमें सदा मेरा ध्यान करो ॥ १४ ॥ यह उपाय जो मैंने कहा है इसमें संदेह नहीं है यही मायापति है, हे

भा. टी.
प. २ अं. ८५

भवनाशमयं देवः करिष्यति दृढं हरिः ॥ सदा ध्यात हरिं विप्रा यदीच्छा प्राप्तुमश्रुतम् ॥ ११ ॥ एष संसारविभवं विनाशयति वो गुरुः ॥ स्मरध्वं सततं विष्णुं पठध्वं त्रिशरीरिणम् ॥ १२ ॥ मनःसंयमनं विप्राः कुरुध्वं यत्नतः सदा ॥ शुद्धेऽन्तःकरणे विष्णुः प्रसीदति तपोधनाः ॥ १३ ॥ ध्यात्वा म मर्त्यलोके ततो जानीत केशवम् ॥ उपास्योऽहं सदा विप्रा उपास्योऽस्मिन् हरो स्मृतः ॥ १४ ॥ उपायोऽयं मया प्रोक्तो नात्र संदेह इत्यपि ॥ अयं मायि सदा विप्रा यतध्वमघनाशने ॥ १५ ॥ यथा वो बुद्धिरासिला शुद्धा भवति यत्नतः ॥ तथा कुरुत विप्रेन्द्रा यथा देवः प्रसीदति ॥ १६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमुक्तास्ततः सर्वे मुनयः पुण्यशीलिनः ॥ यथावदुपगृह्णाना निरसन् संशयं नृप ॥ १७ ॥ एवमेवेति तं विप्राः प्राहुः प्राञ्जलयो हरम् ॥ छिन्नो नः संशयः सर्वो वृद्धीतोऽर्थः स तादृशः ॥ १८ ॥ एतदर्थं समायाता वयमद्य तवालयम् ॥ संगमाद्युच्योः सर्वो नष्टो मोहो महानिह ॥ १९ ॥

विप्रो ! पापनाशके निमित्त तुम सदा इनका जप करो ॥ १५ ॥ जिससे तुम्हारी सम्पूर्ण बुद्धि शुद्ध हो जाय, हे विप्रेन्द्रो ! वही करो जिससे यह देव प्रसन्न हो जाय ॥ १६ ॥ वैशम्पायन बोले, जब इस प्रकारसे कहे गये तब वे पुण्यशाली मुनि संदेहरहित हो यथायोग्य सत्कार करने लगे ॥ १७ ॥ आपका कहना ऐसेही है इस प्रकारसे हाथ जोड़ शंकरसे कहने लगे हमारा संदेह सब दूर हुआ आपका अर्थ ग्रहण किया ॥ १८ ॥ इसी निमित्त

॥२०६॥

हम आपके स्थानमें आये थे आप दोनोंके संगमेंसे हमारा मोह नष्ट हो गया है ॥ १९ ॥ हे देवेश ! आप जैसा कहते हो उसीसे हमारा परम मंगल होना जैसे भगवान् स्वप्ने कहा है, उसीके अनुसार नारायणमें यत्न करेंगे इस प्रकार वे मुनि प्रसन्न हो, केशवको प्रणाम करने लगे ॥ २० ॥ इति श्रीम० सिलेष्टु ह० भविष्यपर्वणि भा० कैलासपात्रायां नवाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८९ ॥ वैशम्पायन बोले, तब भगवान् रुद्र सबको विस्मय कराते हुए विश्वेश्वर हरिकी स्तुति करने लगे वह अर्धवाली स्तुति मुनिजनोंके श्रवण करते होने लगी ॥ १ ॥ महेश्वर बोले, वासुदेव बुद्धिमान् आपके निमित्त

यथा वदसि देवेश तथा नः श्रेयसे परम् ॥ यथाह भगवान् रुद्रो यतामः सततं हरो ॥ इति ते मुनयः प्रीताः प्रणमुः केशवं हरिम् ॥ २० ॥ इति श्रीम० सिलेष्टु ह० भविष्यपर्वणि कैलासपात्रायां नवाशीतितमोऽध्यायः ॥ ८९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः स भगवान् रुद्रः सर्वान्विस्माप्यन्निव ॥ स्तुत्या प्रचक्रमे स्तौतुं विष्णुं विश्वेश्वरं हरिम् ॥ अर्ध्याभिस्तु तदा वाग्भिर्मुनीनां शृण्वतां तथा ॥ १ ॥ महेश्वर उवाच ॥ नमो भगवते तुभ्यं वासुदेवाय धीमते ॥ यस्य भासा जगत्सर्वं भासते नित्यमच्युत ॥ २ ॥ नमो भगवते देव नित्यं सूर्यात्मने नमः ॥ यः शीतयति शीतांशुर्लोकान् सर्वानिमान्विभुः ॥ ३ ॥ नमस्ते विष्णवे देव नित्यं सोमात्मने नमः ॥ यः प्रजाः प्रीणयत्येको विश्वात्मा भूतभावनः ॥ ४ ॥ नमः सर्वात्मने देव नमो वागात्मने हरे ॥ यो दधार करेणासौ कुशचीरादि यत्सदा ॥ ५ ॥ दधार वेदान् सर्वाश्च तुभ्यं ब्रह्मात्मने नमः ॥ सर्वान्संहरते यस्तु संहारे विश्वदृक् सदा ॥ ६ ॥

नमस्कार है जिनकी कान्तिसे सब जनव प्राप्तमान होता है, हे अच्युत ! आपको नमस्कार है ॥ २ ॥ भगवान् देव नित्य सूर्यात्माके निमित्त नमस्कार है जो विश्व चंद्रमा इन सब लोकोंको शीतल करवा है ॥ ३ ॥ हे विष्णु ! उस सोमात्माको ह्व नित्य नमस्कार करते हैं जो भूतभावन विश्वात्मा प्रजाको प्रसन्न करता है ॥ ४ ॥ उस सर्वात्मा वागात्मा देवके अर्थ नमस्कार है जो सदा हाथमें कुश चीरादि धारण करते हैं ॥ ५ ॥ तथा सब वेदोंको धारण करनेवाले ब्रह्मात्माको नमस्कार है, जो सबके संहारकर्ता संहाररूप विश्वदृक् हैं ॥ ६ ॥

आपही क्रोधात्मा विरूप हो रुद्रात्मा आपके निमित्त नमस्कार है आप सृष्टिमें सबके सदा और प्राणियोंके प्राण देवेवाले हो ॥ ७ ॥ आप अज विष्णु हो विश्वके मृजनेवाले आपको नमस्कार है, आदिप्रकृतिके मूलभूतोंको उत्पन्न करनेवाले ॥ ८ ॥ देवदेवेश प्रधानपुरुषके निमित्त नमस्कार है आप पृथ्वीमें वनरूपसे, प्राणियोंमें प्राणरूपसे स्थित हो ॥ ९ ॥ दृढ दृढरूप गंधात्मा आपको नमस्कार है, सर्वत्र प्राणियोंके सुख देनेवाले रसरूप आपको नमस्कार है ॥ १० ॥ विश्वरूप रसरूपके निमित्त नमस्कार है, तेजमें सूर्यरूप और आपही प्राणियोंपर व्या करने-
क्रोधात्मासि विरूपोऽसि तुभ्यं रुद्रात्मने नमः ॥ सृष्टौ स्रष्टा समस्तानां प्राणिनां प्राणदायिने ॥ ७ ॥ अजाय विष्णवे तुभ्यं स्रष्ट्रे दिश्वसृजे नमः ॥ आदौ प्रकृतिमूलाय भूतानां प्रभावाय च ॥ ८ ॥ नमस्ते देवदेवेश प्रधानाय नमो नमः ॥ पृथिव्यां गन्धरूपेण संस्थितः प्राणिनां हरे ॥ ९ ॥ दृढाय दृढरूपाय तुभ्यं गन्धात्मने नमः ॥ जपां रसाय सर्वत्र प्राणिनां सुखहेतवे ॥ १० ॥ नमस्ते विश्वरूपाय रसाय च नमो नमः ॥ तेजसा भास्करो यस्तु घृणो जन्तुहितः सदा ॥ ११ ॥ तस्मै देव जगन्नाथ नमो भास्कररूपिणे ॥ वायोः स्पर्शगुणो यत्र शीतोष्णसुखदुःखदः ॥ १२ ॥ नमस्ते वायुरूपाय नमः स्पर्शात्मने हरे ॥ आकाशेऽवस्थितः शब्दः सर्वश्रोत्रनिवेशनः ॥ १३ ॥ नमस्ते भगवन्निष्णो तुभ्यं सर्वात्मने नमः ॥ यो दधार जगत्सर्वं मायामानुषदेहवान् ॥ १४ ॥ नमस्तुभ्यं जगन्नाथ मायिनेऽप्रायदायिने ॥ नम आद्याय बीजाय निर्गुणाय गुणात्मने ॥ १५ ॥ अचिन्त्याय सुचिन्त्याय तस्मै चिन्त्यात्मने नमः ॥ हराय हरिरूपाय ब्रह्मणे ब्रह्मदायिने ॥ १६ ॥

वाल हो ॥ ११ ॥ भास्कररूप देव जगन्नाथके तस्ते नमस्कार है जहां वायु स्पर्शगुणवाला शीतोष्ण सुखदुःख देनेवाला है ॥ १२ ॥ वायुरूप स्पर्शत्वा हरिके निमित्त नमस्कार है आकाशमें सबकी ओत्रक्रिया प्रवृत्त करनेवाला शब्द स्थित है ॥ १३ ॥ हे विष्णु भगवन् ! सर्वात्मारूप आपको नमस्कार है, जो मायासे मनुष्यदेह धारण करके जो सम्पूर्ण जगत्को धारण करता है ॥ १४ ॥ आप मायि जगन्नाथ अमायि देनेवालेके निमित्त नमस्कार है, आदिबीज निर्गुण गुणात्माके निमित्त नमस्कार है ॥ १५ ॥ अचिन्त्य सुचिन्त्य चिन्त्यात्माके निमित्त नमस्कार है हरहररूप ब्रह्म देव-

दाताके अर्थ नमस्कार ॥ १६ ॥ ब्रह्मविद ब्रह्म ब्रह्मात्मा आपके निमित्त नमस्कार है सहस्रशिर सहस्र किरणवालेके वास्ते नमस्कार है ॥ १७ ॥ सहस्र-
मुख सहस्रनेत्र विश्व विश्वरूप विश्वके कर्ताके निमित्त नमस्कार है ॥ १८ ॥ विश्ववक्त्र भूतावास आपके निमित्त नमस्कार है हे हरे । इन्द्रिय इन्द्ररूप
विषय आपको नमस्कार है ॥ १९ ॥ अश्वशिरसू वेदाभरणरूप आपके निमित्त नमस्कार है अग्नि अग्निगति ज्योतिषोंके पति आपको नमस्कार है ॥ २० ॥
सूर्य सूर्यपुत्र तेजोंके पति आपको नमस्कार है सोम सौम्य शीतात्मा आपके निमित्त नमस्कार है ॥ २१ ॥ यज्ञ इज्य हवि इष्य संस्कृत सुव पात्र प्रज्ञांग

नमो ब्रह्मविदे तुभ्यं ब्रह्मब्रह्मात्मने नमः ॥ नमः सहस्रशिरसे सहस्रकिरणाय च ॥ १७ ॥ नमः सहस्रवक्त्राय सहस्रनयनाय च ॥
विश्वाय विश्वरूपाय विश्वकर्त्रे नमो नमः ॥ १८ ॥ विश्ववक्त्रे नमो नित्यं भूतावास नमो नमः ॥ इन्द्रियायेन्द्ररूपाय विषयाय सदा
हरे ॥ १९ ॥ नमोऽश्वशिरसे तुभ्यं वेदाभरणरूपिणे ॥ अग्नयेऽग्निपते तुभ्यं ज्योतिषां पतये नमः ॥ २० ॥ सूर्याय सूर्यपुत्राय
तेजसां पतये नमः ॥ नमः सोमाय सौम्याय नमः शीतात्मने हरे ॥ २१ ॥ नमो यज्ञाय इज्याय हविषे इष्यसंस्कृते ॥ नमः सुवाय
पात्राय यज्ञाङ्गाय पराय च ॥ २२ ॥ नमः प्रणवदेहाय क्षरायाप्यक्षराय च ॥ वेदाय वेदरूपाय शस्त्रिणे शस्त्ररूपिणे ॥ २३ ॥ गदिने
खड्गिने तुभ्यं शङ्खिने चक्रिणे नमः ॥ शूलिने चर्मिणे नित्यं वरदाय नमो नमः ॥ २४ ॥ बुद्धिप्रियाय बुद्धाय प्रबुद्धाय सुखाय च ॥
हरये विष्णवे तुभ्यं नमः सर्वात्मने गुरो ॥ २५ ॥ नमस्ते सर्वलोकेश सर्वकर्त्रे नमो नमः ॥ नमः स्वभावशुद्धाय नमस्ते यज्ञ-
सूकर ॥ २६ ॥ नमो विष्णो नमो विष्णो नमो विष्णो नमो हरे ॥ नमस्ते वासुदेवाय वासुदेवाय धीमते ॥ २७ ॥

पर आपके निमित्त नमस्कार है ॥ २२ ॥ प्रणव देह हर अक्षर वेद वेदरूप शस्त्री शस्त्ररूपी आपके निमित्त नमस्कार है ॥ २३ ॥ गदा खड्ग शंख चक्र
शूल चर्मचारी वरदात्मा नित्य आपको नमस्कार है ॥ २४ ॥ बुद्धिप्रिय बुद्ध प्रबुद्ध सुख हरि किणु सर्वात्मा गुरु आपको नमस्कार है ॥ २५ ॥ सर्व-
लोकेश सबके कर्ता आपको नमस्कार है, स्वभावशुद्ध यज्ञवाराहके निमित्त नमस्कार है ॥ २६ ॥ विष्णु विष्णु विष्णु हरिके वास्ते नमस्कार है वासुदेव

शालुदेव बुद्धिमान् के निमित्त नमस्कार है ॥ २७ ॥ कृष्ण कृष्ण सर्वावास के निमित्त नमस्कार है, फिरगी आनक निमित्त नमस्कार है, हे जनार्दन !
 आप लोककी पालना करो ॥ २८ ॥ इस प्रकार जबप्राथ स्तुति कर मुनिभेदोंसे कहने लगे इस स्तोत्रका पाठकर नित्य केशवकी निकटता करो ॥ २९ ॥
 वह सब भूतोंके शरण्य हैं आपका मंगल विधान करेंगे और जो इस पापमोक्ष स्तोत्रको धारण करेंगे ॥ ३० ॥ उन पढ़ने सुननेवालोंपर हरि प्रसन्न
 होमे कह धर्मात्मा मंगल देंगे इसमें विचार करनेकी आवश्यकता नहीं ॥ ३१ ॥ भक्तवत्सल केशवको अवश्यही मनसे ध्यान करना चाहिये जो आप
 नमः कृष्णाय कृष्णाय सर्वावास नमो नमः ॥ नमो भूयो नमस्तेऽस्तु पादि लोकान् जनार्दन ॥ २८ ॥ इति स्तुत्वा जगन्नाथमुवाच
 मुनिसत्तमान् ॥ इदं स्तोत्रमधीयाना नित्यं ब्रजत केशवम् ॥ २९ ॥ शरण्यं सर्वभूतानां तत्र श्रेयो विधास्यति ॥ ये चेमं पार-
 यिष्यन्ति स्तवं पापविमोचनम् ॥ ३० ॥ तेषां प्रीतः प्रसन्नात्मा पठतां शृण्वतां हरिः ॥ श्रेयो दास्यति धर्मात्मा नात्र कार्या
 विचारणा ॥ ३१ ॥ अवश्यं मनसा ध्यात केशवं भक्तवत्सलम् ॥ श्रेयः प्राप्तुं यदीच्छन्ति भवन्तः शंसितव्रताः ॥ ३२ ॥ इत्युक्त्वा
 भगवान् रुद्रस्तत्रैवान्तरधीयत ॥ सगणः शंकरः साक्षादुमया भूतभावनः ॥ ३३ ॥ नेमुस्तं मुनयः सर्वे परां निर्वृतिमाययुः ॥ तमेव
 परमं तत्त्वं मत्वा नारायणं हरिम् ॥ विस्मयं मरमं गत्वा मेनिरे स्वकृतार्थताम् ॥ ३४ ॥ लोकपालस्तदा विष्णुं नमस्कृत्य हरिं
 मुदा ॥ जम्बुः स्वाम्ययं वेदमानि गणैः सर्वैर्नृपोत्तम ॥ ३५ ॥ आरुह्य भगवान्विष्णुमंरुडं पक्षिपुङ्गवम् ॥ शङ्खी चक्री गद्दी खड्गी
 शार्ङ्गी तूणी तनुव्रवान् ॥ ३६ ॥ ययामतं जगन्नाथो ययौ बदरिकामनु ॥ सायाह्ने पुण्डरीकाक्षोऽनित्यं मुनिनिषेविताम् ॥ ३७ ॥
 शंसितव्रतवाले मंगलकी इच्छा करते हो तो ॥ ३२ ॥ यह कह भगवान् रुद्र वहाँही अन्तर्धान हो गये, गण और उमाके सहित जब भूतस्या अन्तर्धान
 हुए ॥ ३३ ॥ तब मुनि उनको नमस्कार कर परमनिवृत्तिको प्राप्त हुए उन नारायण हरिको परमतत्त्व मानकर परम विस्मयको प्राप्त हो अपनेको उतार्थ
 मानते हुए ॥ ३४ ॥ और लोकपालभी प्रेमसे हरि विष्णुको नमस्कार करके हे राजन् ! अपने समूहोंके सहित अपने २ स्थानको गये ॥ ३५ ॥ और
 भगवान् विष्णुभी पक्षिमेठ गरुडके ऊपर चढ़कर शंख चक्र गदा खड्ग धनुष लिये तरकस धारण किये ॥ ३६ ॥ बदरिकाश्वको बधावति गये

और वह पुण्डरीकाक्ष संप्राप्ते समय नित्य मुनिजनोंसे सेवित रथानको प्राप्त हो ॥ ३७ ॥ वहाँ जाकर नम्र हुए हरि मुनियोंसे आर्चित हो आसनपर सुलसे
 स्थित हुए ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि नागायां कैलासयात्रायां नवतितमोऽध्यायः ॥ ९० ॥ वैशंपायन बोले, इसी
 समय राजोंमें बली पौंड्रराजा बली पराक्रमसम्पन्न योधा ॥ १ ॥ सदा वृष्णिवंशियोंका शत्रु कृष्णसे द्वेष करनेवाला, बलसे सब राजोंको डुलाकर सत्तामें
 इस प्रकारके वचन कहने लगा ॥ २ ॥ हमने सब पृथ्वी और सब राजोंको जीत लिया है परन्तु कृष्णके आभित हो सब वृष्णिवंशी बड़े गर्वित हो रहे
 तत्र गत्वा यथायोगं विनम्य हरिरोम्बरः ॥ अर्चितो मुनिभिः सर्वैर्नृपसाद सुखासने ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवंशे
 भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां नवतितमोऽध्यायः ॥ ९० ॥ ७३ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ एतस्मिन्नेव काले तु पौण्ड्रो नृपवरोत्तमः ॥
 बलवान्सत्त्वसंपन्नो योद्धा विपुलविक्रमः ॥ १ ॥ वृष्णिशत्रुस्तदा राजा कृष्णद्वेषी बलात्तदा ॥ नृपान्सर्वान्समाहूय प्रोवाच नृपसंसादि ॥ २ ॥
 जिता च पृथिवी सर्वा जिताश्च नृपसत्तमाः ॥ वृष्णयस्ते बलोन्मत्ताः कृष्णमाश्रित्य गर्विताः ॥ ३ ॥ दास्यन्ति मे करं सर्वे नहि ते
 कृष्णसंश्रयात् ॥ स तु कृष्णश्चक्रबलान्मामवज्ञाय तिष्ठति ॥ ४ ॥ अहं चक्रीति गर्वोऽभूत्तस्य गोपस्य सर्वदा ॥ शङ्की चक्री गदी शार्ङ्गी
 शरी तूणी सदायवान् ॥ ५ ॥ एवमादिर्मेहागर्वस्तस्य संप्रति वर्तते ॥ लोके च मम यन्नाम वासुदेवेति विश्रुतम् ॥ ६ ॥ अगृहन्मम
 तन्नाम गोप्ते मदबलान्वितः ॥ तस्य चक्रस्य यच्चक्रं ममापि निक्षिप्तं मदत् ॥ ७ ॥ गर्वद्वन्द्वं सदा तस्य नाम्ना चापि सुदर्शनम् ॥ सदस्त्रारं
 महाघोरं तस्य चक्रस्य नाशनम् ॥ ८ ॥ अनेकमदत्तं चक्रं गोपजस्य नृपोत्तमाः ॥ ममाप्येतदनुर्दिव्यं शार्ङ्गनाम महारवम् ॥ ९ ॥
 है ॥ १ ॥ मुझे सब कर देते हैं परन्तु वे कृष्णके आश्रयसे कर नहीं देते हैं, वह कृष्ण चक्रके बलसे मेरी अवज्ञा करके स्थित हुआ है ॥ ४ ॥ मैं
 चक्रधारी हूँ यह गर्व सदा उस गोपको रहता है, शंस चक्र नदा शार्ङ्ग धनुष सदा धारण किये रहता है ॥ ५ ॥ इत्यादि औरभी उसको अनेक प्रकारसे
 गर्व है और लोकमें जो मेरा नाम वासुदेव है ॥ ६ ॥ सो बलसे मच हो उसने वह मेरा नाम ग्रहण कर लिया है उसके चक्रसे मेरा चक्र बहुत तीक्ष्ण
 है ॥ ७ ॥ सुदर्शन चक्र जो मेरा है वह सदा उसके सदस आरेवाले महाघोर चक्रका नाशक है ॥ ८ ॥ हे राजोंमें भेठो ! उस गोपका चक्र मेरे चक्रसे

इत होनेके योग्य है; और बड़े शब्दवाला शार्ङ्ग नाम धनुष मेरे पासभी है ॥ ९ ॥ तथा कौमोदकी नाम दृढ गदा मेरे पास है जो सहस्र चारवाले काला
यस छोड़की निर्मित है ॥ १० ॥ इस प्रकार नन्दक नाम महादृढ खड्ग मेरे पास रहता है यह कालकाभी काल खड्ग, कृष्णके खड्ग का नाशक है ॥ ११ ॥
हे राजो ! सो यह गदा खड्ग चक्र तरकसधारी कृष्ण युद्धमें जीतने योग्य है इसमें विचार करना नहीं ॥ १२ ॥ हे राजो ! नित्यही मुझको गदा चक्र

गदा कौमोदकी नाम ममैयं बृहती दृढा ॥ कालायसप्तदशस्य भारेण सुकृता मया ॥ १० ॥ खड्गो नन्दकनापासो ममायं त्रिपुडो
दृढः ॥ अन्तकस्यान्तको घोरस्तस्य खड्गस्य नाशकः ॥ ११ ॥ तत्रायं च गदी खड्गी शंखी चक्री तनुत्रवान् ॥ युधि जेता च
कृष्णस्य नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥ मां संभूत नृपाश्चैव गदिनं चक्रिणं तथा ॥ शङ्किनं शार्ङ्गिणं वीरं हूत नित्यं नृपोत्तमाः ॥ १३ ॥
वासुदेवेति मां हूत न तु गोपं यदूत्तमम् ॥ एकोऽहं वासुदेवो हि हत्वा तं गोपदारकम् ॥ १४ ॥ सरूपुर्मम बलाद्धन्ता नरकस्य
महात्मनः ॥ मां तथा यदि न हूत दण्ड्या भारशतेः शतम् ॥ १५ ॥ सुवर्णस्य च निष्कस्य धान्यस्य बहुशस्तदा ॥ तथा भुवति
राजेन्द्रे मनसा दुस्तदं यथा ॥ १६ ॥ केचिज्जासमायुक्ता आसंस्ते बलवत्तराः ॥ रसज्ञा बलवीर्यस्य राजानस्ते सदा नृप ॥ १७ ॥

शार्ङ्ग शंखधारी वीर कहा करो ॥ १३ ॥ मुझको वासुदेव कहो उस यदुकुलोत्पन्नको नहीं एकही मैं वासुदेव हूं उस गोपके बाढकको मारकर प्रसन्न
हूँना ॥ १४ ॥ कारण कि उसने मेरे सखा नरकासुरको मारा है और जो मुझे वासुदेव नहीं कहेगा उससे सो मार सुवर्ण दण्ड लिया जायगा ॥ १५ ॥
अनेक सुवर्णके निष्क और बहुत धान्य दण्ड लिया जायगा राजाके मनसे दुस्तद यह बात कहनेपर ॥ १६ ॥ कोई बली राजा जजिन हो वहाँ

बैठे रहे, वे सदा उस राजाके बलभीषणके ज्ञाता थे ॥ १७ ॥ और दूसरे राजा क्षत्र है वेष्ट है इस प्रकार कहने लगे; कोई बलमयसे युक्त हो बोले, हम केशवको रणमें जीतेने ॥ १८ ॥ इति श्रीम० सिलेषु ह० भविष्यपर्वणि भाषायां पौंड्रकोक्तावेकनवतितमोऽध्यायः ॥ ११ ॥ वैशम्पायन बोले उस समय सर्वलोकके जाननेवाले मुनिभेठ नारदजी कैलासके शिखरसे उतर कर पौंड्रके नगरको चले ॥ १ ॥ आकाशमार्गसे चल राजाके उत्तम नगरमें आये और द्वारपालसे आज्ञा पाकर राजाके घरमें प्रविष्ट हुए ॥ २ ॥ वहां महासुनिने राजासे अर्घ्य पाद आदि सत्कार प्राप्त किया और

अपरे तु नृपा राजत्रेवमेवेति चुकुशुः ॥ अन्ये बलमदोस्तिक्ता जेष्यामः केशवं रणे ॥ १८ ॥ इति श्रीम० सिलेषु ह० भ० पौण्ड्र-
कोक्तावेकनवतितमोऽध्यायः ॥ ११ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः कैलासशिखराग्निरगतो मुनिसत्तमः ॥ नारदः सर्वलोकज्ञः
पौण्ड्रस्य नगरं प्रति ॥ १ ॥ अर्वातीयं नभोभागात्प्रत्यामम्य मरोत्तमम् ॥ द्वास्थेन च समाज्ञतः प्रविवेश गृहोत्तमम् ॥ २ ॥
अर्चादिसमुदाचारं नृपालञ्च्वा महासुनिः ॥ निषसादासने शुभ्रे द्यास्तृते शुभवाससा ॥ ३ ॥ कुशलं पृष्ट्वान्भूयो नृपः स मुनिसत्तमम् ॥
उवाच नारदं भूयः पौण्ड्रको बलगर्वितः ॥ ४ ॥ भवान्सर्वत्र कुशलः सर्वकार्येषु पण्डितः ॥ प्रथितो देवसिद्धेषु गन्धर्वेषु महात्मसु ॥ ५ ॥
सर्वजगो निराबाधो गन्ता सर्वत्र सर्वदा ॥ अगम्यं तव विप्रेन्द्र ब्रह्माण्डे नहि किञ्चन ॥ ६ ॥ नारदेदं वद त्वं हि यत्र यत्र गतो भवान् ॥
तत्र तत्र तपःसिद्धो लोके प्रथितवीर्यवान् ॥ पौण्ड्र एव च विख्यातो वासुदेवेति शब्दितः ॥ ७ ॥

सुन्दर वस्त्र बिछे आसनपर विराजमान हुए ॥ ३ ॥ तब राजाने मुनिराजसे कुशल पूछी नारदजीसे पौंड्रकने कहा ॥ ४ ॥ आप सर्वत्र कुशल और सब कार्यमें पण्डित हो देव सिद्ध महात्मा गन्धर्वोंमें प्रसिद्ध हो ॥ ५ ॥ आप सर्वत्र बाधा रहित होकर गमन कर सकते हैं, हे ब्रह्मजने ! आपको ब्रह्माण्डमें कोई स्थान अगम्य नहीं है ॥ ६ ॥ हे नारदजी ! कहिये आप जहां जहां गमन करते हो वहां वहां तपसिद्धिके लोक विख्यात हैं वहीं वही मैं पौंड्र वासुदेव नामसे विख्यात हूं ॥ ७ ॥

६६
॥२१०॥

शंस चक नदा शार्ङ्गं खड्गं तरकस धारण किये राजसिंहोंका जीतनेवाला सदा सबका दाता हूँ ॥ ८ ॥ सब राज्यका भोक्ता बलसे राजोंका शासन करने-
वाला महाबली हूँ, शत्रुकी सेनाको अजेय और अपने जनोंकी रक्षा करता हूँ ॥ ९ ॥ और जो यह बात कृष्ण वासुदेव कहाता है उस मेरे नाम धारण
करनेवालेमें इतना वीर्य नहीं है ॥ १० ॥ वह गोप बालकपनकी चंचलतासे वृथा मेरा नाम धारण करता है, हे विप्रेन्द्र ! ऐसा निश्चय कहो कि मैंही
एक स्थित रहूँ ॥ ११ ॥ इस जन्ममें उस बलिष्ठ यदुको जीतकर मैंही वासुदेव कहाऊँ और बलसे सब वृष्णियोंको मार उस पुरीको नष्ट करूँगा ॥ १२ ॥

शङ्खी चक्री गदी शार्ङ्गी खड्गी तूणी तनुत्रवान् ॥ विजेता राजसिंहानां दाता सर्वस्य सर्वदा ॥ ८ ॥ भोक्ता राज्यस्य सर्वस्य शास्ता
राजा बलाद्वली ॥ अजेयः शत्रुसेनानां रक्षिता स्वजनस्य ह ॥ ९ ॥ योऽद्य गोपकनामासौ वासुदेवेति श्रुतः ॥ तस्य वीर्यं कठे न
स्तो नाम्नोऽस्य मम धारणे ॥ १० ॥ स हि गोपो वृथा बाल्याद्धारयत्येव नाम मे ॥ इदं निश्चिनु विप्रेन्द्र एक एव भवाम्यहम् ॥ ११ ॥
वासुदेवो जन्त्यस्मिन्निति बलिनं यदुम् ॥ वृष्णीन्सर्वान्बलात् क्षित्वा निहनिष्ये च तां पुरीम् ॥ १२ ॥ द्वारकां विष्णुनिर्धया
योद्धा चाहं महामते ॥ एते च बलिनः सर्वे नृपा मम समागताः ॥ १३ ॥ अन्धश्च वेमिनः सस्ति रथा वायुजवा मम ॥ नानामन्त्राः
सहस्रं च गजा नियुतमेव च ॥ १४ ॥ एतेनाहं कठेनाजो हनिष्ये केशवं रणे ॥ तस्मादेवं सदा विप्र वद ब्रह्मपुरे मम ॥ १५ ॥
इन्द्रस्यापि सदा विप्र वद नारद साम्प्रतम् ॥ प्रार्थनेषां मम, विभो नमस्ये त्वां तपोधन ॥ १६ ॥ नारद उवाच ॥ सर्वत्रयः सदा
चक्ष्मि यावद्ब्रह्माण्डसांस्थितिः ॥ आचार्यः सर्वकार्येषु गमने केनचिन्नृष ॥ १७ ॥

उस विष्णुकी स्थानकी द्वारकामें जाकर युद्ध करूँगा और यह सब बली राजा मेरी सहायताको आपे हैं ॥ १३ ॥ वेगवाले घोड़े और वायुवेगकी
समान वेगवाली मेरे रथ हैं अनेक मंत्र सहस्रों और नियुत (लक्ष) हाथी मेरे यहां विद्यमान हैं ॥ १४ ॥ इस बली सेनासे रणमें केशवको मैं मातूँगा
हे ब्रह्मन् ! इस कारणसे हमारे आगे कहिये ॥ १५ ॥ इन्द्रकरात्री क्या ऐश्वर्य है, हे नारदजी ! सो आप कहिये, हे विभो ! हे तपोधन ! यह मेरी
प्रार्थना है आपको नमस्कार करता हूँ ॥ १६ ॥ नारदजी बोले, जहांतक ब्रह्माण्डकी स्थिति है मैं वहांतक सब जगह आ सकता हूँ सब स्थानमें

भा. ६६
प. २१०

॥२१०॥

ममन करनेवालोंमें मुझे आचार्य जानिये ॥ १७ ॥ परन्तु हे राजन् ! चक्रपाणि जनार्दन देवके पृथ्वी शासन करनेपर किस प्रकार तुम ऐसे वचन कहनेका साहस करते हो ॥ १८ ॥ सर्वत्रगामी विष्णु देव बंधुओंसहित दुष्टोंको मारकर स्थित है इन हरिके स्थित होनेमें वासुदेव नाम किसमें स्थित हो सकता है ॥ १९ ॥ सूर्यके प्रकाश पर्यन्त पृथ्वीके पालन करनेवाले श्रीकृष्णके होते मूढ़ और प्राकृत जनके सिवाय ऐसा कौन कह सकता है ॥ २० ॥ सर्वत्रगामी विष्णु तेरा दर्प चूर्ण करेंगे वह शार्ङ्गधनुष मदा धारण करनेवाले विष्णु अधिन्त्य प्रभाववाले हैं ॥ २१ ॥ वह आक्षिपेव पुराणात्मा तेरा दर्प चूर्ण

क्रिडु वक्तुं तथा राज्ञत्सहे नृपसत्तम ॥ महीं ज्ञासति देवेशे चक्रपाणौ जनार्दने ॥ १८ ॥ विष्णो सर्वत्रगो देवे दुष्टान् इत्वा सबान्धवान् ॥ वासुदेवेति को नाम तिष्ठत्यस्मिन् इराविति ॥ १९ ॥ को नाम वक्तुमेवेदं कृष्णे ज्ञासति गोमती ॥ अज्ञानाद्रक्तुमेवं च समर्थाः प्राकृता जनाः ॥ २० ॥ क्षरिः सर्वत्रगो विष्णुर्दर्पं ते व्यपनेष्यति ॥ अविन्त्यविभवो विष्णुः शार्ङ्गधन्वा मदाधरः ॥ २१ ॥ आदिदेवः पुराणात्मा दर्पं ते व्यपनेष्यति ॥ हास्यमेतन्महाराज यच्च वै तत्र संस्थितम् ॥ २२ ॥ शार्ङ्गं खड्गं तथा राजन्महाघोरं न दाप्यते ॥ अतीव हासकालोऽयं तव सम्प्रति वर्त्तते ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पौण्ड्रकनारदसंवादे द्विनवतितमोऽध्यायः ॥ ९२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः क्रुद्धो महाराज पौण्ड्रो मदबलान्वितः ॥ नारदं विप्रवर्यं तं प्रोवाच नृपसंसदि ॥ १ ॥ किमिदं प्राह विप्रर्षे राजाहं च द्विजैः सह ॥ मच्छ त्वं काममयवा मुने शापप्रदः सदा ॥ २ ॥ भीतस्त्वत्तो महाबुद्धे गच्छ त्वं काममद्य हि ॥ इत्युक्तो नृपवर्येण तृष्णीमेव स नासुः ॥ ३ ॥

करेंगे, हे महाराज ! इसी बातकी तुम इच्छा करने हो यह हास्यकी बात है ॥ २२ ॥ उनका महाघोर शार्ङ्ग धनुष और खड्ग तुम्हारे धनुषसे न टूटेगा यह तुम्हारी बातें बड़ी हास्यकी है ॥ २३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पौंड्रकनारदसंवादे द्विनवतितमोऽध्यायः ॥ ९२ ॥ वैशम्पायन बोले, तब मदके बलसे क्रोधित हो पौंड्रक राजा राजसभामें नारदजीसे कहने लगा ॥ १ ॥ हे विप्रर्षे ! यह तुम क्या कहते हो मैं ब्राह्मणोंके सहित राजा हूं मैं मुने ! आप शाप देनेवाले हो यथेच्छ नमन कीजिये ॥ २ ॥ हे महाबुद्धे ! मुझे आपसे भय है आप अभी ममन

कीजिये ज्यों रावाने ऐसा कहा तब नारदजी मौन धारण किये ॥ ३ ॥ आकाशमार्गसे केशवके निकट गये वह विष्णुके निकट जाकर विष्णुसे सब वर्णन करते हुए ॥ ४ ॥ उन मयेष्ट कहनेवालेसे विष्णु भगवान् कहने लगे, हे दिग्भेद ! प्रातःकालमें उसका अतिमान यह कहना ॥ ५ ॥ ऐसा कह प्रभु बदरीकामर्ममें विरामको प्राप्त हुए तब वह महाबाहु पौण्ड्र बहुतसी सेना साथ लिये ॥ ६ ॥ अनेक सहस्र घोड़ और बहुतसे हाथियोंसे युक्त करोड़ों शकोंसे युक्त सत्यसंगर वह राजा ॥ ७ ॥ सहस्रों प्यारोंके साथ एकलव्यादि राजाओंसे सेवित ॥ ८ ॥ आठ सहस्र रथ दस सहस्र हाथी एक

अनामाकाशमनो यत्र तिष्ठति केशवः ॥ स गत्वा विष्णुसंकाशं विष्णोः सर्वं शशंस ह ॥ ४ ॥ तच्छ्रुत्वा भगवान्विष्णुर्वयेष्टं वदतामिति ॥ दर्पं तस्यापनेष्यामि शोभते द्विजसत्तम ॥ ५ ॥ इत्युक्त्वा विररामेव तस्मिन्बदरिकाश्रमे ॥ ततः पौण्ड्रे महाबाहुर्व-
लेर्बहुभिरिन्धरः ॥ ६ ॥ अभ्यरेनेकसाहसैर्गजैर्बहुभिरान्वितः ॥ शस्त्रकोटिसमयुक्तः स राजा सत्यसंगरः ॥ ७ ॥ अनेकशतसाहसैः पतिभिश्च समन्वितः ॥ एकलव्यप्रभृतिभी राजभिश्च समन्ततः ॥ ८ ॥ अष्टौ रथसदृशाणि नामानामयुतं तथा ॥ अर्बुदं पत्तिसं-
धानां तद्रथं समपद्यत ॥ ९ ॥ एतेन च बलेनाजो प्रस्फुरन्नुपसत्तमः ॥ विरराज महाराज उदयस्थो महारविः ॥ १० ॥ स यशो मध्यरात्रेण नगरीं द्वारकामनु ॥ पत्तयो दीपिकाहस्ता राज्ञो तमसि दारुणे ॥ ११ ॥ ययुर्विविधशस्त्रोचान्संपतन्तो महाबलाः ॥
द्वारकां वीर्यसंपन्ना महाघोरां नृपोत्तमाः ॥ १२ ॥ रथं महान्तमारुह्य शस्त्रोपैश्च समावृतम् ॥ पट्टिशसिसमाकीर्णं गदापरिवसं-
कुलम् ॥ १३ ॥ शक्तितोमरसंकीर्णं ध्वजमालसमन्वितम् ॥ किङ्किणीजालसंयुक्तं शरासिप्राससंयुतम् ॥ १४ ॥

अर्बुद पैदल लेकर चला ॥ ९ ॥ इतनी सेना लिये संग्रामके निमित्त चलता हुआ राना उदय हुए सूर्यकी समान विराजमान हुआ ॥ १० ॥ वह आधी रातके समय द्वारकापुरीको गया और उस अंधेरीरातमें पैदल मसाल लेकर चले ॥ ११ ॥ और वे महाबली अनेक शस्त्र लिये चले वे जेठ राजा महाघोर वीर्यसम्पन्न द्वारकापुरीको ॥ १२ ॥ बड़े बड़े रथोंमें बैठे शस्त्रसमूह लिये पट्टिश तलवार गदा परिव लेकर घेरते हुए ॥ १३ ॥ शक्तितोमरसे संकीर्ण ध्वजमालासे युक्त किङ्किणीजाल और शर तलवार प्राससे संयुक्त ॥ १४ ॥

महाघोर महारौद्र प्रलयके मेघकी समान घट्ट मदासे युद्ध महाबायकी समान बढी ॥ १५ ॥ अग्नि सूर्यके समान आकारवाली सेना द्वारकाको चली उस प्रकार वह बलवान् राजा प्रकाशमें चला ॥ १६ ॥ और जननाथ कृष्ण तथा वृष्णिपोंके मारनेकी इच्छा करने लगा और वह महा इन्द्रिमान् राजा मुख्य २ सेना साथमें लिये था ॥ १७ ॥ पुरके द्वारमें प्राप्त हो यन्त्रे सेनाको स्थापन कर स्थित हुए सब राजोंसे इस प्रकार पौंड्रक कहने लगा ॥ १८ ॥ हमारा नाम सुनाकर भेरी बाजा बजाया जाय या तो युद्ध करो या हमारी देने योग्य वस्तु कररूपसे प्रदान करो ॥ १९ ॥ महाबली

महाघोरं महारौद्रं युगान्तजलदोष्मम् ॥ धनुर्गदासगाकीर्णं महाबायोपमं महत् ॥ १५ ॥ अत्र्यर्कसदृशकारं ययो द्वारवतीमनु ॥ गृहीतदीपिको राजा वीर्यवान्बलवान् ॥ १६ ॥ इन्तुमेच्छन्नायं वृष्णीश्वैव समन्ततः ॥ आकर्षन्बलमुख्यास्तान् राज्ञः सर्वान् महाद्युतिः ॥ १७ ॥ पुरद्वारं समासाद्य बलं संस्थाप्य यत्नतः ॥ इदं प्रोवाच राजा तु नृपान्सर्वानवस्थितान् ॥ १८ ॥ ताड्यतामत्र भेरी तु नाम विश्राव्य मामकम् ॥ युध्यतां युध्यतामत्र देयं वा प्रतिदीयताम् ॥ १९ ॥ आगतः पौण्ड्रको राजा युद्धार्थी वीरवत्तरः ॥ इन्तुकामः समग्रान्वः कृष्णबाहुबलाश्रयात् ॥ २० ॥ इति ते प्रेषिताः सर्वे समीयुः सूचकान्वहन् ॥ दीपिकाश्च प्रदीप्यन्ते बह्वयः शतसहस्रशः ॥ २१ ॥ इतश्चेतश्च राजानो युद्धयन्ते युद्धालसाः ॥ पुरीं ते पुरतस्तत्र क्षत्रियाः शस्त्रिणस्तथा ॥ २२ ॥ सिंहनादं प्रकुर्वन्तः शस्त्रधारासमाकुलाः ॥ कुतोऽयं वृष्णिप्रवरः कुतो राजा जगत्पतिः ॥ २३ ॥ कुतोऽयं सात्याकिर्वीरः कुतो हार्दिक्य एव च ॥ कुतो नु बलभद्रश्च सर्वयादवसत्तमः ॥ इत्येवं कथयन्तो वे सज्जानः सर्व एव ते ॥ २४ ॥

पौंड्रक राजा युद्ध करनेको आया है और कृष्णके बाहुबलका जानव फिये हुए सबके मारनेकी इच्छा करता है ॥ २० ॥ इस प्रकार आज्ञासे वे सब भेने जाकर घोषणा करने लगे और सैकड़ों मसालें जलाई गई ॥ २१ ॥ इसर उभरते वे शस्त्रधारी क्षत्रिय राजा पुरीको घेरकर युद्ध करने लगे ॥ २२ ॥ शस्त्रधारा लिये सिंहनाद करने लगे और बोले, वह वृष्णीयोंमें उत्तम राजा जनत्पति कहां है ॥ २३ ॥ वीर सात्यकि और हार्दिक्य कहां है सब

बादलोंमें बड़ी बलमय कहां है, इस प्रकार वे सब राणा कहने लगे ॥ २४ ॥ सब ओरसे बड़े बड़े शस्त्र लिये तथा अनेक शर और चाप धारण किये युद्धके निमित्त वस्तर धारण किये चारों ओरसे द्वारकापुरीको घेरने लगे ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेडु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पौण्ड्र-
कवचे त्रिनवतितमोऽध्यायः ॥ ९३ ॥ वैशम्पायन बोले, तब सब यादव इस प्रकार सेनाका संचय देखकर कि महाशस्त्र धारियोंद्वारा रात्रिमें व्यसन प्राप्त हुआ है ॥ १ ॥ महाबाबूसे ऊहव कल्पान्तमें युद्धकी समान है, तब बेगी युद्धकी इच्छासे शस्त्र लेकर स्थित हुए सब शस्त्रयोधी यादव हाथोंमें

आदाय शस्त्राणि बहूनि सर्वतः शराश्च चापानि बहूनि सर्वे ॥ युद्धाय सन्नाहनिबद्धशो ययुर्द्वैः पुरीं द्वारवतीं नृपोत्तमाः ॥ २५ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेडु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पौण्ड्रकवचे त्रिनवतितमोऽध्यायः ॥ ९३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततश्च यादवाः
सर्वे दृष्ट्वा सैनिकसंचयम् ॥ रात्रौ च व्यसनं प्राप्तं महाशस्त्रसमाकुलम् ॥ १ ॥ महाबातसमुद्भूतं कल्पान्ते समरोपमम् ॥ सन्नद्धाः
समपद्यन्त शस्त्रिणो युद्धालसाः ॥ २ ॥ गृहीतदीपिकाः सर्वे यादवाः शस्त्रयोधिनः ॥ सात्यकिर्बलभद्रश्च हार्दिक्यो निशठस्तथा ॥ ३ ॥
उद्धवोऽप्य महाबुद्धिरुज्ज्वलः ॥ अन्ये च यादवाः सर्वे कवचप्रग्रहे रताः ॥ ४ ॥ समस्तयुद्धकुशलं रात्रौ सन्नाहयोधिनः ॥
शस्त्रिणः सज्जिनश्चैव सर्वे शस्त्रसमाकुलाः ॥ ५ ॥ युद्धाय समपद्यन्त बहवो बाहुशालिनः ॥ रथिनो गदिनश्चैव सादिनः सायुधा-
स्तथा ॥ ६ ॥ नित्ययुक्ता महात्मानो धन्विनः पुरुषोत्तमाः ॥ निर्ययुर्नगरात्तूर्णं दीपिकाभिः समन्ततः ॥ ७ ॥ कुतः पौण्ड्रक
इत्येवं वदन्तः सर्वसात्वताः ॥ दीपिकादीपितो देशो निस्तमाः समपद्यत ॥ ८ ॥

मशाल लिये तथा सात्यकि बलभद्र हार्दिक्य निशठ ॥ २ ॥ ३ ॥ महाबुद्धि उद्धव महाबली उग्रसेन औरभी सब यादव कवच पहरे हुए ॥ ४ ॥
सम्पूर्ण युद्धमें कुशल रात्रिमें युद्ध करनेकी इच्छासे तप्यार शस्त्र सज्ज धारे सब प्रकारसे चतुर ॥ ५ ॥ बड़ी भुजावाले युद्ध करनेमें तत्पर रथमें
बैठनेवाले गदावाले रथी युद्धमें तत्पर आयुध लिये ॥ ६ ॥ नित्य युक्त महात्मा धनुषधारी पुरुषोत्तम प्रकाश किये बहुत शीघ्र नगरसे बाहर
निकले ॥ ७ ॥ पौंड्रक कहां है, इस प्रकार वे सब कहने लगे, मशालोंसे सब प्रकार उजाला हो गया ॥ ८ ॥

जब कहीं अंशकार न रहा तब वृष्णिबोंका अनुजोने साथ महाघोर संघाम हुआ ॥ ९ ॥ तब रोमहर्षण दुष्ट संघामके होनेसे चोटे चोटेके और हाथी
हाथियोंके साथ मिट गये ॥ १० ॥ रथ रथोंसे रथवान् रथवान्से खड्गवाले खड्गवालोंसे गदावाले गदावालोंसे मिट गये ॥ ११ ॥ यह मिटान परस्पर
बड़ा दारुण हुआ उनका शब्द महाप्रलयके संज्ञाकी समान हुआ ॥ १२ ॥ चारों ओरसे घावमान होते हुए राशोंको प्रहार करने लगे यह महाबाहु
खड्गधारी बली शक्ति होता है ॥ १३ ॥ अहो यह बाण तो बड़ा घोर है यह गदा धारण किये राजा इन सबको बाधा देना है ॥ १४ ॥ मह रथो

ततो वितिमिरो देहः समन्तात्प्रत्यपद्यत ॥ युद्धं समभवद्घोरं वृष्णिभिः शत्रुभिः सह ॥ ९ ॥ ततो महान् समभवत्सन्नादो रोमहर्षणः ॥
इया इयेः समायुक्ता गजाश्च मजयूथपैः ॥ १० ॥ रथा रथैः समायुक्ताः सार्द्धैः सादिनस्तथा ॥ खड्गिनः खड्गिभिः सार्द्धं गदिभिर्ग-
दिनस्तथा ॥ ११ ॥ परस्परव्यतीकारो रण आसीत्सुदारुणः ॥ मत्स्यप्रलयसंज्ञोभः शब्दस्तेषां महात्मनाम् ॥ १२ ॥ घावन्तः
प्रहरन्त्येतान् हन्त्येतान्सर्वतो नृपान् ॥ अयमेष महान्बाहुः खड्गी पतति वीर्यवान् ॥ १३ ॥ अयमेष शूरो घोरो वर्ततेऽतिमुदारुणः ॥
गदी चायं महावीर्यः सर्वान्नो बाधते नृपः ॥ १४ ॥ अयं रथी शूरी चापी गदी तूणी तनुवान् ॥ यादृशः सर्वतो याति कुन्तपाणिरयं
बली ॥ १५ ॥ अयमत्र महाशूली संश्रितः सर्वतो दिशम् ॥ गजोऽयं सविषाणामो वर्तते सर्वतः प्रति ॥ १६ ॥ अंतिसर्वत्रगः शूरो
वेगवान्वातसन्निभः ॥ शराभ्रैः सगाहन्ति दण्डान्दण्डैर्भगत्पते ॥ १७ ॥ कुन्तान्कुन्तैः समाजघ्नुर्गदाभिश्च गदास्तथा ॥ परिधान्प-
रिधेः सार्द्धं शूलाच्छूलेः समन्ततः ॥ १८ ॥

धनुष गदा बाण तर्कस लिये सब ओरसे बरछी लियेकी समान घावमान होता है ॥ १५ ॥ यह बड़ा शूल लिये चारों ओरसे घावमान होता है) यह
हाथी बड़े दाँतवाला सब ओर घावमान होता है ॥ १६ ॥ यह शूर सब ओरसे वनकी समान वेगसे घावमान होता है शरोंको शरोंसे दण्डोंके दण्डसे
हनन करता है ॥ १७ ॥ बरछीवालोंको बरछीसे गदावालोंको गदासे परिघवालोंको पारिधेसे शूलाओंको चारों ओर शूलसे हनन करने लगे ॥ १८ ॥

६. ६.
॥ २१३ ॥

हे महाराज। इस प्रकार उसका घोर संग्राम हुआ बड़ा संग्राम और बड़ा ही शब्द हुआ ॥ १९ ॥ संग्राममें बड़े शब्दवाले प्राणी शब्द करने लगे शंखोंका घोर शब्द होने लगा ॥ २० ॥ यह रात्रिमें घोरशब्द युद्धका हुआ जब इस प्रकार शत्रुओंके साथ यादवोंका घोर संग्राम हुआ ॥ २१ ॥ कोई विकल हो पृथ्वीपर गिरने हुए कोई हाथ चरण गिरहीन हो पृथ्वीमें गिरे ॥ २२ ॥ राजपारी महाबली राजा पृथ्वीमें गिरने लगे कोई वस्त्र भिन्न होकर बहुत प्रकार पृथ्वीमें गिर पड़े ॥ २३ ॥ परस्पर युद्ध कर एक दूसरेके वक्की हड्डा किये सब त्यागे सब प्रकार क्षत शरीर हुए ॥ २४ ॥ यमराज्यकी वृद्धि करनेवाले

एवं तेषां महाराज कुर्वतां रणमुत्तमम् ॥ संग्रामः सुमहानासीच्छब्दश्चापि महानभूत् ॥ १९ ॥ भूतानि सुबहुन्याजो शब्दवान्ति महान्ति च ॥ प्रादुरासन्सहस्राणि शंखानां भीमानिःस्वनः ॥ २० ॥ राज्ञो प्रादुरभूच्छब्दः संग्रामे रोमहर्षणः ॥ वर्तमाने महायुद्धे वृष्णीनां चैव तेः सह ॥ २१ ॥ केचिदग्रस्ताः समापेतुः पृथिव्यां पृथिवीक्षितः ॥ केचित्पतितश्छिद्यश्च विप्रकीर्णश्शिरोधराः ॥ २२ ॥ पेतुरुर्व्यां महावीर्या राजानः शस्त्रपाणयः ॥ केचित्तु भिन्नवर्माणः समापेतुः सहस्रधा ॥ २३ ॥ परस्परं समाश्रित्य परस्परवधेषिणः ॥ न्यस्तशस्त्रा महात्मानः समन्तात्क्षतविग्रहाः ॥ २४ ॥ पेतुर्गतस्रवः केचिद्यमराष्ट्रविवर्धनाः ॥ एवं ते निहता राजन्योधिताः सर्व एव तु ॥ २५ ॥ एतस्मिन्नन्तरे शूरे एकलव्यो निषादपः ॥ घनुर्युद्धं महाघोरं कालान्तक्यमोपमः ॥ २६ ॥ शूरेनेकसाहस्रैरहंयामास यादवान् ॥ परं क्षतेः शराणां तु निक्षितैर्मर्मभेदिभिः ॥ २७ ॥ वृष्णीनां च बलं सर्वं पोषयामास सर्वतः ॥ बुद्धयतः शस्त्रपाण्यश्च क्षत्रियान्कीर्यवत्तरान् ॥ २८ ॥ निशठं पञ्चविंशत्या शराणां न्तपर्वणम् ॥ सारणं दशभिर्विद्धा हाविक्यं पञ्चभिः शूरेः ॥ २९ ॥

माणरहित हो पृथ्वीमें गिरने लगे इस प्रकार सब प्रकार युद्ध करनेवाले राजा मृतक हुए ॥ २५ ॥ इसी समय निषादपति शूर एकलव्य राजा कालान्तक यमकी समान घोर धनुष ग्रहण कर ॥ २६ ॥ सहस्रों बाणोंसे यादवोंका मर्दन करने लगा वह मर्मभेदी सैकड़ों बाण थे ॥ २७ ॥ वह चारों ओरसे सब यादवोंकी सेनाको नष्ट करने लगा और वीरवान् शस्त्र छिने क्षत्रियोंसे युद्ध करने लगा ॥ २८ ॥ बड़े तीक्ष्ण पचीस बाणसे निशठको दस बाणसे

६. ६.
॥ २१३ ॥

1614

॥ २१३ ॥

सारणको पांच बाणसे हार्दिक्यको ॥ २९ ॥ नग्वे बाणसे उग्रसेनको सात बाणसे वसुदेवको दशसे उद्धवको पांचसे अक्रूरको विद किया ॥ ३० ॥ इस प्रकार तौक्ष्ण बाणोंसे सबको विद किया इस प्रकार यादवी सेनाको विद्रावण कर अपना नाम सुनाकर वह बली ॥ ३१ ॥ एकलव्य बली यदुओंको व्यधित करने लगा और बोले अब वोह वीर सात्यकि कहाँ जाता है ॥ ३२ ॥ और मदमत्त हलधर मदावर कहाँ जाता है इस प्रकार सिंहोंको विस्मित करता हुआ सिंहनाद करने लगा ॥ ३३ ॥ इति श्रीम० सिलेष्टु हरिवंशे भवि० भाषायां पौण्ड्रकवधे चतुर्नवतितमोऽध्यायः ॥ ९४ ॥ वैशंपायन बोले जब इस प्रकार यादवी सेना और वृष्णिवीर निवृत्त हुए और उसके भीत होने तथा अनेक वीरोंके मरनेमें ॥ १ ॥ दीपिका शान्त होमे और चारों ओर निरस्तब्ध होनेपर

उग्रसेनं नवत्याशु वसुदेवं च सप्तभिः ॥ उद्धवं दशभिश्चैव अक्रूरं पञ्चभिः शूरेः ॥ ३० ॥ एवमेकैकशः सर्वे निहता निशितैः शूरेः ॥ विद्राव्य यादवीं सेनां नाम विश्राव्य वीर्यवान् ॥ ३१ ॥ एकलव्यो यदुवृषां वीर्यवान् बलवान् हम् ॥ इदानीं सात्यकिर्वीरः क यास्याति महाबलः ॥ ३२ ॥ मदमत्तो हर्षो साक्षात्क यातीह मदावरः ॥ इत्याह सिंहनादेन सिंहान्विस्मापयन्निव ॥ ३३ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भवि० पौण्ड्रकवधे चतुर्नवतितमोऽध्यायः ॥ ९४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ निवृत्तेष्वय सेन्येषु वृष्णिवीरेषु चैव हि ॥ भीतेष्वय महाराज इतेषु युधि सर्वतः ॥ १ ॥ दीपिकासु प्रशान्तासु निःशब्दे सति सर्वतः ॥ जितमित्येव यन्मत्वा वृष्णीनां बलमुत्तमम् ॥ २ ॥ ततः पौण्ड्रो महावीर्यो बभाषे सेनिकान्स्वकान् ॥ शीघ्रं गच्छत राजेन्द्राष्टकैः कुन्तेः पुरीमिमाम् ॥ ३ ॥ कुठारेः कुन्तलेऽथ पाषाणेः सर्वतोदिशम् ॥ कर्षणस्थैः सुपाषाणेः सर्वतो यात भूमिपाः ॥ ४ ॥ भिक्षन्तां प्राकारचपाः प्रासादाश्च समन्ततः ॥ गृह्यन्तां कन्यकाः सर्वा दास्यश्चैव समन्ततः ॥ ५ ॥ गृह्यन्तां वसुमुख्यानि धनानि सुबहून्यथ ॥ ते तथेति महात्मानो राजानः सर्व एव तु ॥ ६ ॥

उन्होंने जान लिया कि हमने वृष्णिवंशियोंको जीत लिया ॥ २ ॥ तब महावीर पौण्ड्र अपनी सेनासे कहने लगा, हे राजेन्द्र ! शीघ्रतासे जाकर टंक और बरछोंसे इस पुरीको खोदो ॥ ३ ॥ कुहाड़े कुन्तल और पाषाण सब ओर डालो खेंचनेयोग्य पत्थरोंको सब ओर ले चलो ॥ ४ ॥ इसका परकोटा और प्राकार सब ओरसे तोड़ डालो सब राजकन्या दासी करनेको ग्रहण करो ॥ ५ ॥ सुरुष रत्न और धन ग्रहण कर लो वह आज्ञा सुन उन राजोंने कहा

रेवेही होना ॥ ६ ॥ पौडूककी आज्ञासे कुठारोंद्वारा प्राकारको ढाने लगे रसभाषिके संक्षयवाले प्राज्ञाद और प्राकार भग्न करने लगे ॥ ७ ॥ तब चारों ओरसे महाशब्द प्रगट हुना जिस समय बलपूर्वक टांकियोंसे प्रासाद छेदिब होने लगे ॥ ८ ॥ हे महाराज ! उस समय पूर्वके द्वारसे प्राकार कुछ भग्न हो गया उस महाघोर शब्दको सुनकर सात्यकि क्रोधसे मूर्च्छित हो गया ॥ ९ ॥ कि यादवेश्वर उष्ण मुक्षमें यह सब सौंपकर अविनाशी शंकरके देखनेको कैलासपर्वतमें गये हैं ॥ १० ॥ द्वारकापुरीकी रक्षा मुझे अवश्य करनी चाहिये यह मनमें विचार शीघ्रतासे धनुष लाकर ॥ ११ ॥ महात्मा दारुकके पुत्रसे कुठारेः सर्वतश्चैव चिच्छिदुः पौण्ड्रकाज्ञया ॥ प्राकाराश्चैव सर्वत्र प्रासादान्ससंचयान् ॥ ७ ॥ अथ तत्र महाशब्दः प्रादुरासीत् समन्ततः ॥ टङ्केषु पात्यमानेषु प्राकारेषु महाबलेः ॥ ८ ॥ पूर्वद्वारे महाराज भिन्नाः प्राकारसंचयाः ॥ श्रुत्वा शब्दं महाघोरं सात्यकिः क्रोधमूर्च्छितः ॥ ९ ॥ मयि सर्वं समारोप्य केशवो यादवेश्वरः ॥ गतः कैलासशिखरं द्रष्टुं शंकरमव्ययम् ॥ १० ॥ अवश्यं हि मया रक्ष्या पुरी द्वारवती त्वियम् ॥ इति संचिन्त्य मनसा धनुरादाय सत्वरम् ॥ ११ ॥ रथं महान्तमारुह्य दारुकस्य महात्मनः ॥ पुत्रेण संस्कृतं घोरं यन्ता च स्वयमेव हि ॥ १२ ॥ धनुर्महत्तदादाय शरांश्चाशीविषोपमान् ॥ आमुच्य कवचं घोरं शस्त्रसंपातदुः सहम् ॥ १३ ॥ अङ्गदी कुण्डली तूणी शरी चापी गदासिमान् ॥ ययो युद्धाय शैनेयः संस्मरन्केशवं वचः ॥ १४ ॥ दीपिकादीपिते देशे ययो सात्यकिरुत्तमः ॥ तथैव बलदेवोऽपि रथमारुह्य भास्वरम् ॥ १५ ॥ गद्दी शरो महावीर्यः प्रायाद्रणचिकीर्षया ॥ सिंहनादं प्रकुर्वन्तो मुञ्चन्तो भैरवं रवम् ॥ १६ ॥ उद्धवोऽपि बली साक्षाद्रजमारुह्य सत्वरम् ॥ मत्तं महारवं घोरं संग्रामे नीतिमत्तरम् ॥ १७ ॥

छाबे महारथमें चढ़कर जो उसके द्वारा सजाया गया था और स्वयं उसका यन्ता होकर ॥ १२ ॥ बड़ा धनुष ग्रहण कर आशीविषकी समान घोर बाण लेकर दुस्सह शस्त्रपात सहनेवाला घोर कवच पहन कर ॥ १३ ॥ बाजूबंद कुंडल धारण किये शर और गदा तत्त्वार लिये श्रीलङ्काके वचन स्मरण करता सात्यकि युद्ध करनेको चला ॥ १४ ॥ महाबलें जलवाकर सात्यकि उस स्थानमें पहुँचा, इसी प्रकार प्रकाशमान रथमें स्थित हो बलदेवजी चले ॥ १५ ॥ यह महाबली गया और धनुषबाणको हाथमें लिये लड़ाईकी इच्छासे चले, सिंहनाद और जयंकर शब्द करते चले ॥ १६ ॥ बली उधोमी हाथीके

ऊपर चढ़कर जो मन और महाघोर संग्राममें नीतिशुद्ध था ॥ १७ ॥ यह ऊधो परमप्रसन्नतासे संग्राममें राजनीति विचारते चले दूसरे वृष्णिवंशी संग्रामकी इच्छासे चले ॥ १८ ॥ हाथी घोड़ोंपर चढ़े हार्दिक्य आदि यादव आने प्रकाशके निमित्त दीपिकावालोंसे युक्त ॥ १९ ॥ सिंहनाद करते केशवका वचन स्मरण किये युद्धकी लालसासे पूर्वद्वारमें प्राप्त हुए ॥ २० ॥ वे महाबली परस्पर मिलकर वहां स्थित हुए महाघोर प्रकाशमें जब दीपिका प्रज्वलित हुई ॥ २१ ॥ तब सात्यकि वीर शर चाप लिये तरकस धारण किये धनुषपर वायव्य अक्ष चढ़ाकर ॥ २२ ॥ श्रेष्ठ धनुषको कान-

ययो नीति विचिन्वानः परां प्रीतिं महाबलः ॥ अन्ये च वृष्णयः सर्वे ययुः संग्रामलालसाः ॥ १८ ॥ रथान् गजान् समारुह्य हार्दिक्यप्रमुखास्तथा ॥ दीपिकाभिश्च सर्वत्र पुरोवृत्ताभिरिश्वराः ॥ १९ ॥ सिंहनादं प्रकुर्वन्तः स्मरन्तः केशवं वचः ॥ पूर्वद्वारं समागम्य वृष्णयो युद्धलालसाः ॥ २० ॥ ते समेत्य यथायोगं स्थितास्तत्र महाबलाः ॥ स्थिते सैन्ये महाघोरे दीपिकादीपिते पथि ॥ २१ ॥ शिनिर्वीरः शरी चापौ गदी तूणीरवान्विभो ॥ वायव्यास्त्रं समादाय योजयित्वा महाशरम् ॥ २२ ॥ आकर्ण्यपूर्ण-माकूष्य धनुःप्रवरमुत्तमम् ॥ सुमोच परसैन्येषु शिनिर्वीरः प्रतापवान् ॥ २३ ॥ वायव्यास्त्रेण ते सर्वे तत्रस्था नरसत्तमाः ॥ विजिता ह्यस्त्रवीर्येण यत्र तिष्ठति पौण्ड्रकः ॥ २४ ॥ तत्र गत्वा स्थिताः सर्वे निर्दृता वातरं दसा ॥ यत्र पूर्वं स्थिताः सर्वे विद्रुता राजसत्तमाः ॥ २५ ॥ तत्र स्थित्वा च शैनेयः शरमादाय सत्वरम् ॥ निशितं सर्पभोगाभं बभाषे सात्यकिस्तदा ॥ २६ ॥ क इदानीं महाबुद्धिः पौण्ड्रको राजसत्तमः ॥ स्थितोऽस्ति व्यवसायेन शरी चापौ महाबलः ॥ २७ ॥

पर्यन्त सैचकर शत्रुकी सेनामें प्रहार करने लगा ॥ २३ ॥ जो वहां स्थित थे वे सब वायव्य अक्षसे पराजित हो पौंड्रकके समीप चले गये ॥ २४ ॥ वातके वेगसे पराजित हो वे सब वहां स्थित हुए जहां पहले व्याकुल हो स्थित हुए थे ॥ २५ ॥ और सात्यकि वहां स्थित हो शर ग्रहण कर जो सर्पकी समान था कहने लगा ॥ २६ ॥ इस समय वह बुद्धिमान् पौंड्रक कहां है मैं धनुषबाण शर चापधारीसे युद्ध करनेको स्थित हूं ॥ २७ ॥

में उस दुरात्माको आज बध करूंगा मैं केशवका तृप्य उसके मारनेके निमित्त स्थित हूं ॥ २८ ॥ सब क्षत्रियोंके देखने उसका शिर छेदन कर उस दुरा-
त्माके शरीरकी बली गिद्ध और कुत्तोंको दूंगा ॥ २९ ॥ कारण कि उसके सिवाय चोरकी समान कर्म कौन कर सकता है जब कि रात्रिमें सब
यादव सो रहे थे तब आया ॥ ३० ॥ यह राजा बली नहीं सर्वथा चोर है यदि समर्थ होता तो यह अवश्य इस प्रकार चोरी नहीं करता ॥ ३१ ॥
अहो इसके चोरवद आनेसे मैं किसी प्रकार इसको बली नहीं मानता हूं ॥ ३२ ॥ यह कह महाबली सात्यकि हास्य करने लगा और धनुष चढ़ाकर

यदि द्रष्टा दुरात्मानं ततो हन्ता नृपाधमम् ॥ भृत्योऽस्मि केशवस्याहं जिघांसुः पोण्ड्रकं स्थितः ॥ २८ ॥ छित्त्वा शिरस्तु तस्यास्य
सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥ बलिं दास्यामि वृध्रेभ्यः श्वभ्यश्चैव दुरात्मनः ॥ २९ ॥ को नाम ईदृशं कर्म चोरवच्च समाचरेत् ॥ सुतेषु निशि
सर्वत्र यावत्पेषु महात्मसु ॥ ३० ॥ चोरोऽयं सर्वथा राजा नहि राजा बलान्वितः ॥ यदि शक्तो न कुर्याच्च चौर्यमेवं नृपाधमः ॥ ३१ ॥
अहोऽस्य बलिनो राज्ञश्चोरकार्यं प्रकुर्वतः ॥ सर्वथागमनं तस्य नहि पश्यामि साम्प्रतम् ॥ ३२ ॥ इत्युक्त्वा सात्यकिवीरः प्रजहात
महाबलः ॥ विस्फार्य सुहृदं चापं संदधे काशुके शरम् ॥ ३३ ॥ आकर्ण्य वचनं वीरः सात्यकेस्तस्य धीमतः ॥ क नु कृष्णः क
गोपालः कुतः सोऽयं प्रवर्तते ॥ ३४ ॥ स्त्रीहन्ता पशुहन्ता च क्व च स्वामीति सेवितः ॥ स इदानीं क्व वर्तेत गृहीत्वा मम नाम तत् ॥ ३५ ॥
हन्ता सख्युर्महावीर्यो नरकस्य महात्मनः ॥ ममेव तात युद्धेऽस्मिन् हते तस्मिन्दुरात्मानि ॥ ३६ ॥ गच्छ त्वं कामतो वीर
योद्धुं न क्षमते भवान् ॥ अथवा तिष्ठ किञ्चित्तु ततो द्रष्टासि मे बलम् ॥ ३७ ॥

उत्तर बाण चढ़ाता हुआ ॥ ३३ ॥ वह वीर उस सात्यकिके वचन सुनकर बोला वह गोपालकृष्ण कहां है ॥ ३४ ॥ वह स्त्रीहन्ता पशुहन्ता स्वामी सेवित
मेरा नाम ग्रहण कर इस समय कहां गया है ॥ ३५ ॥ जिसने महाबली नरक महात्मा मेरे सखाको मारा है, हे तात ! इस युद्धमें उस दुरात्माकोही
मारूंगा ॥ ३६ ॥ हे वीर ! तेरी जहां इच्छा हो वहां चला जा मुझसे युद्ध करनेको तू समर्थ नहीं है अथवा क्षणमात्र ठहरकर मेरा बल देख ले ॥ ३७ ॥

और बाणोंसे तेरा खिर पृथ्वीमें गिरावे देता हूं. हे वीर ! तेरे हत होनेसे पृथ्वी तेरा रुधिर पान करेगी ॥ ३८ ॥ जब वह नोम सुनेगा कि सात्याकि युवक हो गया जो गर्व उसका महान् वर्तता है ॥ ३९ ॥ सो तेरे मरनेसे वह नष्ट हो जायगा तुझे रक्षामें स्थित कर वह गोपाल कैलासपर्वतको ॥ ४० ॥ चढा गया है यह हमने पहले सुन रक्सा है. हे सात्याकि ! जो तुझे सामर्थ्य है तो तीक्ष्ण बाण ग्रहण कर यह कह बाण लेकर युद्ध करनेको स्थित हुआ ॥ ४१ ॥ इति श्रीमहाभारते सिंहेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषावां पौंड्रकवधे सात्याकिपौंड्रभाषणं नाम पञ्चनवतितमोऽध्यायः ॥ ९५ ॥ वैशम्पायन बोले, हे

शिरस्ते पातयिष्यामि शरैर्वैरिबुंरासदेः ॥ इतस्य तव वीरिह भूमिः पात्यति शोणितम् ॥ ३८ ॥ श्रोष्यते स तथा गोषो इतः सात्य-
किरित्यपि ॥ यो मर्वस्तस्य गोपस्य सर्वदा वर्तते महान् ॥ ३९ ॥ विनश्यति स तु क्षिप्रं इते त्वयि यदूत्तम ॥ त्वयि रक्षां सम्प्रदिश्य
गोपः कैलासपर्वतम् ॥ ४० ॥ गत इत्येवमस्माभिः श्रुतं पूर्वं महामते ॥ शरं गृह्णाण निशितं यदि शक्तोऽसि सात्यके ॥ इत्युक्त्वा
बाणमादाय ययौ योद्धुं व्यवस्थितः ॥ ४१ ॥ इति श्रीमहाभारते सिंहेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पौंड्रकवधे सात्याकिपौंड्रभाषणं
नाम पञ्चनवतितमोऽध्यायः ॥ ९५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः क्रुद्धो महाराज सात्यकिर्वृष्णिपुङ्गवः ॥ उवाच वचनं राजन्वासुदेवं
स्मरन्निव ॥ १ ॥ अचोचदीदृशं वाक्यं वासुदेवं नृपाधमः ॥ को नाम जमतां नाथमित्यं ब्रूयाज्जिजीविषुः ॥ २ ॥ मृत्युस्त्वं सर्वथा
याति वदन्तं तादृशं वचः ॥ जिह्वा ते शतत्वा दीर्घद्विदतस्तदृशं वचः ॥ ३ ॥

महाराज ! यह वचन सुन सात्यकिको बड़ा क्रोध हुआ और भीटण्यको स्मरण करता हुआ वचन कहने लगा ॥ १ ॥ हे नृपाधम ! जो कि तू
वासुदेवके प्रति ऐसे वचन कहता है जीनेकी इच्छा करनेवाला जगन्नाथके प्रति कौन ऐसे वचन कह सकता है ॥ २ ॥ ऐसे वचन कहते हुए सर्वथा
तेरे निमित्त मृत्यु प्राप्त होगी ऐसे वचन कहनेमें तेरी जिह्वाके सौ लण्ड होने ॥ ३ ॥

हे पौंड्रक ! यह मैं तेरा शिर कायासे पृथक् करूंगा और जो वासुदेव नाम तुझमें वर्तता है ॥ ४ ॥ सो जबतक कायासे तेरा शिर न भिरेमा तबहतिक यह नाम तुझमें है सो प्रातःकाल हमारे भगवान् कृष्णही वासुदेव रहेंगे ॥ ५ ॥ वह एकही जगन्नाथ सबके कर्ता और सर्वगामी हैं, हे दुरात्मन् ! इसमें सन्देह नहीं वही देव सर्वथा स्थित रहेंगे ॥ ६ ॥ हे नीच राजन् ! मैं तुम्हारी कायासे सर्वथा तेरा शिर काट कर गिराऊंगा जो भगवान् विष्णु नहीं आवेंगे ॥ ७ ॥ अब तू सब अपना अस्त्र और वीर्यका बल मुझे दित्ता, हे राजन् ! इससे अधिक तुम्हारा पराक्रम नहीं है ॥ ८ ॥ मैं युद्धको स्वयं

एष ते पातयिष्यामि शिरः कायाच्च पौण्ड्रक ॥ यन्मम वासुदेवेति तव संप्रति वर्तते ॥ ४ ॥ यवत्पतति कायात्ते शिरस्तावत्प्रवर्तते ॥ स एव श्वो न भगवान्वासुदेवो भविष्यति ॥ ५ ॥ एक एव जगन्नाथः कर्ता सर्वस्य सर्वगः ॥ दुरात्मन्सर्वथा देवो भविष्यति न संशयः ॥ ६ ॥ एष तेऽहं शिरः कायात्पातायिष्यामि राजक ॥ यत्सो भगवन्विष्णुर्नागमिष्यति साम्प्रतम् ॥ ७ ॥ अस्त्ररीयं वञ्चयेय सर्वं दर्शय साम्प्रतम् ॥ नातः परतरं राजन्वीर्यं च तव वर्तते ॥ ८ ॥ सर्वं दर्शय यत्नेन स्थितोऽस्मि व्यवसायवान् ॥ शरीचापी गदी खड्गी सर्वथादमुपस्थितः ॥ ९ ॥ नैतन्नगरमायासीः सत्यमेतद्भवीम्यहम् ॥ सर्वथा कृतकृत्योऽस्मि दृष्ट्वा त्वां वासुदेवकम् ॥ १० ॥ तवाङ्गं तिलशः कृत्वा श्वभ्यो दास्यामि राजक ॥ इत्युक्त्वा बाणमादाय वासुदेवं महाबलः ॥ ११ ॥ आकर्णपूर्णमाकृष्य विव्याध निशितं शरम् ॥ स तेन विद्धो यदुना वासुदेवः प्रतापवान् ॥ १२ ॥ वमन्छोणितमत्युष्णमङ्गान्नेत्राचूषोत्तम ॥ ततश्चक्रोऽप नृपतिर्वासुदेवः प्रतापवान् ॥ १३ ॥

हूं तू यह सब यत्नसे दित्ता शर चाप गदा खड्ग लिये मैं सर्वथा उपस्थित हूं ॥ ९ ॥ इस नगरमें तू न आवेगा यह मैं सत्य कहता हूं तुझ मिथ्या वासुदेवको देख मैं सर्वथा ऊबकृत्य हूं ॥ १० ॥ हे नीच ! तेरे शरीरको तिलकी समान टुकड़े कर कुत्तोंको दे दूंगा यह कहकर वह बली बाण लेकर पौंड्रकके ऊपर ॥ ११ ॥ कानपर्यन्त धनुष चढ़ाय बाण छोड़ता हुआ उस बाणसे पौंड्रक बिद्ध होकर ॥ १२ ॥ मुत्त और नेत्रसे शोणित वमन करने लगा और उस प्रतापी पौंड्रकने बड़ा क्रोध किया ॥ १३ ॥

नो और दस बड़े तीक्ष्ण बाणोंसे राजाने सात्यकिको बिद्ध किया और बड़ी गर्जना की ॥ १४ ॥ तब यमराजाकी समान घोर धनुष चढ़ाकर पोंड्रकने बाणद्वारा ॥ १५ ॥ सात्यकिको बिद्ध कर अपनी सेवाके लोगोंको प्रसन्न किया, सत्यसंगर सात्यकि नाराचसे बिद्ध होकर ॥ १६ ॥ जो बाण उसके ललाटमें लगा था उसके वेगसे वह वृष्णिर्षोमं भेद्य चेटारहित हो रथमें रीखत हुआ ॥ १७ ॥ तब पोंड्रकने दस बाण उसके घोड़ोंके मारे और पचीस बाणसे उसके साराथि और घोड़ोंको बिद्ध किया ॥ १८ ॥ वे घोड़े और साराथि रुधिरसे छिन्न हो गये और पोंड्रकके देखते २ विह्वल हो

नवभिर्दशभिश्चैव शूरेः सन्नतपर्वभिः ॥ विव्याध सात्यकिं राजा नदंश्च बहुधा किल ॥ १४ ॥ ततो नाराचमादाय निश्चितं यमसांनिभम् ॥ धनुराकृष्य भगवान्वासुदेवो नृपोत्तम ॥ १५ ॥ विव्याध सात्यकिं भूपो निशि प्रह्लादयन्स्वकान् ॥ नाराचेन समाविद्धः सात्यकिः सत्यसङ्गरः ॥ १६ ॥ ललाटे मुहुरं वीरो वृष्णीनामग्रणीस्तदा ॥ निषसाद रथोपस्थे निश्चेष्ट इव सत्तमः ॥ १७ ॥ ततः स पौण्ड्रको राजा विद्धा दशभिराशुगैः ॥ साराथिं पञ्चविंशत्या हयैश्च चतुरो नृप ॥ १८ ॥ ते हया रुधिराक्ताङ्गाः साराथिश्च समन्ततः ॥ विह्वलाः समपद्यन्त वासुदेवस्य पश्यतः ॥ १९ ॥ वासुदेवो रथे चापि सिंहनादं समाददे ॥ तेन नादेन तत्राभूद्विबुद्धः सात्यकिर्नृप ॥ २० ॥ विद्धान् हयैस्तथा दृष्ट्वा साराथिं च तथागतम् ॥ शैनेयोऽथ महावीर्यो रुषितो नृपसत्तमः ॥ २१ ॥ अलं द्रक्ष्यामि ते वीर्यमित्युक्त्वा बाणमाददे ॥ विव्याध तेन बाणेन वक्षस्येनं महाबलः ॥ २२ ॥ ततश्चाचल तेनाजो वासुदेवः शरेण ह ॥ सुस्राव रुधिरं घोरमत्युष्णं वक्षसो नृप ॥ २३ ॥ रथोपस्थे पपाताशु निश्चसन्नुरगो यथा ॥ कृत्यं चापि न जानाति केवलं निषसाद ह ॥ २४ ॥

थे ॥ १९ ॥ यह देख पोंड्रकने सिंहनाद किया उस शब्दसे सात्यकिको चेतना हुई ॥ २० ॥ घोड़ोंको बिद्ध और साराथिकी यह दशा देखकर महा-बली सात्यकि महाक्रोधित हुआ ॥ २१ ॥ उस तुम्हारा पराक्रम देख लिया यह कहकर बाण ग्रहण किया और पोंड्रककी छातीमें बाण मारा ॥ २२ ॥ बुद्धमें उस बाणसे सात्यकिने राजाको चलायमान कर दिया और छातीसे बहुतसा रुधिर निकलने लगा ॥ २३ ॥ तब वह सर्पकी समान श्वात्र लेता

ह. १.
॥२१७॥

रथके ऊपर मुर्छित हो गिरा और कुछ कर्तव्यको न जानकर केवल विषादको प्राप्त हुआ ॥ २४ ॥ तब सात्यकिने दश बाणसे उसके रथको विद्ध किया और भालसे उसकी ध्वजाको छेदन कर दिया ॥ २५ ॥ चारों घोड़े मारकर और बाणोंसे सारथिको विद्ध कर पौंड्रकके देखते युद्ध करने लगा ॥ २६ ॥ और उसके सारथिका गिर काटकर नीचे गिरा दिया रथकी ग्रंथि तोड़ दी और घोड़ोंको प्राणरहित कर दिया ॥ २७ ॥ दश बाणोंसे उसके चक्रको तिलकी समान काट दिया और पौंड्रकको देखकर बड़ा हास्य किया ॥ २८ ॥ तब महाबली सात्यकि सबके देखते बड़ा शब्द करने सात्यकिस्तु रथं विद्धा दशभिः सायकैस्तथा ॥ ध्वजं चिच्छेद भलेन वासुदेवस्य वृष्णिपः ॥ २५ ॥ ह्यांश्च चतुरो इत्वा बाणेः साराथि-
मेव च ॥ युयुधानोऽथ राजेन्द्र पौण्ड्रकस्य च पश्यतः ॥ २६ ॥ सारथेश्च शिरः कायादाहरत्स रथात्तदा ॥ रथग्रन्थिं च चिच्छेद ह्याश्च
व्यसवोऽभवन् ॥ २७ ॥ चक्रं च तिलशः कृत्वा बाणेर्दशभिरंदसा ॥ जहास विपुलं राजन्वासुदेवं महाबलः ॥ २८ ॥ ततः परं मह-
त्प्रायं सात्यकिर्वृष्णिनन्दनः ॥ शब्दं कृत्वा बली साक्षात्सर्वज्ञस्य पश्यतः ॥ २९ ॥ शूरेः सप्ततिसंख्याक्रैर्दयामास सत्वरम् ॥ ते
शराः शलभाकारा निपेतुः सर्वशस्तदा ॥ ३० ॥ शिरस्तः पार्श्वतश्चैव पृष्ठतः पुरतस्तथा ॥ केवलं धैर्यनिचयस्तुषार्तः शरवान्
यथा ॥ ३१ ॥ यथा मनस्वी रिक्तश्च तथा तिष्ठति पौण्ड्रकः ॥ ततश्चक्रो बलवान्वासुदेवः प्रतपवान् ॥ ३२ ॥ अर्धचन्द्रं समा-
दाय विव्याध युधि सात्यकिम् ॥ विद्धा सप्तभिरायान्तं क्रोधेन प्रस्फुरन्निव ॥ ३३ ॥ विद्धोऽथ सात्यकिस्तेन शूरेः पञ्चभिराशुगेः ॥
चापं चिच्छेद पौण्ड्रस्य सिंहनादं व्यनीनदन् ॥ ३४ ॥

लगा ॥ २९ ॥ और (७०) सत्तर बाणोंसे फिर मर्दन किया, वे शलभके आकारके बाण सब ओर पवित होने लगे ॥ ३० ॥ गिर पार्श्व पीछे
आगे सब ओर बाण गिरने लगे जैसे कोई बाणवाला प्यासा होता है इस प्रकार पौंड्रक होकर धैर्य धारण कर स्थित हुआ ॥ ३१ ॥ और जैसे कोई
बुद्धिमान् रौता होकर स्थित होता है इस प्रकार पौंड्रक स्थित हुआ परंतु फिर वह बलवान् पौंड्रक क्रोधित हुआ ॥ ३२ ॥ और अर्धचन्द्र बाण
लेकर युद्धमें सात्यकिको विद्ध किया और सात बाणसे क्रोधित हो उसने विद्ध किया ॥ ३३ ॥ तब सात्यकिने विद्ध होकर पांच बाणोंसे पौंड्रक

ता. टी.

प. ३५.९६

॥२१७॥

धनुष छेदन कर दिया और सिंहनाद किया ॥ ३४ ॥ तब पौंड्रकने गदा लेकर उसे घुमाकर बड़ी शीघ्रतासे सात्यकिकी छातीमें मारी ॥ ३५ ॥ यदुनं-
दनने आती हुई उस गदाको बायें हाथसे लेंचकर और उसीसे पौंड्रकको युद्धमें ताड़न किया ॥ ३६ ॥ पौंड्रकनेभी उसे बीचमेंही पकड़कर दश शक्तिसे
युद्धमें सात्यकिको ताड़न किया ॥ ३७ ॥ सत्यसंगर सात्यकि युद्धमें ऊन शक्तियोंसे विद्व हो अपना धनुष छोट दूसरा धनुष ग्रहण कर उस वृष्णिवंशियोंमें
अेठने पौंड्रकको ताड़न किया ॥ ३८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्ट हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां कैलासयात्रायां पौंड्रकवधे षण्णवतितमोऽध्यायः ॥ ९६ ॥

वासुदेवो गदां गृह्य भ्रामयित्वा पदात्पदम् ॥ त्वस्तिं पातयामास सात्यकेर्वक्षसि प्रभो ॥ ३५ ॥ सव्येन तां समाकृष्य करेण यदु-
नन्दनः ॥ शरं प्रमृह्य विव्याध सात्यकिर्युधि पौंड्रकम् ॥ ३६ ॥ तमन्तरे गृहीत्वाशु वासुदेवः प्रतापवान् ॥ शक्तिभिर्वैशभिश्चैव
सात्यकिं निजघान ह ॥ ३७ ॥ ताभिर्विद्धो रणे वीरः सात्यकिः सत्यसंगरः ॥ अपास्य क्षुरन्यत्तद्वनुरादाय सत्वरम् ॥ आजघान
तदा वीरो वृष्णीनामग्रणीर्नृपः ॥ ३८ ॥ इति श्रीम० सिलेष्टु हरिवंशे भवि० कैलासयात्रायां पौंड्रकवधे षण्णवतितमोऽध्यायः ॥ ९६ ॥
वैशम्पायन उवाच ॥ ततः क्रुद्धो गदापाणिः सात्यकिर्वृष्णिनन्दनः ॥ वासुदेवं जघानाशु मदया तीक्ष्णया नृप ॥ १ ॥ सात्यकिं वासु-
देवस्तु गदयाभ्यहनद्वली ॥ तावुद्यतगदो वीरो शुश्रुभाते सुदारुणो ॥ २ ॥ हतो वने यथा सिंहो परस्परवधेषिणो ॥ ततः स सात्यकिः
क्रुद्धः सव्यं मण्डलमागमत् ॥ ३ ॥ दक्षिणं वासुदेवस्तु तं जघान स्तनान्तरे ॥ बुधुधानोऽय वीरस्तु बाह्वोर्मध्यमताडयत् ॥ ४ ॥
दृढं स ताडितो वीरो जानुभ्यामपतद्भुवि ॥ तत उत्थाय वीरस्तु ललाटेऽभ्यहनद्वदाम् ॥ ५ ॥

वैशंपायन बोले, हे राजन् ! तब वृष्णिनंदन सात्यकिने गदा ले उसी तीक्ष्णगदासे पौंड्रकको ताड़न किया ॥ १ ॥ बली पौंड्रकनेभी गदा लेकर सात्यकिको
ताड़न किया, गदाको उठाये वे दोनों वीर बड़ी शोभाको प्राप्त हुए ॥ २ ॥ जैसे परस्पर वधकी इच्छा किये वनमें दो मतवाले सिंह हो तब क्रुद्ध होकर
सात्यकि सव्यमण्डलको प्राप्त हुआ ॥ ३ ॥ और दक्षिण ओर पौंड्रक हुआ उस समय उनकी छातीमें आघात किया युद्ध करते हुए उस वीरकी
छातीमें आघात किया ॥ ४ ॥ तब सात्यकिसे वह वीर दृढ ताडित हो पृथ्वीमें जंघाके बलसे बैठ गया फिर बड़ी शीघ्रतासे उठकर राखाने ललाटेमें

आघात किया ॥ ५ ॥ सात्यकि कुछ विषण्ण होकर फिर बहुत शीघ्रतासे उठा और गदासे पौंड्रकको ताड़न किया ॥ ६ ॥ तब बली वीर पौंड्रकने साक्षात् मृत्युकी समान क्रोधकर नेत्रोंसे जलाते हुए सात्यकिको गदासे ताड़न किया ॥ ७ ॥ वह सात्यकि उसकी भुजासे छोड़ी हुई गदासे ताड़ित हो सहसा मृत्युकी गोदीमें प्राप्त हुएकी समान पृथ्वीमें पतित हुआ ॥ ८ ॥ फिर चैतन्यताको प्राप्त हो हाथोंसे गदाको हठतापूर्वक ग्रहण कर प्रहार करता हुआ ॥ ९ ॥ उस कालायस लहेकी बनी महामदाको दो टुकड़े कर और त्यागन कर वह वीर सिंहनाद करने लगा ॥ १० ॥ तब वह महाबली

विषण्णः किञ्चिदास्थाय तत् उत्थाय सत्वरम् ॥ गदयाभ्यहनद्वीरः सात्यकिः फेण्डसत्तमम् ॥ ६ ॥ वासुदेवो बलिर्वीरः साक्षान्मृत्यु-
रिवापरः ॥ जवान गदया वृष्णि निर्दहन्निव चक्षुषा ॥ ७ ॥ स तथा ताडितो वृष्णिर्गदया बाहुमुक्तया ॥ आलम्ब्य भूमिं सदसा
मृत्योरङ्गगतो यथा ॥ ८ ॥ संज्ञां पुनः समालम्ब्य पाणिभ्यां हठमेव च ॥ गदां तस्य महाराज गृहीत्वा प्रग्रहेण ह ॥ ९ ॥ द्विधा कृत्वा
महागुर्वी गदां कालायसीं शुभाम् ॥ उत्सृज्य सदसा वीरः सिंहनादं व्यनीनदत् ॥ १० ॥ तत् उत्सृज्य राजा तु वासुदेवो महाबलः ॥
सव्येन सात्यकिं गृह्य दक्षिणेन करेण ह ॥ ११ ॥ मुष्टिं कृत्वा महाघोरां वासुदेवः प्रतापवान् ॥ ताडयामास मध्ये तु स्तनयोः
सात्यकेर्नृप ॥ १२ ॥ ज्ञेनेयो वृष्णिर्वीरस्तु गदामुत्सृज्य सत्वरम् ॥ तलेनाभ्यहनद्वीरो वासुदेवं रणाजिरे ॥ १३ ॥ तलेन वासुदेवोऽपि
सात्यकिं सत्यसंगरम् ॥ तयोरेवं महाघोरं तलयुद्धं प्रवर्तत ॥ १४ ॥ जानुभ्यां मुष्टिभिश्चैव बाहुभ्यां शिरसा तदा ॥ उरसोरः समाहत्य
जानुभ्यां जानुनी तथा ॥ १५ ॥

राजा गदाको छोड़कर बायें हाथसे सात्यकिको पकड़ दक्षिण हाथकी ॥ ११ ॥ महाघोर मुष्टिसे वीरने सात्यकिकी छातीको ताड़न किया ॥ १२ ॥ तब वीर सात्यकिनेभी शीघ्रतासे गदाको छोड़ युद्धमें राजाको तलप्रहारसे ताड़ित किया ॥ १३ ॥ राजानेभी तलप्रहारसे सात्यकिको ताड़न किया इस प्रकार दोनोंका घोर तलयुद्ध हुआ ॥ १४ ॥ जानु मुष्टि बाहु शिर हृदयसे हृदय और जानुसे जानु ताड़न करने लगे ॥ १५ ॥

हाथसे हाथको आहत कर ताडन करने लगे, हे राजन् । जैसे कबमें तालवृक्ष निकट होकर युद्ध करें ॥ १६ ॥ और उनका सन्निकर्षतासे महाशब्द हो इस प्रकार शब्द होने लगा वे पौड्रक और सात्यकि दोनों युद्धमें बड़े विरूपात थे ॥ १७ ॥ जब कि रातका अंधेरा घोर था दीपक बुझ गये तब वे दोनों शस्त्र त्याग मल्लयुद्ध करने लगे ॥ १८ ॥ हे महाराज ! उस समय दोनों सेनाओंको संदेह होने लगा क्या सात्यकि वीर इससे हत हो जायगा ॥ १९ ॥ वा यह पौड्रक राजा इससे हत हो जायगा इस समय यह दोनों वीर परस्पर वधकी इच्छा करते ॥ २० ॥ युद्ध करते हुए स्वर्गको जांयगे और किसी प्रकार कराभ्यां करमाहत्य तो युद्धं संप्रचक्रतुः ॥ तालयोस्तत्र राजेन्द्र वृक्षयोः संनिकर्षयोः ॥ १६ ॥ वने यथा निरुत्पन्नस्तयेवाधूमहास्वनः ॥ तावाजो प्रथितौ वीराबुभौ पौण्ड्रकसात्यकी ॥ १७ ॥ निशि स्तिमितमूकायां शस्त्रं त्यक्त्वा महाबलौ ॥ युयुधाते महारङ्गे मल्लौ द्वाविं विश्रुतौ ॥ १८ ॥ उभे सेने महाराज्ञोः संशयं जग्मतुस्तदा ॥ किं नु स्यात्सात्यकिर्वीरो हतस्तेन भविष्यति ॥ १९ ॥ आहोस्विदासु- देवस्तु हतस्तेन महात्मना ॥ अथ वे तो महावीरो परस्परवधेषिणौ ॥ २० ॥ युध्यमानो महावीरो तदा (नरो) स्वर्गं गमिष्यतः ॥ अन्यथा नोपरम्येतां युद्धाक्षीरो मुनिश्चितौ ॥ २१ ॥ अहो वीर्यमहो धैर्यमेतयोर्बलशालिनोः ॥ एतौ महाबलौ लोके एतौ प्रकृति- सत्तमौ ॥ २२ ॥ नैवं युद्धं महाघोरमासीद्देवासुरेष्वपि ॥ न श्रुतौ न च वा दृष्टः संग्रामोऽयं कदाचन ॥ २३ ॥ एते वै सेनिका ब्रूयुः सेनयोरुभयोरपि ॥ राज्ञो निशीथे मेघौवे दृष्ट्वा युद्धं सुदारुणम् ॥ २४ ॥ अथ तो बाहुभिर्वीरो संनिपेततुरजसा ॥ दशभिर्मुष्टिभिर्जघ्ने सात्यकिः पौण्ड्रकं तदा ॥ २५ ॥

यह दोनों वीर युद्धसे विरामको प्राप्त न होने ॥ २१ ॥ इन बलशालियोंके धैर्य और पराक्रमको जब है यह लोकमें दोनों महाबली और श्रेष्ठ प्रकृति- वाले हैं ॥ २२ ॥ ऐसा घोर युद्ध तो देवता और असुरोंमेंभी नहीं हुआ था ऐसा संग्राम न कभी देखा न सुना ॥ २३ ॥ इस प्रकार दोनों सेनाके लोग कहने लगे आधी रातके समय मेघसमूहमें दारुण युद्ध देखकर चकित हुए ॥ २४ ॥ तब वे दोनों वीर बाहुयुद्धमें प्रवृत्त हुए तब सात्यकिने राजाके दश घुंते मारे ॥ २५ ॥

पौडूने सात्याकिके पांच घुंसे मारे उनके मारे उनके चटचट शब्दसे ब्रह्माण्डको महाशोक हुआ और सबको आश्चर्य करनेवाला शब्द सर्वत्र होने लगा ॥ २६ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रिषायां पौडूकवधो नाम सप्तमवतितमोऽध्यायः ॥ १७ ॥ वैशंपायन बोले, इसी समय निषादपति एक-
लव्य महाक्रोधित हो बलरामके ऊपर धनुष लेकर शीघ्रतासे चला ॥ १ ॥ दश नाराच और बाणोंसे उनको विद्ध किया और सब सत्रियोंके देखते
उनका आवा धनुष छेदन कर दिया ॥ २ ॥ दश बाणसे मृत और तीस बाणसे रथको ताड़ित किया और जट्टाक्षसे बलदेवजीने एकलव्यकी पञ्चा

पञ्चभिः सात्याकिं पोण्ड्रः समाजघ्ने महाबलः ॥ तयोऽष्टचटशब्दो ब्रह्माण्डक्षोभणो महान् ॥ प्रादुरासीत् सर्वत्र सर्वान्विस्मापयन्निव ॥ २६ ॥
इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पोण्ड्रकवधो नाम सप्तमवतितमोऽध्यायः ॥ १७ ॥ ॥ ७ ॥ वैशंपायन
उवाच ॥ एतस्मिन्नन्तरे क्रुद्ध एकलव्यो निषादपः ॥ बलभद्रमभि क्षिप्रं धनुरादाय सत्वरम् ॥ १ ॥ नाराचैर्दशभिर्विद्धा ज्ञानेश
दशभिः परैः ॥ चिच्छेद् धनुरर्द्धं तत्सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥ २ ॥ मृतं दशभिराहत्य रथं त्रिशद्विरेव च ॥ अजं चिच्छेद् भलेन निषा-
दस्य जगत्पतिः ॥ ३ ॥ ततः परं मदच्चापं निषादो वीर्यसंमतः ॥ दृढमूर्ध्नां समायुक्तं दशतालप्रमाणतः ॥ ४ ॥ कामपाठं श्रेणाशु
जघान जनमप्यतः ॥ बल्यो महावीर्यः सर्पः शेष इव शसन् ॥ ५ ॥ दशभिस्तदनुदिव्यं शरैः सर्पसमेवैव ॥ चिच्छेद् मुष्टिदेशे
तु माधवो माधवाग्रजः ॥ ६ ॥ एकलव्यो निषादेशः सज्जमादाय सत्वरः ॥ प्रह्णिणोद्बलमादाय निशितं घोरविग्रहम् ॥ ७ ॥

छेदन कर दी ॥ ३ ॥ तब वह बली निषाद दीर्घ चापको ग्रहण कर जो दीर्घ ज्यासे युक्त थी जिसका प्रमाण दश तालका था ॥ ४ ॥ उससे मनु-
ष्योंके देखते बलदेवजीको ताड़न किया महाबली बलदेवजी सर्पकी समान श्वास लेने लगे ॥ ५ ॥ तब एकलव्यके बड़े भ्राता बलरामजीने उसके दिव्य
धनुषको मुष्टिदेशमेंसे छेदन कर दिया ॥ ६ ॥ तब निषादपति एकलव्य शीघ्रतासे खट्वा लेकर उस घोर विग्रहवालेको बलरामजीके ऊपर प्रहार करता

हुआ ॥ ७ ॥ उसको दूसरे प्रतापवान् यदुनन्दन बलरामजीने पांच बाणोंसे तिलकी समान कर दिया ॥ ८ ॥ तब उस निषादने काले लोहेके बने उस खड्गको बड़े वेगसे सारथिके ऊपर चलाया ॥ ९ ॥ यदुनन्दन बलरामजीने उस खड्गकोभी बाहोंके मध्यमें मोड़ित कर दिया ॥ १० ॥ तब उस राजाने अनेक घंटे लगी हुई शक्तिको ग्रहण कर बलदेवके ऊपर प्रहार किया ॥ ११ ॥ और उस राजाने महाघोर सिंहनाद किया वह कल्याणी शक्ति बलदेवके निकट प्राप्त हुई ॥ १२ ॥ बलभद्रने आती हुई उस महाशक्तिको देखकर ग्रहण कर लिया जिससे निषादेश तथा और सब विस्मित हो गये ॥ १३ ॥

तमन्तरे पटुर्वीरो वृष्णिवीरः प्रतापवान् ॥ तिलशः पञ्चभिर्बाणैश्चकार यदुनन्दनः ॥ ८ ॥ ततोऽपरं महत्खड्गं सर्वकालायसं शुभम् ॥ प्रादिणोत्सारथेः कायमालयेयाय निषादजः ॥ ९ ॥ तं चापि दशभिर्वीरो माधवो यदुनन्दनः ॥ बाह्वोरन्तरयोश्चैव निर्बिभेदं महारणे ॥ १० ॥ ततः शक्तिं समादाय घण्टामालाकुलं नृपः ॥ निषादो बलदेवाय प्रेषयित्वा महाबलः ॥ ११ ॥ सिंहनादं महाघोरमकरोत्स निषादपः ॥ सा शक्तिः सर्वकल्याणी बलदेवमुपागतम् ॥ १२ ॥ उत्पतन्ती महाघोरां बलभद्रः प्रतापवान् ॥ आदायाय निषादेशं सर्वान्विस्मापयन्निव ॥ १३ ॥ तथैव तं जघानाशु क्लेशोद्देशे स माधवः ॥ स तथा ताडितो वीरः स्वशक्त्याय निषादपः ॥ १४ ॥ विह्वलः सर्वगात्रेषु निपपात महीतले ॥ शणसंशयमापन्नो निषादो रामताडितः ॥ १५ ॥ निषादास्तस्य राजेन्द्र शतशोऽथ सहस्रशः ॥ अष्टाशीतिसहस्राणि निषादास्तस्य योधिनः ॥ १६ ॥ गदिनः खड्गिनश्चैव महध्वासा महाबलाः ॥ शरैरनेकसाहस्रैः शक्तिभिश्च परश्वधैः ॥ १७ ॥ गदाभिः पाट्टिशैः शूलैः परिधैः प्राप्तोमरैः ॥ कुन्तेरथ कुठारैश्च यादवानां महोजसाम् ॥ १८ ॥

तब बलरामजीने उसको वक्षस्थलमें ताडन किया जब वीर निषादपति उस अपनी शक्तिसे ताडन किया ॥ १४ ॥ तब जब शरीरसे विह्वल होकर वह पृथ्वीमें गिरा और रामने ताडित हो निषाद प्राणसंशयको प्राप्त हुआ ॥ १५ ॥ हे राजन् ! उसके ताडित होनेपर सैकड़ों निषाद अर्थात् अठासी सहस्र राक्षस उसके साथ युद्ध करनेवाले ॥ १६ ॥ गदा खड्ग जिपे महातरकस घोर महाबली सैकड़ों बाण शक्ति फरसे ॥ १७ ॥ गदा पाट्टिश शूल परिध

भास तोमर बछी कुठारोंसे महाबली यादवोंको ॥ १८ ॥ शलभकी समान अग्नि प्रदीप्त किये दूसरे रामकी समान बलरामके ऊपर बाणप्रहार करने लगे ॥ १९ ॥ कोई कुहाड़े कोई बरछे और कोई परशोंसे मारने लगे कोई गदा शक्तिसे प्रहार करने लगे ॥ ॥ जिस प्रकार स्फुरायमान अग्नि के ऊपर कोई प्रहार करता है, तब बलरामजीने क्रोधकर हलको उठाया ॥ २१ ॥ उन सबको लैंचकर मुशलसे पीटन करने लगे वे पर्वत आश्रयवाले निषाद इस प्रकार ताड़ित ॥ २२ ॥ सैकड़ों पृथ्वीपर गिरने लगे, हे महाराज ! क्षणमें उन सब महाबलियोंको मारकर ॥ २३ ॥

शलभा इव राजेन्द्र दीप्यमानं हुताशनम् ॥ ते शरैः पातयांचकू रामं रामनिवापरम् ॥ १९ ॥ केचित्कुठारेराजघ्नः केचित्कुन्तैः परश्वधैः ॥ गदाभिः केचिदाग्नान्ति शक्तिभिश्च तथा परे ॥ २० ॥ निबध्नुः सदृसा रामं स्फुरन्तं पावकं यथा ॥ ततः क्रुद्धो हली साक्षाद्बलमुद्यम्य सत्वरम् ॥ २१ ॥ सर्वानाकर्षयामास मुशलेन हि पीडयन् ॥ ते इत्यमाना राजेन्द्र निषादाः पर्वताश्रयाः ॥ २२ ॥ निपेतुर्धरणीपृष्ठे शतशोऽथ सदृशः ॥ क्षणेन तन्महाराज इत्वा सर्वान्महाबलान् ॥ २३ ॥ सिंहाद्यनदंस्तत्र तस्थौ रामो महाबलः ॥ ततो राज्ञो महाघोराः पिशाचाः पिशिताशनाः ॥ २४ ॥ आकृष्य मांसयूथानि भक्षयन्तः समासते ॥ पिबन्तः शोणितं कोष्ठारसंछिद्य च शवं बहु ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि एकलव्यसैन्यवधो नामाष्टनवतितमोऽध्यायः ॥ १८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ कव्यादाः सर्वे एवाशु भक्षयन्तस्तदा श्वम् ॥ हसन्तो विविधं घोरं नदयन्तो वसुंधराम् ॥ १ ॥ राक्षसाश्च पिशाचाश्च पिबन्तः शोणितं बहु ॥ आशित्वं भुञ्जते राजञ्छक्त्य पिशिताशनाः ॥ २ ॥

सिंहकी समान शब्द करते बलरामजी वहां स्थित हुए उत राजिमें मांस खानेवाले महाघोर पिशाच ॥ २४ ॥ मांसके समूहोंको लैंचकर भक्षण करते हुए स्थित थे और मृतकोंके कोठोंमें छेदकर उनका रुधिर पान करते थे ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्य-पर्वणि आषायां एकलव्यसैन्यवधो नामाष्टनवतितमोऽध्यायः ॥ १८ ॥ वैशम्पायन बोले, तब चारों ओरसे कव्याद शवोंका भक्षण करने लगे और पृथ्वीको नादित करते वारंवार हास्य करने लगे ॥ १ ॥ राक्षस और पिशाच घोर रुधिर पान करने लगे और वे मांसके खानेवाले शिलाप-

यन्त शक्को प्रक्षण करने लगे ॥ २ ॥ हे राजन् ! वे रणमे संतुष्ट हो वहां नृत्य करने लगे और बल्लभे गुप्त्र श्येन शृगाल ॥ ३ ॥ और राक्षस यह
 युद्धमें मांस प्रक्षण करते प्रवृत्त हुए इसी समय एकलव्यकी मूर्च्छा जागी ॥ ४ ॥ वह सब पर्वतचारी निषादोंको हत देखकर गदा ले बलरामके ऊपर
 झपटा ॥ ५ ॥ और उस गदाको बलरामजीके शिरपर मारा, हे राजन् ! तब बलरामजीने गदाग्रहण कर उस निषादपतिकी ॥ ६ ॥ जो बड़ा क्रूर
 था हलायुधने मदमत्त हो गदासे प्रहार किया, तब उनका भयंकर गदायुद्ध होने लगा ॥ ७ ॥ हे राजन् ! उनके युद्धका शब्द आकाशमें होने लगा
 नृत्यन्ति स्म तदा राजन्नगर्या रणतोषिताः ॥ काका बलाका गृध्राश्च श्येना गोमायवस्तथा ॥ ३ ॥ भक्षयन्तः प्रवर्तन्ते राक्षसाश्चैव
 दारुणाः ॥ एतस्मिन्नन्तरे बीरो निषादो लब्धसंज्ञकः ॥ ४ ॥ इतान्सर्वान्समालोक्य निषादान्नगचारिणः ॥ गदामादाय कुपितो
 राममेव जगाम ह ॥ ५ ॥ जवान गदया राजञ्छवदेशे निषादपः ॥ ततो रामो मदी राजन्निषादं बाहुशालिनम् ॥ ६ ॥ आजमे
 गदया क्रूरं मदमत्तो हलायुधः ॥ तयोश्च तुमुलं युद्धं गदाभ्यां समवर्तत ॥ ७ ॥ आकाशे शब्द आसीत् तयोर्युद्धे महाभुज ॥
 समुद्राणां यथा घोषः सर्वेषां सन्निगच्छताम् ॥ ८ ॥ कल्पक्षये महाराज शब्दः सुतुमुलोऽभक्त ॥ क्षोभितो नामराजश्च नागाः क्षोभं
 समाययुः ॥ ९ ॥ पृथिवी चान्तरिक्षं च सर्वं शब्दमयं बभौ ॥ ततः स पौण्ड्रको राजा सात्यकिं वृष्णिनन्दनम् ॥ १० ॥ मदयेव
 जवानांस्तु सत्वरं रणकोविदः ॥ युयुधानो बली राजन्वासुदेवं जवान ह ॥ ११ ॥ तयोश्च तुमुलः शब्दः प्रादुरासीन्महारणे ॥ चतुर्णां
 युध्यतां राजन्परस्परवधेषिणाम् ॥ १२ ॥ ब्रह्माण्डक्षोभणो राजञ्छब्द आसीत्सुदारुणः ॥ ततो रजः प्रादुरभूत्तस्मिन्संग्राममूर्धनि ॥ १३ ॥
 जैसे मर्यादा त्यागकर चलेसे समुद्रोंका शब्द होता है ॥ ८ ॥ हे महाराज ! वह शब्द कल्पक्षयकी समान हुआ उससे नागराज और नामनी क्षुभित
 हो गये ॥ ९ ॥ पृथ्वी अन्तरिक्ष सब शब्दमय हो गया उस समय पौंड्रक राजा वृष्णिनन्दन सात्यकिको ॥ १० ॥ बहुत शीघ्रतासे गदासे ताडन करता
 हुआ हे राजन् ! सात्यकिने उसको मँदासे ताडन किया ॥ ११ ॥ उस महारणमें उनका भयंकर शब्द होने लगा कारण कि वे चारों परस्पर वधकी
 इच्छासे युद्ध करने लगे ॥ १२ ॥ हे राजन् ! उस समय ब्रह्माण्डका क्षोभ करनेवाला दारुण शब्द हुआ तब उस संग्राममें बड़ी रज उठी ॥ १३ ॥

हे राजन् ! तब अंधकारके क्षय होनेमें तारे कान्तिहीन हो गये फिर प्रातःकाल होनेपर सर्वथा अंधकार नष्ट हो गया ॥ १४ ॥ भगवान् सूर्य उदय हुए चन्द्रकान्ति मलीन हुई तब उन चारों वीरोंका बड़ा युद्ध होने लगा. हे राजन् ! सूर्योदयमें वह युद्ध बेासुरयुद्ध की समान हुआ ॥ १५ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पौण्ड्रकयुद्धे नवनवतितमोऽध्यायः ॥ १९ ॥ वैशम्पायन बोले, तब निर्मल प्रभात होनेमें भगवान् देवकीपुत्र जगत्पति बह्मिकाश्रमसे जानेकी इच्छा करने लगे ॥ १ ॥ हे राजन् ! वे सब मुनियोंको नमस्कार कर द्वारकापुरीको चले और गरुडपर चढ़ बड़े वेगसे तारका निष्प्रभा राजस्तमस्येवं क्षये गते ॥ उषसि प्रतिबुद्धायां ततो निःशेषतां ययौ ॥ १४ ॥ उदितो भगवान्सूर्यश्चन्द्रश्च क्षयमाययौ ॥ तयोर्युद्धं प्रादुरभूच्चतुर्णां बाहुशालिनाम् ॥ देवासुरसमं राजञ्जिते भास्करे ममत् ॥ १५ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि पौण्ड्रकयुद्धे नवनवतितमोऽध्यायः ॥ १९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः प्रभाते विमले भगवान्देवकीसुतः ॥ गन्तुमेच्छजगन्नाथः पुरं बदरिकाश्रमात् ॥ १ ॥ नमस्कृत्य मुनिन्तिर्वाण्ययौ द्वारवर्ती नृप ॥ आरुह्य गरुडं विष्णुवैगेन महता प्रभुः ॥ २ ॥ सुमहाशुश्रुवे शब्दस्तेषां युद्धं प्रकुर्वताम् ॥ गच्छता देवदेवेन पुरीं द्वारवर्ती नृप ॥ ३ ॥ अचिन्तयजगन्नाथः को न्वयं शब्द उत्थितः ॥ संग्रामसंभवो घोर आर्यशैनेयसंयुतः ॥ ४ ॥ व्यक्तमागतवान्पौण्ड्रो नगरीं द्वारकामतु ॥ तेन युद्धं समभवत्पौण्ड्रेण दुरात्मना ॥ ५ ॥ यदूनां वृष्णिवीराणां युद्धयतामितरेतरम् ॥ शब्दोऽयं सुमहान्व्यक्तो नात्र कार्या विचारणा ॥ ६ ॥ इत्येवं चिन्तयित्वा तु दध्मो शङ्कं महारवम् ॥ पाञ्चजन्यं हरिः साक्षात्प्रणिपन्वृष्णिपुङ्गवान् ॥ ७ ॥

गमन किया ॥ २ ॥ तब उनको उन युद्ध करनेवालोंका महाशब्द सुनाई आने लगा, जब कि द्वारकाके समीपमें आगये थे ॥ ३ ॥ तब जगन्नाथ विचारने लगे कि यह कैसा शब्द है इस घोर संग्राममें आर्य (बलराम) और सात्यकिकानी शब्द सुनाई आता है ॥ ४ ॥ इससे विवक्षित होता है अवश्यही पौंड्र द्वारकापुरीमें आया है इस दुरात्मा पौंड्रके साथ युद्ध होता है ॥ ५ ॥ यह वृष्णिवीर यदु महायुद्ध करते हैं इसमें संदेह नहीं कि यह सब शब्द उसीका है ॥ ६ ॥ यह विचार कर हरिने यदुवंशियोंके प्रसन्न करनेको अपना महाशब्दवाला पांचजन्य शंख बजाया ॥ ७ ॥

उस शब्दसे कृष्णने आकाशको पूर्ण कर दिया यादव और वृष्णिवंशी उस शंसका घोर शब्द सुनकर ॥ ८ ॥ जान गये कि श्रीकृष्ण आये निश्चयही यह उनके शंसका शब्द है, हे राजन् ! इस प्रकार वृष्णि और यादवोंने माना ॥ ९ ॥ तब वे वृष्णि और यादव निर्जय हो गये उसी समय पक्षियोंमें भेठ गरुडजी दीखे ॥ १० ॥ तब वह देवकीपुत्र उन यादवोंके द्वारा देखे गये सूत मागव उन जगत्पतेति के आगे चलने लगे ॥ ११ ॥ स्तुतियोग्य लक्ष्मीपति कमलाकान्तकी वह स्तुति करने लगे और सब यादव श्रीकृष्णके पीछे गमन करने लगे ॥ १२ ॥

रोदसी पूरयामास तेन शब्देन केशवः ॥ यादवा वृष्णयश्चैव श्रुत्वा शङ्कस्य ते रवम् ॥ ८ ॥ व्यक्तमायाति भगवान्पाञ्चजन्यरवो ह्ययम् ॥ इति ते मेनिरे राजन्वृष्णयो यादवास्तथा ॥ ९ ॥ निर्भयाः समपद्यन्त वृष्णयो यादवाश्च ते ॥ तस्मिन्नेव क्षणे दृष्टस्ताक्षर्यश्च पततां वरः ॥ १० ॥ ततश्च देवकीसुतुर्दृष्टस्दैर्गदवेश्वरः ॥ सूताश्च मागधाश्चैव पुरो यान्ति जगत्पतेः ॥ ११ ॥ स्तुत्या स्तुतं हरिं विष्णुमीश्वरं कमलेश्वरम् ॥ भस्माश्च यादवाः सर्वे श्रिवत्तुर्जनार्दनम् ॥ १२ ॥ कृष्णस्तु गरुडं भूयो गच्छ त्वं नाकमुत्तमम् ॥ इत्युक्त्वा गरुडं विष्णुर्विसृज्य यदुन्मदनः ॥ १३ ॥ दार के पुनराहेदं रथमानय मे प्रभो ॥ स तथेति प्रतिज्ञाय रथमादाय सत्वरम् ॥ १४ ॥ रथोऽयं भगवन्देव किमतः कृत्यमस्ति मे ॥ संपुक्त्वा रथमादाय प्रणम्याग्रे स्थितो हरेः ॥ १५ ॥ गतेऽथ गरुडे विष्णू रथमारुह्य सत्वरम् ॥ यत्र युद्धं संभवत्तत्र याति सप्त केशवः ॥ १६ ॥ तत्र गत्वा महाराज युद्धचर्ता च महात्मनाम् ॥ पाञ्चजन्यं महाशङ्खं दध्मो यदुवृषोत्तमः ॥ १७ ॥

तब श्रीकृष्णने गरुडके प्रति स्वर्ग जानेको कहा जब ऐसा कह श्रीकृष्णने गरुडको विदा किया ॥ १३ ॥ तब दारुकाको आज्ञा दी कि हमारा रथ लाओ वह बहुत अच्छा ऐसा कह शीघ्र रथको लाता हुआ ॥ १४ ॥ और बोला हे भगवन् देव ! यह रथ विद्यमान है कहिये अब क्या आज्ञा है यह कह रथ लिये प्रणाम कर नारायणके आगे स्थित रहा ॥ १५ ॥ गरुडके चले जानेपर विष्णुजी उत्तम रथके ऊपर स्थित हो जहां युद्ध हो रहा था वहां श्रीकृष्ण गये ॥ १६ ॥ हे महाराज ! वहां जाकर उन महात्माओंको युद्ध करते देख यदुभेठने अपना उत्तम पांचजन्य शंस बजाया ॥ १७ ॥

ह. व.

॥२२२॥

तब पौंड्रकने श्रीकृष्णको युद्धके विमिश्र आया देखकर सात्यकिको छोड़ श्रीकृष्णके सन्मुख उपस्थित हुआ ॥ १८ ॥ तब क्रोधकर सात्यकिने राजाको विवर्ण किया, हे राजन् । जब मैं सन्मुख स्थित हूँ तौ मुझे छोड़ कहाँ जाते हो सनातन धर्म क्यों छोड़ते हो ॥ १९ ॥ हे राजेन्द्र ! मुझे जीतकर फिर दूसरेके साथ युद्ध करनेको जाओ हे वीर ! मेरे स्थित होनेमें क्षत्रिपताको छोड़ जाना उचित नहीं है ॥ २० ॥ मैं युद्धमें तुम्हारा सम्पूर्ण गर्व नष्ट कर दूँगा यह कह यादवेश्वर उस जाते हुएके आगे स्थित हुआ ॥ २१ ॥ पौंड्रके आगे जब सात्यकि स्थित हुआ तब केशवने देखा तब

पौण्ड्रोऽथ वासुदेवस्तु कृष्णं दृष्ट्वा रणोत्सुकम् ॥ सात्यकिं पृष्ठतः कृत्वा वासुदेवमुपागमत् ॥ १८ ॥ क्रुद्धोऽयं सात्यकी राजन्वा-
रयामास पौण्ड्रकम् ॥ न गन्तव्यमितो राजन्नेष धर्मः सनातनः ॥ १९ ॥ जित्वा मां गच्छ राजेन्द्र परं योद्धुं महारणे ॥ क्षत्रियोऽपि
महावीरं स्थिते मयि रणोत्सुके ॥ २० ॥ एष ते गर्वमस्त्रिलं नाशयिष्यामि संयुगे ॥ इत्युक्त्वा चाग्रतस्तस्थौ गच्छतो यादवे-
श्वरः ॥ २१ ॥ पौण्ड्रस्य शिनिनप्ता तु पश्यतः केशवस्य ह ॥ अवज्ञाय शिनेः पौत्रं कृष्णमेव जगाम ह ॥ २२ ॥ निर्भर्त्स्य
सदृशं भूयः सात्यकिः क्रोधमूर्च्छितः ॥ गदया प्राहरत्पौण्ड्रं वासुदेवस्य पश्यतः ॥ २३ ॥ यथाज्ञानं यथायोगं सात्यकिः सत्य-
विक्रमः ॥ दृष्ट्वाय भगवानेवं सात्यकिं प्रशशंस ह ॥ २४ ॥ निवार्य सात्यकिं कृष्णो यथेष्टं क्षिपतामसौ ॥ उपारमद्यथायोगं सात्यकिः
कृष्णवारितः ॥ २५ ॥ स ततः पौण्ड्रको राजा वासुदेवमुवाच ह ॥ भो भो यादव गोपाल इदानीं क्व गतो भवान् ॥ २६ ॥

सात्यकिका तिरस्कार कर वह श्रीकृष्णकेही सन्मुख चला ॥ २२ ॥ उसके वारंवार पुछनेमें सात्यकि क्रोधसे मूर्च्छित हो गया और श्रीकृष्णके देखते पौंड्रके ऊपर गदा प्रहार किया ॥ २३ ॥ सत्यविक्रम सात्यकिने अपने पूरे बलसे प्रहार किया यह देखकर जनवान्ने सात्यकिकी प्रशंसा की ॥ २४ ॥ जब श्रीकृष्णने सात्यकिको निवारण कर कहा इसे यथेष्ट करने को, तब कृष्णके निषेध करनेसे सात्यकि निवारित हुआ ॥ २५ ॥ तब पौंड्रकने वासुदेवसे कहा, हे यादव गोपाल इतने समयतक तू कहाँ था ॥ २६ ॥

सा. टी.

प. १०१००

॥२२२॥

मैं वासुदेव तुम्हें देखनेको आया हूँ हे कृष्ण ! बलसहित मैं तुमको मारकर अपनी सेनाके साथ ॥ २७ ॥ पृथ्वीमें एकही वासुदेव हूँगा हे गोविन्द ! जो तुम्हारा घोर विरुद्धात चक्र है ॥ २८ ॥ और इस तुम्हारे चक्रसे मैं पीड़ित हूँगा. हे माधव ! इस समय तुम्हारे चक्रमें जो बल है ॥ २९ ॥ सो सब क्षत्रियोंके देखते वह सब बलमें नष्ट करूँगा मुझ शार्ङ्गिके सामने शार्ङ्गी नहीं रह सकते ॥ ३० ॥ हे माधव ! तुम्हारे शंखमें जो बल है सो दिखाओ. हे जनार्दन ! शंख चक्र गदाका धारण करनेवाला मैं हूँ ॥ ३१ ॥ मुझहीको बलशाली ऐसा कहते हैं, पहले तुमने बली बुद्ध बालक

त्वां द्रष्टुमथ संप्राप्तो वासुदेवोऽस्मि साम्प्रतम् ॥ इत्वा त्वां सबलं कृष्ण बलैर्बहुभिरान्वितः ॥ २७ ॥ अहमेको भविष्यामि वासुदेवो महीतले ॥ यच्चक्रं तव गोविन्द प्रथितं सुप्रभं महत् ॥ २८ ॥ अनेन तव चक्रेण पीडितोऽस्मि च तद्रणे ॥ चक्रमस्तीति तद्दीर्यं तव माधव साम्प्रतम् ॥ २९ ॥ नाशयिष्यामि तत्सर्वं सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥ शार्ङ्गीति मां विजानीहि न त्वं शार्ङ्गीति शिष्यते ॥ ३० ॥ (शंखमस्तीति तद्दीर्यं तव माधव साम्प्रतम्) ॥ शंखी चाहं गदी चाहं चक्री चाहं जनार्दन ॥ ३१ ॥ मामेव हि सदा ब्रूयुर्जानन्तो वीर्यशालिनः ॥ आदौ त्वं बलवद्बुद्धान्दत्त्वा स्त्रीबालकान्बहून् ॥ ३२ ॥ गात्र इत्वा महागर्वस्तव सम्प्रति वर्तते ॥ तत्तेऽहं व्यपनेष्यामि यदि तिष्ठसि मत्पुरः ॥ ३३ ॥ शस्त्रं गृहाण गोविन्द यदि योद्धुं व्यवस्थितः ॥ इत्युक्त्वा बाणमादाय तस्थो पार्श्वे जगत्पतेः ॥ ३४ ॥ एतद्वचनमाकर्ण्य वासुदेवेन भाषितम् ॥ स्मितं कृत्वा हरिः कृष्णो बभाषे पौण्ड्रकं नृपम् ॥ ३५ ॥ कामं वद नृप त्वं हि पातक्यस्मि सदा नृप ॥ गोघाती बालघाती च स्त्रीहन्ता सर्वथा नृप ॥ ३६ ॥

और स्त्री बहूतोंको मारा है ॥ ३२ ॥ और बैलको मारकर सम्प्रति तुमको बड़ा गर्व हो रहा है, सो जो मेरे सामने तुम स्थित रहे तो वह तेरा घमण्ड मैं दूर कर दूँगा ॥ ३३ ॥ हे गोविन्द ! यदि युद्ध करना प्रिय मानते हो तो शस्त्र ग्रहण करो यह कह बाण लेकर जगत्पतिके आगे स्थित हुआ ॥ ३४ ॥ पौंड्रक वासुदेवके कहे यह वचन सुनकर हँसकर भीकृष्ण उससे कहने लगे ॥ ३५ ॥ हे राजा ! मैं पातकी हूँ इस बातको आप

अच्छी प्रकार कहिये गोवाती बालवाती तथा सर्वथा मैं स्वीहन्ता हूं ॥ ३६ ॥ हे राजन् ! तुमही सदा शंस चक्र गदा धारण करनेवाले हो और मेरा वासुदेव नाम मिथ्याही है ॥ ३७ ॥ शार्ङ्ग धनुष चक्र गदा शंस यह सब वृथाही है परन्तु यदि मानो तो मैं कुछ कहता हूं बली क्षत्रिय मुझ जन्म-
त्वतिके स्थित होनेमें ॥ ३८ ॥ मेरे जीवित होनेमेंभी तुमको ऐसा कहते हैं और जो असुरोंको मारनेवाला तुम्हारा महाचक्र है ॥ ३९ ॥ मेरा चक्र बड़ेपनमें उसकी बराबर बलमें नहीं आयुधोंमें भी शब्दभावसे सादृश्यता है बलसे नहीं है ॥ ४० ॥ हे राजन् ! मैं सदा प्राणियोंके प्राणका देनेवाला गोप

चक्री भव गदी राज्ञाङ्गी च सततं भव ॥ नामधेयं वृथा मया वासुदेवेति च प्रभो ॥ ३७ ॥ शार्ङ्गं चक्री यदी शङ्खीत्येवमादि वृथा मम ॥ किं तु वक्ष्यामि किञ्चित् शृणुष्व यदि मन्यसे ॥ क्षत्रिया बलिनो ये तु स्थिते मयि जगत्पतो ॥ ३८ ॥ तथा तु ब्रुवते त्वां हि जीवत्येव मयि प्रभो ॥ यत्ते चक्रं महाघोरमसुरान्तकरं महत् ॥ ३९ ॥ तत्तुल्यं मम चक्रं तु वृत्ततो न तु वीर्यतः ॥ आयु-
धेष्वथ सर्वत्र शब्दसादृश्यमस्ति ते ॥ ४० ॥ गोपोऽहं सर्वदा राजन्प्राणिनां प्राणदः सदा ॥ गोप्ता सर्वेषु लोकेषु शास्ता दुष्टस्य सर्वदा ॥ ४१ ॥ कृत्यनं सर्वकार्यं हि जित्वा शत्रून्नुपाधम ॥ अजित्वा किं भवान्भूते स्थिते मयि च शस्त्रिणि ॥ ४२ ॥ हत्वा मां हृदि राजेन्द्र यदि शक्तोऽसि पोण्ड्रक ॥ स्थितोऽहं चक्रमाश्रित्य रथी चापी गदासिमान् ॥ ४३ ॥ रथमारुह्य युद्धाय सन्नद्धो भव मानद ॥ इत्युक्त्वा भगवान्विष्णुः सिंहनादं व्यनीनदत् ॥ ४४ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेखे हरिवंशे भविष्यपर्वणि कै० कृष्णपोण्ड्रकयुद्धं नाम शततमोऽध्यायः ॥ १०० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः शरं समादाय वासुदेवः प्रतापवान् ॥ पोण्ड्रं जघान सहसा निशितेन शरेण ह ॥ १ ॥

हैं सब लोकका रक्षक और दुष्टोंका शास्ता हूं ॥ ४१ ॥ हे नृपाधम ! सब शत्रुओंको जीतकर कार्यका कथन करना ठीक है मुझ शस्त्रधारीके बिना जीते तुम किस प्रकार ऐसा कहते हो ॥ ४२ ॥ हे पौंड्रक ! यदि समर्थ है तो मुझको जीतकर ऐसा कह, मैं चक्र रथ गदा चाप तलवारसे युक्त हूं ॥ ४३ ॥ तुम रथपर स्थित युद्धके निमित्त तैयार हो. हे मानद ! शीघ्र आओ यह कह मनवान् विष्णुने सिंहनाद किया ॥ ४४ ॥ इति श्रीमहा-
भारते स्त्रिलेखे हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां पौंड्रकयुद्धं नाम शततमोऽध्यायः ॥ १०० ॥ वैशम्पायन बोले, तब प्रतापवान् वासुदेव तीक्ष्ण बाण लेकर

पौंड्रकको तीक्ष्ण बाणसे ताडन करते हुए ॥ १ ॥ तब पौंड्रकवासुदेवने दश बाणोंसे वृष्णिनंदन वासुदेवको ताडन किया ॥ २ ॥ पचीस बाणसे दारुकको दश बाणसे घोड़ोंको और सत्तर बाणसे वासुदेवको ताडित किया ॥ ३ ॥ तब केशिनिषुदन हास्य करके मनसेही इसकी चढ़ाई करके ॥ ४ ॥ बलवान् अपना शार्ङ्ग धनुष चढाकर तीक्ष्ण बाणोंसे उसकी ध्वजाओंको छेदन कर दिया ॥ ५ ॥ और फिर यदुनंदनने सारथिका शिर उसकी कायासे पृथक् कर दिया, और चार बाणोंसे चारों घोड़ोंको मार दिया ॥ ६ ॥ फिर राजाके रथ और उनके पार्ष्णिप्राहोंको मार दिया और चक्रको तिलकी समान पोण्ड्रोऽथ वासुदेवस्तु शरैर्वेशभिराशुभैः ॥ वासुदेवं जघानाशु वाष्णेयं वृष्णिनन्दनम् ॥ २ ॥ दारुकं पञ्चविंशत्या हयान्दशभिरेव च ॥ सप्तत्या वासुदेवं तु यादवं वासुदेवकः ॥ ३ ॥ ततः प्रदस्य सुचिरं केशवः केशिसूदनः ॥ दृष्टोऽसाविति मनसा संपूज्य यदुनन्दनः ॥ ४ ॥ आकृष्य शार्ङ्गं बलवान्संधाय रिपुसूदनः ॥ नाराचेन सुतीक्ष्णेन ध्वजं चिच्छेद केशवः ॥ ५ ॥ सारथेश्च शिरः कायादाहत्य यदुनन्दनः ॥ अश्वान् चतुरो हत्वा चतुर्भिः सायकोत्तमैः ॥ ६ ॥ रथं राज्ञः समाहत्य तदोभो पार्ष्णिसारथी ॥ चक्रं च तिलशः कृत्वा हसन्किंचिदिव स्थितः ॥ ७ ॥ पोण्ड्रको वासुदेवस्तु रथादुत्प्लुत्य सत्वरः ॥ आदाय निशितं खड्गं प्राहिणोत्केशवाय सः ॥ ८ ॥ स खड्गं शतधा कृत्वा तूष्णीमासीच्च केशवः ॥ ततः परं महाघोरं परिचं कालसंमितम् ॥ ९ ॥ गृहीत्वा वासुदेवाय वासुदेवः प्रतापवान् ॥ प्राहिणोवृष्णिमीराय सर्वज्ञत्रस्य पश्यतः ॥ १० ॥ तद्विधा जगतां नाथश्चकार यदुनन्दनः ॥ ततश्चक्रं महाघोरं सदस्यारं महाप्रभम् ॥ ११ ॥ त्रिशङ्गारसमायुक्तमायसास्यमामित्रहा ॥ आदायाथ महाराज केशवं अक्यमब्रवीत् ॥ १२ ॥

काटकर मार दिया ॥ ७ ॥ तब पौंड्रक वासुदेव शीघ्र रथसे उतरकर तीक्ष्ण खड्ग लेकर केशवके ऊपर प्रहार करता हुआ ॥ ८ ॥ श्रीकृष्णने उस खड्गके सौ लण्ड कर दिये और जुप रहे तब महाघोर कालकी समान परिच लेकर ॥ ९ ॥ प्रतापवान् पौंड्रकने श्रीकृष्णके ऊपर प्रहार किया यह सब शत्रियोंने देखा ॥ १० ॥ जनप्राय यदुनंदनने उसके दो लण्ड कर दिये तब अपना सहस्र आरेवाला महाघोर चक्र लेकर ॥ ११ ॥ जो कि तीस मारका लोहनप था उसको ग्रहण कर पौंड्रक श्रीकृष्णसे कहने लगा ॥ १२ ॥

इस घोरचक्रको देखो यह तुम्हारा दर्प चूर्ण करेगा, हे गोविंद ! महामर्षि ! इसी चक्रसे तुम्हारा गर्भ ॥ १३ ॥ सब क्षत्रियोंके देखते दूर कलंग
तुम्हारे उद्देश्यसे दूसरोंको दुरासद यह छोड़गा ॥ १४ ॥ हे कृष्ण ! यदि समर्थ हो तो इस चक्रको तोड़ो, यह कह वह महाबली उसको सौ बार
धुमाकर ॥ १५ ॥ राजा पौंड्रक श्रीकृष्णके ऊपर छोटता हुआ तब महाबलीने क्रुदकर उस चक्रको वंचित कर दिया ॥ १६ ॥ तब उस वीर्यवान्ने
महाघोर सिंहनाद किया जिसको सुनकर भगवान् देवकीपुत्र परम विस्मयको प्राप्त हुए ॥ १७ ॥ आश्चर्य है कि इस पौंड्रकका वीर्य और धैर्य दुस्तह
पश्येदं निशितं घोरं तव चक्रविनाशनम् ॥ अनेन तव गोविन्द दर्पं दर्पवतां वर ॥ १३ ॥ अपनेष्यामि वाष्ण्यं सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥
त्वामुद्दिश्य महाघोरं कृतमन्यदुरासदम् ॥ १४ ॥ यदि शक्तो हरे कृष्ण दारयेदं महारूपदम् ॥ इत्युत्त्वा तच्छतगुणं भ्रामयित्वा
महाबलः ॥ १५ ॥ विक्षेपाय महावीर्यः पौण्ड्रको नृपसत्तमः ॥ अवप्लुत्य ततो देशात्तदुत्सृज्य महाबलः ॥ १६ ॥ सिंहनादं महाघोरं
व्यनदद्दीर्घवास्तदा ॥ ततो विस्मयमापन्नो भगवान्देवकीसुतः ॥ १७ ॥ अहो वीर्यमहो धैर्यमस्य पौण्ड्रस्य दुःसहम् ॥ इति मत्वा
जगन्नाथ उत्थितश्च रथोत्तमात् ॥ १८ ॥ ततः शिलां समादाय प्रेषयामास केशवम् ॥ तां शिलां प्रेषयामास तस्मै यदुकुलोद्भवः ॥ १९ ॥
पौण्ड्रेण सुचिरं कालं विक्रीड्य भगवान् हरिः ॥ ततश्चक्रं समादाय निशितं रक्तभोजनम् ॥ २० ॥ दैत्यमांसप्रदिग्धाङ्गं नारीगर्भविमो-
चनम् ॥ शातकुम्भमयं घोरं दैत्यदानवनाशनम् ॥ २१ ॥ सहस्रारं शतारं तदद्भुतं दैत्यभीषणम् ॥ ऐश्वर्यवर्म परमं नित्यं सुरगणा-
र्चितम् ॥ २२ ॥ विष्णुः कृष्णस्तथा शार्ङ्गो नित्ययुक्तः सदा हरिः ॥ जघान तेन गोविन्दः पौण्ड्रकं नृपसत्तमम् ॥ २३ ॥

हे यह विचार कर जगन्नाथ रथसे उठे ॥ १८ ॥ तब उसने शिला लेकर भगवान्के ऊपर छोड़ी यदुकुलोत्पन्नने उस शिलाका उत्तहीके ऊपर प्रहार
किया ॥ १९ ॥ इस प्रकार भगवान् हरि पौंड्रकके साथ बहुत समयतक क्रीडा करके रक्तभोजन करनेवाले तीक्ष्ण चक्रको ग्रहण करते हुए ॥ २० ॥
जिसका अंग दैत्योंके मांससे अर्चित था जो स्त्रियोंका गर्भ मोचन करनेवाला सुवर्णनिर्मित महाघोर दैत्य दानवोंका नाश करनेवाला ॥ २१ ॥ सहस्र
शत आरोसे युक्त अद्भुत दैत्योंको भय देनेवाला परम ऐश्वर्यका वस्तरूप देवगणोंसे अर्चित ॥ २२ ॥ जिससे शार्ङ्गधारी विष्णु कृष्ण सदा युक्त रहते

हे उस चक्रसे गोविन्दने पौंड्रको मारा ॥ २३ ॥ वह मांसभोजी चक्र तत्काल उसका देह विदीर्ण कर सर्वेश्वर लष्णकेही हाथमें फिर आनकर प्राप्त हुआ ॥ २४ ॥ तब पौंड्रक राजा प्राणरहित हो पृथ्वीमें गिरा इस प्रकार दुर्विज्ञेयगति प्रभु भगवान् उसको मारकर यादवोंसे पूजित हो सुधर्मा सभामें आनकर प्राप्त हुए ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते सिंहेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रायायां कैलासयात्रायां पौंड्रकवासुदेववधो नामैकाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०१ ॥

वेशम्पायन बोले, तब वीर्यवानोंमें श्रेष्ठ बलरामजीने एकलव्य निषादपतिको शक्तिसे ताड़न कर बड़ा सिंहनाद किया ॥ १ ॥ तब निषादेशने क्रोधकर तस्य देहं विदार्याशु चक्रं पिशितभोजनम् ॥ कृष्णस्याय करं भूयः प्राप सर्वेश्वरस्य ह ॥ २४ ॥ ततः स पौण्ड्रको राजा गतासुः प्रापतद्भुवि ॥ निहत्य भगवान्विष्णुर्दुर्विज्ञेयगतिः प्रभुः ॥ प्रतिपेदे सुधर्मा तु यादवेः पूजितो हरिः ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते सिंहेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां पौंड्रकवासुदेववधो नामैकाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०१ ॥ वेशम्पायन उवाच ॥ निषादेशं ततो रामः शक्त्या वीर्यवतां वरः ॥ आजघान स्तनद्वन्द्वे सिंहनादं व्यनीनक्ष् ॥ १ ॥ ततः क्रुद्धो निषादेशो रामं मत्तं महाबलम् ॥ गदया लोकविरुद्धातो जघान स्तनवक्षसि ॥ २ ॥ आहतः स तु तेनाशु बलभद्रो महाबलः ॥ उभाभ्यां चैव रामस्तु कराभ्यां वृष्णि-पुङ्गवः ॥ ३ ॥ गदां वृद्धा महाघोरामायान्तीं प्राणहारिणीम् ॥ दुद्रवाथ निषादेशः समुद्रं मकराज्यम् ॥ ४ ॥ धावत्येवं तदा राज्ञि एकलव्ये निषादपे ॥ धावत्येवं च रामोऽपि यत्र यातो निषादपः ॥ ५ ॥ सागरं स प्रविश्याशु गत्वा योजनपञ्चकम् ॥ भीत एव तदा राजन्नेकलव्यो निषादपः ॥ ६ ॥ कंचिद्दीपान्तरं राजन्प्रविश्य न्यवसत्तदा ॥ ततो रामो निषादेशं जिगाय यदुनन्दनः ॥ ७ ॥

मत्त महाबली बलरामको लोकविरुद्धात अघनी गदासे छातीमें ताड़न किया ॥ २ ॥ महाबली बलभद्र उस गदासे ताड़ित होकर तत्काल अपने दोनों हाथोंसे ॥ ३ ॥ प्राण हरनेवाली महाघोर गदाको ग्रहण कर समुद्रमें मकरकी समान निषादपतिके ऊपर धावमान हुए ॥ ४ ॥ जब राजा एकलव्य इस प्रकार धावमान हुआ तब वह जिधर चला उधरही बलरामजी धावमान होने लगे ॥ ५ ॥ फिर सागरमें प्रवेश कर पांच योजनतक जाकर एकलव्य राजा मयभीत हो ॥ ६ ॥ किसी और द्वीपमें प्रवेश कर निवास करने लगा तब राम इस प्रकार निषादपतिको जीतकर ॥ ७ ॥

उस मणिरत्नोंसे शोभित सन्नामें बलरामजी प्रविष्ट हुए और युद्धसंसक सात्यकिजी उस सन्नामें प्रविष्ट हुआ ॥ ८ ॥ दूसरे यादवजी यथायोग्य उपस्थित हुए जब चारों ओरसे वृष्णिवीर उपस्थित हुए ॥ ९ ॥ तब केशव यथायोग्य सब वृष्णियोंको अभिवादन कर भगवान् देवकीपुत्र समयके अनुसार वचन कहने लगे ॥ १० ॥ कैलास शिखरपर नीललोहित शंकरका दर्शन किया, हे यदुवीरो ! उन्होंने प्रसन्न होकर मुझे वर दिया है ॥ ११ ॥ वहां देवता और तपोधन सुविभी आये थे मुझे देल शंकर प्रसन्न हो स्तुति कर चले गये ॥ १२ ॥ हे यादवभेष्टो ! रात्रिमें मैंने बड़ा अद्भुत कृत्य देखा दो महाघोर पिशाच मेरी कथा कहते थे ॥ १३ ॥ और

तां सभां मणिरत्नाभ्यां प्रविवेश इलायुधः ॥ सात्यकिर्युद्धसंसक्तस्तां सभां प्रविवेश ह ॥ ८ ॥ अन्ये च यादवा राजन्यथायोग्यमुपस्थितः ॥ आसीनेषु च सर्वेषु वृष्णिवीरेषु सर्वतः ॥ ९ ॥ अभिवाद्य यथायोग्यं वृष्णीन्सर्वांश्च केशवः ॥ उवाच वचनं काले भगवान् देवकीसुतः ॥ १० ॥ दृष्टं कैलासशिखरं शंकरो नीललोहितः ॥ स तु मह्यं यदुक्तराः प्रीतिमांश्च वदो वरम् ॥ ११ ॥ तत्र देवाः समायाता मुनयश्च तपोधनाः ॥ दृष्ट्वा मां शंकरश्चैव प्रीतः स्तुत्वा समाययो ॥ १२ ॥ अस्यद्भुतं मया दृष्टं रात्रौ यादवसत्तमाः ॥ पिशाचो द्वौ महाघोरो वदन्तो मामिकां कथाम् ॥ १३ ॥ भुगयां चक्रतुस्तौ तु चिन्तयन्तौ तु मां सदा ॥ दृष्ट्वा मां तौ तु राजेन्द्राः प्रीतिमन्तौ तपस्विनौ ॥ १४ ॥ भक्तिनम्रौ महात्मानौ प्रणामं चक्रतुस्तदा ॥ ततोऽहं सर्वथा प्रीतस्तौ नीतोऽस्मि स्वर्गमुत्तमम् ॥ १५ ॥ तोषयित्वा महादेवं मया चाद्य समागतम् ॥ वैष्णव्यायन उवाच ॥ ततस्ते वृष्णयः सर्वे देवदेवं क्षुण्णसिरे ॥ १६ ॥ सर्वथा कृतकृत्यास्ते वृष्णयः केशवाश्रयाः ॥ यादवाः सर्वे एवेते स्वं त्वं जन्मुर्बन्धालवम् ॥ १७ ॥

मृगया करते हुए दोनों बेरा चिन्तन करते थे, हे राजेन्द्र ! दोनों मुझे देखकर प्रीति करते हुए कारण कि तपस्वी थे ॥ १४ ॥ वे दोनों महात्मा जकिसे नम्र हुए मुझे प्रणाम करने लगे तब मैंने सर्वथा प्रसन्न हो उनको स्वर्गकी प्राप्ति कर दी ॥ १५ ॥ और फिर महादेवको संतुष्ट कर मैं इस स्थानमें आनकर प्रात हुआ हूं, तब वे सब वृष्णिवंशी उन देवदेवकी प्रशंसा करने लगे ॥ १६ ॥ सर्वथा वे केशवके आनपवाले वृष्णिवंशी कृतकृत्य हुए और सब यादव

देवदेवकी प्रशंसा करते अपने २ स्थानको गये ॥ १७ ॥ तब रुक्मिणीके तबनमें नारायण प्रविष्ट हुए रुक्मिणी और सत्यनामासे हरिने वह सब वृत्तान्त कहा ॥ १८ ॥ वे केशवके साथ महाप्रीति युक्त हुई यह केशवकी सब चेष्टा तुमसे वर्णन की ॥ १९ ॥ महाबली बुद्धोंको मार इस प्रकार वह सब पृथ्वीकी पालना करते हुए चोरकर्मा नरक और नृपभेद पौंड्रकको ॥ २० ॥ तथा इयग्रीव निशुभ सुन्द उपसुन्दको मारकर मुनियोंसे अर्पित हो देवेश विभोकी रक्षा करने लगे ॥ २१ ॥ ब्राह्मणोंके निमित्त केशवने बहुत ग्रन्थ और गौर्बोका दान किया अभिहोत्र करते ब्राह्मणोंको तृप्त करते हुए ॥ २२ ॥

अभ्यन्तरे जगन्नाथः प्रविश्य हरिरीश्वरः ॥ रुक्मिणीसत्यभामाभ्यामाचचक्षे यथाभवत् ॥ १८ ॥ ते प्रीते प्रीतियुक्तेन केशवेन समन्विते ॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं केशवस्य विचेष्टितम् ॥ १९ ॥ शशास पृथिवीं कृत्स्नां बुष्टात् इत्या महाबलान् ॥ नरकं चोरकर्माणं पौण्ड्रकं नृपसत्तमम् ॥ २० ॥ इयग्रीवं निशुभं च तथा सुन्दोपसुन्दको ॥ रक्ष विप्रान्देवेशो मुनीन्मुनिवरौचितः ॥ २१ ॥ विप्रेभ्यश्च ददौ वित्तं गाश्च दत्त्वा स केशवः ॥ अभिहोत्रं प्रयुज्जानो ब्राह्मणांश्च सुतर्पयन् ॥ २२ ॥ मुनींश्च ब्रह्मचर्येण देवान्पहोरने- कथा ॥ स्वधया च पितृन्सर्वान्प्रीणयन्नेव सर्वदा ॥ २३ ॥ तस्मिन्ञ्जायति देवेक्षे राज्यं निष्कण्टकं प्रभो ॥ सुखमेव प्रजाः सर्वा जीवन्ति ब्राह्मणादयः ॥ २४ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि कैलासयात्रायां पौण्ड्रकवचसमाप्तो द्वाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०२ ॥ जनमेजय उवाच ॥ भूय एव द्विजश्रेष्ठ शङ्खचक्रगदाभृतः ॥ चरितं श्रोतुमिच्छामि विस्तरेण तपोधन ॥ १ ॥

ब्रह्मचर्यसे मुनियोंको यज्ञोंसे देवोंको और स्वधासे पितरोंको तृप्त करते हुए ॥ २३ ॥ उस देवेशको निष्कंक राज्य करनेमें ब्राह्मणादि सब प्रजा सुखसे निवास करती थी ॥ २४ ॥ इति श्रीम० खि० हरिवंशे भविष्यपर्वणि जायायां कैलासयात्रायां पौण्ड्रकवचसमाप्तो द्वाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०२ ॥ जनमेजय बोले, हे द्विजभेष्ठ ! आप फिरभी शंख चक्र गदा धारण करनेवाले श्रीकृष्णका चरित्र कहिये, हे तपोधन । विस्तारसे कहो ॥ १ ॥

केशवसंबन्धी कथा सुनते मेरी तृप्ति नहीं होती है ऐसा कौन है जो देवदेव चक्रवर्ती हरिके ॥ २ ॥ चरित्र श्रवण कर उसमें रमण करता हुआ रातदिन तृप्त हो यही एक पुरुषार्थ है कि नारायणकी कथा श्रवण करे ॥ ३ ॥ अब यह कहिये कि जगत्के वास्ते हैं विष्णुकी लड़ाई सब जगत्को विस्मयदायक किस प्रकारसे हुई ॥ ४ ॥ महात्मा विचक्र दानवका युद्ध कैसे हुआ हमने सुना है कि प्रथम उनकी मित्रता थी ॥ ५ ॥ उनके दो पुत्र बड़े बली भृगुके शिष्य हुए वह वीर संपूर्ण अस्त्रमें कुशल और हरिसे वर पाये हुए थे ॥ ६ ॥ आपने पहले कहा है कि उनमें बड़ा संग्राम हुआ था और

नहि ते तृप्तिरस्तीह शृण्वतः केशवीं कथाम् ॥ को नु नाम हरेर्विष्णोर्देवदेवस्य चक्रिणः ॥ २ ॥ शृण्वंस्तथा रमन्वापि तृप्तिं याति दिवानिशम् ॥ पुरुषार्थोऽयमेवैको यत्कथाश्रवणं हरेः ॥ ३ ॥ कथमासीन्नगद्धेतोर्हंसस्य डिम्भकस्य च ॥ समितिः सर्वभूतानां सदा विस्मयदायिनी ॥ ४ ॥ विचक्रस्य कथं युद्धं दानवस्य महात्मनः ॥ स तयोर्मित्रतां यात इत्येवमनुशुश्रुम ॥ ५ ॥ तो सुतो वीर्यसंपन्नो शिष्यो भृगुसुतस्य इ ॥ सर्वास्त्रकुशलो वीरो हरेर्लङ्घवरो किल ॥ ६ ॥ संग्रामः सुमहानासीदित्युक्तं भवता पुरा ॥ तयोश्च नृपयोर्विप्र केशवस्य जगत्पतेः ॥ ७ ॥ कस्य पुत्रो समुत्पन्नो यथाभूद्विग्रहो महान् ॥ अष्टाशीतिसदृशाणि दानवानां तरस्विनाम् ॥ ८ ॥ बलान्यथ विचक्रस्य श्रितशूलधराणि च ॥ आसन्युद्धे महाराज दानवस्य महात्मनः ॥ ९ ॥ यदूनामन्तरं प्रेम्पुर्यदूनां युद्धकाङ्क्षया ॥ देवासुरे महायुद्धे देवान् जयति दुर्धरः ॥ तद्विधायं सदा यत्नमकरोच्चैव केशवः ॥ १० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्यानं त्र्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०३ ॥

उनका केशवके साथही संग्राम हुआ था ॥ ७ ॥ वह किसके पुत्र हुए जिससे महाविग्रह हुआ अदासी सहस्र बड़े शीघ्रगामी दानवोंका ॥ ८ ॥ जो कि विचक्रकी सेना थी उन तीक्ष्ण शूलधारी महात्मा दानवोंका युद्ध हुआ ॥ ९ ॥ यदुओंका अन्तर देखनेवाले यदुओंसे युद्ध करनेवाले देवासुरके महायुद्धमें उसने देवताओंको जीता था श्रीकृष्णने उसके मारनेको सदा यत्न किया ॥ १० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्यानं

अधिकशततमोऽध्यायः ॥ १० ॥ वेशंपायन बोले, हे राजन् ! शाल्ववंशमें ब्रह्मदत्त नाम राजा था वह पवित्रआत्मा सब प्राणिबोधपर दया करता था ॥ १ ॥ नित्य पंचयज्ञमें तत्पर जितात्मा जितेन्द्रिय ब्रह्मका जाननेवाला वेदवित् सदा यज्ञमय कल्याणरूप था ॥ २ ॥ हे राजन् ! उसकी रूपगुणोंसे सम्पन्न दो भार्या थीं परन्तु उनके कोई सन्तान नहीं था ॥ ३ ॥ उनके साथ राजा ऐसे प्रसन्न रहता जैसे इन्द्राणीके साथमें इन्द्र उसका ब्राह्मणोंमें भेठ मित्रसह नामका सखा था ॥ ४ ॥ वह महायोगी वेदवेदांग जाननेमें तत्पर था परन्तु जिस प्रकार राजाके कोई सन्तान नहीं थी इसी प्रकार उस ब्राह्मणकेभी

वेशम्पायन उवाच ॥ आसीच्छाल्वेषु राजेन्द्र ब्रह्मदत्तो नृपोत्तमः ॥ नाम्ना राजन् स पूतात्मा सर्वभूतदयापरः ॥ १ ॥ पञ्चयज्ञपरो नित्यं जितात्मा विजितेन्द्रियः ॥ ब्रह्मविद्वेदविच्चैव सदा यज्ञमयः शिवः ॥ २ ॥ तस्य भार्ये महीपाल रूपौदार्यगुणान्विते ॥ बभूवतुः सुसंपन्ने अनपत्ये नृपोत्तम ॥ ३ ॥ स ताभ्यां मुमुदे राजा शच्या शक इवाम्बरे ॥ नाम्ना मित्रसहो नाम सखा चासीद्विजोत्तमः ॥ ४ ॥ तस्य राज्ञो महायोगी वेदवेदान्ततत्परः ॥ अनपत्यः स विप्रेन्द्रो यथा राजा बभूव ह ॥ ५ ॥ स राजा सहितस्ताभ्यामर्चयामास शंकरम् ॥ पुत्रार्थं शूलिनं शर्वं दश वर्षाण्यनन्यधीः ॥ ६ ॥ स विप्रो वैष्णवं सत्रं पुत्रार्थे समयोजयत् ॥ अर्चितस्तेन राजेन्द्र शंकरो नीललोहितः ॥ ७ ॥ आत्मानं दर्शयामास स्वप्ने राजानमत्रवीत् ॥ प्रीतोऽस्मि तव भद्रं ते वरं वरय सुव्रत ॥ ८ ॥ अथ राजा जगन्नाथमुवाचेदं स्मयन्निव ॥ पुत्रो मम भवेत्तां हि तथेत्युक्त्वा वृषध्वजः ॥ ९ ॥ अन्तर्धानं गतः शम्भुः प्रतिबुद्धस्ततो नृपः ॥ सोऽपि मित्रसहो विद्वान्देवं केशवमव्ययम् ॥ १० ॥

सन्तान नहीं थी ॥ ५ ॥ तब उसके सहित राजाने शंकरकी आराधना की अनन्यबुद्धिसे दश वर्षतक शूलधारी महादेवका तप किया ॥ ६ ॥ उस ब्राह्मणने पुत्रके निमित्त वैष्णव यज्ञ किया, हे राजन् ! उसने नीललोहित शंकरका आराधन किया ॥ ७ ॥ तब अपना दर्शन देकर शंकरने स्वप्नमें राजासे कहा, हे सुव्रत ! तुम्हारा मंगल हो मैं तुमसे प्रसन्न हूँ वर मांगो ॥ ८ ॥ तब राजाने मुस्काकर देवदेव जगन्नाथसे यह वचन कहे मेरे दो पुत्र हों यही वर दीजिये शिवजीने कहा ऐसाही होगा ॥ ९ ॥ जब यह कह शिवजी अन्तर्धान हुए तब राजा जागृत हुआ और वह विद्वान् मित्रसह ब्राह्मण

अविनाशी केशव ॥ १० ॥ जगन्नाथका पांच वर्षपर्यन्त पूजन करता हुआ इस प्रकार उस विष्णु जनार्दन देवका पूजन किया ॥ ११ ॥ हरिने अपनी आत्माके समान उसको एक पुत्र दिया वह दोनोंकी भार्या शंकरके तेजसे गर्भवती हुई ॥ १२ ॥ हे महाराज ! ब्राह्मणकी स्त्री वैष्णवतेजसे गर्भधारण करती हुई, वे महाबली पुत्रोंको दोनों रानी गर्भमें धारण करती हुई ॥ १३ ॥ हे महाराज ! क्रमसे राजाके दो पुत्र हुए तब राजाने उनकी नामकर्मादि क्रिया करी ॥ १४ ॥ विधिपूर्वक नामकरण करके ब्राह्मणोंको बहुतसा दान दिया उस विनीत आत्मा ब्राह्मणकेमी एक पुत्र हुआ ॥ १५ ॥ हे राजन् !

पञ्चवर्ष जगन्नाथमर्चयामास भक्तितः ॥ आर्चितस्तेन विप्रेण देवदेवो जनार्दनः ॥ ११ ॥ पुत्रमेकं ददौ तस्मै स्वात्मना सहस्रं हरिः ॥ ते भार्ये गर्भमाधत्तां तेजसा शंकरस्य ह ॥ १२ ॥ विप्रभार्या महाराज वैष्णवं तेज आदधत् ॥ महिष्यो ते महावीर्ये पुत्रौ शंकरनिर्मितौ ॥ १३ ॥ असृयेतां महीपाल क्रमेणैव नृपस्य ह ॥ स तयोश्च महाराज नामकर्मादिकाः क्रियाः ॥ १४ ॥ चकार विधिवत्सर्वा विप्रेभ्योऽदान्महद्दानम् ॥ स च विप्रो विनीतात्मा पुत्रमेकं हि लब्धवान् ॥ १५ ॥ सत्तादिव जगन्नाथं स्थितं पुत्रात्मना नृप ॥ जातकर्मादिकं सर्वं ब्राह्मणः स चकार ह ॥ १६ ॥ तौ कुमारौ वयं चैव त्रयः सत्रयसोऽभवन् ॥ वेदानधीत्य ते सर्वाङ्गुत्वा चान्वीक्षीर्का तथा ॥ १७ ॥ धनुर्वेदे तथास्त्रे च निपुणास्तेऽभवंस्तदा ॥ हंसो ज्येष्ठो नृपसुतो डिम्भकोऽन्तरोऽभवत् ॥ १८ ॥ स च विप्रसुतो राजन् जनार्दन इति स्मृतः ॥ अन्योन्यं मित्रतां याताः सर्वे चैव कुमारकाः ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भाविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोत्पत्तौ चतुरधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०४ ॥

वह साक्षात् जगन्नाथही पुत्ररूपसे उत्पन्न हुए जातकर्मादि उस ब्राह्मणके सहित राजाने किये ॥ १६ ॥ वे तीनों कुमार एक अवस्थाके हुए वे सब वेदोंको पढ़ राजनीतिका श्रवण कर ॥ १७ ॥ धनुर्वेद और अस्त्रविद्यामें निपुण हो गये बड़े पुत्रका नाम हंस और छोटेका डिम्भ हुआ ॥ १८ ॥ और ब्राह्मणके बेटेका नाम जनार्दन हुआ वे सब कुमार परस्पर मित्रतावको प्राप्त हुए ॥ १९ ॥ इति श्रीम० खिल० ह० भाविष्यपर्वणि तापायां हंसडिम्भको-

तप्तो चतुरधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०४ ॥ वैष्णवायन बोले; तब महाबुद्धिमान् हंस डिम्बक जो कि शंकरकी आत्मा और मनरूप थे तप करनेकी इच्छासे ॥ १ ॥ हिमालयपर जाकर तप करने लगे और शंकरके उद्देश्यसे तप करने लगे ॥ २ ॥ हम दोनों अन्नविद्यामें वीर्यवान् हो जाँय इस प्रकार वे दोनों मनमें धारण कर एकाग्र और नियमित होकर वायु और जलके आहारसे निर्वाह करते रहने लगे ॥ ३ ॥ देवदेवेश शंकरको नमस्कार रातदिन करने लगे हे हर, शर्व, शिवानन्द, नीलग्रीव, उमापते ॥ ४ ॥ वृषभध्वज विरूपाक्ष हर्यक्ष जगत्के पति भक्तिप्रिय गिरीश वासुदेव शिव अच्युत ॥ ५ ॥ सद्योजात वैशम्पायन उवाच ॥ हंसश्च डिम्बकश्चैव तपश्चतुर् मङ्गमतिः ॥ मनश्चक्रतुरात्मांशो शंकरस्य नृपोत्तम ॥ १ ॥ गत्वा तु हिमवत्पार्श्वं तपश्चक्रतुरञ्जसा ॥ उद्दिश्य शंकरं शर्वं नीलग्रीवमुमापतिम् ॥ २ ॥ वीर्यास्त्रे चैव नो स्यातामित्याधाय तु मानसे ॥ एकाग्रो प्रयतो भूत्वा वाय्वम्बुप्राशिनो नृप ॥ ३ ॥ नमस्ते देवदेवेति शंकरेति शिवानिशम् ॥ हर शर्व शिवानन्द नीलग्रीव उमापते ॥ ४ ॥ वृषभध्वज विरूपाक्ष हर्यक्ष जगतां पते ॥ भक्तिप्रिय गिरीशेश वासुदेव शिवाच्युत ॥ ५ ॥ सद्योजात महादेव देवदेव सुहृत्सय ॥ भूतभावन देवेश प्रणवात्मन् सदाशिव ॥ ६ ॥ इत्यादिनामभिर्नित्यं स्तुवन्तो शंकरं भवम् ॥ हृदि कृत्वा विरूपाक्षं तपस्तेपेतुरञ्जसा ॥ ७ ॥ निर्ममो निरहंकारो मोनव्रतसमास्थितो ॥ वर्षाणीदं तदा राजन्पञ्च चक्रतुरोजसा ॥ ८ ॥ ततः प्रीतोऽभवच्छर्वस्ताभ्यां संयमनेन च ॥ स ददौ दर्शनं नेजं व्याघ्रचर्माम्बरो हरः ॥ ९ ॥ त्रियक्षः शंकरः शर्वः शूलपाणिरुमापतिः ॥ अग्रतः संस्थितं शर्वं चन्द्रार्द्धकृतशेखरम् ॥ तो दृष्ट्वा प्रीतमनसो नमश्चक्रतुरञ्जसा ॥ १० ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ वर वरय भद्रं वां यप्येच्छ वां तथास्तु वै ॥ तावुचतुस्तदा राजन्प्रीतिस्त्वं भगवन्पदि ॥ ११ ॥ महादेव देवदेव गुहाध्वय भूतभावन देवेश प्रणवात्मन् सदाशिव ॥ ६ ॥ इत्यादि नामोंसे नित्य शंकरकी स्तुति करते हुए इस प्रकार विरूपाक्षको हर्यक्षमें धारण कर वह तप करने लगे ॥ ७ ॥ ममता अहंकाररहित मोनव्रतमें स्थित हुए पाँच वर्षतक बराबर तप करते रहे ॥ ८ ॥ तब उनके संयम नियमसे शिवजी प्रसन्न हुए और व्याघ्रचर्मचारी शिवने उनको दर्शन दिया ॥ ९ ॥ त्रिनेत्र शंकर शर्व शूलपाणि उमापति चन्द्रार्द्धशेखर शिवजीको आगे स्थित देखकर वे दोनों प्रसन्न हो नमस्कार करते हुए ॥ १० ॥ श्रीभगवान् बोले; तुम वर मांगो जो इच्छा होमे सो मैं दूँगा तब वह कहने लगे, हे भगवन् । यदि तुम हमारे

ऊपर प्रसन्न हों तो ॥ ११ ॥ देवता असुरोंकी मुख्य सेना यक्ष गन्धर्व दानवोंमें हम अग्र्य हों यही हमारा प्रथम कर है ॥ १२ ॥ और दूसरा वर यह दो कि हमारे रौद्र अस्त्रोंका संग्रह हो जाय माहेश्वर अस्त्र रौद्रास्त्र ब्रह्मशिर अस्त्र ॥ १३ ॥ अभेद्य कवच और अभेद्य धनुष और रक्षाका करने-वाला परशा दो ॥ १४ ॥ हे देव ! युद्धमें हमारी सहायताके निमित्त दो भूतोंको दीजिये यही हो वचन कह शिवजीने भृंगी और रितिको आज्ञा दी ॥ १५ ॥ सब प्राणियोंके हित करनेवाले कुंडोदर और विरूपाक्ष कहते हुए तुम और यह दोनों भूत इनकी रणमें सदा सहाय करना ॥ १६ ॥

देवासुरचमूमुख्यैर्यक्षैर्गन्धर्वदानवैः ॥ आवामजय्यो सर्वात्मनेष नो प्रथमो वरः ॥ १२ ॥ द्वितीयो नो विरूपाक्ष रौद्रास्त्राणां च संग्रहः ॥ माहेश्वरं तथा रौद्रमस्त्रं ब्रह्मशिरो मदत् ॥ १३ ॥ अभेद्यं कवचं दिव्यमच्छेद्यं चापि कार्मुकम् ॥ परशुं च तथा शर्वं सदा रक्षार्थमेव च ॥ १४ ॥ सहायो द्वौ महादेव भूतो युद्धे हि गच्छताम् ॥ एवमस्तिवति देवेश आह भृंगिरिटी हरः ॥ १५ ॥ कुण्डोदरं विरूपाक्षं सर्वप्राणिहिते रतम् ॥ युवामथ च भूतेशौ सहायो सततं रणे ॥ १६ ॥ संग्रामं गच्छतां घोरमेतयोर्बलशालिनोः ॥ इत्युक्त्वा भगवाञ्छर्वस्तत्रैवान्तरधीयत ॥ १७ ॥ ततस्तौ वीर्यसंपन्नौ हंसो डिम्भक एव च ॥ कृतास्त्रौ शस्त्रसंपन्नौ चापिनो वीर्यवन्तरो ॥ १८ ॥ आमुक्तकवचो वीरावजय्यो देवदानवैः ॥ अत्यन्तभक्तो देवेशे शंकरे नीलजोहिते ॥ १९ ॥ नित्योत्सवकरो देवे भस्मोद्गलनशोभिना ॥ कृतत्रिपुण्ड्रको नित्यं जटापुक्तशिरोधरो ॥ २० ॥ रुद्राक्षार्पितसर्वांगो व्याघ्रचर्माम्बरान्वृतो ॥ नमः शिवाय शान्ताय महादेवाय धीमते ॥ २१ ॥

इन दोनों बलियोंके संग्राममें जानेपर तुम इनके साथ जाना यह कह जगन्नाथ शिव वहांही अन्तर्धान हो गये ॥ १७ ॥ तब वे बड़े बली हंस और डिम्भक अस्त्रवान् वीर्यसम्पन्न चापवाले बड़े वीर्यवान् ॥ १८ ॥ कवच पहरे देवदानवोंको अग्र्य्य बड़े वीर देवेश नीलजोहित शंकरके बड़े भक्त ॥ १९ ॥ शिवका नित्य उत्सव करनेवाले शरीरमें भस्म लगाये नित्य त्रिपुण्ड्रधारी जटा शिरपर धारे ॥ २० ॥ सब अंगमें रुद्राक्ष धारण किये व्याघ्रचर्म ओढ़े ' नमः शिवाय ' शान्तरूप महादेव धीमान्को नमस्कार है ॥ २१ ॥

इत्यादि नामोंसे महादेवकी स्तुति करते साक्षात् महादेवकी समानही जटाधारी शोभाको प्राप्त हुए ॥ २२ ॥ तब वे अपने घर जाकर पिताके चरण ग्रहण करते हुए तथा पिताके सखा और माताके चरणोंको नमस्कार करते हुए ॥ २३ ॥ हे राजन् ! वह महात्मा जनार्दनजी बहुत समयपर महाविद्याके पारको प्राप्त होता हुआ ॥ २४ ॥ वह हृषीकेश विष्णु पीतकौशेय धारण करनेवालेकी ब्रह्मतत्त्वमें तत्पर हो नित्य उपासना करने लगा और जितेन्द्रिय रहने लगा ॥ २५ ॥ फिर हंस और हिंस्रकने अपना विशह किया और महात्मा जनार्दननेजी विवाह किया ॥ २६ ॥ यह सब यज्ञ करनेवाले नित्य

इत्यादिभिर्महादेवं स्तुवन्तो नामभिः शिवम् ॥ साक्षादिव महादेवो रेजतुर्जलधारिणो ॥ २२ ॥ ततः स्वभवनं गत्वा पितुः पादाव-
गृह्यताम् ॥ पितुश्च सख्युर्वेलिनो मातुश्च चरणौ तदा ॥ २३ ॥ जनार्दनोऽपि धर्मात्मा कालेन महता नृप ॥ विद्यापरं महाबुद्धिर्धु-
क्तेनासावुपेयिवान् ॥ २४ ॥ स च विष्णुं हृषीकेशं पीतकौशेयवाससम् ॥ ब्रह्मतत्त्वपरो नित्यमुपास्ते विजितेन्द्रियः ॥ २५ ॥ हंसश्च
हिम्भकश्चैव कृतदारो बभूवतुः ॥ जनार्दनोऽपि धर्मात्मा कृतदारो बभूव ह ॥ २६ ॥ सर्वे ते यज्ञनिरताः पञ्चयज्ञपरास्तथा ॥
स्वदारनिरताः सर्वे गुरुशुश्रूषणे रताः ॥ धर्म एव परं श्रेय इति ते मेनिरे नृप ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवं० भ०
हंसहिम्भकोपाख्यने पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः कदाचित्तो वीरो मृगयामाटुः
क्लिप्तः ॥ जनार्दनेन सहितो रथैरश्वैर्मजेरापि ॥ १ ॥ वनं गत्वा तु तो वीरो सिंहव्याघ्रांश्च जग्रतुः ॥ शितेबाणैर्महाराज वराहानथ
सर्वशः ॥ २ ॥ बालानन्यान्मृगान् हिंस्रान्शुभ्रिश्च सहितो नृप ॥ एष आयाति विपुलो वराहो दीर्घलोचनः ॥ ३ ॥

पंचयज्ञमें तत्पर अपनी स्त्रीमें निरत गुरु शुश्रूषामें तत्पर हुए, हे राजन् ! धर्मही परम श्रेय है इस बातको उन्होंने पूर्णरूपसे जान लिया था ॥ २७ ॥
इति श्रीमहाभारते सिलेषु हरिवं० अविष्यपर्वणि भाषायां हंसहिंस्रकोपाख्यने पंचाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १९ ॥ वैशम्पायन बोले, एक समय वह
दोनों वीर मृगयाके निमित्त नये रथ हाथियोंपर स्थित जनार्दनके सहित पयान किया ॥ १ ॥ वह दोनों वीर वनमें जाकर सिंह व्याघ्रोंको मारने
लगे, हे महाराज ! तीक्ष्ण बाणोंसे वराहोंको मारने लगे ॥ २ ॥ बाल मृग हिंस्रक जीव कुचे आदिके सहित वे दोनों बोले कि यह दीर्घलोचन

मारा जाता है ॥ ३ ॥ इसको बाजोंसे छेदन करो यह मृगराज आता है यह दूसरा महिष जिसके शृंगमें सरीसृप प्राप्त हो रहे हैं ॥ ४ ॥ यह मृगोंके साथ बालकोंको बधते हैं यह व्याकुल हो सरगोशोंका झुंड फिर रहा है ॥ ५ ॥ यह बच्चा स्तनपान कर रहा है इसको मत मारो और इन सबको कुत्तोंसे घेरकर पकड़ लो ॥ ६ ॥ इस प्रकार उस राजाके मृगवा करनेमें महान् शब्द हुआ, हे नृपश्रेष्ठ ! यह शब्द क्षत्रिय और व्याधोंके दौड़नेका हुआ ॥ ७ ॥ वह दोनों राजा अनेक प्रकारके मृग व्याघ्र और सिंहोंको मारकर सूर्यके मण्डपस्थानमें प्राप्त होनेसे भयको प्राप्त

एनं बाजेन संछिन्वि याति चायं मृगाधिपः ॥ अयमन्योऽय महिषः शृङ्गप्रोतसरीसृपः ॥ ४ ॥ एते खलु मृगाः सार्द्धं शावेर्नावन्ति सर्वज्ञः ॥ एतदभ्रमति सर्वत्र भीतं झञ्झकुलं महत् ॥ ५ ॥ शावं स्तनं पिबत्साधु न हन्तव्यमिदं शुभम् ॥ ग्रहीतव्यमिदं सर्वं निरुष्य श्वगजेरिह ॥ ६ ॥ इत्यादिशब्दः सुमहान्मृगवां कुर्वतां नृप ॥ क्षत्रियाणां नृपश्रेष्ठ व्याघ्रानां चैव घावताम् ॥ ७ ॥ इत्या मृगान्सुबहुशो व्याघ्रान् सिंहामृगोत्तमो ॥ श्रमं च जगमतुर्वीरो मय्यं याते दिवाकरे ॥ ८ ॥ अलं हि मृगयास्माकं श्रमः समुपजायते ॥ इत्युचतु-
र्महाराज पुष्करं जग्मुतुः सरः ॥ ९ ॥ सरःसमीपमागम्य मुनिसिद्धनिषेवितम् ॥ वीजन्मार्हतसानूपं श्रमात्तत्र सुखस्मितो ॥ १० ॥ ततो जनाः सरः सर्वे विमाद्युः श्रमकर्षिताः ॥ विसान्प्रवात्यन्पद्यानां भक्षयामासुरार्त्तवत् ॥ ११ ॥ जनार्दनेन सहितो हंसो डिम्भक एव च ॥ सरः कचिस्त्वमाश्रित्य श्रमं संत्यज्य तिष्ठतः ॥ १२ ॥

हुए ॥ ८ ॥ बोले कि मृगयाकी आवश्यकता नहीं अब हमको श्रम होता है, हे महाराज ! ऐसा कह वे दोनों पुष्करके समीप गये ॥ ९ ॥ सरके समीप प्राप्त हुए जो मुनि और सिद्धों करके सेवित है और पवन होने लगी जिससे सुखपूर्वक विभाम लेते हुए ॥ १० ॥ तब सब आदमी अपने कर्षित हो उस सरोवरको अवगाहन करने लगे कमलनाड प्रवाल पद्मको आतोंकी समान प्रज्ञान करने लगे ॥ ११ ॥ जनार्दनके सहित वे हंस और डिम्भक वहीं सरोवरमें स्नान कर अवरहित स्थित हुए ॥ १२ ॥

उस सरोवरके किनारे विनाम लेकर स्थित हुए मुनियोंके मुखसे वेदको सुनने लगे ॥ १३ ॥ वे माष्यन्दिनशाखाको स्वरसहित श्रवण करने लगे वेद
ध्वनिको श्रवण कर वे दोनों परम प्रसन्न हुए ॥ १४ ॥ और मुनियोंके किये यज्ञोंके देखनेकी इच्छा करने लगे मृगोंसहित उस सेनाको वहां स्थापित
कर ॥ १५ ॥ महाचाप और बाण चारण किये वह जनार्दन वीर हंस और डिम्भक समामें प्रवेश कर मुनिजनोंको प्रणाम करते हुए ॥ १६ ॥ हे
महाराज ! वे ऋषिके आश्रममें पैरों पैरों चले वहां महर्षि कश्यपका वैष्णव यज्ञ होता था जहाँ होममें परायण वे ऋषि मुनियोंके साथ यजन करते

विश्रम्य सरसस्तीरे तद्भासाते सुखं नृपो ॥ अशृण्वतां परं ब्रह्म मुनिमुख्यैः समीरितम् ॥ १३ ॥ मध्यंदिनं तथा सर्वैः सवनं सस्वरं
नृपे ॥ ततः प्रीतो नृपो भूत्वा श्रुत्वा वेदध्वनिं तदा ॥ १४ ॥ ऐच्छतां तो तदा द्रष्टुं यज्ञं मुनिहृतं तदा ॥ स्थापयित्वा ततः सेनां
सर्वा मृगसमन्विताम् ॥ १५ ॥ आदाय च महाचापे शरान्कतिचिदेव च ॥ जनार्दनस्तदा वीरो हंसो डिम्भक एव च ॥ १६ ॥
पदातिनो महाराज अगमतुश्चाश्रमं किल ॥ महर्षेः काश्यपस्याय सत्रं वैष्णवसंज्ञकम् ॥ यजन्तो मुनिभिः सार्द्धं जपदोमपरा-
यणैः ॥ १७ ॥ इति श्रीम० स्विलेषु हरिवंशे भवि० हंसडिम्भकोपाख्याने मृगयावर्णनं नाम षड्विंशततमोऽध्यायः ॥ १०६ ॥
वैशम्पायन उवाच ॥ जनार्दनश्च धर्मात्मा हंसो डिम्भक एव च ॥ सदः प्रविश्य सत्रस्य नमश्चक्रुर्मुनीश्वरान् ॥ १ ॥ तानामताम्-
हात्मानो मुनयः शिष्यसंयुताः ॥ अर्घ्यपाद्यासनादीनि चक्रुः पूजां प्रयत्नतः ॥ २ ॥ तो नृपो स च विभ्रेन्द्रः सपर्या प्रतिगृह्य च ॥
प्रीतात्मानो महात्मान् आसते समुत्सवं नृप ॥ ३ ॥

ये ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते स्विलेषु हरिवंशे ऋषिपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्याने मृगयावर्णनं नाम षड्विंशततमोऽध्यायः ॥ १०६ ॥
वैशम्पायन बोले, जनार्दन धर्मात्मा हंस और डिम्भ उस यज्ञमें प्रवेश कर नमस्कार करते हुए ॥ १ ॥ शिष्योंके सहित मुनि उनके आया हुआ देखकर
अर्घ्य पाय आसन देकर उनकी पूजा करते हुए ॥ २ ॥ वह नृप और वह विभ्रेन्द्र उस पूजाको ग्रहण कर प्रसन्न हो सुखसे आसनपर बैठे ॥ ३ ॥

तव मौनव्रती उन मुनिपोंसे हंसने कहा. हे मुनिभ्रेष्ठो ! हमारे पिताजी यज्ञ करनेकी इच्छा करते हैं ॥ ४ ॥ हे मुनिभ्रेष्ठो ! यज्ञके अन्तमें आप हमारे यहां आइये हम दिग्विजय कर राजसूय यज्ञ करेंगे ॥ ५ ॥ हे ब्राह्मणो ! हम अपने धर्मात्मा पितासे यज्ञ करावेंगे. हे विभ्रेन्द्रो ! शिष्य और परिच्छदोंसहित आप पधारिये ॥ ६ ॥ हृद अभी दिग्विजय करेंगे हम यहीं सेनाके संचयको कर सकते हैं ॥ ७ ॥ हमारे सामने देव दानव सब होनेको समर्थ नहीं हैं हमने कैलासवासी शिवसे वर पाया है ॥ ८ ॥ हमारे पास शत्रुनाशक अनेक अस्त्र हैं मर्दसे बली हंस यह कहकर मौन हुआ ॥ ९ ॥ मुनि बोले, हे राजन् ! जो ततो हंसो बभाषे तान्मुनीन्संयतवाङ्मनः ॥ पिता हि नो मुनिश्रेष्ठा यष्टुमेच्छत्ससाधनम् ॥ ४ ॥ गन्तव्यं तत्र युष्माभिः सत्रान्ते मुनिसत्तमाः ॥ राजसूयेन यज्ञेन कृत्वा दिग्विजयं वयम् ॥ ५ ॥ याजयिष्यामहे विप्राः पितरं धार्मिकं नृपम् ॥ आयान्तु तत्र विभ्रेन्द्राः स्रशिष्याः सपरिच्छदाः ॥ ६ ॥ वयमद्यैव सहितौ दिशो जेष्यामहे वयम् ॥ शक्ता वयमिदमेतत्कर्तुं सेनिकसंचयेः ॥ ७ ॥ आवयोः पुरतः स्थातुं न शक्ता देवदानवाः ॥ कैलासनिल्यादेवाद्गरं लब्धाः स्म यन्नतः ॥ ८ ॥ अजय्यो शत्रुसंधानामस्त्राणि विविधानि च ॥ इत्युक्त्वा विररामेव हंसो मदबलान्वितः ॥ ९ ॥ मुनय उचुः ॥ यदि स्यात्तत्र गच्छामो वयं शिष्येर्नृपोत्तम ॥ आस्महे वान्यथा राजन्नित्यूचुः क्लि तापसाः ॥ १० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततो देशान्महाराज गन्तुं निश्चितमानसो ॥ पुष्करस्योत्तरं तीरं दुर्वासा यत्र तिष्ठति ॥ ११ ॥ यतयो नियता भूत्वा मन्त्रब्रह्मनिषेविणः ॥ ब्रह्मसूत्रपदे सक्तास्तदर्थालोक्ततत्पराः ॥ १२ ॥ निर्ममा निरहंकाराः कौपीनाच्छादनव्रताः ॥ तमात्मानं जगद्योनिं विष्णुं विश्वेश्वरं विभुम् ॥ १३ ॥

यज्ञ होमा तो हम शिष्योंसहित आंयगे हम जरूर जांयगे इसमें सन्देह नहीं ॥ १० ॥ वैशंपायन बोले, हे राजन् ! तब वे वहां निश्चितको प्राप्त हो देशान्त रोंमें जानेकी इच्छा करने लगे जहां पुष्करके उत्तरकी ओर दुर्वासाजी स्थित थे ॥ ११ ॥ जहां नियत होकर यति मंत्ररूपी ब्रह्म (वेद) की उपासना करते थे ब्रह्मसूत्रके पदोंमें आसक्त और उसके अर्थ देखनेमें तत्पर ॥ १२ ॥ ममत्व और अहंकारसे हीन कौपीनसे आच्छादन व्रतवाले उस आत्मा जनपदके योनि विष्णु विश्वेश्वर विभु ॥ १३ ॥

मन्त्ररूप शुभ शान्त अक्षर सर्वतोमुख वेदान्तमूर्ति अव्यक्त अनंत शाश्वत शिव ॥ १४ ॥ नित्ययुक्त विरूपाक्ष भूताधार अनामय मनसे सर्वतोमुख नारायणका ध्यान करते हुए ॥ १५ ॥ दुर्वासाके सनामें उपासना करते जो वेदान्तकेही एक गुरु हैं तर्कसे निश्चित तत्त्वके जाननेवाले ज्ञानसे निर्मित विचित्राले ॥ १६ ॥ हंस और परमहंस जो दुर्वासाके शिष्य थे उन दोनोंने जाकर उन ऊर्ध्वरेतस महात्माको देखा ॥ १७ ॥ वह महाबुद्धि दुर्वासा परब्रह्मका विचार कर रहे थे कारण कि क्रोध करके त्रिलोकको नष्ट करनेकी सामर्थ्य थी ॥ १८ ॥ जिनको क्रोध करनेपर देवताभी देखनेको समर्थ

ब्रह्मरूपं शुभं शान्तमक्षरं सर्वतोमुखम् ॥ वेदान्तमूर्तिमव्यक्तमनन्तं शाश्वतं शिवम् ॥ १४ ॥ नित्ययुक्तं विरूपाक्षं भूताधारमना-
मयम् ॥ ध्यायन्तं सर्वदा देवं मनसा सर्वतोमुखम् ॥ १५ ॥ दुर्वाससा सदोपास्यं वेदान्तेकरसं गुरुम् ॥ तर्कनिश्चिततत्त्वार्था ज्ञान-
निर्मलचेतसः ॥ १६ ॥ हंसाः परमहंसाश्च शिष्या दुर्वाससः प्रभो ॥ गत्वा तत्र महात्मानो तो दृष्ट्वा तूर्ध्वरेतसम् ॥ १७ ॥ दुर्वाससं
महाबुद्धिं विचिन्वानं परं पदम् ॥ क्रुद्धो यदि स दुर्वासा दग्धुं लोकानिमान्क्षमः ॥ १८ ॥ देवा अपि च यं द्रष्टुं कुदं वै न क्षमाः
सदा ॥ रोषमूर्तिः सदा यस्तु रुद्रात्मा विश्वरूपधृक् ॥ १९ ॥ रक्तकौपीनवसनो हंसः परम एव च ॥ दृष्ट्वेनं च तयोरेवं बुद्धिरासी-
न्महामते ॥ २० ॥ को नामासौ महाभूतः काषायी वर्णवित्तमः ॥ कश्यपमाश्रमो नाम विहाय च गृहश्रमम् ॥ २१ ॥ गृहस्थ एव
धर्मात्मा गृहस्थो धर्मवित्तमः ॥ गृहस्थो धर्मरूपस्तु गृहस्थो वर्ण एव च ॥ २२ ॥ गृहस्थश्च सदा माता प्राणिनां जीवनं सदा ॥
तं विनान्येन रूपेण वर्तते योऽतिमूर्खवत् ॥ २३ ॥

नहीं हो सकते थे जो सदा रोषमूर्ति रुद्रात्मा विश्वरूपधारी थे ॥ १९ ॥ लाल कौपीनका वसन किये इनको देखकर हंसकी यह बुद्धि हुई ॥ २० ॥ यह महाभूत काषाय वस्त्रधारी कौन है और किसका यह आश्रम है जिसने गृहस्थाश्रम त्याग दिया है ॥ २१ ॥ गृहस्थही धर्मात्मा है गृहस्थही धर्म जनिनेवालोंमें श्रेष्ठ है गृहस्थही धर्मरूप और गृहस्थही वर्ण है ॥ २२ ॥ गृहस्थही सदा माता सदा प्राणियोंका जीवन है उसके बिना जा और रूपसे वर्तता है वह मूर्ख है ॥ २३ ॥

यह उन्मत्त बिरुप अथवा मूर्ख है यह ध्यान लोगोंके करनेके निमित्त करता है ॥ २४ ॥ यह प्राकृत अज्ञानी क्या ध्यान करते हैं मैं इन दुरारोह अनेक आज्ञाओंका कल्पना करनेवालोंको ॥ २५ ॥ तथा मन्दबुद्धियोंको गृहस्थमें स्थापन करनेवा बलसे ही इन मूढ़ विज्ञानमें तत्पर ब्राह्मणोंको ॥ २६ ॥ जो असद्राहमें गृहीत मूर्ख दुर्बल हैं इन ब्राह्मणोंका शास्ता हमारे सिवाय कौन है ॥ २७ ॥ हम इनको धर्ममें स्थापन कर निवृत्त होंगे, हे राजन् ! इस प्रकार वे दोनों राजकुमार उस ब्राह्मणके सहित ॥ २८ ॥ अर्थात् जनार्दनके सहित ज्ञानपक्षके कारण हे राजेन्द्र ! उस संयतचित्तवाले यतिके समीप

उन्मत्तोऽयं बिरूपोऽयमथवा मूर्खः एव च ॥ आत्मनिव सदा चायमास्ते वञ्चयितापि वा ॥ २४ ॥ किमेते प्राकृतज्ञाना ध्यायन्त इति किंचन ॥ वयमेतान् दुरारोहानाश्रमान्तरकल्पकान् ॥ २५ ॥ स्थापयिष्यामहे सर्वान्मन्दबुद्धीनिमान् गृहे ॥ बलादेव दिज्ञानेतान्मूढ-विज्ञानतत्परान् ॥ २६ ॥ असद्राहगृहीताश्च नास्तिज्ञान्दुर्मतीनिमान् ॥ एषां ज्ञास्ता च को मूढो न विप्रो वयमत्र ह ॥ २७ ॥ धर्मवर्त्मनि संस्थाप्य पुनर्यास्याव निवृत्तो ॥ इति संक्षिप्त्य तो वीरो विप्रेण सहितो नृप ॥ २८ ॥ जनार्दनेन राजानो मोहाद्भाग्यज्ञानान्नृप ॥ समीपं तस्य राजेन्द्र यतेः संयतचेतसः ॥ २९ ॥ मत्वा च प्रोचतुरुभो दुर्वाससमतीन्द्रियम् ॥ यर्ताश्च नियतान्कुद्धो राजानो राजसत्तम ॥ ३० ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेपु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसदिग्भक्रोपाख्याने सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०७ ॥ हंसदिग्भक्रावूचतुः ॥ ज्ञानलेशादिर्हीनात्मन् किं ते व्यवसितं दिज्ञ ॥ कश्चायमाश्रमो विप्र भवता यः समाश्रितः ॥ १ ॥ गृहमेव परित्यज्य किं त्वया साधितं पदम् ॥ दम्भं एव भवान्व्यक्तं शङ्के नास्त्यत्र कारणम् ॥ २ ॥

नवे ॥ २९ ॥ और जोकर वे दोनों अतीन्द्रिय दुर्वाससे बोले अर्थात् वे दोनों यतीन्द्रके ऊपर कुछ हुए ॥ ३० ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेपु हरिवंशे भविष्यपर्वणि आषाढां हंसदिग्भक्रोपाख्याने सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०७ ॥ हंसदिग्भक्र बोले, हे दिज्ञ ! ज्ञानलेशसे विहीन ! यह तुम्हारी क्या व्यवस्था है, हे विप्र ! जिसमें तुम स्थित हो यह कौनसा आश्रम है ॥ १ ॥ गृहस्थको छोड़कर यह आपने क्या साधन किया है हम जानते हैं

सर्वथा आपने पास्तुष्ट साधा है इसमें और कुछ कारण नहीं है ॥ २ ॥ हे मूढ ! तुम निवृत्त हुएसे इन लोकोंको नाश करते हो निश्चय इन सबको तुम नरकमें भिराओगे ॥ ३ ॥ स्वयं भी नष्ट हुए और इन मूर्खोंको तुम नष्ट करते हो, हे मन्दवति ब्राह्मण ! क्या कोई तुम्हारा शास्ता नहीं है ॥ ४ ॥ इसमें संदेह नहीं कि तुम सर्वथा आपके विनेता हो, हे ब्राह्मण ! इस आत्मको छोड़कर आप मृदस्थ हो आइये ॥ ५ ॥ हे विप्र ! सदा यन्से पंचयज्ञ करते रहिये तब स्वर्गको आओगे कारण कि वहां बड़ा सुख है ॥ ६ ॥ हे विप्र ! यही कल्याणका मार्ग है जो आपकी जीवनमें स्पृहा है नो करो जब

लोकांश्चेमान्सदा मूढ नाज्ञयिष्यसि निर्वृतः ॥ एतान्सर्वान्विनेतासि नरके पातयिष्यसि ॥ ३ ॥ स्वयं नष्टः परान्मूर्खं नाज्ञयिष्यसि यत्नतः ॥ अहो ज्ञास्ता कथं नास्ति तव मन्दमतेर्द्विज ॥ ४ ॥ सर्वथा त्वद्विनेता च पापो नास्त्यत्र संशयः ॥ त्यक्त्वेममाश्रमं विप्र एही भव यतात्मवान् ॥ ५ ॥ पञ्च यज्ञान्सदा विप्र कुरु यत्नपरो भव ॥ ततः स्वर्गं परं मत्वा स्वर्गे हि सुमहत्सुखम् ॥ ६ ॥ एष श्रेयःपथो विप्र जीविते चेत्स्पृहा तव ॥ इत्युक्तवन्तो घर्मात्मा श्रुत्वा विप्रो जनार्दनः ॥ ७ ॥ उवाच च यतिं दृष्ट्वा प्रणम्यासौ सुनी- तवत् ॥ मा ब्रूतामीदृशं वाक्यं राजानो मन्दतेजसो ॥ ८ ॥ अश्राव्यमीदृशं घोरं लोकयोरुभयोरपि ॥ को वस्तुमीशो मन्दात्मा यदि जीवेत्सवान्धक ॥ ९ ॥ सर्वथा कालं वृथायं युवयोर्मन्दचेतसोः ॥ समाप्त आयुषः शेषो ब्रह्मदण्डहतो युवाम् ॥ १० ॥ एते हि यतयः शुद्धा ज्ञानदीपितचेतसः ॥ ज्ञानाग्निदग्धकर्माणः प्राणान्प्राणेषु जुह्वति ॥ ११ ॥ ऋते वामीदृशं वाक्यं कः समर्थो ब्रतुञ्जन् ॥ सर्वथा ज्ञातमस्माभिः समाप्तमिह जीवितम् ॥ १२ ॥

इन दोनोंने ऐसा कहा तो जनार्दन ब्राह्मण इस वचनको सुन ॥ ७ ॥ सुनीतवत् प्रणाम कर यतिको देखकर कहने लगा, हे मन्दतेजवाले राजकुमारो ! इनके प्रति ऐसे वचन न कहो ॥ ८ ॥ इस प्रकारके घोर वचन दोनों लोकमें कोई नहीं कह सकता है कौन बंधुओंके सहित जीनेकी इच्छा करनेवाला इनसे यह कह सकता है ॥ ९ ॥ सर्वथा तुम मंदबुद्धिवालोंको यह कालस्वरूप है आयु तुम्हारी समाप्त हो गई अब तुमपर ब्रह्मदण्ड भिरेगा ॥ १० ॥ यह शुद्ध यति ज्ञानसे दीपचित ज्ञान अग्निसे दीपिमान् शरीर प्राणोंको प्राणोंमें दहन करनेवाले हैं ॥ ११ ॥ इनसे ईशके बिना कौन ऐसे

वचन बोल सकता है सर्वथा हमने जाना कि तुम्हारा जीवन समाप्त हो चुका ॥ १२ ॥ हे राजकुमारो । शास्त्रमें ऋषियोंके किये चार आश्रम हैं, ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ सन्यास ॥ १३ ॥ उनमें सबमें भेद्य यह चौथा संन्यास आश्रम है सो इस पुण्यतर आश्रममें यह महाप्रतिष्ठित है ॥ १४ ॥ हम जानते हैं कि आपने अच्छी प्रकार ब्रह्मोंकी सेवा न की है तपस्वियोंसे ज्ञान नहीं प्राप्त किया मला ऐसा कौन कह सकता है ॥ १५ ॥ हे राजन् । प्राणधारीयोंको इस प्रकारके वचन सुनने अश्राव्य हैं हे महात्मन् । तुम मेरे विषय हो क्या कहें ॥ १६ ॥ हे राजन् ।

चत्वार आश्रमाः पूर्वमृषिभिर्विहिता नृपो ॥ ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थश्च भिक्षुकः ॥ १३ ॥ तेन मग्नश्चतुर्थोऽयमाश्रमो भिक्षुकः स्मृतः ॥ आस्ते तस्मिन्महाबुद्धिः स हि पुण्यतरः स्मृतः ॥ १४ ॥ नोपासिता भवद्वा च ब्रह्माः स पविनीतवत् ॥ ज्ञानं नाप्तं तपस्विभ्यस्तथा चेवं वदेत कः ॥ १५ ॥ अश्राव्यमीदृशं घोरं मया प्राणभृता नृप ॥ किं करिष्यामि म दातुमात्मित्रत्वाद्भवतो नृप ॥ १६ ॥ ज्ञानं यदाप्तं भवता गुरुभ्यस्तदत्र दुःखाय हि केवलं त्वं ॥ ज्ञानं हि धर्मप्रभवं यथेष्टं बलादिपापस्य विघातरूपम् ॥ १७ ॥ युवा विहाय यास्ये वा पतेयं वा शिलातलम् ॥ पिबेयं वा विषं घोरं पतेयं वा महोर्मिषु ॥ १८ ॥ आत्मानं वात्र संत्यक्ष्ये पश्यतां शृण्वतां पुनः ॥ इत्युक्त्वा विललापेवं मा ब्रूतमिति तो वदन् ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्यानो अष्टाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ ततः क्रुद्धोऽप्य दुर्वासा धक्षन्निव तयोरसूनु ॥ एकेनाक्ष्णाऽप्य दुर्वासा रोद्रेणाग्रियुजा सदा ॥ १ ॥

तुमने जो गुरुओंसे ज्ञान प्राप्त किया है वह केवल दुःखकेही निमित्त है धर्मसे उत्तम है परन्तु तुम्हारा ज्ञान तो पापकी उत्पत्तिकेही कारण है ॥ १७ ॥ मैं तुमको छोड़कर चला जाऊंगा या शिलातलमें अपनेको गिरा दूंगा वा विष पी लूंगा या सागरमें गिर पड़ूंगा ॥ १८ ॥ अथवा कहते सुनतेमें अपने आत्माको त्यागन कहूंगा इस प्रकार विलाप कर वह जनार्दन कहने लगा कि तुम दोनों ऐसे वचन मत कहो ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि आषाढां हंसडिम्भकोपाख्यानो अष्टाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०८ ॥ वैशम्पायन बोले, तब क्रोधकर दुर्वासा उनके प्राणोंको

जलाते हुएसे अग्निकी समान रोश प्रज्वलित एक नेत्रसे ॥ १ ॥ रोषसे चतित इन्द्रिय हो उन दोनोंको देखने लगे, हे राजन् ! उस समय वह लोकोंको भस्मीभूत करने लगे ॥ २ ॥ और दूसरे सौम्य नेत्रसे उस ब्राह्मणको देखते हुए नष्ट हो नष्ट हो इस प्रकारके वचन कहने लगे ॥ ३ ॥ हे दोनों कुमारो ! यहांसे चले जाओ क्यों देर करते हो मेरे वचनके रोषको सहनेको तुम समर्थ नहीं हो ॥ ४ ॥ वहीं तो मैं सम्पूर्ण राजोंके भस्म करनेमें समर्थ हूं फिर मेरे आगे साहस करनेको समर्थ न होना ॥ ५ ॥ शंस चक्र गदाके धारण करनेवाले लोकमें विरूपात नारायण तुम्हारे दर्पको चूर्ण पश्यंस्तो च दुरात्मानो रोषव्याकुलितेन्द्रियः ॥ कुर्वन्निव तदा लोकान्भस्मभूतानिमानृष ॥ २ ॥ ब्राह्मणं चक्षुषा पश्यन्सौम्येनान्येन केवलम् ॥ उवाच वचनं राजन्ध्वंसत ध्वंसतेति च ॥ ३ ॥ इतो गच्छत राजानो किं विलम्बत मा चिरम् ॥ न वा वचनसंभूतं रोषं धारयितुं क्षमे ॥ ४ ॥ अन्यथा वो महीपालान्सर्वान्दग्धुमहं क्षमः ॥ किमतः साहसं वक्तुं कश्च शक्नोति मत्पुत्रः ॥ ५ ॥ र्षे वा लोकविख्यातः शङ्खचक्रगदाधरः ॥ व्यपनेष्यति मन्दज्ञो किं वो वक्ष्यामि साम्प्रतम् ॥ ६ ॥ तत उत्थाय धर्मात्मा गन्तुमेच्छद्यतीश्वरः ॥ ततो निषेडुं हंसस्तं यतते स्म यतीश्वरम् ॥ ७ ॥ तस्य बाहुं समादाय हंसो नृपवरोत्तमः ॥ कौपीनं चिच्छिदे क्रूरः कृतान्त इव सत्तम ॥ ८ ॥ यतयोऽन्ये पलायन्ति दिशो दश विचेतसः ॥ कष्टं हेति वदन्विप्रो मित्रभावाज्जनार्दनः ॥ ९ ॥ न्यवारयद्यथाशक्ति किमिदं साहसं त्विति ॥ दुर्वासाः सत्यधर्मस्तु हन्तुमीशोऽपि तं ततः ॥ १० ॥ मन्दं मन्दमुवाचेदं हंसं डिम्भकमेव च ॥ शापेनाहं समयोऽपि हन्तुं राजकुलाधमो ॥ ११ ॥

करेंगे अब मैं क्या कहूं ॥ ६ ॥ जब वह धर्मात्मा ईश्वर यह कहकर वहांसे चलनेकी इच्छा करते हुए तब इस यतीश्वरको हंसने निषेध कर ॥ ७ ॥ नृपवर हंसने उनकी बाहु पकड़ कर क्रूरतासे उनकी कौपिन छेदन कर दी तब कालकी समान दिसाई देने लगे ॥ ८ ॥ दूसरे यति विचेत हो दशों दिशाओंमें पलायन करने लगे उस समय मित्रभावसे जनार्दन कष्ट है कष्ट है ऐसा कहने लगा ॥ ९ ॥ और यथाशक्ति उनको निवारणभी करने लगा कि यह क्या साहस है यद्यपि सत्यधर्म दुर्वासा उन्होंनेको मारनेका समर्थ थे ॥ १० ॥ परन्तु हंसडिम्भकसे मन्द मन्द कहने लगे मैं शापसे इन

नीच कुल राक्षोको मारनेमें समर्थनी हूं ॥ ११ ॥ तौनी पति होनेके कारण मैं ऐसा न कहना जो जननाथ केशव शंख चक्र मदापर हैं वह केशव यादवेश्वर ॥ १२ ॥ शंख चक्र मदापाणि तुम्हारा अभिमान दूर करेंगे वह यदुपति लोककी रक्षा करेंगे ॥ १३ ॥ तुम दोनोंका सजीव है कारण कि उनके हाथसे मरनेमें स्वर्ग होगा और तुम्हारा बंधु जरासंधजी तुमसे कहनेकी इच्छा न करेगा ॥ १४ ॥ इस प्रकारके लोक विद्वेषमें वह धर्मपथमें स्थित होकरभी इस प्रकार संन्यासियोंका मोह करनेसे वह तुमको त्याग देगा ॥ १५ ॥ उस मन्धरेरुके अविपतिके तथापि न करोम्यन्तं यतयो ह्यत्र ते वयम् ॥ यो हि देवो जगन्नाथः केशवो यादवेश्वरः ॥ १२ ॥ शंखचक्रमदापाभिर्गर्वं वा व्यप-
नेष्यति ॥ लोके तस्मिन्पुत्रश्रेष्ठे रक्षत्येवं जगत्पतौ ॥ १३ ॥ युवयोः सर्वथा जीवः सजीव इति मे मतिः ॥ जरासन्धोऽपि वा बन्धुः स च वक्तुं न चेच्छति ॥ १४ ॥ ईदृशं लोकाविद्रिष्टं स हि धर्मपथे सदा ॥ एतावता स वा बन्धुर्न हि भूयो भविष्यति ॥ १५ ॥ विद्वेषो ह्यस्तु वा तस्य मागधस्य महीपतेः ॥ श्रुत्वेदं घोररूपं तु स हि बन्धुः सहेतु चेत् ॥ १६ ॥ धर्मेनाज्ञो भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ॥ इत्युक्त्वा गच्छ गच्छेति हंसं प्राह पुनः पुनः ॥ १७ ॥ जनार्दनमुवाचेदं दुर्वासा यतिव्रतमः ॥ स्वस्त्यस्तु तव विप्रेन्द्र भक्तिरस्तु जनार्दने ॥ १८ ॥ संगतिस्तव तस्यास्तु शङ्खचक्रमदाभृतः ॥ अथ शो वा परशो वा साधुस्त्व सदा भवान् ॥ १९ ॥ नहि साधोर्विनाशोऽस्ति लोकयोरुभयोरपि ॥ गच्छ सर्वं पितुर्ब्रूहि ज्ञात्वा वृत्तं यथाखिलम् ॥ २० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसद्विभक्तोपाख्याने दुर्वासाभाषणे न्वाधिशततमोऽध्यायः ॥ १०९ ॥

साथ तुम्हारा विद्वेष होना जो इस घोररूप अनिष्टको सुनकर वह सहन करे ॥ १६ ॥ इसमें सन्देह नहीं कि उसका धर्म नाश हो जायगा यह कह बारंबार हंससे कहा जाता था ॥ १७ ॥ और यतिश्रेष्ठ दुर्वासाने जनार्दनसे कहा; हे विप्रेन्द्र ! तुम्हारे कल्याण और जनार्दनमें भक्ति हो ॥ १८ ॥ और तुम्हारी शंख चक्र मदाधारीसे संगति होगी आज कल वा परसों आप श्रेष्ठ साधुत्व को प्राप्त होगे ॥ १९ ॥ दोनों लोकमें साधुओंका विनाश नहीं होता है जाकर यह सब वृत्तान्त अपने पितासे कह देना ॥ २० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्य-

पर्वणि आषायां हंसविभोवास्त्वाने दुर्वालोभापणे नवाधिकृततमोऽध्यायः ॥ १०९ ॥ वेचंपायन बोले, तब यह हंस और विंशक काठसे घेरित हो
कोवित हुए शिखर कमंडलु द्विदल काठ ॥ १ ॥ दण्ड पात्र इत्यादि सबको छेदन भेदन करके उस देशमें ग्वाणोंसे बाँस पकवाते हुए ॥ २ ॥ वहाँ उसे
नक्षण करके फिर अपनी पुरीमें आये और धर्मात्मा जनार्दन स्नेहसे उनके पीछे पीछे गया ॥ ३ ॥ और अब यह नष्ट हुए ऐसा जानकर वह बड़ा
दुःखी हुआ और उन सबके चले जानेपर यतिभेद दुर्वासा ॥ ४ ॥ पलायन करते हुए सब यतियोंसे इस प्रकार बोले और पवित्र देश पुष्करसे निक-

वेशम्पायन उवाच ॥ ततस्तो हंसविंशकौ कुद्रो कालेन चोदितौ ॥ शिखरं कमण्डलुं चैव द्विदलं दारुमेव च ॥ १ ॥ दण्डान्पात्र-
विशेषांश्च छित्त्वा भित्त्वा च सर्वशः ॥ तस्मिन्देसे महाराज व्याघ्रैर्मासान्यदीदहन् ॥ २ ॥ भक्षयित्वा ततो देशात्स्वपुरीं तो प्रजग्मतुः ॥
जन्मर्दनश्च धर्मात्मा स्नेहादनुययो तयोः ॥ ३ ॥ नष्टाविमाविति तदा स मेने दुःखितः परम् ॥ गतेषु तेषु सर्वेषु दुर्वासा यतिस-
त्तमः ॥ ४ ॥ पलायनपरान्सर्वानिदं प्राह यतीश्वरान् ॥ इतो देशादिनिर्गत्य पुष्करात्पुण्यसंयुतात् ॥ ५ ॥ मन्दं मन्दं समाश्रास्य
विश्रम्य च ततस्ततः ॥ प्रविश्य द्वारकां देवं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ ६ ॥ दृष्ट्वा च तस्मै प्रभवे वक्ष्यामो यतिसत्तमाः ॥ स हि रक्षन्
जगदिदं धर्मवर्त्मनि संस्थितः ॥ ७ ॥ आद्यो लोकमुहूर्तिष्णुर्वतात्मा तत्त्ववित्प्रियः ॥ उद्धृत्य कण्टकान्सर्वान्छास्य पृथिवीमि-
माम् ॥ ८ ॥ स च पापान्महाबोरान्सर्वान्पापकृतान्प्रभुः ॥ रक्षेत्रः सकलान्सर्वान् ज्ञानेषु नियतात्मनः ॥ ९ ॥ इदमद्य क्षमं विप्र
यानमद्य विधीयताम् ॥ सादसं यत्कृतं ताभ्यां पात्रभेदादि सत्तमाः ॥ १० ॥

उत्तर ॥ ५ ॥ मंद मंद समझाते हुए श्वर उधर ठहराते हुए और बोले द्वारकामें शंख चक्र गदाधारीके निकट जाकर उन प्रभुका दर्शन ॥ ६ ॥ कर
उनसे हम यह वृत्तान्त कहेंगे वह इस जगत्की रक्षा करते धर्ममार्गमें स्थित हैं ॥ ७ ॥ आद्य लोकके गुरु विष्णु यतात्मा तत्त्वके जाननेवाले प्रिय सब
कंटकोंको नष्ट करके इस पृथ्वीका पालन करते हैं ॥ ८ ॥ यह प्रभु सब महाबोर पाप और पापात्माओंसे ज्ञानमें नियतात्मा हो हम सबकी रक्षा
करते हैं ॥ ९ ॥ हे ब्राह्मणो ! अब यही ठीक है कि उनके निकट चंडे, जो उन रोनोंसे साहस किया है वह उनसे कहें जो उन्होंने हमारे पापोंका

छेदन भेदन किया है ॥ १० ॥ यह हय जनार्दनको दिसावे यह ज्ञानी यति इस प्रकारकी प्रतिज्ञा करके ॥ ११ ॥ उन दूटे हुए दारुमय पात्रोंको लेकर
द्विदल कषाय वस्त्र और कौपीन बल्कलको लेकर ॥ १२ ॥ तथा अलावु फलके मूलसे अर्धभोग दो तुकड़े हुए पात्रको ले तथा अन्य वस्तुओंकोभी
लेकर केशवके दर्शनको गये ॥ १३ ॥ पाँच सहस्र मुनियोंको साथ लेकर तपोयोनि ईश्वरके अंश दुर्वासाजो ॥ १४ ॥ एक दिन रात बराबर चलकर
कृष्णकी पाली हुई द्वारकामें वे चतुर महात्मा कोई लोमशान् कोई केशवर्जित प्राप्त हुए ॥ १५ ॥ हे राजेन्द्र ! प्रातःकाल वे यतीश्वर वापिकामें पहुँच वहां
एतत्सर्वमशेषेण दर्शयाम जनार्दनम् ॥ तथेति ते प्रतिज्ञाय यतयो ज्ञानचक्षुषः ॥ ११ ॥ छिन्न ताभ्यां समादाय शिष्यं दारुमयं
तथा ॥ द्विदलं कर्पटं चैव कौपीनमथ बल्कलम् ॥ १२ ॥ कमण्डलुं तदा राजन्नर्धप्रोतकपालकम् ॥ एतानन्यान्समादाय द्रष्टुं
केशवमाययुः ॥ १३ ॥ पञ्च चैव सहस्राणि पुरस्कृत्य महामुनीन् ॥ दुर्वाससं तपोयोनिमीश्वरस्यात्मसंभवम् ॥ १४ ॥ अहोरात्रेण
ते सर्वे द्वारकां कृष्णपालिताम् ॥ ययुर्दान्ता महात्मानो लोमशाः केशवर्जिताः ॥ १५ ॥ प्रातः प्रविश्य राजेन्द्र वापिकायां यतीश्वराः ॥
स्नात्वोपस्पृश्य ते सर्वे यत्रेण महता तदा ॥ १६ ॥ द्रष्टुमभ्युद्यता विष्णुं कण्टकोद्धतितत्परम् ॥ एकरूपं समास्थाय सुधर्मायामव-
स्थितम् ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु इरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भोपाख्याने यतीनां द्वारकागमनं नाम
दशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अथ सर्वेश्वरो विष्णुः पद्मकिञ्जल्कलोचनः ॥ इयामः पीताम्बरः
श्रीमान्प्रलम्बाम्बरभूषणः ॥ १ ॥ किरीटी श्रीपतिः कृष्णो नीलकुञ्चितमूर्द्धजः ॥ अन्यक्तः शाश्वतो देवः सकलो निष्कलः शिवः ॥ २ ॥
स्नान कर बडे यत्नसे ॥ १६ ॥ कंटकोके उद्धार करनेमें युक्त केशवके देखनेकी इच्छा करने लगे जो एक रूपमें स्थित हो सुधर्ममें स्थित हैं ॥ १७ ॥
इति श्रीम० खि० ह० भविष्यपर्वणि भाषाया हंसडिम्भोपाख्याने यतीनां द्वारकागमनो नाम दशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११० ॥ वैशम्पायन बोले,
तब कमललोचन सर्वेश्वर विष्णु श्यामरूप पीताम्बरधारी श्रीमान् प्रलम्बायमान अम्बरकी समान भूषण धारे ॥ १ ॥ किरीटधारी श्रीपति कृष्ण
नील कुञ्चित केशवाले अन्यक्त शाश्वत देव सकल निष्कल शिव ॥ २ ॥

कृष्ण विहार और क्रीडा करते थे उस समय अनेक कुमार और सात्यकि उनके साथ थे ॥ ३ ॥ यादवोंके साथ गोलाकार पाशोंको सेल रहे थे युयुधानके सहित कृष्ण अपना पित्र करते थे ॥ ४ ॥ कि यह प्रथमका अस्त्र हमारा है तुम्हारा पीछे होना जब काल लोचन कृष्णने सात्यकिसे ऐसा कहा ॥ ५ ॥ तब उनके पार्श्वमें स्थित वसुदेवादि दूसरे यादव तथा उद्धव आदिभी वहां स्थित थे ॥ ६ ॥ वह भूतात्मा भूतभावन उस समय दूसरे व्यापारोंसे रहित थे और सुग्रीवके साथ रामकी समान विहारमें तत्पर थे ॥ ७ ॥ वह महाविष्णु अच्युत मध्याह्न समयमें

क्रीडाविहारोपगतः कदाचिदभवद्धारिः ॥ कुमारेरपरेः सार्द्धं सात्यकिप्रमुखैर्नृप ॥ ३ ॥ गोलक्रीडां सुधर्मायां मध्ये यादवसत्तमः ॥ चकार प्रियकृत्कृष्णो युयुधानेन केशवः ॥ ४ ॥ ममायं प्रथमो गोलस्तव पश्चाद्रविष्यति ॥ इति ब्रुवंस्तदा विष्णुः सात्यकिं कमलेक्षणः ॥ ५ ॥ पार्श्वस्था यादवास्तस्य वसुदेवपुरोगमाः ॥ उद्धवप्रमुखा राजन्नासेदुः कचिदत्र वै ॥ ६ ॥ अन्यव्यापाररहितो भूतात्मा भूतभावनः ॥ विजहार यथा रामः सुग्रीवेण पुरा नृप ॥ ७ ॥ मय्यंदिने महाविष्णुः शैनेयेन सहाच्युतः ॥ विक्रीडय सुचिरं कृष्ण उपारंसीत्स यादवः ॥ ८ ॥ द्वाःस्थने वारिताः पूर्वं द्वायैव च समास्थिताः ॥ इदमन्तरमित्येव विविशुस्तां सभां नृप ॥ ९ ॥ यतयो दीर्घतपसः पुरस्कृत्य तपोधनम् ॥ दुर्वाससं सुमनसो ददृशुर्यादवेश्वरम् ॥ १० ॥ गोलक्रीडासमाप्तं करसंस्थितगोलकम् ॥ पद्मपत्रविशालक्षं विष्णुं तं सात्यकिं हरिम् ॥ ११ ॥ एकेनाक्षणा द्वादयन्तं परेणान्येन गोलकम् ॥ यतयश्च महाराज प्रत्यदृश्यन्त तत्पुरः ॥ १२ ॥ वृष्णिपः पुण्डरीकाक्षः सात्यकिर्बलभद्रकः ॥ वसुदेवस्तथाक्रूर उग्रसेनस्तथा नृप ॥ १३ ॥

सात्यकिके साथ विहार कर उररामको प्राप्त हुए ॥ ८ ॥ पहले द्वारपालोंने तपस्वियोंको श्रीकृष्णको क्रीडा करते देखकर निवृत्त कर रक्खा था अब समय देखकर वे तपस्वी सभामें प्रविष्ट हुए ॥ ९ ॥ वे दीर्घतपवाले यति तपोधन दुर्वासको आगे करके श्रेष्ठ मनवाले यादवेश्वरका दर्शन करते हुए ॥ १० ॥ जिनके हाथमें क्रीडा करनेका पास विद्यमान है पद्मपत्रकी समान विशाललोचन विष्णु और सात्यकिको देखा ॥ ११ ॥ एक ओर दृष्टिसे प्रसन्न करके दूसरे ओर गोलकको देखते वे महातपस्वी श्रीकृष्णको देखते हुए ॥ १२ ॥ वृष्णिपति पुण्डरीकाक्ष सात्यकि बलभद्र वसुदेव अक्रूर राजा उग्रसेन ॥ १३ ॥

औरभी दूसरे यादव उन्हें देख आश्चर्यको प्राप्त हो कहने लगे यह क्या ऐसे सब मनमें भ्रान्त हो कहने लगे ॥ १४ ॥ तीनों जगदको रंग करनेमें समर्थ दुर्वासाके पीछे अनेक ऋषि जपन करने लगे अर्धकौपीन कण्वाले स्मरण करनेवाले किसी द्विजको देख ॥ १५ ॥ जो कि अन्तरके तापसे युक्त छिन्न दण्ड धारण किये यति जो कि रोषसे अन्तरमें प्रज्वलित हो रहे थे कारण कि हंसके द्वारा उनको बड़ा कश्मल आनकर प्राप्त हुआ था ॥ १६ ॥ नेत्रमें उठी हुई महाअग्निसे यादवेश्वरको देखने लगे तब सब यादव जीत हो दुर्वासाको देखने लगे ॥ १७ ॥ यह दुर्वासा क्रोध कर क्या कहेंगे और अन्ये च यादवाः सर्वे संप्रभं प्रतिपेदिरे ॥ इदं किमिदमित्येवं व्याशङ्कमानसोऽभवन् ॥ १४ ॥ पृष्ठतोऽप्यनुगच्छन्ति दिक्क्षन्तं जगत्रयम् ॥ अर्धकौपीनवसनं स्मरन्तं कमपि द्विजम् ॥ १५ ॥ अन्तस्तापसमायुक्तं छिन्नदण्डधरं यतिम् ॥ अन्तर्ज्वलन्तं रोषेण हंसासादितकल्मषम् ॥ १६ ॥ नेत्रोत्थितमहावह्निं प्रेक्षन्तं यादवेश्वरम् ॥ दुर्वाससं ते ददृशुर्भीता यादवसत्तमाः ॥ १७ ॥ किं करिष्यत्यसौ क्रुद्धः किं वा वक्ष्यति नः प्रभुः ॥ इति प्राञ्जलयः सर्वे यादवाः प्रतिपेदिरे ॥ १८ ॥ इदमासनमित्येवं किंचिदुचुश्च वृष्णयः ॥ ततः कृष्णो हृषीकेशः किंचिदुत्प्लुत्य तत्पुरः ॥ १९ ॥ इदमासनमित्येवं स्थायितामिह निर्वृतः ॥ अहमद्य स्थितो विप्र किंकरोऽस्मीति चाब्रवीत् ॥ २० ॥ ततः किंचिदिवासीन आसने यतिविग्रहः ॥ आसने संस्थिते तस्मिन्यतयो वीतमत्सराः ॥ २१ ॥ आसनानि यथायोगं भेजिरे निर्वृताः फिल ॥ अर्धादिसमुदाचारं चक्रे कृष्णः किरीटभृत् ॥ २२ ॥ आह भूयो हृषीकेशो यति दुर्वाससं प्रभुम् ॥ किमर्थं ब्रूहि विप्रेन्द्र अस्मिन्प्रत्यागमो हि वः ॥ २३ ॥

हमारे प्रभु क्या करेंगे इस प्रकार हाथ जोड़कर सम्पूर्ण यादव स्थित हुए ॥ १८ ॥ कोई कोई वृष्णिवंशी कहने लगे यह आसन है विराजिते तब हृषीकेश श्रीकृष्णजी कुछ आगे बढ़कर वाले ॥ १९ ॥ यह आसन है इसपर सुस्तसे बैठिये और मैं आपकी आज्ञामें स्थित हूं क्या कहूं ॥ २० ॥ तब वह दुर्वासा कुछेक आसनपर बैठते हुए, जब वे आसनपर बैठ गये तब दूसरे यतिभी ॥ २१ ॥ यथायोग्य अपने आसनोंपर बैठते हुए तब श्रीकृष्णने सब अर्वाधिका आचार किया ॥ २२ ॥ फिर हृषीकेश दुर्वासा ऋषिसे कहने लगे. हे विप्रेन्द्र ! कहिये इस समय आप कैसे पधारे हैं ॥ २३ ॥

इसमें मैं कोई बड़ा कारण आपकी दृष्टिसे देखता हूँ, हे द्विजभेठो ! आप पापरहित संन्यासी हो ॥ २४ ॥ हे द्विजभेठो ! आप सदा स्पृहारहित हो आपको कोई इच्छा न होनेसे कुछ प्रार्थनाभी नहीं है ॥ २५ ॥ स्पृहासे प्रेरित कर्मबाले क्षत्रियोंके निकट आते हैं, हे विप्र ! हमसे निरूपणीय कोई वस्तु नहीं है ॥ २६ ॥ हे ब्रह्मन् ! आपके आगमनकारण जाननेकी मुझे बड़ी अभिलाषा है परन्तु इतना अनुमान करता हूँ कि इसमें कुछ कारण है ॥ २७ ॥ सो आप कहिये यह हम आपसे जाननेकी इच्छा करते हैं चक्रपाणि जनार्दनके ऐसा कहने पर ॥ २८ ॥ उन ब्राह्मणभेठको बड़ा क्रोध दृष्टं वा ह्यथवा किंचित्कारणं चास्ति वो महत ॥ संन्यासिनो द्विजश्रेष्ठा यूयं विमतकल्मषाः ॥ २४ ॥ निस्पृहाश्च सदा यूयमस्मत्तो द्विजपुङ्गवाः ॥ प्रार्थ्यं नाम न चेवास्ति स्पृहा नैवास्ति वो यतः ॥ २५ ॥ स्पृहाप्रेरितकर्माणः क्षत्रियान् यान्ति सुव्रताः ॥ निरूप्यमाणमस्माभिर्विप्र किंचिन्न दृश्यते ॥ २६ ॥ न जाने कारणं ब्रह्मन्युष्मदागमनं प्रति ॥ एतावता चानुमेयं किंचित्कारणमस्ति वै ॥ २७ ॥ तद्ब्रूहि यदि विद्येत त्वत्तो ज्ञास्यामहे वयम् ॥ इत्युक्त्वाति देवेशे चक्रपाणौ जनार्दने ॥ २८ ॥ तस्यापि राजन्विप्रस्य भूयः कोपो महानभूत् ॥ तस्मादभ्यधिकः पूर्वात्कोपः संजायते महान् ॥ २९ ॥ दिधक्षन्निव लोकांस्त्रीन् भक्षयन्निव पश्यतः ॥ रोषरक्तेक्षणः क्रुद्धो इसन्निव दक्षन्निव ॥ ३० ॥ उषाच्च वचनं विष्णुं दुर्वासाः क्रोधमूर्च्छितः ॥ न जाने इति कस्मात्त्वं ब्रूवे नो यादवेश्वर ॥ ३१ ॥ जानामि त्वां महादेवं वञ्चयन्निव भाषसे ॥ पुरातना वयं विष्णो पूर्ववृत्तान्तवेदिनः ॥ ३२ ॥ यथा हि देवदेवोऽसि मायामानुषदेहवान् ॥ निगूढसे प्रभुरतः कस्मान्नो जगतीपते ॥ ३३ ॥

बड़ा और गहलेसेभी अधिक क्रोध बढ़ने लगा ॥ २९ ॥ तीनों लोकको जलाते हुएसे और देखनेसे ज्ञात करने हुएसे रोषसे लालनेत्र कर हैंसते और जलाते हुएसे ॥ ३० ॥ क्रोधसे मूर्च्छित हो दुर्वासा विष्णु जनवान्से बोले, हे यादवेश्वर ! यह आप किस प्रकारसे कहते हैं कि हम नहीं जानते ॥ ३१ ॥ मैं तुम महादेवको जानता हूँ आप वंचना करते हुए इस प्रकारसे वचन कहते हो ॥ ३२ ॥ आप देवदेव मायसे मनुष्यका शरीर धारण कर आये हो, हे जनपते ! फिर आप हमसे किस कारण छिपाव करते हो ॥ ३३ ॥

ह. वं.
अ. ३६ ॥

आप ब्रह्मविद पुरुषोंकी मूर्ति हो, यही आपका परम पद है जिसे पहले ब्रह्माने अर्चन किया और जिसको पहले हमने जाना ॥ ३४ ॥
जिससे यह सब संसार हुआ है वही आप परम पद हो जिसको तत्त्वज्ञानी स्थूलरूपज्ञी जानते हैं ॥ ३५ ॥ जिसको पुरातनविद
ऐसा जानते हैं वही यह परम शरीर है जो कर्मसेही प्राप्त है, जिसको स्मरण कर हम शान्त होते हैं ॥ ३६ ॥ जिस प्रत्यक्ष हुए रूपकोभी मनुष्य
नहीं जानते हैं, न मूढबुद्धि और न हमही जिसको यथार्थतासे जानते हैं ॥ ३७ ॥ हम नहीं जानते हैं आप ऐसे साहसके वचन कैसे कहते हो, जो
सोऽसि ब्रह्मविदां मूर्तिस्तवेतत्परमं पदम् ॥ यदभ्यर्च्य पुरा ब्रह्मा यच्च ज्ञाना वयं पुरा ॥ ३४ ॥ यतो विश्वमिदं भूतं तदेतत्परमं पदम् ॥
यच्च स्थूलं विजानन्ति पुरा तत्त्वेन चेतसा ॥ ३५ ॥ पुराविदोऽथ विश्वेश तदेतत्परमं वपुः ॥ कर्मणा प्राप्यते यत्तु यत्स्मृत्वा
निर्वृता वयम् ॥ ३६ ॥ ॥ प्रत्यक्षमापि यद्रूपं नैव जानन्ति मानुषाः ॥ न हि मूढधियो देव न वयं तादृशा हरे ॥ ३७ ॥ न जाने
इति यद्वेषे किमतः साहसं वचः ॥ ये हि मूलं विजानन्ति तेषां तु प्रविवेचनम् ॥ ३८ ॥ कुर्वतः किं फलं देव त्व केशिनिषूदन ॥
वेदान्ते प्रथितं तेजस्तव चेदं विचार्यते ॥ ३९ ॥ ये च विज्ञानतृप्तास्तु योगिनो वीतकल्मषाः ॥ पश्यन्ति हृत्सरोजेऽपि तदेवेदं वपुः
प्रभो ॥ ४० ॥ वेदेयं द्वीयते तेजो ब्रह्मेति प्रतिपाद्य वै ॥ तदेवेदं विजानेऽहं रूपमेऽक्षरमेव च ॥ ४१ ॥ वैष्णवं परमं तेज इति
वेदेषु पठ्यते ॥ अवगच्छाम्यहं विष्णो तदेवेदं वपुस्तव ॥ ४२ ॥ य ओमित्युच्यते शब्दो यस्य वागिति गीयते ॥ स एवासि प्रभो
विष्णो न जाने इति मा वद ॥ ४३ ॥

मूलको जानता है उसका विचार कैसा ॥ ३८ ॥ हे देव ! हे केशिनिषूदन ! इस प्रकार आपका वेदान्तमें कथित तेज विचारा जाता है ॥ ३९ ॥
जो पापरहित योगी वेदान्तमें तृप्त हैं वह अपने हृदयकमलमें आपका दर्शन करते हैं ॥ ४० ॥ जो वेदोंमें माया जाता है जो ब्रह्मसे प्रतिपादित होता
है उसी ईश्वरके रूपको हम जानते हैं ॥ ४१ ॥ वैष्णवही परम तेज है ऐसा वेदोंमें पढ़ा जाता है ! हे विष्णो ! हम उसी आपके रूपके जाननेकी
इच्छा करते हैं ॥ ४२ ॥ जिसको उ० कहते हैं और वाक् (वाणी) कहते हैं वही आप प्रभु विष्णु हो हम नहीं जानते ऐसा मत कहो ॥ ४३ ॥

ता. ध.

प. ३ अ. ११४

॥ ३६ ॥

जो कुछ तुमसे परोक्ष हो तो यह कह सकते हैं, हम नहीं जानते. हे गोविंद ! ऐसा मत कहो ॥ ४४ ॥ जिससे वह विश्व उदय हुआ है और बित्तमें लय हो जाता है हे केशव ! उसी तुम्हारे इस वैष्णव तेजके जाननेकी इच्छा करता हूं ॥ ४५ ॥ तुम सब जगत्के कर्ता भूतमन्त्रके पति हो सदा हृदयमें दीखते हो जो आपको स्मरण करते हैं ॥ ४६ ॥ हे विष्णो ! मेरी बुद्धिमें वायु विष्णु है जब वह ध्यान होता है. हे विष्णो ! तब वही रूप मेरे हृदयमें स्थिति करता है ॥ ४७ ॥ कभी आकाशही विष्णु है ऐसा ध्यानमें आता है तब वही रूप हृदयमें स्थित होता है ॥ ४८ ॥ कभी यह

परोक्षं यदि किञ्चित्स्यात्तव वक्तुं प्रयुज्यते ॥ न जाने इति गोविन्द मा वादीः साहसं हरे ॥ ४४ ॥ विद्वं यदा प्रादुरासीद्यस्मिंल्लीनं क्षये सति ॥ इदं तदैश्वरं तेजस्त्ववगच्छामि केशव ॥ ४५ ॥ कर्ता त्वं भूतमन्त्रेश प्रतिभासि सदा हृदि ॥ यद्यद्रूपं स्मरेन्नित्यं तत्तदेवासि मे हृदि ॥ ४६ ॥ वायुरेव यदा विष्णुरिति मे धीयते मतिः ॥ तदा तद्रूपमेवासि हृन्मध्ये संस्थितो विभो ॥ ४७ ॥ आकाशो विष्णुरित्येव कदाचिद्धीयते मतिः ॥ तदा तद्रूपमेवासि हृन्मध्ये संस्थितो विभो ॥ ४८ ॥ पृथिवी विष्णुरित्येतत्कदाचिद्धीयते मतिः ॥ तदा पार्थिवरूपस्त्वं प्रतिभासि सदा मम ॥ ४९ ॥ रसोऽयं देव इत्येव कदाचिच्चिन्त्यते मया ॥ तदा रसात्मना विष्णो हृन्मध्ये संस्थितो विभो ॥ ५० ॥ यदा त्वं तेज इत्येवं स्मर्ता स्यां पुरुषोत्तम ॥ तदा तद्रूपसंपन्नः प्रतिभासि सदा हृदि ॥ ५१ ॥ चन्द्रमा हरिरित्येवं तदा चान्द्रमसं वपुः ॥ निरीक्ष्य चक्षुषा देव ततः प्रीतोऽस्मि केशव ॥ ५२ ॥ यदा सौरं वपुरिति स्मर्ता स्यां जगतीपते ॥ तदा तद्भावनायोगात्सूर्य एव विराजसे ॥ ५३ ॥

मध्यमें आता है ॥ पृथ्वीही विष्णु है तब तुम हमको पार्थिवरूप दीखते हो ॥ ४९ ॥ कभी आपको मैं रसरूपसे विचार करता हूं तब आपको मैं रसरूप देखता हूँ ॥ ५० ॥ हे पुरुषोत्तम ! जब आकाश और तेजस्वरूपसे आकाश ध्यान करता हूं तब वही रूप मेरे हृदयमें दीखने लगता है ॥ ५१ ॥ जब आपको चन्द्रमारूपसे विचार करता हूं तब आप चन्द्रमारूपसे दीखते हो. हे देव ! इस प्रकार आपको देख मैं प्रसन्न होता हूँ ॥ ५२ ॥ हे जगतीपते ! जब आपको सूर्यरूपसे विचार करता हूं, तब उसकी भावनासे सूर्यरूप दीखते हो ॥ ५३ ॥

ह. वं.
॥ २३७ ॥

इस कारण सर्वत्र तुमही हो यह मेरी निश्चित मति है. हे जनार्दन ! हम नहीं जानते ऐसी बात आप मत कहो ॥ ५४ ॥ हे विष्णो ! सर्वत्र होकर आप हमारे दुःखको क्यों नहीं जानते हे विष्णो ! हम अत्यन्त दुःखी होकर आपके निकट आये हैं ॥ ५५ ॥ हे केशव ! आप ऐसी हमारी दशाको क्यों नहीं स्मरण करते हो हमारा भगवद्गीता नष्ट हुआ है यह हम विचार करते हैं ॥ ५६ ॥ हे भगवन् ! जो हमारा भगवद्गीता नष्ट है जो आप हमको भूत नये हो कोई क्षत्रिय कुमार शिवके वरदानसे नर्तित हुए ॥ ५७ ॥ हंस और बिलक नामवाले हमको बाधा देते हैं. हे केशव ! गृहस्थही सर्वभूत है तस्मात्सर्वत्वमेवास्मि निश्चिता मतिरीदृशी ॥ अतो न जानेऽहमिति वक्तुं नेशो जनार्दन ॥ ५८ ॥ इत्यर्थे संस्थितो विष्णो पीडां नो नैव चिन्तयसे ॥ अत्यन्तदुःखिता विष्णो वयं त्वामनुसंस्थिताः ॥ ५९ ॥ ईदृशीयमवस्था नो नेता स्मरसि केशव ॥ एतत्पुनर्भाग्यमतो नष्टमित्येव चिन्तये ॥ ६० ॥ मन्दभाग्या वयं विष्णो यतो नो न स्मरेः प्रभो ॥ कोचित्क्षत्रियदापादौ गिरिशवरगर्वितौ ॥ ६१ ॥ नाम्ना हंसडिम्भकौ च बाधेते नो जनार्दन ॥ गर्हस्थ्यं हि सदा श्रेयो वदन्ताविति केशव ॥ ६२ ॥ इतस्ततश्च धावन्तो वदन्तो बहु किल्बिषम् ॥ अयुक्तं बहु भाषन्तो वर्षयन्तो च नः सदा ॥ ६३ ॥ इदमन्यत्कृतं देव असह्यं पापमुच्यते ॥ पश्येत् बहुधा देव भिन्नं भिन्नं सहस्रशः ॥ ६४ ॥ शिष्यं च दारवं पात्रं द्विदलान्घेणुकान्वहन् ॥ इदमप्यपरं पश्य तयोः साहसचेष्टितम् ॥ ६५ ॥ कौपीनं बहुधा च्छिन्नं तदस्माकं महद्दणम् ॥ कृतं कपालमात्रेण कमण्डलु जगत्प्रभो ॥ ६६ ॥

यह वह कहते हैं ॥ ५८ ॥ इधर उधर धावमान होते बड़े दुर्वाक्य कहते थे, औरभी अनेक अयुक्त वचन कह सदा हमारी वर्षणा करते हैं ॥ ५९ ॥ हे देव ! यह और असह्य पाप उनका है आप देखिये कि हमारे पात्रोंके सहस्रों खण्ड कर दिये हैं ॥ ६० ॥ शिष्य काष्ठ पात्र द्विदल वेणु यह खण्ड २ कर दिये यह आप उनकी दूसरी साहस चेष्टा स्मरण कीजिये ॥ ६१ ॥ हमारी महापण कौपीनभी

छेदन कर दी है. हे जगत्प्रभो ! हमारा कमण्डलु तोड़कर कपाल मात्र कर दिया है ॥ ६२ ॥ आप क्षात्रव्रतमें स्थित हुए नित्य हमारी रक्षा करते हो. हे देव ! यह बड़ा आश्चर्य है. प्रतिदिन हमारी रक्षा करते हो ॥ ६३ ॥ हे प्रभो ! हम मंदात्मा मंदाग्नि हैं क्या करें. हे जगत्प्रभो ! कहिये आपके शिवाय हम किसकी शरण जायें ॥ ६४ ॥ यदि वे जाते रहे तो त्रिलोकी नष्ट हो जायगी, न ब्राह्मण न राजा न वैश्य न शूद्र कोई न रहेंगे ॥ ६५ ॥ वे दोनों अत्यन्त बलि तीक्ष्ण दण्ड धरनेवाले हैं उनके आगे सब होनेको देवता और इन्द्र समर्थ नहीं है ॥ ६६ ॥ न भीष्म न राजा

त्वं तु नो क्षरसे नित्यं क्षात्रं वै व्रतमास्थितः ॥ चित्रं चित्रमिदं देव रक्षस्यपि सदानिश्रम् ॥ ६३ ॥ किं करिष्यामि मंदात्मा मंदाग्निः कथं विभो ॥ किन्नः शरणमद्येष तद्बहि जगतां पते ॥ ६४ ॥ जीवन्तो तो यदि स्यातां नष्टा लोका इमे त्रयः ॥ न विप्रा न च राजानो न वैश्या न च पादजाः ॥ ६५ ॥ अत्यन्तबलिनो मत्तो तीक्ष्णदण्डधरो नृप ॥ न तयोः पुरतः स्यातुं शक्ता देवाः सवासवाः ॥ ६६ ॥ न च भीष्मो न वा राजा बाल्हीको भीमविक्रमः ॥ यो हि वीरो जरासन्धः क्षत्रियाणां भयंकरः ॥ ६७ ॥ नैव च प्रायशः स्यातुं गिरीश्वरदर्पिणोः ॥ तयोः कृष्ण इरे शक्तो नित्यमप्रतिसङ्गिनोः ॥ ६८ ॥ तस्मात्त्वं जहि तो वीरो रक्ष लोकानि मान्प्रभो ॥ अन्यथा रक्षसीत्येवं व्यर्थः शब्दोऽत्र जायते ॥ ६९ ॥ बहुनात्र किमुक्तेन रक्ष रक्ष जगन्नयम् ॥ इत्युक्त्वा विररामेव दुर्वासाः क्रोधमूर्च्छितः ॥ ७० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसदिग्भकोपाख्याने दुर्वासाः समानमो नामैकादशाधिक-शततमोऽध्यायः ॥ १११ ॥

पराक्रमी बाल्हीक कोई ऐसा बलि नहीं जो वीर जरासन्ध क्षत्रियोंको भय देनेवाला है ॥ ६७ ॥ वहही शिवके वरसे अधिमानवाले उनके समाने सदा नहीं हो सकता है. हे कृष्ण ! उन सदा संगति करनेवालोंके सामने आपही समर्थ हैं ॥ ६८ ॥ हे प्रभो ! इस कारण आप इन दोनोंको मारकर जगत्प्रभो की रक्षा करो नहीं तो रक्षा करनेका शब्द तुममें वृथा हो जायगा ॥ ६९ ॥ बहुत कहनेसे क्या है आप त्रिलोकीकी रक्षा कीजिये क्रोधमूर्च्छित दुर्वासा यह कहकर मौन हुए ॥ ७० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसदिग्भकोपाख्याने दुर्वासाः समानमो नामैकादशाधि-

क्याततबोऽप्यायः ॥ १११ ॥ वैसंपायन बोले, इस प्रकार दुर्वासाके वचन सुनकर श्रीकृष्ण कुछ दीर्घनिश्वास ले दुर्वासाको देखकर यादवेश्वर कहने लगे ॥ १ ॥ यह सब हमाराही दोष है आत इसको क्षमा करिये, आप हमारे वचन सुनकर शान्त हुईजिये ॥ २ ॥ हे विप्र ! उन इंस और विप्रकको मैं युद्धमें जीतना चाहे उनको गिरीश वा कुबेर किसीने वर क्यों न दिया हो ॥ ३ ॥ यम कृष्ण चाहें चतुर्मुख ब्रह्मासे क्यों न वर पाये हों मैं उन दोनोंको सेनासहित मारकर तुमको प्रसन्न करूंगा ॥ ४ ॥ आप इस बातमें क्रोध न करें मैं सत्यकी सौगन्ध कर कहता हूं उन दोनों नृपाधमोंको मारकर मैं

वैशम्पायन उवाच ॥ यत्तेर्वचनमाकर्ण्य मन्दमुच्छस्य केशवः ॥ दुर्वाससं समालोक्य बभाषे यादवेश्वरः ॥ १ ॥ क्षन्तव्यं भवता सर्वं दोष एव ममेव हि ॥ शृणु वाक्यं ममेतत्तु श्रुत्वा क्षान्तिपरो भव ॥ २ ॥ जेष्यामि तो रणे विप्र इह ॥ विष्मकमेव च ॥ निरीक्षो वा वरं दद्याच्छक्रो वा घनदोऽपि वा ॥ ३ ॥ यमो वा वरुणो वापि ब्रह्मा वाथ चतुर्मुखः ॥ सबलो सानुजो इत्वा पुनर्दास्यामि वो रतिम् ॥ ४ ॥ सत्येनैव ज्ञापाम्यद्य मा रोषवशमो भव ॥ रक्षां वोऽहं करिष्यामि इत्वा तो च नृपाधमो ॥ ५ ॥ जानामि तो दुरात्मानो युष्मद्दोषकरो हि तो ॥ श्रुतं च पूर्वमस्माभिस्तद्विषण्दण्डधराविति ॥ ६ ॥ अत्यन्तबलिनो मत्तो निरीक्षवरदर्पितो ॥ नारुपप्रयत्नसंसाध्यो जरासन्धहितैषिणो ॥ ७ ॥ प्राणानपि तयो राजा दास्यत्येव न संशयः ॥ जरासंधो महीपालो विना तो जयते महीम् ॥ ८ ॥ जये तयोर्विप्रवर्यं तत्र श्रेयो भवेत्ततः ॥ यत्र यत्र तु तौ गत्वा स्थितावित्यनुशुश्रुम ॥ ९ ॥

तुम्हारी रक्षा करूंगा ॥ ५ ॥ तुम्हारे साथ द्वेष करनेवाले उन दुरात्माओंको मैं जानता हूं मैंने उनके तीक्ष्ण दंडकी बार्ता पहले सुन ली है ॥ ६ ॥ वे दोनों बड़े बड़ी मत्त शिवके वरदानसे गर्वित हैं और जरासंधके हितकारी होनेसे थोड़े प्रयत्नसे साध्य नहीं हो सके हैं ॥ ७ ॥ राजा उनको अपने प्राणतक दे देगा इसमें संशय नहीं राजा जरासंध उनकी सहायताके बिनाही पृथ्वी जीत सकता है ॥ ८ ॥ हे विप्रभेठो ! उनके जीतनेमें भी मंगल होगा, हमने सुना है कि जहां जहां जाकर स्थिति करेंगे ॥ ९ ॥

वहीं वहीं मैं उनका वध करना इसमें सन्देह नहीं, हे यतियो ! आप स्वच्छन्दतासे जाकर अपना कार्य करो ॥ १० ॥ शीघ्रही उन युद्ध करनेवालोंको मैं जीतूँगा तब यादवेश्वरसे प्रसन्न हो वह कहने लगे ॥ ११ ॥ जगत्का मंगल करनेवाले कृष्ण ! आपकी जय हो, हे जगन्नाथ केशव ! आपको जगत्में दुस्साध्य क्या है ॥ १२ ॥ आप त्रिलोकीके अधिपति त्रिधामा हो सब संहारके करनेवाले हो आप देवताओंकेभी देवता सर्वत्र समदृष्टि हो ॥ १३ ॥ हे विष्णो देव ! हे चक्रपाणि कृष्ण ! आपको नमस्कार है, स्वभावशुद्ध शुद्ध नियमित आपके निमित्त नमस्कार है ॥ १४ ॥ हे शब्दगोचर देवेश भक्त-

सत्र तत्र च इन्तर्हं नात्र कार्या विचारणा ॥ गच्छध्वं यतयः स्वेन निजकार्यपरायणाः ॥ १० ॥ अचिरेणैव कालेन जेष्यामि रणपु-
द्गवौ ॥ ततः प्रीतः प्रसन्नात्मा यादवेश्वरमह सः ॥ ११ ॥ स्वस्त्यस्तु भवते कृष्ण जगतां स्वास्ति कुर्वते ॥ किञ्च नाम जगन्नाथ
दुःसाध्यं तव केशव ॥ १२ ॥ त्रिलोकेश त्रिधामासि सर्वसंहारकारकः ॥ देवानामपि देवेश सर्वत्र समदर्शनः ॥ १३ ॥ विष्णो देव
हरे कृष्ण नमस्ते चक्रपाणये ॥ नमः स्वभावशुद्धाय शुद्धाय नियताय च ॥ १४ ॥ शब्दगोचर देवेश नमस्ते भक्तवत्सल ॥ अज्ञा-
नादथवा ज्ञानाद्यन्मयोक्तं क्षमस्व तत् ॥ १५ ॥ त्वमेवाहं जगन्नाथ नावयोरन्तरं पृथक् ॥ अतः क्षमस्व भगवन्क्षमासारा हि
साधवः ॥ १६ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ श्रुन्तव्यं भवता विप्र क्षमासारा वयं सदा ॥ संन्यासिनः क्षमासाराः क्षमा तेषां परं बलम् ॥ १७ ॥
क्षमा मोक्षकरी नित्यं तत्त्वज्ञानमिव द्विज ॥ क्षमा धर्मः क्षमा सत्यं क्षमा दानं क्षमा यशः ॥ १८ ॥ क्षमा स्वर्गस्य सोपानमिति
वेदविदो विदुः ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन क्षमां पालयत स्वकाम् ॥ १९ ॥

वत्सल ! आपके निमित्त नमस्कार है जो ज्ञानसे वा अज्ञानसे मैंने कहा है सो क्षमा करो ॥ १५ ॥ हे जगन्नाथ ! तुम मैं एकही हूँ हममें आपमें
अन्तर नहीं है इस कारण हे भगवन् ! क्षमा करो, साधु क्षमावाले होते हैं ॥ १६ ॥ श्रीभगवान् बोले, हे विप्र ! आपही क्षमा करो तुम क्षमासारवाले
हो संन्यासी क्षमासारवाले होते हैं उनका क्षमाही परम बल है ॥ १७ ॥ हे द्विज ! तत्त्वज्ञानकी समान क्षमा नित्य मोक्ष करनेवाली है, क्षमा धर्म सत्य
सत्य क्षमा दान और क्षमा यश है ॥ १८ ॥ क्षमाही स्वर्गकी सीढ़ी है ऐसा वेदवादी कहते हैं इस कारण सब प्रयत्नसे तुम क्षमाकी पालना करो ॥ १९ ॥

ह. वं.
॥ २३९ ॥

तुम सम्पूर्ण यतीश्वर प्रत्यक्ष ज्ञानसे युक्त हो जोही यति है वह मुझे सदैव पूजने चाहिये ॥ २० ॥ यति ब्राह्मण भिक्षुओंको सदा भोजन देना चाहिये, सो आप सब हमारे यहां भोजन कीजिये, बहुत अच्छा यह वचन कह उन सबने नारायणके स्थानमें भोजन करनेकी इच्छा की ॥ २१ ॥ तब हारे ईश्वर अपने भवनमें प्रवेश कर चार प्रकारके भोजन विधिपूर्वक कराकर ॥ २२ ॥ सत्कारपूर्वक उन यतियोंको भोजन कराते हुए और देवेशने कह उनके वस्त्र फटे अलग कराए नवीन वस्त्र दिये ॥ २३ ॥ हे जनमेजय ! इस प्रकार सबको भोजन दिया वस्त्र दिये वह यथायोग्य प्रसन्न हो अपने २ स्थानोंको प्रत्यक्षज्ञानसंयुक्ता यूयं सर्वं यतीश्वराः ॥ य एते यतयो विप्राः पूजनीया मयाद्य वै ॥ २० ॥ भोक्तव्या यतयो विप्रा भिक्षुकाः सर्व एव हि ॥ तथेति ते प्रतिज्ञाय भोक्तुमेच्छन्हरेर्गृहे ॥ २१ ॥ ततः स्वभवनं विष्णुः प्रविश्य हरिरीश्वरः ॥ चतुर्विधं तथाहारं कारयित्वा यथाविधि ॥ २२ ॥ भोजयामास तान्सर्वान्यतीन्यतिवराचितः ॥ छित्वा छित्वा च देवेशो दुकूलानि मृदूनि सः ॥ २३ ॥ ददौ तेभ्यस्तदा विष्णुः सर्वेभ्यो जनमेजय ॥ ते च प्रीता यथायोगं यथापूर्वं ततो मताः ॥ २४ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपारुपाने यतिभोजनं नाम द्वादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ दुर्वासास्त्वय तत्रैव नारदेन महात्मना ॥ चिन्तयन् ब्रह्मणस्तत्त्वं विजहार यथासुखम् ॥ १ ॥ भगवानपि गोविन्दस्तयोर्वासममन्यत ॥ ततस्तौ हंसडिम्भकौ तस्मिन्काले महीपतिम् ॥ २ ॥ ब्रह्मदत्तं महीपालं पितरं वीर्यशालिनम् ॥ प्रागेचतामिदं वाक्यं समन्ताजनसंसदि ॥ ३ ॥ राजसूयं मक्ष्यज्ञं पितः कुरु सुयत्नतः ॥ अस्मिन्मासि नृपश्रेष्ठ यत्नवो यज्ञसिद्धये ॥ ४ ॥ मये ॥ २४ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपारुपाने यतिभोजनं नाम द्वादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११२ ॥ वैशम्पायन बोले, उस समय महात्मा नारदजीके साथ दुर्वासाजी ब्रह्मतत्त्वका विचार करते यथासुखसे विहार करने लगे ॥ १ ॥ भगवान् गोविन्दने भी उनको अपने यहां टिकवाया उस समय हंस और डिम्भक भी राजा ॥ २ ॥ ब्रह्मदत्त बड़े बलीसे जनसभामें इस प्रकारके वचन कहने लगे ॥ ३ ॥ हे पिताजी ! आप यत्नसे राजसूय यज्ञ करनेकी इच्छा करिये, हे राजन् ! इसी महीनेमें आप यज्ञ सिद्धिके निमित्त यत्न करिये ॥ ४ ॥

भा. टी.

प. २ अ. ११३

॥ २३९ ॥

हे राजन् ! हम आपके निमित्त दिग्विजय करेंगे, हाथी घोड़े सेनासे युक्त हम जायेंगे ॥ ५ ॥ हे राजन् ! यज्ञसिद्धिके निमित्त सामान मँगवाइये बहुत अच्छा
 देना ब्रह्मदत्तने कहा ॥ ६ ॥ उस ब्राह्मण जनार्दनने उनका इस प्रकारसे साहस देसकर उसे अशक्य जानकर अपने निज हंससे कहा ॥ ७ ॥ हे हंस ! हमारे
 वचन सुनकर निश्चय करो, हे आयुष्मन् ! आप बड़ा साहस करनेको उद्यत हुए हैं ॥ ८ ॥ जब कि जरासंध भीष्म बाह्लीक तथा महावीर यादव
 स्थित हैं ॥ ९ ॥ और सत्यसंध जितेन्द्रिय महाबली भीष्मजी स्थित हैं जिन्होंने इक्षीस बार पृथ्वीका जय करनेवाले परशुरामको ॥ १० ॥

आवां तेऽद्य महाराज दिशां विजयतत्परो ॥ यतिष्यावो बलेः सार्द्धं गजेरश्वे रथोरपि ॥ ५ ॥ संभारा यज्ञसिद्धयर्थमानेतव्या नृपोत्तम ॥
 तथेति स महाबाहो ब्रह्मदत्तोऽब्रवीत्तदा ॥ ६ ॥ जनार्दनस्तु विप्रेन्द्रो दृष्ट्वा साहसतत्परो ॥ अशक्यमिति मन्वानो वयस्यं हंसम-
 ब्रवीत् ॥ ७ ॥ शृणु हंस वचो मह्यं श्रुत्वा निश्चित्य वीर्यवान् ॥ आयुष्मन्साहसं कर्तुमुद्यतोऽसि नृपोत्तम ॥ ८ ॥ स्थिते भीष्मे
 जरासंधे बाह्लीके च नृपोत्तमे ॥ किं च वीरेषु सर्वेषु यादवेषु नृपोत्तम ॥ ९ ॥ भीष्मो हि कृष्णान्वृद्धः सत्यसंधो जितेन्द्रियः ॥
 त्रिःसप्तकृत्वः पृथिवीं यो जिगाय भृगूत्तमः ॥ १० ॥ तं युद्धे जितवानभीष्मः सर्वज्ञस्य पश्यतः ॥ जरासन्धस्य यदीर्यं
 तद्गवान्नेति संयुगे ॥ ११ ॥ वृष्णिवीरास्तु ते सर्वे कृतास्त्रा युद्धदुर्मदाः ॥ तत्र कृष्णो हृषीकेशो जितशत्रुः कृती सदा ॥ १२ ॥
 जरासंधेन सहितः सदा युद्धे जितश्रमः ॥ प्रमुखे तस्य न स्थातुं शक्नो जीकनृपोत्तमः ॥ १३ ॥ बलभद्रस्तथा मत्तः क्रुद्धो यदि
 भवेद्बली ॥ लोकानिमान्समादर्तुं शक्नोतीति मतिमर्म ॥ १४ ॥

सब क्षत्रियोंके देखते युद्धमें जीत लिया जो जरासंधका वीर्य है वह आप युद्धमें जानतेही हैं ॥ ११ ॥ इधर सब वृष्णिवंशी कृतास्त्र और युद्धमें दुर्मद
 हैं उनके अधिपति कृष्ण शत्रुओंके जीतनेवाले महाक्षत्र हैं ॥ १२ ॥ जरासंधके साथही युद्धमें हम जीतनेवाले हैं उनके सामने कोई राजा स्थित
 हो जीवित नहीं रह सक्ते ॥ १३ ॥ और प्रमत्त बलराम यदि क्रुद्ध होतौ इन लोगोंको नष्ट कर सक्ते हैं यह मेरी बुद्धिमें आता है ॥ १४ ॥

इसी प्रकार वीर सात्यकि बुद्धमें शत्रुओंको जीत सकता है इसी प्रकार औरभी सब यादव कृष्णके आज्ञाबाले प्रबंध हैं ॥ १५ ॥ और हमारा यति-
 योंके साथ पहले विरोध हो चुका है और दुर्वासा यतियोंके साथ कृष्णको देखनेके निमित्त गये हैं ॥ १६ ॥ यह हमने गोजनकों आये हुए
 ब्राह्मणोंसे सुना है इसमें जैसे सिद्धि हो जैसे मंत्रियोंके साथ विचार कीजिये ॥ १७ ॥ पीछे राजसूय महायज्ञका अनुष्ठान करेंगे, इसने कहा
 मन्दात्मा हीनबल वृद्ध गौष्म कौन है ॥ १८ ॥ क्या वह बुद्ध हमारे सामने स्थित हो सकता है यह अत्यन्त आश्चर्यकी बात है कि हमारे सामने

तथा च सात्यकिर्वीरः शक्तो जेतुं रणे रिपून् ॥ तथान्ये यादवाः सर्वे कृष्णमाश्रित्य दंशिताः ॥ १५ ॥ अस्माभिश्च कृतः पूर्वं
 विरोधो यतिभिः सह ॥ दुर्वासा यतिभिः सार्धं गतो द्रष्टुं स केशवम् ॥ १६ ॥ इति श्रुतं नृपश्रेष्ठ ब्राह्मणाद्राहुमागतात् ॥ तथा
 सति यदा सिद्धयेतथा चिन्त्यं च मन्त्रिभिः ॥ १७ ॥ ॥ ततः पश्चाद्विधास्यामो राजसूयं महाक्रतुम् ॥ इंस उवाच ॥ को नाम
 भीष्मो मन्दात्मा वृद्धो हीनबलः सदा ॥ १८ ॥ आवयोः पुरतः स्थातुं शक्तः स किल वृद्धकः ॥ यादवा इति चित्रं न शक्ताः
 स्थातुं रणे द्विज ॥ १९ ॥ कश्च कृष्णः पुरः स्थातुं बलदेवश्च मत्तकः ॥ शैनेयश्चापि विप्रेन्द्र स्थातुं न इति चिन्तय ॥ २० ॥
 जरासन्धस्तु धर्मात्मा बन्धुरेव सदा मम ॥ मच्छ विप्र यदुश्रेष्ठं ब्रूहि मद्वचनात्स्वरन् ॥ २१ ॥ दीयतां करसर्वस्वं यज्ञार्थं सुन्दरं बहु ॥
 लवणानि बहून्यद्य मृग्य केशव मा चिरम् ॥ २२ ॥ आगच्छ त्वरितं कृष्ण न ते कार्यं विलम्बनम् ॥ इति ब्रूहि यदुश्रेष्ठं याहि
 त्वरितविक्रमः ॥ २३ ॥ न ब्रूयाश्चोत्तरं विप्र श्रपेयं त्वां प्रियोऽसि मे ॥ मित्रभावादिदं ब्रूहि पश्यामि त्वां पुनः पुनः ॥ २४ ॥

यादव स्थित हो सकते हैं ॥ १९ ॥ कौन कृष्ण और मत्त बलवान् कौन है, विप्रेन्द्र । कहीं सात्यकिभी हमारे सामने स्थित हो सकता है ॥ २० ॥
 धर्मात्मा जरासन्ध हमारा सदा बन्धु है, हे विप्र ! जाओ हमारे वचनोंसे यदुश्रेष्ठसे कहो ॥ २१ ॥ यज्ञके निमित्त हमको बहुतसा कर दे और बहुतसे
 लवणभी केशवसे ग्रहण करो ॥ २२ ॥ और वे कृष्ण यह लेकर बहुत शीघ्र आवे देर न करे ब्रूम जल्दी जाकर वह श्रीकृष्णसे कहो ॥ २३ ॥ हे
 विप्र । मैं तुमको अपनी सौगन्ध दिवाकर कहता हूँ कि इसमें प्रत्युत्तर न देना मैं तुमका बारंबार मित्रभावसे देखता हुआ कहता हूँ ॥ २४ ॥

ऐसे कहनेपर ब्राह्मणने कुछ उत्तर नहीं दिया. हे राजन् ! मित्रभाव और स्नेहसे कुछ न बोला ॥ २५ ॥ वह धर्मात्मा जनार्दन नित्य जानेकी इच्छा करता आज जाऊं कल जाऊं प्रतिदिन ऐसा कहता ॥ २६ ॥ संस चक्र गवा धारण करनेवाले देवके देखनेकी इच्छा करता ॥ २७ ॥ फिर प्रातःकाळ वह द्वारकापुरीके देखनेको शीघ्रतासे चक्र हरि कृष्ण हृषीकेशको मनसे स्मरण करता चला ॥ २८ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्य-
पर्वणि त्रयापां हंसार्जुनकोपाख्यानो त्रयोदशोऽध्यायः ॥ ११३ ॥ वैशंपायन बोले, तब वह हरिभक्त ब्राह्मण विष्णुके समीप चले. हे

इति संचोदितो विप्रो नोत्तरं प्रत्यभाषत ॥ मित्रभावात्तथा राजन् स्नेहाच्च जनमेजय ॥ २५ ॥ जनार्दनस्तु धर्मात्मा नित्यं गन्तुं
समुद्यतः ॥ अद्य श्वो वा परश्वो वा गच्छामीति यतेत सः ॥ २६ ॥ देवं द्रष्टुं जगद्योनिं संस्रवकगदाधरम् ॥ एक एव च धर्मात्मा
इयमारुह्य सत्वरम् ॥ २७ ॥ प्रातरेव जगामाशु द्रष्टुं द्वारवतीं द्विजः ॥ हरिं कृष्णं हृषीकेशं मनसा संस्मरन् द्विजः ॥ २८ ॥
इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसद्विम्बकोपाख्यानो त्रयोदशोऽध्यायः ॥ ११३ ॥
वैशंपायन उवाच ॥ ततः प्रायाद्धरिं विष्णुं ब्राह्मणो ब्रह्मवित्तमः ॥ इयेनेकेन राजेन्द्र त्वरितं स यथो नृप ॥ १ ॥ यथा निदाघसमये
सूर्याशुपरिपीडितः ॥ पाण्यो याति जलं दृष्ट्वा त्वरितं तत्पिपासया ॥ २ ॥ धावत्येव तथा विप्रो हरिं द्रष्टुं जनार्दनः ॥ गच्छन्स चिन्त-
यामास चोदयन् इयमुत्तमम् ॥ ३ ॥ हंस एव प्रियो मया कुर्यात् प्रियदितं मम ॥ तथाहि प्रेषितस्तेन हारं पश्याम्यहं प्रभुम् ॥ ४ ॥
अहमेव सदा धन्यो मत्तो ह्यभ्यधिको नहि ॥ यतो द्रक्ष्याम्यहं विष्णुं वसन्तं द्वारकापुरे ॥ ५ ॥

राजेन्द्र ! एक घोड़ेपर चढ़ वह बड़ी शीघ्रतासे चला ॥ १ ॥ जैसे गरमीके समय सूर्यकी किरणोंसे पीड़ित हुआ प्यासके कारण पथिक वृक्षके नीचे जाता हो ॥ २ ॥ इसी प्रकार यह ब्राह्मण हरिको देखनेको धावमान हुआ घोड़ेको प्रेरण कर जाता हुआ वह चिन्ता करने लगा ॥ ३ ॥ हंस मेरा प्रिय है सदैव मेरा प्रियहित करता है उसने मुझे अबभी नारायणके दर्शनके निमित्त प्रेरण किया है ॥ ४ ॥ मैं बड़ा धन्य हूं मुझसे अधिक कोई धन्य नहीं है जो कि मैं द्वारकापुरीमें निवास करते विष्णुका दर्शन करूँगा ॥ ५ ॥ फिर वह मेरी माताजी धन्य है जो फिर आये हरिका

दर्शन करेगी वह देवी इनको देखकर सर्वथा लतार्थ हो जायगी ॥ ६ ॥ खिले हुए कमलकी समान मुख उन शंस चक्र गदाधारी नारायणको देखूंगा ॥ ७ ॥ मैं नीलकमलकी समान कान्तिमात्र उन विष्णुका मुख देखूंगा शंस चक्र गदा और शार्ङ्ग धनुष्य तथा वनमालासे विभूषित ॥ ८ ॥ उनको और कमलकी समान खिले उनके नेत्रोंको मैं ज्वलीनत्मा देखूंगा इस समयमें दुःस्वप्नहित और शान्त हूं ॥ ९ ॥ वह योगात्मा अपनी सौम्य दृष्टिसे मुझको कैसे मे अथवा वह मेरा प्रिय कहकर स्वस्तिवाचन कहेंगे ॥ १० ॥ वह त्रिलोकीके जाननदायक चक्रधारीके शरीरका मैं दर्शन करूंगा अब उनके चरण-

सा हि मे जननी धन्या हरिं दृष्ट्वा पुनर्गतम् ॥ कृतार्थं सर्वदा देवी द्रक्ष्यत्येषा मनस्विनी ॥ ६ ॥ मुखमुन्निद्रहेमान्जकिञ्जल्कसदृशप्रभम् ॥ द्रक्ष्यामि देवदेवस्य चक्रिणः शार्ङ्गधनुषनः ॥ ७ ॥ वपुर्द्रक्ष्याम्यहं विष्णोर्नीलोत्पलदलच्छवि ॥ शङ्खचक्रगदाशार्ङ्गधनुषमालाविभूषितम् ॥ ८ ॥ नेत्रे ते देवदेवस्य पद्मकिञ्जल्कसप्रभे ॥ पद्म्याम्यहमदीनार्त्ता नष्टदुःखोऽस्मि निर्वृतः ॥ ९ ॥ अपि द्रक्ष्याति योगात्मा सोम्येनेव स्वचक्षुषा ॥ अपि वा मत्प्रियं ब्रूयात्स्वस्ति चेति च वा वदेत् ॥ १० ॥ द्रक्ष्यामि चक्रिणो वर्णं ततस्त्रिलोक्यसन्निभम् ॥ पादाब्जं चक्रिणो द्रष्टुं त्वरत्येष च मे मनः ॥ ११ ॥ वक्षःस्थलं सदा विष्णोः स्फुरद्रत्नप्रभायुतम् ॥ पश्यन्निव च गच्छामि स्मरंश्चानिष्कामीश्वरम् ॥ १२ ॥ पीतकौशेयवसनं लम्बहारविभूषितम् ॥ ईषत्स्मिताधरं विष्णुं पश्यामि च पुनः पुनः ॥ १३ ॥ स्मरतश्च हरे रूपं रोमदूर्ध्वोऽयमीदृशः ॥ गच्छतश्च पुरो भावि शङ्खचक्रगदासिमान् ॥ १४ ॥

कमल देखनेको मेरा मन शीघ्रता करता है ॥ ११ ॥ विष्णुका वक्षस्थल रत्नोंकी कान्तिसे सदा स्फुरायमान होता है मैं उसको देखता हुआ जाऊंगा और रातदिन स्मरण करूंगा ॥ १२ ॥ पीत रंगमीन वस्त्र धारण किये लम्बापमान हारसे विभूषित कुलेक मुस्कानवाले अधरयुक्त विष्णु भगवान्का चरण-चार दर्शन करूंगा ॥ १३ ॥ उनका रूप स्मरण करकेही मेरे रोमाञ्च होते हैं और चलते हुए मेरे आगे शंस चक्र गदा अति हाथमें लिये शोभित

होते हैं ॥ १४ ॥ वह जगदके गुरु देवदेव मेरे आगे चलते हुए दीखते हैं यह मेरी जिह्वा इनसे बोलनेको स्फुरायमान होती है ॥ १५ ॥ परन्तु कर दो यह वचन उनसे कहनाही महादुःखकारक है सो उस राजाके ऐसे वचन हैं यही महासाहस है ॥ १६ ॥ हे विष्णो ! हंसका कर दे यह उसकी आज्ञा मानकर निर्दय वचन कहना पड़ेगा और प्रभुके सन्मुख कहा जायगा ॥ १७ ॥ मैं मूर्खोंका अग्रणी निर्लज्जपुर्वक कैसे इस बातको कहूंगा कि, हे विष्णो यदुपुंगव ! आप हंसका कर दो ॥ १८ ॥ करमें आपको अनेक प्रकारके लक्षण देने चाहिये शार्ङ्गिके सन्मुख मैं यह यातीव च पुरो भाति मद्यं देवो जगद्गुरुः ॥ एषोऽयमिति मे वक्तुं जिह्वा प्रस्फुरतीव तम् ॥ १५ ॥ इदं दुःखतरं मन्ये करं देहीति मद्रचः ॥ इदं तत्साहसं मन्ये तद्वचस्तस्य भूषतेः ॥ १६ ॥ हंसस्य करदो विष्णुस्तदाज्ञापरिचारकः ॥ तस्य सर्वं पुरो मत्वा वक्ताहं किल निर्दयः ॥ १७ ॥ मूढानामग्रणीरस्मि निर्लज्जश्च तथा वदन् ॥ करं देहि हरे विष्णो हंसस्य यदुपुङ्गव ॥ १८ ॥ लवणानि बहून्याशु पातव्यानि करात्मना ॥ इति वक्तुं न मे वृत्तं पुरतस्तस्य शार्ङ्गिणः ॥ १९ ॥ तथापि मित्रभावात् वक्तव्यं घोरमीदृशम् ॥ कष्टो ह्ययं मित्रभावो मनुष्याणां कृतात्मनाम् ॥ २० ॥ अथवा सर्वविद्विष्णुः सर्वस्य हृदि संस्थितम् ॥ जानात्येव सदा भावं प्राणिनां शोभने रतः ॥ २१ ॥ तथा सति न मे दोषो मित्रभावो यतो ह्ययम् ॥ सर्वथा रक्षतां विष्णुघोरं वक्तुं यतस्य मे ॥ २२ ॥ द्रक्ष्याम्ययं जगन्नाथं नीलकुञ्चितमूर्द्ध्वधम् ॥ कम्बुग्रीवाधरं विष्णुं श्रीवत्साच्छादितोरसम् ॥ २३ ॥ स्फुरत्पद्ममहाबाहुं रत्नच्छायाविराजितम् ॥ द्रक्ष्यामि केशवं विष्णुं चक्रिणं यादवेश्वरम् ॥ २४ ॥

कहनेके योग्य नहीं हूँ ॥ १९ ॥ तथापि राजाके मित्रभावसे यह घोरवार्ता सुझे कहनी पड़ेगी कृतात्मा मनुष्योंका मित्रभावभी बड़े कष्टका देनेवाला है ॥ २० ॥ अथवा सबके जाननेवाले विष्णु सबके हृत्पमें स्थित हैं वह प्राणियोंके हितमें तत्पर सब प्रावोंको जानते हैं ॥ २१ ॥ मैं उस राजाकी मित्रतासे यह कहूंगा इसमें मुझको दोष न लगेगा सर्वथा इस घोर वचनसे विष्णु मेरी रक्षा करेंगे ॥ २२ ॥ नीले घुँघुरवाले वाक्से युक्त जगन्नाथका मैं दर्शन कलंगा जिनकी शंखकी समान गरदन विष्णुरूप जिनका हृत्प श्रीवत्साच्छादित है ॥ २३ ॥ स्फुरायमान कमलकी समान महाभुजा

रत्नोंकी कान्तिसे शोभित शंख चक्र मदाधारी केशवकों में दर्शन कहेगा ॥ २४ ॥ पूजनीय ऐश्वर्यवाले देव भूत भाविष्य वर्तमानके ज्ञाता अपनी इच्छासे जन्मदकी रक्षा करनेवाले जलशापीका ॥ २५ ॥ दर्शन कर सर्वथा मैं कृतार्थ होकर दुःखरहित ही जाऊंगा साक्षात् हरिको केवलकर मेरा जन्म सफल हो जायगा ॥ २६ ॥ हरिको साक्षात् कर आज मेरे पक्ष सफल हो जायमे जगन्मय विष्णुको देख वह मेरे नेत्र सफल होने ॥ २७ ॥ मैं सोर वचन कहूंगा तथापि विष्णु मेरे ऊपर प्रसन्न होने दोनों नेत्रोंसे भली प्रकार केवलकर मैं विष्णुकु दर्शन कहेगा ॥ २८ ॥ नवशित्तपर्वन्त मैं विष्णुको अचिन्त्यविभवं देवं भूतभव्यभवत्प्रभुम् ॥ आत्मेच्छया जगद्रक्षं द्रक्ष्यामि जलशायिनम् ॥ २९ ॥ कृतार्थः सर्वथा चाहं भवामि विगतज्वरः ॥ अद्य मे सफलं जन्म साक्षाद्भवतो हरिम् ॥ ३० ॥ अद्य मे सफला यज्ञाः साक्षात्कृतवतो हरिम् ॥ नेत्रे मे सफले विष्णुं पश्यतश्च जगन्मयम् ॥ ३१ ॥ प्रीतिमानस्तु मे दिष्णुर्वेत्तुर्घोरस्य कर्मणः ॥ उन्मिषन्नेत्रयुग्मेन द्रक्ष्यामि सकृदीश्वरम् ॥ ३२ ॥ आमूलमसकृद्विष्णुं पश्यामि च पुनः पुनः ॥ पिबामि नेत्रयुग्मेन वपुः कृष्णस्य केशलम् ॥ ३३ ॥ चारयिष्याम्यहं पाशुं तत्पक्षप्रभवं शिवम् ॥ ततः कृतार्थतां यास्ये स्वर्गमार्गो हि तद्रजः ॥ ३४ ॥ मेघमग्भीरानिर्घोषं श्रोष्यामि च हरेः स्वरम् ॥ पादाब्जं चक्रिणो विष्णोः पश्यामि च जगत्पतेः ॥ ३५ ॥ पश्यामि च हरेर्वेकं पूर्णेन्दुसदृशप्रभम् ॥ हरेरिदं जगद्रूपं पश्यामीव च सर्वतः ॥ ३६ ॥ प्रसीदतु सदा विष्णुरयुक्तं वक्तुमिच्छतः ॥ आलोलकुण्डलयुतं हरिचन्दनचर्चितम् ॥ ३७ ॥ स्फुरत्केयूररत्नाचिर्बाहुद्वयविराजितम् ॥ सव्ये द्योतन्महाशङ्खं रश्मिजालविराजितम् ॥ ३८ ॥

भली प्रकारके दर्शन कहेगा उन कृष्णके शरीरको मैं अपने नेत्रयुगलसे दर्शन कहेगा ॥ २९ ॥ उनके चरणकमलकी धूरि मैं अपने शिरपर धारण कहेगा, तब कृतार्थताको प्राप्त हूंगा कारण कि उनके चरणोंकी रज स्वर्गका मार्ग है ॥ ३० ॥ मेघकी समान मंतीर हरिका शब्द मैं श्रवण कहेगा चक्रधारी विष्णुके चरणकमलोंका दर्शन कहेगा ॥ ३१ ॥ पूर्णचन्द्रमाकी समान कान्तिमान् हरिका मुख देखूंगा और हरिका यह रूप सब प्रकारसे देखूंगा ॥ ३२ ॥ अयुक्त कहनेवालेभी मुझपर विष्णु सदा प्रसन्न होने चलायमान कुंडलोंसे युक्त हरिचंदनसे चर्चित ॥ ३३ ॥ स्फुरायमान बाजूबंद रत्नोंकी कान्तिवाली दोनों

भुजाओंसे विराजित सीधे हाथमें सहायंस्त और रत्नोंसे प्रकाशित है ॥ ३४ ॥ उदय होते हुए सूर्यके वर्णकी समान काग्निकाळे चक्रकी ज्वालासे विराजित उज्ज्वल कंकणसे युक्त तचे सुवर्णके बने अंगदवाले ॥ ३५ ॥ पीत रेशमीन वस्त्र धारण किये विस्तीर्ण हृदयवाले देवेश अच्युतका मैं कब दर्शन करूंगा ॥ ३६ ॥ जो उनका दर्शन करूंगा इससे मैं सर्वथा कृतकृत्य हूं मुझे नमस्कार है मुझे नमस्कार है जो मैं हरिको देखूंगा ॥ ३७ ॥ जननाथ बलभद्रके समीप विष्णु विष्णु जगदके गुरुका मैं आज दर्शन करूंगा ॥ ३८ ॥ कौस्तुभणीसे स्फुरायमान फलस्थल पीताम्बर मकराकृत कुंडल

प्रोद्यद्भास्करवर्णाभं चक्रज्वालाविराजितम् ॥ प्रोज्ज्वलत्कङ्कणयुतं तप्तजाम्बूनदाङ्गदम् ॥ ३५ ॥ पीतकौशेयवसनं विस्तीर्णैर-
स्कमच्युतम् ॥ कदा द्रक्ष्यामि देवेशमिदानीमयवाऽन्यदा ॥ ३६ ॥ सर्वथा कृतकृत्योऽहं यद्वपुर्द्रष्टुमुद्यतः ॥ नमो मह्यं नमो मह्यं
यतो द्रष्टुमहं हरिम् ॥ ३७ ॥ सद्यतोऽस्मि जगन्नाथं बलभद्रकृतास्फदम् ॥ द्रक्ष्याम्यवश्यमेव विष्णुं विष्णुं जगद्गुरुम् ॥ ३८ ॥
श्रीकौस्तुभोद्भववर्चि स्फुरितोत्पलः पीताम्बरं मकरकुण्डलपङ्कजाक्षम् ॥ कृष्णं किरितिवरचक्रगदोर्ध्वहस्तं तेनोभयं मम हरेर्वपुरस्तु
भूत्ये ॥ ३९ ॥ वेदोदघो विशदशास्त्रमहादियोगे निष्णातशुद्धमतिमन्दरमध्यमाने ॥ उद्योतमानममरेरनिशं निषेव्यं नारायणारूपममृतं
प्रपिबामि वाद्य ॥ ४० ॥ ध्येयं मुमुक्षुभिरमेयमनाद्यन्तं स्थूलं सुसुक्ष्मतरमेकमनेकमाद्यम् ॥ ज्योतिस्त्रिलोकजनकं त्रिदशैकवन्द्य-
संक्षेपमस्त्वु सततं हृदयेऽच्युतारूपम् ॥ ४१ ॥

धारण किये कमलनेत्र कृष्ण किरिटी चक्र गवा पद्मधारी हरिका तेजोमय शरीर मेरे अंगलके निमिच हो ॥ ३९ ॥ वेदरूपी सागर शास्त्ररूपी शेषपर योगमें
स्थित हो शयन करनेवाले शास्त्रके परामामी शुद्धमति मंदरके मथनेमें प्रकाशमान देवतासे नित्य सेवित नारायणरूपी अमृतका मैं आज पान करूंगा ॥ ४० ॥
मुमुक्षुओंसे ध्यानके योगमें आदि अन्त रहित स्थूल सूक्ष्मरूप एक अनेक रूपवाले ज्योतिरूप त्रिलोकीके उत्पन्नकर्ता देवताओंके नमस्कारके

योग्य मेरे नेत्र और हृदयमें सदा अच्युत विराजमान हों ॥ ४१ ॥ इस प्रकार वह ब्रह्माण विचार करता द्वारकापुरीको गया अपनेको कृतार्थ मान
 श्रीघृतासे घोड़ा चढाने लगा ॥ ४२ ॥ इति श्रीमहाभारते लिखेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रिपायां हंसडिम्भकोपाख्याने विप्रस्य द्वारवतीगमने चतुर्दश
 विकशततमोऽध्यायः ॥ ११४ ॥ वैशंपायन कहने लगे, उस धर्मात्मा ब्रह्माणने द्वारे स्थितही सर्वस्व निवेदन कर दिया पीछे धर्मात्मा ने
 ब्राह्मण सन्नामें प्रविष्ट हुआ ॥ १ ॥ उस सुधर्मा सन्नामें श्रुतिमान् केशवका दर्शन किया जो बलरामके साथ महाआसनपर स्थित थे ॥ २ ॥ आने
 सात्वाकि और पीछे नारदजी स्थित थे और उग्रसेनको आने किये दुर्वाससे कथोपकथन करते थे ॥ ३ ॥ मुरूप मंधर्व गते और अप्सराओंके गण
 चिन्तयन्निति विप्रेन्द्रो ययौ द्वारवतीं पुरीम् ॥ मत्वा कृतार्थमत्मानं वाङ्मन्यमुत्तमम् ॥ ४२ ॥ इति श्रीमहाभारते लिखेष्टु हरिवंशे
 भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने विप्रस्य द्वारवतीगमने चतुर्दशाविकशततमोऽध्यायः ॥ ११४ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ स निवे-
 दितसर्वस्वो द्वाःस्थेन हि जनार्दनः ॥ अथ प्रविश्य धर्मात्मा सुधर्मा वै द्विजोत्तमः ॥ १ ॥ अपश्यदेवदेवेशं सुधर्माकृतिसंस्थितम् ॥
 बलभद्रेण संयुक्तमध्यासितमहासनम् ॥ २ ॥ अग्रतः स्थितश्चैनयं पार्श्वतः स्थितनारदम् ॥ दुर्वाससा कृतकथमुग्रसेनपुरस्कृतम् ॥ ३ ॥
 गायद्रन्धर्वमुख्यैश्च नृत्यदप्सरसां गणैः ॥ सेव्यमानं महाराजं सूतमागवचन्दिभिः ॥ ४ ॥ उद्गीयमानयज्ञसं माधवं मधुसूदनम् ॥
 उद्गीयमानं विप्रेष्वसामभिः सामगैर्हरेरिम् ॥ दृष्ट्वा पीतमना विष्णुं प्रोद्धतपुलकच्छविः ॥ ५ ॥ नाम्ना जनार्दनोऽस्मीति ननाम चरणो हरेः ॥
 बलभद्रं ततो देवं ववन्दे शिरसा द्विजः ॥ ६ ॥ वृतोऽस्मि देवदेवेश हंसस्य डिम्भकस्य च ॥ इति ब्रुवाणं विप्रेन्द्रमिदमाह स माधवः ॥ ७ ॥
 नृत्य करते थे. हे महाराज ! सूत मानव बन्दिजन उनकी सेवा करते थे ॥ ४ ॥ मधुसूदन माधवका यश वे गान करते थे साम जाननेवाले ब्राह्मण
 सामवेदके मंत्रोंका पाठ करते थे इस प्रकार विष्णुको मस्तक देस छविसे पुलकायमान हो ॥ ५ ॥ अपना जनार्दन नाम लेकर इसने हरिके
 चरणोंको प्रणाम किया फिर बलरामजीको शिर मुकाकर प्रणाम किया ॥ ६ ॥ और कहा हे देवदेव ! मैं हंस और डिम्भकका वृत हूं ब्राह्मणको ऐसा
 कहते सुन श्रीकृष्ण कहने लगे ॥ ७ ॥

हे ब्राह्मण ! पहले विहरपर बैठो पीछे अपना प्रयोजन कहो तब आसनपर स्थित हो ब्राह्मण बोडा ॥ ८ ॥ तब श्रीकृष्णने उसका स्तकार कर कुशल पूछी ब्रह्मदत्त तथा हंसदिग्भकके यहांगी कुशल पूछी ॥ ९ ॥ हे द्विज ! हमने प्रयोजन और पराक्रम सुना है जिस प्रकार हंस दिग्भकमें बल है, हे जनार्दन ! तुम्हारे पिता कुशल हैं ॥ १० ॥ जनार्दन बोले, हे केशव ! ब्रह्मदत्त और मेरे पिता कुशलसे हैं; हे जगन्नाथ ! हंस और दिग्भकभी प्रसन्न हैं ॥ ११ ॥ श्रीभगवान् बोले, उन हंस और दिग्भकने क्या कह दिया है, हे द्विजोत्तम ! निश्चय होकर वह तुम सब कहो ॥ १२ ॥ जो वाच्य अवाच्य जेते

आस्वेदं विहरं पूर्वं पश्चाद्ब्रूहि प्रयोजनम् ॥ तथेति चाब्रवीद्विप्रो महदासनमास्थितः ॥ ८ ॥ वाचा संपूज्य विप्रेन्द्रमप्रच्छत्कुशलं हरिः ॥ ब्रह्मदत्तस्य राजेन्द्र हंसस्य दिग्भकस्य च ॥ ९ ॥ श्रुतं चापि तयोर्वीर्यं प्रयोजनमतो द्विज ॥ अपि वा कुशलं विप्रं पितुस्तव जनार्दन ॥ १० ॥ जनार्दन उवाच ॥ कुशलं ब्रह्मदत्तस्य पितुश्च मम केशव ॥ तयोरेव जगन्नाथ हंसस्य दिग्भकस्य च ॥ ११ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ किमाह तुर्महीपातो तो हंसदिग्भको नृपो ॥ ब्रूहि सर्वमक्षेपेण नात्र शङ्का द्विजोत्तमः ॥ १२ ॥ वाच्यं वाच्यमवाच्यं कर्तव्यमथ चेतरेत् ॥ श्रुत्वा तस्य विवास्यामो युक्तरूपं द्विजोत्तम ॥ १३ ॥ दूतोऽसि सर्वथा विप्र न वाग्यावाच्यकल्पना ॥ यत्कर्मकारनिर्दिष्टं तद्वाच्यं दूतजन्मना ॥ १४ ॥ नात्र शङ्का त्वया कार्णा वक्तव्यस्येतरस्य च ॥ अतो वद वया प्रोक्तं ताभ्यामिदं जनार्दन ॥ १५ ॥ केशवेनैव मुक्तस्तु प्रोवाच स जनार्दनः ॥ अजानन्निव किं ब्रूवे सर्वं प्रत्यक्षदर्शिवात् ॥ १६ ॥ न चास्ति ते परोक्षं तु जगद्बृत्तान्तमच्युत ॥ सर्वं हि मनसा पश्यन् किं त्वमात्स्य वेदति माम् ॥ १७ ॥

कुछभी कर्तव्य अकर्तव्य हो, तुम कहो हे ब्राह्मण ! उस वार्ताको सुनकर हम वैसा विधान करेंगे ॥ १३ ॥ हे विप्र ! आप दूत हो वाच्यकी कल्पना कर कत कहना जो कर्मकारने कहा है वह सर्वथा वर्जन करो ॥ १४ ॥ किसी प्रकारके वचन कहनेमें तुम कोई शङ्का न करना, हे जनार्दन ! इस कारण जो कुछ उन्होंने कह दिया है सो यथायोग्य कह देना ॥ १५ ॥ केशवके यह वचन सुन जनार्दनने कहा आर बेजानकी समान क्यों बोलते हो सब कुछ प्रत्यक्षके देखनेवाले हो ॥ १६ ॥ हे अच्युत ! आपको जबमें कुछभी अविदित नहीं है सब कुछ मनसेही देखते हुए मुझसे कहनेको क्यों

कहते हो ॥ १७ ॥ हे जगतीपते विष्णो ! आपही विद्वानोंके द्वारा माये जाते हो इच्छासेही आपको सब कुछ प्राप्त होता है दृष्ट अदृष्ट आप सबके ज्ञाता हो ॥ १८ ॥ सब जगत्में तुम और तुममें यह जगत् प्रतिष्ठित है आपसे रहित चराचर जगत्में कोई पदार्थ नहीं है ॥ १९ ॥ हे जगत्पते ! आप सर्वगामी हो आपको कुछभी अवेष नहीं है तुमही इन्द्र और सब भूतोंके संहार करनेवाले स्व हो ॥ २० ॥ हे विष्णु माधव ! आप सब लोककी रक्षा करनेवाले हो आप संसारके सहा होकर कहे यह कैसे कहते हो ॥ २१ ॥ हे माधव ! आपको विद्वान् नित्य ज्ञानरूपा कहकर गान विद्वद्भिर्गायसे विष्णो त्वमेव जगतीपते ॥ इच्छया सर्वमाप्नोषि दृष्टादृष्टविवेचनम् ॥ १८ ॥ त्वमेव जगत्सर्वं जगच्च त्वयि तिष्ठति ॥ न त्वया रहितो लोकः पदार्थः सचराचरः ॥ १९ ॥ नास्ति किञ्चिद्वेद्यं ते सर्वमोऽसि जगत्पते ॥ त्वमिन्द्रः सर्वभूतानां रुद्रः संहारक-
मंकुव ॥ २० ॥ रक्षितासि सदा विष्णुः सर्वलोकस्य माधव ॥ संसारस्य भक्षान्नष्टा किं त्वमात्म्य वेति माम् ॥ २१ ॥ विद्वद्भिर्गा-
यसे नित्यं ज्ञानात्मोति च माधव ॥ प्राणं प्राणविदः प्राहुस्त्वामेव पुरुषोत्तम ॥ २२ ॥ शब्दं शब्दविदः प्राहुस्त्वामेव पुरुषोत्तम ॥
तथा सति हृषीकेश किं त्वमात्म्य वेति माम् ॥ २३ ॥ तथापि शृणु देवेश चोदितोऽस्मि यतस्त्वया ॥ वदेष्वसकृदेतत्तत्त्वाद्-
क्ष्यामि माधव ॥ २४ ॥ राजसूयेन यज्ञेन ब्रह्मवृत्तोऽद्य यक्ष्यते ॥ तदर्थं प्रेषितस्ताभ्यां हंसेन विम्भकेन च ॥ २५ ॥ करार्यं
यदुमुख्येभ्यस्तव चामन्त्रणाय हि ॥ त्वणं नहु देयं ते यज्ञार्थं तस्य केशव ॥ २६ ॥ इत्यर्थं प्रेषितस्ताभ्यां करं वेदि तवाज्ञया ॥ इदं
त्वमपरं ताभ्यामुक्तं शृणु जगत्पते ॥ २७ ॥

करते हैं. हे पुरुषोत्तम ! प्राणविद आपको प्राणात्मा कहते हैं ॥ २२ ॥ शब्दविद आपको शब्दरूप कहते हैं. हे हृषीकेश ! ऐसा होनेपर फिर आप हमसे कैसे पूछते हो ॥ २३ ॥ हे देवेश ! तथापि आपकी प्रेरणासे मैं कहता हूं जो आप मुझसे बार बार पूछते हो इससे मैं कहता हूं ॥ २४ ॥ ब्रह्मरत्न राजसूय यज्ञ करना उसी निमित्त मुझे हंस और विम्भकने भेजा है ॥ २५ ॥ कि उन यदुमुख्योंसे यज्ञके निमित्त कर लाओ और पक्षमें आनेको कहो. हे केशव ! यज्ञके निमित्त आपको त्वण देना चाहिये ॥ २६ ॥ इस निमित्त करके उन्होंने मुझे तुम्हारे पास भेजा है. हे जगत्पते ! उनकी कही

यह और बात सुनो ॥ २७ ॥ सो आप बहुत शीघ्रतासे लवण ग्रहण करके उन राजोंके निकट चलिye बस बड़ी कहना है ॥ २८ ॥ हे राजन् । उसके दूत होकर यह कहनेको मैं आया हूं तब भीष्मण हँसकर दूतसे कहने लगे ॥ २९ ॥ हे दूत ! हे द्विजोत्तम ! तुम हमारे कवन सुनो तुमने सत्य कहा है मैं उनको कर दूंगा जिस कारण कि मैं करदाता हूं ॥ ३० ॥ हे विप्र ! जो वे मुझसे कर मांगते हैं यह उनही बड़ी ठीठता है आश्चर्यकी बात है कि उनकी बड़ी ठीठता है ॥ ३१ ॥ हमसे कर मांगते हैं यह पहलीही बात है यह कह भीष्मण यदुओंको कहने लगे ॥ ३२ ॥ हे यदुनेष्ठो ! कैसे

लवणानि बहून्याशु प्रमृष्ट्य त्वरितं भवान् ॥ आणच्छतु तयो राज्ञोः सेयं केशव वाग्भिभो ॥ २८ ॥ इत्युक्तवति विप्रेन्द्रे दूते तत्र तयोनृप ॥ प्रहस्य सुचिरं कृष्णो नभाषे दूतमीश्वरः ॥ २९ ॥ शृणु दूत वचो मम युक्तमुक्तं द्विजोत्तम ॥ करं ददामि ताभ्यां तु करदोऽस्मि यतो नृप ॥ ३० ॥ घाष्ट्यमेतत्तयोर्विप्र मत्तो यस्तु करप्रदः ॥ अहो घाष्ट्यमहो घाष्ट्यं तयोः क्षत्रियबीजयोः ॥ ३१ ॥ इदमश्रुतपूर्वं मे मत्तो यस्तु करप्रदः ॥ इत्युक्त्वा केशवो दूतमिदमाह स्म यादवान् ॥ ३२ ॥ हास्यमेतद्यदुश्रेष्ठा मत्तो यस्तु करप्रदः ॥ यद्यासो राजसूयस्य ब्रह्मदत्तो महीपतिः ॥ ३३ ॥ तौ तु याजापितारौ हि इंसो विम्भक एव च ॥ वोढा किल यदुश्रेष्ठो लवणस्य दुरात्मनः ॥ ३४ ॥ करदो वासुदेवो हि जितोऽस्मि यदुसत्तमाः ॥ हास्यं हास्यमिदं भूयः शृणुष्वं यादवा वचः ॥ ३५ ॥ इत्युक्तवति देवेशे बलभद्रपुरोगमाः ॥ यादवाः सर्व एवेते हासाय समवास्थिताः ॥ ३६ ॥ करदः कृष्ण इत्येवं ब्रुवन्तः सर्वसात्वताः ॥ हासं मुमुचुरत्यर्थं तलं दत्त्वा परस्परम् ॥ ३७ ॥ तलशब्दो हासशब्दो रोदसी पर्यपूरयत् ॥ स च विप्रो नृपश्रेष्ठ नन्द्यन्मित्रमात्मनः ॥ ३८ ॥

हास्यकी बात है जो हमसे कर मांगते हैं वह बलभद्र राजा यज्ञ करता है ॥ ३३ ॥ यह हंस और विभक्त उसको यज्ञ करावेंगे और मैं उस दुरात्माका लवण ले चलेवाला हूंगा ॥ ३४ ॥ हे यदुनेष्ठो ! मैं उसको कर देनेवाला होकर उससे जीता गया हूं यह महाहास्यकी बात है हे यादवो ! सुनो तो ॥ ३५ ॥ देवेशके ऐसा कहने पर बलभद्र आधि सव यादव हँसने लगे ॥ ३६ ॥ लो अब लवणही कर देनेवाले हुए ऐसा सब यादव कहने लगे और ताली बजाप परस्पर हास्य करने लगे ॥ ३७ ॥ उस तालीके महाशब्दसे व्यावापृष्ठी पूर्ण हो गई और वह ज्ञास्य अपने मित्रको प्रसन्न करता हुआ बोला ॥ ३८ ॥

अहो बड़े कष्टकी बात है कि जो मैं दूत होकर यहां आया हूं इस प्रकार लज्जित हो दूत नौचेको मुक्त करे स्थित हुआ ॥ ३९ ॥ इति श्रीमहाभारते
 तिल्लेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रापायां हंसदिम्भकोपाख्याने पंचदशाविक्रान्ततमोऽध्यायः ॥ ११५ ॥ वैशंपायन बोले, जब सब हास्य कर रहे थे तब
 सबके सामने श्रीकृष्ण दूतसे बोले तुम हमारे वचनसे जाओ ॥ १ ॥ और शीघ्र जाकर हंस दिम्भकसे कहो कि मैं शार्ङ्ग धनुषसे निकले हुए शिलापर
 पैनाये तीक्ष्ण बाणोंसे ॥ २ ॥ अथवा असिसे जो बड़ी तीक्ष्ण अथवा चक्रसे उनका शिर छेदन करूंगा जो मुझसे बलि मांगते हैं ॥ ३ ॥ जो कि

अहो कष्टमहो कष्टं दौत्यं यत्कृतवानहम् ॥ इति लज्जासमाविष्टस्तूष्णीमासीदवाङ्मुखः ॥ ३९ ॥ इति श्रीमहाभारते तिल्लेषु हरिवंशे
 भविष्यपर्वणि हंसदिम्भकोपाख्याने वामुदेववाक्यं नाम पञ्चदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११५ ॥ वैशंपायन उवाच ॥ हासं कुर्वन्तु
 तेष्वेवं केशवः केशिसूदनः ॥ उवाच वचनं दूतं गच्छ मदचनाद्विज ॥ १ ॥ तावित्यं हंसदिम्भको ब्रूहि त्वरितविक्रमः ॥ बाणैर्दा-
 स्यामि निक्षितैः शार्ङ्गमुक्तैः शिलाक्षितैः ॥ २ ॥ असिना वाय दास्यामि निक्षितेन महात्मनोः ॥ शिरो वा छेत्स्यते चक्रं मत्कर-
 हितं बलिम् ॥ ३ ॥ यो वरं दत्तवान् रुद्रो युवयोर्षाष्टर्चकारणम् ॥ स एव रक्षिता वा स्यात्तं जित्वा वा निहन्म्यहम् ॥ ४ ॥ देक्षेऽयं
 संविधातव्यो यत्र नः संमतिर्भवेत् ॥ तत्र मन्ता तथा चास्मि सबलः सहवाहनः ॥ ५ ॥ भक्तो निर्भयो भूत्वा गच्छेतां सबलै नृपै ॥
 पुष्करे वा प्रयागे वा मथुरायामपि वा ॥ ६ ॥ तत्राहं सबलो याता नात्र कार्या विचारणा ॥ अथवा मित्रभावाच्च कुरुमेवं न ते
 क्षमम् ॥ ७ ॥ न शक्यं यत्त्वया वक्तुं तच्च वक्ष्यति सात्यकिः ॥ त्वया सह ततो गत्वा साक्षिभूतो भव द्विज ॥ ८ ॥

तुम्हारी धृष्टताका कारण वरदान तुमको शिवजीने दिया है वह यदि तुम्हारी रक्षा करेंगे तो उनको जीतकर युद्धमें तुम्हारा वध करूंगा ॥ ४ ॥ वह
 देशनिर्णय कर लो जहां हमारा तुम्हारा संगम होगा वहां मैं बलवाहनसहित प्राप्त हूंगा ॥ ५ ॥ और आपनी निंतय हो सेनासहित वहां चलिए पुष्कर
 प्रयाग मथुरा जहां इच्छा हो युद्ध हो ॥ ६ ॥ वहीं मैं सेनासहित प्राप्त हूंगा इसमें सन्देह नहीं है अथवा मित्रभावसे जो यह बात तुम न कह
 सक्ये तो मत कहो ॥ ७ ॥ हम सात्यकिको भेजते हैं वह सब कहेगा वह तुम्हारे साथ जायगा तुम साक्षीरूपा रहना ॥ ८ ॥ हे विप्रेन्द्र ! मैं यह

जायता हूं किं आपका मुझमें भेष है इससे तुम विजयी होकर दुःखसंकुल संसारमें सदा मेरी कथामें तत्पर हो ॥ १ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेड हरि-
वंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसडिम्भकोपाख्यानं षोडशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११६ ॥ वैसंरापन बोले, ओऊण ब्राह्मणवे यों कह सात्यकिसे बोले, हे
सात्यकि ! हमारे बचनसे तुम वहां जाकर उन दोनोंसे कहो ॥ १ ॥ जो कुछ हमने कहा है वह सब उनसे कहो और जैसे युद्धमें हमारी संगति हो वह
बलसे कहना ॥ २ ॥ तुम गोषा अंगुलिमाण युक्त धनुष लेकर जाओ और केवल एक बोलेपर चढ़कर सहायहीन होकर जाओ ॥ ३ ॥ बहुत अच्छा

इदं च जाने विप्रेन्द्र स्नेहो मम सदा त्वयि ॥ तेन त्वं विजयी भूत्वा संसारे दुःखसंकुले ॥ मत्कथापरमो नित्यं सदा भव जनार्दन ॥ १ ॥
इति श्रीमहाभारते सिलेड हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्यानं षोडशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११६ ॥ वैसंरापन उवाच ॥
इत्युक्त्वा ब्राह्मणं कृष्णः सात्यकिं पुनराह सः ॥ गत्वा शैनेय विप्रेण हृदि मद्रचनातयोः ॥ १ ॥ यन्मयोत्तमश्लेषेण वद गत्वा तयोः
पुरः ॥ यथा नः संगतिर्युद्धे तथा वद बलात्तदा ॥ २ ॥ धनुराक्षय गच्छ त्वं बद्धगोषाङ्गुलित्रवान् ॥ एकेनाश्वेन गच्छ त्वमसहायो
यदुत्तम ॥ ३ ॥ सात्यकिस्तं तथेत्युक्त्वा ह्यमारुह्य शीघ्रगम् ॥ गन्तुमेच्छततो राज्ञस्तदायः स सात्यकिः ॥ ४ ॥ जनार्दनं विसृज्याशु
दूतं तं यादवेश्वरः ॥ अहो घाष्टर्यमहो घाष्टर्यमित्युवाच जनार्दनः ॥ ५ ॥ नमस्कृत्य तदा दूतो माधवं माधवेश्वरम् ॥ स यपो
शाल्वनगरं शैनेयेन समन्वितः ॥ ६ ॥ ततः प्रविश्य धर्मात्मा ब्राह्मणो ब्रह्मवित्तमः ॥ आसनं महदास्थाय विसृज्य यादवे पुनः ॥ ७ ॥
आस्ते सुप्तं यदा विप्रः शैनेयेन समन्वितः ॥ अथ तं हंसडिम्भयोर्दर्शयामास सात्यकिम् ॥ ८ ॥

यह बचन कह सात्यकि बोलेपर चढ़-इकठाही जानेकी इच्छा करने लगा ॥ ४ ॥ और यादवेश्वरने उस जनार्दन दूतको बहुत शीघ्र विरा करके
बारंवार कहा उन दोनोंकी बढीही ठोठता है ॥ ५ ॥ तब वह दूत माधवेश्वर यादवको नमस्कार करके सात्यकिके सहित शाल्वनगरको गया ॥ ६ ॥
तब वह ज्ञानी धर्मात्मा ब्राह्मण राजतवनमें प्रवेश कर आसनपर बैठा सात्यकिके निमिचित्ती आसन दिया ॥ ७ ॥ जब वह ब्राह्मण सात्यकिके सहित

सुखसे बैठा तब हंस हिमकके निमिच सत्पाकको दिखाया ॥ ८ ॥ कि यह नारायणकी बौहिनी भुजारूप सात्यकि उनके निकटसे दूत होकर आया है उसके यह वचन सुन हंस कहने लगे ॥ ९ ॥ मैंने पहले इनका नाम सुना है आज देखती लिया धनुर्वेद वेद शस्त्रमें ॥ १० ॥ यह घोर बहाही निपुण है यह हमने सुना है अब यह हमारी दृष्टिके सम्मुख होकर प्रसन्नता प्राप्त करेगा ॥ ११ ॥ वासुदेव और बलभद्र कुशलसे हैं तथा सब यादव उन्मत्तेगारि प्रसन्न हैं ॥ १२ ॥ कुछ हैतकर सात्यकिने कहा सब कुशल है तब वाक्यविशारद हंसने जनार्दनसे कहा ॥ १३ ॥

दूतोंऽयं सात्यकिः प्रातः सः यो बाहुरयं हरेः ॥ तस्य तद्वचनं श्रुत्वा हंसः प्राह वचस्तदा ॥ ९ ॥ श्रुतः समामः पूर्वमेव दृष्टो मया त्वसौ ॥ धनुर्वेदे च वेदे च ज्ञास्ते ज्ञास्ते तथैव च ॥ १० ॥ निपुणोऽयं सदा घोर इत्येवमनुशुश्रुम् ॥ अयो दृष्टिपथं प्रातः प्रीतिं नो विदधात्यसौ ॥ ११ ॥ कुशलं वासुदेवस्य बलभद्रस्य वा पुनः ॥ कुशलाः सात्वताः सर्वे अग्रसेनपुरोगमाः ॥ १२ ॥ तथेति सात्यकिः प्राह मन्दमुन्मथिताननः ॥ ततो जनार्दनं प्राह हंसो वाक्यविशारदः ॥ १३ ॥ अपि दृष्टस्त्वया चक्री सिद्धं नः कार्यमीदृशम् ॥ वद सर्वमशेषेण मा वृथा कालमत्यगाः ॥ १४ ॥ इति श्रीमहाभारते सितेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसविम्बकोपाख्यानं सप्तदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ इत्युक्तवति हंसे च चर्मात्माय जनार्दनः ॥ उवाच प्रहसन्वीरः स्तुवन्प्राणायामं तदा ॥ ११ ॥

अद्राक्षमद्राक्षमहं जनार्दनं हस्तस्यशंसं वरचक्रधारिणम् ॥ आतप्तबान्धुनन्दधूषिताङ्गं स्फुरत्प्रभाद्योतितस्त्रवारिणम् ॥ २ ॥

अद्राक्षमेनं यदुभिः पुरातनैः संसेव्यमानं मुनिवृन्दमुख्यैः ॥ संस्तूयमानं प्रभुभिः समामचैः स्मितप्रवाळाघरपल्लवारुणम् ॥ ३ ॥

आगने श्रीकृष्णको देखा हमारा कार्य क्या सिद्ध है सम्पूर्ण वार्ता कहो वृथा समयका सोना बला नहीं ॥ १४ ॥ इति श्रीमहाभारते सितेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसविम्बकोपाख्याने सप्तदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११७ ॥ वैशम्पायन बोले, हंसके देखा कहनेपर चर्मात्मा जनार्दन नारायणकी स्तुति करता हुआ हैतकर बोला ॥ १ ॥ हां हां हाथमें शंस चक्र छिपे सुवर्णकी बनी नदा घासण छिपे चारों ओर कान्तिमान् रत्नोंको धारे जनार्दनका मैंने दर्शन किया है ॥ २ ॥ पुरातन यदु और मुरुष मुनिवृन्दसे सेवित बड़े मानवोंसे स्तुतमान हात्समुख जूनेकी समाप अवरपात्रे

श्रीकृष्णका दर्शन किया ॥ ३ ॥ पुरातन कवियों द्वारा स्तुति किये हुए देवताओंके जानने योग्य फूले नील कमलकी समान लक्ष्मीसे सेवित स्तिले कमली समान उदरवाले श्रीकृष्णको हमने देखा ॥ ४ ॥ उन अजन्मा जनकके गुरुको वचनोंसे यादकोंको प्रसन्न करते हुए और मुनियोंसे वेदाद्यं निरूपण करते हुए मैंने देखा है ॥ ५ ॥ बारंबार मैंने समस्त लोकोंके हितैषी हरिका दर्शन किया है जो शत्रुओंको तिरस्कार कर जनकके हितके निमित्त स्थित हैं ॥ ६ ॥ विहारके समय यदुवंशियोंके साथ श्रीकृष्णको मैंने कड़ा करते देखा है जो आप यदुवंशियोंमें मुरूप ईश्वर होकर यदुवं-

अद्राक्षमेन कविभिः पुरातनैर्विविच्य वेद्यं विधिवत्सहामरेः ॥ प्रफुल्लनीलेत्पलशोभितं श्रिया विनिद्रहेमान्जविराजितोदरम् ॥ ४ ॥

भूयोऽहमद्राक्षमजं जगद्गुरुं प्रमोदयन्तं वचनेन यादवान् ॥ निरूपयन्तं विधिवन्मृनीश्वरैः प्रवृत्तवेदार्थविधिं पुरातनैः ॥ ५ ॥

अद्राक्षमद्राक्षमहं पुनः पुनः समस्तलोकैकहितैषिणं हरिम् ॥ वसन्तमस्मिन्नगतो दिताय जगन्मयं तान्परिभूय शत्रून् ॥ ६ ॥

भूयोऽप्यपश्यं सह यादवेश्वरैर्विक्रीड्यमानं च विहारकाले ॥ रमन्तमीदृचं रमयन्तमीश्वरान्यदूतमान्यादवमुख्यमीश्वरम् ॥ ७ ॥

भूयोऽप्यपश्यं सरसीरुद्देशणं समेतया भीष्मतनुजया हरिम् ॥ वसन्तमम्भोनिधिस्त्रायिनं विशुं भक्तप्रियं भक्तजनास्पदं शिवम् ॥ ८ ॥

अद्राक्षमद्राक्षमहं सुनिर्वृतः पिबन्पिबंस्तस्य वपुः पुरातनम् ॥ नेत्रेण मीलद्विवरेण केवलं धन्योऽहमस्मीति तदा व्यचिन्तयम् ॥ ९ ॥

अद्राक्षमम्भोजयुगं दधानं प्रभुं विशुं भूतमयं विभावनम् ॥ आद्यं ककुद्भानमुखं विभावसुं संस्मृत्य संस्मृत्य तमेव निर्वृतः ॥ १० ॥

अद्राक्षं जगतामीशं वक्षोराजितकौस्तुभम् ॥ वीज्यमानं हारिं कृष्णं चामराणां झूतैः सदा ॥ ११ ॥

शियोंको रमण कराते हुए रमते हैं ॥ ७ ॥ फिर मैंने उन हरिको भीष्मसुता रुक्मिणीसे वार्ता करते देखा है उन जलशायी हरि सर्वव्यापक भक्तप्रिय भक्तजनोंके स्थान शिवस्वरूपका दर्शन किया है ॥ ८ ॥ शान्त होकर उनके शरीरको नेत्रोंद्वारा पान कर और फिर नेत्रोंको बीचकर मैं कल्प हूं इस प्रकार विचारते हुए बारंबार हरिका दर्शन किया है ॥ ९ ॥ प्रभु विशु भूतमय नारायणका कमलयुगल धारण किये देखा है आद्यपुरुष ककुद्भान् (महात्म्यवाले) कान्तिमान्द्रको बारंबार स्मरण करता हूं ॥ १० ॥ वक्षस्थलमें विराजित कौस्तुभवाले सैकड़ों चामरोंसे वीज्यमान केशवका मैंने

दर्शन किया है ॥ ११ ॥ आप दोनों विद्वेषयुक्त होनेके कारण विकृत चित्तसे आप दोनोंका स्मरण करते विष्णुने कहा है कि हंस और त्रिशूक कहाँ है ॥ १२ ॥ उन दोनों मन्दात्माओंको मैं कब देखूँगा और कब मेरे सन्मुख होंगे इस प्रकार शंख हाथमें धारण किये विचार करते ॥ १३ ॥ कर देनेकी वार्ता सुनकर हास्यमें तत्पर यतीश्वर नारद और दुर्वासासे वार्ता करते हुए ॥ १४ ॥ ब्रह्मसूत्र पदरूप वाणीको मुनीश्वरोंके निमिष देते हुए उन हरिको देखकर मैं बारबार विचार करने लगा ॥ १५ ॥ उन हमारे दोनों राजोंने बड़ी असावधानी की है. हे राजन् ! अब यह कार्य आप

युवा विद्वेषयुक्तेन चेतसा यादवेश्वरम् ॥ स्मरन्तं सर्वदा विष्णुं कचेवं क च वेत्ति कः ॥ १२ ॥ क च द्रक्ष्यामि तो मन्दो कुतो वा मत्पुरोगतो ॥ ध्यायन्तमित्थं देवेशं करे शंखवहं सदा ॥ १३ ॥ इत्यन्तमेनमद्राक्षं करदं हास्यतत्परम् ॥ वदन्तं नारदे वाचं दुर्वाससि यतीश्वरे ॥ १४ ॥ ब्रह्मसूत्रपदां वाणीं दापयन्तं मुनीश्वरम् ॥ दृष्ट्वाहं तं हारिं देवं पुनः पुनरचिन्तयम् ॥ १५ ॥ असाध्यमिदमारब्धं ताभ्यामिति नृपोत्तम ॥ नारद्व्यमिदं कार्यमितः प्रभृति भूमिप ॥ १६ ॥ निवृत्ता सा कथा हंसाचिन्तयद्ग्रहणं तव ॥ तद्वत्तमाखिलं सर्वं वदिष्यति हि सात्यकिः ॥ एतद्वचनमाकर्ण्य हंसः क्रुद्धोऽब्रवीद्वचः ॥ १७ ॥ हंस उवाच ॥ अरे ब्राह्मणदायाद का नाम तव वामियम् ॥ आवयोः पुरतो वक्तुं त्रैलोक्यं जेतुमिच्छतोः ॥ १८ ॥ मायया त्वां भ्रमयति कृष्णो लीलाविधानवित् ॥ तं दृष्ट्वा भ्रम एवैव तव संजायते महान् ॥ १९ ॥ शंखचक्रगदाशार्ङ्गवनमालाविभूषितम् ॥ वृष्णिवीरं समावेश्य समुच्छ्रितयज्ञोपरम् ॥ २० ॥

आरंभ मत करो ॥ १६ ॥ जो तुमने कथा ग्रहण की थी वह निवृत्त हो गई शेष सब वृत्तान्त सात्यकि वर्णन करेगा यह वचन सुन क्रोधकर हंस कहने लगा ॥ १७ ॥ हंस बोला; अरे ब्राह्मणसन्तान ! यह तुम केशी वाणी बोलते हो जो त्रिलोकी जीतनेमें समर्थ हमारे सामने तुम ऐसी वाणी बोलते हो ॥ १८ ॥ लीलाके विधान जाननेवाले श्रीकृष्णने तुमको मायासे भ्रमा दिया है उनको देखतेही यह तुमको महाभ्रम हो गया है ॥ १९ ॥ शंख चक्र गदा शार्ङ्ग वनमालासे विभूषित वृष्णिवीरको प्राप्त होकर जिन्होंने अपना बड़ा यश कर रक्खा है ॥ २० ॥

सूत मामधोसे स्तुतिको प्राप्त होकर अपना यश फैलानेवाले और विक्रमसे लोकोंको मंजु करनेवाले ॥ २१ ॥ यदुर्बाहु बलसे आक्रान्त वृष्णि और यदुर्बाधियोंके संमत श्रीकृष्णको देखकर तुमको भ्रम हो गया है यह बड़े आश्चर्यकी बात है ॥ २२ ॥ और इस समयभी यह दुर्मति तुमको भ्रमाते हैं, हे मन्दात्मन् विप्र ! उन्हींने जो तुमको भ्रमाया है यह इन्द्रजाल विद्या है ॥ २३ ॥ हे विप्र ! उस भ्रमसेही तुमको यह चपलता प्राप्त हुई है तुझे तो हमारी समान वर्तना चाहिये ॥ २४ ॥ हे ब्राह्मण ! यैही तुम्हारे इस प्रकारके बचन सहन कर सकता हूं सोनी यह मित्रतावकी बात है अन्यथा कोन इन

सूतमामधसंस्तावप्रकटद्वारबाहुकम् ॥ अत्यदुत्तयशोराक्षि विक्रमालोकमण्डनम् ॥ २१ ॥ यदुर्भुजं बलाक्रान्तं वृष्णिषादवसंमतम् ॥ अहोऽद्य भ्रम एवैष दर्शनात्तस्य चक्रिणः ॥ २२ ॥ इदानीं च महाराज भ्रामयत्येव दुर्मतिः ॥ स्वामेव विप्र मन्दात्मस्मिन्ब्रजालिकता हि या ॥ २३ ॥ चापल्यमिदमेवेतत्तव विप्र भ्रमोज्ञवम् ॥ अहो हि खलु सादृश्यं वक्तव्यं भवता मम ॥ २४ ॥ अहमेव त्वया विप्र मर्षये प्रोक्षितं वचः ॥ सखिभावाद्भिजश्रेष्ठ अन्यथा कः सदेविदम् ॥ २५ ॥ गच्छ मन्दमते विप्र यथेष्टं साम्प्रतं तव ॥ द्विज गच्छ यथेष्टं त्वं पृथिवीं पृथिवीं तव ॥ २६ ॥ जित्वा गोपालशय्यावं इत्वा यादवकान् बहून् ॥ एष नः प्रथमः कल्पो जेष्याम इति यादवान् ॥ २७ ॥ गच्छ गच्छेति विप्र त्वं धृष्टं परुषवादिनम् ॥ शत्रुपक्षस्तुतिपरं सह युक्त्वा सदा मया ॥ २८ ॥ न मे विप्रवधः कार्यः कष्टादापि हि सर्वतः ॥ इत्युक्त्वा ब्राह्मणं भूषो हंसः सत्यकिमब्रवीत् ॥ २९ ॥ भो भो यादवदायाद् किमर्थं प्राप्तवानिह ॥ किमब्रवीन्मन्दसुतः किं वासौ मेऽदिशत्करम् ॥ ३० ॥

वचनोंको सह सकता है ॥ २५ ॥ हे मन्दमति ब्राह्मण ! आप अब यहाँसे यथेष्ट गमन करिये आपकी पृथ्वी है चाहे जहाँ यथेष्ट गमन करो ॥ २६ ॥ गोपालकी सन्तानोंको भीत बहुतसे यादवोंको मार डालूंगा अब बहला काम हमारा यादवोंका मारनाही है ॥ २७ ॥ हे विप्र ! तुम अब जानो तुम ठीठ और परुषवादीको मैं रखना नहीं चाहता मेरे साथ भोजन कर शत्रुपक्षकी स्तुति करते हो ॥ २८ ॥ कष्ट परभी मैं ब्राह्मणका वध नहीं करता हूं यह ब्राह्मणसे कथन कर फिर हंस सत्यकिसे कहने लगा ॥ २९ ॥ हे यादवसंतान ! तुम यहाँ किस कारणसे आये हो नन्दपुत्रने क्या कहा है क्या

यह मुझको कर देने ॥ ३० ॥ सात्यकि बोला, हे हंस ! यह वचन सत्यही है की शंस चक्र गदा धारण करनेवालेके तीक्ष्ण धारावाले शिखापर वेने किये शार्ङ्गधनुषसे निकले बाणोंसे ॥ ३१ ॥ और अपनी तीक्ष्ण तलवारसे मैं तुमको कर दूंगा, हे हंस ! करदानमें तत्पर मैं तुम्हारा शिरच्छेदन कर दूंगा ॥ ३२ ॥ हे मन्दात्मन् नृपाधम ! तुम्हारी बड़ी धृष्टता है जो देवदेव जगन्नाथसे कर लेनेकी इच्छा करते हो ॥ ३३ ॥ इस करसे आपकी जिह्वा छेदन कर दी जायगी उन हरिके शंस और शार्ङ्ग धनुषका सम्य अरण करके ॥ ३४ ॥ कोव जीवित रह सकता है तुम क्षणमात्र ठहरो शिवके वरसे सात्यकिरुवाच ॥ इदं सत्यं वचो हंस शङ्खचक्रगदाभृतः ॥ शरेर्निशितधाराम्नेः शार्ङ्गमुक्तेः शिखाशितेः ॥ ३१ ॥ दास्यामि करसर्व-स्वमासिना निशितेन ते ॥ शिरश्छेत्स्यामि ते हंस करदानस्य संग्रहम् ॥ ३२ ॥ घाट्यं हि तव मन्दात्मन् किमतोऽपि नृपाधम ॥ देवदेवाजगन्नाथात्करमिच्छति यो नृपः ॥ ३३ ॥ तस्यैव करसंक्षेपो जिह्वाच्छेदो नराधम ॥ तस्य शार्ङ्गैर्वं श्रुत्वा शङ्कस्य च हरेः पुनः ॥ ३४ ॥ को नाम जीवितं काङ्क्षेतिष्ठेदानीं त्वमथ वै ॥ गिरिशरवर्षेण को ह्यादीदृशं वचः ॥ ३५ ॥ सहाया वयमेवेते बलभद्रपुरोगमाः ॥ प्रथमो बलभद्रोऽसौ द्वितीयोऽहं च सात्यकिः ॥ ३६ ॥ कृतवर्मा तृतीयस्तु चतुर्थो निशठो बली ॥ पञ्चमोऽयं च बभ्रुस्तु षष्ठश्चेतोक्लः स्मृतः ॥ ३७ ॥ सप्तमस्तारणो धीमानस्रक्षस्त्रविशारदः ॥ अष्टमस्त्वयं सारङ्गो नवमो विपुयुस्तथा ॥ ३८ ॥ दशमश्चोद्धवो धीमान्वयमेते बलान्विताः ॥ त एते पुरतोमोतुः शङ्खचक्रगदाभृतः ॥ ३९ ॥ देवदेवस्य युद्धेषु तिष्ठन्त्येव विना-निशम् ॥ यो हि वीरो युतो तस्य नास्त्यसहस्रो बले ॥ ४० ॥

रहित हो कोन ऐसे वचन कह सकता है ॥ ३५ ॥ और बलभद्रको आदि ले हम सब उनके सहायकारी हैं प्रथम बलभद्र और दूसरा मैं सात्यकि ॥ ३६ ॥ तीसरा कृतवर्मा चौथा बली निशठ पाँचवां बभ्रु छठा उरकल ॥ ३७ ॥ सातवां अक्षयवर्मा पंक्ति दुर्धमान् तारण है आठवां सारंग और नववां विपुयु है ॥ ३८ ॥ दशवां दुर्धमान् उद्धव यह सब महाबली हैं यह दश शंस चक्र गदा धारण करनेवालेके सम्पुल्ल रक्षा करनेको चकते हैं ॥ ३९ ॥ यह युद्धमें देवदेवके आगे दिनरात रहते हैं और जो उनके वीर दो पुत्र अम्बिनीकुमारकी समान बली हैं ॥ ४० ॥

वही दोनों युद्धमें मत्त तुमको मारनेको समर्थ हैं जो गिरीश देव तुमको वर देनेवाले हैं उनके बलसे दत्त तुम ॥ ४१ ॥ वसुध वाण धारण किये
 भीरुपणके संग युद्ध करनेको स्थित नहीं हो सकते उनके साथ कौन शत्रु युद्ध कर सकता है जिनके संग्राममें ॥ ४२ ॥ इस प्रकारके मृत्यु
 शत्रुओंसे युद्ध करते हैं उन मित्रोकीकी रक्षा करनेवालेसे तुम कर ग्रहणकी इच्छा करते ऐसीसे युद्ध करनेको कौन न जायना ॥ ४३ ॥ जो मित्रो-
 कीकी रक्षा करता है वह अपश्य युद्धमें तुम्हारा वध करना संग्राममें शार्ङ्ग वसुधसे निकले वाण तुम्हारा वध करेंगे ॥ ४४ ॥ जगत्प-
 तावेव वा क्षमो युद्धे हन्तुं कळमवाम्बितो ॥ यो गिरीशो गिरा देवो वरं दत्त्वा स तिष्ठति ॥ ४१ ॥ युवा हि किंनलो युद्धे तिष्ठतः
 सशरं वतुः ॥ यद्वाति शत्रुभिः सार्द्धं युद्धं कर्तुं समुद्यतो ॥ ४२ ॥ इदं शेष्य भृत्येषु युद्धं कुर्वन्तु शत्रुभिः ॥ त्रेलोक्यं
 रक्षतस्तस्मात्करामिच्छन् व्रजेत कः ॥ ४३ ॥ इतिष्यत्येव वा युद्धे त्रेलोक्यं यो हि रक्षति ॥ क्षरेण निशितेनाजो शार्ङ्गमुक्तेन
 केवलम् ॥ ४४ ॥ क नः संग्राम इत्येवं पुनराह जगत्पतिः ॥ पुष्करे पुण्यदे नित्यमुत गोवर्द्धने विरो ॥ ४५ ॥ मथुरायां प्रयागे वा
 वर्धन्वतो बलानि मे ॥ शत्रुवक्रधरे देवे जगत्पालनतत्परे ॥ ४६ ॥ राजसूयं महायज्ञं कर्तुमिच्छति कः स्वयम् ॥ वदन्वा
 स्वस्तिमान्मर्त्येस्त्वां विना को व्रजेत्सुखम् ॥ ४७ ॥ इदमिच्छति चेन्मूढ हास्यतां याति भूतले ॥ इत्युक्त्वा सात्यकिर्वीरो इसग्निरिव
 भुवि स्थितः ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसदिग्भक्रोपाख्यानं सात्यकिवाक्यं नामाष्टादशा-
 धिकशततमोऽध्यायः ॥ ११८ ॥

विने कहा है पुष्कर देव वा पवित्र गोवर्द्धन आदिके स्थानमें हमारा तुम्हारा संग्राम कहाँ होना ॥ ४५ ॥ मथुरा वा प्रयाग जहाँ
 तेरी इच्छा हो वहाँ मुझे अपना बल दिला संस चक्रवारी जगत्के पालन करनेवाले देवके विद्यमान होनेमें ॥ ४६ ॥ कौन स्वयं राजसूय यज्ञ कर
 सकता है और तेरे बिना ऐसा कहकर कौन इसमें अपना कल्याण मान सकता है ॥ ४७ ॥ हे मूढ ! जो तू ऐसी इच्छा करेना तो भूतलमें तेरा महा
 हास्य होना ऐसा कह सात्यकि हैंसता हुआ अपने आसनपर स्थित रहा ॥ ४८ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसदिग्भ-

कोपाख्याने सात्यकिवाक्यं नामाष्टादशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११८ ॥ वैशंपायन बोले, हे महाराज ! तब तो हंस और डिंभक कुब्ज हुए और रोषसे व्याकुल नेत्र कर इस प्रकार कहने लगे ॥ १ ॥ सब राजोंको देखते क्रोधसे मानो दिशाओंको जलाते हुए और सात्यकिके वचन सुन हाथसे हाथ मलते हुए बोले ॥ २ ॥ क्या वह नंदपुत्र लुण्ण और क्या वस्तु बलराम है यह कह फिर आक्षेप कर सात्यकिके कहने लगा ॥ ३ ॥ अरे यार-वपुन ! हमारे सम्मुख तू क्या कहता है ! हे मन्दात्मन् ! यहांसे निकल जा तू इस समय दूत है ॥ ४ ॥ नहीं तो ऐसे वचन कहनेवालेको मैं तत्काल वैशंपायन उवाच ॥ ततः क्रुद्धो महाराज हंसो डिंभक एव च ॥ इदं वे प्रोचतुर्वाक्यं रोषव्याकुलितेक्षणो ॥ १ ॥ दिघक्षन्तो दिशः सर्वाः सर्वांन्वीक्ष्य नृपोत्तमान् ॥ करेण निष्पीड्य करं स्मरन्तो तद्रथो महत् ॥ २ ॥ क नु क वा नन्दसूनुः क वा रामो बळोत्कटः ॥ इति ब्रुवाणो साक्षेपो सात्यकिं सत्यसंगमम् ॥ ३ ॥ अरे यादवदायाद किं हृषे नः पुरो गतः ॥ इतो निर्गच्छ मन्दात्मन्दूतस्त्वमसि साम्प्रतम् ॥ ४ ॥ अन्यथा बध्य एव त्वं प्रलपन् परुषं वचः ॥ सत्यं निर्लज्ज एवासि यद्व्या ईदृशं वचः ॥ ५ ॥ आत्मानिदं जगत्सर्वं ज्ञासितुं संयतो नृपो ॥ को नाम मालुषे लोके करदो नेव जीवति ॥ ६ ॥ इत्या गोपालकान्सर्वान्बद्धा यादवकान्बहून् ॥ गृहीमः करसर्वस्वं ततो मच्छ नराधम ॥ ७ ॥ अवध्यो दूततां प्राप्तो बह्वचं प्रभाषसे ॥ ईश्वरो नो वरं दाता ब्रह्माणामपि च बभुः ॥ ८ ॥ रक्षितारो महाभूतो संग्रामं मच्छतोश्च नो ॥ पितरं याजयिष्यावो जित्वा गोपाञ्जकं रणे ॥ ९ ॥ एते प्रोक्ता भृशं युद्धे कातराः सर्व एव ते ॥ इत्या तान्सबलान्पुद्धे पुनर्जेष्यामि केशवम् ॥ १० ॥

मार बलता, तू सत्यही निर्लज्ज है जो इस प्रकारके वचन कहता है ॥ ५ ॥ हम दोनों राजा इस सम्पूर्ण जगत्के शासन करनेमें समर्थ हैं ऐसा कौन है जो हमको कर दिये बिना जीवित रह सकता है ॥ ६ ॥ सब गोपालोंको मार और यादवोंको मारकर हम सर्वत्र उनका महज कर लेंगे, हे नराधम ! तू यहसे जा ॥ ७ ॥ दूतताको प्राप्त होनेसे तू अवध्य है बहुत अलुपित वचन कह रहा है ईश्वरने हमको वर और अन्न दिये हैं ॥ ८ ॥ और संग्राममें हम दोनोंकी शिष्टके दो गज रक्षा करते हैं, हम गोपालोंको रणमें जीतकर पिताको यज्ञ करायेंगे ॥ ९ ॥ जिनका दुमने नाम लिया है यह सब युद्धमें

कातर हैं उन सबको युद्धमें जीत केशवको भीतुंगा ॥ १० ॥ शरासन ग्रहण कर महासेना सजाओ जो पास सुगल कवच धारण किये ह्ये ॥ ११ ॥
 सहस्रों रथमें चढ़कर नवा परिषदिये बहुत जनवती और बहुत साधनसे समग्र ॥ १२ ॥ घोर सेनाको बड़े बड़े अस्त्र लेकर चले सात्याकि तू अवश्य
 होकर जा तुझे मरणसे भय नहीं है ॥ १३ ॥ हमारा संग्राम पुष्करमें कल वा परसोंसेही आरंभ होगा, तब हम केशवका बल देख लेंगे और जिनका
 नाम तैने लिया है उनका बलभी देखेंगे ॥ १४ ॥ सात्याकि बोला, हे हंस ! मैं तुम्हारे मारनेको वहाँ चलता हूँ और अबनी मारनेको समर्थ हूँ पर मैं
 संदर्तव्या महासेना प्रयुक्षितक्षरासना ॥ युक्षितप्रासमुक्षला युक्षितकवचा सदा ॥ ११ ॥ आरुढरथसाहस्रा गदापरिघसंकुला ॥
 सुप्रभूतेन्धनवती प्रभूतबलसाधना ॥ १२ ॥ चाल्यतां वाहिनी घोरा नलाप्यक्षा समन्ततः ॥ अवश्य एव गच्छ त्वं न ते मरणतो
 भयम् ॥ १३ ॥ संग्रामः पुष्करेऽस्माकं श्वः परशोऽपि वा नृप ॥ ततो ज्ञास्वामहे वीर्यं केशवस्य बलस्य च ॥ ये त्वयोक्ता नृपाः
 संरूपे तेषामपि च यद्वलम् ॥ १४ ॥ सात्याकिरुवाच ॥ इत्सागच्छामि वां हन्तुं श्वः परशोऽपि वा नृप ॥ अथैव हि मया वध्यो न
 चेद्दूतो भवान्यहम् ॥ १५ ॥ न हि श्वो वा परशो वा युवां कटुकभाषिणो ॥ दौत्ये हि दुःस्वमतुलं बहाम्येव सदा नृणाम् ॥ १६ ॥
 अन्यथाहं युवां इत्वा ततो यास्यामि निर्वृतिम् ॥ स्ववीर्यं बाहुदर्पं च दर्शयन्वां नृपाधमो ॥ १७ ॥ शङ्खचक्रगदापाणिः शार्ङ्गधन्वा
 किरीटभृत् ॥ नीलकुञ्चितकेशाढ्यो लम्बबाहुः श्रिया वृत्तः ॥ १८ ॥ स सर्वलोकप्रभवो विश्वरूपः सुरूपवान् ॥ दैत्यदानवहन्तासौ
 योगिध्येयः पुरातनः ॥ १९ ॥ पद्मकिञ्जल्कनयनः श्यामलः सिंहविक्रमः ॥ सृष्टिस्थितिलयेष्वेकः कर्ता त्रिजगतो गुरुः ॥ २० ॥
 दूत हूँ ॥ १५ ॥ तुम कटु बोलनेवालोंको कल परसोंतकभी क्षमा नहीं करता दूत होनेसे यह कठिन दुःख धारण करना पड़ा ॥ १६ ॥ नहीं तो
 अभी तुमको मारकर शान्तिको प्राप्त होता, हे नृपाधमो ! अपनी बाहुओंका बलवीर्य दिखाऊंगा ॥ १७ ॥ शंख चक्र गदा पद्म हाथमें लिये किरीट-
 धारी शार्ङ्गधन्वा नील कुञ्चित केशवान् लम्बायमान भुजा लक्ष्मीसे युक्त ॥ १८ ॥ सब लोकके उत्पन्न करता विश्वरूप स्वरूपवान् दैत्य दानवोंके मार-
 नेवाले योगियोंको ध्यान करने योग्य पुरातन ॥ १९ ॥ कमलकी समान नेत्र श्यामस्वरूप सिंहकी समान चालशाले सृष्टि स्थिति लयमें वह एकही

कर्ता तीनों जगदके छंद ॥ २० ॥ तीक्ष्ण बाणसे आपका अभिमान दूर करेंगे यह कह रखपर चः सात्यकि चला गया ॥ २१ ॥
 इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे त्रापायां हंसदिग्भकोपाख्याने एकोनविंशधिकशततमोऽध्यायः ॥ १९ ॥ वैशंपायन बोले; शिनिपुंमव
 सात्यकि द्वारकापुरीमें प्रवेश कर उनका सब वृत्तान्त भीष्मणसे कहता हुआ ॥ १ ॥ तब शतःकाल होतेही केशिसूदन केशव
 चक्रपाणि नदा धारण करनेवाले अपने बलाघ्नसे बोले ॥ २ ॥ रथ कुंजर घोड़ेवाली तथा अनेक भेरियोंसे युः हमारी सेना तयार करो जो प्राप्त
 झरेण निशितेनाजो दर्प वा व्यपनेष्यति ॥ इत्युक्त्वा रथमारुह्य प्रययो सात्यकिः किल ॥ २१ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु
 भविष्यपर्वणि हंसदिग्भकोपाख्याने एकोनविंशधिकशततमोऽध्यायः ॥ १९ ॥ वैशंपायन उ। च ॥ प्रविश्य स पुरं विष्णोः
 सात्यकिः शिनिपुंजयः ॥ आचक्षतेऽथ कृष्णाय यथावृत्तं तयोस्तथा ॥ १ ॥ ततः प्रभाते विमले केऽवः केशिसूदनः ॥ बलाघ्नहा-
 तुवाचेवं चक्रपाणिर्गदाधरः ॥ २ ॥ संनद्धतां बलं सर्वं रथकुंजरवाजिमत् ॥ अनेकभेरीपणवं प्रासादं परिचाकुलम् ॥ ३ ॥ सध्वजं
 सपताकं च साठंकारपरिच्छदम् ॥ ते तथेति प्रतिज्ञाय सर्वं चक्रधीनगाः ॥ ४ ॥ आदाय सुदृढं चापं रथमारुह्य वंक्षिताः ॥ अग्रतो
 जम्बुरत्यर्थं सेनायाः पुरुषोत्तमाः ॥ ५ ॥ सात्यकिश्च तथा राजप्रगृहीतशरासनः ॥ बभौ क्रोचसमायुक्तो जगामाग्रे महाबलः ॥ ६ ॥
 अभ्ये च यावथाः शूराः प्रगृहीतमहासुधाः ॥ सिंहनादं प्रकुर्वन्तो जम्बुरत्यर्थमुत्तमाः ॥ ७ ॥ हरिस्तु रथमारुह्य संस्कृतं दारुकैर्नृ ॥
 शार्ङ्गभारसहं घोरं शुद्धित्वा सशरं धनुः ॥ ८ ॥ चक्रपाणिस्तदा शङ्की गदाशरवरासिमन् ॥ बज्रगोधाकुलिश्राणः पीतवासा जनावनः ॥ ९ ॥
 परिच धारण किये ॥ १ ॥ ध्वजा पताका और सब अलंकारोंसे व्याप्त है शीघ्र तयार करो बहुत अच्छा ऐसा कहकर उन्होंने बहुत शीघ्र यह
 किया ॥ ४ ॥ दृढ चाप धारण कर रथमें स्थित हुए वे पुरुषमेठ रथमें चढ़कर आगे २ चले ॥ ५ ॥ हे राजा ॥ सात्यकिश्री शरासन ग्रहण कर क्रोचको
 प्राप्त हो आगे आगे मग्न करने लगा ॥ ६ ॥ औरभी शूर यादव आयुध ग्रहण किये सिंहनाद करते मग्न करने लगे ॥ ७ ॥ और भीष्मण दारुकके
 सजाये रथमें चढ़कर और शार्ङ्गभारके सहन करनेवाले घोर बाण धनुषको लिये ॥ ८ ॥ चक्र नदा सर आति ग्रहण करे गोधांछाडि त्राण बांधे पीत

रत्न पहरे जनार्दन ॥ १ ॥ कमलोंकी माला पहरे नये मेवकी समान कान्तिबाज् जाल गौसे स्तुतिको प्राप्त हो प्रसन्नतासे चले ॥ १० ॥ सुत मानवपुत्र
उपको गाने लने सब सेवा लेकर उत्तर दिशाको चले ॥ ११ ॥ सम्पूर्ण बलसे श्रीकृष्ण पांचजन्य शंखको मुखमें रखकर शत्रुओंको भय देनेवाले महा-
शब्द करने लगे ॥ १२ ॥ जब श्रीकृष्णने उस शंखराजको बजाया तब उसने शब्दसे आकाशको पूर्ण कर दिया ॥ १३ ॥ इस प्रकारसे उस शंखके
बजनेमें सहस्रों शंख बजने लगे तथा बहुतसी भेरी और मृदंग बजने लगे ॥ १४ ॥ यह ऐसा शब्द हुआ जैसे चौपासेमें मेघ शब्द करते हैं, हे महाराज

पद्ममालावृतोरस्को नवजीमूतसन्निभः ॥ ययौ रथगतो विप्रेः स्तूयमानो मुदान्वितेः ॥ १० ॥ सूतेर्माणघपुत्रेश्च गीयमानस्ततस्ततः ॥
आनीच सेनां सकलां ययौ काष्ठामयोत्तराम् ॥ ११ ॥ पाञ्चजन्यं मुखे न्यस्य सर्वप्राणेन केशवः ॥ दध्मौ महारवं कुर्वञ्छूणां भयवर्द्ध-
नम् ॥ १२ ॥ आध्मातस्तेन हरिणा स चक्रे शङ्कराद् ध्रुवम् ॥ रवः स रोदसी राजन्पूरयामास सर्वतः ॥ १३ ॥ तस्मिन् उड्डे
तथाध्माते दध्नुः शङ्खान् सहस्रशः ॥ भेर्यश्चापि समाध्माता मृदङ्गा बहवो नृप ॥ १४ ॥ नेदुरत्पर्यमतुलं घर्मान्ते जलदा यया ॥
जयाययुर्महाराज पुष्करं पुण्यवर्धनम् ॥ १५ ॥ सरसस्तस्य राजेन्द्र पुष्करस्य नृपोत्तमाः ॥ प्रतीक्ष्य हंसदिम्भको युद्धाय समव-
स्थिताः ॥ १६ ॥ निवेशं कारवामासुर्पादवाः सर्व एव हि ॥ त्वं त्वं ययुः सुखं राजन्प्रगृहीतकुटीमठम् ॥ १७ ॥ भगवानपि गोविन्दः
सरो दृष्ट्वा सुशोभनम् ॥ उपस्पृश्य जले तस्मिन्प्रणम्य यतिपुङ्गवान् ॥ १८ ॥

किर वे पुण्यस्थान पुष्करमें प्राप्त हुए ॥ १५ ॥ वे राजोंमें उच्चम उस पवित्र सरोवर पुष्करमें प्राप्त हुए और हंस दिम्भककी वाट देखते वहां स्थित
हुए ॥ १६ ॥ सब ओर पादवोंने अपने ठेरे जाल दिये अपने कुटीमठमें प्राप्त हो सब प्रसन्नतासे स्थित हुए ॥ १७ ॥ प्रणवान् गोविंदजी उस मनोहर
सरोवरको देखकर यतिभेदोंको प्रणाम कर जलस्पर्श करते हुए ॥ १८ ॥

ह. ५.
॥ २५१ ॥

और उनके आगमनकी इच्छासे उसके तटमें स्थित हुए और ब्राह्मणोंकी वेदध्वनि श्रवण करने लगे ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेख हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसदिम्भकोपाख्याने कृष्णपुष्करप्रवेशो नाम विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२० ॥ वैशम्पायन बोले; हे नृप ! तब वे हंस और दिम्भकभी पुष्करको चले और महाचाप ग्रहण कर रथ ध्वजासे युक्त ॥ १ ॥ महाभूतकी समान वे प्रलय करनेको चले शरीरमें प्रभ्रम लगाये महाशब्द करते हुए ॥ २ ॥ लडाटमें त्रिपुंड्र लगाये रुद्राक्षसे शोभित मानो दो रुद्रही लोक संहार करनेको प्रभ्रम हुए हैं ॥ ३ ॥ हे राजन् ! उनके पीछे

तयोरगमनं लिप्सुरास्ते तीरे यथासुखम् ॥ शृण्वन् वेदध्वनिं विष्णुब्राह्मणानां समन्ततः ॥ १९ ॥ इति श्रीमहाभारते स्त्रिलेख हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसदिम्भकोपाख्याने कृष्णपुष्करप्रवेशो नाम विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अथ तौ हंसदिम्भको जम्मुतुः पुष्करं प्रति ॥ प्रहृष्टमहाचापौ सरथौ सज्जौ नृप ॥ १ ॥ पुरस्सरमहाभूतो संहरन्ताविवोल्बणौ ॥ प्रकुर्वन्तौ सिंहारं भस्मना परिलेपितौ ॥ २ ॥ त्रिपुंड्रकलडाटान्तौ रुद्राक्षपरिशोभितौ ॥ अन्यौ द्वावि व रुद्रौ तौ लोकसंहारकारकौ ॥ ३ ॥ ततोऽनुजग्मुः शतशः सैन्यानि नृपसत्तम ॥ अक्षौहिण्यो दक्षेवासंस्तयोरथ समागताः ॥ ४ ॥ विचक्रस्तु महाराज दानवो नगसन्निभः ॥ तयोरेव सखा पूर्वमासीच्च बलशालिनोः ॥ ५ ॥ शक्रो यस्य पुरसरः स्यातुं शक्तो न वज्रभृत् ॥ यो हि वीरो महाराज देवदेत्यसमागमे ॥ ६ ॥ देवान्निघ्नंस्तथा राजन् देवेन्द्रमजयन्महान् ॥ अकरोच्च पुरा युद्धं विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ ७ ॥ यो हि द्वारवर्ती प्राप्य बबाधे यदुपुद्गवान् ॥ स तदानीं महाराज श्रुत्वा युद्धमुपस्थितम् ॥ ८ ॥

सैकड़ों सेना चलने लगी दश अक्षौहिणी सेना उनके रथके साथ चली ॥ ४ ॥ हे महाराज ! एक पर्वतकी समान बड़ा बली विचक्र नाम दानव उन दोनों बलशालियोंका सखा था ॥ ५ ॥ जिसके सामने वज्रशरी इन्द्रभी खड़े होनेको सप नहीं था, हे महाराज ! जो वीर देवता दैत्योंके समानममें ॥ ६ ॥ देवताओंको मार देवेन्द्रको जीतता हुआ और जिसने पहिले विष्णुके साथ युद्ध किया था ॥ ७ ॥ और जिसने द्वारकापुरमें जाकर यदुवंशियोंको

भा. टी.

प. ३५-१२८

॥ २५१ ॥

दुःखी किया था। हे महाराज ! वह उपस्थित युद्ध श्रवण कर ॥ ८ ॥ परिव हाथमें छिपे सैकड़ों दानवोंको संग छिपे वृष्णिवंशियोंसे द्वेष करता चला ॥ ९ ॥ इस प्रकार वह हंस द्विभक्तकी सहायता करनेको उद्यत हुआ विचक्र दैत्यका हिडिम्ब राक्षसरति ॥ १० ॥ बड़ा मित्र था अर्थात् युद्धमें प्राणोंतकका देनेवाला था शिला शूल तत्वार हाथमें छिपे राक्षसोंके साथ ॥ ११ ॥ पुरुषोंके खानेवाले राक्षसोंका अधिपति उसको सहायता करनेको गया, उसके साथमें अटाली सहस्र दानव थे ॥ १२ ॥ हे महाराज ! इन सबके हाथमें शिला और परिष थीं उनकी महासेना यादवोंसे

अनेकशतसाहस्रैर्दानवैः परिषाघुचैः ॥ वृतः समभवदैत्यो वृष्णिद्वेषानृपोत्तम ॥ ९ ॥ हंसस्य द्विभक्तस्याथ साहाय्यं कर्तुमुद्यतः ॥ विचक्रस्याथ दैत्यस्य हिडिम्बो राक्षसेश्वरः ॥ १० ॥ अतीव मित्रतां यातो दद्यात्प्राणांश्च संयति ॥ राक्षसेरपरेः सार्धं शिलाशूरासिपा-
णिभिः ॥ ११ ॥ यथो तस्य सहायार्थं हिडिम्बः पुरुषादपः ॥ अद्याशीतिसहस्राणि राक्षसास्तस्य चाभान् ॥ १२ ॥ अनुयाता महाराज शिलापरिषनादवः ॥ तयोस्तत्र महासेन्यं गच्छतोः केशवं प्रति ॥ १३ ॥ मिश्रितं दैत्यसंघेऽथ राक्षसेऽथ समन्ततः ॥ अत्यद्भुतं महारौद्रं त्रेलोक्यभयदायकम् ॥ १४ ॥ दैत्येन सहितो तो हि जग्मतुः पुष्करं प्रति ॥ तावेतो हंसद्विभक्तौ हतुं केशवमजगता ॥ १५ ॥ ततः श्रुत्वा जरासन्धो विग्रहं यदुभिः सह ॥ नाकरोनृपसाहाय्यं पापं मे भवितेति ह ॥ १६ ॥ गच्छतोः समितिं राजहंसस्य द्विभक्तस्य च ॥ अतित्वरितविक्रान्तास्ते ययुः पुष्करं प्रति ॥ १७ ॥ सिंहनादं विमुञ्चन्तः कथयन्तः परस्परम् ॥ अहमेव नृपा युद्धं करोमि प्रथमं हरेः ॥ १८ ॥ इत्यबुवन्नृपा राजञ्जितशः केशवं प्रति ॥ संप्राप्तास्ते नृपश्रेष्ठाः पुष्करं पुण्यवर्द्धनम् ॥ १९ ॥

युद्ध करनेको चली ॥ १३ ॥ इस प्रकार दैत्य और राक्षसोंसे संयुक्त वह सेना महारौद्र अति अद्भुत त्रिलोकीको भय देनेवाली हुई ॥ १४ ॥ इस प्रकार वे दोनों दैत्योंके संग पुष्करको चले वे हंस द्विभक्त केशवके मारनेकी इच्छासे चले ॥ १५ ॥ उस समय जरासन्धने यदुओंके संग विग्रह सुनकर इसमें पाप जानकर राजोंकी सहायता न की ॥ १६ ॥ हंस और द्विभक्त इस प्रकारसे अतिविक्रमको प्राप्त हो पुष्करके प्रति गमन करने लगे ॥ १७ ॥ सिंहनाद करते गमन करने लगे कि प्रथम मैंही राजाओंसे पहले ओछणसे युद्ध करूँगा ॥ १८ ॥ इस प्रकारसे सबही राजा कहने लगे कि इस प्रकार

इस पुण्यवर्ष पुष्करमें संव्राम होता ॥ १९ ॥ मुनिमंडले युक्त और वृद्ध २ अपि रोंसे सेवित यह सब लोकोंमें पुष्करही अत्यन्त भेद्य है ॥ २० ॥
 पुष्कर और पुण्डरीकाक्ष यह दोही दर्शन और राखसे पाप दूर करनेवाले हैं ॥ २१ ॥ हे राजन् ! यह पुष्कर और पुण्डरीकाक्ष दोही देवता
 मुनिमंडल और महात्माओंसे सेवित हैं ॥ २२ ॥ हे नृपते ! यह दोनोंही पापके नाशक हैं जहाँ ये दोनों हैं वहाँ राजा गये ॥ २३ ॥ वहाँ
 उन्होंने परम देव श्रीकृष्णको देखा वह पुष्कर ब्रह्मस्थान मुनिमंडलसे सेवित है ॥ २४ ॥ हे राजन् ! माते इन दोनोंको नमस्कार करो वहाँ सब
 मुनिजुष्ट तपोवृद्धैर्ऋषिभिश्च निषेवितम् ॥ अत्यन्तभद्रं लोकेषु पुष्करं प्रथमं नृप ॥ २० ॥ पुष्करं पुण्डरीकाक्षो द्वावेव जगतीपते ॥
 दर्शनात्स्पर्शनाच्चैव क्लिबवच्छेदिनो नृप ॥ २१ ॥ पुष्करं पुण्डरीकाक्षो द्वावेव नृपसत्तम ॥ सेव्यमानो मुनिप्रेष्ठैरमरोर्वेर्म-
 हात्मभिः ॥ २२ ॥ द्वावेव हि नृपप्रेष्ठ सर्वपापप्रणाशको ॥ तावुभौ यत्र सहितौ तत्र ते संस्थिता नृपाः ॥ २३ ॥ दृष्टवन्तो हरिं
 विष्णुं विष्टरश्रवसं परम् ॥ पुष्करं पुण्यनिष्ठं तीर्थं ब्रह्मनिषेवितम् ॥ २४ ॥ ताभ्यां कुरु नमस्कारं मनसा नृपसत्तम ॥ अहो निःश्रे-
 षमभवत्तत्र भूयो न संशयः ॥ २५ ॥ सेव्यं तत्र च संप्राप्तं दैत्यराक्षसमाकुलम् ॥ अनेकमेरीपणवज्ञशरीदिण्डिमाकुलम् ॥ २६ ॥
 नानापणवसंमिश्रं रक्षोनादविनादितम् ॥ प्रविश्य सरसस्तीरं पुष्करस्य विज्ञापते ॥ दर्शयामास देवेश युद्धाय समुपस्थितम् ॥ २७ ॥
 इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसदिग्भकोपाख्यानं एकविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२१ ॥ वैशम्पायन
 उवाच ॥ द्वे सेने संगते राजन्सध्वजे सपरिच्छदे ॥ महापरिचसंकीर्णे गदाशक्तिसामकुले ॥ १ ॥
 पापोंका निरशेष हो जायगा इसमें संदेह नहीं ॥ २५ ॥ फिर दैत्यराक्षसोंसे युक्त वह सेना वहाँ प्राप्त हुई अनेक मेरी पणव ज्ञशरी और दिग्भको
 संयुक्त थी ॥ २६ ॥ अनेक प्रकारके बाजोंसे संयुक्त राक्षसोंके नादसे शङ्कायमान इस प्रकार पुष्करके स्थानमें प्राप्त होकर युद्धके निमित्त स्थित
 केशवको देखा ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसदिग्भकोपाख्यानं एकविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२१ ॥
 वंशपायन बोले; हे राजन् ! जब ध्वजापरिच्छेदसहित दोनों सेनाकी संगति हुई तब महापरिच तथा गदा शक्तिसे समाकुल ॥ १ ॥

भेरी झंझरसे सन्पुर्ण डिमडिमके शब्दसे संकुल महाबल ग्रहण किये शूल तलवार कार्मुक धारण किये ॥ २ ॥ परस्पर उत्साहपूर्वक दालन युद्ध करने लगे; वे बाण धनुषसे मुक्त होकर प्राणियोंको निर्भव कर ॥ ३ ॥ शरीरोंकी विदीर्ण करने लगे योधाओंकी भुजाओंसे छूटे सब वीरोंकी छातीकी विदीर्ण कर ॥ ४ ॥ तथा उनके स्फुरायमान शिरोंको ग्रहण कर आकाशको गये उसी प्रकार राजोंसे छोटे हुए परिष ॥ ५ ॥ राक्षसोंके शरीर तिलकी समान सण्ड सण्ड करने लगे, इस प्रकार एक दूसरेके वधकी इच्छासे सिंहनाद करने लगे ॥ ६ ॥ हे राजेन्द्र ! राक्षस राजा

भेरीझंझरसंपूर्ण डिण्डिमारावसंकुले ॥ प्रश्रुतमहाशस्त्रे शूलासिवरकार्मुके ॥ २ ॥ परस्परकृतोत्साहे चक्राते युद्धमुल्लङ्घनम् ॥ ते शराः कार्मुकोत्सृष्टा निर्भिद्याथ शरीरिणाम् ॥ ३ ॥ शरीराणि महाराज जग्मुर्दूरं सदस्रशः ॥ भटबाहुविनिर्मुक्तयः सङ्गा निर्भिद्य वक्षसि ॥ ४ ॥ स्फुरन्तश्च तथा राज्ञिच्छ्रांस्यादृत्य सं ययुः ॥ परिघाश्च तथा राज्ञां बाहुभिः परिचोदिताः ॥ ५ ॥ तिलशश्चक्रतुलं शरीरं नृप रक्षसाम् ॥ दैत्यानां कुर्वतां नादमन्योन्यवधकाङ्क्षिणाम् ॥ ६ ॥ दैत्या रक्षांसि राजेन्द्र राजानश्च समन्ततः ॥ अन्योन्यं परिनेज्जेष्वपमुक्तेः शिलाशितैः ॥ ७ ॥ शरैश्च भोगिभोगाभेस्तीक्ष्णमन्ये महाबलाः ॥ राक्षसा दानवाश्चान्ये मत्तमातङ्गविक्रमाः ॥ ८ ॥ अन्योन्यं जग्निरे राज्ञश्चापमुक्तेर्महाशरैः ॥ नागा नागेर्महाराज इया अन्यैः समन्ततः ॥ ९ ॥ रथा रथैः समाजग्मुः सादिनः सादिभिस्तथा ॥ पट्टिशसिशरवातैः कुन्तैः सायककर्षणैः ॥ १० ॥ सशक्तिपरिघप्रासपश्वधसमाकुलेः ॥ भिण्डिमलेर्महारो-
द्रेजधुरन्योन्यमाहवे ॥ ११ ॥

और दैत्य एक दूसरेको तिला और परिघोंसे मारने लगे ॥ ७ ॥ दूसरे महाबली सर्पके शरीरकी समान तीक्ष्ण बाणोंसे मारने लगे वे राक्षस दानव नच प्रातंगकी समान पराक्रमी थे ॥ ८ ॥ चापसे छूटे महाबाणोंसे परस्पर एक दूसरेको मारने लगे, हे महाराज ! अनेक हाथी और घोड़ोंसे हाथी घोड़ोंका युद्ध होने लगा ॥ ९ ॥ रथी रथियोंसे अश्वारोही अश्वारोहियोंसे युद्ध करने लगे, पट्टिश अति शर समूह कुन्त सायक कर्षण ॥ १० ॥ शक्ति परिघ

ह. वं.

॥ २५३ ॥

प्राप्त परसोंसे समाकुल भिडिपाल आविसे परस्पर एक दूसरेको मारने लगे ॥ ११ ॥ इस प्रकार चापसे छटे हुए बाणोंसे परस्पर एक दूसरेको मारने लगे हे राजन् ! राक्षस दावन और क्षत्रिय इधर उधर दौड़ते महाशब्द करने लगे ॥ १२ ॥ कोई तलवारसे मारकर पृथ्वीमें गिर पड़े किन्ही बलिपोंके मस्तक गदासे चूर्ण हो गये ॥ १३ ॥ हे महाराज ! किन्हीकी गर्दन परिघसे चर्च हो गई कोई यमलोक और कोई स्वर्गको जाने लगे ॥ १४ ॥ कोई अप्सराओंसे संगतिको प्राप्त हो अपने कलेवरको देखने लगे कोई अपने पराणोंको भ्रान्त हाकर मारन लगे ॥ १५ ॥ हे राजन् ! इस अवसरमें सैकड़ों शंस और मेरी

अन्योन्यं जग्निरे राजश्चापमुक्तेः शिलाशितेः ॥ राक्षसा दानवा राजन्क्षत्रियाश्च समन्ततः ॥ इतश्चेतश्च घावन्तः कुर्वन्तो विस्वरं
रवम् ॥ १२ ॥ इताः केचिन्महाराज पेतु रुर्या महासीभिः ॥ केचिन्मथितमास्तिष्का गदाभिर्धिर्यवत्तमाः ॥ १३ ॥ भिन्नग्रीवा
महाराज परिघैः परिचायुधैः ॥ यमराष्ट्रं गताः केचित्केचित्स्वर्गं समाययुः ॥ १४ ॥ अप्सरोभिः समासेदुः पश्यन्तः स्वकलेसरम् ॥
केचित्स्वांश्च परांश्चैव हत्वा भ्रान्ता इवाभवन् ॥ १५ ॥ एतास्मिन्नन्तरे सजन् शङ्का भयैः सहस्रशः ॥ सस्वनुः सर्वतः सेन्ये मृदङ्गा
बहवस्तथा ॥ १६ ॥ मध्यंदिनगते सूर्ये तापं दधाति घोरवत् ॥ ततः पिशाचा विकृताः कराडविततोदराः ॥ १७ ॥ राक्षसाश्च
महाघोराः पिशितं केशशाङ्गलम् ॥ मुदिता भक्षयामासुः पिबन्तः शोणितं बहु ॥ १८ ॥ संचितानि शवान्यासन्कबन्वाः स्वङ्गपा-
तिताः ॥ विभज्य देशं बहुशो युद्धभूमौ शकाशिनः ॥ १९ ॥ अयं श्येना मृगाश्चैव कङ्का गृध्रास्तथा परे ॥ तुण्डैः शवान्निनिष्कृष्य
भक्षयन्ति ततस्ततः ॥ २० ॥

सेनामें चारों ओरसे बजने लगी और बहुतसे मृदंग बजने लगे ॥ १६ ॥ जिस समय सूर्य मध्याह्न समयको प्राप्त हो घोर प्रचण्ड हुए उस समय घोर
मुख बड़े पेटवाले पिशाच और महाघोर राक्षस मांस खाते प्रसन्न हो रुधिर पान करने लगे ॥ १७ ॥ और संचित हुए सङ्गसे पातित हो कबंध नाचने
लगे बहुतसे देवको विभाग कर युद्धभूमिमें मृतकोंको मारने लगे ॥ १८ ॥ १९ ॥ तब श्येन मृग कंक गृध्र तुण्डोंसे मृतकोंको खेंचने लगे ॥ २० ॥

भा. टी.

प. ३ अ. १२२

॥ २५३ ॥

हे राजन् ! उस युद्धमें सचासी सहस्र हाथी और चालीस सहस्र (हजार) घोड़े मृतक हुए ॥ २१ ॥ हे महाराज ! एक लक्ष रथीभी मृतक हुए और तीस करोड़ घुड़सवार मृतक हुए ॥ २२ ॥ सूर्यके मध्याह्नकालमें इस प्रकार मृत्युको प्राप्त हुए और कोई प्यासे हो पुष्करमें प्रवेश करने लगे ॥ २३ ॥ और कोई पृथ्वीको आलिंगन कर युद्धमें मीत होकर बोलने लगे कोई रथसे गिरकर खुले बाल पृथ्वीमें गिरने लगे ॥ २४ ॥ कोई सवार होठ चाटते पृथ्वी-पर गिरे वह युद्ध पुष्करतीर्थमें महाक्षोर हुआ, हे राजन् ! जैसा पूर्वकालमें देवता और देव्योंका युद्ध हुआ था ॥ २५ ॥ इति श्रीम० सिलेपु हरिवंशे

सप्ताशीतिसहस्राणि हता नागा नृपोत्तम ॥ त्रिंशत्सहस्रमयुतं निहता इयसत्तमाः ॥ २१ ॥ हतं लक्षं महाराज रथानां रथिभिः सह ॥ त्रिंशत्कोट्यो हतास्तत्र सादिनः सायुधा भृशम् ॥ २२ ॥ मध्वादिनगते सूर्ये हताः केचन निर्गताः ॥ केचिच्च तृषिता राक्षन्निविशुः पुष्करं सरः ॥ २३ ॥ केचिद्धूमि समालिङ्ग्य भीता इत्यब्रुवन् रणे ॥ मुक्तकेशाः पतन्ति स्म रथान्संत्यज्य केचन ॥ २४ ॥ संदष्टो-ष्ठपुटः केचित्सादिनः पुततो हताः ॥ अत्यद्भुतं महायुद्धमासीत्पुष्करतीर्थके ॥ यथा देवासुरं युद्धमासीत्पूर्वं नृपोत्तम ॥ २५ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेपु हरिवंशे भविष्यपर्वणि द्वाविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२२ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एतस्मिन्नन्तरे राजन्द्रन्द्रयुद्धमवर्तत ॥ विचक्रं योधयामास शार्ङ्गध्वा गदाधरः ॥ १ ॥ बलभद्रोऽथ हंसेन द्विभकेन च सात्याकिः ॥ वसुदेवोऽग्रे-नाभ्यां द्विदम्बः पुरुषादकः ॥ २ ॥ शेषाश्च शेषे राजेन्द्र चक्रुर्धुद्धमदीनमाः ॥ वासुदेवस्त्रिसप्तत्या दैत्यं वक्षस्यताडयत् ॥ ३ ॥ शरेर्निशितधाराग्रेर्विस्मयं दर्शयन् रणे ॥ दानवो देवदेवेशं दृष्टेन निशितेन च ॥ ४ ॥

भविष्यपर्वणि भाषायां हंसादिभकोपाख्यानं द्वाविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२२ ॥ वैशम्पायन बोले, हे राजन् ! उसी समय द्वंद्वयुद्ध होने लगा शार्ङ्गध्वा गदाधर विचक्रके साथ युद्ध करने लगे ॥ १ ॥ बलभद्र हंसेके साथ और द्विभकके साथ सात्याकिका संग्राम होने लगा वसुदेव और उग्रसेनके साथ राक्षस द्विदम्बका युद्ध होने लगा ॥ २ ॥ हे महाराज ! शेष योधा बड़ी धीरतासे दूसरोंके साथ संग्राम करने लगे वासुदेवने ७३ बाण दैत्यकी छातीमें मारे ॥ ३ ॥ वह बाण बड़े तीक्ष्ण थे जिससे रणमें दानवको बड़ा विस्मय हुआ दानवनेभी श्रीकृष्णको बड़े तीक्ष्ण ॥ ४ ॥

बाणसे कर्णपर्यन्त लेंचकर छातीमें इत्रके देसते २ प्रहार किया ॥ ५ ॥ उस बाणसे कस्तूरालमें निद होकर जनार्दन देव सपिर वसन करने लगे जैसे आदि-
कालमें प्रजा ॥ ६ ॥ तब श्रीकृष्णने क्रोधकर शुरसे इसकी ध्वजा छेदन कर दी चारों घोड़े मारकर तीन बाणोंसे सारथिको मारकर अपना महासंस्त नवाया
जैसे तारकामय संग्राम हुआ था तब क्रोधमूर्ति दानवने तत्काल रथसे उतरकर ॥ ७ ॥ ८ ॥ दुस्सह वीर्यशालिनी महाघोर नवाको ग्रहण कर उस दैत्येन्द्रने
श्रीकृष्णके किरीटपर आघात किया ॥ ९ ॥ और फिर मस्तकपर प्रहार करके सिंहनाद किया, और फिर उन राक्षसने एक महाशिलाको ग्रहण कर ॥ १० ॥

शरेणाकर्णमाकृष्य धनुःप्रवरमीश्वरम् ॥ जघान स्तनमध्ये च पश्यतस्तु शचीपतेः ॥ ५ ॥ तेन विद्धोऽय भगवान्क्षोदेक्षे जनादनः ॥
अवमच्छेणितं विष्णुरादिकाले यथा प्रजाः ॥ ६ ॥ ततः क्रुद्धो हर्षकिशः क्षुरप्रेणाह्नदजम् ॥ अश्वान् चतुरो हत्वा सारथिं च
शरेस्त्रिभिः ॥ ७ ॥ ततो दध्मौ महाशङ्खं यथा तारामये रणे ॥ रथादुत्थुत्य सहसा दानवः क्रोधमूर्च्छितः ॥ ८ ॥ मदां गृह्य महाघोरां
दुःसहां वीर्यशालिनीम् ॥ तया जघान दैत्येन्द्रः किरीटे केशवस्य ह ॥ ९ ॥ ललटे च पुनर्विष्णुं सिंहनादं व्यनीन्दत् ॥ ततः शिलां
च महतीं प्रगृह्य दनुजः क्रिड ॥ १० ॥ भ्रामयित्वा दक्षगुणं प्राहरत्केशवोरसि ॥ ताम्पापतन्तीं संप्रेक्ष्य हस्तेनादाय केशवः ॥ ११ ॥
जघान च तया दैत्यं स पपातादितः क्षितौ ॥ गतासुरिव संजज्ञे श्वसन्निव पपात ह ॥ १२ ॥ प्राप्य संज्ञां ततो दैत्यः क्रोधाद्भिषुण्मा-
बन्धो ॥ आदाय परिघं घोरमिदमाह जनार्दनम् ॥ १३ ॥ अनेन तव गोविन्द दर्पजातं विदन्म्यहम् ॥ विक्रमज्ञस्तदा चासि मम
देवासुरे रणे ॥ १४ ॥ तावेव विपुलो बाहू स एवास्मि जनार्दन ॥ तथापि युध्यसे वीर ज्ञात्वा त्वं मामकं बलम् ॥ १५ ॥

उसे दश बार घुमाकर केशवके हृदयमें प्रहार किया, उसे अपना देख केशवने हाथसेही ग्रहण कर ॥ ११ ॥ उससे दैत्यकोही मारा जिससे अद्विष्ट हो दैत्य
पृथ्वीपर श्वास लेता प्राणरहितकी समान निर पडा ॥ १२ ॥ तब वह दैत्य संज्ञाको प्राप्त होकर दुगुना क्रोध कर परिघको उठाया जनार्दनसे बोला ॥ १३ ॥
हे गोविन्द ! जान लो कि इससे तुम्हारा वं चूर्ण हो जायगा देवासुरके युद्धमें आपने मेरा पराक्रम देखा है ॥ १४ ॥ यह वही मेरी विपुल भुजा और

वही तुम हो. हे वीर ! तौमी तुम युद्ध कर मेरा बल देखोमे ॥ १५ ॥ अब मेरी भुजासे छूटे हुए इस परिधको निवारण करो, ऐसा देवदेव शंस चक
 गदाधारीसे कहकर सबके देखते दैत्यने वह परिध लोकेयर फेंका ॥ १६ ॥ कृष्णने उसको भुजासे ग्रहण कर कहा अब तुझको मारा और खड्गसे
 उसके खण्ड खण्ड कर ढाले ॥ १७ ॥ तब उस दैत्यने सौ शास्त्रका महावृक्ष उखाड़कर उससे हरिको ताडन किया ॥ १८ ॥ उसकोभी श्रीकृष्णने तिलकी
 बराबर खण्ड कर दिया इस प्रकार माधव बहुत कालतक दैत्यके साथ कोडा करके ॥ १९ ॥ तीक्ष्ण बाण लेकर दैत्यके मारनेकी इच्छा करने लगे,
 वारयेन महाबाहो परिधं बाहुनिःसृतम् ॥ इत्युक्त्वा देवदेवेशं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥ चिक्षेप दैत्यो लोकेशं सवलोकस्य पश्यतः ॥ १६ ॥
 तं गृह्य बाहुना कृष्णो हतोऽसीति वदन् हरिः ॥ खण्डशः कारयामास खड्गेन निशितेन ह ॥ १७ ॥ उत्पाट्य वृक्षं दैत्येशः शतशस्त्रं
 महाशिवम् ॥ तेन संपोषयामास विष्टरश्रवसं विभुम् ॥ १८ ॥ छित्त्वा तं चापि खड्गेन तिलशश्च चकार ह ॥ विस्त्रीड्य सुचिरं
 विष्णुस्तेन दैत्येन माधवः ॥ १९ ॥ हन्तुमेच्छतदा दैत्यमादाय निशितं शरम् ॥ आग्नेयास्त्रेण संयोज्य जघानेन महान् हरिः ॥ २० ॥
 संदह्य स शरो दैत्यं सर्वलोकस्य पश्यतः ॥ यथापूर्वं जगामाशु करं भगवतः पुनः ॥ २१ ॥ इतश्शिष्टास्ततो दैत्याः पलायन्तो दिशो
 दृश ॥ अद्यापि न निवर्तन्ते गच्छन्तो वे महोदधिम् ॥ २२ ॥ इति श्रीम. सिलेषु हरि. भवि. हंसडिम्भकोपाख्याने कृष्णस्थोत्कर्षवर्णनं नाम त्रयोविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२३ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ बलदेवस्तु धर्मात्मा धनुरादाय सत्वरम् ॥ जघ्न
 हंसं दशभिर्बाणेर्बाणभृतां वरः ॥ १ ॥ तं प्रत्यविष्यन्नाराचेर्हंसः पञ्चभिराश्रुयेः ॥ तानन्तरे हला छित्त्वा नाराचेर्दशभिः पुनः ॥ २ ॥
 और उसे आग्नेयास्त्रसे संयुक्त कर मारा ॥ २० ॥ सब लोकके देखते उससे वह रत्य मरम् हो गया और वह अब फिर भगवान् के हाथमें जा
 गया ॥ २१ ॥ मरनेसे शेष रहे दैत्य दशों दिशाओंको जाग गये वे समुद्रमें गये आजतक नहीं लौटे हैं सामरमें चले गये ॥ २२ ॥ इति श्रीमहाभारते
 सिलेषु हरिवंशे मविष्यपर्वणि नारायाणं हंसडिम्भकोपाख्याने कृष्णस्थोत्कर्षवर्णनं नाम त्रयोविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२३ ॥ वैशम्पायन बोले,
 धर्मात्मा बलदेवजी शीघ्र फलुष लेकर दश बाणोंसे हंसको ताडन करते हुए ॥ १ ॥ हंसने उनको पांच बाणोंसे विद्ध किया दश बाणोंसे बलरामजीने

उनको छेदन कर दिया ॥ २ ॥ और हंसके मस्तकमें नाराचोंका प्रहार किया वह दृढ बाण मिरकर उसकी संज्ञाको हरता हुआ तब वह बहुत कालतक रथमें स्थित होकर संज्ञाको प्राप्त हो बाण ग्रहण करता हुआ ॥ ३ ॥ और संज्ञाको प्राप्त हो उस बाणसे यदुवीरको विद्ध किया और देवताओंको विस्मय कराता हुआ सिंहकी समान गर्जने लगा ॥ ४ ॥ तब क्रोधको प्राप्त हुए हठी उस बाणसे विद्ध होकर रुधिर वमन करते हुए ॥ ५ ॥ लोहितवर्णका शरीर हो जानेसे कुंकुमसे रंगेकी समान हो गये, तब युद्धमें स्थित सौ सहस्र बाणोंसे बलरामजीने उसको अर्धित किया ॥ ६ ॥ इस प्रकार बलरामजीने हंसमतिबाडे

नाराचेनाशु विज्याय ललाटे हंसमोजसा ॥ दृढं पतन्स नाराचस्तस्य संज्ञां समाददे ॥ रथोपस्थे चरं स्थित्वा तूणाद्वाणं समाददे ॥ ३ ॥ लब्ध्वा हंसः स संज्ञां तु विद्धा तेन यदूत्तमम् ॥ सिंहवद्वनदद्वंसो देवान्निस्मापयन् रणे ॥ ४ ॥ ततः क्रुद्धो हठी विद्धस्तेन बाणेन माधवः ॥ वमन्ध्रेणितमत्युष्णं निश्चसंश्च रणाजिरे ॥ ५ ॥ लोहिताविष्टमात्रस्तु कुङ्कुमाद्रं ज्ञाभवत् ॥ नाराचैः शतसाहस्रैरहंयामास माधवः ॥ ६ ॥ हंसं हंसगतिं वीरं नीलजासा इलायुधः ॥ ते मुक्ता निशिता घोरा नाराचाश्च सुबाजिनः ॥ ७ ॥ रथे चजे तथा चापे चक्रे तूणीद्वये नृप ॥ पतिताः सर्वतो राजन् व्यथां चैव तथा ददुः ॥ ८ ॥ ततः क्रुद्धो महाराज हंसो वीर्यमदान्वितः ॥ श्रेण दालिनं विद्धा च्चजं चिच्छेद कालवित् ॥ ९ ॥ शैरश्चतुर्भिरश्वाश्च सूतं प्रेताधिपं ददौ ॥ ततः क्रुद्धो हठी तस्मै गर्दां गृह्य महारणे ॥ १० ॥ आपपात महानाहुर्हंसं शेष इव शसन् ॥ तथा रथं च्चजं चक्रमश्वान्सूतं इलायुधः ॥ बभञ्ज तिलशः सर्वं ननाद च पुनः पुनः ॥ ११ ॥ भूयश्च गदया हंसं चिक्षेप च बली किल ॥ सोऽपि हंसो गर्दां गृह्य रथात्तस्मादवापतत् ॥ १२ ॥ वीर हंसको विद्ध किया, वे शीघ्रगामी नाराच उनके धनुषसे निकलकर ॥ ७ ॥ रथ च्चजा चाप केतु दोनों तरकसमें चारों ओरसे पतित हो उसको शयित करने लगे ॥ ८ ॥ हे महाराज ! तब वीर्य और मरसे युक्त हंस बड़ा क्रोधित हुआ एक बाणसे बलरामको वेध कर उनकी ध्वजा छेदन कर दी ॥ ९ ॥ चार बाणोंसे घोड़ों और सारथिकों को मार डाला तब बलरामजीने क्रोध कर नदा ग्रहण की ॥ १० ॥ और श्वास लेते हुए हंसपर झपटे उससे बलरामजीने रथ ध्वजा रथके पहिये घोड़े सारथिकों को तिलकी समान सण्ड सण्ड कर बारंवार शब्द किया ॥ ११ ॥ और फिर नदा लेकर हंसके मारी और हंस नदा लेकर रथसे

उतरा ॥ १२ ॥ तब वे महाबली दोनों युद्ध करने लगे वे महाबली महातेजस्वी लोकमें विख्यात ॥ १३ ॥ अतिअनुत विकान्त परस्पर बधकी इच्छा करनेवाले अम किये हंसकी समान गमन करनेवाले ॥ १४ ॥ ऐसे युद्ध करने लगे जैसे देवासुरके संग्राममें इन्द्रका और वृषासुरका संग्राम हुआ था दोनोंके रुधिरसे शरीर संसक्त हो गये ॥ १५ ॥ और युद्धमें महाखेदित हो गये, तब बलरामजी दक्षिणमार्गसे चलने लगे ॥ १६ ॥ और हंसने सव्यमार्ग ग्रहण किया और हाथीकी समान विक्रमवाले युद्धमें प्रहार करने लगे ॥ १७ ॥ और अपने पूर्णबलसे एक दूसरेको प्रहार करने लगे, देवासुरके युद्धकी ततस्तो हंसहलिनो युयुधाते महारणे ॥ महारथो महाबाहु लोके प्रथिततेजसो ॥ १३ ॥ अत्यद्भुतं सुविक्रान्तौ परस्परवधेषिणौ ॥ कृतश्रमो महायुद्धे हंसविक्रान्तगामिनौ ॥ १४ ॥ यथा देवासुरे युद्धे शक्रवृत्रो पुराम्बरे ॥ उभौ संसक्तसर्वाङ्गौ शोणितेन महारणे ॥ १५ ॥ अत्यन्तखेदिनौ युद्धे परस्परबलेन ह ॥ ततश्च दक्षिणं मार्गं बलभद्रोऽन्वगच्छत ॥ १६ ॥ सव्यं तु हंसो राजेन्द्रो व्यगृह्णात्स्वयमेव हि ॥ पोषयाञ्चक्रतुर्गुद्धे गदाभ्यां गजविक्रमौ ॥ १७ ॥ यथाप्राणं महाबाहु जघ्नतुर्मरणाय तो ॥ अतिप्रवृद्धं संग्रामं देवासुररणोपमम् ॥ १८ ॥ विदधाते महारङ्गे पश्यतां त्रिदिवोकसाम् ॥ देवाश्च मुनयश्चैव विस्मयं परिजग्मिरे ॥ १९ ॥ अहो खल्वीदृशं युद्धं दृष्टं पूर्वं न च श्रुतम् ॥ इत्युचुर्विस्मयवशादेकमन्वर्षकिन्नराः ॥ २० ॥ परस्परकृतोत्साहो चक्रतुर्गुद्धमुत्तमम् ॥ अयं हंसो महारङ्गे दक्षिणं दक्षिणोत्तमः ॥ २१ ॥ व्यचरन्मार्गमन्तर्यं सव्यं तु बलवान्बलः ॥ निकुञ्च्य जानुनी पूर्वं चक्रतुर्गदया भृशम् ॥ रणे रणविदां श्रेष्ठो पश्यतां त्रिदिवोकसाम् ॥ २२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकपोख्याने हंसबलभद्रयुद्धे चतुर्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२४ ॥

समान युद्ध होने लगा ॥ १८ ॥ देवता उस युद्धको देखने लगे देवता और मुनि सब विस्मित हो गये ॥ १९ ॥ अहो हमने ऐसा युद्ध कभी नहीं देखा था, यह विस्मित हो देवता मन्वर्ष किन्नर कहने लगे ॥ २० ॥ परस्पर उत्साहसे युद्ध करने लगे फिर युद्धमें हंस बाह ओरसे, बलराम दक्षिण ओरसे युद्ध करने लगे ॥ २१ ॥ बलरामजी सव्य मार्ग चलने लगे जांच सकोड बड़े वेगसे गदाप्रहार करने लगे इस प्रकार युद्धमें उन युद्ध करनेवालोंमें श्रेष्ठको देवता देखने लगे ॥ २२ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि मापायां हंसबलभद्रयुद्धवर्णनो नाम चतुर्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२४ ॥

वेसम्पायन बोले, इधर डिम्भक और सात्याकिका महायुद्ध होने लगा। वह दोनों वीर युद्धमें विरूपात थे ॥ १ ॥ युद्धविद्यामें महानिपुण वृद्धोंकी सेवा किये हुए थे सात्याकिने वेदपारवामी डिम्भकको दश बाण ॥ २ ॥ मारकर उसे विद्ध किया और तीक्ष्ण बाणोंसे इन्को विद्ध किया उस बलीसे क्षत्रियमेव डिम्भक विद्ध होकर ॥ ३ ॥ पांच सहस्र बाणोंसे युद्धमें उसे विद्ध करने लगा, उनको बीचमेंही सात्याकिने कट दिया और बड़ा रुद्ध किया ॥ ४ ॥ और क्रोधकर सात बाणोंसे राजाको विद्ध किया फिर उस डिम्भकने लक्ष बाणोंसे सात्याकिको विद्ध किया ॥ ५ ॥ तब क्रोधकर सात्याकिने उसका वेसम्पायन उवाच ॥ युद्धं चक्रतुरत्यर्थं ततो डिम्भकसात्यकी ॥ तावुभौ बलिनो वीरो विरूपाते क्षत्रियेषु च ॥ १ ॥ कृतश्रमो महायुद्धे सततं वृद्धसेविनो ॥ सात्याकिर्दशभिर्बाणैः डिम्भकं वेदपारगम् ॥ २ ॥ अविष्यन्निशितेबाणैस्तेन वक्त्रे तयोरासि ॥ स तेन विद्धो बलिना डिम्भकः क्षत्रियोत्तमः ॥ ३ ॥ नाराचैः पञ्चसाहस्रैर्विध्याथ युधि गर्वितः ॥ तान्तरे वृष्णिवीरो निषिद्धन्निनदन् बुक्त् ॥ ४ ॥ अथ क्रुद्धो नृपवरो विद्धः सप्तभिराशुगैः ॥ पुनः शतसहस्रेण प्रत्यविध्यत सात्याकिम् ॥ ५ ॥ सात्याकिस्त्वय विक्रान्तो घनुश्चिच्छेद तस्य तत् ॥ अर्धचन्द्रेण तीक्ष्णेन डिम्भकस्य स यादवः ॥ ६ ॥ आजग्रे डिम्भको वीरश्चापमादाय चापरम् ॥ क्षुरप्रेणाथ रोद्रेण तेलघोतेन विक्रमी ॥ ७ ॥ स तेन विद्धो बाणेन वमन्छोणितकं नृप ॥ अतीव शुभ्रमे राजन्वसन्ते किञ्चुको यथा ॥ ८ ॥ घनुश्चिच्छेद भूपस्तु गृहीतं यत्पुरा घनुः ॥ ततोऽन्यद्वनुरादाय डिम्भको यादवेश्वरम् ॥ ९ ॥ जघान निशितेबाणैः सर्वशत्रुस्य पश्यतः ॥ स घनुः पुनरत्युग्रं चिच्छेद युधि सात्याकिः ॥ १० ॥

घनुष छेदन कर दिया यह अर्धचन्द्र बाणसे छेदन किया ॥ ६ ॥ तब डिम्भकने और चाप लेकर सात्याकिको विद्ध किया उसने क्षुरेकी समान तीक्ष्ण बाणसे विद्ध किया ॥ ७ ॥ उस बाणसे विद्ध हो राजा शोणित वमन करने लगे, वसन्तमें टेमूके फूलके समान शोणित हुए ॥ ८ ॥ और वह उसका घनुष फिर छेदन कर दिया तब डिम्भकने दूसरा घनुष लेकर सात्याकिको ॥ ९ ॥ तीक्ष्ण बाणोंसे सब क्षत्रियोंके देखते, विद्ध किया, सात्याकिने फिर उसका घनुष छेदन कर दिया ॥ १० ॥

जब तीक्ष्ण बाणसे उस दुरात्माका धनुष छेदन किया तब बहुत शीघ्र उसने दूसरा धनुष लिया ॥ ११ ॥ और उससे सात्यकिको हिंद किया. हे राजेन्द्र ! इस प्रकारसे १००० धनुष छेदन कर दिये ॥ १२ ॥ और सब क्षत्रियोंके सामने सात्यकि सिंहनाद करने लगा तब वीर डिम्भक और सात्यकि धनुष त्यागन कर ॥ १३ ॥ खड्ग ग्रहण कर दोनों युद्ध करनेको तयार हुए, तब खड्गके युद्ध जाननेमें श्रेष्ठ सात्यकि और डिम्भक ॥ १४ ॥ अर्थात् दुश्शासनका पुत्र महाभाग सोमदत्तका पुत्र महाबली अभिमन्यु और नकुल यह खड्गयुद्ध करनेवालोंमें श्रेष्ठ कहे हैं. हे राजन् ! इन छहोंमें यह युद्ध करनेवालोंमें श्रेष्ठ

शरेण तक्षिणपुङ्केन डिम्भकस्य दुरात्मनः ॥ ततोऽन्यद्धनुरादाय सत्वरं स नृपोत्तमः ॥ ११ ॥ धनुषा तेन राजेन्द्र सात्यकिं विव्यधे पुनः ॥ एवं धनुषि राजेन्द्र शतं पञ्च च पञ्च च ॥ १२ ॥ छिरवा ननाद शैनेयः सर्वक्षत्रस्य पश्यतः ॥ धनुषी तौ परित्यज्य वीरो डिम्भकसात्यकी ॥ १३ ॥ खड्गो प्रणष्ट चात्पुमो युद्धाय समुपस्थितो ॥ तौ हि खड्गविदां श्रेष्ठो वीरो डिम्भकसात्यकी ॥ १४ ॥ दोःशासननिर्महाभागः सोमदत्तिस्तथैव च ॥ अभिमन्युश्च विक्रान्तो नकुलश्च तथैव च ॥ १५ ॥ एते खड्गविदां श्रेष्ठाः कीर्तिता युधि सत्तमाः ॥ एतेष्वेतौ नृपश्रेष्ठो पट्सु वे नृपसत्तम ॥ १६ ॥ तावेतावसिना युद्धं चक्रनुर्युद्धलालसो ॥ भ्रान्तमुद्भ्रान्तमाविद्धं प्रविद्धं बाहुनिःसृतम् ॥ १७ ॥ आकरं विकरं भिन्नं निर्मर्यादममानुषम् ॥ संकोचितं कुलचितं सव्यजानु विजानु च ॥ १८ ॥ आहिकं चित्रकं क्षितं कुसुम्बं लम्बनं धृतम् ॥ सर्वबाहुविनिर्बाहुः सव्येतरमथोत्तरम् ॥ १९ ॥ त्रिबाहुस्तुङ्गबाहुश्च सव्योन्नतमुदासि च ॥ पृष्ठतः प्रथितं चैव योधिकं प्रथितं तथा ॥ २० ॥ इति प्रकारान् द्वाविंशच्चक्रतुः खड्गयोधिनो ॥ पुनः पुनः प्रहरन्तौ न च श्रममुपेयतुः ॥ २१ ॥

हैं ॥ १५ ॥ १६ ॥ दोनों युद्धकी लालसासे खड्गयुद्ध करने लगे, भ्रान्त उद्भ्रान्त आविद्ध प्रविद्ध इत्यादि बत्तीस प्रकारके तलवारके हाथ घुमाते ॥ १७ ॥ आकर विकर भिन्नमर्याद अमानुष संकोचित कुलचित सव्यजानु विजानु ॥ १८ ॥ आहिक चित्रक क्षिप्त कुसुमलम्बन धृत सर्वबाहु निर्बाहु सव्येतर उत्तर ॥ १९ ॥ त्रिबाहु तुंगबाहु सव्य उन्नत उदासि पृष्ठकी और हाथ घुमाना यौधिक प्रथित ॥ २० ॥ इस २२ प्रकारसे युद्ध करने लगे और बारंवार प्रहार

करकेनी भमको न प्राप्त हुए ॥ २१ ॥ हे महाराज ! इस प्रकार वे युद्धके निमित्त निश्चय किये थे, तब देवता गन्धर्व ऋषि ॥ २२ ॥ जय हो इस प्रकार उन परिभ्रम करनेवालोंको संतुष्ट करने लगे इन दोनों बलशालियोंका बड़ा पराक्रम है ॥ २३ ॥ यह दोनों युद्ध करनेमें समर्थ धनुषविद्याके पारंगामी हैं, एक शिवका और एक द्रोणाचार्यका शिष्य है ॥ २४ ॥ अर्जुन सात्याकि वासुदेव जगत्पति हे महाराज ! संग्राममें यह तीन महाविरूपात हैं ॥ २५ ॥ और द्विजक कार्तिकेय शिव यह तीन महारथी हैं यह वीर्य और बलमें प्रसिद्ध हैं ॥ २६ ॥ इस प्रकार देव गन्धर्व सिद्ध यज्ञ महोरग युद्ध देखनेकी

पुष्करस्थी महाराज युद्धाय कृतनिश्चयो ॥ ततो देवाः सगन्धर्वाः सिद्धाश्च परमर्षयः ॥ २२ ॥ तुष्टुवुस्तौ महाराज जये कृतपरिश्रमो ॥ अहो वीर्यमहो धैर्यमनयोर्बाहुशालिनोः ॥ २३ ॥ एतावेव रणे शक्तौ खड्गे धनुषि पारंगौ ॥ एकः शिष्यो गिरीशस्य द्रोणस्यान्यो हि धीमतः ॥ २४ ॥ अर्जुनः सात्याकिश्चैव वासुदेवो जगत्पतिः ॥ त्रय एते महाराज प्रथिताः संगरे सदा ॥ २५ ॥ डिम्भकः शक्तिभृच्छर्व-
स्त्रय एते महारथाः ॥ प्रसिद्धाः सर्वे एवेते वीर्येषु च बलेषु च ॥ २६ ॥ इति ते देवगन्धर्वाः सिद्धा यज्ञा महोरगाः ॥ दिवि स्थिताः समं ह्ययुद्धदंशनलालसाः ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपारूपाने पञ्चविंशत्यधिकशत-
तमोऽध्यायः ॥ १२५ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ वसुदेवोऽग्रसेनो च वृद्धो युद्धे सुनिवृत्तौ ॥ जराजरितसर्गजौ पठिताङ्गाक्षिरोरुहौ ॥ १ ॥ ज्ञानविज्ञानसंपन्नौ राजमार्गविशारदौ ॥ युयुधाते महारुद्धे राक्षसेन दुरात्मना ॥ २ ॥ शरेनेकसाहस्रेर्दयामासतू रणे ॥ राक्षसेन्द्रं दुरात्मानं हिडिम्बं पुरुषादकम् ॥ ३ ॥

इच्छासे आकाशमें स्थित हुए कहने लगे ॥ २७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसद्विजकोपारूपाने पञ्चविंशत्यधिकश-
ततमोऽध्यायः ॥ १२५ ॥ वैशम्पायन बोले, वसुदेव और उग्रसेन दोनों युद्धमें बड़े पराक्रमको प्राप्त हुए जरासे सर्गज जर्जरित और श्वेतबालवाले ॥ १ ॥ ज्ञान विज्ञानमें तत्पर राजमार्गके जाननेवाले उग्र महायुद्धमें राक्षसके साथ युद्ध करते थे ॥ २ ॥ और सहस्रों बाणोंसे युद्धमें उस राक्षसको अर्दित

करने लगे वह पुरुषमक्षी दुष्टात्मा हिडिम्ब राक्षस था ॥ ३ ॥ वह हिडिम्ब राक्षस सब ओरसे यदुवंशियोंको मत्तण करता था वह दुष्टात्मा लम्बी भुजा और लम्बी ठोड़ीवाला महाबुद्धिको प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥ लम्बोदर विरूपाक्ष पीले केश और नेत्र श्येनकेसी नासिका, महाभयंकर, ऊर्ध्वरोमा, महाभुज ॥ ५ ॥ पर्वताकार शरीर, दीर्घ डायों, गीदबकेसा मुख, लम्बोदर, दीर्घदन्त, जगत्के घ्रास करनेमें तत्पर ॥ ६ ॥ ऊंचे कंधेवाला, बड़ी छाती लम्बी गरदन हाथीकी समान, बड़ा मांसके लोडोंको खाता, रुधिरपान करता हुआ ॥ ७ ॥ हाथियोंसे हाथियोंको घोडोंसे घोडोंको रथोंसे रथोंको

हिडिम्बो राक्षसेन्द्रस्तु भक्षयन्सर्वतो नरान् ॥ अतिप्रवृद्धो दुष्टात्मा लम्बबाहुर्महाबुजः ॥ ४ ॥ लम्बोदरो विरूपाक्षः पिङ्गकेशो विलोचनः ॥ श्येननासो महारौद्रे ऊर्ध्वरोमा महाभुजः ॥ ५ ॥ पर्वताकारवर्ष्मा च दीर्घदंष्ट्रः शिवाननः ॥ लम्बोदरो दीर्घदन्तो जगद्घ्रासपरस्तथा ॥ ६ ॥ उत्तुङ्गासो महोरस्को दीर्घग्रीवो गजोपमः ॥ भक्षयन्मांसपिटकं पिवन् शोणितसंचयम् ॥ ७ ॥ गजान्नागैः समाहत्य हयैरश्वाजपोत्तम ॥ रथात्रयैः समाहत्य साधिनः सादिभिस्तथा ॥ ८ ॥ मनुष्यान्तस्य पुरो दृष्ट्वा नास्यघ्रातं चकार सः ॥ कांश्चिद्धत्वा महाराज वृष्णिपालान्समन्ततः ॥ ९ ॥ भक्षयामास सहसा हिडिम्बः पुरुषादकः ॥ यान्पश्यन्पुरतो रक्षस्तान् जघान विरूपधृक् ॥ १० ॥ भक्षयन्नपरान्वृष्णिन्यादवान् राक्षसेश्वरः ॥ चिक्षेप सहसा कांश्चिद्धिडिम्बः पुरुषादकः ॥ ११ ॥ अन्तकाले यथा क्रुद्धो रुद्रः प्राणभृतो नृपः ॥ क्षणेनैकेन सर्वास्तान्भक्षयामास राक्षसः ॥ १२ ॥ केचिद्गता दिशः प्रापुर्वृष्णयो वीर्यशालिनः ॥ केचित्तु भक्षितास्तेन रक्षसा वृष्णिपुङ्गवाः ॥ १३ ॥

सवारोंको सवारोंसे मारता हुआ ॥ ८ ॥ आगे मनुष्योंको देखकर नासिकासेही श्वासके द्वारा घस लेता था, किसीको पकड़कर निगल जाता था. हे महाराज ! इस प्रकार अनेक वृष्णिवंशियोंको ॥ ९ ॥ खाने लगा जिसको उसने आगे देखा उसीका वध किया विरूपधारे ॥ १० ॥ दूसरे वृष्णिवंशी और यादवोंको वह राक्षस खाने लगा, और किसीको वह हिडिम्ब फेंकने लगा ॥ ११ ॥ अन्तकालमें क्रोधकर रुद्र जैसे प्रजाका संहार करते हैं, इस प्रकार वह क्षणमात्रमें सबको भक्षण करने लगा ॥ १२ ॥ कोई बली वृष्णि ढरकर दिसाओंमें भाग गये, और किन्हीको वह

राक्षस ग्रहण कर गया ॥ १३ ॥ हे राजन् ! जिस प्रकार कुंतकर्मने बालोंको ग्रहण किया था इस प्रकार वह बावनोंकी सेनाको ग्रहण करने लगा ॥ १४ ॥ चित्राटकी सभान पादवी मेना निरक्षेप हो गई तब दोनों वृद्ध पारव कुछ दूर और महाघोर धनुषको ग्रहण कर राक्षसके सन्मुख हुए ॥ १५ ॥ जैसे सिंहके सन्मुख खुल होते हैं तब वह महाराक्षस मुख फैलाकर उन दोनोंके ऊपर दौड़ा ॥ १६ ॥ और पातालकी समान मुख फैलाये खानेकी इच्छा करने लगा और ग्रहण करता हुआ रथसे धावमान हुआ ॥ १७ ॥ तब उन दोनों वीरोंने बाणोंसे उसका मुख पूर्ण कर कुम्भकणों यथा राजन्भक्षयामास वानरान् ॥ (निःशेषं वृष्णिसेन्यं तु चकार पुरुषादकः) ॥ १८ ॥ निश्चेष्टं वृष्णिसेन्यं तु स्थितं चित्रपटे यथा ॥ एतस्मिन्नन्तरे क्रुद्धो वृद्धो वादवपुङ्गवो ॥ धनुर्धरं महाघोरं राक्षसस्य पुरः स्थितो ॥ १९ ॥ यथा क्रुद्धस्य सिंहस्य मृगो वृद्धतमाविव ॥ व्यादायास्यं महारक्षस्तो वृद्धावभ्यधावत ॥ २० ॥ चित्तादिषुर्वैरूपाक्षः पातालतलसन्निभः ॥ ततोऽरथः पर्यधावत्खादन् खादन्कउवरम् ॥ २१ ॥ पूरयामासतुर्वीरो श्लेष्मदुवृषो नृप ॥ हिडिम्बस्य महाघोरं व्यादितास्यमिवान्तकम् ॥ २२ ॥ सर्वास्तान्वारयामास देवशत्रुर्वैरूपाक्षः ॥ धाकति स्म ततो रक्षो व्यादितास्यं भयानकम् ॥ २३ ॥ तयोर्गृहीत्वा धनुषी बभञ्ज युधि सत्वरम् ॥ बाहु प्रसार्य दुष्टात्मा राक्षसो विकृताननः ॥ २४ ॥ वसुदेवं महीपालं राजानं वृद्धसेविनम् ॥ ग्रहीतुं राक्षसश्रेष्ठो यतते नृपसंसदि ॥ २५ ॥ हिडिम्ब उवाच ॥ एष वां भक्षयिष्यामि वसुदेवं त्वया सह ॥ उग्रसेन किमर्थं त्वं तिष्ठसे मत्पुरुषोदरः ॥ २६ ॥ आगच्छ प्रविश्यास्यं मे ग्रसधृतो तु वां मम ॥ विधिना निर्मितो वृद्धो वसुदेवो हरेः पिता ॥ २७ ॥ दिया वह हिडिम्बका मुख बड़ा घोर था ॥ २८ ॥ उस देवशत्रु विह्वलने उन सबको निवारण किया और सभानक मुख फैलाये वह राक्षस धावमान होने लगा ॥ २९ ॥ और उन दोनोंके धनुष लेकर बहुत शीघ्र तोड़ डाले और वह दुष्टात्मा राक्षस बाहों फैलाकर ॥ ३० ॥ वसुदेव राजा वृद्धसेवीको ग्रहण करनेकी इच्छा राजाके सन्मुख करने लगा ॥ ३१ ॥ हिडिम्ब बोला, हे वसुदेव ! मैं अभी तुम्हारे साथ उग्रसेनके खानेकी इच्छा करता हूँ मेरे सामने उग्रसेनकी क्या सामर्थ्य है ॥ ३२ ॥ आओ तुम मेरे मुखमें प्रवेश कर जाओ हरिके पिता वसुदेवको मेरे मुखमें आनेके

निमित्त परमात्माने कल्पित कर दिया है ॥ २३ ॥ मैं शीघ्र विक्रमी भूला जमते आतं हो रहा हूं मेरे मुखमें शीघ्र प्रवेश करो अब तुम जा नहीं सकते ॥ २४ ॥ तुम दोनोंका रुचिरपान कर मैं शान्त हो जाऊंगा, और पीछे तुम दोनों वृद्धोंका मांस खाऊंगा ॥ २५ ॥ यह कहकर उस महाठोड़ीवाले राक्षसने खानेको मुख फैलाया, और राक्षसेश्वर उन्हे खानेको बोला ॥ २६ ॥ तब उग्रसेन और वसुदेव प्रयत्नीत हो सब ओर देखने लगे, और शस्त्ररहित हो वहांसे पृथक् हो गये ॥ २७ ॥ इस अवसर प्रतापवान् बलरामजीने उग्रसेन वसुदेवजीको इस प्रकार देखकर ॥ २८ ॥ हंसते

बुभुक्षितः श्रमार्तश्च युद्धे त्वरितविक्रमः ॥ मन्मुखात्रैव गच्छेतां प्रविशेतां त्वरान्वितौ ॥ २४ ॥ युवयोः शोणितं पीत्वा तृप्तिं यास्यामि निर्वृतः ॥ स्वादामि च पुनर्मांसं वृद्धयोर्युवयोः सुखम् ॥ २५ ॥ इति ह्रवंस्तथा रक्षो व्यादितास्यं महाहसु ॥ घावति स्म तदा क्षिप्रं ह्रिडिम्बो राक्षसेश्वरः ॥ २६ ॥ वसुदेवोऽग्रसेनो च भीतो विप्रेक्ष्य सर्वतः ॥ दिशोऽभ्यभजतां राजन्निःशस्त्रैर्गुण्णिपुङ्गवौ ॥ २७ ॥ एतस्मिन्नन्तरे दृष्ट्वा बलभद्रः प्रतापवान् ॥ दृष्ट्वा च तो तथाभूतो वसुदेवोऽग्रसेनको ॥ २८ ॥ वासुदेवे समीदृश्य हंसं युध्यन्तमीश्वरे ॥ निर्गत्य चान्तरं तस्य राक्षसस्य दुरात्मनः ॥ २९ ॥ मा कृपाः साहसं रक्षो मुञ्चेतो राजसत्तमो ॥ स्थितोऽस्मि युध्यतां रक्षो मया कुरुन् जिघांसता ॥ ३० ॥ एतमेव हनिष्ये त्वां का चेयं त्व भीष्मिका ॥ इति ह्रवाणं इलिनं तो विसृज्य महारणे ॥ ३१ ॥ महानयमसौ दुष्टो भक्षयाम्येनमग्रतः ॥ विदार्य पूर्ववद्रक्तं बलभद्रमुपाद्रवत् ॥ ३२ ॥ विसृज्य सशरं चापं राक्षसस्य पुरः स्थितः ॥ मुष्टिं प्रगृह्य बलवान्स्फोटयन्बाहुमुत्तमम् ॥ ३३ ॥

खुद करनेको वासुदेवसे कहकर और उस दुरात्मा राक्षसके बीचमें प्राप्त हो बोले ॥ २९ ॥ हे राक्षस ! इन्हे छोड़ साहस मत कर मैं स्थित हूं तुझ शत्रुनाशक करनेवाले साथ युद्ध कर ॥ ३० ॥ मैं तुझको वध करूंगा तुझसे क्या प्रय है बलरामजीको ऐसा कहते देख महायुद्धमें वह उन दोनोंको छोड़कर ॥ ३१ ॥ यह कुटिल महाजनयसंपन्न है पहिले इसेही प्रक्षण कर्त, यह कह मुख फैलाकर बलरामके सम्मुख आवमान हुआ ॥ ३२ ॥ वह भी शरचापको छोड़कर राक्षसके सम्मुख स्थित हुए, और घूंसा बनाकर अपनी भुजाको ठोकते हुए ॥ ३३ ॥

ह. वं.
॥ २५७ ॥

तब दुष्टात्मा हिडिम्बकनेनी धुंसा उठाकर काष्ठकी सवाल धुंसा बलरामजीकी छातीमें बास ॥ ३४ ॥ क्रोधकर बलरामजीको मुष्टिसे उसने मारा और बलरामजीने राक्षसको मारा ॥ ३५ ॥ उस समय नर और राक्षस वीरका मुष्टियुद्ध होने लगा और दोनों युद्धभूमिमें युद्ध करते रहे ॥ ३६ ॥ उन दोनोंके धुंसाका चटचटा शब्द होने लगा तब राक्षसराजने संग्राममें रामको धुंसेसे ॥ ३७ ॥ छातीमें मारा जैसे इन्द्र वज्र मारे तब बलरामजीनेभी यत्नसे धुंसा बनाकर ॥ ३८ ॥ देवतनु हिडिम्बकी छातीमें मारा तब रामने तलवहार उस राक्ष-

हिडिम्बस्त्वथ दुष्टात्मा मुष्टिं कृत्वा भयानकाम् ॥ जघान वक्षो रामस्य व्यादितास्य इवान्तकः ॥ ३४ ॥ क्रुद्धोऽथ बलभद्रस्तु मुष्टिणा तेन ताडितः ॥ जघान मुष्टिना तेन राक्षसेशमनिन्दितः ॥ ३५ ॥ मुष्टियुद्धं समभवन्नरराक्षसवीरयोः ॥ युद्धचतोर्युद्धरंगेऽथ नरराक्षससिंहयोः ॥ ३६ ॥ तयोश्चटचटाशब्दः प्रादुरासीद्भयानकः ॥ अथ राक्षसराजस्तु मुष्टिना राममादधे ॥ ३७ ॥ जघान वक्षोदेशे तु वज्रेणैव पुरंदरः ॥ अथ रामो बली साक्षान्मुष्टिं संवर्त्य यत्नतः ॥ ३८ ॥ हिडिम्बं ताडयामास वक्षस्यमरविद्रिषम् ॥ तलाभ्यामथ रामस्तु वक्त्रे इत्थं स राक्षसम् ॥ ३९ ॥ आहतस्तलघातेन हिडिम्बो राक्षसेश्वरः ॥ जातुभ्यामपतद्भूमौ गतासुर्वीर-राक्षसः ॥ ४० ॥ तत उत्पाद्य रामस्तु दोर्भ्यां संगृह्य राक्षसम् ॥ आदाय बाहुवेगेन भ्रामयित्वा पदात्पदम् ॥ ४१ ॥ व्याविध्यत्सुचिरं रामो दर्शयन्नात्मनो बलम् ॥ उत्क्षिप्य राक्षसेन्द्रं तं सर्वलोकस्य पश्यतः ॥ ४२ ॥ गन्धर्वतिमात्रं चिक्षेप ततो देशादल्ययुधः ॥ गतासु राक्षसश्रेष्ठस्ततो देशान्निराक्रमत् ॥ ४३ ॥ ये केचिद्राक्षसास्तत्र इतश्चेक महारणे ॥ बलभद्रात्ततो भीता जग्मुश्चैवं दिशो दश ॥ ४४ ॥

सके मुखमें किया ॥ ३९ ॥ राक्षसपति तलके आघातसे ताडित होकर गतासु हो जंघाके बल पृथ्वीमें गिरा ॥ ४० ॥ तब बलरामजीने भुजाओंसे बली राक्षसको पकड़कर बड़े वेगसे घुमाया ॥ ४१ ॥ और अपना बल दिखाकर उसे महाताडित कर सर्वके देखते २ दूर फेंक दिया ॥ ४२ ॥ और उन महापत्नीने उस राक्षसको दो कीसपर फेंक दिया प्राणरहित हो राक्षसमेड उस देशसे पृथक् हो गया ॥ ४३ ॥ जो वहां राक्षस थे वे इत होकर बल-

भा. टी.

प. ३ अ. १२५

॥ २५७ ॥

रामके ढरसे वशों दिशाओंमें भाग मये ॥ ४४ ॥ तब अंशुमाली भगवान् सूर्य अपना तेज संहार कर प्रजाओंके चक्षुओंका प्रकाश हरण करते अस्त हुए और कुछ अंधकार छाने लगा ॥ ४५ ॥ जब प्रजापति जगत्के गुरु सूर्य विश्वमुख सागरमें प्रविष्ट हुए, उस समय संध्याके अन्धकारको दूर करता चन्द्रमा उदय हुआ ॥ ४६ ॥ हे राजन् ! फिर प्रातःकालमें उठकर राजा कहने लगे कि गोवर्द्धनमें युद्ध करना भेठ है जहां किन्नरोंके नीतोंका सम्ब होना है, ऐसा कहकर वे सब गोवर्द्धनको गमन करने लगे ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रापायां हंसडिम्भकोपाख्याने

अथांशुमाली भगवान् दिनेशः संहृत्य तेजांसि सहस्ररश्मिः ॥ अस्तं ययौ चक्षुरपि प्रजानामीवत्तमश्चापि समाविवेश ॥ ४५ ॥ तस्मिन्प्रविष्टेऽथ समुद्रतोयं प्रजापतौ विश्वमुखे जगद्गुरौ ॥ नक्षत्रनाथः समुपाजगाम संध्यातमोऽपि व्यनश्चतृषोत्तम ॥ ४६ ॥ प्रभातकाले नृपसत्तमो रणो गोवर्द्धने किन्नरगीतनादिते ॥ इति ब्रुवन्तो नृपसत्तमास्तदा व्युपारमंस्तत्र रणोत्सवे नृप ॥ ४७ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने हिडिम्बपराभवो नाम षड्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२६ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ उभौ तौ हंसडिम्भको राजावेव महागिरिम् ॥ जग्मतुः सहितौ राजन् गोवर्द्धनमथो नृप ॥ १ ॥ अथ प्रभाते विमले सूर्ये चाभ्युदिते सति ॥ गोवर्द्धने जमामाशु केशवः केशिसूदनः ॥ २ ॥ शैनेयो बलभद्रश्च यादवाः सारणादयः ॥ गन्धर्वैरप्यसरोभिश्च नादितं बहुधा गिरिम् ॥ ३ ॥ जग्मतुः सहितौ राजन् गोवर्द्धनमथो गिरिम् ॥ गोधनेरथ सैन्यैश्च नादितं बहुधा गिरिम् ॥ ४ ॥ तस्योत्तरं नृपश्रेष्ठ पार्श्वं संप्राप्य यादवाः ॥ निकषा यमुनां राजंस्ततो युद्धमवर्तत ॥ ५ ॥

हिडिम्बपराभवो नाम षड्विंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२६ ॥ वैशम्पायन बोले, वे दोनों हंस और डिम्भक राजावेही महागिरि गोवर्द्धनको चले ॥ १ ॥ फिर विषय प्रातःकाल होनेसे केशिसूदन केशवजी गोवर्द्धनको चले ॥ २ ॥ शैनेय बलभद्र सारण आवि यादव चले गन्धर्व और अप्सराओंसे वह पर्वत शब्दावमान था ॥ ३ ॥ तथा गोधनादिके सैन्योंसेभी वह पूर्ण था, हे राजन् ! इस प्रकारसे वे गोवर्द्धन पर्वतको मये ॥ ४ ॥ हे राजन् ! वह पारव

उसके उत्तर पार्श्वमें प्राप्त होकर यमुनाके किनारे युद्ध करने लगे ॥ ५ ॥ हंस डिंभकने वसुदेवको सात बाणोंसे विद्ध किया पचीससे सारण और दससे कंकको विद्ध किया ॥ ६ ॥ फिर हंस डिंभकका यादवोंके संग संग्राम होने लगा अग्रसेनने ७३ बाण ॥ ७ ॥ विराटने तीस सात्यकिने सात विपु-
थुने ८० उद्धवने दश प्रद्युम्नने तीस साम्बने सत्तर अनाधृष्टिने ७१ बाण मारे ॥ ८ ॥ ९ ॥ उस प्रकार वे पराक्रम प्रकाश करके युद्ध करने लगे
वे सब यादव अतिअद्भुत महाघोर युद्ध करने लगे ॥ १० ॥ वासुदेवके देखते उन दोनोंसे युद्ध होने लगा, हे महाराज ! बलदर्पित वे सब युद्ध करने
विष्याध हंसडिंभको वसुदेवश्च सप्तभिः ॥ सारणः पञ्चविंशत्या दशभिः कङ्क एव च ॥ ६ ॥ हंसेन डिंभकेनाथ यादवैश्च समन्ततः ॥
अग्रसेनस्त्रिसप्तत्या शराणां नतपर्वणाम् ॥ ७ ॥ विराटस्त्रिशता राजन्सात्यकिश्चापि सप्तभिः ॥ अशीत्या विपृथू राजदुद्रवो दशभिः
शरेः ॥ ८ ॥ प्रद्युम्नस्त्रिशता राजन्साम्बश्चापि च सप्तभिः ॥ अनाधृष्टिस्त्वेकषष्ट्या शराणां नतपर्वणाम् ॥ ९ ॥ एवं वे सहिता राज-
श्चक्रुर्युद्धमदीनवत् ॥ अत्यद्भुतं महाघोरं यादवाः सर्व एव हि ॥ १० ॥ चक्रुस्ताभ्यां महायुद्धं वासुदेवस्य पश्यतः ॥ सर्वानपि
महाराज यादवान्बलदर्पितान् ॥ ११ ॥ तावुभौ हंसडिंभको नृपास्ताम्रप्रत्यविष्यताम् ॥ प्रत्येकं दशभिर्विद्धा बाणेर्निशितको
मलेः ॥ १२ ॥ जग्नतुश्च शरेस्तीक्ष्णैरत्यर्थं यादवेश्वरान् ॥ व्यथिताः सर्व एवेते वमन्तः शोणितं बहु ॥ १३ ॥ माघवे किंशुका राजन्पु-
ष्पिता इव ते बभूवुः ॥ भीताश्च यादवा राजन्पलायनपरायणाः ॥ १४ ॥ एतस्मिन्नन्तरे राजन्वसुदेवात्मजो नृप ॥ वासुदेवो इली युद्धे
प्रमुखे धन्विनो तयोः ॥ १५ ॥ चक्रतुर्युद्धमतुलं स्कन्दशक्राविवाम्बरे ॥ तयोरेव सगन्धर्वाः सिद्धा यक्षा महर्षयः ॥ १६ ॥
लगे ॥ ११ ॥ वे हंस और डिंभक उन राजोंको विद्ध करके प्रत्येकको तीक्ष्ण बाणोंसे वेध कर ॥ १२ ॥ तीक्ष्ण बाणोंसे यादवेश्वरोंको विद्ध करने
लगे वे सब व्यथित हो, खिर वमन करने लगे ॥ १३ ॥ और चैतके महीनेमें टेसूके फूलकी समान शोभित हुए और भीत होकर यादव भागनेकी
इच्छा करने लगे ॥ १४ ॥ हे राजन् ! उसी समय श्रीकृष्ण और बलराम युद्धमें उन दोनों धनुषधारियोंके साथ ॥ १५ ॥ इन्द्र और स्कन्दकी
समान आकाशमें तुमुल युद्ध करने लगे, उस समय गन्धर्व सिद्ध यक्ष महर्षि ॥ १६ ॥

देवता देवासुरयुद्धकी संपान इस युद्धकी देखने लगे. हे राजन् उस समय शिवजीके भेजे हुए वी भूतेश्वर वहां आनकर प्राप्त हुए ॥ १७ ॥ उन्हें उनकी रक्षाके निमित्त शिवजीने भेजा था, तब हंस और वासुदेव दोनों युद्ध करने लगे ॥ १८ ॥ तथा राम और विष्णु युद्ध करने लगे वह सब असहस्रसे विग्रह हुए बलमें युक्त थे ॥ १९ ॥ और अपने २ रथमें स्थित हुए शंख बजाने लगे तब हृषीकेश पांचजन्य नामक महाशंखको बजाने लगे ॥ २० ॥ इस प्रकार वह कमललोचन सबको आश्चर्य कराने लगे, तब वे दोनों महाघोर शरीरवाले

विमानस्थाश्च ददृशुर्बुद्धं देवासुरोपमम् ॥ ततः प्रादुरभूतां तो द्रुतो भूतेश्वरो नृप ॥ १७ ॥ शूलिना प्रेषितो युद्धे रक्षार्थं बलिनी-
स्तयोः ॥ हंसोऽथ वासुदेवश्च युद्धं चक्रतुरीश्वरो ॥ १८ ॥ रामश्च विष्णुश्चैव संयुक्तौ युद्धकाङ्क्षया ॥ विशून्याः सर्व एवैते ह्यस्त्रे
शस्त्रे तथा बले ॥ १९ ॥ शंखान्दध्मुः पृथक् हादं स्वे स्वे सर्वे रथे स्थिताः ॥ अथ कृष्णो हृषीकेशः पाञ्चजन्यं महारवम् ॥ २० ॥
दध्मो पद्मपलाशाक्षः सर्वान्विस्मापयन्निव ॥ अथ भूतो महाघोरो लम्बोदरशरीरिणो ॥ २१ ॥ दुद्रुवतुर्महाराज शूलमादाय केश-
वम् ॥ शूलेन पोथयां राजन् चक्रतुर्योदवेश्वरम् ॥ २२ ॥ ताभ्यां समाहतो विष्णुर्देवगन्धर्वसंनिधौ ॥ ईषत्स्मिताधरो देवः किञ्चि-
दुत्प्लुत्य सत्वरम् ॥ २३ ॥ रथाद्रथिवरश्रेष्ठस्तो प्रगृह्य जनार्दनः ॥ भ्रामयित्वा शतगुणमलातमिव केशवः ॥ २४ ॥ कैलासं च
समुद्दिश्य प्रचिक्षेप ततो हरिः ॥ ता उपेत्य गिरेः शृंगं कैलासस्य महामते ॥ २५ ॥ दृष्ट्वा तत्कर्म देवस्य विस्मयं जग्मतुः परम् ॥
हंसश्च दृष्ट्वा तत्कर्म रोषताम्रायतेक्षणः ॥ २६ ॥

लम्बोदर ॥ २१ ॥ शूल हाथमें ऊपर लिये केशवके दौड़े और शूलसे यादवेश्वरको बाँधने लगे ॥ २२ ॥ देव गंधर्वोंके सामने उनसे समाहत हुए विष्णु भगवान् कुछ हँसते हुए वहांसे कूदे ॥ २३ ॥ रथियोंमें भेठ श्रीकृष्णने रथसे कूदकर उन दोनोंको पकड़ लिया और अलातचक्रकी समान उनको सौ बार घुमाया ॥ २४ ॥ और कैलासपर्वतपर उन दोनोंको फेंक दिया वे दोनों कैलासपर्वतके शृंगपर गिरे ॥ २५ ॥ और देवका यह कर्म

देखकर परम विस्मयको प्राप्त हुए हंस वह कर्म देखकर बड़ा क्रोधित हुआ ॥ २६ ॥ और देवताओंके सुपते वह हंस कहने लगा, हे केशव ! तुम हमारे राजसूय यज्ञमें क्यों विघ्न करते हो ॥ २७ ॥ ब्रह्मदेव राजा उस यज्ञको करेंगे जो प्राणोंकी रक्षा करना चाहते हो तो हमारा कर हो ॥ २८ ॥ अथवा तुम क्षणमात्र स्थित हो तो बहुत कर दोगे, हे नन्दपुत्र ! तुमको इतना देना होगा कि उससे हमारा यज्ञ हो जायगा ॥ २९ ॥ जैसे देवताओंके पति शिव हैं, इस प्रकार मैं राजाओंका अधिपति हूं युद्धमें तुम्हारा सम्पूर्ण दण्ड चूर्ण करूंगा ॥ ३० ॥ यह कहकर तालके वृक्षकी समान चापको चढाय उवाच वचनं हंसः शृण्वतां त्रिदिवोकसाम् ॥ किमर्थं राजसूयस्य विघ्नं चरसि केशव ॥ २७ ॥ ब्रह्मदत्तो महीपालो यष्टा तस्य महाक्रतोः ॥ करं दिश यथायोगं यदि प्राणान् हि रक्षसि ॥ २८ ॥ अथवा त्वं क्षणं तिष्ठ ततो ज्ञात्वा परं बहु ॥ ददासि त्वं नन्दपुत्र ततो यष्टा स मे गुरुः ॥ २९ ॥ ईश्वरोऽहं सदा राज्ञां देशानामिव शूलभृत् ॥ एष ते वीर्यमतुलं नाशयिष्यामि संयुगे ॥ ३० ॥ इत्युक्त्वा सशरं चापं शालतालोलोपमं नृप ॥ आकृष्य च यथाप्राणं नाराचेन च केशवम् ॥ ३१ ॥ ललाटे चिक्षिपे हंसो ललाम इव सोऽभवत् ॥ उवाच सात्यकिं कृष्णो रथं वाहय मे प्रभो ॥ ३२ ॥ दारुकं पृष्ठवाहं तं कृत्वा देशं तमीश्वरः ॥ अथ तेन समादिष्टः सात्यकिर्वाहयन्नयम् ॥ ३३ ॥ मण्डलानि बहून्याजो दर्शयामास सत्वरम् ॥ अथ विद्वो दृढं तेन श्रेण हरिरीश्वरः ॥ ३४ ॥ आग्नेयमस्त्रं संयोज्य शूरे कस्मिंश्चिदन्ययः ॥ उवाच हंसं राजेन्द्र सात्यकिं प्रेरयन्नये ॥ ३५ ॥ अनेन त्वां दहे पाप यदि शक्तोऽसि वारय ॥ अलं ते बह्वबद्धेन क्षत्रियोऽसि सदा शूठ ॥ ३६ ॥

बाण रख यथाशक्ति चढाय केशवके ॥ ३१ ॥ मस्तकमें प्रहार किया, यह बड़ी अद्भुत वार्ता हुई, तब कृष्णने सात्यकिसे कहा तुम हमारा रथ चालन करो ॥ ३२ ॥ तब श्रीकृष्णने दारुकको पृष्ठवाहक करके, सात्यकिद्वारा रथको चालन कराया ॥ ३३ ॥ और संप्राममें वह अनेक मंडल दिखाता रथ चढाने लगा, श्रीकृष्ण उसके शरसे दृढ वेष्ट हो गये थे ॥ ३४ ॥ तब श्रीकृष्णने धनुषके ऊपर दिव्य बाण चढाय अग्नि अस्त्रसे संयुक्त किया और सात्यकिको प्रेरण करते हंससे बोले, हे पापी ! इस बाणसे मैं तुझको मारूंगा ॥ ३५ ॥ यदि समर्थ हो तो निवारण कर बहुतसी अबद्ध

बातोंसे क्या है तू क्षत्रियोंमें सदा शठ है ॥ ३६ ॥ जो मुझसे कर लेनेकी इच्छा है तो आना बल बिंसा, हे हंस ! तैंने पुष्करमें रहनेवाले यति-
 योंको पीड़ित किया है ॥ ३७ ॥ हे नराधम ! मेरे होते तू ब्राह्मणोंका शासन कर सकता है मुझ जगदके स्वामीने क्षत्रियरुही कंटकको वध कर दिया
 है ॥ ३८ ॥ मैं लोकमें अस्तव और ब्राह्मणदेवियोंकी शासन करनेवाला हूं, हे नृपाधम ! तू तो यतियोंमें मुख्य यतियोंके पभसेही दग्ध हो रहा
 है ॥ ३९ ॥ आज तुझे मृत्युके अर्थ सौंपकर ब्राह्मणोंकी रक्षा कहां। यह कहकर वह अन्न युद्धमें श्रीकृष्णने त्यागन किया ॥ ४० ॥ हंसने वारु-

मत्तश्चेत्करमिच्छेस्त्वं दर्शयाद्य पराक्रमम् ॥ यतयो वाधिता हंस पुष्करे संस्थितास्त्वया ॥ ३७ ॥ ज्ञास्ता त्वं सखु विप्राणां स्थिते
 मयि नराधम ॥ स्थिते मयि जगन्नाथे हत्वा क्षत्रियकण्टकान् ॥ ३८ ॥ ज्ञास्तास्म्यथो सतां लोके दुष्टानां ब्रह्मविद्विषाम् ॥ ज्ञापेन
 यतिमुख्यानां इत एव नृपाधम ॥ ३९ ॥ मृत्यवे त्वां निवेद्याद्य रक्षिता ब्राह्मणानहम् ॥ इति ब्रुवंस्तदस्त्रं तु मुमोच युधि केशवः ॥ ४० ॥
 तदस्त्रं वारुणेनाय हंसोपि प्रत्यषेधयत् ॥ वायव्यमथ गोविन्दो मुमोच युधि हंसके ॥ ४१ ॥ तदस्त्रं वारयामास माहेन्द्रेण नृपोत्तमः ॥
 अथ माहेश्वरं कृष्णो मुमोचात्युग्रमाहवे ॥ ४२ ॥ रौद्रेण तत्ततो हंसो वारयामास तत्क्षणात् ॥ गान्धर्वं राक्षसं चैव पेशाचमथ
 केशवः ॥ ४३ ॥ ब्रह्मास्त्रमथ कौबेरमासुरं याम्यमेव च ॥ चत्वार्येतानि हंसस्तु मुमोच युधि सत्वरम् ॥ ४४ ॥ वारणार्थं तदस्त्राणां
 चतुर्णां माधवस्य ह ॥ अथ ब्रह्मशिशो नाम घोरमस्त्रं विनाशकम् ॥ ४५ ॥ मुमोच हंसमुद्दिश्य देवदेवो जनार्दनः ॥ योजयामास
 तदंसे महघोरमस्त्रकम् ॥ ४६ ॥ अथ भीतो महारौद्रमस्त्रं दृष्ट्वा नृपोत्तमः ॥ हंसेऽपि तेन राजेन्द्र वारयामास तं शरम् ॥ ४७ ॥
 पाक्षसे उसको निवारण कर दिया तब श्रीकृष्णने वायव्यअस्त्रको चलाया ॥ ४१ ॥ हंसने उसे माहेन्द्र अस्त्रे निवारण किया तब श्रीकृष्णने युद्धमें
 माहेश्वर अस्त्र चलाया ॥ ४२ ॥ हंसने उसको रौद्रास्त्रसे निवारण कर दिया, तब गान्धर्व राक्षस पिशाच अस्त्र केशवने चलाये ॥ ४३ ॥
 तब ब्रह्मास्त्र कुबेरास्त्र आसुर याम्य यह चार अस्त्र हंसने युद्धमें श्रीकृष्णके ऊपर छोड़े ॥ ४४ ॥ श्रीकृष्णने घोर ब्रह्मशिशिर नामक अस्त्रसे उनका निवारण
 कर दिया ॥ ४५ ॥ और फिर यही घोर अस्त्र हंसके ऊपर घोर पराक्रमवाला संयुक्त किया ॥ ४६ ॥ तब इस महारौद्र अस्त्रका बलकर राजा हंस

हर गया, और हंसने उसी अन्नसे उसको वारण किया ॥ ४७ ॥ तब देवदेव जनार्दनने यमुनाअलका स्पर्श कर वैष्णव अन्न बाणपर संशयन किया ॥ ४८ ॥ और भूतभावने उसको बाणपर चढाया, जिस अन्नसे देवताओंने असुरोंको मारकर राज्य प्राप्त किया था, ॥ ४९ ॥ अन्न उस राजाके वक्के निमित्त चढाया ॥ ४९ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसकेशवयुद्धे सप्तविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२७ ॥ वैशम्पायन बोले वह राजा महारौद्र अन्नको लेकर मृत हुआ और वह हंस चेष्टारहित की समान हो गया ॥ ११ ॥ और रथो उतरकर यमुनामें धावमान हुआ जहां

यमुनाप उपस्पृश्य देवदेवो जनार्दनः ॥ अन्नं वैष्णवमादाय शूरे स निशिते हारिः ॥ ४८ ॥ योजयामास भूतात्मा भूतभावनभावनः ॥ येन देवा रणे इत्वा राज्यमापुः पुराऽसुरान् ॥ यदन्नं योजयामास वधार्थं तस्य भूपते ॥ ४९ ॥ इति श्रीम० खिलेषु हरिवंशे भवि० हंसदिग्भकोपाख्यानं हंसकेशवयुद्धे सप्तविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२७ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ अथ भीतो महारौद्रमखं दृष्ट्वा नृपोत्तम ॥ हंसो राजा महाराज निश्चेष्ट इव संवभो ॥ १ ॥ उत्प्लुत्य स रथात्तस्माद्यमुनामभ्यधावत् ॥ यत्र कृष्णो हृषीकेशः कालि याहिं ममर्द ह ॥ २ ॥ महाहंसं महारौद्रं यावत्पातालप्रस्थितम् ॥ तावदीर्वं महानीलं कालाञ्जननिभं हि यत् ॥ ३ ॥ तस्मिन् हरे महाघोरे पपाताय स हंसकः ॥ हंसो पतति तस्मिन्स्तु महान् रावो बभूव ह ॥ ४ ॥ गिरीणां पात्यमानानां समुद्र इव वज्रिणा ॥ रथा-वृत्प्लुत्य कृष्णोऽपि तस्योपरि पपात ह ॥ ५ ॥ देवदेशो जगन्नाथो जगद्धिस्मापपन्निव ॥ प्राहरतं महाबाहुः पादाभ्यामथ केशवः ॥ ६ ॥ पादक्षेपं नृपस्तस्माच्छब्ध्वा हंसो नृपोत्तम ॥ ममार च नृपश्रेष्ठ केचिदेवं वदन्ति हि ॥ ७ ॥

कृष्णने कालियनागको यमुनामें मर्दन किया था ॥ २ ॥ वह महारौद्र हंस पातालपर्यन्त गहरा था वह उतनाही दीर्घपातलैकी समान स्थित था ॥ ३ ॥ उस महाघोर हंसमें वह हंस निपतित हुआ, हंसके गिरनेसे उसमें महाहंस हुआ ॥ ४ ॥ जैसे इन्द्रके मारे पर्वत सागरमें गिरे थे तब रथसे कूदकर भीकृष्ण उसके ऊपर पतित हुए ॥ ५ ॥ वह देवदेव जगन्नाथ जगत्को विस्मय कराते हुए पैरोंसे उसको प्रहार करते हुए ॥ ६ ॥ वह नृप भीकृष्णके

पादभोजको प्राप्त होकर मर गया ऐसा कोई २ कहते हैं ॥ ७ ॥ कोई कहते हैं पातालको चला गया वहाँ सर्वोंने मत्तन कर लिया. हे राजन् । अब-
 तक उसे किसीने देखा हो ऐसा हमने नहीं सुना ॥ ८ ॥ फिर जगन्नाथ अपने रथमें अन्नकर स्थित हुए. हे महाराज । उसके मरनेपर धर्मपुत्र युधिष्ठिरने
 राजसूय यज्ञ किया था ॥ ९ ॥ इस प्रकार तुम्हारे पूर्व पितामहका यज्ञ हुआ, और जो यह हंस जीता रहता तो उस यज्ञकी कौन मरंशा करता ॥ १० ॥
 हे महाराज । वह सर्व अन्नका जाननेवाला रुद्रसे अन्नबलको प्राप्त होकर गर्वित हुआ था, क्षणमें यह वार्ता पृथ्वीमें व्याप्त हो गई कि ॥ ११ ॥ शत्रु-
 अन्ये पातालमायातो भक्षितः पन्नगोरिति ॥ अद्यापि नैव राजेन्द्र दृष्ट इत्यनुशुश्रुम् ॥ ८ ॥ यथापूर्वं जगन्नाथो रथं समुपजग्मिवान् ॥
 इते तस्मिन्महाराज धर्मपुत्रो युधिष्ठिरः ॥ ९ ॥ अक्रोदराजसूयं च तत्र पूर्वपितामहः ॥ यदि जीवेदसौ हंसः को नमस्यति तं
 क्रतुम् ॥ १० ॥ स च सर्वास्त्रविक्रियं रुद्रालम्बनः प्रभो ॥ क्षणादेव महाराज वार्तयं गामगाहत ॥ ११ ॥ इतो हंसो इतो हंसः
 कृष्णेन रिपुमर्दिना ॥ जगुर्गन्धर्वपतयो देवलोकं दिवा निश्रुम् ॥ १२ ॥ कृष्णेन लोकनाथेन विष्णुना प्रभविष्णुना ॥ यमुनाया हृदे
 घोरे हंसो निहत इत्यपि ॥ १३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि हंसडिम्भकोपाख्याने हंसवधो नामाष्टाविंशत्य-
 धिकशततमोऽध्यायः ॥ १२८ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ श्रुत्वा निहतमयुग्रं भ्रातरं वीर्यशालिनम् ॥ बलदेवं परित्यज्य युध्यमानं
 नहरणे ॥ १ ॥ डिम्भको वीर्यसंपन्नो यमुनामनुजग्मिवान् ॥ तमन्वधावद्वेगेन बलभद्रो दलायुधः ॥ २ ॥ हंसो हि यत्र पतितस्तत्रासौ
 निपपात ह ॥ यमुनायां महाराज विलोडय जलसंचयम् ॥ ३ ॥

घाता श्रीकृष्णेन हंसको मार डाला गन्धर्वपति देवलोकमें यह वार्ता रातदिन गाते हैं ॥ १२ ॥ लोकनाथ प्रभु विष्णु श्रीकृष्णने यमुनाके घोर हरमें
 हंसको मार डाला ॥ १३ ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां हंसवधो नामाष्टाविंशत्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२८ ॥ वैशं-
 पायन बोले, बड़े बली अपने भ्राताको मरा हुआ देखकर युद्धमें लड़ते हुए बलदेवसे युद्ध करना छोड़कर ॥ १ ॥ पडा बली दितक यमुनाके निकट
 गया बलरामजीभी उसके पीछे हुए ॥ २ ॥ जहाँ हंस निपातेत हुआ था वहीं यह क्रूढ़ पडा और यमुनाका जल विलोडित करने लगा ॥ ३ ॥

और क्रोधकर बहुत प्रकारसे उस जलमें दूँडकर वारंवार गोवा मारकर और वारंवार खोजकर ॥ ४ ॥ कहींभी अपने बली भाताको न पाया और बाहर निकलकर श्रीकृष्णको देखकर यह ॥ ५ ॥ बड़ा बली डिम्भक वचन कहने लगा, अरे गोपपुत्र ! बताओ वो वह हंस कहाँ स्थित है ॥ ६ ॥ धर्मात्मा वासुदेवने कहा यमुनासे पूछ, यह बातों प्रसन्नतासे कही ॥ ७ ॥ यह सुनकर डिम्भक फिर यमुनामें प्रविष्ट हुआ और वहाँ बहुत प्रकारसे जाईको दूँडा ॥ ८ ॥

अथ कुदः स डिम्भको भ्रामयित्वा जलं बहु ॥ उन्मज्ज्योन्मज्ज्य सहसा निमज्ज्य च पुनः पुनः ॥ ४ ॥ नन्ददर्शं तदा राजन् भ्रातरं वीर्य-
शालिनम् ॥ उन्मज्ज्याथ महाबाहुर्वासुदेवं विलोक्य च ॥ ५ ॥ उवाच वचनं राजन् डिम्भको वीर्यवत्तमः ॥ अरे गोपकदायाद कासो
हंस इति स्थितः ॥ ६ ॥ वासुदेवोऽपि धर्मात्मा यमुनां पृच्छ राजक ॥ इत्यब्रवीत्प्रसन्नात्मा वासुदेवः प्रतापवान् ॥ ७ ॥ तच्छ्रुत्वा यमुनां
भूयः प्रविश्य डिम्भकः किञ्च ॥ बहुप्रकारमुद्दिश्य भ्रातरं भ्रातृवत्सलः ॥ ८ ॥ विललाप ततो राजा डिम्भको भ्रान्तमानसः ॥ क तु
गच्छसि राजेन्द्र विहायेनमवान्धवम् ॥ ९ ॥ कुतो भ्रातरितो गच्छेः परित्यज्येव मामिह ॥ विलप्येवं नृपश्रेष्ठ डिम्भको भ्रातृवत्सलः ॥ १० ॥
आत्मत्यागे मनः कुर्वन् यमुनाया महाहृदे ॥ निमज्ज्योन्मज्ज्य सहसा मरणे कृतनिश्चयः ॥ ११ ॥ हस्तेन जिह्वामाकृष्य भूयो भूयो
विलप्य च ॥ ततः समूलामाकृष्य जिह्वां साहसकृत्स्वयम् ॥ १२ ॥ ममारान्तर्बले राजन् डिम्भको नरकाय वै ॥ एवं तु निहते हंसे
डिम्भके वीर्यशालिनि ॥ १३ ॥ आगन्तुपुण्डरीकाक्षो भूतान्विस्मययन्निव ॥ ततः प्रीतिः प्रसन्नात्मा वासुदेवः प्रतापवान् ॥ १४ ॥

जब न मिला तब डिम्भक विलाप करने लगा कि भाता ! मुझे छोड़कर तुम कहाँ जाते हो ॥ ९ ॥ हे भाता ! मुझे छोड़ कहाँ नपे हो, इस प्रकार
नृपश्रेष्ठ भाताके निमिच विलाप करके ॥ १० ॥ उस यमुनाके महाहृदमें प्रज्ज्वागनकी इच्छा करता हुआ वारंवार मरनेके निमिच दूधने लगा ॥ ११ ॥
हाथसे जीमको खँच वारंवार विलाप करने लगा और फिर अपने हाथसे जिह्वाको खँच लिया ॥ १२ ॥ और जलके भीतर नरक जानेके निमिच पर
गया इस प्रकार बली डिम्भक और हंसके मरनेमें ॥ १३ ॥ श्रीकृष्ण राजियोंको विस्मय कराते वहाँ आये तब प्रसन्न हो प्रतापवान् श्रीकृष्ण ॥ १४ ॥

बलभद्रके सहित गोवर्धनमें विनाम कर कुछ कालनक वहां निवास करते हुए ॥ १५ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे भविष्यपर्वणि प्रजापां हंसदिन-
 कवधो नामैकोनत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२९ ॥ वैशंपायन बोले, यशोदा और नन्दनोप श्रीकृष्णके दर्शनकी लालसा किये उन्हें बलदेवजीके
 साथ गोवर्धनमें आया सुनकर ॥ १ ॥ मक्सन दही दूध छपर बनके फूट मयूरांगद ले ॥ २ ॥ सब गोप और गोवियोंके साथ प्रसन्न हो गोवर्धनको
 गये ॥ ३ ॥ किसी एक वृक्षके नीचे बैठे हुए काले मृगकी समान नेत्रशाले श्रीकृष्णको बलरामजी सहित देखा ॥ ४ ॥ उन महाबलीयोंको देखकर
 गोवर्धनेऽथ विश्रम्य बलभद्रसहायवान् ॥ कंचित्कालं महाराज पूर्वभुक्तसुवास ह ॥ १५ ॥ इति श्रीमहाभारते सिलेष्टु हरिवंशे
 भविष्यपर्वणि हंसदिग्भकवधो नामैकोनत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२९ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ यशोदा नन्दगोपश्च कृष्णदर्श-
 नलालसो ॥ गोवर्धनगतं श्रुत्वा वासुदेवं सहाग्रजम् ॥ १ ॥ नवनीतं च दधि च पायसं कूसरं तथा ॥ वन्यं पुष्पं महाराज मयूरा-
 ङ्गदमेव च ॥ २ ॥ बलवैरपरेः सार्द्धं गोपीभिश्च समन्ततः ॥ जमत्तुः सहसा प्रीतो गोवर्धनमथो नृप ॥ ३ ॥ कचिदक्षे तप्तसक्तं
 कृष्णं कृष्णमृगेषणम् ॥ ददर्शतुर्महाबाहुं वासुदेवं सहाग्रजम् ॥ ४ ॥ प्रणमत्तुः सुसंहृष्टो तत्र दृष्ट्वा महाबलौ ॥ दर्शयामासतुदेवौ
 पायसानि महास्ति च ॥ ५ ॥ तात मातर्व्रजे गोष्ठे कुशलं वा स्वगोचनम् ॥ अपि मावः क्षीरवत्यो वत्सा वत्सपराः पितः ॥ ६ ॥
 अपि वा सुशुभं क्षीरमपि गावः सुशोभनाः ॥ अपि वा दारका मातर्वत्सपाठाः पिबन्ति च ॥ ७ ॥ बहूनि चापि दामानि कीलका
 अपि वा बहु ॥ तृणानि वदुरुष्णि किं वा सन्ति पितः सदा ॥ ८ ॥ शकटानि सुगन्धीनि किं वा सन्ति पितर्भुवम् ॥ अपि गोप्यः
 पुत्रवत्यो दारकान् किमजीजनन् ॥ ९ ॥

उन्होंने प्रणाम किया और वह दुग्धादि उनको भेटमें दिया ॥ ५ ॥ श्रीकृष्ण बोले, हे तात ! माता ! व्रजमें (गोष्ठ) में कुशल है नौ दुक्वाली हैं
 और अच्छे भले हैं ॥ ६ ॥ आपके दूध अच्छा है, और मऊ सुन्दर हैं, हे माता ! बालक उनकी दूध भली प्रकार पीते हैं ॥ ७ ॥ बहुतसी माता
 और कालक और अनेक प्रकारके तृण आपके यहां विद्यमान हैं क्या ? ॥ ८ ॥ हे पिता क्या शकट और सुगंधि पशु आपके यहां विद्यमान हैं ? और

६. वं.
॥२६२॥

मोषी पुत्रवती अंचे बाळकोंको उत्पन्न करनेवाली है ॥ ९ ॥ हे माता ! क्या ब्रजमें सब प्रकारसे अतिज बट विद्यमान हैं ? हे पिता ! क्या प्रति-
दिन मो अधिक दूब देती हैं ॥ १० ॥ आपके मङ्गलन दूब दही क्या अधिक होता है ? और संपूर्ण गोधन निरोग तो है ॥ ११ ॥ नंदजी बोले;
हे यदुभेठ ! हमारे यहां सब प्रकारसे निरोगता है हे केशव ! सम्पूर्ण काळमें मोधनमें कुशल है ॥ १२ ॥ हे देव ! आपकी रक्षा करनेसे हम
सदा कुशलवाले हैं गोधन और बछड़े सब काळमें निरोग हैं ॥ १३ ॥ आपका वर्तन नहीं होता यही हमको यशः दुःख है, इसी दुःखसे बुद्धि विशीर्ण होती
घटाः किं क्वचो मातरभिन्नाः सर्वतो ब्रजे ॥ किं गवः क्षीरमतुलं स्रवन्त्यहरहः पितः ॥ १० ॥ इत्यङ्गनीनं क्षीराणि दधि वा किमजी-
जनन् ॥ गोधनं सर्वभेदं नीरोगं प्रातिपद्यते ॥ ११ ॥ नन्द उवाच ॥ सर्वमेतद्यदुश्रेष्ठ नीरोगं बभूवुः प्रभो ॥ कुशलं गोधनस्यैव
सर्वकालेषु केशव ॥ १२ ॥ रक्षणात्तव देवस्य सदा कुशलिनो वयम् ॥ सगोधनास्तत्सत्ताम्य नीरोगा इव केशव ॥ १३ ॥ एकमेव सदा
दुःखं न त्वां द्रक्ष्यामि केशव ॥ यदेतत्केवलं दुःखमिति धीः शीर्यते सदा ॥ १४ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ एवमादि विच्छिद्यन्तं
गच्छेत्याह स केशवः ॥ यशोदा पुनराहेदं मातर्गच्छ गृहं प्रति ॥ १५ ॥ ये च त्वां कीर्तयिष्यन्ति ते च स्वर्गमवाप्नुयुः ॥ ये केचित्त्वां
नमस्यन्ति ते मे प्रियतराः सदा ॥ १६ ॥ मद्रताः सर्वदा सन्तु गच्छेत्याह च तां हरिः ॥ इत्युक्त्वा पितरो देवो वासुदेवः सना-
तनः ॥ १७ ॥ गाढमालिङ्ग्य तो प्रीतो प्रेषयामास केशवः ॥ यशोदा नन्दगोपश्च जग्मतुः स्वगृहं प्रति ॥ १८ ॥ ततः कृष्णो
हृषीकेशो यादवेः सह वृष्णिभिः ॥ गन्तुमेच्छतश्च विष्णुः पुरां द्वारवर्ती किञ्च ॥ १९ ॥
हे ॥ १४ ॥ वैशम्पायन बोले; यह वचन कहकर जब नन्दने आंमू तर डिये तब भीठभने उनसे घर जानेको कहा और यशोदा मातासेभी घर जानेको
कहा ॥ १५ ॥ माता ! जो तुम्हारा कीर्तन करेंगे उनको स्वर्गकी प्राप्ति होगी, और जो कोई तुमको नमस्कार करेंगे वे मेरे सदा प्रिय होंगे ॥ १६ ॥
मेरे भक्त होंगे यह कहकर हरिने जानेको कहा, यह कहकर सनातन वासुदेवने ॥ १७ ॥ माता पिताको गाढ आलिंगन कर जानेकी आज्ञा दी, यशोदा
नंद और गोप अपने २ चरोंको गये ॥ १८ ॥ तब हृषीकेश कृष्ण यादव और वृष्णवंशीयोंके सहित अपनी पुरीमें जानेकी इच्छा करने लगे ॥ १९ ॥

भा. टी.
५. १. १२-

॥२६२॥

जो इसे नित्य सुनते और पाठ करते हैं वह पुत्रवान् धनवान् होकर अन्तमें सुकिको प्राप्त होते हैं ॥ २० ॥ इति श्रीम० सि० इ० नरि० भाषायां यशोदानन्दगोपबलभद्रकृष्णसमागमो नाम त्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३० ॥ वैशम्पायन बोले, जब यादवोंके सहित पुष्करको प्राप्त होकर विष्णुजी मग्न करने लगे तब पुष्करमें स्थित अनेक मुनियोंको देखने लगे ॥ १ ॥ वे अभिमानरहित ऋषि मिलकर भगवान् के निकट प्राप्त होकर उन यादवभेदके प्रति अर्घ्यादिका आचार करते हुए ॥ २ ॥ भूतभण्डभवत्प्रभु विश्वेश्वर देवसै कहने लगे, हे जनार्दन । यह आपका पराक्रम बड़ाही अद्भुत है ॥ ३ ॥

य एतच्छृणुयात्त्रितयं पठेद्वापि समाहितः ॥ पुत्रवान् धनवान् चैव अन्ते मोक्षं च गच्छति ॥ २० ॥ इति श्रीमहाभारते खिलेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि यशोदानन्दगोपबलभद्रकृष्णसमागमो नाम त्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३० ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ गच्छन्नाथ महाविष्णुः पुष्करं प्राप्य यादवैः ॥ अपश्यन्मुनिमुख्यास्तु पुष्करस्थानुपोत्तम ॥ १ ॥ ते समेत्य महादेवमृषयो वीतमत्सराः ॥ अर्घादिसमुदाचारं कृत्वेनं यादवोत्तमम् ॥ २ ॥ प्रोचुर्विश्वेश्वरं विष्णुं भूतभण्डभवत्प्रभुम् ॥ अत्यद्भुतमिदं विष्णो तव वीर्यं जनार्दन ॥ ३ ॥ येन तो निहतो युद्धे हंसो डिम्भक एव च ॥ यो विचक्रो दुराधर्षो देवैरपि सुदुःसहः ॥ ४ ॥ सद्गुरे निहतो देव दुःसाध्य इति नो मतिः ॥ क्षेमो नः सर्वकार्येषु चरतां तप उत्तमम् ॥ ५ ॥ निष्कल्मषा भविष्यामस्तव संस्मरणाद्धरे ॥ त्वं हि सर्वस्य दुःखस्य हर्ता त्वां ध्यायतां सदा ॥ ६ ॥ त्वदनुस्मरणं जन्तोः सदा पुण्यप्रदं प्रभो ॥ त्वं हि नः सततं धाता विधाता तपसो हरेः ॥ ७ ॥ त्वमोङ्कारो वषट्कारस्त्वं यज्ञस्त्वं पितामहः ॥ त्वं ज्योतिर्ब्रह्मणो मूर्तिस्त्वं ब्रह्मा रुद्र एव च ॥ ८ ॥

जो आपने युद्धमें हंस और डिम्भकको मार डाला जो दुराधर्ष देवताओंकोभी दुरुस्त है ॥ ४ ॥ हम तो उनको दुरुस्त आपने मारते थे जिनको आपने युद्धमें मार डाला, अब हमारे तप तथा अन्य सब कार्यमें मंडल होगा ॥ ५ ॥ हे हरे ! आपके स्मरणसे हम पापराहित हो जायेंगे आपही सब दुःखके हर्ता हो आपके ध्यान करनेसे ॥ ६ ॥ आपका स्मरण प्राणियोंको सदा आनंद देनेवाला है, हमारे आपही धाता विधाता तपके आदिकारण हो ॥ ७ ॥ तुम ओंकार वषट् यज्ञ

और पितामह हो तुम ज्योति ब्रह्मपूर्ति ब्रह्मा और रुद्र हो ॥ ८ ॥ आप सब भूतोंके माण और अन्तरात्मा हो. हे जगत्पते ! सब भूतोंको यज्ञ दानसे आपही उपासनीय हो ॥ ९ ॥ विश्वके उत्पन्न करनेवाले विश्वभूतिको नमस्कार है. हे देव । आसन्नद्वेषियोंको मारकर सदा इस जगत्की रक्षा करो ॥ १० ॥ बहुत अच्छा कह हरि द्वारकापुरीको गये और मानवोंसे स्तुतिको प्राप्त हो वहां निवास करने लगे ॥ ११ ॥ हे जनमेजय । इस प्रकार भगवान्की चेष्टा हैं सो तुम्हारे पूछनेपर कही अब और क्या सुननेकी इच्छा है ॥ १२ ॥ इति श्रीमहाभारते तिलेडु हरिवंशे भविष्यपर्वणि भाषायां द्वारकायां कृष्ण

प्राणस्त्वं सर्वभूतानामन्तरात्मेति कथ्यते ॥ उपास्यः सर्वभूतानां यज्ञेर्दानैर्जगत्पते ॥ ९ ॥ नमो विश्वसृजे देव नमस्ते विश्वभूतये ॥ पादिलोकमिमं देव इत्वा ब्रह्मद्विषः सदा ॥ १० ॥ स तथेति हरिविष्णुयंयो द्वारवर्ती पुरीम् ॥ अवसद्वृष्णिभिः सार्द्धं स्तूयमानः स मामधेः ॥ ११ ॥ इयं च देवदेवस्य चेष्टा हि जनमेजय ॥ सा प्रोक्त्य ते पृच्छते राजन् किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ १२ ॥ इति श्रीमहाभारते भविष्यपर्वणि द्वारकायां कृष्णप्रत्यागमनं नामैकत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३१ ॥ जनमेजय उवाच ॥ भगवन्कृते विधिना श्रोतव्यं भारतं बुधेः ॥ फलं किं के च देवाश्च पूज्या वै पारणोष्णिह ॥ १ ॥ देयं समासे भगवन् किं च पर्वणिपर्वणि ॥ वाचकः कीदृशश्चात्र वष्टव्यस्तद्वर्षाहि मे ॥ २ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ शृणु राजन्विधिमिमं फलं यच्छति भारतान् ॥ श्रुताद्भवन्ति राजेन्द्र यत्त्वं मामनुपृच्छसि ॥ ३ ॥ दिवि देवा महीपाल कीदार्थमवनिं गताः ॥ कृत्वा कार्यमिदं चैव ततश्च दिवमागताः ॥ ४ ॥

प्रत्यागमनं नामैकत्रिंशदधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३१ ॥ जनमेजय बोले, हे भगवन् । पंडितोंको किस प्रकार भारतकी कथा सुननी चाहिये इसका क्या फल है और पारणमें किन किन देवताओंका पूजन करना चाहिये ॥ १ ॥ हे भगवन् । पर्वकी समाधिमें क्या देना चाहिये ॥ २ ॥ और कैसे वाचककी पूजा करनी चाहिये वह आप हमसे कहिये. वैशंपायन बोले, हे राजन् । भारतभ्रमणकी विधि हमसे सुनिये । हे राजन् ! जो आप हमसे पूछते हो सो मैं कहता हूं ॥ ३ ॥ स्वर्गसे देवताही कीडा करनेके निमित्त पृथ्वीमें अवतार ले आये थे, और यह कार्य करके फिर स्वर्गमें चले गये ॥ ४ ॥

जो मैं तुमसे कहता हूँ सो सावधान होकर सुनो, जैसे देवताओंका पृथ्वीतलमें जन्म हुआ है ॥ ५ ॥ यहाँ रुद्र, साध्य, विश्वेदेवा, आदित्य, अश्विनीकुमार, लोकपाल, महर्षि ॥ ६ ॥ गुह्यक, गन्धर्व, नाग, विद्याधर, सिद्ध, धर्म, स्वयंभू, मुनि, कात्यायन ॥ ७ ॥ गिरि, सागर, नदी, अप्सराओंके गण, ग्रह, संवत्सर, अयन, ऋतु ॥ ८ ॥ स्थावर, जंगम, सुर असुर, सहित सब जगत् यह सब भारतमें एकही स्थानमें दीखते हैं ॥ ९ ॥ उन वेदमें प्रतिष्ठावाले देवताओंके

इन्त पत्ते प्रवक्ष्यामि तच्छृणुष्व समाहितः ॥ ऋषीणां देवतानां च संभवं वसुधातले ॥ ५ ॥ अत्र रुद्रास्तथा साध्या विश्वेदेवाश्च
ज्ञान्यताः ॥ आदित्याश्चाश्विनौ देवौ लोकपाला महर्षयः ॥ ६ ॥ गुह्यकाश्च सगन्धर्वा नागा विद्याधरास्तथा ॥ सिद्धा धर्मः स्वयंभूश्च
मुनिः कात्यायनो वरः ॥ ७ ॥ गिरयः सागरा नद्यस्तथेवाप्सरसां गणाः ॥ ग्रहः संवत्सराश्चैव अयनान्यृतवस्तथा ॥ ८ ॥ स्थावर
जङ्गमं चैव जगत्सर्वं सुरासुरम् ॥ भारते भरतश्रेष्ठ एकस्थमिह दृश्यते ॥ ९ ॥ तेषां श्रुतिप्रतिष्ठानां नामकर्मानुकीर्तनात् ॥
कृत्वापि पातकं घोरं सद्यो मुच्येत मानवः ॥ १० ॥ इतिहासमिमं श्रुत्वा यथावदनुपूर्वज्ञः ॥ संयतात्मा शुचिर्भूत्वा पारं गत्वा च
भारते ॥ ११ ॥ तेषां शृणु त्वं श्राद्धानि श्रुत्वा भारत भारतम् ॥ ब्राह्मणेभ्यो यथाशक्त्या भक्त्या च भरतर्षभ ॥ १२ ॥ महादा
नानि देवानि रत्नानि विविधानि च ॥ गावः कांस्योपद्रोहाश्च कन्याश्चैव स्वलंकृताः ॥ १३ ॥ सर्वकामगुणोपेता यानानि विविधानि
च ॥ भाजनानि विचित्राणि भूमिर्वासांसि काञ्चनम् ॥ १४ ॥

नामकर्म कीर्तन करनेसे घोर पाप करनेवालाभी शीघ्र पाप्मे छूट जाता है ॥ १० ॥ यथायोग्य इत इतिहासको यथायोग्य अवज कर निपममें तत्पर, पवित्र
होकर जो भारतको सम्पूर्ण सुनते हैं वे पापरहित होते हैं ॥ ११ ॥ हे राजन् । उन भारतमें भूत हुए ग्रीष्मादिके आर्द्धमें ब्राह्मणोंको यथाशक्ति दान करना
चाहिये ॥ १२ ॥ अनेक रत्नोंके महादान देने चाहिये जो कांसीके पात्र दुहने योग्य बरतन अलंकार की हुई कन्या ॥ १३ ॥ सम्पूर्ण कामना देनेवाले

विविध यान, विविध भाजन, भूमि, वस्त्र, कंचन ॥ १४ ॥ वाहन, मतवाले हाथी, सेन, पालकी, अलंकृत रथ ॥ १५ ॥ जो घरमें महामूल्य वस्तु और
बेठ धन है आत्मा स्त्री पुत्र वह सब वाचकको दान कर सकता है ॥ १६ ॥ जो परमभद्रासे दान करते सम्पूर्ण पारायण क्रमसे करते हैं और शक्तिसे
अच्छे मनवाले हृष्ट शुश्रूषा करनेवाले कंठरहित ॥ १७ ॥ सत्य और कर्जुतामें रत इन्द्रियजित, पवित्र, शौचपरायण, भद्रावाले श्रोत्रिजित हैं उनको
जैसे शक्तकी सिद्धि होती है सो सुनो ॥ १८ ॥ पवित्र शील आचारसे युक्त शुक्लवस्त्र जितेन्द्रिय संस्कृतज्ञ सब शास्त्रके जाननेवाले भद्रायुक्त निन्दार-
वाहनानि च देशानि इमा मत्ताश्च वारणाः ॥ ज्ञयनं शिनिक्काश्चैव स्यन्दनाश्च स्वलंकृताः ॥ १५ ॥ यद्यद्दे वरं किंचिद्यद्यस्ति
महद्गु ॥ तत्तदेयं दिनातिभ्य आत्मा दूराश्च सूनवः ॥ १६ ॥ श्रद्धया परया दत्तं क्रमशस्तस्य पारगः ॥ शक्तितः सुमना हृष्टः
शुश्रूषुरविकम्पनः ॥ १७ ॥ सत्यार्जवरतो यतः शुचिः शौचपरायणः ॥ श्रद्धधानो जितक्रोधो यथा सिद्ध्यति तच्छृणु ॥ १८ ॥
शुचिः शीलान्विताचारः शुक्लवासा जितेन्द्रियः ॥ संस्कृतः सर्वशास्त्रज्ञः श्रद्धधानोऽनसूयकः ॥ १९ ॥ रूपवान्सुभगो दान्तः
सत्यवादी जितेन्द्रियः ॥ दानमानग्रहीता च कार्यो भवति वाचकः ॥ २० ॥ अविलम्बमनायस्तमद्रुतं धीरसूचितम् ॥ असंस्कृताक्षरपदं
न च भावसमन्वितम् ॥ २१ ॥ त्रिषष्टिवर्णसंयुक्तमष्टस्थानसमीरितम् ॥ वाचयेद्वाचकः स्वस्थः स्वाधीनः सुसमाहितः ॥ २२ ॥
नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ॥ देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत् ॥ २३ ॥ ईदृशाद्वाचकाद्राजञ्छ्रुत्वा भारत
भारतम् ॥ नियमस्थः शुचिः श्रोता शृण्वन् स फलमश्नुते ॥ २४ ॥

हित ॥ १९ ॥ रूपवान् सुन्दर चतुर सत्यवादी जितेन्द्रिय दानमानका ग्रहण करनेवाला वाचक होना चाहिये ॥ २० ॥ आलस्यरहित अद्भुत धीर
बलसम्पन्न अक्षरपदका स्वष्ट उच्चारण करनेवाला, लोभादिकी अधिकतासे हीन ॥ २१ ॥ त्रैलोक्यके आठों स्थानसे वर्णोंके उच्चारणका जानने-
वाला स्वस्थ स्वाधीन होकर वाचकको भारतका पाठ करना चाहिये ॥ २२ ॥ आरंभमें नारायण नर नरोत्तम और देवी सरस्वतीको नमस्कार कर इस
जपनामक ग्रंथका उच्चारण करे ॥ २३ ॥ हे राजन् । इस प्रकारके वाचकसे भारतका भवण कर नियममें स्थित हो पवित्र श्रोता सुनकर सम्पूर्ण कलको

प्राप्त होता है ॥ २४ ॥ पहले पारायणकी समाप्तिमें ब्राह्मणोंकी यथाकाम अर्चना करे तो मनुष्यको अग्निहोमका फल मिलता है ॥ २५ ॥ अप्सराओंसे युक्त अच्छे विमानकी प्राप्ति होती है, वह देवताओंसे सेवित हो स्वर्गको जाता है ॥ २६ ॥ दूसरे पारणको प्राप्त होकर अतिरात्र यज्ञका फल पाता है सम्पूर्ण रत्नोंवाले विमानपर चढ़कर स्वर्गको जाता है ॥ २७ ॥ दिव्यमाला और वस्त्र धारण किये दिव्यगंधसे विभूषित होकर नित्य दिव्यगंधसे युक्त हो देवलोकमें महिमाको प्राप्त होता है ॥ २८ ॥ तीसरे पारणको प्राप्त हो द्वादशाह यज्ञका फल पाता है देवरूप हो दश सहस्र वर्ष स्वर्गमें निवास

पारणं प्रथमं प्राप्य द्विजान्कामैश्च तर्पयेत् ॥ अग्निहोमस्य यागस्य फलं वै लभते नरः ॥ २५ ॥ अप्सरोगणसंकीर्णं विमानं लभते महत् ॥ प्रहृष्टः स तु देवैश्च दिवं याति समाहितः ॥ २६ ॥ द्वितीयं पारणं प्राप्य अतिरात्रफलं लभेत् ॥ सर्वरत्नमयं दिव्यं विमानमधिरोहति ॥ २७ ॥ दिव्यमाल्याम्बरधरो दिव्यगन्धविभूषितः ॥ दिव्यांगदधरो नित्यं देवलोकं महिषते ॥ २८ ॥ तृतीयं पारणं प्राप्य द्वादशाहफलं लभेत् ॥ वसत्यमरसंकाशे वर्षाण्ययुतशो दिवि ॥ २९ ॥ चतुर्थं वाजपेयस्य पञ्चमे द्विगुणं फलम् ॥ उदितादित्यसंकाशं ज्वलन्तमनजोपमम् ॥ ३० ॥ विमानं विबुधैः सार्द्धमारुह्य दिवि गच्छति ॥ वर्षायुताभिर्भवने शक्रस्य दिवि मोदते ॥ ३१ ॥ षष्ठे द्विगुणमस्तीति सप्तमे त्रिगुणं फलम् ॥ कैलासशिखराकारं वेदुर्यमणिवेदिकम् ॥ ३२ ॥ परिक्षिप्तं च बहुधा मणिविद्रुमभूषितम् ॥ विमानं समधिष्ठाय कामगं साप्सरोगणम् ॥ ३३ ॥ पूर्वोक्तोक्तान्विचरते द्वितीय इव भास्करः ॥ अष्टमे राजसूयस्य पारणे लभते फलम् ॥ ३४ ॥

करता है ॥ २९ ॥ चौथे पारणमें वाजपेय यज्ञका फल और पांचवेंमें इससे दूना होता है तब यह उदय होते हुए सूर्यकी समान प्रकाशमान निर्मल ॥ ३० ॥ विमानमें बैठ देवताओंके साथ स्वर्गको जाता है दश सहस्र वर्षतक इन्द्रके समीप आनंद करता है ॥ ३१ ॥ छठेमें इससे दूना और सातवेंमें उससे त्रिगुण फल होता है जहां कैलासके शिखराकार वेशी बनी हुई है ॥ ३२ ॥ अनेक प्रकारसे मणिविद्रुमसे भूषित कामगामी विमानोंके ऊपर बैठ अप्सराओंसे सेवित हो स्वर्गको जाता है ॥ ३३ ॥ और दूसरे सूर्यकी समान प्रकाशमान हो सब लोकोंमें विचरता है ॥ ३४ ॥

और चन्द्रोदयकी समान उज्ज्वल विभावमें स्थित होता है जो चन्द्रमाकी किरणोंकी समान बेनामामी विमान हैं ॥ ३५ ॥ चन्द्रमाकी समान कान्ति-
वाली क्षिरोंसे सेवित, उनके नूपुर और मेखलाओंके शब्द सुनता हुआ ॥ ३६ ॥ सुन्दर क्षिरोंकी गोदीमें सुखसे सोया हुआ जानता है, नौवें पार-
णमें अश्वमेधके फलको प्राप्त होता है ॥ ३७ ॥ सुवर्णके स्तंभ लगे वैदूर्यमणिकी वेदिका तथा सुवर्ण गवाक्षोंसे सब ओर व्याप्त ॥ ३८ ॥ अप्सरा
गन्धर्वोंसे सेवित होकर स्वर्णचारियोंके साथमें परम कान्तिवाली लक्ष्मीसे शोभित हो ॥ ३९ ॥ दिव्य माला और वस्त्र धारण किये, दिव्य बंश लगाये,
चन्द्रोदयनिभं स्म्यं विमानमधिरोहति ॥ चन्द्ररश्मिप्रतीकशोभयेयुक्तं मनोजवैः ॥ ३५ ॥ सेव्यमानो वरस्त्रीणां चन्द्रकान्ततरेमुखैः ॥
मेखलानां निनादेन नूपुराणां च निःस्वनेः ॥ ३६ ॥ अङ्गे परमनारीणां सुखं सुप्तो विबुध्यते ॥ नवमे क्रतुरावस्य वाजिमेधस्य
भारत ॥ ३७ ॥ काञ्चनस्तम्भनिर्व्यूहं वैदूर्यकृतवेदिकम् ॥ जाम्बूनदमयेदिव्यैर्गवाक्षैः सर्वतो वृतम् ॥ ३८ ॥ सेवितं चाप्सरःसं-
घैर्गन्धर्वैर्दिविचारिभिः ॥ विमानं समधिष्ठाय त्रिया परमया ज्वलन् ॥ ३९ ॥ दिव्यमाल्याम्बरधरो दिव्यचन्दनभूषितः ॥ मोदते
देवतैः सार्द्धं दिवि देव इवापरः ॥ ४० ॥ दशमं पारणं प्राप्य द्विजातीनभिवन्द्य च ॥ किङ्किणीजालनिर्घोषं पताकाध्वजशोभि-
तम् ॥ ४१ ॥ रजवेदिकसंकाशं वैदूर्यमणितोरणम् ॥ हेमजालपरिक्षिप्तं प्रवालवलयभीमुखम् ॥ ४२ ॥ गन्धर्वैर्गीतकुशलेरप्सरोभि-
र्निषेवितम् ॥ विमानं सुकृतावासं सुखेनैवोपपद्यते ॥ ४३ ॥ मुकुटेनार्कवर्णेन जाम्बूनदविभूषणः ॥ दिव्यचन्दनदिग्धांगो दिव्यमा-
ल्यविभूषितः ॥ ४४ ॥ दिव्याँल्लोकां प्रचरति दिव्येभोगैः समन्वितः ॥ विबुधानां प्रसादेन त्रिया परमया युतः ॥ ४५ ॥

देवताकी समान स्वर्णमें आनंद पाता है ॥ ४० ॥ दसवें पारणमें ब्राह्मणोंको प्रणाम कर किङ्किणीजालके शब्द पताका ध्वजासे शोभित ॥ ४१ ॥
रत्नवेदीकी समान वैदूर्य मणि और तोरणसे व्याप्त हेमजालसे परिक्षिप्त प्रवाल और झालरोंसे व्याप्त ॥ ४२ ॥ गीतमें कुशल गन्धर्व और अप्सरा-
ओंसे सेवित ऐसा सुखदायक विमान पुण्यसेही प्राप्त होता है ॥ ४३ ॥ सूर्यकी समान प्रकाशित सुख सुवर्णके भूषण धारण किये दिव्य मंथ शरीरमें
लगाये, दिव्यमालासे विभूषित ॥ ४४ ॥ दिव्य शोभसे युक्त होकर वह दिव्यलोकमें विचरण करता है, देवताओंके प्रसादसे वह परम लक्ष्मीसे युक्त

होता है ॥ ४५ ॥ बहुत वर्षों तक स्वर्गलोकों में महिमा को प्राप्त होता है तब मंत्रों के सहित इकीस सहस्र वर्ष तक ॥ ४६ ॥ इन्द्रलोक में आनंद करता है दिव्य यान और अनेक प्रकार के लोकों में ॥ ४७ ॥ दिव्य नारियों के समूह से व्याप्त अमर की सफल शोभित होता है तब सूर्य और चन्द्र लोक में ॥ ४८ ॥ तथा शिव के लोक में होता हुआ विष्णु की साठोत्पत्ता को प्राप्त होता है हे महाराज ! इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ॥ ४९ ॥ परंतु हमारे गुरु ने कहा है कि भद्रा करके ही यह सब कार्य सिद्ध होते हैं जो जो मन में इच्छा हो सो वाचक को देना चाहिये ॥ ५० ॥ हाथी घोड़े

अथ वर्षगणनेवं स्वर्गलोके महीयते ॥ ततो गन्धर्वसहितः सहस्राण्येकविंशतिः ॥ ४६ ॥ पुष्करपुरे रम्ये शक्रेण सह मोदते ॥ दिव्ययान-
विमानेषु लोकेषु विविधेषु च ॥ ४७ ॥ दिव्यनारीगणाकीर्णो निवसत्यमरो यथा ॥ ततः सूर्यस्य भवने चन्द्रस्य भवने तथा ॥ ४८ ॥
शिवस्य भवने राजन्विष्णोर्याति सलोकताम् ॥ एवमेतन्महाराज नात्र कर्त्तव्यं विचारणा ॥ ४९ ॥ अहधानेन वै भाव्यमेवमाह
गुरुर्मम ॥ वाचकस्य तु दातव्यं मनसा यद्यदिच्छति ॥ ५० ॥ इत्यश्वरथयानादि वाहनं च विशेषतः ॥ कटकं कुण्डले चैव ब्रह्म-
सूत्रं तथापरम् ॥ ५१ ॥ वस्त्रं चैव विचित्रं च गन्धं चैव विशेषतः ॥ देवतपूजयेत्तं तु विष्णुलोकमवाप्नुयात् ॥ ५२ ॥ अतः परं प्रव-
क्ष्यामि यानि देयानि भारते ॥ वाच्यमानेऽथ विप्रेभ्यो राजन्पर्वणि पर्वणि ॥ ५३ ॥ जाति देशं च सत्यं च माहात्म्यं भरतपुत्र ॥
धर्मवृत्तिं च विज्ञाय क्षत्रियाणां नराधिप ॥ ५४ ॥ स्वस्ति वाच्य द्विजानादौ ततः कार्यं प्रवर्तयेत् ॥ समाप्ते पर्वणि ततः स्वस्ति
तर्पयेद्विजान् ॥ ५५ ॥ आदौ तु वाचकं चैव वस्त्रगन्धसमन्वितम् ॥ विधिवद्भोजयेद्भोजनमधुपायससंयुतम् ॥ ५६ ॥

रथ यान और वाहन कटक कुण्डल ब्रह्मसूत्र ॥ ५१ ॥ सुन्दर कप और विविध प्रकार के गन्धद्रव्यों से कहनेवाले की देवता की समान पूजा करने से देव-
लोक की प्राप्ति होती है ॥ ५२ ॥ अब भारत के सुनने में जो देना चाहिये सो सुनो हे राजन् ! वाचनेवाले को पर्वपर्व में ॥ ५३ ॥ जाति देश सत्य
माहात्म्य तथा क्षत्रियों की धर्मवृत्तिको जानकर ॥ ५४ ॥ पहले ब्राह्मणों से स्वस्तिवाचन कराकर कार्य प्रारंभ करे, पर्व की समाप्ति में वाचकों को यथा-
शक्ति तृप्त करे ॥ ५५ ॥ वाचक को वस्त्रमंधादि से तृप्त कर और विधिपूर्वक मधु पायस खाकर प्रसन्न करे ॥ ५६ ॥

निर मूल फल सौर मधु घृतद्वारा आस्तिकोंको भोजन करावे बुरा और ओदन (जात) खरावे ॥ ५० ॥ पूरे पूर मोदक (लडू) खावे. हे राजन् ! सभापर्वकी पूर्तिमें ब्राह्मणोंको हविष्यान्न भोजन करावे ॥ ५८ ॥ वनपर्वमें मूल फलोंसे ब्राह्मणोंको भोजन करावे अरणी पर्वोद्यायमें जलके षडे प्रदान करे ॥ ५९ ॥ मुख्य २ वनके मूल फलोंसे तृप्त करे और सब कामनासे युक्त ब्राह्मणोंको तृप्त करे ॥ ६० ॥ विराटपर्वमें विविध प्रकारके वस्त्र दे. हे राजन् ! उद्योगपर्वमें सर्वगुणयुक्त ॥ ६१ ॥ गंधाविसे अलंकृत किये ब्राह्मणोंको भोजन करावे और भीष्मपर्वमें उत्तम यान दान करे,

ततो मूलफलप्रायं पायसं मधुसर्पिषा ॥ आस्तिके भोजयेद्वाजन्दद्याच्चैव गुडोदनम् ॥ ५७ ॥ अपूपे घेयं पूषे च मोदके च समन्वितम् ॥ सभापर्वणि राजेन्द्र हविष्यं भोजयेद्विजान् ॥ ५८ ॥ आरण्यके मूलफलेस्तर्पयेच्च द्विजोत्तमान् ॥ अरणीपर्व आसाद्य जलकुम्भान् प्रदापयेत् ॥ ५९ ॥ तर्पणानि च मुख्यानि कन्यमूलफलानि च ॥ सर्वकामगुणोपेतं विप्रेभ्योऽन्नं प्रदापयेत् ॥ ६० ॥ विराटपर्वणि तथा वासांसि विविधानि च ॥ उद्योगे भरतश्रेष्ठ सर्वकामगुणान्वितम् ॥ ६१ ॥ भोजनं भोजयेद्विशान् गन्धमालपैरलंकृतान् ॥ भीष्मपर्वणि राजेन्द्र दत्त्वा यानमनुत्तमम् ॥ ततः सर्वगुणोपेतमन्नं दद्यात्सुसंस्कृतम् ॥ ६२ ॥ द्रोणपर्वणे विप्रेभ्यो भोजनं परमाचितम् ॥ शराश्च देया राजेन्द्र चापान्यसिवरास्तथा ॥ ६३ ॥ कर्णपर्वण्यपि तथा भोजनं सार्वकामिकम् ॥ विप्रेभ्यः संस्कृतं सम्पन्नं दद्यात्संपतमानसः ॥ ६४ ॥ जलपर्वणि राजेन्द्र मोदकेः सगुडोदनेः ॥ अपूपैस्तर्पयेच्चैव सर्वमन्नं प्रदापयेत् ॥ ६५ ॥ गदापर्वण्यपि तथा मुद्रमिश्रं प्रदापयेत् ॥ स्त्रीपर्वणि तथा रत्नेस्तर्पयेत्तु द्विजोत्तमान् ॥ ६६ ॥

और सर्व कामगुणोंसे युक्त संस्कार किया अन्न दे ॥ ६२ ॥ द्रोणपर्वमें परम सुन्दर भोजन ब्राह्मणोंको जमावे, तथा शर चार और अस्त्रि (तलवार) का दान करे ॥ ६३ ॥ कर्णपर्वमें सब कामना देनेवाला भोजन करावे और यह अच्छी तरह बनाय भित्तिद्विपत्ता युक्त ब्राह्मणोंको भोजन करावे ॥ ६४ ॥ जलपर्वमें गुड मोदक और ओदन जमावे, तथा मालपुर और सब प्रकारके अन्नभी दे ॥ ६५ ॥ और मदारपर्वमें मृग मिलाकर दे स्त्रीपर्वमें ब्राह्मणोंको

रत्नभा दे ॥ ६६ ॥ ऐषाकपर्वमें घृत और ओदन दे और सब प्रकारसे उत्तम अन्न दे ॥ ६७ ॥ शान्तिपर्वमें ब्राह्मणोंको हविष्य भोजन करावे आश्वमेधपर्वमें
 सब कामना देनेवाला भोजन दे ॥ ६८ ॥ आश्रमवासिकपर्वके अन्तमें ब्राह्मणोंको हविष्यान्न भोजन करावे मूसलपर्वमें सर्वगुण गंधाक्षिका अनुलेपन
 करे ॥ ६९ ॥ महाप्रस्थानपर्वमें सर्व गुण और कामनासे युक्त भोजन दे, स्वर्गारोहण पर्वमेंभी ब्राह्मणोंको हविष्य अन्न भोजन करावे ॥ ७० ॥ हरिवंश
 की समाप्तिमें ब्रह्म ब्राह्मणोंको भोजन करावे, और सुवर्णके निष्कसहित ब्राह्मणोंको एक गौ दान करे ॥ ७१ ॥ हे राजन् ! जो श्रोता दक्षिण हो तो
 घृतोदनं पुस्तकाच्च ऐषिके दापयेत्पुनः ॥ ततः सर्वगुणोपेतमन्नं दद्यात्सुसंस्कृतम् ॥ ६७ ॥ ज्ञान्तिपर्वण्यपि गते हविष्यं भोजयेद्
 द्विजान् ॥ आश्वमेधिक्रमासाद्य भोजनं सार्वकामिकम् ॥ ६८ ॥ तथाश्रमानिवासे तु हविष्यं भोजयेद्विजान् ॥ मौख्ये सार्वगुणिकं
 मन्धमाल्यानुलेपनम् ॥ ६९ ॥ महाप्रस्थानिके तद्वत्सर्वकामगुणान्वितम् ॥ स्वर्गपर्वण्यपि तथा हविष्यं भोजयेद्विजान् ॥ ७० ॥
 हरिवंशसमाप्तौ तु सद्गन्धं भोजयेद्विजान् ॥ गामेकां निष्कसंयुक्तां ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥ ७१ ॥ तद्वर्द्धेनापि दातव्या दक्षिणेनापि
 पार्थिव ॥ प्रतिपर्वं समाप्तौ तु पुस्तकं वै विचक्षणः ॥ ७२ ॥ सुवर्णेन च संयुक्तं वाचकाय निवेदयेत् ॥ हरिवंशे पर्वणि च पापसं तत्र
 भोजयेत् ॥ ७३ ॥ श्लोकं वा श्लोकपादं वा अक्षरं वा नृपात्मज ॥ शृणुयादेकचित्तस्तु स विष्णुदयितो भवेत् ॥ ७४ ॥ व्यासं
 चैव सपत्नीकं पूजयेच्च यथाविधि ॥ लक्ष्मीनारायणं देवं पूजितं तच्च पूजयेत् ॥ ७५ ॥ कचकं पूजयेद्यस्तु भूमिवत्समुपेतुभिः ॥
 विष्णुः संपूजितस्तेन स साक्षादेवकीसुतः ॥ ७६ ॥

इससे आधा दान करे, और प्रतिपर्वकी समाप्तिमें एक पुस्तक ॥ ७२ ॥ सुवर्णके सहित वाचकको निवेशन करे हरिवंशपर्वमें पापसका भोजन दे ॥ ७३ ॥
 हे राजन् ! एक श्लोक श्लोकका आधा चौथाई वा एक अक्षरभी जो एकचित्त होकर सुनता है वही विष्णुके लोकको जाता है ॥ ७४ ॥ व्यासजीको
 सीसहित विधिपूर्वक पूजन करे, और लक्ष्मीनारायणका पूजन करे ॥ ७५ ॥ जो भूमि वत्स और उपेत वाचकका पूजन करता है मानो उसने विष्णुकी

मन्त्री प्रकार पूजा की ॥ ७६ ॥ हे राजन् । प्रत्येक पारणमें सब संहिताका जाननेवाला ॥ ७७ ॥ सुन्कर देवमें स्थिति कर रेवमी वस्त्रादिके सहित युक्त हो शुक्ल वस्त्र पहरे श्रीमान् पवित्र और अलंकृत हो ॥ ७८ ॥ गंधमालासे पृथक् २ शिष्टस्मृत संहिताकी पुस्तकका पूजन करे ॥ ७९ ॥ मन्त्रणयोग्य अन्न पीनेके पदार्थ और भी वस्तु सुवर्ण नौ वस्त्र ब्राह्मणोंको दे ॥ ८० ॥ सर्वत्र जिन पद सुवर्ण देना चाहिये वा उससे आवा वा उससे चौथाई दे परन्तु बिचकी शठता न करे ॥ ८१ ॥ जो जो अपनेको इष्ट हो वह वह ब्राह्मणोंको देनी चाहिये सब प्रकार अपने गुरु और वाचकको सन्तुष्ट करे सब क्वेता

पारणे पारणे राजन्यथावद्भरतर्षभ ॥ समाप्य सर्वाः प्रयतः संहिताः श्रमस्त्रकोविदः ॥ ७७ ॥ शुभे देशे निवेश्याथ क्षौमवस्त्रा भिसंवृतः ॥ शुक्लाम्बरधरः श्रीमान् शुचिर्भूत्वा स्वलंकृतः ॥ ७८ ॥ अर्चयेत्तं यथान्यायं मन्त्रमालयेः पृथक् पृथक् ॥ संहितापुस्तकान् राजन्प्रयतः शिष्टसंमतः ॥ ७९ ॥ भक्ष्येर्मांसेश्च पेयेश्च कामेश्च विविधैः शुभैः ॥ हिरण्यं मां चं क्वं च दक्षिणामण्य दापयेत् ॥ ८० ॥ सर्वत्र त्रिपलं स्वर्णं दातव्यं प्रणतात्मना ॥ तदर्द्धं पादशेषं वा वित्तशाल्यविवाजितम् ॥ ८१ ॥ यद्यदेशात्मनोऽभीष्टं तत्तदेवं द्विजातये ॥ सर्वथा तोषयेद्भक्त्या वाचकं गुरुमात्मनः ॥ देवताः कीर्तयेत्सर्वां नरनारायणो तथा ॥ ८२ ॥ ततो गन्धैश्च माल्यैश्च स्वलंकृतद्विजोत्तमान् ॥ तर्पयेद्विविधैः कामेर्दानैश्चोच्चावचेस्तथा ॥ ८३ ॥ अतिरात्रस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥ प्राप्नुयाच्च ऋतुफलं तथा पर्वणि पर्वणि ॥ ८४ ॥ वाचको भरतश्रेष्ठ व्यक्ताक्षरपदस्वरः ॥ भविष्यं श्रावयेद्विप्रान् भारतं भरतर्षभ ॥ ८५ ॥ भुक्तवत्सु द्विजेन्द्रेषु यथावत्संप्रदापयेत् ॥ वाचकं भरतश्रेष्ठ भोजयित्वा स्वलंकृतम् ॥ ८६ ॥

और नरनारायणका स्मरण करे कीर्तन करे ॥ ८२ ॥ फिर गंधमालासे ब्राह्मणोंको अलंकृत करके अनेक कामनासे छोटे बड़े दोनोंको दे ॥ ८३ ॥ तौ मनुष्य अतिरात्र यज्ञके फलको प्राप्त होता है तथा पर्वपर्वमें यज्ञके फलको प्राप्त होता है ॥ ८४ ॥ हे राजन् । वाचनेवाला स्पष्ट पद अक्षरसे युक्त भविष्यपर्व सारत ब्राह्मणोंको सुनावे ॥ ८५ ॥ जब ब्राह्मण भोजन कर चुके तब दान देकर और वाचकको भोजन कर चुकनेपर अलंकृत करे ॥ ८६ ॥

वाचकके सन्तुष्ट होनेपर विष्णु की प्रीति होती है ब्राह्मणोंके प्रसन्न होनेपर सब देवता प्रसन्न हो जाते हैं ॥ ८७ ॥ फिर पयापयेय ब्राह्मणोंका तत्पन पोषण करना चाहिये, सब कामनायुक्त साधुओंको पूर्ण करे ॥ ८८ ॥ हे राजन् ! यह तुमसे भारत सुननेकी विधि कहीं जो तुमने श्रुतिसे पूछा यह श्रद्धावान्को करना चाहिये और इसमें विश्वास करना चाहिये ॥ ८९ ॥ हे नृपते राजन् ! भारतके अन्न और पारणमें श्रेयकी इच्छा करनेवालेको सदा यववान् होना चाहिये ॥ ९० ॥ नित्य भारत सुने और कहे जिसके घरमें भारत है उसके हाथमें जय है ॥ ९१ ॥ भारतही परम पुण्य है और भारतमें अनेक

वाचके परितुष्टे तु शुभा प्रीतिरनुत्तमा ॥ ब्राह्मणेषु च तुष्टेषु प्रसन्नाः सर्वदेवताः ॥ ८७ ॥ ततो हि भारणं कार्यं द्विजानां भरतर्षभ ॥ सर्वकामैर्यथान्यायं साधुभिश्च यथाक्रमम् ॥ ८८ ॥ इत्येष विधिरुद्दिष्टो मया ते द्विपदां वर ॥ श्रद्धवानेन वै भाव्यं यन्मां त्वं परि-
पृच्छसि ॥ ८९ ॥ भारतप्रवणे राजन्पारणे च नृपोत्तम ॥ सदा यत्नवता भाव्यं श्रेयस्तु परमिच्छता ॥ ९० ॥ भारतं मृणुयान्नित्यं
भारतं परिकीर्तयेत् ॥ भारतं भवने यस्य तस्य हस्तगतो जयः ॥ ९१ ॥ भारतं परमं पुण्यं भारते विविधाः कथाः ॥ भारतं सेव्यते
देवैर्भारतं परिकीर्तयेत् ॥ ९२ ॥ भारतं सर्वशाल्माणामुत्तमं भरतर्षभ ॥ भारतात्प्राप्यते मोक्षस्तत्त्वमेतद्ब्रवीमि ते ॥ ९३ ॥
महाभारतमाख्यानं श्रुतिं गां च सरस्वतीम् ॥ ब्राह्मणं केशवं चापि कीर्तयन्नावसीदति ॥ ९४ ॥ वेदे रामायणे पुण्ये भारते भरतर्षभ ॥
आदौ चान्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते ॥ ९५ ॥ यत्र विष्णुकथा दिव्याः श्रुतयश्च सनातनाः ॥ तच्छ्रोतव्यं मनुष्येण परं
पदमिहेच्छता ॥ ९६ ॥ एतत्पवित्रं परममेतद्धर्मनिदर्शनम् ॥ एतत्सर्वमुपोषेतं श्रोतव्यं भूतिमिच्छता ॥ ९७ ॥

कथा हैं भारतको देवता नित्य सेवते हैं इससे नित्य भारतका कीर्तन करे ॥ ९२ ॥ हे राजन् ! यही सब शास्त्रोंमें अर्थ है, भारतभजनसे मुक्ति हो जाती है यह मैं तत्त्वसे कहता हूँ ॥ ९३ ॥ महाभारतकी कथा पृथ्वी जो सरस्वती ब्राह्मण और केशवका स्मरण करनेसे पुरुष दुःख नहीं पाता है ॥ ९४ ॥ वेद रामायण पवित्र भारतमें आदि मध्य और अन्तमें सर्वत्र हरि माये जाते हैं ॥ ९५ ॥ जहां विष्णुकी दिव्य कथा है वहां सनातनी श्रुति है सो परमपदकी इच्छावाले मनुष्यको सदा सुननी चाहिये ॥ ९६ ॥ यही परम पद और धर्मका निरर्तन है यही सब एणोंसे युक्त वैश्वर्यकी

इच्छावालेको सुननी चाहिये ॥ १७ ॥ इस संसारमें यही वांछित फल देनेका कारण है और सार है इस प्रकार व्यासजीने हरिवंशका माहात्म्य कहा है ॥ १८ ॥ सहस्र अश्वमेध और सौ वाजपेय यज्ञसे जो फल होता है वह हरिवंशके पारणसे फल होता है ॥ १९ ॥ अजर अमर एक आदि अन्तस शून्य सगुण अगुण आदि स्थूल सूक्ष्मरूप निरुपम अनुमेय योगियोंके ज्ञानमें आने योग्य त्रिभुवनगुरु विष्णु ईशकी में शरण होता हूं ॥ १०० ॥ सम्पूर्ण कष्ट दूर हों सब मंगल दृष्टिगोचर हों सब वांछित अर्थ इसके पारणसे प्राप्त होते हैं ॥ १०१ ॥ इति श्रीमद् वि० लि० ह० ग० ता० हरिवंशमणवणफलकथनं नाम द्वात्रिंशधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३२ ॥ जनमेजय बोले, हे ब्रह्मन् ! मैं तत्त्वसे शिवद्वारा त्रिपुरासुरका वध सुनना चाहता हूं, जो जाकाशचारी तीन पुर हैं उनका संक्षेपसे वर्णन करो यद्यपि भारतकी समाप्ति करके अब प्रश्नका संतव युक्त नहीं परन्तु "आत्मा वा अरे श्रोतव्येति" कियतेऽत्रासंस्तारे वाञ्छितस्यैव कारणम् ॥ हरिवंशस्य श्रवणमिति द्वेपायनोऽब्रवीत् ॥ १८ ॥ अश्वमेधउद्वेगेण वाजपेयशतैस्तथा ॥ यत्फलं प्राप्यते पुंभिस्तद्वरेर्वैशपारजात् ॥ १९ ॥ अजरममरमेकं ध्येयमाद्यन्तशून्यं सगुणमगुणमाद्यं स्थूलमत्यन्तसूक्ष्मम् ॥ निरुपममनुमेयं योगिनां ज्ञानगम्यं त्रिभुवनगुरुर्मांशं त्वां प्रपन्नोऽस्मि विष्णो ॥ १०० ॥ सर्वैस्तरतु दुर्गाणि सर्वो भद्राणि पश्यतु ॥ सर्वेषां वाञ्छिता अर्था भवन्त्वस्य च पारजात् ॥ १०१ ॥ इति श्रीमद्भारते स्त्रिलेखे हरिवंशे भविष्यपर्वणि श्रवणफलकथनं नाम द्वात्रिंशधिकशततमोऽध्यायः ॥ १३२ ॥ जनमेजय उवाच ॥ त्र्यक्षाद्वधमहं ब्रह्मन् श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ॥ त्रयाणां पुरसंज्ञानां सेचराणां समासतः ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ शृणु विस्तरतः सर्वं यन्मां पृच्छसि नेधनम् ॥ द्वैपायनां बाहुबलिनां सर्वप्राणिविरोधिनाम् ॥ २ ॥ श्रुतिद्वारा फिर दृढता प्रतिपादन करानेके लिये प्रश्न करते हैं (त्र्यक्षात्) श्रवण मन निदिध्यासनरूप वर्धन साधन इन्द्रियवत् नेत्रवाले, वा विद्वान् श्रवणादि समुदायवान् तीन नेत्रवालेसे (त्रिपुर) स्थूल सूक्ष्म कारण देहोंका समूहोच्छेद किस प्रकारसे होता है अर्थात् मनन निदिध्यासन फलोपकार्यद्वारा वेदान्त महावाक्य श्रवणसे कैसे संसारका विच्छेद होता है कारण कि ज्ञानप्राप्तसे किसी अर्थका उच्छेद देला नहीं है ओ कहो ॥ १ ॥ वैशंपायन बोले, जो तुम पृच्छते हो वह विस्तारसे सुनो, वे बड़े बड़ी द्वैप सब प्राणियोंके निरोध करनेवाले थे, शमादिक देवता और काम क्रोधादिक असुर यह,

अध्यात्मविद्यामें बह्मधारण्यकमें कथन किया है ॥ २ ॥ जैसे परमात्मा शंकरने श्रवणादि साधनवाले तीन शूलोंसे वध किया है सो सुनो यह असुर सब भूतोंके वधकी इच्छा करनेवाले थे ॥ ३ ॥ यह त्रिपुर (जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति) के अजिमानि विश्व तैजस प्राज्ञद्वारा भोगयोग्य बहुतसी धातु (माषाका कार्य) और उनके गुणोंसे युक्त हैं अर्थात् आकाशरूप अपने कारणमें मेघसमूहकी समान स्वयं उठे हुए हैं ॥ ४ ॥ प्राकाररूप अजमय पिंडके सुवर्णरूप प्रकाशमान मणि सर्व रत्न और तोरणोंसे अर्थात् भोगमोक्षकी उपयोगी इन्द्रियोंसे संयुक्त हैं ॥ ५ ॥ वह आकाशमें परम लक्ष्मीसे प्रकाशमान थे बड़े शंकरेण वधं रावन् शूलेस्त्रिभिरजिह्वगेः ॥ कृतं पुराऽसुरेन्द्राणां सर्वभूतवधेषिणाम् ॥ ३ ॥ त्रिपुरं पुरुषव्याघ्रं बृहदातुसमीरितम् ॥ विक्रामाति नभोमध्ये मेघवृन्दमिवोत्थितम् ॥ ४ ॥ प्राकारेण प्रवृद्धेन काञ्चनेन विराजता ॥ मणिभिश्च प्रकाशद्भिः सर्वरत्नैश्च तोरणैः ॥ ५ ॥ बभासे नभसो मध्ये श्रिया परमया ज्वलन् ॥ गन्धर्वाणामिवोदग्रं कर्मणा साधितं परम् ॥ ६ ॥ वाजिनः पक्षसंयुक्ता वहन्ति बलदर्पिताः ॥ पुरं प्रभाकरश्रेष्ठं मनोभिः कामबृंहणेः ॥ ७ ॥ धावन्ति हेषमाणास्ते विक्रमेः प्राणसंभृतेः ॥ आहूयन्त इवाकाशं सुरैः श्यामदलप्रभैः ॥ ८ ॥ वायुवेगसमेर्वैः कालयन्त इवाग्निरम् ॥ असुराः समदृश्यन्त चक्षुर्भिर्विदितात्माभिः ॥ ९ ॥ ऋषिभिर्ज्वलनप्रख्येस्तपसा दग्धकिल्बिषैः ॥ गीतवादिजबहुलं गन्धर्वनगरोपमम् ॥ १० ॥ चित्रायुधसमाकीर्णैः प्रतप्तकनकप्रभैः ॥ भवनेर्बहुभिश्चैव प्रांशुभिः समलंकृतैः ॥ ११ ॥

गन्धर्वोंके कर्मसे साधित अर्थात् यज्ञादिसे गन्धर्वपुरकी समान शोभित थे : ६ ॥ उसको परम बलरत्ना इन्द्रियरूपी बोडे वहन करने हैं और यथेच्छ मनकी वृत्तियोंसे इच्छित स्थानमें पहुँचा देते हैं ॥ ७ ॥ और उत्तर उत्तर वासनाके बढनेसे धावमान होते हुए कामरूपी तृष्णासे पुष्ट हुए वे बोडे सुस्त प्राणों द्वारा चलायमान होते हैं और काले सुरोंसे मानो आकाशको हूयमान करते हैं ॥ ८ ॥ वायुकी समान वेगवालोंसे वे असुर आकाशरूप कारण ब्रह्मको ग्रसते हुए दीखते हैं और चार दक्ष साधन आदि अनुमानसे जाने जाते हैं ॥ ९ ॥ तपसे दग्धपाप हुए ऋषियोंकी समान वह नगर गन्धर्वनगरकी समान शोभित हुआ ॥ १० ॥ चित्रआयुधोंसे युक्त जो कनककी समान प्रकाशित है

६. ॥
॥ २६९ ॥

अर्थात् कामके उद्दीपन करनेवाले कटाक्षादिसे समाकीर्ण और चित्तके प्रवेशवाले श्रीरूपी जपनोंसे युक्त है ॥ ११ ॥ साक्षात् स्वर्गकी समांन बडे बडे महलोंसे संयुक्त और ग्रहोंके ऊपर मनोरथरूपी दूसरे पुरोंसे संयुक्त हैं ॥ १२ ॥ आकाशमें सूर्यकी समांन वह दैत्यनगर शोभित हुआ जो बड़ी अटारी युक्त तपाये सुवर्णकी समांन कान्तिमाप्नोति ॥ १३ ॥ हे राजन् ! तेजोंसे प्रदीप्त होकर वह शोभित हुआ और उसमें दैत्योंके बडे बडे सिंहनाद होते थे ॥ १४ ॥ वह चैत्ररथ वनकी समांन महाशोभाको प्राप्त हुआ बड़ी बड़ी पताका और अस्त्रियोंसे विराजित था ॥ १५ ॥ इस प्रकार अंबरमें त्रिपुर विराजमान हुआ. हे राजन् ! उसमें सूर्यनाभ (चक्षु) चन्द्रनाभ (मन) उसमें अविपति हैं ॥ १६ ॥ तथा औरभी बलसे दपित दानव मोहित होकर देवेन्द्रभवनाकारेः शुशुभे तन्महाद्युति ॥ प्रासादाग्नेः प्रवृद्धैश्च केलासाक्षिस्तरप्रभेः ॥ १७ ॥ शुशुभे दैत्यनगरं बहुसूर्यमिवांबरम् ॥ वराहलकसम्पन्नं तप्तकाञ्चनसप्रभम् ॥ १८ ॥ प्रदीप्तमिव तेजोभी रराजाय महाप्रभो ॥ क्ष्वेडितोत्कृष्टबहुलं सिंहनादाविनादितम् ॥ १९ ॥ बभौ वल्गुजनाकीर्णं वनं चैत्ररथं यथा ॥ समुच्छिस्तपताकं तदसिभिश्च विराजितम् ॥ २० ॥ राज त्रिपुरं राजमहाविद्युदिवाम्बरे ॥ सूर्यनाभश्च दैत्येन्द्रश्चन्द्रनाभश्च भारत ॥ २१ ॥ तथाग्ये च महावीर्या दानवा बलदपिताः ॥ ममृदुश्च बभञ्जश्च मोहिताः परमेष्ठिना ॥ २२ ॥ पृथ्वाय देवगमनं पितृयानं च भारत ॥ तैरेवमसुराग्रेषु प्रवृद्धैश्चैव शरासनेः ॥ २३ ॥ दानवैर्नरशार्दूल देवयाने महापथे ॥ पितृष्वह्निबलोपेते हृते भरतसूततम ॥ २४ ॥ ब्रह्माणमभ्यघावन्त सर्वे सुरगणारतया ॥ विवर्णवदना दीनाश्चिन्नेव गतिकर्मणि ॥ २५ ॥ अह्वयंश्च मत्ताः स्थित्वा स्वरेणार्तनिनादिना ॥ हन्यामहे शृगुणैर्भोगोच्छेदेन भागद ॥ २६ ॥ तेषां चैव वेधोपायं वदस्व वदतां वर ॥ यं ज्ञात्वा नाहुवलिनो बाधेम समरे परान् ॥ २७ ॥

मर्दित और प्रजन करने लगे ॥ १७ ॥ अर्थात् देवयान पितृयान मार्गको प्राप्त करानेवाले कर्म और उपासनाको नष्ट करने लगे और उन्होंने बडे बडे वल्गु वारण किये ॥ १८ ॥ हे महाराज ! जब उन्होंने अग्नि बलवाले देवयान और पितृबलसे युक्त पितृयानका हरण किया अर्थात् धर्मकर्मसे अन्ना नष्ट की ॥ १९ ॥ जब देवता दोनों मार्गके नष्ट होनेसे बलाके निकट गये और कर्म नष्ट होनेसे विवर्णवदन तथा दीन हो गये ॥ २० ॥ और आर्तस्वरसे दीन होकर कहने लगे पुण्यलोककी प्राप्तिके न होनेसे हम असुरोंसे हत हुए हैं ॥ २१ ॥ हे वरतां वर ! आप उनके बचका उपाय कहिये जिसको

॥ ॥
मा. टी.
५. ३. ३. ३. २

॥ २६९ ॥

जानकर हम शत्रुओंको बाधा दे सकें ॥ २२ ॥ तब ब्रह्मा उन्हें समझाते हुए बोले, हे देवताओ ! शत्रुओंके नाशका उपाय सुनो ॥ २३ ॥ वे दानव शंकररूपी सुलबोधके विना मृत्युको प्राप्त न होने, इस कारण उस अविनाशीकी प्रार्थना करो ॥ २४ ॥ हे भारत ! तब वे सब रुद्रके सहित पृथ्वीमें जाकर प्राप्त हुए विन्ध्यपाद मेरु और पृथ्वीतलमें अर्थात् कारण कर्मभूमिमें उग्रतपस्व प्राणोंके साथ शंकरकी शरणमें गये ॥ २५ ॥ वे सब सुनि तप चान्द्रापणादि वानप्रस्थ धर्मयोग निष्काम कर्मागुहान गृहस्थधर्म अप वेदान्यास ब्रह्मचारी धर्म ब्रह्मसंहिता ओंकार जपते हरको प्राप्त हुए ॥ २६ ॥ जिन महात्माओंकी तपयोगके पेश्वर्यकी प्रार्थना करनेवाली परस्त्रियोंकी तथा कामादिकी विफलता होती हुई इस कारण वे तृष्णादिक परम दुर्बल हो गये,

सान्त्वयित्वा तु वरदो ब्रह्मा प्रोवाच देवताः ॥ शृणुष्व देवताः सर्वाः शत्रुप्रतिकूर्तिं पराम् ॥ २३ ॥ अवध्या दानवाः सर्वे त्रस्ते शंकरमव्ययम् ॥ प्रतिगृह्य च तद्वाक्यं मनोभिर्वाग्भिरेव च ॥ २४ ॥ भूमौ प्रपेक्षिरे सर्वे सह रुद्रेष्व भारत ॥ विन्ध्यपादे च मेरो च मध्ये च पृथिवीतले ॥ २५ ॥ तपसोमेण योगज्ञाः सर्वे ते मुनयोऽभवन् ॥ काश्यपेयं हरं प्राप्ता जपन्तो ब्रह्मसंहिताम् ॥ २६ ॥ एषां च परदारणामभवद्वन्ध्यता जने ॥ विन्ध्यस्तदर्भनिचये ताम्रलोहं च भूषणम् ॥ २७ ॥ परिधानानि चर्माणि मृदूनि च शुभानि च ॥ स्वयंमृतानां कृष्णानां मृगाणां कुरुसत्तम ॥ २८ ॥ गृहीतानि विमुक्तानि देहेभ्यो वनचारिणाम् ॥ अन्तारिक्षमथोपेत्य विविशुर्मायया वृताः ॥ २९ ॥ इराळयं सुराः सर्वे व्याघ्रचर्मनिवासिनः ॥ प्रणिपत्याथ ते दीना भगवन्तं जगत्पतिम् ॥ ३० ॥

कुरुसमूहको बिछाये लोहरूपी भूषणवाले ॥ २७ ॥ मृदु और शुभ मृगचर्म धारण किये हे कुरुसत्तम ! वे मृगचर्म स्वयं मृतक हुए मृगोंके थे ॥ २८ ॥ वे वनचारी मृगोंके थे इनसे वे कामादिक अत्यन्त दरिद्री हो अन्तारिक्षरूपी हृदयाकाशमें सूक्ष्म वासनारूपसे विलीन हुए ॥ २९ ॥ वे व्याघ्रचर्म धारण करनेवाले देवता हरके स्थानको गये और दीन होकर जगत्पतिको प्रणाम किया अर्थात् संसारके दुःख हरनेवाले निर्गुण ब्रह्मके उपलब्धि स्थान हृदया काश सद्युक्त ब्रह्ममें उनकी उपासना करनेको चले, वे शान्ति आदि देवता विषयोंको भोगनेवाले व्याघ्रको मार उसका चर्म धारण किये थे ॥ ३० ॥

और अच्छे वचनोंसे नारायणके प्रति वचन कहने लगे जैसे जन्मसे ठकी अग्निमें हवि निष्फल है ऐसे हमारे मलिन चित्त है ॥ ३१ ॥ हे भगवन् ! आपसे विमुक्त होनेमें हमको आत्मज्ञानका वरदान वृथाही है यथाकाल यथादेशमें ब्रह्माका वचन कभीभिये हमको तत्त्वज्ञान दीजिये ॥ ३२ ॥ जो कुछ देवदेवने स्वेचर (हृदय आकाश) में उपासकोंके समीप कहा है (कि मैं तुमको सब पापोंसे छुड़ा दूँगा सोच मत करो) उस मोक्षरूप अर्थके वैभवसे ॥ ३३ ॥ प्रगट हुए और महादेव इन्द्रादि देवताओंके सहित आदित्यमार्गमें स्थित हो प्रगट हुए ॥ ३४ ॥ यह सब सुषणकी समान दीप्तिमान् हुए और स्वर्गके साथ वह तेजसे अधिक जलाने लगे अर्थात् उपासक अधिक शोभित हुए ॥ ३५ ॥ और वे सब सुव्यक्तेनाभिधानेन प्रभाकन्त इरं ततः ॥ इविर्दत्तमविज्ञानाद्भस्मच्छन्नेषु वह्निषु ॥ ३१ ॥ वरदानं वृथास्मासु भगवन्विमुक्ते त्वयि ॥ यथादेशं यथाकालं क्रियतां ब्रह्मणो वचः ॥ ३२ ॥ यदुक्तं देवदेवेन स्वेचराणां समीपतः ॥ एवं देवेष्वोभिश्च भाविनोऽर्थस्य वैभवात् ॥ ३३ ॥ समनह्यन्महद्देवो देवैः सह सवासवैः ॥ आदित्यपथमास्थाय रुद्राः समलंकृताः ॥ ३४ ॥ सर्वे काञ्चनवर्णाभा बभूवुर्दीप्ता इषाम्रयः ॥ रुद्रेण सहिता रुद्रा ददन्त इव तेजसा ॥ ३५ ॥ सन्नदाः कुशलाः सर्वे प्राञ्जवः पर्वता इव ॥ विश्वे विश्वेन वपुषा बलिनः कामरूपिणः ॥ ३६ ॥ समनह्यन्महात्मानो दानवान्तं विधित्सवः ॥ एभिः सह घनाध्यक्षैः समन्तात्परिवारितः ॥ ३७ ॥ त्रिपुरं योषण्ययक्षः प्रहृष्ट सशरं वज्रः ॥ अथ दैत्या भिन्नदेहाः पुराट्ठालं गता इव ॥ ३८ ॥ न्यपतन्त विदेहस्ते विशीर्णा इव पर्वताः ॥ अतिविद्धाः सुविद्धाश्च रणमध्यगता नृप ॥ ३९ ॥ न्यपतन्त्येत्यसंघता वज्रेणैव हता नगाः ॥ अस्तिभिश्च हता देवैः शक्तिचक्रपरश्वधैः ॥ ४० ॥ चतुर पर्वतोंकी समान प्रकाशित और सज्ज हुए और तपोयोगबलसे सब (कामरूप) सर्वात्मिक हो गये ॥ ३६ ॥ इस प्रकार वे महात्मा दानवोंके वधकी इच्छा करके इन घनाध्यक्ष (महापित्त मुख्य अभ्यक्षों) शमादिसे परिवारित हुए ॥ ३७ ॥ तब विद्वान् अयक्ष त्रिपुरसे युद्ध करनेकी इच्छा करते हुए अर्थात् कोश जंग करनेको उद्यत हुए और प्रणवरूपी घनुष और आत्मारूपी बाण लिया, तब योगारंभ करनेके उपरान्त कामादि दैत्य जिन्न देहादि हो गये और वे स्थूलरूप रणमें अधिकतर जिन्न हो गये ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ और वज्रसे हत हुए पर्वतकी समान वे पृथ्वीमें गिरे देवताओंने अस्ति

और शक्तिसे तथा फरसोंसे देवोंको मारा ॥ ४० ॥ वे वैश्य युद्धमें बाणोंसे भिन्नवेह हो गये और छिन्न हुए पंखवाले पर्वतोंकी समान पृथ्वीमें गिरे ॥ ४१ ॥
और योगियों द्वारा बलसे निरुद्धमान हुए देव्य दुष्ट वचन कहते प्रदीप्त हुए फिर कषायद्वारा जर्दीभूत हो लयको प्राप्त होते हैं, और क्षयकर्मसे क्षय हुए
परस्पर बाधा देते हैं ॥ ४२ ॥ वे दिव्यचक्षु होकरभी चक्षुसे उनको न देख सके सूर्यके बोधवाले निशामुखमेंभी अविद्यारूपमें स्थित होनेसे छिन्न
भिन्न हो देवता (शमदमादि) पृथ्वीमें गिरे ॥ ४३ ॥ तब वैश्य जयको प्राप्त हो रात्रिमें तीक्ष्ण बाणोंसे देवताओंको मारते मेघकी समान गंतीर शब्द
करते हुए ॥ ४४ ॥ और जयको प्राप्त हो परस्पर जल्यना करने लगे और संग्राममें जय पानेवाले सब देवताओंको व्याकुल कर दिया ॥ ४५ ॥

बाणैश्च भिन्नमर्माणो देत्येन्द्रा युद्धमोचरे ॥ प्रपेतुः सहिता सर्व्या छिन्नपक्षा इवाचलाः ॥ ४१ ॥ तत्र संज्ञां विमुञ्चन्ति दीव्यमानेन
तेजसा ॥ एवं तेऽन्योन्यसंवाधे क्षीयन्ते क्षयकर्मणा ॥ ४२ ॥ नोपालभ्यन्त चक्षुर्भ्यामपि दिव्येन चक्षुषा ॥ अस्तं प्राप्ते दिनकरे
सुरेन्द्रास्ते निशामुखे ॥ छिन्नभिन्नस्तमुखा निपेतुर्वसुधातले ॥ ४३ ॥ अथ देव्या जयं प्राप्ता निशायानि निक्षितैः स्मरेः ॥ विनेदुर्विपु-
लेर्नादेर्मैधा इव महारवाः ॥ ४४ ॥ जयप्राप्त्यासुराश्चैव तेऽन्योन्यमभिजलिपरे ॥ शासितास्त्रिदशाः सर्वे संग्रामजयकर्तृक्षिणः ॥ ४५ ॥
अस्माभिर्वैलसंपन्नेः सह प्रासासितोमरेः ॥ विरेजुश्च जयं प्राप्ता उक्षुनोद्व्यनोघिताः ॥ ४६ ॥ समरे बलसंपन्नाः सायुधा देत्यसत्तमाः ॥
सुरैश्च सहिताः सर्वे रथमारुषाय शंकरः ॥ ४७ ॥ दार्षिणाग्निनदन्देत्यान् प्रदहन्निव तेजसा ॥ युगान्तकाले वितते रश्मिषानिव
निर्दहन् ॥ ४८ ॥ सर्वभूतानि भूताभ्यः प्रलये समुपस्थिते ॥ स रथो वाजिभिः क्षीप्रैरुक्ष्मानो मनोजवैः ॥ ४९ ॥

और जयनाकी हविसे बोधित हुए प्राप्त अस्ति तोमर लिये बलसम्पन्न जयको प्राप्त हो शोभित हुए उस भृशका रूप बृहस्पतिजीने देवताओंके जब और
देव्योंके क्षयके निमित्त धारण किया है यह मैत्रायणी श्रुति है ॥ ४६ ॥ वे देव्य आयुध लिये समरमें बलसम्पन्न हो गये तब रथुलको छोड़ शंकर
देवताओंके सहित रथमें स्थित हुए अर्थात् सूक्ष्मदेहमें प्रवेश होनेसे पहले लय विशेष विघ्न होते हैं ॥ तब अस्मितारूपमें प्राप्त होनेपर उनका वाच
होता है, तब योगिरूप शंकर देवताओंके साथ रथमें चढ़कर ॥ ४७ ॥ अपने तेजसे शब्द करते हुए देव्योंको जलाने लगे, जैसे युगान्तकालमें सूर्य
जलता है वैसे कामादिकको जलाने लगे ॥ ४८ ॥ जब सब भूतोंकी प्रलय उपस्थित होने लगी, तब वह रथ वासनामय सूक्ष्म इन्द्रियोंसे चालित

होता हुआ ॥ ४९ ॥ आकाशमें विजलशुद्ध मेघकी समान शोभित हुआ वह योगसे उत्तम वृषभरूपी धर्मसे जो ध्वजाग्रकी समान ऊंचा था गर्जने लगे ॥ ५० ॥ हे राजन् वह रथ आकाशमें इन्द्रधनुषकी समान शोभित हुआ तब आकाशमें स्थित हुए सिद्ध शिवजीकी प्रार्थना करने लगे, अर्थात् रिपुतिरूप विघ्न प्राप्त हुआ ॥ ५१ ॥ तब वह अपने पूर्वजन्मके कर्मोंसे शिवजीको प्रार्थना करने लगे अर्थात् सत्यव्रतपरायण शान्त ॥ ५२ ॥ और अमृतके प्राप्त होनेवाले सम्पूर्ण देवता गन्धर्व अप्सरा यह सब गन्धर्व स्वरसे ॥ ५३ ॥ प्रहृष्टमुख हो सौम्यरूप वित्रके स्थानान्तरमें समूहोंवाली जटायी जिनमें सेकड़ों शतघ्नी विद्यमान हैं ॥ ५४ ॥ ऐसे जयापाने दैत्यके नगरमें दैत्य दानव बाणोंकी वर्षा करने लगे अर्थात् सूक्ष्म देहमें युद्ध विवभो नभसो मध्ये सविद्युदिव तोयदः ॥ वृषभेण ध्वजाग्रेण गर्जमानेन भारत ॥ ५० ॥ भाति स्म सरथो राजन् सेन्द्रायुध इवाम्बुदः ॥ ततोऽम्बरगताः सिद्धास्तुष्टुवर्षभम्बजम् ॥ ५१ ॥ कर्माभिः पूर्वजं पूर्वैः शुचिभिरुपम्बकं तदा ॥ ऋषयश्च तपःशान्ताः सत्यव्रतपरायणाः ॥ ५२ ॥ अनृतप्राक्षिन्श्चैव सुरसंघास्तथैव च ॥ गन्धर्वाप्सरसश्चैव गन्धर्वेण स्वरेण वै ॥ ५३ ॥ प्रहृष्टवदनाः सौम्याः पेष्ये स्थानान्तरे नृप ॥ चयाहालकसंपन्ने शतघ्नीशतसंकुले ॥ ५४ ॥ तस्मिन्स्तु दैत्यनगरे सर्वभूतभयावहे ॥ ततस्तु शरवर्षाणि मुमुक्षुर्दैत्यवानवाः ॥ ५५ ॥ सुराणामरयो मध्ये तीक्ष्णाग्राणि समन्ततः ॥ शतघ्नीभिश्च निग्नतो भल्लैः शूलेश्च भारत ॥ ५६ ॥ ते चक्रिरे महत्कर्म दानवा युद्धक्रोविवाः ॥ गदाभिश्च गदां जघ्नुर्भल्लैर्भल्लांश्च विच्छिदुः ॥ ५७ ॥ अक्षैरक्ष्णाप्यनाघन्त मायां मायाभिरेव च ॥ ततोऽपरे समुद्यम्य शरशक्तिपरश्वचान् ॥ ५८ ॥ अशनींश्च महाघोरान्मुक्तान् शतसहस्रशः ॥ असिभिर्मोयांविहितैर्मृत्योर्विषयगोचरे ॥ ५९ ॥

हुआ ॥ ५५ ॥ तब दैत्य देवताओंपर बाण वर्षा करने लगे शतघ्नी जाले और शूलसे मारने लगे ॥ ५६ ॥ युद्धमें चतुर दानवोंने उस समय महत्कर्म किया मदासे मदा जालेसे जाले मारकर छेदन करने लगे ॥ ५७ ॥ अक्षसे अक्ष और मायासे मायाका बाध होने लगा तब दूसरे शर शक्ति और फरसोंको लेकर ॥ ५८ ॥ सेकड़ों महाघोर अशनी वज्रोंको छोड़ने लगे और मायाकी तलवार जो अज्ञानरूपी मृत्युके निकट है छोड़ने लगे ॥ ५९ ॥

तब देवता उनसे वध्यमान होकर बाजोंकी वर्षा करते स्थित हुए तब मन्वर्वनमरी समान हूरका रथ फिर सीमित होने लगा ॥ ६० ॥ मांस जाले तोमरोंसे देवताओंद्वारा ताबित हो और बड़े नारवाले देवताओंके प्रहारसे युद्ध अनेक विचित्र असोंको धारण किये इन्द्र स्थित हुआ (इन्द्रसे योनी जानना) ॥ ६१ ॥ हे राजन् ! तब स्वर्गके स्थानमें बड़ा तारी शब्द होने लगा ऋषियोंका और ब्रह्मपुत्रोंका बड़ा शब्द हुआ ॥ ६२ ॥ और संकरके आने यह रथ भूमिमें प्रतिष्ठित हुआ और सब लोकोंके देवसे अजेय होकरभी पराजयको प्राप्त हुआ ॥ ६३ ॥ हे राजन् ! उस रथनेउके

ते वध्यमान विबुधाः क्षरवर्षैरवस्थिताः ॥ मन्वर्वनमराकारः सोऽसीकृत्सहरो रथः ॥ ६० ॥ इन्द्रमानोऽसुरमणैः प्रासासि क्षरतोमरेः ॥ तैश्च वैत्यप्रहरणैरुभिरासाहिभिः ॥ चित्रैश्च नहुभिः शृङ्गेरितिष्ठत शचीपतिः ॥ ६१ ॥ ततो मध्ये विषयज्ञः प्रावुरासीन्महीपते ॥ ऋषीणां ब्रह्मपुत्राणां मदतामपि भारत ॥ ६२ ॥ स एष संकरस्याग्रे रथो भूमिं प्रतिष्ठितः ॥ अजेयो जय्यतां प्राप्तः सर्वलोकस्य पश्यतः ॥ ६३ ॥ तस्मिन्निपतिते राजन् रथानां प्रकरे रथे ॥ निपेतुः सर्वभूतानि भूतले वसुधाधिप ॥ ६४ ॥ विचेलुः पर्वताग्राणि चेलुश्चैव महाद्रुमाः ॥ विबुधुस्तुः समुद्राश्च न रेखुश्च दिशो दश ॥ ६५ ॥ वृक्षाश्च ब्रह्माणस्तत्र जेषुश्च परमं जयम् ॥ यत्तद्ब्रह्ममयं तेजः सर्वत्र विजयेपिणाम् ॥ ६६ ॥ शान्त्यर्थं सर्वभूतानामिह लोके परत्र च ॥ समाधायैतन्मात्मानं योगप्राप्तेन हेतुना ॥ ६७ ॥ रथन्तरेण साम्राय ब्रह्मभूतेन भारत ॥ तेजसा ज्वलन्निष्णो व्यक्तस्य च महात्मनः ॥ ६८ ॥ सर्वेषां चैव देवानां नदिनां कामरूपिणाम् ॥ ऋषीणां तपसाढ्यानां वसतां विजने वने ॥ ६९ ॥

पतित होनेमें सब प्राणी पृथ्वीमें गिर पड़े ॥ ६४ ॥ पर्वतके शृंग चलायमान हो गये महावृक्ष चलायमान हो गये सब समुद्र क्षुब्धित हुए और दिशा शोभित न हुई ॥ ६५ ॥ तब वृक्ष ब्राह्मण परत्र जय करने लगे और जीतनेवालोंका जो जलतेज है ॥ ६६ ॥ उसकी शान्तिके अर्थ सब भूत इस लोक और परलोकमें आत्माको आत्मसे समाधान कर अर्थात् जीवन्मुक्ति और विदेहमुक्तिके निमित्त योगप्राप्तिके हेतुसे ॥ ६७ ॥ रथन्तर साम (प्रणवाख्य प्रतीक तथा शब्द ब्रह्मरूप साम) करके विष्णुके तेजसे प्रज्वलित महात्मा व्यक्तका ॥ ६८ ॥ सब बली तथा कामरूपी देवताओंका तथा

निर्जन वनमें निवास करनेवाले बड़े बड़ी तपस्वियोंको ॥ ६९ ॥ महायोगी विष्णुजी सब ओरसे तत्त्वसे देव वृषरूपमें स्थित हो रथको उधार करने लगे ॥ ७० ॥ सम्पूर्ण बल और पुष्पार्यवाले देवताओंको देवकर हेतु रूप सीनोंपर उठाकर देवयान और विदुषानमार्गकी प्राप्ति के निमित्त हवय रूप अन्धकारसे उधार कर प्राणरूप योगबलसे मर्जने लगे ॥ ७१ ॥ इस प्रकार त्रिभुवनरूप भूमिको जीतकर योगभूमिकी प्राप्ति कहते हैं वह शृंगवान् तीसरे बायु विषय शुद्धत्व पदार्थको प्राप्त होकर पर्वमें समुद्रकी समान नाद करने लगा ॥ ७२ ॥ उस नादसे युद्धदुर्मद दैत्य विव्रता हो गये और फिर युद्ध करनेको तत्पर हुए अर्थात् लय विज्ञेय विद्वद्गणोंकी आनकर प्राप्त हुए पहले तीन सुषुप्तिमें कहे जाते हैं दूसरा तीन विदेह कहा जाता है कारण

अथ विष्णुर्महायोगी सर्वतोऽदृश्य तत्त्वतः ॥ वृषरूपं समास्थाय प्रोज्जहार रथोत्तमम् ॥ ७० ॥ समाज्ञातं देवगणैः समग्रबलपौरुषैः ॥ बलवास्तोऽभित्वा तु विषाणाभ्यां महाबलः ॥ ननाद प्राणयोगेन मथ्यमानं ज्वारणं ॥ ७१ ॥ तृतीयं बायुविषयं समाक्रम्य विषाणवान् ॥ ननाद बलवान्नादं समुद्र इव पर्वणि ॥ ७२ ॥ ततो नादेन विव्रस्ता देतेया युद्धदुर्मदाः ॥ पुनस्ते कृतसन्नादा पुनुषः सुमहाबलाः ॥ ७३ ॥ सर्वे वै बाहुबलिनः समर्थबलपौषवाः ॥ सुरसेन्यं प्रमदन्तः प्रवृत्तिशरासनाः ॥ ७४ ॥ अग्निं संक्षय धनुषि क्षितं बाणं सुपत्रिणम् ॥ ब्रह्मास्त्रेणाभिसंयोज्य ब्रह्मदण्डं श्लिषोऽज्ययः ॥ सुमोच केत्यनगरं त्रिषामात्रानुसंक्षितम् ॥ ७५ ॥

कि उसमें स्थूलं शरीर स्थान होता है तीसरा लय प्रकृतिहीन कहाता है ॥ ७३ ॥ वे सब बड़े बाहुबली समर्थ बल और पुष्पार्यवान् थे, और शरासन ग्रहण कर देवताओंकी सेनाको मर्दन करने लगे ॥ ७४ ॥ धनुषमें अग्नि चढ़ाकर बड़ा तीक्ष्ण बाण लेकर ब्रह्मास्त्रसे उसको संयुक्त कर अविनाशी शिवने हीन प्रकार पात्रावाला बाण ग्रहण किया, अर्थात् अग्निदेवतात्मक तत्त्वस्वरूपादि महावाक्यको ओंकाररूप धनुषपर चढ़ाय " ओषि-
त्येतदस्त्रमिदं सर्वं " सूक्ष्मबुद्धिसे तीक्ष्णकर भ्रमरहित वाक्यके तात्पर्यको जान, सूक्ष्मचित्तवृत्तिरहित ब्रह्मविद्या ब्रह्मास्त्रसे चिदाभास संज्ञक जीवको संयुक्त कर मूल अज्ञानरूप तीसरे दैत्य नगरपर उसको छोड़ा, मूल अज्ञान नष्ट होनेसे चौथा अविनाशी अवस्थित रहता है वह ब्रह्मदण्ड तीन मात्रा अकार

उकार मकार रूप विश्व तेजस प्राप्त संज्ञासत्तां या ॥ ७५ ॥ सूक्ष्मधारायुक्त स्थूळदत्तार्थं जायते आदि मेरुमे तीन प्रकार ह ऐसा मनमें विचार कर शास्त्र-
युक्ति वीर्य ध्यानबल उग्रतप (मनश्चिद्राज्योकी एकाग्रता) जीव ब्रह्मकी अभेदताका बाण छोड़ा ॥ ७६ ॥ वह सर्व प्राण हरनेवाला बाण कैयोंके नगरपर
छोड़ा जो दीप्तिमान् सुवर्णके वर्णकी समान थे और बड़े निर्मल थे यह काव्यसौता है ॥ ७७ ॥ विपैले सत्रोंकी समान उन बाणोंको छोड़कर जो बड़े दीप्तिमान्
सौम्य थे और वेदवान् थे उन्होंने त्रिपुर विदीर्ण कर दिया ॥ ७८ ॥ शराघातसे वह पुर विन्ध्याचलके शृंगकी समान प्रदीप्त हुआ उस पुरके सहित गोपुरादि
स्थान विदीर्ण होने लगे ॥ ७९ ॥ अग्निवर्जवाले पदार्थ अग्निसे प्रदीप्त हो गये और वह पुर पृथ्वीपर गिरे, जैसे यज्ञ वैष्णवी पूजा इस न्यायसे बुद्धिबल पुर

तं बाणं त्रिविधं वीर्यात्संधाय मनसा प्रभुः ॥ सत्येन ब्रह्मयोगेन तपसोमेन भारत ॥ ७६ ॥ सुप्तोच देत्यनगरे सर्वप्राणहराञ्छरान् ॥
दीप्तान्कनकवर्णाभाम्भुवर्णाश्च सुनिर्मलान् ॥ ७७ ॥ मुक्त्वा वरशरान्घोरान्तविषानिव पन्नगान् ॥ सुदीप्तैर्ब्रिभिराग्नेर्वीर्यभिस्तद्विदा-
रितम् ॥ ७८ ॥ शरघातप्रदीप्तानि विन्ध्याग्रानि च भारत ॥ गोपुराणि पुरेः सार्धं व्यशीर्यन्त नराधिप ॥ ७९ ॥ अग्निना संप्रदीप्तानि
वह्निगर्भाणि भारत ॥ वरणां संप्रपद्यन्त पुराणि वसुधाधिप ॥ ८० ॥ तानि वैदूर्यवर्णानि शिखराणि गिरिरिव ॥ शंकरेण प्रकृष्टानि
ब्रह्मास्त्रेणापतन् नृप ॥ ८१ ॥ इते च त्रिपुरे देवैर्वाचो ह्यर्षादिकठोरिताः ॥ सर्वान् जहीति शत्रुं स्त्रं प्रवृद्धान्पुंसुषोत्तम ॥ ८२ ॥
विष्णुरेव महायोगी योगेन प्रस्मयन्निव ॥ स्तूयते ब्रह्मसदृशैर्ऋषिभिः शंकरेण च ॥ ब्रह्मणा सहितैर्देवैः संपन्नैरुपौरुषैः ॥ ८३ ॥
इति श्रीमहाभारते सिल्लेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रिपुरवधो नाम त्रयाक्षिशिखरशततमोऽध्यायः ॥ १३३ ॥

रज्जुसर्पकी समान नष्ट हो गये ॥ ८० ॥ वे वैदूर्यमणिके वर्णवाले पर्वतशिखरकी समान शंकररूप कल्याणकारी जीवने ब्रह्मविद्यालपी अज्ञते नष्ट कर दिये
॥ ८१ ॥ त्रिपुरके नष्ट होनेमें देवता अप्सरानि करके लगे, हे पुरुषोत्तम ! धर्मरूप महाविष्णु आप सब शत्रुओंको जीतो ॥ ८२ ॥ विष्णुस्वरूप धर्म महायोगी योगसे
(बुद्धिद्वारा) अशुष्ठानको प्राप्त होकर आश्वर्षकी समान स्तुति किया जाता है और ब्रह्मकी समान ऋषि और सम्पन्न कलपौरुषवाले देवताओंके नहित
ब्रह्मास्त्रा स्तुतिको प्राप्त होता है तात्पर्य यह है कि इस अध्यायमें सम्पूर्ण भारतका यह आशय प्रकट किया है कि धर्मबलसे अविद्या नष्ट होकर विद्यासे
परमानन्दकी प्राप्ति होती है ॥ ८३ ॥ इति श्रीमहाभारते सिल्लेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि त्रिपुरवधो नाम त्रयाक्षिशिखरशततमोऽध्यायः ॥ १३३ ॥

वेशपायन बोले; अब क्रमसे हरिवंशकी कथाकी सूची कहते हैं, पहले आदिसर्ग फिर भूतसर्ग ॥ १ ॥ वैष्णवपुत्र पृथुका आत्मान, मनुका कीर्तन, वैष्णवत-
कुलकी उत्पत्ति, धुंधुमारकी कथा ॥ २ ॥ गालवकी उत्पत्ति, हस्वाकुवंशका कीर्तन, पितृकल्पकी उत्पत्ति, चण्डमा बुधकी उत्पत्ति ॥ ३ ॥ कीर्तिकर्षण अमावसुका
वंशकथन, इन्द्रकी च्युति और प्रतिष्ठा, क्षत्रवृद्धोत्पत्ति ॥ ४ ॥ दिवोदासकी प्रतिष्ठा, क्षत्रियभेद त्रिशंकुका चरित्र, ययातिचरित्र, पुरुवंशका कीर्तन ॥ ५ ॥
कृष्णका चरित्र, स्पर्मन्तकमणिका वर्णन, संक्षेपसे विष्णुका प्रादुर्भाव ॥ ६ ॥ तारकामय युद्ध, ब्रह्मलोकका वर्णन, ब्रह्माके वचनसे विष्णुका बोधनिर्देश

वेशपायन उवाच ॥ हरिवंशेऽत्र वृत्तान्ताः प्रकीर्त्यन्ते क्रमोदिताः ॥ तत्राद्यमादिसर्गस्तु भूतसर्गस्ततः परः ॥ १ ॥ पृथोर्वैष्णवस्य
चात्मानं मनूनां कीर्तनं तथा ॥ वैष्णवतकुलोत्पत्तिर्धुंधुमारकथा तथा ॥ २ ॥ गालवोत्पत्तिरिह्वाकुवंशस्याप्यनुकीर्तनम् ॥ पितृ-
कल्पस्तथोत्पत्तिः सोमस्य च बुधस्य च ॥ ३ ॥ अमावसोरन्वयस्य कीर्तनं कीर्तिकर्षणम् ॥ च्युतिप्रतिष्ठे शक्रस्य प्रसवः क्षत्र-
वृद्धजः ॥ ४ ॥ दिवोदासप्रतिष्ठा च त्रिशङ्कोः क्षत्रियस्य च ॥ ययातिचरितं चैव पुरुवंशस्य कीर्तनम् ॥ ५ ॥ कीर्तनं कृष्णसंभूतेः
स्पर्मन्तकमणेस्तथा ॥ संक्षेपात्कीर्तिता विष्णोः प्रादुर्भावस्ततः परम् ॥ ६ ॥ तारकामययुद्धं च ब्रह्मलोकस्य वर्णनम् ॥ योम-
निद्रासमुत्थानं विष्णोर्वाक्यं च वेधसः ॥ ७ ॥ पृथ्वीवाक्यं च देवानामंशावतरणं तथा ॥ ततो नारदवाक्यं च स्वप्नगर्भविधिस्तथा ॥ ८ ॥
आर्यास्तवः पुनः कृष्णे समुत्पत्तिः प्रपञ्चतः ॥ गोव्रजे गमनं विष्णोः शकटस्थ निवर्तनम् ॥ ९ ॥ पूतनाया वधो भङ्गो यमलार्जुनयो-
रपि ॥ वृकसंदर्शनं चैव वृन्दावननिवेशनम् ॥ १० ॥ प्रावृषो वर्णनं चापि यमुनाहृददर्शनम् ॥ कालीयस्यापि दमनं धेनुकस्य च
भञ्जनम् ॥ ११ ॥ प्रलम्बनिधनं चैव शरद्वर्णनमेव च ॥ गिरियज्ञप्रवृत्तिश्च गोवर्द्धनविधारणम् ॥ १२ ॥

उठता ॥ ७ ॥ पृथ्वीके वाक्य, वेवताओंका अंशावतार होना, नारदवाक्य, स्वप्नगर्भविधि ॥ ८ ॥ आर्यास्तव, प्रपञ्चसे कृष्णकी उत्पत्ति, विष्णुका मोव्रजमें
जाना, शकटका मोड़ना ॥ ९ ॥ पूतनावध, यमलार्जुनयुद्धका विराना, वृकोंका वीरना, वृन्दावनमें जाना ॥ १० ॥ वर्षाका वर्णन, यमुनाहृदका देहना
कालीनागका दमन, धेनुकवध ॥ ११ ॥ प्रलम्बनिधन, शरद्वर्णन, गिरियज्ञप्रवृत्ति, गोवर्द्धनविधारण ॥ १२ ॥

गोविन्दका अभिषेक, गोपियोसे कीडा और छासुरनिधन, अक्रूरका प्रेषण ॥ १३ ॥ अंशुकसे वाक्य, केशीका निधन, अक्रूरका आवा, नागलोकका
 सर्वन ॥ १४ ॥ धनुर्मेन, कंसवाक्य कथन, कुवलयापीड और चाणूरका वध ॥ १५ ॥ कंसकोः निधन, उत्तरी क्षियोंका विजाप करना, उग्रसेनका
 अभिषेक, पादपोंको आश्वासन करना ॥ १६ ॥ रुक्कुण्डसे छोटकर आना, रामकृष्णसे वचन कहना, मथुराका घेना, जरासंधका छोट जाना ॥ १७ ॥
 विकट्टुवाक्य, रामका दर्शन और ज्ञापन, गोमन्तका अधिरोधन, जरासंधकी गति ॥ १८ ॥ गोमन्तप्राप्तिका ज्ञाना, करवीरपुरमें जाना, शुभालवध,
 गोविन्दस्याभिषेकं च गोपीसंकीर्तनं तथा ॥ रिष्टासुरस्य निधनमक्रूरप्रेषणं तथा ॥ १३ ॥ अंशुकस्य च वाक्यानि केशिनो निधनं तथा ॥
 अक्रूराममनं चैव नागलोकस्य दर्शनम् ॥ १४ ॥ धनुर्भङ्गस्य कथनं कंसवाक्यमतः परम् ॥ कुवलयापीडितश्चाणूरान्धवधस्तथा ॥ १५ ॥
 कंसस्य निधनं चापि विजापः कंसयोषिताम् ॥ उग्रसेनाभिषेकश्च यादवाश्वासनं तथा ॥ १६ ॥ प्रत्यागातिर्गुरुकुण्डादयोक्ता रामकृष्णयोः ॥
 मथुरायाश्चोपरोधो जरासन्धनिवर्तनम् ॥ १७ ॥ विकट्टुवाक्यं तमस्य दर्शनं भाषणं तथा ॥ गोमन्तारोहणं चापि जरासंधगति-
 स्तथा ॥ १८ ॥ गोमन्तस्य गिरिर्दक्षः करवीरपुरे गतिः ॥ शृगाढस्य वधस्तत्र मथुरागमनं ततः ॥ १९ ॥ यमुनाकर्षणं चैव मथुरापक्क-
 मस्तथा ॥ उपायेन वधः कालयवनस्य प्रकीर्तितः ॥ २० ॥ निर्माणं द्वारवत्यास्तु रुक्मिणीहरणं तथा ॥ विवाहश्चैव रुक्मिण्या रुक्मिणो
 निधनं तथा ॥ २१ ॥ बलदेवद्विक्रं पुण्यं बलमाहात्म्यमेव च ॥ नरकस्य वधः पारिजातस्य हरणं तथा ॥ २२ ॥ द्वारवत्या विशेषेण
 पुनर्निर्माणकीर्तनम् ॥ द्वारकायां प्रवेशश्च सभायां च प्रवेशनम् ॥ २३ ॥ नारदस्य च वाक्यानि वृष्णिवंशानुकीर्तनम् ॥ षट्पुरस्य
 वधास्यानं मेघपक्षस्य निवर्हणम् ॥ २४ ॥ समुद्रयात्रा कृष्णस्य जलक्रीडाकुतूहलम् ॥ तथा भेमप्रवीराणां मधुपानपवर्तकम् ॥ २५ ॥
 मथुरामें जाना ॥ १९ ॥ यमुनाकर्षण, मथुराका अपक्कन उपायसे कालयवनका वध ॥ २० ॥ द्वारकापुरीका निर्माण, रुक्मिणीहरण, रुक्मिका
 निधन ॥ २१ ॥ बलदेव आन्हिक, बलदेवजीका माहात्म्य, नरकवध, पारिजातहरण ॥ २२ ॥ विशेष कर फिर द्वारकापुरीका निर्माण कहना, द्वारका और
 सभामें प्रवेश ॥ २३ ॥ नारदके वाक्य, वृष्णिवंशका कीर्तन, षट्पुरका आत्मान, मेघपक्षका निवर्हण ॥ २४ ॥ कृष्णकी समुद्रयात्रा, जलविहार

वर्णन, भैमवंशवालोंका स्तुतिगान करना ॥ २५ ॥ हरिके निकट छान्दिक्य गांवर्ष (गीत) का गान करना, मातुदुहिना मातुपतीका हरण ॥ २६ ॥ शम्बरवध, धन्योपाख्यान कथन, वासुदेवमाहात्म्य, बाणासुरका युद्ध ॥ २७ ॥ भविष्यपर्वमें पुष्करनादुर्गाव कथन, बाराह नृसिंह और वामन चरित्रवर्णन ॥ २८ ॥ कृष्णकी केशास यात्रा, पौंड्रकवध, इंद्र डिम्भक वधकथन ॥ २९ ॥ त्रिपुरसंहार हे राजा । इस ग्रंथमें पापनाशक इतने चरित्र वर्णन किये हैं ॥ ३० ॥ जो सावधान होकर साधनातः कालमें यह वृत्तान्त सुनते हैं हे कुरुराज । वह कामनाको प्राप्त हो विष्णुके धामको जाते हैं यह धन्य यशदाता

तत्तच्छास्त्रिगमन्यसिमुद्गहरणं हरेः ॥ भानोश्च दुहिनुर्भातुमत्याहरणक्रीर्तनम् ॥ २६ ॥ शम्बरः पञ्चशेव धन्योपाख्यानमेव च ॥ वासुदेवस्य माहात्म्यं बाणयुद्धं प्रपञ्चितम् ॥ २७ ॥ भविष्यं पुष्करं चैव प्रपञ्चेनैव कीर्तितम् ॥ बाराहं नारासिंहं च वामनं बहुविस्तरम् ॥ २८ ॥ केशासयात्रा कृष्णस्य पौण्ड्रकस्य वधस्ततः ॥ इंद्रस्य डिम्भकस्यैव वधश्चैव प्रकीर्तितः ॥ २९ ॥ पुरत्रयस्य संहार इति वृत्तान्तसंग्रहः ॥ कथितो नृपशार्दूल सर्वपापप्रणाशनः ॥ ३० ॥ वृत्तान्तं शृणुपाद्यस्तु सायं प्रातः समाहितः ॥ याति वैष्णवं धाम लब्धकामः कुरुदह ॥ धन्यं यशस्यभायुष्यं भक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ ३१ ॥ इति श्रीम० लि० ह० भवि० वृत्तान्तसंग्रहो नाम चतुर्विंशतिप्रश्नतमोऽध्यायः ॥ १३४ ॥ इति हरिवंशः समाप्तः ॥ अथ अवगणफलकथनम् ॥ जनमेजय उवाच ॥ हरिवंशे पुराणे तु श्रुते मुनिवरोत्तम ॥ किं फलं किं च देयं वै तद्ब्रूहि त्वं ममाग्रतः ॥ १ ॥ वैशम्पायन उवाच ॥ हरिवंशे पुराणे तु श्रुते च भरतोत्तम ॥ कायिकं वाचिकं चैव मनसा समुपार्जितम् ॥ २ ॥

आपु भक्ति और मुक्तिका देनेवाला है ॥ ३१ ॥ इति श्रीमहाभारते लिखेडु हरिवंशे भविष्यपर्वमें भाषायां वृत्तान्तसंग्रहो नाम चतुर्विंशतिप्रश्नतमोऽध्यायः ॥ १३४ ॥ अथ अवगणफलकथनम् ॥ जनमेजय बोले, हे द्विजोत्तम ! हरिवंशके अवग करनेका करा फल है और करा विधान है इसमें क्या देना चाहिये सो आप हमसे कहिये ॥ १ ॥ वैशम्पायन बोले, हे भरतसत्तम ! हरिवंशपुराण अवग करनेमें कायिक वाचिक और मानसिक पाप ॥ २ ॥

सप्त पैसे नष्ट हो जाता है जैसे सूर्योदयमें जाड़ा नष्ट हो जाता है जो अठारह पुराणोंके सुननेका फल है ॥ ३ ॥ इसमें सन्देह नहीं वह फल वैष्णव
 (हरिवंश) को प्राप्त हो जाता है हरिवंशका एक श्लोक आधा श्लोक वा चौथाई ॥ ४ ॥ जो ज्ञासे सुनते हैं वे वैष्णवपदको प्राप्त होते हैं जम्बुद्वी-
 पको प्राप्त हो कलिमें इसके सुननेवाले दुर्लभ होंगे ॥ ५ ॥ हे राजन् ! यहमें सत्यही सत्य कहता हूं पुत्रकी कामना करनेवाली स्त्रियोंको मित्य विष्णुका
 यश सुनना चाहिये ॥ ६ ॥ और तीन निष्क सुवर्ण दक्षिणामें देना चाहिये यह वाचकको यथाशक्ति फलकी इच्छा कर देना चाहिये ॥ ७ ॥ और
 तत्सर्वं नाशमायाति हिमं सूर्योदये यथा ॥ अष्टादशपुराणानां श्रवणाद्यत्फलं भवेत् ॥ ८ ॥ तत्फलं समवाप्नोति वैष्णवो नात्र संशयः ॥
 श्लोकार्द्धं श्लोकपादं वा हरिवंशसमुद्रयम् ॥ ९ ॥ शृण्वन्ति श्रद्धया युक्ता वैष्णवं पदमाप्नुयुः ॥ जम्बुद्वीपं समाश्रित्य श्रोतारो
 दुर्लभाः कलौ ॥ १० ॥ भविष्यन्ति नरा राजन् सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ स्त्रीभिश्च पुत्रकामोभिः श्रोतव्यं वैष्णवं यज्ञः ॥ ११ ॥
 दक्षिणा चात्र वेद्या वै निष्कत्रयसुवर्णकम् ॥ वाचस्त्रय यथाशक्त्या यथोक्तं फलमिच्छता ॥ १२ ॥ स्वर्णशृङ्गी च कपिर्द्धा सक्ता
 वस्त्रसंयुताम् ॥ वाचकाय प्रवद्याद्वा आत्मनः श्रेयकाङ्क्षया ॥ १३ ॥ अलंकारं प्रदद्याच्च पाण्योर्वै भरतर्षभ ॥ कर्णस्याभरणं दद्याद्यानं
 च सविशेषतः ॥ १४ ॥ भूमिदानं समादद्याद्वाज्ञाय नराधिप ॥ भूमिदानसमं दानं न भूतं न भविष्यति ॥ १५ ॥ शृणोति श्रावयेद्वापि
 हस्तिवंशं तु यो नरः ॥ सर्वथा पापनिर्मुक्तो वैष्णवं पदमाप्नुयात् ॥ १६ ॥ क्लृप्तुद्वरते सर्वानेकादश समुद्रवान् ॥ आत्मानं समुतं
 चैव स्त्रियं च भरतर्षभ ॥ १७ ॥ दशांशश्चात्र होमो वै कार्यः श्रोत्रा नराधिप ॥ इदं मया त्वामे च त्वं प्रोक्तं नरर्षभ ॥ १८ ॥
 सोनेके सींग मढ़ाकर बछड़े सहित कपिला गौको वस्त्रसहित अपने मंगलके निमित्त वाचकको देनी चाहिये ॥ १९ ॥ और बहुमूल्यके अलंकारकी देने
 चाहिये कर्ण आभरण और विशेषकर यामनी देने चाहिये ॥ २० ॥ हे राजन् ! ज्ञास्यके निमित्त भूमिदान करना चाहिये पृथ्वीदानकी समान और दान
 न है और न होना ॥ २१ ॥ जो ज्ञास्य हरिवंश सुनते और सुनते हैं वह सर्वथा पापरहित हो वैष्णवपदको प्राप्त होते हैं ॥ २२ ॥ और अपने ग्यारह
 पितरोंका उच्चार करते हैं, हे राजन् ! अपनेको पुत्र और स्त्रियोंको उच्चार करता है ॥ २३ ॥ हे राजन् ! श्रोताको दशांश हवन करना चाहिये, हे

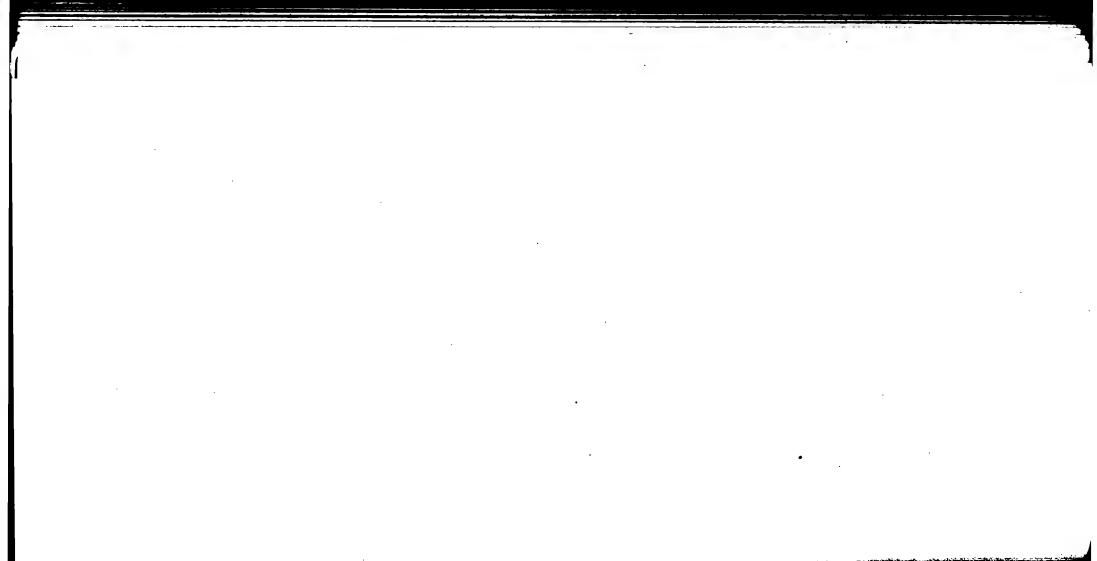
राजन् । यह मैंने सब आपके आने वर्जन किया ॥ १३ ॥ इसके स्मरणमात्रसे यह प्राणी सब पापोंसे छूट जाँवे । है, अपुत्र पुत्रको और निर्धन धनको प्राप्त होता है ॥ १४ ॥ जो फल मनुष्योंको नरमेघ और अश्वमेघसे प्राप्त होता है वह फल इस पुराणके भवणों मिळता है ॥ १५ ॥ ब्राह्मण इत्यादि, क्षत्रिय इत्यादि, वैश्य इत्यादि, शूद्र इत्यादि, गुरुकुलवासी, वेदों पुरुषजी प्रकार पुराण भवण करनेसे पवित्र हो जाते हैं इसमें संदेह नहीं ॥ १६ ॥ हे

यस्य स्मरणमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ अपुत्रः पुत्रमाप्नोति अधनो धनमाप्नुयात् ॥ १४ ॥ नरमे ॥ इवमेवाभ्यां यत्फलं प्राप्यते नरेः ॥ तत्फलं लभते नूनं पुराणश्रवणादरेः ॥ १५ ॥ ब्रह्महा ह्यगहा गोम्रः सुरापो गुरुवल्गवः ॥ सकृत्पुराणश्रवणात्पूतो भवति नान्यथा ॥ १६ ॥ इदं मया ते परिकीर्तितं महत्कीर्णमाज्ञात्पमपारमद्भुतम् ॥ शृण्वन् पठन्नाशु समाप्नुयात्फलं यच्चापि लोकेषु सुबुद्धेभ्यं महत् ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते शिल्पेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि श्रवणफलकथनं नाम पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ॥ १३५ ॥ इति हरिवंशग्रन्थः समाप्तः ॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ॥

राजन् । यह मैंने तुम्हारे आने श्रीकृष्णका अपार और अद्भुत चरित्र कीर्तन किया इसके भवण पठन करनेसे यह प्राणी लोकमें इतना फलको प्राप्त होता है ॥ १७ ॥ इति श्रीमहाभारते शिल्पेषु हरिवंशे भविष्यपर्वणि

पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ॥ १३५ ॥

॥ इति हरिवंशे भाषाटीकायुतं भविष्यपर्व समाप्तम् ॥



श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

[१=हरिवंशपर्व :: २=विष्णुपर्व :: ३=भविष्यपर्व]

श्लोकारम्भ	पर्व अ० श्लोक	श्लोकारम्भ	पर्व अ० श्लोक	श्लोकारम्भ	पर्व अ० श्लोक	श्लोकारम्भ	पर्व अ० श्लोक	श्लोकारम्भ	पर्व अ० श्लोक
श्रशस्तु दानवेन्द्रस्य	३.५३.४५	श्रकृत्वा पादयोः शोचं	१.३.१२२	श्रलकं बीजकैश्चैव	२.६८.१६	श्रगच्छ दृष्ट्वा भूता	१.६.१७	श्रग्निं विविधुः कृष्णेन	२.११२.२६
श्रशवतरणं विष्णोर्य	१.५४.१३	श्रकृष्टपक्ष्या पृथिवी	१.५.३२	श्रलत्रियाश्च राजानो	३.३.६	श्रगस्तिभुवनं चैव	३.४६.५७	श्रग्निं सघाय घनुवि	३.१३३.७५
श्रशवतरणे कृत्स्नं	२.४६.३२	श्रकूर कुह मे प्रतिमेतां	२.२२.६८	श्रलप्रपातने चैव डिम्भी	२.१०२.१०	श्रगस्त्येन पुलस्त्येन	२.१२५.६०	श्रग्निमग्निः प्रविष्टस्तु	२.१२५.३४
श्रशेऽस्मि युवयर्जिता	१.१०.११	श्रकूरगच्छ शीघ्रं	२.२२.६४	श्रलयश्चाव्ययश्च	३.७२.८३	श्रगस्त्यो गालवो गार्ग्यः	२.१०६.८६	श्रग्निमाहवनीयं च वेदीं	१.४०.२८
श्रकरात्तेत्र शैलेन्द्र	३.३५.२८	श्रकूरयज्ञा इति ते स्याता	१.३६.२७	श्रलयाः सर्ववास्तस्ते	३.८३.२४	श्रगस्त्यो गालवो गार्ग्यः	२.१०६.८६	श्रग्निं राहवनीयस्तु ततः	२.१२२.२०
श्रकरोत्पुत्रकामस्तु	१.१०.३	श्रकूरस्तु ततो रतू	१.३६.४	श्रलयाः संति मे तूणाः	३.५६.५८	श्रगाघे चोतमानं च	२.११.४६	श्रग्निर्वा ब्राह्मणो वादि न	२.८०.४४
श्रकरोद्राजसूर्यं कृतं	३.१२८.१०	श्रकूरस्तु महातेजा	२.२२.१०२	श्रलरं च लरं चैव	३.१६.४६	श्रगाघे सलिलस्तब्धे	३.१०.३४	श्रग्निश्चक्षुर्हं विज्योति	३.१४.५४
श्रकर्तव्यं यदि कृतं	२.२३.१६	श्रकूरस्त्वन्धकैः	१.३६.३०	श्रलराणामकारस्त्वं	३.८८.५५	श्रगुह्यन्त शरांचोरास्ते	३.५६.६७	श्रग्निष्टोमादयो यज्ञा	२.११०.७८
श्रकर्मण्येषु वृक्षेषु	२.८.१४	श्रकूरस्य कथामिह च	२.२६.३१	श्रलराद ब्राह्मणाः सौम्या	३.२१.६	श्रगुह्यन्तममन्ताम	३.६१.७	श्रग्निष्वाता इति स्याता	१.१८.१६
श्रकस्मात्तुपुरी सा	१.२६.६२	श्रकूरेण समाहृतस्तेन	३.८२.२६	श्रलः श्रतर्वाचा गूरः	२.६१.१६	श्रगुह्योक्तां वराह्या	२.६४.५६	श्रग्निः सुवर्णस्य गुरु	१.५२.४४
श्रकारणार्थेन विरुध्यमाणा	२.६५.५५	श्रकूरेणोपसेनायां	१.३४.१४	श्रलान्तश्चारिसनेयां	२.५१.४१	श्रग्नयकं सप्रशकारं	३.६३.१६	श्रग्निहोत्राकुलां दिव्यां	३.७३.४०
श्रकार्यं कारिणं वापि	२.७८.१०	श्रकूरेणोपसेन्यां	१.३८.५५	श्रलान रुक्मी ततो	२.६१.३६	श्रग्निचक्रोपमं दीप्तं	३.५५.६१	श्रग्निहोत्रा कुले काले	२.२५.११
श्रकाले पादपः सर्वे	३.४६.१७	श्रकूरे विपृथौ चैव	२.५६.४८	श्रभुद्राः सत्यवंतश्च	२.१२१.५३	श्रग्निजिह्वो दभंरोमा	३.३४.३५	श्रग्निहोममयं लोकं	१.४६.२०
श्रक्विदुक्त्वा तं विप्रं	२.११२.१८	श्रकूरोदन्तवक्त्रं तु	२.५६.५६	श्रक्षौहिणीस्तु शूराणां	२.१६.७६	श्रग्निना संप्रीप्तानि	३.१३३.८०	श्रग्नेराहवनीयस्य प्रभया	२.१२२.१४
श्रकृताघ्राणिभोक्षयन्ति	३.३.४१	श्रकूरोऽपि नमस्कृत्य	२.२७.८	श्रक्षौहिण्यश्च तस्यास	२.३६.३८	श्रग्निपुत्रः कुमास्तु	१.३.४२	श्रग्नेर्जम् तथा श्रुत्वा	१.१८.६३
		श्रकूरोऽपि यथाजपतः	२.२४.३	श्रक्षौहिण्या तु सन्त्यस्य	१.३५.१६	श्रग्निं दंत्याः प्रवृत्ताग्रैरभि	३.२८.८५	श्रग्नतः स्थितशैवेयं	३.११५.३

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

२

अङ्के परमनारीणां	३.१३२.३७	अचिन्त्यरूपमास्थाय	२.२२.३८	अजश्यामी तु पावर्गो	३.१.१३	अणुर्वामिननामाति	३.८८.५२	अतिप्रसंगं तु विचिन्त्य	२.८६.५२
अंगदी कुंडली तूणी	३.६५.१४	अचिन्त्यविक्रमः श्रीमान्	३.५८.२८	अजस्तु रघुतो जज्ञे	१.१५.२६	अणुहः कस्य वै पुत्रः	१.२०.६	अतिरात्रस्य यत्रस्य	३.१३२.८४
अंगपुत्रो महानीसीद्रा	१.४१.४३	अचिन्त्य विभवं देवं	३.११४.२५	अजस्य कर्ता भुवनस्य	३.८०.४२	अणुहस्तो नृपश्रेष्ठो	१.२३.२४	अतिबृष्टस्य तैर्मवैः	२.१८.४५
अंगप्रथमतो जज्ञे	१.३१.३४	अचिन्त्यहृत्प्रमेय	३.३२.५५	अजस्य चैकपादस्य	३.५८.७५	अणुहो नाम तस्याऽसीत्	१.२३.५	अतसर्वत्रगः शूरो	३.६४.१७
अंगवंग कलिगैश्च	२.५६.५३	अचिन्त्याय सुचिन्त्याय	३.६०.१६	अजातपुत्राय सुतान्	१.३८.८	अत ऊर्ध्वं व्युते	३.४.३	अतीतानागतानां वै	१.७.८६
अंगात्सुनीषापत्यं वै	१.२.२०	अचिन्त्यास्तुप्रमेयाति	२.१२०.२५	अजातशत्रुः शत्रूणां	१.३४.४०	अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि	१.३२.७५	अतीत देवा रक्षन्ति	२.३२.१३
अंगांनान्युपशृण्व	३.२८.५१	अचिरेणैव कालेन	३.११२.११	अजाय विष्णवे	३.६०.८	अतः परं प्रवक्ष्यामि	३.१३२.५३	अतीव बलदेवं तं	२.६२.२
अंगान् वंगान् कलिगाश्च	३.४.३१	अच्छोर्वं नाम विस्मातं	१.१८.२७	अजायकै वैकवंशाश्च	३.१४.४३	अतः प्रभृति संघामो	२.३६.८१	अतीव बालभावतवादातु	२.५१.२
अंगारवर्णं सिकता	३.२७.३३	अजकस्य तु दायादा	१.२७.११	अजितात्मा ममभ्राता	२.७०.२२	अतः प्रसादविष्ये त्वां	२.५१.३	अतीव भीमः संह्लादो	३.५४.७६
अंगारस्य तु दायादो	१.३२.१२६	अजगन्धं कृतोन्मुक्तः	३.२७.२६	अजीजनत्पुष्करिण्यां	१.२.१६	अतः समस्तदेवानां	२.७१.२६	अतीव मित्रतां यातो	३.१२१.१७
अंगिराश्चोदविष्णुश्च	१.७.७१	अजमीढस्य कश्चिन्त्यां	१.३२.४३	अजेय इतितं तु ब्रुवा	२.११६.१४४	अतस्तेवर्तयिष्येऽहमिति	१.२०.१४१	अतीव रम्यः सोऽवासीद	२.६८.७६
अंगिरास्तपसो भूति	१.७.७५	अजमीढस्य दायादो	१.२०.३७	अजेयः शास्वतो देवः	२.१२७.७८	अतिक्रम्योदधेर्वलामपरांते	२.३६.३१	अतीव शशुभे रूपं	२.१२२.३
अंगुष्ठमात्रं पुरुष	१.१७.७	अजमीढस्य पत्नस्तु	१.३२.४२	अजेयस्त्वैव लोकेषु	२.५०.४६	अतिथौ पूज्यमाने	३.७६.३४	अतीव सुकुमारांगी	२.२८.८३
अंगुष्ठाद् भिराणाद्वा	३.३६.२०	अजमीढात्पुनर्जातः	१.३२.७६	अर्जैः कपादहिर्बुध्न्यः	१.३.५०	अतिदाहो महागन्धेवः	२.११७.५६	अतीव जयैल्लोकान्त	२.८६.६२
अंगुष्ठाद् ब्रह्मणा जाता	१.२.५२	अजमीढाः स्मृता ह्येते	१.३२.८१	अर्जैः कपादहिर्बुध्न्यः	३.६६.२४	अग्रिदुल्ललितैः कन्या	२.६०.६६	अतीव ह्रि त्व स्त्रीलोके	२.२८.१०२
अचलोऽयं शिलायोनि	२.४२.२६	अजमीढोद्विमीदश्च	१.२०.१८	अभिल्लिकण्टकवनं	२.८.२३	अतिदैवं तु कृष्णस्य	२.१८.६२	अतीव हि पुरी रम्या	२.६३.२२
अचिन्त्यजगन्नाय	३.८१.३	अजमीढोऽपरो वंशः	१.३२.६३	अंजनं रोचनं चापि	२.७८.२८	अतिनामा सहिष्णुश्च	१.७.३१	अतीवामानुवीं मेवां	२.३३.८
अचिन्त्यजगन्नाय	३.१००.४	अजययो शत्रुसंधानाम	३.१०७.६	अटर्कं पृथिवी कुस्त्रा	२.१.२७	अतिनामा सहिष्णुश्च	३.६६.८	अनो बुद्ध्या समीक्षस्व	३.४६.३०
अचिन्त्यित्वा तु	३.५६.११	अजरमरमेकं	१.१३२.१००	अट्टशला जनपदा	३.३.१२	अतिप्रबुद्धो मतश्च	२.२४.११	अतोर्थं न प्रविष्टोऽहं	२.५१.१६
अचिन्त्यं सर्वंभूतानां	३.८७.५	अजरश्चामरश्चैव	२.१९६.१५०	अणिमा लघिमा चैव	३.६३.८	अतिप्रसक्तो तौ ब्रुवा	२.७.१२	अतोर्थं वनतेय त्वां	२.५५.१००

अतोर्ध्वं वैनतेतोऽयं	२.५१.३४	अत्र हेतुरहं युद्धे	२.५३.३०	अथ ते पार्वदास्तत्र	२.११७.६	अथ पुत्र सहस्राणि	१.३.७	अथ रामोज्ज्वलीढाक्यं	२.१२२.११
अत्यद्भुतं समादृष्टं	३.१०२.१३	अत्राश्चर्यात्मकं स्तोत्रं	२.१०६.१	अथ ते सोदरा जाता	१.२१.३३	अथ पुत्रानिमांस्तस्य	१.७.२८	अथर्वभूता इत्येते	३.१४.२६
अत्यद्भुतं सुगन्धं च	२.६६.१६	अत्रिर्वैशिष्टो भगवान्	१.७.३४	अथ तो जातहृषो तु	२.१४.१	अथप्रलम्बकोत्तेय	३.६०.५३	अथर्वाणं मुनिरसं	२.७२.३३
अत्यद्भुतं सविक्कातो	३.१२४.१४	अत्रिश्रेष्ठानि गोत्राणि	१.३१.१५	अथ तो बाहुभिर्वीरो	३.६७.२५	अथ प्रभाते विमले	३.१२७.२	अथ वर्णगणानेव	३.१३२.४६
अत्यद्भुतमाचिन्त्यं च	२.६४.४२	अत्रैव तावत्वरितं	३.५६.३	अथ तो हस्तद्विभक्तौ	३.१२१.१	अथ बाणसहस्रेण	३.६०.६६	अथवा कार्यलोपो वै	२.१२७.५०
अत्यद्भुतामिदवाक्यं	२.१२१.११३	अत्रैवोदाहरन्तीमं	१.३२.१५	अथ दामोदरः श्रीमान्स	२.८.८	अथ बाणस्तु तं दृष्ट्वा	२.१२६.३६	अथवा तिष्ठत रयैः	२.३५.७६
अत्यद्भुतानि कर्माणि	१.१.७	अत्रोपविष्टं देवेशं	२.५०.३०	अथ दीक्षां समास्थाय	३.२६.२	अथ बाणोज्ज्वलीढाक्यं	२.११६.१६	अथवा त्वं जलं तिष्ठ	३.१२७.२६
अत्यन्तखेदिनो युद्धे	३.१२४.१६	अथ कालोत्सवं चक्रे	२.६३.१८	अथ दीर्घस्य कालस्य	१.५२.३०	अथ ब्रह्मा महाभागी	३.२८.३७	अथवा नैव विद्यते	३.२४.१४
अत्यन्तबलिनोमत्तो	३.१११.६६	अथ कृष्णं तदोवाच	२.८५.५६	अथ दीर्घेण कालेन	१.२६.५५	अथ भीतो महारौद्रमस्त्रं	३.१२७.४७	अथवा भवितव्येन	२.७२.१५
अत्यन्तबलिनोमत्तो	३.११२.७	अथ कृष्णस्य कौरव्य	२.७६.१	अथ दुर्योधनो राजा	१.३६.२८	अथ भीतो महारौद्रमस्त्रं	३.१२८.१	अथवा मे प्रयच्छस्व	२.६१.१५
अत्यर्थं तप्यते वीर	२.१०४.२८	अथ कृष्णोज्ज्वलीढाक्यं	२.१२७.१२२	अथ दृष्टो हरिविष्णुः	३.८१.१६	अथ भूतानि सर्वाणि	३.२८.६५	अथ वायुर्धनीभूतो	३.२८.१०
अत्यर्थं रूपतः कान्ता	२.५६.४०	अथ क्रुद्ध सद्भिक्तौ	३.१२६.४	अथ देवप्रभावेन	२.८७.१६	अथ भूत्वा कुमारी	१.३७.१०	अथ वायोऽरतिगतिमास्थाय	२.१२२.१०
अत्र ते कीर्तयिष्यामि	१.१६.१८	अथ क्रुद्धो नृपवरो विद्ध	३.१२५.५	अथ दैत्या जयं प्राप्ता	३.१३३.३३	अथ मूर्ति समाधाय	३.१६.१६	अथ वा सर्वं विद्विष्णुः	३.११४.२१
अत्र ते वसतस्तदा	२.३७.३१	अथ गन्धं समस्ताद्य	३.३०.६	अथ दैत्याधिपं प्रात	३.७२.३७	अथ योगविदां श्रेष्ठं	३.१२.१	अथ वाहं भविष्यामि	२.३२.४५
अत्र नो रोचते मह्यं	२.५६.७	अथ चित्रस्थस्यापि	१.३१.४६	अथ दैत्या हुनास्तत्र	३.२८.८४	अथ रक्तमहावृष्टि	३.५७.५२	अथ विज्ञान योगेन	१.३६.३५
अत्र मे नारदः प्राह	२.२२.६०	अथ विन्तयती सा तु	२.११६.२	अथ द्वारवतीं प्राप्य	२.११६.१	अथ रत्नानि चाभूयाणि	१.३६.२६	अथ विष्यथिरे देवाः	१.४६.६२
अत्र मे शङ्कते बुद्धिः	२.२२.४७	अथ वेष्टितुमारब्धा	३.१८.२१	अथ द्वितीयं वक्ष्यामि	२.७६.४१	अथ राजा जगन्नाथ	३.१०४.६	अथ विष्वाद्य समरे	३.५५.१२४
अत्र मे संशयस्तीव्र	१.१६.३८	अथ तत्र महाशब्दः	३.६५.८	अथ नारायणमुतो	२.७३.५०	अथ राजा विवस्वन्त	१.३८.१७	अथ विष्णुर्महतेजा	२.७३.१
अत्र मे संशयो	३.४८.४	अथ तस्य निरीक्षन्त्या	२.१०४.६	अथ पर्वतभूतं तत्तिमिरं	२.११३.२२	अथ राजा सरस्नातो	१.२४.१७	अथ विष्णुर्महायोगी	३.१३३.७०
अत्र रुद्रास्तथा साध्या	३.१३२.६	अथ तान्वाग्भिर्गुप्ताभि	२.११६.११४	अथ पार्थिवमैश्वर्यं	३.१६.४७	अथ राजा सुतं दृष्ट्वा	१.२०.११६		

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

४

अथर्व क्षीपिका राजन्	३.७८.१७	अथान्यद्वनुरादाय	२.६०.२१	अथेन्द्रो गडङ्गं वार्णः	२.७३.८४	अदितिदितिर्वनुः	३.१४.३०	अदृष्टेनाह्नो वीरः	२.६०.३४
अथ शांगमुधसुतं	२.७३.४५	अथान्यद्रूपमास्थाय	३.१४.३	अथैतं द्वारकां रम्यां	२.७२.१	अदितिर्वैवमाता च	३.६८.१८	अदृष्ट्वा या तु नाश्रति	२.७६.७१
अथव्येना मृगाश्चैव	३.१२२.२०	अथान्वगच्छद् गोविन्दं	२.५७.४२	अथैनं छन्दयामास	२.८५.३७	अदितिप्रतकं चक्र	२.८१.१६	अदेया ह्यप्रतिप्राणा	२.११६.१८४
अथ संकर्षणः श्रीमाविन्ता	२.४१.५	अथापश्यतमागम्य	१.२०.१०२	अथैनं सम्मतिर्घोरा	१.२४.२७	अदितिश्च सपोलोमी	२.६५.३४	अद्भिः संछादिता मुर्वी	३.३४.४२
अथ सत्यवती गर्भं	१.२७.२६	अथापश्यद्गमुद्धे विशेषं	२.३६.२६	अथैराववमारुह्य	२.७३.१४	अदितिः सुरभिश्चैते	१.५५.२२	अद्भुतं चापि मेने च	३.६६.६८
अथ समरहृते तु	२.१०७.३१	अथाश्वीत्समुद्रस्तु	२.११३.४	अथोकारसहायोऽसौ	३.४१.४३	अदितिस्तपसेन्द्राणी	२.८१.१४	अद्भिर्वंदो नारदाय	२.७६.६
अथ सर्वेश्वरो विष्णु	३.१११.१	अथाश्वीत्समुद्रस्तु	२.११३.८	अथोप्रचक्रवर्कणे	२.६३.१२१	अदित्या कश्यपो दत्तः	२.६७.६७	अद्भिर्वंशात्सतीः सर्वा	२.७६.३
अथ सा पूजनीया वै	१.२०.६२	अथाम्पुत्याय विमनाः	२.१२१.७४	अथोपकल्पयामास	२.६७.४१	अदित्या कश्यपो दत्तः	२.६६.२६	अद्भिश्चातिशयो नित्यं	२.३०.१३
अथ सिंहं प्रधावन्त	१.३८.२८	अथामज्जत्पुनस्तत्र	२.२६.६३	अथोरसि पतत्तोयं	२.६६.२६	अदित्यां जज्ञिरे	३.१४.५७	अद्यतोऽस्मि जगन्नाथं	३.११४.३८
अथ सुतलमाक्रम्य	३.२८.४२	अथायमो विष्णुपदी	२.७४.१८	अथोवाच तदा देवी	३.७३.२०	अदित्यां जज्ञिरे देवाः	३.४८.११	अद्य एवं वै मया मुद्धे	२.१२६.४३
अथ सौमपतिः श्रीमान्	२.२८.६६	अथार्यं गृहमासाद्य	२.६४.२	अथोवाच महातेजा	२.६३.३२	अदित्या तपसा विष्णुः	२.७१.२१	अद्य त्वां नाशयिष्यामि	१.४८.२७
अथ सौमित्रिणा वार्णः	१.५४.५०	अथवयोः पुरं रोद्धुं	२.३६.४	अथोवाच रजिस्तत्र	१.२८.११	अद्भुतानुषर्गैरुभतरि-	२.६०.७३	अद्य द्वारवतीं चैव	२.७५.४८
अथांशुपाली भगवान्	३.१२६.४५	अथाष्टबाहुः कृष्णस्तु	२.१२२.४	अथो सोऽपश्यत बलं	२.११६.६१	अदृश्यतदिवस्तम्भः	३.५५.१४२	अद्यप्रभृति गोपानां गवां	२.१२.४६
अथाकाशगतं पार्यं	२.६०.६४	अथाष्टचार बाणेन	२.७३.६८	अदम्भं बभूव्यस्तसर्वं	२.२०.१४	अदृश्यन्त महोत्पाता	३.५३.२७	अद्यप्रभृति तानीह सहिताः	२.६३.१०
अथाकाशो पुनर्वाचमश्रुप	२.११२.१०	अथासुरा सुक्तोयाद्या	२.८५.१०	अदर्शनं तमानीयं	२.११६.५६	अदृश्यन्पतिती भूमौ	३.५५.१३५	अद्यप्रभृति ते यात्रा स्वर्गोक्ता	२.४०.४०
अथाचष्ट मुनिः सर्व	२.७२.६	अथास्तां गच्छति तदा	२.२५.१	अदर्शनेनं भरणं तस्या	२.११६.४१	अदृश्ये सर्वलोके	३.३३.२६	अद्यप्रभृति मासोढो ज्ञास्य	१.१६.४८
अथात्रया कंसनिकुम्भ	२.८६.४	अथास्य पुत्रस्त्वपरो	१.२०.३१	अदर्शयस्त्वमात्मानं	२.८१.१०	अदृष्टो दोषेण रणे भवन्तो	२.४३.५४	अद्यप्रभृति देवानामेव	२.१.२३
अथातो दीर्घकालस्य	१.५२.३४	अथाह कृष्णमक्रु रो	२.२६.४०	अदितरेपि पुत्रस्त्वमेत्य	१.४२.५२	अदृष्ट पूर्वमन्यैर्वा योग्या	२.६२.४५	अद्यप्रभृति देवेन्द्रम	३.५.१७
अथाधि श्रुतपर्यन्ते	२.१७.२०	अथाहान्तहितो विप्रो	२.२४.५६	अदिति च दिति	३.३६.२२	अदृष्टपूर्वश्च मया	२.११६.७१	अद्यप्रभृति सर्वेषां देवानां	२.८१.१२
अथान्तरिक्षे बहुधा	२.११६.११६	अथाहुको महाबाहुः	२.१२८.१	अदितिं चर्चयामास	२.६३.१७	अदृष्टश्चाश्रुतश्चैव	२.११८.३७	अद्यप्रभृति सैन्यैर्म	२.३५.३६

अद्यप्रभृति सैन्धवे गिरि	२.४२.२५	अद्राक्ष जगतामीशं	३.११८.११	अधिश्रितेषु हविषु	३.७६.३३	अनन्तो धारणार्थं च	२.७१.३१०	अनादिमध्यनिधनः	३.४७.२५
अद्य बाहुसहस्रेण	२.१२६.४२	अद्राक्षमद्राक्षमहं	३.११८.२	अधीत्य सर्वमध्यात्मं	३.३२.६१	अनन्या प्रमदा लोके	२.५६.४	अनादिमध्यनिधन	३.४८.६
अद्य मे सफला यज्ञा	३.११४.२७	अद्राक्षमद्राक्षमहं	३.११८.६	अधृष्य सर्वभूतानां	१.३१.४१	अनपत्या तु तस्यासीद	२.१०४.६	अनाद्यन्तेन नित्येन	३.२८.४५
अद्य सात्राजितो देवी	२.६५.३६	अद्राक्षमद्राक्षमहं	३.११८.६	अधृष्य सर्वभूतानां	३.३४.३०	अनपत्योऽन्नवद्रात्रा	१.३२.११६	अनाद्युष्टिश्च धर्मात्मा	२.८४.६
अद्य सा भीष्मकमुता	२.१०५.७६	अद्राक्षमपि गोविन्दं	२.७१.४१	अधृष्यः सर्वभूतानां	३.६४.१४	अनपात्यस्य शून्यस्य	२.२२.२२	अनाद्युष्यस्तु राजर्षि	१.३२.१
अद्यापि च सुविस्तीर्णः	३.५५.८७	अद्राक्षमेनं कविभिः	३.११८.१०	अधोजेन प्रष्टुम्नो नियुक्ते	२.६२.५७	अनमित्रममित्राणां जेता	१.३८.१२	अनानीय स्वसारं तु	२.६०.३१
अद्यापि च हितार्थाय	१.४१.११६	अद्राक्षमेनं यदुभिः	३.११८.४	अधोमुखमुलः सर्वे बद्ध	२.८५.५२	अनमित्रस्य धर्मात्मा	१.१५.२४	अनायुषायाः पुत्रस्तु	३.४६.३२
अद्यापि तानि राज्यानि	२.६७.४०	अद्राक्षमेनं यदुभिः	३.११८.३	अध्यतिष्ठद्वाकाशी मेघं	१.४३.८	अनया सह जाह्नव्या	१.५३.४१	अनायुषायाः पुत्रस्तु	३.५१.२३
अद्यापि भुवि गांयेयस्त	१.५३.४८	अद्रिसारमयीं गुर्वी	३.५६.४७	अध्यास्ये स ह्यरिबिष्णु	३.८०.३५	अनुरण्यसुतो निष्णो	१.१५.२३	अनायुषायाः पुत्रस्तु	३.५३.१६
अद्यापि मनसा धात्रा	३.१६.२६	अद्रोहसमयं कृत्वा मुनी	१.२०.१२८	अध्वर्युर्ज्ञानं संपन्नस्त	३.५.१५	अनष्टद्वयता चैव न शोको	१.३३.२२	अनायुषायास्तनया	३.१४.६१
अद्याहं दर्शयिष्यामि	३.५६.५२	अद्वितीयं प्रहारेषु क्षुर	१.४८.४३	अर्नग इति विख्यात-	२.१०४.५७	अनष्टद्वयता यस्य बभूवा	१.३३.४६	अनारोप्यमसंभेद्यं	२.७७.४५
अद्याहमवगच्छामि सर्वथा	२.६५.४२	अद्यः प्रस्तारशयने शयान	१.२०.५४	अनन्तं केशिहन्तारं	२.१२७.११२	अनाख्यात्वा कथं नाम	२.७२.१४	अनाद्युष्टिभये तस्मिन्	१.१३.२२
अद्याहमिममुत्पाठ्य सकानन	२.१८.२८	अद्यमस्त्वं मम मतो	१.४८.२५	अनन्तमक्षयं दिव्यं	२.१२०.३	अनागतश्च सप्तैते स्मृता	१.७.४६	अनाद्युष्ट्या यदा राज्य	१.३६.३२
अद्यैव किं चिरेण स्म	२.६.३	अद्यमप्रायपुरुषं स्वल्प	१.५३.६०	अनन्तरं सुयज्ञस्तु	१.३६.६	अनागतसि मयि ज्येष्ठे	२.७०.१३	अनिकेतः सुरारिधनः	२.१०६.७६
अद्यैव गच्छ भगवन्द्वारकां	२.७०.४८	अधर्मं वर्तमानस्य	१.३३.१२	अनन्तरशाश्वतो देवस्सहस्र	२.२२.४०	अनाज्ञया मद्बन्धद्विजाप्यः	२.६८.३	अनियुक्तपुरो भागो न	२.७१.३
अद्यैव तिथिनक्षत्रं मुहूर्तं	२.५४.६	अद्यस्तातस्य वृक्षस्य मुनि	२.३६.२१	अनन्तरश्मिसंयुक्ते ददृशे	१.४२.२७	अनाद्यवतां रुदतीं सत्यः	२.११८.१७	अनिरुद्धः प्रहस्याथ	२.११६.१४७
अद्यैव दोष्यतां क्षिप्रमल-	२.४२.४४	अद्यस्थां नागराजाय	३.७२.५४	अनन्तरोपवासेन शाक	२.८०.१२	अनादि निधनं नित्यं	३.८१.१४	अनिरुद्धं गुणैर्दातुं कृतं	२.६१.१२
अद्यैव नगरी ह्येषा	२.३५.५१	अद्यावन्स्थलच्चापि जले	२.८८.५४	अनन्तरोपवासेन सेक्तव्यः	२.८०.१७	अनादिनिधनो देवः	३.३२.४८	अनिरुद्धमिति ख्यातं कर्मणा	२.६१.१०
अद्यैव निश्चयप्राप्तिर्वदि	२.६.६	अधिवास्याद्य चात्मानं	२.५०.२२	अनन्तवीर्यं धृतकर्माणामाद्यं	२.७२.३८	अनादिमध्यनिधन	१.४८.३३	अनिरुद्धस्य वदनं	२.११८.८७
अद्योपहारो रुद्रस्य	२.६६.६१	अधिश्रमणवेलायां प्राप्तायां	२.२५.५	अनन्तश्चैव नागानां	२.१२८.३१	अनादिमध्यनिधनः सोमो	२.८२.१४		

अनिष्टस्य वीर्याख्यो	२.१२७.२१	अनुज्ञातश्च पोषङ्ग	२.५६.२६	अनुह्रावश्च विक्रान्तो	३.६०.६४	अनेन हि कलत्रेण तवान्त	२.३१.१०	अन्तर्विहिजनानां निहता	२.७५.५३
अनिष्टस्य सुप्रभः	२.१२७.३२	अनुज्ञाता नरेन्द्रेण	२.५०.५८	अनुह्रावस्तो ह्यायुः	१.३७.४	अनेनेष्ट्वा च लोकान्तः	१.२६.४२	अन्तर्भूमिगतस्तत्र	१.११.३३
अनिष्टो हूते वीरे	२.१२१.२८	अनुज्ञाप्य ततो ज्ञातीन	२.६६.२४	अनुह्रावस्तु संक्रुद्धो	३.६०.६२	अन्तकप्रतिमे तस्मिन्निवृत्ते	१.५३.५८	अन्तर्वेदी च यज्ञानाम	२.३.१४
अनिष्टो रणे वीरः	२.११६.११६	अनुत्तरं नाम तपो येन	१.२५.४	अनूपविषयश्चैव समुद्रान्ते	२.३७.३२	अन्तकाले ममाप्येवं	३.८०.६६	अन्तर्हितो देवदेवः सोमः	२.६७.५३
अनिष्टो हूतो ब्रह्मन्	२.१२१.७८	अनुत्पन्नेषु नवसु पुत्रे	१.१०.४	अनूपविषये चैव वेलावना	२.३७.४०	अन्तकाले यथा क्रुद्धो	३.१२६.११	अन्तर्हितो मोहयित्वा	२.६०.३
अनिष्टा मया भिक्षा	१.३०.२४	अनुद्धूतं यज्ञकर्तारमन्तं	२.७२.४७	अनूपोपवनैः कान्तैः कान्त्या	२.५८.३२	अन्तः पुरश्चराणां च	२.२६.६	अन्तर्वान् भविता शापो	१.२२.८
अनिलस्य शिवाभार्या	१.३.४१	अनुनीयर्क्षराजानं निर्धयो	१.३८.४२	अनूते धर्मभग्ने च न	२.७१.७	अन्तः पुरद्वारगतं परिधं	२.११६.६६	अन्तश्चरं पुरुवं गुह्यमंज	२.७२.५०
अनिवार्यमभेद्यं च दिव्य	२.६२.११	अनुप्रविश्य यवनो ददर्श	२.५७.५१	अनृत्यद्भ्यस्तंविग्नो	२.१२६.१४७	अन्तः पुरं वा कृष्णस्य	२.५८.४३	अन्तश्चरं रोचनं चाह	२.७२.३५
अनिष्टगन्धहरणं	२.६५.२७	अनुप्रविश्य योगेन	१.५५.१४	अनेकमहत् चक्रं	३.६१.६	अन्तः पुरोपभोग्यासु	२.६२.४	अन्तस्तापसमायुक्त	३.१११.१६
अनिष्पन्नामपि क्रियां	२.५१.२३	अनुमानेन विज्ञेया	३.३०.१०	अनेकमेकं बहुधा	३.८०.५०	अन्तरिक्षचरा च त्वं	२.११८.७६	अन्तस्य श्रुतदेवायां	१.३४.२५
अनीविनीं कुजम्भस्तु	३.५७.६	अनुमान्य तु सर्वज्ञं	३.२१.४	अनेकशतसाहस्रैः	३.६३.८	अन्तरिक्षचराणां च	३.५७.५०	अन्त्या सध्ये निवत्स्यन्ति	३.३.१७
अनुकूलं तु देवेश	१.६.४१	अनुम्लोचैत्यभिक्षाता	३.३६.४६	अनेकशतसाहस्रं दानवै	३.१२१.६	अन्तर्दिशाच्छ्रमा वाचः	३.३२.५१	अन्धकं महाबाहु	१.३७.२
अनुक्तेनापि सुहृदा वक्तव्यं	२.७१.५	अनुयातश्च पितृभिरधिको	३.५४.६	अनेकशालखनैश्च	२.११६.६७	अन्तरिक्षात्परं त्यक्त्वां	३.५६.५०	अन्धकं वारयामास दित्या	२.८६.२०
अनुक्त्वा वचनं किञ्चित्	२.६१.४४	अनुयाता महाराज	३.१२१.१३	अनेन तव गोविन्	३.१२३.१४	अन्तरिक्षे च गन्धर्वैः	३.६३.४२	अन्धकस्त्वय तं दृष्ट्वा	२.८६.४७
अनुगीताति दास्यत्यपि	२.६५.३०	अनुयोस्तुचिरं कालं	२.५१.४७	अनेन तव चक्रेण	३.१००.२६	अन्तरिक्षे स्थितस्तत्र	२.११६.६५	अन्धकस्य च वाक्यानि	३.१३४.१४
अनुग्रहार्थं भूतानां	३.१५.८	अनुलोमकरः सूर्यस्त्वये	१.५१.१५	अनेन तव धर्मेण	१.१०.१३	अन्तर्धानगता देवा विमानैः	२.३०.४०	अन्धकस्य वचःश्रुत्वा	२.२४.१
अनुग्रहो यदि स्यामे	३.७३.२५	अनुवज्राज संहृष्टः	३.५८.३६	अनेन त्वां बह्वे पाप	३.१२७.३६	अन्तर्धानं कलौ याति	१.२६.६८	अन्धकस्य सुतो यज्ञे	२.३८.४४
अनुजमुन् पाश्चैव प्रस्थितं	२.५१.६५	अनुशिष्टो च तौ वीरौ	२.२७.६	अनेन प्राप्त कालास्ते निहता	२.४८.२६	अन्तर्धानं गतः शम्भुः	३.१०४.१०	अन्धकारादयबुहिता	१.३७.१७
अनुजमुप गोपालाः	२.१७.३४	अनुह्रादः कुबेरेण	३.५३.२३	अनेन यदुमुख्येन	२.११५.१८	अन्तर्धानं जगामाशु तेन	२.१७.३८	अन्धकारी कृतं व्योम	२.१६.१०
अनुजमुस्तथा सर्वे	३.५.६	अनुह्रावश्च तत्रैव	३.५१.१	अनेन शंबरं हृत्वा	२.१०८.२३	अन्तर्धानमुपागम्य	२.१२६.१११	अन्धकारीकृतो लोके	२.१२५.१

अन्धको नारदवचः श्रुत्वा	२.८७.१	अन्ये च यादवाः सर्वे	३.१११.१४	अन्योऽन्यं रममाणी तु	२.१०.४३	अपयाते ततो देवे	२.१२६.१	अपश्यद्द्वारि तत्रस्थां	२.६३.४६
अन्धकोऽनुद्विग्नमना	२.२३.२	अन्ये पातालमायातो	३.१२८.८	अन्योन्यव्यतिचक्षताभिः	२.७.६	अपयातो रणं ह्रित्वा	३.५५.५२	अपश्यन्त महात्मानो	२.१२७.४४
अग्नतोऽक्षको हृत्वा	२.३०.५५	अन्येऽप्येवं गमिष्यन्ति	२.११३.६	अन्योन्यस्पदिनोस्तत्र	३.५५.२६	अपयातो रणेष्वक्षकः	३.६४.२६	अपश्यन्त रथं दिव्यमायान्तं	२.५३.८
अन्धमत्सं च निकृति	२.३०.८	अन्येऽस्म परिगयन्ति	२.११२.२६	अन्योन्यस्पतिभित्तमरे	१.४७.३३	अपयाने ततो बुद्धि	१.३६.१४	अपश्यन्त सुराः	३.५६.६३
अन्नजा भुवि मर्त्यानां	१.५०.३०	अन्ये हयगता भान्ति	१.४३.२३	अन्ववायस्तु सुमहां	१.११.७	अपयाने मतिं कृत्वा दूतं	२.५७.३२	अपश्यन्ति तत्रैव	३.५६.५६
अन्यथा वक्ष्य एव त्वं	२.११६.५	अन्यो घन्यः संस्कृत	२.७२.५६	अन्वालयत तां देवीं	२.८६.६	अपयान्तं गुहं दुष्ट्वा	२.१२६.३१	अपः संस्पृश्य तत्रैव	३.८०.५६
अन्यथा वो महीपालान्	३.१०६.५	अन्योऽन्यं पितरो यूयं	१.१७.३२	अन्विष्यतस्य भगवान्	२.८५.४५	अपरः केशवस्यायं	१.४१.१५६	अप स्त्रवशायाः कृत्वा	१.४७.५६
अन्यथाहं निषेद्धा	३.८०.१६	अन्योन्य बाण वर्षेण	३.३८.२८	अन्वीयमानो दितिर्जवां	३.४६.२८	अपरं चैनं सोमेन	२.२६.५६	अप्राज्यान्याजयिष्यन्ति	३.३.३६
अन्यथाहं युवां हत्वा	३.११६.१७	अन्योन्य भेदो भ्रातॄणां	२.७१.६	अपकारिणि विस्त्रभं	१.२०.१२२	अपराजिता तमस्ये	२.१०७.१०	अपानः पश्चिमकाय	१.४०.५८
अन्यदिष्वासनं तं तु ग्रहीतु	२.७३.६६	अन्योन्यं जघनतुः	२.१२६.७६	अपक्षिण्ण संघाते	३.३३.२५	अपराजितादहं कुण्ठां	२.३६.४५	अपानपादोद्वहभोजमिवा	२.८६.६४
अन्यथापार रहितो	३.१११.७	अन्योन्यं जघ्नरे	२.१२२.६	अपगच्छापगच्छ त्वं	२.१२६.२५	अपराजिते सूर्ये	३.४६.२४	अप्रातरतमा नाम	३.७२.७६
अन्यस्मिन्वाजले माघ	२.८१.२७	अन्योन्यं जघ्नरे	३.१२२.१२	अपतित्वं स्त्रियाश्च्रेयां	२.३१.२४	अपरे तु नृपा	३.६१.१८	अप्रां तु नीलिकां विद्या	२.१२३.२६
अन्याश्च वृद्धान्बृहणीनां	३.१००.६	अन्योन्यं प्रतियुष्मस्तावन्तो	३.५५.३५	अपत्यं कृतिकानां तु	१.३.४३	अपरे ये तु दैत्या	१.४८.५२	अप्रां तु वरुणं राज्ये	१.४.३
अन्यानपि यदुत्सर्वा	३.७४.७	अन्योन्यं विविधैरस्त्रैः	२.३६.१२	अपत्याख्यानयोगेन ब्राह्म	२.७६.५०	अपरे हा हतास्तमेति	२.१२.२२	अप्रां पतिरतिकुटुम्बः	२.१२७.६२
अन्यापि प्राकृता नारी	२.२८.४१	अन्योन्यमभिगर्जन्तो	३.५५.१६३	असदात्तु पदो जातस्य	३.१६.१०	अपवाह्य गुहं शीघ्रमपयाहि	२.१२६.२७	अप्रापास्त्यज्यमाना	३.५.३८
अन्याश्च सरितो रम्या	२.७७.१६	अन्योन्यमभिनिघ्नन्तो	३.५५.४२	अपच्यतो महेन्द्रो ही	२.७२.६४	अपवाह्य गुहं शीघ्रं	२.१२६.३६	अपामग्नेस्तुरेशस्य	२.५८.१७
अन्ये कुण्ठां चरा राजन्	२.१२१.६५	अन्योन्यामभिवर्तन्ते	३.५८.५	अपच्यसेति बहुशोवदन्	१.१२.१५	अपवाह्य रथेनैनं	२.१२६.१४४	अपामग्नेस्तुरेशस्य	२.५८.१७
अन्ये च मञ्चा बहुवः	२.२६.१२	अन्योन्यामभिवीक्षन्ते	२.१२१.७०	अपच्यस्ता विसंज्ञाश्च	१.४५.१६	अपविद्धश्च भानश्च	३.५८.७१	अपामग्नेस्तुरेशस्य	२.५८.१७
अन्ये च यादवा राजन्	३.१०२.६	अन्योन्यामभिसंरक्ष्यो	३.५४.८०	अपनीय ताः कण्ठात्	२.७६.१२	अपविद्धश्च भानश्च	३.५८.७१	अपामग्नेस्तुरेशस्य	२.५८.१७
अन्ये च यादवाः शूरा	३.१२०.७	अन्योन्यामभिसंरक्ष्यो	३.५४.८०	अपनेष्यामि वाष्ण्ये	३.१०.१४	अपविद्धश्च भानश्च	३.५८.७१	अपामग्नेस्तुरेशस्य	२.५८.१७

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

अपान्तं बहुभिर्बोधैस्तुरगैः २.४३.५०	अप्रमाणं करिष्यन्ति ३.४.८	अभवत्सा सरिच्छेष्टा १.६.६४	अभिवाद्याभिवाद्याना १.४६.१५	अशेषं कवचं दिव्यमच्छेषं ३.१०५.१४
अपि कीटपतंगैश्च ३.२८.७०	अप्रमेयं ह्यविह्वलं २.१२६.१०७	अभावे सर्वपापानां ३.६५.५	अभिशास्तास्तु ते देवाः १.१७.२६	अभोग्यं तत्पशूनां हि अपेयं २.११.४५
अपि चाप्युक्तवान्देवो २.७०.७	अप्रमेयमनावारमाहुः ३.८५.१६	अभिगम्या ब्रूवन्त्सेतवे २.६१.२१	अभिविक्तं तु तं गोभिशक्रो २.१६.७०	अभीममम्भो विसृजन्ति २.६५.२२
अपि दृष्टस्त्वया ३.११७.१४	अप्रमेयस्त्वचिन्त्यश्च २.१०२.३७	अभिजात्याऽयं तपसा १.७.५०	अभिविक्तस्तदा ३.४८.२१	अभ्यद्रवत ह्यभ्येन्द्रो ३.५४.६८
अपि ब्रह्मयति योगात्मा ३.११४.१०	अप्रमेया महोत्सेषाम २.६८.२४	अभिजिन्नाम नक्षत्रं २.४.१७	अभिविक्तोऽसुरगणं ३.४८.२२	अभ्यद्रवत वेगेन ३.४६.३५
अपि मार्दवं भावेन गात्रं १.२०.१२६	अप्रवृत्ताः प्रपत्स्यन्ते ३.३.३०	अभिज्ञस्तस्य भावानां गह २.४१.४४	अभिविच्य जयन्त २.६७.३२	अभ्यधावत गोविन्दो २.२१.१४
अपि वा सुष्ठुभंजीरमपि ३.१३०.७	अप्रशान्तमहातुर्या गीत- २.८८.७६	अभितः पर्वताकार २.११६.१७६	अभिविच्य भूतेशं ३.१७.२४	अभ्यधावत्सुसंरब्धो २.३५.६१
अपुत्रस्य स राजस्तु १.३५.१७	अप्राप्तांश्चान्तरिक्षे २.६३.६१	अभिदुद्राव रामं तु २.३६.१८	अभिविच्य स्वराजे तु १.२४.२६	अभ्यधावन्त दितिजाः ३.५५.६७
अपुत्रस्याथ राजस्तु १.३५.३७	अप्सरोगणसंकीर्णं ३.१३२.२६	अभिदुद्राव रामं तु २.४३.६७	अभिविच्यधिराज्ये तु १.४.१	अभ्यन्तरे जगन्नाथः ३.१०२.१८
अपुत्रस्याथ राजस्तु २.५७.१६	अप्सरोगिभिः समागम्य ३.२७.३६	अभिद्रुतोऽयं दैत्येन ३.६१.४४	अभिविच्यधिराज्ये ३.३७.४	अभ्यविच्यत्पृथुं वैश्यं ३.३०.२
अपुत्राणां हि नारीणामेकं २.२६.१४	अप्सरोगिभिः समासेदुः २.१२२.१५	अभिद्रुत्य निकुम्भं च २.८५.१७	अभिवेकार्यमाजगमुयंतो २.४४.५८	अभ्याशे वर्तन्तो कालो २.२४.६८
अपुत्रो लभते पुत्रमधनो २.८५.७६	अप्यु सुजन्तसेमन्य ३.६.४	अभिन्नबन्धने धृष्टो १.४६.४२	अभिवेकाद्रैकेशेन राजा १.५४.३०	अभ्युपेत्य तदासुषुप्तः २.१२२.५३
अपुत्रोलभते पुत्रं २.१२५.६२	अबाधं तदसंख्येयं २.१२२.६०	अभिभूतश्च कृष्णेन २.१०२.२३	अभिवेकेण गोविन्दो २.३२.५५	अमरैरावृतं पुण्यं पुण्य १.४०.६
अपुनर्भाविनां लोकाः ३.१७.६७	अब्जस्त्वमिति होवाच १.२६.१४	अभिमान्युश्च दशमो १.२.१६	अभिवेकेण दिव्येन २.४४.५६	अमर्षादन्वशासच्च ३.५.२०
अपूर्वैश्चैव पूर्णैश्च ३.१३२.५८	अब्दं दग्धनमुक्तं च अयनं १.८.६	अभिमानवतीमिष्टां प्राणं २.६६.३	अभिवेकेण दिव्येन ३.४८.२०	अमर्षो बलवान् ३.५५.१०६
अपृच्छं तमहं तातं १.१६.३४	अद्भुतश्च गताः स्थित्वा ३.१३३.२१	अभिमानि ततोऽन्योन्यं २.१२८.६	अभिवेकेण सत्कृत्य २.५०.५५	अमर्षो वैरशीलश्च सदा २.२२.७१
अपृच्छं तमहं तातं १.१६.३४	अभयं चाभिवेकं च २.४४.५६	अभिवर्द्धति चाधर्मो १.४१.१०६	अभिविक्तं तु सोमं ३.२०.१८	अमानुषाणि कर्माणि २.२०.४
अपृच्छं तमहं तातं १.२.३४	अभयं तेऽस्तु सुभोगिणि २.११६.८८	अभिवाद्य महात्मान २.२१६.२१	अभिहृत्य तु तो ३.२६.२२	अभाव सुरिति क्वातमायोः १.१८.३०
अपेयः पेयसलिलः सागर २.८८.५३	अभवत्पर्वताकारमिहन्न २.१२६.१३३	अभिवाद्य यथायोगं ३.१०२.१०	अभूतस्त्वाप्यजातश्च ३.१६.५	अभावसोरन्वयस्य ३.१३४.४
अप्यमृतनिधं पितृन् १.१८.२८	अभवत्स यदा राजन्न २.६१.११	अभिवाद्य स कुर्वतिः २.६६.८	अशेषं कवचं चास्य २.१०६.४४	अभिवाहुन्ति प्राप्य १.२०.१३६
अप्युन्नतिं प्राप्य नृपा १.२०.१२५				

अमोघना वायुवशोपवाता	२.६५.५	अम्बरीमस्तु नाभागः	१.१५.१८	अयं स नाथो भर्ता	२.१०४.१०	अयोगतश्च तारासु	३.४६.८	अरिष्टो नाम हि गवाम्	२.२१.७
अमुञ्चच्चासितां सूर्यो	३.४६.१०	अम्बुभक्षा वायुभक्षा	१.४५.३५	अयं स निघने हेतुः	१.४८.१२	अयोधयज्जयन्तश्च	२.६६.७०	अरिष्टो बलिपुत्रस्तु	१.४३.१६
अमित बलपराक्रमा	३.५०.१२	अम्लानमाल्यधारिण्यस्ताः	२.८८.५६	अयं स निर्घृणो युद्धे	१.४८.८	अयोध्यां चैव राष्ट्रं	१.१३.४	अरिष्टो बलिपुत्रस्तु	१.४७.७
अमूर्त्या च देवाय	३.८७.१५	अयं तु मार्गो बलतः	२.३०.२६	अयं स रिपुरस्माकं	१.४८.६	अयोध्यायामयोध्यायां	१.५४.२६	अरिष्टो बलिपुत्रश्च	१.५४.७२
अमूर्तिमन्तः पितरो	१.१८.५६	अयं ते वीर विक्रान्तो बालः	२.४४.४६	अयं सविप्रहोऽस्माकमशम्यः	१.४८.७	अयोनावुत्सुजतं सा कुमारं	१.२५.३६	अरुणश्चैव प्राश्वशं	३.३२.२०
अमूर्तिमन्तं यं प्राहुर्महा	३.६२.१६	अयं त्रैलोक्यनाथस्य	२.११८.७२	अयं स विष्णुर्देवानां	१.४८.६	अयो निकुम्भः	३.५१.८३	अरुणस्त्रिदशान्दैत्याः	३.५४.६६
अमृतप्राशिनश्चैव	३.१३३.५३	अयं त्वां गच्छस्तत्र	२.६३.३६	अयं सौभपतिश्श्रीमान्	२.५२.४२	अयोनिजो भवेयं	२.७६.१७	अरुणश्चाण्डिशचैव	३.६६.२६
अमृतं स्थानमासाद्य	३.६७.१०	अयं दक्षितकल्याणो लोको	२.६६.३६	अयमत्र महाशूली	३.६४.१६	अयोमुखश्च विपुलः	३.४६.५४	अरुणावरजं श्रीमानाकृष्ट	१.४४.४७
अमृतस्येव संवाहः	३.५.२	अयं देवसमूहस्य	२.११८.६	अयमस्य विपन्नस्य बान्धव	२.४४.५२	अरञ्जितारो हर्तारो	३.३.५	अरुणो गच्छभ्राता	३.३७.२०
अमृताया द्वितीयोऽपि	२.६६.४६	अयं धनौघः सुमहान्	२.१०१.३	अयमास्थाय वसुधां	२.२५.३१	अरण्यमिदमल्पोदमल्पकशं	२.८.१३	अरुणो गच्छश्चैव	३.१४.६४
अमृतारम्भनिर्मुक्तं मंदरा	१.४४.४२	अयं धृतो मया शैलः	२.१८.२६	अयमेव शरो घोरो	३.६४.१४	अरण्यश्च प्रकाश्च	१.७.२६	अरुणोदयकाले च ययो	२.६४.२०
अमृतार्थे पुरा चापि	२.२२.४२	अयं भगवता पूर्वं	२.१०४.११	अयस्मयप्रतिच्छन्ता	२.११८.८२	अरथो पत्तिनो युद्धे	२.३६.४२	अरुण्वति कृतं ह्येतन्मयं	२.७६.३५
अमृतेन तु तृप्तिः	३.२.१३	अयं भविष्ये कथितो	२.२५.२८	अयाचितेन भुञ्जीत	२.८०.२३	अरमसारमयं नूनं हृदयं	२.१२.२४	अरुण्वति मया इष्टं	२.७८.२४
अमृते निमित्ते पूर्वं विष्णु	२.२२.४१	अयं यद्यावयोरेयं गोमन्त	२.४२.७५	अयादवो यदि भवान्	२.२३.४	अरविन्दकृता पीडो रज्जु	२.८.५	अरुण्वती च साध्वीनां	२.३.२४
अमृष्य माणस्तत्कर्म	३.५४.७२	अयं रथीशरी चापि	३.६४.१५	अयुताजित्सहस्राजित	१.३७.५	अरामयद्रहस्यैनां न	२.६४.१६	अरुण्वती वसुं यामी	३.३६.२४
अमृष्यमाणां स्त्रिदशानाह	३.६०.३	अयं ममानुजो भ्राता	१.५४.४४	अयुतानिस्तुतस्त्वा	१.१५.१६	अरिष्ण ममरानी के चक्रं	१.४४.३८	अरुण्वती वसुधामि	१.३.३१
अमोगे केशहरणमसंकल्पे	१.४५.४१	अयं स कालो दैत्यानां	१.४८.१४	अयुतानि तथा चाष्टौ	२.१०३.२२	अरिष्टनेमिपत्नीनाम्	१.३.६४	अरुण्वत्याण्यो चैव	३.१४.४५
अमोघदर्शनं सत्यं	३.१३.२३	अयं स किल युद्धेषु सुरार्थे	१.४८.१३	अयुद्धेनैव दाशाहंस्त्यक्त	२.५७.४	अरिष्टनेमिरश्वश्च सुचर्मा	१.३४.१६	अरूपी रूपसंपन्नो	३.१६.१७
अमोघयद्भिरुदाजो मरुद्भिः	१.३२.१६	अयं स चक्री शरशङ्ख	३.८२.३	अयुष्यत महावीर्यं	२.११६.१२०	अरिष्टनेमिरश्वश्च सुचर्मा	१.३८.५७	अरे ब्राह्मणदायाद	३.११८.१८
अमोघस्य तु देवस्य	३.६७.१४	अयं स नाथो देवानामस्काकं	१.४८.१०	अयुष्मतो वृथा ह्येषां	२.११६.२६	अरिष्टा तु महासत्त्वान्	१.३.११६	अरे यादवदायाद किं	३.११६.४

अरोगवीरपुरुषा हृत्स्थ	१.५४.६०	अर्द्धचन्द्रं समादाय	३.६६.३३	अलर्कः काशिराजस्तु	१.२६.७४	अवतीर्य मदोत्सिक्तो	२.११६.३१	अवन्ध्यं चाप्रमेयं	३.२३.३४
अरोगो बलवांश्चैव	२.१२५.६१	अर्द्धप्रविष्टाः संरञ्धा	३.५५.४७	अलर्कस्य तु दायादः	१.३२.३६	अवतीर्य स ताक्ष्यत्	२.६४.५१	अवप्लुते ततो रामे कृष्णः	२.४२.८१
अर्कद्वीपे निवसतो द्विगुणं	२.८२.३०	अर्द्धं राकानां सिरसो	१.१४.१६	अलर्को राजपुत्रस्तु	१.३२.२६	अवचीस्त हिरण्याक्षं दिव्य	२.७१.३२	अवभ्रंशमनुप्राप्ता योग	१.१६.२
अर्धमादाय वरुणः केशवं	२.१२७.६६	अर्द्धरात्रे स्थितं गर्भं	२.४.३	अलाबुं वर्जयेन्मारी तर्प्यो	२.७६.५६	अवध्यत्वं स देवेभ्यो वज्रं	२.६१.७	अवमानः स च मया	२.७०.३८
अर्धमासाश्च मासाश्च	३.१६.४५	अर्द्धाक्षिणापि हि तावन्मां	२.६६.३७	अलिमन्दीवरश्यामे	२.६६.३८	अवध्यममरेन्द्राणां	३.४१.३८	अवलम्ब्यः पराः कण्ठे	२.८८.२६
अर्धादिसमुदाचारं	३.६२.३	अर्धमासाश्च मासाश्च	३.६६.४१	अलोमाच्छिद्यते सद्यो	३.१६.४८	अवध्यमालां प्रभया	३.४१.७७	अवश्यं त्रिदशास्तेन प्राप्तं	१.४१.६३
अर्धोद्यतभुजं शृङ्खा	२.५५.४१	अर्धेन नारी तस्यां	१.१.४३	अल्पत्वादभिभूतारतु	२.३६.३६	अवध्यः सर्वभूतानां	२.६३.३७	अवश्यं गिरिकूटामं	२.११०.३३
अर्धमाचमनं दत्त्वा स	२.४७.४४	अर्हति पुत्रमातेति ज्येष्ठेति	२.६५.४८	अल्पवर्षवलो दैत्यस्थित	१.४८.२४	अवध्यस्ते सुतो देविदासा	२.८६.७	अवश्यं त्रिदशास्तेन	३.४१.२५
अर्धमाचमनं दत्त्वा	२.४६.२३	अलक्ष्मीभयभीतोऽहं	३.७१.३७	अल्पवाचो गतमदा ये	२.१६.४६	अवध्यस्त्रिषु लोकेषु	२.४८.१७	अवश्यं पारिजातं ते	२.७१.४२
अर्धमाचमनीयं च पाद्यं	२.५४.४३	अलंकारः शक्तितत्त्व रत्न	२.७६.२३	अल्पेन खलु कालेन विविक्तं	२.४१.६२	अवध्यस्त्वमजेयश्च	२.७४.३८	अवश्यं भाविनं ज्ञात्वा	१.१८.३६
अर्चयेत् यथान्याय	३.१३२.७६	अलंकारं प्रदद्याच्च	३.१३५.६	अलकाशे त्वया दत्ते	२.५८.३७	अवध्याः किल ते	२.७६.३४	अवश्यं मनसा ध्यात	३.६८.३२
अर्चिता तु त्रिभिर्मासै	२.३.३०	अलंकृतं पुष्पमेतत्सं	२.६५.१६	अवगाहः पृथुः कङ्कशत	२.३५.१०६	अवध्या दानवाः सर्वे	३.१३३.२४	अवश्यं हि मया रक्ष्या	३.६५.११
अर्चिताः स्म यथान्यायं	२.८३.४८	अलभन्ती तु सा त्राणं	१.५.४६	अवगीतमिदं सर्वमावाभ्यां	२.८.६	अवध्या देवतानां च	१.३.६५	अवश्यमेव वक्तव्यं हितं	२.७०.२
अर्चितो देवराजेन रत्नैश्च	२.६४.५३	अलं खेदेन राजेन्द्र	२.२२.१६	अवगुण्ठ्य यथा	२.६६.१२	अवध्या देव देवानां	२.७४.४५	अवष्टम्भ्य मुहूर्तं हरिः	२.६०.४५
अर्चितो मुनिभिः सर्वैः	३.८४.३	अलं चक्रे समन्ताद्	२.६८.८	अवघुष्टे समाजे तु	२.३०.११	अवध्याश्च स्त्रियः	१.५.५५	अवस्कन्तं शरस्तम्बे	१.३२.७३
अर्चिष्मास्तुमुहुरक्ष्यैव	२.६६.६	अलं द्रव्यामि ते	३.६६.२२	अवज्ञाय तदा रूपं	२.१२७.४५	अवध्यास्ते तु देवानां	२.६१.५१	अवस्थाप्य च तत्सैन्यं	२.६०.७
अर्जुनं विद्धि मां कृष्ण	२.१६.८४	अलं संरक्षणं तेषां	१.३२.६७	अवञ्चयद्भगं दैत्यो	३.५५.१३३	अवध्याः श्याम भगवन्दैव	२.२.१७	अवस्थितानि दूयन्ते	२.१२७.१२१
अर्जुनः सात्यकिश्चैव	३.१२५.२५	अलं हि मृगयास्माकं	३.१०६.६	अवतीर्णो भवायेह प्रथमं	२.२५.२७	अवध्यो दूततां प्राप्तो	३.११६.८	अवह प्रवहश्चैव	३.४६.५
अर्जुनार्यं च तान्सर्वान्	२.१६.१००	अलमेतेन सर्वत्र	३.८३.१०	अवतीर्य गृहद्वारि	२.६६.१७	अवध्योऽसौ कुतोऽस्माकं	२.५५.६८	अवाकिरन्दैत्यगणा	३.५५.११८
अर्यवादः परं ब्रह्म	३.४.४६	अलम्बुषा मिश्रकेशी	३.३६.४५	अवतीर्य नभोभागात्	३.६२.२	अवध्योऽस्मीति लोकान्त	२.८६.१२	अवागुष्टाः शोचयुक्ता	२.७८.८

अवाप यो ब्राह्मण राज्य	२.६५.३०	अव्यक्तो व्यक्तिमापन्नः	३.१६.१५	अश्लार्घ्य वृणयः	२.२३.५	अष्टादशभुजा देवी	२.१२०.३२	असतश्च सतश्चैव	३.१६.७
अवाप्य तपसो वीर्यं	२.१०२.२१	तानामिव रणे	२.१२६.१२४	अश्लार्घ्यो मे मतः पुत्र	२.२३.३	अष्टारयो नाम नृपः सुतो	१.३२.३१	असतीं वपुष्टमाभेतां	३.५.२१
अविज्ञानान्ममा कृष्ण	२.१६.३६	अशक्ता वै धारयितुमशः	३.३४.१५	अश्वत्थो वृक्षजातीना	३.६८.५६	अष्टो तान् जाल्क्ष्मी	१.५३.४४	असत्यहं नदीमध्ये	२.४६.४५
अविद्वे च विन्यस्तं	२.६३.५२	अशनीश्च महोघोरान्	३.१३३.५६	अश्वमेधः क्रुतः श्रेष्ठः	३.२.२८	अष्टो महिष्यः पुत्रिण्य	२.१०३.२	असदेतत्त्वया दूत भावितं	१.५४.४०
अविद्यमाने मांसे तु	१.१३.१४	अशरीरां शरीरस्थः	३.३०.२०	अश्वमेधसहस्रेण	३.१३२.६६	अष्टो ये लोकपालास्ते	२.५०.६८	असद्ग्राह्यहीतांश्च	३.१०७.२७
अविद्यो दुर्बलः श्रीमान्	२.६१.३२	अशरीरां शुभावाणीं	३.६४.२२	अश्ववृन्देषु नागेषु	३.५६.२६	अष्टो रथसहस्राणि	२.६८.२६	असंप्राप्ते च नगरी मथुरां	२.५५.४
अविध्यग्निशित्तर्वाणी	३.१२५.३	अशार्भ्यं वैरमुत्पन्नं मम	२.२२.८४	अश्वानां कुञ्जराणां	३.५६.७	अष्टो रथसहस्राणि	३.६३.६	असाधुमद्भिर्बाकिर्यश्च त्वया	२.२३.१०
अविन्यया नाम देशे	२.७४.४२	अशास्त्र विदुषां	३.३.३२	अश्वानांशसवर्णां	३.५५.१०	अष्टो वर्षसहस्राणि	३.२८.६	असाध्यमिदमारब्धं	२.११८.१६
अविलम्बमनायस्तमद्रुतं	३.१३२.२१	अशमक्यां जनयामास	१.३४.१७	अश्वान्च वेगिनः	३.६२.१४	अष्टो शतसहस्राणि	२.६३.८८	असिक्क्रमावहत्पत्नी वीर	१.३.६
अविषह्यं ततो मत्वा	२.१४.१७	अशमक्यां प्राप्तवान् पुत्र	१.३४.३२	अश्विनी वासवश्चैव	२.१२०.२८	असंशयं पुत्र महद्	१.६.३०	असि चक्रगदा बाण	२.१२२.५
अविषह्यमिमं भारं	२.१२५.१४	अशमन्त्राणि युज्यन्तां	२.३५.३४	अश्विभ्यां देववैद्याभ्यां	१.५३.५	असंस्कृताभ्युदिरवा	२.३८.५८	असिचर्मधरो वीरः	२.११६.१४१
अवेक्ष्य हविमणी	२.३६.७	अशमयन्त्राणि युज्यन्तां	२.४२.२१	अश्विभ्यां साधु जानामि	२.१६.६६	असकृज्जीयमानस्तु	२.६१.३०	असिबिह्वलश्चक्रहस्त	३.५७.१३
अवैरमेवं यदयं सर्वैरं	२.३०.२३	अश्मवृष्टिरिवाकाशे	३.५५.१६४	अश्वैरनेकसाहस्रैर्नगैः	३.६३.७	असकृद्देव सहितः	२.११८.८	असितस्यैकपर्णा तु	१.१८.२३
अवोचदीदृशं वाक्यं	३.६६.२	अश्वहृषाना पुरुषा	३.४०.१२	अश्वोष्टशकृतां राशे	२.५७.२४	असकृन्निजिता देवाः	२.११६.२६	असिता च सुबाहुश्च	३.३६.४६
अव्यक्तं कारणं यत्	१.१.२१	अश्वहृषा च यद्गानं	३.७२.४६	अष्टचक्रेण या नेन	३.४७.३७	असंस्थातगतिं चैव	२.१२७.१७	असिता च सुबाहुश्च	३.६६.१८
अव्यक्तं कारणं	३.१६.३	अश्वव्यमीदृशं व्योरं	३.१०८.६	अष्टदंष्ट्रश्चतुर्वक्त्रो	३.४६.६	असंख्यैश्च महाकायैः	२.११६.६	असिताम्बरसंवीतबाण्डुरं	२.२६.५०
अव्यक्तं धीवंतं कृष्ण	२.२५.१६	अश्वव्यमीदृशं घोरं	३.१०८.१६	अष्टधा त्वं पुनश्चैव	१.२६.२०	असंगो युयुधानस्य	२.१०३.३१	असिना वाय दास्यामि	३.११६.३
अव्यक्तादव्यक्तिमापन्नं	३.१८.२८	अश्रुतं श्रुतसेनायं	२.१०३.१५	अष्टमस्य तु मासस्य	२.२.३७	असंग्रामहतः कंस	२.३०.८७	असिभिर्मुं शलैः शूलैः	२.११६.१५६
अव्याकृता व्यक्तामापन्ना	३.२२.१६	अश्रुपूर्णमुखा दीनाः	२.४४.३६	अष्टमार्गमहारथ्यां	२.६८.२८	असंग्रामेण यो वीरो	१.३४.३६	असिलोमा च केशी	१.३.८६
अव्यक्तो व्यक्तलिङ्गस्थो	१.४२.३	अश्रोत्रियं श्राद्धमधीत	३.७२.४७	अष्टयोजनविस्तीर्णं	२.६८.२७	असञ्च सदसच्चैव	१.१.२	असिलोमा तुवल्लिना	३.५३.१५

असिलोमा पुलोमा	१.४१.८८	अस्त्रं ब्रह्मशिरस्तेन	२.१२६.१२	अस्मात्संकीर्तनाच्छ्रव	३.८३.१४	अस्यैव दुःखमूलस्य	३.७६.२८	अहं चैवागतो राज्ञां द्रष्टु	२.५१.३५
असिलोमा पुलोमा च	२.१२१.४२	अस्त्रं ब्रह्मशिरो नाम	२.१२६.८	अस्मादि मे भयं कंसा	२.५.६	अस्यैव देवस्य	३.८२.५	अहं जानामि वै कृष्णमादि	२.४६.२६
असिलोमन्श्च हन्ता च	२.१२१.१२१	अस्त्रमभ्यस्यतां तेषां	१.४७.४	अस्नाभिरेवमुक्तस्तु दुर्वासा	२.६०.७१	अस्यैव राज्ञः कन्या	१.१८.४४	अहं ज्योतिरहं वायुरहं	३.१०.५६
असीनां पात्यमानानां	२.५६.८०	अस्तवीर्यं बलं चैव	३.६६.८	अस्माभिर्बलं संपन्नं	३.१३३.४६	अहंकारं गृहीताश्च	३.८.१७	अहं तमोषनीभूतमहमेव	२.११४.१४
असुरगणपतिर्गजेन्द्र	३.५१.४६	अस्त्रवेगेन हृत्तैव	३.५८.१५	अस्माभिष्वक्तः पूर्व	३.११३.१६	अहंकारपरो नित्यमजिता	२.३६.५३	अहं तव विवेचयामा	१.५३.२६
असुरगणसहस्रसंयुतस्त्वं	३.४६.२६	अस्त्राणि न प्रयोज्यानि	१.२०.६२	अस्माभिश्चपि तद्युद्धं	२.१२१.८४	अहंकाराप्रभो देव	३.८८.२२	अहं तावत्सहाय्येण मुहूर्तं	२.३६.६
असुरः सोऽदितो राजन्	२.६०.२६	अस्त्रैः प्रज्वलितैः	३.४४.१७	अस्माभिस्सं पतद्भिर्य	२.६.१६	अहंकास्तु महत्तस्त	१.१.२३	अहं तु तव पुत्रस्य तव	१.४५.६८
असुरास्तु महाबाहो निःशेषा	२.८४.६०	अस्त्रैरन्ये विनिभिन्नारक्तं	१.४७.३४	अस्मिन्तः समरे सर्वे	१.४८.६८	अहंत्वा युधि गोविन्द	२.६०.२	अहं तु दुष्टभावना	१.४८.८१
असुराणां स्त्रियो वृद्धाः	२.६२.३५	अस्त्रैरस्त्राणि संवार्य	२.६०.२२	अस्मिन् स्थाने च	२.७.३३	अहन्ता क्रोधहन्ता	३.४२.११	अहं ते जनको वत्स	३.१०.४१
असुराभवतावध्यां देवानां	२.८२.२०	अस्त्रैरस्त्राण्यबाधन्त	३.१३३.५८	अस्माभिर्मिद्यमानं हिमयदा	२.६६.४६	अहं कंसस्य वासांसि	२.२७.१२	अहं ते जननी पुत्र किमर्थं	२.३१.५५
असुराश्च रणो मत्ताः	२.६६.४७	अस्त्रैश्चतुर्भिश्चत्वारि	२.१२४.४७	अस्य कुर्मो महाराज	२.३१.४६	अहं कदम्बमालीना मेघकाले	२.४१.२०	अहं ते पर्वताः सप्त ये	२.११४.१३
असुरैः श्रूयते चापि	१.६.२६	अस्त्रैश्च निशितैर्बाणैः	३.५८.३३	अस्य चक्रं भगवत्ता	२.११६.४१	अहं कदाचिद्गंगायास्तीरे	२.११०.३२	अहं त्वभिजितो योने	२.२.३६
असूयेतां महीपाल	३.१०४.१४	अस्थीन्यत्र कपालानि	३.५४.१५	अस्यच्छायां समासाद्य	१.४८.११	अहं कर्म क्रिया जीवः	३.१०.५५	अहं त्वं सर्वगो देव	३.८८.६०
असृबुद्धिकेनादय	२.८५.१२	अस्मत्समयबद्धाश्च	२.३७.६६	अस्य देवान्धारकारस्य	१.४६.११	अहं किलेन्द्रो देवानां त्वं	२.१६.५४	अहं त्वस्याप्य वसति	२.२५.५६
असृजच्छ्रवर्षाणि वृष्टि	३.६३.७६	अस्मदर्थं सुविहितं	२.५८.१४	अस्य देवाः क्षीरस्य	३.४३.६	अहं कौलास निलय	३.८०.२८	अहं त्वां दैत्यं पश्यामि	१.४८.२६
असृजत्सविता अग्नि	२.१६.३२	अस्माकं चापि पराकार्यं	२.१२१.५७	कल्पेदं शासने सर्वं	२.२५.३०	अहं क्रोधश्च कामश्च	१.४१.५४	अहं त्विति स होवाच	३.१६.१२
अस्तं यादे दिनकरे नानु	२.३६.३३	अस्माकं त्वमनाथानां	२.३१.१६	अस्यापत्यस्य ते विप्र	१.४५.५६	अहं चक्रीति गर्वो	३.६१.५	अहं नदीं गता सोम्य	२.६.१७
अस्तं गच्छन्तमादित्यं	३.५५.५०	अस्माकं शक्त्यास्सर्वं	२.४७.१८	अस्यास्तु देव गंगाया	१.५३.३५	अहं च दरदश्चैव वीर्यं	२.३५.४८	अहं नारायणो ब्रह्मा	३.१०.४६
अस्ति चास्य ध्वजं	२.१०४.३७	अस्माकमपि मल्लो द्यौ	२.२२.८६	अस्या हि पीठने दोषो	१.५१.२५	अहं च दरदश्चैव वेदिराज	२.४२.३७	अहं पुराणं रमं तथैवेह	३.१०.६१
अस्तु वन्मुनयस्सर्वे	२.१६.६५	अस्माकमिन्द्रः प्रह्लादो	१.२८.१६			अहं चन्द्रादपि गुहं सहस्र	२.४१.२७	अहं पितृप्रसादाद्दोषार्थ	१.१७.३

अहं पितृष्वसुभर्ता तव	२.४३.८०	अहं हि खट्वाङ्गवने नारदेन	२.२२.४८	अहो कालो महावीर्यो	२.३१.१२	अहो मे सफलं जन्म	२.१२६.७४	मानुषो भावो	२.१४.३५	अहोऽहं	
अहं बालो महानघ्ने	२.३०.१६	अहमग्यात्मनो वृत्ति	२.३.३३	अहो क्षिप्रमहस्येन	२.३१.२५	अहो मे सुप्रिय कृष्ण	२.१६.१८	अहोऽस्य बलिनो	३.६५.३२	अहोऽस्य स्नेहं काङ्क्ष्यं	३.८३.६
अहं ब्रवीमि तपसा मदीयेन	२.८१.३७	अहमसुरकुलप्रमायितां	२.१२३.३२	अहो खल्वीदृशं युद्धं	३.१२४.२०	अहो यज्ञोऽसुरेशस्य	३.७१.१	अहोऽस्य स्नेहं काङ्क्ष्यं	३.८३.६	आ	
अहं ब्रह्मा कविलो	२.७४.३४	अहमस्य तु देशस्य	३.८०.१६	अहो तात कृतं कर्म	२.२४.५४	अहो युद्धाभिसंतप्नो देश	२.४३.८६	आकच ग्रहणाद्देवि	१.६.१४	आकारं विकरं भिन्नं	३.१२५.१८
अहं भूतपतिः कृष्ण	२.१६.३७	अहमादौ पुराणस्य संक्षिप्त	१.५२.२१	अहो दानव दुष्टात्मा	२.१०४.३५	अहोरात्रप्रमाणं च	३.१६.४६	आकर्ण्य चूर्णमाकुर्व्य	३.६५.२३	आकर्ण्य पूर्णमाकुर्व्य	३.६६.१२
अहं महर्षयश्चैव तत्र	१.४८.६३	अहमिज्यश्च यष्टा	१.५.७	अहो द्यौर्विमलाभानां	२.४१.५३	अहोरात्रमिति प्राहुश्च	१.८.४	आकर्ण्य तमम्बानं	२.१२१.६२	आकर्ण्य वचनं वीरः	३.६५.३४
अहं यवीयान् देवस्य	२.६८.३३	अहमिष्टा मया साङ्गं जले	२.८८.१४	अहो धन्य तरास्मीति	२.१०८.३१	अहोरात्राः पञ्चदश	१.८.५	आकाशगङ्गा जलवादनज्ञाः	२.८६.४५	आकाशगङ्गातोयेन शीतेन	२.६०.४७
अहं यशोदा या यामि	२.२.३८	अहमिष्टाहमिष्टेति स्निग्धे	२.८८.१६	अहो धिक्किमिदं नाथ	२.१२१.२	अहोरात्रेणो दिव्यो	१.४१.३०	आकाशश्च तपस्वैव	२.१२१.१२५	आकाशात्पुष्प वृष्टिं च	२.४.१६
अहं यस्य भवानेव	२.१४.४८	अहमेको ज्वरस्तात	२.१२३.१६	अहो धिक्किमिदं नाथ	२.१२१.२	अहोरात्रेण ते सर्वे	३.११०.१५	आकाशादप्यसंचार्य	२.११.४६	आकाशे तु स्थितो विष्णुः	१.४२.३१
अहं यास्यामि भद्रं	१.६.१२	अहमेको भविष्यामि	३.१००.२८	अहो धिक्किमिदं नाथ	२.१२१.२	अहो रूपमिदं चित्रं	३.४३.३	आकाशे दिशु सर्वासु	२.६६.४३	आकाशेऽधिष्ठितो	२.१०६.४५
अहं युद्धोत्सुकस्तात	२.२४.६१	अहमेक त्वया विप्र	३.११८.२५	अहो धिक्किमिदं नाथ	२.१२१.२	अहो वां जीवितं त्यक्तं	२.२७.१४	आकाशेन पुरीं यातुं	२.६७.३७	आकाशेन आतीतु	६.६६.८
अहं वः प्रथमो देवस्सर्वं	२.१७.२८	अहमेव सदा धर्म्यो	३.११४.५	अहो नास्ति भयं नूनं	२.१२१.५	अहो वीर्यमहो धैर्यमस्य	३.१०१.१८				
अहं वा शाश्वतः कृष्ण	२.१४.४७	अहमेव हनिष्ये त्वां	३.१२६.३१	अहो निष्कलया यात्रा	२.३१.२३	अहो वीर्यमहो धैर्यमहो	२.११६.८३				
अहं वा स्वजनश्लाघ्य	२.२२.६७	अहमेव नृपतेः मन्त्रस्यक्षर	३.१०.६६	अहो नीचेन वपुषाच्छाद	२.२२.३५	अहो वीर्यमहो धैर्यमहो	३.६७.२२				
अहं विशिष्टो देवनामित्यु	२.७०.३२	अहमेव नृपतेः मन्त्रस्यक्षर	३.१०.५०	अहो नृपयोदया विमला	२.३५.५	अहो सुबलवर्धयशस्यं	२.५२.३६				
अहं ज एव गोमये गोपैः	२.३२.५०	अहमेव नृपतेः मन्त्रस्यक्षर	३.१०.५०	अहो नृपयोदया विमला	२.४१.५२	अहोऽस्य तपसो वीर्यं	१.२.१३				
अहं सर्वाणि सत्त्वानि	३.१०.५१	अहमेव नृपतेः मन्त्रस्यक्षर	३.१०.५०	अहो नृपयोदया विमला	२.४१.५२						
अहं सहस्र शीर्षाधैर्यः	३.१०.५२	अहमेव नृपतेः मन्त्रस्यक्षर	३.१०.५०	अहो नृपयोदया विमला	२.४१.५२						
अहं सांख्यमहं	३.१०.५८	अहमेव नृपतेः मन्त्रस्यक्षर	३.१०.५०	अहो नृपयोदया विमला	२.४१.५२						
अहं ह्यशिरो देवः	३.१०.५७	अहमेव नृपतेः मन्त्रस्यक्षर	३.१०.५०	अहो नृपयोदया विमला	२.४१.५२						

असिलोमा पुलोमा	१.४१.८८	अस्त्रं ब्रह्माशिरस्तेन	२.१२६.१२	अस्मात्संकीर्तनाच्छ्रव	३.८३.१४	अस्यैव दुःखमूलस्य	३.७६.२८	अहं चैवागतो राज्ञां द्रष्टु	२.५१.३५
असिलोमा पुलोमा च	२.१२१.४२	अस्त्रं ब्रह्माशिरो नाम	२.१२६.८	अस्मादि मे भयं कंसा	२.५.६	अस्यैव देवस्य	३.८२.५	अहं जानामि वं कृष्णमादि	२.४६.२६
असिलोमश्च हन्ता च	२.१२१.१२१	अस्त्रमभ्यस्यतां तेषां	१.४७.४	अस्माभिरेवमुक्तस्तु दुर्वासा	२.६०.७१	अस्यैव राज्ञः कन्या	१.१८.४४	अहं ज्योतिरहं वायुरहं	३.१०.५६
असीनां पात्यमानानां	२.५६.८०	अस्तवीर्यं बलं चैव	३.६६.८	अस्माभिर्वलं संपन्ने	३.१३३.४६	अहंकारं गृहीताश्च	३.८.१७	अहं तमोचनीभूतमहमेव	२.११४.१४
असुरगणपतिर्गजेन्द्र	३.५१.४६	अस्त्रवेगेन हृत्तैव	३.५८.१५	अस्माभिरेव कृतः पूर्वं	३.११३.१६	अहंकारपरो नित्यमजिता	२.३६.५३	अहं तव विधेयात्मा	१.५३.२६
असुरगणसहस्रसंबतस्त्वं	३.४६.२६	अस्त्राणि न प्रयोज्यानि	१.२०.६२	अस्माभिश्चापि तद्युद्धं	२.१२१.८४	अहंकाराप्रभो देव	३.८८.२२	अहं तावत्सहाय्येण मुहूर्ते	२.३६.६
असुरः सोऽदितो राजन्	२.६०.२६	अस्त्रैः प्रज्वलितैः	३.४४.१७	अस्माभिस्तं पतद्भिश्च	२.६.१६	अहंकास्तु महत्तस्त	१.१.२३	अहं तु तव पुत्रस्य तव	१.४५.६८
असुरास्तु महाबाहो निःशेषा	२.८४.६०	अस्त्रैरन्ये विनिमिन्नारक्तं	१.४७.३४	अस्मिन्नः समरे सर्वे	१.४८.६८	अहंत्वा युधि गोविन्द	२.६०.२	अहं तु दुष्टभावना	१.४८.८१
असुराणां स्त्रियो वृद्धाः	२.६२.३५	अस्त्रैरस्त्राणि संवार्य	२.६०.२२	अस्मिन् स्थाने च	२.७.३३	अहंता क्रोधहन्ता	३.४२.११	अहं ते जनको वत्स	३.१०.४१
असुराभवतावध्यां देशानां	२.८२.२०	अस्त्रैरस्त्राण्यबाधन्त	३.१३३.५८	अस्माभिर्भिद्यमानं हिमयादा	२.६६.४६	अहं कंसस्य वासांसि	२.२७.१२	अहं ते जननी पुत्र किमर्थं	२.३१.५५
असुराश्च रणे मत्ताः	२.६६.४७	अस्त्रैश्चतुर्भिश्चत्वारि	२.१२४.४७	अस्य कुर्मो महाराज	२.३१.४६	अहं कदम्बमालीना मेघकाले	२.४१.२०	अहं ते पर्वताः सप्त ये	२.११४.१३
असुरैः श्रूयते चापि	१.६.२६	अस्त्रैश्च निशितैर्बाणैः	३.५८.३३	अस्य चक्रं भगवत्स्ता	२.११६.४१	अहं कदाचिद्गंगायास्तीरे	२.११०.३२	अहं त्वभिजितो योगे	२.२.३६
असूयेतां महीपाल	३.१०४.१४	अस्थीन्यत्र कपालानि	३.५४.१५	अस्यच्छायां समासाद्य	१.४८.११	अहं कर्म क्रिया जीवः	३.१०.५५	अहं त्वं सर्वगो देव	३.८८.६०
असृजुर्दुदकेनादय	२.८५.१२	अस्मत्समयवद्धाश्च	२.३७.६६	अस्य देवान्धकारस्य	१.४६.११	अहं किलेन्द्रो देवानां त्वं	२.१६.५४	अहं त्वस्याप्य वसति	२.२५.२६
असृजञ्छरवर्षाणि वृष्टि	३.६३.७६	अस्मदर्थे सुविहितं	२.५८.१४	अस्य देवाः शरीरस्य	३.४३.६	अहं कैलासं मिलय	३.८०.२८	अहं त्वां दैत्य पश्यामि	१.४८.२६
असृजत्सविता अग्नि	२.१६.३२	अस्माकं चापि यत्कार्यं	२.१२१.५७	कस्येदं शासने सर्वं	२.२५.३०	अहं क्रोधश्च कामश्च	१.४१.५४	अहं त्विति स होवाच	३.१६.१२
अस्तं याते दिनकरे नानु	२.३६.३३	अस्माकं त्वमनाथानां	२.३१.१६	अस्यापत्यस्य ते विप्र	१.४५.५६	अहं चक्रीति गर्वो	३.६१.५	अहं नदीं गता सीम्य	२.६.१७
अस्तं गच्छन्तमादित्यं	३.५५.५०	अस्माकं शंकितास्तर्वे	२.४७.१८	अस्याः सुखंमशेषेण	२.११८.४६	अहं च दरदश्चैव वीर्यं	२.३५.४८	अहं नारायणो ब्रह्मा	३.१०.४६
अस्ति चास्य ध्वजं	२.१०४.३७	अस्माकमपि मल्लो द्वौ	२.२२.८६	अस्यास्तु देव गंगाया	१.५३.३५	अहं च दरदश्चैव चेदिराज	२.४२.३७	अहं पुराणं तथैवेह	३.१०.६१
अस्तुवन्मुनयस्सर्वे	२.१६.६५	अस्माकमिन्द्रः प्रह्लादो	१.२८.१६	अस्या हि पीडने दोषो	१.५१.२५	अहं चन्द्रादपि शुभं सहस्र	२.४१.२७	अहं पितृप्रसादाद्धं दीर्घा	१.१७.३

अहं पितृष्वसुभर्ता तव	२.४३.८०	अहं हि खट्वाङ्गवने नारदेन	२.२२.४८	अहो कालो महावीर्यो	२.३१.१०	अहो मे सकलं जन्म	२.१२६.७४	मानुषो भावो	२.१४.३५	अहोऽहं	
अहं बालो महानघ्ने	२.३०.१६	अहमप्यात्मनो वृत्ति	२.३.३३	अहो क्षिप्रमहश्येन	२.३१.२५	अहो मे सुप्रिय कृष्ण	२.१६.१८	अहोऽस्य बलिनो	३.६५.३२	अहोऽस्य स्नेह	३.८३.६
अहं त्रवीभि तपसा मदीयेन	२.८१.३७	अहमसुरकुलप्रमाथिनां	२.१२३.३२	अहो खल्वीदृशं युद्धं	३.१२४.२०	अहो यतोऽसुरेशस्य	३.७१.१	अहोऽस्य कण्ठ्यं	३.८३.६	आ	
अहं ब्रह्मा कपिलो	२.७४.३४	अहमस्य तु देशस्य	३.८०.१६	अहो तात कृतं कर्म	२.२४.५४	अहो युद्धाभिसंतप्तो देश	२.४३.८६	आकच ग्रहणाद्देवि	१.६.१४	आकारं विकरं भिन्नं	३.१२५.१८
अहं भूतपतिः कृष्ण	२.१६.३७	अहमादौ पुराणस्य संक्षिप्त	१.५२.२१	अहो दानव दुष्टात्मा	२.१०४.३५	अहोरात्रप्रमाणं च	३.१६.४६	आकर्णं चूर्णमाकुप्य	३.६५.२३	आकर्णं पूर्णमाकुप्य	३.६६.१२
अहं महर्षयश्चैव तत्र	१.४८.६३	अहमिदमिदं यष्टा	१.५.७	अहो द्यौर्विमलाभानां	२.४१.५३	अहोरात्रमिति प्राहुश्च	१.८.४	आकर्ण्य तमञ्जानं	२.१२१.६२	आकर्ण्य वचनं वीरः	३.६५.३४
अहं यवीयान् देवस्य	२.६८.३३	अहमिष्टा मया साढं जले	२.८८.१४	अहो धूम्य तरास्मीति	२.१०८.३१	अहोरात्राः पञ्चदश	१.८.५	आकाशगङ्गा जलवादनशः	२.८६.४५	आकाशगङ्गातोयेन शीतेन	२.६०.४७
अहं यशोदा या यामि	२.२.३८	अहमिष्टाहमिष्टेति स्निग्धे	२.८८.१६	अहो धिक्किमिदं नाथ	२.१२१.२	अहोरात्रेणो दिव्यो	१.४१.३०	आकाशश्च तपश्चैव	२.१२१.१२५	आकाशात्पुष्प वृष्टि च	२.४.१६
अहं यस्य भवानेव	२.१४.४८	अहमेको ज्वरस्तात	२.१२३.१६	अहो चित्रहस्त सदनं मयि	२.७२.१३	अहोरात्रेण ते सर्वे	३.११०.१५	आकाशादप्यसंचार्य	२.११.४६	आकाशे तु स्थितो विष्णुः	१.४२.३१
अहं यास्यामि भद्रं	१.६.१२	अहमेको भविष्यामि	३.१००.२८	अहो नारायणस्यैव दिव्या	२.१०८.२०	अहो रूपमिदं चित्रं	३.४३.३	आकाशे दिक्षु सर्वासु	२.६६.४३	आकाशेऽधिष्ठितो	२.१०६.४५
अहं युद्धोऽसुक्रस्तात	२.२४.६१	अहमेक स्वया विप्र	३.११८.२५	अहो नास्ति भयं नूनं	२.१२१.५	अहो वा जीवितं त्यक्तं	२.२७.१४	आकाशेन पुरीं यातुं	२.६७.३७	आकाशेशब्द आतीतु	६.६६.८
अहं वः प्रथमो देवस्सर्वं	२.१७.२८	अहमेव सदा घम्यो	३.११४.५	अहो निष्करुणा यात्रा	२.३१.२३	अहो वीर कथं शेषे	२.३१.३५				
अहं वा शाश्वतः कृष्ण	२.१४.४७	अहमेव हनिष्ये त्वां	३.१२६.३१	अहो नीचेन वपुषाच्छाद	२.२२.३५	अहो वीर्यमहो धैर्यमस्य	२.३१.५६				
अहं वा स्वजनश्लाघ्य	२.२२.६७	अहमेवाशरो मन्त्रस्त्रयस्तर	३.१०.६६	अहो नृपरयोदया विमला	२.३५.५	अहो वीर्यमहो धैर्यमहो	२.१२२.२१				
अहं विशिष्टो देवनामित्यु	२.७०.३२	अहमैन्द्रे पदे शक्त	३.१०.५०	अहो नृपरयोदया विमला	२.४१.५२	अहो वीर्यमहो धैर्यमहो	३.१०१.१८				
अहं ऽ एष गोमय्ये गोपैः	२.३२.५०	अहनिशं च वृत्तान्तं	२.६४.२६	अहो नो दुष्कृतं	२.७६.१४	अहो वीर्यमहो धैर्यमहो	२.११६.८३				
अहं सर्वाणि सत्त्वानि	३.१०.५१	अहस्तावत्प्रेदोषो वा	२.११६.३७	अहो बत न शोभेतां	२.७.३०	अहो वीर्यमहो धैर्यमहो	३.६७.२२				
अहं संहस्त शीर्षाधिः	३.१०.५२	अहिर्बुध्न्यश्च भगवान्	३.१४.४१	अहो बत मृधे वीर्यं	१.३३.३७	अहो सुबलवद्देवशक्यं	२.५२.३६				
अहं सांख्यमहं	३.१०.५८	अहिस्त्रः सर्वभूतेषु घमात्मा	१.२५.३	अहो बलविहीनास्मर	२.३१.१७	अहोऽस्य तपसो वीर्यं	१.२.१३				
अहं हयशिरो देवः	३.१०.५७	अहो कण्ठमहो कण्ठं	३.११५.३७	अहो मयाति बाल्येन रोषा	२.३२.४						

श्रीहृदयशंखपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणी

१४

आकाशे शस्त्रसंकाशे हस्तेषु २.१६.५४	आगता मत्प्रियार्थं २.१२७.१२६	आचार्यः समरेऽतिष्ठ ३.५७.५	आज्ञा च दया मल्लानां २.२८.१५	आत्मन्यात्मानमावाय ३.२८.३
आकाशैश्वर्यभूतेन ३.१६.१०	आगतिं त्वं गति ३.१६.४०	आचार्ययेयुर्गैलान् १.५३.७६	आज्ञापय विभो कार्यमस्माकं २.८६.१७	आत्मप्रभाभिश्च ३.५२.५५
आकाशो विष्णुरित्येव ३.१११.४८	अगतो गरुडेनेह छप्पप्राकाश्य २.४६.२१	आजगाम पुनः स्वर्ग २.८६.४४	आज्ञापयामास ततः समुद्रं २.८६.३३	आत्मरूपप्रकाशेन ३.१०.३
आकृष्य मांसयूथानि ३.६८.२५	आगतोऽह महाशीला २.८०.२६	आजगाम महातेजा ३.१४.४	आज्ञापयायास ततः स तस्यां २.८६.६७	आत्मरूपोपमं तत्र ३.३५.३३
आकृष्य लांगलाक्षेण २.१२२.६६	आगन्तव्यं जालपादाः स्व २.६२.७	आजगमुस्तौ सहितौ २.१३.२	आज्ञाप्यतां ह्यः केशी २.१.२६	आत्मा देवेन विभुना ३.६७.५
आकृष्यमार्गं तत्तेन २.२७.५७	आगमत्पुण्डरीकाक्षो ३.१२६.१४	आजगमुर्वादवपुरीं गोविन्द २.११०.१०	आज्जिको नरकश्चैवकाल १.३०.१००	आत्मानं कृष्णयोनिस्थं २.१२५.२०
आकृष्य शार्ङ्गं बलवान् ३.१०१.५	आगमं तस्मै विज्ञाय नागा ३.७२.८८	आजघान निकुम्भस्तु गदया २.६०.४३	आतिथ्यं करणोऽस्माकंस्व २.५१.४५	आत्मानं चैव वीर्यं ३.६०.५५
आक्रम्यमाशुस्ताड्येण २.७३.६६	आगमिष्यन्ति वै देवि २.४.५४	आजघानाथ संकुटो ३.५८.५७	आतिथ्यं क्रियतां चैव २.८३.४४	आत्मानं दर्शयामास ३.१०४.८
अक्लीडगरुडच्छन्दाश्चित्रा २.८८.६१	आगम्य ते मृगेन्द्रस्य ३.४७.२	आजघ्ने गदया क्रूरं ३.६६.७	आतिथ्यं क्रियतामेघां बहु २.६३.२	आत्मानं वात्र संपश्ये ३.१०८.१६
अक्लीडभूमिं दिव्यानामा २.४३.४२	आगाम्धारप्रामराणं २.६३.२४	आजघ्ने डिभको ३.१२५.७	आतिथ्यं चक्रिरे ते ३.७७.२०	आत्मानं सुसमाधाय १.६.३५
आगच्छत द्रुतं १.३.५८	आगनीध्रश्चाग्निबाहुश्च १.७.१०	आजहार सदा सायं १.२०.६३	आत्मजं ते वपुष्योऽग्न २.१४.४२	आत्मानमात्मना १.५५.४२
आगच्छ त्वरितं कृष्ण ३.११३.२३	आग्नेयं तु महाघोरं १.१४.१०	आजह्ने पितृदायाधं १.३२.३०	आत्मतेजोद्भवाः पुण्या ३.११.६	आत्मानश्च दुराचारा ३.३.२८
आगच्छष्वं नृप श्रेष्ठा न २.५०.३६	आग्नेयं प्रशमं यातमस्त्रं २.१२४.४४	आजानुबाहुविकृतः ३.५१.२५	आत्मत्यागे मनः कुर्वन् ३.१२६.११	आत्मार्यं चामृजत्पुत्रां ३.१४.२६
आगच्छ प्रविशास्यं ३.१२६.२३	आग्नेयं रथमास्थाय २.१२२.३४	आजानु बाहुस्ताश्रय २.१२१.१३८	आत्मनः शापमोक्षार्थं १.२६.१४	आत्मा वायुस्तव ३.६२.३०
आगतः पौण्ड्रको ३.६३.२०	आग्नेयं वैष्णवं सौम्यं २.१२७.७७	अजीवो यः परस्तेषां २.१८.४	आत्मनः शोभनो कणां २.८०.१४	आत्मोपम्येनजानामि १.२०.११८
आगतं चाप्रमेयात्मा २.६५.१३	आग्नेय मस्त्रं लब्ध्वा १.१३.३३	आज्यगन्धप्रतिवहो ३.५६.२७	आत्मनो गतयश्चैव ३.१६.४१	आथागमत्ततः कृष्णो २.१२२.४१
आगतश्शक्रसदनस्तास वै २.८८.४३	आग्नेय मस्त्रं संयोज्य ३.१२७.३५	आज्यधूमं समाधाय १.४६.१७	आत्मनोऽपि निषेक्तव्यं २.७८.२२	आददान इव क्रोधात् २.१२२.३७
आगताः कुण्डिनगरे कन्या २.५०.३१	आग्नेयास्त्रं मुमोषाथ २.१०६.१४	आज्यनासः स्रुवस्तुण्डः ३.३४.३६	आत्मनो भावनिर्बृत्ते ३.२१.२२	आदशन्वशनस्तीक्ष्णं २.१२.१४
आगतानां नरेन्द्राणामन २.५१.१०	आचन्द्रार्कप्रहा भूमि ३.१.१८	आज्यभागाः प्रवर्त्तन्ता १.४८.७२	आत्मनो विपुलं वंशं १.३८.१०	आदानाद्वध्यते जन्तु ३.१७.६८
आगतान्नेच्छसे देवि सद्गुहा २.६२.१६	आचारवांश्चैव ३.५०.२१	आज्यसंघर्षणोद्भूतं ३.११.१०	आत्मन्यवस्थितं ३.८१.२	आदाय च महाचापे ३.१०६.१६

आदाय मुशलं रामो जरा	२.३५.६३	आदित्या वसवो रुद्रा	३.२८.६८	आद्यं पुरुषमीशानं	१.१.१	आपनन्तं महानाग	३.५६.५५	आपलुत्य सहसा क्रुद्धो	२.१२६.१५७
आदायश्विमणी कृष्णो	२.५६.४७	आदित्या वामनः श्रीमान्	३.६८.७	आद्यं स्वायंभुव रूपं	२.५१.५२	आपतन्तं सुदुष्पारं	३.५७.३	आश्रह्यभुवनान्चापि यशः	१.३६.४२
आदाय शस्त्राणि	३.६३.२५	आदित्याश्च ततो रुद्रा	१.४१.६६	आद्याः प्रभूता ऋभवः	१.७.३२	आपतन्तं हि वेगेन जरा	२.५६.५५	आश्रायितां किञ्चिदेवोपलब्धयः	२.८६.२७
आदाय सुवृद्धं चापं	३.१२०.५	आदित्येन समादत्ता	३.२८.५४	आद्यो लोकगुरुर्विष्णु	३.११०.८	आपतन्ती च सा शक्ति	३.५४.४८	आमन्त्रयित्वा हितरी	२.७६.३०
आदित्य पथं यत् मरोः	२.६८.६१	आदित्यैर्वसुभिः साध्यं	१.४१.४४	आधिपत्यं मिवाव्येषां	२.११.२२	आपतन्तीं शिलां	३.६०.४१	आमन्त्र्य पितरं तात	१.२३.३१
आदित्यवर्णं विरजं	३.५२.११	आदित्यैर्वसुभिः साध्यं	३.४१.६	आध्मातस्तेन हरिणा	३.१२०.१३	आपपात महाबाहुर्हंस	३.१२४.११	आमन्त्र्य पौरान् प्रीता	१.२३.१०
आदित्य विभोः	३.३७.२२	आदित्यैर्वसुभिश्चैव	३.३०.२१	आनकानां च संह्लादः	१.३४.१६	आपवः स विभुर्भूत्वा	३.११.१	आमुक्तकवचो वीरावजग्यो	३.१०५.१६
आदित्यस्य सरस्वत्यां	३.१४.५६	आदिदेव जगन्नाथ	३.८७.६	आनन्दजननो षोडोमहा	२.१७.१६	आपवश्च सहसा क्रुद्धा	३.४६.४२	आमुच्यमालाश्च	३.५२.४३
आदित्यस्य हि तद्रूपं	१.६.४	आदिदेवः पुरवाणात्मा	३.७६.२६	आनन्दपरिपूर्णाभ्यां हृद	२.५५.८४	आपस्तस्तम्भरे चास्य	१.५.३१	आमुच्य वर्माय	३.५२.१५
आदित्याद्याः सुताः सर्वा	२.७७.१२	आदिदेवः पुराणात्मा	३.६२.२२	आनन्दिनी पर्यचरत्स्वेव	२.६६.१५	आपस्तु वारुणास्तत्र	२.१२७.७०	आभूलमसकृद्विष्णुं	३.११४.२६
आदित्या द्वादशैवेह संभूता	१.६.४७	आदिदेवमजं विष्णुं	३.८०.२२	आनतं नाम तद्वाप्यं	२.३७.३६	आपस्य पुत्रो वैतथ्यः	१.३.३६	आमोदश्च प्रमोदश्च	२.१०६.४६
आदित्याविमुखावीराः	२.८२.६	आदिपथं च पथांकं	२.४१.२४	आनतं विषयश्चासीत्	१.१०.३३	आपवस्य महिम्ना	१.२.२	आयताश्च तुरस्त्राश्च	२.८८.५८
आदित्याभासिभिः	३.२७.१४	आदिराजो नमस्कार्यः	१.६.५०	आनतस्तु विभो पुत्र	१.३२.३८	आपृच्छ तं महाभागा	२.१२७.१४४	आयान्तमथ तं दृष्ट्वा	२.१२६.३८
आदित्या रश्मयो	३.२६.५१	आदिस्त्वं सर्वभूतानां	३.८८.५६	आनिनाथ गुरोः पुत्रं चिरं	२.३३.२१	आपो देव्य ऋषीणां	२.७६.६	आयुषप्रग्रहो वीरो तावन्वो	२.४३.१७
आदित्या वनवश्चैवः	३.३२.४०	आदीप्यतं तु शैलेन्द्र	२.४२.७०	आनीतः सहदेवश्च प्रेषित	२.६०.७७	आपो ध्रुवश्च सोमश्च	१.३.३८	आयुष्यसन्दनो वापि	३.५८.८६
आदित्या वसवो रुद्रा	१.४४.२	आदीप्यमानशिलरादवप्लुत्य	२.५३.३७	आनुष्यं लौकिकं कृष्ण	२.३२.२६	आपो नारा इति प्रोक्ता	१.१.२८	आयुधानि प्रसस्तानि	२.१०६.१०२
आदित्या वसवो रुद्रा	२.११८.४०	आदौ तु वाचकं चैव	३.१३२.५६	आनुष्यार्थं सुरेशस्य	३.६६.५१	आप्यायिताश्च ते	१.१६.४२	आयुधावाप्तिरश्रव वपुषो	२.३६.८०
आदित्या वसवो रुद्रा	२.१२७.१०३	आदौ दधारैकभुजेन	३.८२.६	आनुवेष्टिसर्वाङ्गी	३.७६.३	आप्राप्तामन्तरे सोऽथ	३.६०.६६	आयुर्वर्षसहस्राणि तथा	१.४१.१४७
आदित्या वसवो रुद्रा	२.१२८.२६	आद्यन्तवन्तः कवयः	२.१२३.३७	आपतन्तं गजानीकं	३.५६.४६	आप्लुतं सर्वतीर्थेषु	२.१.१०	आयुर्वेदं भरद्वाजाप्राप्येह	१.२६.२७
आदित्या वसवो रुद्रा	३.२२.१६	आद्यं देव गुहं दिव्य	३.६६.८	आपतन्तं ददर्शयि	२.११६.१४२	आप्लुतोऽयं गिरिः पथं	२.१८.३७	आयुर्हन्त्या बलगतानिर्बल	३.४.४

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१६

प्रायुष्कार्म्यशः कामे	३.४०.२३	प्राज्वात्स तु तं वत्सं	१.२१.१५	प्रावयोर्त्यक्तं कार्यं	२.५०.१३	प्राप्तिभिरनुकूलाभिव	२.६४.५८	प्रासनं कुशसंयुक्तं	३.८०.५७
प्रायुष्मान्कीर्तिमान्	१.१.४६	प्रातस्तनितसंवादे वधिरा	२.४३.४६	प्रावयोस्त्वं महाभागे	१.१०.१४	प्राशीस्तु पुरुषं दृष्ट्वा	३.४.५१	प्रासनं चाग्निवर्णमि	२.१.६
प्रायुस्तत्र च मर्त्यानां	३.४.४०	प्रातर्नां कूजमानानां	२.४३.४५	प्रावर्त इव संजले	३.६०.४	प्राधुः शिवानं वृषमं	२.७२.३७	प्रासनं तत्र परमं	३.३५.११
प्रायोगभूतं कंसस्य	२.२७.४४	प्रातर्ति वक्ष्यन्ति नः सर्वे	२.३८.६४	प्रावर्त्तयत्तदा राजा	१.३३.३१	प्राश्चर्यं सलु देवानामेक-	२.११०.२२	प्रासनं महादास्थाय	३.७४.३
प्रायोः पुत्रास्तथा	१.२८.१	प्राति जग्मुः लगगणा	२.१८.४२	प्रावर्त्ताया जले स्नात्वा	२.८४.३	प्राश्चर्यं सलु पश्यत्वं	३.८५.८	प्रासनानि यथा योगं	३.१११.२२
प्राक्कनेत्रा जलमुक्तिसक्ताः	२.८६.५१	प्रायं तिष्ठताव सहितावनु	२.३५.७	प्रावाम्यां कृतमातिथ्यं	२.५१.१८	यादव्यं सलु लोकानां	२.११०.४५	प्रासन्नः सन्नतरः	२.७२.५२
प्राक्कने मूलफलैः	३.१३२.५६	प्रायं तिष्ठताव सहितो न	२.४१.५६	प्रावाम्यां मुह्यते लोके	३.१३.१६	प्राश्चर्यं चापि भूतेषु	२.११०.५१	प्रासन् पूर्वयुगे तात	१.१६.१
प्राक्कने सह संसृष्टा	३.४६.२०	प्रायं कात्यायनी देवी	२.३.३	प्रावां तेऽद्य महाराज	३.११३.५	प्राश्चर्यं ज्वं नान्यद्वै	२.१२८.२७	प्रासन्नं विप्रकुष्टं	३.३.१
प्राक्कने बलेस्तस्य	३.६६.६५	प्रायं कुहः सिनीवाली	२.१०६.५१	प्रावामिव जगत्सर्वं	३.११६.६	प्राश्चर्यं परमं विष्णु	१.४०.६५	प्रासन्नमुत्तमः केचित	३.७७.५
प्राक्कने च मर्त्यानां	२.६४.४६	प्रायं निपवरवैदः	२.६६.३५	प्रावासश्च ततो दत्तः	२.६३.१७	प्राश्चर्यं परमं वेदा	२.११०.६६	प्रासन्नस्य स तद्वर्ग	३.१४.१६
प्राक्कने रथं विध्यं	३.५१.४६	प्रायं बुद्धिः समास्थाय	३.५७.२४	प्राविकानि च सूक्ष्माणि	२.६४.१५	प्राश्चर्यमन्यतलोके	२.११०.७६	प्रासन्नस्य हस्ताश्च	३.७२.१७
प्राक्कने गडं विष्णुर्ययो	३.८४.४	प्रायं स्तिवः पुनः कृष्णे	३.१३४.६	प्राविष्टपुच्छो हृषितो	२.१३.१६	प्राश्चर्यमिति ते सर्वे	२.६.२१	प्रासीच्चैत्ररिचिर्वीरो	१.३६.४
प्राक्कने गडं सर्वे	२.१२७.४३	प्रायं स्तिव प्रवक्ष्यामि	२.३.१	प्राविष्य सहसा भुवतं	२.६३.११८	प्राश्चर्यमिदमिहितं	२.११०.२६	प्रासीच्चात्वेषु राजेन्द्र	३.१०४.१
प्राक्कने भगवान्विष्णु	३.६०.३६	प्रायं पन्तः सुमधुरं	२.६२.५	प्राविष्य सहसामुञ्जच्छिषां	२.६३.७३	प्राश्चर्यं शब्दो नास्मासु	२.११०.७६	प्रासीत्सर्वज्जनः पुत्रः	१.३२.७७
प्राक्कने मूर्ध्नि मद्रूपं	२.७४.५१	प्रायं लोक्य धन्वी	३.५६.१६	प्राविष्य भूतले चैनं	२.१२३.१०	प्राश्चर्यं चापि दृश्यन्ते	२.११०.५५	प्रासीत्सर्वसामाकीर्णा	३.५५.१६८
प्राक्कने सहस्रा	३.११६.१२	प्रायं दशार्हश्च	१.३६.२४	प्राविष्माने तस्मिन्	२.१२३.११	प्राश्चर्यं तथा	३.६.१२	प्रासीत्सुधर्मणः पुत्रः	१.२०.३६
प्राक्कने गडं	२.१२७.४०	प्रायं पुरतः स्थातुं	३.१०७.८	प्राविष्टं मया बाला	२.६४.१	प्राश्चर्यं महाभागान्	१.४१.६६	प्रासीदियं समुद्रान्ता	१.६.४५
प्राक्कने स तु बाणश्च	३.१२६.६१	प्रायं पुरतः स्थातुं	३.११३.१६	प्रावृष्यन्ममयाद्भीरतं	२.३६.११	प्राश्चर्यं मुनिन्सर्वान्	३.४१.२८	प्रासीद्धर्मस्य गोप्ता वै	१.५.१
प्राक्कने यामास बला	२.२७.४७	प्रायं योर्भगवन्पुत्रो	१.२८.५	प्राशास्त्वं मानुषाणां	२.३.२१	प्राश्चित्य शम्भरीं मायां	२.८४.५४	प्रासीद्वाजा मनोवन्धो	२.३७.१२
प्राक्कने करये देवः	२.७३.२	प्रायं योर्मनं श्रुत्वा जित	३.३६.१२	प्राशिविषा इव क्रुद्धा	३.५५.४६	प्राश्चित्येत्ययं तं	२.६७.१०	प्रासी नारदे शक्रो	३.६६.३६

आसीन्महवसः पुत्रः	१.३६.२६	आह मां सत्यभामा	२.१२७.४८	इक्ष्वाकुवंश प्रभवाः प्राधान्ये	१.१५.३६	इति तीर्थप्रसंगेन पृथिवी	३.१०.१४	इति संक्षेपतः स्तुत्वा	२.५१.६४
आसीन्मे साध्वसं दृष्ट्वा	२.७३.५३	आहारः फलमूलानि	१.६.१८	इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रेणु	१.२७.३८	इति ते देवगन्धर्वा	३.१२५.२७	इति संचिन्त्य मनसा बला	२.४६.५६
आसुरं दर्पमाश्रित्य	२.१२६.१२१	आहारमेकपर्णेन एकपर्णा	१.१८.१७	इक्ष्वाकुस्तु विकुक्षिर्ब	१.११.१६	इति ते प्रेयिताः	३.६३.२१	इति संचिन्त्य मनसा	३.७८.१५
आसेदुस्ते पुत्रीं रम्यां	२.२७.२	आहिकं चित्रकं क्षिप्तं	३.१२५.१६	इमितजोऽप्यतः स्थित्वा	३.६१.२७	इति ते मुनयः सर्वे	३.८७.११	इति संचिन्त्यमानस्तु	२.५०.१८
आस्तां मां समुदीक्षन्ती	२.२६.४६	आहिच्छत्रं एकाम्पित्य	१.२०.७३	इच्छतः सदृशीं भार्या	२.७२.२२	इति पारीक्षितो राजा	२.१२८.४०	इति संबोधितो विप्रो	३.११३.२५
आस्ते सुखं महायोगी	३.८०.८६	आहुकं प्राह कृष्णस्तु	२.१२१.३४	इच्छतोऽप्यचिति गन्तुं	२.८२.१२	इति पुण्ड्रवरस्य लांगले	२.६२.२०	इति संबोध इवस्थोऽसौ	२.५०.३५
आस्ते सुखं यदा विप्रः	३.११७.८	आहुकश्चाहुकी चैव	१.३७.२०	इच्छन् दहेयं पृथिवी	१.५.१४	इति प्रकारान्द्वान्निश	२.११६.१२३	इति संजल्पमानानां	२.५५.७१
आस्थायतं भास्कर	३.५२.१४	आहुकश्चैव नो राजा	२.१२१.२६	इच्छन्नेव हरिर्देव काश्यपत्व	२.७१.२५	इति प्रकारान् द्वान्निशः	३.१२५.२१	इति संविद्य भगवान्	२.७३.५
आस्थाय परमं दिव्यं	३.५६.३३	आहुकीं चाप्यवन्ति	१.३७.२६	इच्छन्तोऽप्यचिति मुने	१.२७.३२	इति प्रवाच्यो यदि साम	२.६८.४०	इति संविद्य भगवान्	२.६७.३८
आस्थाय वै वाजिनं	२.७१.६	आहु विरेश्वरं शान्तं	३.८५.२०	इच्छेद स्त्री दुहितरं	२.७६.४७	इति प्राध्वास्य राजानं	२.५५.८३	इति संबोधयन्कृष्ण	२.१०१.७२
आस्थाय स रथं वीरः	२.६०.३	आहुर्वेदविदो विप्रा यं	१.४१.१०	इच्छेदोष्ठी चारुपु या	२.८०.२१	इति ब्रुवन् पुराणात्मा	३.७७.१७	इति स्तुत्वा जगन्नाथ	३.६०.२६
आस्थितो गवडं देवस्तस्य	२.१२१.१४२	आहुतो बलदेवस्तु	२.६१.२५	इच्छेद्दं तत्त्वता	३.१०.४७	इति ब्रुवंस्तथा रक्षो	३.१२६.२६	इति हरवचनं निशम्य	२.७२.६६
आस्थं देवानामन्तकं	२.७२.४६	आहुतो वरुणेनाथ	३.२.१७	इतश्चेतदथ राजानो	३.६३.२२	इति मां नामभित्तिर्यं	३.८१.६	इतिहास पुराणैः	३.७३.४४
आस्तेव विष्टरं पूर्वं	३.११५.८	आहुत्य शम्बरेण	२.१०६.४८	इतः सुदृष्ट्वा सस्यैस्ते	२.६६.६६	इति मे भाषितं नित्यं	२.६२.४१	इतिहासमिमं श्रुत्वा	३.१३२.११
आहतः स तु तेनाधु	३.१०२.३	आहुस्विद्रासुदेवस्तु	३.६७.२०	इतस्ततश्च धावन्तो	३.१११.५६	इति श्रुतं नृपथेऽथ	३.११३.१७	इति होवाच भगवान्देवो	२.८५.६०
आहतस्तलघातेन	३.१२६.४०	आहुतुः कौशिकश्चैव	१.३६.२२	इति कुम्भाण्डवचनैश्चोदितः	२.११६.५०	इति श्रुत्वा तदा देवी	२.११७.५०	इतीदमुक्त्वा पुनरेव शोभना	२.६६.५५
आहतानि व्यशीर्यन्ते	३.५५.१०६	आहुये तं वनं यस्य	२.८७.२३	इति चत्वररण्यासु	२.१००.८	इति श्रुत्वा वचस्तथ्य	२.६१.४५	इतीदमुक्त्वा भगवान्समुद्रं	२.८६.३६
आहत्य दुन्दुभीन्सर्वे	२.५६.१७	आह्वानं तत्र स चक्रे	२.२८.१७	इति चरितनिबं महात्मना	३.६.१३	इति संस्तूय गोविन्दं	२.१०२.४२	इतो गच्छत राजानो	३.१०६.४
आह त्वां भगवान् ब्रह्मा	२.१६.४०	इक्ष्वाकु कुलसंज्ञितो रामो	२.४८.२२	इति तद्वचनस्यान्ते गमिष्येति	२.५५.६	इति संस्तूयमानस्तु	२.७२.६१	इतो वयं गमिष्यामो	१.२४.२६
आह भूभो हृषीकेशो	३.१११.२३	इक्ष्वाकुणा परित्यक्तो	१.११.१८	इति तं पर्वतं कृष्णो	२.७४.५३	इति संस्तूयमानस्तु	२.७४.३५		

श्रीहरिवंशपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणी

१८

इत्युक्तु बन्नुपा राजन्	३.१२१.१६	इत्युक्ता मुनिमुख्येन सत्य	२.६७.४६	इत्युक्त्वा विररामैव	३.७५.२४	इत्येवमावासायतो	३.५.१	इत्येवमुक्त्वा बाणं	२.१२६.५२
इत्यमेव मुक्तः प्रहसन्	१.११६.३८	इत्युक्तो देवदेवेन	३.८०.३२	इत्युक्त्वा विररामैव	३.६३.६	इत्येवसाह्वयामास रुक्मिणं	२.६१.३८	इत्येवमुक्त्वा स च	३.४३.१७
इत्यर्थं प्रेषितस्ताम्बां	३.११५.२६	इत्युक्तो देवदेवेशः	३.७३.२६	इत्युक्त्वा विस्तरं	३.८२.४२	इत्येवमुक्तः कुम्भाण्डः	२.११६.५६	इत्येवमुक्त्वा सरवः	१.११६.१७०
इत्यर्थं संस्थितो	३.१११.५५	इत्युक्तो शिशुपालस्तु राजा	२.८४.५५	इत्युक्त्वा सशरं चापं	३.१२७.३१	इत्येवमुक्तः कृष्णस्तु	२.१२७.८६	इत्येवमुक्त्वा सरोवः	२.१२१.१५
इत्यादिनामभिनित्यं	३.१०५.७	इत्युक्तोऽहं भगवता	१.१८.१	इत्युक्त्वा सात्याकिर्वीरः	३.६५.३३	इत्येवमुक्तः कृष्णेन	२.१२७.८७	इत्येव विधिविहृष्टो	३.१३२.८६
इत्यादिभिर्महादेवं	३.१०५.२२	इत्युक्त्वा चैव गच्छः	२.१२७.५२	इत्युक्त्वानुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्तः प्रहसन	२.११६.३२	इवं कर्म त्वया कृष्ण	२.१२१.४५
इत्यादिशब्दः सुमहान्	३.१०६.७	इत्युक्त्वा जामदग्न्यस्तु	२.४०.४८	इत्युक्त्वानुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्तः त्रिदिवेश्वरस्य	३.५२.६३	इवं किरिवति संनस्ताः	२.६.२६
इत्युक्तः पुण्डरीकाक्षो देव	२.६३.३८	इत्युक्त्वा त्वरमाणा	२.११६.६२	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येव मुक्तां रुदतीं	२.११८.२६	इवं कुण्डनपुरं कृष्णो	२.४६.१७
इत्युक्तवति देवेशे	३.११५.३६	इत्युक्त्वाथ महादेवो	२.८२.३४	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्ते कृष्णेन	२.१२१.३३	इवं च जाने विप्रेन्द्र	३.११६.६
इत्युक्तवति विप्रेन्द्रे	३.११५.२६	इत्युक्त्वाथ सिमावाय	२.६६.३६	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्ते वचने	२.४६.१	इवं चैवामृतप्रस्यं होम	२.३६.८३
इत्युक्तवति हंसे च	३.११८.१	इत्युक्त्वा देवदेवेशं	३.८६.१	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्ते वचने	२.११८.३५	इवं तु कुण्डनपुरमासाद्य	२.४८.४८
इत्युक्तं कंसं सा देवकी	२.४.५७	इत्युक्त्वा नारदेनैव सहितः	२.७२.८	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्ते वचने	२.११८.४५	इवं तु यत्कार्यतमं	२.११८.४४
इत्युक्तवन्तं तमहं	१.१६.३१	इत्युक्त्वा नारदे यातो	२.१२१	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२१.४६	इवं तु सुमहत्कण्ठं	२.१२१.३१
इत्युक्तवन्तं तमहं	१.१७.१६	इत्युक्त्वान्तर्हितो देवः	३.४०.१४	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२१.६१	इवं ते सद्दर्शनं सौम्य	२.३१.७
इत्युक्तः सत्यको	२.७५.४६	इत्युक्त्वा परिषेऽणु	२.१०५.७८	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२१.७७	इवं दुःखतरं मन्ये	३.११४.१६
इत्युक्तः स निराक्रामन्	१.१२.१७	इत्युक्त्वा पार्वतो देवी	२.१०६.४१	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२१.८०	इवं पुंसवनं प्रोक्तं गर्भा	२.८५.७७
इत्युक्तस्तस्तु कृष्णेन	२.५७.६४	इत्युक्त्वा बाह्याणं कृष्णः	३.११७.१	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२१.८६	इवं पुराणं परमं पुण्यं	३.३३.८
इत्युक्तः सस्मितं कृत्वा	२.१११.१५	इत्युक्त्वा मगवान्देवस्तत्रै	१.१६.२०	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्ते वचने	२.१२३.१३	इवं प्रकृतिर्जैर्दोषै	२.१२७.८३
इत्युक्ता त्वरमाणा	२.११६.७४	इत्युक्त्वा भगवान्	३.८३.३०	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्ते वचने	२.११६.१६	इवं भक्त्वा मदीयं च	२.७०.३७
इत्युक्तं पितृभिः सा	१.१८.३८	इत्युक्त्वा भगवान्	३.६०.३३	इत्युक्त्वा नुर संधानां	३.६१.३१	इत्येवमुक्त्वा प्रहसन	२.१२२.७६	इवं मया ते परिकीर्तितं	३.१३५.१७

इदं महाकाव्यमुपेर्माहात्मनः	३.६५	इन्द्रत्वं चामरत्वं	३.६३.६	इन्द्रो मरुदगणयुतो	२.१२७.३८	इमां च मायां गृह्णीष्व	१.४५.७१	इयं च माधुरी भूमिरल्पा	२.५६.५
इदं यत्स्थानमुद्दिष्टं यत्रा	२.४०.३४	इन्द्रश्चुम्नो हतः कोपाद्यवन	२.१०२.६	इन्द्रो वा धनदो	३.८०.८	इमां बोदाहतां दिव्यां	३.३२.६०	इयं च राजकन्या हि	२.११७.६४
इदं सतरं वचो हंस	३.११८.३१	इन्द्रवज्र इवोत्तिष्ठन्	३.२६.१५	इन्द्रो विवस्वान् पूषा च	१.६.४८	इमां मिथ्याऽमिवास्ति यः	१.३८.५८	इयं च सा मया मौलिः	२.४१.३१
इदं समुत्थितं घोरं	१.५७.२६	इन्द्रपोक्तानि सामानि	३.२३.२६	इन्द्रो विवस्वान्पूषा	३.४८.१२	इमां यात्रां विजनीष्व	२.४६.२२	इयं चैव कुलशलाघ्या	२.१२८.११
इदमत्यदभुतं कर्म रामस्य	२.६२.७६	इन्द्र सुतो निहन्ता	१.३.१२७	इन्द्रोऽसि तात देवानां	१.२८.२०	इमां विद्यां समास्थाय	३.२७.४०	इयं द्वारवती नाम पृथिव्यां	२.५८.६
इदमद्यक्षमं विप्रा	३.११०.१०	इन्द्रश्च त्रिदशैस्सार्द्धं	२.४.२१	इमं कृष्णस्य विजयं यः	२.६०.७८	इमां विसृष्टिं दक्षस्य	१.२.५७	इरावत्यां महाभोजावग्नि	२.१०२.६
इदमन्तरमित्येव ततः स	१.२४.१६	इन्द्रस्य चाष्टदृष्टिस्त्वं	२.३.१६	इमं च वाश्यं संदर्भं	१.३२.११	इमां विसृष्टिं विज्ञाय	१.३६.३१	इरा वृक्षलता वल्लीस्तृण	१.३.११८
इदयन्यत्कृतं देव	३.१११.६०	इन्द्रस्यापि सदा विप्र	३.६२.१६	इमं ते पितरं वृद्धं कृष्णस्य	२.३१.५४	इमामवस्थां पश्यन्त्यः	२.३१.४	इषवस्तु स्रवास्तत्र	३.५४.१८
इदममरवरस्य भारते	२.८५.७८	इन्द्रस्यार्थे पराक्रम्य	३.६१.३६	इमं देशं समागम्य	२.११६.२७	इमास्ते किं करिष्यन्ति	२.३१.५३	इषुसाह्वा निकुम्भाश्च	२.१६.३६
इदमश्वत्तुपूर्वं मे मत्तो	३.११५.३२	इन्द्राणीमर्चयिष्यन्ती	२.५६.३४	इमं यः वदपुत्रवरधं विजयं	२.८५.७५	इमे चैवाष्ट कलशा निधीना	२.५०.३२	इष्टपुत्रे प्रहृतंभ्यं कथं	२.८६.१८
इदमस्त्रं महाघोरं	२.१२७.६७	इन्द्राणी व्रतकं चक्रं	२.८१.२४	इमं यस्मुस्तवं दिव्य	२.३.२८	इमे ते पृथिवीपालाः	२.३५.१०	इष्टवादस्तपो नाम	३.४.५०
इदमासनमास्वेति	२.५०.२७	इन्द्रायाग्निरयं प्रादात	३.२६.११	इमं श्लोकं महार्थं त्वं	१.२३.३४	इमे ते पृथिवीपालाः	२.४१.५६	इष्टः स वृक्षः सततं	२.६७.५६
इदमासनमित्येवं	३.१११.१६	इन्द्राशनिरिवेन्द्रेण	२.६३.५४	इमं स्तवं यो व्रतस्य	२.१२५.५८	इमे ते श्रवणे शून्ये न	२.३१.८	इष्ट स्तत्र जनानां च	२.७०.४०
इदमासनमित्येवं	३.१११.२०	इन्द्राशनिरिवेन्द्रेण	३.५४.६३	इमं स्तवमनन्तस्य	३.७३.६८	इमे त्वां ब्रह्मविद्वासां	१.५०.३६	इह च प्रेत्य ते सर्वे	२.१२१.१३१
इदमिच्छसि चेन्मूढ	३.११८.४८	इन्द्राशनिसमस्पर्शं	३.५८.१७	इमं हत्वा मनुष्येणैन्द्र	३.७६.२६	इमे त्वां सप्त मुनयः	१.५०.४१	इह त्वं जातसंबृद्धो मम	२.२२.७६
इदमेकमिदं तत्त्वमिति	३.७३.४३	इन्द्रियं रतिमूढात्मा	३.१६.३६	इममद्य समुद्भूतं	३.५६.५४	इमे नो बान्धवास्तात	२.१२.३१	इह त्वां नाभिजानाति	२.१०४.२६
इदमेवंविधं कृत्वा	२.१२१.७	इन्द्रियैर्व्यतिरिक्तो	३.१६.३८	इममप्यायतापाङ्गी गङ्गा	१.५३.२७	इमो च बालको मर्त्य	१.६.१३	इह त्वास्ते त्रिनयनः	२.२१६.७८
इदानीं च महाराज	३.११८.२३	इन्द्रेण सह संग्रामं	२.३१.२७	इमानि चैव वायानि	२.८१.३१	इमो रथवरोदघो युवयोः	२.४३.८६	इह धर्मार्यं कामानां	३.४१.५२
इदमाः परिधयस्तत्र	३.५४.१६	इन्द्रोपेन्द्रो महात्मानो	२.७२.६३	इमानि मणिरत्नानि	२.६४.११	इयं च ते सरिच्छेष्टा	१.५३.४०	इह मासान्त पक्षान्ती च	२.८२.२८
इन्द्रजित्सत्यजिचर्चव	१.३.८३	इन्द्रोपेन्द्रोमहात्मानो	२.६७.२४	इमान्प्राखे ह्वरान्पुङ्ख	२.२.२८	इयं च देवदेवस्य	३.१३१.१२	इह ये चैव वत्स्यन्ति ताप	२.८२.२७

इहस्थो पोषितो विद्वान्	२.७४.४१	इश्वरोऽहं सदा राजा	३.१२७.३०	उग्रसेनस्ततो धीमान्	२.५५.७३	उत्कथ्य हि स्थितिं देवीं	२.६६.४६	उत्तिष्ठ नरशार्दूल दीर्घ	२.३१.५८
इहापि तात त्रिदिवे मग यः	२.६६.५२	इव ऊर्जस्तूजश्च मधु	१.७.१६	उग्रसेनस्तु कृष्णस्य	२.३२.१	उत्किप्योत्किप्य चाकाशं	२.८८.४६	उत्तिष्ठमानश्शुशुभे	२.६.१४
इहावयोर्गतं बाल्यमिह	२.४६.१८	इवत्संक्षोभयामांस	३.११.४	उग्रसेनस्त्वयं शोच्यो	२.२३.७	उत्तं कस्तु वरं प्रादात्	१.११.५६	उत्तिष्ठ शतपत्राक्षपद्मानम्	१.५०.४२
इहाहं चोद्यते भूर्पः	२.५२.३५	उ		उग्रसेनस्य रूपं वै कृत्वा	२.२८.६१	उत्तमं जवमास्थाय	३.५५.६४	उत्तिष्ठोत्तिष्ठ बाहूनाम्	२.११६.३४
ई		उक्त एवं ह्याचिन्त्या	३.६६.७३	उग्रसेनो नरपतिर्वसुदेव	२.८८.५	उत्तमागारिकाश्चैव सूक्ष्म	२.२६.१३	उत्तिष्ठोत्तिष्ठ ब्रह्म ते	२.११८.७
इजेकृतशतैः पुण्यै	१.४१.१५४	उक्तश्च परया भक्त्या	३.६७.१७	उग्रायुधः कस्य सुतः	१.२०.३६	उत्तमाङ्गतास्तस्य मेघाः	२.१८.५०	उत्तुगांसो महोरसको	३.१२६.७
इतयः प्रशमं जग्मुर्निर्वर-	२.१६.६७	उक्तश्चैव मया राजा	२.४३.८१	उग्रायुधधरा देवाः	३.३८.११	उत्तमा च पृथिव्यां वै	२.५८.२६	उत्थाप्य तं परिष्वज्य	२.१०८.३४
इदृशः कामसंकाशो	२.१०८.१५	उक्तश्चैव महाबाहुवः	३.१४.५१	उग्रायुधस्य दायदः	१.२०.४६	उत्तमाभिजनायूरो	३.५४.७३	उत्थायापश्यत तदा	२.१२६.७३
इदृशं लोकविद्विष्टं	३.१०६.१५	उक्ता च तत्र तामिद्वच	२.११७.२३	उग्रायुधस्य राजेन्द्र	१.२०.५०	उत्तमोजाश्च शल्यश्च	२.३५.४६	उत्थिता घोररक्ताक्षा	३.५८.४४
इदृशाढ्याचकाद् राजन्	३.१३२.२४	उक्तो मया वासुदेवो	२.७०.३	उग्रायुधो मदोत्तिष्ठतो	१.२०.३५	उत्तमोजास्तथा शाल्वः	२.४२.३५	उत्पतन्ती महाबोरां	३.६८.१३
इदृशान्यपि पुण्याणि	२.६७.६४	उक्तोऽयं हरिर्वशस्ते	३.२.१	उचितं यदि ते राजन्	२.११६.१६२	उत्तरं च श्रुतार्थेन	२.३६.३५	उत्पत्तिश्च निरोधश्च	१.२.५४
इदृशीयमवस्था नो	३.१११.५६	उक्तो नाम स क्षमात्मा	१.१५.३१	उच्चकतंतुरन्योन्यवर्मणी	२.७३.६७	उत्तरं नगरद्वारमेते दुर्ग	२.३५.४४	उत्पत्य निपतन्त्यन्ते	३.५६.३
इदृशेष्वपि भृत्येषु	३.११८.४३	उक्तैर्वि रूपैश्च	३.१६.३५	उच्चावचानि भूतानि	१.१.४१	उत्तरस्यां दिशि तथा	१.७.६	उत्पत्योत्पत्य गगनात्पुनः	२.४२.६५
इदृशो न हि राजेन्द्र	१.११.३१	उग्रसेन च राजानं	२.१००.५	उच्चैः श्रवा हयः श्रीमान्	२.१०६.६६	उत्तरां दिशमत्यर्थं	२.६८.१६	उत्पत्यति पुमान्नीचः	२.२८.१०८
इतिस्त गीतनृत्यं च	२.६७.६०	उग्रसेनं तु गोविन्दः	२.४७.१६	उच्छिद्यतेनाग्रहस्तेन दक्षिणेन	१.४६.५७	उत्तरान्ते समुद्रस्य क्षीरो	१.४०.२४	उत्पत्यन्ति गुणैः	२.६६.१६
इतिस्त तस्य विजयाय	२.११६.५३	उग्रसेनं नरपतिं काश्यं	२.५८.८०	उच्यते विविधैर्मा वैस्त	३.७.२१	उत्तरान्तं कुम्भप्राप्य	१.२६.७	उत्पन्नः कलशात्पूर्वं	१.२६.१३
इतिरिणं तद्वनं सर्वं	२.२४.१२	उग्रसेनं नवत्याशु	३.६४.३०	उत्कर्णं पर्वता कारं	३.५०.२	उत्तरापथगामिन्यः सलिलं	२.१०६.२५	उत्पन्नदोष प्रभव	२.११६.७६
इतिनीभूप यस्याऽसीत्कन्या	१.३२.६	उग्रसेनं महाबुद्धिमुद्धवं	३.७४.४	उत्कलस्योत्कला राज	१.१०.१६	उत्तानं पादं जग्राह	१.२.७	उत्पन्नं कुमुद चैव	२.१०३.१७
इतिस्त्वं सर्वभूतानामी	३.८८.५४	उग्रसेनसुतः कंस	२.१०१.२६	उत्कानिर्घातनादेन पपात	२.२३.३०	उत्तानशायो शिशुरूप	३.८२.२०	उत्पन्नमात्रश्चोवाच	१.४५.५१
इतिस्त्वं च तस्यैव	१.४२.२	उग्रसेन सुतायाय यान	२.४.२८	उत्कृतशिरसो विष्णोः पुरा	२.७०.३१	उत्तिष्ठ गच्छ दुर्मये	२.७.२४	उत्पतन्नं सकृत्पादं शकुन्मूत्र	२.२४.४०

उत्पन्नस्य पृथिव्यां	१.१८.४०	उदयास्तमयं चक्रे मेरु	१.४४.२२	उद्भूतो देवदेव्योऽवः	३.५८.८७	उपभोगा मनुष्याणां विद्विता	२.६६.५१	उपस्पृश्य ततो भूमौ	२.६४.१२
उत्पन्नाः पितृकन्यायां	१.३०.१	उदरात्प्रतिहृत्तारं	३.१०.८	उद्यच्छन्नेव सहमाशिलायां	२.४.३६	उपयुज्य च गां सर्वे	१.२१.१४	उपांशुवनमास्थाय	१.१३.३
उत्पन्ना ये कृतयुगे	३.४.२१	उदवासगतोधीमान्पिता	२.७०.२१	उद्यद्भास्करवर्णाभस्तयो	२.६८.४६	उपयुंषि तन्नापि	२.१६.३१	उपाकर्मोष्ठ रुचक	३.३४.४०
उत्पन्न तदा व्योम्नि	३.५८.३८	उदितो भगवान्त्सूर्य	३.६६.१५	उद्यन्तं द्विपतां हेतोर्द्वितीय	१.४३.१२	उपयुंषि सर्वेषां सोम	२.६६.५	उपात्तयज्ञो देवेषु	३.२.३६
उत्पत्ता शिरस्तस्य भूमौ	२.८५.६३	उदीच्यां दिशिदुर्द्धवं	१.४.२२	उद्यम्य दिवमाणेय	३.६२.११	उपलभ्येते चक्षुर्मया	३.१८.३०	उपाध्यायस्तु देवानां	१.३२.१०६
उत्पाद्य वृक्षं दैत्यैः	३.१२३.१८	उदीच्यैश्च महावीर्यै	२.३५.१०५	उद्यानवनसंपन्ना सुसीमा	१.५४.५८	उपलेपनं च धर्मजे	२.८०.५१	उपायतः समारब्धा	१.५.५१
उत्पाद्यारोपयामास विष्णु	२.६४.६८	उद्गात च मयः श्रीमान्	३.५४.८	उद्यानशतसंवाधां	२.६८.५	उपवास महोरात्रं	२.७६.५	उपाय पश्य येन	१.६.६
उत्पाता ह्यत्र दृश्यन्ते	२.११६.७०	उद्गात्रान्तो होमलिङ्ग	१.४१.३२	उद्यानानि गुहाः शैलाः	२.१२१.६४	उपवासावसानं हि रुक्मिण्या	२.६५.५	उपायश्चिन्त्यतां भीरु	२.११८.७७
उत्पादयामास ततः पुत्र	१.२५.४६	उद्गीयमानयशसं माधव	३.११५.५	उद्यानानि सभावृक्षा	२.८८.६६	उपवासावसानेऽप्य भगवान्	२.६५.११	उपायः सृजतां हृदि	२.६२.५५
उत्पाद्य त्वं वसून	१.५३.४५	उद्दालकः क्षीर पाणि	२.१०६.६३	उद्गतं इव भूतानां	३.५८.७६	उपवासेषु कर्तव्यमेताद्वि	२.७८.२३	उपाया मम सख्यास्तु	२.११६.३८
उत्पेतुश्च कबन्धानि	३.५८.७३	उद्दिश्य दक्षिणां वीरो	२.६४.१५	उद्गर्तयिष्यन् त्रिदशेन्द्र	३.५१.६१	उपविष्टं तदा रामं वप्रच्छ	२.४६.५८	उपायोऽयं मया प्रोक्तो	३.८६.१५
उत्प्लुत्य स रथात्स्माद	३.१२८.२	उद्दिश्योद्दिश्य राजानं	२.४४.६४	उद्गर्तयिष्यन्त्यदु	२.१२४.५४	उपविष्टं मुनि ज्ञात्वा	२.६६.१	उपावृत्तासु वै गोषु	२.२५.६
उत्सवे युद्ध शौण्डानां	२.८५.८	उद्देशतो धर्मशीलः	३.४.६	उन्मत्तोऽयं विरुपोऽयमथवा	३.१०७.२४	उपविष्टश्च तान्द्रष्टुं सह	२.६३.२०	उपासगर्भं लेभे तनयं	१.३५.११
उत्साहः सर्वदा कार्यो	३.७५.२६	उद्बोऽप्य महाबुद्धि	२.६४.४	उन्मथ्य सलिलादस्माद्	२.३३.१६	उपविष्टः सुरपतिरयोवाच	२.६६.४०	उपासंगस्तथा मंगुमृदुर	१.३४.१२
उत्सृज्य ते गदाशक्ति	३.५७.५६	उद्बोऽपि बली साक्षाद्	३.६५.१७	उन्मुखो नित्य विप्रस्त	१.२१.२५	उपविष्टेषु सर्वेषु	२.६१.५	उपासंगस्तथा मंगुमृदुर	१.३८.५२
उत्सृष्टावुरणो दृष्ट्वा	१.२६.३०	उद्भूतानीह सर्वेषां यदूनां	२.२३.२२	उन्मूलयंस्तर्गुणान्	२.१२७.४१	उपसर्गं च योगं	३.१८.१	उपासतस्तं देवेश वर्या	१.१६.२१
उदकं च गृहायाथ	२.७४.१६	उद्भूतैश्च महावर्तः	१.५३.३२	उन्मूलानथ तान्कृत्वा	१.२.३८	उपस्थाय च गोविन्दं	२.११३.१६	उपासते च तत्रैनं	३.६६.३३
उदयन्तं निरीक्षन्तो	२.४१.४	उद्भूता पृथिवी देवी	३.१७.७	उपगम्य तथा शेषान	२.१००.११	उपस्थितश्च श्राद्धेऽद्य	१.१६.४६	उपास्यमानो यजनं रात्म	२.५३.५
उदयन्नेव भगवान्	३.३६.५७	उद्भूत्य गिरिपादेभ्यो	३.३०.१५	उपदानवी मुतांल्लेभे	१.३२.८	उपस्थितेऽतिथयसि	१.३.५७	उपेक्षते दानवेन्द्र	२.११६.१६५
उदयश्चैव राजेन्द्र	३.४६.५२	उद्भूत्य सोऽग्नि	३.१६.२४	उपप्लुतेक्षणां दीनां नित्यं	२.२६.१०	उपस्पृश्य ततस्तप्तः प्रददौ	२.६७.४३	उपेक्षित इव व्याधि	२.१०५.३७

उपेक्षित इव व्याधिः	२.२२.२३	उभौ मदकटोदघ्नौ	३.१३.४	उलूकः केतवश्चैव वीर	२.३५.४५	उवाचाहूय तां भर्ता	१.२७.१६	उष्णगे तोय पूर्णस्य	३.६७.११
उपेन्द्र द्वारकां गच्छ	२.७५.३८	उभया पुण्यकविषि	२.७७.२	उलूकः कर्तव्येष्वच वीर	२.४२.३४	उवाचैतस्समुद्दिष्य	२.१२५.२४	उष्णभास्वन्द्रमाश्वासी	२.८७.२६
उपेन्द्र न महेन्द्रोऽथ	२.७५.६	उभया यत्र सहितः	३.८४.१०	उल्का च बाणसैन्यस्य	२.१२४.३४	उवास पुष्काराम्याषो	२.७४.१०	उष्णीषिणो मुकुटिन	३.७२.२५
उपेन्द्र मुत्तिलंमयायु	२.८६.५५	उभया साङ्गंभीक्ष्णानौ	३.८८.१६	उल्कापात सहस्राणि	२.१०५.२७	उवाह सर्वगन्धाढ्यं स्वच्छं	२.८८.२३	उष्णे शीतानि तोयानि	३.४१.५६
उपेन्द्रमूर्ध्नि सा मौलि	२.४१.४५	उमा तासां प्रियायं	२.७७.२५	उवाच किं मया कार्यं	१.६.११	उक्षानास्तस्य जग्राह	१.२५.३२	ऊ	
उपेन्द्रस्त्वं महाबाहो	२.५०.१२	उमा तासां वरिष्ठा	१.१८.२२	उवाच वामेयपराक्रमोऽथ	२.८६.३१	उक्षीनरस्य पत्न्यस्तु	१.३१.२४	ऊचुस्तौ महाभागौ	२.५०.१०
उपेन्द्रस्य महेन्द्राय भ्रातु	२.७०.१०	उमा त्वहन्वती	२.७७.२७	उवाच च यति दृष्ट्वा	३.१०८.८	उक्षीनरस्य पुत्रास्तु	१.३१.२५	ऊनुमां सान्त्वयुक्तानि	२.११०.५८
उपेन्द्रोऽहं महेन्द्रेण लाल	२.७०.५	उमा देववरस्येष्टा	२.६५.३३	उवाच चैनं दैवेश	२.७२.६२	उक्षीर बीजश्च गिरी	३.४६.७२	ऊनुश्च सहिताः	३.३०.६
उपे यदुक्ता वेद्यासि	२.११८.२८	उमापते नमस्तुभ्यं	३.८७.२७	उवाच चोपसेनस्य	२.१.७	उषा ते पतते मूर्ध्ना	२.११६.४४	ऊनुश्चैनं नृवीरास्ते	२.१०१.५
उभयोरपि तत्रासीन	२.१११.८३	उमाव्रतेषु सर्वेषु वृष दानं	२.८१.४०	उवाच दृष्ट्वा युध्यध्वं	३.६१.२७	उषा नाम सुता तस्य	२.१२१.८२	ऊनुस्ते पितरः कन्यां	१.८८.३५
उभयोर्विन्ध्ययोः पादे	२.३८.२०	उमास्तनद्वन्द्वसमपिता	३.८५.१३	उवाच नयसंपन्नं	२.५२.११	उषापि च महाभागा	२.१२८.३	ऊनुस्सर्वे च संप्रीता	२.१२.४५
उभयोः सेनयो राजन्	३.५४.१	उरगाधिपतिस्साक्षात्	२.११.५०	उवाच यवनेन्द्रस्य मंत्री	२.५३.१३	उषाया दर्शयश्चैनं	३.११६.५७	ऊरावेवोपवेद्यतां	२.६४.१७
उभयोस्सेनयो राजन्मांस	२.३६.६	उरस्त्रयैः सध्वजकिङ्किणी	३.५२.५०	उवाच राजा गोविन्द	२.५७.५६	उषाया वचनं श्रुत्वा	२.११६.२	ऊरः पुङ्गवः शतद्युम्न	१.२.१८
उभाम्यां देवदैत्याभ्या	३.६४.१५	उरस्तस्योरसा हन्तु	२.२४.३५	उवाच राजा चेदीनां देवानां	२.४२.४२	उषाया वचनं श्रुत्वा	२.११८.४७	ऊरु रक्षो महादेवो	३.७१.५२
उभे स्नेने महाराज्ञौ	३.६७.१६	उरांस्युरसिजांश्चैव शिरो	२.४४.४१	उवाच वचनं देवी	२.१०७.१४	उषायै दशमामास	२.११८.८०	ऊरु वक्षो भुजौ तुल्यौ	२.१०८.१६
उभौ गृहीत्वा हस्ताभ्यां	२.७५.२४	उरक्रमं विश्वकर्माणमीशं	२.७२.२६	उवाच वचनं राजन्	३.१२६.६	उषा सखीनां तद्वाक्यं	२.११७.२५	ऊरुवेग प्रतिक्षिप्तिः शैल	१.४७.४३
उभौ तौ परमाचार्यौ लोके	२.३६.१५	उरुबिन्दुः सुबिन्दुश्च	१.२३.२	उवाच वचनं विष्णुं	३.१११.३१	उषे त्वं क्षीघ्रमप्येवं	२.११७.१६	ऊरुवंकेशयः कृष्णकेशय	२.१०६.५८
उभौ तौ बाहुबलिनःपुभौ	३.२६.१७	उर्वश्यं जज्ञिरे यस्य	१.२५.४७	उवाच वचनं सम्यम्	३.६८.३	उषे मा भैः किमेवं	२.११८.५	ऊरुवंगी भीमवेगश्च	३.४७.११
उभौ तौ सहसा राज	२.७३.८६	उर्वशी ताः सखी प्राह	१.२६.३४	उवाच वचनं हंस	२.१२७.२७			ऊरुवं चाधश्च गच्छति	३.६२.३१
उभौ तौ हंसश्चिम्बको	३.१२७.१	उर्वशी विप्रचित्तिश्च	२.६६.१५	उवाच श्लक्ष्ण्या वाचा	२.५३.१७			ऊरुवं ज्योतिरवेसांश्च	३.१६.३०

ऊर्ध्वं प्रक्षेपणाथयि	२.४२.२२	ऋतवः कालयोगाश्चप्रमाणं	१.४०.३३	ऋषिभिर्ज्वलनप्रख्ये.	३.१३३.१०	एक एव महानग्नि	३.२३.६	एकभावशरीरज्ञ एकदेहो	२.१२.२६
ऊर्ध्वोऽहं स्थातुमिच्छामि	३.१६.२१	ऋतवः कालयोगाश्चप्रमाणं	१.४०.३४	ऋषिभिर्देवैर्गवैर्व	२.१२७.६०	एक एवाग्निमाधाय	३.२३.४	एकं वंशधरं त्वेका	१.१५.५
ऊर्मिभन्तं समुद्रं च अपार	२.३६.६८	ऋतुपर्णामुतस्त्वासी	१.१५.२०	ऋषिभिर्द्रौवतैर्वैच	२.१२०.५	एक कायान्तिरगतावेकदेहो	२.७.४	एकं वंशधरं त्वेका तथे	१.१५.६
ऊर्मिभन्तः स्वरालापा	२.८०.५	ऋतुपर्णायिषिर्लैवन्त	२.१६.२५	ऋषिभिस्तौ नियुक्तौ च	१.५.३८	एकः कैलाससंकाश एको	२.२७.६०	एममेव सदा दुःखं	३.१३०.१४
ऊर्वस्तु तपसाविष्टो	१.४५.४८	ऋते तु पृथिवीं लोके	२.११०.४६	ऋषि त्वीज्जरसं	३.२०.१५	चक चक्रस्तु तत्रैव	३.५१.३०	एकलव्यस्य पुत्रं च	२.५६.५
ऊर्वस्योर्ध्वं विनिमिष्ट	१.४५.५०	ऋते देवमनुष्याणां	२.१२३.२६	ऋषियो वध्यमानास्तुं	२.८६.३१	एक चक्रस्तु दितिज	३.५३.१७	एकलव्यो निषादेशः	३.६८.७
ऊषतुर्दारमक्रम्य षट्	२.६०.३०	ऋते पाण्डुसुताम्	२.८३.४६	ऋषिततोऽग्निवशे तु	१.३१.१२	एक चक्रैरथे तिष्ठन्नपश्य	३.५८.१८	एकलव्यो यदुवृषान्	३.६४.३२
ऊषिभिर्ज्वलनप्रख्यैस्तपसा	३.२८.६२	ऋते बामीदशं वाक्यं	३.१०८.१२	ऋषिर्वै कालं वृक्षो	२.१०६.८६	एक चक्रो गदापाणि	३.५८.२३	एकलिङ्गा पृथग्धर्मा	३.२१.१२
		ऋतिवक्पुरोहिताचार्या	३.२.६	ऋषिष्वथ प्रयातेषु	२.८६.४१	एक चक्रो महाबाहुस्ता	१.३.८४	एकवक्त्रो महावक्त्रो	३.७२.६
		ऋतिवक्त्राश्चवीर्यदुः	३.५.१८	ऋषिष्वप्यथ तिष्ठस्तु	३.७६.३२	एकतः समधीयन्ति	३.३२.२	एकस्त्वमनपत्यश्च मोत्रं	१.४५.२७
ऋक्सामयजुषां षोषो	१.४१.१५२	ऋदधानुरूपयां युक्त	२.८३.८	ऋषीणां च ततो ज्ञानं	२.१२६.१०३	एकतः सूर्यसंकाश	३.३५.१७	एकस्त्वमपि देवानां	२.१६.२१
ऋक्सामयजुषां सत्यं	२.११०.६७	ऋषमाक्षा सुरगणाश्च	३.५४.३७	ऋषीणां च हितापार्थय	३.६६.४६	एकत्र ते मुनिगणा	३.८६.१३	एकस्त्वमसि संभूतः	३.२६.४५
ऋक्षं संजनयामास	१.३२.८५	ऋषयश्च महात्मानो	२.१२७.१४५	ऋषीणां नारदः श्रेष्ठो	२.११६.१६७	एकत्वं च पृथक्त्वं	३.२०.२३	एकस्मिन्यत्र निधनं	१.६.३
ऋक्षवन्तं गिरिवरं विन्ध्यं	१.३८.३२	ऋषतश्च महाभागा	३.३१.८	ऋषीणामिव वो वृत्तं	२.२२.१८	एकनिर्माणनिमुक्तावेक	२.७.३	एकस्मै ज्ञानवृद्धाय	२.७६.४६
ऋक्षवन्तं समभितस्तीरे	२.३८.२२	ऋषयोऽत्र मया प्रोक्ता	१.७.१८	ऋषेर्नारायणस्यायं	३.१२.१५	एकपादा द्विपादाश्च	२.१०६.७२	एकस्यापि नृपस्याग्रे	२.५१.६
ऋक्षेण निहतो दृष्टः	१.३८.३४	ऋषयो देवता यज्ञा	२.११४.२०	ऋष्टि शक्तिगदास्तीक्ष्ण	३.५४.३३	एकप्रमाणी लोकानां देव	२.७.५	एकहस्ता एक पादा	२.१०६.५६
ऋद्धमयाश्चतुरो वेदाभ्यादौ	३.२८.६१	ऋषयो न्यस्तदण्डाश्च	३.३२.४२	ऋष्यन्तरविवाहाश्च	१.२७.५३	एकप्रहाराभिहतान	३.५६.५७	एकाक्ष एकापानुषणो	३.४६.५
ऋचेयुः प्रथमस्तेषां	१.३१.६	ऋषयो वा न मां शार्पः	१.४१.५०	ऋष्यन्तरविवाहाश्च	१.३३.५६	एकभक्तेन धर्मज्ञे	२.७६.५५	एकाक्षश्चन्द्रा राहुः	१.४१.८६
ऋचेयोस्तु महाराज रोद्रा	१.३१.६१	ऋषिभिः पूजितस्तैस्तु	१.५०.१	एक एव जगन्नाथ	३.६६.६	एकभर्तृव्रतमिदं मम	२.२८.६५	एका चन्द्रवती नाम्ना	२.६४.३४
ऋचो यजुं पि सामानि	१.१.३६			एक एव ज्वरो लोके	२.१२३.१८				
ऋचो यजुं पि सामानि	२.१०६.७								
ऋजुस्वभावां भक्तां च	२.६६.५१								

एका तत्र निराहारा	१.१८.१८	एकैकस्य समा रूपे	२.६२.६२	एतत्तच्छ्रोणितपुरं कृष्ण	२.१२२.४२	एतद्विच्छाम्यहं श्रोतुं	१.३०.६	एतद्वो जन्मनः	३.८६.४
एकादशेऽथ पयसि	१.७.६	एको विद्यासहायस्त्वं	३.७२.६६	एतत्सर्वमाख्यातं निकुम्भ	२.८५.४३	एतद्विच्छाम्यहं श्रोतुं	३.१.२	एतद्वतकरो ह्येव देवे	२.७६.३७
एकानंशां नमस्यामि	२.१०७.१२	एको वेदश्चतुर्धा तु कृत	१.४१.१६२	एतत्ते कथयिष्यामि	३.२१.३	एतद्विश्वमात्रेण प्रादुर्भाव	१.४१.१७१	एतन्नीलाम्बुदप्यामं	२.१००.२४
एकानंशेति यामाहुः	२.१०१.१४	एको रातिश्चैव भूतं भविष्य	२.७२.४१	एतत्ते कथयिष्यामि	३.३३.५	एतद्विष्णुमध्य पातिष्ये	२.१०४.३८	एतन्मम मतं कृष्ण	२.३८.६५
एकांस्त शत्रुरस्माकं	३.७४.१७	एतच्चमे समाख्यातं	२.१२७.६३	एतत्ते कृष्ण विज्ञाप्य	२.३२.३०	एतदेव परं वस्तु	३.८६.२	एतन्मे कृष्ण कात्स्न्येन	२.१६.६१
एकाणंबज्रं सर्वं	३.१३.३	एतच्च सर्वं कर्तव्यमन्यच्च	२.६१.५३	एतत्ते सर्वमाख्यातं	२.६१.५८	एतदेव प्रशंसन्ति	३.८६.६	एतन्मे संशयस्त्वेन	३.३३.४
एकाणंबज्रं ह्यासीद्योगी	३.६.१६	एतच्छ्रुतं च दृष्टं च	२.११४.२५	एतत्ते सर्वमाख्यातं	२.१२८.२१	एतदेव प्रशंसन्ति	३.८६.७	एतमिव विजानीत नात्र	३.८६.८
एकार्णविविधः कोऽयं	३.६.२०	एतच्छ्रुत्वां कुरुश्रेष्ठो	२.११४.२६	एतत्प्रवित्रं परममेतद्	३.१३२.६७	एतदेव भगाधानं धमिष्ठे	२.६५.२५	एतद्वोश्च हि को मुदं	२.११६.८५
एकार्णवमनोबुध्ययचोनेष्य	२.८८.२०	एतच्छ्रुत्वा च वचनं	३.३०.२४	एतत्पूर्वमनुष्याय	३.१६.१८	एतदेव सदा विप्रा	३.८६.३	एतस्माच्च जगत्सर्वं	२.१२८.३२
एकीभूता यदा सर्वे	३.२३.४५	एतच्छ्रुत्वा तु गच्छो	२.१२२.१७	एतत्प्रकरणं वीरा	२.६३.३१	एतदेवोत्तमं स्त्रीणां	२.७६.३६	एतस्मिन्नन्तरे राजान्	३.१२७.१५
एकैकमश्वं दशभि	२.७५.७	एतच्छ्रुत्वा तु भगवान्मणि	१.३८.१६	एतत्सर्वमशेषेण	३.११०.११	एतद्वृत्त्वा सर्वकामानाप्नोति	२.७६.३२	एतस्मात्कारणात्तज्ज्ञः	३.१२.१६
एकेनाक्ष्णा ह्लादयंत	३.१११.१२	एतच्छ्रुत्वा तु वचनं नोत्तरं	२.३२.५४	एतद्वत्स्रुतं दृष्ट्वा	३.४०.१५	एतद्देवैरसंभ्रायं दिव्येन	२.१८.५४	एतस्मिन्नन्तरं देवा	३.३०.५
एकेनामलपत्रेण कण्ठसूत्रा	२.१११.१०	एतच्छ्रुत्वा तु वचनं	३.७१.८	एतदन्तरमासाद्य प्रद्युम्न	२.६०.२५	एतद्विमतमिति प्रोक्तं	३.१७.१८	एतस्मिन्नन्तरे क्रुद्धः	१.४७.३७
एकैकं तत्र चोद्यानं	२.१२१.३८	एतच्छ्रुत्वा वितुर्वाक्यं	२.३६.४	एतदर्थं च वासोऽयं व्रजे	२.११.५८	एतद्बाहुद्वयं यत्ते मूषे	१.४१.१०६	एतस्मिन्नन्तरे क्रुद्ध	३.६८.१
एकैकं नृपतेर्भागं	२.५५.१५	एतच्छ्रुत्वा त्रयोदेवी	१.३६.१८	एतदर्थं समायाता	३.८६.१६	एतद्वदनु रूपं वो ममाभि	२.५६.८	एतस्मिन्नन्तरे गोभि	२.६.१२
एकैकं पंचभिः क्रुद्ध	२.१०५.४	एतच्छ्रुत्वा ब्रह्मादस्तातु	२.८३.१३	एतदाख्याहि निखिलं	३.७.२	एतद्विष्णुमत्प्रवृत्तेन दैवेन	१.५२.५८	एतस्मिन्नन्तरे चैव	२.१२६.३०
एकैकं सप्तधा चक्रे	१.३.१३५	एतच्छ्रुत्वा वचस्तस्य	२.३२.३१	एतदाश्चर्यंभूतं हि	२.७.३७	एतद्वः कथितं सर्वं कर्णं	१.३१.५६	एतस्मिन्नन्तरे तत्र देवानां	२.३५.८२
एकैकस्तनयो राजत्नेकैका	२.८३.३६	एतच्छ्रुत्वा मुराः सर्वे	१.४१.६४	एतनाश्चर्यंभूतस्य विष्णो	१.४२.८	एतद्वचनमाकर्ण्य	३.१००.३५	एतस्मिन्नन्तरे तात	१.२०.७२
एकैकस्तु द्विवाच्छिन्नो	२.६०.६०	एतच्छ्रुत्वा मुराः सर्वे	३.४१.२६	एतदाश्चर्यंभगवत्संश्रामे	१.४८.८४	एतद्वचो निशम्याथ	३.१४.१४	एतस्मिन्नन्तरे तात	२.१२७.२३
एकैकस्य प्रदातव्यं व्रतकं	२.७६.३६	एतत्कृतयुगे वृत्तं	३.८.५	एतदाश्चर्यंमाख्यानं कथ	१.४०.६६	एतद्वि परमं ब्रह्म	३.१६.१५	एतस्मिन्नन्तरे तेषामन्यो	३.५३.५

एतस्मिन्नन्तरे भूत्वा	३.५५.१४८	एतस्मिन्नन्तेव काले तु	१.३६.२४	एतान्पञ्च सुतान् राजा	२.३८.३	एतासु ते सुता पञ्च	२.३७.६८	एते दिव्या वरास्तात	१.४१.५६
एतस्मिन्नन्तरे दीना	२.३१.३८	एतस्मिन्नेव काले तु	२.४७.४३	एतान्परिष्वज्य तदा	२.१२७.१३६	एतास्नुयोगेश्वरयोग	१.४१.१७४	एते दिव्या वरास्तात	३.४१.१६
एतस्मिन्नन्तरेः द्रुता संप्राप्ताः	२.४६.६७	एतस्मिन्नेव काले तु	२.५०.८६	एतान्मच्छीतनिदाधान्	१.४६.१२	एतेऽङ्गवरात्राः सर्वे	१.३१.६०	एते देवगणानां च	३.१२.७
एतस्मिन्नन्तरे दृष्ट्वा	३.१२६.२८	एतस्मिन्नेव काले तु	२.५३.६	एतान्यंबुप्रहृष्टानि	२.१०.२७	एते खलु मृगाः साढं	३.१०६.५	एते वैश्या दुरात्मानो	२.७४.४४
एतस्मिन्नन्तरे देवो	२.६६.१०	एतस्मिन्नेव काले तु	२.५५.८६	एतान्यस्त्राणि सर्वाणि	३.४४.१६	एते चक्रधराश्चैव	२.१२७.१२६	एते दैत्या विनिहतास्त्वया	१.५४.७८
एतस्मिन्नन्तरे प्राप्ता	२.६.७	एतस्मिन्नेव काले तु	२.५६.१	एतान्युक्तानि कौरव्य	१.७.४२	एते ग्रहाश्च सततं	२.१०६.७४	एतेन च बलेनाजो	३.६३.१०
एतस्मिन्नन्तरे प्राप्ता	२.४७.१	एतस्मिन्नेव काले तु	२.८३.१	एतान्स यादवान्सर्वाणा	२.२२.११	एते चान्ये च ऋषयो	२.१०६.६४	एतेन बहवो मत्ता	२.३०.२५
एतस्मिन्नन्तरे प्राप्ता	२.८३.२५	एतस्मिन्नेव काले तु	३.६१.१	एताः पञ्च वरिष्ठा	३.१४.३५	एते चान्ये च बहवस्तत्र	३.४१.७४	एतेन मुरुमाक्रम्य	२.१०१.६७
एतस्मिन्नन्तरे ब्रह्मा सर्वं	१.४५.५३	एतस्य कर्मणः पाक	३.८१.६	एतावच्छतशोऽप्येवं	२.३२.५१	एते चान्ये च बहवो	१.३८.६	एते नागा महात्मानस्त	२.६६.२८
एतस्मिन्नन्तरे भीता	२.१२.१५	एतान्चितयित्वा तु	२.१०५.२८	एतावत्क्रियतां वाक्यं	३.४०.१३	एते चान्ये च बहवो	१.४१.१७०	एतेनाह बलेनाजो	३.६२.१५
एतस्मिन्नन्तरे भूत्वा	३.५५.१४८	एतान्नुविधीयन्ते	२.६६.१०	एतावत्खुलपयिष्यं दृष्ट	२.६६.५२	एते चान्ये च बहवो	३.४२.१५	एतेनैव प्रयत्नेन वृद्धा	२.२६.२१
एतस्मिन्नन्तरे मेधा	१.४२.१३	एतानपि हनिष्यामि	२.२८.११७	एतावदुक्त्वा ते सर्वे	१.२३.३६	एते चान्ये च बहवो	३.४६.१६	एते पुत्रा महात्मानः	१.१८.४८
एतस्मिन्नन्तरे राजन्	३.१२२.१६	एतानि कृत्वा कर्माणि	१.४१.१४१	एतावदुक्त्वा भगवान्	२.१२६.१६४	एते चान्ये च बहवो	३.६६.३७	एते प्रोक्ता भृशं युद्धे	३.११६.१०
एतस्मिन्नन्तरे राजन्	३.१२३.१	एतानि चान्यानि च	२.८६.१५	एतावदुक्त्वा राजेन्द्र	१.५१.३३	एते चान्ये च बहवो	३.५३.३२	एतेन्योऽपिोपिष्ठाचोभ्यो	३.८१.१६
एतस्मिन्नन्तरे बायुर्वै	२.२८.६२	एतानि नूनं समरे पाथिवं	२.४१.५४	एतावदुक्त्वा शुक्रस्तु	३.४६.३१	एते चैव प्रवर्षन्ति	२.१२५.३८	एते महर्षयस्तात बायु	१.७.१३
एतस्मिन्नन्तरे बायुर्वै	२.११०.१७	एतानि विजिगीषूणां शशि	२.४१.५१	एतावन्निह वासश्च कथितो	२.५७.२८	एते तपसि तिष्ठन्तो	१.४५.३६	एतेऽमृतं संप्राप्ता	१.३७.१५
एतस्मिन्नन्तरे शूर	३.६४.२६	एतानि शशिकल्पानि	२.३५.४	एतावन्तमसो कालमकाण	३.६.२१	एते त्वङ्गिरसः पुत्रा	१.२६.८३	एते युगसहस्रान्ते	१.३.६६
एतस्मिन्नेव काले तु	१.५.३३	एतानुत्पाद्य चर्मामा	१.१८.५४	एतावैव रणे शक्तो	३.१२५.२४	एते त्वङ्गिरसः पुत्रा	१.३२.४०		
एतस्मिन्नेव काले तु	१.२६.३०	एतानुत्पाद्य पुत्रास्त्वं	१.१८.४३	एताश्चैताः प्रजा	३.२२.१८				
एतस्मिन्नेव काले तु	१.२६.३७	एतान्तिहनुमिच्छामि	३.५६.४	एता सहस्रशचान्या	३.४२.७				

एतेषु वनमुखेषु	१.२६.८	एते स्युः पितरस्तात	१.१८.११	एवं कथयतस्तस्य वामुदेव	२.८.३०	एवं चिन्तयमानस्य	२.१२१.५५	एवं द्वारवती चैव पुरी	२.५६.३४
एते रुद्रास्तथादित्या	२.१२७.१२३	एते बभूवुश्च महर्षि	३.५३.३६	एवं कथयतोस्तत्र	२.११६.५७	एवं जगति वर्तन्ते	१.५१.३०	एवं चर्म च ते बुद्धि	१.१६.६
एते लोकहिताययि	१.४१.१६३	एते हि यतयः शुद्धा	३.१०८.११	एवं कथयमानं तं शात्व	२.५४.१	एवं तद्दानवं सैन्यं सर्वं	१.४३.३०	एवं नारायणेनोक्तो नारदो	२.६८.११
एते वस्तविशेषाश्च	१.६.५४	एतैः परिवृतोमास्वैर्युग्मु	२.१०५.१६	एवं कथयमानानां नृपाणां	२.४६.३६	एवं तां स समादिश्य	२.३.३४	एवं निषिपतिश्चीमानन्दैव	२.५५.१७
एते वृन्दावनगता दामोदर	२.१८.३	एतैर्विकारैः संवृत्तैर्निवृद्धै	२.१६.३१	एवं कालं प्रतीक्षाणां	२.६४.२५	एवं तावेकनिर्माणौ मधुरायाम्	२.४५.१६	एवं नियुज्य तन्यान्त	३.३७.३१
एते वै दानवा श्रेष्ठा	१.३.१०३	एतैश्च कारणं श्रीमान्	२.१२८.२४	एवं कुम्भाण्ड वाक्यं	२.१२४.१४	एवं ते कुर्वतः कृष्ण	२.२६.२५	एवं पुत्रसहस्राणि	३.३६.५८
एते वै योगविभ्रष्टा	१.१८.	एतैर्विकारैः संवृत्तैर्निवृद्धैश्च	३.१६.१२	एवं कृते तु कृष्णेन	२.१२६.२६	एवं ते विस्मितास्सर्वे	२.१२.४६	एवं पुराणपुरुषो विष्णुः	२.७१.२०
एते वै सैनिका ब्रूयुः	३.६७.२४	एतैर्विकारैः संवृत्तैर्निवृद्धैश्च	३.१६.४१	एवं कृते बाहुवीर्यं	२.११.६०	एवं तेषां महाराज कुर्वतां	३.६४.१६	एवं प्रभावो राजासी	१.२६.४८
एतेषां कात्तितानां तु	१.७.३८	एतैश्च रथयुक्ता	२.८४.१४	एवं कृते विद्यास्यामि	२.८८.४३	एवं ती तत्र संग्रामे	२.३६.२३	एवं प्रवर्तिते गर्भे	१.४०.५५
एतेषां कल्प उत्थाय	१.७.८५	एतो जये वा युदेवा	२.१०१.४६	एवं कृत्वा ततो विप्रं	२.८१.३५	एवं ती वाल्यमुत्तीर्णा	२.८.१	एवं प्राक् गुणान्सर्वान्	२.१०.४२
एतेषां छेदनं त्वद्य	२.१२६.१२०	एतो पक्षो भविष्यन्ति	१.५३.६४	एवं कृत्वा तथा रूपं	३.२६.५३	एवं ती योधमुख्यौ तु	२.३६.२५	एवं बहुविधं कृष्णं	२.२५.३६
एतेषां मानसी कन्या	१.१८.१३	एतो युद्ध विदो रंगे	२.२२.८८	एवं कृत्वा तु संकल्पं	२.५५.११७	एवं त्रीण्यस्य शंकूनि	१.१३.१६	एवं बहुविधं वाक्यं	१.५.५६
एतेषां मानसी कन्या	१.१८.४६	एतो रंगमती युद्धे	२.२८.२३	एवं कृत्वा पुरानन्दमुग्रसेनो	२.५५.२६	एवं त्वं बहुरूपेण	२.१२३.२८	एवं बहुविधा घोराः	३.८६.१०
एतेषां यदपत्यं तु	१.३.६०	एतो हत्वा गजेन्द्रेण	२.२८.३६	एवं गतेऽ निरुद्धस्य	२.१२८.२	एवं दत्तास्मि मनवे	१.५२.५५	एवं बहुविधं भूतैः	३.८७.१
एतेषामात्मभूतानां	१.५०.४०	एतो हि वसुदेवस्य	३.१०१.४५	एवं गार्गस्य तनयः श्रीमान्	२.५२.२६	एवं दिवा च रात्रौ	३.३२.३१	एवं ब्रूवति गोविन्दे	२.३२.१६
एतेषामितरो देशो	३.१२.८	एनं कदम्बमारुह्य	२.११.५६	एवं ग्रहाय तं वीर मग	२.६०.५८	एवं दिव्यैश्च भोगैश्च	२.५८.७८	एवं ब्रूवति तद्वाक्यं	१.४८.२८
एते सप्त महात्मानो	१.७.४६	एनं सपरिशुद्धीण्व पात	२.६१.३७	एवं चतुर्विधसैन्यैः	२.४२.६	एव दुःखं न ते देव	२.६८.२६	एवं ब्रूवन्तस्त्रोन्मोन्	२.१२२.६४
एते सर्वे दनोः पुत्रा	१.३.८६	एने सङ्ग विदां श्रेष्ठा	३.१२५.१६	एवं च देव दैत्यानां	२.१०२.३०	एवं दूतस्य वचनं यथोक्तं	२.५०.२४	एवं भगवता पद्मे	३.१२.१७
एते सर्वे महाभागा	१.३२.१०२	एभिर्विकारैः संयुक्ता	३.२६.१७	एवं च ब्रूवतां तेषां	२.१२१.७१	एवं दूष्ट्वा महोत्पातान्	२.१०७.४	एवं भवतु भद्रं तेन	२.१२६.१५६
एतेऽस्त्रविदुषः सर्वे	१.४७.८	एलापत्रश्च कालीयो	३.४६.३६	एवं चिन्तयतां तेषां	२.१२१.६६	एवं द्वादशासाहस्र	३.८.१६	एवं भवतु युक्तेषु	२.२२.२०
		एलापत्रस्तथा शंखः	१.३.११३						

एवं भविष्य तीभ्याह	२.१२६.१५६	एवं विषप्रभावं त्वं कुण्डं	२.७१.४६	एवं संवत्सरं कृत्वा	२.७६.५६	एवं स विलतन्नेव	२.१.३२	एवमस्त्विति सप्रोक्तो	३.६१.३३
एवं भविष्यन्ति	३.४.३६	एवं विधेयुः प्रिगसगमेयु	२.६५.१२	एवं स कुण्डो गोपीनां	२.२०.३५	एवं न विश्वावसुनानुनीतः	३.६.१	एवमस्त्विति सोऽप्यनि	१.४५.६४
एवं भानुमतीं वीर	२.६०.७५	एवं विभज्य राज्यानि	३.३६.२५	एवं संचित्य मनसा	२.१०४.१३	एवं साभिहिता सख्या	२.११८.१०	एवमाज्ञापयानं तं कंसं	२.३०.७०
एवं भूयोऽपरा-बोरा	३.४५.६	एवं विमर्षिता सर्वा नरा	२.६३.१०६	एवं संचिन्तयामासुनः	२.५०.४२	एवं सोमस्य वै जन्म	१.२५.५०	एवमाज्ञापयामास सर्वांन्	२.१८.७
एवं मयि निरालम्बे	१.५३.३४	एवं विलुलिते लोके	३.४.१	एवं स चिन्तयित्वा तु	२.१८.३०	एवं स्तुत्वा तदा देवं	२.१२६.७६	एवमाज्ञापितं पूर्वं ब्रह्मणा	१.१७.४१
एवं महात्मना तोन	३.४७.३८	एवं विविधरूपाणि	२.११६.६८	एवं संजल्पतामेव ताम्यां	२.३०.३१	एवं स्तुत्वा महादेवं	२.५१.६१	एवमाज्ञाप्य राजा स	२.२८.१६
एवं तिष्ठ्याभिषप्तो न	१.३८.४४	एवं विवृद्धिमगमन्	३.१४.६५	एवं सतुमुलं युद्धं	३.५८.१०१	एवं हि ब्रुवातां तेषां	३.४३.४	एवमाज्ञां सुरेशस्य श्रुत्वा	२.५०.५७
एवं यज्ञवरारहेण भूत्वा	१.४१.३८	एवं वृकाश्च तान्दुष्ट्वा	२.६.१	एवं स तु विनिश्चित्य	१.२६.५६	एवमकूरवचनैश्चोदितो	२.१२१.५८	एवमात्मानमात्मा मे	१.४५.४७
एवं यतातेः शापेन जरा	१.३२.१२१	एवं वृकैश्च दीर्णैस्तु व्याध	२.८.३८	एवं स निश्चयं कृत्वा	२.८५.२०	एवमक्षतं चारित्र्यैः	२.२२.१७	एवमादि क्रिया कार्या	३.७४.२७
एवं यद्यपरादोऽहं कारणी	१.५३.३३	एवं वै सहिता राजन्	३.१२७.१०	एवं सदिश्य सर्वास्तान	२.५२.४६	एवमद्भुतवीर्याजा	३.५६.१०३	एवमादि जगन्नाथः	३.७७.१६
एवं राजा विचिन्तयाद्य	२.२८.५	एवं व्यतीता रजनी	२.६६.६८	एवं सन्वयिता साक्षी	२.११८.११	एवमन्योन्यसंजल्पं श्रुत्वा	२.५५.६४	एवमादिमहागर्वस्तस्य	३.६१.६
एवं राज्यं च ते स्फुटं	१.२०.५१	एवं अतानि देविभिः	२.८१.३६	एवं मन्वानतः कृत्वा कृष्णे	२.४६.२४	एवमस्त्विति कृष्णेन	२.७५.४०	एवमादि विलप्यन्तं	३.१३०.१५
एवं लालप्यमानं तु	२.५२.१८	एवं शपति विप्रयो	२.११२.२३	एवं स मणिमाहृत्य	१.३८.४३	एवमस्त्विति तं देवो	२.७६.१८	एवमादिश्य तान् ब्रह्मा	१.५३.७७
एवं वत्सान्पालयन्तो	२.८.७	एवं शप्ता मुनांसर्वांन्	१.३०.३२	एवं संपूजयामास त्वष्टा	१.६.५०	एवमस्त्विति तं शक्र	२.५७.४६	एवमादिश्य देवेशो	२.१०४.६२
एवं वरान्वहन्प्राप्य	२.१२७.१	एवं शान्तमनाः कृष्ण	२.१६.३६	एवं संपूज्य ते तत्र	१.२६.५१	एवमस्त्विति तानूचुः	२.८३.५१	एवमादीनि वै विष्णो	२.४६.३७
एवं वर्षं जगन्नाथ	३.८८.३८	एवं शुश्रूषवो दाने	३.४.४४	एवं सम्पूज्य राजानं	२.५५.५३	एवमस्त्विति तान्सर्वांन्	१.४६.२६	एवमादीनि सूक्तानि	१.२६.३६
एवं वाग्विषमस्तुज्य	२.२८.२६	एवं शूरा विसर्पन्तो	३.२१.१७	एवं सम्पक् प्रवृत्तेषु	१.५१.१६	एवमस्त्विति तां गृह्य	१.४५.७३	एवमाभांशे क्रोधा	३.१०.४०
एवं वादिनामास्मेष्टं	२.६६.४६	एवं शोनक संक्षेपाद	२.१२८.४१	एवं सं गतवान्कंसो	२.२.८	एवमस्त्विति देवेशः	३.८३.२६	एवमाभाष्य तान्सर्वांन्	२.५२.४
एवं वाराणसी शपा	१.२६.६६	एवं श्रुत्वा प्रयत्नं वै	२.२.६	एवं सर्वाणि संन्यानि	२.१०५.६०	एवमस्त्विति दैत्येशो	३.७१.२३	एवमाभाष्य राजानं	२.५४.७
एवं विज्ञाप्य देवेशं	२.५५.११			एवं सर्वेन्द्रियारम्भान	३.२४.१५	एवमस्त्विति संहृष्टः	१.४६.१	एवमातंकलत्रस्य	२.३१.२०

एवमालोकयानः स द्वारकाः २.६६.१	एवमुक्ता दैत्यसुता २.११७.२०	एवमुक्तो विनिश्चित्य १.२६.२५	एवमुक्त्वा पति भोजं २.३१.५२	एवमेकार्णवीभूते ३.१०.१
एवमावामनुप्राप्ती मुनि ३.३६.४३	एवमुक्तानिरुद्धेन उवा २.११६.२०३	एवमुक्तोऽस्मि कृष्णेन २.११४.२४	एवमुक्त्वा पुनस्तांस्तु २.११६.८४	एवमेकार्णवे लोके ३.७.६
एवमिध्वाकुर्वशात् २.३८.३५	एवमुक्ता निवृत्तास्ते २.८५.७	एवमुक्तो स्थितो वीरो २.७३.८१	एवमुक्त्वा प्रदुद्रावतदा १.२०.१३६	एवमेकैकशः सर्वे ३.६४.३१
एवमोष्यविशं प्राप्तां देवीं २.६७.२७	एवमुक्ता महाभागा भर्त्रा १.२७.३०	एवमुक्ता स्थितो वीरो २.७३.८३	एवमुक्त्वा महत्सैन्यं ३.५६.६१	एवमेतत्पयो दुग्धं २.१५.१८
एवमुक्तः स दूतस्तु ययो १.५४.४५	एवमुक्तास्ततः सर्वे ३.६८.१७	एवमुक्त्वा गता हंसा २.६६.१८	एवमुक्त्वा महादेव २.७४.४६	एवमेतत्पुराणेषु वेदान्ते ३.१०.६७
एवमुक्तः स शुक्रेण ३.७१.१५	एवमुक्तास्तु ताः साध्व्यो २.८१.१८	एवमुक्त्वा गिरिः शृङ्ग २.८७.१५	एवमुक्त्वा महादेवं २.१२६.१४१	एवमेतत्पुरावृत्त मम १.२४.३३
एवमुक्तस्ततः कृष्णः २.५८.३५	एवमुक्तास्तु ते गोपा २.२०.१४	एवमुक्त्वा गिरिशृङ्गां २.४२.७८	एवमुक्त्वा महानादं २.६७.१२	एवमेतन्मया पूर्वं हितार्थं १.५३.४६
एवमुक्तस्ततः प्राह २.५८.३१	एवमुक्ते तदा देव्या २.११७.१७	एवमुक्त्वा ततः कृष्ण २.३५.८	एवमुक्त्वा महाबाहुर्वैन २.४७.४०	एवमेतुरा गीतं मार्कण्डेयेन १.२४.३७
एवमुक्तस्ततो बाणः २.११६.३५	एवमुक्ते तु नृपतिर्दरदो २.४३.५५	एवमुक्त्वा ततः कृष्ण २.४१.५७	एवमुक्त्वा महाराज १.२०.११३	एवमेतानि कर्माणि २.१०२.४०
एवमुक्तस्तदा तेन ३.७१.३४	एवमुक्ते तु यदवो गृह २.५८.११	एवमुक्त्वा तु तां भार्या १.२७.२२	एवमुक्त्वा यदुं तात १.३०.२६	एवमेतासु नारीषु २.१२०.२४
एवमुक्तस्तदा देवं विष्णु ३.६६.५३	एवमुक्ते तु वचने २.११६.२०	ववमुक्त्वा तु ते सर्वे १.३.५६	एवमुक्त्वा वा वचो धोरं २.४४.५५	एवमेते त्रयो लोके ३.१७.१६
एवमुक्तस्तु कृष्णेन २.१२३.३८	एवमुक्ते तु वचने २.१२३.१६	एवमुक्त्वा तु ती वीरो २.३६.१६	एवमुक्त्वा स भगवान् १.४१.७५	एवमेव कुबेरस्य ३.६०.२०
एवमुक्तस्तु मां क्षुब्ध १.५३.२८	एवमुक्ते तु वचने ३.६८.१५	एवमुक्त्वा तु भगवान् १.४१.५७	एवमुक्त्वा स भगवान् ३.४१.२०	एवमेव च भूयिष्ठो २.७४.१६
एवमुक्तस्तु कृष्णान २.७२.१७	एवमुक्ते त्वग्धकेन २.८७.२४	एवमुक्त्वा तु भगवान्साढ ३.६६.३१	एवमुक्त्वा स भगवान् ३.४७.३४	एवमेव च विस्तारं ३.१७.६
एवमुक्तस्तु दैत्येन स्वयं १.४१.५५	एवमुक्ते बद्धो २.१२१.१०२	एवमुक्त्वा तु राजानं २.५१.५०	एवमुक्त्वा स राजर्षि १.३०.४५	एवमेव महं भीम त्वत् २.११६.७२
एवमुक्तः स्मितं कृत्वा २.११०.२३	एवमुक्तेवज्जनाभः २.६१.२०	एवमुक्त्वा तु राजा स २.५२.१३	एवमुक्त्वा सुरगणान् १.४८.८३	एवमेवेति तं विप्राः ३.८६.१८
एवमुक्ता ततो गंगा २.११०.४१	एवमुक्ते जयन्तश्च २.७३.५६	एवमुक्त्वा तु वं कुर्यात् २.४७.२५	एवमुक्त्वा सुरश्रेष्ठं २.५०.२३	एवमेवेक्षु बाणं तं कृष्णं २.५१.१६
एवमुक्ता तथा बाला २.११८.३२	एवमुक्तो देवसंक्षेपं रसिहो ३.४७.१६	एवमुक्त्वा तु स तदा २.२४.७५	एवमुच्चरितं वाक्यं २.१२४.१०	एवमेवैव भगवान् ३.१०.१०
एवमुक्ता तु दाशेयी १.१८.४५	एवमुक्तो भगवता ब्रह्मणा १.४८.६६	एवमुक्त्वा दानवेन्द्रो २.२८.६	एवमुत्तमरत्नानि २.६३.११	एवमेव गिरिः क्षिप्रं २.४२.३८
एवमुक्ता तु हरिणा २.६७.३३	एवमुक्तो मृनिश्रेष्ठ २.११०.२४	एवमुक्त्वा नरेन्द्रास्तानां २.५०.८८	एवमूर्जितवीर्यस्य मम २.३१.४५	एवमेव दशार्हाणां २.१०२.३६

एवमेव निरुद्धा वै तत	२.२२.४५	एष ते द्रुपदस्यादौ	१.२०.७६	एष नारायणस्यायं	३.४०.२०	एष वामभयोरस्तु	२.१०३.१६	एषोऽग्निरन्तकाले तु	१.४५.६३
एवमेव महाबाहुरिष्वाकु	१.४१.१५५	एष ते पातयिष्यामि	३.६६.४	एष नारायणश्रीमान	२.५५.६०	एष विष्णुः प्रभुर्देवो	२.५०.४८	एषोऽनन्तः पुरा भूत्वा	१.४८.१८
एवमेव महाबाहुः	२.१०२.२८	एष ते पादयोर्भूष्णा पुत्र	२.४.५६	एष नारायणो भूत्वा	१.४२.४	एष विष्णोः सुरेशस्य	१.४१.१२०	एषोऽहमस्य विदधे	२.११६.१६६
एवमेव महाबाहुः शम्बरं	२.१०४.६४	एष ते पोरवोवशो	१.३२.११६	एष नो वृत्तिदाता च	३.३०.४	एष वै पितृभक्तश्च	१.१६.४६	एहि केशव तातेति	२.२५.१८
एवमेवाऽपि गौर्धर्मं	२.२१.१२	एष ते प्रथमः कृष्ण	२.१६.७१	एष पौष्करको नाम	१.४१.२७	एष वो मोक्षदाता च	३.८६.५	एहागच्छ नरश्रेष्ठ	२.३७.१६
एवमेवा पुरीं श्रिं प्रं	२.३५.४६	एष ते प्रथमः कृष्ण	२.३६.७६	एष बाणं रणे जित्वा	२.१२७.१३६	एष शक्रस्य संदेशः	२.५०.३४	एहावयोर्बहिर्गुह्यं	३.१३.११
एवमेवा हितायैव	१.५०.३४	एष ते यदि वृत्तान्त	२.१२१.७६	एष बाण स्थितो युद्धे	२.१२४.१३	एष शन्दो महानादः	३.१६.१६	एहो जय मां बाण	२.१२६.५१
एवमेवोऽवनीर्णो वै	२.१२८.२३	एष ते स्वस्य वंशस्य	२.३८.५२	एष ब्रह्मनयो यज्ञो	३.२०.२२	एष श्रेयः पथो विप्र	३.१०८.७	एहो हि राजशृङ्गात्मन	२.३१.४८
एव वै वामनो नाम	२.७२.१०३	एष तेऽहं शिरः कायात	३.६६.७	एष ब्रह्मविदां मध्ये	१.५०.४८	एष सर्वतर्कं कर्तुं मृतः	२.२४.५७	ए	
एवस्मिन्नेव काले तु	२.२१.१२	एष ते वामनो नाम	१.४१.१०३	एष भूमिचरोऽहं वै	२.४२.४०	एष संसारविभव	३.८६.१२	एष्यनानात्व संयोग	३.६६.३०
एष कसस्य सहजः	२.२४.२२	एष ते वैष्णवः श्रीमान्	१.४१.१११	एष मानुष्यको यत्नो	२.२.६	एष सप्तविंशतिदेशो	१.७.५८	एषवाकी चाभवद्भार्या	१.३६.३०
एष कृष्ण इति ख्यातो	२.२२.२१	एष ते सुभ्रुसंदेशः	२.४६.५१	एष मे कृष्ण संदेशः	२.२४.७३	एषा गच्छाम्यहं भीरु	२.११८.६४	एच्छेतां तो तदा द्रष्टुं	३.१०६.१५
एष कौरव्य तत्त्वेन	३.४०.२५	एष त्रेतायुगविधिबिहृतो	३.८.६	एष मे गात्रमासाद्य	२.१०७.१८	एषा ते स्वस्य वंशस्य	१.४५.७२	एन्द्रं पाशुपत ब्राह्मं	३.४५.७
एष घोरो गृहः स्वाति	२.२३.२५	एष देवान् परिभवत्लोकान्	१.४८.६०	एष मे निविशता बुद्धि	२.५२.३६	एषा द्वादशसाहस्री	१.८.१६	एन्द्रं वैष्णवमस्यैव मुने	२.७०.३४
एष चैकशतं हत्वा	२.१०२.१६	एष घन्यो हि घन्यानां	२.१२८.२८	एष मे बिभ्वस्तात	२.३७.३५	एषा नक्षत्रेयसी यात्रा	२.३६.१४	एन्द्रस्तं पतितं भूमौ	२.८५.१६
एष तं सगणं दैत्यं	१.४१.७४	एष धर्मो नरेन्द्राणामिति	२.५१.७	एष मे संशयो ब्रह्मन्नेव	१.४०.६३	एषा च परदाराणामभवद्	३.३३.२७	एन्द्रेण पयसा तित्त	२.१०.१२
एष त विफलं यत्नं	१.२७.७	एष धर्मो नृलोकेऽस्मिन्	२.५०.८७	एष मे हृदयाश्वासो	३.६६.३८	एषां तु तुमुलः शब्दः	२.४२.१६	ऐरावतगतः शक्रः सर्वं दैव	२.६०.३८
एष ते गर्वमस्त्रिलं	३.१००.२१	एष धर्मो हि धर्माणां	३.२८.८३	एष मोहं यतः कृष्णो	१.१२.१६	एषां घृस्माराणाङ्गानां	२.६.४	ऐरावतगतश्चाहं स्वयं	२.१८.५
एष ते त्रिषु लोकेषु	१.३२.४६	एष वाता विधाता च	२.१२८.३०	एष लोकमयो देवो	१.४६.६	एषां ह्यन्तहिता माया	२.३२.४०	ऐलपुत्रावभूवुस्ते सर्वे	१.२७.१
एष ते दर्पशमनं करोमि	२.१३६.६७	एष नः परमो राजा	३.३०.३	एष वां भक्षयिष्यामि	३.१२६.२२	एषोकमस्त्रमैन्द्रं च	३.४४.१०	ऐश्वर्यगुणसंपन्नो	३.५१.५२

ऐश्वर्यभूतो भूतात्मा	३.१६.१३	कंसराजवधार्थाय	२.४६.३१	कंकवायसमुद्राणां	२.१०६.५५	कथं चात्पेन कालेन	२.११४.७	कथमस्यमया कार्यं	२.१४.३३
ऐश्वर्यं प्रतिपन्नाः	३.४०.७	कंसराजस्य च सर्वा	२.५५.२०	कच्चित्तव महाबाहो	२.११६.६७	कथं तव सुतस्तेषामग्रतो	२.५१.८	कथमस्य स्तनं दास्ये	२.१०४.१२
ऐश्वर्येणाश्वमाविस्य	३.५.३६	कंसस्तु रितरं वदन्वा	२.१०१.५३	कच्चिदिन्द्रस्तव भयात	२.११६.४२	कथं तस्यासतस्तत्र	१.४६.४	कथमात्मा विमज्जः	३.३६.७
श्री		कंसस्य निधन चापि	३.१३४.१६	कच्चिदोश्वरतोषेण	२.११६.४६	कथं घन्वन्तरिद्वयो	१.२६.११	कथमासीज्जगद्धेतो	३.१०३.४
ॐ नमः कात्यायन्यै	२.१०७.६	कंसस्य पुरतो न्यस्ता	२.४.३५	कच्चिद् त्रिभिः क्रमैः	२.११६.४६	कथं धारयिता चासि	१.५.५०	कथं मुक्तं नारदेन	२.२८.३६
ॐ नमो स्त्वनन्तपतये	३.७२.६४	कंसस्य भयमंत्रस्तं	२.२६.७	कच्चिद् वृषध्वजस्तात	२.११६.४८	कथं प्राचेतसत्वं	१.२.५३	कथमेकपदे त्यक्त्वा	२.४४.४७
श्रीकार ये त्वधीयन्ते	३.१६.१४	कंसस्य हि वधश्चेयान्	२.३२.७	कच्छपवत्पापहर्ता च	३.६६.२७	कथं बहुयुगे काले	१.११.१	कथाभिः पूर्ववृत्तभिः	१.५३.१६
श्रीवधोऽशः त्रिवयायोनि	१.४६.८	कंसस्याथ मुखे स्वेदो	२.३०.६१	कच्छपो हारितश्चैव	१.२७.४८	कथं बालो विगतभीर	२.२८.२	कथितं तत्त्वमिच्छामि	२.१०४.२२
श्री		कंसादीश्चापि तान्	१.५५.१३	कच्चिद् द्वीपान्तरं	३.१०२.७	कथं विनाशिताः पुत्रा	१.३.१५	कथितं भवता पुण्यं	१.१.८
श्रीप्रसेनिः समालोक्य	२.३०.४	कंसेनापि समाग्रतः	२.३०.६	कटाक्षैरिगितैर्हार्तैः	२.८८.४८	कथं विरोधं यदुभि	२.८३.३२	कथितानि क्व ते तात	२.१२६.६५
श्रीत्पातिकमिदं घोषैः	२.७.३२	कंसे विनिहते कृष्णे	२.१६.८६	कटाक्षो विकटाग्रश्च	३.४२.१३	कथं वै क्रोधमागच्छेद	२.१०४.३६	कथितो विष्णुरित्येवं	३.६६.२२
श्रीवैष्णव्यां वरं	१.१५.४	कंसो नाम विशालाक्षो	१.५४.६५	कट्वाङ्गुलैरपि	२.८६.६२	कथं वै श्राद्धदेवत्व	१.१६.१	कदम्बकोटरे जाता	२.४१.१३
श्रीवैष्णु जातकर्मादि	१.१५.६	क आश्रयस्तवान्यो	१.३०.२८	कण्टकीभिः प्रवृद्धभिस्तथा	२.६.२२	कथं सन्ने सोमपानं	२.८३.१४	कदम्बनीपार्जुन केतकाना	२.६५.१७
श्रीवैष्णवेमृचकिस्य	१.२७.४१	क इति ब्रह्मणो नाम	३.८८.४८	कण्टरीकोऽपि धमतिमा	१.२४.३१	कथं स नाथोऽयं	३.७१.१६	कदम्बाश्चैव मग्याश्च	३.४१.७१
श्रीवैष्णु वसिष्ठपुत्रश्च	३.६६.४	ककुत्स्थकन्यां गां नाम	१.३०.३	कण्डूयमानः सततं	२.१.३१	कथं समुद्रः सन्धोदः	२.११४.४	कदाविच्छतया सादं	३.७३.१६
श्रीवैष्णु वसिष्ठपुत्रश्च	१.७.१२	ककुत्स्थकन्यां गां नाम	१.३०.३	कत्थनं सर्वकार्यं हि	३.१००.४२	कथं स सगरो जातो	१.१४.१	कदाविच्छारयन्नेव	२.११.२८
श्री		ककुत्स्थकन्यां गां नाम	१.३०.३	कथं कार्यं मिदं कार्यं	२.११६.३३	कथं स्वपिति घमन्ति	१.४६.५	कदाचित्तु तदा कृष्णो	२.११.१
कंस कंसात्मनाशाय	२.४.४३	ककुत्स्थकन्यां गां नाम	१.३०.३	कथं कालस्य महतो	३.३१.३	कथं ह्यकीर्त्या	३.२.३७	कदाचित्काशिराजस्य	१.३४.५
कंस नारी विलापाश्च	२.३२.३	ककुत्स्थकन्यां गां नाम	१.३०.३	कथं च भगवान्विष्णुः	१.४०.८	कथमंशावतरणं कुर्मः	१.५३.६	कदाचित्तु सपक्षास्ते	३.३८.१
कंसः पापवरश्चैव	२.३२.६	ककुत्स्थकन्यां गां नाम	१.३०.३	कथं च शक्तास्ते दातुं	१.१६.१५	कथमन्येन जातस्त्व	२.२८.४०	कदाचिद् द्वारकां सर्वा	२.७५.६६
कंसमाता ततो राजन्	२.५५.७८	ककुत्स्थकन्यां गां नाम	१.३०.३						

कदाचिद्विह्वलं च तस्या	२.१२१.५४	कन्याहेतोर्महातेजा	२.४८.७	करं गजकराकार	३.५५.७०	कर्णधारैर्गुहीनास्ता	२.८८.६२	कर्मप्राप्तैश्च पशुभिः	३.२३.१६
कदाचिद्वहदत्तस्तु	१.२४.२	कन्याहेतोस्सुनं ज्येष्ठ	२.४६.४४	करवीरपुरं कृष्ण	२.४३.८५	कर्णानालीकानाराचा	३.५४.१४	कर्मभिः कुत्तिसतरैर्मयः	३.१७.४३
कदाचिन्मृगयां यातः	१.३८.२७	क पश्य पुनः सख्ये	२.६६.६	करवीरपुरं चैव रम्य	२.३६.११	कर्णं पर्वण्यपि तथा	३.१३२.६४	कर्मभिः पूर्वजं पूर्वैः	३.१३३.५२
कद्रुपुत्र सहस्रस्य	२.१२०.२२	कपित्थवृक्षमाश्रित्य	२.८२.८	करवीरेश्वरेश्वरं	२.४६.४६	कर्णस्रोतोद्भवो तो	१.५२.२२	कर्मभिश्च तपोयुक्तं	३.२३.२५
कनकमणिविचित्र	३.४२.२०	कपिलश्च महोपुत्रो	३.४६.७५	कराम्यां कारमाहृत्य	३.६७.१६	कर्णाङ्गिणो नतो देव्यः	२.६५.४७	कर्मभिस्त्वमरो विद्यां	२.४२.४६
कनकरजतभवित्र चित्र	३.४६.३१	कः प्रभुस्तस्य वृक्षस्य	२.८६.४६	कराम्यां राजपुत्रस्य	१.२०.११४	कर्तव्यानां च कर्तारो	२.२२.१३	कर्म भूमिर्यनुष्णाणां	१.५१.२४
कनीयसी तु या तस्य	१.१५.३	ककवर्गं भवेच्छुक्रं	१.४०.५२	करार्थं यदुमुख्येभ्ये	३.११५.२६	कर्ता चैव विकर्ता	३.३३.३५	कर्मन्दिवाणि चान्यानि	३.८८.२५
कन्या त्रिगर्तराजस्य	१.३५.१२	कमण्डलुं तदा राजन्	३.११०.१३	करालाय च मुण्डाय	३.८७.२४	कर्ता त्वं भूतभक्ष्येश	३.१११.४६	कर्पणायुधकृष्ठास्मि	२.४६.४८
कन्यापुरे कुमारोऽसौ	२.१२७.६	कम्पयन्ताविव हरि	३.१३.७	करिष्यामि वचस्तुभ्य	३.७५.५	कर्ता समस्तस्य	३.८०.३८	कर्पणेनास्य गर्भस्य	२.४.६
कन्यापुरे महानादः	२.६०.६	कम्पयन्तो भुवं वीरो	२.४३.६२	करिष्यामि विधानं	२.६६.६५	कर्तुं कारणकर्तारो	२.१२५.३७	कर्पणे वृक्षयोश्चैव	२.२२.५
कन्या भवन्ति तनया	२.८३.३७	कम्बलाजिनवासांसि	२.६७.२८	करिष्याम्यहमप्येतान्	३.२७.३२	कर्तारो चापहतारो	२.१२५.३६	कर्पन्तो शवयुधानि	३.७६.४
कन्याभावाच्च सुष्ठु मनो	१.१०.२२	कम्बलाश्वतरा नागी	२.२६.५५	करिष्ये देवताः सर्वा	३.६८.१२	कर्ता शिल्पसहस्राणां	१.३.४७	कर्पकाणां कृषिवृत्तिः	२.१६.३
कन्यां च वामुदेवाय	१.२६.३४	करकानपि दद्याच्च	२.७६.५१	करिष्ये वचनं तेषां	२.५४.५	कर्म कर्तति राजेन्द्र	३.१८.२६	कर्पकान्पुङ्गवैर्वाह्यै	२.१६.४२
कन्यां भानुमतीं नाम	२.६०.२	कर चान्डुहस्तपिर्महिषां	२.२६.२६	करिष्ये विबुधश्रेण्याः	३.६८.१३	कर्मक्षयाद्विमुच्यन्ते	३.१८.२३	कलत्रक्षणं कार्यं	२.६६.६४
कन्यार्थं न च कृष्णो	२.६०.१५	करजद्विजचिह्नानि	२.८८.१७	करीषपांगुदिग्धांग	२.२०.३०	कर्म चासायते तत्र	२.८३.२४	कलाकाष्ठासुहृतां	३.३७.१८
कन्यार्थं रत्नलुब्धास्तु	२.८४.५६	करजाम्नावलीढं तु	२.६६.७	करीषेषु प्रकल्पतेषु	२.२५.८	कर्मणः कर्मयोगजो	३.१८.३३	कलामापाकरम्येषु	२.१६.२७
कन्यार्थं चागतः कृष्ण	२.५०.२	करञ्जे दीपकं दद्यात्	२.८१.३	कहवाधिपतिर्वीरो	१.३४.२७	कर्मणा चैव कर्ता च	३.३२.४६	कलिङ्गराजस्तच्छ्रुत्वा	२.६१.३३
कन्यार्थं यततानेन	२.४८.११	करदः कृष्ण इत्येवं	३.११५.३७	कह्वेषु प्रसूतोऽयं	२.३०.२४	मर्मणा तेन महता	३.६१.४०	कलिङ्गाधिपतिश्चैव	२.३४.१४
कन्या विघ्नं च कुर्वाणो	२.५१.१५	करदो वामुदेवो हि	३.११५.३५	करेण बिभ्रत्सह	३.८५.११	कर्मणा मनसा वाचा	२.७८.१७	कलिवर्षसहस्रं च	१.८.१५
कन्या हि मम या देया	२.८३.१५	करन्धमस्तु त्रैसानो	१.३२.११८	करेणाघः प्रदेष्टे तां	२.६४.७	कर्मणामानुपुण्याच्च	१.४०.७	कलुषं तस्य यच्चितं	३.८०.७५

कलुषो नाम राजेन्द्र	२.५१.४३	कश्यपाद्याश्चमुनयः	२.१०६.१२	कस्यचित्तवय कालस्य	२.१०१.५	काञ्चनस्तम्भनि व्यूहं	३.१३२.३८	कान्यजन्तिस्मलोका	१.१६.३७
कल्की विष्णुयशानाम	१.४१.१६४	कषायोपल्पवे लोके	३.४.१४	कस्यचित्तवय कालस्य	३.५.११	काञ्चनाग्राणि भास्वन्ति	२.६८.३३	कामगेन रयेनाशु	२.२८.६७
कल्पक्षये महाराज	३.६६.६	कः समुत्सहते ज्ञातु	३.७.१५	कस्यचित्सूयं संकाशान	३.३७.२६	काञ्चनापीडजघना	३.२८.५७	कामपत्नी न कान्तिया	२.१०८.२६
कल्पयामि यथाबुद्ध्या	२.६३.५८	कस्तपोधोरशिरसो	३.१०.३६	कस्य स्वमिति यच्चाहं	२.२८.१०३	काण्डे स्पृष्टाः श्रोत्रियाश्च	३.३.७	कामपत्नी प्रणम्याथ	२.१०४.६३
कल्पान्तरसहस्रं पु	२.७८.१३	कस्तावर्षयितुं शक्तो	१.५५.२६	कस्य पक्षपरिक्षेपः	२.१२१.६८	कात्यायनी स्तूयसे	२.१२०.३३	कामपालं पुनर्विष्णु	३.७५.२६
कल्पान्ते वारिधाराभिः	२.४२.८४	कस्त्व कश्चोद्भवस्तुभ्यं	३.१३.१२	कस्य पुत्रो समुत्पन्नी	३.१०३.८	कादम्बरीपानकलो	२.८८.१२	कामपालं महाबाहु	३.७५.२५
कल्पितेयं मया भूमिः	२.५८.५	कस्त्वं पुरुषमध्यस्थ	३.१३.१०	कस्य मुक्तिः समायाता	३.७८.२६	कादम्बरीपानमदोत्कटस्तु	२.८६.१६	कामपालं शरैणाशु	३.६८.५
कल्पावदण्डविमला	३.५४.१३	कस्त्वं भवसिद्धाणां	२.२०.५	कस्यशस्त्रवै प्राणान्	२.१२१.१०१	कादम्बरीमदकलं	२.४१.१४	काम कामोऽस्तु तस्यैव	२.६७.१४
कल्पावपादस्य सुतः	१.१४.२३	कस्मादिदं समुत्पन्नं	२.११७.३६	कस्यासि ब्राह्मणे	३.७१.६	कादम्बरीमदक्षीवो	२.४२.७६	कामं तस्य गतिः सूक्ष्मा	१.४६.८
कल्पावी च रथोष्मा	२.१०६.२३	कस्मादेवो निरुद्धस्य	२.१२१.१४	कस्यैव बिस्तृतो	३.७८.२५	काद्रगेयाश्च बलिनः	१.३.१११	क मं प्रियाणि राजानो	२.७१.२
कल्याण गुणसंपन्ने	२.६५.२०	कस्मिन्देशे नृपो जज्ञे	२.५६.६	कहिचिद्विक्मणापुत्रा	२.१०६.४	काननैर्नन्दनप्रस्यं स्तथा	२.६८.१३	कामं वद नृप त्वं	३.१००.३६
कल्याणनाममोत्राणां	२.६५.६	कस्य किं वा वरं देवा	३.६७.१५	काश्चित्केशेषु जग्राह	१.४८.५२	कानिचिच्छिथिलानीव	२.१८.३६	काममेतन्न वक्तव्यं	२.७०.२६
कल्याण भाजनं ये तु	१.१६.१६	कस्यचित्तवय कालस्य	२.६.२२	काकपक्षधरः श्रीमान्	२.११.२	कानिच्छतो द्रुत	३.१३.२५	काममेवविध पोत्रो	१.२७.३३
कवचासिगदाप्रास खड्गं	२.१२४.८	कस्यचित्तवय कालस्य	२.२१.१०	काकपक्षधरैर्बालिगो	२.५.२७	कानीनं चापिजानामि	२.१६.६७	काम सन्तापसन्तप्तः	२.११६.५१
कव्यं पितृणामु चित्तं	३.६६.५०	कस्यचित्तवय कालस्य	३.३३.३	काकी काकनजनय	१.३.१०७	का नु वाक् स्तुतिरूपा	३.८७.३६	कामस्य वशमापन्नो मनो	२.२८.८४
कश्च कृष्णः पुरः	३.११३.२०	कस्यचित्तवय कालस्य	२.३४.३	का च धारयितुं शक्ता	१.५५.४८	कान्तनारीनरगणा	२.५८.४६	कामोप भोगतुल्या हि	२.६२.१६
कश्यपश्चादितिश्चैव	२.७५.३४	कस्यचित्तवय कालस्य	२.३७.३	काचिच्छकुनिका राजन्	१.२०.८१	कान्तं पपपलाशाक्षं	२.११८.५४	कामोऽयं पूर्वदेहे	२.१०४.५५
कश्यपस्तत्र भगवान्	३.६७.२६	कस्यचित्तवय कालस्य	२.४६.१	काञ्चनं चित्र सन्नाहं	२.१०५.१७	कास्तारेष्ववसन्तानां	२.२.५४	काम्पित्ये नगरे ते तु	१.२३.१६
कश्यपस्य मनोश्चैव	३.३६.३०	कस्यचित्तवय कालस्य	२.५६.१	काञ्चनं चैव दातव्यं	२.८०.३६	कान्तं कण्डलधर	२.४२.८०	काम्या नाम महाबाहो	१.२.६
कश्यपस्योरसः पुत्रः	३.३७.२३	कस्यचित्तवय कालस्य	२.१०१.४५	काञ्चनं शक्तितो दद्यात्	२.७६.७२	कान्त्या लक्ष्म्या प्रसादेन	२.१७.८	कारण्डवाकुण्डलिनीं	२.११.३७

कारयस्त्राधिवासं च तत्र	२.५५.१११	कालस्तु बलव्याजन्दु	२.३२.४६	कामः शलवच द्रावेतो	१.२६.७	किञ्चिदाकुलिताग्रेण चरणेन	२.६६.८	कि तद्भूतं समुद्भूत	२.२२.२५
कारयिष्यामि गोयज्ञं	२.१६.४४	कालस्त्वं हि विनाशाय	२.२२.७०	काशस्य काशयो राज	१.२६.६	किञ्चिदभ्युद्यते सोमे	२.२५.६	कि तस्या व्रतकीः कार्यं	२.८१.७
कारुण्यं खलु नारीषु	२.२२.५	कालस्य परिणामेन	१.१६.१६	काशिकश्च महासत्त्वस्तथा	१.३२.२०	किञ्चित्सव्यापवृत्तेन	२.२६.५२	कि तु कर्म विशेषेण	३.३६.१६
कात्तंवीर्यस्य तनया वीर्यं	१.३३.५०	कालायाः कालकल्पस्तु	३.३६.४०	काशिकस्य तु काशयो	१.३२.२१	कि तु कर्तुं यथा शक्यं	२.११८.५७	कि त्वनुस्मरणात्तदहं	२.४६.५
कामुं कर्मिन्तरङ्गोर्ध्वबाणा	३.५७.१६	कालिन्दी गोमती पुण्या	२.१०६.२८	काश्चनाः पर्वताः	३.२७.७	कि तु लोकाहितायार्थं	२.३२.४६	कि त्विदं स्यादिति	२.६६.२०
कार्या कार्यं समुत्पन्ने	२.७१.४	कालिन्दी मित्र बिन्दां च	२.६०.४१	काश्चनीमिः शिलाभिश्च	३.३५.२६	कि तु वरुप्रति ते पुत्रा	२.६.१०	कि तु गुहेन मे प्रेम्णा	२.६७.२४
काल एव नृणां शत्रुः	२.४.५३	कालियं चापि जानामि	१.५५.७	काश्चित्काष्ठमयस्तेषु	२.८८.२७	कि त्वद्भूतमिदं लोके	२.५५.६७	कि नु ते कारणं वीर	२.३१.२२
काल कल्पश्च मुसलैः	१.४७.११	काली विचित्रवीर्यं तु	१.३२.११२	काश्चित्प्रमुदितास्तत्र	२.१२८.८	किन् युद्धयत वै शूरा	२.४३.५३	कि भयेनास्य नस्तर्व	२.४६.२६
कालः कालं स्वपयति	३.७.२०	काले खलु नृपः प्राप्तो	२.३५.६	काश्चित्प्राणान् जहूः	२.१८.२३	किन् रोरगयसाणां	२.११८.६५	कि मया देव कर्तव्य	२.५८.६६
कालकूटं विषं तद्धि	३.२८.३४	काले खलु नृपः प्राप्तो	२.४१.५५	काश्चिदाक्रम्य क्रौडेन	२.१८.२४	किन् यो यक्षकन्याश्च	२.११७.२२	कि मां क्षिपसि रोषेण	२.२८.६६
कालचक्रं च यद्द्विभ्यमनित्यं	३.६६.४२	काले गच्छति तो सीम्नो	२.७.१	काश्यां सुपाश्वं तनय	२.१०३.२८	किन्नु वक्तुं तथा	३.६२.१८	कि मां पिता वा माता	२.७०.३३
कालजः कालमेधामः	१.४६.३१	कालेन चैव निर्मुक्तो	३.८१.२०	काश्या शारद्वनी	३.३६.४७	कि कर्मार्थः किमिहन्तः	३.४.२	कि मां वक्ष्यन्ति हविता	२.२८.६६
कालदेशानुरूपं च देयं	२.७६.२६	कालेनाभिहतः कंसः पूर्वं	३.३२.४१	किस्विदित्येकमनसस्तथायां	२.५३.७	कि करिष्यत्यसौ क्रुद्ध	३.१११.१८	कि मे स्नानेन दुस्स्नानं	२.६.११
कालपाशं सपाविध्य	१.४४.१३	कालेन विपरीतास्ते	३.२.२४	कि कुराणां सहस्राणि	२.६४.३८	कि करिष्यामहे सर्वे	२.२२.८१	कि मकार्षमहं देवि विप्रियं	२.६६.४०
कालप्रह्लादयोर्दुःखम	२.५६.१०२	कालो नयः संनतिश्च	२.१०६.४५	किङ्कणीजाल निधोर्वं	१.४३.३	कि करिष्यामि मदात्मा	३.१११.६४	कि मकार्षमहं मोहाबीश्वर	२.६७.१८
कालभूतमिदं सर्वं हेतु	२.४.६१	कालोऽयं समनुप्राप्तो	२.११२.८	किङ्कणीजाल निधोर्वं	३.४६.४२	कि कुर्वः कि नु नः	३.७७.१५	कि मत्र विहितो दोषो	२.४६.११
कालयुक्तमिदं तात	२.३२.३२	कालो यास्यत्यविरसं	२.१२७.१४२	किङ्कणीशतनिधोर्वं	२.११६.१३८	कि खल्व कुशलं लोके	१.५०.४७	कि मर्थं कौकुमुं वासो	२.६६.२६
कालरात्रिं कामगमा	२.१२०.११	का व्यथा कि शरीरं	२.११७.३५	किङ्कणीशतवृष्ट	३.५१.२७	कि च त्वं साधु	२.२२.७५	कि मर्थं गोपवेष्टेण रमसे	२.२०.७
कालरात्रिं नमस्तुभ्यं	२.१०७.८	का व्यथेति मुखे चेदं	२.११७.४१	किञ्चानाभरणं गात्रं	२.६६.३१	कि चाहं त्व दास्यामि	१.४८.६४	कि मर्थं च परित्यज्य	२.५७.२
कालसर्पोपमः कृष्ण	२.५७.३५	काव्यः पृथस्तर्धवागि	१.७.२१	किञ्चित्कार्यं पुरस्कृत्य	२.६६.२१	कि जनेन निरस्तेन त्वं	२.४४.२१	कि मर्थं चाम्बुदश्यामः	२.१०८.१६

किमर्थं तेन ते बालास्तदा २.११४.६	किमेतन्नाभिजानीमो २.११०.२७	कीर्णं सुरगणैः कान्तैर्मता २.४०.१०	कुञ्जरात्लाङ्गलोक्षिप्तान् २.३५.७१	कुबेरः स धनुष्याणि ३.६०.३८
किमर्थं ब्रह्मदत्तस्य १.२०.७७	किमेते प्राकृतज्ञाना ३.१०७.२५	कीर्णा क्षत्रियकोटभोः १.४१.११५	कुञ्जरात्लाङ्ग लोक्षिप्तान् २.४३.२१	कुबेरस्तै शरैर्मिनः ३.६०.६७
किमर्थं भगवन्ने ते ३.४६.२७	किमेवं चिन्तयाविष्टा २.१२१.७६	कीर्णा भूतगणैर्वैमरानि २.२.४६	कुञ्जैश्च नागपुष्पैश्च २.४०.१७	कुबेरैर्लादित संन्य ३.६०.३६
किमर्थं भगवान्विष्णु ३.७३.१	किमेवं बलमत्तोऽसि २.१२२.७५	कीर्तनं कृष्णसंभूते ३.१३४.६	कुठारैः कुन्तलैश्चैव ३.६५.४	कुम्भा यथा गन्धकपीथिका २.६६.१२
किमर्थमिह संप्राप्ता १.१२२.२५	किमता चैव कालेन ३.७.४	कीर्तनीयाः सतीनां हि २.८१.१५	कुठारेः सर्वतश्चैव ३.६५.७	कुमारकोटयो याश्चेमा २.५६.६
किमर्थं चादि देवेन १.४६.२	किवां ते प्राप्तिं भूयो १.१६.३०	कीर्ति कीर्ति मतां श्रेष्ठो २.५२.१५	कुण्डा वृषानैकृतिनाः ३.३.३५	कुमारं तं परित्यज्य ३.१.१०
किमसाध्यं भवेदस्य २.५३.२४	कि वा शक्यामहे वक्तुं २.५५.६५	कीर्ति त एते विपुला २.११२.२७	कुण्डोदरं विरुपाक्षं ३.१०५.१६	कुमारस्त्वन्ववाह्यायां २.५.१५
किमस्ति तव कल्याणि २.११७.५२	किवीर्यं कालयवनः २.५७.६	कीर्तितं बलदेवेन २.१०६.३	कुण्डोदरो महाप्रोव ३.८६.३	कुमाराः प्रययुस्तत्र २.६५.६
किमात्मको वराहः सका १.४०.३	किं सजः कश्च भगवाँल्लोके ३.१०.४८	कीर्तिता मनवस्तात १.७.७	कुतः पद्मपलाशाक्षः ३.७६.६	कुमारो वृकदीप्तिश्च २.१०३.१३
किमात्मको वराहोऽसीका ३.३३.३	किरन्ति पौराः सर्वास्तां २.१२७.१३३	कीर्तिमान् स महाभाग १.१५.१६	कुतः पोष्णक इत्येवं ३.६४.८	कुमित्रे सौहृदं नास्ति १.२०.१२०
किमाहुर्महोपाखो ३.११५.१२	किरातीं चीर वसनां २.१२०.१६	कीर्तिमांश्च महातेजा १.३७.१६	कुतश्चागम्यते सौम्य २.२७.३०	कुमुदोत्पलकिञ्जल्क १.२०.८५
किमाह पुष्पश्रेष्ठः शीघ्र २.६६.२३	किरीट मूर्द्धा सौम्यास्याः २.४२.८५	कीलवञ्च निपातैश्च २.३०.३४	कुतस्त्वं कोऽसि ३.६६.६६	कुमुदोत्पलमुदकं तारा २.१६.२०
किमिदं चिन्तयाविष्ट २.१२१.२०	किरीटलाञ्छनेनापि २.५२.२२	कीलैरारोप्यमार्गैश्च २.६.२४	कुतूहलं ममाप्यस्ति सर्वथा २.६२.५२	कुम्भकर्णो यथा राजन् ३.१२६.१४
किमिदं तव गोविन्द ३.७५.१४	किरीटिनो लम्बशिखा १.४१.६७	कुङ्कुरस्य सुतो घृणु १.३७.१८	कुताञ्च सात्यकि वीरः ३.६३.२४	कुम्भकेतुः सुदष्टश्च २.१०४.४६
किमिदं प्राह विप्रश्च ३.६३.२	किरीटी श्रीपतिः कृष्णो ३.१११.२	कुङ्कुराविपति चैवं २.७५.६१	कुतो भ्रातरितो गच्छेः ३.१२६.१०	कुम्भनाभो गर्दभाक्षः १.३.७६
किमिदं रुषतं भीरु या २.११६.२०१	किरीटेनार्कतुल्येन २.१६.१०	कुङ्कटैश्च्छागलैर्मयै २.३.८	कुतो वो विग्रहो देवाः १.५०.४६	कुम्भाण्डबुहिता रामा २.१२८.४
किमिदं लोकविरुधात् २.११६.१११	किशोरस्त्विति संहर्षा १.४३.२०	कुजम्भस्तु महातेजा ३.५३.१४	कुत्र चास्य निवासो वै १.४५.४६	कुम्भाण्ड मन्त्रिणां श्रेष्ठ २.१२७.२६
किमिः देवदेवेश ३.८८.३	कीटमूषकसर्पश्च ३.४.२७	कुजम्भस्य च मार्गेषु ३.५६.५८	कुतान्कुन्तैः समाजघ्नु ३.६४.१८	कुम्भाण्डवचनैरेवं २.११६.१६८
किमुच्यते मयायैव ३.८८.६६	कीर्णं पन्नगवर्षा घँस्समुद्रो २.३७.५५	कुजम्भस्य च येऽमात्या ३.५६.५१	कुन्ती च पाण्डोर्महिषी २.३८.५१	कुम्भाण्डचिन्तयाविष्टो २.११६.७५
किमेतदिति तेऽन्योन्यं २.१२१.१७	कीर्णं शंस कुलैश्चुभ्रं २.३७.५४	कुजम्भो दानवश्रेष्ठो ३.५६.५१	कुबेरं प्राप्य ते बाणा ३.६०.१६	कुम्भाण्ड संगृहीतं २.११६.१३३

कम्भाड संगृहीसीते तु	२.१२६.२	कुलेषु चिह्नममूलेषु तषु	१.४५.२६	कुहरः प्यवष्टश्च दुमुखः	१.३.११४	कृतस्सैन्यक्षयश्चापि	२.५६.११	कृत्वा द्विबाहुं तं बाणं	२.१२६.१३१
कम्भाण्डे नैवमास्थते	२.१२७.३६	कुलोप क्रोशनकरी	२.११८.१५	कृमद्विष्वाण्डज गर्णः	२.४०.८	कृतां द्वारवती नाम्ना	१.१०.३६	कृत्वा निः क्षत्रियां चैव	१.४१.११६
कम्भाण्डे वचनं प्राहुं	२.१२७.३४	कुवलाश्वः सुतस्तस्य	१.११.२३	कूर्मकुक्षकटवक्त्रावच	३.७२.१८	कृतानि दिव्यरूपाणि	२.४८.३०	कृत्वानुयात्रां भूतैस्त्वं	२.२.५२
कुम्भाण्डो नाम बाणस्य	२.१२४.१३	कुवलाश्वस्तु पुत्राणां	१.११.४४	कूर्मो रूष्यमयो दद्याद्वाह्य	२.८०.४६	कृताभिर्यं च कृष्णेन	२.५६.६	कृत्वा प्राचीविभागं	३.१५.१६
कूर्मस्तु स्नाप्यमानेन	२.७६.८	कुशपुत्रा वभूवुहि	१.११.२५	कृतकार्ये गते काले	१.५४.१	कृताभियेका वरदा भूत	२.२२.५३	कृत्वाऽभिसन्धिं तपसा	१.२३.१३
कुरुक्षेत्रं समासाद्य	३.८२.१६	कुशल पृष्ठवान् भूयो	१.२७.१२	कृतकार्यो हि गास्तास्तु	१.५५.२४	कर्तायः सर्वथाः चाहं	३.११४.२६	कृत्वाम्यधावत्सहसा	२.१०५.५०
कुरुन्यात्युत्तरान्वीर काला	२.६२.४६	कुशलं पृष्ठवान्भूयो	३.७७.१८	कृतकार्यो तु संग्रान्ते	२.१२६.१३२	कृताशीचः शरी चापि	१.२०.१६	कृत्वा राज्यं स राजर्षि	१.१३.३७
कुर्वन्ते च ते देवाः	१.५३.७४	कुशलं ब्रह्मदत्तस्य	३.६२.४	कृतं त्रेता द्वापरं च	१.८.१७	कृताश्वी तावुमौ वीरौ	२.३३.२८	कृत्वा वेदमयं रूपं	३.२६.५०
कुरुष्व वैनतेय त्वं	२.१२२.१६	कुशलं मे वरारोहे	२.११६.७०	कृतं त्रेता द्वापरं च	१.८.१७	कृतिरेवा हि भद्रं ते	२.६५.३२	कृत्वा संबन्धकं चापि	१.२०.१३३
कुरुंस्तद्योत्तरान्पापो द्राव	२.८६.२६	कुशलं वासुदेवस्य	३.११७.१२	कृतं प्रतिकृतं युद्धे चक्र	२.७३.२८	कृते गर्भविधाने तु देवकी	२.४.१	कृत्वा सर्वं समुद्योगं	२.३४.११
कुरोः पुत्रस्य राजेन्द्र	१.३०.६	कुशालां विशालालि	२.११८.४८	कृतं प्रतिभूतं युद्धे चक्र	२.७३.२८	कृते तु देवताकार्ये	२.५६.४४	कृत्वा सिंहासने कृष्णः	२.११०.१४
कुरीश्च पुत्राश्चत्वारः	१.३२.८८	कुशस्थलीं द्वारवतीं	१.३५.२२	कृतं प्रतिकृतं युद्धे चक्र	२.३०.३२	कृतो यज्ञ विभागो हि	१.२६.१६	कृत्वा सुबहुं शो धोरं	३.८३.२१
कुर्वन्तः किं फलं देव	३.१११.३६	कुशाग्रकुमुमानां त्र कर्णं	२.१४.६	कृतं दूतेन यत्कार्यं	१.५४.४३	कृतौ च युद्धकुशले	२.६१.५६	कृत्वा ह्यशिरोरूपं	३.७२.७७
कुर्वन्तु कथास्तास्ताः	१.५३.१७	कुशाग्रन्यात्मजौ विद्वान्	१.३२.६४	कृतं देव महत्कर्म	१.४८.५८	कृतोत्तमाङ्गा स्कन्धेषु	३.५६.५४	कृत्वेन्द्रं दानवाः	३.४८.२४
कुलजा रूपसम्पन्ना	२.११८.२५	कुशिकस्तु तपस्तेवे	१.३२.५१	कृतं वृन्दावनं क्षेमं	२.२४.५५	कृत्यकाले उपस्थास्य	२.१००.४	कृत्स्नं बाहुसहस्रं च	१.४१.११४
कुलशील समोऽस्माकं	२.८८.३४	कुशीलानां भूयिष्ठं	३.३.२४	कृतवन्तस्तथा धोरं	२.४६.५६	कृत्वा केसरिणो रूपं	२.२२.३७	कृत्स्नं वा हिमवत्पादवर्षं	३.४.३२
कुलजे सत्त्वसंपन्ने भर्म	२.५१.३६	कुशेशयाकोश विशालनेत्राः	३.८६.४६	कृतवर्मा तृतीयस्तु	३.११८.३७	कृत्वा च निश्चय सर्वे	१.३५.२१	कृत्स्नां ददामि ते	३.७१.४१
कुले महति ते जन्म	२.३२.३४	कुसुमे पारिजातस्य	२.११७.३	कृतवीर्यः कृतोजाश्च	१.३३.८	कृत्वा च सेतं	३.८२.१८	कृत्स्नोऽयं यदि बाणस्य	२.११६.८६
कुले महति विरूपातः	२.२२.८०	कुशोद्भवे क्व विश्वासः	१.२०.१२१	कृतश्रमो महायुद्धे	३.१२५.२	कृत्वा चार्तस्वरं धोरं	२.११६.१२६	कृपः स्मृतः सर्वं तस्माद	१.३२.७४
कुले महति वै राजां	२.४८.३५			कृतस्वस्त्ययनो विप्रहंत्वा	१.२०.६१	कृत्वात्मानं महाबाहु	१.४१.१२२	कृमिश्च क्रमणश्चैव	१.३७.४

कृषो वा मलिनो व.पि	२.५८.६६	कृष्णः प्रत्यागतप्राणश्चक्र	२.६०.४६	कृष्णस्य भुजवीर्येण	२.४६.४२	कृष्णेन तत्र पतता क्षुभितो	२.१२.३	कृष्णोऽप्यन्वगमच्छनं	२.७३.६३
कृष्णः कदम्बशिक्षरा	२.१२.२	कृष्णः कमलपत्राक्षं	२.५७.१७	कृष्णस्यागमनं चैव नृपाणां	२.४८.५१	कृष्णेन परमस्नेहात्ततो	२.१२२.८५	कृष्णो भोगवतीं रम्या	२.१०२.३२
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२.३०	कृष्णं गौरं प्रभुं शम्भु	१.१८.५३	कृष्णस्यानुप्रविष्टास्तु	२.८५.४८	कृष्णेन लोकनाथेन	३.१२८.१३	कृष्णो वा बलदेवो वा	२.५२.३८
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१६.१३	कृष्णं चैवाववीक्षीत्या	२.२६.२	कृष्णस्यापि निमित्तानि	२.२४.४	कृष्णेन सह योद्धव्यं	२.८५.११	कृष्णो हि सुरकार्येषु	२.६८.७
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.४७.२०	कृष्णं न सहते निर्यं	२.४६.४१	कृष्णस्यैकस्य तद्रूपं	२.१३६.११०	कृष्णेन सहितं विप्रं	२.७७.५	कृष्णते सातिविशेन	२.४६.४१
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.५५.१२१	कृष्णं पद्मपलाशाक्षं	२.५५.७०	कृष्णस्त्वविदिताद्यो वं	२.२६.२६	कृष्णेन ह्रियमाणां तां	२.६०.१	कृष्णमाणस्स कृष्णेन	२.३०.८३
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२२.५५	कृष्णप्रभावे वाक्यं	२.१२६.२१६	कृष्णाजिनं च सुभगे	२.७६.३१	कृष्णेऽङ्गितला जलयुद्ध	२.८६.५३	केचिच्चक्राग्निनिर्दग्धा	२.६३.७८
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२२.६१	कृष्णः प्रहरतां श्रेष्ठः	२.१२२.८६	कृष्णाजिनं तिलैःपूर्णं	२.७६.१३	कृष्णो गडडमास्थाय	२.१२४.२७	केचिच्छिन्नभुजाश्चैव	२.६३.१०७
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२३.१२	कृष्णं व्रजगतं श्रुत्वा	२.२२.१	कृष्णाजिनोत्तरासङ्गो	१.५४.६	कृष्णोऽथ रोहिण्येवच	२.२६.३६	केचित्कंसवधान्वापि	२.५७.३०
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२६.१३५	कृष्णं यास्याम्यहं तात	२.४०.३२	कृष्णाजिनोत्तरीयेण	२.२८.४४	कृष्णोऽनुगम्यमानश्च	२.५७.४६	केचित्कवचिनः सज्जा	३.३८.६
कृष्ण कृष्ण महाबाहो	२.१२७.२४	कृष्णलीलानुकारिण्यः कृष्ण	२.२०.२६	कृष्णाक्षया सातिषयानि	२.८६.२८	कृष्णोऽपि कालयवनं	२.५६.३५	केचित्सितस्थिः प्राक्रोश	२.११६.११७
कृष्णः कृष्णोऽम्बुदाकारः	२.६३.१०४	कृष्णदधीदामसहितः	२.१४.१६	कृष्णात्कमलपत्राक्षाद्देवदेवा	२.५०.७	कृष्णोऽपि तद्यथायोग	३.७७.१६	केचित्कुठारैराजघ्नः	३.६८.८०
कृष्णजर्जरितांगस्य	२.२६.३६	कृष्णसंकर्षणो चैव	२.२२.८७	कृष्णात्मजा ये स्वथ	२.८६.४१	कृष्णोऽपि तं गिरिश्रेष्ठं	२.१८.६६	केचित् खरोष्टयातारः	१.४३.२४
कृष्णज्वरभुजाधारीः	२.१२२.६२	कृष्णस्तमृषिषादूल	२.३६.२७	कृष्णानुज महाभाग	२.१०६.५	कृष्णोऽपि तेषां प्रीत्यर्थं	२.८८.५०	केचित्त्रैव शोचन्तस्म	२.४४.३२
कृष्ण तात न खल्वेव	२.२४.२१	कृष्णस्तु कृष्णां कामार्ता	२.२७.३६	कृष्णायाससमप्रस्थो वर्षे	१.३५.१३	कृष्णोऽपि बलवानेष	२.५२.३०	केचित्प्रदीप्तैरुग्भिः	३.६२.२२
कृष्ण तूष्णो हृषीकेश	३.७७.१३	कृष्णस्तु गरुडं भूयो	३.१००.१३	कृष्णापितमनोदृष्ट्य	२.८८.१६	कृष्णोऽपि मूले शैलस्य	२.१८.६०	केचित्प्रदीप्तैर्मुकुटैः	३.६२.२१
कृष्ण दर्शनजातेन	२.३०.५६	कृष्णस्तु तेन नागेन	२.२६.३३	कृष्णा वेणी मुक्तिमती	२.१०६.२६	कृष्णोऽपि यदुमिस्साढं	२.५५.१२	केचित्प्रविश्य नगर	२.४४.३१
कृष्णद्वैपायनमतं	३.४०.२१	कृष्णस्तु योवनन्दुष्टवा	२.२०.१५	कृष्णाष्टमी या क्षिपति	२.८०.२	कृष्णोऽपि रामसहितो	२.५५.१८	केचित्सहस्रमुखास्तत्र	२.१२४.२०
कृष्णद्वैपायनश्चैव क्षेत्रे	१.३२.१३३	कृष्णस्य कृष्णवदना	२.८.३५	कृष्णे च भवतो द्वेष्टे	२.२३.२३	कृष्णोऽपि सुमहावीर्यो	२.५०.१६	केचिदधूरिण मुमुक्षुः	३.५.४
कृष्णपक्षस्त्वहस्तेषां	१.८.८	कृष्णस्य पादयोर्मूर्ध्ना	२.१२३.१४	कृष्णेच्छया च त्रिदिवानुदेव	२.८६.७४	कृष्णोऽपि सेनया साढं	२.८३.५३	केचिदाकृष्टवृष्टान्	३.५.२६
		कृष्णस्य पाद्वर्भागम्य	२.१२१.१३५						

केचिदष्टांस्तथा	३.३८.७	केनोपायेन किं कुर्मो	२.२८.८६	केशी चाप्युन्नतग्रीवः	२.२४.१८	कोटिश्चाश्वापि बहुशो	२.१२२.५०	कोतूहलसमाविष्टो	२.११०.५०
केचिदुष्टप्रस्ता समापेतः	३.६३.२२	के प्रजापतयस्तात	३.७.५	केशी तु दानवश्रेष्ठः	३.५३.२०	कोटिशो वरलब्धं तमसुराः	२.६१.११	कोतूहल हतानां तु	२.७८.१६
केचिद्विषाकृताः शक्त्या	२.६३.१०८	केयूरकुण्डाकूर्मा	२.१०५.६२	केशी दानवमुख्यस्तु	३.५१.६१	कोट्यश्चतस्रो ग्रामाणां	२.६७.२७	कोतूहलादिदं वाक्यं कृष्णः	२.१५.३
केचिद्वृत्तेन वदन्ति	३.८०.४६	केयूरयुक्ताज्ज्वलनद्वबाहुः	३.५१.७१	केशीवक्र विलग्नस्तु कृष्ण	२.२४.४१	को नः कोपपरीतांगी रति	२.३१.६	कोपीनं बहुधाचिह्ननं	३.१११.६२
केचिद्धीता दिशः	३.१२६.१३	केयूरी चांगदी चैव	३.८३.१८	केसराणां नवैर्गन्धर्वमदनि	२.११.१६	को नाम ईदृशं कर्म	३.६५.३०	कोपीनवसानाः केचित	३.८६.१२
केचिद् भूमि समालिख्य	३.१२२.२४	केवलं त्वं तु दर्पण बद्धा	२.२३.१४	केसराः पुष्पवर्गश्च	२.२८.६४	को नाम जीवितं कांक्षे	३.११८.३५	को भवन्ती बबनुयवां	३.८०.१७
केचिद्व्याससंमृदिताः	२.४३.४३	केशवः पुनरेवाह यादवा	२.५६.१४	कैलासं च समुद्दिश्य	३.१२७.२५	को नाम वक्तुमेवेदं	३.६२.२०	को मृष्टामधपा षष्ठ्य	२.८०.४६
केचिद्वैवतकं गत्वा	२.८८.५२	केशवः सहस्रकिमण्या	२.६१.१४	कैलासमन्दरच्छन्दा मेघ	२.८८.५६	को नामासौ महाभूतः	३.१०७.२१	कोमोदकीं समुद्यम्य गदा	२.६०.३७
केचिद्धरासिना कृष्णा	३.५६.३३	केशवस्त्वरितं दृष्ट्वा	२.६०.२०	कैलासयात्रा कृष्णस्य	३.१३४.२६	को नु नाम जगन्नाथ	३.८३.२२	कोरव्यो मालवश्चैव	२.३५.४३
केचिद्विनिहिता भूमौ	३.६०.३४	केशवस्य च माहात्म्यं	२.१२८.३५	कैलासवपुषस्तस्य	३.४५.५	कोऽन्वत्र समयो भूयादिति	३.८५.६	कोशल्यः काशिराजश्च	२.३४.१७
केचिन्मुमुचिरे तत्र	२.१२४.३१	केशवस्य वचः श्रुत्वा	२.१२१.३५	कैलासशिखरप्रख्यं	२.१२७.१०५	कोपं यच्छत राजान	१.२.४०	कौशिकस्य सुतास्तात	१.२१.६
केचित्तलज्जासमायुक्ता	३.६१.१७	केशवायसधृमेन रोषनि	२.३०.६२	कैलासशिखराकारं प्रसन्त	२.८५.३०	कोऽप्ययं दारुदित्याहुः	२.६७.७१	कौशिक्यां श्रुतसोमायां	२.१०३.२०
केतकाशोकसरला	३.४१.६४	केशवेन पुरा विप्र	३.७३.३	कैलासशिखराकारमष्ट	३.५१.५६	को भगवान्कस्य वा	३.८०.४	कौशेयानि च नीलानि	२.४१.३३
केतुना घूमकेतोस्तु	२.२३.२७	केशवेन मतिस्तत्र पुष्यं	२.५६.३०	कैलासशिखराकारैः	२.११८.६८	को मां नाम्ना कीर्तयते	३.१०.३७	क्रतवः श्लाघिनः शांताः	२.१०६.६५
केतुना वंशजातेन राज	१.४४.६	केशवेनैव मुक्तस्तु	३.११५.१६	कैलासशिखराकारो	३.५५.१४६	को मोहः किमिदं मौनं	२.११७.४८	क्रतवः संप्रवर्तन्तां दीक्षणी	१.४८.७५
केतुमन्तं महात्मानं	१.४.२१	केशवैवलसच्छन्तां	२.१०५.६३	कैलासशृंग प्रतिमो	३.५२.३७	कोऽयं यस्य भयत्रस्ता	२.११६.११२	क्रतुना बाजिमेवेन	३.६६.५२
केतुमाली शरव्रातं	२.१०५.४६	केशिदन्तस्तस्यापि कृष्ण	२.२४.५०	कैशिकः पञ्चभिक्षापि	२.३५.८८	कोऽयं विचिनं जानामि	२.६.३२	क्रतुभिः परमप्राप्तैः	३.२५.६
केनचिद्यादि कार्येण	२.२०.६	केशिनस्तु तमभ्याशे	२.२४.२०	कैशिकश्च महाबाहु	२.५०.७०	को बान्यः पात्रभूतो	३.७१.२०	क्रतुर्विषयजमानांश्च	३.१०.२७
केनवायमिहानीत	२.११६.१८१	केशी च कृष्णसंसक्त	२.२४.४२	कोकामुखं पुण्यतमं	२.१०६.४०	को वै पिपीलिकयतं	१.२४.८	क्रतुर्विषयः पुलह	१.१७.१५
केनमुत्तप्रहारोऽयं	२.३१.३६	केशी चापमहावीर्यो	२.४६.५१	कोटि कोटि शत गुणै	३.१७.११	कोटीयां मदिरां चंडामिला	२.१२०.१६	कृषकंशिकभर्ता तान्प्रति	-२.५६.३२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

३८

कृष्णकेशिकमुखास्तु	२.५६.११	क्रीडन्निव महातेजा	२.१०.५६	क्रोधाद्विगुणरक्ताक्ष	३.६०.४०	क्व दाराः क्वच संयोगः	१.४५.४२	क्षमस्व भगवन्देव	३.८७.३७
कृष्णकेशिको च वीरौ	२.५०.७८	क्रीडां च सामरे दिव्यां	२.६१.२	क्रोधाद्विगुणरक्ताक्षो	२.६३.५०	क्व नः संग्राम इत्येवं	३.११८.४५	क्षमा त्वत्तः प्रभृता च	२.११०.५२
क्रमं प्रणीय पाञ्चाल्यः	१.२४.३२	क्रीडा विहारेनारिभिः	२.११६.२७	क्रोधानिलसमुद्भूत चक्र	२.५३.३६	क्व नु क्व वा नन्दसूनु	३.११६.३	क्षमादयश्च मेदिन्यां	२.६६.४४
क्रममाणं हृषीकेशमुपा	३.७२.२७	क्रीडा विहारे मिलिताः	२.११७.५७	क्रोवान्निः स्वसतस्तस्य	१.४७.३६	क्षणं चिन्तयतामत्र	२.१२२.४४	क्षमा मोक्षकरी नित्यं	३.११२.१८
क्रमाद्ये वेदसंस्कारं	३.२४.६	क्रीडा विहरोपगनः	२.११७.१	क्रोधेन ज्वलतस्तस्य	२.१२.८	क्षणा लवादश्च काष्ठाश्च	१.४०.३३	क्षमा स्वर्गस्य सोपानमिति	३.११२.१६
क्रमेण प्राणानुष्मृच्य	३.८१.२१	क्रीडाविहारोपगतः	३.१११.३	क्रोशमात्रमुपवज्र	२.५१.७१	क्षणेन तद्रजस्थानमीरणं	२.६.१६	क्षयवृद्धा तवाव्यक्ते सामर	१.४६.४
क्रमेण सप्तस्वन्वान्त	२.६३.४०	क्रीडावृक्षः स शच्येति	२.६८.१७	क्रोष्टुहि वंशं श्रुत्वेमं	१.३३.६२	क्षणेन भस्मसान्नीता	२.१२.११	क्षरज्जलानां क्षीलानां	२.१०.२८
क्रव्यादानि च भूतानि	२.१२६.१२६	क्रुत्रात् पुष्पजातिर्वा	२.८६.४८	क्रोष्टोरेवाभवत्पुत्रो	१.३६.१	क्षणेन समनुप्राप्तो द्विजेना	२.६३.४५	क्षान्तमेव तवानेन वसुदेवेन	२.२३.३६
क्रव्यादाः सर्व एवाशु	३.६६.१	क्रुद्धः शरसहस्रेण	२.१०४.३२	क्रोष्टोस्तु शृणु राजेन्द्र	१.३३.६१	क्षणेनैव प्रमाणं स	१.१७.११	क्षान्तेषु गुणबाहुल्यं	२.५१.३८
क्रव्यादं रनुयातः नि मूर्ति	२.३५.५८	क्रुद्धस्ततो दैत्यबलं	३.६०.१३	क्लृप्तरत्नसमाकीर्णा	१.५२.६	क्षतजादिश्वरस्त्रा वै	२.१०४.८३	क्षान्तोऽयमिति मन्तव्यं	२.५१.४०
क्रियतेऽसार संसारे	३.१३२.६८	क्रुद्धस्त्वाशापयामास	२.१०४.४१	क्व इदानीं महाबुद्धि	३.६५.२७	क्षतजोक्षितवक्त्रादव	२.१०४.५६	क्षिपन्ति सख्यो हृदये	२.११७.३४
क्रियन्त चैव कालं	३.७.३	क्रुद्धोऽथ बलभद्रस्तु	३.१२६.३५	क्व च द्रव्यामि तौ	३.११८.१३	क्षत्रवृद्धाश्मजस्तत्र	१.२६.६	क्षिपन्त्यस्त्राणि दिव्यानि	३.५५.१४३
क्रियन्तो वै पितृगणा	१.१८.३	क्रुद्धो हिंस महाबाहु	२.११६.१४	क्वचिज्जानुभिरुघृष्टः	२.७.६	क्षत्रियाणां वपुर्भिवच	१.५१.२०	क्षिप्तं तु वासुदेवेन	२.१२६.१२६
क्रियासत्र महाघोरं	३.३४.३७	क्रुद्धोऽथ स्यात्यकी	३.१००.१६	क्वचित्कदम्बहासाढव	२.१०.११	क्षत्रियाणां च भगवान्	२.८५.६७	क्षिप्तमिः पवेनेरङ्गिः	१.५३.३१
क्रीडता वासुदेवेन	२.१०१.३६	क्रूरां च बुद्धिमत्तुलां	३.३८.४	क्वचिद्गमयन्वचिक्लीड	२.११.११	क्षत्रिया भरतश्रेष्ठ	१.११.८	क्षिप्ते पितरि शुक्रोष	२.३०.७१
क्रीडन्त बहुधा युद्धे	२.११६.१२४	क्रोधमूर्च्छित वक्त्रस्तु	३.५६.२	क्वचिद्दुःस्वसंकाशः	२.१५.१६	क्षत्रिया विकृति प्रजाः	२.४७.१७	क्षिप्त्वा ये प्रपलायन्ते	२.८७.२०
क्रीडन्ति भैमाः प्रसवो	२.८६.८५	क्रोधरक्तान्मुखास्तस्य	२.३०.६४	क्वचिद्वन्तावन्योन्यं	२.८.६	क्षत्रियाः सन्निविष्टास्ते	२.८३.५२	क्षिप्यमाणोऽसुरेन्द्रेण न	१.४८.२३
क्रीडन्ति वन्यरस्यः	३.८४.८	क्रोधसंरक्तनयनः	३.५५.११५	क्वचिद्भूमप्रदीप्तांगो	२.७.८	क्षन्तव्यं भवता विप्र	३.११२.१७	क्षिप्रं प्रसाध्यतां कंसः	२.१६.७२
क्रीडन्त्या रैवतोद्याने	२.६०.६८	क्रोधसंरम्भताम्राक्षो	३.५५.१२	क्वचिद् वृक्षे तमासक्तं	३.१३०.४	क्षन्तव्यं भवता सर्व	३.११२.२	क्षिप्रं यदुवृण्वं हृष्ट्वा	२.२३.१
क्रीडन्निव च युद्धेषु	२.११६.१८२	क्रोधात्मासि विरुपोऽसि	३.६०.७	क्व ते स मुकुटो वीर	२.३१.६	क्षन्तव्यमिति यत्प्रोक्तं	२.५१.३६	क्षिप्रं विशन्तु यूथानि	२.१८.५५

अप्रं समविवर्तन्तां मम	२.४३.२६	क्षुरः क्षुरप्रभर्त्स्नैश्च	३.५६.५२	खड्गो नन्दकनापासो	३.६१.११	गंगाद्वारं कनखलं	२.१०६.३७	गच्छमन्दमते विप्र	३.११८.२६
अप्रमाणापय विमोक्ष	१.५३.८	क्षुवत्तश्च मनोस्तात	१.११.१२	खड्गो प्रपुष्ट चात्युग्रो	३.१२५.१४	गंगामुपागमत्पूर्णं	२.१२२.१८	गच्छ मास्त देवेशमनु	२.५८.७१
अप्रमेव वधिष्यामि	१.४८.१७	क्षेत्रज्ञा मानसे लोके	३.२२.२५	खमस्थिराणां विषयो	२.१६.३३	गङ्गायामुनयोर्मध्ये	३.३१.५	गच्छ सोम सहायत्वं	१.४६.२
क्षीण प्रहरणाः केचिन	३.६०.५६	क्षेपणाद्यस्य मुह्यन्ति	१.४८.४४	खर इत्युच्यते दैत्यो	१.५४.७५	गङ्गा यत्र सरिच्छुष्ठा	३.७६.२२	गच्छामि ब्रह्मसदनं	३.६६.१६
क्षीणमस्य तपो बध्यो	२.६६.५७	क्षेमश्चमुनस्त्वासी	१.१५.२६	खरस्तु विभ्रनृ दपान	१.४३.१६	गङ्गायामुनयोर्मध्ये	१.४१.१६६	गच्छामो वयमश्वत्र	३.८०.५३
क्षीणाकारासु तारासु	२.२६.३४	क्षेमवन्वा दृढायुश्च	१.७.७३	खराः खरमुखाश्चैव	३.४५.१	गङ्गायाश्चोत्तरे तीरे	३.७८.२	गच्छंहि लम्बे शीघ्रं	२.१२६.१०६
क्षीणां जवेन च हयाम	१.३६.१६	क्षेमप्रचार बहुलं हृष्ट	२.५.२५	खरोष्ट्रवदनाश्चैव वराह	१.४१.६३	गंगा वं कुण्डकेदारं	२.१०६.४३	गजदन्त कुतोत्प्लेखं सुभुजं	२.३०.२
क्षीणास्त्रां सायकाक्रान्ता	३.६१.४२	क्षेम्यस्य केतुमान्पुत्रो	१.३२.३७	खजुरा नालिकेशश्च	३.४१.७२	गंगा सरस्वती चैव	२.७७.१५	गजवाजिलेरोष्ट्राणां	२.५७.२२
क्षणे कलियुगे तस्मिन्ततः	१.४१.१६६	क्षेत्रेडयन्ती प्रगायन्ती	२.१४.३	खसांस्तुगारांश्चोलांश्च	१.१४.१०	गंगेयं निम्नगा घन्या	२.११०.३८	गजवाजिरथोर्ध्वश्चकाल	२.६३.६६
क्षीरवत्पस्विमा गावो	२.१५.१०	क्षेत्रितास्फोटितरवं कृत्वा	२.२६.२८	खाण्डवे चार्जनरथं पुरा	२.७०.१५	गच्छ गच्छेति विप्रत्वं	३.११८.२८	गजाश्चान्यसंयुक्ताः	२.१८.१०
क्षीरसंकाशसलिलां	३.३५.२६	क्षेत्रितास्फोटितरवं मेघ	२.३५.२३	खाद खादत मोदेत	३.७८.६	गच्छते परमं ब्रह्म	३.१७.६४	गजानीकैरिवाकीर्णं सलिलो	२.१०.३७
क्षीराद्यथा दधि भवेद्दहन	१.४६.२१	क्षेत्रितास्फोटितोत्कृष्टं	२.३५.६६	खुरैर्दारपते भूमि वेगेना	२.२४.१०	गच्छतोः समिति राजन्	३.१२१.१७	गजान्तार्गः समाहृत्य	३.१२६.८
क्षीराण्येव मध्यमाने	२.२८.८०	ख		खुरोद्धूतवसिक्तेन	२.२४.२६	गच्छत्युर्वर्गति घोरो	३.५५.१३६	गजान्तिहाश्च व्याघ्राश्च	३.२०.११
क्षीरिण्यो द्विगुणं गावः	२.१६.३०	खड्ग ग्राहृत्य यत्नेन	३.८४.२२	खैवराश्च निशापुत्राः	३.४७.१०	गच्छ त्वं कामतो वीर	३.६५.३७	गजार्चरावण सुतो	२.६७.३६
क्षीरोदधिश्चोभसमुच्छ्रितानि	३.५२.१६	खड्गचर्मधराः केचित्केचित्	२.६३.६८	ख्याता चर्मण्वती चैव	२.१०६.२४	गच्छ त्वयं वसुमती स्वां	१.५३.६५	गजाश्चरथसंवाधा	२.४८.४१
क्षीरोदः सागरश्चाहं	३.१०.६०	खड्गचर्मबलोदघैः पत्रिभि	२.४२.५	ख्याता वेत्रवती चैव	२.१०६.३१	गच्छ दानपते क्षिप्रं	२.२२.८५	गजाश्चोष्ट्रैर्मार्जारसिह	२.१०६.६६
क्षीरोदस्योत्तरे कूले	३.६७.६	खड्गध्वजेन महता	३.५०.६	ग		गच्छध्वं मन्निप्रोगेन	२.१०५.३६	गजाः सिंहाश्च	३.२२.२२
क्षुधा च सर्वभूतानां	२.३.२०	खड्गमुद्यम्य तान्संवास्त्रा	२.६१.४८	गगनालग्नशिखरं जल	२.४०.७	गच्छध्वं सहिताः सर्वे	२.११६.८१	गजेन गजमास्फाल्य	२.५३.३२
क्षुरकर्म ततो भतुं रात्मन	२.७६.६	खड्गेन चान्यादिच्छेद	३.५६.३६	गंगया व्रतकं दत्तं	२.८१.२६	गच्छ नारद वक्तव्यः	२.७०.४२	गजेन गजवृन्दानि रथेन	२.४६.५४
क्षुरच्छिन्नः शिरोभिश्च	२.६६.४६	खड्गैश्च मुशलैस्तीक्ष्णैः	३.५६.८४	गंगातीर्थं कुक्षेत्रं	२.१०६.३६	गच्छन्तु तपसा	३.४०.६	गजेनासाय कंकस्तु	२.५६.७०

श्रीहरिवंशपुराणम् १: श्लोकानुक्रमसूची

४०

गजेन्द्र इव संस्तम्भं	२.६१.४६	गतिः कालस्य सा येन	२.३२.४७	गत्वा स्नानं प्रशस्तं	२.७८.३४	गदामुण्डिस्तादृश	३.७२.१६	गन्धर्वनगराकारस्त	३.५५.१४४
गजेन्द्रचर्मवसनास्तथा	१.४१.६६	गतिमेतामप्रमत्तो मार्कण्डेय	१.१८.७६	गत्वाहं रवे समास्थस्य	२.५५.१०२	गदाभिः पट्टिः शूलैः	३.६८.१८	गन्धर्वाः किन्नरा	३.२२.२०
गजेन्द्रभुजगाकीर्णामुखवान	२.५५.६	गते श्चवीणां प्रवरे	२.११६.१६८	गदं काष्णिस्तदोवाच	२.६६.५६	गदाभिरसिभिः प्राप्तैर्मल्लैः	३.५६.८	गन्धर्वाः किन्नराश्चैव	३.२६.६
गजेन्द्राभिन्नवदनान	२.१०६.१६	गते कृष्णे ततो नन्दी	२.१२६.१४२	गदया च जघानाश्वा	२.३५.६२	गदाभिश्चैव गुर्वीभिः	२.४३.३४	गन्धर्वाः किन्नराश्चैव	३.२८.६६
गजैर्गजा हृदयरश्वाः	२.३६.५	गतेस्त्वेवं मम वचः	२.१८	गदयामिह्नः सोऽश्वस्त्य	३.५७.६८	गदां गृह्य महाघोरा	३.१०२.४	गन्धर्वागमनं श्रुत्वा	१.२६.२४
गजैर्गजा हिंसक्रुद्धा	२.५६.७८	गतेऽथ गहडे विष्णू	३.१००.१६	गदयैव जघानाशु	३.६६.११	गदां गृह्य महाघोरां	३.१२३.६	गन्धर्वाणिमधिपतिस्तथा	३.३७.१२
गणः क्रोधवशो नाम	३.४७.८	गते भूतपती सर्वे नृपा	२.६६.१७	गदश्च धीमानथ सारण	२.८६.१६	गदां सघण्टामन्येन	३.३२.३७	गन्धर्वाणां च याः कन्या	२.६३.१२
गणः प्रज्जो क्रोधायाः	३.३६.३८	गतेऽहं रात्रसमये	२.११२.७	गदः सुनामभवधीद्यतमानं	२.६७.१६	गदावेगं च ते वीर	२.१२१.६६	गन्धर्वाणिमधिपति	१.४.१०
गणानां कालकेयानां	३.३७.१५	गते शक्रो ततः कृष्णः	२.२०.१	गदाकृत समाचारं	३.८७.४	गदिनः खड्गिनश्चैव	२.६८.१७	गन्धर्वाधिपतिः श्रीमांस्तत्र	२.६६.१३
गणास्तथा परे रोद्रा	३.४६.७६	गतेषु तेषु गोपेषु	२.६.३१	गदा कौमोदकी नाम	३.६०.१०	गदिने खड्गिने तुभ्यं	३.६०.२४	गन्धर्वाप्सरसश्चैव रुद्रा	१.५३.६६
गणास्तान्युपमुञ्जन्ति	२.६८.२३	गते स्वभावसंस्थानं	३.३३.२७	गदा तोमरनिस्त्रिं	३.५७.४८	गदिनो ये गदाभिस्तो	२.३५.५०	गन्धर्वाप्सरसश्चैव	२.१०५.५५
गणिकानां पृथङ्मञ्जराश्च	२.२६.६	गतो यत्र महातेजा	३.५५.१४७	गदानिपातविहता लांगलेन	२.४३.३७	गदिनो वै गदाभिश्च	२.४२.३६	गन्धर्वाप्सरसश्चैव	२.१२७.१०२
गणिकानां सहस्राणि	२.८८.७	गतो वैवस्वतवशं	२.११५.२२	गदानिपातैर्भंगनाङ्गा बाणै	१.४७.२८	गदी शरो महावीर्यः	३.६५.१६	गन्धर्वाप्सरसां चैव	१.४.१५
गणितस्याथ योगस्य	१.४.१७	गतोऽहं देवसदनं सौवर्णं	२.२८.४६	गदानिपातो रामस्य शुश्रुवे	२.३६.२०	गदे गृहीत्वा विक्रान्तो	२.३६.१३	गन्धर्वा मुनयश्चैव	२.५०.६४
गण्डशैलेश्च परिर्वेश्योत्त	१.४३.२६	गत्वा च दूरमध्वानं	२.१२७.११६	गदानिपातो रामस्य शुश्रुवे	२.४३.६६	गदेन चेदिराज्य	२.३६.३	गन्धर्वेभ्यो वरं लब्ध्वा	१.२६.४७
गणशैलेश्च विविधै	३.३८.१६	गत्वा च प्रोचनुद्भो	३.१०७.३०	गदापरिधीनस्त्रिशैः	३.५०.३	गदेन सह धर्मात्मा	२.८४.४६	गन्धर्वगीत कुशलं	३.१३२.४३
गण्डूपाय त्वपुत्राय	१.३४.३५	गत्वा तु सा सलीमध्ये	२.५२.५१	गदापरिधीनस्त्रिशैः	३.५६.४३	गन्तव्यं तत्र युष्माभि	३.१०७.५	गन्धानां चैव सर्वेषां	३.३७.७
गत इत्येवमस्माभि	३.६५.४१	गत्वा तु हिमवत्पाश्र्वं	३.१०५.२	गदापरिधयुष्मेषु सर्वस्त्रिषु	२.३३.२५	गन्तुं हि भरतश्रेष्ठ	२.११५.५	गन्धर्वैर्मर्त्यैश्च ता दिव्यं	२.८८.४७
गतः सूर्यसखं तात	२.१.६	गत्वाऽप्रवेश्यमन्येषां	२.६१.४०	गदापरिधसंपूर्णं मूर्ति	१.४३.५	गन्धर्वतयः शुभ्रास्तत्र	३.४१.६३	गन्धर्वैश्च धूपमर्त्यैश्च	१.२६.५०
गतासु तासु सर्वासु	२.१२८.१८	गत्वा यूयं विदमर्षायां	२.५०.५२	गदापरिधस्यपि तथा	३.१३२.६६	गन्धर्व इव गायस्तु	३.८३.१६	गमनागमनं चैव दिवि	२.६७.३४

गमनाय च ते सज्जा	२.२६.२८	गजितेन च मेघानां पर्जन्य	२.१८.१६	गाता चतुर्णां वेदानां	२.२८.४५	गालवोत्पत्तिरिक्काकुवंश	३.१३४.३	गिरीणां पात्यमानानां	३.१२८.५
गम्यतां तत्र घर्मज	२.७२.६५	गर्दभारुणसंस्थानै	२.७५.१७	गाथा भ्रम्यत्र गायन्ति	१.४१.१४६	गावः क्षीरप्रदानेन	२.२६.३०	गीतनृत्य विधिजानां तासां	२.८८.३६
गरिष्ठश्च वरिष्ठश्च	१.४१.८७	गर्भकाले त्वसत्पूर्णे	२.४.११	गाथाभिस्तत्प्रदष्टाभिर्ये	१.५०.१६	गावः पशुगणैः	३.२२.२१	गीतनृत्य विधिजानां तासां	२.८८.३७
गरुडः कश्यपमुत	३.८४.२०	गर्भकुन्तनमेतन्मे सहनीयं	२.४.५६	गाथा इवाप्युद्योगीता	१.२०.११६	गावश्च मत्प्रिययार्थं वै	२.१२७.१२८	गुणको नाम तत्रासी	२.२७.१६
गरुडं पक्षिराजनमयत्ने	२.७३.१०	गर्भबासे पतन्तश्च	३.१५.६	गाधिः सदारस्तु तदा	१.२७.२३	गावस्तैनेव मार्गेण	२.१८.६५	गुणत्रैकाल्यं यस्य देवस्य	२.७२.५७
गरुडं पतगश्चेष्टं मूर्ति	२.६४.२०	गर्भस्थानामपि गतिविज्ञेया	२.१.२८	गाधेः कन्या महाभाग	१.२७.१७	गावो नक्षत्रवंशाश्च	२.१२०.२६	गुणबुद्ध्या तु भगवान्	१.१३.६
गरुडस्थेन चोत्सिक्तः	१.४०.२३	गर्भस्थेन तु देवेन	३.६८.२०	गान प्रभायं सञ्चक्रे	३.२०.६	गावो वर्षभयात्तीर्णा	२.२०.३	गुणास्तासां मया ख्याता	२.६६.२८
गरुडस्य च संघ्रामो	२.१२६.७८	गर्भचित्स्त्रवतेतोयं	३.१२.६	गान्धर्वजातिश्च तथा	२.८६.७६	गावो हि पूजयास्तततं	२.१६.४५	गुणान्देवाववस्थाप	१.३७.१३
गरुडस्योपरि श्रीमाञ्छङ्ग	२.६३.४७	गर्भविकर्तनादीनि दुःखानि	२.२६.२३	गान्धर्वीं चोर्वशीं देवी	१.२६.१२	गाश्च ते रक्षतो विष्णो	१.५५.४३	गुणान्त रुद्राक्षकृतान्त	३.८५.१२
गरुडादवहृष्टाय दीपिकादी	२.७६.३६	गर्भे तु नियतो मृत्यु	२.४.६०	गान्धर्वेण विवाहेन	२.६४.११	गाश्च दत्त्वाथ विप्रेभ्यो	३.७४.२	गुणोत्तरानुत्तरस्थां	३.३५.३६
गरुडाभितः पूर्वं नाति कल्पो	२.७४.८	गर्वहन्तु सदा तस्य	३.६१.८	गान्धारदेशजाश्चैव	१.३२.१२७	गाश्च सूर्यो रसान्सोमो	१.४८.७६	गुणो मंहास्तीयदकालजो	२.६५.२४
गरुडाभिहृतास्सर्वे	२.७७.३०	गर्हता वसुदेवं च यदुवंशं	२.२३.१८	गान्धारराजस्मुबलो नग्न	२.३४.२०	गाश्च हत्वा महगर्वस्तव	३.१००.३३	गुरुत्वान्मेरुतुल्यस्त्वं	२.१२१.१११
गरुडा हृतकाष्ठं तु	३.८७.३	गर्वां तत्कदनं दृष्ट्वा	२.१८.२६	गान्धारी चैव माद्री	१.३४.१	गिरयश्चामिशोभन्ते	३.२७.३	गुरुभावेन वाक्येन	३.१७.३१
गरुडे सम्प्रयातेऽभून्	२.१२७.४२	गवारोहेषु चपलस्तरुघाता	२.२१.६	गान्धारी जनयामास	१.३८.११	गिरयः सागरा नद्यस्तथैव	३.१३२.८	गुरु सान्दीपनि कृष्णः	२.३३.१०
गरुडमानिव चाकाशे	३.५५.१२५	गवेषणस्तु चैद्यं तु	२.५६.५८	गायद्गन्धर्वमुष्यैश्च	३.११५.४	गिरिणा कम्पमानेन	२.१८.४०	गुरोरनवलितस्य मान्य	२.२३.११
गरुडमान्विततैः पक्षैः	३.२८.३८	गभ्यूनिमात्रं चिक्षेप	३.१२६.४३	गायतो लक्ष्यत्रीर्षीं स	२.२८.११२	गिरिः पुष्पितकश्चैव	३.४६.५६	गुर्वयं मे प्रयच्छस्व	२.७१.११
गर्जतस्तस्य वाक्योवा	२.१२६.४५	गाङ्गदेवव्रतं नाम पुत्रं	१.३२.१११	गायन्ति त्वां च मुनयो	३.४७.१८	गिरि च शिखरं चैव	२.३५.४५	गुल्फदघ्नं जानुदघ्नं	२.८८.२४
गर्जित्वा तु यथाकामं	३.४५.१६	गाढमार्गिण्य तो प्रीतो	३.१३०.१८	गाश्चेनापि चास्त्रेण	३.६१.३१	गिरिजप्रवृत्तेनं नाम	२.१७.३६	गुहः प्रजज्वाल रणे	२.१२६.१४
गर्जन्ति पुरुषं मेघा	२.१०५.२२	गाणपत्य भवाप्याथ	३.८४.७	गार्ग्यः पृथुस्तथैवान्यो	३.६६.६	गिरिशृङ्ग प्रहन्तारिः सर्वे	१.५३.७३	गुहश्च बाणगुप्त्यर्थं	२.१२२.४३
गर्जन्तो विनदन्तश्च	३.५६.४४	गांडीवं चाग्निन ततं	२.११५.१७	गार्ग्यस्य हि सुतं बालं	१.३०.१०	गिरिशृङ्गमिवोत्पाद्य	३.६०.७१	गुह्यकानां च सर्वेषां	३.८८.५८

गुह्यकाश्च सगन्धर्वा	३.१३२.७	गृहीत्वा शामनं मूर्ध्ना	२.५८.६४	गोपायसि यथा तात	२.५.७	गोयानमुष्ट्रवानं च	२.७८.३२	गोहत्यायाः प्रमुच्येत	३.७२.६६
गह्वं भागवतं देवं	२.२६.४३	गृहीत्वा स गदा भीमां	२.५३.४७	गोपाल इव दण्डेन	३.५६.६२	गोरेपा तु यतो वाणी	३.८८.५०	गीतमस्यात्मजश्चैव	१.७.४८
गूढ गुल्फशिरो पादा	२.८०.४३	गृहेषु भवतां भुवतं गावश्च	२.४६.१६	गोपालवेषमास्थाय	२.१४.१३	गोलक्रीडां सुखमायां	३.१११.४	गीतमी कंसभयदा	२.१२०.७
गृध्रचक्राकुलं व्योम	२.१०७.३	गृह्णीत तदिमां विद्यां	२.६४.४७	गोपालांश्च बलोदग्रान्योष	२.२०.१७	गोलक्रीडां समासक्तं	३.१११.११	गीरमग्निशिखाकारं तेजसा	२.३६.२२
गृध्रहससमाकीर्णा	३.६०.६	गृह्यतां तामसी विद्या	२.११६.१६	गोपालास्त्वपरे गावश्च	२.१७.३७	गोवर्धनधरश्चैव	२.१२१.११६	गीरिकः पर्वतेष्वेव	२.१२३.२७
गृहमेवं परित्यज्य	३.१०८.२	गृह्यन्तां वसुमुख्यानि	३.६५.६	गोपाली त्वप्तरास्तत्र	२.५७.१४	गोवर्धनं धारयता	२.७०.१६	गीरी सिद्धेति व्याख्याता	३.२७.४२
गृहस्थ एव धर्मात्मा	३.१०७.२२	गृह्यन्तां वेधमवास्तूनि	२.५८.६	गोपालैर्दशकालजैरुपानी	२.४६.२२	गोवर्धनस्यानुचरो	२.१४.७	गीर्वाण काञ्चनवापि	२.७६.४८
गृहस्थधर्मनिरता	३.२४.५	गृह्यन्तामाशु वध्यन्तामिति	२.६६.२७	गापिभिरास्वाद्यसुखं	३.८२.२८	गोवर्धनस्योत्तरतो यमुना	२.१३.३	ग्रथितां सविशेषां तां	२.८६.४५
गृहस्थश्च सदा माता	३.१०७.२३	गृह्य मूर्ध्ना तु चरणी	२.१२.४३	गोपीनां गर्गरीभिश्च	२.६.१५	गोवर्धनेऽप्यविश्रम्य	३.१२६.१५	ग्रसमानमनोकानि	३.३५.११८
गृहस्थानभिवाक्येन	३.१७.३३	गोकर्णस्थो परिष्ठातु	२.६०.२३	गोपीनां स्तनमध्ये	३.८२.२७	गोवाटेऽपि ये वृक्षा	२.८.११	ग्रस्तः स्वभानुना सूर्यो	२.२३.३१
गृहाण देवि उत्तिष्ठ	२.११७.४५	गोकुलेऽम्बुधरस्याम	२.११.१३	गोपीषु च यथाकामं	२.८.३३	गोवालरज्जुसुकृतं चामरं	२.८०.४	ग्रहनक्षत्रचितं सार्कचन्द्र	३.६१.६४
गृहाण मे जगन्नाथ	३.८३.४	गोत्रमुद्दिश्य कृष्णस्य	२.८८.१८	गोपोऽहं सर्वदा राजन्	३.१००.४१	गोविन्दमरविन्दाक्षं	२.२४.२८	ग्रहाः प्रकृतिमापेदुत्तुर्नद्यो	२.८७.३७
गृहाण वैष्णवं चास्त्रं	२.१०६.४५	गोघाशक्त्यकवचनाश्च	१.४१.६५	गोभिश्च समकीर्णसु	२.२६.३६	गोविन्दरामो संप्राप्तो	२.३३.३४	ग्रहाय व्यजनं चैव स्थित्वा	२.६६.१४
गृहाण शस्त्रमेव त्वं	२.१०६.३८	गोपकन्यामुपादाय	१.३५.१४	गोमन्तं पर्वतं द्रष्टुं	२.४०.२	गोविन्दरामो संप्राप्तो	२.४५.८	ग्रामणीश्चैव गोपालो	२.१०६.७५
गृहाण शस्त्रमात्मानं	२.६६.३५	गोपलास्त्वपरेऽद्भ्यः	२.१४.२०	गोमन्तस्य गिरेर्दह्नि	३.१३४.१६	गोविन्दस्याभिषेकं	३.१३४.१३	ग्रामणीः सर्वभूतानां	३.३३.४४
गृहीतदीपिकाः सर्वे	३.६४.३	गोपबृद्धस्य वचनं श्रुत्वा	२.१६.१	गोमन्ते युद्धमार्गेण	२.४४.१७	गोविन्देन हतं दृष्ट्वा	२.२१.२३	ग्राम्यारण्यानां त्वं	२.७४.२३
गृहीतानि विमुक्तानि	३.१३३.२६	गोपवेणुं मुमधुरं	२.११.१२	गोमन्ते मुमहृद्युद्धं	२.४६.५३	गोव्रजं गोकुलं रम्यं	२.५.२२	ग्राहुरूपेण यो नीत ग्रानीतो	२.४१.४६
गृहीतो राहुणा चन्द्र	३.४६.१५	गोपानां तद्वचनश्रुत्वा	२.२४.२४	गोमायुः सूर्यवर्चश्च	३.६६.११	गोश्रृंगं दक्षिणं सिन्धु	२.७८.२१	ग्राह्या लालयितव्याश्च	३.५.४०
गृहीत्वा निर्ययुहं प्टा	२.१०४.४७	गोपानां वचनं श्रुत्वा	२.२०.१०	गोमुखाडम्बराणां च	३.५४.२	गोषु चापि भवेत्कामो	२.६४.१४	ग्रीवादितिर्महादेवी तालुः	३.७१.४६
गृहीत्वा वसुदेवाय	३.१०१.१०	गोपयनं यः कुर्वते	१.४०.१२	गोमूत्रं च सदा प्राप्येच्छिर	२.८०.७	गोषु चैव प्रहृष्टासु	२.१६.५३	ग्रीवा बाह्वन्तर चैव	३.१७.५१

श्रीवा निगृह्य पृष्ठं	३.१७.३५	चकषं च महारज्जे	२.३०.८२	चक्रांगलपार्तेश्व	२.१२४.३	चक्षुर्ध्यां तथा स्पर्शो	३.८८.२४	चतुर्थं वाजपेयस्य	३.१३२.३०
श्रीभाम्ने वायुसंमूढा	३.२७.१७	चकार गमने बुद्धि	२.१२७.३३	चक्रवर्ती सुतो यज्ञे	१.३२.१०	चक्षुर्देत्वा सविज्ञानं देवाना	१.१८.८१	चतुर्थस्य तु सावर्णे	१.७.७४
घ		चकार च नमस्कार	३.३४.४५	चक्रवाकस्तनतटाः	२.१६.१६	चक्षुषा रूपसंपन्ना	३.२०.३	चतुर्थं दिवसे वापि पुण्य	२.८१.२५
घटाः किं बहुवो मातर-	३.१३०.१०	चकार तस्य शृङ्गेणु	३.३५.४४	चक्रवाकस्तनतटी तीर	२.११.३६	चक्षुषी तस्य निभिन्ने	१.२०.३०	चतुर्थी यस्तृतीयस्य	२.१२३.२३
घण्टाकण्ठोऽस्मि नाम्नाहं	३.८०.२३	चकार त्वरया युक्तो	३.५६.२६	चक्राक्षयुगशस्त्रेश्व	३.५८.७२	चक्षुषी मानुषे राजन	३.३२.३२	चतुर्दशतपस्तप्त्वा	१.४१.१३०
घण्टाय घण्टभूषाय	३.८७.३३	चकार निन्दं घोरमम्बरे	३.५८.४१	चक्रानलज्वालहतास्सादिन	२.४३.४०	चक्षुषो रूपसंपन्नाः	३.२०.८	चतुर्दशभिरत्युर्गे	३.५५.४८
घनाध्यक्ष मनुह्लादः	३.६०.१	चकार महतीं पूजां	२.५५.१८	चक्रानलविनिर्दग्धा	२.४६.३३	चचार पृथिवीं सर्वा	१.२६.३१	चतुर्दश शिलाघीतान्त्साय	३.५५.४५
घनी भूतानि याग्यासन्	२.८.१०	चकार वायोराह्वानं भूयश्च	२.५८.६७	चक्रायुधात्मजः क्रुद्ध	२.१०४.३४	चचार रुचिरं कृष्णो	२.११.४१	चतुर्दशचर्वाहुः	२.१२१.१३६
घनीर्ध्वर्ध्वमाणास्तु संप्राप्तः	२.५५.७४	चकार विधिवत्सर्वा	३.१०४.१५	चक्रायुधो मोक्षयिता	२.१२०.४१	चचारोमा व्रतं देवी	२.७७.११	चतुर्दश सहस्राणि	२.६३.१३
घर्मदोषपरित्यक्तं मेघतो	२.१०.४१	चकोराः शतपत्राश्च	३.४१.७५	चक्राक्षनीस्तथासङ्गान	३.३८.५	चञ्चद्विष्टदणाविद्धा घोरा	१.४२.१४	चतुर्दशेऽय पययि	१.७.८३
घृतपूर्णेषु कुम्भेषु	१.१५.६	चक्रभूर निरुन्तानि	२.४३.३८	चक्राक्षनीस्तथासङ्गान	३.३८.५	चण्डीं कात्यायनीं	२.१२०.४	चतुर्दशेऽय पययि	१.७.८३
घृतं च नित्यं विप्रेभ्यो	२.८०.५०	चक्रनाडनजा घोरा राजा	२.१२६.१५५	चक्रः परिचयं ते च देव	२.६२.६	चतस्रो जज्ञिरे तेषां	२.१०.३६	चतुर्धा तेजसो भागं	२.२२.४४
घृतोदनं पुरस्ताच्च	३.१३२.६७	चक्रनुयुद्धमतुलं	३.१२७.१६	चक्रुर्हंसन्त्यश्च तथैव रासं	२.८६.७	चतुरङ्गं बलं सर्वं	३.२६.२०	चतुर्भिः पादर्विस्तारं	३.१७.१०
घोरं वैष्णवमग्न्युग्रं	२.१२३.७	चक्रदेवो दन्तवक्त्रं विभेदो	२.५६.६४	चक्रुस्तस्य सुरेशस्य	३.६६.२३	चतुरंगं बलैश्चूष्ण	२.३५.५२	चतुर्भिर्वदनैस्तस्य	३.१७.२८
घोस्माशीविषं कृष्णः कृष्णः	२.५७.३३	चक्रपाणिस्तदा शंखो	३.१२०.६	चक्रुस्ताम्यां महायुद्धं	३.१२७.११	चतुरंगस्य पुत्रस्तु	१.३१.४८	चतुर्भिर्व्यतिरिक्ता	३.२६.३१
घोराश्च न्तयतस्तस्य	२.८.३१	चक्रं च तिलशः कृत्वा	३.६६.२८	चक्रुस्तैश्चवाभिनयेन लब्धं	२.८६.६	चतुरन्ता घरां कृत्वा	३.३५.४	चतुर्भिः सचिवैः साढं	२.१०५.१८
घोषवासिषु सुप्तेषु	२.२५.३	चक्रमादाय चित्रेण	२.१०५.५२	चक्रेश्चतुर्भिः संयुक्त	३.४६.४३	चतुराश्रमवर्णेषु	३.३३.४५	चतुर्भिः सागरैर्मुक्तो	१.४४.१२
घोषेण परमर्षीणां	३.६६.२३	चक्रमुद्यम्य समरे	२.१२६.१२७	चक्रोचितेन हस्तेन	२.४४.३४	चतुरो नियतान्वर्णान्	१.३१.३८	चतुर्भुजं बलाक्रान्तं	३.११८.२२
च		चक्रराजोऽथ पुष्पाणि	३.८४.२१	चक्रोत्कृन्तिताशोऽसौ	२.६३.१२३	चतुर्णां तु पिता योऽसौ	१.२४.१५	चतुर्भुजस्तुर्मितं	२.१२१.११६
चक्रम्पे वसुधा कृत्स्ना	२.७५.११	चक्रलाङ्गलानिर्दग्धं	२.४३.४१	चक्रोद्यतकरं दृष्ट्वा त्वां	२.४०.३६	चतुर्थं ते वरं दधि	२.१२६.१५७	चतुर्भुजादिसंस्थान्ते	३.११.१२
चकर्तं च धनुस्त्रिधं	२.७३.६५								

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

५४

चतुर्गुणादिसंभूतो	३.१३.१	चन्दना गरुडाशानि तथा	२.६४.१६	चन्द्रादित्यावहोरात्रं	२.११४.२१	चरुद्वय गृहीत्वा तद्वये	१.२७.२४	चात्यता वाहिनी चोरा	३.११६.१३
चतुर्गुणान्तपथयि लोकानां	१.४२.१७	चन्दनागरुवृक्षाद्यं सरल	२.८७.४	चन्द्रादित्यो पुण्यसाक्षी	२.७६.१७	चर्मपत्रती च सिन्धुश्च	३.४६.४४	चिक्षेप सुमहाशक्ति	२.६३.५१
चतुर्विंशे युगे चापि	१.४१.१२१	चन्दनानि च दिव्यानि	२.६३.३५	चन्द्रादित्यो महाशैला	२.११४.१५	चलत्प्रस्रवणैः पार्श्वमेवो	२.१८.३४	चिक्षेप शंवरस्याथ	२.१०७.२६
चतुर्विभक्त मूर्ति	३.४७.२३	चन्दनोद्भूत पीतेन वनमाला	२.४६.२६	चन्द्रापीडस्य पुत्राणां	३.१.४	चाक्रं मौशलमित्येवं	२.४३.६४	चिक्षेप समरे क्रुद्धो	२.११६.१४८
चतुर्विधाणां नार्गेन्द्रा	३.२२.२३	चन्द्रप्रभाभिर्विमलं युद्धाय	१.४४.५०	चन्द्रार्ककिरणोद्योतं गिरि	१.४२.२४	चालितो गुरुपुत्रेण भार्गवो	२.२२.३६	चिक्षेपाथ महावीर्यः	३.१०१.१६
चतुर्षु युक्ताश्चत्वारो	१.४४.२०	चन्द्रभास्कर विम्बानि कृत्वा	२.५३.१०	चन्द्रोदय निभं रम्यं	३.१३२.३५	चाक्षुषस्यान्तरे पूर्वं	१.३.६२	चिक्षेपेनं महद्भूतम्	२.१२२.८८
चतुः शीर्षाः पञ्चशीर्षा	३.४६.३८	चन्द्रमाः सह नक्षत्रैरादित्या	३.४३.१०	चपलो समवेतालस्तामसः	२.१०६.८१	चौरान्ध्रौ विनिष्पिष्य	२.११०.६४	चिच्छेद कवचं काया	२.१२६.७०
चतुश्चक्रैः यानेन	३.५१.२	चन्द्रमाः सह नक्षत्रैर्ग्रहे	३.४३.१४	चम्पस्य तु पुरी चम्पा	१.३१.४६	चाणूरेण चिरं कालं	२.३०.४२	चिच्छेद वज्ररत्नं	२.१०४.४०
चतुश्चरणसुखिलं किलन्तं	२.११०.३४	चन्द्रमा हरिरित्येवं	३.१११.५२	चयाट्टालककेयूरा प्रासाद	१.५४.५६	चातुर्वर्ण्यं मृत्प्रसूतं	२.११४.१६	चिच्छेद बहुधा राजन्	२.१०६.१२
चतुष्पदानां सर्वेषां	३.३७.१३	चन्द्रं मृत्युमिवायान्त	३.५५.१५६	चरतस्तत्र संग्रामे	२.१२२.७७	चातुर्विद्यस्य यो वेत्ता	१.४०.३६	चिच्छेद बहुधा वीरो	२.१०५.५८
चतुष्पदानि सर्वाणि	३.३३.१३	चन्द्रवत्यापि निस्त्रिंशं	२.६६.४१	चरद्भिः पक्षिवत्लोके	३.१८.३१	चापल्यमिदमेवैतन्तव	३.११८.२४	चिच्छेद बाणांस्तुष्टा	३.५५.३३
चतुष्पादं धनुर्वेदं शास्त्रग्रामं	२.३३.७	चन्द्रशीतलगात्री सा	२.७६.६८	चरन्तो ब्रह्मचर्यं च	३.२४.८	चारयन्तो विबुद्धानि	२.१४.२	चिच्छेद बाहुनैकाचित	२.६६.४८
चतुष्पादे स्थिते धर्मो	३.६५.६	चन्द्रसूर्यप्रभाहीनां ज्वलन्ती	२.८५.४६	चराचरगुरुः श्रीमान्	१.४१.४७	चामरं व्यजनं छत्रं ध्वजं	२.५०.११	चिच्छेद बाहुनैकाचित	२.१२६.१२८
चतुर्सागरभोगस्त्वं	२.१४.४५	चन्द्रसूर्यमयं ज्योतिर्गौरीशः	१.४०.४०	चराचरगुरुः श्रीमान्वृतो	३.४१.६	चामरं व्यजनं छत्रं ध्वजं	२.५५.४७	चिच्छेद संशयं भीष्म	१.१७.२१
चत्वार प्राश्रमाः पूर्वं	३.१०८.१३	चन्द्रसूर्यात्मकं दिव्यं	३.१६.४४	चराचरस्य सर्वस्य प्रतिष्ठा	१.६.४४	चापपाणिस्मृतीक्ष्णेषुः	२.४४.८	चिच्छेदाथ हरिः संख्ये	३.३०.३१
चत्वारिंशदथाष्टौ च	१.११.१५	चन्द्रसूर्यात्मकं नित्यं	३.२६.३२	चरां कुमारप्रभवां	२.१२०.२१	चारित्रं येन मे लोके	२.११६.१७६	चिच्छेदाथु गिरस्तस्य	२.१०५.७
चत्वार्योद्भिः सहस्राणि	३.८.१	चन्द्रहन्ता क्रोधहन्ता	१.४१.८६	चराम्यहं यामरथं हिमं	२.८१.३२	चारु च बलिनां श्रेष्ठं	२.६०.३६	चित्रकं पंचवर्णं	२.६८.१७
चत्वार्योतानि तेजांसि	२.३५.६१	चन्द्रांशुविमलप्रख्यो	३.१७.४७	चरितं तस्य विप्रेन्द्र दिव्यं	१.४६.६	चारु बाहुः कनीयाश्च	२.१०३.७	चित्रकश्च इवफल्कश्च	२.५६.७१
चत्वार्योतानि तेजांसि विष्णु	२.४३.१०	चन्द्रांशुशुक्ले वसने	१.५४.८	चीरत्वा तेषु सा राज	१.२०.८६	चारुभद्रश्चारुगर्भं	२.१०३.६	चित्रकस्याभवन्पुत्राः पुत्रु	१.३४.१५
चत्वार्येव सहस्राणि	१.८.१२	चन्द्रांशुसमरूपेषु हर्म	२.८८.७०	चरित्वा विविधान्देशा	१.२०.८८	चालयामास शीतांशु	१.४७.५३	चित्रकस्याभवन्पुत्राः	१.३८.५६

चित्रग्रन्थीश्च मनसाः ३.१६.४२	चिन्तयानो नरेन्द्रस्तु २.४६.६०	चेलुश्च गिरयस्तत्र काले २.८७.२८	छायापत्नीसहायो ३.३४.४१	ज
चित्रघ्नी चेन्दुमाला २.१०६.३२	चिन्तयाभिपरीता सा १.३७.८	चैत्यवृक्षेषु सहसाधाराः २.११६.६२	छालिक्यगान्धर्वगुणोदयेषु २.८६.८३	जगज्जालं विततं यत्र २.७२.३४
चित्रपट्टं मयादत्तं २.११६.४३	चिन्तां कर्तुं वृषा देव २.१२१.२४	चैद्यस्थायं सुनीयस्य २.५६.१६	छालिक्यगान्धर्वमुदार २.८६.७५	जगतः प्रथमं भागं १.४४.२७
चित्रपट्टं गतान् मुखाणां २.११८.६३	चिन्ता मणिनु दाराश्च २.६३.३६	चैद्योपरिचरं वीरं वसुं १.३२.६१	छालिक्यगान्धर्वमुदार २.८६.७८	जगतश्चक्षुषि ततो २.६७.१
चित्रलेखा च सुश्रोणी २.११८.१७	चिरनष्टेन पुत्रेण २.३३.२७	चोराश्चौरस्य हतारो ३.४.२३	छित्त्वा त चापि सङ्गोच ३.१२३.१६	जगत् सारमुद्भूत्य पुत्रः २.६२.२४
चित्रलेखात्रयोद्वय २.११८.५५	चिरप्रणष्टपुत्रस्य २.१०८.३२	चोरोऽयं सर्वथा राजा ३.६५.३१	छित्त्वा ननाद गैनेयः ३.१२५.१३	जगती जलात् संभूता ३.१८.२६
चित्रलेखात्रयोद्वय २.११८.५५	चिरं च भवता कालो २.२६.६७	च्यवनात्कुन यज्ञस्तु इष्ट्वा १.३२.६०	छित्त्वा बाहुसहस्रं ते १.३३.४५	जगत्पर्यं कृतो योऽयमंशो १.५५.१५
चित्रलेखात्रयोद्वय २.११८.५५	चौरं परां च बहुल ३.४.३५	छ	छित्त्वा वनं तत्सोमिनि १.५४.५५	जगत्यां विप्रकीर्णस्य २.१४.५३
चित्रलेखा वच श्रुत्वा २.११८.४८	चिरवादिषु विरुपाक्षः ३.१२६.१७	छत्रमेकेन वाणेन रथेषां २.६३.६६	छित्त्वा शिरस्तु तस्यास्य ३.६५.२६	जगत्स्रष्टुमना देव ३.३६.१
चित्रलेखे वदस्वैनं २.११८.७१	चिरात्प्रभृति कुम्भाण्ड २.११६.५१	छत्रेण ध्रियमाणेन २.१२७.६१	छित्त्वा शूलेन तान्सर्वा ३.५८.१४	जगदण्डमिदं पूर्वमासीत्सर्वं ३.३४.१
चित्रसेनः सुदेवायाश्चित्रा २.१०३.१८	चिरोयिता गृहे चापि १.२०.७८	छन्दोभिरेव त्वष्टा ३.२६.१२	छिद्रं दर्शो मुनेत्रश्च तथा १.२३.१६	जगद्योनिर्जगद्बीजो जगद्गुरु १.४४.३७
चित्रसेनस्तु संसर्गतं दृष्ट्वा २.३५.६४	चुकूज बहुमानेन कृष्णस्य २.७३.१००	छन्दोभिवृत्त सज्जातः ३.१५.२	छिद्रेषु प्रहरन्त्येते १.४८.८०	जगज्जं च महाघोषो ३.५६.२०
चित्रा कनकशक्तिस्तु २.१२६.२४	चूर्णीकृत महाविषिसीरो १.३३.३०	छन्धमानो वरेणाय वरं १.१३.२१	छिन्नपृष्ठा हतारोहा ३.५६.३४	जगमत्तुः सहितो राजन् ३.१२७.४
चित्रां नाम कुमारीं च १.३५.६	चेतनं पुष्करं कोशैः क्षुधा २.१०.४०	छन्नो हि तमसा सोमो ३.४.४८	छिन्नं ताम्यं समादाय ३.११०.१२	जग्मुर्विशोऽग्निदाहाश्च २.८७.२७
चित्रायुधसमाकीर्णः ३.१३३.११	चेतसस्तुपत्रम्भं हि ३.१७.५७	छागमाज्जरिवक्त्राश्च २.१२४.२२	छिन्नं परशुनैकेन स्मरता २.३६.३२	जगाम च पुरीं दीनां २.२८.११०
चिन्तयद्भगवान रुद्रो २.१२६.८५	चेदिनाथ सनाथो स्वस्त्यवृत्तौ २.४३.६१	छागलिः पुरभिन्नश्च २.४२.३२	छिन्नं बाहुसहस्रं च १.४१.१५६	जगाम च विविक्ते शीतला २.५.१६
चिन्तयन्निति विप्रेन्द्रो ३.११४.४२	चेदिराजस्य तु वसोरासी २.५६.२०	छादयित्वास्मनात्मान १.५५.४०	छिन्नमूलस्त्व संवृत्ता २.३१.५	जगाम त्वरितश्चैव सत्य २.६६.२
चिन्तयन्निविति विप्रेन्द्रो ३.११४.४२	चेदिराजस्य वचनं महार्थं २.५३.२८	छादयेतां शरैश्चन्द्र ३.५५.१६०	छिन्नमूलो ह्ययं वंशो २.२३.३८	जगाम मधुरां कृष्णो २.५१.६६
चिन्तयन्महाभाग १.२६.१६	चेरतुस्सुमहात्मानो यादवैः २.२३.४४	छादितो वसुदेवेन यदि २.२३.१७	छिन्नाशस्त्वं वृषावृद्धो २.२२.७६	जगाम शिविरं रामः २.६१.५१
	चेलुगिरिवराश्चैव २.७५.१२	छान्दसीभिरुदाराभिः ३.३३.७		जगामाकाशमनो यत्र २.६३.४
				जगामाद्य ततो विष्णुः २.२.२४

जग्राह कामुकं वीरः	२.६३.११२	जघान : सचिवसाध्वं	१.४१.१३७	जनार्दनं पुरस्कृत्य कर्म	२.६४.५७	जम्बूमार्गं गमिष्यामि	२.८२.३५	जया च विजया चैव	२.३.४
जग्राह कृष्णस्वरितो	२.१२६.१०१	जघानाचलसंकाशो	३.५६.४२	जनार्दनं विसृज्याशु	३.११७.५	जय चक्रगदापाणे	३.८७.१०	जयाय शीघ्रं सहिता बली	२.४७.११
जग्राह प्रथमं रामो ललाम	२.३५.६२	जघनतुश्च दरेस्तीक्ष्णं	३.१२७.१३	जनार्दनं मुवाचेदं दुर्वृता	३.१०६.१८	जयति पराक्षरसूनुः	१.१.३	जयाशीर्वाचनेस्त्वैते	१.५५.४१
जग्राह प्रथमं रामो ललाम	२.४३.११	जघ्ने च दनवान्मुख्यान्	२.७१.३७	जनार्दनश्च धर्मात्मा	३.१०७.१	जयदेव जगन्नाथ	३.७६.१३	जये तयोर्विप्रवर्य	३.११२.६
जग्राह वारुणं सोऽस्त्रं	२.१२४.४३	जजल्पुस्ते यथायामं	२.७.२८	जनार्दनस्तु धर्मात्मा	३.११३.२६	जयद्रथस्तु राजेन्द्र	१.३१.५६	जये दशशताक्षस्य मयस्य	१.४६.४०
जग्राह वीणामथ नारदस्तु	२.८६.६८	जजिरे गात्रवत्या च	२.१०३.१४	जनार्दनस्तु विप्रेन्द्रो	३.११३.७	जयन्तः प्रवरश्चैव	२.७३.८०	जरां न यास्यति वधूयवित्थं	२.६४.६३
जग्राह शिरसि क्षितुण्डे	२.१२६.८०	जजे चैकादश सुतान्	३.१४.३८	जनार्दनं हरे विष्णो	३.८१.५	जयन्तं रौक्मिण्यस्य	२.६६.५४	जरां मे प्रतिगृह्णीष्व	१.३०.२३
जग्राहाथ करं सखा	२.६४.१३	जजेऽथ एकमकवचात्	१.३६.११	जनार्दनेन राजानो	३.१०७.२६	जयन्तेन च वीरेण	२.७६.३३	जरायां बहुवो दोषाः	१.३०.२५
जघान कंसं रिपुपक्ष	३.८२.३५	जजे पुनर्वसुस्तस्माद	१.३७.१६	जनार्दनेन सहितो	३.१०६.१२	जयन्तो जयतां श्रेष्ठो	२.७३.२५	जरासंघं तु ते जित्वा	२.३६.३६
जगान कृष्णं श्रीबाधो	२.१२२.६०	जजे श्वावस्तको राजा	१.११.२२	जनार्दनोऽपि धर्मात्मा	३.१०५.२४	जयप्राप्त्यासुराश्चैव	३.१३३.४५	जरासंघं पुरस्कृत्य वृक्षिण	२.५६.२५
जघान गदया राजन्	३.६६.६	जजे सत्यधृतेः पुत्रो	१.२०.३८	जनार्दनोऽपि सहितो	२.११०.८८	जय बाणं महाबाहो	२.१२१.१४३	जरासंघं वचस्मृत्वा	२.४२.४१
जघान च तथा दैत्यं	३.१२३.१२	जटी कृष्णाजिनी दण्डी	२.७१.४०	जन्मनो मरणाच्छैव	३.६६.३८	जय बाणं मह.बाहो	२.१२६.७५	जरासंघश्च नो राजा	२.५७.२६
जघान चतुरः सोऽश्वान	२.१०५.५५	जनमेजय कृष्णस्य	२.६५.३	जन्मप्रभृति कर्मैतद्देवैर	२.१७.५	जय विष्णो हृषीकेश	३.८७.८	जरासंघः सुनीयश्च	२.५०.५६
जघान सान्पारिवदान्समरे	३.५८.४६	जनमेजयस्तु स नृपः	३.२.४	जन्म प्रभृति चाप्येतो	२.१०१.४६	जय शर्वं ततश्चक्रुर	३.४८.२३	जरासन्धस्ततः प्राप्तो	२.४२.१
जघान तुरगाश्वाजौ यत	२.३५.८४	जनमेजयस्य के पुत्राः	३.१.१	जन्मप्रभृति चैवावां	३.३६.३७	जयशब्दरवाश्चैव देवानां	३.६४.३२	जरासंघस्तु तच्छ्रुत्वा	२.३६.३०
जघान दानवस्तेन	३.५६.१७	जनमेजयस्यदायादास्त्रय	१.३२.१०१	जन्मेदमोक्षं धीरं	३.८०.६१	जयशब्दश्च विविधं	२.१२७.११०	जरासंघस्तु तच्छ्रुत्वा	२.४३.७४
जघान निशितैर्बाणैः	३.१२५.१०	जनमेजयस्य राजर्षे	१.३१.२१	जर्षश्च मन्त्रैश्च	३.५१.८८	जयश्रिया सेव्यमानो	३.५५.४३	जरासन्धस्तु धर्मात्मा	३.११३.२१
जघान पश्यतां राज्ञां	२.१०५.४४	जनमेजयेन यत्पुष्टः	१.१.१०	जर्षश्च हीमैश्च	२.१२४.५१	जयश्रिया सेव्यमानो	३.५७.४३	जरासन्धस्तु बलवान्प्राणां	२.३८.५६
जघार वक्षोदेवो तु	३.१३६.३८	जनयामास पुत्रं तु तपो	१.२७.४३	जम्बुद्वीपं रत्नवन्तं	३.४६.४७	जयस्थानं ततः कृत्वा	२.१२१.१३२	जरासन्धस्य कत्याण्यो	२.३४.६
जघान वीर्यवर्धिनं	३.८२.१५	जनार्दनं नरेन्द्राणां	२.४७.४	जम्बूजम्बुल वृक्षादयं	२.४०.१६	जयस्व कृष्ण बाणूरं	२.३०.४१	जरासन्धस्य निधनं ये	२.४३.६२

जरासन्धस्य निधने	२.११५.१५	जहार कन्यां कामान्	१.१२.१४	जातोऽयं जगतां बाघी	२.५३.२६	जामदग्न्यस्तृतीयस्ते	२.४०.३	जित्वारिगणसंघांश्च	२.५५.४६
जरासन्धस्य नृपते	२.३६.६	जहि देव दिनेः पुत्रं	३.४७.३	जातोऽयं जाततां याति	२.४.६२	जामदग्न्यस्य रामस्य	२.७३.३६	जिह्वाभिर्लेलिहानाभि	३.२८.३३
जरासन्धेन सहित	३.११३.१३	जहीहि निद्रां सहजां	१.५०.३८	जात्यन्तरेषु सर्वेषु	१.२०.१४	जत्मदग्न्यास्तथा रामा	२.५६.१५	जिह्वा रसश्च कलेदश्च	३.६.७
जरासन्धो दन्तवक्रः	२.८३.२६	जहुः प्राणान्मर्कसाध्य	१.२१.२८	जात्यां हि यादवः कृष्ण	२.२३.२१	जामदग्न्ये गते रामे तो	२.४१.१	जिह्वा वंशवानरो देवः	३.२६.५२
जरासन्धोऽपि नृपति	२.३६.३५	जहृषु देव गन्धर्वा	२.१०७.२६	जानत्या ते महाराज	१.२४.२८	जामदग्न्येन रामेण	१.५२.४६	जीमूतघनसंकाशो	१.४१.७७
जलक्रीडा तवाङ्कुस्था	२.६७.२१	जह्नुस्तु दयितं पुत्रं	१.२७.१०	जानन्धर्मं वसिष्ठ	१.१३.८	जमाता त्वभक्तस्य	२.५६.२६	जीमूतघनसंकाशो	३.४७.१२
जलक्रीडां गतातत्र	२.११७.५३	जह्नुस्तु दयितः पुत्रस्त्व	१.३२.४६	जानन्नपि महातेजा	३.६६.४३	जाम्बूनद इवादीप्तः	२.६८.४७	जीमूतपुत्रो बृहत्तिस्तस्य	१.३६.२५
जलक्रीडाकृष्टस्तस्माद	३.३४.२६	जगति कोऽत्र कः शोते	१.५०.१७	जानामि कंसं भूत	१.५५.४	जाम्बूनदमयं दिव्यं	२.६८.६२	जीर्यन्ति जीर्यतः केशा	१.३०.४३
जलक्रीडा विहारान्च	२.११७.४७	जाग्रतोवा यथा चाह	२.११८.१४	जानामि तौ दुरात्मानौ	३.११२.६	जाम्बूनदमयं शुभ्रं रचितं	२.५०.२६	जीवन्ती तौ यदि	३.१११.६५
जलजानि च रत्नानि	२.३८.३२	जालमात्रं स भगवान्	१.२५.४०	जानामि त्वां महादेवं	३.१११.३२	जाम्बूनदमयान्यस्य	२.६४.४	जीर्णो भगवतस्तस्य	३.१०.१३
जलजैः प्राणिभिः कीर्णै	२.११.३२	जातमात्रे ततः कृष्ण	२.११०.३	जानामि भवतो भावं	२.१६.६४	जाम्बूनद विचित्राङ्गा	३.५०.२०	जीवतां देव बाणोऽय-	२.१२६.१३६
जलं मां रक्षतां नित्यं	२.८०.७१	जातमात्रोऽयं भगवान्	३.३७.३	जानाम्यहं जगन्नाय	३.७५.१५	जायस्व शीघ्रं भद्रं	१.३४.६	जीवन्नाहं प्रदास्यामि	२.१२७.६२
जलं स्तम्भय साधो	२.११३.११	जातरूपं तदभवत्तत्सर्व	३.३४.८	जानाम्यहं महाबाहो	२.५३.१६	जायमानो हि भगवान्	२.४.१८	जीवितस्य हि संदेह	२.११८.६०
जलशैवल शृंगा ग्रैहन	२.४०.२३	जातरूपमयं चैकं कुण्डलं	२.४१.३२	जानीष्वमेधा मे वृत्तिः	२.५१.४४	जारुष्यामाहवृत्तिः कायः	२.१०२.५	जुहुवुर्मत्र विधिना	३.२६.३
जलाकुलोपलस्तत्र प्रथुतो	२.४२.८३	जातरूपमयैः शृङ्गैः	३.३५.२२	जानीवस्त्वां विश्व योनि	३.१३.२२	जिगाय जगतीं चैव	२.७१.३५	जुञ्जोष भगदेव	२.६६.१६
जलाप्लुनानीक्ष्य	२.६५.१३	जातरूपमयैः शृङ्गैस्तुरुणा	३.३५.६	जानुभिश्चात्मनिर्घोषे	१.३०.३५	जिघांमुहि यदून्क्रुद्ध	२.३४.५	जुहुवुः समरे प्राणाग्नि	३.५७.३१
जलावलम्बाम्बुद	२.६५.२१	जाता शिवजला सर्वा	२.१२.४७	जानुभ्यां पतितो भूमी	३.२८.२३	जितमित्येव हृष्टोऽय	२.६१.३१	जुहोति भगवान्विष्णु	३.८४.२४
जले निमग्नां घरणौ	३.३४.२८	जाति देशं च सत्यं	३.१३२.५४	जानुभ्यां मुष्टिभिश्चैव	३.६७.१५	जिता च पृथिवी	३.६१.३	जुह्वन्निनिं समास्थाय	३.८४.२८
जलेषु जलजैश्छन्न स्थलेषु	२.४०.१५	जाते ज्वेतेषु गर्भेषु नीतेषु	२.३.२६	जाने त्वां कृष्ण गोप्तारं	२.३६.४८	जित्वा गोपालदायादं	३.११८.२७	जम्भणं च तथा स्वापो	२.११७.३३
जलैर्बलाहकोत्सृष्टं	२.१०.१०	जातो जातो महाबाहो	२.१११.११	जाने त्वां सर्वभूताना	२.१२६.११५	जित्वा मां गच्छ राजेन्द्र	३.१००.२०	जम्भणं नाम सोऽप्यस्त्रं	२.१२५.४

जम्भलं प्रापणं चैव	३.४४.१३	ज्योतिश्चक्षुषि संवदं	३.१७.४०	ज्ञातियोधान्समानीय	२.६६.६	तं कृष्णो रीक्षित्वा यश्च	२.६०.२०	तं जयाय सुरेन्द्राणां	१.४८.३८
जम्भते इवसते	२.१२३.४	ज्योतिषामोश्वरं श्योम्नि	१.४४.२६	ज्ञातेस्समानवंशस्य	२.५६.२४	तं श्रद्धमानं गोपालाः	२.११.२५	तं जिगाय ततो रक्ष्मी	२.६१.२६
जम्भमाणेव गगने	२.१२६.१७	ज्योतीषि घनमुक्तानि	२.१६.३१	ज्ञात्वा तु वरदानं	२.५७.१८	तं गतासु गतश्रीकं पतितं	२.१३.२१	तं तथा पतितं दृष्ट्वा	२.११६.५८
जम्भमैरावणं चापि	२.१०२.२५	ज्योतीषि चैव संवृता	३.१६.४३	ज्ञात्वा प्रमाणं पृथ्वाश्च	१.३.२३	तं गत्वा यज्ञघाटं	३.६६.५८	तं तपस्तनिवादित्यं	१.४५.२४
जिता क्षत्रस्य सर्वस्य	१.१३.२६	ज्योतीषि शतशः पेतुः	२.७५.१६	ज्ञात्वा विष्णुं क्षितिगतं	२.१.१	तं गर्भं विधिना दृष्ट्वा	१.२५.७	तं तु कृष्णश्च गोपाश्च	२.१४.५६
जिता ज्यो जय श्रीमान्	३.६४.२८	ज्योतिष्टोमविभागी च	२.१२२.३३	ज्ञानध्यानतपः पूजावेद	१.२३.१७	तं गृहीत्वा रणमुखे	३.५४.५१	तं तु गर्भं प्रयत्नेन	२.४.६
जिपुमुनिगणां मंत्रान्	२.७५.१६	ज्वरः कृष्णविसृष्टस्तु	२.१२३.८	ज्ञानं यदाप्तं भवता	३.१०८.१७	तं गृह्य बाहुना कृष्णो	३.१२३.१७	तं तु पञ्चत्वमापन्नं	१.२०.६६
जिपुमुनिगणास्तत्र कृष्णस्य	२.८५.५६	ज्वरस्य तु महायुद्धे	२.१२२.६१	ज्ञानलेखाद्विहीनात्मन्	३.१०८.१	तं गोपाः पर्वताकारं	२.१७.२४	तं तु बद्धं गले दृष्ट्वा	१.१२.२२
जिष्वामि तो रणे विप्र	३.११२.३	ज्वरस्य वचनं श्रुत्वा	२.१२३.३४	ज्ञानवान् दृष्टविषवात्मा	३.१०.५४	तं घटैः काञ्चनैर्दिव्यैः	२.२६.५७	तं तु रैवतकेऽद्वाक्षं तदासीन्	२.६६.२५
जौगीवम्याय तु तथा	१.१८.२४	ज्वराभिभूतमात्मान	२.१२३.६	ज्ञानविज्ञानसंपन्नो	३.१२६.२	तं च दिव्यं द्रुमश्रेष्ठं	२.६६.२३	तं त्यजाव महाराज	२.३७.२३
जोतिष्मान् भार्गवश्चैव	१.७.६१	ज्वलनादित्यसंकाशां	२.११६.१६१	ज्ञानं	३.८६.६	तं च देशं व्यवसितः	१.५३.२१	तं दिव्यं कुसुमं वृक्षं	२.७५.५४
ज्याघाततलनिर्घोषो घनुषां	१.४७.२५	ज्वलद्गिरिव विप्रैस्तै	३.२३.२८	जिष्मकः शक्तिमूढः	३.१२५.२६	तं च नेतुं समायाता	२.११६.६	तं दृष्ट्वा चित्रलेखा तु	२.११६.३
ज्यां विकूजन्महाशब्दः	२.६३.४६	ज्वलद्गिरिव संयुक्तं	२.१२६.५४	जिष्मको वीर्यसम्पन्नो	३.१२६.२	तं च वृद्धं प्रियमुतं	२.२६.१८	तं दृष्ट्वा दानवा देवमभि	२.८४.३४
ज्यामवस्याभवद्भार्या शौन्या	१.३६.१६	ज्वलद्गिरिनिर्गतं	१.५.४८	ज्ञानं	३.८६.६	तं च शक्रस्य दयितं	२.६६.१६	तं दृष्ट्वा दनुर्वगोपाः	२.२४.१६
ज्येष्ठः पुत्रशतस्या	१.१०.३४	ज्वलन्निव च तेजस्वी	३.१४.२	त ऊर्चः सर्वदेवानाम्	२.८२.१७	तं च श्रुत्वा महानाबं	२.१२२.२७	तं दृष्ट्वा निर्ययौ हृष्टरस	२.५७.४१
ज्येष्ठान्वाढो शुभ्रो मासौ	२.७६.४३	ज्वलिताग्निप्रतीकाशो	१.५४.७	त एते पितरो देवा	१.१७.४२	तं चापि दशभिर्वीरो	३.६८.१०	तं दृष्ट्वा भगवानकृष्ण	२.६७.१४
ज्यैष्ठ्यं कानिष्ठ्य मप्येषां	१.२.५६	ज्वालाशतसहस्राढ्यं	२.५३.२६	तं कालनेमि समरे	१.४६.५८	तं जघान महाघोरं	२.६३.८६	तं दृष्ट्वा मूर्च्छितं	२.१२६.७२
ज्यैष्ठ्यं मेतेन देवेन	२.७१.५३	ज्ञाति कार्यं चिकीर्षुस्त	२.१०१.२८	तं कूर्दमानं मधुसूदनश्च	२.८६.१७	तं जनाः पर्यधावन्त	१.३८.२३	तं दृष्ट्वा विस्मयं तत्र	२.१२२.२४
ज्योतिर्भूतो ज्योतिषां	३.३२.२६	ज्ञाति कार्यायसिद्ध्यर्थ	२.३४.८	तं कृष्णगतमाज्ञाय	२.६०.१०	तं जयन्तो नियस्याय पतितं	२.७३.७६	तं दृष्ट्वा समनुप्राप्तं	२.५५.६३
ज्योतिश्चक्षुश्च	१.४०.६१	ज्ञातिभेद मयास्कृष्णस्त	१.३६.३१	तं कृष्णलक्षणा वाचा	२.२७.२०				

तं दृष्ट्वा ऋषयः प्राहुः	१.२.२२	तं ब्रह्मवादिनं क्षान्तं	१.२६.४	तं वै प्रह्लादवचनात्सक्षण	३.२६.२	तं सोऽम्बुजदलश्यामं	२.१६.५	तच्छ्रुत्वा तस्य पत्न्येका	२.६६.३१
तं देवापि महात्मानं	३.६७.७	तं ब्रह्मवादिनां श्रेष्ठं	३.६६.११	तं वै विद्धि महाराज	१.१.२२	तं स्म वीक्षन्ति भूतानि	१.४६.५६	तच्छ्रुत्वा त्वरितः कंसो	२.४.२६
तं न विप्रोऽप्यथाकामं	३.८४.६	तं मन्ये केशवं विष्णुं	२.४८.३१	तं वै स्वयं भूमंगवान्	१.४१.४३	तं हतं केशिनं दृष्ट्वा	२.२४.५२	तच्छ्रुत्वा दानवाः	३.४४.३
तं निवारितवान्मन्त्री	२.१२१.८६	तं महाभ्रप्रतिच्छन्नं	२.८७.३	तं व्रजन्तं सुपर्णेन	१.५२.५	तं हनं परिवेद्यो भाग्यं	२.२७.१७	तच्छ्रुत्वा नन्दगोपस्य	२.६.१२
तं निसृष्टद्रुमेणाजो वज्र	२.५६.७२	तं महीगगने सुप्तं	२.३१.२	तं शयानं महात्मानं	१.५०.१०	तं हत्वा केशिनं युद्धे	२.२४.५१	तच्छ्रुत्वा नन्दिवाक्यं	२.१२६.१४३
तं निहत्य प्रलम्बं तु	२.१४.५५	तं मातलिसुतं चैव	२.६६.५६	तं शरत्कुसुमापीढा	२.१६.१२	तं हत्वा पुण्डरीकाक्षः	२.३०.६८	तच्छ्रुत्वा नारदस्तस्य	२.१२६.४७
तं पक्षपुटवेगेन विलेप	२.७३.७५	तं मारय महाकायं	१.११.३७	तं गणप ततः क्रोधा	१.६.२३	तं हत्वा पुण्डरीकाक्षो	३.२६.४४	तच्छ्रुत्वा भगवान्छक्रः	२.८६.१६
तं पाञ्चजन्यशब्देन	२.६७.१५	तं मुक्त्वा गरुडेनाथ	२.७३.१०१	तं शैलं सर्वगान्नाणि	३.२३.४१	तं हत्वा रथमारुह्य	२.५६.७३	तच्छ्रुत्वा भगवान्विष्णुः	३.८३.५
तं पारिजातं कुसुमं	२.७४.२१	तं मूर्ध्नि धातुभिर्नद्धं	३.१८.२०	तं श्रुत्वा निनदं घोरमपूर्वं	२.१२१.१३	तं हि पस्पर्शं हस्तेन	२.७३.७८	तच्छ्रुत्वा भाषितं तस्य	२.१०४.५४
तं पावका लोकगुहं	३.५३.३८	तं युद्धे जितवान्भीष्म	३.११३.११	तं श्रुत्वाभ्यागतस्तत्र	२.६७.४	तक्रानिस्त्रावमलिनं	२.५.२६	तच्छ्रुत्वा मनुयः सर्वे	३.८४.२
तं पुनःशरं वर्येण	२.११६.१५८	तं रथस्थं प्रमाणस्थं	२.४४.२८	तं श्रुत्वा शंखशब्दं	३.३१.१८	तच्च कण्ठेऽसमासज्य	२.८६.४६	तच्छ्रुत्वा मोहमगमद्	१.२४.२२
तं प्रत्यविष्मन्मारचैर्हंसः	३.१२४.२	तं लोकपालं पित्रो	३.५२.३१	तं श्रुत्वा सहितास्सर्वे	२.३७.८	तच्चक्रेण निहत्यास्त्रं	२.१२६.६३	तच्छ्रुत्वा यमुना भूयः	३.१२६.८
तं प्रविष्टो हृषीकेशो	२.११३.२६	तं वरेण मुनिश्रेष्ठ	२.६१.२७	तं सज्जायित्वा कंसस्य	२.२६.३०	तच्च पद्मं पुराणज्ञाः	३.१२.३	तच्छ्रुत्वा रोहिणीयस्य	२.१२.३२
तं प्रस्थितं तच्च दृष्ट्वा	२.७३.१३	तं वासुदेवः श्रीमन्त	२.५७.५६	तं सप्तरात्रे संपूर्णे निशीथे	२.१०४.३	तच्च मांसं स्वयं चैव	१.१३.१६	तच्छ्रुत्वा वचनं तेषां	३.४०.५
तं प्रस्थितमभिप्रेक्ष्य	२.११०.२५	तं विक्रान्तमिव ज्ञात्वा	२.७३.७४	तं समुद्राश्च नद्यश्च	१.५.२६	तच्च वक्रशतं घोरं	१.४८.४७	तच्छ्रुत्वा वचनं देवो	३.८७.६
तं प्राङ्मुखं वीरं मायावी	२.६०.३५	तं विजेतानूलोकेऽस्मिन्	२.५२.२४	तं सर्वं यादवा मुष्या	२.३२.५६	तच्च श्रुत्वा मुनिखिलं	२.६५.४६	तच्छ्रुत्वा वासुदेवस्य	२.१०१.४
तं बलीधमपर्यन्तं	३.५७.२	तं विनत्य महापक्षो वायो	१.४८.४६	तं सा मायावती कांतं	२.१०४.१७	तच्च सर्वं हृषीकेश	२.६४.१८	तच्छ्रुत्वा विष्णुगदितं ब्रह्मा	१.५१.१
तं बाणं त्रिविधं वीर्यत	३.१३३.७६	तं विविक्त वनगतं लोक	२.१६.८	तं सिनिश्च कुहूश्चैव	१.२५.२७	तच्छ्रुत्वा सुमहद्गंगा	३.५८.४	तच्छ्रुत्वा विदरां कान्तां	२.११३.४
तं बाणैः पुनरेवाथ वीरो	२.६०.२१	तं श्रीडितमुखं दृष्ट्वा	२.१०८.७	तंसुराद्यः प्रतिरथं सुबाहु	१.३२.३	तच्छ्रुत्वा युधि शक्रेण	३.६६.१४	तडागेषु च कान्तेषु	२.१६.५५
तं त्रिभेदाष्टभिः क्रुद्धो	२.५६.७६	तं वीर्यं बालं महता	२.१६.४	तमोः सुरोषो राजवि	१.३२.७	तच्छ्रुत्वा कश्यपः क्रुद्धो	२.७२.२१	तदिदं गणार्कं सदृशो	३.५४.६७

तद्विद्वष्टि सुविपुला	३.७१.४६	ततश्च बहुलं यात्रं	२.८५.१८	ततः कृष्णस्य वचना	१.३६.३८	ततः क्रुद्धो महाराज	३.११६.१	ततः पीता महास्थानो	१.३२.४७
तज्जलं वज्रनिष्पेयः	२.१५.१५	ततः क्षुब्धनिव प्राणां	३.५५.३२	ततः कृष्णस्य वचना	२.८४.७	ततः क्रुद्धो महाराज	३.१२४.६	ततः पुनर्महात्मानः	१.५.२१
तज्जलं रसुराः पूर्वमाक्रान्ता	३.३०.२८	ततः क्षीरनिशयेन	३.६.१५	ततः कृष्णोऽथ रुद्रश्च	२.१२५.२२	ततः क्रुद्धोऽहंमयं	३.८८.१०	ततः पुरुषसिंहैर्या यक्षुभिः	२.१००.१६
तत इन्द्रः स्वयं तत्र	३.८५.१	ततः कालः मुनिर्यातो	३.५६.७४	ततः कृष्णो भोजयित्वा	२.११४.१	ततः क्रुद्धो हली विद्वस्तेन	३.१२४.५	ततः पौण्ड्रो महावीर्यो	३.६५.३
तत उत्सारयामास	१.६.११	ततः काले च संप्राप्ते	२.७६.३	ततः कृष्णोऽम्बुदाकार	२.४३.३५	ततः क्रुद्धो हृषीकेशः	३.१२३.७	ततः प्रकृति मापन्नाः	३.४०.२
तत एवाभ्यनुजां सा	२.८१.१०	ततः काले व्यतीते तु	२.६१.१	ततः कृष्णो हृषीकेशो	३.१३०.१६	ततः क्रोधाभिमात्राक्षः	२.३०.७	ततः प्रक्षायमाणास्तानु	३.५८.१०
तत उत्थाय धमर्तिमा	३.१०६.७	ततः काले शिवे पुण्ये	२.३३.३६	ततः कालाश शिलरा	३.६२.१	ततः खान्निपतन्ति	२.२५.५७	ततः प्रचक्रुर्जलवादिनां	२.८६.४४
तत उत्थाय रामस्तु	३.१२६.४१	ततः काले शिवे पुण्ये	२.४५.१३	ततः क्रमितुमोऽग्रे	३.३१.१२	ततः स्थितमथालक्ष्य	३.५४.५२	ततः प्रज्वलिताश्चेन	२.५६.५
तत उत्सृज्य राजा नृ	३.६७.११	ततः काण्डस्तुण्यं शंखशुष्क	२.४२.५३	ततः क्रमेण घोषस्य	२.६.२०	ततः प्रभृमिताः सर्वे	३.४६.३	ततः प्रज्वलितः क्रोधात्	३.४६.२
ततः कंसो महातेजा	२.१०१.५६	ततः किकरसैन्यं तु	२.११६.८०	ततः क्रमेण सर्वास्तान्	२.११८.६८	ततः पंकजपत्राक्षो यादवा	२.५८.४	ततः प्रज्वलितां शक्तिं	३.३६.१७
ततः कण्ठे परिब्रज्य	२.१२१.१३३	ततः किञ्चिद्विवासीन	३.१११.२१	ततः क्रमेण सर्वास्ता	२.१२८.२०	ततः परं महृच्चापं	३.६८.४	ततः प्रणम्य ते वीराः	३.६६.१३
ततः कथान्ते नृपति	३.२.१०	ततः किलकिलाशब्द	२.३०.१८	ततः क्रीडाविहारं तमनुभूय	२.११७.२६	ततः परं महृत्प्रायं	३.६६.२६	ततः प्रक्षलिता भूमिर्नव	२.२७.५८
ततः कदाचित्ती वीरो	३.१०६.१	ततः किलकिलाशब्दः	२.६३.२६	ततः क्रुद्धः पुनस्तत्र	३.६४.१६	ततः पर्जन्यघोषेण	२.१०२.४	ततः प्रतिगृहीता सा	२.१२८.१२
ततः कदाचित्पश्यामि	१.१७.५	ततः किलकिलाशब्दः	२.१२७.१४७	ततः क्रुद्धा महादैत्या	२.१०५.२	ततः पर्वतजालानि	२.११३.१	ततः प्रत्यागतप्राणो	२.८५.५७
ततः कदाचिदय वै	३.१०.३०	ततः किलकिलाशब्दो	२.१८.५८	ततः क्रुद्धो गदापाणि	३.६७.१	ततः पश्चाद्विधास्रामो	३.११३.१८	ततः प्रत्युद्युतास्तसर्वे	२.४५.३
ततः कदाचिद्दु खेन	२.११३.२१	ततः कुशलहस्तत्वाद्	२.११८.६२	ततः क्रुद्धोऽथ दुर्वासो	३.१०६.१	ततः पायिवर्मदवर्ष	३.१६.५०	ततः प्रत्युद्युतसर्वे यादवा	२.२३.२६
ततः कदाचिद्धमर्तिमा	२.१११.७	ततः कुशे स्थिते राज्ये	२.३८.४३	ततः क्रुद्धो निपादेशो	३.१०२.२	ततः पावक संकार्यः	३.६१.३६	ततः प्रथममवर्षयं	३.१६.७
ततः कथान्ते तत्राह	२.११४.३	ततः कृष्णः शरंस्तीक्ष्णं	२.७३.१६	ततः क्रुद्धो महार्दस्य	३.५५.३६	ततः पाशसहस्राणि	२.८४.५७	ततः प्रथमाय जलजं	२.१२७.६४
ततः कनकपुष्पानां	३.५५.६३	ततः कृष्णः सुपुण्येन	२.६६.१६	ततः क्रुद्धो महाराज	३.६३.१	ततः पिता मे सुप्रीतो	१.१६.२२	ततः प्रभञ्जो वायु	१.५२.१२
ततः कस्यपमाभाष्य	३.२५.५	ततः कृष्णस्य वचनं	२.५८.३८	ततः क्रुद्धो महाराज	३.६६.१	ततः पिपीलिकरुत स	१.२४.३	ततः प्रभाते विमले	२.२६.३२

ततः प्रभाते विमले	२.५८.१	ततः प्रविष्टास्ते सर्वे	२.१२७.८	ततः प्राप्ता नराग्रयो	२.१०१.११	ततः शमदमाभ्यां	३.४१.४	ततश्चन्दनपुष्पैश्च	२.१२१.६०
ततः प्रभाते विमले	२.१२१.७२	ततः प्रवृत्तं युद्धं तुमुलं	२.१०४.४६	ततः प्राप्तो महादेव	२.७४.२०	ततः शयानं श्रीमन्तं	३.१३.२१	ततश्चन्द्रप्रतीकाशम	३.३६.३
ततः प्रभाते विमले	३.१००.१	ततः प्रवृत्तोऽसुरदेव	३.५३.१	ततः प्रायाद्धरिं विष्णु	३.११४.१	ततः शरं समादाय	३.१०१.१	ततश्च यादवाः सर्वे	३.६४.१
ततः प्रभाते विमले	३.१२०.२	ततः प्रवृद्धं युद्धं तु	२.१०५.१	ततः प्रावर्तत श्रुतं तेषां	२.६१.२७	ततः शरशतैरुपैस्तान	२.१२६.३	ततश्च योगप्राप्त्यनि	१.१६.८
ततः प्रभावती हंसीमुवाच	२.६३.५४	ततः प्रवृद्धावभ्योऽन्यं	१.४६.३३	ततः प्रावृडनुप्राप्ता मनसः	२.१०.३	ततः शरीरयोगाद्धि	२.१२५.१८	ततश्चरन्तीं सुशोणीं	२.२८.७७
ततः प्रभावती हृष्टा	२.६३.४२	ततः प्रवेक्षे संवृद्धौ	२.१०१.६३	ततः प्राह महातेजा	२.३७.६	ततः शरीरैर्विमलैर्वरुणः	२.१२७.६५	ततश्चारास्तु व्यादिष्टाः	२.१२१.३६
ततः प्रभृति देवेश	३.८८.१२	ततः प्रशान्ते दहने	२.१२२.२३	ततः प्रीतः प्रसन्नात्मा	३.८७.६	ततः शस्त्राणि शूलानि	३.५८.१३	ततश्चिक्षेप तं वृक्षं	३.५६.१५
ततः प्रभृति राजेन्द्र	१.२.५०	ततः प्रसन्न वदनो	३.१०.४५	ततः प्रीतोऽभवच्छर्वस्ताभ्यां	३.१०५.६	ततः शाङ्गविनिर्मुक्तैर्नाना	२.६३.७६	ततश्चिन्तयतः कार्यं	३.३३.३४
ततः प्रभृति राजेन्द्र	२.६२.१५	ततः प्रसन्नो भगवान्	३.७२.८६	ततः प्रोवाच भर्तारि	२.६७.४	ततः शाङ्गयुधः शाङ्गं	२.८४.३३	ततश्चिन्तयते भूयः	३.३३.३३
ततः प्रमुदिता देवा	३.४७.१६	ततः प्रसन्नो मामाह	३.८०.२६	ततः प्रोष्य पुनर्यान्ति	२.६७.४२	ततः शिलां समादाय	३.१०१.१६	ततश्चिन्तितमाश्रस्तु	२.४७.२८
ततः प्रयातं युद्धार्थं	२.७४.४	ततः प्रसभमास्तुत्य	३.३२.४७	ततः वै विहिताः साक्षात्	२.६८.३०	ततः श्रृंगाग्रमभूतं	३.३२.३८	ततश्चक्रोच्च बलवान्	२.४६.३२
ततः प्रयाते वसुदेव पुत्रे	२.५२.१	ततः प्रसारमकरोत्स	१.२७.३४	ततः शक्रोऽन्यवनान्	१.१४.१२	ततश्चक्रमे वसुधा	२.११६.५६	ततश्चैवमुषादाय	२.५६.२८
ततः प्रयातं त्रिदशेन्द्र	३.६३.१०	ततः प्रहरणैर्छौरैरभिपेतुः	३.५८.३६	ततः शक्रनयो दीप्ता	२.११२.३	ततश्चक्राणि दिव्यानि	३.४५.८	ततश्चोद्वाहधर्मण	२.११६.७५
ततः प्रलम्बं दुर्भूतं	२.१४.५१	ततः प्रहसितः कृष्णस्त्रास्य	२.२६.२५	ततः शक्ति समादाय	३.६८.११	ततश्चक्राणि गोविन्दः	२.११३.२३	ततश्च्युता गमिष्याम	२.३६.६४
ततः प्रवर्त्यते पुण्या	२.१६.५८	ततः प्रहसिताः सर्वे	२.१२७.२२	ततः शक्रस्य कौरव्य	२.७५.३२	ततश्च गच्छन्बलवान्	३.८२.३०	ततश्चालिक्य गांधर्व	३.१३४.२६
ततः प्रवृत्ते युद्ध	१.३६.१२	ततः प्रहसितो विष्णुर्नन्दः	३.३२.५३	ततः शक्रस्य वचनान्नारदः	२.१२७.१८	ततश्चाल तेनाजौ	३.६६.२३	ततः श्रुत्वा जरासन्धो	३.१२१.१६
ततः प्रविविशुर्मल्ला रङ्ग	२.२६.२०	ततः प्रहस्य नमुचिर्धरस्य	३.५५.५	ततः शक्रो जयन्तोऽथ	२.७५.३	ततश्चाल वसुधा	२.३०.४३	ततश्चक्रस्तु तान्मुह्य	२.१६.६१
ततः प्रविश्य धर्मात्मा	३.११७.७	ततः प्रहस्य मुचिरं	२.१०१.४	ततः शंखमुपाध्मासीद	३.३१.१७	ततश्च दाम्ना मुदुर्बेन	३.८२.२२	ततश्चरदि युक्तायां	२.१६.५१
ततः प्रविश्य रम्भा	२.७५.६०	ततः पट्टश्यो राजवि	२.५१.५१	ततः शंखमुपाध्याय	३.५७.४६	ततश्चदेवकीमुनुः	३.१००.११	ततश्चरसहस्राणि	२.४३.३३
ततः प्रविष्टास्ते सर्वे	२.१३.२५	ततः प्राध्मापयच्छ	३.५५.६	ततः शमदमाभ्यां च	१.४१.४२	ततश्च नारदं दृष्ट्वा	२.११६.६६	ततश्चिनिरनापृष्टि	२.३५.१०३

ततश्शुश्राव तं राजा	२.५७.१२	ततः स निवसन्वाणः	२.११६.२०	ततः स रैवतो ज्ञात्वा	१.१०.३७	ततः सैन्यं समाजप्तम	२.६६.२६	ततस्तस्मिस्तु विषये	१.१२.१६
ततः षष्ठ्या रथेषूणां	२.७३.३५	ततः स पिनरं गत्वा	२.६१.१८	ततः सर्वाणि दिव्यानि	२.१००.१२	ततः सोऽप्यब्रवीद्वाक्यं	३.१४.१६	ततस्तस्मै दशो राज्यं	१.२५.२०
ततः संरक्तनयनो	३.३६.१२	ततः स पुनराश्वास्य	३.५६.१७	ततः सर्वाणि सैन्यानि	३.५७.१	ततः सोमस्य वचना	१.२.४५	ततस्तस्मा भवद्रूपं	३.८३.१६
ततः संवत्सरे पूर्णे	३.३६.१२	ततः स पुरुषो देवं	३.३६.२	ततः सर्वाण्यनीकानि	२.१२४.१	ततः सोऽसि समुद्यम्य	३.५६.३०	ततस्तस्यां प्रभातायां	२.७५.३७
ततः संवत्सरे पूर्णे	२.८०.१६	ततः स पीण्डको राजा	३.६६.१८	ततः सर्वासु मायामु	३.४६.१	ततस्ततो व्यशीर्यन्त	३.५५.१५७	ततस्तस्या सुरेन्द्रस्य	३.५६.१६
ततः संवत्सरे पूर्णे	२.८०.१५	ततः स पीण्डको राजा	३.१०१.२५	ततः सर्वेषु यातेषु सुखा	२.६६.१८	ततस्तत्र द्विजातीनां कामां	२.६५.८	ततस्तस्या हयायास्तु	१.३६.१७
ततः संवत्सरे पूर्णे	२.८०.३४	ततः स भगदत्तं च शिशु	२.८४.६१	ततः स लघुभिश्चित्रं	३.५८.८	ततस्तत्सुमहत्सैन्यं	२.११६.११८	ततस्तानब्रवीद्देवी यूयं	१.१७.३०
ततः संवत्सरे पूर्णे	२.८०.३८	ततः स भगवान रुद्रो	३.६०.१	ततः सह तया रेमे	२.६०.३५	ततस्तद्दीप्यमान तु पपात	२.७३.४७	ततस्तानब्रवीद्विष्णु	३.६८.१०
ततः संवत्सरे पूर्णे	२.८१.२	ततः स भगवान्विष्णु	३.७८.१	ततः सह मया भुक्त्वा	२.११४.२	ततस्तद्भनमक्षय्यं	२.१००.१३	ततस्तान्परिविश्रान्तान	२.६३.१६
ततः संसर्गमागम्य बलेना	१.२०.७०	ततः स भगवान्विष्णु	३.७८.२४	ततः सहैव शक्रेण गच्छ	२.६३.३६	ततस्तद्भुमु गोविन्दो	३.१०२.४३	ततस्तामगमद्ब्रह्मा	३.१४.३७
ततः तद्दृष्टरोमाशः	३.५७.४७	ततः स भगवान्विष्णु	३.८०.१	ततः सात्राजितौ देवी	२.६७.४४	ततस्तद्धारुणं छत्रं स्वय	२.६४.१६	ततस्ताक्यं गतो	२.६७.७
ततः स कन्यया सांडं	२.६०.१६	ततः स भगवान् विष्णु	३.८१.१	ततः सा विस्मयाविष्टा	२.१००.६	ततस्तं कामसंकाशं	२.१०८.६	ततस्तावूष तुस्तत्र	३.१३.६
ततः सखीभिर्हस्यन्ती	२.११७.२१	ततः स भगवान्विष्णु	३.८४.१	ततः सा संनर्दिना	१.२४.५	ततस्तं चक्रवाको	१.२२.१	ततस्ताः साम्बवामास	२.६४.३६
ततः संकल्पये एव	२.६३.६१	ततः स भगवांस्तार्क्ष्यो	३.७६.२	ततः सिद्धगणैर्जुष्टः	३.२८.८१	ततस्तं पीडयामास	२.४२.८२	ततस्तु काश्यपो देवी	२.१२५.१५
ततः संचिन्त्य तु पुनः	१.३.५	ततः स भगवांस्तार्क्ष्यो	३.७६.२	ततः सुखं प्रकीर्णसु	२.१३.२६	ततस्तमः संहियते	१.४२.३४	ततस्तु जृम्भमाणस्य	२.१२५.११
ततः सचिन्तयामास	७.३५.२	ततः समहितो बाणैर्वलौ	३.५४.६१	ततः सुधारं ज्वलित	३.५५.२१	ततस्तमाज्ज्वलप्राप्तं	१.३६.३६	ततस्तु तुमूलं युद्धं	३.६०.३२
ततः सचिन्तयामास	३.७६.१	ततः समानयामास	२.१००.१४	ततः सुभद्राहरणे जयं च	२.८६.१४	ततस्तयोर्विचित्रार्थाः	२.४६.६०	ततस्तु दानवास्तत्र	३.६१.३५
ततः सत्यवती पुत्रं	१.२७.३५	ततः सम्पूज्य गच्छं	२.१००.१	ततः सुविपुलां दीप्तां	३.५५.३७	ततस्तयोस्तदा रोद्रः संग्रामे	२.७३.४१	ततस्तु देवगान्धारं	२.६३.२३
ततः सदुःखसंतप्तो	१.३०.१२	ततः सर्वदशाहर्णिमोद्ग	२.१०१.७	ततः सृजन्तं बाणोपान	३.६०.१२	ततस्तं परमक्रुद्धो	२.१२३.६	ततस्तु धरणी देवी	२.१२५.१२
ततः स नमते तत्रवरदत्तो	२.६३.५	ततः स राजा कौरव्य	१.११.५३			ततस्तस्मिन्महातोये	३.११.१५	ततस्तु पर्वताः सप्त	२.११३.१४

ततस्तु प्रवरो नाम देव दूतो २.७३.३०	ततस्ते दीनमनसः २.१२१.६७	ततस्तौ वीर्यसंपन्नौ ३.१०५.१८	ततः स्वाभूभंगवान् ३.४१.५	ततो ग्रामस्य मध्ये २.११२.२
ततस्तु भगवान् ब्रह्मा २.१२७.३७	ततस्तेन तु शापेन शून्या १.२६.६१	ततस्तौ हंसदिम्भकी ३.११०.१	ततः स्वान्वाधिपत्यानि ३.४०.१६	तयोऽग्लपयदात्मानं २.११६.१४
ततस्तु रुदतीं दृष्ट्वा २.११६.८७	ततस्ते पन्नगाः सर्वे ३.६१.२८	ततस्तौ हंसहिली ३.१२४.१३	ततस्संविन्ध मनसा रामः २.४६.५४	ततोऽप्यं समुदिरं २.६३.२२
ततस्तु रुचिरीषेण ३.५८.६४	ततस्ते पुनरागम्य १.१७.३३	ततस्त्रिदोर्ध्वभुजैः ३.५२.३५	ततस्समन्त्रयामासु २.५६.१०	ततोऽङ्गानि विमृजति १.४०.५६
ततस्तु वसुदेवस्य पादौ २.४५.१७	ततस्ते प्रदुना यान्ति २.१२७.५६	ततस्त्वया सहानंगौ २.१०४.६१	ततस्सव्यं दक्षिणं च २.२४.२५	ततो जनाः सरः सर्वे ३.१०६.११
ततस्तु वारुणं सैन्यं २.१२७.५४	ततस्ते बाष्पपूर्णक्षि २.१२१.१८	ततस्स्वरितमागम्य १.३६.६	ततस्सह्यवनेष्वेव राजा २.३६.१३	ततोऽजराश्वं इति ३.१.१४
ततस्तुष्टः स भगवानञ्जः १.२६.२४	ततस्ते ब्राह्मणगणा ३.२३.४२	ततस्त्वस्तं गतः सूर्यः २.७४.६	ततस्सह्यबलयुतं सहाय्येणा २.३६.१०	ततो जरासंधबलं २.५६.१३
ततस्तूर्यनिनादेन २.२६.२१	ततस्ते यादवाः सर्वे २.१०१.२०	ततस्त्वां गृह्य चरणे २.२.३६	ततस्सा निमिता कान्ता २.५८.४४	ततो जलदगम्भीर स्व रेणा २.५३.४८
ततस्तूर्यनिनादौ च ३.३८.१२	ततस्ते युद्धमार्गजास्त २.१२६.५	ततस्त्वां घोरशिरसं ३.१०.४३	ततस्सान्दीपनेः पुत्रं २.३३.२६	ततो जिगमिषुं तत्र २.६८.१
ततस्तूर्यनिनादौ च २.१२२.१	ततस्ते योगविभ्रष्टा १.१६.४	ततस्त्वावदप्रकं कृत्वा २.६७.४८	ततस्सायकजालानि शृगालः २.४४.२४	ततो ज्वरं कनकविचित्र २.१२२.६३
ततस्तूर्यप्रणादौ च २.६६.१२	ततस्तेषां स्वनं श्रुत्वा २.११६.६७	ततः स्वर्यं समालम्ब्य २.१२३.५	ततस्सुदर्शनं चक्रं पुनराया २.४४.२६	ततो जातीन्समानांय २.२२.७
ततस्तूर्यप्रणादौ च २.१२८.१५	ततस्ते सचिवाः क्रुद्धा २.१०५.३८	ततः स्नातो जगन्नाथः २.६७.३७	ततस्संन्येन महता जरा २.३५.६६	ततोऽयं वितथो नाम १.३२.१७
ततस्ते कुण्डले दिव्ये २.६४.५६	ततस्ते सचिवाः क्रुद्धाः २.१०५.४२	ततस्सम तप आस्थाय २.५७.६७	ततस्संन्येन मनसः ३.३६.१२	ततोऽक्षस्तु तां प्रादात् १.३.१४
ततस्ते क्षत्रियास्सर्वे २.३५.७७	ततस्ते सर्वदाशाह्वीः २.६६.१३	ततः स्म द्वारकां प्राप्ता २.११३.३१	ततस्स्वपुरक्षायं प्रजानां २.३६.४१	ततो ददशं पृथिवीमावृतां २.५७.६५
ततस्ते क्षत्रियास्सर्वे २.४३.२७	ततस्तेऽर्शां निमुक्तेर्नाना २.६३.७५	ततः स्पृष्टकर्मणि १.३८.२२	ततस्स्ववीर्यमाश्रित्य निहतो २.४६.१०	ततो ददशायं बलानि ३.६३.१४
ततस्ते जलदाः कुण्ण २.१८.८	ततस्तेऽश्वारपुरुषैः २.११६.७६	ततः स्वपिति धर्मात्मा ३.३३.३१	ततो गणसहस्रं स्तु २.१२४.१६	ततो ददशो महाशंसं ३.१२३.८
ततस्तेजः प्रज्वलितमपश्यं २.११३.२५	ततस्तेऽसंक्रमः सर्वः १.२०.६५	ततः स्वपुरवासीनामसुराणां २.६३.१	ततो गतो देवराजो २.६१.२४	ततो दशमु मासेषु १.१५.१०
ततस्ते उत्तरः स्मृत्वा १.२४.२५	ततस्तौ क्रोध रक्ताक्षा ३.६०.२५	ततः स्वभवनं गत्वा ३.१०५.२३	ततो गन्धर्वश्च माल्येश्व ३.१३२.८३	ततोऽदित्या सह सुराः ३.६६.१७
ततस्ते त्वरिताः सर्वे १.१२४.१	ततस्तौ तारेणानि २.२६.४०	ततः स्वभवनं विष्णुः ३.११२.२२	ततोऽग्निदितिजान्त्सर्वा ३.६२.२०	ततो दिव्येन चास्त्रेण २.६३.६३
ततस्ते ददशुः सर्वे २.८५.२६	ततस्तौ पतितौ दृष्ट्वा २.२८.३४	ततः स्वयंभूर्भगवान् १.१.३७	ततोऽप्यतः पारिजातमारोप्य २.७५.५०	ततो दीक्षितमासीनस् २.१११.८

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

५४

ततो दूतस्य वचनात्	१.५४.४७	ततोऽनन्तरमेतस्माद	२.६०.३१	ततो नीराजनाय हे	२.१७.३२	ततो बृहस्पतिर्धीमान्	३.६६.५६	ततोऽम्बुपगमाद्राज	१.६.४६
ततो दृष्टं व गृहं	२.१२७.६	ततोऽनन्तर मार्गेण	३.२.१६	ततोऽनुजगमुः शतशः	३.१२१.४	ततो बृहस्पतेः कक्रः	२.७२.१२	ततो मकरकेतु च	२.१२७.१५
ततो दृष्ट्वा महाबाहुं	३.४३.१	ततो नागा रयाश्चैव	३.५४.३२	ततो नु भूतसंघाश्च	३.७८.१८	ततोऽश्वीन्महादेवो	२.१२६.१६३	ततो मदावजितचार देहः	२.८६.४०
ततो देवगणाः सर्वे	२.८७.३४	ततो नातिचिरात्कालाञ्ज	२.३४.४	ततोऽन्तः पुरमध्ये	२.६६.२२	ततो ब्रह्मा भूवं नाम	३.१४.१५	ततो मः पुरं राजा	२.३७.२६
ततो देवाश्च नागाश्च	३.४१.२१	ततो नादः समुत्सृष्टो	२.७३.६१	ततोऽन्तरिक्षे वागासीः	२.३६.२८	ततो ब्रह्मा महातेजाः	२.७५.२०	ततो मध्ये दिव्यऽब्जः	३.१३३.६२
ततो देवाश्च नागाश्च	१.४१.५८	ततो नादेन विप्रस्ता	३.१३३.७३	ततोऽन्तरिक्षे वागासीः	२.४३.७२	ततो भगवता तत्र	३.६.६	ततो मनांसि गोपीनां	२.१०१.४८
ततो देवाः सगन्धर्वा	२.१०४.५०	ततो नाराचमादाय	३.६६.१५	ततोऽन्यस्त तु जघ्राह	२.७३.६३	ततोऽभयं विष्णुमयं श्रुत्वा	१.४३.१	ततो मन्वन्तरेऽतीते	१.४.२४
ततो देवाः सगन्धर्वा	२.१०७.२२	ततो नार्हति सत्कारं	१.२६.५८	ततोऽन्यां धारणां	३.२०.१	ततोऽश्वन्महातेजा	१.३२.३६	ततो मरीचिमित्र च	३.३६.१५
ततो देवाः सगन्धर्वा	३.७६.१२	ततो निकुम्भः समरे	२.८४.२३	ततोऽन्ये तपसा युक्ताः	१.७.४१	ततोऽभानुमतीं भानुर्ददौ	२.६०.७६	ततो महति वृत्तान्ते	३.३२.१
ततो देवास्सगन्धर्वा	२.३६.१६	ततो निमेषमात्रेण संप्राप्तो	२.११६.६४	ततोऽन्ये दक्षपुत्राश्च	३.२१.१८	ततोऽभिसन्धिं चक्रुस्ते	१.३.१३	ततो महात्माऽतिबलो	३.११.२
ततो देवाः सगन्धर्वा	२.४३.६५	ततो निरुत्तरान्दृष्ट्वा	३.६६.६७	ततोऽश्वकस्तदा दृष्ट्वा	२.८७.२२	ततोऽम्बुपगमद्विषां गर्भं	१.३.१२६	ततो महात्मा मनसा	३.३४.२७
ततो देवेषु नर्दत्सु	२.१२६.२१	ततोऽनिरुद्धः पुनरेव	२.१२०.४२	ततोऽश्वकोऽतिरुषितो	२.८७.१३	ततोऽम्बुपगमात्त्वष्टा	१.६.४४	ततो महान समभवत्	३.६४.१०
ततो देव्या मुरुषेण	२.११७.१०	ततोऽनिरुद्ध सहिता	२.१२७.२०	ततोऽपरं महत्खड्ग	३.६८.६	ततो भगवतुः पष्ट्या	३.५५.१२७	ततो महाबलं देवं	२.१२७.१३
ततो देशान्महाराज	३.१०७.११	ततोऽनिरुद्धस्य गृहे	२.१२१.१	ततोऽपरं महावीर्या दान	१.३.६७	ततो भगवताऽदिष्टो रणे	१.४६.३२	ततो मागधराद् श्रीमांश्च	२.३७.५
ततो दैत्यद्रवकारं	३.३६.१०	ततो निर्माणसंभूताः	३.२१.१५	ततोऽपसृष्ट्य संकुडः	२.६१.४७	ततो अन्नं बलं दृष्ट्वा	२.१२७.५६	ततो मां प्राह भगवान्	२.११०.६५
ततो द्वादशवर्षाणि	२.५७.१०	ततो निर्मासितं रूपं	१.६.४५	ततो बलेन महता गजानी	२.३५.६५	ततोऽभिराद्य चरणौ	२.१०८.३३	ततो मां वरुणोऽन्येत्य	१.५५.२३
ततो द्वारवतीं गत्वा	२.११२.१६	ततो निवार्योशनसं रुद्रं	१.२५.३७	ततो बहुतिथे काले	१.२८.२४	ततोऽभिराद्य पितरं	२.७५.४१	ततो मां वीडित मत्वा	२.१११.१६
ततो द्वारवती मध्ये	२.११६.२२	ततो निदचक्रमुः सर्वे	२.५६.१५	ततो बह्व्यपश्येतां	२.२८.७०	ततोऽभिराद्यक्तास्ते	२.६७.२६	ततो मामाह गोविन्दो	२.१११.१३
ततो द्विजं शुचि दान्तं	२.७६.२१	ततो निः श्रेयसप्राप्ति	३.८६.१०	ततो बाणः स बाणो	२.११६.१५२	ततो भूतानि रोहन्ति	३.१७.२७	ततो मापुक्तवाक्वीरो	२.६६.३३
ततो नदत्सु तयोर्बु	३.४७.३५	ततो निष्प्रभतां याते	२.१२६.१३	ततो बाण सहस्राणि	२.११६.१५०	ततोऽन्यगच्छत्वारितो	२.११६.६२	ततो मासद्वये पूर्णे मासे	२.७६.४४

ततो मासान्तशुक्लस्य	२.७६.४	ततो युद्धेन हत्वाजो	२.१०४.३६	ततो वरसहस्रान्ते	३.३४.२	ततो वैश्यं महागज प्रजाः	१.५.४४	ततोऽस्त्रैश्च शिनाभिश्च	३.६१.३८
ततो मुख्यतमास्तवै	२.५६.२०	ततो युध्यस्व कृष्णं	२.१२६.६०	ततो वर्षतहस्रो तु	३.३३.३२	ततो वैभाण्डकिस्तस्य	१.३१.५०	ततोऽस्माभिस्तदा तात	२.११२.११
ततो मुनिगणा दृष्ट्वा	३.७७.१	ततो योद्धुम पोढानां	२.११६.६३	ततो विशिष्य गण्डः	३.७२.८७	ततो वैवस्वनपुत्रं जगाम	२.३२.१८	ततोऽस्य विज्ञाय	३.२.७
ततो मुहूर्तमास्तिव नारदः	२.६७.५०	ततो रजि महावीर्यं	१.२८.६	ततो विप्रहवन्तं तं	१.३८.२०	ततो वैवस्वतं घोरं	२.३३.२०	ततोऽस्याश्च पयो	२.६४.१८
ततो मूर्तिधरा देवी	३.१६.२२	ततो रथवर कृष्णः	२.७५.१	ततो वितिमिरे लोके	२.१२६.६४	ततो वैश्वरगो राजा	२.६०.१८	ततो हंसान् घातराट्टान	२.६१.३६
ततो मूलफलप्रायं	३.१३२.५७	ततो रथस्योयुद्धं	२.७५.४	ततो वितिमिरो देशो	३.६४.६	ततो व्रजस्य भाण्डानि	२.१८.६१	ततो हंसो प्रभावत्या	२.६२.३८
ततो मृगसहस्राणि	३.७८.२१	ततो रथैः प्रजविभिर्वाह	१.४५.४	ततो विधास्ये तत्त्वजः	३.२१.२०	ततो व्रणमुर्वैश्वर्यं	३.२६.२०	ततो हंसो बभार्य	३.१०७.४
ततो मृगाः समावावन्ध्र	३.७८.१६	ततो रथैः सत्पुनैर्विमानै	१.४७.२६	ततोऽविष्यन्महेन्द्रस्तं	३.६४.१८	ततोऽशुमन्तं गोविन्दो	२.६०.१२	ततोऽह्नद्रणे विष्णु	२.७५.५
ततोऽमृतात्सुमुत्तस्थौ देवी	२.२८.८१	ततो रैवज उत्पन्नः पर्वत	२.३८.४५	ततो विनिगन्ता देवी	२.६७.४६	ततोऽमवर्षे निहते	३.४५.२१	ततोऽह्नि गते तस्मिन्वाणे	३.८.२१
ततो मेघनिनादेन स्वरेणा	२.४४.३३	ततोऽर्ककिरणाकारान	३.५४.५३	ततो विभुः प्रवरवराह रूप	३.३४.४८	ततोऽमवर्षे दैत्येन्द्रा	३.४५.१७	ततोऽह तस्य दुबुद्धो	१.२०.५५
ततोऽम्बरतलाद्भूयः पतन्ति	२.४३.४	ततोऽर्धमुदयिः साक्षात्	२.११३.२	ततो विभ्राजितं तेन	१.२३.१४	ततोऽसिलोमा संकुटः	३.५७.३७	ततोऽह तस्य वचना	१.१७.१
ततोऽम्बरस्थास्ते दिग्धाः	२.५०.७२	ततोऽर्जुनेन तरसा	१.२०.७४	ततो विराधे देवानां	१.३.१३३	ततोऽसुरगणाः	३.३६.१५	ततोऽह नात धमिष्ठा	१.२१.४
ततो यक्षमाभिभूतस्तु	१.२५.४८	ततोऽर्णवं समुत्तीर्यं	२.११३.१३	ततो विवाहवत्त्नानं विहितं	२.७६.७	ततोऽसृजत्पुनर्ब्रह्मा	१.१.३५	ततोऽह तानपश्य वै	१.२०.२
ततो यदुरदीनात्मा प्रजा	२.३७.४६	ततोऽर्द्धरात्रसमये पूतना	२.६.२४	ततो विश्वावसुनाम	१.२६.२०	ततोऽसृजद्वि त्रिपदां	३.१४.२५	ततोऽह देवदेवेन	२.११६.५३
ततो यमस्तु भगवानाक्ष	३.८५.२	ततो लेभे सुरैश्चर्यमिन्द्र	१.२८.३६	ततो विमृज्य गोविन्दस्त	३.८३.३१	ततोऽस्त्रं बलवेगेन	२.१२६.६१	ततोऽह परमप्रीतो	२.११६.५५
ततो ययुर्विमानैस्तु	२.७५.३३	ततो वज्रायुधो वज्र	२.७३.६६	ततो वृत्रः सुतंकुटस्तं	३.५७.५७	ततोऽस्त्रं बल वेगेन	३.३८.१४	ततोऽह वृष्णिर्हन्त्येन	२.१११.१८
ततो यशोदा संकुट्टा	२.७.१३	ततोऽवघुष्यत तदा घोषे	२.६.१०	ततो वृषध्वजो देवः	३.८८.१	ततोऽस्त्रं परमं दिव्यं	२.१२६.५७	ततोऽहमेनमर्थं वै तमपृच्छं	१.१७.२०
ततो याते महादेवे	२.७४.४७	ततो वनान्त रगतो रैमे	२.४६.२१	ततो वृष्ण्यन्धकाः कृष्णं	१.३५.२०	ततोऽस्त्रं वरुणो देवो	२.१२७.६८	ततो हर्म्यतलस्था सा	१.१२८.१६
ततो युगान्ते भूतानामेष	१.४५.६२	ततो वयं पुनः सर्वैः	२.११३.३०	ततो वृष्ण्यन्धकाः कृष्णं	१.३८.२६	ततोऽस्त्रं वैष्णवं	२.१२७.६६	ततो हलधरो भग्न	२.१२२.८२
ततो युद्धानि वृष्णीनां	२.३६.१	ततो वर्णत्वमापन्ना	३.२१.११	ततो वैश्यभयत्रस्ता गोभूत्वा	१.५.४६	ततोऽस्त्रं सुमहावेगं	२.१२६.६३	ततो हाहाकृतास्सर्वा	२.४.३१

ततो हाहाकुता	३.५७.४१	तत्तेऽहं संप्रवक्ष्यामि	३.७.१४	तत्र गन्धान्प्रवक्ष्यामि	२.८६.५८	तत्र त्वां शतहृक् शक्रो	२.२.४७	तत्र यत्क्रियते कर्म इह	२.६६.६१
ततो हि भरुणं कार्यं	३.१३२.८८	तत्त्वं शुचिमुखि ब्रूहि	२.६२.४४	तत्र गाथा महाराज	१.३०.३७	तत्र दामोदरो वाक्यं	२.१३.७	तत्र यो देवकीगर्भो	२.२८.५१
ततो हिमकरोत्सृष्टा	१.४६.१३	तत्त्वं हितं च देवेश	२.७०.१७	तत्र गोवर्द्धनं चैव	२.८.२८	तत्र दिव्याम्बर धरा	१.१०.७	मत्र रुक्मिसुतः श्रीमान्	२.१०५.६८
ततो हिरण्यकशिपुः	३.४१.११	तत्त्वमिच्छाम्यहं देवि	२.१०४.२०	तत्र गोवर्द्धनो माम	२.८.२५	तत्र देवाः सगन्धर्वा	३.४२.४	दत्र रैवतको नाम पर्वतो	२.५६.२७
ततो हृष्टमनाः कृष्णो	२.३५.२	तत्परस्तन्मनाश्चास्मि	२.१२१.५२	तत्र चक्रं हलं चैव	२.३६.७३	तत्र देवाः समायाता	३.१०२.१२	तत्र वंशा विभज्यन्तां	१.५३.५३
तत्कथ्यमानममितमितिहास	३.२.२	तत्प्रातः रहौत्सृष्टमन्त्र	२.८७.३३	तत्र चामरहारैश्च	२.२६.८	तत्र देवासुरसमे युद्धे	२.१२६.६६	तत्र विघ्नं चरन्ति	२.६३.४
तत्कालजीविनो वृद्धा	२.६३.६	तत्प्रातिजात कुसुमं	२.६७.२६	तत्र जन्म कुरुणां वै	१.१.६	तत्र धर्मश्चतुष्पादो	३.८.२	तत्र विष्णुश्च शक्रश्च	१.३.६०
तत्कालफेनमुत्क्षिप्य	३.२८.१३	तत्पितामहाराज्यं त्वं	३.४८.२७	तत्र जाम्बवती देवी	२.७७.६	तत्र मोक्षहृते चान्यो	३.१०.४४	तत्र वृद्धतमस्त्वेका गोपो	२.१५.४
तत्कालमेव कृष्णोऽपि	२.६०.४४	तत्प्रद्युम्नो महावेगं	२.७३.५७	तत्र तत्र प्रभासिद्विचित्र	२.६६.३	तत्र पाण्डोः श्रिया	१.५३.५१	तत्र वृष्ण्यन्धकाः सर्वे	२.६३.२४
तत्तदेव हि तादृक्कर्मदा	२.८८.३१	तत्प्रवर्त्तस्व वंशाय	१.४५.३०	तत्र तत्र च विप्रेन्द्रान्नि	३.६६.३१	तत्र पुण्या बबुर्वाताहा	२.६४.२१	तत्र वै क्रियतां यत्रः	२.१०६.५८
तत्तमो नाशयेद्रात्रौ	३.२८.२१	तत्प्रसेनजितं दिव्यं	१.३८.२४	तत्र तत्र च हन्ताह	३.११२.१०	तत्र प्रक्षुभितस्यैव सागर	२.३५.६७	तत्र वैदूर्यरत्नानि ददर्श	२.६४.२२
तत्तत्तमं भुवि राजेन्द्र	३.२८.१६	तत्फलं समवाप्नोति	३.१३५.४	तत्र तद्युद्धमभवत्प्रख्यातं	१.२५.३५	तत्र प्रविश्य भगवान्	२.८५.४७	तत्र वै पार्वती नाम	१.५५.५०
तत्तस्य कथं तो बद्धं तिर्यग्	२.७.१७	तत्र दूतगुणं तावत्प्रश्यामस्तु	२.६८.१०	तत्र तस्यासतः कालः	२.६.१	तत्र प्रविष्ट मानस्तु	१.१०.२६	तत्र शक्तो हि गान्धर्व	३.२६.६
तत्तस्य वैदूर्यसुवर्णं	३.५१.६८	तत्र दूती गामिष्यामि तवाहं	२.६२.३६	तत्र ता वरहेमाभा ददर्श	२.६४.४	तत्र प्रापय मां शीघ्रं	२.१२१.१०५	तत्र शक्रस्त्वया कृष्ण	२.१२१.४६
तत्तस्या वचनं श्रुत्वा	१.२४.११	तत्र कालं मनो वाचं	१.१.३२	तत्र तूर्यसहस्राणि	३.५६.४५	तत्र प्रासादमुख्यो वै	२.६८.५५	तत्र शब्दगतिर्भूत्वा	३.११.५
तत्तान्यदिव्या मणि	३.५२.२०	तत्र गत्वा महादेवं	३.७३.३६	तत्र ते कृष्ण सन्नाभे	२.३६.७६	तत्र मन्त्रसहस्राणि	२.१०१.५७	तत्र शिष्टास्तु ये देवा	१.२५.३६
तत्तु तालवनं नृणामसेष्यं	२.१३.११	तत्र गत्वा महाराज	३.१००.१७	तत्र तेषां नृवीराणामति	२.१६.६०	तत्र मन्त्रयतामेवं देवतानां	२.१.१५	तत्र शुम्भनिशुम्भो द्वौ	२.२.५१
तत्तु वेष्वाः पयः पीत्वः	२.४०.१	तत्र गत्वा ययायोगं	३.६०.३८	तत्र तो दारको गत्वा	२.५.३	तत्र मन्त्रयतामेवं देवतानां	२.२८.५०	तत्र शूराः समाख्याता	१.१.१३
तत्तुल्यं मम चक्रं तु	३.१००.४०	तत्र गत्वा स्थिताः सर्वे	३.६५.१८	तत्र ह्रवं शिशुरेवादो	१.५५.३६	तत्र तत्त्वाः समाजग्मुः	२.१०१.५५	तत्र शैलगतो दृष्ट्वा	२.३६.७०
तत्तेऽनुपूर्व्यां वक्ष्यामि	१.१६.८	तत्र गत्वा स्थिताः सर्वे	३.६५.२५	तत्र त्वमात्मनः कान्तं	२.१०४.६०	तत्र यन्मे वर्तमाने सुनाट	२.६१.२६	तत्र वष्टिसहस्राणि	१.१५.८

तत्र संवत्सरे सत्रिः सकलं	१.८.३२	तत्रानिष्टहरणं कृतं	२.१२१.४८	तत्राहूता हि राजानो	२.६१.२	तत्रोर्ध्वरस्तेस्तस्य स्थित	१.२५.५	तथा च भग्नो यमलाजुनी	२.८६.१०
नत्र संशोषयामास	३.११.८	तत्रापि गतमस्माभिर्हन्तुं	२.४६.१३	तत्रे वृत्ते करिष्यामि यथा	२.६१.१६	तत्रोषां विस्मितां दृष्ट्वा	२.११६.५८	तथा च तपसादृष्टो	३.७.१३
तत्र संज्ञां विमुच्यन्ति	३.१३३.४२	तत्रापि सहजां सीलां	१.५३.२५	तत्रैकलव्यसंवासी द्रोणे	२.५६.२८	तत्सत्रं ब्रह्मदत्तस्य	२.८३.६	तथा च सारयकिर्वीरः	३.११३.१५
तत्र सौम्यं महात्मान	२.७२.२७	तत्राध्ययपरा विप्रा	३.८.११	तत्रैकस्तु महाबाहुरसि	३.५७.६१	तत्सवालो महन्चापं	२.२७.५६	तथा चानागतं सर्वमस्त्राणि	२.६६.१७
तत्र स्थानानि भूतानां	३.२०.२१	तत्रायं कल्प्यतां घोष	२.८.२६	तत्रैकार्णवंसकाशे	३.४६.३५	तत्सर्वक्रमयोगेन	१.८.४१	तथा चान्ये व्यराजन	३.४१.६६
तत्रस्थाः परमा नार्यश्चित्रेण	२.११८.१	तत्रायं च गदी खड्गी	२.६१.१२	तत्रैव गजत्रयूयानि	२.६८.७४	तत्सर्वं न करिष्यन्ति	२.६६.६५	तथाचाप्रतिमां शक्तिं	३.४४.११
तत्र स्थित्वा च शैनेयः	३.६५.२६	तत्रायुधवल चैव रूपं	२.४०.३८	तत्रैव गुरुकं भाण्डं	२.२६.३८	तत्सर्वं नाशमायाति	३.१३५.३	तथा चैव करिष्यामि	२.६२.४०
तत्र स्पन्दोलिकाभिश्च	२.१४.१०	तत्रायुधानि सन्यस्य गृहे	२.४५.१६	तत्रैव तु महायुद्धे	३.५८.१	तत्सर्वं वासुदेवाय नारदेन	२.५७.४८	तथा जाम्बवती चक्रे पुरो	२.८१.४१
तत्र हत्वा पशून्मेघ्यान्वित	२.१६.११	तत्रावशिष्टान्मनुजान्मुक्ता	१.५३.५७	तत्रैव त्वां भगिन्यर्थे	२.२.४८	तत्सुभीम महद्युद्धं	३.६०.३६	तथा तथा गुणा वाच्याः	२.६१.४८
तत्राजगामप्रद्युम्नः कुमारं	२.६१.३	तत्राश्चयं मया दृष्टं	२.२६.६६	तत्रैव परतः वान्ते देशे	२.३८.६	तत्सुरासुरयुक्तं	१.४५.३	तथा तथा प्रयत्नश्च	२.६८.६
तत्रात्रिः सर्वभूतानां	१.२५.२	तत्रासनानि स्थातानि	२.२६.७	तत्रैव ब्रह्मसदने समे	३.२४.३	तत्सैन्यं महादायादं श्रुत्वा	२.५७.२५	तथा तदभवत्तस्य	२.६१.१०
तत्रादिति कक्ष्यपं	२.७६.२७	तत्रासनानि स्थातानि	२.२६.१०	तत्रैव युध्यते रदो	३.५८.५४	तथा कर्तुं महादेवः	१.२६.४३	तथा तातकरिष्यामि	१.२८.२६
तत्रादितिमुपास्म्यन्ती	२.६४.५५	तत्रासन्दानवा घोराः सर्वे	१.४२.११	तत्रैवान्तहिताः सर्वे	२.११३.१६	तथा कर्तव्यमेतद्धि यथा	२.२२.६६	तथा तां मन्यसे	३.२७.४७
तत्रादित्या महात्मानो व	२.६६.२	तत्रासीनं महाबाहु	३.४२.६	तत्रैवा देवकी या ते	२.१.१६	तथा कर्म महत्कृत्वा	२.६४.७३	तथा वत्त्वा वरं तस्य	२.७४.१७
तत्रादित्याश्च माध्याश्च	३.४७.१	तत्रासीनेषु सर्वेषु	२.६३.२५	तत्रोङ्कारसहायेन	३.४७.१४	तथा कुवरोऽवहल्लयुक्तं	३.५२.२७	तथा नन्वाङ्कुशैस्तीक्ष्णै	२.७३.८८
तत्राद्भुतमिदं भूयो	३.५५.११३	तत्रासीनोऽभ्यर्च्य कृत्वा	२.६३.३१	तत्रोपविष्टः प्रहसन	२.११६.३७	तथा क्षणमुहूर्तान्मया	२.१०१.१२	तथा नागपति तोये	२.१०२.२६
तत्राद्य देवमीशानं नमस्कृत्य	२.६७.५१	तत्रामुरेभ्यः संसन्त	३.३८.३	तत्रोपविष्टं श्रीमन्तं	२.५३.१२	तथाक्षत महावृष्टया	२.१०१.१६	तथा नागाः सुपर्वाणो	२.१२०.३०
तत्रायमंश्चतुष्पादः	३.८.१५	तत्रासौ गोपु निरतः	१.५५.३७	तत्रोपविष्टांस्तान् धीरान्	२.१००.१८	तथा गच्छगमिष्यामः	२.२६.७१	तथा नु ब्रुवते त्वां	३.१००.३६
तत्रानिष्टं दृष्ट्वा	२.११८.६६	तत्राहं युद्ध्यमानस्तु	२.५३.४२	तत्रोपायं च भगवन्	२.११६.१५	तथा गतो तु दृष्ट्वा तो	२.६०.३६	तथान्ये च महावीर्या	३.१३३.१७
तत्रानिष्टं सापश्यच	२.११६.२६	तत्राहं सबलो याता	३.११६.७	तत्रोपायं प्रवेशे तु चिन्तयावः	२.६२.२३	तथागाण्डीवधन्वानं	२.१०२.१७	तथा परिवहः श्रीमान	३.४६.६

तथापि न करोम्यन्तं	३.१०६.१२	तथास्त्विति बलिः	३.७१.४२	तथेत्युक्त्वा हृषीकेशतथा	२.७६.१४	तथैवाङ्गिरसस्तत्र भृगु	१.२५.१३	तदप्रतिहृतं युद्धं दानं	१.६.६३
तथापि मित्राभावात्	३.११४.२०	तथास्त्विति वरो दत्तो	२.६८.१६	तत्तल्येवात्रवीरकृष्णो	३.३३.१३	तथैवाध्वन्यवेपेण	२.४६.५६	तदरन्ध्रं दमसानाभं	२.२४.६
तथा प्रतिहृतं चक्रं	२.१०६.६८	तथास्त्विति मुराः सर्वे	३.६७.२०	नयेन्द्रविष्णुसहिताः	३.३१.१५	तथैवान्ध्राश्च पुंड्राश्च	३.४६.५५	तदक्षिप द्रवानेया	३.१६.४२
तथा प्रलयमाप्नो	३.१८.३६	तथा हि परिपूर्णा क्षमा	२.१००.१०	तथैव च श्रुतवर्णि	२.६०.१४	तथैवाभयदस्यासीत्	१.३१.७	तदर्थस्तेन मंथामः कृतो	२.४१.४०
तथा प्रवर्तिते तेषां	३.५४.४४	तथा हि वर्तमानं तमूर्ध्वं	२.५७.८	तथैव ज्ञातिलुब्धस्य मम	२.३१.४६	तथैव वामपाश्वं तु	२.५०.७६	तदर्थं यादवान्वीर	२.८३.४२
तथाभूतिमुवाचेदं मानुजं	२.८४.५१	तथेति कश्यपश्चोक्त्वा	२.७२.२६	तथैव तं जघानाष्टु	३.६८.१४	तथैवासीनमृत्सङ्गे सहस्रा	२.२६.६४	तदर्थेनापि दातव्या	३.१३२.७२
तथा पश्याणाश्चैव	३.१४.६३	तथेति कृष्णं स हरिः	२.७६.३५	तथैव तु महायुद्धे	३.५७.४४	तथैवासुरमुख्योऽपि गदां	२.६०.४१	तदश्मवर्धं सिंहस्य	३.४५.१८
तथा यज्ञफलानां	३.२.३२	नथेति प्राहुर्ना कामः	२.६३.४८	तथैव त्रिदिवं देवाः	३.४१.३७	तथोक्तुष्टोऽतिबलो	२.१०१.३६	तदश्मौर्ध्ववितिसुतास्तवा	३.४५.१८
तथारनालांश्च बहुप्रकारा	१.२.८६.६५	तथेति स ममाभाष्य	२.२४.७६	तथैव नाम्ना तेनेह	१.१८.२०	तथ्यं चोक्तं नारदेन	३.२८.११३	तदस्त्रप्रतिघातार्थं देवीं	२.१०६.५७
तथा वरे दीयमाने	२.८३.३३	तथेति सात्वकिः प्राहु	३.११७.१३	तथैव पञ्चाच्चकमे	२.६५.३२	तदक्षरं विविधमथाश्रितो	३.१०.६६	तदस्त्रं वारयामास	३.१२७.४२
तथा वर्षसहस्रं	३.८.१४	तथेत्यभिहतो भर्ता तथा	१.३.१२८	तथैव पुत्रो भगवान्	१.७.३५	तदत्र तथ्यं तद् बहूहि	१.२५.४३	तदस्त्रमभयस्य प्रदिग्धं	३.५५.१५४
तथा वर्षसहस्रं द्वे	१.८.१४	तथेत्याहु च कुम्भाण्डं	२.११६.१६५	तथैव प्राहु तांस्वन्वित्यैव	२.४६.५	तदद्भुतं दैत्यं सहस्रं	१.४३.३१	तदस्त्रशस्त्रघणितं क्षिप्तो	१.४७.३५
तथा व्रजगतः गीरिशद्वा	२.१०१.४३	तथेत्युक्तेति कृष्णेन तुतोष	२.६७.३६	तथैव भगवान्हंसो	३.१०.३५	तदद्भुतं महद्दृष्ट्वा विस्मयं	२.७५.५६	तदस्माकं गुरुस्त्वं हि	२.१६.४३
तथापि भृगु देवेश	३.११५.२४	तथेत्युक्त्वा च तस्या	१.२२.२	तथैव भ्रातरं चाख्य	२.३२.६०	तदद्य रुचिरश्रीणि	२.६३.४१	तदस्य मूलं युद्धस्य	३.२.२०
तथा शतमित्रा चैव	२.७७.१४	तथेत्युक्त्वा च ते सर्वे	१.२१.१३	तथैव मेरुसावर्णाश्च	१.७.६	तदस्यात्मविदां चित्त्यं	३.७.१७	तदस्य संपराजस्य कर्तव्यो	२.११.५६
तथाश्रमनिवासे तु	३.१३२.६६	तथेत्युक्त्वा च तो	२.७५.२७	तथैवराजोऽतिबलः	२.१०१.१७	तदनेन तवोमेण परितुष्टो	१.४८.६१	तदस्यानृष्यहेतोर्हितगस्य	२.४२.७६
तथा सति न मे दोषो	३.११४.२२	तथेत्युक्त्वा नु धर्मात्मा	२.७३.१०४	तथैव वसुधां जित्वा	२.२५.३३	तदपमृशनुषं भग्नं	१.४६.२६	तदस्याः श्रुतवन्नः स्म	१.५१.२७
तथासुरवरो दैत्यो	३.५७.२२	नथेत्युक्त्वा नमस्कृत्वा	२.८५.६१	तथैव शूद्रेः शुचिभिस्त्रि	१.६.५३	तदपूर्वमष्टवैवं गन्धं	२.६६.१६	तदहं त्वरया विष्णो प्राप्तः	१.५४.१६
तथास्तु प्रथमः कल्प इति	२.६७.३५	तथेत्युक्त्वा वरं वत्रे	१.२६.४१	तथैव सर्वगंधाना रसानां	२.७६.२६	तदप्यतिबलो विष्णुर्दोर्मा	२.६४.४३	तदहं श्रोतुमिच्छामि	२.११६.३
तथास्त्विति च स	३.६७.१८	तथेत्युक्त्वा स तच्छुद्धं	२.१२२.२६	तथैव सर्वे महतोतिवीर्या	२.५५.५८	तदप्य वसितं कार्यं	२.१२७.१४१	तदहं समनुप्राप्तो गवां	२.१६.३६

तदा क्रुद्धेन दैत्येन	३.४६.४१	तदाप्रभृति हास्यन्ति	३.२.४३	तदिन्द्रहस्तादमृतं जहार	३.३०.३२	तदृच्छ त्रिविधं शक्र	२.१६.६६	तद्भयं पृष्ठतः कृत्वा	३.५६.६०
तदागच्छ महाभाग	१.५१.३२	नदा भूतमूलं युद्धं वर्षं	१.५२.३३	तदिमां संत्यजाशु त्वं मही	२.४३.८४	तद्गच्छ त्वं सहानेन	१.४६.१०	तद्भविष्युणा वाच्याः	२.६१.४४
तदागच्छस्व भद्रं ते गच्छामि	१.४८.६२	तदापान्तं तदानीकं	३.५६.७६	तदियं पूः प्रकाशार्थं	२.५८.२८	तद्गच्छ शम्बरगृहं	२.१०४.५६	तद्भविष्यमहं मन्ये काल	२.३७.३३
तदागच्छ स्वयं विष्णो	१.५४.८३	तदायुतसहस्राणि	२.६०.५५	तदिष्टां भजतां शक्रो	१.४८.७०	तद्गच्छाम महाराज	२.४३.६६	तद्भस्म वक्षसस्तस्य	२.१२२.७६
तदागताभिर्नृवराहतास्तु	२.८६.७३	तवारोह रथं शीघ्रं	१.३६.११	तद्वयसृष्ट तपसा युक्ताः	१.२.३७	तद्गमिष्यामि मध्येऽस्य	२.७२.२४	तद्यथा शारदं वर्षं	३.६०.१६
नदाचक्षुषीपभोक्ष्यामि	२.८७.११	तदा विचलिते घर्मे	३.४.११	त इष्ट्वाः परमप्रीताः प्रजा	१.५.४३	तद्दानवमहोमेघं	१.४७.३६	तद्यथा सुमहद्युद्धं	३.५८.५५
तदाज्ञापय किं कुर्यां सदा	२.१२.३७	तदाश्चर्यं पश्यन्त	३.५७.४	तदेतदखिलं सर्वं	३.१०.६४	तद्दिनतल भित्वा	२.११०.१८	तद्यानपात्रं ववूधे तदानीं	२.८६.२१
वदा तत्सुचिर कालं	३.५५.१२८	तदासुराणां निलयं	३.३८.२	तदेतद्वायुसंभूतं	३.१६.१८	तदृष्ट्वा कदनं घोरं भैमानां	२.८४.३१	तद्युगे तत्कुलीनश्च	३.२.४१
तदा तां शप्नुमारब्ध	१.२५.४२	तदा सूक्ष्मो महौदको	३.२.४४	तदेव चाथ प्रवरं षट्	२.८५.६६	तदृष्ट्वा कर्म विपुलं	२.१०५.५४	तद्युद्धं देवदैत्यानां	३.५३.३३
तदा त्वं तमसाकृष्टस्तदा	३.८८.२८	तदासृजन्महामायां भयस्तां	१.४५.१८	तदेव व्रतकं दत्त सावित्र्या	२.८१.२१	तद्वृष्ट्वा तस्य पत्न्यस्तु	२.६६.२७	तद्युद्धमभवत्तत्र तयोस्तेषां	२.४३.३२
तदास्त्वमात्रे श्रद्धेयाः	३.४.१०	तदद स्वन्ये समाधाय	३.४.३०	तदेवाक्षरमित्या दुर्पतद्	३.१७.६५	तद्वृष्ट्वा संप्रवृत्तान्तु	२.८३.१८	तद्युद्धमभवताभ्यां रामस्य	२.४३.५७
तदा त्वाकाशमैश्वर्यं	३.१६.८	तदास्ते मूढवत्त्वं किं	१.१४.४६	तदेव निर्णयः श्रेष्ठः	१.५३.६२	तदेवयक्षगंधर्वं महर्षि	२.३६.१७	तद्युद्धमभवद्धोरं घोररूपेण	२.६३.१०६
तदा दाक्षिण्ययुक्तं तं	२.८८.३५	तदा हैमवनी वाक्यं	२.११७.१८	तदेव नूनं विष्णुर्वा	२.२२.४६	तदेवयक्षगंधर्वं महर्षि	२.४३.६६	तद्युद्धमभवद्धोरं तयोस्तस्य	१.५२.३२
तदादित्याश्च साध्याश्च	३.४१.३१	तदा ह्यत्वेन तपसा	३.२.४५	तदेव वै वेदमयः	३.१०.११	तद्विधा जगतां नाथ	३.१०.११	तद्युद्धमभवद्धोरं तेषां देवा	२.५६.७७
नदा देवीं कोटवतीं	२.१२०.२	तदिच्छावो वरं दत्तं	३.१३.२४	तदेव शान्तनोर्वंशः पृथिव्यां	१.५३.४७	तद्विनीभूदैत्यानामन्धकार	१.४५.१७	तद्युद्धमभवद्धोरं देवदान	१.४७.२१
तदा द्विहायना दम्पास्तथा	३.३.१८	तदितः शोणितपुरं	२.१२१.६३	तदेव संहृत्य जगत्कृत्वा	३.३३.४६	तद्विस्तव पुत्रस्य विसृज्या	१.४५.६१	तद्युद्धमभवद्धोरं सीमित्रे	१.५४.४८
तदान्तरिक्षं संप्राप्तं	३.१६.६	तदिदो दशरात्रेण	२.७६.६२	तदेव सान्त्वयतां सर्वशोकार्तं	३.३२.१५	तद्वत् तु समासाद्य	२.१२२.५४	तद्यथाभ्यां हि कर्तव्यं	२.२७.६
तदाप्रभृति तस्याधो	३.३६.६	तदिवं प्रस्तुतं रज्जे	२.३०.१७	तदेगोऽथ मया त्यक्ता मम	२.४३.८२	तद्वत् पृथिवीशानां हृष्ट	२.४२.६	तद्वार्थं महाबाहुः शङ्ख	२.६३.२०
तदा प्रभृति यत्तोभूद्रक्षां	२.१०१.६१	तदिवं वार्षिक चक्रं	१.५०.२६	तदगच्छ कृष्ण शैलेन्द्रं	२.३६.८२	तद्वद्वा इन्द्रियैर्युक्तं	३.२६.२५	तद्वः पृच्छस्व पितरं	३.६६.६
तदाप्रभृति वै भ्राता	१.३.२६	तदिदानीं गतं दुःख	२.५६.३	तदगच्छ गजमावह्य	२.२८.११८	तद्वद्बहि यदि विद्यते	३.१११.२८	तद्वभूव मुहूर्तेन	३.५६.३४

तद्विष्णुणितमालक्ष्य पुरं	२.६२.१३	तस्यां पश्य समापन्नं	१.४५.६६	तपसे धृतचित्तस्तु	३.८४.१६	तमतिक्रान्तमर्याद	१.५.८	तमहं श्लक्ष्णया वाचा	१.५३.३६
तद्वक्षराजकुसुमं रुक्मिण्या	२.६५.१५	तन्मुमोचान्धुत सुतस्तस्य	२.६७.१७	तपसोग्रेण महता पुत्रार्थी	२.५३.५२	तमदृष्ट्वैव राजानं	२.३६.६३	तमहं स्तोतुमिच्छामि	२.५५.३७
तद्वै तस्य महाभागो वर्षा	१.३२.८६	तन्मे त्वमुपपन्नाय	३.७.६	वपसोग्रेण योगज्ञाः	३.१३३.२६	तमद्भुतमचिन्त्यं च	२.७५.५५	तमागतं नरपते सतां गति	२.६७.३६
तद्विश्ववामदिलष्टं ध्रुवस्वत	१.४४.४६	तन्मे मनसि बाष्पण्य	२.१०४.३२	तपसोज्ज्वले सुमहतो	१.२६.१०	तमधीत्य स्तवं दिव्यं	३.७२.६३	तमागतमृषि दृष्ट्वा	२.२८.४६
तद्वज्रस्थानमधिकं क्षुण्णे	२.६.३०	तपः कामः स यस्तस्य	२.२८.२६	तपस्विभिस्तपोयुक्तं	३.८०.१४	तमन्तकमिवायान्तमजेयं	३.६०.७२	तमागत्कारिणं धीरं	१.४१.१३८
तनुत्रं चैव चिच्छेद शरेण	२.६३.११६	तपनस्यैव तद्रूपं	३.१६.३४	तपितकनकविन्दु	३.५१.२६	तमतन्तरे गृहीत्वाशु	३.६६.३७	तमात्मजो वै पुलहः	३.५३.३७
तनुत्रैः सतलत्रैश्च	३.५५.८१	तपनीयेन महता कवचेन	३.५०.२५	तपोबलाद्गायमुनेर्महात्मनो	२.५३.५४	तमन्तरे पटवीरो	३.६८.८	तमापतन्तं ददुक्षे	२.११६.१४०
तनूह ह्यैषा जातः	३.४.३८	तपन्तं तमिवादित्यं	३.६१.३४	तपोबलेन वा राजन्विद्यया	१.२४.६	तमन्या भावविकचैर्नैः	२.२०.३१	तमादिपुरुषं देवं	१.१४.२४
तन्त्र मन्त्रयतामेवं देवनानां	२.१.१४	तपन्तमिव तेजोभि	३.१०.२३	तपोयज्ञफलानां च	३.३.१४	तमन्वयुर्देवगणा मुनयश्च	१.४४.४८	तमापतन्तं धनदो	३.६०.४६
तन्त्रीभिः सुप्रयुक्ताभि	३.२६.७	तपः शरीरास्ताः सर्वा	१.१८.२१	तपोरतिरकल्माषस्तन्वी	१.७.२४	तमन्वयुर्देवगणा	३.५२.२३	तमापतन्तं प्रमुखे प्रति	२.२१.१७
तन्निजस्तन्निपालश्च	१.३४.३८	तपः शांता ब्रह्मपराः	३.२३.३०	तपोविकीर्षाराध्य हरं	२.८६.५५	तमन्वयून् पार्श्वैव दक्षिणा	२.६०.४	तमापतन्तं वेगेन	३.५५.८
तन्नरेन्द्रः परिश्रयक्तं	२.४३.७७	तपश्चरत्सु पृथिवीं	१.२.३५	तपोवीर्यतिष्ठमुत्पन्नं	१.१७.६	तमपि प्रस्थितं भूयो	१.३८.२१	तमापतन्तं श्रीमन्तं मूर्ति	२.४४.१२
तन्निकुम्भस्य चिच्छेद	२.८५.६२	तपश्चरन्त्यः सुमहद्दुश्चर	१.१८.१६	तप्यते हृदयं तस्या	२.११७.३२	तमप्याहुर्मनुष्येन्द्रं	१.४१.१२४	तमापतन्तं संप्रेक्ष्य केशिनं	२.२४.१६
तन्निगुह्येन्द्रियग्रामं भूत	१.४५.४०	तपश्चरसि यस्मात्त्वं	३.८८.५३	तप्यमानास्तपस्तीव्रं	२.२.१४	तमप्रतिमकर्माणि समानं	१.४८.४५	तमापतन्तं संप्रेक्ष्य कृष्णः	२.७३.३३
तन्निबोध कुरुष्वेष्ट	१.१८.८२	तपश्चरतुं किल हरि	३.८४.५५	तप्यमानो मृगैः साढं	३.२२.६	तमप्रतिहृतं युद्धे	२.१०६.३७	तमापतन्तं संप्रेक्ष्य	२.११६.६८
तन्नेह भवतस्स्थानं रोचते	२.३६.५४	तपश्चरतुं प्रवृत्तोऽहं	३.८८.६	तं दृष्ट्वा रुक्मशीलमं	३.४३.६	तमवध्यं तु विज्ञाय	३.६०.५३	तमापतन्तं संप्रेक्ष्य	३.५७.६२
तन्मत्तो यदि सत्कारस्त्वयैते	२.२८.२०	तपसा कालपुक्तेन तथा	२.८६.४	तं दृष्ट्वैरावतस्कन्ध-	२.८५.२१	तमश्च नाशयामास	२.६६.६६	तमायान्तमभिप्रेक्ष्य	३.५६.१३
तन्ममेमास्मुताः पञ्च	२.३७.६३	तपसा तेजसा चैव	३.१४.२३	तं श्रुत्वाभ्यागतस्तत्र	२.६७.४	तमसा निध्रमं सर्वं न	१.४२.१८	तमाहृष्ट महाशीलं	३.८४.१४
तन्मह्यं दीयतां भर्ता	१.५२.५२	तपसा महता युक्तो	३.२०.१६	तमंशुमान्महा बाहुविष्याध	२.६०.११	तमसा संवृते लोके	३.४५.३१	तमाहृष्ट रथं कृष्णः	२.७४.१
तन्मह्यं रोचते गोपा	२.१६.१०	तपसाम्यधिकः शक्र	२.६६.४	तमग्निमात्मसंसृष्टं	२.२८.७६	तमस्तच्च कथं धीरं	२.११४.५	तमालैलावनयुतं मरीचक्षु	२.४०.१२

तमालोत्पलं तथाभूतं	३.६०.७३	तमुवाच हृषीकेशश्चायं	२.५८.६२	तयोः कथयतोरखे कृष्ण	२.८५.४४	तयोः स्तवैस्तैः सुप्रीतः	१.५.४२	तव पाराम्पराप्राज्ञ	१.६.३२
तमाविशत्तदा विष्णुः	१.११.४५	तमुवाचाय भर्मात्मा गता	२.७२.१८	तयोः कथयतोरखमत्रुवं	२.६.१८	तयोस्तैः मलिनं दम्बा	२.३२.६४	नव पुत्रेण चाकुण्ठ	१.२०.१०
तमासीनं नृपं तत्र परमे	२.३७.५६	तमुवाचाय वै कृष्णो	२.३३.१६	तयोक्तस्त्वत्सम	२.७१.२२	तरङ्गपाङ्गकुटिलां	२.११.२६	नव प्रसादाद्गोविन्द	२.३२.२७
तमाह कृष्णस्सहृष्टो	२.२६.४७	तमुवाचादितिमर्ता	२.७६.२८	तयोः पुत्र सहस्राणि	१.३.६३	तरङ्गविपमपीडा चक्रवाको	२.४६.३८	तव योगप्रभावेण	२.११.८६
तमाह केशवो हृष्टः	२.२६.६६	तमुचुर्ब्रह्महृष्टो वचनं	१.४५.२६	नयोः प्रभाव स ज्ञात्वा	२.३३.११	तरुणस्त्वव रूपेण चरेयं	१.३०.३३	तव वक्त्राज्जगन्नाथ	३.८८.३६
तमाह सस्मितं कृष्ण	२.१४.३४	तमुचुर्विस्मिता गोपा	२.१७.२६	तयोः प्रयुज्यतोस्मरुये	२.३५.५६	तरुणादित्यसंकाशो	२.४६.६७	तव विश्रामहेतोर्हि	२.५०.१६
तमिन्द्रः पूजयामास	२.६६.१६	तमुचुः स्थविरा गोपाः	२.४६.६	तयोः प्रवृत्तयोरेवं कृष्ण	२.१५.१	तज्जयन्तं मुरगणान्	१.४६.५५	तच्च वेगसमो नास्ति	२.१२१.१०८
तमिन्द्र स्तोयदेः	३.४५.२६	तमुचुः स्यविरा गोपाः	१.४४.२५	तयोः प्रेक्ष्यन्तं संरम्भं	३.५५.१५	तद्धर्म्यं पृष्टं प्रभया	२.६४.४	तव सत्ये निविष्टस्य	२.११०.४३
तमुचुर्पादिवस्सर्वं	२.५६.६	तमुचुः स्यविरा गोपाः	१.४४.२५	तयो रमयतोरखं तस्मिन्पुर	२.१४.१२	तर्पणानि च मुख्यानि	३.१३२.६०	तव सरक्षणार्थाय	२.१०६.५१
तमुच्यत तदा दृष्ट्वा	२.३६.२७	तमेवार्थमनुष्ठायान्तो जाति	१.२१.२६	तयो रागमनं लिप्सुरास्तु	३.१२०.१६	तर्पयित्वा द्विजान्	२.६५.१०	तवांगं तिलशः कृत्वा	३.६६.११
तमुपायं चिन्तयामः शर्वो	२.८६.३४	तमेवार्थमनुष्ठायान्तो नष्ट	१.१६.३	तयोरागमनं प्रीतिः	२.२२.६५	तर्पिताश्चापि विप्राः	२.१७.२२	तवाघः पर्वतश्रेष्ठ	२.७४.४८
तमुवाच ततः कृष्णः	२.५५.६५	तमेवार्थं महात्मानं	२.७२.३	तयोरेकस्तु पद्माश्रयाम	२.२७.५५	तलशब्दो हासशब्दो	३.११५.३८	तवाननाभो वरगान्नि	२.६५.२
तमुवाच ततः कृष्णः	२.८५.३५	तया चाभ्यर्षितो भर्ता देव	२.६६.३२	तयोगंहीत्वा क्षुणी	३.१२६.२०	तलेन वामुदेवोऽपि	३.६७.१४	तवानुकूल्याद्वाजेन्द्र	१.४.२५
तमुवाच ततः कृष्णो	२.२७.७	तया जघानातिरयस्त्वष्टु	३.५५.३८	तयोर्वर्तति संश्रामे गरुड	२.७३.२३	तलेनाशनिकल्पेन स तं	२.२७.१६	तवापि पुत्रं कल्याणि	१.२७.२१
तमुवाच ततः कृष्णो	२.५८.७०	तया पुनरहं गृह्य	२.१०८.१२	तयोः शकलयोर्मध्ये आकाश	१.१.३१	तल्लोककर्त्रा सत्कृत्य दत्तं	२.६७.४२	तवाभिप्रायं विज्ञाय ब्रवीमि	२.५५.४४
तमुवाच ततः शक्रो	२.७३.१७	तयामिनीते वरगात्रयश्रद्धा	२.८६.७०	तयोः शराः प्रकाशन्ते	३.५५.१६	तव हस्तैश्चक्रपहारेण	३.८०.६२	तवावतरणे विष्णो कंस	१.५४.८५
तमुवाच ततो ब्रह्मा	१.४५.५५	तया ललाटेऽभिहतः	२.६७.१३	तयोश्चटच्चटाशब्दः	३.१२६.३७	तव चागमनं दृष्ट्वा	२.४६.१६	तवास्मिन्मुनातोये नैव	२.१२.३६
तमुवाच महादेवो	२.८५.३८	तया सह ततस्तत्र	३.१४.२४	तयोश्च तुमुलः शब्दः	३.६६.१२	तव चेच्छृणुयाद्रीर सङ्कृतं	२.६२.५४	तवैव तेजसा क्रान्तां	१.५२.१८
तमुवाच मुनिश्रेष्ठः	२.८६.५०	तया सहावसद्राजा	१.२६.५	तयोश्चम्बोस्तदा तत्र बभूव	१.४७.२०	तव तातो महावीरो	२.११७.३८	तवैव तेजसा क्रान्तां	३.३४.२३
तमुवाच मृगं ब्रह्मा	३.३२.२६	तयैते माययाद्यापि	१.६.३१	तयोस्तद्वचनं श्रुत्वा	३.१४.८	तव निद्राकरः कालस्तव	२.१०.२३	तवैव देवकल्पस्य दृष्टवीर्यं	२.३१.३१

तवैवा बाल महती गोपानां	२.१७.२	तस्माद्गुहाण भगवन	३.८३.७	तस्मिन्नपतिते देवाः	१.२५.१२	तस्मिन् विमर्शे निवृत्ते	१.४८.५६	तस्मै चक्रोप वै कृष्णो	२.२७.१५
तवोजता महातेजा	२.६०.३३	तस्माद्देव वां	३.१३.२६	तस्मिन्नपतिते भूमौ	२.११०.२०	तस्मिन्विमर्दे योर्वानां	२.३६.१०	तस्मै दत्तो वरान् प्रादाः	१.३३.११
तस्माच्छाद्धानि देयानि	१.१८.१२	तस्माद्भगतादगर्भं यादवी	३.१.७	तस्मिन्नपतिते राजन्	३.१३३.६४	तस्मिन्विमाने पर्यङ्के	१.१७.६	तस्मै देव जगन्नाथ	३.६०.१२
तस्मात्कल्पाय ते कल्पः	१.१.२६	तस्माद्भनं नवतृणं गच्छन्तु	२.८.१६	तस्मिन्नीडे पुरा ह्येकं	१.२०.६०	तस्मिन् शनसहस्राणि	३.५६.४०	तस्मै देवादिदेवाय केशवाय	२.५०.५०
तस्मात्तत्तेज प्रादत्ते	३.२६.३६	तस्माद्वयं पयोमध्ये	३.३०.११	तस्मिन्नेव ततः काले	२.५८.२२	तस्मिन्छन्दे तथाधमाते	३.१२०.१४	तस्मै ब्रह्मा ददौ प्रीतः	१.२.११
तस्मात्तवान्तकालेऽहं	२.४.४४	तस्मिच्छा सतिदेवेशे	३.१०२.२४	तस्मिन्नेव निशीथे तु	२.२२.१०३	तस्मिन्श्चैवान्तरे राजा	२.५६.१२	तस्मै शक्रो ददौ प्रीतो	१.३०.६
तस्मात्तवाहं सुप्रीतः	१.१६.२८	तस्मिन्कृते संविधाने	२.६३.४६	तस्मिन्नेव महायज्ञे जजे	१.५.३४	तस्मिन् सुप्ते न वर्तन्ते	१.५०.२५	तस्य कर्मण्यहं विप्र	२.६२.३
तस्मात्तु महनो	३.८८.२१	तस्मिन् क्रुद्धे तु	३.४६.४	तस्मिन्नेव समे देशे	३.८०.५५	तस्मिन्सुबिहिताः सर्वे	२.६८.५७	तस्य कारण माहुरस्तां	३.८८.२०
तस्मात्तु दुष्करं कर्म	१.३३.४४	तस्मिन् गते स दैत्येन्द्रो	३.४६.३२	तस्मिन्प्रयाते दुषर्षे	१.११.४६	तस्मिन्नेते समाप्तेऽथ	३.२.५	तस्य काञ्चदक्षिणाङ्ग	३.५८.५८
तस्मात्त्वं जहि तो वीरो	३.१११.६६	तस्मिन्गर्हं भदैत्ये तु	२.१३.३३	तस्मिन्प्रविष्टेऽथ	३.१२६.४६	तस्मिन्स्तत्रापतिते	२.१०८.५	तस्य कृष्णभु जोडूताः	२.२४.४३
तस्मात्त्वष्टुः स वै वाक्यं	१.६.४३	तस्मिन्गान्धारराजस्य	२.६८.४८	तस्मिन्मधुवनस्थाने मथुरा	१.५४.५६	तस्मिन्स्तथा वर्तमाने	३.५६.४०	तस्य कृष्णाभिपन्नस्य	२.३०.५१
तस्मात्त्वं काञ्चर्षः	२.१६.४४	तस्मिन् जाते तु देवेशे	३.६८.२१	तस्मिन्मधुवने स्थाने पुरी	२.३८.४०	तस्मिन्स्तथा वर्तमाने	३.५७.७	तस्य क्रोधाग्निपूर्णभ्यो	२.१२.६
तस्मात्प्रार्थयमानस्त	३.८०.३३	तस्मिन् जातेऽथ भूतानि	१.५.२४	तस्मिन् महति संक्रन्दे	१.४८.६६	तस्मिन्स्तु दैत्यनगरे	३.१३३.५५	तस्य गर्भस्य मार्गेण	२.४.८
तस्मात्तुलष्टिं च भव्यं	१.२.१४	तस्मिन्मन्त्रहिते देव	१.२०.१	तस्मिन्महाभीषणके	२.४३.४८	तस्मिन्स्तु मध्यमाने	१.५.११७	तस्य गेहे समुत्पन्नो	१.२६.२६
तस्मात्संहार दिव्यं	२.१२६.१३७	तस्मिन्नपतिते दैत्ये देवाः	१.४८.५१	तस्मिन्महाहवे रौद्रे	३.५६.१	तस्मिन्स्तमितनिशब्दे	२.४२.१६	तस्य चक्रं करे यातं	२.६७.१६
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन	३.८०.७८	तस्मिन्नपरितोषो यः	१.१३.१०	तस्मिन्मातामहे यज्ञं	३.३२.४	तस्मिन्स्तु देवसदृशं	१.२८.२२	तस्य चक्षुः समुत्थेन	१.१४.२५
तस्मात्सर्वं त्वमेवासि	३.१११.५४	तस्मिन्पि गते पुत्रं	३.१४.१८	तस्मिन्मुहूर्ते नगरी मथुरा	२.५५.८५	तस्मिन्स्तु व्युत्थिते	१.४५.७५	तस्य चारयनः सोऽश्वः	१.१४.२२
तस्मादग्न्यद्वनं यामः	२.८.१८	तस्मिन्नहनि निवृत्ते	२.२६.१	तस्मिन् यज्ञे वर्तमाने	२.६१.२५	तस्मिन्हते महावीर्ये	२.६१.५५	तस्य चन्द्रोपमं वक्त्रं	२.६४.३२
तस्मादेवं गृहीत्वां	३.६७.१६	तस्मिन्नहनि संप्राप्ते	३.३३.१६	तस्मिन् यज्ञे महादाने	१.४१.११७	तस्मिन् हिरण्यये	३.१२.४	तस्य चापि महत्कर्म	३.६०.७४
तस्माद्गत्वा च	३.८०.३१	तस्मिन्नानाजनाकीर्णे	२.२६.१६	तस्मिन्विकारे जनिते	३.५.१४	तस्मिन् हृदे महाघोरे	३.१२८.४	तस्य चासीद्दशरथः	१.३६.२६

तस्य चिच्छेद भल्लेन	२.७३.७२	तस्य ते ननयाः सर्वे	१.३१.३६	तस्य निःश्वासवातेन	१.११.३५	तस्य पृष्ठे सुविस्तीर्णं	३.१७.३	तस्य रक्ष्मीप्रत्यगुल्लुप्त	१.२४.१८
तस्य चिन्तयतस्तत्र	३.११.३	तस्य तेनानिलोघेन	२.४१.७	तस्य निष्पतमानस्य	३.५८.६१	तस्य प्रसङ्गितोऽस्य	२.३०.६३	तस्य राज्ञो मत्तायोगी	३.१०४.५
तस्य चिन्तयतस्त्वेवं	२.२.११	तस्य ते युध्यतः कृष्ण	२.१६.८८	तस्य पक्षिनिपातेन पवनो	२.४७.२६	तस्य प्राक्पि कुलस्य	२.४१.१०	तस्य राज्ञो वचश्श्रुत्वा	२.५५.१२५
तस्य चैत्ररथी भार्या	१.१२.७	तस्य त्वाधावमानस्य	३.५६.१३	तस्य पत्नी गले	१.१२.२१	तस्य बाहुं समादाय	३.१०६.८	तस्य रूपं बलस्यासीन	२.३५.३१
तस्य चैवोद्यमानस्य	२.१५.१४	तस्य दत्तं मणिमयं जलजं	२.३७.५८	तस्य पत्नीद्वयं चासी	१.३१.५५	तस्य बाहुसहस्रं तु युध्यतः	१.३३.१४	तस्य रूपं बलस्यासीन्दिशब्द	२.४२.१८
तस्य ज्ञानमयं पुण्यं	३.१७.२६	तस्य दर्पं बलं हत्वा	२.२१.२०	तस्य पद्म्यामयाक्रम्य	२.१२.३३	तस्य बाहुसहस्रेण	१.३३.२६	तस्य राज्ञो वचः श्रुत्वा	२.४७.२४
तस्य तत्राभवन्कन्या	३.३६.२१	तस्य दारारथिर्वीरश्चतु	१.३१.४७	तस्य पद्मावती नाम महिषि	२.४४.४८	तस्य बाहुसहस्रस्य	२.१२६.१३०	तस्य लक्ष्याधिकं	३.३५.४१
तस्य तत्तापशमनं चकारात्रि	१.२५.४६	तस्य दाशा जले मग्ना	२.३८.३०	तस्य पर्वतराजस्यश्रृंग	२.५४.३६	तस्य बुद्धिः समुत्पन्ना	२.११६.१३	तस्य वंशमहं राजन्	१.२०.१५
तस्य तत्र महच्चासीन्	१.५४.२३	तस्य दूतस्य तच्छ्रुत्वा	१.५४.३६	तस्य पार न पश्यन्ति	१.४६.१०	तस्य भग्नोत्तमांगस्य	२.१४.५४	तस्य वंशे महाराज	१.३०.४७
तस्य तत्प्राप्य दुष्प्राप्य	१.२५.२६	तस्य देवमय रूपं	३.७१.५६	तस्य पारिवदस्वेकः	३.५८.५६	तस्य भस्म तदा क्षिप्तं	२.१२२.७८	तस्य वर्षसहस्राणि	१.५०.३६
तस्य तद्रूपमालोक्य	३.६१.२६	तस्य देहं विदार्याशु	३.१०१.२४	तस्य पुत्रत्वमापन्नो	१.५४.६४	तस्य भार्ये महीपाल	३.१०४.३	तस्य बाजिसहस्रं तु रथे	२.११६.१३६
तस्य तद्वदनं द्याम	२.३०.८६	तस्य देहे प्रकाशन्ते	२.३०.८८	तस्य पुत्रशतस्यासन्	१.३३.४८	तस्य भ्रातृशतं चासी	१.११.५	तस्य बारिमयं वेगमापीन	१.११.५४
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	२.४६.२५	तस्य दैत्यपतेर्मन्दं	३.४२.३	तस्य पुत्रः स धर्मात्मा	१.३२.६६	तस्य मण्डलमध्यात्	३.१६.२८	तस्य विक्रमतो भूमि	१.४१.१००
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	२.११६.५२	तस्य दैत्यस्य संक्रुद्धो	३.६०.४७	तस्य पुत्रा वञ्च्युत्से	१.२६.१०	तस्य मत्तस्य वदनं	२.४१.१२	तस्य विक्रमतो भूमि	३.७२.२६
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	२.१२१.६५	तस्य दोषस्य शान्त्यर्थं	२.७२.२३	तस्य पुत्रा बभूवुहि	१.३८.५	तस्य मध्ये सहस्रास्यं	२.२६.४६	तस्य विजयं वित्तं तु	२.१०६.४२
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	३.४६.२	तस्य नादेन महता	२.१२६.१३४	तस्य पुत्रा शतं द्याता	१.३३.५१	तस्य मोक्षार्थं माहूतो	२.१२१.१०४	तस्य विद्युच्चलापीडाः	१.४७.३८
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	२.४७.१६	तस्य नादेन रौद्रेण	३.५६.४६	तस्य पुत्रास्त्रयः शिष्टा	१.१२.१	तस्य यः सोद्यतः पाणिः	३.२८.४७	तस्य वृद्धाभिनन्दन्ति	२.२०.२
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा	२.५५.१२०	तस्य नाहं गतिं जाने	२.२२.२४	तस्य पुत्रैः स्खनद्भिश्चतु	१.११.५०	तस्य यज्ञसकाशं मां	३.६६.५४	तस्य शार्गविनिर्मुक्तैः	२.१२६.६६
तस्य तिसृषु भायासु दिभ्यः	२.३८.४७	तस्य निर्गच्छतस्तस्माद	२.६०.३२	तस्य पुत्रोऽभवद्वेनी	१.५.२	तस्य यज्ञे पुरा गीता	१.१८.६२	तस्य सकल्पं प्राप्तीञ्च	१.२३.१२
तस्य तुष्टो महातेजा ब्रह्म	२.६१.६	तस्य निर्मयितस्त्वंसो	३.५४.५६	तस्य पुत्रो महानीसा	१.५४.२४	तस्य यत् च्यावितं तेजः	१.२५.१६	तस्य संस्तूयमानस्य	१.२५.१४

श्रीहरिवंशपुराणम् १: श्लोकानुक्रमणी

६४

तस्य संस्थाकृतमिदं	३.२.३१	तस्यापि राजन्विप्रस्य	३.१११.२६	तस्यामेव सुरभ्यां	३.१४.४२	तस्यास्तु विधिवन्नाम	२.५६.३३	तस्योपरि गवां लोकसाध्या	२.१६.३०
तस्य सत्वरथानाम	१.१३.३४	तस्याः पुत्रो महानासी	१.१२.६	तस्याय प्रथमः कल्पः	२.४०.३७	तस्यास्त्रचरितं मार्गं	२.१६.८०	तस्योपरि जलोचस्य	३.३५.१
तस्य सत्यव्रतो नाम	१.१२.१२	तस्या पुर्वा महावीर्यो	१.५४.६३	तस्यारसितशब्देन रथने	२.४४.११	तस्यास्ये वितता ह्यायो	२.१२७.६६	तस्योपविष्टस्य मुखं	२.१६.७
तस्य सम्यक्प्रचारेण	२.३७.४२	तस्याः प्रपातं दक्ष्याम	२.३६.६०	तस्याहरोह सहसा मध्यमं	२.१२.३४	तस्यास्त्रलोक्यमुन्दर्या	२.४७.८	तस्योरसि सुदुःखार्ता	२.४४.४२
तस्य सम्यक् प्रवृत्तस्य	२.३७.२५	तस्याः प्रीतोऽभवद्भर्ता	१.२७.१८	तस्यार्चविस्फुलिङ्गानां	३.१८.१२	तस्यास्त्वं नवमो गर्भः	२.२.३५	तस्योऽहं सहसा भित्वा	१.४५.४६
तस्य सुप्तस्य शुशुभे	१.५०.११	तस्याभिपततः खड्गं	२.६०.२४	तस्याजुं न कदम्बाद्या	२.११.८	तस्याऽहं समनुप्राप्तो	३.६६.५५	तांश्च राज्ञः शेरैः सर्वा	२.६०.२६
तस्यसिंहासनस्यस्य	२.२६.१६	तस्याभ्यागतो भाति	२.२६.५६	तस्याव्यक्तस्य योध्यक्तो	२.७१.१४	तस्येच्छया वाति वायुरा-	२.८६.२६	तांश्च हत्वा विविशतुर्मध्यं	२.६६.४१
तस्य सैन्यस्य निनदं	२.११६.६०	तस्यांगतायां कंठस्तु	२.४.४६	तस्या शक्त्या प्रभावेण	३.३६.१८	तस्येव करसंक्षेपो	३.११८.३४	तांश्चापि नष्टान्विज्ञाय	१.३.२७
तस्य हैमवती कन्या सतां	१.१२.४	तस्यां जनिष्यते पुत्रो	१.२७.२०	तस्यावचैवान्तरप्रेक्षुर	१.३.१३१	तस्यैव च सहायोऽन्यो	३.१३.२	तांश्चाप्युरान्समुत्पाद्य	१.५५.२०
तस्य ह्येका महाराज	१.४१.१८	तस्यां जने महाबाहुः	१.३८.५१	तस्याश्रमे च तं गर्भं	१.१४.८	तस्यैव च सुवृत्तस्य	२.३७.४४	तांस्तदाव्रुवतः सर्वान्महर्षी	१.५.११
तस्याग्नेविस्फुलिङ्गानां	३.२८.७५	तस्यां तु शप्तमात्रायां	१.२६.३२	तस्या सभायां दैत्येन्द्रो	३.४२.१	तस्यैव तु प्रसादेन	३.६७.८	तांस्तु दृष्ट्वा महाभागान्	१.३.८
तस्याग्ने समपद्यन्त	३.८६.१	तस्यां देवपुराभायां	२.६३.२३	तस्यासीद्द्विषिता भार्या	२.३७.१३	तस्योत्तमांग स्वे काये	२.१४.५२	तांस्तु विद्वततो	३.६०.५४
तस्याज्ञया बधिर्यामो	२.८६.८२	तस्यां प्रणस्य पातायां	२.६४.१६	तस्यासीद्विजयो युद्धे तत्र	१.३६.१७	तस्योत्तमे महाभृङ्गे	२.३६.६७	ताः कन्या प्रददौ	३.२२.६
तस्यातिमात्रामृद्धिं च	१.२.१२	तस्यां प्रतिहतायां	३.४५.३०	तस्याः सुखाव नेत्राभ्यां	२.६६.२४	तस्योत्तरं नृपश्रेष्ठ	३.१२७.५	ताः कन्या भ्रममुख्यानां	२.८३.४१
तस्याथ पुरुषेन्द्रस्य	२.६३.२१	तस्यां स देव्या राजर्षि	१.३२.२	तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा	२.४४.५३	तस्योत्पन्नं भयं	३.१०.१८	ता गावः प्रदृता हृष्टा	२.१७.३३
तस्यान्ववाये जज्ञेऽसौ	२.५६.२१	तस्यां सभायां दिव्या	३.४२.१६	तस्यास्तद्वचनं श्रुत्वा	२.११६.६८	तस्योत्पन्नमिदं लोके	२.१२१.४	ता जले स्थलवत्स्थित्वा	२.८८.४६
तस्यान्ववाये भीमस्य	२.५६.१२	तस्यां सभायां रास्ते	३.६६.३२	तस्या स्तनं पयो कृष्णः	२.६.२६	तस्योत्सर्गे घनश्यामं	२.२६.५८	ताडयतामत्र भेरी	३.६३.१६
तस्यान्ववाये महति	१.२०.४०	तस्यामाघस गर्भं च	१.३७.११	तस्यास्तनुस्तमोदारा	१.५०.२८	तस्योत्सिक्तस्य बलवान्	२.२४.३६	तात द्यौर्वाजे गोष्ठे	३.१३०.६
तस्मिन्विशसने धीरे चक्र	२.४३.४१	तस्यामुत्पादयामास पुत्रा	२.६०.३७	तस्यास्तं समयं सर्वं	१.२६.१७	तस्योद्यतस्तदा दक्षो	१.३.१२	तात युवतास्म वयसा	२.३८.५
तस्यापरे दाशजनाः प्रवाला	२.३८.३१	तस्यामुपरि मेदिन्यां	२.४६.३३	तस्यास्ति कन्यारत्नं हि	२.६१.४१	तस्योपतिष्ठः सूर्यं	१.३८.१६	तादृक् स्वप्नो मयो दृष्टो	२.१०८.६

तादृशं समालोक्य बलदेवं २.५३.४६	तान्कविः ससृमश्चैव १.२१.६	तापनीयैर्वरेनिष्कैर ३.४६.२५	ताभ्यामेव स जगद्गृह पद्भ्यां २.१३.१६	तां दीप्यमानां महती २.१२४.६
तादृशं रंगमनुजं २.५१.६	तान्क्षत्रियगणांस्तान १.१८.६०	ताः पृष्टास्त्वप्रभावन्तो २.६६.१८	तां कश्यपः प्रसन्नात्मा १.३.१२४	तां दृष्ट्वा मोहिनी नाम २.१०६.२३
तानन्तरिक्षे नारायणान् ३.५५.१२६	तान् गृहीत्वा सुतांस्तस्य ३.१४.२०	ताः प्रोवाचाप्रमेयात्मा २.८८.४०	तां कापुरुषदुस्तारा ३.६०.१०	तां दृष्ट्वा बबुधे कामः २.५६.४२
तान्प्राप्तान् शरान्मोऽथ २.१०६.७	तान्धनीयान् सतिमिरान्दो १.४२.२०	ताभिः प्रदिष्टाः शत्रुभिर्द्यौः २.८८.४५	तां क्रीडन्ती ततो दृष्ट्वा २.२६.३३	तां नारदस्तथोवाच मुनि २.६५.१८
नानाकाशगतान्निर्जन्तः २.८४.४२	तान् दृष्ट्वा घावतः २.१०५.३६	ताभिर्द्वयस्त्रयो लोकाः १.२५.१७	तां गदां गृह्ण सहसा २.१०५.८०	तां प्रगृह्ण महाभीमामयः ३.५७.६४
तानागतान्महात्मानो ३.१०७.२	तान्दृष्ट्वा नारदः श्रीमान् २.८३.२६	ताभिर्विद्धो रणे वीरः ३.६६.३८	तां च कुब्जां स्थगोर्मध्ये २.२७.३५	तां प्रदीप्तां महोत्काभां २.१२६.१५
तानागतान्बिदित्वाथ २.४४.१	तान्दृष्ट्वैव निकुम्भरस्तु २.८५.१३	ताभिः शुश्रूषितो धीमान् ३.८३.३५	तां च तत्रोपसंगम्य २.१०१.१६	तां प्रविश्य ततः सर्वे २.६१.२४
तानि चक्राणि वदनं ३.४५.१०	तान्पाशहस्तप्रयितां १.४६.२१	ताभिस्तु सह चिक्रीड सर्वा २.८८.२२	तां च दृष्ट्वा स्थितां देवो २.१२६.२८	तां भजस्व गदां कृष्ण २.३६.७७
तानि चक्राणि सर्वाणि ३.४५.११	तान् प्रहरयुल्लङ्घ्यरथा २.५६.५४	ताभ्यां कुरु नमस्कारं ३.१२१.२५	तां च द्रक्ष्यसि गोविन्द २.२६.८	तां रेवतीं चाप्यथ वापि २.८६.५
तानि त्वामाहुरोशन ३.८८.२३	तान्प्राप्तान् शरान् २.१०५.४३	ताभ्यां च सह गोपत्वे १.५५.३५	तां चोवाच ततो निद्रां २.२.२७	तां वै क्रोधाच्च मोहाच्च १.१३.१५
तानि रत्नोपकल्पानि २.२६.७	तामगजमानानेकस्त्वं २.१२१.२३	ताभ्यां ते सलिलं चक्रुर्वृष्ण २.३२.६१	तां द्यामक्षिपन्त्सोमा ३.२८.४६	तां वै सर्वे सुमन्तः २.४.४८
तानि वैदर्यवर्णानि ३.१३३.८१	तामृत्यु वंशमापन्ना ३.५६.७	ताभ्यां प्रीतो ददौ मातृ २.२७.२१	तां तथा रुदतीं दृष्ट्वा २.११८.४	तां श्रुत्वा माधवीं लक्ष्मी २.११०.६
तानि शीतानि तोयानि ३.४१.५६	ताम्यजस्व महाभाग १.१६.४३	ताभ्यां बलाम्भ्यां संजज्ञे १.४५.१	तां तथावादिनीं साध्वी १.१०.१२	तां सभां मणिरत्नादयां ३.१०२.८
तानि सर्वाणि वाणीर्धः २.७३.६०	तान् यजन्ति स्म वै १.१६.४१	ताभ्यां बलाम्भ्यां संदृष्टा १.४७.२३	तां तथेत्यूचतुह्ये २.६४.४३	तां समन्तात्समालोक्य २.५५.१०
तानुवाच जरासंधः २.३५.७३	तान्येवास्याः कारयिष्ये २.५८.७	ताभ्यां मुखे प्रविष्टाम्भ्यां २.४३.३	तां तदा द्वारकां दृष्ट्वा २.६८.६	तां समीपमनुप्राप्तां २.१२६.१६
तानुवाच जरासन्धः २.४३.२३	तान् ब्रूण्वि महाराज १.२६.४०	ताभ्यां युधि निरस्ताभ्यां २.२८.२५	तां तु तृष्णभिभूतात्मा २.४१.११	तां सूर्यसदनप्रस्थां २.१०२.३४
तानुवाच ततः कृष्णः २.११०.२८	तान्वै देवगणाः सर्वे १.१८.४७	ताभ्यां वल्लिः स मायाभ्यां ३.६२.२७	तां तु सर्वानवद्यांयी ३.५.१३	तां सृजामि महामाया २.१०६.३०
तानुवाच ततो ब्रह्मा २.२.१६	तान्समीक्ष्य महोत्पातान् २.११२.५	ताभ्यां समाहृतो विष्णु ३.१२७.२३	तां त्वष्टुर्भुजनिर्मुक्ता २.५५.३१	तां हृष्टमनसः सर्वे यथा १.५२.१०
तानुवाच हरिर्देवो निद्रा १.५०.४५	तान्सर्वान्योधमायास २.६०.१३	ताभ्यां स विद्धो दश २.५६.६५	तां ददर्श तदा कृष्णो २.५६.३५	तामन्तः प्रसवां दृष्ट्वा १.२५.३८
तानुवाचः हृषीकेश २.११३.१७	ताः पति पतितं भूमी २.४४.४४	ताभ्यामुभाभ्यां सञ्जापे २.४१.३७	तां ददौ न च कृष्णाय २.५६.१८	तामप्सरसमानाय्य २.११८.५०

तामस्नीवीत्समशं ते प्रियां २.६७.१०	तारका निम्बरा राजं ३.६६.१४	तावन्योन्यं जिवांसनी ३.५५.१७	तावुभौ हंसद्विम्बको ३.१२७.१२	तासां रुदिशब्देन गोपानां २.२४.१७
तामस्या छादयामास २.११६.३४	नारकामययुद्धं च ३.१३४.७	तावन्योन्यं प्रजङ्गते २.४३.६८	तावचनुदा सर्वास्तान् १.५.३६	तासां हर्म्यतलस्थाना २.१२१.१२
ता मां समभिषिचन्तु २.१०६.३४	तारांसहस्रैः खचितं ३.५२.१३	तावन्योन्थावहङ्गां युद्धे २.२१.१६	तावचुष्टैः सर्वे १.५.३५	तासामसुरसेनानामुद्यतानां २.८४.१६
तामापतन्तीं मायां २.१०६.२०	ताराचित्रपिनङ्गां स्वर्णं २.१०५.१४	तावप्सुभौ मुक्तनी २.२७.१८	तावेतावसिनां युद्धं ३.१२५.१७	तासु देवाः खगा नागा १.२.४६
तामापतन्तीं संप्रेक्ष्य २.११६.१६२	तारायां कपिलो जज्ञे २.१०३.२६	तावर्जुनी कृष्णमाणी तेन २.७.१८	तावेवं मानुषी दीक्षां २.१४.८	तास्तदा प्रतिजग्राह १.३.२८
तामापतन्तीं संप्रेक्ष्य ३.४५.१३	तार्क्ष्यभारहृष्ट गच्छति २.६७.५	तावागनी समालोक्य ब्रह्मा १.५२.२७	तावेव वां क्षमी युद्धे ३.११८.४१	तास्तं निपतितं दृष्ट्वा २.४४.४०
तामावसत्पुरीं कृष्णस्त्व २.५८.४५	तार्क्ष्यश्चारिण्डनेमिश्च २.३६.४३	तावापतन्तीं स्वरितो प्रति २.२६.२३	तावेव विपुलो बाहू ३.१२३.१५	तास्तं पयोधरोत्तुङ्गैरुहो २.२०.२३
तामासनवतीं रम्यां २.१००.१५	तालध्वजेन दीप्तेन ३.५०.१८	तावापेतनुदेवाय स्वयं चाप २.८४.६	ताश्च गावस्तथा २.६.३५	तास्तस्य नृत्यं गीतं च २.२०.२८
तामाह कृष्णः कुञ्जति २.२७.२६	तालपुन्नागवकुलद्राक्षा २.५६.२२	ता वार्यमाणा पतिभिर्भ्रातृ २.२०.२४	ताश्च प्राङ्मोतिषपति २.६३.१५	तास्तस्य वदनं कान्तं २.२०.१६
तामाह निद्रा संविना २.४.५	तालमात्राणि चापानि ३.५६.७०	ता वासुदेवेऽप्यनुरक्तविन्ताः २.८६.७२	तासां प्रथितसीमन्ताः रति २.२०.३४	तास्तु कामदुष्टा गावस्तस्य २.६.३१
तामिलेत्येव होवाच १.१०.८	तानसाब्दं स तं श्रुत्वा २.१३.१४	तावाह वरवर्णाभी भीतो २.२७.४	तासां ददौ सन्नियोगमेकैकं २.७६.२०	तास्तु पञ्चीकृतास्तस्य २.२०.२५
तामुत्थाप्य परिष्वज्य २.६०.२८	तालानां तमघोदृष्ट्वा स २.१३.१७	तावाह्य वषाथेन उभौ २.४६.६	तासां परमकूलानि २.६८.६८	तास्तु संभ्रान्तवदना यशोदा २.७.२१
तामुवाच हसन्तीं तु कृष्णः २.२७.३१	तालैस्तैर्विपुलस्कन्धै २.१३.६	तावित्थं हंसद्विम्बको ३.११६.२	तासां परमानरीणामुपभोगं २.६४.३१	ता हासयामास सुधैर्ययुक्ता २.८६.२६
तामूचीकस्ततो दृष्ट्वा १.२७.२७	तावतुण्डः सोमहरः ३.७६.४	तावुद्यतांशुपाशौ द्वौ १.४६.६७	नासां पुरवरं भीमोऽकारय २.६३.१४	तामिरीषहृताकं तु ३.५६.५५
तामेकभावंसंपन्नां लेभे १.२३.२६	तावद्यत्नश्च कर्तव्यः २.६१.५०	तावुभाव नुलिप्तांगौ २.२७.३४	तासां बाष्पान्मुपूरुणाणि २.१२१.१०	तामैरगायतरक्ताशं मन्दरो १.४६.५४
तामेव प्रकृति यान्ति ३.१८.२४	तावन्तमिति कालस्य १.८.३३	तावुभावपि संश्लिष्टौ यथा २.३०.३३	तासां बाष्पान्मुपूरुणाणि २.४४.४३	तामैरगूध्वं च गगने १.४७.४०
तामेव मनसा कांता २.६४.२१	तावन्नेव सहस्राणि १.३७.२५	तावुभौ जलगर्भस्थौ १.५२.२६	तासां मतेन साध्वीनां २.७७.२४	तामैरगोनी गताञ्चैव ३.१६.४५
ताम्बूलं रोचते पूर्वं २.११७.४४	तावन्मेऽस्ति भयं भूमौ १.५२.२०	तावुभौ परमाचार्यौ लोके २.४३.६४	तासां मरालपटमाणि २.१२१.११	तामपात्रं प्रदानव्यं न देयं २.७६.३०
ताम्यामाप्नान्विन सैन्यं १.४६.१६	तावन्मेऽस्ति भयं ३.३४.२५	तावुभौ मोहमापन्नौ २.८५.५५	तासां यथाहर्म्याणि २.६६.२८	तामरत्नमयं दत्त्वा २.७७.२१
ताम्यामुद्भ्रान्तवेगाम्भां १.४६.३४	तावन्योन्यगतौ बाली २.७.२	तावुभौ व्रजसंबद्धौ २.७७.४०	तासां रुदिशब्देन गवां २.६.६	तामशश्चक्ररुतुलं ३.१२२.६

तिलोत्तमा चाप्यथ मेनका २.८६.७१	तुरङ्गमाणां तु शतं ३.५८.६	तृपितेन कदाचित्स भिक्षिता १.३३.३८	ते च सर्वे यथावेरम २.२४.२	ते ज्ञातिवधसंतप्ताश्च २.८२.५
तिष्ठ किं प्राकृतेरेभिः २.१०५.७२	तुर्यां समभवद्भोगे २.१०३.२७	तृष्णा चैनं विवेशाशु २.४१.८	ते चाध्वविधिना सर्वे २.४०.४	ते तत्त्वहस्यतिकृतं १.२८.३२
तिष्ठ तिष्ठ न मेऽद्य २.१२६.४०	तुल्यसामर्थ्यां वाचा २.४७.३७	ते कथं भवताः नेत्रा ३.२.२३	ते चाराः सर्वतः सर्वे ३.१२१.६३	ते तत्र पक्षिणः सर्वे १.२१.३२
तिष्ठते दानवश्चेष्टः ३.५७.१४	तुल्येष्वभ्यधिकः स्नेहः १.६.३४	ते कृताञ्जलयः सर्वे देवाः १.४२.२६	ते चिरेणैव संप्रान्ताः ३.६७.२१	ते तत्र रमणीयेषु विषयेषु २.५६.२३
तिष्ठत्वमग्नयः सर्वे २.१२२.३६	तुल्योऽसि दीर्घतर्वाण २.१२६.१५१	ते कृष्णमागतं दृष्ट्वा २.४८.१	ते जगमुरर्कं ज्वलनेन्द्र ३.४६.२०	ते तत्र समनुप्राप्य ३.६६.२६
तिष्ठत्वमिति चुक्रोश २.११६.१०६	तुष्टगोपजनाकीर्णो गोप २.१७.१६	ते कृष्णस्य वच श्रुत्वा २.११३.१८	ते जघ्नुः शनसाह्वलाः ३.५५.८५	ते तथेति महाबाहुमुक्त्वा २.५८.१५
तिष्ठ यत्नेन रक्षस्व ३.७५.२	तुष्टस्य स्तुतिना किं ते २.५५.३६	ते क्रुद्धाः शरवर्षेण सुनीयं २.५६.६३	तेजः संभूय दुर्धर्षमव १.३.१३०	ते तथोक्ताः शकुनयो वज्र २.६२.८
तिष्ठेदानीं न मेऽद्य २.१२६.६८	तुष्टाव च तमीशानं मारिचः २.७२.२८	ते क्षिपन्ति पयो भूमा ३.२८.१४	तेजसा ज्वलनाकारं २.१.५	ते तन्वानास्तनूस्तत्र १.४२.८
तिष्ठेदानीं यथाकामं स्थितो २.४४.१६	तुष्टिं तु परमां जग्मु १.१०.६	तेऽङ्गुष्ठाभावा मुनय ३.२१.४	तेजसा तेन ज्योतीषि ३.२८.५	ते तमासाद्य गोमन्तं रम्यं २.४०.२८
तिष्ठेत्सेह महाबाहो १.३६.१८	तुष्टुबुद्धेर्वगन्धर्वा ३.७६.१८	ते गता अमुरा राज २.८२.२३	तेजसा भास्कराकारः ३.४१.४४	ते तस्य सत्यसंबस्य १.४२.३३
तिष्ठः कन्धास्तु मेरायां १.१८.१५	तुष्टुवृत्तो महाराज ३.१२५.२३	ते गत्वा दूरमध्वानं सरितं २.६०.६	तेजसा मूर्ध्नि चाधाय ३.१८.६	ते ताततातं संत्यज्य २.२.१३
तिष्ठः कोट्यः सुतास्तेषां १.३.१०५	तुष्टैस्त्वेरमुरा ह्युक्ता २.८३.४७	ते गदाकनकिर्दग्धा गत १.४८.५४	तेजसा यादवाश्चास्य २.२५.२६	ते तामपश्यन्पतितं २.६.२८
तीक्ष्णयन्त्रशतवतीभिः २.६८.२५	तूष्णीरशरसंपूर्ण ३.४६.४५	ते गदापरिधैरुधैरंघनु १.४३.२७	तेजसा युगपद्ब्याप्तं ३.३५.१८	तेऽतीत्य सागरान्सर्वा ३.६७.२२
तीक्ष्णरश्मिरिवादित्यः ३.५७.५४	तूष्णींभूता एकाचिता ३.६६.२७	ते गदाभिश्च गुर्वीभि १.४७.६	तेजसा रूपमैश्वर्यं ३.१६.३४	ते तु गोत्रकरा राजन् १.३१.१७
तीक्ष्णैः परशुनिस्त्रिं ३.३८.१३	तूष्णींभूतेषु सर्वेषु २.१२१.१६	ते गदाभिः सुभीमाभि ३.६०.२६	तेजस्त्वम्यधिकं तात १.६.६	ते तु तद्वचनं श्रुत्वा १.३.१८
तीर्त्वा वेणुमिमं पुण्यां २.३६.५६	तृतीयं त्वमयो वाण २.१२६.१५४	ते गदां मुशलं चक्र २.१०५.५६	तेजस्विनां मुरारीणां ३.४८.१६	ते तु तस्योत्तरं श्रुत्वा २.४०.३०
तीर्षान्वेतानि पुण्यानि २.१०६.४१	तृतीयं पारणं प्राप्य ३.१३२.२६	ते ग्राम्यधर्माभिरता १.२३.२३	तेजस्वी सबलश्चैव १.७.८८	ते तु नन्दनगोप्यारः २.७३.१३
तुमुलस्सुमहानासीन्महामेघ २.५१.६६	तृतीयं वायुविषयं ३.१३३.७२	ते चक्रिरे महत्कर्म ३.१३३.५७	ते जातवेदसः सर्वे २.१२२.३०	ते तु नालीक नाराचं ३.६१.२६
तुम्बुरुप्रमुखात्सर्वा ३.२०.४	तृतीयोद्यच्च ते भागो २.१२३.२२	ते च गोपास्तमागम्य २.२६.२७	तेजोमण्डलिन देवं १.३८.१८	ते तु प्राप्य स्मृति १.१८.१०
तुरङ्गभीरवप्रश्व तरस्वानुष १.७.८७	तृप्ताः प्रवृत्ताः पुनरेव वीरा २.८६.६६	ते च विशतिस्त्राह्व्या २.६४.१३	तेजोमूर्ति धरेरूपैर्नव ३.२३.२२	ते तु वैतस्त्रिकर्वाणं २.६०.१८

ते तु ब्रह्मर्षयः सर्वे	१.५०.१६	तेन त्रैलोक्य मुख्येन	३.६५.१४	तेन शब्देन विप्रस्ता	२.६.२७	ते निषेदुयंयोक्तेषु विमाने	१.५२.११	ते प्राद्वन्त विप्रस्ता	३.५६.२२
ते तु सर्वे समानार्थो	२.२.१६	तेन त्वामर्चये राजनिबोधेण	२.५३.२०	तेन शब्देन संक्षुब्धं	२.१२.४	ते नृपाश्चोदितैर्नागैस्त्वन्दै	२.४३.७६	तेऽपि सर्वे महीपाला	२.५२.४८
ते त्रिरात्रोषिताः प्राप्ताः	२.४३.६८	तेन त्विदानीं बहता	१.१३.११	तेन शक्रः सहस्राक्षः	१.४७.४७	तेनेदं निमित्तं पूर्वं	१.२०.१७	ते प्राप्तवयससव स्थिताः	२.३८.४
ते ददुर्वस्त्रमुख्यानि	२.६३.३३	तेन दक्षस्य पुत्रा वं	१.३.११	तेन संशोदिता मेघास्तस्य	२.१५.६	तेनेयं गीर्णमहाराज दुग्धा	१.२.२५	ते प्रीते प्रीतियुक्तेन	३.१०२.१६
ते दानवशरा घोरा	३.४५.७	तेन दुष्टप्रचारेण दूषितं	२.२४.१३	तेन सत्येन बाणेन	२.१०७.२५	तेनेयं पृथिवी सर्वा सप्त	१.३३.१५	ते ब्राह्मास्तस्य गात्रेषु परिवे	२.८५.३२
ते दानवाः पाशगुहीत	३.४४.२२	तेन नष्टेषु वेदेषु	१.४१.१०५	तेन सप्तसु द्वीपेषु	१.३३.१६	ते नेषुस्तत्र केचित्सु	२.८२.१५	ते ब्रह्मचारिणः सर्वे	१.२१.४०
ते दिशो विदिशश्चैव	३.५८.११	तेन बाणप्रहारेण	३.५७.४०	तेन संपादितं सत्यं	२.१५.८	तेनैव गजदन्तेन	२.२६.३८	ते ब्रह्मविदिभवश्च	३.५२.५३
ते दीर्घिकासु रम्यासु	२.६२.२	तेन बाणेन तान्वाणांश्च	२.६३.६८	तेन सा जानि पुष्पाभान्दन्ता	२.८०.२६	तेनैव त्वं शरीरेण	१.२६.१६	ते भवन्तं पुरस्कृत्य	२.६१.२२
ते दृष्ट्वा नारसिंहेन	३.४८.१७	तेन ब्रह्मशिरो नाम	१.२५.३४	तेन स्नेहेन भगवान्	१.२५.३३	तेनोक्तं भुवने नास्ति	२.७१.२३	तेऽभिजाताः कुक्षेत्रे	१.२४.२१
ते देवदानवाः प्रीता	१.२८.८	तेन ब्राह्मणशब्देन	३.२३.१६	तेन स्यन्दनमुख्येन	२.४४.७	तेनोत्पाताम्बुवर्षेण	२.१८.२१	ते भिन्न वर्मास्त्रिभुजा	३.५५.७४
ते देवराजस्य	३.५२.२४	तेन ब्राह्मेण वपुषा	३.१७.१४	तेन हृष्टेन कालश्च	२.६३.४०	तेन्योऽन्यमभिसंषेत्	१.४७.२६	ते भीता भयसंश्रिता	१.४७.३
ते दैत्यास्तेन गन्धेन	३.३०.८	तेन योगेन राजेन्द्र	३.३२.६	तेन हैहयराजस्य	१.४१.१०८	तेऽन्योन्यं ददुर्मुखैरा	२.६६.२०	ते भीममायाः सुसमूढा कायाः	३.५१.३५
ते धर्मचारिणो नित्यं	१.१६.७	तेन विज्रासिता देवाः	१.४७.४६	तेन तान्मेन प्रजास्तात	१.६.२०	तेऽन्योन्यं नावबुध्यन्त	१.४५.१४	ते भीमसंगा दितिजा	३.६०.३१
तेन क्षीरेण यक्षाश्च	१.६.३७	तेन विज्रासिता देवा	३.५७.५८	तेनाम्भसा प्लुताः	३.३४.११	तेऽन्योन्यं वपुषा बद्धा	१.१८.११	ते भूयः प्रणताः	१.१७.२४
तेन खल्व्वाकराः सर्वे	२.११०.५७	तेन विद्वोऽन्य भगवान्	३.१२३.६	तेनार्थं मागधश्चीमान्	२.४८.४२	ते परावरदृष्टार्था	१.५१.१२	ते मुक्ता रौमिण्येन	२.८५.४०
तेन खल्वसि देवानां	२.११०.६४	तेन वेदत्वमापन्ना	३.१७.४६	तेनास्त्रेण रथो दग्धः	२.७३.४८	तेऽपि खल्वग्नयस्तुतिं	१.११०.७७	ते मुहूर्तेन संप्राप्ता	३.६६.१८
ते नगा जलसंछन्नाः	३.६.१६	तेन वैरं त्वया मादं	२.१२१.४७	तेनाहं नोदयिष्यामि	२.५०.३६	तेऽपि गोवृत्तयस्सर्वे कृष्णं	२.२१.२५	त यदा तु सुसमूढा	१.२८.३५
तेन चित्ररथेनाथ तदा	१.३१.४५	तेन शक्रः सहस्राक्षः	३.३८.३३	तेनाहं वः प्रवक्ष्यामि	२.५१.३०	तेऽपि तेनैव मार्गेण	१.३.२४	तेय मघश्चतुर्थोऽमाश्रमो	३.१०८.१४
तेन तार्क्ष्यगतेनैव	२.६७.८	तेन खल्वनिनादेन	३.५६.४७	तेनाहं वः प्रवक्ष्यामि	२.५३.५१	ते प्रजानां शुभकराः	१.५१.६	ते युद्धरागा रथिनो	२.३५.८१
तेन ते कथयिष्यामि	२.११४.१६	तेन शब्देन महता	२.१०५.३०	तेनाहं सह संगम्य	१.४५.७७	ते प्रविष्टाः सभां दिव्यां	३.६६.४३	ते युद्ध शोण्डाः सुभुजास्तत्र	३.५२.६०

तं योगधर्मनिरताः	१.२३.१	ते विहाय गुह्यामध्ये	३.२६.१६	तेषां जिह्मानि गात्राणि	३.५८.१६	तेषां भूयः प्रविष्टानां	३.३३.२०	तेषां वै मानसी कन्या	१.१८.६६
ते रक्तसूर्यादिवसे तत्र	२.५६.२१	ते वै क्रूरतया हिंसा	१.२१.१६	तेषां जनपदाः पञ्च अंगा	१.३१.४२	तेषां मतमथाज्ञाय गन्तुं	२.६.७	तेषां भृशं त्व आढानि	३.१३२.१२
ते रक्ता विस्मयं नेदुर-सुराः	२.६३.११	ते वै नदन्तां मधुरं	२.६२.३	तेषां जनपदाः स्फीताः	१.३१.३०	तेषां मध्यगतो बाणः	३.४६.२६	तेषां श्रुतिष्ठानां	३.१३२.१०
ते रथैर्विविधाकारैस्स	२.५६.४६	ते वै सदीप्तननसः प्रगृहीतो	१.४७.१४	तेषां ज्वलितकीर्तिनाम	१.५१.१७	तेषां मध्ये महाबाहु	२.४८.४	तेषां श्रेष्ठस्तु राजासीत्पुरे	३.१.५
तैर वै च तदा युद्धे नान्	२.११६.१२१	तं शक्रसदनं प्राप्ता	२.७५.३५	तेषां तत्र विहङ्गानां	१.२१.४१	तेषां मनोभिलषितं	३.३०.१६	तथा संवित्तथोत्पन्ना	१.२३.३०
ते रश्मयः प्रभानैर्त्रैः	३.२८.२५	ते शप्ता ब्रह्मणा	१.१७.२३	तेषां तदभवद्युद्धं	३.५६.११	तेषां ययातिः पश्चानां	१.३०.४	तेषां सकञ्चुकोष्णीवास्स्थ	२.३५.३०
ते रुदन्तो द्रवन्तश्च	३.१४.३६	ते शुभां काञ्चनस्तम्भां	२.६१.२३	तेषां तु तपसा तेन	१.२१.३८	तेषां यवीयान्पृषतो द्रुपद	१.३२.८०	तेषां सकञ्चुकोष्णीवास्स्थ	२.४२.१७
ते लोहिताक्षाः परिवार्य	३.५२.२६	ते शूरसेनानाविश्य प्रभू	२.३४.२२	तेषां तु दिवि दैत्यानां	१.४६.२०	तेषां युद्धं महाघोरं	३.५८.८४	तेषां स गायतामेव	२.११.२७
ते वज्रनगरस्याथ शास्त्रानगर	२.६२.६३	ते शूलहस्ता गगने	३.५१.२२	तेषां तु वायुप्रतिमोजसां	३.४४.२४	तेषां रथानां तुमुलः	१.४७.३१	तेषां संघर्षजान्द्रुतः	३.६.१०
ते वध्यमानः विबुधाः	३.१३३.६०	ते सैलास्त्रिचिवा दग्धाः	३.२८.८७	तेषां तुष्टः प्रजाकर्ता	२.८२.१०	तेषां रुदितशब्देन पीराणां	२.४४.३६	तेषां सप्त महावंशा	१.१.३७
ते वध्यमानाः कृष्णेन	२.८४.४१	ते श्रुत्वा पृथिवीवाक्यं	१.५३.१	तेषां नारायणं तेजः	१.५१.१२	तेषां रूपैस्तथा गान्धर्वैः	३.२२.२४	तेषां संपश्यतामेव पारिजातं	२.७३.६
ते वध्यमाना वलिभि	१.४५.८	तेषां पथि क्षुधातीनां	१.२१.८	तेषां निरवशेषेण ववन्ध्र	२.८४.६४	तेषां लब्धानुमानानां	३.४.४५	तेषां सुतुमुलः शब्दशुश्रुवै	२.३५.२६
ते वध्यमाना रामेण रणे	२.३५.७२	तेषां कर्माविदातानि	१.१.१४	तेषां पात्रविवशेषाश्च	१.४.२६	तेषां लोकविसर्गं च	१.१८.५	तेषां सुतुमुलः शब्दशुश्रुवै	१.१८.७०
ते वध्यमाना रामेण समरे	२.४३.२२	तेषां किं हेतुना कोपः	२.५०.८६	तेषां पितृप्रसादेन	१.१६.६	तेषां वंशकरो राजा	१.२०.२४	तेषां माघोदतं यज्ञदुदकेत्या	३.१२.१३
ते वध्यमाना विमुखाः	१.४२.१२	तेषां क्रीडाप्रसक्तानां यदूनां	२.६०.१	तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च	१.३.७१	तेषां वधार्थमाग्नेयं	२.१२२.५६	तेषां मनु महाघोरी	३.७६.१
ते वध्यमाना वीरेण	१.१४.१३	तेषां च बुद्धिसंमोहम्	१.२८.३०	तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च	३.१.१६	तेषां विकृतिज्येष्ठस्तु	१.११.१३	तेषां मपि च राजेन्द्र	१.३.६७
ते वयं नारद सर्वे प्रयामः	२.८६.३७	तेषां चरणपातेन	३.५८.७	तेषां प्रधानाः सततः	१.३.११२	तेषां विदारितैर्हृदैर्दानवानां	३.५५.७५	तेषां मापततां संख्ये	२.१२७.५५
ते वयं सामपूर्वं वीदानं	१.२०.६०	तेषां च सुहृदिस्त्वासी	१.६.३६	तेषां प्रसादं ते चक्रुर यनान्	१.२२.७	तेषां विदार्य तेजांसि	३.५५.७३	तेषां मेव प्रभावेण शिवं	१.५१.१३
ते वासववचः श्रुत्वा हंसा	२.६२.१	तेषां चैव वेधोपायं	३.१३३.२२	तेषां प्रीतः प्रसन्नात्मा	३.६०.३१	तेषां विमर्दं दायघ्ने	१.५३.४४	तेषां मेव प्रवृद्धानां भूतानां	१.३.१३७
ते बाह्यन्तस्त्वण्योन्यं	२.१४.२२	तेषां चैवान्वयोत्पन्ना	१.७.५६	तेषां बृहस्पतिर्मध्ये	२.८६.३२	तेषां वै मानसी कन्या	१.१८.५८	तेषां मेरावतोदोग्धा घृत	१.६.२७

तेषु तेषु च पात्रेषु	१.२.२७	तेऽसज्जालः प्रयथिताः	१.४५.६	तैहि वज्रपुरं हंसैः	२.६४.२८	नौ जातहासावन्योन्यं	२.२७.३८	तौ पाशयुक्तांशुधरो	१.४६.१४
तेषु तेष्ववकाशेषु	२.४०.२६	ते हंसा वज्रनाभेन कार्यहेतो	२.६२.५६	तैः सपर्वतजालोर्ध्वबहुयोजन	३.३४.१३	तौ जितारी जितक्रोधौ	२.३०.६३	तौ प्राप्तावू चतुस्तन	३.१४.६
तेषु प्रभवमानेषु	३.४.२०	ते हन्यमाना वदया	३.५६.६४	तैस्तु ऋतुशतैरिष्टं	३.५६.६४	तौ तत्र कौतूहलिनौ	२.७.११	तौ युद्धरङ्गा पतितौ	२.४३.३१
तेषु सर्वेषु दैत्येषु	१.४८.५५	ते हन्यमाना रौद्रेण	२.११६.१०४	तैस्तु मर्मयु विव्याध	३.५७.३८	तौ तत्र गत्वा वेणाया	२.३६.२०	तौ विजेत्रुरायत्तौ	३.५६.६३
तेष्वात्ययिकशंसौषु लोक	२.४७.२	ते हया कथिराकतांगा	३.६६.१६	तैः स्तूपमानो गोविन्दः	२.६६.२१	नौ तान्निपतितान्दृष्ट्वा	२.५५.६१	तौ विवेक स्वयं वायु	१.५२.२३
ते संगताः छुद्रसंगाः	१.८.४०	ते हयैः काञ्चनापीडै	२.३५.७८	तैस्त्वयानगतैर्द्रव्यैर्वैरिणो	२.३८.३४	तौ तालपल्लप्रतते रम्ये	२.१३.४	तौ वृषाविव नन्दतौ	३.५५.३३
ते समूचुद्धिजाः सर्वे	१.२३.३३	ते स्यैः काञ्चनापीडैः	२.४३.२८	तोयगम्भीर लम्बेषु स्रवत्सु	२.१०.१६	तौ तु पूर्वमतिक्रम्य	२.१०.१६	तौ व्युपारमतां युद्धे वृष्ण	२.३६.३१
ते समेत्य महादेवमुखयो	३.१३१.२	ते दृष्टमननः सर्वे	१.२८.१०	तोयजैः स्वापदैस्त्यक्तं	२.११.४३	तौ तु भाण्डोरमाश्रित्य	२.१४.६	तौ शरैः साधुनिशितैरन्यो	१.५४.४६
ते समेत्य यथायोगं	३.६४.२१	तै तिस्रवोऽभवद्राजा	१.३१.३१	तोयमुत्तारयन्तीभिः प्रेक्षन्तौ	२.६.२८	तौ तु मल्ली महावीर्यौ	२.२८.१८	तौ शैलधातुदिग्धाङ्गौ	२.४१.३
ते समेत्य सभां राजन्	२.४८.२	तैः प्रक्षिपद्भिर्ज्वलतान	३.४४.२५	तो याति भाराम्बुद	२.६५.१६	तौ तु मार्गगत दृष्ट्वा	२.२७.१०	तौ सप्रहरणौ वीरौ	२.३५.६६
ते सर्वे बाणवयैश्च	२.११६.१००	तैः प्रमुक्तान्महाकार्यैः	३.५७.४६	तोये तु पतितं हस्ते	३.७१.४३	तौ तु याजयितारी	३.११५.३४	तौ सप्रहरणौ वीरौ	२.४३.१६
ते सर्वे शुभकर्मणिः	१.२१.२७	तैरयं यादवो वंशः पाथिवै	२.३८.४६	तोरणं गोपुटं चैव सुधा	२.५५.२१	तौ तु राष्ट्राणि शतशः	२.३६.१७	तौ समीपगतौ दृष्ट्वा	२.२८.१६
ते सर्वे सहसा देहात्तस्य	२.१२७.१०	तै राससर्करतिकूर्दमानै	२.८६.२२	तोषयित्वा महादेवं	३.१०२.१६	तौ तु वृन्दावनं प्राप्तौ	२.१०.१	तौ सुतौ वीर्यसंपन्नौ	३.१०३.६
तेऽसिचर्मगदाभिश्च	३.५७.५६	तैरासीद्गगनं चक्रैः	३.४५.६	तोषयिष्यामि राजानं	३.५६.५७	तौ तु स्वभवनं वीरौ	२.२७.३	तौ हतौ चाप्युतौ तोये	१.५२.३८
तेऽग्निचर्मगदाश्वित	३.५६.२६	तैरुक्ता सा तु मा	१.१८.३४	तौ कुमारवयं चैव त्रयः	३.१०४.१७	तौ तु स्वल्पेन कालेन	२.४५.१	तौ पि देवौ महादेवा	३.७३.५
तेऽमुराः सन्निवृत्ताश्च	३.६०.५८	तैरुत्थितैः काञ्चनवै	३.५२.६२	तौ च गत्वा समुद्देशं	३.८०.३	तौ दृष्ट्वा भोजराजस्तु	२.२६.४३	त्यक्त्वा प्राणानतिक्रम्य	३.५५.६३
ते मृष्टाः प्राणिनौ	१.५०.१४	तैरेवमुगितैस्तात हिंसा	१.२१.२२	तौ च श्रुतिधरो वीर यथा	२.३३.६	तौ दैत्यकालजलदौ	३.५६.६१	त्यक्त्वा मेघमयं वासः	२.१६.२६
ते स्म पश्यन्ति पतितं	२.४४.३७	तैर्दीर्घाहै महाभागैर्बमासे	२.६८.३७	तौ च स्वल्पेन कालेन	२.३६.१६	तौ दैत्यौ कृतनामानौ	१.५२.२६	त्यक्त्वायुधानि सर्वाणि	३.६२.२३
ते स्म नानालताचित्रं	२.५६.२१	तैर्हन्यमानं दैत्यानामनीकं	२.१२२.७०	तौ चोपविष्टावभितः	३.२.६	तौ नगादाप्लुतौ दृष्ट्वा	२.४३.१	त्यज गर्भकृतां चिन्तां	२.४.५२
ते स्यन्दन गतास्सर्वे	२.४३.६७	तैर्हन्यमानोऽपि	३.४४.२६	तौ पञ्चादवन्ता वन्योन्यं	३.५५.१६	तौ नृपौ स च विप्रेन्द्रः	३.१०७.३	त्यज शोकं विद्यालालि	२.११८.२७

त्यत्रैव मनसस्तापं	२.५५.८२	त्रासमुत्पृज्य चैकस्था	२.११६.११०	त्रिधा प्रणीतो ज्वलनो	३.२३.५	त्रिवर्णैः भिगपन्त	३.१५.३	त्रेतायां विकृति यानि	३.८.८
त्यज्यमानो महासानुविहगैः	२.४२.६८	त्रासमुद्वेगकम्प युगान्तं	३.३.३	त्रिधा प्रभिन्ना सा सेना	२.४६.६४	त्रिविक्रमं त्रिलोकं	२.४८.३४	त्रेतायुगे प्रमुत्नोऽसि	२.५७.६२
त्रयां चैव न सन्देहो	३.८.२०	त्राहि मां त्वं त्रिशालाक्षि	२.१२०.४६	त्रिधा भूतं जमघोतिं	३.८८.१६	त्रिविक्रमायामितविक्रमाय	३.३४.१८	त्रैलोक्यं च यत्प्राण	२.१२६.१०५
त्रय एते गणाः प्रोक्ता	१.१८.६७	त्रिशङ्खनसहस्राणि	३.५०.२६	त्रिधा विभज्य चात्मानं	२.१२३.२१	त्रिविष्टपममे देशे	२.६४.२६	त्रैलोक्यचारिणी सा त्वं	२.२.५०
त्रयः पितृगणा नित्यं	३.२६.३४	त्रिशता प्रत्यविचरन्तं	२.५६.६७	त्रिपाद्भस्मप्रहरणः	२.१२३.३६	त्रिविष्टपादापतितो मथुरो	२.१.२	त्रैलोक्यजापिकां वाच	२.५८.१५
त्रयन्तु पितरो नित्यं	३.२६.३३	त्रिशङ्खारसमायुक्तं	३.१०१.१२	त्रिपुङ्गुकलनाटान्तो	३.१२१.३	त्रिविष्टपे नित्यवता भवन्त	२.६२.६	त्रैलोक्यदर्शनं चैव	१.३१.३७
त्रयाणां ब्रह्मवेदानां	३.२३.३	त्रिशङ्खनिबद्धाश्च	२.८.३४	त्रिपुरं पुरुषस्याघ्न	३.१३३.४	त्रिशङ्खगस्त्यचरितामाशां	२.१६.५०	त्रैलोक्यरत्नसर्वस्वददा	२.६५.४३
त्रयाणामपि लोकानां	३.३७.१	त्रिगतन्मालत्रांश्चैव	२.८४.५०	त्रिपुरं योघयश्र्यक्ष	३.१३३.३८	त्रिशालं सवदा दूश्यं सर्वं	२.६७.६३	त्रैलोक्यराज्यं शक्रस्तु	१.२८.३४
त्रयाणां वर्णजातानां	३.२१.१३	त्रिदशाज्ञापकः शक्र	३.५२.६	त्रिपुरान्तकमुह्यन्तं ज्ञात्वा	२.१२४.३६	त्रिशालं वृक्षमुद्यम्य	२.२.४१	त्रैलोक्यरूपसर्वस्वं नारायण	२.६५.१७
त्रयोदशस्य पुत्रास्ते	१.७.८१	त्रिदशाज्ञापनार्थेन मेघ	२.१६.१२	त्रिपुरे निहते गीरे	२.८२.३	त्रिशालां भ्रुकुटीं कृत्वा	२.११६.१६०	त्रैलोक्यम्वजयं कर्तुमुद्यतः	२.८६.१५
त्रयोदशः शालिशिराः	३.६६.१२	त्रिदशा दानत्रात्सर्वे	३.६०.२६	त्रिबाहुः पञ्चबाहुश्च	३.८६.४	त्रिशालां भ्रुकुटीं चास्य	३.४५.३२	त्रैलोक्यसुन्दरीं वेपि	२.६२.१४
त्रयोदशेऽथ पययि	१.७.७८	त्रिदशा दानत्रात्सर्वे	३.६०.११	त्रिबाहुस्तु गबाहुश्च	३.१२५.२०	त्रिशूलपट्टिद्वारं व्याघ्र	२.१२५.२७	त्रैलोक्यस्यहितायै	१.५५.२
त्रयो लोकाः पुरा सृष्टा	१.४०.३६	त्रिदशानां तु सैन्यस्य	३.५४.२२	त्रिभिः किं तव विप्रेन्द्र	३.७१.१२	त्रिशूलिनीं नमस्यामि	२.१०७.११	त्रैलोक्यहरणे सृष्टा	३.५४.२६
त्रयोवर्णास्त्रयोलोकास्त्रे	१.४०.३५	त्रिदशानां वयं मान्या	२.४६.१०	त्रिभिर्मलियोपहारैश्च	३.१६.२१	त्रिशूली पट्टिद्वारा सूर्य	२.३.६	त्रैलोक्याधिपतिश्शक्रः	२.५०.४४
त्रातव्याः प्रथमं गाव-	१.५५.३१	त्रिदशानां शरीरैस्तु	३.६०.५	त्रिभिर्मलैः काशितं	२.३.२६	त्रिविष्टवर्णं संयुक्तं	३.१३२.२२	त्रैलोक्यान्तर्गतं तं तु दृष्टवा	१.४७.२
त्रायरव जहि दैत्येन्द्रं	३.४१.३६	त्रिदशा वरुणश्चैव	३.६१.१६	त्रियक्षः शंकरः शर्वः	३.१०५.१०	त्रीणि वर्षसहस्राणि त्रेता	१.८.१३	त्रैलोक्ये यस्य रूपेण	२.६२.२०
त्रायस्व त्रिदशश्रेष्ठ शरण्यः	३.६४.७	त्रिदशाश्वगजानां हि	३.५५.२०	त्रियक्षशतयज्वानं	३.५.२५	त्रीणि वर्षसहस्राणि	३.८.६	त्र्यक्षाद्यधमहं ब्रह्मन्	३.१३३.१
त्रायस्व नोऽद्य देवेश	१.४१.७१	त्रिदशैश्चाभवद्भूमौ	३.५८.५२	त्रिरित्येव त्रयो वेदाः	३.८८.५१	त्रीण्यपत्यानि कौरव्य	१.६.७	त्र्यम्बकं पुष्टिदं वो	२.७२.४५
त्रायस्व समरे देवान्	३.६२.४०	त्रिदिशारोहिभिर्ज्वलं	३.६२.१७	त्रिलोकेश त्रिधामाक्षि	३.११२.१३	त्रीण्यपत्यदिमानानि	१.२८.३२	त्र्यम्बकेणाभिगम्यतश्च	२.११६.२४
त्रासनस्तर्वाभूतानां	२.२४.२३	त्रिदिशारोहिभिर्ज्वलं भूम्	१.४५.५२	त्रिवर्णविदितः प्राज्ञश्चङ्गुण	२.५३.२	त्रीश्च लोकान्प्रपद्ये	३.२७.३३	त्वच्छरीरगतं कृष्ण	२.१६.२३

त्वच्छासनादि भगवन्	३.४०.४	त्वद्भक्ताः पुण्डरीकाक्ष	१.५५.४५	त्वया व्याप्तमिदं सर्वं	२.३.२५	त्वरते खलु कंसोऽयं	२.२६.२६	त्वं च कर्कशशीलश्च	२.२२.७४
त्वत्कथाद्वेषिणः सर्वैः	१.५४.७६	त्वद्विधेपापि सिद्धे न	१.१८.८०	त्वया सनाथा देवांशास्त्व	१.५४.१८	त्वरते खलु कार्यार्थो	२.४१.४७	त्वं च दत्तो यथा शक्या	२.६६.३०
त्वत्तः श्रुतवतां श्रेष्ठ	२.११६.२	त्वद्विस्तारो यतो	३.८८.६३	त्वया सागरमक्षोभ्यं	२.३१.२८	त्वरितास्तत्र गच्छन्ति	२.४७.५	त्वं च शक्ता विशालाक्षि	२.११८.६२
त्वत्तस्ते विभ्यति दिवि	१.५४.८०	त्वपि सर्वस्य दातृत्वं	३.७३.२३	त्वया सायकवेगेन क्षिप्तो	२.३६.२६	त्वष्टा त्वष्टादशहयं	१.४३.१७	त्वं चापि स्वजनद्वेषी	२.२३.३४
त्वत्तोऽमभिरुच प्रतिमां	२.७४.५२	त्वया च नित्यं संरक्ष्य	२.१६.८३	त्वया स्वर्गप्रतिच्छन्दैः	२.३१.१८	त्वष्टा भर्गोऽयुः	३.३६.३१	त्वं चास्य घाता गर्भस्य	१.३२.१३
त्वपुरोगाश्च रक्षन्तु	२.१११.१७	त्वया च भरतश्रेष्ठ	१.१६.२७	त्वयाहं सहिता वासे	२.६३.४३	त्वष्टारं विदधं कृत्वा	३.५५.५३	त्वं तु नो क्षरसे नित्यं	३.१११.६३
त्वत्प्रलापेष्वकुशां त्वया	२.२६.१२	त्वया चाराध्यमानास्ते	१.१६.४४	त्वया हि पृथिवी	१.११.२६	त्वष्टूर्दुहितरं भोमः कशोक	२.६३.७	त्वं तु भारावतरणं कर्तुं	२.६६.४३
त्वत्प्रसादाच्च भगवन्	२.११६.१३	त्वया चैव गजेन्द्रेण	२.२८.३३	त्वया हि मद्बन्धोपायस्त	२.२२.८३	त्वष्ट्रां कृतं भास्कर	३.५२.१६	त्वं तु शक्रसमः पुत्रो	२.२६.१५
त्वत्प्रसादादविष्नेन	२.१२०.२६	त्वयात्मना धार्यते	३.३४.१६	त्वया ह्यनुगृहीतस्स तव	२.१६.७४	त्वस्व कृष्ण युदाय दान	२.४०.४५	त्वं त्विदानीं प्रनष्टोऽस्मिन्	२.३८.५३
त्वत्प्रसादाद्भवत्येषा	२.१२१.१०६	त्वया त्विदमहं पृष्टो	३.२.२६	त्वयि क्षान्त्यन्तरगते नरा	२.२४.६७	ह्व हि नः परमो घाता	३.४१.३४	त्वं पद्मामलपत्राक्ष	३.४१.३५
त्वत्प्रसादेन भगवन्	३.४०.३	त्वया दायदवानस्मि	१.१६.२३	त्वयि तीर्णप्रतिज्ञे हि पुनः	२.६६.४४	त्वां च सत्यमयं ज्ञात्वा	२.१६.८६	त्वं प्रभुर्लोककुत्कुत्स्न	२.७५.२८
त्वत्प्रियार्थं मया मुक्ता	२.१२७.६८	त्वया धार्या त्वंह देव	१.५२.१४	त्वयि मे हृदयं देवि	२.३.२७	त्वां चाप्रतिमकर्माणं	२.२४.७१	त्वं भारते वायंगुहस्त्वं	१.५४.८६
त्वत्सनाथा वयं तात	२.४७.२२	त्वया वृत्तं धारयामि	१.५२.१६	त्वयि योद्धुं गते विष्णो	१.४६.२७	त्वां तु स्तोष्यन्ति ये	२.२५.५	त्वं वृष्टिः वंशजातोऽसि	२.१०६.४७
त्वत्सनाथावयं तात	२.५५.१२३	त्वया वृत्तं धारयामि	३.३४.२१	त्वयि राजासनस्ये हि	२.२४.७२	त्वां द्रष्टुमथ संप्राप्तो	३.१००.२७	त्वं व्यक्तश्च तथाव्यक्तः	३.४७.२२
त्वदनुस्मरणं जन्तो	३.१३१.७	त्वया नीतेऽनिन्द्ये तु	२.११६.१७	त्वयि सन्निहितश्चाहं	२.७४.५०	त्वां निहत्याद्य बाणेन	१.६.५	त्वं हि क्षुध्मतां चक्षुः	१.५४.१६
त्वदीयोऽहं यदा देवि	२.६६.३६	त्वया पौरजनस्याश्रे मन्दं	२.३१.२६	त्वयैव स्थापितं पूर्वं	२.६७.५	त्वामेवान्तर्हितं श्रुत्वा	२.४१.१८	त्वं हि तस्य वधार्थकः	१.११.३८
त्वदुपासा जगन्नाथ	३.८८.६२	त्वया लोकानिमाञ्जित्वा	२.१६.८५	त्वयैव स्थापितः	२.११३.५	त्वं कान्तिः कान्तवपुषां त्वं	१.४६.६	त्वं हि नः परमो देवस्त्वं	१.४१.७२
त्वद्गतो यो हि नस्त्रे	२.२३.३६	त्वया विहितास्सर्वे स्म	२.४७.२१	त्वय्येव जगतः स्तम्भे	२.१४.४४	त्वं गच्छ भारते वंशे	१.५३.३८	त्वं हि योद्धा बलिर्जाता	३.७५.४
त्वद्दर्शनपरां नित्यं	२.२६.११	त्वया विहीनास्सर्वे स्म	२.५५.२२२	त्वय्येव भक्तिश्चला	३.८०.८०	त्व गतिस्त्वं रतिश्चैव	१.१७.४	त्वं हि सर्वस्य जगतः	३.७५.१६
त्वद्दर्शनपरासीम्त	२.११६.४०	त्वया वृत्तं कर्तुं	३.२.३५	त्वरता चैव कर्तव्यं	१.५३.४२	त्वं गुरुः सर्वलोकानां	३.४७.५	त्वं हि सिद्धिर्वातिः कीर्तिः	२.३.२

त्वं ह्येषामन्तर्हन्ताभ्यो	३.४७.४	त्वमोकारो वपट्कारस्त्वं	३.१३१.८	दक्षिणार्धं स्म वै दत्ता	१.३२.१२०	ददर्श तन्महच्छत्रं वर्ष	२.६४.६	ददृशाते तु ते तत्र	२.६४.३५
त्वमग्ने ह्यववाडेकस्त्वमेव	३.६२.३३	ल		दक्षिणास्तस्व यज्ञस्य	३.५४.२१	ददर्श तत्र भगवान्देव	२.७३.८	ददृधुर्न हि त सर्वे रज्ज्	२.३०.७४
त्वमन्नं प्राणिनां	३.६२.३४	दंष्ट्या यः समुद्यूत्य	१.४१.३७	दक्षिणाहृदयो योगी महासत्र	१.४१.३४	ददर्श दर्शने राजा देवं	१.२४.१३	ददृधुः सर्वभूतानि	२.६६.६७
त्वमप्रतिमवीर्यश्च ज्योति	१.४६.३	दंष्ट्रा करालः सुमहान्	३.८२.८	दक्षिणे चैव सत्ये च पादौ	२.७३.८२	ददर्श पृथुलश्रोणीः संकटा	२.६४.२५	दक्षुस्ताः स्थियो मध्ये	२.१०१.१८
त्वमस्य यज्ञपूतस्य पात्रं	१.४६.२६	दक्षपुत्रस्य पुत्रास्ते रोहित	१.७.६३	दक्षो दत्ताय ताः	३.२२.८	ददर्श भवनं यत्र	२.११६.२५	ददौ द्वारका चाक्रमधै	२.६८.३८
त्वमादित्यपथादूर्ध्वं	१.४६.६	दक्षः पुरुषरूपेण	३.२२.५	दण्ड कृष्णाजिनधरो	२.११६.१०३	ददर्श भोगिनां नार्थं	२.२६.५४	ददौ कंसं समुद्दिश्य ब्राह्मणे	२.३२.६३
त्वमेव कुरुषे देव नारायण	१.५२.१७	दक्षः प्राचेतसस्त्वयां	३.२२.४	दण्डं महालं परिगृह्य	३.५२.३२	ददर्श महतीं सेना	३.५६.७५	ददौ कृष्णाय पीलोमी	२.७५.४२
त्वमेव च महामेघो	२.१२२.१२६	दक्षं प्रजानतीनां	३.३७.६	दण्डसेनात्मजः क्षुरो	१.२०.३३	ददर्श योगमास्थाय स्वां	१.६.५२	ददौ तन्मयस्तदा	३.११२.२४
त्वमेव चिन्तय सखि	२.११८.४६	दक्षं मरीचिमर्त्रि च	३.१४.२८	दण्डान्पात्रविशेषाश्च	३.११०.२	ददर्श विष्णुं देवेशं	३.८७.२	ददौ तं वासुदेवस्य	२.१०४.७
त्वमेव पञ्च तान्धर्मा	३.२६.३५	दक्षयज्ञ विनाशाय	२.१२५.५२	दण्डिनः कुण्डिनः क्षुरा	२.१०६.६७	ददर्श समनुप्राप्तं दिव्य	२.५५.६२	ददौ शतभिषा चैव	२.८१.४४
त्वमेव पुरुषो वीर	३.३४.२२	दक्षस्तु पुनरालम्ब्य	३.२२.२	दण्डी चर्मी क्षरी खड्गी	३.२३.८	ददर्शति महात्मानो	२.३६.१४	ददौ शिष्यं तदात्मानं	२.६२.१४
त्वमेव वसुधायुक्तो	३.२६.४४	दक्षस्य पुत्रा हयैश्च	१.३.१६	दत्तगुल्माप्रतिसरं कृत्वा तं	२.८३.५६	ददर्शयि निकुम्भस्तु केशवं	२.८५.२४	ददौ स दश धर्माय	१.२.४८
त्वमेव विविधं धर्मं	३.२६.४२	दक्षस्यैना दुहितरः	३.१४.३१	दत्तः प्रहारः कुलिशेन	२.७४.३१	ददर्शयि पुरी कृष्णो	२.६८.१	ददौ स दश धर्माय	१.३.२६
त्वमेव वेद सर्वस्व	२.१२७.८६	दक्षिणं पञ्चमासेदुश्शत्रुसैन्यं	२.३५.१०४	दत्तस्त्वयैव गोविन्द त्वयैव	२.६३.१२५	ददामि ते महाभाग	३.७२.३५	दधाद् दि गुणतोत्सुक्य	२.६३.५६
त्वमेवाग्ने सर्वमसि	३.६२.३२	दक्षिणं वामुदेवस्तु	३.६७.४	दत्तः त्रेयप्रसादेन मत्तो	२.४८.२०	ददामि रत्नानि यथेप्सिता	२.६६.७३	दधारयो गोधरमुग्रपीठका	३.८२.२६
त्वमेवात्र विशालाक्षि	२.११८.७५	दक्षिणस्यां लताविष्टः	२.६८.१५	दत्ते दाने पुनः स्वर्गं	२.६८.८	ददाह पावकस्तं तु शुष्कं	२.५७.५५	दधारः यो भूतपति	३.८०.४७
त्वमेवाहं जगन्नाथ	३.११८.७५	दक्षिणा चात्र देया	३.१३५.७	दत्त्वा च वरमव्यग्रो	१.३.१२६	ददाह भगवान्बलिः	३.६२.१२	दधार वेदान् सवाईच	३.६०.६
त्वमेवाहं जगन्नाथ	३.११२.१६	दक्षिणापथवाहिन्यः	२.१०६.२६	दत्त्वा जगाम शिखरं	१.१०.३८	ददुर्वस्त्राणि तुष्टाश्च	२.६३.१२	दधारामुघजालानि शार्गा	१.४४.४०
त्वमेवेदं जगत्सर्वं	३.८८.३५	दक्षिणां दिशमास्थाय	२.११६.६४	दत्त्वा च परया पीत्या	२.१२१.१३४	ददुस्ते सर्वतस्तूर्णं पावकं	२.४२.५४	दध्मो पद्मपलाशाक्षः	३.१२७.२१
त्वमेवेदं जगत्सर्वं	३.११५.१६	दक्षिणामददात्सोमस्त्रीं	१.२५.२६	ददर्श च महात्मानाबुभौ	२.३३.६	ददृशतुस्तो ब्रह्मा	२.३६.२५	दध्यतुर्गदसाम्बो च	२.६४.४८

दशौ च नारदं देवं:	२.६७.३८	दर्शनीयं ललाटं या	२.८०.६	दहन्तीव ममाङ्गानि शोकः	२.६७.२	दानवानां सहस्राणि	२.१२४.५	दानवीः सन्तः केशी	३.५८.७६
दत्तं कद्रुं च दुहितुः	३.३६.२३	दर्शयस्व गुणान्सर्वान्	२.८८.४२	दहति मेऽङ्गानि मुलं	२.६३.५५	दानवानां सुराणां च	२.५४.३५	दानवो भूषणं भक्तिं	३.६१.११
दनुस्तु दानवान्	३.१४.६०	दर्शयिष्यन्ति संग्रामे	२.३६.७४	दहतेऽयं गिरिस्तात	२.४२.७३	दानवान्नाश्यत्तत्र	२.१२५.१०	दाने यदवापि संयोगः	३.१५.१०
दनीः पुत्रास्तु बहवो	३.३६.३७	दवतार्थं च मे यत्नो	२.१२१.५१	दह्यमानास्ततस्त्वस्य	३.३३.१६	दानवाभ्यां हता	३.७२.७६	दानोपवासपुण्यानि	२.७८.५
दन्तकाष्ठं शिरः स्नात	२.७८.२६	दवानामपि यो देवः	२.११६.६०	दह्यमाने नगश्रेष्ठे सीदमानं	२.४२.७१	दानवा मानिनः सर्वे	३.५६.७२	दामनीदामभारंश्च	२.६.१७
दन्तवक्त्रस्य तनयं	२.५६.३	दश चाष्टौ च मंग्राम	२.३६.३७	दह्यामि सर्वतस्तात	२.१२२.८३	दानवा राज्यमिच्छन्ति	३.३१.२	दामभिर्वन्द्यमानेषु वत्सेषु	२.२६.३७
दन्तवक्त्रो जरासभः	२.५६.५२	दश पञ्च त्विमे	३.६६.१३	दाक्षिण्यादनुरोधाच्च दत्त	२.६७.३०	दानवांश्चापि पिप्रोषुः	१.४७.१	दामोदरं तु श्रीमन्तं यथा	२.२४.५३
दन्तह्यमाना ज्वलनेन	२.६५.५२	दशभिस्त्रिदशानुदिव्यं शरैः	३.६८.६	दाता यज्वा च बीरश्च	१.३४.११	दानवाश्चापि समरे मयता	१.४८.३०	दामोदरवचः श्रुत्वा	२.१३.१०
दमघोषस्य पुत्रास्तु	२.५६.२२	दशमं पारण प्राप्य	३.१३२.४१	दातारः प्रियवक्ता रो	३.५६.६५	दानवास्त्रं प्रशान्तं	२.१२६.६५	दामोदरवचः श्रुत्वा	२.१७.१
दमघोषेण संगम्य	२.५५.२	दशमश्चोदवो धीमान्	३.११८.३६	दातुमैच्छत्तदा खण्ड	३.८३.८	दानवास्त्रं संक्रुद्धा	३.५८.६२	दाम्ना चैवोदरे बद्धा	२.७.१४
दमिते सर्वराजे तु कृष्णेन	२.१३.१	दशमे त्वय पयसि	१.७.६५	दानमानगृहीतानि तृप्ता	२.३१.५७	दानवास्त्वय संक्रुद्धा	३.६०.२७	दायादस्तस्य कर्णस्तु	१.३१.५४
दरदस्य बधश्चैव जरामथ	२.४६.१३	दशमो भाग्यसंपन्नो	१.४१.६५	दानमानप्रवीराश्च	३.२२.१२	दानवा हतशिष्टा ये	२.६४.१०	दारकौ कृतनामानौ ववृषाते	२.६.२
दपं वा लोकविरुपातः	३.१०६.६	दश वर्षसहस्राणि शतानि	१.४१.४१	दानवं समरे रुद्रो	३.५८.६४	दानवेन्द्रकुले जाता सुश्रोणी	२.३७.१५	दारास्तु तस्य विषये	१.१२.२०
दपित्तान्निनदन्दैर्यान्	३.१३३.४८	दश वर्षसहस्राणि दशवर्षं	१.४१.१५१	दानवः सुदयामांस	३.५८.५१	दानवेन्द्रवचः श्रुत्वा शाखा	२.६३.१६	दारिद्र्यमनपाकृत्य पुत्रा	१.२३.३२
दर्पोत्सिक्तश्च बलवान-	२.२६.२०	दश वर्षसहस्राणि स कृत्वा	२.३७.४८	दानवा गिरिशृंगाभा	२.११६.१२६	दानवेन्द्रवच तां हंसी	२.६२.४३	दारिका तु प्रजातेति	२.४.३२
दर्पोत्क्रोक्तु नाशाय	२.११६.८३	दश वर्षसहस्राणि शतानि	३.४१.३	दानवा दर्वपूणास्तु	१.२८.१५	दानवेन्द्रादयो ह्येते	२.६६.३३	दारिका या त्वया राज्ञी	२.२२.५०
दर्शनीं पूरणीं माया	२.१२०.६	दश सप्त च संग्रामान्	२.३७.४	दानवा देवतैः सार्द्धं	१.४५.२	दानवेश्वर मा दास्व	३.७१.३२	दारिकेयं हतैरेषा पश्यस्व	२.४.३३
दर्शनीयं च लोकेषु चक्र	२.४३.१३	दशांशश्चात्र होमो	३.१३५.१३	दानवाचियतेस्तस्य	३.६६.६०	दानवीः पीड्यमानाह	१.५२.१६	दारुणं पञ्चविंशत्या	३.१०१.३
दर्शनीयं च लोकेषु धनु	२.३५.६४	दशार्णयुजलेयुश्च स्थले	१.३१.१०	दानवानां परेषां च	३.५४.३१	दानवीः पीड्यमानाह	३.३४.२४	दारुणं पृष्ठवाहं तं	३.१२७.३३
दर्शनीयं च लोकेषु धनु	२.४३.१४	दहत्याग्निं न सत्ववगिरुद्ध	२.७३.४६	दानवानां भवान्दित्यः	३.८८.५७	तामर्वनं रक्षावृत्त	३.३३३.१६	दारुके पुनराहेदं	३.१००.१४

दाहणाग्निवेशेन	१.५४.६७	दिदक्षन्तो महत्तत्र	२.२७.४२	दिव्यकुण्डलपूर्णाम्बा अवगा	२.२७.४३	दिश्याः पुत्रद्वयं जज्ञे	३.३६.३२	दिशागजेन्द्रमारुढो	३.५५.१३६
दाहणे च पिता पुत्रं	२.२३.१६	दिदक्षवस्ते ब्रह्माण	३.६६.१६	दिव्यकाञ्चनरत्नोर्वदिव्य	२.५०.७३	दिश्याभरणमाल्यैश्च	२.५५.५४	दिशापालं सुधन्वानं राजानं	१.४.१६
दाहणीं मदिरावासां	२.१२०.१७	दिदेश मातलिमुतं	२.६६.५३	दिव्यस्वजपताकाद्वयान्देव	२.५५.११६	दिश्या भरणसंयुक्तं	२.५१.५४	दिशापालानथ ततः	१.४.१८
दाहणो धेनुको नाम	२.१३.१२	दिषक्षन्तो दिशः सर्वा	३.११६.२	दिव्य नारीगणाकीर्णा	३.१३२.४८	दिश्या तीर्थशतोपेतां	३.३५.२७	दिशाभिविदिशाभिरच	१.४१.५५
दार्यतां चैव टङ्कुर्यः	२.३५.३५	दिषक्षन्तिव लोकान्त्रिन्	३.१११.३०	दिव्यभृङ्गारुचमरैरा-	२.२२.५७	दिश्यालोककान्प्रचरति	३.१३२.५५	दिशो दश क्षितिमूषयो	३.३६.६०
दार्यतामेव टङ्कुर्यः	२.४२.२४	दिने दिने क्षणं चितं	३.८०.६६	दिव्यं स्वमन्तकं नाम	१.३८.१४	दिश्याम्बरधरा दैत्या	३.४६.१७	दिशो विद्रावयामास	३.५६.२१
दावाग्निं ज्वलितप्रख्यः	२.६८.३६	दिने निपण्णो भवति	२.२८.४६	दिव्यमब्धं दशगुणमहोरात्रं	१.८.१०	दिश्याम्बरपताकाद्वया	२.५०.६२	दिष्ट्या ते निहता मल्लाः	२.४६.११
दावाग्निमुखमाविश्य	२.४६.१५	दिलोपस्य तु दायादो	१.१५.१५	दिव्यमभ्यर्चितं देवैः	२.६४.६६	दिश्याम्बरविचित्रैश्च	२.५०.७५	दिष्ट्या सहस्राक्षमहं	२.११६.३३
दाशार्हं इति विख्यातो	२.१२१.१२४	दिषसः को विना सूर्यं	२.१२.२७	दिव्यमाल्याम्बरधर	२.११६.४५	दिश्यायुधधरा दैत्या	३.४६.१८	दिष्ट्या स्वधनगतश्चोरो	२.११६.६६
दाशार्हगणमभ्येऽहं	२.१२१.२७	दिवसे सप्तमे बालो	२.१०४.२५	दिव्यमाल्याम्बरधरो	२.११६.७८	दिश्यास्त्रधूमः सुभुजो	३.६३.१६	दिष्ट्येदानीं समक्षं मे	१.४८.१५
दासीभावं गता माना	२.१२१.१०६	दिवाकरनिभे रम्ये	३.४२.२	दिव्यमाल्याम्बरधरो	३.१३२.२८	दिश्यास्त्रेण शिलां विष्णुः	२.६३.७४	दीक्षामयं सकवचं रक्षार्थं	१.३६.२५
दासीभिः कीर्तितं तत्र	२.११७.४६	दिवाकराकार निभानि	३.५२.४१	दिव्यमाल्याम्बरधरो	३.१३२.४०	दिव्येन चक्षुषा तेन	१.२१.५	दीक्षिताः कामदं दिव्यं	३.६७.२४
दास्यन्ति मे करं सर्वे	३.६१.४	दिवादोदामस्य पुत्रस्तु	१.३२.२८	दिव्यरत्नप्राभाकीर्णं दिव्य	२.५३.६	दिव्येनास्त्रेण समरे	२.६३.११३	दीनानुग्रहकर्तारो	३.३७.३०
दास्याभि करसर्वैश्च	३.११८.३२	दिवापि रीकमण्यस्तु	२.६४.२६	दिव्यरूपैश्च पुरुषं विच्छद्यते	३.१६.५५	दिव्यं मर्त्यैश्च तं	१.११.५७	दीपिकादीपिते देशे	३.६५.१५
दिभ्यु सर्वासु रुद्रधुस्तान	२.७३.५८	दिवा या सूर्यपूतेन वर्तयेत्	२.७६.६२	दिव्यसम्भशताकीर्णान्-	२.५५.११५	दिव्यो दिव्येन वपुषा	३.१६.४	दीपिकासु प्रशान्तासु	३.६५.२
दिग्भिश्चाथ विदिग्भिश्च	३.४१.७	दिवि देवा महीपाल	३.१३२.४	दिव्यस्य दामधारीणि	२.३५.५६	दिशः प्रतस्थुस्तु वीरा	२.८५.२	दीप्तजिह्वो हरिश्मश्रु	३.५१.२४
दिग्वासा देववचनात्	२.१२६.२३	दिवि सूर्यसहस्रस्य	३.६६.३४	दिव्यस्य दामधारीणि	२.४३.८	दिशं जिगमिषुदिव्यामुत्तरां	३.२८.१	दीप्ततोयाशनीपार्तर्बज्ज	१.४२.१५
दिति शुश्रूषति त्वेकोदेहो	२.८५.४२	दिवोदासप्रतिष्ठां च	३.१३४.५	दिश्याः काञ्चनरत्नाद्वया	२.५०.३३	दिशश्च विदिशश्चैव	२.१२७.१२७	दीप्तपोताम्बरधर	१.४२.२३
दितिर्हन्तेषु पुत्रेषु विष्णु	२.८६.३	दिवोदासस्तु राजर्षि	१.२६.३६	दिश्यानां सर्वरत्नानां	२.७५.४३	दिशः सर्वाः प्राद्वन्त	२.१२४.४६	दीप्यते नाकपृष्ठस्था	३.४१.५४
दित्या जातो हि बलवान्	३.४८.१३	दिवोदासादपदवत्यां वीरो	१.२६.७२	दिश्याः पुत्रद्वयं जज्ञे	१.३.६६	दिशागजमुतान्नामान-	२.६७.३५	दीप्यमानं ततः	३.५७.६५

दीप्यमानं स्ववपुषा	२.५५.५६	दुर्जयं दुर्धरं दुष्टं शार्दूल	१.५१.१३६	दुः सहानां यथाध्वंसो	३.२.१५	दुष्टं वा ह्यथवा	३.१११.२४	दुष्ट्वा वामनरूपेण	३.७१.३६
दीप्यमानस्तपोवीयस्त्	२.२८.१११	दुर्जयस्त्रिषु लोकेषु मुरामुर	२.५४.३	दुस्तरं प्रतिकूलं हि	३.५.३७	दुष्टवन्तो हरि विष्णुं	३.१२१.२४	दुष्ट्वा शशांकमायान्तं	३.५५.१५६
दीप्यतां करसर्वस्वं	३.११३.२२	दुर्दमस्य सुतो श्रीमान्	१.३३.७	दुहितृत्वं च मे गच्छ	१.६.७	दुष्टः स्पृष्टश्च	२.१२७.११	दुष्ट्वाश्चर्यं हि नः सर्वा	२.५०.५
दीर्घकालगतः प्रेतः	२.३३.२२	दुर्दशा दुर्विगाह्या च	३.५८.७०	दुहितृभ्यां जरासंधः	२.३४.१०	दुष्टपन्थानमासाद्य उग्रसेनो	२.५५.३०	दुष्ट्वाश्चर्यं हि नस्सर्वा	२.५०.३८
दीर्घकालं महाराज	२.३६.३२	दुर्दरं पंचविशत्या	२.१०५.४०	दूतमासाद्य कार्याणां	२.११८.८८	दुष्टिपातः कृतस्तामिस्तेन	२.११७.५८	दुष्ट्वा स राजा राजेन्द्र	२.५१.५५
दीर्घकालं महाराज	२.४३.७५	दुर्धनं भ्रातृशतं	२.८४.१६	दूतैस्तैः कृतसन्धानाः	२.११०.७	दुष्ट्वा च तस्मै प्रभवे	३.११०.७	दुष्ट्वा स राजा राजेन्द्र	२.५५.३४
दीर्घजिह्वोऽर्कनयनो	१.४१.८५	दुर्धनमुल्लाः सर्वे	२.११०.८	दूतोऽयं सात्यकिः	३.११७.६	दुष्ट्वा जवेन गाढं	२.१२७.५३	दुष्ट्वासीनं रथे रम्ये दिव्य	२.५५.३१
दीर्घबाहुदिलीपस्य रघु	१.१५.२५	दुर्धनस्य कन्यां तु	२.६२.८	दूतोऽसि सर्वथा विप्र	३.११५.१४	दुष्ट्वा तत्कर्म देवस्य	३.१२७.२६	देवैर्ब्रह्मिभिः सार्द्धं	३.४१.८
दीर्घं योजनविस्तारं	२.११.४२	दुर्लभां दुर्जयां दुर्गा	२.१२०.१८	दूतोऽसि देवदेवेश	३.११५.७	दुष्ट्वा ततः कुमारस्य	२.११६.१२	देयं कुम्भसहस्रं तु गङ्गाया	२.८१.२६
दीर्घरोमा दीर्घभुजो	३.८६.२	दुर्वाससं महाबुद्धिं	३.१०७.१८	दूरादृशं नृपतिर्देवीं	२.२८.७६	दुष्ट्वा त तत्र निष्कुम्भं	३.५६.८	देयं समाप्ते भगवन्	३.१३२.२
दुःखितं बत पश्यामो	२.१२.२५	दुर्वाससा वरो दत्ता	२.६६.३७	दूषकास्त्वाश्रमाणां च	३.८.१८	दुष्ट्वा तु तान्त्सुरान्	३.६६.७७	देवकश्चोग्रसेनश्च	१.३७.२७
दुःखोपसर्प्य तीरेषु	२.११.४४	दुर्वाससा सदोपास्य	३.१०७.१६	दुष्टपापप्रमुक्तास्ते	३.५४.५५	दुष्ट्वा तु भगवान्ब्रह्मा	२.१२५.१६	देवकी च गृहे गुप्ता	२.२.३
दुग्धा बाराणसी चैव	२.१०२.११	दुर्वासस्त्वथ तत्रैव	३.११३.१	दुष्टप्रहारिणो वीरावन्योभ्यं	३.२६.१८	दुष्ट्वा ते परमं सत्त्व	३.६५.११	देकीनन्दन वचः शृणु	२.६३.३३
दुतोह पुष्पितः सालो	१.६४.३	दुर्वृत्तस्य हतस्यापि त्वया	१.५४.८१	दृढाय दृढरूपाय	३.६०.१०	दुष्ट्वा स्वप्ता हृतं	३.५५.४१	देकी रोहिणी चेमे	१.५५.३८
दुदोह सवितुर्गा वं शक्रो	२.१५.१२	दुष्करं कर्म संस्मृत्य	२.४६.४८	दृष्टो वासुदेवस्य	२.६८.३६	दुष्ट्वा देवान्दूषीकेशा	२.६०.३६	देवकी रोहिणी चैव	२.१२८.१३
दुद्रुवतुर्महाराज	३.१२७.२२	दुष्टेन मनसा देवि शुभं	२.११८.१८	दृश्यतां मत्प्रभावेण	२.६४.३८	दुष्ट्वा दंत्यविनाशाय	१.४८.५	देवकी वसुदेवश्च रोहिणी	२.५५.७७
दुद्रुवभयसंश्रुता भगना	२.६३.६५	दुष्प्रेक्षां दुर्गमा रौद्रां	२.१०५.६५	दृश्यन्ते गाढ एतास्ता	२.१२७.५१	दुष्ट्वा धर्मपरं नित्यं	३.४८.१८	देवकी शान्तिदेवा च	१.३७.२६
दुन्दुभीनां च निर्धोषः	३.५६.४६	दुष्पन्तं प्रति राजानं	१.३२.११	दृश्यन्ते विविधोत्पाता	३.४६.३३	दुष्ट्वा बाणं तु निर्यातं	२.१२६.३७	देवकी सप्तमा देव्यो	२.१०१.८
दुरारोहश्च शिखरे	२.४२.४३	दुष्यन्तस्य तु दायवः	१.३२.१२२	दृष्टतीमुत्तश्चापि	१.३२.६२	दुष्ट्वा भूतानि भगवान्	३.११.११	देवक्यजनयद्विष्णुं यशोदा	२.४.१४
दुरासदः सुसंजज्ञे	३.६१.१५	दुष्यन्तस्य तु दायवो	१.२३.६	दृष्ट मे ब्रह्मसदनं ब्रह्मणि	२.१.१२	दुष्ट्वायान्तं हिरण्याक्षं	३.३८.२२	देवक्योऽभवत्तस्य दैव	१.३६.२७

देवगन्धर्वयोधोर्ध्वरु	१.४४.५	देव देव नमस्तुभ्यमनादिनि	२.५१.५६	देव यामनगरीं नगरीं रैवत	२.५५.७	देवश्रवाः कतिश्चैव	१.२७.४६	देवानां दानवानां च	१.३.१
देवगन्धर्वयोगेयानि नृत्यानि	२.६२.५०	देव देवप्रासादात्	२.११६.७३	देवराजप्रतीहारो गंधर्वं	२.१०४.५२	देवश्रवाः कतिश्चैव	१.३२.५५	देवानां मुख्यं वैकुण्ठं विष्णोर्	२.४०.३५
देवताचर्यश्च पूज्यन्ते	३.२४.२	देवदेव नमस्कृत्य गतोऽहं	२.५५.१०१	देवराजवचः श्रुत्वा नारदः	२.७०.१	देवसैन्यसहस्राणि	३.५६.४३	देवानां रुधिरं मंथ्ये	३.५४.२३
देवतानां गणो द्वौ तौ	१.७.६७	देव देव महाबाहो	२.१२५.१३	देवराजाभ्यनुजातो रत्नैश्च	२.६४.६४	देवसैन्यस्य सर्वस्पर्ध्व	३.५७.८	देवानां विप्रिये नित्य	२.६३.३५
देवतानां च सर्वेषां	३.८.२२	देव देव महाभाग	३.७२.४५	देवरातादयः भण्	१.२७.५७	देवस्थानानि तान्येव	१.८.३६	देवानां शरघाराभिः	३.५४.६५
देवतानामपि चमू रुच्ये	१.४७.१६	देवदेवमृते रुद्रं तस्य न	२.८६.८	देवविभिस्तपोवृद्धैः सिद्धैः	१.४१.४६	देवास्त्रिभुवनस्थांश्च	३.४१.२६	देवानां स तु सर्वस्वं	२.१.१७
देवतानामृषीणां	१.४१.१४८	देवदेव सदा युद्धे जेता	२.१२७.१२	देवविभिः स्तुतावेनी	३.१४.५	देवास्त्रिभुवनस्थास्तु	१.४१.६७	देवानां स तु सर्वस्वं	२.२८.५२
देवतानां हि पितरः पूर्वं	१.१८.७६	देवदेवस्य युद्धेऽपि	३.११८.४०	देवविमथ न दिव्यं	२.११६.५	देवा अपि च यं द्रष्टुं	३.१०७.१६	देवानां सुमहत्कार्यं	२.१०१.७०
देवताश्चापि ते सर्वाः	३.७२.४१	देवपक्षे प्रमुदिते दैत्य	१.४६.४४	देवविभिर्मुनिश्चेष्टैः संवृतः	२.६६.६	देवा अपि पितृ स्वर्गे	१.१६.१६	देवानामजयो घोरो	३.५३.३०
देवतास्त्वगनीर्घोराः परिघां	१.४७.२७	देवपत्न्यस्ततैवान्वा देवाश्च	२.६५.३५	देवविभिर्यक्षगन्धर्वाः	१.८.३७	देवा इवात्र मोदन्तु	२.५८.८	देवानामपि कर्तारो लोकानां	२.४६.१६
देवदानवगन्धर्वा	३.७२.७८	देवपुत्रो द्विजो वीरावप्रमेय	२.६६.५५	देवर्षीणां ब्रह्मर्षीणां	३.८.२३	देवाक्रीडं परिक्रामन्पूज्य	२.६४.६५	देवानामस्ति कर्तार्यं कार्यं	२.६१.३८
देवदानवनिर्मुक्तैः	३.५५.७६	देवभागस्ततो यज्ञे तथा	१.३४.२१	देवर्षीणां चानात्स्य भिपक्	१.३८.६	देवाजया पासंदा ये	१.२६.३८	देवानामीश्वरशक्रा	२.५५.५
देवदानवयक्षाणां	२.११८.५८	देवभागान् गतान् दृष्ट्वा	१.५४.१७	देवला रेणवश्चैव	१.२७.५१	देवाति देवो भगवान्	२.६५.३४	देवानुयाननिर्घोषं	२.१२७.१०७
देवदानवयक्षाणां य	२.६४.४६	देव देवानां पावान् पावनानां	२.७२.४६	देवलोकः परस्तस्माद्विमान	२.१६.२६	देवा धर्मरता नित्यं	२.६४.४०	देवानिघ्नस्तथा राजन्	३.१२१.७
देवदानवयोः संख्ये	३.५७.२५	देवं द्रष्टुं जगद्योनि	३.११३.२७	देवलोकोद्भवाः श्वेता	२.८८.६६	देवानचोदयद्ब्रह्मा निग्रहार्थं	१.५३.६७	देवाः प्रथमतो भूयः	१.२८.१३
देवदानवसंधानां यः	२.११६.८१	देवं पुरुषकारेण न शक्य	२.२८.४	देवलोकोपमो लोकस्तृप्तो	२.१६.६६	देवानसृजत ब्रह्मा मां	१.१७.२२	देवारिदितिजो दुष्टो	३.४७.१३
देवदानवसंभूतामाक्राम	२.७१.३५	देवं वा दानवं वापि	२.६४.३७	देववानुपदेवश्च सुदेवो	१.३७.२८	देवानाप्यायस्ते तु ये यज्ञं	२.८६.२४	देवावृत्त्यतश्चैव	३.४६.७३
देवदानवदेहेस्तु दुस्तरा	३.५८.५६	देवं विजृम्भितं दृष्ट्वा	२.१२५.८	देववांश्चाभवत्पुत्रो	१.३८.७	देवानां च तथा तत्र	३.५८.६८	देवाश्च प्रजातस्तु	१.३४.३३
देवदुन्दुभयश्चापि प्रणेदुर्वा	२.८५.२३	देवं मंकीडितं दृष्ट्वा	२.११७.१२	देववायुरदूरश्च देव	१.७.७७	देवानां दानवानां च	१.१.६	देवाश्च बलिहोमेन	१.४८.७३
देवदुन्दुभयो नेदुः पुण्य	२.८७.३५	देवमानुस्तथादित्या	३.६८.१४	देवः शरैरभिहतो	३.६०.१७	देवानां दानवानां च	१.२.५१	देवाश्च भूतरजस्तथा	१.७.२७
		देवमानुषयोर्नता यो भुवः	१.४०.१०						

देवाश्च मुनयश्चैव	२.७३.२६	देवेष्वपि दधारिणां नान्यो	१.५०.३२	देशे पुण्यतमे चैव	१.२६.६	दैत्येन्द्राणां विनाशाय	३.५६.३५	द्रव्याम्यहं जगन्नाथ	३.११५.२३
देवासत्ये रता नित्यमनूते	२.६४.४१	देवैर्दत्तः क्षुनः शोको	१.२७.५६	देशोऽयं संविधातव्यो	३.११६.५	दैत्येभ्यस्त्यज्यतां भीष्म	१.४८.७८	द्रवस्तु रथमुख्येषु वेदिराजो	२.४३.७८
देवाः सप्तर्वयश्चैव	१.४१.२२	देवैर्न दुष्प्रचान्तस्ते	२.१४.४३	देहस्य मध्येहृदयं	१.४०.५३	दैत्येषु मल्लशोभाश्च	३.६५.४	द्रवं यस्तलितं तस्य	३.१६.३१
देवानुराणां हि यक्ष	१.४१.१३४	देवैर्निगदितार्थस्य गदा	२.३५.६५	देहीति याचते यो	३.७१.३५	दैवयुक्तेन वा युक्ताः	३.२४.७	द्रष्टव्यश्च यथाहं वै त्वया	२.१६.८२
देवानुराणमुच्यते	३.१०५.१२	देवैर्निगदितार्थस्य गदा	२.४३.१५	देहेन तस्य मल्लस्य	२.३०.४७	दैवीं मायां समाश्रित्य	२.६२.५८	द्रष्टव्यो च मयावश्यं	२.२२.६०
देवानुराणां सर्वेषाम्	२.६४.२४	देवो गृहीत्वा समर	३.५५.३०	देहे समवकीर्यन्त	३.५५.६७	दोष्वा रजतनाभस्तु	१.६.३६	द्रष्टा हि तां भवानश्च	१.६.३६
देवानुरे नृपञ्च	२.७७.४	देवोऽनिषिस्तत्र च नारदोऽप्य	२.८६.२३	दैतेयाश्चाप्यदैतेयाः	३.२५.८	दोभ्यश्चायतपीनांसं	१.४७.१२	द्रष्टुमभ्युद्यता विष्णु	३.११०.१७
देवानुरेव प्राप्तेषु संग्रामेषु	२.७०.१८	देवोदवो जगन्नाथो	३.१२८.६	दैत्यदानवसंयोगा	१.३.६८	दोभ्यां क्षिपितदचापं	३.५५.१२६	द्रुमः किंपुरुषश्चैव	२.३५.४०
देवा हुताशनप्राणाः प्राणो	१.४०.४८	देवो वा दानवो वा त्वं	२.२०.८	दैत्यदानवहन्तारः संभूताः	१.५३.७१	दोभ्यां कमलपत्राक्षः	२.२७.४६	द्रुमः किंपुरुषश्चैव पार्वती	२.४२.२६
देवीनां च तथान्यासां	२.६५.४५	देवो तत्र जगन्नाथो	३.७३.४	दैत्यं सोऽतिबलं दीप्तं	१.४१.७८	दोभ्यामानभ्य कृष्णस्तु	२.३०.४४	द्रुमक्षयमथो बुद्धा	१.२.३६
देवीभिर्धर्मनिर्याभि	२.६८.६	देवो तस्यामजयेता	१.६.५५	दैत्यमांसप्रदिग्धानं	३.१०१.२१	दोभ्यामुत्क्षिप्य तस्यैव	२.१०५.७६	द्रुमवर्षं मुमोक्षाथ	२.१०६.१३
देवीं सस्मार मनसा	२.१०७.५	देवो हरिहरो स्तोम्ये	२.१२५.४०	दैत्ययोर्मदसाच्छन्ना	१.५२.४०	दोभ्यामुत्पाटयामास कृष्णो	२.१८.३१	द्रुमशूलप्रहरणा	३.५८.८३
देवेन्द्रकृष्णछन्देन सरस्वत्या	२.६१.२८	देव्यश्च नृप कृष्णस्य	२.७७.७	दैत्यः संक्रोषताम्राजस्तं	३.६०.४८	दोषोऽयमेकः सलिलागमस्य	२.६५.२५	द्रुमान्बहुविधास्तत्र	३.४१.५८
देवेन्द्रभवनकारं	३.१३३.१२	देव्यः सत्यस्तथैवान्या	२.७७.२०	दैत्यस्य शोढतं	३.५५.१३२	दोर्गन्धं वा सुघोरा	२.६६.६८	द्रुमिलस्त्वैवमुक्तस्तु	२.२८.१०६
देवेन्द्रवचनं श्रुत्वा कश्यपो	२.८६.१६	देव्याः स्तवमिमं	२.१२०.३१	दैत्याधिवासं निजित्य	२.८८.८	दोः शासनिर्महाभाग	३.१२५.१५	द्रुमैस्तर्जूरसानां च सर्वतः	२.४०.१३
देवेमां प्रतिगृह्णीष्व	२.४१.३४	देव्यास्तु वचनं स्मृत्वा	२.११७.२६	दैत्यानां च महातेजा	३.३७.१४	दोषावृषिभ्योस्संसर्गं	२.१०.३२	द्रुमोश्च तनयो राजन्	१.३२.१२४
देवे वर्धति लोकेऽस्मिंस्त	२.१५.६	देव्यास्ते प्रीतिमाज्ञाय	२.११६.७३	दैत्याः पिशाचा नागाश्च	३.३३.१२	दोषश्चाल तदा राजन्	२.७३.४२	द्रोण पर्वणि विप्रेभ्यो	३.१३२.६३
देवेष्वरो दवगणैः	२.६६.५०	देशकालं समालोक्य	२.५५.७६	दैत्या रक्षांसि राजेन्द्र	३.१२२.७	दोषं चैव सर्वञ्छाणां	३.२६.१४	द्रोणं द्रोणि कृपं कर्णं	२.१०२.१८
देवेषु दवः सुश्रीणि वान	२.६२.२१	देशकालविशिष्टस्य हितस्य	२.४३.६०	दैत्येन सहितो तो हि	३.१२१.१५	द्रव्यामस्तत्र तान्विप्रा	३.३६.६१	द्रादशाक्षीहिरौर्हत्वा	२.५३.४३
देवेषु वर्तते यज्ञं तदि	१.४६.१६	देशान्द्राष्टाणि चित्राणि	३.१०.१५	दैत्येन्रतवयो प्राप्त	२.६४.२	द्रव्यामि चक्रिणो	३.११४.११	द्रादशाब्दं तपश्चतु	३.८४.१७

द्रादश्यां शुक्लपक्षस्य	२.११८.२	द्रारवत्यास्तु मा मध्ये	२.५८.७७	द्वितीयो नो विरुपाक्ष	३.१०५.१३	द्वी मेघो शयनाभ्यासे	१.२६.१५	धनुर्विष्णुदण्डायापो	३.५७.१५
द्रादश्यां शुक्लपक्षस्य	२.११८.२६	द्रावनद्यो स लभते प्रेक्ष्य	२.१६.५	द्विषाकृत्य महाघोरं	३.८३.२	धनदत्त धनाध्यक्षो	३.४१.१८	धनुर्वेदधिकीर्षार्थमुजो	२.३३.४
द्रापरे द्वे सहस्रं तु	३.८.१०	द्रावम्बुनाथो समरे तो	१.४६.१५	द्विषा कृत्वा महागुर्वी	३.६७.१०	धनदस्यानुगन्ताह	३.८०.२४	धनुर्वेदपराः सर्वे सर्वे	१.५१.६
द्रापरेष्य युगस्याति	१.५३.५६	द्रावेव हि नृप श्रेष्ठ	२.१२१.२३	द्विषा छिन्नं क्षुरप्रेण कृष्णे	२.६३.११६	धनदस्योपदेशेन	३.८१.४	धनुर्वेदे तथास्त्रे	३.१०४.१८
द्राभ्यामधर्म. पादाभ्यां	३.८.७	द्राःस्थने वारितः पूर्व	३.१११.६	द्विषाभूतं वपुः कुरवा	१.४८.१६	धनं धान्यं च यत्किञ्चिद्	२.३२.२३	धनुः शाखां गतो तथ	२.२७.४१
द्राभ्यां धर्म. स्थितः	३.८.१२	द्रिगुणं दीप्तेदेहस्तु रोपेण	२.१२५.२	द्विषाभूतमभून्मध्ये	२.२७.४८	धनप्रदेशेषु बलाक	२.६५.४	धनुश्चिच्छेद चाप्यस्य	२.५६.६६
द्रारकां च समासाद्य	२.५७.५	द्रिजानां वीरुषां चैव	१.४.२	द्विषाभूतमभून्मध्ये	३.५१.६६	धनरत्नैर्विरहिताः	२.६३.३७	धनुश्चिच्छेद भूयस्तु	३.१२५.६
द्रारकां चापि संप्राप्ते	२.६०.३४	द्रिजानां वृत्तयस्तिष्ठो ये	१.४५.३४	द्विषादपृष्ठपुच्छाद्धं श्रवणं	२.२४.४६	धनाक्षिपेन विद्धस्य	३.६०.६५	धनुषो भङ्गनादेन वायु	२.२७.४६
द्रारकां प्राप्य कृष्णस्तु	२.१२७.१४८	द्वितीयं द्रापरे प्राप्य	१.२६.२१	द्विपूर्वां शकुनिश्चैव	१.३.८१	धनानि श्लाघनीयानि	३.३.१०	धनुः सशरमादाय	३.३२.२२
द्रारकां प्रस्थितः शौरि	२.१२७.१०१	द्वितीयं पारणं प्राप्य	३.१३२.२७	द्विरेफगणसंकीर्णं शिला	२.४०.६	धनान्नदन्त प्रतिनर्दमानान	२.६५.७	धनुश्चिचर्णं वरगात्रि	२.६५.६
द्रारकां विष्णु निलया	३.६२.१३	द्वितीयमेतत्कथितं तव	१.७.१६	द्विरेफाभरणाश्चैव	२.२८.६३	धनुः पञ्चशतायामभिषु	२.३६.३०	धनं पि च विचित्राणि	३.५६.८०
द्राद्वारकायां ततः कृष्णो	२.१२८.२२	द्वितीयः स बभौ राजा	१.३२.१०४	द्विविधः स्वर्गमार्गश्च	३.२६.४३	धनुः प्रवरमत्युग्रं	३.८४.२३	धनं वि वक्ष्यायुधसंप्रभाणि	३.५१.८०
द्रारकायां निवसतः कृत	२.६५.२	द्वितीया चास्य शयने	१.४१.१६	द्विषस्तु प्रतिकुर्वीणो परा	२.३५.६८	धनुः प्रवरमत्युग्रं	३.११७.३	धनोर्ध्वरभिवर्षणं चक्र	२.५८.६५
द्रारकावासिनः सर्वे	२.१२७.१३४	द्वितीया मापवस्वीत	१.१.४५	द्वे चैव भृगुपुत्राय	१.३.३०	धनुरादाय गच्छ त्वं	३.११७.३	धन्यः प्रजावानायुष्मान्	१.८०.४६
द्रारकावासिनां वाचः	२.१२७.११५	द्वितीयायां तु संज्ञायां	१.६.१८	द्वे भार्ये सगरस्यास्तां	१.१५.२	धनुरादाय शनैर्यस्ततोऽन्यत्	२.७३.६६	धन्यं यशस्यं शत्रुघ्नं	१.१.२५
द्रारपालाश्च चत्वारस्त	२.६३.१८	द्वितीयायां तु संभूत्यां	१.२६.१८	द्वेषी चैवाभिमानी च	२.४६.४३	धनुर्जयतिन्निमधुरं	३.६०.३७	धन्यमारोग्यमायुष्यं पुण्यं	१.२५.५१
द्रारवत्यां जगन्नाथो	३.७३.१८	द्वितीयायां स सृष्ट्यां	१.५३.४६	द्वे सेने संगते राजन्	३.१२७.१	धनुर्धरश्चकधरो भवान्	२.१२१.११७	धन्या सस्तु महामागा	२.५२.१६
द्रारवत्यां निवसता	२.११५.७	द्वितीयायां स सृष्ट्यां	१.५३.४६	द्वेषीभूताः काश्यपेया	३.२६.५	धनुर्धरश्चकधरो भवान्	१.३०.२१	धन्या देवीमहामागा	२.५५.६६
द्रारवत्यां निवसतो विष्णो	२.८८.४	द्वितीये द्रापरे प्राप्ते	१.२६.२२	द्वैपायनीऽथ भगवान्यथा	३.७३.११	धनुर्धरश्चकधरो भवान्	३.१३४.१५	धन्या भवन्तः पुण्याश्च	२.११०.७०
द्रारवत्या विशेषेण	३.१३४.२३	द्वितीयो यः सुतस्तस्य	१.६.६५	द्वैपायनोऽष्टपुटनिः सुतम	१.१.२				

श्रीहरिवंशपुराणम् (ः) श्लोकानुक्रमणी

८०

धन्या भवन्तो दृश्यन्ते	२.११०.५६	धर्मभूतिधर्मा च	१.३८.५३	धातुभिर्मौलिकाले च	३.१६.२४	धिक्ष् त्वामीदृशमक्षोत्तं	२.२८.६७	धैर्यन्मिनः सन्निधाय	२.६१.३६
धन्यास्यनुगृहीतासि	२.११०.४३	धर्म कुतोचितं कृदो	१.१४.२	धात्री कपिलरूपेण	३.२७.२५	धिक्ष् स्त्रियः सर्वथा विप्र	२.७०.२३	धौनुमारिर्दृढावस्तु	१.१२.२
धन्यास्यनुगृहीतासि	२.११०.७४	धर्ममयं च कामं च क्रमेण	२.६६.५७	धात्वर्थं सर्वभूतानां	३.२७.१५	धिमिमं गहितं वासं	२.३७.२४	ध्याता ध्यानमयो	३.७५.१७
धन्या हि भवतु संहिता	२.११७.१४	धर्मभूतिचरास्तेषां	१.१८.६	धात्र्याः सकाशात्स	२.१०४.१४	धिगर्जनं वृषानादं	२.११२.२२	ध्यात्वा म सर्वयत्नेन	३.८६.१४
धन्योऽस्म्यनुगृहीतो	१.४५.७०	धर्मवागीश्वरो नित्यं	२.१२७.६०	धाम्नो यस्य हरिरप्रोऽथ	२.७२.५८	धुन्धोर्वधमहं बहान्	१.११.२४	ध्यायन्पठन जपन्वाचि	३.८३.२३
धन्योऽस्म्यनुगृहीतो	२.५४.२	धर्मश्च बहुधा प्रोक्त	३.१५.७	धारतस्व महाभाग	२.५५.४८	धूपं पार्श्वोभये चैव चन्दना	२.५५.२४	ध्येयं पुण्यात्मना	३.७३.१४
धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि	२.१२१.११४	धर्मसत्यमयः श्रीमान्	१.४१.३१	धारयामासगायस्यं गर्भं	१.३५.१५	धूम्रकेशं हरिश्मशुं	३.३८.१८	ध्येयं मुमुक्षुभिरमेयमनाद	३.११४.४१
धन्योऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि	२.१२३.३३	धर्मस्य कन्या मुश्रोणी	१.२.८	धारयिष्याम्यहं पाशुं	३.११४.३०	धूम्रकेशो हरिश्मशु	१.४६.५२	ध्रुवं च कीर्तयन्त	१.२.६
धन्वन्तरेः संभवोऽयं	१.२६.१२	धर्मस्थांशस्तु कुरुष्व वं	१.५३.६३	धाराणां सन्निपातेन	३.४५.२३	धूम्रवर्णा महाकाया	२.६३.६७	ध्रुवमैश्वर्यमापन्न	३.१६.५३
धन्वन्तरेस्तु तनयः	१.२६.२८	धर्मात्मानो वेदविदः	३.३६.४२	धारा दिवि च संसृता	३.४५.२४	धृतकीरं यवा श्रीहिः	३.२३.१०	ध्रुवः स्वयंभुवा सृष्टो	३.६०.२५
धन्वन्तरेस्तु तनयः केतु	१.३२.२२	धर्माचंका मविषयो यशः	२.१०६.४४	धारानिर्मलनाराचं विष्णुत-	२.१०.३५	धृतं गोवर्धनं दृष्ट्वा	२.१६.१	ध्रुवो वर्षं सहस्राणि	१.२.१०
धरण्या मृदितः क्षिप्ये	२.३०.८५	धर्मात्सिद्धयुद्धवः कामः	३.१४.४४	धातंराष्ट्रश्च मे सर्वे	२.१६.६८	धृतराष्ट्रश्च गान्धार्वा	१.३२.११४	ध्रुवाय तत्र न्यवसत्केशव	२.५६.३२
धरण्याश्चयभूताभ्यां चरणा	२.२५.२५	धर्मेण रज्जयामास	१.६.५८	धार्मिकास्तर्वाभावशः	२.३२.३८	धृतराष्ट्रस्य राज्ञस्तु	१.५३.५२	ध्वजं चास्य ददौ प्रीतः	२.११६.२२
धरावरनिभाकारं	३.५०.६	धर्मे रति च सततं	१.११.५७	धाष्ट्र्यं हि तव मदात्मन्	३.११८.३३	धृता रथे दैत्यवृषस्य	३.५१.८१	ध्वजं त्वष्टुरथ च्छित्त्वा	३.५५.४०
धर्मकामार्थसंयुक्तं	३.५.३	धर्मो वर्मनि संस्थाप्य	३.१०७.२८	धाष्ट्र्यं मे तत्तयोविप्र	३.११५.३१	धृतिमन्तं गच्छन्तं जगाद	२.४७.३६	ध्वजाकुन्ततच्छङ्खना	२.८५.११
धर्मचक्रं महच्चक्रमजितं	३.४४.७	धाता चैव हि लोकानां	३.६७.४	धावत्येव तथा सूर्याशु	३.११४.३	धृते गोवर्धने शैले	२.२२.३	ध्वजेन शिलिवर्हेण	२.२.४५
धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च	१.५.४०	धातार्यमा च मित्रश्च	२.६६.२१	धावत्येव तदा राज्ञि	३.१०२.५	धृतो गोवर्धनः शैलः	२.१०१.३८	ध्वजशोर्ध्वपतद्गृध्रः	२.१०५.२३
धर्मदेवस्य तस्याथ	२.२६.४४	धातार्यमाशोऽथ भगो	३.५२.३६	धावन्तः प्रहरन्त्येतान्	३.६४.१३	धृष्टोऽस्तु धाष्टकं	१.१०.२६	ध्वजेनोष्ट्रेण महता	३.५१.६५
धर्मधृग्यतिधर्मा च गृध्र	१.३४.१३	धातुभिः पच्यमानैश्च	२.४२.५६	धावन्ति ह्यगमासास्ते	३.१३३.८	धेनुकः स महाकायो	२.१०१.४०	ध्वाक्षो मूर्ध्नि निपतितः	२.१०५.२६
धर्मनाशो भवेत्तस्य	३.१०६.१७	धात्री तस्य जगहं तां	१.२०.१००	धिक्षते वृत्तं सुवृत्तं यः	२.२८.१०५				

न चाधिकारो देवानां	२.५०.५१	न जरा क्षुत्पिवासे वा न	१.११.३	न तं वसिष्ठो भगवान्	१.१३.१२	नक्षत्रमालापिहितं	२.१०५.१६	न च ते देवदेवस्य	३.७२.४०
न चापराधः शक्रस्य	३.२.३०	न जातु कामः कामाना	१.३०.३८	न तं वेद स्वयं	१.५०.१५	नक्षत्राख्यानं सोमाय	३.१४.३३	न च तौ पश्यते केचिद	२.१२५.२३
न चाप्युत्सवकं मातः	२.११७.६२	द जानतेऽस्य चरितं	३.३३.२	न तस्य ददुक्षे देहोमाया	२.८४.३०	नक्षत्राणि ग्रहाश्चैव	३.१०६.४८	न च देववक्षो मिथ्या	२.११६.८६
न चामुद्रः प्रवेष्टव्यो	३.७४.२२५	न जाने इति यद्वक्ष्ये	३.११८.३८	न तस्य दुर्लभं किञ्चिद्विद्	२.१२८.३८	नक्षत्राणि विद्योगीनि	३.३.३८	न च नारायणं देवं वर	२.४६.४५
न चायमुग्रसेनस्य	२.२८.५४	न जाने कारणं ब्रह्मन्	३.१११.२७	न तस्य वित्तनाशोऽस्ति	१.३३.५७	नक्षुत्पिपासा न ग्लानिः	२.८८.७५	न च पश्यन्ति ते	३.६२.२४
न चाकरोह भगवान्वैन	२.५५.२	न जाने तस्य चरितं न	१.४०.२	न तस्यासदिनिभिनन्	३.५५.१३१	न क्षुत्पिपासे कालं वा	१.१६.२२	न च प्राप्नोति वैकल्पं	२.१०६.१०५
न चासन्नं निवस्तव्यं	१.२०.१३५	न ज्येष्ठता न राजत्वं	२.७०.२५	न तानि कार्यवन्तीह	३.८०.७६	न क्षुत्पिपासे न ग्लानि	३.४१.५२	न च भीष्मो न वा	३.१११.६७
न चासुरगणैः सर्वैः	२.६३.१६	नटवेशधरं कामं गत्वोवाच	२.६३.४७	न ता निश्चलं मूर्धनी	१.३३.३३	न क्षुद्राय न नीचाय	३.४७.२२	न च मे तुष्टिरस्तीह	१.१.१५
न चासुरैश्चैव सुताः	२.८४.६८	नटश्चैव मया षटो मति	२.६३.४८	न तु तत्र वनं काश्चिददृष्ट्वान्न	२.८५.५२	न जलवयं मृतोण्डस्थ	१.६.५	न च युद्धं महाबाहो	२.१२५.१७
न चास्ति ते परोक्षं	३.११५.१७	नटस्याय ददुर्देया सत्कारं	२.६३.४	न तु त्वमागतं पुत्र	१.२०.१०४	न जलवसुरसघाना	३.६७.३	न च विन्देत् मां	३.२७.३५
न चास्य मनसस्तुष्टि	२.११६.३०	नटानां नृत्यगेयाणि बाह्यानि	२.५५.१६	न तु त्वां पौरमात्रेण शक्ता	२.३८.५४	नगराग्निस्मृती षट्वा	२.३५.५४	न च विद्वेषेणोनाहं	२.४६.३
न चास्य विद्वा वै कर्म	१.५.३७	नटानां नृत्यगेयाणि बाह्यानि	२.५५.२२	न तु रात्रौ प्रदृश्येत	३.३२.३३	नगरे शाणितपुरे बाणो	२.११६.७	न च वृन्दावने कार्यो	२.५.११
न चाह मयुराकांक्षी न	२.५५.८०	नटो दत्तवरस्तस्य	२.६१.५२	न कश्चिदकविर्नाम	३.३.३४	रगस्य तस्य संपश्य	३.१७.३४	न च व्याख्या त्वया	३.७५.३
न चाहमुग्रसेनेन जातः	२.२८.३८	न तच्छक्यं मया कथातुं	३.१५.११	न कालमवि पश्यामि	२.६४.१०	नगेन्द्रे सहस्रागम्य	२.४६.४६	न च शक्तोऽनिरुद्धस्तं	२.११६.११
न चाहमेकं सबलो युक्त	२.४४.२०	न तत्र अक्षिहीनो वा	२.३३.३५	न किञ्चिदन्यत्पश्यामि	२.११०.६२	नगाय नगरुपाय	३.८७.३४	न च शक्यमविज्ञातैः	२.११८.८५
न चिन्तयति राजस्त्वा	२.११६.१६१	न तत्र कश्चिहीनो वा	२.४५.६	न कुर्वतां देवताजामुग्रो	२.६१.३६	न चकम्पे तदा विष्णुः	३.३२.४४	न च शत्रोः परिभ्रष्टा	२.३६.१५
न चेयमेकाहमपि पुरी	२.३८.५७	न तत्र वस्त्रास्तीदन्ति	२.६.३४	न कुलेन न वर्णेन	२.११८.५६	न च तं बालयामासु	३.४५.२०	न च शेषं प्रकुर्वन्ति	१.२०.१३०
न चैतो द्रष्टुमिच्छामि	२.३०.६६	न तत्र विषयो वायोर्न	१.५०.६	न कूटकुक्षस्य नृपोऽस्ति	२.६५.३७	न च तस्य मनस्तत्र	२.११६.२६	न च संग्रामहेतोहि	२.४६.३८
न चैनं पतितं हन्ति	३.२६.१४	न तत्र सूर्यभाः कृष्ण	२.६८.१६	नक्तचराः केसरिणो	२.१०६.६५	न च तां शक्यसे	२.५१.३३	न च सा मनुजेन्द्राणां	२.५१.३२
न चेवा तस्य कौमारे	२.१०८.२७	न तत्र सूर्यः सोमोऽथ	२.८६.५७	नक्तचराः सुलोवर्काः	२.१०६.६२	न च ते दृश्यते भीक्ष	२.११८.२२	न चात्मनो गुणांस्तात्	२.२३.८

न ते धर्मं करिष्यन्ति	३.३.२०	नदी वंतरणी पुण्या	२.१०६.२७	न नूनं तादृशं रूपमासीत्	३.८३.२०	नन्दीश्वरसमायुक्तं	२.१२४.१७	न भेतव्यं द्विजश्रेष्ठ	२.१११.१०
न ते प्रभाविता मृत्यु	१.१६.२६	न दृष्टपूर्वा हि मया	२.६३.५७	ननुतुष्टमनसो जगत	२.१०७.३०	न पितृणां न सिद्धानां	३.६६.७२	नभो नभस्येव निरीक्ष्यं	२.६५.१
न ते वर्णयितुं शक्या गुणा	२.८६.६१	न दृष्टं कश्यपकुले	२.७०.२४	ननुतुस्तस्य पुरतो	३.८६.१५	न पूर्णचन्द्रेण मुक्तं नयने	२.६२.२३	नमः कपालहस्ताय	३.८७.२८
न तेषां दर्शयद्देवी	३.२१.२१	न दृष्टिगोचरो तो तु	२.६०.८	नन्दगोप गता रात्रि	२.५.१३	न प्रकाशन्ति च दिशो	३.४६.२२	नमः कुमारगुरवे	२.१२५.४४
न तेषां यज्ञ भागं	३.७२.६६	न देवा न च गन्धर्वा	२.११६.२३	नन्दगोपप्रसन्नो ते द्रुमामेवं	२.७.३१	न प्रष्टुमनो नानिरुद्धो	३.११२.८१	नमः कृष्णाय कृष्णाय	३.६०.२८
न त्वन्न निर्दयं बाणा	२.७३.३४	न देवगन्धर्वगणा न राक्षसा	२.६८.३८	नन्दगोपमुखा गोपास्ते	२.१२.२०	न प्रमातुं महाबाहुः	२.१०२.३८	तमः खट्वांगवाराय	२.१२५.४८
न त्वमहंसि मां हन्तुं	१.५.५२	न देवगन्धर्वगणा न राक्षसा	२.७०.८	नन्दगोपश्च दुर्मेधाः	२.३०.६७	न प्रयच्छति पुत्रं हि	१.२६.५४	नमः परमसिंहाय	३.७६.१४
न त्वया राम अधोऽयमलं	२.३६.२६	न देवा नामुराश्चापि	२.६०.२४	नन्दगोपसुता चैव देवानां	२.३.११	न प्राणिनां भयं चापि	१.४१.१४४	नमः पिनाकहस्ताय	३.८७.२०
न त्वयाविदितं किञ्चित्	२.३६.४६	न देवा तोदुमिच्छन्ति	२.७३.४०	नन्दगोपसुतो योगं कृत्वा	२.२२.२८	न बुभुक्षा पिपासा वा	२.६६.६७	नमः प्रवणदेहाय	३.६०.२३
न त्वया स्तुतवानराजन्	२.५५.४०	न देवाः सुरगन्धर्वा न	१.४१.४६	नन्दगोपस्तु तच्छ्रुत्वा	२.१२.१८	न ब्रूयाद्वोत्तरं विप्र	३.११३.२४	न मया श्रुतपूर्वा वा दृष्टपूर्व	२.४६.५७
न त्वहं तस्य जाने	१.२०.६८	न देवाः सुरगन्धर्वा न यक्षो	२.४६.५५	नन्दगोपस्तु सहसा	२.७.३४	नमः क्षिति पवनमथ	३.६.२३	नमः शत्रुविनाशिन्यै	२.१०७.७
न त्वानन्त परित्यक्ष्ये	२.४१.२३	न देवा सुरगन्धर्वा न	३.४१.७२	नन्दगोपस्य भार्यका	२.४.१३	न भयं विद्यते लोके	२.११८.६	नमश्चन्द्राय देवाय	३.८७.२३
नदतो विविधानादान	३.५७.५५	न देवेभ्यो नाग्नेभ्यो	२.८४.६७	नन्दगोपाय वै क्षिप्रं	२.१२.१७	न भयश्चराणां नमसि	३.५५.६४	नमश्चर्म निवासाय	१.१२५.४७
न ददर्श तदा राजन्	३.१२६.५	न दक्षश्च प्रतिलोमा	३.४६.२१	नन्दनच्छन्द्श्युत्तेषु	२.८८.६५	न भसः प्रच्युतश्चैव	३.४५.२७	नमः शमजानवासाय	२.१२५.४६
न दातुमिच्छेत्कन्यां	२.५१.२५	नन्द च जगत्कृत्स्नं मुनयश्च	२.८५.६६	नन्दिकेश्वर याहि त्वं	२.१२६.८६	न भसः प्रच्युता	३.४५.२२	नमः पट्टननेत्राय	२.१२५.४३
नदी जलं प्रसन्नवज्रं	२.७८.३३	नन्द सत्या कौरव्य	२.७५.६७	नन्दितूर्याण्यवाद्यन्त	२.३३.११	नमस्यासृणुसंस्तीर्णं	२.२६.३३	नमः सर्वार्तिने तुभ्यं	३.८७.३५
नदीजालैर्बहुतराशितं	२.८७.१८	ननाद ब्रजवच्चापि	२.१२६.१६	नन्दितूर्याण्यवाद्यन्त स्तूयेतां	२.४५.५	नमस्त्युत्पतितं चैव	३.३२.३०	नमः सर्वार्तिने देव	३.६०.५
नदीपर्वतं कुञ्जेषु	१.२०.८४	ननु नाम स्त्रियास्ताम्यः	२.३१.११	नन्दिवाक्यप्रजवितं	२.१२६.१४८	न भस्येव न भवक्षुः	२.१०.३१	नमः सहस्रवक्त्राय	३.६०.१८
नदीं सर्वगुणोपेतामुत्तरस्थां	३.३५.४७	ननु मूर्धाभिषिक्तस्त्वं	१.२०.१०६	नन्दी पिनाकपाणिश्च	३.३२.१३	न भान्ति नद्यतो न सरांसि	२.६५.१४	नमः सहस्रशीर्षाय	२.१२५.५५
नदीं स्रोतासिरोत्स्यति	३.४.३७	न नूनं कार्तवीर्यस्य	१.३३.२०	नन्दी पिनाकमुद्यम्य	३.३२.५२	न भूर्न क्षीर्न गगनं	२.७५.१८	नमः सुररिपुधनाय	२.१२५.५३

नमस्करोमि सर्वान्मनन	३.८८.६७	नमस्तेऽस्तु गमिष्यामि	२.१२६.१४०	नमो विश्वसृजे देव	३.१३१.१०	न रघोऽनुरमुक्यस्य दक्षो	२.८४.२५	न भविष्यति भविष्येति शरीः	३.६६.१४
नमस्कुरुन्ति च पुदगुं	३.६६.२८	नमस्त्रिभूलहस्ताय	२.१२५.४६	नमो विष्णो नमो	३.६०.२७	नरनागाश्वकलिलं पतिच्छज	२.५३.४०	न वमे द्वापरे विष्णु	१.४१.१६१
नमस्कृत्य तदा द्रुवो	३.११७.६	नमस्त्वनेकरूपाय	२.१२५.५०	नमोऽवशिरोसे तुभ्यं	२.६०.२८	नरनारीप्रमुदिता सा पुरी	१.५४.६२	न वनात्किञ्चिदाहर्तुं	२.८.३७
नमस्कृत्य मुनीन	३.१००.२	नमस्त्वन्धकनाशाय	२.१२५.५४	नमोऽस्तु ते कामचरे	२.१२०.४३	नरमेधाएवमेधाम्यां	३.१३५.१५	नवं न भवत्येत्किञ्चिन्नारी	२.७६.५४
नमस्तस्मै खगेन्द्राय	२.५१.६३	नमस्तस्मै पूज्यश्च	१.६.४८	नमोऽस्तु ते जगन्नाथे	२.१२०.४५	न रराम ततो ब्रह्मा	३.१४.२२	नवं सुसंस्कृत्य भक्ष्यं	३.८३.६
नमस्तुभ्यं जगन्नाथ	३.६०.१५	नमुचिश्चासुरश्रेष्ठो	३.५३.८	नमोऽस्तु ते महादेवि	२.१२०.३४	नरस्य कृत्स्नार्थतनुं	१.४१.७६	न ववर्षावसिक्तानि	२.१०.६
नमस्तुभ्याय तुण्डाय	३.८७.१६	न मेघानां प्रवृष्टानां न	२.१८.३५	नमोऽस्तु सौम्यरूपाय	२.१२५.५१	न राजधर्माभिरतो	१.५४.६८	नवस्य नवराष्ट्रं तु	१.३१.२८
नमस्ते कर्मणां कर्म	२.१२५.५७	न मे मिथ्या समुद्योगं	२.१२६.११८	नमोऽस्तु हरिकेशाय	२.८७.२५	न राज्यं न च यानानि	३.७१.१०	न वाङ्मात्रेण दुष्यन्ति	१.५४.४२
नमस्ते देवदेवाय	३.८७.२१	न मे युद्धं विना देव	२.११६.३०	नमो ह्यराय विप्राय	३.८७.१७	नराधिपसहस्रोर्ध्वरेनुयातो	२.३५.१५	न बापतन्वै लगमा	२.१८.१४
नमस्ते देवदेवेति	३.१०५.४	न मे विप्रवधः कार्यः	३.११८.२६	न यष्टव्यं न होतव्यमिति	१.५.६	नरास्त्वां चैव मां चैव	२.१६.५६	न विग्रहं ग्रहाश्चक्रुः	१.४२.३६
नमस्ते देवदेवेश	३.६०.६	न मे बृहद्वधः कश्चि	२.२२.७८	नयित्वा चायमो वीरः	२.६०.२६	नरिष्यतः शकाः पुत्रा	१.१०.२८	न विना शंकरं विष्णुं	२.१२५.४२
नमस्ते भगवान् विष्णो	२.१२५.५६	नमोऽघण्टाय घण्टाय	३.८७.१८	न युक्तं जानता देव त्वया	१.५४.१५	नरिष्यन्त तथा प्राञ्जुर्ना	१.१०.२	न विषये स भूतात्मा	२.११६.१७७
नमस्ते भगवान् विष्णो	३.६०.१४	नमो नमो हरे कृष्ण	३.८२.४३	न युक्तं नृपते स्तोतुं	२.५५.३८	नरेन्द्राश्च महाभागा	२.५१.४८	न विशेषोऽस्य शत्रस्य	२.७१.१७
नमस्ते भीष्मये धस्तु	३.८७.१४	नमो ब्रह्माविदे तुभ्यं	३.६०.१७	न युक्तं वसतान्योन्यं	२.५०.४५	नर्मदाकूलमेकाकी नगरी	१.३६.१५	न विश्वसेदविश्वस्ते	१.२०.१२३
नमस्ते बायुरूपाय	३.६०.१३	नमो भगवते तस्मै	३.८०.५६	न युक्तमासनं दातुं त्वया	२.५०.२८	नर्मदायामथोत्पन्नः संभूत	१.१२.१०	न वै माता न च दण्डा	३.६.२२
नमस्ते विश्वरूपाय	३.६०.११	नमो भगवते तुभ्यं	३.६०.२	न युद्धे प्रमुखे शक्र स्थातु	२.७२.१०	नलकूबरस्तु प्रभुमनः	२.६३.२६	नवैश्व कुम्भः स्नातव्यं	२.७८.३५
नमस्ते विष्णवे देव	३.६०.४	नमो भगवते देव	३.६०.३	नरकं निहर्तुं ज्ञात्वा मुरं	२.६४.२६	नलिनः पुण्डरीकेश	३.४१.६०	नवोपसेनस्य सुतास्तेषां	१.३७.३०
नमस्ते शक्तियुक्ताय	३.८७.३०	नमो मयूरपिच्छाय नमः	२.१२५.५५	नरकश्च हतो भौमः	२.१०१.६८	नलो द्वावेव विख्यातो	१.१५.३५	न व्रजन्ति विमानानि	२.८६.२७
नमस्ते शितिकण्ठाय	३.८७.१३	नमो यज्ञाय इज्याय	३.६०.२२	नरकाण्युधितः पन्था	२.२२.६६	नवनीतं च दधि च	३.१३०.२	न शक्नुते समुद्धतुं	३.३०.१७
नमस्ते सर्वलोकेभ्य	३.६०.२६	नमो विरूपरूपाय	३.८७.१६	नरकेशास्थिमज्जान्नेषाति	२.४३.४७	नवप्रावृषि कान्तानां	२.१०.८	न शक्यं यत्त्वया वक्तुं	३.११६.८

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

८४

न शक्यमन्यथा कतं	१.६.३१	न स्थातुं देवताः	३.५६.६	नहिसाधोविनाशोऽस्ति	३.१०६.२०	नागाः कनकसंभूतं	२.२७.१८	नाद्वयन् शरैश्छन्ना	२.१२४.४१
न शक्यमपहोमा वै	१.२६.१७	न स्म कम्पयते रामं	२.३६.२१	नहुयः प्रथमं जज्ञे	१.२८.२	नागान्दिशागजमुतान्दिश्या	२.८६.२३	नाधिको विद्यते	३.७१.३८
न शक्यो विस्तरस्तान	१.७.३	न स्म कम्पयते रामं	२.४३.७०	नहुयं चाहुतिं चैव	३.१४.५६	नागा यक्षाश्च सिद्धाश्च	२.६६.३	नाध्यगच्छन्त तां नारीं	१.३७.६
न शर्म लेभिरे दैत्या	२.११६.१०६	न स्वर्गोऽप्यथ पातालौ	३.४१.१५	नहुषः शस्त्रोमा च	१.३.११५	नागायुतबलप्राणो भीमो	२.६२.७	नाध्यगच्छन्त च तदा	२.६.३०
न शस्त्रेण न चास्त्रेण	१.४१.५१	न स्वादु सोऽनानि	३.५.२३	न ह्यन्तीरक्षं न	३.५३.३१	नागायुतबलाः केचिद	१.५३.७२	नानधीताय वक्तव्यं	३.७३.१३
न शस्त्रेण न चास्त्रेण	३.४१.१४	नहि पूर्वविसर्गो वै विषमे	१.६.१४	न ह्यल्पं विहितं द्रव्यं	३.२३.१२	नागाश्चरन्तो विषदिग्धि	२.६५.१८	नानर्धभार्नविषयैस्तूर्य	२.८४.१५
न शोकः प्रमुले स्थातुं	२.८४.४०	न हतो वामुदेवेन यः पूर्वं	२.६१.५३	न ह्यल्पवीर्याय शुको	१.२०.८	नागाश्चोर्ध्वमुखास्तत्र	२.१२४.३०	नानाकवचिनः सर्वे	३.५२.८
न शोकः सर्वभूतानि	२.५७.२१	न हन्तव्या मृगाश्चात्र	३.८०.१५	न ह्यल्पसाध्यो बलवान्	३.७४.१८	नार्गविचेष्टितं दृष्ट्वा	२.११६.२००	नानास्त्रयोगि पथो गुह्यो	१.४१.३५
नष्टचन्द्राकं पवने	३.१०.२१	न हन्तव्याः सदा	३.८३.१२	न ह्यस्ति त्रिभुलोकेषु	२.११८.७३	नार्गश्च भूयते दुग्धां	१.६.२६	नानादिदेशजाकीर्णा	२.५५.१०८
नष्टसूर्येन्दुसदृशं मेघं	२.१८.१५	नहि कश्चित्पुमानस्ति	३.२८.३०	न ह्यस्य कारणं	३.१७.५८	नागो बलाहकश्चैव	३.२८.६१	नानाद्रुमलतायुक्तं चित्रं	२.३६.५८
नष्टानलानिले लोके	३.७.७	न हि तद्वचनं मिथ्या	२.११८.३१	न ह्येव समुदाचारो	३.१०.३८	नाग्निविक्रमते ह्यग्नी	२.१२७.७५	नानाद्रिगणैस्तुष्टान्	२.२८.७३
नष्टार्ककिरणे लोके	३.३३.२४	नहि तस्य कुलं देवि	२.११८.३६	नाकपृष्ठमुपागम्य	२.११६.२८	नाचिन्तयत्तदा पूषा	३.५५.१०२	नातापुष्पकुतापीडा	२.१२४.२४
नष्टाविमाविति तदा	३.११०.४	नहि ते तृप्तिरस्तीह	३.१०३.२	नाकाले मिथते कश्चित्	२.४६.३४	नाज्ञासिधमहं पूर्वमनित्यं	२.६६.४८	नानाप्रहरणा घोरा नाना	१.४१.६२
नष्टे शक्ते ततः स्वर्गा	३.८३.२५	नहि देव्या वचो मिथ्या	२.११७.२४	नाशुम्यत्सर्वभूतात्मा	२.११६.१०२	नाडिकान्तरमात्रेण पुन	२.७३.१०५	नानाप्रहरणा घोरा नाना	२.८६.५३
नष्टेषु शबलाश्चवेपु	१.३.२५	नहि धुन्धुमंहतेजा	१.११.४०	नागपाशेन बद्धस्य	२.१२०.३६	नाडवलेया महाराज	१.७.३३	नानाप्रहरणाः सर्वे	३.४६.३८
न संरम्भान्न चारम्भान्न	३.२.२७	नहि मे तृप्तिरस्तीह	२.१११.२	नागबन्धनदुःखार्तं	२.७२.५८	नातिदीर्घेण कालेन	१.५२.६	नानाप्रहरणोपेतं	२.१२६.४४
न सम्पानि न गोरक्षा	१.६.१५	नहि राज्येन मे कार्यं	२.३२.४८	नागं कुवलयापीडं चाणूरं	२.४८.२८	नातिशिष्ये रणे काष्णिणैरिन्द्र	२.७३.४३	नानाभरणवेषाश्च नाना	२.१०६.५३
न सा बुबोधतस्त्वेन	२.६.६	नहि विरमति विप्रपूजनां	३.६.३	नागं कुवलयापीडं चाणूरं	१.४१.१५८	नातप्यत्रेक्षमाणो वै कृष्णं	२.७.३५	नानामणितम्भसहस्र	३.५३.३५
न सेहिरेशुरा बाणान्तां	२.८४.३६	नहि शक्यो बलाङ्गुत्तुं	३.२३.३४	नागं कुवलयापीडं मल्ली	१.५५.५	नात्र शंका स्वया कार्या	३.११५.१५	नानायुद्धविहस्तानां	२.५४.२८
न स्तब्धो न क्रुशो नार्तः	२.४६.२०	न हि श्वो वा परश्वो	३.११६.१६	नागराऽधिकार्ताश्च	२.१०६.२०			नानायुद्धघोर	३.४६.४४

नानाबुधोद्योतविदीपिनांशः ३.५३.२	नाभिषिक्तस्त्वयं राज्ये न २.५५.६३	नारदस्तुष्टुहृत्चैव २.१०४.५१	नाराचेनाशु विव्याध ३.१२४.३	नारायणाद्विभेतव्यं कुर्वन्नि २.८२.२२
नानारत्नविचित्रेषु काञ्चना २.२८.७२	नाभेरभूदन्तरिक्षं तव ३.८८.४१	नारदस्त्वाशिषं दत्त्वा २.११६.४	नाराचैः पञ्चसाहस्रं विव्याध ३.१२५.४	नारायणेन कौरव्य १.११.४६
नानारत्नसमाकीर्णं ३.३५.२३	नाभेऽथ यस्याबिर ३.८०.४६	नारदस्य वचः श्रुत्वा १.५५.१	नारायणपरं ज्ञानं ३.३३.३८	नारायणमं सिद्धार्थमुपायं १.५५.१८
नानारत्नसहस्राणां ३.३५.६	नाभ्यारण्यां समुत्पन्न १.४०.२१	नारदस्य च वाग्यानि ३.१३४.२४	नारायणपरा देवा ३.३३.३६	नारायणो महातेजाः २.७१.१८
नानारूपं वपुः कृत्वा २.११७.१३	नामगोत्रे ततः श्रुत्वा ३.१०.४६	नारदस्य वचः श्रुत्वा २.१२७.२५	नारायणपरो धर्मो नारायण १.४०.४२	नाबयोः परमं लोके ३.१३.१४
नाशार्थसंकषासक्ता १.१६.१४	नाम चास्याशूभं चक्रे २.३८.१८	नारदाद्यस्तपोवृद्धे ४.७३.२	नारायणपरो मोक्षो १.४०.४३	नावेदविद्वान्नामच्छेनापि ३.२४.१०
नाशावणिकामगमान ३.३७.२७	नाम दामोदरेत्येवं गोप २.२०.२२	नारदे तु गने स्वर्गं २.११०.८७	नारायणपरो मोक्षो ३.३३.३७	नाभ्याधितो नाप्यरुजो ३.३.४३
नानाविधाकार ३.५२.४६	नामनी तु तपोवचक्रे १.५२.२५	नारदेव वद त्वं ३.६२.७	नारायणपरो मोक्षो ३.३३.३७	नाशंसन्त तदा योषा ३.५६.६५
नानाविधानि तूर्याणि २.७५.५८	नामाकुरेणं सदर्शदिव्य ३.५५.१०८	नारदेनैवमुक्तं तु तथ्यं २.६५.४४	नारायणं चाजुनं च भीमं २.८५.२६	नाशकञ्च यदा कंसो २.१०१.५१
नानाविद्याः सुवीराश्च २.८६.८	नामानि तव गोविन्द ३.८८.६१	नारदेनैवमुक्तस्तु सुव्यक्तं २.७०.१२	नारायण नमस्कृत्य नरं १.१.१	नाशकन्माहृतो वातुं वृत्तं १.२.३६
नानाविषयरा दंथा ३.७२.२६	नामूष्यत यथा मत्तो ३.५५.५७	नारदेनैवमुक्तस्तु महेंद्रो २.७१.४५	नारायणं नमस्कृत्य ३.१३२.२३	नाशयिष्यामि तत्सर्वं ३.१००.३०
नानाशास्त्रोद्यतकरा २.११६.८५	नाम्ना जनार्दनोऽस्मीति ३.११३.६	नारदोऽथ महातेजा महेंद्र २.६६.२०	नारायणयशोज्ञाने या ३.७.११	नाशुचेः क्षुद्रमनसः कुशिष्या १.४.३२
नानास्थानगतः श्रीमानेकः ३.६६.४१	नाम्ना जयद्रथं नामयस्माद् १.३१.५३	नारदोऽथ महातेजा भानु २.६०.६७	नारायणश्च पुत्रेण २.७४.१३	नाश्रयन्ताशुभा वाचो १.४१.१४२
नानाहृतोऽस्मभिः १.४६.२८	नाम्ना तच्छोणितपुरं २.११६.१६	नारदोऽथ मुनिर्गत्वा २.६६.१	नारायणश्चैवसनारदश्च २.८६.४६	नासन्नमीभगन्तव्यं गरुड २.७३.८१
नान्तं दर्शय कृष्णश्च २.६०.५६	नाम्ना द्वावती ज्ञेया त्रिवृ २.५५.११२	नारदो नृत्यति प्रीतो २.११६.१३२	नारायणः सत्यभामां २.६७.१	नासत्या नासृणा भूमिर्न २.१५.११
नान्तः शक्यः प्रभावस्य २.१११.३	नायं देवर्षिं गन्धर्वं २.१२१.५६	नारसिंहने वपुषा पाणि ३.४१.४५	नारायणस्तु भगवान्छुत्वं ३.६८.१	नासामिच्छेललाटान्ता २.८०.१६
नान्दि च वादयामास २.६३.२६	नायं ब्रह्म कृतं दोषमहंते २.११६.१८३	नारसिंहमनाधुष्यं ३.४१.४२	नारायणाग्निस्तान्त्वनि २.८४.३७	नासिकाग्रं समालोक्य ३.८०.८६
नान्द्यन्ते च तदा २.६३.२७	नायं संरक्षितुं कालः २.१२१.८८	नारसिंहो तनुं त्यक्त्वा ३.४७.३६	नारायणाजया वृक्षाः २.८८.७२	नास्ति किञ्चिदवेद्यं ३.११५.२०
नान्यो जगति देवोऽस्ति ३.८६.६	नारदः पर्वतश्चैव २.१०६.८५	नारा प्रापः समाख्याता ३.८८.४४	नारायणायात्मभवायनाय २.६५.३६	नास्ति किञ्चिद्भूय विष्णो १.५१.२
नापुत्रवान्नाशतदो १.३७.२२	नारदप्रमुखाश्चैव ३.२५.२	नाराचपंक्तिं सिद्ध्य ३.४५.१५		नास्ति कथपरमाश्वापि ३.४.६
नाभागादिष्टपुत्रो १.११.६	नारदश्च महाभागः २.१२७.१०४			

नास्ति भ्रातृसमो बन्धुः २.७०.२७	निकुम्भोऽपि हृते वीरे २.६७.२१	नित्यं प्रकीडते तत्र सोमः २.८६.५४	निषेतुः प्रवीर्यस्य ३.५८.६०	निषुद्धकुशलामन्तस्सन्देवो २.८५.७२
नास्ति योगं विना तिष्ठि १.४५.३६	निकुम्भोऽप्यतिमायावी २.६०.५०	नित्यं भक्तासि मे ३.७३.२८	निषेतुः कर्माकाशे ३.५६.३५	नियोगपार्श्वरासक्तैर्गमरी २.६.२५
नास्तीति कृष्णधर्मावाच १.३६.२१	निकृष्टाबल संकाशौ ३.५४.७७	नित्यं सांनिध्यता चैव २.११६.१०	निषेतुः शरीरणीपृष्ठे ३.६८.२३	नियोगपार्श्वरासक्तैस्सकृन्वा २.१४.४
नास्मि वन्या न चाश्चर्यं २.११०.५४	निकृष्टा विजिगीषवः २.६१.२६	नित्यमेवास्तु मे प्रीतो २.७६.१६	निषेतुः बहिर्विहङ्गना २.८४.४४	निरस्तहनुराविष्टशोणित २.२४.३६
नास्य पापस्य दोषेण २.४४.३५	निक्षिप्तकायायुद्धस्य २.१२६.१००	नित्यमुक्तं विरूपाक्षं ३.१०७.१५	निषेतुः सर्वतो दिग्भयो २.१४३.४६	निरानन्दं निरास्वादं २.८.१५
नास्यान्तमधिगच्छन्ति ३.३३.४२	निक्षिप्याद्विमरण्ये तु १.२६.४३	नित्यमुक्ता महात्मानो ३.६४.७	निबध्य भ्रुकुटि वामां २.६६.२३	निराहाराः क्षमावन्तः २.१२६.१५३
नाहं त्वां कितवं धूर्तं २.६७.२५	निमीर्यं विषयं जयदादिकाले ३.८०.४५	नित्योत्सवकरो देवे ३.१०५.२०	निर्वाहिते वैवरिणौ २.६७.२२	निष्पाता च वसुधा १.५१.१४
नाहं भीषयितुं शक्यो २.१.२३	निमीर्यं विषयं सकलं ३.८०.४३	निदर्शनायं गोपानां दिव्यं २.७.१६	निब्रूयामास बली ३.५८.२७	निर्द्व्यन्त इवाकाशे ३.१८.१०
नाहं वेदमनि वत्स्यामि १.२६.६४	निघृहीतः कन्धरायां १.२०.६८	निदर्शनायं गोविन्दो २.५७.३४	निमज्जत्यप्यु यत्रोर्वी १.८.२२	निरोद्धारवषट्कारं २.८६.२८
निर्द्धितवर्चसं सर्पश्च ३.१४.४०	निघृहीतश्च केरोषु गता २.३०.७६	निर्वायमाशौ भगवत् २.६५.१६	निर्मज्जिता गणाः सव २.७६.२२	निर्मताः साम्प्रतं मर्त्यं ३.८०.३६
निकायेषु निकायेषु हरिः १.३.१३८	निघृहीतस्तदाहं तैः १.२०.५७	निर्बन्धेन प्रसूतस्त्वं १.५.१०	निमज्जितोऽहं पूर्वेषुः २.६७.५४	निर्ममिष्यन्ति तेनैव २.७४.४६
निकुम्भं तत्त्वतश्चापि ददशं २.६०.६१	निघृहीतेन्द्रियो भूत्वा ३.२८.२८	निधाय मनसा वैरं प्रियं १.२०.१३४	निमित्तं भविता तत्र ३.२.३४	निर्मम्य स्थायुधागाराज २.२७.५०
निकुम्भमपि गोविन्दः २.८५.५३	निघृष्टं तं महात्मानो १.५.१६	निवस्योत्पत्य सहसा २.१०५.५३	निमीलिताक्षौ व्यसृजद्वाणं २.१२६.१२५	निर्वातावनती भूत्वा २.३०.५०
निकुम्भस्तानयोवाच वसिते २.८५.३	निघृष्टं दुष्टवृत्तीनां कृजान्तः २.३२.१२	निपपात पुनर्भूमौ ३.५८.४६	निमेषान्तरमात्रेण गत्वा २.८३.२१	निधाताः क्षतशस्त्राभ्ये २.७५.१३
निकुम्भस्य हतं देहं २.८८.२	निघ्नन्ता वं सगोपाला २.२४.८	निपपात महावेगः ३.५८.४२	निमेषान्तरमात्रेण नन्दनं २.७३.७	निर्जगाम ततो बाणो २.१२४.५०
निकुम्भाद्याः समागम्य २.८३.१०	निजघान हयाञ्छेष्टा ३.६०.२३	निपपात रथोपस्थात २.१०५.४८	निमेषैः पञ्चदशभि काष्ठा १.८.३	निजितः पावकश्चैव २.११५.१३
निकुम्भाद्यास्तु वसिताः २.८३.१७	निजघानामुरा-युद्धे २.४८.२४	निपाते पृथिवीशानां २.४३.५१	नियतं दोष एवायं २.११६.८०	निजिते तु गते सर्वे २.१२.४४
निकुम्भे निहृते तस्मिन्देवो २.८५.६४	निजघातो वसश्चैव २.१०६.७७	निपुणोऽयं सदा धीर ३.११७.११	नियता गतिर्मर्त्यानामेव २.५२.२०	निर्जगामामुरः कंसः २.१.४
निकुम्भे पतिते भूमौ २.६०.६५	निजघ्नः सहसा रामं ३.६८.२१	निषेतुः सुराणां तु शिरांसि २.८४.४३	नियुक्तः पुत्ररूपेण ३.८८.१३	निर्जलाम्मोद-दशो १.४७.४८
निकुम्भोऽद्यत्रवादिष्टः २.८३.४६	नित्यपुष्पफलोयेनैव ३.३५.१५	निषेतुः प्रवीर्यस्य ३.५८.८०	नियुक्ताः पर्वते दुर्गे २.४२.४५	निर्विभेद ततो बाणं २.११६.१६३

निर्भयाः समपलन्त	३.१००.१०	निवृत्तमस्मिन्काले यज्ज	२.२७.५२	निवृत्ता सा कथा हंसा	३.११८.१७	निशि बालान्हरद्भिश्च	२.८.३६	निष्पयातानिलमतिः	२.२७.६१
निर्भस्यैर्नमिमं शान्तं	३.७६.२७	निवृत्तशत्रो विक्रान्ते	२.५६.४६	निवृत्ता सा तु तच्छ्रुत्वा	१.१०.१६	निशितमितमूकायां	३.६७.१८	निष्पुयस्ते सुरपती	३.३६.१
निर्भस्यमानोयैदृष्ट	२.२६.२२	निवृत्ते सप्तरात्रे तु	२.१८.६४	निवृत्ते नारदपदे	२.१२८.२५	निशुम्भशुम्भमथनी	२.१२०.२०	निष्पेतु रुद्रदयिता	३.५८.७८
निर्भरस्यं सहसा भूयः	३.१००.२३	निर्वदादात्मसंबोधः	३.४.५	निवृत्ते भारते युद्धे	२.११५.१६	निशेव रुपिणी काली	१.४२.१६	निष्प्रयत्नेषु क्षेत्रेषु	३.६५.१
निर्भन्निशिरसो	३.६०.४४	निर्वेष्टव्यं शरीरं यैर्वतकैः	२.८०.१	निवृत्ते मौशले युद्धे	२.६७.४१	निश्चक्रमुबंलाम्यां तु ताम्या	१.४७.२२	निष्प्रयत्नेषु दैत्येषु	१.४६.३६
निर्मज्जा नीरसाः	३.७७.३	निर्वैरो निवृत्तिः शान्तो	१.२१.२१	निवृत्तेष्वय मैन्येषु	३.६५.१	निश्चलेनैव मनसा	३.८०.८४	निः संज्ञं पातयामास	२.१२६.८२
निर्मण्यारणिमानिनयी	३.२३.११	निर्वैरो नैव संयाति	२.४३.८३	निबोदयामास ततो नरा	२.५७.७०	निश्चेष्टं वृष्णिर्लक्ष्यं	३.१२६.१५	निः संयातः कृतः पन्था	२.२४.१४
निर्मण्यारणिमानेयी	३.२३.२३	निलित्ये तत्र दाल्ये	२.६३.५०	निबोदितश्च सम्भ्रान्तं	२.६६.२४	निःश्वसन् जूम्भमाणश्च	२.१२२.७३	निः सारे क्षुभिते लोके	३.४.२४
निर्मनुष्ये द्वीपिवृते	३.८०.५	निलित्ये शकटस्याक्षे	२.६.२५	निवेदिते सुरश्रेष्ठ	२.५०.७१	निषघस्य नलः पुत्रो	१.१५.२८	निसुन्दं पतितं वृष्ट्वा	२.६३.७२
निर्ममा निरहंकाराः	३.१०७.१३	निवर्तश्च महावीर्याः	३.६०.५६	निवेशं कारयामासुर्वादिवाः	३.१२०.१७	निषादास्तस्य राजेन्द्र	३.६८.१६	निसुन्दो बलिनां श्रेष्ठा	२.६३.५६
निर्ममो निरहंकारो	३.१०५.८	निवार्यमाणा ऋषिभिस्तपसा	३.२५.६	निवेश्य तं करैश्शूलं	२.१८.५३	निषदेश ततो रामः	३.१०९.१	निस्पृहाश्च सदा	३.१११.२५
निर्मणिं द्वारवत्यास्तु	३.१३४.२१	निवार्यमाणा युद्धयन्ते	३.२५.१०	निशठं पंचविंशत्या	३.६४.२६	निष्कण्टकमिमं लोकं	३.७४.१४	निःस्पृहो निममं क्षान्तो	१.२१.३१
निर्मितां स्वेन पुत्रेण	१.४६.२४	निवासनो वनस्तम्ब	२.१०३.१६	निः शब्दस्तिमिते तस्मिन्	१.५२.१३	निष्कम्पसन्धियश्चरणा	२.१८.२२	निः स्वर्गं सर्वभूतानि	३.२८.६३
निर्यातयैतन्नैलोक्यं स्फीतं	१.४८.६५	निवार्यं सात्त्विकं कृष्णो	३.१००.२५	निः शब्दस्तिमिते तस्मिन्	२.३५.३२	निष्कलमया भविष्या	३.१३१.६	निः स्वाध्यायवषट्कार	१.५.५
निर्वाणाङ्गारमेवाभस्तीक्ष्ण	२.२१.२	निवासोऽसुरमुख्यानां	२.८२.२	निशम्य तं निपतितं	२.४४.३०	निष्काणां च सहस्राणि	२.६१.२८	निः स्वाध्यायवषट्कारा	३.४.१७
निर्विकारैः समायुक्ताः	३.२६.१०	निविष्टो यादवो दृष्ट्वा	२.४०.३१	निशम्य तेषां वचनं	३.४६.१	निष्कमित्वा प्रजाकारः	१.८.३६	निस्मृताः पृथुसूदनः	२.१८.४१
निर्विघ्ना प्रायणा	३.८०.६५	निवृत्तं सुमहद्युद्धं	२.१२१.८१	निशम्य बाणमावस्तु	२.१२७.४६	निष्कमेण मया मुक्तः	२.६७.६८	निस्मृते साश्रुवशिरे	२.३०.४५
निर्विघ्न महावीर्यो	३.५६.२०	निवृत्तशत्रुं कालिङ्गं	२.५६.७	निशाचराः पावकधूम	३.५२.२८	निष्कम्प्य तमसस्तस्माद	२.११३.३४	निहतां हस्तिमायां तु	२.१०६.२२
निर्विहारस्य भूतस्य	३.३.२३	निवृत्तावश्वमेधस्य	३.२.३३	निशायामथ चागम्य	१.२६.२३	निष्क्रान्तस्तस्य वदनाद	३.१०.१७	निहता बालभावेन प्रलम्बा	२.४८.२७
निर्विहङ्गवर्तवुर्लैर्निर्मयूर	३.१८.४८	निवृत्तावश्वमेधस्य	३.२.३६	निशासु सुप्तचन्द्रासु	२.१०.३६	निष्पतन्ति स्म बहुषो	२.८.३२	निहता वायुवेगेन	३.५५.७१

निहृतावध नृपाः सर्वे	२.११५.२३	नीलपीताम्बरधरा	२.४.३६	नूनमात्मेच्छया कृष्णस्तथा	२.६०.४८	नृसिंह एष कथितो	१.४१.७६	नैकथा तं प्रविच्छेद	२.६३.८४
निहृते दैत्यसंघाते	३.३१.१	नीलपीताम्बरधरो	२.८.२	नृबायास्तु स्रगः पुनः	१.३१.२६	नृसिंह एष कथितो	३.४८.१	नैतन्नगरमायासीः	३.६६.१०
निहृत्य गदया मर्वास्ता	३.५८.२४	नीलपीताम्बरधो पीत	२.२७.५३	नृणामिन्द्रियपूर्वेण योनेन	१.४०.३७	नृहस्तनागहस्तः श्यां	२.१८.१२	नैतया कविषदाविष्टो	१.५०.२६
निहृत्य तं महाकार्यं	१.११.२५	नीलपीतारुणस्तासां वस्त्रं	२.६.१६	नृत्यन्तः प्रहसन्तश्च	३.८६.५	नेच्छाम्यनशितं द्रष्टुं	२.५८.६३	नैतस्य प्रमुले स्थातुं	२.२४.५८
निहृत्य तान्माहाबाहुर्जरा	२.५६.७५	नीलपीतासितश्यामैः	३.४१.४६	नृत्यन्ति नृत्यकुशला	३.८६.१४	नेजुयंज्ञैस्त्रयो बलास्ते	२.८६.२५	नैकनस्य विधानेन	२.४४.६३
निहृत्य नरकं भोमं वास	६.६४.१	नीलमेघनिभं कान्तं	३.८१.१३	नृत्यन्ति स्म तदा	३.६६.३	नेता च यदुवृष्णीनां	३.७४.५	नैनवैद्रष्टुमिच्छामि	२.१०४.४२
निहृत्य नरकं भोममाहृत्य	२.१०२.२६	नीलमेघप्रतीकाशं	३.३४.३१	नृत्यन्त्यप्सरसश्चैव	२.१७०.३१	ने तुमुङ्क्त्वा रथवरं	२.२७.१	नैमिवारण्ये कुलपतिः	१.१.४
निहृत्य हनमकवचः शतं	१.३६.१०	नीलमेघान्तरगता	२.२८.८२	नृत्यन्त्यापारकाशवच	२.१०.७	नेत्रं समुद्रान् भीमं	३.१६.३६	नरायणेन कृतो यत्न	२.४.५१
निहृतेद्वीपवेपेण क्रीडमानो	२.४८.२६	नीललोहितपीताभिः	१.४४.४६	नृत्यावसाने भगवानुपेन्द्र	२.८६.५४	नेत्रयोराकुलत्वं च	२.१२२.८१	नैवं गच्छेत दुःस्थान	३.२४.११
नीडस्थेषु बिहङ्गेषु	२.२४.२	नीलांशुमेघप्रतिभामि	३.५२.४२	नृपः कुशाग्रैः पुनरेव	२.६५.३३	नेत्रवक्रप्रसादश्च कर्तव्य	२.६१.४७	नैवं च प्रायशः स्थातुं	३.१११.६८
निडातमाकृष्य तदा पूजनी	१.२०.६७	नीलांजनचयप्रस्थं	२.१२२.५१	नृपजयाद्बहुरथ इत्येते	१.२०.४७	नेत्राणि बहुधा तस्य	३.२८.२४	नैवं चेच्छोष्यति प्रोक्तं	२.७१.४४
निपत्यैकशतं तात पुत्रा	१.२०.२३	नीलाम्बरधरः	३.४६.३४	नृपतेस्त्वेहसंयुक्तं	२.२८.२६	नेत्रे ते देवदेवस्य	३.११४.६	नैवं त्वां मदनो जह्या	२.६६.४३
नीपार्जुनकदम्बानां	२.१०.३३	नीलाम्बुदाभे बसने	२.८६.२	नृपः प्रयातो बलवान्	२.३५.२०	नेत्रोत्थितमहाबाह्वि	३.१११.१७	नैवं युद्धं महाघोरं मासीद	३.६७.२३
नियमाने तु तत्रासीद	२.६८.६५	नीलाश्वत्थसंघातैर्बहुवर्णं	२.४०.६	नृपाएऽभेदमालोक्य भीष्म	२.४६.६५	नेत्रोत्सवः कान्तसमागतानां	२.६५.२८	नैवं राज्ञः कुबेरस्य न	२.६४.८
नीराजयित्वा सैन्यानि	२.१६.३३	नीले बसाने बसने	२.४६.२७	नृपासनपरिक्षिप्तं संचार	२.२८.६	नेदुरत्यर्थमतुलं धमन्ति	३.१२०.१५	नैवं वाताः प्रवायन्ति	१.१२६.६२
नीलकंठः परां प्रीति	२.११६.१५	नूनं कान्ततरा कान्त	२.३१.२१	नृपण तेन गोविन्द	२.३६.५२	नेदृशाः सन्ति देवानः	३.६६.७१	नैवं शक्यस्त्वया जेतुं	२.६६.६
नीलकोशेयसंवीता पीतेनो	२.२.४२	नूनं जन्मान्तरे पूर्वं	३.८२.४०	नृपेण सह तिष्ठन्ति	२.५५.५२	नेमस्तुं मुनयः सर्वे	३.६०.३४	नैशाकरीं बाहली च	१.४६.२६
नीलगर्भसुकेशान्ता	३.२८.५८	नूतं त्रिदशभूयिष्ठं मेघ	२.१६.३८	नृपे ब्वथ प्रणष्टेऽनु तदा	१.४१.१६७	नेपथ्यं सुबुरात्मानस्ता	२.८२.१६	नैवं शून्या न चाशून्या	३.४.३३
नीलचित्रांगवर्णश्च	२.११.२०	नूनं त्रिभिः क्रमेजित्वा	२.२५.३२	नृशंशोऽयं पिशाचोऽयं	३.८०.६७	नेष्यामि मधुरेशस्य सर्भां	२.५५.७६	नैवोपवासकृत्कविन्न	३.८.१६
नीलपीताम्बरधरं	३.३८.१६	नूनं योगविहीनोऽहंकार	२.५२.३७	नृशम्भानुसरः क्रुद्धः	२.२४.१५	नैश्वतो नरको नाम	२.६३.३४	नैव कल्पे विधिदंष्ट	१.१६.२१

नैव संकल्पितः कामो	१.२७.३१	न्यायाद्धर्मण गुह्यं न	३.१७.३२	पञ्चपदचर्चस्तेषु एकं	२.६३.६४	पञ्चेन्द्रियस्य ग्रामस्य	३.१८.५	पतितो देवकीगर्भस्थ	२.२.३३
नैवामविदितकिञ्चित्	१.५१.११	प		पञ्च पुत्रघातान्यस्य	१.२८.२३	पटुना मेघनादेन नवतोया	२.१६.१६	पतिना सानिरुद्धेन	२.११६.७६
नोद्वेजनीया भूतानां	१.५१.८	पक्षप्रहारनिहता नख	२.१२२.६४	पदचमिः पदचमिदचैव	२.३५.८६	पट्टिशासिगदामूल	२.११६.१३४	पतिं प्राप्ताः सुदैवेयं	३.६५.१८
नोपभोगरता नित्यं	१.१६.१३	पक्षवन्तः सशिखरा	३.२७.६	पञ्चभिदवापि विग्याथ	२.५६.६६	पट्टिर्शेभिन्दिपालैश्च परिचै	१.४७.१०	पतिं संकल्पयित्वा ह्य	२.८१.६
नोपलभ्यति मूढानां	३.१७.३६	पक्षवातेन पृथिवीं चालयन्तं	२.४७.३२	पञ्चमः पाञ्चिकस्तत्र	१.२१.३७	पठन्तो देववाक्यानि	३.८६.११	पतिमभिलषतं च	३.६.२
नोपालभ्यन्तं चक्षुर्म्यामि	३.१३३.४३	पक्षवातोद्धतो मेघुवचूर्णः	३.२७.४	पञ्चमः पाञ्चिकस्तत्र	१.२३.२७	पठन्तम्यगिमां वृष्टि	१.१५.३७	पतिलोकं च गच्छेयं	२.८१.३४
नोपासिता मयद्भ्यां	३.१०८.१५	पक्षसंघावमा वास्यां	३.२६.३८	पञ्चमिः सात्यकि पौण्ड्रः	३.६७.२६	पणवाञ्छं श्रुतिमुखं	२.८.३	पतिलोभेन यं गच्छा	१.२७.५
नोवाच स तदा कृष्णः	२.६१.५२	पक्षाणां च क्षपाणां	१.४.१६	पञ्चमूढानितं दृष्ट्वा	२.१२.३८	पण्डितासि वदोपायं	२.६२.३८	पतिलोभेन यं गच्छा	१.३२.४४
नोभिष्टुह्नकाराभि	२.८८.५७	पक्षानिलहृतो वायुः	२.६३.४४	पञ्चयज्ञपरो नित्यं	३.१०४.२	पतयैः पर्वतैश्चापि	१.५३.७	पतिव्रता च ज्येष्ठा	१.१२.८
न्यद्योषं पर्वताग्रामं	२.११.२३	पक्षाम्यां चावपञ्चा	१.४४.४५	पञ्च यज्ञान्सदा विप्र	३.१०८.६	पतता मेघवर्षेण यथा	२.१०.१६	पतिश्च मे स्तारमुल्लो	२.७६.११३
न्यङ्कुभिश्च वराहैश्च	२.६४.४१	पक्षाम्यां त्वां परिचव्य	१.२०.१०६	पञ्चयोनिसमुत्थानि	२.५०.६६	पततां पात्यमानानां	३.५५.१०७	पतोन्मुपान्वञ्चयित्वा	३.३.४२
न्यपतन्त विदेहास्ते	३.१३३.३६	पक्षिणां चैव सर्वेषां	३.३७.१६	पञ्चवर्णं सुवर्णंश्च	२.६८.३५	पतभ्तमपि तं शक्नो न	२.७३.६२	पतयश्चापरे दैत्या	१.४३.२५
न्ययतन्दैत्यसंघाता	३.१३३.४०	पक्षिस्वनेः सुमधुरैर्नन्दन्त	२.८७.६	पञ्चवर्णं जगन्नाथ	३.१०४.१५	पताका यानपात्राणां सर्वाः	२.८८.७१	पतिनो ब्रुवि चैकस्य गोप	२.४३.२५
न्यमज्जयन्त समरे	३.५७.१८	पक्षो दशगुणो मासो मासै	१.८.११	पञ्च सिद्धिगुणां	३.१८.३	पतितं शत्रुहन्तारं	२.१०५.७१	पत्नी तु यादवी तस्य	१.१४.६
न्यवारयथाशक्ति	३.१०६.१०	पञ्चजानि च ताम्राणि	२.१६.२३	पञ्चस्तवकलम्बेन	२.१४.२६	पतितं सौममालोक्य	१.२५.१०	पत्नी सा विश्वमहत्तः	१.१८.६१
न्यस्तदण्डं तपोयुक्तं	३.६६.६	पच्यते हृदयं नीलं	१.१६.४३	पञ्चस्तवकलम्बेन	२.१६.११	पतितानि स्म दृश्यन्ते	३.५५.१६५	पत्येषा मम पुत्रस्य	२.१०८.२८
न्यस्तशस्त्रावुभौ वीरो	२.५५.८८	पञ्चक्रोशप्रमाणेन	२.१८.५७	पञ्चाचूडां ततः कृष्ण	२.८८.३६	पतितानुगतं मांयं निवेद्य	२.२२.६५	पदं विष्णुरजो ब्रह्मा	३.२३.३३
न्यस्तशस्त्रौ च तो	२.७५.२३	पञ्च नैव सहस्राणि	३.११०.१४	पञ्चाक्षीतिसहस्राणि	१.३३.२३	पतितेनाम्भसा ह्यते	२.१०.२६	पदसंघो ब्रह्मलोकं	३.१७.८
न्यस्तसंकुचिताधानं काले	२.३६.२३	पञ्च तं नाम्यवर्तन्त	१.४८.१	पञ्चास्यः पावकोछवास	२.१२.६	पतितैरपि विद्वैश्च	३.५५.८२	पदहेतोः क्रिया सर्वा	३.१६.२०
न्यहनत्मारुधि चास्य	२.५६.६८	पञ्च तस्य महावीर्या	३.४६.२६	पञ्चते रक्षणायालं	१.३२.६६	पतितैर्निष्पतद्भिर्य	३.५६.६६	पदातयः पदातीर्य	२.५६.७६

पदातिनी महाराज	३.१०६.१७	पथावतं जनपदं करवीरं	२.३८.२६	परपीडा न मत्तोऽस्तु	३.८०.६८	परस्परविवृद्धेन हिंसायुक्तेन	३.२८.३६	परिषेण हृतः संख्ये	३.६१.२२
पदातिप्रो महावीर्यो वसुदेव	२.४८.६	पथे चाधोमुखे कृत्वा	२.८०.४७	परपुष्टस्वनोन्मिश्रं	२.६७.२०	परस्परव्यतीकारो रण	३.६४.१२	परिषेणाहनः कृष्णो	२.८५.५४
पदातिः पुण्यव्याघ्रो	२.५७.४०	पथेन शतपत्रेण	३.२०.६	परं गुणैर्मयः पृथिनगर्भं	२.७२.३६	परस्परसमावेशाज्जगतः	३.७३.६	परिषः पट्टिर्षीर्भस्ते	३.६०.३३
पदातिमनिः सुमहान	३.५७.१७	पथे फल्ले तु विन्यस्य	२.८०.२६	परं च सत्यं परमं	३.४७.२८	परस्परद्वुसस्वाद्य	१.४१.१६८	परिषैर्भिन्दिपालैश्च	३.५१.५
पदात्योदुष्यतोस्तत्र	२.४८.४३	पथोद्धतकरां देवी	३.६५.६	परं परस्यापि परं	३.४७.३०	परास्व विनिघ्नन्तः	३.५८.६३	परिषक्काम तं वेशं दुर्गं	२.५८.२
पदानि त्रीणि दैत्येन्द्र	३.७१.२१	पद्म्यां पावर्त्ताभि	२.१२६.८१	परं परस्यापि परं	३.४७.३१	पराक्रान्तं पराक्रम्य	३.५५.२७	परिषद्दस्यानुरुपं यानपात्रं	२.८८.७८
पदानि यो लोकमयानि	१.४०.२६	पद्म्यां सृजति भूतानि	३.२०.१०	परं परस्यापि परं	३.४७.३२	पराक्रान्तस्य समरे विरबस्य	२.४३.२४	परितुष्टः कषयपस्तु तामुवाच	२.८६.५
पद्महा बलुवोर्मध्ये	३.१८.१८	पद्म्यां मुक्ताभ्यां च पुनः	२.१३.१८	परं परस्यापि परं	२.४७.३३	पराध्यं तु देवानां	३.६२.१	परितुष्टेन वत्सा मे	२.६४.४५
पद्मकिं जलकनयनः	३.११६.२०	पद्म्यामैव ततो गत्वा	१.३६.१६	परं परहृष्यं धर्मस्य	३.६४.२६	पराजिताः सुरा दैत्यं	३.६६.१	परिवेक्षितमात्रेण लोकः	२.३२.६
पद्मकल इतिस्थातं	२.६८.४६	पनसाद्य तमालाद्य	३.४१.७३	परं प्रक्रममाणस्य	१.४१.१०१	पराजितेषु दैत्येषु	३.६३.३	परिधानानि चर्माणि	३.१३३.२८
पद्म लङ्काकुलाविश्व	२.६८.११	पन्थानं देवगमनं	३.१३३.१८	परं शरीरं परमं च	३.४७.२६	परानित्यं तु संज्ञाये	३.५७.६६	परिर्वायां प्रविशति	३.७३.३१
पद्मलङ्कजलोपेतां	२.६८.६७	पन्थानश्चोपिता भ्योम्नि	२.२४.६६	परमं तर्कशास्त्राणामसतां	१.२८.३१	पराजित्य स सावित्रं	३.५४.५७	परिवक्ष्यं महाबाहुमेकवेणी	२.६४.२७
पद्मनाभं हृषीकेशं	२.१२६.११६	पन्नगानां सुचोराणां	३.५.८	परमं शृणु मे वाक्यं	२.११८.५३	परां च सिद्धिं परमं	३.४७.२७	परिवर्तं कृते ताम्यां	२.४.२७
पद्मनाभ महाबाहो	२.१२१.६७	पपात पुष्पवृष्टिश्च शक्र	२.८५.६५	परमेष्ठिसुतास्तात मेघ	१.७.४४	पराध्यं वस्त्राभरणः कार्यः	२.६०.४४	परिवारं तु समरे	३.५७.४२
पद्मपत्रविबुद्धास्तु कारण	२.३३.४५	पपात भूमौ जानुभ्यां	२.२६.३२	परशुप्रग्रहे युक्तं ययैवेह	२.३६.३४	परावर गृहीतार्थं	३.४८.१६	परिवार्यं गरुडमन्तं सर्वं	२.६३.१०२
पद्मपात्रे पुनर्दग्धा गन्धर्वः	१.६.३८	पपात सतु रंगस्य मध्ये	२.३०.४६	परश्चैवापरस्तेषां स्वयं	२.१.१८	परावरजः सर्वजः	२.१२७.८४	परिवार्यं समन्तात्	३.४४.२१
पद्मं नाम्युदभव चैक	३.११.१६	पयः पानं तथा कुर्वन्	३.८२.२१	परस्तेन किं कार्यं	२.४६.२७	परावृत्तस्य समरे विरयस्य	२.३५.७४	परिवार्यं क्षिरण्याक्षं	३.३८.८
पद्ममालावतोरस्को	३.१२०.१०	पयस्सपिषःचैव दध्नी	२.२२.६३	परस्परकृतोत्साहे	३.१२२.३	परासमगतं तत्र यथा	२.११६.२८	परिहासं बहुविधं	२.७६.११
पद्मवर्णोऽपि राजविस्तह	२.३८.२४	पथसा च तयाश्रोयाद्या	२.८०.१०	परस्परकृतोत्साही	३.१२४.२१	परिक्षिप्तं च बहुधा	३.१३२.३३	परीक्षितस्य काशयायां	३.१.३
पद्मस्थान्ते कुशं	३.१२.१४	परदारापहरणं पररत्न-	२.८६.१४	परस्परं समाश्रित्य	३.६४.२४	परिग्रहाद्य विषया	३.२३.३५	परीवादाज्जगन्नाथ	३.८०.७६

परुषामिस्ततो वाग्भिरन्यो ३.२६.१६	परवानां सहस्रं च २.१०२.७	पश्यतां दीप्तवपुषं ३.१३.८	पाणिनो बभ्रवश्चैव १.३२.५७	पातालवासमुत्सृज्य २.११६.५३
परेण तेजसोपेतो सुरेन्द्रा २.३३.४२	पर्वताग्ररसं सिद्धे ३.२३.२	पश्यतां देवदेवानां २.१२६.८४	पाणिप्रहारेणैकेन सभृत्य १.४१.५२	पातितं दानवेन्द्रस्य ३.३६.२१
परोक्षं यदि किञ्चित्स्यात्तव ३.१११.४४	पर्वताश्चलिनाः सर्वे २.१०७.२	पश्यतां सर्वभूतानां ३.२५.११	पाणिभ्यामथ चाग्नीध्रं ३.१०.६	पातितायां महाशक्त्यां ३.१२६.२०
पणंभारंश्च विकर्चंविस्तरिण ३.२८.३६	पर्वतास्तु शिलाशृङ्गै १.४४.३४	पश्यन्ति च सुबोरां ३.६७.२३	पाणि जगुहुतुवीरो २.६४.५०	पात्यमाने तदा तस्मिन् ३.६१.२०
पर्याहारं कृशां दीना १.६.४०	पर्वतो नारदश्चैव ३.८५.७	पश्यन्तो च दुरात्मानो ३.१०६.२	पाणौ गृहीते वैवर्ण्यास्त्व २.६१.१७	पात्रमासाद्य वै राजन्यया २.५०.८
पर्यदेवन् विधवा नानर्षा १.४१.१४३	पर्वतोपवने न्यस्य रथं २.२८.६६	पश्य राजन्महावीर्ये २.११६.१८७	पाण्डवस्य धनुः केषित २.६०.५७	पात्राणि दक्षिणा दीक्षा १.४०.२७
पर्यये चैव रामस्य भरतस्य २.३८.४१	पर्वभिः पर्वतश्च ३.१७.२	पश्यामि च हरेर्वक्त्रं ३.११४.३२	पाण्डवांसचानयामन्त २.७६.२३	पात्रेभ्यो दायतां कन्या २.५१.१४
पर्ययनात् च सा कञ्चिदपि २.८०.५२	पर्वभिः पर्वतश्च ३.११०.५	पश्येहं निश्चितं घोरं ३.१०१.१३	पाण्डवानां तु दग्धानां १.३६.८	पावक्षेपं नृपस्तस्माः ३.१२८.७
पर्ययः तां पृथिवीं कृत्स्न २.१०२.२०	पलायनपरान्तर्वा निदं ३.११०.५	स्वरं विहितं ३.७६.२३	पाण्डुरोद्धतवसनः प्रवाल १.४४.१४	पादपैर्बर्णबहुलैर्ध्रियते च ३.२७.२१
पर्ययैर्धूर्णमानैश्च २.१८.४६	पलायित्वा गृहं गत्वा २.८५.६	स्वर्गं विहितं ३.७६.२३	पाण्डुरोद्धतवसनः प्रवाल १.४४.१४	पादांशुडेन शकटं २.१०१.३४
पर्याप्तुबन्तु क्षिप्रं मां २.१७.३१	पलायित्वा गृहं गत्वा २.७०.४६	पल्लवैः सह सद्बो १.२७.१३	पाण्डोर्धनजयः पुत्रः १.३२.११५	पादा धर्मस्य चत्वारो ३.१७.३०
पर्वणीषु तु सर्वाषु २.६१.३५	पल्लवाकृतिहस्तेन २.११७.५१	पाकशासनकल्पस्य २.१०४.२७	पाण्ड्यं पाण्ड्यं कलिगं २.१०२.१५	पादितान्यसुरेन्द्राणां ३.४७.७
पर्वतं वरिधाराभि २.१०५.५१	पवनसमगतिविशालवक्षा ३.५१.४२	पांचजन्यं मुखेन्यस्य ३.१२०.१२	पाण्ड्यं पाण्ड्यं कलिगं २.१०२.१५	पादुकार्यं तूर्णः कार्यं २.७८.२७
पर्वतं वारिधाराभिः ३.५५.६८	पवनाधिकसंपातं गगन १.४४.४१	पाञ्चजन्यस्य निनवं २.५५.२८	पाण्ड्यं पाण्ड्यं कलिगं २.१०२.१५	पादेन नैव पादौ तु २.८०.४५
पर्वतं वारिधाराभिः ३.५५.६८	पश्चाद्देवास्तदा दातुमुद्यता ३.३०.३०	पाञ्चजन्यस्य निर्धोषं २.६६.१०	पाण्ड्यं पाण्ड्यं कलिगं २.१०२.१५	पादोद्धारेण नृत्येन २.६३.३२
पर्वतं वारिधाराभिः ३.५५.६८	पश्चिमां तु दिशं ३.७२.५३	पाञ्चजन्यस्य निर्धोषं २.१२७.१०६	पाण्ड्यं पाण्ड्यं कलिगं २.१०२.१५	पादौ प्रक्षालयांश्च मुने २.६७.४०
पर्वतं वारिधाराभिः ३.५५.६८	पश्चिमे तु ततो रुध्रे २.६.३३	पाञ्चालाधिपतिश्चैव २.४२.३१	पाण्ड्यं पाण्ड्यं कलिगं २.१०२.१५	पादौ प्रक्षालयांश्च मुने २.६७.४०
पर्वताकारवर्णा च ३.१२६.६	पश्चिमेनानिदीप्तेन पूर्व २.२५.१२	पाञ्चालो बहुवृक्षस्वासी १.२३.२१	पाण्ड्यं पाण्ड्यं कलिगं २.१०२.१५	पादौ प्रक्षालयांश्च मुने २.६७.४०
पर्वताग्रेषु घोरेषु नदीषु २.३.६	पश्य कृष्ण घनान् कृष्णा २.१०.२२	पाणिग्रहणमन्त्राणां १.१३.७	पाण्ड्यं पाण्ड्यं कलिगं २.१०२.१५	पादौ प्रक्षालयांश्च मुने २.६७.४०
पर्वतानपि भिन्दन्ति मम २.८५.३४	पश्य कृष्ण जलोदरैः २.१०.२५	पाणिनो बभ्रवश्चैव १.२७.४६	पाण्ड्यं पाण्ड्यं कलिगं २.१०२.१५	पादौ प्रक्षालयांश्च मुने २.६७.४०
पर्वतानां नदीनां च ३.८.२४	पश्य कृष्णानलोष्णानां २.४२.७४		पाण्ड्यं पाण्ड्यं कलिगं २.१०२.१५	पादौ प्रक्षालयांश्च मुने २.६७.४०

पारण प्रथमं प्राप्य	३.१३२.२५	पाषिन्वे भारते वंशे पूर्वं	१.५३.१४	पितृर्गुपरते मल्लं आवधा	१.२०.४६	पितृभिः श्रूयते चापि	१.६.२४	पितृतः स्तनमालस्य पुत्रं	२.६.१५
पारणेपारणे राजन्	३.१३२.७७	पाषिन्वेपुषिष्टेयु स्नेयु	२.५०.१७	पिता ते स्वर्गतिं प्राप्तः	२.३७.६०	पितृवर्षा तु यस्तेषां	१.२१.१०	पितृन्तो वधिरं वोरं	३.८६.७
पारदा मुक्तकेशाश्च	१.१४.१७	पाषिन्वेर्बहुभिस्ताडं समग्र	२.५३.२७	पिता त्वेनमयोवाच इवपाकै	१.१२.१६	पितृस्वसरि जातस्ते ममांशो	२.१६.७३	पितृनिव तदाकाशं	२.१२४.१८
पारमेष्ठ्येन वाक्येन	२.११०.६८	पावर्त्त्यां परितुष्टायां	२.१०६.५६	पिता बुधस्योत्तरवीर्यकर्मा	२.६५.३१	पितृष्वसुः प्रियार्थं च	२.२६.३१	पिशाचो भगवद्भूतः	३.८०.८३
पारमेष्ठ्ये स्थितः स्थाने	१.४७.५६	पावर्त्त्या यादवास्तस्य	३.१११.६	पितामहं तु हत्वा	३.४८.२६	पितृष्वसुपतेर्वाक्यं श्रुत्वा	२.४३.८२	पिषिताशो जयन्नायं	३.८२.१
पारामितस्तु नृपतिर्दृष्ट्वा	३.२.८	पाश्वर्निष्ठान्ये शकलानि	२.८६.६०	पितामहं पुरस्कृत्य	३.२३.१	पितृणां कारणं श्राद्धे	१.१६.४०	पीठं तथा महाबलुः	२.१०२.२४
पाराशरस्य दायादं हवं	१.१८.४१	पाश्वर् तिष्ठतमाहूय	१.२६.४५	पितामहमुज्ज्वला रोद्रा	२.१०६.६३	पितृणामादिसर्गं च	१.१६.६	पीड्याश्चय धर्मस्य	१.२१.३
पारिजातकपुष्पाणि	२.६७.३१	पाश्वर्कपलकल्पावैः	२.४०.२४	पितामहश्च भगवान्	१.५.२७	पितृणामादिसर्गेण सर्वेषां	१.१८.७१	पीड्यमानोऽतिबलिभि	३.३६.१६
पारिजातगुणान्मर्या	२.६६.६०	पाशने हि महान् धर्मः	१.११.३०	पितामहाय प्रवदन्ति	१.१.८	पितृणामादिसर्गं च	१.६.५६	पीत कौशेयवसनं	३.११४.१३
पारिजाततरोः पुष्पं तस्य	२.६६.२६	पालयिष्यसि कुस्तीं	१.४१.११०	पितामहो लोकपालाचन्द्रा	१.४१.२१	पितृनाजापविष्यन्ति	३.४.२५	पीत कौशेयवसनं	३.११४.३६
पारिजातं ततोऽस्माकीद	२.६७.६२	पालयैनं क्षुभं राष्ट्रं	२.३७.३०	पिता सोमस्य वै राजन्	१.२५.१	पितृन्पुत्रा नियोजयन्ति	३.३.३६	पीतमात्याम्बरधरो	३.३१.४४
पारिजातं महापृष्ठे इष्ट्वा	२.६६.५६	पालितोऽपि हि वीतेयेः	३.६६.६१	पिता हि मे परित्यक्तो	२.२८.३७	पितृन् प्रीणाति यो भक्तया	१.१८.७४	पीतवासा लोहितशः	३.३३.२८
पारिजातश्च तत्रैव	२.६८.६४	पावनः सर्वभूतानां	३.६२.६	पितुः पितामहं चैव त्रिषु	१.१६.१४	पितृन् सर्वभूतानां	३.३६.१६	पीते प्रीतिकरे नृणां	२.११.४
पारिजानमिहानीतं	२.७५.४७	पाषाणैः कर्षणीयैश्च	३.७४.२३	पितुर्मै दयितस्त्वं	२.३७.२१	पितरो धर्मकामस्य	१.१६.११	पीते वसानो वसने	१.५२.४
पारिजाताद्वहगुणं फल	२.६८.२४	पाषाणैः प्रतिमां तात	२.७४.५४	पितुश्चापरितोषेण	१.१३.१८	पित्रा तु तं तदा	१.१३.६	पीत्वार्णवाश्च सवन्ति	३.६.२
पारिजाते निवृज्याय मम	२.८१.२०	पिठरः पतगः रुद्रणः	१.१२२.३२	पितुः समीपगा सा तु	१.६.१६	पित्राऽपरञ्जितास्तस्य	१.५.३०	पीनोन्नतकटीदेशं	३.३४.३३
पारिजातो वंसस्तत्र	२.७६.२१	पितरं किं नु वक्ष्यामि	२.११८.१२	पितृकृत्येषु देवानां संन्यासं	२.६६.१२	पित्रा प्रोक्ता महात्मनो	३.२१.१६	पुंडरीकशर्तुर्जुष्टं विमानंश्च	२.६८.६६
पारिजातो विष्णुपद्माः	२.६७.७०	पितरं तस्य तत्रैव	२.३६.३६	पितृनुद्धरते सर्वान्	३.१३५.१२	पिनद्धं काञ्चनः	३.६१.८	पुण्डरीकसहस्रस्य	३.३३.३०
परियात्रो गिरिश्रेष्ठो	२.७४.२	पितरं वसुदेवं च सनत्	२.२६.५	पितृपितामहे राज्ये तव	२.४४.५७	पिपासा वा बुभुक्षा वा	२.८६.६०	पुण्डरीका मुग्धा च	३.६६.१६
पाषिन्वे देहमाहुस्तं	१.४०.६०	पितर्युपरते घोरे शोक	२.४४.६५	पितृभिर्दानवैश्चैव	१.२.२६	पिपीलिकानां चण्डानां	२.५७.३६	पुण्यकानां ममोत्पत्ति	२.७७.१

पुण्यकानां विधिं कृत्स्नं	२.७७.२८	पुत्रं सङ्कल्पदं नाम राजानं	१.४.२०	पुत्रो विविरयस्यासी	१.३१.४४	पुनर्हरिवतीं प्राप्ते तस्मिन्	१.३६.३३	पुरा एकाग्रं वे घोरे श्रूयते	२.४८.१३
पुण्यकानां विधि	२.७८.१८	पुत्रं समभिबीक्षन्ति	२.३१.४०	पुत्रो निर्वापितः क्रोधान्तीतो	२.३२.१८	पुनर्भङ्गाः प्राद्वन्त	२.११६.१२५	पुरा कमलनाभस्य स्वपतः	१.४१.२६
पुण्यं कानि च सर्वाणि	२.७८.३३	पुत्रं समुद्रं च बिभुः	१.१४.२४	पुत्रोऽभूद्राजशार्दूल सर्वं	१.२०.८६	पुनर्देवगणैः सर्वैः पुरन्दर	१.६.२२	पुरा कल्पे हि बाणैः	१.३.७७
पुण्यकार्यं कथास्तासामास	२.७७.२३	पुत्रं सर्वगुणोपेतं बभूव	१.३७.१२	पुत्रो मेऽपहृतो राज	१.२६.२७	पुनर्नैः बोधभुजंति	३.५.२४	पुरा कृतयुगे राजन्सुरारि	१.४१.४०
पुण्यके सत्यया	२.७५.३६	पुत्रमिन्द्रवधार्थाय समर्थं	१.३.१२५	पुत्रो मे बालभावेन	२.५१.१	पुनः शरसहस्रेण	२.१०६.८	पुरा कृतयुगे राजन्	३.४१.२
पुण्यतीर्थं गुणोपेतं	३.३५.३२	पुत्रमेकं ददौ तस्मै	३.१०४.१३	पुत्रोऽयमिति जानीहि	२.११७.४०	पुनश्च क्रोधरक्ताक्षो	२.६३.८१	पुरा कृतयुगे विष्णुस्संघ्रामे	२.४८.२३
पुण्य त्रिषिखरं चैव	३.१२.६	पुत्रं शूरवते युक्तं ज्ञातीनां	२.३१.४१	पुत्रो रुक्मरथस्यापि	१.२०.४१	पुनश्चोद्भवते सूक्ष्मं	३.२६.२६	पुरा गत्वोत्तरकुलंस्तपश्चक्रे	२.८५.३६
पुण्यः प्रभुप्राणपति	३.५२.३०	पुत्रशोकेन शुष्यतीं त्व	२.२६.६	पुत्रो विषवजितश्चापि	१.२०.२०	पुनः संपूज्य परमं	३.६६.२६	पुराणं तत्र विन्यस्य	१.५५.५१
पुण्यं कर्तुं तदा सूष्टः	३.६७.५७	पुत्रश्च श्रीमकस्यापि	३.३४.१५	पुदस्ताणास्ततः पुत्रमिहेच्छति	३.७३.३०	पुनः सिंजयया युक्तः	१.८.३५	पुराणं पोष्करे चैव	३.१४.६६
पुण्यं च रमणीयं	१.३२.८७	पुत्रसंक्रामितश्रीस्तु	१.११.२७	पुनः पुनर्मया वास्य हेतवो	२.७०.६	पुनः पुनस्त च बली	२.२४.३२	पुराणमितिहासश्च	२.१०६.८
पुण्यं सद्योषितं यच्च	३.७२.४८	पुनः सत्यधृतिर्नाम	१.३२.७२	पुनः प्रबाध्यो भगवंस्त्वसा	२.७०.५०	पुराणस्य संहार	३.१३४.३०	पुराणमेतच्छरितं	३.६.११
पुण्यापणवती दुर्गा	१.५४.६१	पुनस्य चेष्टामालोक्य	१.५२.१४	पुनरन्याश्चतुःपट्या	२.६०.१७	पुरद्वारं समासाद्य	३.६३.१८	पुराणमेतदक्षिणं सांख्यं	३.३३.६
पुण्यार्थं दानधर्मार्थं	२.६८.७	पुनानपुत्रो लभते	३.६.८	पुनरुत्थाय शयनात्पतन्ती	२.६६.११	पुरंदरं समासाद्य	३.६३.१८	पुराणवेदसंबद्धः शिव	२.४०.२४
पुत्र एकोऽपि मे जातस्त	२.३२.१२	पुनानुत्पादयामास सोम	१.२.४७	पुनरेव तदा भूत्वा	३.१६.३७	पुरंदरपुरे रम्ये शक्रेण	३.१३२.४७	पुराणि ग्रामघोषांश्च	१.३३.३६
पुत्रः कन्या सुकन्या	१.१०.३२	पुनश्चैव प्रवक्ष्यामि	१.७.२३	पुनरेव तु तत्रासीन	३.५५.१	पुरंदरे दिवं याते	२.१२७.१४६	पुराणि दानवेन्द्राणां	२.६१.३४
पुत्रदारसहस्रं हि भ्रातानघ	२.७०.२६	पुनरेव लोकांश्च जयति	३.७३.२६	पुनरेव निकुम्भस्तु कृत	२.८४.२८	पुरंदरे विवं याते	२.१२७.१४६	पुराणे कथितास्तात	१.७.२२
पुत्रघोडोद्भवश्चापि	१.२०.११७	पुनरोऽगुहस्य राजपि	१.२०.२८	पुनरेवाब्रवीत्ते तु	२.६४.३६	पुरं प्रविशेद्युहंष्टाः	२.११७.२८	पुराणे नागराजोऽसौ	२.६२.४
पुत्रपोत्रा विवदन्ते	२.६७.४४	पुनरोऽगुहस्य राजपि	३.३६.२८	पुनरेवाब्रवीद्राजा सोमस्य	२.५२.४४	पुरमासादयामास युद्धं	२.६३.६०	पुराणे पोष्करे चैव	३.३२.६२
पुत्रः प्रतिरथस्यासीत्कण्वः	१.३२.५	पुनरोऽगुहस्य राजपि	३.८८.५	पुनर्जातोऽयमित्याहुः	२.१०१.३३	पुरवास्तु विचिन्वन्त्यः	१.५६.२४	पुराण्याकाशगानीव	२.८८.६४
पुत्रं चास्य परस्कृत्य बाल	२.४४.४५					पुरस्सरमहाभूतो	३.१२१.२	पुरादित्या महातेजास्तो	२.६७.५८

पुरातनानां देवानां ब्रह्मणः २.१४.३७	पुर्याः प्रियकरी सा वै २.५८.२०	पूजनीयापि तत्काले १.२०.१०१	पूर्णचन्द्रसपत्नेन २.६६.३६	पूर्वं पश्चिमजांश्चैव उत्तरा २.५२.५
पुरा ब्रह्मविजः शक्र १.४५.२३	पुनस्त्यपुत्रो द्युतिमान ३.३७.२४	पूजयामास तां वीरः २.१२०.३८	पूर्णचन्द्रानना दिव्या ३.३६.२६	पूर्वं नगरनिर्व्यूहमेते २.३५.४७
पुराविदोऽथ विश्वेश ३.१११.३६	पुत्रोऽस्य विरघो नाम ३.३७.२१	पूजयित्वा यथान्यायं २.८६.३६	पूर्ण युगसहस्रं तु १.७.६०	पूर्वं पक्षं सहस्राक्षः १.४४.१६
पुरा श्रुताथो दैत्येन्द्रः २.६३.१५	पुलिन श्रेणिबिम्बीढी २.४६.३७	पूजां तु विपुलां कृत्वा १.२६.५३	पूर्णस्तु धर्मसमयस्त २.१०.२	पूर्वं यत्र तु ब्रह्मर्षी १.३.१२२
पुराहं द्वारकां यातः २.१११.६	पुलोमा कालिका चैव १.३.६२	पूजार्थमथ संसारान् २.१२७.१३१	पूर्ण युगसहस्रान्ते ३.२१.७	पूर्वं स हि समुत्पन्नो १.३.१०
पुरा हि कश्यपो विष्णो १.५५.२१	पुलोमा तु महादैत्यस्ति ३.५०.१	पूजितः स निकुम्भेन दान २.८३.३१	पूर्ण युगसहस्रान्ते ३.३३.१४	पूर्वं हि या त्वया सृष्टा २.१२७.७६
पुरिकां नाम चर्मात्मा २.३८.२१	पुलोमा तु महादैत्यो ३.५३.६	पूज्यमानं तदा नागं २.१०१.३७	पूर्ण युगसहस्रान्ते ३.३३.२१	पूर्वमन्वन्तरे श्रेष्ठा १.३.५६
पुरी द्वारवती नाम ३.८०.३४	पुष्करस्थो महाराज ३.१२५.२२	पूज्यमानो महाबाहुः २.१०१.२१	पूर्ण युगसहस्रं तु १.८.२६	पूर्वमम्यचित्तादचैव २.६६.२६
पुरीद्वारे तु विज्ञाप्य १.२६.४६	पुष्करं पुण्डरीकाक्षो ३.१२१.२१	पूज्यश्च सततं ३.१२८.३३	पूर्ण वर्षसहस्रं तु ३.६८.१६	पूर्वमम्यागतं द्वारं केशवं २.७३.१५
पुरी पृथिव्या मुदिता मथुरा १.५४.२१	पुष्कसं पुण्डरीकाक्षो ३.१२१.२२	पूज्यो देवः पूज्यसे २.७४.२७	पूर्ण वर्षसहस्रं वै तं तु १.२७.१४	पूर्वमादीवकं युद्धे १.११.२०
पुरीं प्रविबिम्बुहृष्टाः २.३६.३४	पुष्करिण्यस्तद्भागानि २.१६.२२	पूतना नाम शकुनी २.६.२३	पूर्ण संवत्सरे दद्यात्सौवर्णं २.७६.६४	पूर्वमेव तु कृष्णाय कारितं २.४७.४५
पुरुकुरसं च वर्मजं १.१२.६	पुष्करे रमते विष्णुविष्णुरेव ३.२८.७२	पूतनानिघनादीनि कर्माणि २.२४.६२	पूर्ण संवत्सरे दद्यादेकैकं २.७६.६०	पूर्वमेव तु कृष्णेन गवां २.६.३३
पुरुजातिः सुधान्तस्तु १.३२.६४	पुष्करः शतपत्रैश्च ३.८४.१२	पूतनायां हतायां च कालिये २.२२.२	पूर्ण संवत्सरे देवि २.६५.३१	पूर्वमेव मयाख्यातं २.५१.३७
पुरुषं दिव्यरूपाभं ३.१७.५०	पुष्टिकामेन वर्मजं १.१६.६	पूतनायां बन्धो भंगो ३.१३४.१०	पूर्ण्यन्तां पयसा नद्यो द्रोण्यश्च २.१७.१३	पूर्वमेवावनिगते भागे १.५४.३
पुरुषो यज्ञ इत्येवं ३.१०.४	पुष्पदामावसज्याथ २.७६.५	पूतना शकुनी बाल्ये २.२२.२६	पूर्वजस्य मनोस्तात १.६.१६	पूर्वस्यां दिशि नागानां १.३७.२३
पुरुहूतस्तु पुरतो लोक १.४४.३	पुष्पमात्रस्य यद्दीर्यं ३.३०.७	पूरयामासतुर्वीरो ३.१२६.१८	पूर्वजातिषु यद्ब्रह्म श्रुतं १.२१.३६	पूषा नस्य रथाम्याशात् ३.५५.११२
पुरे पुरे नरपतिः कोटि १.५१.२१	पुष्पाकुलजलोपेता २.६८.७२	पूरयित्वा हृद सर्वं भोगे २.१२.७	पूर्वजस्तव गोविन्द पूर्वं २.३६.५०	पूषा मित्रश्च वरदो ३.१४.५८
पुरेऽस्मिन्पतिः कृष्ण २.३६.५१	पुष्पोष्चर्यैवासितशीत २.८६.३८	पूरावैशमहं ब्रह्मन् १.३१.१	पूर्वदेवभयं श्रुत्वा माकता १.४६.४८	पृच्छतस्तात यज्ञेस्मिन २.१२८.३६
पुरोहिताः शत्रुघ्नं २.१२६.६५	पुष्पचक्रानुलिप्तेषु केशरेषु २.४१.१६	पुरोः पुत्रो महावीर्यो १.३१.५	पूर्वद्वारे महाराज ३.६५.६	पृथक्त्वं गमितं ३.१६.१६
पुर्याः क्षिप्रं निवेशार्थं २.५८.१६	पूजनीया चकारासौ कि १.२०.७६	पूर्णकुम्भेश्च लार्जैश्च २.१२७.१०८	पूर्वपर्वतनिर्व्यू समेतेष्वायत २.४२.३६	पृथक्पृथक् निवासाश्च २.८८.८०

पृथगर्थेषु दत्तेषु लोकेस्ते	२.६३.१३	पृथुश्रवा पृथुवशा	१.३६.५	पोण्ड्रस्य वासुदेवस्यैव	२.५६.४	प्रकीर्णदामनीकेषु गास्तथै	२.२५.७	प्रजम्बुद्वीपेषु चापहस्ता	३.५२.५१
पृथग्वलः पृथग्वीरांल्लोक	२.८८.६	पृथुः श्रवा भूरिवामा	१.७.६४	पोण्ड्रस्य शिनिनप्ता	३.१००.२२	प्रकृतयोऽनुयास्यन्ति	२.३२.२१	प्रजज्वाल जल चैव	२.७५.१५
पृथग्वेन कीरव्य प्रद्युम्नः	२.७३.६	पृथुस्तस्मात्समुत्	१.५.२२	पोण्ड्रेण सुचिरं काल	३.१०१.२०	प्रकृतिर्या विकारेषु	२.१२७.८१	प्रजज्वाल स तेजस्वी	२.६४.१४
पृथिवि वायुराकाशमापो	१.४०.५६	पृथोर्वैज्यस्य चारुयानं	३.१३४.२	पोण्ड्रोऽथ वासुदेवस्तु	३.१०१.१८	प्रकृतिः सा मम परा	२.११४.१०	प्रजनाच्च मनुष्यान्वै	१.१.४०
पृथिवी चान्तरिक्षं	३.६६.१०	पृथोस्तु मुक्तो नाम	१.२०.२६	पोण्ड्रोऽथ वासुदेवस्तु	३.१०१.२	प्रकृत्याः प्रथमो भाग	२.७१.१५	प्रजानां पतयः सप्त	३.७०.१
पृथिवी चोद्भूता लाक्षा	२.१०६.६६	पृथ्वीवाक्यं च देशनाम	३.१३४.८	पोण्ड्रो वीर्यवता नेता	३.७४.१५	प्रकृत्या शीतलो वायुः	२.६३.६०	प्रजापतिकृतं मार्गमपास्य	२.६६.४८
पृथिवी निखिला राजन्	३.३४.६	पृष्ट एवं भविष्यस्य	३.३.४	पौरवी रोहिणी नाम	१.३५.४	प्रकीर्तितः स ते सर्वे	२.१४.१५	प्रजापतिश्चात्र	३.४३.१५
पृथिवीप्रविभागाय	३.३४.४६	पृष्ठतः सत्यभामा च	२.६४.६६	पौरवो वैष्णुदारिद्र्य वंदमं	२.३५.४१	प्रक्लिन्न पक्षास्त	२.६५.६	प्रजापतिस्तु भगवान्	३.३६.३६
पृथिवीप्रविभागाय	३.३४.४७	पृष्ठतोऽप्यनुगच्छन्ति	३.१११.१५	पौरवो वैष्णुदारिद्र्य वंदमं	२.४२.३०	प्रस्वेदमाना बहवः स्फोट	१.४३.२६	प्रजापतीनां दक्षं	१.४.५
पृथिवीं विद्यतीं दृष्ट्वा	३.३४.१६	पृष्ठवक्त्राः सुसन्निभाः	३.५६.२३	पौराणान्धुमया देव्या	२.८१.३८	प्रगृह्य शूलान्	३.५२.२६	प्रजापतेस्तु संकल्पात्संभूता	३.३६.५०
पृथिवी वायुराकाशमापो	२.१०६.६	पृष्ठेऽस्य वसवो देवा	३.७१.५१	पौरुषेण समायुक्तः	२.११६.१७२	प्रगृह्य तु गदां भूयो	३.६०.७०	प्रजारक्षणयुक्तेषु	१.४६.४६
पृथिवी विष्णुरित्येतत्	३.१११.४६	पेतुरार्ता वैपमाना गावो	२.१८.२५	पौरोगवोक्त्या विधिना	२.८६.५६	प्रगृह्य रुचिरं वज्रं	३.६४.१३	प्रजार्थमृषयो यस्य	१.२.२१
पृथिव्यां पृथुराष्ट्रायां	२.१६.५७	पेतुरुष्या महावीर्या	३.६४.२३	पोर्णमास्यां तु सततं प्राप्ते	२.७६.६६	प्रगृह्य हस्ते संभ्रान्तो	३.७१.१६	प्रजावानेति सायुज्य	१.१५.३८
पृथिव्यां पृथुराष्ट्रायां	२.५८.५१	पेतुरुक्ता सहस्राणि	१.४२.१६	पोलस्त्य प्रामतिः क्वचैव	१.७.६६	प्रचकम्पे ततः कृत्स्नं	२.८७.२६	प्रजासंहरणे घोराः	३.५५.६६
पृथिव्यां यत्कृतं	३.१७.१	पेतुर्यतासवः केचिद	३.६४.२५	पोलहः सप्त इत्येते	१.७.६२	प्रचिन्वतः प्रवीरोऽभून्मन	१.३१.६	प्रजाः सुजेति व्यादिष्टः	१.३.२
पृथिव्यां यदुवंशोऽयं	२.२३.६	पैतामहं तथा चक्रं	३.४४.८	पोलहस्तत्त्वदर्शी च	१.७.७६	प्रचेता हंसमाह्व	३.८५.३	प्रजया तेजसा योगात्	३.२१.१४
पृथिव्युद्धरणायै	३.३४.३४	पैशाचं राजसं रोद्रं	२.१२४.४५	प्रकाशं स्म कथास्तत्र	२.४७.६	प्रच्छन्नो मायया वीरो	२.६४.४६	प्रजां दक्षां शिवां सौम्यां	२.१२०.८
पृथुपुत्रो तु धर्मज्ञो	१.२.२८	पैशाचमस्त्रममितं	३.४४.१२	प्रकाशमद्य सौभाग्य	२.६५.३८	प्रच्छादयन्त वाणीर्धृत्वं	३.५७.५३	प्रणतार्तिहरः कृष्णः	२.५०.४६
पृथुरवे नमस्कार्यो	१.६.४६	पाण्ड्यद्रव्यवृन्दानि	३.५५.१५०	प्रकाशितं वै सहसा	१.२६.२६	प्रच्छाद्य रथपन्थान्मुत्	३.५८.२	प्रणम्य गह्वस्थोऽथ	२.७३.१६
पृथुर्वैज्यस्तदा राजा	१.६.१२	पोण्ड्रको वासुदेवस्तु	३.१०१.८	प्रकीर्णकेशी मृत्युवच	२.२.१२	प्रजगुर्देवगन्धर्वा ननुतुच्चा	२.८७.३६	प्रणम्य शिरसा देवी	२.१०७.१६

बौद्धविशेषपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

६६

प्रणम्य शिरसा पादौ	३.६७.१६	प्रतिगृह्य महादेवः	३.३२.२३	प्रतीच्या मुत्तरस्या	१.३०.१८	प्रत्युवाच यशोदा	२.६.१६	प्रदीवाहं कदाचित् कृष्णो	२.२१.१
प्रणम्याथ वक्षः प्राह	२.१२१.६६	प्रतिगृह्य स तां पूजां	२.११३.३	प्रतीच्छ देहि किं	३.७१.१७	प्रत्युवाच स तं कृष्ण	२.२६.६८	प्रद्युम्नः प्रथमं जज्ञे	२.१०३.५
प्रणम्यैव रसं दत्त्वा	२.६७.१२	प्रतिजग्मुर्दशाहस्तिं गृह्णा	२.३५.५३	प्रतीच्छेमाः स्वधर्मण	२.३७.६४	प्रत्युवाचाथ सा कृष्ण	२.२७.३३	प्रद्युम्नं नायकं कृत्वा	२.६२.५६
प्रणयाच्चापि कृष्णं मा	२.२७.३७	प्रतिज्ञातं मया कृष्ण	२.१६.७७	प्रतीपमाहुरन्नागानस्वावक्ष	३.५६.३६	प्रत्युचुस्ते ततो वाक्यं	२.११०.७२	प्रद्युम्नमग्रे सैन्यस्थ	२.८४.४
प्रणवं वाचकं मत्वा	३.८०.८७	प्रतिज्ञाय तु यो विप्रे	३.७१.३६	प्रतीपस्य तु राजर्वस्तु	१.२०.११	प्रत्युवस्य विदुः पुन मृष्टि	१.३.४४	प्रद्युम्नमथ कंसघ्नो वारयेति	२.७३.२४
प्रणाष्टचेतना मर्त्या	३.३.११	प्रतितस्तम्भिप्ररेऽप्योम्य	३.५४.४१	प्रतीपो भीमसेनस्य	१.३२.१०६	प्रत्येत्य द्वारकां विष्णु	२.६३.१	प्रद्युम्नविहितं रम्यं विमानं	२.६२.६१
प्रणाष्टशोका रस्यामः	२.१२७.१४३	प्रतिपालय मां सौम्य	२.७३.४	प्रत्यक्ष ज्ञानसंयुक्ता	३.११२.२०	प्रथमः पक्ष इत्येव	२.७६.१०	प्रद्युम्नः क्षरजालैस्तान्	२.१२२.६७
प्रणोदुः सर्वभूतानि	३.५६.४४	प्रतिप्रास्थानिकं कर्म	३.५४.१६	प्रत्यक्षं क्षुरसेनानां	२.१०१.३०	प्रथमादेव हन्तव्या	२.२.२	प्रद्युम्नशरपातेन	२.१०५.३४
प्रणोमनुः सुसंहृष्टो	३.१३०.५	प्रतिपातस्ततो ब्रह्मा ते	१.४५.६५	प्रत्यक्षमनुमानं च	३.४.७	प्रथमे मेरुसाकर्णे	१.७.६०	प्रद्युम्नश्च जयन्तश्च	२.६६.५८
प्रतप्तजाम्बू नद चित्र	३.६३.१२	प्रतिषोढुं न मां कश्चिद्	२.८७.१०	प्रत्यक्षमपि यद्वपुं	३.१११.३७	प्रदक्षिणावर्तशिखः	३.६२.७	प्रद्युम्नश्च मया दृष्टो	२.६३.२६
प्रतप्तो दह्यमानस्तु स शैलः	७.४२.६०	प्रतिविष्याच्च तांस्वैद्यः	२.५६.५६	प्रत्यक्षमपि यद्वपुं	३.१११.३७	प्रददौ दश धर्माय	३.२२.७	प्रद्युम्नश्च महातेजा	२.६०.१२
प्रतर्दनस्य पुत्रौ द्वौ वत्स	१.२६.७३	प्रतिविद्धममुं लोकं	३.१६.३६	प्रत्यंगि रसजा श्रेष्ठा	१.३.६५	प्रददौ ब्राह्मणाय	२.११३.२८	प्रद्युम्नश्चानिहृदश्च	२.१२७.१२०
प्रतापावनतास्सर्वे तव	२.३१.३०	प्रतिविद्धे मम महे मयेयं	२.१६.१६	प्रत्यपद्यत रत्नानि विविधानि	२.६३.३	प्रददौ वासुदेवाय प्रीत्या	१.३०.१६	प्रद्युम्नश्चापि नो बाधः	२.१२१.३०
प्रतापेन च तीक्ष्णेन	२.१७.७	प्रतिपिद्धेषु तुर्येषु मृबज्ज	२.३०.३८	प्रत्यागतिगुरुकुलादयोक्ता	३.१३४.१७	प्रदक्षितमसंहार्यं दृष्ट्वा	३.५५.७२	प्रद्युम्नः समराकांक्षी	२.१०५.१०
प्रतिभुवमुत्तश्चापि मृज्जयो	१.२६.२	प्रतिष्ठा धर्मराजस्य	१.१०.२३	प्रत्यानयस्व भद्रं ते	३.४८.२८	प्रदिशो विदिशश्चैव	२.१०६.६	प्रद्युम्नः सात्यकिश्चापि	२.७४.५
प्रनिगृह्य च तद्वाक्यं	३.२३.४६	प्रतिष्ठा सर्वभूतानां	३.४७.२४	प्रत्युक्तोऽहमनेराद्य	२.११०.८३	प्रदीप्तमिव तेजोभी	३.१३३.१४	प्रद्युम्नस्तु तं वायव्यैः	२.१०६.१५
प्रतिगृह्य ततो द्रोण	१.२०.७५	प्रतिष्ठितायां मेदिन्यां	२.३२.२५	प्रत्युदगतो गोपवर्द्धस्त्वही	२.५.३१	प्रदीप्तानीव दृश्यन्ते	२.१२४.३२	प्रद्युम्नस्तु महातेजा	२.१०७.१६
प्रतिगृह्य तु तत्पुष्पं	२.६५.१६	प्रतीक्षन्तस्तदा वाक्य	२.६४.२२	प्रत्युदगम्याध्वंमादाय	२.५३.१४	प्रदीप्तेन रथाङ्गेण	२.६२.३०	प्रद्युम्नस्तु महाबाहू	२.१०४.४८
प्रतिगृह्य तु तत्सर्वं	२.७६.८	प्रतीक्षन्तो महात्मानो	२.६४.२३	प्रत्युवाच ततो रामस्सर्वा	२.४६.१७	प्रदीप्तो ब्रह्मशिरसि	२.१२६.६३	प्रद्युम्नश्चिता राजन्	३.१२७.६
प्रतिगृह्य तु तां पूजां	२.७७.२२	प्रतीक्षमाणस्तत्पटस्थ	२.२८.८८	प्रत्युवाच ततो रामो	२.४६.५६	प्रदृश्यते भीक्षु यदा	२.६५.२६	प्रद्युम्नस्य च कण्ठे तु	२.१०७.२१

प्रद्युम्नस्य चतुर्भांग	२.६७.२६	प्रफुल्लस्य कदम्बस्य	२.४१.६	प्रभासस्य च सा भार्या	१.३.४६	प्रमाथगण शेषं तु	२.१२४.११	प्रवक्तुर्न्यायिरहितं तन्मतं	१.२८.३३
प्रद्युम्नस्य पुनस्तस्मादा	२.६१.४६	प्रबन्धः कर्मणामेवं तस्य	२.२२.३२	प्रभोपमर्दं मा कार्षीः	२.६४.६	प्रमुखे वासुदेवस्य	२.१२६.११२	प्रवरस्तु प्रहस्यन्मुवाच	२.७३.३८
प्रद्युम्नस्य रथोपस्थे	२.१०६.११	प्रबोधोत्तरसां माता	३.१४.६२	प्रभुमंहाभूतपतिर्महातेजा	३.७.८	प्रयच्छ ह्यभयं बाणे	२.१२६.११७	प्रवरस्यापि बाणेन शितेन	२.७३.६२
प्रद्युम्नस्य सुतो जज्ञे	२.१०३.२३	प्रभवं सर्वभूतानां धर्माणां	१.५.१३	प्रभुर्वाग्युत्थितो ब्रह्मन्	१.५५.२७	प्रयतिष्यामि देवेन्द्र	१.२८.२८	प्रवरो विश्वकर्माणी	३.५५.२५
प्रद्युम्नः स्याद्यथा भर्ता	२.६२.३४	प्रभवः स हि सर्वेषां	३.६७.६	प्रभुलोकहिताय	३.३४.४३	प्रयत्नं कुर्वन् शिक्षाणां यत्न	२.७३.५२	प्रवर्षोपरि गतो	२.१२२.१६
प्रद्युम्नेन तु सा माया	२.१०६.१८	प्रभातकाले नृपसत्तमो	३.१२६.४७	प्रभूनरहस्त्यश्चवर्मशस्त्र	२.५७.६६	प्रयत्नो युज्यते	२.११८.६१	प्रवाति चारान्तर	२.६५.१०
प्रद्युम्नेनानिरुद्धेन	२.१२७.५८	दमातायां तु शर्वया	३.७४.१	प्रमथानां गर्णधीमान्वृतो	२.८७.२५	प्रययो त्वरया युक्तो	२.१२२.५७	प्रवादयद्भिर्गन्धर्वैः	३.२७.१२
प्रद्युम्नेनैवमुक्ते तु तन्ननाश	२.६०.५४	प्रभातायां रज्ज्यां तु	२.४६.६१	प्रमथ्य तरसा कर्णं यतन्तं	२.८४.४६	प्रयातस्य तु मंग्रामे	२.१०५.२१	प्रवालजाम्बूनदक्षिण	३.५१.७०
प्रद्युम्नोत्तरमेतत्ते	२.६७.४३	प्रभाते पूर्णचन्द्रस्य	२.६६.२८	प्रमथ्य तरसा कर्णं यतन्तं	२.८४.४७	प्रयातः स्वेन सैन्येन	३.५५.२४	प्रवालजाम्बूनदभक्ति	३.५१.१२
प्रद्युम्नो दक्षिणे पाश्वर्	२.७३.७६	प्रभा धृतिः क्षमा	३.६५.१६	प्रमथ्य तां वरारोहं नरको	२.६३.८	प्रयाताः प्राग्विदं दिव्यं	३.६८.१७	प्रवासे राजबन्धे च	२.३.२६
प्रद्युम्नो धनुरादाय	२.१०५.३३	प्रभाया नहुषः पुत्र	१.३.६६	प्रमथ्य सर्वान्द्वैतान्	१.४१.६६	प्रयाते पृण्डीकाक्षे	२.६०.३०	प्रविचात्य महावीर्यः पादबे	२.५३.३५
प्रद्युम्नो नीयमानं	२.६३.४६	प्रभावकाले संप्राप्ते	१.४५.५८	प्रमदो मयश्च कुपयो	१.३.८७	प्रयाष्टु तिष्ठ गच्छाम्	२.६.१३	प्रविवेश ततो रामो	१.३६.२३
प्रद्युम्नोऽप्यथ मायावी	२.६०.५३	प्रभावज्ञास्तु ते वीराः	२.८८.५१	प्रममाथ तलेनाद्यु	३.५८.६१	प्रयुक्ते ब्रह्माशिरसि	२.१२६.६	प्रविवेश पुरं कृष्णो	२.१२२.४८
प्रधानं पुरुषो देवोऽहमाद्यस्त्व	३.१०.५६	प्रभावती तदा पुत्रं	१.६६.१६	प्रमाणं यद्धि कुस्ते	१.१६.२६	प्रयुध्येतां वज्रो तत्र	२.१२६.७७	प्रविवेश स संरब्धो	२.४.६५
प्रधानात्मा पुरा ह्येष	१.४२.७	प्रभावती भास्वरा	३.४१.५१	प्रमाणैर्विधि वीर्येण तेजसा	२.२८.११४	प्रलम्बनिघ्नं चैव	३.१३४.१२	प्रविवेशान्धको नाम घोर	२.६८.७७
प्रधमापशमास तदा	२.१२५.७	प्रभावतीमयोवाच प्रद्युम्नो	२.६६.३०	प्रमाथगणभूयिष्ठं	२.११६.११५	प्रलम्बं मुष्टिनैकेन यज्ज	२.६२.१७	प्रविशन्तं तु वेगेन मारुता	२.३०.१
प्रपद्ये देवतां तां तु	१.२६.२३	प्रभावती वदन्ती तु	२.६६.३४	प्रमाथगणभूयिष्ठं	२.१२२.५८	प्रलम्बं यं मृधे देवा	२.२२.२६	प्रविशन्तं पुरीं रम्यां	२.४५.१४
प्रपातप्रभवविश्व सखिन्द्रि	२.४०.२२	प्रभावत्यास्तु तं दृष्ट्वा	२.६४.५	प्रमाथगणभूयिष्ठे सैन्ये	२.१२२.३३	प्रलम्बश्च महाबाहो	२.१०१.४४	प्रविशन्तेव पप्रच्छ	२.२५.१४
प्रपातप्रस्रवोत्क्षिप्तो घूम	२.४२.६३	प्रभावं पश्यन्नाभस्य	३.७.१	प्रमाथगणमुख्याश्च	२.१२२.५२	प्रलम्बे निहते दैत्ये	१.१४.५६	प्रविश्य वज्रिनीं	३.५६.७७
प्रपावापप्रसन्नोदा उद्यानं	२.५८.४७	प्रभावहीनास्तथोक्थ्यो	२.१२४.३५	प्रमाथगणवंश्यस्य	२.१२६.१५८	प्रवक्तारस्मुनियतां नेतारो	२.२२.१६	प्रविश्य योगं योपात्मा	३.१२५.१६

धीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

६८

प्रविश्य स पुरं विष्णोः	३.११०.१	प्रवेशितं च तन्माल्यं	२.६३.५१	प्रसिद्धां महतीं देवीं	३.७३.५५	प्रहरन्ती ततोऽप्योन्यं	२.३६.१६	प्रह्लादस्य च तच्छ्रुत्वा	३.५४.१
प्रविश्य सुचिरं देशं	३.७७.३	प्रवेशिनश्च तैस्तैर्वै त्स	२.१२.१३	प्रसिद्धां सदा विष्णुरयुक्तं	३.११४.३३	प्रहरस्व महाबाहो प्रथमं	२.७३.१८	प्रह्लादस्य त्रयः पुत्रा	३.३६.३५
प्रविश्य हृदयं क्षिप्रं	३.१७.४५	प्रशान्तबलुके लोके शान्ते	१.४६.४७	दसीद देवलोकेश पाहि मां	२.५१.२०	प्रहर्तव्यो न राजाय-	२.५३.४६	प्रह्लादस्त च बाणोर्ध्वं	३.५६.६६
प्रविष्टा बरदा शोभ्या	३.६५.१५	प्रशान्तः स वनस्थस्तु	१.३६.१४	प्रसीद धर्मलोपश्च	२.१२७.६१	प्रहर्तुकामो विपश्चस्ते	२.२२.७७	प्रह्लादस्य शुभे मूर्धन्या	३.५६.२८
प्रविष्टे तु विलं कुण्ठे	१.३८.४०	प्रशान्त स्येव दीपस्य	३.३६.४	प्रसीद नाथ भीतास्मि	२.४६.४४	प्रहर्षमतुलं प्राप्ता	२.१२७.११४	प्रह्लादेन स्तुति शर्तः	३.६४.१६
प्रविष्टे तु मनी तात	१.१०.२०	प्रश्नमारो महांस्तात	१.४१.१	प्रसीद नाथ भीतास्म	२.३१.३४	प्रहर्षमतुलं लेभे	२.११७.११	प्रह्लादोऽश्वशिराः कुम्भः	३.७२.४
प्रविष्टी ती महावीर्यो	२.५५.६७	प्रसन्नः कल्पयामास	३.३२.५६	प्रसुप्तं बोधयेद्यो मां	२.५७.४५	प्रहर्षमतुलं लेभे	२.११६.१४३	प्रह्लादस्तु महाप्राज्ञः	३.५०.१३
प्रवृत्तचक्रः पापोऽसौ	१.२०.५६	प्रसन्नं वैवर्ण्यमादादि	२.११८.१६	प्रसुप्तश्चातिबिबृते किं	२.३१.४३	प्रहर्षोऽकुलनयना	२.११६.५६	प्रह्लादस्तु महावीर्यो	३.५३.२२
प्रवृत्तधर्माः संबृता	१.४२.३६	प्रसादजं ह्यस्य विभोर	१.४२.६	प्रसूतस्यायुरेन्द्रस्य	३.६५.१२	प्रहृन्वारयामास	२.१२६.६८	प्रांशुमिदं च काष्ठं च	३.६०.६०
प्रवृत्तं तस्य तच्छक्रम	१.२०.६७	प्रसादनार्थं लोकस्य	१.४१.१२३	प्रसूतिरुभयोर्न प्रसूतश्च	२.७२.५१	प्रहृष्य वचनं प्राह	२.१२३.८४	प्रांशोरेकोऽभवेत्पुत्रः	१.१०.३१
प्रवृत्तिः पुण्डरीकाक्षे	२.११६.१०	प्रसादं कांक्षामाणाश्च	३.१६.४०	प्रसूतो देवदेवेशो	३.४८.८	प्रहृष्टे प्रहरिष्यामि यथा	२.७०.४५	प्रांशोरेकोऽभवेत्पुत्रः	१.११.१०
प्रवृत्ते चाप्रवृत्ते च	३.२१.५	प्रसादं कुरु मे वीर याचे	२.४६.४७	प्रसूतश्चन्दनरसः कपोल	२.६६.३४	प्रहृष्टमुदितं सर्वमन्तः	२.३३.३२	प्राकारद्वारि संप्राप्तावर्चया	२.५५.७२
प्रवृत्तो युद्धयज्ञस्तु	३.५४.३	प्रसादं ते करिष्यामि	२.२.३०	प्रसूतश्चन्द्रनरसः कपोल	२.११.३३	प्रहृष्टवदनाः शोभ्याः	३.१३३.५४	प्राकारपरिक्षेपेतां गोपुरा	२.५५.१०६
प्रवृत्त्यन्निव शैलेन्द्रस्तोय	२.५३.३६	प्रसादं सागरा जग्मुः	२.१६.६६	प्रसूतं मधुरैर्वान्यं	२.१२७.६७	प्रहृष्टश्चैव भीतश्च	२.६.२०	प्राकारवप्रे विन्यस्य	२.६२.१२
प्रवृद्धचक्रो बलवान्	१.२०.४८	प्रसादश्चन्द्रमास्त्वैव	३.७१.४८	प्रसूतवैरगाधोऽयं प्रहर्षश्च	२.२५.३४	प्रहृष्टं राजसिंहैस्तरवधायो	२.५४.४	प्राकारेण प्रवृद्धेन	३.१३३.५
प्रवृद्धनक्षत्रगणा शारदा	३.३८.२४	प्रसादस्तव गोविन्द	३.७५.७	प्रसेनश्चाथ सत्राजिच्छ	१.३८.१३	प्रहृष्टो ब्राह्मणस्तत्र	२.११३.२६	प्राकारेणाकवर्णेन	२.५८.५३
प्रवृद्धशालाविटपं	३.६०.२२	प्रसादे ते ध्रुवा लक्ष्मीः	२.१२१.१४४	प्रस्फुरत्परिषास्त्रेण	३.६१.१२	प्रह्लादबलमत्युग्रं	३.५६.७८	प्राकारेणाकवर्णेन	२.६८.१२
प्रवेशयामास ततो जठरं	३.१०.६८	प्रसाद्य तु ततो रामो	१.३६.२६	प्रस्रवन्ति घना रक्तं	२.२३.३२	प्रह्लादम्या तिवीर्यस्य	३.५६.२६	प्राक्संख्या परिग्रहस्ता	२.२३.२८
प्रवेशयैनां भवनं पूज्यां	२.१०८.२६	प्रसाद्यमाना भर्त्रा सा	१.२४.६	प्रस्रवन्ती रणे रक्तं	३.५५.७६	प्रह्लादशम्बरमयैरनु	३.६५.३	प्रागेव च नरेन्द्रेण मायुरे	२.२४.५
प्रवेशस्तत्र देवानां नास्ति	२.६१.५४	प्रसिद्धाकाश गमनः शक्र	२.६१.३०	प्रस्वापनं प्रमथनं	३.४४.१५	पूह्लादस्तु महावीर्यः	३.५६.५१	प्रागेव वसुदेवस्तु त्रजे	२.५.१

प्राग्ज्योतिषपुरं चैव	३.४६.६५	प्राणैः प्रियतरो नित्यं	२.११६.८२	प्रादुर्भावेषु सर्वेषु भार्या	२.८१.१६	प्राप्ते दिनव्युपरमे	२.२५.१०	प्रावृट्प्रवृत्तिं संक्षय	२.१०.२१
प्राग्वंशकायो धृति	३.३४.३६	प्राणोऽग्नयः समानश्च	१.४०.५७	प्रादुर्भावे महारौद्रमस्त्रं	२.१२६.६२	प्राप्ते राजसमाजे तु	२.४७.२६	प्रावृषो वर्णनं चापि	३.१३४.११
प्राग्वंशं श्रोतुमिच्छामि	३.१६.१	प्रातः प्रविश्य राजेन्द्र	३.११०.१६	प्रादुर्भावे हनच्छात्रि	२.११६.१०७	प्राप्तोऽन्तकालो लोकानां	२.१८.२०	प्रासादं चैव हेमाम्	२.६८.४१
प्राङ्मुखश्चापि दैत्यैश्च	३.६१.२५	प्रातरेव जगामाद्यु	३.११३.२८	प्रादुर्भावे वचनं प्राह	२.११६.३५	प्राप्तोऽयं पुण्डरीकाक्षो	२.१२७.११८	प्रासादवरसंपन्नैर्युक्तं	२.६८.४०
प्राङ्मुखश्चाकनिर्मृक्तो मेरु	२.२६.१४	प्रादाच्च तस्मै भगवान्	१.१४.२७	प्राप्ते सलिलसंयुक्ता	२.११८.८३	प्राप्तुवन्ति नरा योगं	१.१६.१५	प्रासैः पार्श्वे लङ्घयन्	१.४३.२८
प्राङ्मुखश्चाकनिर्मृक्तमस्य	२.२६.३	प्रादात्कन्यां शुक्लस्मै	१.२३.६	प्रापयिष्यामि तत्सर्वं	२.६४.१७	प्राप्यते यदिहास्माभि-	२.१२७.१३२	प्रासैः पार्श्वे विततै	१.४३.११
प्राङ्मुखैस्त्रिभुवनैश्च	२.६.२७	प्रादाय कुण्डले दिव्ये	२.६४.५२	प्राप्तमालोक्य पात्रोऽयमिति	२.५०.२६	प्राप्य पुण्यतमाल्लौका	२.६४.५०	प्रासैः पार्श्वे तस्था	३.४४.१६
प्राचीनवर्हिर्भगवगान्	१.२.३०	प्रादुरासन्सहस्राणि	२.१२६.५६	प्राप्तयोवनदेहस्तु युक्तो	२.३३.२	प्राप्य संज्ञां ततो दैत्यः	२.१२३.१३	प्राहं वाक्यं स वाक्यज्ञो	२.१२१.२५
प्राचीनाग्नाः कुशास्तस्य	१.२.३१	प्रादुरासीन्महाधोरा	३.५५.१०५	प्राप्तयोवनदेहस्तु युक्तो	२.३४.२	प्राप्यादित्यालयं शक्रः	३.६६.३	प्राहिणोत्सहसा तस्य	३.५७.३४
प्राचीनामलका लोघ्रा	३.४१.६६	प्रादुर्भावे लयं चैव	३.१८.३२	प्राप्तयोवनदेहस्तु युक्तो	२.३७.२	प्राप्यावभृषमव्यग्रः सर्वं	१.२५.२८	प्रियकैः पुष्पितैर्गौरं	२.१६.१४
प्राचीं दिशमगो गत्वा	३.३५.५	प्रादुर्भावे संजाते	३.१६.५४	प्राप्तदारो महातेजा	२.६५.४	प्रायश्चित्तायतत्त्वज्ञा	१.१७.२८	प्रियङ्गुपाटलीवृक्षाः	३.४१.६५
प्राचेतसं ततो दर्शं	३.३२.३	प्रादुर्भावेः पुराणेषु	३.३३.१	प्राप्तयोवनदेहस्तु	२.१०६.२८	प्रायश्चित्तक्रियार्थं ते	१.१७.२६	प्रियं प्रोवाच वचनं	२.१०४.२३
प्राच्छादयेतामन्योन्यं	३.५५.१२०	प्रादुर्भावे गतो देवो जगतो	२.७१.२६	प्राप्तवन्तश्च दृश्यन्ते	३.५५.६१	प्रायश्चित्तं चरन्	१.१७.२५	प्रिय मिच्छसि चेतस्तु	२.६८.४
प्राच्यैश्च दाक्षिणात्यैश्च	२.३५.१०८	प्रादुर्भावे पुरस्कृत्य	३.७.१०	प्राप्तवानस्मि यं प्रीति	२.४०.३३	प्रायश्चित्तानि धर्मज्ञा	१.१७.२७	प्रिय संगमनं नाम त	२.७५.३१
प्राज्ञानां वचनं काले	१.२०.६४	प्रादुर्भावेसहस्राणि	१.४१.११	प्राप्ता किलेयं हि गवां	२.१६.१३	प्रायेण जितमित्येव	३.८१.८	प्रियहास्याः प्रियक्रोधाः	२.१०६.६१
प्राणयोनिस्तु भूताना	२.५८.६८	प्रादुर्भावानुराणेषु	१.४०.१	प्राप्ता निमेषमात्रेण	२.१२२.४६	प्रावततं नदी घोरा	३.५६.६	प्रियाभिः सह मोदन्ते	३.८४.१३
प्राणस्त्वै सर्वभूतानां	३.१३१.६	प्रादुर्भावे च वक्ष्यामि	१.४१.१५	प्राप्ता मां सागरे पूर्वं	२.४६.४६	प्रावततं युधि श्रीमान्	३.५७.१६	प्रियार्थं वामुदेवस्य	२.७४.३
प्राणानपि तयो राजा	३.११२.८	प्रादुर्भावे मुनिश्रेष्ठ मायुरे	२.६५.१	प्राप्ता रिष्टमिवात्मानं	२.२२.६	प्रावततं युधि संग्रामं	२.१२२.२६	प्रियार्थं मुमया साक्षात्परि	२.६८.१८
प्राणिनामुपभोगार्थं मंतः	३.८८.३०	प्रादुर्भावे तं भूतं	३.३३.४३	प्राप्ता वयं तत्कालमनया	३.३.२	प्रावततं यन्ति ते वर्णानां श्रमां	१.७.५५	प्रीतः शंखमुपात्मासीध	२.६६.६
प्राणिप्रहारेणैकेन	३.४१.१६	प्रादुर्भावे तं सर्वेषु स्वशरीर	२.७०.३६	प्राप्तास्मो विषवाशब्दं	२.३१.३२	प्रावततं ततो गावो	२.१८.५६	प्रीतः सुमनसा कुण्ठो	२.७७.२२

प्रीताऽऽत्मा दास्यति	१.२२.३५	प्रेषितं देवराजेन दिव्या	२.३५.५०	क	बद्धेन्द्रं सहसा मध्ये	३.२६.३	बभूवः परमोपेता	२.६६.६	
प्रीताश्च पितरो ये स्म	१.१६.३	प्रेषितं वज्रनाभस्य शाखा	२.६३.१४	फलत्वास्तीं दमाना च	३.१६.२०	बन्दिभिः स्तूयमानं च	२.५५.५७	बभूवूर्धामिकाः सर्वे	१.११.२६
प्रीताश्चैव वयं वीर यस्त्वं	२.४६.८	प्रेषितो बहुमिस्तादं जरा	२.५३.१८	फलं जित्वेह भोक्तव्यं	२.८५.३	वन्धनस्थो विमुच्ये	२.१२०.३५	बभूवुस्तु यदोः पुत्रा	१.३३.१
प्रीतास्मि तव भद्रं	३.६५.१०	प्रेषयन्तां क्षिप्नुम्यस्यानां	२.५८.१०	फलानां चैव सर्वेषां	२.७६.२७	बन्धुजीवाभिताम्रासु	२.१६.३४	बभौ वल्गुजनाकीर्णं	३.१३३.१५
प्रीतिप्रमाणानि हि	२.८६.८७	प्रेषवाजनं स संज्ञाय	२.६६.१३	फलानि तैः प्रयुक्तानि	३.२३.१३	वबन्ध हरदत्तोस्तैः पाशै	३.८४.६२	बभौ तस्य निविष्टस्य	२.४२.१३
प्रीतिमानभवद्वाजा यया	१.३०.२२	प्रोक्षितान्त्वस्त्विमान्मये	२.३५.११	फलानि बाध पुष्पाणि	३.७६.६५	वमञ्ज कानने वृक्षान	२.८६.२२	बभौ तस्य निविष्टस्य	२.३५.२६
प्रीतिमानस्तु मे विष्णु	३.११४.२८	प्रोक्षितान्त्वस्त्विमान्मयेमृत्यु	२.४१.६०	फले कलान्य जायन्त	३.४६.१८	वमञ्जजार्जुनवृक्षौ द्वौ	३.३८.२५	बभौ वैत्यो महाबाहु	३.५७.३६
प्रीतिवाक्यानि ह्युद्यानि	२.६६.२२	प्रोक्षुर्बिष्वेववरं विष्णु	३.१३१.३	फलैः परिणतैः सोम्यै	२.८०.१३	वमञ्जजार्जुनवृक्षौ द्वौ	२.१०१.३५	बभौ रवतक शैलो	२.६८.१४
प्रीतिसंज्ञानकालोऽयमिति	२.५०.५३	प्रोक्ष्यास्करवर्णानि	३.११४.३५	फलैः प्रबालैश्च बर्णमिदं	२.१६.४०	वमञ्जिजरे च यूपाद्यान्	३.३२.१८	बभ्राजुरधिकं गोपाः	२.१७.३६
प्रीतो वरान्वं शतशो	१.२६.५६	प्रोवाच देवो बाणोऽयं	२.१२६.१२२	फेनात् मुतपा जजे	१.३१.३२	वमञ्जिजरे रक्षान् केचित्	१.४७.३२	बभ्रुः दानपति चैव कृत	२.२२.१०
प्रीतोऽस्मि तव भक्तस्य	१.४१.४८	प्रोवाच परमक्रुद्धो	२.१२२.८६	क		वमाये स तु ताम्राक्ष	२.४३.५६	बभ्रु वक्त्रद्वयगुह्यो	१.२०.६१
प्रीतोऽस्मि तव भक्तस्य	३.४१.१०	प्रोवाच प्रणयात्कान्तिर्बद्धा	२.४१.२६	बदरी चैव विख्याता	२.१०६.३८	वमासे नभसो मध्ये	३.१३३.६	बभ्रु श्रेष्ठो मनुष्याणां	१.३७.१४
प्रीतोऽस्मि दशनादेव	२.१६.६३	प्रोवाच बाणं समरे	२.१२६.१२३	बदरीफलमात्रं वै	१.२८.२५	बभूवुरभिक्रुद्धौ	३.५६.६२	बभ्रुश्च प्रियमन्विच्छन्	२.१०२.१६
प्रीतोऽस्मि वः सुरश्रेष्ठाः	३.६८.४	प्रोवाच भगवानरुद्रः	३.८८.२	बदरीफलसंपूर्णं	३.७३.४१	बभूव तुमुलः शब्दः	३.५६.८७	बर्षाणां स सहस्रं तु	२.८२.२६
प्रीतो स्वस्त्य मुदने	१.५२.२५	प्रोवाच वचनं काले	२.७३.२७	बद्धगोधाङ्गुलित्राणां	२.८४.२	बभूव माधवसुतस्सत्त्वतो	२.३८.३७	बर्हेकेतुः सुकेतुश्च	१.१४.२६
प्रीत्या विसृज्य गोविन्दं	२.५७.६६	प्रोवाच वचनं किञ्चित्	२.१२३.३०	बद्धगोधाङ्गुलित्रैश्च	२.११६.१३५	बभूव मुगयाशीलः	१.३२.५०	बह्निर्कण्ठनिभप्रोबं	२.११६.२४
प्रीयते पठतश्चास्य	३.७२.१०७	प्लक्षतीर्थे पुष्कारिण्यां	१.२६.३२	बद्धा बाणपुरे वीरमनिरुद्धं	२.१२०.३७	बभूव येन विक्रम्य	१.२०.४५	बहिर्णां चैव विरुतं	२.२८.६१
प्रीयन्ते पितरस्तस्य	१.४१.१७३	प्लक्षगम षोडशपक्षशायी	२.६५.२३	बद्धा च रीक्षिणेयोऽयं	२.८४.६३	बभूव राजाध वमुक्च	२.६६.३५	बलतश्च क्रियातश्च	२.३०.१६
प्रेक्षागारस्य कंसस्य	२.२६.१५	प्लवमानानि विप्राय ततो	२.८०.२०	बद्धा तथा दानवमुग्र पौरुषं	३.८२.७	बभूव सुमहानादः	३.५८.८२	बलदेवं ततो रुक्मी मया	२.६१.४१
प्रेतभक्षाः प्रेतवाहा	३.८६.६	प्लुतवल्गित पादस्तु	२.२४.३०	बद्ध्वा बलि महावीर्यं	२.५५.६१	बभूवादार्शनस्सूर्यो भूमि	२.१०.४	बलदेवस्तु धर्मात्मा	३.१२४.१

बलदेवस्य तं क्रोधवर्धयन्ती	२.६१.४३	बलश्च बलकश्चैव	३.५४.१२	बलिहोमाश्च बद्धन्ते	३.२४.१	बहवः क्षत्रियाः शूरा मां	१.५२.५६	बहुवर्गधराक्षित्रा	३.३४.७
बलदेवस्य माहात्म्यमेतत्	२.६२.१६	बलश्चाप्यसुरश्रेष्ठः	३.५४.५८	बलिस्तानभिगच्छेह	१.३१.४०	बहवश्चैव राजानः	२.६२.६	बहूनां स्त्रीसहस्राणामष्टौ	२.१०.३.१
बलदेवाङ्गिकं पुण्यं	३.१३४.२२	बलश्चायं हलं घोरं	२.३६.७८	बलिस्तु राजा क्षुतिमान्	३.५४.६	बहवो ज्ञातयश्चैव यदूनां	२.५७.३१	बहूनि चापि दामानि	३.१३०.८
बलदेवेति नामास्य देवै	२.१४.५८	बलस्तु मधुपिङ्गक्षो	३.५३.१८	बलिस्तु सह शक्रेण	३.५३.२५	बहवो व्याघ्रयो युद्धे	३.५६.८१	बहूनि प्रतिलोमानि पुरा	२.७०.१४
बलदेवेन धर्मो नैष्टु	२.६१.४०	बलाकमाला कुलमात्य-	२.६५.२०	बलेन चतुरङ्गणे	३.२६.१८	बहिः प्रक्षालनं कुर्वन्	३.८०.७७	बहूनि विप्रयोगाणि मुनीनां	१.४५.२८
बलदेवेन रक्षार्थं	२.१०६.२	बलाग्रेण नियुक्तेन	२.४७.१४	बलेन च पराध्वनयशसा	२.१७.६	बहुजन्मनिष्ठत्वात्मा	३.११.१३	बहून्याश्चर्यभूतानि	२.११५.४
बलदेवो धनुश्चास्य	२.३५.८६	बलाग्नय विचक्रस्य	३.१०३.६	बलेन वपुषा चैव बाल्येन	२.१७.६	बहुतापः पुनर्भूत्वा	३.२८.२७	बह्व्यसन्त्यस्य कन्याश्च	२.८३.११
बलदेवो धनुश्चास्य	२.३५.६०	बलासूर्यमुल्लाश्चैव	३.४५.२	बलेनायं हतो दैत्यो	२.१४.५७	बहुत्वादुदपादश्च	३.१४.७	बाढं सुतो मे प्रवरी	३.१३.२८
बलदेवोऽपि धर्मात्मा	२.३०.६२	बलाहकाञ्जननिभं	१.४२.२१	बले पुत्रघातं त्वासी	१.३.७५	बहुत्वादिप्रभावानां	३.१७.१६	बाढमित्येव सह तं दुर्दिना-	१.५२.१
बलघान्त्स तु दैतेयो	३.२६.१	बलिनं रूपसंपन्नं	३.७३.२१	बले पुत्रेण बाणेन	२.१२१.१०३	बहुनात्र किमुक्तेन	१.७०.१६	बाढमित्येव ह्ययं स्वः प्रति	२.३७.३७
बलभद्रस्तथा मत्तः	३.११३.१४	बलिनस्सन्निष्ठे तु न	२.३६.८	बलेः पुत्रो महावीरो	२.११७.३६	बहुनात्र किमुक्तेन	३.१११.७०	बाढमेव प्रवक्ष्यामि	२.६८.१२
बलभद्रोऽप्य हंसेन	३.१२३.२	बलिना कालकल्पेन	३.५५.५६	बलेर्बलवतः पुत्रो	२.११६.५	बहुभिः शस्त्रनिस्त्रिंशं	३.३८.३१	बाणं किं गज्जंसे	२.१२६.४६
बलं च बाल्ये क्रीडा	२.२०.६	बलिना तु सुराः	३.६४.१	बलेर्बलवतो यज्ञे बलिना	१.४१.८०	बहुभिः सह गन्धर्वैः	३.६६.१०	बाणः क्रोधात्प्रज्ज्वाल	२.११६.१३१
बलं चापूजयद्देवः	२.१२७.१००	बलिना दैत्यमुख्येन	३.६६.४७	बलेर्बलवतो यज्ञे	३.४८.२	बहुमानो पमान्यासु	२.६६.४२	बाणं क्षुब्धघनुष्पाणिः	३.५७.४५
बलं जयस्व दैत्यानां	२.४१.१७	बलिपुत्रो रणश्लाघी	२.११६.६	बलेः स्त्रो ब्राह्मणेभ्य	२.१२४.५२	बहुयाचनको लोको	३.३.२६	बाणं त्रायस्व देव त्वं	२.१२६.१०८
बलं तदवशेषं तु	३.५८.५०	बलिं वैरोचनि चैव बद्धा	२.४६.३६	बलेः सुतो महावीर्यो	२.११५.१२	बहुयोजनविस्तीर्णं समुद्रं	२.८८.७७	बाणः प्रीतमनास्त्वैवं	२.११६.७४
बलं समर्द्धभग्नं च कृष्य	२.३८.६१	बलिद्विजेभ्यः प्रयतः	३.५१.८६	बलेस्तु वचनं श्रुत्वा	३.७२.६४	बहुरत्न समीचीनां	२.१०२.३३	बाणं बाणं प्रनृत्यस्वं	२.१२६.१४५
बलं हि रागद्वेषाभ्यां	३.२३.४६	बलिर्विरोचन सुतो बाण	३.३६.३६	बलोन्मतोऽप्य बाणोऽसौ	२.१२५.६	बहुरूपा विरूपा च अनेक	२.३.५	बाणसंरक्षणपरा हन्मि	२.१२६.११४
बलयश्चोपकल्पयन्तां	२.२८.१४	बलिर्विष्णुपराक्रान्तो	२.११६.४४	बलवो वस्त्रसंवीतो	२.२६.२२	बहुलाणि च सैन्यानि हन्तुं	२.५५.६६	बाणं संरक्षणं कर्तुं	२.१२४.१६
बलवान्मदलोलः क्षद्वचःपलः	२.२८.३१	बलिर्वैरोचनस्तत्र	३.४२.१०	बस्ति क्षीवं कटीदेशं	३.१७.५२	बहुवर्णैः सुधूमैर्विरिन्द्रा	३.१८.६	बाणः समरसविग्न	२.१२६.८३

वाणस्य चेन्द्रदमनो	१.३.७८	बालाविभो सुचवला	२.२८.२४	बाहुयुद्धमिदं रङ्गे	२.३०.१२	बुधस्य तु महाराज	१.२६.१	ब्रह्म च ब्रह्माण्डचैव	२.११४.१८
वाणस्य ब्रुवतः क्रोधाद्	२.११६.१४६	बालिषा बत पूयं वै	१.३.१७	बाहुना मुत्तमाङ्गानां	३.३६.६	बुधेन तात दान्तेन नित्य	२.२३.१३	ब्रह्मचर्याद्ब्रह्माणस्य	१.४५.३७
वाणस्यास्याभयं दत्तं	२.१२६.१३८	बालेया ब्राह्मणाश्चैव	१.३१.३५	बाहोर्व्यसनिनस्तात	१.१४.३	बुधेन पश्चिमा संख्या	२.२३.२६	ब्रह्मचर्येण मौनेन	३.६७.२५
वाणस्योत्तमशर्वस्य	२.१२७.७	बालोऽयं मम पुत्रेति	२.७०.३६	बाह्यतो ववूषे	३.४५.२५	बुभुक्षा वा पिपासा वा	२.६५.२६	ब्रह्मचर्ये स्थितं धैर्यं	१.४५.३८
वाणानीकानि सहसा	२.१२२.४६	बालो वा यदि वा बृद्धो	२.३०.१५	बाह्मिकस्य सुतश्चैव	१.३२.१०८	बुभुक्षितः श्रमातश्च	३.१२६.२४	ब्रह्माणस्तदहः प्रोक्तं	१.८.२१
बाणेन मायामास्थाय	२.१२१.८५	बाल्यात्प्रभृति यो	३.७४.८	बिधिविहितमशक्य	३.६.४	बृहद्भयः सुतस्तस्य	१.३१.५२	ब्रह्माणस्तु सुता देवा	१.७.७२
बाणेनमायामास्थाय	२.१२१.८७	बाल्यात् प्रभृति रामेण	२.११०.२	बिभर्ति हृदये या	२.११६.३६	बृहति चारुसर्वाङ्गी तन्वी	२.५६.३६	ब्रह्मणा देवदेवेन सार्द्धं	१.४६.१
बाणेन सार्धं समयो	२.१२७.८८	बाल्याद्वा यदि वा	१.६.२७	बिभ्रुश्चैव बाणैस्ते	३.३२.१६	बृहत्कीर्तिमहाजिह्वः	१.४१.८३	ब्रह्मणा विहितं दिव्यं	२.१२६.५८
बाणे संयोजयाधु	२.१२६.८७	बाल्ये केलिकिलस्सर्वो	२.५.१०	बिभ्रुश्च च त्वं कमलो	२.८६.३६	बृहत्क्षत्रस्य दाय्यादः	१.२०.१६	ब्रह्मणा वेदविद्वांसः	३.१७.४१
बाणैर्बाणांश्च चिच्छेद	२.६०.१६	बाह्यो विविशश्चास्य	३.७१.४७	बिभेद केशिनं शक्यथा	३.५८.७७	बृहत्त्वाद्वबृंहणत्वाच्च	३.८८.४६	ब्रह्मणश्चिन्तयानस्य	३.१८.४
बाणैश्च भिन्नमर्मणो	३.१३३.४१	बाहुष्माणेन शूराणां	२.३०.३६	वित्वा मृतफलैर्नित्यं	२.७८.३०	बृहद्भूयस्य भस्मेन	२.५६.६०	ब्रह्मणा सह पुत्रेण सपौत्रेण	२.६६.४७
बाणो ध्वजं समाश्रित्य	२.११६.१७८	बाहुदण्डेन कृष्णस्य	२.१८.४६	विल्वोदकेश्वरं देवं	२.८४.५६	बृहद्वर्मेति विख्यातो	१.२०.१६	ब्रह्मणोक्तस्तदा भूयः	३.१४.१२
बाधन्ते वृषभा गाश्च	२.८७.३१	बाहुना कृतदेहस्य केशिनो	२.२४.४८	विल्वोदकेश्वरस्याथ	२.८५.७१	बृहत्समति महात्मानं	२.७२.१७	ब्रह्मणो नियतं कर्म	३.१७.१७
बाध्वानामपि तथा भेद	२.२२.६६	बाहुमहरणो तो तु चैरतुस्तत्र	२.४३.२	विल्वोदकेश्वरेणामाज्यतः	२.८५.५३	बृहत्सतिदत्तध्वश्च	२.१०६.८७	ब्रह्मणोऽपि गरीयांसं	३.६१.३०
बाध्वानासगुणानिच्छेदे	२.८१.१	बाहुभिः परिष्ठाकारै	३.५८.६६	विल्वोदकेश्वरो देवः प्राह	२.८५.५८	बृहत्सतिर्महातेजाः पात्रं	१.६२.११	ब्रह्मणो वरदानेन	३.६६.४६
बाध्वथा निहता येषां	२.५६.५३	बाहुभिर्बहुधा वीरान्समन्ता	२.३५.८७	विल्वोदकेश्वरो नाम	२.७४.४०	बृहत्सतिवचः श्रुत्वा सर्वे	२.८६.३८	ब्रह्मणोऽङ्गस्तु विस्तारं	३.१५.१२
बाराहः पर्वतो नाम	३.३६.२	बाहुभिर्मुष्टिभिश्चैव	३.५७.२८	वीजानामा कृति	३.४.३६	बृहत्सतिस्त्वेवमुक्त्वा	२.७२.२०	ब्रह्मण्यदेवः सर्वतामा	२.७१.२८
बाल भावेन पुत्रेण चालितं	२.५१.४	बाहुभिः शस्त्रनिस्त्रिशो	१.४७.४४	बुद्धिप्रियाय बुद्धाय	३.६०.२५	बृहत्सतेः स वै भार्या	१.२५.३०	ब्रह्मतीर्थं रामतीर्थं	२.१०६.४२
बाला मतिमतां	३.६६.७०	बाहुभिः समसज्जेतामायसैः	३.५४.७८	बुद्ध्या प्रत्यक्षधर्माणो	१.७.५४	बृहत्सतेस्तु भगिनी	१.३.४५	ब्रह्मतेजोमय दिव्यं	२.११४.६
बालां व्रतवतीं कन्या	२.६०.७०	बाहुभिस्तुलयन् व्योम	१.४६.५३	बुध इत्यकरोन्मास	१.२५.४५	ब्रह्मघोषेण महता	३.२३.२६	ब्रह्मतेजोमयो युक्तः	३.१७.४६

ब्रह्मदण्डी इति स्थानो	३.२६.५	ब्रह्मसूत्रोक्तकारः स्वप्नेव	१.५०.१२	ब्रह्माणन्मयावन्त	३.१३३.२०	ब्राह्मणेभ्यो ददौ वित्तं	२.५४.८	भक्तोदयेन्धनैः क्षीणाः	२.४२.४७
ब्रह्मदत्त प्रभाते त्वं	१.२४.१४	ब्रह्मयज्ञं तु यजते	३.१६.६	ब्रह्माण्डलोभणो राजन्	३.६६.१३	ब्राह्मणैर्ब्रह्मविद्भिश्च	३.१६.२३	भक्षयन्तः प्रवर्तन्ते	३.६६.४
ब्रह्मदत्तं महीपालं	३.११३.३	ब्रह्मयोगेन योगज्ञः	३.२०.५	ब्रह्मा ततो जगामाद्य	२.७४.११	ब्राह्मणैश्च महाभागं	३.६६.२१	भक्षयन्तोऽथ पिशितं	३.७८.१६
ब्रह्मदत्तसुतार्थं च रत्नानि	२.८३.४३	ब्रह्मयोगी प्रसूतस्य	१.५५.३३	ब्रह्मा त्वं सृष्टिकाले	२.८८.३१	ब्राह्मणो नाभिहन्त	२.७३.३७	भक्षयन्परान्वृष्णीन्	३.१२६.११
ब्रह्मदत्तस्य तनयः स	१.२४.१	ब्रह्मरूपं शुभं शान्तमक्षरं	३.१०७.१४	ब्रह्मा देवगणाश्चान्ये	२.७१.१६	ब्राह्मणो ब्राह्मणत्वाच्च	३.१०.७	भक्षयन्मांसपिटकं	३.८१.७
ब्रह्मदत्तस्य भार्या तु	१.२३.२५	ब्रह्मर्षयश्चैव नृर्षयश्च	३.५२.२५	ब्रह्मासृजद्यो भुवभोत्तमोत्तमं	२.७२.४३	ब्राह्मणोर्त्स्वरं कृत्वा	२.११२.१२	भक्षयामास सहसा	३.१२६.१०
ब्रह्मदत्तस्य राजेन्द्र	१.२०.१४०	ब्रह्मर्षादिन्ययो दीक्षा	२.३.१६	ब्रह्मास्त्रमथ कौबेरमासुरं	३.१२७.४४	ब्राह्मण्यभावा नश्यन्ति	३.८.१३	भक्षयित्वा ततो वैशात्	३.११०.३
ब्रह्मदत्तं ति विख्यातो विप्रो	२.८३.२	ब्रह्मवादी पराक्रान्तः	१.२६.२	ब्राह्मणं चक्षुषा पश्यन्	३.१०६.३	ब्राह्मण्याः सृष्टिकालोऽथ	२.१११.१२	भक्ष्यं भोज्यं च पेयं च	२.८६.५६
ब्रह्मदत्तेन यत्प्राप्तं	१.२१.२	ब्रह्मवृद्धो वयोवृद्ध	३.२३.२०	ब्राह्मणः सर्वथा पूज्यो	३.८३.११	ब्राह्मीं सृष्टि समाधाय	३.२८.१५	भक्ष्यभोज्यानि पेयानि	२.८८.५५
ब्रह्मदत्तो नरपतिः किबीर्यः	१.२०.७	ब्रह्मशापाभिभूता सा	१.२६.१३	ब्राह्मणस्तपसा सिद्धो	२.७३.३२	ब्राह्मणं विप्रान्वसति	३.२६.२६	भक्ष्यमाणः किलाङ्गेषु	२.५७.३७
ब्रह्मदत्तोऽभवद्राजा	१.२०.३	ब्रह्मसम्बन्ध संबद्ध	३.१६.२	ब्राह्मणस्यापि दातव्यं	२.७६.२२	ब्राह्मे तपसि युक्तानां	२.१६.३४	भक्ष्यं मांसैश्च पेयैश्च	३.१३२.८०
ब्रह्मदत्तो महाभागो	१.२०.१२	ब्रह्मसूत्रपदां बालीं	३.११८.१५	ब्राह्मणाः क्षत्रियाश्चैव	१.२६.८	ब्राह्मे दिवसपर्यन्ते कल्पो	१.८.२३	भगदत्तो महासेन	२.५६.८
ब्रह्मदत्तो महीपालो	३.१२७.२८	ब्रह्महत्याविनाशार्थं	३.७६.२३	ब्राह्मणानां प्रभावंश्च	३.१५.४	भुक्तां वश्रभुतं वाक्यं हेतु	२.३६.५	भगः प्रस्फुरमाणीष्ठ	२.५५.११७
ब्रह्मदेवः पशुपति	३.४३.१२	ब्रह्महा भ्रूणहा गोघ्नः	३.१३५.१६	ब्राह्मणानां विनोतानां	३.१७.६६	भुक्त्वा यथातत्त्वं गोप	२.४६.२०	भगवन्किं मया कार्यं	२.५८.६१
ब्रह्मदण्डशोऽहं विमना	१.२८.२६	ब्रह्माणं कपितं चैव	३.३६.१४	ब्राह्मणार्थं मदर्थं च कुर्व	२.११३.७	ब्रूहि नारद तत्त्वार्थं	२.११०.२६	भगवन्केन विधिना	३.१३२.१
ब्रह्मन् खिले वर्तमाने	३.३०.१	ब्रह्माणं चाब्रवीद्रूढो	२.१२५.२१	ब्राह्मणा वेदविद्वांसो	३.३१.६	ब्रूहि मर्त्यं यथातत्त्वं	३.८०.६	भगवन्क्षुतोमिच्छामि	२.५७.१
ब्रह्म पर्यञ्चरत्नत्रयं विशः	१.४१.१४५	ब्रह्माणं परमं वक्त्राद	३.१०.६	ब्राह्मणाः शुचयो दांता	३.१६.१६	भक्तप्रियाय भक्ताय	३.८७.२२	भगवन् जामदग्निं त्वाम	२.३६.२८
ब्रह्मभावे च तं विद्धि	३.१६.११	ब्रह्माणं वीक्ष्य ते सर्वे	३.६६.४५	ब्राह्मणाः स्तोत्रससिद्धा	३.२२.१३	भक्तिनम्रो महात्मानो	३.१०२.१५	भगवन् ह्रियतामस्या	१.५३.२
ब्रह्मभ्यां सहितः सोऽथ	३.१४.१७	ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा	१.८.३०	ब्राह्मणीन्द्राणि रुद्राणि	२.१२०.४४	भक्तिनमनां वयं विष्णो	३.८३.५	भगवन्द्भुतमिदं निवृत्तं	१.४५.६७
ब्रह्मलोके च किं स्थानं	१.४६.३	ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा	३.३३.१८	ब्राह्मणेन विनीतेन	३.१७.६०	भक्त्या प्रीतोऽस्मि	३.८३.१३	भगवन्न्यस्तशस्त्रो	१.११.४२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१०४

भगवन्पदि तुष्टस्व	१.२६.२५	भजमानस्य संजग्यो	१.३७.३	भर्ता तु मम यक्षेव	२.११८.३४	भवनाकारविटपं लता पुष्प	२.११.२१	भवानपि च सर्वेषां	३.२२.२२
भगवन् श्रूयतां वाक्यं	२.११६.६	भजासनं द्विजश्रेष्ठ	२.६६.३८	भरापहं धर्मभरावहं च	२.८६.७७	भवनाशमयं देवः	३.८६.११	भवानिन्द्रश्च धाता च	३.६४.३
भगवन्सन्निकर्षं ते	२.११६.१२	भज्यमानेष्वनीकेषु	२.१२२.७१	भर्ता देवः सदा स्त्रीणां	२.७८.१५	भवन्तं शरणं प्राप्य देवानां	२.५१.२२	भवानी तत्र मे देव	३.८८.७
भगवन्सर्वभूतेश	२.११४.१७	भद्रकारो भद्रविन्दः	२.१०३.११	भर्तारं पतितं हृष्ट्वा	२.३१.१	भवन्तं शरणं प्राप्य नाति	२.५१.२४	भवाभ्यामप्रदत्तैव	२.१२१.१२७
भगवन्सानुरक्ता च	२.११६.८८	भद्रप्रियाय भद्राय	३.८७.३२	भर्तुं राज्ञां समालम्ब्य तथा	२.६३.३	भवन्तमाश्रिताः कृष्ण	२.१२१.२१	भवान्प्रभवते तस्य	३.६६.४८
भगवन्स्वतःप्रसादेन वेगात्	१.५३.३०	भद्रं ते संतरिष्यामो	२.३६.५६	भर्तुं हृष्ट्येन कर्तव्यं	२.७८.१२	भवन्तमुपश्रुत्वा देवत्वं	२.५०.८४	भवान्ब्रह्मा च रुद्रश्च	३.४७.२६
भगवानपि गोविन्द	३.११३.२	भद्रश्रेष्ठस्य पुत्राणां	१.३२.२७	भर्तुं हृष्ट्येन नारीणां	२.६६.५४	भवन्तस्सर्वकार्यज्ञा वेदेषु	२.२२.१२	भवान् सर्वत्र कुशलः	३.६२.५
भगवानपि गोविन्द	३.१२०.१८	भद्रश्रेष्ठस्य पुत्रेण	१.२६.७१	भर्तुं रूपेण नातुष्यद्रूप	१.६.३	भवन्ति सुभगाश्चायस्ति	२.७६.३४	भवान्मुरगणान् सर्वान्	२.१२१.११०
भगवानपि तेनैव रूपेणा	२.१७.२५	भद्रश्रेष्ठस्य पुत्रो वं	१.२६.६६	भर्तुं लोकान्त्रजत्येव	२.८१.११	भवन्तो भ्रातरोऽस्माकं	२.६१.३७	भविता बाण युद्धं वं	२.११६.३१
भगवान् सर्वभूतानां स्वयं	१.४१.६१	भद्रश्रेष्ठस्य पूर्व तु पुरी	१.३२.२६	भवकाले भवत्येव लोकानां	१.५०.२२	भवन्तो हि यथाकामं	२.१.२६	भविता सर्वमेतत्ते	२.१२६.१६२
भगवान्सर्वभूतानां	३.४१.२३	भद्रश्रेष्ठस्य पूर्व तु पुरी	१.२६.३३	भवतां पुण्यकीर्तिनां	२.१०१.१	भवन्तो निर्भयो भूत्वा	३.११६.६	भविता सहितेभर्ता	२.११८.३०
भगवन्मरयोभीर्ममप्रमेयं	३.५५.१२१	भयं त्वज्जन्मममराष्ट्रभय	१.४१.७३	भवतां साधुवृत्तानामावाधं	२.५२.४०	भवन्तो मम विख्यातो	२.२८.२०	भवित्री द्वापरं प्राप्य	१.१८.५०
भगिनि बलदेवस्य रजनी	२.३.१०	भयात्तस्यासुरेन्द्रस्य	३.५५.२३	भवता रक्षणं कार्यं	१.११.२८	भवन्तो मम विख्यातो	२.२८.२०	भविष्यति च वः	३.६७.२
भगिन्यो पृच्छ भद्रं ते	२.६६.३२	भयात्तस्योरगपतेनयिं	२.११.५२	भवता रक्षितो गावो	२.१६.४१	भवन्तो मम विख्यातो	२.२८.२०	भविष्यति च विस्तीर्णा	२.५८.३३
भगीरथमुनो राजा श्रुत	१.१५.१७	भयात्पतगराजस्य सुपर्ण	२.११.५१	भवतोरपि युद्धं तु प्रवृत्ते	२.३६.७१	भवन्तो मम विख्यातो	२.२८.२०	भविष्यति तदा तेषां	३.४४.१
भग्नं बलं ततो हृष्ट्वा	२.१२४.२५	भयाद्ब्रह्मस्य महतो	२.३२.३५	भवत्यम्बचिते राज्ञां सर्वेषां	३.५३.२१	भवन्तो मम विख्यातो	२.२८.२०	भविष्यति नरेन्द्रोर्वक्षतशो	२.३५.१४
भग्नमायतनं हृष्ट्वा	१.२६.६०	भयेष्वभयदं व्योम्नि देवा	१.४२.२८	भवत्यविषया चैव सुभगा	२.८०.८	भवन्तो मम विख्यातो	२.२८.२०	भविष्यति पुरी रम्या	२.५८.४२
भग्नमूर्द्धास्थिमस्तिष्को	३.७२.७५	भरताश्च सुता जाता	१.३३.५३	भवद्भिरनुचिन्त्येदं क्रियतां	२.४८.३८	भवन्तो मम विख्यातो	२.२८.२०	भविष्यति युगे तस्मिन्	१.१८.५१
भक्त्या क्षूलं गदाघ्रेण	३.५७.६६	भरद्वाजः स्थूलशिराः	२.१०६.६१	भवद्भिरननुचिन्त्येदं क्रियतां	२.११६.११३	भवन्तो मम विख्यातो	२.२८.२०	भविष्यत्यफलो हर्षः	३.३३.३१
भजमानस्य पुत्रोऽयं	१.३८.१	भरस्व पुत्रं दुष्यन्त भाव	१.३२.१२	भवद्भिरनुचिन्त्येदं क्रियतां	२.१८.६	भवन्तो मम विख्यातो	२.२८.२०	भविष्यन्ति च कामानाम	३.४४.३

भविष्यन्ति नरा राजन्	३.१३५.६	भाण्डागारायुवा गारे	३.४६.२५	भार्याणां च सहस्राणि	२.७५.४४	भीताकस्मान्निवर्तस्व	२.३५.७५	भुक्त्वा चावमृषे कृष्णः	२.१७.२३
भविष्यं चैव भूतं	३.६३.५	भाति चैत्ररथं चैव	२.६८.२०	भावनिस्पन्दमधुरं गायन्त्य	२.२०.२६	भीतोऽहं देव कंसस्य	२.४.२३	भुक्ते य एको विभुर्जगतो	२.७२.३२
भविष्यं पुष्करं चैव	३.१३४.२८	भाति स्म सरयो राजन्	३.१३३.५१	भावः सद्धर्मशीला	३.४०.१०	भीमको ग्राहकश्चैव	२.१०६.८०	भुजाभ्यामाददानस्य	३.५५.६०
भविष्यसि हरेर्वंशो न	२.८५.३६	भानवस्तत्र देवाश्च	१.७.२०	भावी स्वयंवरस्तत्र तस्याः	२.४७.७	भीमगम्भीरनादेन	३.५१.३	भुजासक्तेन युगुभे	२.३०.५
भविष्याश्चैव राजानः	२.५१.४६	भानुमत्यापहरणं विजयं	२.६१.१	भाव्यः सोऽनागते	१.६.६०	भीमवोषमहाघोर्वै	२.६८.३२	भुवनं वैनतेयस्य सुवर्णस्य	३.४६.५०
भवेदापस्तु यन्मित्रं	२.११८.७८	भानुमत्यापहरणे देहोऽस्यैकोऽ	२.८५.४१	भाषिता राजघर्माश्च	२.३६.३	भीमनक्तानुलिप्तङ्गी कूर्म	२.११.३६	भूतपूर्वश्च मे मृत्युस्ततः	२.२२.३३
भवेद्वि मे पतिकुलं श्रेष्ठं	२.६२.३२	भानुमत्याश्च हरणं निकुम्भ	२.८६.२	भासयामास सर्वाणि	३.५४.३६	भीमप्रहरणं वीरं त्येन्द्रः	२.१२६.३४	भूतमग्न्य भवज्ज्ञानं	१.७.५१
भवेद्यदि न नीतः स्यात्	२.१०८.१७	भानोरेव तथा रण्ये वसत्य	२.६०.५	भासाभिवादानुमूर्तः	२.५.२०	भीमवेगर वैश्चान्यै	३.५१.४८	भूतभय्योद्भवो नायः	३.१६.६
भवेयमहमेवार्कः सोमो	३.४१.१७	भानोस्तु भानवस्तान	१.३.३३	भासुरो भस्मनाच्छाद्य	३.२८.४	भीमसेनास्त्रयो राजन	१.३२.१०५	भूतं भव्यं भविष्यं	३.४१.३३
भवेयमहमेवार्कः सोमो	१.४१.५३	भान्ति भिन्नाञ्जननिभाः	३.५१.६७	भास्करपविमे दिव्ये दिव्या	२.५०.८०	भीमेनेयं पुरी तेन राज्य	२.३८.४२	भूतं यस्माञ्जगदत्यन्त धीर	१.७४.२५
भस्मना गुण्ठितः पादो	२.१२१.३२	भाभिर्भूषणपंक्तीनां दीप्तो	२.४४.१०	भास्कराकारमुकुटः	१.४६.४६	भीमो विदभंस्य सुतः	१.३६.२३	भूतयक्षगणाश्चैव	२.१२६.३२
भस्मप्रहरणो रौद्रः	२.१२२.७२	भारतं त्वयि चायत्तं	२.१६.७६	भित्त्वा तु पृथिवीमग्न्य	३.१६.२७	भीमणीं रिपुसंधानां	२.५५.१०६	भूतसर्गमिम सम्यक्	१.३.१४०
भस्माङ्गारगैरनुलेपिताननो	३.८५.१४	भारतं परमं पुण्यं	३.१३२.६२	भित्त्वा सहस्रशश्चैव	३.६.३	भीष्मकं वरयामास	२.५६.२७	भूतात्मा वै समे तस्मिन्	३.१६.३३
भस्मावयवभूतेषु प्रपतत्	१.४६.३७	भारतं शृणुयान्ति	३.१३२.६१	भित्त्वा हृदि शरान्वज्ज्व	२.२८.८४	भीष्मकश्च महाबाहुः	२.५०.५६	भूतानां बहुरूपश्च	३.१६.४६
भस्मीभूतास्ननः	३.६.१३	भारत सर्वशास्त्राणामुत्तमं	३.१३२.६३	भित्त्वा चैव बाणाग्रैः	३.१६.५२	भीष्मकस्य सुताश्चान्ये	२.६०.५	भूतानां भुवि भूतेश	३.२६.४१
भागार्थं मन्त्रविधिना	१.४०.३०	भारतेश्रवणे राजन्पारणे	३.१३२.६०	भित्त्वा हृदि शरान्वज्ज्व	२.२८.८४	भीष्मकस्य सभां गत्वा	२.४८.३	भूतानां शतसाहस्रं	३.६१.१८
भागीयसं भागमतोऽन्तमि	२.७२.५५	भारतस्य च वंशस्य स	२.१६.७५	भित्त्वा हृदि शरान्वज्ज्व	२.२८.८४	भीष्मकस्तह पुत्रेण	२.५२.४६	भूतानि सुबहून्पाजो	३.६४.२०
भागैवऽनीणै धर्मस्य शक्रस्य	१.५४.२	भारद्वाजः कश्यपो	३.६६.२	भित्त्वा हृदि शरान्वज्ज्व	२.२८.८४	भीष्मकेणाभिगुप्तश्च	२.३५.१०७	भूत्वा कंसरिणसिंहा	२.१६.७
भागैश्चेतेषु गगनादवती	१.५४.६	भार्गवः कौशिकश्च	१.३२.६१	भित्त्वा हृदि शरान्वज्ज्व	२.२८.८४	भीष्मो हि बलवान्बुद्ध	३.११३.१०	भूत्वा नारायणो योगी	३.६.१
भाजनानि च मांसस्य	२.१७.१४	भार्गवः सप्तमस्तेषां	१.७.७६	भित्त्वा हृदि शरान्वज्ज्व	२.२८.८४	भुक्त्वस्तु द्विजेन्द्रेषु	३.१३२.८६	भूत्वा सूर्यश्चक्षुषी	३.८.२६

भूधराः सत्यधर्माणि	२.१०६.२१	भूय कृत्वोद्यमप्रायाद्यादवा	२.३६.४०	भूधरन्ती समुद्रं सा स्वर्गं	२.५८.४६	भार्गवदेशेन शुभं	२.६५.१५	भ्रमत्तूष्णमहावर्त्ता वचंप्राप्त	२.१०.१४
भूः पदो द्यौः शिरः	३.७१.४४	भूयः क्रोधसमाविष्टो नीतरं	२.६१.४२	भृगुतुंगे तपस्तप्यवा	१.३०.४६	भोगोत्करासने शुभ्रे स्वेन	२.२६.५१	भ्रष्टाराज्याश्च शोकार्ताः	२.११५.१६
भूमावेव समुत्तिष्ठंश्चाकाशे	३.३२.३४	भूयः शृणु यथा विष्णु	१.५३.७८	भृगुरत्रिर्वसिष्ठश्च	३.६६.३४	भोजनं भोजयेद्विप्रां	३.१३२.६२	भ्राजमानमतीवाधमं	२.६८.६३
भूमित्रयाणां देव यस्मात्	२.७४.२८	भूयश्चगदया हंसं	३.११४.१२	भृगूणामधिपं चैव	१.४.४	भोजनाभ्युपकल्प्यन्तां	२.१७.१२	भ्राजमानोऽर्कसदृशं	३.४६.५३
भूमिदानं समादद्याद	३.१३५.१०	भूयश्च ते वचः कुतुः	२.१२३.३१	भृगोर्वंशे समुत्पन्ना	३.८२.१४	भोजं वंतरणं चैव विकटं	२.२२.६	भ्रातरश्चैव ते देवि	२.६६.३१
भूमिपानां सहस्रैश्च	१.५१.२२	भूयश्च प्राववीदेवं	३.७१.४०	भृगोश्चरुविषयसि रोद्र	१.२७.३६	भोजयामास तानसर्वांन्	३.१२२.३३	भ्राता जनिष्यते चापि	१.२७.२६
भूमि छां ववृधिरं दान	२.८४.१७	भूयश्च वृद्धिरभवत्कृष्णस्य	२.५८.५७	भृत्यवत्प्रचरिष्यामि	३.७५.६	भोजराजः श्रिया जुष्टं	२.१०१.५८	भ्राता भर्ता च दाता	३.६८.६
भूमि सर्वाभिमां	३.८८.३४	भूयश्च सहस्रोत्थाय	२.२६.६५	भूतं विषण्णः शक्रोऽपि	२.१२६.१८	भोजश्च विजयश्चैव	१.३५.१०	भ्राता शनैश्चरश्चास्य	१.६.६१
भूमिरापोनली वायुः	३.८५.२१	भूयश्चैव मया शप्यः	१.५३.२४	भेता जगति गुह्यानां	१.५४.१०	भोजो वा यादवो वासि	२.२३.६	भ्रातुहि वञ्चनाभस्य तस्य	२.६०.४
भूमिरापोऽनलो वायुः	३.८८.३२	भूयः सधाय च शरं	३.५७.३६	भेरीभर्त्तरसंपूर्णं	३.१२२.२	भोज्यो द्विजातां सर्वेषां	२.६१.२६	भ्रातृत्वमुपमर्त्यं	२.७५.२६
भूमिर्वायुर्जलमाकाशमग्नि	२.६.१५	भूयस्त्विदानीं समरे संप्राप्ते	१.४८.२१	भेरीपटहनादेन शंखकुटुम्भि	२.५५.५५	भो न देवं कुतो दैत्य	३.७१.१८	भ्रातृत्वान्मर्त्ययाम्येव स्वस्ति	१.३६.२२
भूमिष्ठाभ्यां रथाभ्यां	२.७५.१०	भूयोऽप्यत्तप प्रासेदुश्चरन्तो	३.२६.२१	भेरीमृदंगशालानां	२.१०५.२६	भो बलाहकमातङ्गा	२.१८.२	भ्रातृस्नेहाभिभूतस्त्वं न	२.७१.४३
भूमिस्तु पतितं पुत्रं	२.६३.१२४	भूयोऽप्यपश्यं सरसीरुहे	३.११८.८	भेरीशंखनिनादैश्च	३.५५.१६२	भो भो दानवशार्बलास्त	२.२१.५	भ्रान्तमुद्भ्रान्तमाविद्ध	३.५६.३२
भूमिरुत्पाद्यमानस्यतस्य	२.१८.३२	भूयोऽप्यपश्यं सह	३.११८.७	भेरीशंखमृदंगानां वेणूनां	२.५६.८१	भो भो यादवदायाद	३.११८.३०	भ्रामयामास संकुटो	३.६१.६
भूमेर्गुणधरः पुत्रद्विनि	१.३४.३१	भूयो भूतात्मको विष्णोः	१.४१.१०४	भेरीस्तटैर्वा ज्वलनप्रकाशं	३.५१.७६	भो यज्ञाः परमं तेजो	२.११०.७५	भ्रामयित्वा दशगुणं	३.१२३.११
भूमौ प्रप्रेदिरं सर्वं	३.१३३.२५	भूयो वर्णसहस्रान्ते	३.३६.१८	भमोत्तमानां नरदेव दत्तां	२.८६.८४	भोशब्दमधिधास्यन्ति	३.३.३७	भ्रामयित्वा स चिक्षेप	२.१०७.२०
भूय एव तु विप्रर्षे	२.६२.१	भूयोऽष्टषा विभेदाष्टं	३.३४.३	भोः कंसघनुपां पाल	२.२७.४३	भैमा हि वद्धनेपथ्या	२.६३.२१	भ्रूवोन्तराद्जनयद्योगा	३.२०.१६
भूय एव द्विजश्रेष्ठ	३.१०३.१	भूयोऽहमद्राक्षमजं	३.११८.५	भोः केशव मदीयस्त्व	२.७६.६	भौमाश्च कुक्कुराश्चैव	२.३७.६५	मकराकृतिभिश्चान्या	२.८८.२६
भूय एव महाबाहो	२.१११.१	भूरिश्वास्त्रिगतंश्च बाण	२.४२.३३	भोक्ता राज्यस्य	३.६२.६	भक्षितस्त्वं च विप्राश्च	३.५.३१	मकराच्छिशुमारांश्च	२.८४.१३
भूय एव महाबाहो	२.११६.१	भूव एव द्विजश्रेष्ठ	२.११५.१	भोक्तव्या यतयो विप्र	३.११२.२१	भक्षितेनीतरीयेण सहसा	२.३०.८१	मखेयस्य प्रसादेन	३.३६.७

मल्लो ब्रह्ममुखोत्तीर्णो	३.२३.१७	मत्कृते विग्रहा लोके वृत्ता	१.५२.५७	मदिरानन्तरं कान्तिस्तं कर्षण	२.४१.२५	मधोर्बलार्थं मधुनो	३.२६.८	मनः संकल्पजादयैव	३.३३.११
मग्नाद्वंकाया विविशः	३.५७.३५	मल्लकौञ्चावधुष्टेषु	२.१६.२१	मदिरा रूपिणी भूत्वा	२.४१.१५	मधोर्मदोऽम्बुपूर्णा च	३.२६.५४	मनसा कर्मण वाचा न	२.६६.४१
मंगलाष्टशतं स्नातो	२.१०६.१०४	मत्तबह्निहंसधैश्च	२.६८.७३	मदीयस्त्वमिति ह्यासी	२.६६.४७	मधोश्च मन आक्षिप्य	३.२६.१०	मनसा निमिता चैयं	२.५८.४१
मंगल्य मंगलं विष्णुं	१.१.३	मत्तवारणविक्रान्ताः	३.५६.६७	मदर्शनाय ते बाला	२.११४.८	मध्यदेशे तु विच्छेद गदां	२.६३.५५	मनसा निमित्त योनिराधा	१.५५.४४
मच्छवीसदृशी कृष्णा	२.२.४०	मत्तान्तुविद्विजान्	३.५८.१६	मद्भक्ता सर्वदा सन्तु	३.१३०.१७	मध्यदिनगते सूर्ये	३.१२२.१७	मनसास्मर्यतां सैव	२.७३.५४
मज्जतो यमुनायां च	१.५५.४६	मत्सैज एव बलवत्समासाद्य	३.३४.१७	मद्भक्त्या ते तपश्चीर्णं	१.१७.१८	मध्यदिनगते सूर्ये	३.१२२.२३	मनस्तद्रक्षतां देव	३.८०.७४
मञ्जागारः सुनियुक्तैर्युद्धाय	२.२६.४	मत्तोन्मत्तप्रमत्ताश्च	२.१०६.५७	मद्रः कलिगाधिपतिश्च	२.३५.३६	मध्यदिनं तथा सर्वैः	३.१०६.१४	मनस्येवं जगन्नाथं	३.८१.१५
मणिजनकविचित्रपाणिपादौ	२.८५.७६	मत्पदानि च ते सर्प	२.१२.४२	मद्रः कलिङ्गाधिपति	२.४२.२८	मध्यदिने महाविष्णुः	३.१११.८	मनीषितानामर्थानां	२.७४.३६
मणिपर्वतयंत्राणि	२.६८.२	मत्त्वा वशगतं चैव	३.५६.१०१	मद्रराजश्च बलवान्	२.३४.१८	मध्यमश्च शूनः शोकः	१.२७.४२	मनीषितेन स तत्कुरत्यो	२.७५.६५
मणिपर्वतशृंग च सभार्यं	२.६४.४४	मत्सरं च विभूतिं च	३.१४.४६	मद्रराजमुतां चापि	२.६०.४२	मध्यस्थं सलिलारम्भं	२.१६.५६	मनुः प्रलीयते यत्र	१.८.१६
मणिमुक्ताप्रवालानि	२.६४.३	मत्स्यमांसेन ते सर्वं	२.३८.३३	मद्रूपां प्रतिमां कृत्वा	१.२६.४८	मध्ये चास्य महाशास्त्रो	२.८.२६	मनेरेवाभवन्नाम्ना	१.६.२०
मणिभिश्च प्रकाशद्भिः	३.२७.६	मथित्वाऽग्निं त्रिधा	१.२६.४६	मद्रूषो वा जयो वाध	२.२२.८२	मध्ये तु तेजसस्तस्य	२.६३.२७	मनुर्वैवस्वतः पूर्वं	१.६.८
मणिमुक्ताप्रवालभिर्वज्र	२.५५.११४	मथुरायां प्रयागे वा	३.११८.४६	मधर्मानपतनं दृष्ट्वा	३.२७.१	मध्येन चास्य कालिन्दी	२.८.२७	मनुष्यलोकादूर्ध्वं तु खगानां	२.१६.२७
मणिरत्नसहस्राणाम	२.६६.२	मथुरायां प्रवेशश्च कीर्तनीय	२.४६.१५	मधुना दानवेन्द्रेण स	२.३७.२७	मध्ये पूरुं च राजान	१.३०.१६	मनुष्यलोके कृत्स्नेऽपि	१.३४.२०
मणिरेमनिभाश्चित्रा	२.६६.५	मथुरोपवने गत्वा निविष्टां	२.३५.१	मधुरं श्लक्ष्णया वाचा	१.१२१.५६	जध्ये लोहितगंस्य	२.६३.८७	मनुष्यलोकं बाणैर्न	२.११६.८
मण्डयन्तीव देवेश्च	२.१५.१७	मदनन्तरमीशस्त्वं जगतो	२.६६.४२	मधुरां वाचमिच्छन्ती	२.८०.४१	मध्ये वगूहोदरस्यस्तु	३.५६.३६	मनुष्याणां च सर्वेषां	२.११८.६६
मण्डलानि बहून्याजौ	३.१२७.३४	मदनशिर विभन्ना	२.१०५.८४	मधुरैरभिधातैश्च	३.१६.३६	मनः प्रजापतिर्जयः	१.४०.५४	मनुष्याणां मनोभूतस्तपोभूत	१.४०.४६
मण्डितं वनराजीभिः	२.४०.२५	मदं जहुः सितापांगा	२.१६.२४	मधुनामि महानासीद्दानवो	१.५४.२२	मनवे ब्रह्मपुत्राय	३.३६.२५	मनुष्याणां मनोभूतस्तपोभूत	१.४०.४६
मतश्चेत्करमिच्छेस्त्वं	३.१२७.३७	मदं प्रमुञ्चुवुनगा	२.१६.६८	मधुर्वैवाग्निर्पैश्च	३.२७.१३	मनः शुद्धिर्भवेत्तस्य	३.८३.२८	मनुष्याणां मनोभूतस्तपोभूत	१.४०.४६
मतिं लज्जां वसुं	३.३६.२७	मदमत्तो हली साक्षात्त्व	३.६४.३३	मधूनां वंशकुद्राजा	१.३६.२८	मनः संयमनं विप्राः	३.८६.१३	मनुस्तस्याक्षमस्तत्तु	१.६.२२
								मनोनिर्माणचित्राद्या	१.५२.८

मनोरजायन्त दश	१.२.१७	मन्दभाग्या वयं विष्णो	३.१११.५७	मन्वन्तरे व्यतिक्रान्ते	१.७.५७	ममायं प्रथमो गोलस्तव	२.१११.५	मयि भग्नप्रतिज्ञे नै	२.६८.३७
मनोरथकृतो भर्ता	२.११६.४७	मन्दं मन्दं समाश्वास्य	३.११०.६	मन्वन्तरेषु संहाराः	१.८.२६	ममारान्तर्जले राजन्	३.१२६.१३	मयि लोकाः स्थिता	१.५.५१
मनोरथं मम त्वं च	२.७६.२६	मन्दं मन्दमुवाचैव	३.१०६.११	मन्वन्तरेषु सर्वेषु प्रादिशः	१.७.३६	ममाश्व मसमीपे हि	१.११.३२	मयि सर्वं समारोप्य	३.६५.१०
मनोरथशतैर्लब्ध	२.६४.८	मन्दरक्षोभचकितामृतोद्भव	१.३३.३२	ममता ह्यक्षया गावो	१.५५.२५	ममूचे न सपत्नयास्तु	२.६५.४६	मयूरचित्राङ्गदिनो भुजः	२.१७.३५
मनोरथोऽस्तु सफलः	२.६६.३५	मन्दरः पर्वतश्रेष्ठः	२.८७.३८	ममत्वं तत्र मे देवि हितं	२.६२.४२	ममैव चोमया दत्तः	२.७७.२६	मयूरध्वजभङ्गस्ते	२.११६.५४
मनोरथो यस्तु मम पश्येयं	१.२०.१०७	मन्दरं पर्वतश्रेष्ठं	२.६८.१३	मम पुत्रो मम भ्राता	२.६.५	ममैव परमः कापो युद्धं	२.११६.१८	मयूररवचुष्टासु मदनो	२.११.१४
मनोर्वै बस्वतस्यासन्पुत्रा	१.१०.१	मन्दरश्चोपशिलर	३.२७.१०	मम प्रज्वलितं चक्रं	१.२०.५२	ममोपरि यथेन्द्रस्त्वं	२.१६.४६	मयूराङ्गदकर्णौ तु पल्लवापी	२.८.४
मनोर्वै बस्वतस्पर्षते	१.७.३७	मन्दरस्य गिरेः पार्श्वे	२.१२५.२५	मम ब्रह्मा शमीरस्थो	३.१०.६५	ममोरसि गदा मोक्षनुद्यतो	२.७०.२०	मयेन विहितो विषयस्तस्य	३.५१.४७
मनो विपर्यये घोरे	३.८०.७३	मन्दारः कीविदारश्च	२.६७.७२	मम भर्ता हुत्रोऽसि	२.१०४.२६	मयश्च शम्बरश्चैव	३.६२.२६	मयोत्सृष्टेषु मेघेषु	२.१६.१४
मनोः स्वायंभुवेऽनन्तरे	१.७.११	मन्दराचलकल्पेन चित्रा	२.४४.३	मम मात्रा कथं तस्य	२.२८.५६	मयस्तारो वराहश्च	१.४७.६	मरणान्तानि वैराणि	२.३१.५१
मनोपरगुणोपेतं	३.३५.४३	मन्दरात्पर्वतश्रेष्ठान्नयितु	२.६८.१४	मम मूर्धन्युपाध्याय	२.१०८.१३	मयस्तु काञ्चनमयं	१.४३.२	मरोचिर्भस्तिर्लोका	१.१८.५६
मन्त्रधामं सुविहितं रीषधं	२.२.७	मन्दारादपि वृक्षाच्च सार	२.६७.६५	मम वंशकरोऽयैकः	२.६७.३३	मया तदनृतं कर्तुं कथं	२.६८.३६	मरोचिर्मध्यगिरस	१.१.३४
मन्त्रं यज्ञवह्ं वह्निं भागं	१.४१.६	मन्दरे पर्वतश्रेष्ठे	२.८६.५१	मम शत्रुस्त्वया दग्धो	२.५७.६३	मया तु तव जिज्ञासा	१.१६.२४	मरोचिर्मिव सोमस्य	२.५६.३७
मन्त्रयज्ञपरा विप्रास्तीता	२.१६.६	मन्यध्वं यदि वा युक्तां	२.५२.३१	मम स्थानमिदं कार्यं	२.५८.३०	मया दत्तो हरः पूर्वं	२.११३.१०	मरोचिरगिराश्च	२.१०६.११
मन्त्रव्याकरणद्यश्च	१.७.५२	मन्यन्ते मां वशा सर्वे	२.२०.११	ममागमनमेवेह प्रायेण न	२.५१.१३	मयानुशिष्टास्तिष्ठन्तु	२.३५.३८	मरोचिरगिराश्चैव	३.६६.३
मन्त्राश्च विविधाः पार्थ	२.११४.२२	मन्युरेव प्रमूढो हि	२.६७.३४	ममाग्रतो हुता गर्मा ये	२.४.५८	मयानुसृष्टास्तिष्ठन्तु	२.४२.२७	मरोचिरत्रिभङ्गवानगिराः	१.७.८
मन्त्रैरेतैः पुराणोक्तं सर्वं	२.७६.१८	मन्ये वाणस्य नगरं	१.१२२.१३	ममानिसर्गाद्वाण त्वं	२.१२६.१६०	मया मुने प्रतिज्ञातं	२.६८.३५	मरोचिर्मधवाश्चैव हरा	१.३.८२
मन्त्रैः संबोदितो नागो	३.२८.६२	मन्वन्तरस्य सध्यान्	१.८.१	ममान्तमशानं देव	३.७२.४६	मया वै त्वं याच्यमानो	२.८७.१४	मरोचिशुचिकाश्चैव	३.६६.१७
मन्थरारोप्यमाणश्च	२.६.२३	मन्वन्तराणि सर्वाणि	१.७.१	ममाप्येवं संजाता	२.१२२.६२	मया सकलिवधं तुभ्यं	१.२०.१३८	मरोचैः कश्यपः	३.१४.३२
मन्मथं विद्धि कोन्तेय	२.११४.२३	मन्वन्तरामात प्रोक्तं	१.८.१८	ममाभवद्यतो रक्षा	२.६७.१६	मया सह समागम्य	२.१२१.१०७	मरुतश्चैव विश्वे च	३.३२.४१

महतां पञ्चमो यस्तु	३.५३.६	महत्पुलबिले वालीं	१.३८.३५	महादेवंस हृत्पार्श्वं	३.८५.१८	महाभारतमाख्याय	१.१.१२	महायुधवरः श्रीमान्	३.५६.३६
महतो देवगन्धर्वा	३.४३.११	महत्सु रावत्र्येषु सभूताः	२.४६.२८	महादेवेन देवेश	२.७६.३१	महाभारतमाख्याय	३.२.११	महायुद्धं महानादं	३.४.१५
महतो देवगन्धर्वा	१.४४.३२	महर्षयस्सस्त्रगन्धर्वा	२.४.२०	महादेवो महाबुद्धि	३.३६.४	महाभारतमाख्याय	३.१३२.६४	महायोगित्वमायुश्च	१.३१.३६
महतो विश्वकर्मा	३.६६.३६	महर्षयो वीतशोका	१.४२.३८	महादेवो महायोगी	३.८५.२२	महाभिस्य पुत्रो द्वौ	१.१८.४२	महायोगी ततो गन्ता	१.१८.५५
महतोऽलभत ज्येष्ठं	१.३६.८	महर्षे कुशलं पृष्ट्वा	२.६६.४१	महाध्वजो वै तपनीय	३.५१.८६	महाभीमा महावीर्या	२.१०६.६४	महायोगी स तु बलिर्बभूव	१.३१.३३
महत्त्वस्यां महत्त्वन्तो	३.३६.५३	महर्षे चर्मतस्त्वज स्वर्गं	२.६८.२	महानदश्च लोहित्यः	३.४६.३८	महाभूतपतिर्देवः	३.८.२५	महारथं देवरथप्रकाशं	३.५१.७५
महद्भिः सह देवेन्द्रै	३.१७.१२	महाकष्टिः स्थूलमुखो	२.२१.५	महानदी कालनदी चैव	३.४६.४६	महाभूतानि भूतात्मा	१.४०.१३	महारथस्यास्त्रिदिवीक	३.५२.५७
महत्सु योगमास्थाय	१.१५.३४	महागजाविवासाद्य	३.५५.३६	महाननुग्रहो मे स्यात्कुलं	२.६२.३३	महाभूतान्यपि च तं	३.६.१७	महारथान्युच्छ्रितकामुं	२.१२४.५६
महर्षे मर्यादयोऽतिवारी	२.८६.८६	महागदाः काञ्चनपट्ट	३.५३.४	महाननो महाप्रोवस्तु	२.१४.२७	महाभैरवरूपं हि	३.६४.६	महारथो मगधराट्	१.३२.६२
महर्षेऽस्मिन्पुरुषेन्द्रोऽसौ न	२.४६.१८	महागदाः काञ्चनपट्ट	३.५३.४	महानयमसौ दुष्टो	३.१२६.३२	महामति महोत्साहं	२.५८.३५	महारथा दुन्दुभयवच	३.५१.८५
मर्यादां स्थापयामास	१.५.४	महागहनिष्कारः	३.५१.६२	महानदी द्वारवती	२.६८.२३	महामना नाम सुतो	१.३१.२२	महाराज महाबाहो	२.४३.७
मर्यादाश्चैव संचक्रे	२.५८.७६	महाघोरं महारौद्र	३.६३.१५	महानाभाश्च विक्रान्त	१.३.८०	महामनास्तु पुत्रो	१.३१.२३	महार्णवगतश्चैव	३.१६.२७
मर्यादां सर्वभूतानां	३.२८.२०	महाच्छिरः संहननी	३.१३.५	महापद्मो निकुम्भश्च	३.४६.३	महामात्रं तनः कंसो	२.२८.३०	महार्णवस्य क्षुब्धस्य	३.११.७
मल्लिकाक्षान्विरूपाक्षान्	३.५८.२६	महाजटाभारधरास्त	३.६३.११	महाप्रभावाः सतत	२.७१.४६	महामानोत्तमाकृतिः कल्पित	२.३५.१७	महार्णवाश्च शैलाश्च	३.५२.४
महतः पर्वतस्याग्रे	३.३५.३७	महाजलदसंकाशो	३.५८.८१	महाप्रभावो नात्पार्थ	२.७१.४८	महामुनिश्चायसचूर्ण	२.५३.५३	महार्णवो वीचितरङ्ग	३.५१.६२
महता चतुरङ्गेण	३.३८.१०	महाजिनव्रतिनं मेखलालं	२.७२.४८	महाप्रस्थानिके तद्वत्	३.१३२.७०	महामेघ इव श्रीमान्	३.५५.१३७	महालाङ्गलनिभिन्नाः शङ्ख	२.६३.७७
महता च बलीधेन	३.६०.२	महा तालनिभं चाप तथा	३.५१.३६	महाबलः स रामेण	३.१२६.६६	महामेघगिरिश्चैव	३.४६.६४	महाबातसमुद्भूतं	३.६४.२
महता रथवृन्देन	२.५१.६७	महातेजा महाबाहु	३.५५.६	महाबला दिग्बलास्त	३.४६.१६	महामेघोपमं रौद्रमास	३.५५.१३	महाविष्णुः पुष्करं	३.१३१.१
महता सप्तशीर्षेण	३.५०.११	महात्मा कारणे नात्पे	२.७१.५०	महाबलैश्च महिदैश्च	२.८७.७	महामेघः सकलास	२.११३.१५	महावीर्यमदोत्सिक्तं	२.४६.४०
महतो रजसां मध्ये	३.१०.२	महादानानि देयानि	३.१३२.१३	महाबली बद्धतलांगुलित्रो	३.५१.७२	महामेरोर्यथा रूपं	२.२७.३१	महावेगान्प्रशस्ताया	२.५५.६६

महाशनिव्यग्रकरा	३.७२.१५	महेन्द्रचापसंकाशं	३.४२.१८	महेष्वासा महावीर्या	२.३४.१३	मातापितृभ्यां सर्वेषु जातेन	२.२६.२४	मानविष्यद्वच तात्त्वमी	२.५६.३०
महाशनी द्वे च महाग्रहा	३.५२.१७	महेन्द्रपुत्र दिव्यं त्वं	२.७३.५१	महोत्पातभयं चैव न	२.११६.७७	मातापितृभ्यां सहितो	२.८५.७३	मानवानां च पतयः	१.५१.५५
महाशिनाप्रहरणाः क्षूल	१.४१.६०	महेन्द्रभवनं गत्वा घृष्ट	२.७२.६	महोदधे महीपालस्तत्र	१.५३.३६	मातापित्रोस्तु कार्येण	२.४.६४	मानवेयो महाराज	१.१०.२७
महाशमसंघातवती ऋक्षवन्त	२.३८.१६	महेन्द्रभवने यातो देवै	२.१०२.१४	महोल्कासदुशान्वाणान	२.७३.५६	माना व्यत्यस्य दैवेन	१.२७.२५	मानसा नाम ते लोका	१.१८.६८
महामुरा महावीर्या	३.५८.३	महेन्द्र=ब्रवीद्गत्वा देवलोकं	२.६१.१४	महोजसः सर्वगुणोपपन्ना	२.५२.४६	मातुश्च शिरसा पादौ	२.३०.६०	मानसान्येव भूतानि	१.३.३
महामुरेन्द्रश्च महामुरैर्वृतो	३.५१.७३	महेन्द्रमाह्वयामास	२.७५.२	मह्यं तु कंस रोचते	२.२३.४०	मातृणां तात कोपेन	१.३२.१४	मानसैश्च क्रियामूर्तिर्ये	३.२३.२१
महास्मृतिमयाः पुण्या	३.३६.१०	महेन्द्रवचनं श्रुत्वा नारदो	२.७१.१	मांसमेदोस्थिदुर्गन्धा	१.५२.४८	मातृभावं व्यतिक्रम्य	२.१०४.१८	मानार्थं जीव्यते लोके	२.६७.१५
महाहवे तव मम च	२.१२३.३५	महेन्द्रविष्णुभगिनि	२.१२०.६	मांसराशिः प्रभूतादयः	२.१७.१८	मात्रा तथोक्ताऽवरदा	१.२६.४१	मानुषं मांसमश्नानः	२.२४.७
महाह्वद्रं महारोद्रं	३.१२८.३	महेन्द्रशिलराढ्या	२.२८.२२	मांसलो मांसभक्षश्च	३.४६.६	मात्रासि वञ्चिता	१.२७.२८	मानुषाणां नृपा देवा	२.५०.४७
महिषी त्वजमीढस्य	१.३२.८२	महेन्द्र शिखरे चैव	२.१०३.८	मांसात्तु मेदमो जन्म	१.४०.४६	माथुराणामवधोऽयं	२.५२.२८	मानुषेण तु मानेन यो	१.८.६
महिषी सप्त कल्याणी	२.६०.४०	महेन्द्र सहस्र वेश्म	२.६६.८	मांसानि पक्वानि फलाम्ल	२.५६.५७	माथुरो वासुदेवोऽयं बलदेव	२.५३.५६	मानुषे पाषिंवे लोके	१.५५.६
मही च लोकश्च	३.४७.१५	महेन्द्रस्य च शब्देन	२.७३.२२	माकरो रचितो ब्यूहः	२.८४.८	मा दवस्व महाबाहो	३.७१.१३	मानुषेष्वाभिभेदेन वस	२.१२३.२४
महीतलं पारिजातं	२.६६.५८	महेन्द्रस्येव वृत्रेण दाहणो	२.४३.६१	मा कार्षीः पुत्रजां	२.४.५५	मा देहीति न चाख्येयं	२.५१.२७	मानुष्यं मानुषे प्राप्नोते	३.६६.५५
महीतले भूरिजलं	२.३४.१४	महेन्द्रेणामृतस्पर्शार्थं वक्ष्ये	१.४४.४३	मा कृषाः साहसं रक्षो	३.१२६.३०	माद्रचाः पुत्रस्य जज्ञाते	१.३४.३	मानुष्यां गार्ग्य भार्यायां	२.५७.१५
महीधरेभ्यो नागेन्द्रा	३.४६.३७	महेन्द्रेणानुजं द्रष्टुं गतो	२.६६.२४	मा गघस्य विरोधेण न	२.५०.४१	माद्रीपुत्रस्य जज्ञेऽप्य	१.३८.४६	मानुष्ये कुण्डिनगरे भीष्म	२.५१.२६
मही नवतुल्यच्छन्ना	२.२८.६५	महे प्रतिहते शक्रस्सक्रोच	२.१८.१	मा गघाश्च महाग्रामा	३.४६.४६	माद्री युधाजितं पुत्रं	१.३४.२	मानुष्ये मर्त्यलोकेऽस्मिन्	२.५०.२०
मही निरन्तरा चैवं बल	२.३५.१३	महेस्वरं कुमार च द्वौ	१.५३.६१	मा च ते खंवरस्येयं	२.१०८.२५	माघवं च महात्मां	२.१२७.१४	मानुष्ये मांसक्षरुत्वा	२.५१.२१
महीं सागरपर्यन्तां	१.४१.३६	महेस्वरांशेऽपसूते ततो	१.५३.५६	मा च शक्रस्य वचनं	३.७२.३६	माघवे किष्कुका राजन्	३.१२७.१४	मानेनानेन यो मांसः	१.८.७
महीर्हृष्टपतिर्तैः सलीलो	२.१०.१७	महेस्वरेण वा ब्रह्मन्	१.५३.६	माञ्जिष्ठरागवर्णा भैः	३.१८.७	माघवो मे महाबाहुर्ध्वष्ट	२.३८.११	मान्धातुस्तु सुतो राजा	२.५७.४३
महेन्द्रकेतुप्रतिमा	३.५२.५६	महेस्वरोऽतिगूढात्मा	३.२८.८	मातङ्गमिव मातङ्गो	३.५५.११६	मानयन्ति च तं देवा	२.८६.३०	मान्धातुस्तु सुतो राजा	२.२३.१२

मान्योऽमाकं त्वया राज	२.५१.४२	मायापाशविमुक्ताश्च	१.४५.१५	मा रोदीरिति तं शक्रं	१.३.१३४	मिश्रकेशी च रम्भा	३.४२.६	मुलेश्च चन्द्रसंकाशस्त	३.५५.१६७
मा भैर्वरणि कल्पाणि	३.३४.२६	मायां संचिन्तयामास	२.१०६.३३	मार्कण्डेयस्ततस्तस्य	३.१०.१६	मिश्रितं दैत्यसर्वेश्च	३.१२१.१४	मुषुकुन्दं महाबाहौ पथ	२.३८.२
मा भैर्वस न भेतस्य	३.१०.३६	मायामयीश्च कृत्वान्या	२.८३.२२	मार्कण्डेय न कथितं	१.१६.७	मिथतां देवतानां च	१.१३.२३	मुषुकुन्दश्च राजवि	२.३८.१४
मा भैष्ट जीवमानेषु	२.६६.२६	मायामयीस्ततो हृत्वा	३.८३.२३	मार्गमादिष्टमिच्छामि	२.४६.४६	मुकुटश्चापतप्तस्य कांचनो	२.३०.७७	मुषुकुन्दस्तु राजविः	२.५७.५३
मां पुत्रकामः प्रथमं	३.१०.४२	मायामाश्रित्य युद्धयस्व	२.११६.१६६	मार्गाश्चरति वै	३.५६.३८	मुकुटेन विचित्रेण केश	२.२.४४	मुष्णन्तः शरवर्षाणि	२.६०.१५
मां प्रोक्षयित्वा घर्मेण	१.२२.१०	मायामौर्वी समासाद्य	१.४५.२०	माज्जारागजवक्राश्च	१.४१.६४	मुकुटैर्नाकैर्वर्णैः	३.१३२.४४	मुदी परमया युक्तं शक्र	२.५३.१५
मां समाश्रित्य पूर्वस्मिन्नुपा	२.५२.३४	माया युद्धं समाश्रित्य	२.१२५.६	मातं षडस्यात्मजावेता	१.६.५६	मुकुन्दमादिपुरुषमेकाकार	३.८०.८५	मुदिताश्चाथ गायन्ति	२.३३.३३
मां समाह्वयते ज्येष्ठं	२.७०.४७	मायावती तु संष्ट्वा	२.१०४.८	माल्यानि च स्वर्ग	२.८६.२६	मुक्तमात्रः स बाहुभ्यां	२.१२३.२	मुदितास्तत्र गायन्ति	२.४५.७
मां संक्रान्तुपाश्चैव	३.६१.१३	मायाविदग्धाः पुंसचल्यो	२.१२१.६०	मा वासवं मा च	३.५.३५	मुक्तश्चेन्द्रियबन्धेन	३.१७.६६	मुद्गदैर्जन्तुः क्रुद्धावग्न्यो	३.५४.७६
मामकं देवदेवेश	३.८०.८२	माया सा तिष्ठते तीव्रा	२.१०६.२६	मा विद्या च हरे	३.८८.४६	मुक्ताहारवृत्तोरस्का	३.५१.५७	मुद्गरं पुष्पभूतं तु	२.१०७.२३
मामुत्सृज्य वरो यस्माद्भूतो	२.२.२१	मायूरं रथमारुह्य	२.१२८.१०	मास मात्रेण सुषुप्ते	२.६६.२०	मुक्ताहारोमिवहुलां	२.१०५.६१	मुद्गरैः कूटपाशैश्च	३.४४.२०
मामुवाचः ततः शौरि	२.११२.३०	मार्यथा वासवेनेह	३.५.२६	मासान्वै पुण्यमासादीन्	२.२.४	मुक्तिं प्रार्थयमानं	३.८०.३०	मुद्गरैः पट्टिशैश्चैव	३.५६.८५
मामेव तद्धनं तेजो	२.११४.१२	मारिया नाम कन्धेय	१.२.४२	मासि मास्युचितं ह्येतन्मा	२.६७.५२	मुक्त्वा वरगरान्	३.१३३.७८	मुद्गरैर्द्विती श्रीमेवृक्षः	३.५८.४५
मामेव हि सदा ब्रूयुर्जान-	३.१००.३२	मारिवायां ततस्ते वै	१.२.४६	महिष्मती नाम पुरी येन	१.३३.५	मुखं वैश्वानरश्चाप्य	१.११.५१	मुद्गरैर्मुशलैः क्षुल्लैश्चस्तु	३.५४.४३
मा भैवं देवगन्धर्वं	२.११०.४२	मारीचश्च सुबाहुश्च	१.४१.१२६	मित्रवान्मित्रविन्दश्च	२.१०३.१०	मुखं वैश्वानरश्चाप्य	३.७१.५०	मुद्गलः सुज्जयश्चैव	१.३२.६५
मामैवं देवगन्धर्वं	२.११०.४८	मारीचः सुन्दपुत्रश्च	१.३.१०२	मित्रविन्दा च कालिन्दी	२.१०२.४४	मुखमण्डो विडाली च	२.१०६.६०	मुनयो दीर्घतपसः	३.७७.२
मायया त्वां भ्रमयति	३.११८.१६	मारीचस्य सुरेशस्य	३.४८.१०	मित्रविन्दा च कालिन्दी	२.१०३.४	मुखमस्याजसंकाशं	२.२०.३२	मुनयो देवगन्धर्वाः	३.८८.१७
माययास्य प्रतिच्छाया	२.६४.३०	मारीचिर्जनयामास महता	१.३.६४	मित्राणि ज्ञातयश्चैव	२.३४.१२	मुखमुनिद्रहेरमाञ्जे	३.११४.७	मुनयो बालहस्त्याश्च	३.३१.७
मायान्तकरणं नाम	२.१०६.३६	मारुतश्च यदुश्चैव मत्स्य	१.३२.६३	मित्रावरुणयोरंशे	१.१०.५	मुखे निर्वर्तितं रूपं तस्य	१.६.४६	मुनयो विप्रवयश्च	३.८७.७
मायापाशात्किंकर्षश्च	१.४५.१२	मारुतः सुमहावेगः	३.५४.४७	मित्रावरुणयोरंशे	१.१०.६	मुखे लम्बसेट चास्य	२.२४.२६	मुनयो वेदनिरता नारदा	३.७३.१५

मुनिजुष्टं तपोवृद्धं	३.१२१.२०	मुमोष पक्षमेकैकं	२.७३.६८	मृहृतमपि ते सर्वे	३.६८.११	मृगयां चक्रुस्तु तौ	३.१०२.१४	मृदन्त्येभ्यो रचिनो	३.५५.१५२
मुनिभिर्वंदितत्वार्यं	३.७३.४२	मुमोष पूर्व सहसा	३.३४.४४	मृहृतमभवत्काम्य	३.६१.२३	मृगयेयं सुमहती	३.८०.२५	मृदुर्नवाभ्युपायेन ह्यति	१.२६.४६
मुनिभिश्चैव प्रमथैः	३.८६.१६	मुमोच ववितो रुदस्त	२.१२४.४०	मृहृतमेव राजा स सह	१.२४.२४	मृगराजसमाकीर्णमृगबन्ध	२.८७.८	मृदुराईः कृशो भूत्वा	१.२०.१२७
मुनि तदा संस्मृतवान्स	२.७५.६६	मुमोच विशिलांस्तीक्ष्णां	२.११६.१७३	मृहृतदिव चाश्रीं	२.११२.६	मृगव्याधः परित्यज्य	२.५८.४३	मृगमानस्त कृष्णेन	२.१२.३५
मुनिश्च नारदः कृत्स्नं	२.८१.१३	मुमोच सलिलोत्पीडांस्तीव्र	२.४२.८७	मृहृतेन वयं ग्राम	२.११२.१	मृगव्याधं महात्मानं	३.५८.३१	मृष्टहस्ता घनाद्वया च	२.७६.३३
मुनीनां श्रोतुकामानां	३.८८.१५	मुमोच हंसमुद्दिश्य	३.१२७.४६	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृगव्याधश्च सर्वश्च	१.३.५२	मेघकृष्णस्तु कृष्णो	२.६.३
मुनीश्च ब्रह्मचर्येण	३.१०२.२३	मुमोह दृष्ट्वा तं पुत्रं	१.२०.१०३	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृगाणामय शार्दूलं	१.४.१२	मेघगम्भीरनिर्घोषं	३.११४.३२
मुनीश्च ब्रह्मवादीयान्स	२.८२.३३	मुहः पुत्रसहस्रैश्च	२.६३.१६	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृगाणामय सर्वेषां	३.७८.१४	मेघगम्भीरनादेन स्वरेणा	२.५०.४३
मुने तद्युज्यते साधु	२.६८.३१	मुशलाक्षेपभगनाश्च	२.४३.३६	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृगास्तु तस्य मोदन्ति	३.२२.१०	मेघप्रख्यं रथानीकं	२.१०२.३
मुने धर्मभूनां श्रेष्ठ	२.७७.८	मुशलैः पट्टिशैश्चैव	२.१२६.५५	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृगेन्द्रो गृह्यतां	३.४४.२	मेघसंश्लिष्ट शिलराः	३.२७.५
मुनेज्ज्वलवधः श्राव्यः श्रुतो	२.८८.१	मुशलैः पट्टिशैश्चैव	२.१२६.६७	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृगैर्मत्स्यैर्विहंगैश्च	३.४.३४	मेघस्य पयसो दाता	२.१५.७
मुमुक्षु पादपादवैव दाह	२.४२.६६	मुष्टिनैकेन तेजस्वी	२.३०.५३	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृगमत्स्यभिजाय ज्वरं	२.१२३.१	मेघाश्च दिवि युक्ता	२.१६.६३
मुमुक्षुः पुष्पसंघातं	३.२७.२०	मुष्टिभिर्निहताः केचित्	१.४७.४५	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृतेन तेन दुर्बुद्धे	२.१०५.७४	मेघोभूताश्च मायाभिर्वर्षन्ति	३.२८.८६
मुमुक्षुश्चापरे यूपान्पशवः	३.३२.१६	मुष्टिभिश्च तलैश्चैव	३.६०.६१	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृत्यवे त्वां निवेद्याय	३.१२७.४१	मेघैस्सर्शलसंस्थानैर्नीलैः	२.१८.३६
मुमुदाते यदुबरी वसुदेव	२.३३.४३	मुष्टि कृत्वा महाघोरां	३.६७.१२	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृत्युनापहृते पूर्वं शेषो	२.४.६३	मेघोघनिष्प्रभाकारमक्षय	२.१८.१६
मुमुषंति मृतो वायमिति	२.६०.५१	मुष्टियुद्धं समभवन्नर	३.१२६.३६	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृत्युर्दण्डं पाशमापः	३.२६.६	मेढरा तज्जलं व्याप्तं	१.५२.३६
मुमोच ज्वलितां घोरां	१.४८.३३	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	१.१०.३५	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृत्युस्त्वां सर्वथा	३.६६.३	मेदिनीत्येव शब्दश्च	३.२६.५५
मुमोच देत्यनगरे	३.१३३.७७	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.२८.६०	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृत्योर्भगिं क्षितिगते	१.५४.४	मेदोमज्जापियाश्चैव	२.१०६.५४
मुमोच धनुरायम्य	२.१०६.१७	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	३.६०.५१	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृत्योः स्वसः कृतो	२.४.५०	मेदोमज्जापियाश्चैव	३.६२.१८
मुमोच निशितान्वाणान्	२.११६.१७१	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.७३.८६	मृहृत्तन्मुदिते सूर्ये	२.८४.१	मृदंगवाद्यामपरांश्च	२.८६.६६	मेनका सहजान्या च	३.३६.४८

मेनका सहजन्वा च	३.६६.२०	मोदगलस्य सुनो ज्येष्ठो	१.३२.६६	यक्षाणां राक्षसानां च	१.४.७	यजस्व विविधान्यज्ञान्	३.५५.८१	यतयो नियता भूत्वा	३.१०७.१२
मेरुकूटे पुरा देवैः कृत	२.५१.२८	मौयया पुरुषाकान्ता	३.२५.१३	यक्षानुजो महातेजा त्रिशीर्षः	१.६.३४	यजद्बहुसुवर्णेन राजसूयेन	३.३१.४	यतयोऽन्ये पलायन्ति	३.१०६.६
मेरुपृष्ठं तु रक्तेन	३.६०.६	य		यक्षाः पिशाचागन्धर्वा	२.१०६.४६	यज्वा देवावृषो राजा	१.३७.६	यतश्च पितृवाक्यार्थः	१.२१.३५
मेरुप्रतिमरूपाणि	३.३५.३१	यं इदं व्यावनं स्थाना	१.२८.३७	यक्षाविमाविति तदा स	२.२७.२४	यजमूर्तिः पुराणात्मा	३.७६.३	यतश्चैवविषः कृष्णस्ततो	२.७१.४७
मेरुं गतस्य वा तस्य	१.११.२	य इदं जन्म देवाना	१.६.६६	यक्षैश्च श्रूयते तात	१.६.३२	यज्वाटस्याविदूरे देवो	२.८३.५५	यतस्व राज्ञां वचनप्रचोदितो	२.५३.५५
मेरुश्च पर्वतश्रेष्ठो	३.४६.६६	य इदं शृणुयान्नित्यं	१.६.५५	य गतिर्धर्मयुक्तानाम	१.४०.३८	यज्ञानां तपसां चैव	३.३७.५	यतस्व सह पुत्रेण	२.२७.१६
मेमोः शिखरविन्यस्ता	१.५२.७	य इमां दग्धभूयिष्ठां	१.२.४४	यच्च कामसुखं लोके	१.३०.४४	यज्ञानां हि गतिर्विष्णु	२.११०.८४	यतिभिः कर्मभिर्मुक्ता	३.२४.१४
मेरोरि वः गिरेः शृंग	२.६८.४२	य एको याति जगतां	२.७२.४२	यच्च चक्रधरेष्वस्ति	२.१२६.१०४	यज्ञार्थं समवेतानां मिषतां	१.४०.३	यतिर्ययातिः संयातिरायति	१.३०.२
मेरोः सानो नरपते तप	२.६१.५	य एको विश्वमध्यास्ते	२.७१.१३	यच्च ज्ञातिपरिज्ञानं	२.२५.३५	यज्ञार्थं समवेतानां मिषतां	१.४०.४	यतेर्वचनमाकर्ण्य	३.११२.१
मेघयोः पश्मन्विच्छन्	१.२६.२८	य एतच्छृणुयान्नित्यं	३.१३०.२०	यच्च ते पौरुषं सर्वं	२.१२२.८७	यज्ञार्थं च वयं सृष्टा	२.११०.७३	यतो वाणस्ततो गत्वा	२.१२६.८६
मेघायाणस्ततः सोमो	१.३२.७६	य एव कपिलो मम	३.१४.११	यच्च वक्ष्यति मां	२.१६.१०१	यज्ञावसाने शैलेन्द्रं	३.२३.४०	यतो वाणस्ततो भीता	२.११६.१०८
मेघुनाय विचेष्टन्तो	१.६.५४	य एव भवता पूर्वं	२.१०४.१	यच्च वेद्यं भगवतो	३.३३.४१	यज्ञियाणि च द्रव्याणि	१.४०.३१	यतोभूतानि जायन्ते	३.१३.२०
मेनाकं च महाशैलं	३.४५.२४	य श्रोमिष्युच्यते शब्दो	३.१११.४३	यच्चाण्डमकरोत्पूर्वं	३.३४.१०	यज्ञे विवरमासाद्य	३.५.२७	यतो रजिष्वातिस्तत्र	१.२८.७
मेनाकस्य सुतः श्रीमान्	१.१८.४१	यः क इत्युच्यते	३.१३.१३	यच्चास्य देवदेवस्य चरितं	१.५०.२१	यज्ञैर्जप्याह्निकैश्चैव नित्यं	२.६६.६४	यतो विश्वमिदं भूतं	३.१११.३५
मेरेयमाध्वीकसुरासवानां	२.८६.३७	यः कर्ता कारको	३.७.१६	यच्चिद्रमूर्ध्वमाकाशं	३.३४.४	यज्ञैर्मर्त्या न यक्ष्यन्ति	२.६६.६३	यत्कर्तव्यं महेश्वरेण	१.५३.३
मेवं पथरनाशाक्षि प्राणे	२.६७.२८	यः क्रीडते नागकणी	३.८२.२४	यजता वज्रमेघेन	३.७१.३	यज्ञोपवीतं करकं दक्षिणां	२.७६.५३	यत्काक्षितं वै सर्वेषां	३.६६.४४
मोक्षयित्वा किरीटं तु	२.४१.४१	यक्षगन्धर्वपतिभिस्सिद्ध	२.२.१८	तजते पुष्करे ब्रह्मा	३.२३.६	यज्ञोपवीतं व्रतके दद्यान्नारी	२.७६.४६	यत्किञ्चित्पश्यसे चैव	३.१०.६२
मोक्षयित्वा रणे चैव	२.१२७.१३८	यक्षराक्षसगन्धर्वं नित्यं	३.४६.६६	यजनं विक्रमं चैव	३.१६.२२	यतन्ते श्रेयसे नैव	३.७६.१६	यत्किञ्चित्त्रिषु लोकेषु	२.६८.६
मोक्षितं वधनादगुप्तं	२.१०१.२	यक्षराक्षसव्राणानां नाकाशे	२.४८.१६	यजनान्ते तदन्तं तु	२.१७.२१	यतमानस्य चिच्छेद	२.६०.६	यत्कृत यदुसिहेन	२.१०१.६५
मोज्जी यज्ञोपवीति	३.६६.५७	यक्षराक्षससैन्येन गुह्य	१.४४.१६	यजमानश्च यजान्ते	२.२३.३२	यतयो दीर्घतपसः	३.१११.१०	यत्कृत्वा दुष्करं	२.१०१.६

श्रीहरिवंशपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणी

११४

यत्तत्कारणमाहुस्तत्साधवाः	३.८८.१८	यत्र कृष्णो महाबाहुः	२.५०.६०	यत्र विश्वेश्वरः शम्भु	३.८४.६	यद्यर्थमूढः सरितो नापि	१.४२.३७	यथा न मम पुत्रस्त्वं	२.१०४.३३
यत्तत्सत्राजिते कृष्णो	१.३६.१	यत्र तद्वर्तते युद्धं	२.१२२.२८	यत्र विश्वेश्वराः	३.८४.५	यथा कथितवान्विप्रो	२.२८.४२	यथा नागस्तुषुर्वतो	२.२६.१६
यत्तद्ब्रह्ममयं ज्योतिराका	३.१६.२५	यत्र तन्मानसं नाम	३.८४.६	यत्र विष्णुकथा दिव्याः	३.१३२.६६	यथा क्रमेण सर्वेषां	२.१२७.१३०	यथा नारायणो ब्रह्मन्	१.४०.५
यत्तद्दत्तं मणिवरं तव	१.३६.३६	यत्र ते लोकपालाश्च	३.८६.१७	यत्र विष्णुर्जगन्नाथ	३.७६.२१	यथा क्रुद्धस्य सिंहस्य	३.१२६.१६	यथा नारायणो राजन्	३.३३.६
यत्त्वमिच्छसि मु वीर त्वं	२.२७.२६	यत्र ते शकुना राजन्	१.२३.१५	यत्र शाल्वं च मैन्दं	१.४१.१५७	यथागतं जगन्नाथो	३.६०.३७	यथा निदाघसमये	३.११४.२
यत्त्वमेवंविधो रूपे गते	२.३२.३३	यत्र त्वं च महाबाहो जानः	१.५५.१६	यत्र स्थितमिदं सर्वं	३.८२.१२	यथागता वयं सर्वे कृष्णो	२.४६.६	यथानुपूर्व्यां च यथावयश्च	२.८६.५६
यत्त्वया दक्षितं लोके	२.१४.४०	यत्र देवापि मुह्यन्ति	१.४१.१७१	यत्र हस्ता रणे रामो	३.७६.२४	यथागता वृमत्संघातो	३.२१.१६	यथान्यायं निभिमिरे	२.५८.१६
यत्त्वया धार्यते किञ्चित्	१.५२.१५	यत्र देवासुरे युद्धे	१.२८.४	यत्रापवस्तु तं क्रोधा	१.३३.४३	यथा चक्षार स तपो	३.७३.१०	यथान्यायमुवाच वदतां	२.५०.८३
यत्त्वया धार्यते कश्चित्	३.३४.२०	यत्र देवा हृष्यपुष्टा न	३.२३.३६	यत्राहमिव विस्तीर्णः	२.११०.४४	यथा चतुर्यं धर्मस्य	१.१६.२५	यथान्यायं पूजयित्वा तौ	२.४५.१८
यत्त्वया पातितो देहो	२.२४.६४	यत्र देशे यथा जातो	१.५५.१७	यत्रैनं बीक्षितुं देवा न	१.५५.२३	यथा चतुर्यं धर्मस्य	२.११२.१६	यथापक्षं भवद्युद्धं	३.३२.५८
यत्त्वयाऽभिहितं वाक्यं	२.१७.१०	यत्र द्रव्यं हि वै प्रोक्तं	३.१७.१५	यत्रोत्पितो महासेनः	२.११६.१८	यथा च तेन निहतो बल	२.६२.३६	यथा पलपिण्डः स्याद्	२.७१.२७
यत्त्वया विहितं देव	३.४७.१७	यत्र शोभयतां श्रेष्ठं	३.१३.१८	यत्रोत्पन्नो महात्मा	१.८.४१	यथा च देवेदेवस्य	२.११६.११	यथापूर्वं जगन्नाथो रथं	३.१२८.६
यत्त्वया सलिलं	३.७२.३८	यत्र धीः श्रीः स्थिता	२.१०१.७३	यत्सत्यं यदनुत्तमादिमक्षरं	३.७.२५	यथा च पितृभिर्दुःखा	१.४.२७	यथा प्रवेशमद्यापि धर्मेण	१.४.२३
यत्त्वया स्त्रीकृते मोहात्	१.५४.३४	यत्र प्रसेनो मृगयामा	१.३८.३१	यत्सत्यमक्षरं ब्रह्म	३.१४.१३	यथा च वर्तमानास्ते	१.२०.१०	यथा प्रभावं नान्सर्वान्	२.११८.५६
यत्तन्वच क्रियतां कंस	२.२८.५३	यत्र बाहुसहस्रेण	१.४१.११२	यत्स्यात्तापकरं पञ्चादार	२.७१.११	यथा चैकाग्रं वजले	३.१०.३१	यथा प्राणं महाबाहू	३.१२४.१८
यत्परं योगयुक्तानाम	३.१३.१६	यत्र भूतसंज्ञकं चैव	३.१४.६	यत्समासेन वक्ष्यामि	२.६३.११०	यथा जले जलं क्षिप्तं	२.१२५.३३	यथाप्राणं यथायोगं	३.१००.२४
यत्पारिजातकुसुम	२.६७.८	यत्र यज्ञाः पवर्तन्ते	३.७६.२६	यत्स शाणप्रमाणोऽस्य	२.७४.१४	यथा ते कथितं पूर्वं	१.२३.६	यथावलं मनुष्याणां	३.२.४२
यत्पृच्छसि महाराज	१.४१.२२	यत्र यत्र जलं स्कन्नं	३.३४.१२	यत्सिद्धिं करमाशु	३.४१.४१	यथा ते कथितं पूर्वं	१.५३.७०	यथा भूतेन्द्रियावाप्तिविहिता	१.४६.२३
यत्पृथिव्यां द्वित्रेन्द्राणां	३.१०.५३	यत्र यत्र प्रयास्यामो वयं	२.४६.१६	यथ प्रदेशमद्यापि	१.३०.२०	यथा देवासुरे युद्धे	३.१२४.१५	यथा मनस्वी रिक्तश्च	३.६६.३२
यत्पृथिव्यां ब्रीहिवं	१.३०.३६	यत्र यत्र समं त्वस्या	१.६.१७	यथसत्त्वितुलिङ्गानि	१.८.३८	यथा न बाधते राजा	३.७४.१६	यथा मनाकमाश्रित्य	२.७४.३७

यथा यथा च मे भ्राता	२.६६.७०	यथाहमपि लोकानां तथा	२.१४.४६	यथो ज्वलन्त्य तदा	२.१२४.३८	यदा न धारणे शक्ता	१.२५.६	यदि चेष्टतमः कश्चिदयं	२.११६.१६३
यथायं शाश्वतो धर्मो	१.४५.३२	यथाहं शोणितदिग्धो	२.१२६.१५२	यदण्डमकरोत्पूर्वं	३.३४.५	यदा न शक्यते	१.५.१५	यदि तच्छक्यते	३.२.२६
यथायंसंनिष्कृष्टो हि	२.३५.३	यथाऽहमेनज्जानीयां तथा	१.२४.१०	यदत्र गारुणं कार्यं सुनयोपेत	२.४८.८	यदान्येऽभ्यो न विन्येत	१.३०.४१	यदि ते देवकी मान्या	२.२६.१७
यथा युगातां परिवर्तनानि	३.४.५३	यथा हानिः क्रमात्प्राप्ता	३.४.४६	यदत्र वः क्षमं कृष्ण	२.३८.६६	यदा वलिमहादैत्यो	३.५४.२४	यदि ते निहतः मर्त्ये	१.५४.३८
यथाहितः पूजयित्वा	२.६४.३७	यथा हि पुङ्गवश्रेष्ठो ह्यग्रे	२.१६.२२	यदब्राह्मीदि मां रवश्रुर्वह	२.६७.२३	यदा वाणपुरे वीरः	२.१२०.१	यदि ते मत्प्रियं काय	२.३२.५३
यथाह्येण च संपूज्य	२.५२.६	यथा हि पुष्पप्रभवं	३.६.७	यदन्यत्सर्वविधातव्यं	२.१२१.६६	यदा भावं न कुरुते	१.३०.४०	यदि त्वनुग्रहं भूयस्त्वतो	१.१६.३२
यथा वदति राजेन्द्र मगधा	२.५३.२५	यथा हि भगवान्	३.५६.६१	यदर्धमिहं संप्राप्ता	३.६७.१	यदा माता पिता चैव	१.२१.२३	यदि त्वं मे विजानासि	२.११८.८६
यथावदब्रवीष्यैव जनार्दन	२.६४.६०	यथा हि वायसो मूर्ध्नि	२.२२.६२	यदबोचमहं वाक्यं तत्तथा	२.६०.७२	यदा वरमदोन्मत्तश्चो	३.४१.३०	यदि त्ववश्यं श्रोतव्यं	२.२०.१३
यथा वदसि देवेश	३.८६.२०	यथा ह्यनागतमिदं	३.२.३८	यदधनासि जगत्सर्वं	२.२६.३७	यदा वरमदोन्मत्तो न्यवसद्	१.४१.६८	यदि त्वहमनुग्राह्या	२.६६.५३
यथावदभ्युपगच्छेण महेन्द्र	१.४८.७७	नयेदानीं तथैव त्वं भव	२.६७.४५	यदस्माभिस्समेतैर्वया	२.४६.७	यदाऽवितुष्टः कामानां	१.३०.३६	यदि त्वां जनयित्वा सा	२.२६.१३
यथा बाणस्य नगरी	२.११८.८१	यथेन्द्रियैश्च भूतैश्च	१.४६.२२	यदहं धारयाम्येका जगत	१.५२.४५	यदा मद्रित्तैते यश्च	३.८८.६४	यदि त्वां प्रणमेतासौ	२.४४.५०
यथा वास्तु तथा वास्तु	१.५५.२६	यथैव देवराजोऽयमजितो	२.६४.६१	यदा च सुदुराध्वं	१.४८.८२	यदा संनद्यु युध्येत गार्हृ ङः	२.४८.४६	यदि दद्यां ततोऽद्याहं	१.३४.१०
यथा वै दमितां नागः	२.४६.५०	यथैव मम मातुः स वरं	२.७१.५१	यदा चास्मै नापि सुता	२.४८.१२	यदा सा रक्तभावा च वज्र	२.६१.४५	यदिदं प्रस्तुतं कर्म त्वया	२.४०.३६
यथा वो बुद्धिरखिला	३.८६.१६	यथैव हि परा बुद्धिः	३.५.३४	यदा चैषां विकुर्वन्ति	२.१६.८	यदा सौरं वपुरिति	३.१११.५३	यदिदं लुप्तधर्मार्थं युष्मा	१.४५.४६
यथाशक्ति यथाप्रज्ञं	३.७३.१२	यथैवोक्तं मधवता तथैव	१.३.१३६	यदाज्यं वपमश्नीमो	२.११०.८०	यदास्य तास्तु मानस्यो	१.३.४	यदिदं दुष्करं कर्म कृतं	२.२४.६०
यथा शक्रश्चजतरोः	२.११६.७२	यथैवोपेन्द्रतो घातः स्वयं	२.७१.५२	यदा तस्य सुपर्णस्य	१.४८.३४	यदाहं भेदयिष्यामि	३.२३.४७	यदि देव्याः प्रसादस्ते	२.११६.६४
यथा शैलः पिशाचैश्च	१.४.२८	यथोक्तं ब्रह्मणा	३.६३.६	यदा तु नैवापश्यंस्तं तदा	२.८५.२८	यदा हि प्रार्थयामास	१.३६.२	यदि दैत्यगणान्मर्त्तान्	१.२८.१२
यथा श्रमाणां प्रवरो	३.७१.७	यथोक्तविधिपूर्वेण अभिषि-	२.५०.७४	यदा त्वं तेज इत्येवं	३.१११.५१	यदा हि स महातेजा	२.१०१.६०	यदि द्रष्टा दुरात्मानं	३.६५.२८
यथा सूर्यस्य गगने	१.३.६८	यथोत्पन्नस्तथैवाहं	१.१७.१७	यदा त्वं रजसा	३.८८.२७	यदि कुर्यादयं मूढस्त्वयि	२.४४.५१	यदि नाधिगते पूर्व	२.१०१.६६
यथासौ देवदेवो मे शंकरश्च	२.५८.२४	यथोवाच महाभागो	१.२०.५	यदा त्विमी नरश्रेष्ठो	२.१०१.४७	यदि चेन्निष्क्रम्येते	२.४२.५१	यदि प्रभवतां दण्डो लोके	१.५५.२८

यदि प्रसन्नो भगवान्	३.६८.६	यदुर्नामाभवत्प्रभो	२.३७.४६	यद्यवश्यं प्रहृतव्या पितु	१.२१.११	यन्तावद्वच हुताशवच	३.६२.१३	यं वदंत्युत्तम भूतं यं	१.४४.३०
यदि मायाप्रभावेण	२.११६.१८८	यदुर्वशात्ममृत्युत्पन्नं वमुदेवा	२.४७.६१	यद्यस्ति तपसो वीर्यं	१.४५.४३	यन्त्रागलविचित्राद्यमां	२.५५.१०७	यं विदुर्भूततत्त्वज्ञं	३.८५.१७
यदि त्रिणुपुरोगानां	२.११६.८४	यदुश्च राजा शशि	२.६५.३६	यद्यस्ति भारो यद्यवरो	१.५२.५६	यन्मया चाभिविक्तस्त्वं	२.५५.४२	यं सदा देवि शृण्वन्ना हि	२.६२.२२
यदि शक्तो हरे कृष्ण	३.१०१.१५	यदूनां प्रथमो बन्धुस्त्वं	२.४३.६३	यद्यस्ति मे यज्ञफलं	३.५.१६	यन्मयाभिहितो ह्येष	२.११०.८२	यमभार्या चकाराय वनं	२.८१.३०
यदिष्टो यो बुधश्रेष्ठाः	२.१०१.७१	यदूनां बुधिलवीराणां	३.१००.६	यद्यस्ति सुकृतं किञ्चित्	१.२१.४४	यन्मयोक्तमक्षेपेण	३.११७.२	यमः सर्वहरस्तेन दण्ड	१.४७.५०
यदि सा नाम मानुष्यं	२.७८.१४	यदूनामन्तरं प्रेम्पुत्र्यदूनां	३.१०३.१०	यद्यहं सत्पथे गृहो	१.५४.४१	यन्मा भवन्तः पृच्छन्ति	२.११०.८६	यमस्तु तत्पितुः सर्वं	१.६.२४
यदि सा वरयेदन्त्यं राज्ञां	२.४८.४६	यदेतत्प्राणित्रं ज्ञत्रं स्थितं	१.५४.१४	यद्यहं समनुग्राह्यो	२.११६.५०	यन्मां वदसि पुत्रार्थे	१.४६.११	यमस्तु दण्डमुद्यम्य काल	१.४४.११
यदि सुप्ता सती साध्वी	२.११८.२३	यदेतदाहृतं स्वर्गात्त्वदर्थं	२.६७.५५	यद्यावयोस्ती प्रमुखे	२.२८.२७	यः पटेत्यातत्याय	३.७२.१०२	यमस्माक्षीन्मुनिश्रेष्ठो जगवान्	२.६८.४
यदि स्थातत्र गच्छामो	३.१०७.१०	यदेतन्मम राज्यं वै सर्वं	२.३७.२८	यद्यावां प्रतियोत्स्येते	२.२८.२८	यः पुराणो पुराणात्मा	१.४०.१६	यमहं भारतंतप्ता तप्राप्ता	१.५२.६०
यदि स्म सन्निकर्षस्था	२.१२२.१५	यदेव वर्णवैश्यं	१.१२६.२२	यद्येवं मे विद्यालाशि	२.११८.७६	यः पुराणो पुराणात्मा	३.४८.५	यमासाद्य जनः सर्वो	२.६४.६७
यदि स्यात्संवृता भूमि	२.५५.११३	यदेव भगवान् प्रीतः	३.६८.५	यद्येवं बोधितः शक्रः	१.२८.२७	यः पुरा ह्यनलो भूत्वा	१.४०.१६	यमाहुरग्नेर्यन्तारं सर्वं	१.४४.२६
यदि स्मृनिर्वृता लोकाः	२.३२.११	यदोर्वर्गं प्रवक्ष्यामि	१.३२.१२६	यद्येवं नाथ गन्तव्यं	२.३१.३३	यः पुरा पुरुहतायै त्रैलोक्य	१.४०.१७	यमाहुरमयं पुरुषं	३.८५.१५
यदीच्छसि तदागच्छ सङ्घं	२.७०.४३	यदोस्तु भृगु राजर्षे	१.३०.४८	यद्येवं पुत्र युष्माभिनं	३.६६.४	यः प्रभुर्भाति विश्वात्मा	२.१२१.१३६	यमाहुराद्यं विबुधा	३.८२.११
यदीच्छेत्सागरः किञ्चित्	२.५८.३४	यद्बाहुजलमाश्रित्य वयं सर्वे	२.५३.२३	यद्ये वाहमनुग्राह्यो	२.१२७.६४	यः प्रभु सर्वभूतानां	३.३६.२०	यमाहुरेकं पुरुषं	३.८५.१६
यदुक्तं चैव पुष्पा	१.१७.३५	यद्भूतमधिभूतं च यत्परं	३.७.१८	यद्येव समयो राजन्	१.२६.१६	यः प्राणः सर्वभूतानां	१.४४.२८	यमुनाकर्षणं चैव	३.१३४.२०
यदुक्तं देवदेवेन नृपाणामग्रतः	२.५५.५	यद्भूम्यां भूमि समुत्पन्ना	२.८८.४२	यद्येषा प्रतिहन्तव्या	१.४५.७६	यं कश्यपः सुतवरं	१.३.६	यमुना चैव कावेरी	३.४६.४३
यदुक्तं देवदेवेन	३.१३३.३३	यद्यदिच्छसि वर्णं च	२.६५.२६	यद्येषामीदृशो गन्धो	२.१३.६	यं कालं तो गतौ	३.१४.२१	यमुनातीरमार्गस्था गोध्वस्त	२.७.२०
यदुक्तं मागधेनात्र सुनीयेन	२.४६.२	यद्यदेवात्मनोऽभीष्टं	३.१३२.८२	यद्या चन्द्रमसा कार्यं	१.५३.४	यं प्राहुरपरं यः परः	१.४०.४१	यमुनातीरमार्गेण जल	२.५.३०
यदुनामन्तरं प्रेम्पुत्रविचक्रो	२.११५.८	यद्यद् गृहे वरं किञ्चिद्	३.१३२.१६	यद्याजपेयेन तू राजसूया	१.१.६	यं प्राहुरीक्ष्यं वरदं	३.८०.५१	यमुनाप उपस्पृश्य	३.१२७.४८
यद् च तुवंसुं चैव	१.३०.५	यद्ययं भवतां श्लाघ्यो	२.२०.१३	यद्येदितव्यं लोकेऽस्मिन्	२.१४.४१	यं लेभे वरुणः पुत्रं	१.३३.४२	यमुनाया हृदे नागः	२.२२.२७

यमुनाया हृदे ह्यस्मिन्स्तो २.२६.४२	यवनानां बलोदघः स काल २.५३.१	यश्चेह भूयो दृश्येत २.१२.४०	यस्त्वया पातिनो वीर २.४४.४६	यस्य प्राप्तादाजगदेव ३.८०.३६
यमेन्द्रघनदैर्गुप्ता वरुणे १.४७.१८	यवनाः पारदाश्चैव १.१४.४	यश्चैत्पठते स्तोत्रं २.३.३५	यस्त्वया प्रम पुत्रो न २.२८.१०७	यस्य बाहुसहस्रस्य बभूव १.३३.३६
यमो वा वरुणो वापि ३.११२.४	यवनेन्द्रो यथाम्येति नरेन्द्रा- २.५२.४३	यश्चैनं कथयेन्नित्यं १.४.३४	यस्त्वया हि कृतो यत्नः २.२२.४६	यस्य बुद्धिः परिणता स २.२२.७३
यमो ब्रह्मस्वतस्तेषामासी १.६.२५	यवनेन्द्रो यथायाति यथा २.५२.४५	यश्चैनं पठते नित्यं २.१२५.३६	यस्त्विदं वामन ३.७२.१०४	यस्य बुद्धिवशाद्विष्णु ३.७४.६
यमो भीमश्च राजा च २.८५.६	यशः प्रदीपा लोकानां २.२२.१५	यश्चैनमग्र्यं पुरुषं ३.३२.६३	यस्माच्च कारणात्पाणि १.४.३०	यस्य भासा जगत्सर्व ३.८८.४०
ययानिवंशजस्याथ वसुदेव १.५३.७६	यः शेते जलधौ ३.८२.१०	यश्चैव पर्वतः शंशुर्मरुपृष्ठे ३.२७.३८	यस्माच्च वरदाः सप्त १.७.५७	यस्य यज्ञे जगौ गाथां १.३३.१६
यया हि देवदेवांसि ३.१११.३३	यशोदया च प्रथितं यशोऽथ २.८६.६	यष्टा क्रतुसहस्राणां ३.५१.५१	यस्माच्चित्तैरभिपिक्तोऽसि २.७४.२६	यस्य यस्य च वेपेण २.६१.३१
ययुर्विविधशस्त्रो ३.६३.१२	यशोदा त्वन्नवीक्षीता २.६.३३	यष्टारः क्रतुभित्तियं ३.५६.६६	यस्मात्कामप्रधानस्त्वं १.२२.३	यस्य यस्यान्वये ये १.१.१७
ययुः ससैन्या युधि ३.५२.४८	यशोदा नन्दगोपश्च ३.१३०.१	य स देवो हृषीकेशः १.४४.३५	यस्मात्त वैय चरणः १.६.२८	यस्य खल्वर्चनि श्रुत्वा २.११६.२०२
ययुः ससैन्यास्तपनीय ३.५२.४७	यशोदापि समाधत्त २.४.१०	यः समाः सर्वधर्मज १.४१.१२८	यस्मात्त्वया हतः केशी २.२४.६५	यस्य स्मरणमात्रेण ३.१३५.१४
ययुः स्वानालयान् सर्वा २.११७.२७	यशोदामनुगच्छन्त्य २.१२.२६	यः सर्वासां विमानानि १.३.४८	यस्मात्प्रसूयते लोकः ३.६६.३०	यस्या दुष्टमनः पूर्वं २.११८.२४
ययो कंलासशिखरं ३.८५.४	यशोदायामजानत्यां २.६.३४	यसु प्राप्तादमुष्योऽन्नं २.६८.५३	यस्मात्प्रावृडियं कृष्ण २.१५.१६	यस्या नैवविधो भर्ता २.११८.४२
ययो तस्य सहायार्थं ३.१२१.१२	यशोदायास्त्वविज्ञातस्तत्र २.४.२६	यस्तु बाहु सहस्रेण १.३३.६	यस्मादीशो महातामीश्वर २.७४.२४	यस्या यस्यास्तु यो २.८८.३२
ययो नोति विचिन्वानः ३.६५.१८	यशो हर्षश्च कामस्य ३.३६.५६	यस्ते जनिष्यते पुत्रस्तस्य १.३६.१६	यस्माद्भूतानां भूतिरन्तोऽथ २.७२.५६	यस्यायं दारुणं कर्म कृतं २.२८.३
ययो स्वमेव भवनं २.११६.१६६	यश्च कर्ता विकर्ता च ३.६२.१५	यस्ते भर्ता यथारूपो २.११८.६७	यस्मिन्न कश्चिन्मृत ३.१३.२७	यस्याष्टगुणमैश्वर्यं ३.६६.३७
यस्लिङ्गाङ्गं श्र्यम्बकः सर्व २.७२.६०	यश्चकार महात्मा १.१०.२५	यस्त्वं देवोपमं वृद्धं २.२३.३५	यस्मिन्वसति वै देवः १.२६.६७	यस्येच्छया सर्वमिदं ३.८२.१३
यस्लिङ्गाकं यच्च लोके २.७४.३२	यश्चक्रं वर्तयत्येको १.४०.११	यस्त्वं महासुरं रौद्रं १.११.३६	यस्मिन्विश्वमिदं ३.८०.५२	यस्येन्द्र प्रमुखा देवाः २.१२१.३
य वत्पतति कायात्ते ३.६६.५	यश्च स्तवेन मां भक्त्या २.७४.३६	यस्त्वेवं शृणुयान्नित्यं १.३६.४१	यश्चेमां धारयेद्वाऽपि १.१.२०	यस्येयं मृगशावाक्षी वना २.२८.७८
यवनश्च हतः संख्ये २.११५.२०	यश्चेदमग्र्यं प्रथमं ३.१४.६७	यस्त्वमेवमभेद्याभ्यां २.११०.३६	यस्य चक्रप्रविष्टानि ३.३६.६	यस्यैते संप्रदृश्यन्ते २.४६.२६
यवनाधिपतिश्चैव भगदत्त २.३४.१६	यश्चेमं संगमं देव ३.८३.२७	यस्त्वया तात इत्युक्तः १.५५.४७	यस्य नैव श्रुत ब्रह्मन् ३.२४.१३	यस्योदयाद्विश्वमिदं ३.८०.४०

यस्योदरे देवमुनिः	३.८०.४४	यादवाश्चैव तान्सर्वायथा	२.३०.६१	यानि पश्यस्य पात्राणि	३.१२.११	या या ते-बैदण्वी	२.१२७.७४	यास्वन्ति च त्रयाः सर्वे	२.२६.३
यः स्रष्टा सर्वभूतानां	१.८.३१	यादवा घामिका ह्येते	२.५८.७२	यानि यानि च पुष्पाणि	२.६५.२४	या राजन्तोमपत्यस्तु	१.३.३६	यास्पामः पतगश्रेष्ठ भोज्य	२.५५.६६
यः स्रष्टा सर्वभूतानां	३.३३.२३	यादवानां कुलकरास्त्य	२.५८.८१	यानि राजविनाशाय	२.२३.३३	या रूपाढमयी पत्नी	३.१४.३६	या ह्यक्षया सभा रम्या	२.५८.७३
यः स्रष्टा सर्वभूतानां	३.६६.७२	यादवानां विरोधेन ये	२.३८.६२	यानि लिङ्गानि लोकस्य	२.३३.३८	यावकं च बलि दद्याद्दना	२.७६.७०	या ह्येवा गङ्गारा माया	१.५०.२७
या आत्मदेवता गावो	१.५५.३०	यादवानामयं वंशस्तवन्ना-	२.३७.६१	यानि लिङ्गानि लोकस्य	२.४५.१२	यावकं पयसा सिद्धं	२.८०.२८	युक्तं मनोजवैः शुभ्रैर्यज्ञ	१.३०.७
याः कथाश्चैव वर्तन्ते	३.७.२४	यादवानागियं भूमिमथुरा	२.५६.२	यानि वै माथुरे युद्धे प्राप्ता	२.४३.५	या वंचयति भर्तारं	२.७८.६	युक्तं महिषकैर्दिव्यं	३.५१.६४
या गति पुण्यकीर्तिनामगतिः	३.६६.३६	यादवाश्चापरे तत्र वासुदेवा	२.४७.१५	यानिष्ट्वा तु पितॄन्	१.१७.३६	यावत्तद्वा ह्यविषयं	३.१६.३७	युक्तं माक्षसकोटिभिर्नोला	१.४१.१३५
याचन्ते न त्वयाच्यानि	१.१६.११	यादवास्ते बलौदग्रास्तवै	२.४७.१३	यान्ययः पश्यपत्राणि	३.१२.१२	यावत्स्थास्यति लोकोऽयं	२.४६.५२	युक्तं सहस्रेणदिते	३.५१.६४
याच स सुरभिर्नामि	१.५५.३४	यादवी च श्रिय दुष्ट्वा	२.११०.४	यान्यहं विविधान्यस्य	२.११५.३	यावदेनं शशैर्हन्मि	२.१०६.२	युक्तं हयसहस्रेण	१.४३.१४
या चारु रूपानिच्छेत्	२.८०.२४	यादवी नावमन्तव्यो	२.४२.४८	यान्यान्गुणान्पुष्टोऽणि	२.६२.२६	यावद्यावत्सैन्येन पट्पुरं	२.८३.२०	युक्तं हयसहस्रेण	३.५०.२७
याके त्वां पुत्रकामा	३.६८.८	यादवी स्वो मुनिश्रेष्ठ	२.३६.३६	यान्यान्मुषोच देवेन्द्र	२.७३.२१	यावद्विषोचयामास	२.६६.६३	युक्तं हयसहस्रेण रथं	२.६३.६४
याजयामास चेन्द्रो	१.३०.१३	या दुस्त्यजा दुर्मति	१.३०.४२	यान्येतानि तु पश्यस्य	३.१२.१०	यावन्तो मनवश्चैव	१.७.२	युक्तं मूक्षसहस्रेण	१.४३.७
याजयिष्यामहे विप्राः	३.१०७.६	यादुर्ध्वं युद्धमातानाम	२.११६.१२८	याः पत्न्यो बसुदेवस्य	१.३५.१	यावन्त्यो वर्यधारास्तु	३.१८.१३	युक्तं मूक्षसहस्रेण	२.४६.३३
या तथास्मिति सूर्ये	२.७६.६६	या नरेषु प्रसज्यन्ते	२.१०४.२१	या पश्यति प्रियं पुत्रं	२.१२.२३	यावन् संप्रामगतो जितो	२.७०.४६	युक्तं मूक्षसहस्रेण	३.४६.४६
यातीव च पुरो भाति	३.११४.१५	या पुत्रभावमुत्सृज्य	२.१०४.१६	या प्रजा पूर्वमाकूटा	३.३२.१५	यावन्तो दुष्कृतं	३.७६.१५	युक्तं च सङ्ख्यपद्याभ्यां	१.४४.१७
या तु पश्यसना	३.१२.४	यानर्चयन्ति सततं देवा	२.६६.७	या भावयति भूतानि	१.१८.६६	यावेतो मम संबुद्धो यजे	२.२८.२२	युक्तं तश्चैव तथाऽज्ञेयः	१.७.८४
या तु सा नन्दगोपस्य	२.२.३४	यानि दानववीराणां	३.५६.३०	यां वै सर्वे सुमनसः	२.१०१.१५	या शेषभोजिनी नित्यं	२.८१.५	युक्ताहारविहारस्य युक्त	१.१६.१२
याते भगवति व्यासे	३.५.७	यानि दुष्टास्त्रियो नास्ति	२.७८.११	यामाहुः पुण्यशीलानां	३.७६.२८	यासां ममूतकल्पं वै	२.१२७.३५	युक्तोकार स्वशिरसं चाह	२.७२.४०
या त्वमेवं महादेहः	२.११०.४०	यानि देवमनुष्येषु रत्नानि	२.६३.६	यामेव रजनीं कृणो	२.४.१२	यास्त्वैकपत्यश्चयन्ते	२.२८.१०६	युगपत्पातयन्ति स्म	२.१०५.३
यादवस्यास्य वंशस्य	२.३७.११	यानि द्रव्याणि कौरव्य	२.७५.६८	यायातमाप वंशस्ते	२.३७.३४	यास्माम्यपचिति दिष्ट्य	१.४८.१६	युगपत्संतिपन्ति स्म	२.१०५.५७

युगं द्वादशसाहस्रं	३.१८.३४	युद्धाय तं यान्तमदीन	३.५२.३८	युवयोः शोणितं पीत्वा	३.१२६.२५	ये च तस्मिन्महारीद्रे	३.१५.६	ये चेमे यादवा मूर्खा	२.२८.३५
युगान्तकरणं धोरं	३.२५.१५	युद्धार्थमुद्यता बीरा निकुम्भार	२.८४.२२	युवयोः सर्वथा जीवः	३.१०६.१४	ये च तेषां गणाः प्रोक्ता	१.१६.४	ये चेमे वाणिका मासाश्च	२.१६.४७
युगान्तकोवमः श्रीमान्	३.५५.१५५	युद्धाय समपद्यन्त	३.६४.६	युवनावथ सद्यस्ती	२.६६.२२	ये च त्वां कीर्तयिष्यन्ति	३.१३०.१६	ये तत्र समनुप्राप्ता न	२.५५.१६
युगान्तसदृशं रूपं शैलो	१.५१.१६	युद्धोत्सुकधिया नित्यं	३.५६.६८	युवां कस्य वने जातो	२.२७.१३	ये च त्वां मत्प्रभावज्ञाः	२.२.५३	ये तु केचित्स्वदोषेण राज्ञः	२.३०.३०
युगान्तसमये भीमं	३.३८.२१	युद्धयतः प्राङ्मुखस्यास्तु	२.१२२.६३	युवां विद्वेद्ययुक्तेन	३.११८.१२	ये च मामभिरोहेयुनरा	३.२७.३७	ये तु गोत्राह्वया	३.२५.१
युगान्तार्कप्रभं चक्रं कालीं	२.४३.५२	युद्धयतां रणशोण्डा	३.५४.३८	युवां विहाययास्ये	३.१०८.१८	ये च यत्रपरा विप्रा	३.१०.५	ये तु तत्र मयस्यासन्	१.४७.५
युगान्तैश्वर्यको यश्च	१.४०.४४	युद्धयमाने हृषीकेशे	२.३०.३६	युवां हि किं वनो युद्धे	३.११८.४२	ये च योगगतिं प्राप्ताः	३.२२.२७	ये तु तं ददृशुस्तत्र	२.२२.१०१
युगे युगे भवन्त्येते	१.२.५५	युधि प्रवृद्धो वलिनो	३.५८.५३	युवा रूपेण संवन्	१.३२.३४	ये च विज्ञानतृप्तास्तु	३.१११.४०	ये तु सिद्धा महात्मानः	३.५२.५
युनैर्यत्रैश्च निर्मुक्ते	३.३८.१७	युधिष्ठिरं च जानामि	२.१६.६५	युष्माकं तेजसोऽद्धतं	१.२.४३	ये च विष्णुमधीयन्ते	३.२७.३६	ये तु हस्ताग्निस्त्रादन्ति	३.२०.१२
युज्यतीति ततोवाच	२.६६.२१	युध्यते दैवतैः सार्धं	३.५७.११	युष्माभिर्दर्शने युक्तमद्भुतं	२.५०.३७	ये च संप्रेक्षका गोप	२.३०.५७	ये त्वन्धचक्षुषः सर्वे	२.७५.५६
युद्धकामा नृपतयस्त्रिविधा	२.४०.४२	युध्यतो रौहिणेयस्य	२.१२२.६५	युष्मद्याद्यां महाभागां	२.१२०.१२	ये च हैमवतो वृक्षा	२.६८.६६	ये त्वन्ये क्वातिमन्तो	१.३.३७
युद्धं चक्रतुस्तथ	३.१२५.१	युध्यमानो महावीरो	३.६७.२१	युष्मत्सिन्धुषु देशी	१.४१.७	ये चान्ये तपसा सिद्धा	३.२२.२६	ये त्वन्ये नृप बाणर्षया	२.७५.५२
युद्धं नो रिपुभिः सार्धं	२.८३.५०	युयुधानपुरोगाश्च	२.११२.६	युष्मत्सिन्धुषु धावन्ति	३.३२.१४	ये चान्ये धारयिष्यन्ति	१.२४.३४	ये त्वन्ये ब्रह्मणः	१.७७.४४
युद्धमार्गैश्च विविधं	२.१४.११	युयुधे मायया दैत्यः शीघ्र	२.८५.२७	युष्माङ्किता वसुमती	१.१०.२१	ये चान्ये विन्ध्य	१.५.२०	ये त्वया निहता दैत्याः	१.५४.२०
युद्धमासौद्धि संन्यानां	२.३६.४	युयुधे वासुदेवस्तु	१.३८.३६	युष्मं वै पितरोऽस्माकं	१.१७.३४	ये चापि पुत्रिणो न	३.२४.२२	ये त्विमे मानुषा देवा	२.६६.११
युद्धयज्ञस्वनेताभूत्प्रह्लादो	३.५४.४	युवतीर्गौपकन्याश्च रात्रौ	२.२०.१८	युष्मं शरीरकर्तारस्तेषां	१.१७.३१	ये चावयोः स्थिरे वृत्ते	२.१६.६०	मे दह्यमाना ह्योर्वेण	१.५५.२१
युद्धं युद्धानि वचनैः	२.१२६.५०	युवताश्चस्य पुत्री तु	१.२७.६	ये केचिद् राक्षसास्तत्र	३.१२६.४४	ये चासां रक्षिणो वृद्धा	२.६४.३०	येन चार्णवमध्यस्थो नष्टे	१.४१.२४
युद्धव्यतिक्रमः कश्चिन्	२.३०.२०	युवताश्चस्य पुत्री तु	१.३२.४८	ये गदं चैव साम्बं	२.६६.५३	ये चेन्द्रियगणाः सर्वे	३.६.६	येन तन्तुरिवाच्छन्नो	३.१८.२५
युद्धाभिकामो नृपतिः	२.५७.१७	युवमिस्त्वविरैश्चैव गोपै	२.६.२६	ये गोशतं कनक शृङ्गमयं	१.१.४	ये चेमे प्रथिमा गोपा	२.१७.३०	येन ते निहता दैत्याः	१.४०.२२
युद्धाभिलाषः सुमहान्	२.११६.५२	युवयोर्हि कृते वृद्धः	२.२७.५	ये ग्रहाः सर्वलोकस्य	३.४६.७	ये चेमे प्राकृता गोपा	२.३०.६६	येन तौ निहतौ युद्धे	३.१३.४

येन स्वमसितापांगि	२.११८.३८	यैः क्रियन्ते हि कर्मणि	१.१८.३६	योधप्राण हरे रौद्रे	३.५७.२६	योऽस्मान्कारयते	६.७.२२	रक्ष त्वं सर्वदा	३.७५.२८
येन दृष्टो हरिः साक्षात्तय	३.८२.३६	यैराव्यो देहिनां भोति कोऽयं	२.७६.१६	योधयामास तेजस्वी	२.६३.१११	योऽहं दोम्यामुदाराभ्यां	२.१.२४	रक्ष देव जगन्नाथ	३.८७.३८
येन भार्याऽऽहृता पूर्व	१.१२.१३	यैर्वीक्षिताः स्व मुनिभिः	२.८२.२६	योधयामास रक्ताक्षो	३.५६.२५	योऽहमेकस्य पुत्रस्य	२.५.५	रक्ष मां देवि सतत	२.१०७.१३
येन भुक्तं हि निखिलं	३.६५.१३	यैषा मायावती नाम	२.१०६.५०	योधयामास समरे	२.१२६.५६	यो हरिवंशं लेखयति	१.१.७	रक्ष मां रक्षणीयो	२.१२७.७६
येन लोकान् कर्मजित्वा	१.४०.१४	यो गतिर्देवदैत्यानां	३.३६.८	यो धेनुकं तालवने	३.८२.२५	यो हि द्वारवतीं प्राप्य	३.१२१.८	रक्षाधिकारो भवतः	२.१११.६
येन वृत्तेन जीवेयुः	३.२८.४०	योगधर्माद्वि धर्मज न	१.१६.१८	योऽस्तकाले जगत्पीत्वा	१.४०.१५	यो हि योद्धा रणं याति	१.६.५१	रक्षां कृत्वा स्थित	३.२८.७८
येन वेद्य विदुर्मर्त्या	३.१७.५६	योगपटुमुपाश्रित्य	२.१२६.४८	योऽप्यसौ ह्यविक्रान्तो	१.५४.७०	यो ह्यास्य जेता भगवांस्तं	३.६४.२५	रक्षिता चैव गोप्ता च	२.१२७.११७
येन संहं वपुं कृत्वा	१.४०.१८	योगाचार्यो महावीर्यो	२.६२.५	योऽभिगुप्तः स्वयं ब्रह्मन्	२.११६.४	यो तावजुं नवृक्षो तु व्रजे	२.७.२२	रक्षितारो महाभूतो	३.११६.६
येन स्वर्गादिहागत्य	१.१५.१४	योगतना धारयन्तुर्वी	३.२६.२८	योऽयं करीषधर्मश्च	२.३०.२१	यो तौ मयश्च तारश्च	१.५४.१७	रक्षितासि सदा विष्णु	३.११५.२१
येनाशेन हृता गावः	१.५५.३३	योगारम्भं कर्मसाध्यं	३.१७.५४	यो यं संकल्पयामास	२.७५.५६	यौवनाश्वेन समरे	१.३२.१२५	रक्षिष्यामीति चोक्तं ते	२.११२.१४
येनाह दूषिता पूर्व	२.११८.७०	योगेश्वराः षट् च	३.५३.४०	यो यस्य भवतो	३.४०.६	र		रक्षिष्यामीति चोक्तं ते	२.११२.१७
येनोद्धृतास्त्रैः पुरा मायिनो	२.७२.५४	योगो हि दुर्लभो नित्य	१.१६.१०	योऽयं हतस्त्वया विष्णो	१.४८.५६	रंस्यावस्तत्र सहितो राज्य	२.३७.२२	रक्ष्यतामिति चोक्तं चैव	२.११६.१६४
ये यजन्ति मर्लैः	३.३७.२६	योग्यानि यानि मर्त्यानां	२.६६.७३	यो वक्ता यश्च वक्तव्य	३.७.२३	रक्तकौपीनवसनो	३.१०७.२०	रघोरथ कुले जातो	३.८२.१७
ये यजन्ति मर्लं	३.४०.२६	योजयामासभूतात्मा	३.१२७.४६	यो वरं दत्तावान् रुद्रो	३.११६.४	रक्तचन्दनदिग्धाङ्गं दीर्घं	२.२६.५३	रंगमध्यादुत्पत्ता कृष्णः	२.३०.७३
ये विमुष्टास्तु राजानो	२.४६.६२	योजयाद्वानिति तथा	२.११२.२६	यो विष्णुः सतु वै रुद्रो	२.१२५.३१	रक्तचित्राम्बरधरा	३.५१.५८	रंगवाटे करीषस्य	२.१८.१२
येषां भासो विभ्रात्यग्रे	३.३७.२८	योजयित्वा ततस्स्कन्धे	२.४३.५८	यो वैकुण्ठः सुरद्राणां	३.३६.६	रक्ततोयो भोमवेगो	३.४६.५१	रंगवाटे गज मत्त	२.१०१.५६
येषामर्थाय संग्रामे	१.२८.६	यो देवानामधिपः पापहर्ता	२.७२.३०	योऽसौ कृष्ण इति ख्यातो	२.४८.६	रक्तपीतारुणश्यामा	२.६८.७०	रजकः स तु तो प्राह	२.२७.११
येषामिह च सान्निध्यं	३.२७.४६	योद्धुकामो सुदुर्बलो	१.४१.२५	योऽसौ चापं समादाय	३.८२.३२	रक्तपीतारुणास्तत्र	३.४१.७६	रजण्यां तु निवृत्तायां तत	२.३२.५७
ये स्वस्थास्त्वसुरास्तत्र	२.८७.२१	योद्धुं वितरते ह्यद्य	१.१२६.८८	योऽसौ पृथ्वीं दधाराणु	३.८२.६	रक्तश्च मोक्षविषये	३.१६.५	रजः प्रच्छादयामास	३.५४.४०
ये हि देवैर्विरुध्यन्ते	२.११६.८८	योऽयं गोपकतामासौ	३.६२.१०	योऽसौ हत्वा महामल्लं	३.८२.३४	रक्षणातव देवेश सदा	१.१३०.१३	रजस्तमोमयावावां यतीनां	३.१३.१५

रजिः पुत्रशतानीह जनया	१.२८.३	रत्नानि च ब्रह्मदत्तो	२.८३.१२	रथस्यं पाथिवं रामः	१.४१.११३	रथेनमिस्वर्तर्धोरैस्तुपुलः	३.५४.२६	रम्यां नितेशयामास	१.२६.७७
रणपटुरतिवीर्यसत्त्व	३.५१.१८	रत्नानि चैव पूर्णानि	२.८०.४०	रथस्थौदंक्षिनी चैव	२.३५.५५	रथेन हरिवृक्तेन तेन	२.४४.६०	रयामः शमीको गण्डूषः	१.३४.२२
रणप्रवेश सद्गं कर्म	३.५६.३१	रत्नानि तु प्रयच्छामि	२.८३.१६	रथहस्त्यश्वयोधाश्च	३.६४.५	रथेनादित्यवर्णं भास्वता	२.४४.२	रथपृथिवी चैव	३.१७.१३
रणमध्ये स्थितः कार्णिणः	२.१०५.३१	रत्नानि यानि त्रैलोक्ये	२.८८.७६	रथांश्च नागांश्च	३.५२.४५	रथे श्वेतहयेनेह	३.५५.५५	रराज ब्रह्मयोगेन	३.१७.३८
रणाभिजर्जलितो घोरो	३.५४.१०	रत्नैश्चाभरणैर्मुक्ता तव	२.६६.३५	रथाङ्गेनाथ शाङ्गेण	२.७०.४४	रथेष्वतिरथो यन्ता दाहकः	२.५८.८२	रराज मगनासा	३.४५.१४
रणाद्विचलित घोरं	२.५८.१२	रथनागाश्ववृन्देषु	३.५६.३१	रथाद्र धिवर श्रेष्ठस्तौ	३.१२७.२४	रथैः पवनसंपातैर्गजैश्च	२.४२.१०	रराज शङ्खचक्राभ्यां	३.३६.१४
रणेऽतिष्ठत दैत्येन्द्रो	३.५८.३०	रथन्तरेण साम्नाथ	३.१३३.६८	रथानां मेघघोषाणां	१.३७.२४	रथैस्तु बहुसाहस्रैः	३.५१.४१	रराज सुमहाशृङ्गैर्मगन	३.४६.६०
रणे योधायितुं शक्तस्तव	२.५२.२२	रथं त्यक्त्वा महातेजाः	३.५६.१४	रथानां वाजियुक्तानां	२.८५.६८	रथैस्तांश्चर्मैर्कुर्युक्तरसङ्ग	२.३५.१६	रराज त्रिपुरं राजन्	३.१३३.१६
रणे विजयमानस्य कीर्ति	२.३०.२७	रथं त्यक्त्वा महाभागो	३.५५.१४६	रथान् गजान् समारुह्य	३.६५.१६	रथोपस्थे पपाताशु	३.६६.२४	रराम सह रुक्मिण्या जले	२.८८.३०
रणे वैश्रवणस्तेन परिधौ	१.४७.४६	रथं महान्तमारुह्य	३.६३.१३	रथान् सारथिभिः सार्द्धं	२.१०५.५६	रथो मायामयो दग्धस्त्वया	२.७३.५५	रराज सूर्यरश्मिभिर्यं	३.२८.५३
रणे अतिष्ठद्वैत्येन्द्रो	३.५५.५४	रथं महान्तमारुह्य	३.६५.१२	रथा बहुविधाकाराः	३.५४.३४	रथोऽयं भगवन्देव	३.१००.१५	रश्मिजालैरिवाकस्य	३.५५.५८
रणेषु भयस्मिद्धिर्हृतस्येह	२.३०.२८	रथं राजः समाहृत्य	३.१०१.७	रथा रथैः समायुक्ता	३.६४.११	रथो व्याघ्रसहस्रेण	३.४६.३६	रश्मिभिः पुनरुत्तीर्णा	३.२८.५५
रतमिन्द्रेण रम्भायां	३.५.३०	रथं संबोदयामास	२.१०६.३	रथा रथैः समाजग्मु	३.१२२.१०	रदेनेः पन्नगरिपुं करेण	२.७३.८७	रश्मिवन्तभिवोद्यन्त	३.५८.३४
रतिश्रमश्चेदविना	२.६५.११	रथं समांरुह्य सुवर्णं	३.५२.४४	रथाश्चनरनागानां	२.५१.११	रमते तत्र वै देवो रममाणौ	१.२६.६३	रवमीन् योक्त्राणि	३.५५.१०
रतेः संवादनाथयि	२.१०६.५२	रथमध्यगतो वीरस्ससंघ	२.६३.६५	रथाश्चनरनागेन नास्माभिः	२.४६.१४	रममाणानिरुद्धेन	२.११६.७७	रसवन्तः प्रभूताश्च	३.४१.५५
रतनजालानि दिव्यानि	२.६८.५८	रथमारुह्य दैत्येन्द्रो	३.५१.११	रथिनस्सादिनश्चैव	२.३५.१०१	रम्भानामाप्तरा	३.५.२६	रसश्च तन्मयो जज्ञे	३.१८.२७
रत्नभूता च कन्येयं	१.२.४१	रथमारुह्य युद्धाय	३.१००.४४	रथी त्वमनुगच्छेति सादश्य	२.६०.१०	रम्भाभिसारं कौबेरं	२.६३.२८	रसांश्च विविधान्योग	३.१६.३३
रतन वेदिकपङ्काशं	२.१३२.४२	रथमुत्सहस्रेण	३.५०.४	रथेष्वजं तथा चापे	३.१२४.८	रम्भोऽनपत्यस्त्रासीद	१.२६.१	रसातलं नाकपृष्ठं	२.११२.२५
रत्नातिशयदानेन तस्याम	२.६७.६	रथशक्तिभिरन्योन्यं	३.५४.७४	रथेद खरयुक्तेन	३.५१.४०	रम्यं मधुवनं नाम काम	२.३७.२०	रसात्मकं तदैश्वर्यं	३.१६.२५
रत्नानां चैव सर्वेषां	३.३७.१०	रथस्य एव रथिनं काम	२.७३.२६	रथेन न मया गन्तुं युक्त	२.५५.३५	रम्यं यज्ञगिरि नाम सप्तस्य	२.३६.५७	रसात्मकं तदैश्वर्यं	३.१६.३२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१८२

रक्षोऽयं देवहूत्येव ३.१११.५०	राजर्षेयादिवस्यासी २.५६.१०	राजापि हास्तिनपुरं ३.५.१०	रात्रावहनि दुर्गे २.१०६.८४	रामायणं महाकाव्यमुद्देश्यं २.६३.६
रहस्य वसुदेवेन सोऽनुज्ञातो २.५.१४	राजलक्षणसंपूर्णमासम्ना २.५५.३३	राजा प्रमादी दुर्बुद्धिजित २.११६.७६	रात्रि युगसहस्रान्तां कृत्वा १.८.४२	रामाहुकगदाङ्गूर २.६६.१८
राक्षसाश्च पिशाचाश्च २.१२५.६३	राजवृत्तिस्थिताञ्चारी ३.३.६	राजा विभ्राजमानस्तु १.२३.३	रात्रिमध्यमनुप्राप्तं ३.८०.५४	रामेण निहते तस्मिन् २.४३.६०
राक्षसाश्च पिशाचाश्च ३.६६.२	राजसूर्यं महायज्ञं ३.११३.४	राजा वाङ्मयवक्ता वैराजा २.३६.२	रात्रौ प्रादुरभूच्छब्दः ३.६४.२१	रामेण सह गोविन्दः २.१००.१७
राक्षसाश्च महाघोरा ३.१२२.१८	राजसूर्यं महायज्ञं ३.११८.४७	राजेन्द्रत्वमनुप्राप्य युक्तं २.५५.७५	रात्रौ व्यावर्तितावेतो गर्भौ २.२२.५१	रामेण सह निश्चित्य २.५६.४३
राक्षसी निहता रौद्रा २.१०१.३१	राजसूर्यस्तु तोमेन ३.२.१६	राज्यं च ते माया दत्तं २.१२७.२७	रामकृष्णो च राजा स २.६३.२८	रामेण सह संमन्य २.५५.२७
राक्षसैश्च पिशाचैश्च १.६.३५	राजसूयाभिषिक्ता १.२.२४	राज्यं च कारयामास १.२६.४६	रामकृष्णो समाश्रित्य हते २.३४.६	रामेणोदाहृतं पूर्वमायुः २.१०६.१०३
राक्षसेस्तस्य रत्नानि २.३३.२४	राजसूयेन यज्ञेन ३.११५.२५	राज्यान्निरस्तो विश्वस्तः २.३७.१७	रामस्त्वमपि चावाप्य २.७१.३८	रामोव्यासस्तथात्रेयो १.७.४७
राजविश्वरप्रसुप्तोऽसि २.५७.५७	राजसूयो ह्यसंहार्यो ३.२.२१	राज्ये स्थिते नृपे तस्मिन् २.३८.३६	रामप्रेणतामुनिराजपुत्र २.८६.२४	रावणं निजघानाशु रामो १.४१.१३६
राजश्रीराग्निदण्डातो ३.३.२६	राजसेनापि संयत्ता चेदि २.८४.१८	राज्ञस्तु महिषी श्रेष्ठा १.२६.५२	रामलक्ष्मणशत्रुघ्ना भरत २.६३.८	रावणेन पुरा गीतश्लोको २.३१.४४
राजताः काञ्चनाश्चैव ३.३५.३४	राजसेविषु विश्वासं गर्भं १.२०.१२४	राज्ञस्तानुहंयामितद् २.२७.२८	रामश्च डिम्भकश्चैव ३.१२७.१६	राष्ट्रपालोऽयं सुतनुररनाष्ट्र १.३७.३१
राजद्वारेषु तीर्थेषु २.३.१७	राजा कुबलयापीडस्समाज २.२६.१७	राज्ञा तेन तदा राज १.२०.८६	रामस्तस्य तु मोक्षार्थं २.६२.१०	राष्ट्रस्येच्छसि चेत्स्वस्ति १.२०.५३
राजन्यस्तु तथा ३.८८.३७	राजा कुत्सनस्य जगतः २.६६.५	राज्ञां तत्र समेतानां हस्त्य २.४७.६	रामस्तु यमुनामाह २.४६.३०	रासवसाने त्वय गृह्य हस्ते २.८६.३०
राजन्वक्याभ्यर्हं २.११६.१८०	राजा त्वं भविता ततः १.२२.४	राज्ञां तत्र समेतानां हस्त्य २.४७.३६	रामस्य तनयो जज्ञे १.१५.२७	राहुरयसदादित्यं २.११६.६३
राजपति गतो रोषस्तहानेन २.४४.५४	राजाधिदेवस्य सुता जज्ञिरे १.३८.२	राज्ञां निघनष्टार्था २.४०.४३	रामस्य तु गदावेगं २.३६.२२	राहुर्ज्यैष्ठस्तु तेषां १.३.१०१
राजपुत्र्यां तु विद्वांसो १.३६.२०	राजाधिदेवी च तथा १.३४.२३	राज्ञां पराजय युद्धे गोमन्ते २.४३.६५	रामस्य तु गदावेगं २.४३.७१	राहुस्तु विकृताकारः ३.५३.१६
राजभिः सर्वतो रुद्धो २.६२.६	राजाधिदेवे मदुरे प्रसेने २.५६.५०	राज्ञां भयंकरो घोरः १.५४.६६	राम रामाभिरामस्त्वं २.४१.३०	रिपुं रिपुं जयं पुण्यं १.२.१५
राजमार्गेषु राजेन्द्र २.५५.२३	राजानश्चापरे वीरा २.८३.२८	राज्ञां मध्ये महाराज २.१११.५	रामात्ततोऽस्य मृत्युर्वै १.३३.४७	रिपुस्तवमुसंयन्नेनानुबन्धः ३.१५.५
राजविष्ठा ततः पीता १.२७.८	राजानो वीर मुञ्चेति पुनः २.८५.५१	राज्ञा राज्यवत स्येन १.५४.२६	रामादनन्तरं कृष्णः प्रगृह्णा २.५३.३४	रिपूणां त्रासजननं मित्राणां २.५३.११
	राजा पञ्चजनो नाम १.१५.७	राज्ञां स्वयंवरो नाम २.४८.४७	रामादनन्तरं कृष्णः प्लुतो २.४२.८६	रिपून् बाधयितुं शक्तो २.५२.२२

रिष्टो नाम दितेः पुत्रो	१.५४.७३	रुक्मेरुभवद्राजा पृथु	१.३६.१३	रुद्रस्य परमो विष्णु	२.१२५.४१	रुपं कान्ति मति चैव	२.११६.४६	रेवतस्याथ कन्यां च	२.५८.८४
रुक्मघातु प्रतिच्छन्न	३.३५.४०	रुक्मेषुः पृथुक्कमश्च	१.३६.१२	रुद्रस्यैव हि तद्रूपं	३.३२.५	रुपं कृत्वा महाकायं	३.७२.२८	रेवती रुक्मिणी चैव	२.१२८.१४
रुक्मपुंजाः प्रकाशन्त	३.५५.६०	रुचिरानी यथा दिव्या	२.६६.४५	रुद्राक्षपितसर्वांगी	३.१०५.२१	रुपं ते सौम्य पश्यति	२.१०४.३१	रेवत्या चैकया सार्व	२.८८.११
रुक्मपुंजान्प्रदीप्ता	३.५४.५४	रुचिरः श्वेतकेतुश्च	१.२०.२१	रुद्राणी भद्रकाली च	२.१०६.५०	रुपं विलासं गंधं च	२.६४.३२	रेवत्यां बलदेवस्य	२.१०३.२४
रुक्मपुंजैस्ततस्तस्य	३.५५.६२	रुचिरस्य तु दायादः	१.२०.२२	रुद्रादुग्रं भयं स्याद्येन	२.८२.१६	रुपं विवस्वतश्चासी	१.६.४२	रेसुरारोषितास्तिहास्तजला	२.१८.४३
रुक्मिणं निकृतिप्रज्ञं	२.६१.५०	रुचिराग्रकरश्चास्य	२.२५.२६	रुद्रा क्षुद्रा च भद्रा च	१.३१.११	रुपयौवनसंपन्ना	२.६५.५०	रैवतं च गिरि देवो गत्वा	२.७३.३
रुक्मिणस्तद्वचः श्रुत्वा	२.६१.३४	रुचिरोत्पलरक्तोष्ठीं	२.११.३५	रुद्राश्च काश्यपा देव	२.६६.८	रुपवानसि विक्रात्रस्त्वं	२.१०४.२४	रैवतं च गिरिश्रेष्ठं कुह	२.५५.११०
रुक्मिणा वासुदेवस्य भीष्म	२.३६.२	रुचेः प्रजापतेः पुत्रा	१.७.४५	रुद्राश्चैकादश भोक्ता	२.१०६.१३	रुपवान्भुगो दान्तः	३.१३२.२०	रैवतस्यात्मजो राजा	३.३८.४६
रुक्मिणी च महाभागा	२.६१.५७	रुच्या वल्लिप्रतीकाशः	२.६२.२७	रुद्राश्चैव तथा राजन्द्रष्टुं	३.८५.५	रुपिणी गस्थ पाशर्वस्था	१.४१.१२६	रोचते मे सुरश्रेष्ठा	१.५३.१२
रुक्मिणी चैव तं दृष्ट्वा	२.१०.८	रुच्या सा स्त्री भवेद्	२.८१.४	रुद्रो देवस्त्वं रुद्रनाद-	२.७४.२२	रुपेणानेव दैत्येन्द्र	३.७१.३३	रोदसी पूरयामास	३.१००.८
रुक्मिणी त्वभवद्राजन्	२.५६.१६	रुते युगसहस्रान्ते	३.३६.१७	रुधिराद्रास्तु बहव	३.६०.६३	रेणकायां तु कामल्यां	१.२७.३६	रोषयार्थकुले चैव नेत्रे	२.१२६.४६
रुक्मिणी नाम ते कन्या	२.५१.३१	रुदनीनां भृशातीनां	२.३१.५६	रुधिराद्रिं महावक्त्रैः	२.१२४.२५	रेणुना सूर्यमार्गं तु	१.५७.२३	रोषमाहारयामास	२.६१.३५
रुक्मिणीं प्रतक्तं चक्रे दृष्ट्वा	२.८१.३६	रुदितानुदशयो नार्या	२.३१.३७	रुधिरौघप्लुतैर्गत्रि	२.११६.१५५	रेमिरेवृणयस्त्र पूज्य	२.६१.१८	रोषितः शरवर्षेण	३.६०.२१
रुक्मिणी सत्यभामा	२.१०३.३	रुद्धं बाणपुरे वीरं	२.१२०.४०	रुधिरौघप्लुतैर्गत्रि	२.१२२.३६	रेमिरेऽमुरकन्याभिः	२.६४.५१	रोषितस्तालशब्देन	२.२१.१५
रुक्मिणोद्भासितां रम्यां शैलो	२.५५.८	रुद्धेषु भूमिपालेषु सानुगेषु	२.८५.१	रुधन्ति बाहुभिः	३.२५.१२	रेमे च सह पार्थेन	२.७६.२५	रोषो मे विगतस्तप्ताव	२.४४.५५
रुक्मिण्या आतरं ज्येष्ठं	२.६१.४६	रुद्रप्रिये महाभागे	२.१२०.४७	रुक्कस्य वृक्षः पुत्रो	१.१३.३०	रेमे बलञ्चन्दनपङ्कदिग्धः	२.८६.१	रोहिणी च महाभागा	२.७७.१३
रुक्मिण्यां वासुदेवस्य	२.१०४.२	रुद्रमग्निमयं विद्धाद्रिष्णु	२.१२५.३५	रुहुस्ते गिरिवरं	२.४०.२६	रेमे समेत्य कालज्ञ	२.३७.१८	रोहिणीप्रमुखाः कन्या	३.३६.२६
रुक्मिण्याद्या स्त्रियस्तस्या	२.७१.१६	रुद्रमाराधयामास द्वादशा	२.५२.२७	रुद्रोद तद्वलं दृष्ट्वा	२.११६.८६	रेमे सह तथा वीरो	२.६१.६	रोहिण्येगो हते तस्मिन्	२.३०.४८
रुक्मो चैवावहृतिश्चैव	२.८३.२७	रुद्रः शरैणाम्यहनत्	३.३२.४३	रुद्रोद्य मार्गं योधानां	३.५८.६६	रेमे सह प्रभावत्या	२.६४.२७	रोहिण्याथ च फाल्गुन्या	२.८१.४३
रुक्मी तस्याभवदुत्रो	२.५६.१४	रुद्रस्तस्मै वरं प्रादात्समर्थं	२.५७.११	रुषिणा मिव तां रेवीं	२.६६.४	रेमे सोमश्च भगवान्	२.८७.३६	रोहिण्यामहनि श्रेष्ठे	२.५८.३

रोहितो लोहितश्रीवो	३.६२.३	लतावेष्टितपर्यन्तं	२.६८.१८	ललाटे च पुनर्विष्णु	२.१२३.१०	लेभे ज्येष्ठं सुतं रामं	१.३५.५	लोकाः सोमपदा नाम	१.१८.२५
रीन्मिण्येयस्ततः सृष्ट्वा	२.८४.४५	लपन्तः कोकिलांछितां	२.७५.५७	ललाटे चित्रये हंसो	३.१२७.३२	लेभे प्रसेनजिह्वायां	१.१२.५	लोके पतितवृत्तस्य पठ्य	२.३२.८
रीन्मिण्येयोऽपि कृष्णेन	२.६०.२८	लब्ध प्रशमनं चैव	२.६७.२३	ललाटे मुष्टं वीरो	३.६६.१७	लेलिहानस्य निषेधं	२.२१.३	लाकेऽप्रतिरथो वीरः शक्र	१.३४.२६
रीदं तदुयं शूलं	३.४४.६	लब्धमात्रे वरे चापि सर्वाः	१.४१.६५	लवणजलगमा महानदी	२.६२.१८	लेलिहानानि दिव्यानि	२.४३.६	लोकेऽश्वरेऽश्वरः श्रीमान्	३.६६.५६
रीदः शकटचक्राक्षो	३.५१.२०	लब्धमात्रे वरे तस्मिन्सर्वाः	३.४१.२७	लवणप्रतिमां दद्यान्नवनीत	२.७६.२५	लोकच्छायाभयं लक्ष्म	१.४६.५	लोकेषु दिवि वर्तन्ते	१.१८.६५
रीद्रेण तत्ततो हंसो	३.१२७.४३	लब्ध्वा च दामानि	३.८२.३१	लवणानि बहूण्याशु	३.११४.१६	लोकपालसमास्तात महेन्द्र	२.३२.३७	लोकेऽस्मिन्वासुदेवोऽहं	२.४४.२२
रीद्रेण तेजसा जुष्टा	२.६८.२६	लब्ध्वा पञ्चशतं कन्या	२.८३.४५	लवणानि बहूण्याशु	३.११५.२८	लोकपालास्तदा विष्णु	३.६०.३५	लोपामुद्राप्रसादेन परमायु	१.२६.७६
रीहिण्येन संगम्य	२.१०१.४२	लब्ध्वा स तु पुनः	३.६०.६८	लवणेन समायुक्तस्त्वमिमं	२.३७.३६	लोकपालेषु सर्वेषु दिक्षु	१.४६.४३	लोमपादं तृतीयं तु पुत्रं	१.३६.२१
रीहितो दीप्तिमाञ्चैव	२.१०३.८	लब्ध्वा हंसः स संज्ञा	२.१२४.४	लाघवं समुपागम्य	२.१२४.७	लोकवृद्धिकरः श्रीमान्	३.७६.२०	लोमपादो दशरथ ऋष्य	२.६३.७
रीहिण्यं च पुत्रं मे परिरक्ष	२.५.४	लभेत्पञ्च वराञ्चैव	१.३३.६०	लाङ्गलादिष्टमार्गां त्वमिम	२.४६.५०	लोकसाक्षी द्विजहृतः	३.६२.५	लोहचक्राष्टसंयुक्तं त्रिनस्व	२.६३.६२
ल		लम्बकेशो विरुपाक्षो	३.७६.२	लाङ्गलादिष्टवर्मा सा	२.४६.३६	लोकाश्चेमान्तदा मूढ	३.१६.३२	लोहजालेन महता	१.४३.१०
लक्ष्मीः कीर्तिस्थथा	३.१४.३४	लम्बा घोषं विजज्ञेऽथ	३.३६.५४	लाङ्गली मुसली चक्री	२.१२१.११८	लोकानां त्वं गतिदेव	३.१०८.३	लोहिताक्षो महाबाहुः	३.५०.२३
लक्ष्मीर्मेधा धृतिः	३.७१.५३	लम्बां द्वितीयां तिष्ठन्तीं	२.१२६.११३	लाङ्गलेनावसितेन भुजंगा	२.४६.२८	लोकानां त्वं गतिदेव	२.१२६.१३६	लोहिता यामदूताश्च	१.२७.५०
लक्ष्यं मामकरोत्तत्र	३.८८.६	लम्बायाश्चैव घोषोऽथ	१.३.३४	लाङ्गूलं चास्य वेगेन	२.२६.३७	लोकानां प्रभवः पाता	३.८०.३७	लोहिताविष्टमात्रस्तु	३.१२४.६
लभ्याः परिपतन्ति	२.१२४.२३	लम्बुस्तु लम्बमेधाभः	१.४३.२१	लाङ्गलीलिखितापाङ्गी	२.४६.४०	लोकानामथ पानास्मि	३.८०.११	लोहिताश्वं वायुचक्रं	३.६२.१०
लघुत्वाच्च महाबाहु	३.५६.६८	लम्बोदराश्च बलिनः	२.१०६.४७	लालनीयो यथीयांस्तु	२.६६.३४	लोकानामन्तकालज्ञा काली	१.५०.८	लोहित्या जनमाता च	२.१०६.५२
लज्जावंती महाभागा	२.११७.६१	लम्बोदरो विरुपाक्षः	३.१२६.५	लिप्तां चक्रे प्रसेनात्तु	१.३८.२६	लोकाः साध्वीनामुत्तमानां	२.७६.१४	लोष्टरिष्टैः शिलाभिश्च	१.४८.३५
लटाटमध्यादसृजन्नारवं	३.२०.१७	लम्बो नामेति विख्यातो	१.५४.७४	लीलायमानास्तिष्ठति	२.१२४.२६	लोका भरतशार्दूल कश्यप	१.३.५४	लोहित्या यामदूताश्च	१.३२.५८
लताचारुविचित्रं च नाना	२.४०.५	लयतालसम श्रुत्वा	२.६३.२५	लुण्ठिता क्रीडिता तेन	१.३३.२८	लोकायनाय त्रिदशायनाय	३.४०.२७	ल	
लताविताना संछन्ना	३.४१.५७	ललाटं रूपसम्पन्नमानीति	२.८०.११	लुब्धकस्यात्म जास्तात	१.२१.१७	लोकाः सनातना नाम	१.१८.७	वंशजस्तत्र ते राजाकृष्ण	२.३६.६२

वंशप्रतिष्ठामतुलां	२.१२८.३४	वज्रनाभश्च तद्वाक्यं	२.१६६.७	वर्धः प्रहरणीयैश्च	१.४७.१३	वधाय सर्वे गृह्यन्तां	२.१६६.२५	वनेषु च विराजन्ते पादपा	२.१६३.५
वंशवद्धाः काश्यपानां सर्वे	२.१२८.१०	वज्रनाभस्य तत्काया	२.१७१.१८	वज्रो नाम महाव्यूहो	३.६१.४	वधार्थं देवशत्रूणां	१.४१.१२५	वनेषु रुधुर्दृष्टं मधुरं	२.८८.६८
वंशे चास्मिन्तव विभो	२.३७.६२	वज्रनाभस्य तद्वाज्यं	२.१७१.२५	वञ्चनीया भविष्यामो	२.३८.६३	वधार्थं शम्बरस्य	२.१०६.४६	वने सतालहस्ताभिः	२.२०.२७
वंशे वधूस्त्वं कमलायताक्षि	२.१५.३८	वज्रनाभस्य तु भ्राता	२.१४.३३	वटमूले तथा चेह्नपः	२.८२.६	वधे ह्यस्य महान्दोषो	२.११६.१८५	वनेऽस्मिन्लवणश्चायं	२.३७.२६
वक्तव्यं च ब्रजे तस्मिन्समीपे	२.२२.६१	वज्रनाभोऽयं दुष्टात्मा वर	२.११.१३	वडवामुल्लेख्य वसतिः	१.४५.६०	वध्यतामयमद्यैव न नः	२.११६.१६७	वन्धयुष्मावतसाभिर्गोप	२.५.२६
वक्तव्यं सर्वथा सद्भिरप्रियं	२.७१.६	वज्रनाभोऽहं तव्यः	२.१६.१२	वडवारुपमास्थाय वने	१.६.५१	वध्यमानाः शरैस्तीक्ष्णै	३.५८.६	वन्धैः कर्मफलैश्चैव	३.२४.६
वक्तव्यो बलभद्रश्च राजा	२.७३.१०३	वज्रनाभोऽपि निर्वृत्ते सत्रे	२.१६.२	वडवावपुषा राजश्चरन्ती	१.६.५३	वनं गत्वा तु तो वीरो	३.१०६.२	वपुर्दृष्ट्वाभ्यह विष्णोः	३.११४.८
वक्त्रैश्चतुर्वेदचरैश्च	३.५३.४१	वज्रपाणिस्ततो गर्भं	१.३.१३३	वडवाः सुपुत्राश्च गावो	२.८७.३०	वनं निविषयाकारं	२.११.५४	वपुर्वामनास्थाय	२.२२.४३
वक्रण चायं घोरेण	२.२४.३३	वज्रपातनिर्भवं पातयित्वा	२.५३.४४	वडवाः वैश्ववर्णं कृत्वा	१.६.३३	वनमालाकुलोत्स्कः	२.६३.४८	वपुषा तेज आधत्ते	२.१२६.१०६
वक्रमंगारकश्चक्रो	२.११६.६६	वज्रं नगरमायान्तं निकुम्भं	२.१०.११	वत्समध्ये स्थितं कृष्णं	२.२५.१७	वनमालाकुलोत्स्की	२.४१.२	वमञ्छोऽणि तमस्युष्ण	३.६६.१३
वक्त्रं ब्रह्मसमुद्भूतं	३.१७.६	वज्रं रघोरच्छदग्निदुर्वर्णं	२.६३.६६	वत्सयूथानि कल्पन्तां	२.१.११	वनमालोत्सं दिव्यं	२.५५.३२	वमन्तः पावकं घोरं	२.१२.१२
वक्षः स्थलं सदा विष्णोः	३.११४.१३	वज्रमिन्द्रस्तपोयोगाच्छत	३.२६.८	वत्सव्यापारयुक्ताभ्यां	२.११.५	वनवासप्रवृत्तेन यत्त्वया	१.५४.३५	वमन्तः शोणितं जम्बुः	२.११६.१२७
वक्ष्ययवाम्निधुनं जज्ञे	१.३२.७०	वज्रविस्फुजिताकारमा-	२.६३.११४	वत्सस्तु मधवानासोद्गोधा	१.६.२३	वनवासीति विख्यातः	२.३८.२८	वयं च प्रथमं प्राप्नो	२.३६.३८
वचनं तस्य संभृत्य	२.११६.१३७	वज्रविस्फुजितोद्भूतं विष्णु	१.४४.६	वत्सस्तु हिमवानासी	१.६.४१	वनवासे स्थितो वीरो कंस	२.४६.८	वयं चान्ये च सचिवा	२.११६.७१
वचनं व्याहृतं श्रुत्वा	२.५२.१२	वज्राज्जज्ञे प्रतिरथः	२.१०३.२६	वत्सानां रोपितैः कीर्णै	२.५.२४	वनस्पतीनां सर्वेषां	२.१६.६४	वयं तु यतिवर्माणः	१.१७.१६
वचनेन किमुक्तेन स्वया	२.५१.२६	वज्राशनिगदा स्रज्ज्व	२.१०२.२२	वत्सावते त्वपुत्राय	१.३४.३४	वनस्पत्योपधीश्चैव	३.२६.४०	वयं दीक्षां प्रदेक्ष्यामः	१.५.६
वचोभिर्मधुराभाषैः	३.२५.३	वज्राशनिनिपातास्तान्सेहे	२.७३.६७	वदनादभिनीष्क्रान्तं	३.१७.५	वनान्तरगतो रामः पानं	२.४६.२३	वयं युष्मेष्वनुचितास्मुखे	२.३१.१३
वज्रध्वजेन महता	२.६३.६३	वज्रास्त्र पीडिता भ्रान्ता	३.५८.१००	वदन्तो कृष्ण कृष्णैति	३.७६.७	वनान्ता गिर्यस्सर्वे सा	२.१६.६	वयं यक्षामहे पूर्वं पूर्वं	३.२५.७
वज्रनाभ निबोध त्वं	२.१६.३	वज्रेणास्त्रेण दिव्येन	३.५८.६६	वधं संकल्पित्वा	३.४१.३६	वने चैत्रये रम्ये	१.२६.६	वयं वनचरा गोपास्तदा	२.१६.२
वज्रनाभवधं ह्युक्तं निकुम्भं	२.११.३	वज्रेणेवावहणानां नगानां	२.१०.१८	वधश्चैव शृगासस्य	२.४६.१४	वने यथा निरुत्पन्नस्तै-	३.६७.१७	वयं हि देशातिथयो मत्स्राः	२.२७.३२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१६६

वयमर्धं सहितौ	३.१०७.७	वरं वरय धर्मज्ञ यस्ते	२.७६.१५	वर्णयित्वा यथान्यायं	३.६६.६३	ववन्दिरे तदा कृष्णं	२.१२७.१११	वसुदेवसुतो ती च राजमागं	२.२७.२५
वयमभ्युपयास्याम	१.३६.५	वरं वरय भद्रं ते	३.८३.२६	वर्णाभ्यां युज्यमानस्य	३.१८.१४	ववर्ष शरजालानि	२.११६.१४६	वसुदेवस्तत्र यातो देवक्या	२.८३.५
वयसोऽन्ते महाबाहुर्हत्वा	१.३२.३५	वरं वरय भद्रं वां	३.१०५.११	वर्ततां मम देवेश	३.८०.६४	ववृषुः शरजालानि	२.१०५.५	वसुदेवस्तु संगृह्य दारकं	२.४.२५
वयांसि साधुवाक्यानि	२.३३.३६	वरं वरय वत्स स्वममोघं	२.१०७.१५	वर्तते सांत्सवस्तत्र	२.१२८.६	ववौ मनोहरो बातो	२.८८.७३	वसुदेवस्तु संरक्ष्यः स्त्री	२.२.५
वयांसि साधुवाक्यानि	२.४५.१०	वरं वृणीष्व बाणं त्वं	२.१२६.१४६	वर्तन्ते पितरः स्वर्ग्ये	१.१६.१२	वसतस्तस्य कृष्णस्य सदा	२.६५.१३	वसुदेवस्य भवनं ततस्तौ	२.३३.४१
वयुष्मन्तः सुजयनाः	३.६६.१५	वराहः सरितं पुण्यां	३.३५.३८	वर्तमाने मध्ये येन जनक	१.४१.१२७	वगते परमप्रीता देवतैरपि	२.२२.५६	वसुदेवस्य भवनं पितुस्तौ	२.४५.१५
वयोभिर्वसिमुशतां बन्धु	२.२५.१३	वरिष्ठश्च गरिष्ठश्च	३.४६.१३	वर्तमाने महाघोरे	३.५८.६३	वसन्तकुसुमैश्चित्र सदा	२.६७.१६	वसुदेवस्य भवनं समीक्ष्य	२.५५.८६
वयोरूपागुणोपेता राजपुत्री	२.६१.७	वरीयांश्चावरीयांश्च	१.७.५६	वर्तमाने महाघोरे	३.५८.६६	वसवः प्रच्युताः स्वर्गात्-	१.५३.४३	वसुदेवस्य भार्यासु	१.३५.६
वरणं च्छन्दितो देवै	२.५७.४४	वरणः पन्नगाश्चैव	३.६१.३७	वर्तयिष्यन्ति ये यज्ञा	३.७२.६५	वसिष्ठपुत्राः सप्तासन्वा	१.७.१७	वसुदेवाच्च देवक्यां	१.३५.७
वरणावस्तनाभावच	३.४१.६८	वरणः पाशवृक्ष श्रीमान्	३.६१.२६	वर्तसे विविधां भूतिमादाय	३.८८.२६	वसिष्ठपुत्राः सप्तासन्वा-	३.६६.५	वसुदेवाहूको वीरौ वसितौ	२.६०.७
वरदानं वृषास्मासु	३.१३३.३२	वरणः पाशभृन्मध्ये	१.४४.१५	वर्द्धनीया वयं वीरं त्वया	२.४६.६	वसिष्ठस्तथ्य तान्दृष्ट्वा	१.१४.१४	वसुदेवोऽग्रसेनो च	३.१२६.१
वरदानेन सा लब्धा मात्रा	२.६१.४२	वरणश्च भवान्स्वातो	२.१२१.१२३	वर्द्धमानाबुभावेतौ समान	२.५.६	वसिष्ठोः वामदेवश्च	३.७७.७	वसुदेवोऽग्रसेनो च	३.१२६.२७
वरदाय वरेण्याय	३.८७.२६	वरणाश्चैव भगवान्	२.११५.१०	वर्द्धपयति तं देवं	२.१२७.१६	वसुदेव इति क्वातो	१.५५.३६	वसुदेवो महाबाहुः पूर्वं	१.३४.१८
वरदा लोककर्तारो	२.१२५.३२	वरणस्तु महतेजा	३.६१.६	वर्षाणां च सहस्राणि	३.२८.१७	वसुदेवकुले जातो	३.८२.१६	वसुवर्ध्नस्तुषेणश्च	२.३८.४८
वरदो भव मे नित्यं	२.५१.६०	वरणादाहृतं पूर्वं नरके	२.६४.७	वर्षाणां शतसाहस्रयं	३.१०.२६	वसुदेव च देवां कङ्कं	२.२२.८	वसुवर्ध्नो भृशं सर्वान्	३.५२.३
वरं च वरदे याचि	२.१०७.१७	वरुणेनैवमुक्तस्तु	२.१२७.८५	वर्षाण्येकोनपष्टिस्तु	१.२६.१८	वसुदेवं च पुत्रार्थं यदिमं	२.२३.१५	वसोस्तु कुन्तिविषये वसुदेव	२.३८.५०
वरं चास्मै ददो प्रीतस्त	२.३७.६७	वरुणेनैवमुक्तस्तु	२.१२७.६५	वर्षासु बाताः पश्या	३.३.२७	वसुदेवं महीपालं	३.१२६.२१	वस्त्रं चैव विचित्रं च	३.१३२.५२
वरं प्रदायाथ महामुराम्यां	३.१३.२६	वरेणानेन भगवन्-	१.४१.६०	वत्समानं यथा सिंहं	२.३०.३	वसुदेववचः श्रुत्वा रूपं	२.४.२४	वस्त्रं रामरणं दिव्यं	२.६६.२५
वरं वरयनेत्युक्तास्ते	२.८२.११	वरेणानेन भगवन्-	३.४१.२२	वत्समाने तु गोविन्दे	२.३०.६	वसुदेव वृषा वृद्धयन्मया	२.२२.७२	वहत्यूर्ध्वगतिवतो	२.४२.६७
ववं लब्ध्वा ज्वरो	२.२३.२६	वर्जयित्वा महादेवो	२.६८.२१	वत्सवैरपरैः साध्वं	३.१३०.३	वसुदेवश्च दुर्वृत्तो नित्यं	२.३०.६८	वह्निरिव शिला दीप्ता	२.५६.३६

वह्निज्वालासमं तत्र	३.६१.५	वातप्रवृद्धस्तु तरंग	२.१२४.५५	वायुप्रोक्ता महाराज	१.७.२५	वारयनं महाबाहो	३.१२३.१६	वासोऽन्यदेव दद्याच्च	२.७६.२०
वह्निना चापि दीप्ताङ्गो	२.४२.६१	वातस्कन्धापविद्धेषु	१.४६.३८	वायुं पूर्वमथो दृष्ट्वा	३.१६.१७	वाराणसीं निकुम्भस्तु	१.२६.३५	वातं तं मित्रविन्दाया	२.६८.५२
वह्निर्वह्नुजटो भूत्वा	३.१८.१६	वातोद्भूतैरिव घनैः	२.१२२.५६	वायुरेव यदा त्रिष्णुरिति	३.१११.५७	वाराणसी महातेजाः	१.२६.४४	वासुदेवं पुरस्कृत्य	२.६६.१४
वह्नेरिव बलं दीप्तं	३.२५.१६	वातोद्भूतैर्वनैः फुल्लैर्नृत्यन्त	२.८७.५	वायुर्गविष्ठो नमुचिः	३.७२.८	वाराणस्यधिपो राजा	१.३३.६	वातं यत्र प्रकुर्वन्ति	३.२४.४
वाक्यमेतत् रुच्ये सबलानां	२.४२.५२	वादयन्ति पुरे यल	२.१२८.७	वायुर्मा रक्षतां	३.८०.७२	वाराह एव कथितो	३.४१.१	वासयत्यात्मवीर्येण निगृह्या	२.८६.१३
वाक्यालोकं महागार्धं नीति	२.४६.४	वाद्यमानानि शुभ्राव	२.६३.१०१	वायुवेगवती सौम्या	१.४७.१७	वाराह एव कथितो	१.४१.३६	वासवस्योत्सवं भङ्गुक्त्वा	२.२२.३०
वाक्शरैरदंघ्रियन्ति	३.४.२६	वापीतडागकूपेषु समुद्रेषु	२.१०६.७३	वायुवेगसमुद्भूतो	२.१२२.४७	वाराहं रूपमास्थाय उद्धृता	२.४८.१४	वासवानुगता देवी	३.१४.४७
वाक्शरैस्तर्जयिष्यन्ति	३.३.४०	वामनं रूपमास्थाय	३.७१.१४	वायुवेगसमैर्वेगैः	३.१३३.६	वाराहं वपुराश्रित्य जगतो	२.७१.३३	वासवो वासुदेवश्च	२.६४.५४
वाक्शरैस्तर्जयिष्यन्ति	३.३.४०	वामना विकटाः कुब्जा	२.१०६.७०	वायुवेगेन हन्यन्ते	३.४६.२३	वाराहकृपिणं देवं	३.३६.१३	वासस्येते तवाभीष्टे	२.६६.३०
वाङ्मात्रमेव पश्यामि	२.६६.५०	वामनेत तु रूपेण कश्यप	२.४८.१८	वायुश्च बलवान्भूत्वा	३.६.५	वाराहश्च किशोरश्च	१.५४.७६	वासुकिर्बहुशीर्षस्तु	३.२८.३१
वाचकं पूजयेद्यस्तु	३.१३२.७६	वामनो ह्यासुरेन्द्रस्य	३.७१.२४	वायुश्चरतु मार्गस्थसिन्धो	१.४८.७४	वाराहस्तु श्रुतिमुखः	१.४१.२८	वासुदेवगृहं देवां	२.१२७.११६
वाचके परितुष्टे तु	३.१३२.८७	वामे च दक्षिणे चैव	३.४६.१२	वायोरेनशनं प्राप्य गता	१.३.१६	वाराहेण पुरा भूत्वा	१.५२.४१	वासुदेवप्रभावेन जगत	२.८३.६
वाचको भरतश्चेष्ट	३.१३२.८५	वार्मककर्णमलकुण्डलश्रीः	२.८६.३	वाय्वीरिते तु मेघेषु	२.१५.१३	वारिणा मेघमुक्तेन	२.१८.१७	वासुदेवं तु तं मत्वा	२.५७.५२
वाचं चोवाच संक्रुद्धो	२.११६.१५५	वायव्यमथ सावित्रं	२.१२४.४६	वाय्वन्तरात्मा मन्त्रस्पृक	३.३४.३८	वारिणा सुखशीतेन	३.२८.८०	वासुदेवं स्थितं दृष्ट्वा	२.४४.१४
वाचा संपूज्य विप्रन्द्र	३.११५.६	वायव्याश्त्रेण ते सर्वे	३.६५.२४	वारणानां च राजानं	१.४.११	वारितोऽपि स दुष्टात्मा	२.८६.२१	वासुदेवमुपालभ्य राजा	२.५७.५८
वाच्यं वाच्यवावाच्यं	३.११५.१३	वायसानां सहस्राणि	१.३४.३७	वारणार्थं तदस्त्राणां	३.१२७.४५	वारिप्लवप्लवश्रीमां	२.११.३८	वासुदेववचः श्रुत्वा महेन्द्र	२.६६.३७
वाच्यश्च नन्दगोपो वै	२.२२.८६	वायुना स विसर्गं	३.२०.१३	वारणेन्द्रगतः शक्रो गरुड	२.६३.४१	वज्रस्योत्तरतस्तस्य क्रोश	२.११.४८	वासुदेवस्तु तं दृष्ट्वा योगं	२.५७.३८
वाजिनः पक्षसंयुक्ता	३.१३३.७	वायुना स्पन्दते चैन	३.१६.३२	वारमुख्या नदीः कृत्वा	२.६२.६०	वारुणानि च युद्धानि	२.१२७.५७	वासुदेवस्तु निजित्य	१.३८.४१
वाजिभिर्मघसंकाशैः	२.३५.१८	वायुः प्रधावितस्तत्र	१.४६.३६	वारमुख्याश्च तास्सर्वाः	२.३०.६०	वारुणांस्तुरगाञ्छीघ्रान्	१.४१.११८	वासुदेवस्मितं कृत्वा	२.४४.१५
वाणीं परमसंस्कारां	३.६७.१२	वायु प्राणो तु तो गृह्य	१.५२.२४	वारयामास कृष्णो वै	२.३६.८	वार्ताकानि न खादेष्टा	२.७६.५७	वासुदेवेति मां ब्रूत न तु	३.६१.१४

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१२८

वासुदेवे समादिश्य	२.१२६.२६	विकल्परहितं चित्तं	३.८०.८८	विष्णं चास्याकरोतत्र	२.६३.५	विजयाय यदुश्रेष्ठ यत्र	२.४७.२३	विदर्भनगरे कृष्णश्चावितो	२.५०.५४
वासुदेवो गदां गृह्य	३.६६.३५	विकारं पुरषोऽव्यक्तो	३.१६.८	विण्स्तत्र प्रवर्तते	३.८०.१८	विजयाय यदुश्रेष्ठ यत्र	२.५५.१२४	विदर्भनगरे चेष्वां राजेन्द्रत्वं	२.५०.२१
वासुदेवो जगत्प्रसिद्धम्	३.६२.१२	विकारो वा विकाराणां	२.१२७.८२	विष्णुसु महाराज	३.१२१.५	विजराश्च जरां त्यक्त्वा	२.१२७.४६	विदर्भेषु निवासार्थं निर्भये	२.६०.३२
वासुदेवोऽपि धर्मात्मा	२.५७.६८	विकृष्टचित्तस्य	३.४३.२	विष्णुस्य कथं युद्धं	३.१०३.५	विजला विमला व्योम्नि	२.१६.१५	विदार्यमाणो दैत्योऽस्मिन्	३.६०.२८
वासुदेवोऽपि धर्मात्मा	३.१२६.७	विकृष्टलाभ्यां कण्ठम्यां	२.३०.८०	विचरन्तस्ततो हंसा ददुशु	२.६२.११	विजितश्च त्रिपर्वण	३.३२.२७	विदार्यं विविशुभूमि	३.५५.४६
वासुदेवोऽपि बहुधा	२.१२७.२	विकृतं मण्डलीभूतं	३.५५.१०३	विचरन्तो व्यराजन्त	३.५१.५५	विजितो युधि दुर्धपो	२.११५.२१	विदितं तव दैत्येन्द्र	३.४८.२५
वासुदेवो बलिर्बोरः	३.६७.७	विक्रान्तवपुषो दीप्तास्ते	२.२.१२	विचित्रनागविहगं	३.४६.५८	विजित्य च यमं संख्य	२.१०२.१२	विदितं तस्य कृष्णस्य	२.१०४.४
वासुदेवो रथे चापि	३.६६.२०	विक्रीडभूता बहुधा	३.३०.२५	विचित्रवीर्यं बालं च	१.२०.५६	विजित्युर्महसे देवमन्त्रकस्य	२.८६.४०	विदितं बन्धुपर्यस्य स्वागत	२.४८.४४
वासोभिश्च प्रतिच्छिन्नो	२.७६.२४	विक्रीडसि महादेव	२.१२७.८०	विचित्रा भरणीपेता	३.४२.१७	विज्ञातोऽसिमया चिह्नः	२.१०८.१८	विदितं वो नृपाः सर्वे	२.५०.२५
वास्तुदैवतकर्माणि विधिना	२.५८.१३	विक्रीयमाणः काष्ठैश्च	२.८.१६	विचित्राश्चैव जयुगे	३.४६.२७	विज्ञानमेतद्धि परे यथावदुद्दे	२.८६.८०	विदिता देहिना जाता	१.५५.३
बाह्वं देवदेवस्य	३.७६.५	विक्रीयन्ति च गम्भीरं	३.४६.१६	विचिन्तयस्त्वहं चास्य	२.१२१.२६	विज्ञापितमिदं दोषं स्वयं	२.४८.५०	विदिता रुक्मणी साध्वी	२.५२.५०
बाह्वनामां हितं चैव	२.५६.२५	विशरन्तो महानागान	३.५८.२१	विचिन्त्य मनसा राजा	२.४६.६६	विज्ञापितो मयाऽप्यर्थ	१.२६.५७	विदितार्थं हि भगवानवश्यं	२.८६.३५
बाह्वानि च देवानि	३.१३२.२५	विशरो दीर्घं बाहुश्च	३.४६.११	विचेतास्त्वभवत्प्राज्ञः	२.११६.६६	विज्ञाय तमभिप्रायसु	२.११७.१५	विदितार्थस्ततः कृष्ण	२.८३.१६
बाह्वानि च नृसन्ति	२.५६.४	विशिष्यमाणैर्मुशलैः संप्रेष्य	१.५५.६	विचेलुः पर्वताप्राणि	३.१३३.६५	वितत्यश्वेनवत्पत्नी	३.५६.२७	विदिनो मे खरश्चैव	१.५५.६
बाह्वेन मयूरेण	२.१२७.३६	विशिष्य विपुलं चक्रं गदा	२.५३.३८	विचेष्टमानं तं भूमौ	२.६०.२७	वितथं चाभिधियाय	१.३२.१८	विदितो मे जरासन्धः	१.५५.८
वि कद्रवाक्यं रामस्य	३.१३४.१८	विलोम्य सागरं चैव	२.११५.१४	विचेष्टमाना रुदती देव्या	२.११८.३	वित्तेशं विह्वलं दुष्टवा	३.६०.५०	विदितो मे व्रजे वासस्तव	२.३६.४६
विकद्रोस्तु वचः श्रुत्वा	२.३६.१	विख्याता हृदया नाम	१.३६.१५	विजयति वसुधा	३.६.१०	वित्रासनायं भूपानां	२.४७.२७	विदित्वा देवमीशानं	२.५२.२५
विकर्षन्तो धमन्तो च	३.२६.१६	विगाह्येव गजानीकं	३.५६.५६	विजयस्य कृतिः पुत्रस्तस्य	१.२६.३	विदधते महारणे	३.१२४.१६	विदित्वा भगवानरुद्रश्च	२.८७.१७
विकर्षन्त्यवन्दानि	२.३५.७०	विग्रहं च जरासंधे विदित्वा	२.३६.४७	विजयस्य धृतिः पुत्रस्तस्य	१.३१.५७	विदर्भं नगराद्यते शक्र	२.५५.१	विदित्वा सर्वमात्मानं	२.८८.११५
विकर्षन्त्यवन्दानि	२.४३.२०	विग्रहो विग्रहार्हाणां जातं	१.४०.४७	विजयस्य प्रतिद्वेष	२.६७.३१	विदर्भनगरीं प्राप्ये वनं	२.५०.४		

विदिशस्ता दिशाः	३.३४.६	विद्युद्धान्पर्वतः श्रीमानायतः	२.४६.६१	विधि च फनयोगं च	२.७७.६	विन्ध्यवासिनीं दुर्गंणां	२.१०७.६	विप्रापरम्यमक्ष्णाणस्ततः	२.११२.२४
विद्धः समरमध्यस्थो	३.४६.२१	विद्युद्विस्पष्टवर्णाभा	२.४.४०	विधेयोऽस्मि प्रभावत्वा	२.६४.३	विपरीत जगद्दुष्टत्वा	२.८७.३२	विप्रेर्म्यक्ष ददौ वित्तं	३.१०२.२२
विद्धि चैनामथोत्पन्नं	२.४.४७	विद्युर्लमानस्त्रस्ताङ्गो	२.२४.४६	विनतायास्तु पुत्रतो द्वावरुणो	१.३.१०६	विपाकमस्य कार्यस्य	२.७१.१२	विप्रोपचारं मोहाच्चैत्कारि	२.८२.२१
विद्धि मां ब्रह्मणः	१.१७.१२	विद्योतयन्तो विदिशो	३.५२.५२	विनतायास्तुतश्चैव	२.५०.३	विपाटिताम्यामोष्ठाम्यां	२.२४.३८	विफलानस्त्रयुक्तास्ताम्	२.८५.३३
विद्योऽय सात्पाकिस्तेन	३.६६.३४	विद्राव्य तु रणे	३.४०.१	विनद्य च गुह्यं वरीरो	२.८४.४८	विपृथुः शिष्यपालं तु शरं	२.५६.५७	विबभाज पुरा सर्वं	१.४०.३२
विद्यया तपसा युक्ताः	३.५६.३२	विद्राव्य दानवान्वीरः	२.११६.१०५	विनद्य मुमहानादं	३.५६.१६	विपृथोः सारथिश्चापि	२.५६.६२	विबभौ नभसो मध्ये	३.१३३.५०
विद्यया यो यया युक्त	२.१६.४	विद्राव्य विपुलं	३.६०.४५	विनदुमाना दैत्यौघा	३.५१.४	विप्रचित्तितु राजनं	१.४.८	विभक्तं कुलिनघोर्नैव गिरेः	२.६३.१२२
विद्याधरगणैर्नित्यमनुकीर्णं	२.४०.१६	विद्रुतं स्वबलं दुष्टत्वा	२.६०.१८	विनयति स तु क्षिप्रं	२.६५.४०	विप्रचित्तिः शिविः	३.७२.२	विभजात्मानमित्युक्त्वा	३.३६.३
विद्याधरगणैः सार्द्धं	३.६१.१३	विद्रुतस्य तु राजेन्द्र	१.११.६	विना कृष्णं न यास्यामो	२.१२.२८	विप्रचित्तिः शिविः	१.४१.८१	विभज्यतामयं देशः कृतं	२.१८.५६
विद्युधराङ्गिपुरुषानुक्षवा	२.२८.७४	विद्रुतानीह सैन्यानि	३.६४.४	विना कृष्णं न पुरे	२.६५.२६	विप्रचित्तिसुतः श्वेतः	१.४३.१८	विभज्य योगं मनसा	३.२८.६६
विद्यानां ब्रह्माविद्या	२.३.२३	विद्वद्भिर्मोयसे नित्यं	३.११५.२२	विना वातं विना वर्षं	२.७.२६	विप्रचित्तितु तत्रैव	३.५१.५०	भान्ति ते देववरा	३.५२.५६
विद्यामवाप्य सकलां	३.८२.३६	विद्वद्भिर्गणयिने विष्णो	३.११५.१८	विनिपेतुः पृथक्चेचित्तयान्ये	३.३८.२६	विप्रचित्तितु तत्रैव	३.५३.२४	विभिन्न हृदयाः	३.६०.३५
विद्यालक्षणं संयोगान	३.२३.३७	विद्वान् हयास्तथा	३.६६.२१	विनयोगाद्गुरोस्तस्य	१.२१.७	विप्रचित्तितु वरुणं	३.६१.१	विभुं विज्ञापयामासु	१.४१.५६
विद्युज्जिह्वास्त्रिशोर्षश्च	३.४५.४	विद्वेषो ह्यस्तु वां	३.१०६.१६	विनिभिन्नस्तु कृष्णेन	२.१२६.५३	विप्रचित्तितु संक्रुद्धो	३.६१.३०	विभुस्तथैवाप्रतिमप्रभावः	३.१२.१८
विद्युज्जयान्तिकाक्षेन	३.५०.२४	विधत्स्व भागं स्थानं	१.२६.१५	विनिर्ययुर्महासेन रामं	२.५५.२६	विप्राप्रियो विप्रहितो	२.१२१.१२०	विभूतिविस्तार करं	३.२.१२
विद्युतोऽशनिमेघाश्च	१.१.३८	विधवा स्त्री तु या हि	२.८१.८	विनिश्चयो हि प्रागेव	१.५५.१६	विप्रभायां महाराज	३.१०४.१३	विभेति हि सदा त्वत्तो	३.५३.२
विद्युत्संघातजननाशशक्र	२.१८.६	विधानमेवं कृत्वाथ कृष्णः	२.५८.८३	विनिष्पत्य महासेनां मध्ये	२.५३.३०	विप्रमुक्तभयं शुभ्रं	२.१३.२४	विभ्राजः पुनरायातः	१.२०.२६
विद्युदग्निप्रतीकाशमादित्य	३.३४.३२	विधानविहितद्वारा प्राकार	२.५८.४५	तिनेदुर्वहिणस्तत्र तोक-	२.१८.१८	विप्रयोनौ यतो मोहान्	१.२१.३४	विभाजमानो वपुषा	१.२१.४३
विद्युदम्भोदताभ्राम्यां	३.१३.६	विधाय पात्रे सुशुभे	३.८३.३	विन्दानुविन्दावावन्त्यौ	२.३५.४२	विप्ररूपाणि रक्षाति	३.४.१६	विभाजस्य तु पुत्रोऽभूद	१.२०.२७
विद्युदग्र पितमेघाभः प्रबभौ	२.६४.२३	विधिनैतेन कुरुस्तेन	२.७६.१	विन्ध्यक्षंवन्तावभितो द्वे	२.३८.७	विप्राणां शाश्वती	३.४.१३	विमप्य तु कुबेरस्य	३.६०.४३

श्रीहरिवंशपुराणम् १: श्लोकानुक्रमणी

१३०

विमनस्कामि मुह्यामि	२.६३.६२	विराजमसूत्रद्विणुः	१.१.४४	विलसाप नतो राजा	३.१२६.६	विश्याध कुपितो बाणै	२.१२४.४८	विशेषेण तु कन्याय	२.४८.३६
विमर्दो देवदैत्यानां	३.५५.८३	विमाजस्य द्विजश्रेष्ठ	१.१.८८	विलापसाक्षी प्रियहीनितानां	२.६५.२७	विश्याध गरुडं वज्री	२.७३.२०	विशेषेण नरेन्द्राणां	२.५०.८५
विमलरजतबिन्दु	३.४६.४८	विराटपर्वणि तथा	३.१३२.६१	विलेखनं प्रमाणं	३.३५.३	विश्याध चैतुपुरसि	२.१२६.७१	विश्रम्य सरस्वतीरे	३.१०६.१३
विमलस्फाटिकाभानि	३.४१.६२	विराटस्मिता राजन्	३.१२७.८	विलोक्यां चक्रतुस्तौ	३.८०.२	विश्याध दशभिर्बाणैः	२.६३.६०	विभ्रुता साम्बमहिषी	१.३८.५४
विमलादित्य वर्णाभि	२.६८.४४	विराघं च कबन्ध च	१.४१.१३१	विवर्णैश्च च भगवान्	३.४६.६	विश्याध दैत्य विशत्या	३.५५.६५	विश्लिष्टोपलसंघातः	२.४२.६२
विमला विमलोदा च	२.१०६.३३	विरामनियमे प्राप्ते	३.२८.६४	विवर्णं देवी महादेव	१.२६.४२	विश्याध सात्यकि	३.६६.१६	विश्वकर्मकृते तत्र	२.६३.४५
विमानं विबुधैः साङ्गं	३.१३२.३१	विरुतश्वापदं रम्यं	२.५.१८	विवर्द्धता बलवता तेन	३.११.६	विश्याध स्तनयोर्मध्ये	२.६३.८५	विश्वकर्मा च तां कृत्वा	२.५८.५६
विमानयानैश्चीमद्भिस्समन्ता	२.५०.६३	विरुठमभवत्सर्वमाकुलं	३.५७.२३	विवर्द्धयिषवस्ते तु शबलाश्वा	१.३.२१	विश्याध हंसद्विम्बको	३.१९७.६	विश्वकर्मा नतः कृष्ण	२.५८.४०
विमानयोषी घनदो	१.४४.१८	विरोचनमयप्रस्ता	३.५६.२४	विवस्वानश्च तच्छ्रुत्वा	१.६.३७	विशन्तं मधुगं रम्यां	२.३३.४०	विश्वकर्मा ततः प्रीत	२.५८.३६
विमानश्च ददृशुर्मुखां	३.१२७.१७	विरोचनश्च जम्भदश्च	३.५४.१७	विवस्वान्कश्यपापञ्जरी	१.६.१	विशस्यन्तां च पद्मवी	२.१७.१५	विश्वकर्मा स्वमत्या वं	२.५८.२१
विमानानि विचित्राणि	२.६३.३४	विरोचनश्च प्राह्लादिस्तस्य	३.४८.१५	विवस्वान्सविता चैव	१.३.६१	विशालमाकाशतलं	२.११६.१३०	विश्वकुट्टिश्चजिह्वैश्च तथा	१.३२.५३
विमानैर्विविधैरुष्यै	३.४२.१६	विरोचनश्च बलवान्	३.५१.८	विवाहमकरोत्तस्य	२.१२७.३८	विशालमूलान्नतं पवन	२.१६.४१	विश्वत्वं श्रुणु मे विश्णो	१.४२.१
विमिश्रं सर्वतो भाति	२.३५.२४	विरोचनस्तु तत्रैव	३.५६.१२	विविक्ते सा च वै देशे	२.११६.३६	विशालरथ्या दुर्धवा	२.४६.६३	विश्वं यदा प्रादुरासीद्	३.१११.४५
विमुखा दानवगणैः	३.४०.१७	विरोचनस्तु प्राह्लादिः	१.६.३०	विविवांश्च महास्कन्धा	३.३५.७	विशीर्णदन्ता बहवो	३.५६.५०	विरवं सृष्टं मया पूर्वं	३.१०.६३
विमुखा याति दैत्येन्द्रैश्च	३.६४.२	विरोचनस्तु बलवान्	३.५३.१३	विविशुयोऽनाख्यासु	२.११०.११	विशीर्णदन्ताश्च	३.५६.४६	विश्वरूपं मनोरूपं	३.१७.२०
विमृशन्ति स्म तं देवा	१.५०.१८	विरोचनस्तु बलवान्	३.५६.१८	विवृत्तात्तस्य वदनान्नि	१.५०.१३	विशीर्णैः पाशैर्विषरैः	३.२३.४८	विश्वरूपश्च रूपश्च	३.४२.१६
विरजं चैव शुक्रं च	३.१४.५५	विरोचनस्तु संक्रुद्धो	१.४३.१३	विवेश परम प्रीतो मित्र	२.५३.१६	विशीर्णमाणं विवभावुत्का-	३.६१.१६	विश्ववक्त्रे नमो	३.६०.१६
विरजा शोकरहिता	२.६७.६१	विरोचनानुग्रहचैव	३.५१.१३	विवेश पुण्डरीकाक्ष	३.७६.३५	विशुद्धभावः कृष्णस्य	२.५०.६	विश्वस्य जगतः कर्तुः	२.८३.१३
विरराजाचिमिदीप्तं	३.२८.७४	विलपन्ति स्म ते सर्वे	३.४४.३८	विवेश पुष्करं सा तु	२.२७.२४	विशृङ्ग पर्वतश्चैव	३.४६.७१	विश्वाची सहजन्त्या च	३.४२.५
विरराजाचिमिदीप्तं	३.३२.१२	विलम्बन्त्यः सपुष्पाश्च	३.२७.१६	विवेश घटपुरं चैव ज्ञाती	२.६०.२७	विशेषतस्तु मृत्यानां	३.७३.२४	विश्वामित्रस्तु दाराणां	१.१३.२०

विश्वामित्रस्तु घमतिमा	१.२७.४४	विषविग्धं स्तनं रोद्रं	२.१०१.३२	विष्णुजिष्णुजंगन्नाथः	३.८२.४	विश्वक्सेनस्य साधस्य	३.५६.२५	विहस्तमिव विज्ञाय	२.७३.७१
विश्वामित्रस्य तु सुता	१.२७.४५	विषमं तु तदा युद्धं	२.६६.५२	विष्णुर्नारायणो देवः	२.६४.३४	विश्ववाता ववुश्चैव	२.७५.१४	विहस्य विकृतं भूयः	३.८३.१
विश्वामित्रस्य तु सुता	१.३२.५४	विषमैश्च समीभूतैस्समै	२.१८.४४	विष्णुर्नारायणो भूत्वा	३.३२.५४	विसर्गं भरतश्रेष्ठ	१.८.४४	विहाय सहजं धैर्यं	२.११०.५३
विश्वामित्रस्य पुत्रस्तु	१.२७.५५	विषयं समतिक्रम्य देवयो	२.६४.४७	विष्णुर्मन्त्रोनिहन्ता च	३.२७.२२	विसर्गस्य प्रजानां वै	१.८.२७	विहायसा कामगमो मनसो	२.२८.६८
विश्वामित्रात्मजानां तु	१.२७.५४	विषयस्यालयां जात्वा	२.३८.२५	विष्णुर्मानुषदेहस्तु	२.१०४.५६	विसर्पन्ती तु सर्वत्र	२.७.७	विहायसि गता रोद्रा	२.४.४२
विश्वामित्रो वसिष्ठश्च	२.१०६.८८	विषयामन्नभूतोऽस्मि	१.५४.२८	विष्णुर्मानुषलोकस्थः श्रुतः	२.६२.२८	विसृज्य चरवर्षाणि	२.६३.६६	विहायसौ कामगमां	३.४१.४७
विश्वामित्रश्चैव घमतिमा	१.२६.११	विषये मे न वस्तव्यं	३.५.१६	विष्णुर्वामनरूपेण	३.३१.११	विसृज्य तान् वै भगवान्	२.७५.६२	विहारभूमिस्तत्रैव तस्य	२.५६.२६
विश्वामित्रश्चैव घमतिमा	१.२७.२	विभेद्यभिभागच्छक्रस्तव	३.५.२८	विष्णुर्वामनरूपेण	३.३१.११	विसृज्य मयुरेशं तु महिषी	२.५५.८७	विहितश्च स्वभावेन	३.१७.४
विश्वामित्रस्तु तृतीयं च	३.१४.४८	विषाणान्तरगो भूत्वा	२.२६.२६	विष्णुर्वामनरूपेण	३.२८.७१	विसृज्य सशरं चापं	३.१२६.३३	विहितैश्चर्मैः सर्वदेव्या	३.२८.८६
विश्वामित्रस्तु पवर्षाणि	३.१४.५२	विषादो न भवेदत्र चतुर	२.५१.१२	विष्णुश्चक्रधरः खड्गी	२.२६.७	विस्तरावयवं चैव	१.१.२४	विहितोऽस्यमया मृत्युस्य	२.४३.७३
विश्वदेवान् देवमाता	३.१४.५३	विष्टराश्वः पृथो पुत्र	१.११.२१	विष्णुश्च घनुरानम्य	३.३२.४५	विस्तराण्य पृथोर्जन्म	१.४.२६	विह्वलः सर्वगोत्रेषु	३.६८.१५
विश्वदेवा महात्मानः	३.६८.१६	विष्णुः कुण्डलस्तथा	३.१०१.२३	विष्णुः संप्रामसभूतं	३.३२.३६	विस्तराण्य कर्माणि सर्वाणि	१.४०.६	विह्वलास्तस्य पादवैभ्य	२.४२.६४
विश्वदेवाश्च जानुस्था	३.७१.४५	विष्णुना चैव राजेन्द्र	३.३२.५७	विष्णुर्देव हरे कुण्ड	३.११२.१४	विस्तराण्य नपि कुण्डेन वरं	२.६१.१३	वीक्षमाणश्च तान्सर्वान्	२.३५.६
विश्वदेवाश्च विश्वायाः	१.३.३२	विष्णुना छयकूपेण गत्वेमां	२.५५.३६	विष्णो पद्ममलशास्त्र	१.५५.४४	विस्कारयन्तः सहसा	३.५३.३	वीक्षमाणश्च तान्सर्वान्	२.४१.५८
विश्वदेवाश्च साध्याश्च	३.६६.२६	विष्णुः परमघमतिमा	३.२८.२	विष्णोः प्रभावश्रवणे	१.४१.२	विस्कारयन्महाचापं	३.५५.४२	वीचीकूचीति वासन्ति	२.१०५.२४
विश्वदेवास्तथा	३.३३.१०	विष्णु सोऽम्यहन्तकूडो	३.२६.१२	विष्णोरमितवीर्यस्य	२.११५.६	विस्कार्यं च महाचापं	३.५५.३	वीज्यन्ति बालव्य	३.५१.८२
विश्वदेवास्तु विश्वायां	३.१४.५०	विष्णुमेवाग्रणी रुद्र	३.८६.४	विष्णोर्जिष्णोः सहिष्णोश्च	१.४४.५१	विस्कार्यं सुमहत्चापं	३.५५.८६	वीतरात्रे ततः काले	२.३५.२७
विश्वेशं प्रथमं नाम	३.१४.२७	विष्णुरग्रस्थितो भाति	३.३२.३६	विष्णोर्विष्णोः देव	३.६२.१६	विस्मयोस्तु माधुरे कल्पे	२.११६.३६	वीतरात्रे ततः काले	२.४२.१४
विश्वेषां मरुतां चैव	२.६४.४६	विष्णुनेव महायोगी	३.१३३.८३	विष्णोस्तु माधुरे कल्पे	२.१२८.२६	विस्मयो मे नहान्	२.१२५.२८	वीतशोकभया बाधा	२.१०१.६६
विषण्णः किञ्चिदास्याय	३.६७.६	विष्णुरेवाग्रणीस्तेषां	३.३०.१३	विश्वक्सेनस्य पुत्रो	१.२०.३२	विस्मितश्चाभवद्राजा	२.११४.२७	वीतिहोत्राः सुजाताश्च	१.३३.५२

वीर नैव विधानुश्रान्दानवा २.१०४.३०	वृत्ते वृत्रवधे तात वर्तमाने १.४२.१०	वृषभस्य तु दायदः १.३२.६५	वृष्णेस्त्रिविधमेतत् १.३४.३४	वेद विद्याव्रतस्नाता ३.७७.४
वीरभोग्यानि राज्यानि २.३१.५०	वृत्ते स्वयंवरे जम्बू २.६१.८	वृषभावि गजन्तुो बृहतं २.६०.४२	वृष्ण्यन्धकाश्च भोजाश्च २.२६.४२	वेदविद्या व्रतस्नातं ३.२३.३८
वीरुद्भिः श्रूयते राजन् १.६.४२	वृत्रासुरभुजोत्सृष्टंबहुधा ३.५७.५१	वृषभावि गजन्तो २.८५.५८	वृष्ण्यन्धकेषु चान्येषु २.५६.५१	वेदवेदाङ्गविद्भिश्च ३.२३.२७
वीरो वातपतिश्चैव १.३८.४६	वृषा त्वं स्पष्टंसे २.११२.१५	वृषाकणिः सिन्धुपति ३.६२.३६	वृहत्कीर्तिर्महागर्भः ३.७२.७	वेदाध्यक्षः सुराध्यक्षः २.१२१.११५
वीरो कुमारो निशठोत्सुको २.८६.२०	वृद्धस्त्रीजनसंबंश्च गायद्भि २.५५.२५	वृषाविश्वम्भसूर्याक्षं ३.६६.४२	वृहस्पतिस्तु धर्मात्मा २.७२.२५	वेदानधीत्य दीक्षाभिः १.५१.१०
वीर्यास्त्रे चैव नो ३.१०५.३	वृद्धाश्च ब्रह्माणास्तत्र ३.१३३.६६	वृषो वंशधर स्तत्र तस्य १.३३.५४	वृहस्पतेस्तु वचनं ३.६३.१	वेदानां मातरं चैव २.१२०.१५
वीर्यापपन्नाः कृतचारुचिह्न २.८६.४३	वृद्धी तवाम्बापितरी २.२६.१६	वृष्टिमानेव जीमूतो ३.५८.४०	वेगवान् केतुमानुग्रः १.४१.८२	वेदिकाभिः सुचित्राभिः ३.२७.३०
वृकदेश्युपदेवी च देवकी १.३५.३	वृन्दावनस्य मध्येन सा २.४६.४२	वृष्णयः सर्व एवैते ३.७५.३०	वेगवान्केतुमानुग्रः ३.७२.३	वेदीस्कन्धो हरिर्गन्धो १.४१.३३
वृक्षमुत्पाठ्य रामोऽपि २.५६.४५	वृन्दावननिवासाय तान् २.६.८	वृष्णयोऽपि जरासंधं २.६०.२६	वेगवान्भीमनिर्घोषो ३.१८.१५	वेदे रामायणं पुण्ये ३.१३२.६५
वृक्षमुत्पाठ्य बेगेन प्रति २.६३.८२	वृन्दावने वसच्छ्रीमान्केशवो २.४६.४७	वृष्णयोऽपि महाराज २.६१.५६	वेणुदारिद्र्य राजर्षिः २.५२.८	वेदेषु सपुराणेषु सर्वेषु १.८.२५
वृक्षवेगानिलाङ्गूतः शुश्रूवे २.६३.८३	वृन्दावने वसन्विष्णु ३.८२.२३	वृष्णयो हृतसंकल्पास्त २.११२.१३	वेणुदारिद्र्यभुतर्षा च २.३४.१६	वेदेर्गीता सा हि तत्त्वं २.७४.३३
वृक्षेषु कीटरूपेण २.१२३.२५	वृक्षणात् वृष्णयः सर्वे १.३३.५५	वृष्णयः पुण्डरीकाक्षः ३.१११.१३	वेणुमेरीमूदङ्गानां शंखानां २.३५.६८	वेदेयंग्दीयते तेजो ३.१११.४१
वृत्तः कारुण्यसंन्येन २.४३.७६	वृषध्वजं विरुपाक्षं ३.८७.१२	वृष्णिभिर्वादेवैश्चैव २.४८.१०	वेणुमन्त लताविष्टं २.१२१.३७	वेदैश्चतुर्भिः सांगंश्च ३.५३.३४
वृत्तो दैत्यगणैः साढं २.६३.१००	वृषध्वज विरुपाक्ष ३.१०५.५	वृष्णिर्वंशकुले जातः २.१०५.७३	वेणुवीणामृदंगंश्च २.११७.४	वेदोदघौ विशदशास्त्र ३.११४.४०
वृत्तो दैत्यगणैर्हृत्तः ३.५१.३१	वृषपर्वा तु बलिना ३.५३.२१	वृष्णिवशप्रसङ्गेन १.३१.२	वेणुशंखरवेदचैव ३.५६.६६	वेद्यो यो वेदविबुधां १.४०.४५
वृत्तो दैत्यशतैर्वायु ३.५५.५६	वृषपर्वा तु दैत्येन्द्रो ३.५६.१	वृष्णिशत्रुसदा राजा ३.६१.२	वेणुहोत्रसुतश्चापि भर्गो १.२६.८२	वेमकस्य तु भार्या ३.१.१५
वृत्तो दैत्यसहस्रोघोगिरि ३.५१.२१	वृषपर्वा तु शैलामं ३.५६.१०	वृष्णिन्यान्तस्वजे च २.६३.३०	वेत्ति स्व हि यथावश्यो २.८७.६	वेमुः शोणितमन्योन्यं ३.५६.८६
वृत्तो मदबलोत्सिक्तं ३.५१.१४	वृषपर्वाणमासाद्य ३.५६.१८	वृष्णीनां च बलं सर्वं ३.६४.२८	वेदपादो यूपदंष्ट्रः १.४१.२६	वेदमानि जहृवे दृष्ट्वा २.६८.३१
वृत्तान्तं शृणुयाद्यस्तु ३.१३४.३१	वृषपर्वा विहासो २.७२.५	वृष्णीनामन्धकानां च २.५७.७	वेदयज्ञमयं ब्रह्म १.४१.७०	वेष्टितो बहुधा तस्य २.११६.१७४
वृत्तान्तश्चानुदिवसं प्रदेयो २.६१.४६	वृषपर्वासुरश्चैव श्रीमांश्च ३.५१.६६	वृष्णिवीरास्तु ते सर्वे ३.११३.१२	वेदयज्ञाग्निहोत्राणि ३.७२.८०	वैकुण्ठमजयं लोके चराचर २.४६.३०

वैकुण्ठवीर्यो द्वावेव	१.५३.५०	वैराजात्पुरुषाद्वीरं शत	१.२.५	वैष्णवे यज्ञमित्येवं	३.१७.५६	व्यभिचारान्न दृश्यन्ति	२.२८.१००	व्यामिश्रं तद्वत्वं भाति	२.४२.११
वैडूर्यवज्रस्फटिकाग्र	३.५२.५४	वैरिकेलिकिलो विप्रो	१.५४.११	व्यसः शल्यश्च बलिनी	१.३.६६	व्यभिचारेण ते देवि	२.११८.२०	व्यायच्छन्ती चिरं कालं	२.३६.२४
वैडूर्यचामीकरबाह	३.५२.६१	वैष्ण्व मंगज यन्त्रे	२.१२६.१६१	व्यक्तकिष्कुशतोत्सेधः	२.६६.७	व्यराजन् यदुश्रेष्ठ	२.११०.१३	व्यायतं बाहु साहस्रं	१.४३.१५
वैडूर्यतोरणश्चित्राभि	२.८८.६०	वैरोचनेन सुप्तस्य मम	२.४१.५८	व्यक्तमन्यतमो भावो	३.१०.२०	व्यराजन्तान्गरिक्षस्था	३.५१.३३	व्यायतोदयतुर्याविस्पष्टा	२.४२.२
वैडूर्यपत्रैर्जलजैस्तदा	२.६८.२१	वैष्णव्यात्पुनरेवासौ राज	२.३७.६	व्यक्तमस्य हि तत्स्वप्नो	२.११६.३१	व्यवर्द्धत च वेगेन	१.५८.३६	व्यालयजो पवीताश्च	२.१२४.२१
वैडूर्यमणिबलाभिः प्रसादो	२.६८.५१	वैक्वत्तं च पितृणां	१.४.६	व्यक्तमागतवान्पिण्डो	३.१००.५	व्यवर्द्धत महातेजाः	३.३८.२६	व्यालान्न्यान्मृगान्	३.१०६.३
वैडूर्यमुक्तामणिभूषिता	३.५२.३६	वैक्वत्तश्च कीरव्य	१.७.५	व्यक्तमेव वयं गोपा वने	२.१२.५८	व्यवसायं च सत्त्वं	३.५५.१०१	व्यालापीडाः कुण्डलिनो	२.१०६.६८
वैडूर्यवर्णसंकाशो	३.६४.६	वैक्वत्ते तु महति	१.३.१२१	व्यक्ताव्यक्तो महादेवो	१.८.४३	व्यवस्थितं तु निष्कुम्भं	३.५६.६	व्यावर्तमानं सुमहद्भवद्भिः	२.२२.१६
वैतण्डी दीर्घतापाश्च	२.१०६.६२	वैक्वत्तेऽन्तरे चास्मिन्	१.६.१६	व्यष्टायां तु यशोदायां	२.७.१५	व्यसनेषु जघन्यस्य	१.५४.३२	व्याविष्यमाने चक्रे	२.१२६.२२
वैदिकैरप्रकाशश्चैव	३.६६.६६	वैष्णवायन धर्मज्ञ व्यास	२.८२.१	व्यचरन्मार्गमरणं	३.१२४.२२	व्यसृजच्छरवर्षाणि	२.६३.१०५	व्याविष्यत्सुचिर रामो	३.१२६.४३
वैधव्येनाभिभूतास्म	२.३१.१५	वैशाखं स्थानमास्थाय शुह	२.५३.४५	व्यञ्जनीजनीष्व विद्वान्	२.७२.४४	व्यहनत्स रथं चास्य	२.६३.११५	व्यासकतवैडूर्यसुवर्णजालं	३.५०.२८
वैतथेय प्रयाहि त्वं	२.१२७.४७	वैशाखी च तथा भद्रा	१.३५.२	व्यतिक्कामति ते भीरु	२.६२.१५	व्याक्रोशन्त गजास्तत्र	३.५६.२	व्यासं चैव सपत्नीकं	३.१३२.७५
वैतथेय प्रयोगेण विदित्वा	२.४१.४६	वैशाखे मासि हर्म्यस्थां	२.११७.१६	व्यतिरिक्तैर्निद्रयो	३.१७.३७	व्यादितास्यः क्षुधास्तंश्च	१.२०.१०५	व्यासेन वेदविदुषा	२.१२५.५६
वैतथेयश्च बलवान्	२.५०.७७	वैश्याचाराश्च राजन्या	३.३.२६	व्यतिरिक्तैर्निद्रयो	३.२१.८	व्यादितास्यस्य यो	२.१२१.६	व्यासोऽहं याज्ञवल्क्यश्च	२.८३.७
वैतथेयसलश्रीमान्यादवै	२.४७.४१	वैश्यैरपि च वित्तादयः	१.६.५२	व्यदारयन्तिस्त्रय	३.५८.६७	व्यादितास्यो महारोद्रस्यो	२.२४.४७	व्युत्थितस्य च भेदिन्यां	१.५४.८२
वैतथेयस्य चान्नानं वाहनं	२.४०.४१	वैश्यो घनसमृद्धः	२.१२८.३६	व्यदारयेता सम्योन्यं	३.५५.१२३	व्याधयो दानवैरवे	३.५६.८३	व्युत्थिताश्च महामेधाः	३.५३.२६
वैभ्राजा नाम ते लोका	१.१८.४६	वैष्णवं परमं तेज इति	३.१११.४२	व्यद्वन्त परिभ्रष्टा	३.५४.६४	व्याधितः पतितो वापि	२.७८.६	व्युपारमन्त युद्धानि प्रेष्य	२.४३.६३
वैरमुत्सृज्य दम्भं च	२.८२.२५	वैष्णवं हस्तसंश्लेषं	२.४७.३३	व्यधमच्च तथा धर्मं शितं	२.७३.७३	व्याधिमृत्युभयं चैव	२.३.३२	व्यूढोरस्को महाबाहू	२.१०१.५०
वैरस्यान्तं महाराज	१.३२.३२	वैष्णवास्त्रे प्रयुक्तं	२.१२४.४८	व्यभजत्पञ्चधा राज	१.३०.१७	व्यानोदानः समानश्च	२.१०६.१०	व्यूहस्यार्द्धं समासेदुर्मदुरे	२.३५.१११
वैरस्यान्तं विधित्संस्तु	२.५७.३६	वैष्णवे तु महावीर्ये	२.१२७.७१			व्याप्य सर्वाणिमालोकां	३.८८.४३	व्यूहानां विनियोगज्ञो	३.५१.६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणो

१३४

व्योममार्गेण यातव्यं यथा	२.५२.४१	शकुनि चैव शल्पं च	२.८४.४६	शक्रस्य वचनं श्रुत्वा	३.५२.७	शंखस्तस्य सुतो विद्वान्	१.१५.३२	शतैर्धनुभिः सुमहातिवगा	३.४४.२८
व्रज पत्ररथश्रेष्ठ कैशिकस्य	२.४७.३८	शकुनिप्रमुखास्तस्य	१.११.१४	शक्र जयति देवेश त्वयि	१.५१.३	शंखहृदाबुद्धरणं च वीर	२.८६.११	शत्रुः किल स दीयमानां	२.६२.२६
व्रजमाजग्मतुस्तौ तु व्रजे	२.१५.२	शकुनी पूतना त्वं च	२.३.२२	शक्रेण प्रेषितः क्षिप्रं	२.५८.२३	शंखानां निनदश्चात्र	३.६४.३१	शत्रुस्ते मागधो राजा	२.५०.१४
व्रजेषु च विशेषेण	२.१६.३७	शक्रन्मूत्रेव तेष्वेव	२.८.२०	शक्रो बृहस्पतिचैव	३.६६.३८	शंखान्दध्नु पृथक्	३.१२७.२०	शत्रुहन्ता पुनः क्रुद्धो	२.१०५.६७
व्रजोपभोग्या च यथा	२.११.५७	शक्रन्मेदोमहापङ्का	३.६०.८	शक्रो यस्य पुरसरः	३.१२१.६	शंखी चक्रो गदो	३.६२.८	शन्तनुस्त्वभवद्राजा	१.३२.११०
व्रतकस्यावसानेऽथ देयं	२.७६.३८	शक्तश्चापि जरासवं नृपं	२.३८.५५	शंकरस्तु तथैत्युक्त्वा	२.११६.१७	शची तु कश्यपं पत्न्या	२.७५.३६	शन्तनुस्त्वभवद्राजा	१.३२.११०
व्रतं हि देवदेवस्य भवस्य	२.८६.३६	शक्तिचित्रं हलोदग्रं	१.४२.२५	शंकरस्य गते भागे	१.५४.५	शचीव पुरुहूतस्य उताहो	२.२८.७६	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
व्रतानां चैव सर्वेषां	३.३७.६	शक्तितोमरनिखिलं	३.१६.५१	शकरायजगद्वात्रे	३.८४.११	शतक्रतोः कल्पविवप्रमोक्षणं	३.६.६	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
व्रतोपवासतः स्वयः काशं	२.६४.२८	शक्तितोमरं शंकीणं	३.६३.१४	शंकरेण वधं राजन्	३.१३३.३	शतभिः चक्राशनिशक्ति	३.५१.८४	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
व्रीडिता तेन दुःखेन	१.१८.२६	शक्तितोमरं वयमप्यत्र	२.१२२.५५	शंखं चक्रं गदातूणं	३.७२.८५	शतद्वयं ब्राह्मणीनां राजन्	२.८३.३४	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
व्रीडिता यान्ति सुश्रीणि	२.६२.१८	शक्तितोमरं वयमप्यत्र	२.६३.५३	शंखं चक्रं गदातूणं	३.७२.८५	शतप्रहृष्टाणोदयः शतबाहुः	१.४६.५०	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
व्रीडिता विस्मिताश्चैव	२.१२.२१	शक्तिं बाणस्ततः क्रुद्धो	२.११६.१६०	शंखं चक्रं गदातूणं	३.७२.८५	शतं त्वेवं समाख्यातं	१.३.५३	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
शकटस्य त्वचः सुप्तं	२.६.४	शक्तिमंतोः शुक्तिमंतो	२.१०६.८३	शंखं चक्रं गदातूणं	३.७२.८५	शतयोजनं विस्तारं	३.३५.८	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
शकटानि सुगन्धीनि	१.१३०.६	शक्तिशूलगदाप्रासांस्तो	२.६३.१०३	शंखं चक्रं गदातूणं	३.७२.८५	शतवर्त्म शतशिखो	३.५५.१४१	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
शकटावत्संपर्यन्तं चन्द्रा	२.६.२१	शक्रगृष्टिशूलपरिध	२.१०६.६६	शंखं चक्रं गदातूणं	३.७२.८५	शतसाहस्रिको भागो व	२.५५.४६	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
शकटावत्संपर्यन्तं कण्ट	२.५.२३	शक्य एष गिरिस्तात देव	२.४२.४६	शंखं चक्रं गदातूणं	३.७२.८५	शतशः शतबाहुश्च	३.५१.६३	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
शकले द्वे स वै जातो	१.३२.६७	शक्रगोपाह्वयामोदे	२.२५.४	शंखं चक्रं गदातूणं	३.७२.८५	शतानि तत्राप्सरसां	२.११७.२	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
शका यवनकाश्चोजाः	१.१४.१८	शक्रं शोवाच भगवान्वचनं	३.४०.८	शंखं चक्रं गदातूणं	३.७२.८५	शतानि पञ्च भार्याणां	२.८३.३३	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
शकाशिनिसमस्पर्शा	३.५६.६४	शक्रवज्रप्रहारारणामनभिज्ञं	२.४०.२१	शंखं चक्रं गदातूणं	३.७२.८५	शतानीको निरामित्रो	१.७.६८	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७
शकास्तुपारा दरदाः पार	२.५७.२०	शक्रस्य वचनं श्रुत्वा	२.१६.६२	शंखं चक्रं गदातूणं	३.७२.८५	शताश्वमेघस्य यदत्र	१.१.५	शन्तनोः प्रसवस्त्वेष	१.३२.१०७

शम्बरश्चिन्तयामास	२.१०६.२७	शरखेवं सुसस्यायां	२.१६.३६	शरैराशीविषप्रख्यं रत्न	२.७३.६५	शशास तृपतिः स्त्रीतः	२.३७.४१	शादलच्छन्नमार्गसु	२.११.१५
शम्बरस्तत्र शामित्र	३.५४.२०	शरद्वतस्य दायदमहत्या	१.३२.७१	शरैराशीविषप्रख्यं	२.७३.६६	शशास पृथिवीं कृत्स्नां	३.१०२.२०	शान्तिपर्वण्यपि गते	३.१३२.६८
शम्बरस्तु ततः क्रुद्धः	२.१०६.१	शरनिभिन्नगात्राद्व	३.६०.३०	शरैरिजितघाराद्यैः	३.१२३.४	शशिरदिमप्रतीकाशं	२.१०८.१०	शान्तोऽसीतिमयोक्तस्त्वं	१.५३.२६
शम्बरस्तु ततः क्रुद्धो	२.१०६.२४	शरभः शलभश्चैव	१.४१.८४	शरैश्चतुभिरद्वारैश्च	३.१२४.१०	शश्वुस्तुतेऽमरण्याद्या	३.६६.२२	शान्ति भजत भद्रं वो	१.४२.३२
शम्बरस्तु ततः क्रुद्धो	२.१०७.१	शरभः शलभश्चैव	३.५३.१२	शरैश्च भोगिभोगाभैः	३.१२२.८	शस्त्रजालैर्वहुविधैः	३.३८.३०	शान्तिं व्रज न भेतव्यं	१.५३.३७
शम्बरस्तु महाद्वैत्या	३.५३.११	शरवर्षं विमुच्यन्तो	२.१०५.८	शरैः संघादयामास	२.६३.६७	शस्त्रपातमहाघातं नरकेण	२.६३.१२०	शान्तोऽसीत्युक्तमात्रस्तु	१.५३.२२
शम्बरस्तु महामायो	३.५०.२२	शरवर्षाणि दीप्तानि	३.५४.७१	शरैः सप्ततिमहया करैः	३.६६.३०	शस्त्रपातांश्च विविधान्	३.५७.२६	शान्त्यर्थं सर्वभूतानामिह	३.१३३.६७
शम्बरस्य जघनाशु	२.१०५.६	शरशक्तिगदाभिस्ते	३.५६.५	शरीघरदिमभिर्दीप्तैः	३.५७.१०	शस्त्रं गृहाण गोविन्द	३.१००.३४	शापश्च दत्तः क्रुद्धेन	२.६३.३०
शम्बरस्य वधश्चैव	३.१३४.२७	शरशक्त्युष्टि लङ्गांश्च	३.५६.७६	शरीघानस्त्रमायाभिः	२.१२६.७	शस्त्रसिद्धिस्तु योधानां	२.३०.२६	शापस्य परिहारेण त्वं च	१.६.३३
शम्बरस्य वृत्तं पुत्रा	२.१०४.३३	शरसंबुतगवास्ते	२.१२६.४	शर्भुभेयमृणाच्छेषं शेषं	१.२०.१३१	शस्त्राणि यानि चान्यानि	२.४४.२५	शापाच्छुद्रत्वमापन्नो	१.११.११
शम्यातेस्तु रहस्याती	१.३१.८	शराग्निना न दग्धा	२.८२.४	शर्वः शत्रूणां शासनाद	२.७४.२६	शस्यचौरा भविष्यन्ति	३.४.२२	शापितासि मम प्राणे	२.६७.३
शयनानिमहाहर्णि तथा	२.६४.५	शरीरांश्च समुत्पश्य	३.२६.१३	शलभा इव राजेन्द्र	३.६८.१६	शाकभक्षः कृतजपो	३.८४.१८	शापोऽयं विनिवर्तत	१.६.२५
शरघातप्रदीप्तानि	३.१३३.७६	शरीराणि महाराज	३.१२२.४	शल्यपर्वणि राजेन्द्र	३.१३२.६५	शाखानगरमुख्यानां संवाहानां	२.६१.६	शाम्यश्च महेष्वासान	३.५४.७०
शरजालेन दिव्येन	३.५४.४५	शरीरादग्निष्कम्प्य	३.१६.१२	शल्यश्च शकुनिश्चोभौ	२.८४.२०	शालानगरमुख्येषु रम्येषु	२.६१.१२	शाम्यमाने तु समरे	३.६२.२८
शरजालेन महता	२.६३.६२	शरेण तीक्ष्णपुंलेन	३.१२५.११	शल्यश्च शकुनिश्चोभौ	२.८४.२१	शालावितंकैर्बुधाराणां	२.६.२६	शारदं वर्षणं यद्वस्तेह	२.८४.३८
शरणागतः क्षुधार्तश्च	१.२०.१११	शरेण निशितेनाजौ	३.११६.२१	शशकं मृगमांसं वा नित्यं	२.७६.५८	शास्त्रिनं चक्रिणं विष्णुं	३.८१.१२	शाङ्गं खड्गं तथा	३.६२.२३
शरण्यं शरणं विष्णु	३.४१.३२	शरेणाकर्णमाकुण्ठ्य	३.१२३.५	शशाको विमलश्चापि	३.३०.२६	शाणुपाद इति ख्यातो	२.७४.१५	शाङ्गी चक्री गदी शंखी	३.१००.३८
शरण्यं सर्वभूतानां	३.६०.३०	शरेणाभिहतस्त्राणं	३.३२.२५	शशादस्य तु दायदः	१.११.१६	शातकुम्भस्य निचयं	२.५१.६२	शार्दूलचर्मसंविष्टं	२.१०५.१३
शरण्यं सर्वभूतेशं भक्त्या	१.२४.१२	शरैरनेकसाहस्रं	३.६४.२७	शशाप तानतिक्रुद्धो	१.३०.३१	शातकोम्भेन महता	३.५१.१७	शार्दूलशब्दाभिरुत	२.५.२१
शरतल्पे शयानेन	२.१११.४	शरैरनेकसाहस्रं	३.१२६.३	शशास चेमां वसुधा	२.३७.५०	शातोदरत्वमिच्छन्ती	२.८०.३३	शार्दूलचिह्नः शुशुभे	३.४६.४०

श्रीहरिवंशपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणी

१३६

शालाबरथा हिरण्याक्षाः	१.२७.५२	शनिर्वीरः शरी चापी	३.६५.२२	शिरो निर्वेष्टुकामा तु	२.८०.६	शिवा इमशानान्निष्कम्यं	२.२३.२६	शीतोष्णं चेत्सिते देवि	२.६५.२२
शालावृक्षान्यो यतिरूपो	२.७२.३१	शिनेयुर भवत्सुनुशतः	१.३६.७	शिरोभिः प्रपतद्भिस्तु	३.५६.५३	शिशिरप्रभवां चैव	३.३५.१३	शीतोष्णो ह्यन्तस्तत्र	२.६८.२०
शाल्वस्सौमपतिश्चैव	२.५२.७	शिनेर्नप्ता धनुस्तस्य	२.७३.३६	शिरोभिः स्पृश्य	३.६६.५६	शिशिरं च महाशैलं	३.३५.१२	शीतोष्णमिच्छतां तत्र	२.८८.७४
शाल्वोऽपि नृपतिश्चेष्ट	२.५२.४७	शिनेस्तु सत्यवाक्	२.१०३.३०	शिरोरुहेषु संयुष्ट	३.५७.२७	शिशुना षटकेनाथ	१.२०.६६	शीर्णकुम्भस्तथा	३.५५.७८
शाल्वोऽपि भरतश्चेष्ट	२.५४.१०	शिविकायामयारोप्स	२.३२.५८	शिरो बहामि चेष्टत्वा	२.६७.६	शिशुपालश्च संपूर्णं	२.११५.११	शीर्षमाणस्य चूर्णानि	३.६१.२१
शाबं स्तनं पिवत्साधु	३.१०६.६	शिविकायामयारोप्य	२.४४.६२	शिलाभिर्बहुचित्राभि	३.२७.१६	शिशपालो दशग्रीवो	२.५६.२३	शीर्षाणां वै सहस्रं तु	२.१२२.६
शासनं यदि वा श्रुत्वा	२.२२.६६	शिवेष्व पुत्राव्यत्वारो	१.३१.२६	शिलां प्रतिर्कृति चैव	२.७६.२८	शिशुलीनां ततः कुर्वन्स	२.६.५	शूकदेवोऽपि धर्मात्मा	२.४४.६१
शास्ता त्वं खलु	३.१२७.४०	शिरः खं ते जलं मृत्तिः	२.१४.३८	शिलासंधानतिक्रम्य	२.६३.५७	शिष्टाश्च दैत्या	३.३८.१५	शुकवर्णानुष्यवर्णा	३.५८.२५
शास्तास्म्यथो सतां	३.१२७.३६	शिरश्च पृथिवी भूतः	३.२७.२६	शिलोच्छ्रवृत्तयः स्याताः	३.२२.२८	शिष्यो हिरण्यनाभस्य	१.२०.४३	शुकस्य कन्या कृत्वी	१.२८.४
शास्त्रज्ञो नीतिमान्साक्षा	३.७४.१६	शिरश्चिच्छेद भल्लेन	२.६३.७१	शिल्पवन्तोऽनुत्परा	३.३.८	शीघ्रं तं मोक्षयिष्यामो	२.१२७.४	शुका नीलतमाः सुभ्रू	२.११७.३७
शास्त्रार्थकुशलाः सर्वे	२.६०.४५	शिरसाज्ञां तु ताः सर्वाः	२.८८.४४	शिवं चास्य जलस्यास्तु	२.१२.४१	शीघ्रं समभिवर्तन्तां	२.३५.३३	शुकं सोमात्मकं विद्या	१.४०.५१
शास्त्रोक्तस्याप्रवक्तारो	३.३३.३३	शिरसोऽर्ज्यजनं सौम्ये	२.७८.३१	शिवयोर्देवयोस्तत्र	३.७३.१६	शीघ्रं समभिवर्तन्तां	२.४२.२०	शुकस्तु सह पुत्रेण	३.३१.६
शिव्य च दार वं पात्रं	३.१११.६१	शिरस्तः पार्श्वतश्चैव	३.६६.३१	शिवश्च वो भविष्यामि	२.१७.२६	शीघ्रमाहू भद्रं ते बलदेव	२.४३.८७	शुक्रादीनृत्विजश्चापि	३.६६.६४
शिक्षाक्षरसमेताया	३.२३.१५	शिरस्तिमिसमा कीर्णा	२.१०५.६४	शिवस्य भवने राजन्	३.१३२.४६	शीघ्रवातसमुद्भूताः	२.१०.२६	शुक्रादगर्भः समभवद्रसमूलेन	१.४०.५०
शिक्षितान् गजशिक्षाया	३.५८.२०	शिरस्ते पातयिष्यामि	३.६५.३८	शिवाय गावः पूज्यन्ता	२.१६.४३	शीतच्छायाश्च तश्चर्मलता	३.२८.५६	शुक्लदन्ता जिताक्षाश्च	३.३.१५
शिक्षरैर्घृणं मानैश्च	२.१८.३३	शिरः स्थाने तु राजर्वे	२.५७.५०	शिवाय विष्णुरूपाय	२.१२५.२६	शीतवीर्याः प्रकृत्यैव	२.६३.५६	शुक्लमेव सदा वासः	२.७८.२६
शिक्षाभिस्तस्य मुक्ताभी	२.११.७	शिरस्यद्विप्रतीकाशे	३.५८.३७	शिवाश्च प्रवबुवार्ताः	२.४.१६	शीतांशुजलनिर्दग्धाः	१.४६.१८	शुक्लवस्त्रा शुभाचारा	२.८०.३
शिक्षिभिर्जटिभिश्चैव	३.३२.८	शिरांसि गवितान्मूढः सर्वा	२.८८.२१	शिवाश्च प्रवबुवार्ता	२.४५.११	शीतांशुनिहतास्ते तु	१.४६.१६	शुक्लाः सुमनसः कन्याः	२.१०६.६७
शितिकण्ठप्रसादेन	२.११६.४०	शिरीषपुष्पसदृश	२.११७.४६	शिवाश्च वाताः प्रवबुवि	२.३३.३७	शीताशुरशान्तकिरणो	२.२६.३५	शुचिः प्रयतवाक् भूत्वा	१.४१.१६
शितिकण्ठविसृष्टस्तु	२.११६.३६	शिरोवरायां जग्राह	१.५४.५२	शिवाश्चैवाशिवान्	२.१२४.३३	शीतेन व्यधमत्सर्वा	३.५५.१५३	शुचिं योगं शंसन् शान्त	२.७२.३६

शुचिरोदकान्निगण	१.३.१०८	शुशुभे सा चमूर्दीप्ता	३.५६.७३	शूलोन्मूलहस्ताश्च	१.४१.६१	शृणु राजन्मुषणैः कृतं	२.५५.३	शेषा देवाश्च दैत्याश्च	३.५३.२६
शुचिः शीलान्विताचार	३.१३२.१६	शुशुभे दैत्यनगरं	३.१३३.१३	शृगालप्रहितैरस्त्रैः पावक	२.४४.२६	शृणु विस्तरत सर्वं	३.१३३.२	शेषां सेनां गुहाद्वारि	२.८४.५
शुद्धाक्षमन्दं भल्लाटं	२.५८.१८	शुश्रूषवो भविष्यन्ति	३.४४.२	शृगालश्चापिपुंरव्यस्स्यन्वने	२.४४.१३	शृणुः विस्तरतः	३.१८.२	शेषा यादवसेना तु गृह	२.८४.११
शुभं गर्भमद्यत्नेममदिति	१.४८.२०	शुश्रूषुवन्तरिक्षेऽप्य	३.२६.२३	शृगालस्त्वज्जीकृष्णं	२.४४.१६	शृणु विस्तरतः सर्वं	३.१६.२	शेषा विहंगमा ये वै	१.२३.२८
शुभाङ्गी नाम वैदर्भी	२.६१.४	शुश्रूषेऽतिमहाघोर	३.५८.८६	शृगालस्य वचश्श्रुत्वा	२.४४.२३	शृणु वैदर्भि घर्भजे	२.७७.१०	शेषाश्च वसवः सर्वे	३.५४.६०
शुभाष्यया गुणिनी युक्त	२.७६.११	शुश्रूषे सुमहाशब्द	२.६३.६१	शृगं चास्य पुनस्तव्य-	२.२१.२१	शृणुष्वज्जर सदेशं	२.१२३.२०	शेषाश्च शेषं राजेन्द्र	३.१२३.३
शुभा देवसमा रम्या स्नान	२.४०.६१	शुश्रूषु निरहंकारावुभौ	२.३३.५	शृङ्गं पृथिव्यास्स्त्रालक्ष्यं	२.५७.३	शृणुष्व मम गोविन्द	२.१२३.१५	शेषास्ततोऽनयः	२.१२२.४०
शुभावहं वृद्धिकरं प्रशस्तं	२.८६.७६	शृङ्गकाष्ठैस्तूणीर्वैष्णव्य	२.४२.५०	शृङ्गप्रहरणो रौद्रः	२.२१.६	शृणुष्व बदनां वीर कृपणा	२.३२.२६	शेषास्तु भैमा हरिमन्मुपेता	२.८६.४२
शुभाश्च गिरिनन्दिन्यो	२.७७.१७	शृङ्गां वर्षसहस्रं वै	१.३२.२५	शृङ्गस्थौ तस्य शैलस्य	२.३६.६६	शृणुष्वदिपुरोग्नेभ्यो	३.७.१२	शेषेण चापि जज्वाल	२.१२२.८०
शुभासनवतीं रम्यां	३.४१.४८	शूरः पूज्याय वृद्धाय	१.३४.२४	शृणु कृष्ण वचो मह्यं	२.१२१.४१	शृणुष्ववाहितो	३.७३.६	शेषोऽनन्तो महीपालो	३.४६.४०
शुभे तिथौ महाराज	२.६१.१६	शूरसेनश्च शूरश्च	१.३३.४६	शृणुद्वन वचो मह्यं	३.११५.३०	शृणुष्वैकमना राजन्	३.१६.१	शैनेयमपि मुह्यन्तं पतन्तं	२.७३.७७
शुभे देवसमे रम्ये स्नान	२.५०.७६	शूराणां युद्धयमानानां	२.४२.२३	शृणुष्वं राजशाङ्गलाः	२.१०१.२५	शृणु सर्वं महाराज	१.२०.८०	शैनेयः सत्यकस्तस्माद्	१.३४.३०
शुभे देशे निवेश्याथ	३.१३२.७८	शूराश्च शूरवीराश्च	१.३३.५६	शृणु नामानि सर्वेषां	३.७२.१	शृणु हंस वचो मह्यं	३.११३.८	शैनेयो बलभद्रश्च	३.१२७.३
शुभे देशे शरद्वीपे	१.२१.३०	शूरेणामिनवीर्येण	३.५०.१५	शृणु नारायणस्यादौ	१.४६.७	शृणोति श्रावयेद्वापि	३.१३५.११	शैनेयो वृष्णिवीरस्तु	३.६७.१३
शुभेन कर्मणा तेन जाता	१.२१.२४	शूरोऽप्रितबलश्चैव	२.५३.४	शृणु पुरोर्महाराज वंश	१.३१.३	शृणुष्वन्तश्चाङ्गीतानि	२.८८.३८	शैवस्य च सुगां तन्वीं	२.६०.४३
शुभ्रनेषप्रतीकाशैर्दरिद्रसो	२.५८.५४	शूलशक्तिगदाखड्ग	३.५८.६५	शृणु मे ह्यपर वाक्यं	२.१०६.५५	शृणुष्वन्ति श्रद्धया युक्ता	३.१३५.५	शैव्यादिह्ययुक्तेन	२.७५.५१
शुभ्रश्चैव निशुभ्रश्च	२.१०६.४०	शूलशक्तिगदापाणि	३.५७.६०	शृणु राजन् कथां दिव्यां	१.१.१६	शृणुष्वस्तथा रमन्वापि	३.१०३.३	शैव्याद्यानपि देवेन्द्रः	२.७५.८
शुशुभाते श्रिया जुष्टावान	२.७.१०	शूलशक्तिमहामत्स्या	३.५६.८६	शृणु राजन्कथां	३.४८.६	शेषं द्यानपराः कालमनु	१.२१.२०	शैल प्राकारपरिक्षा	२.११८.८४
शुशुभे जानरूपश्च	३.३५.३०	शूलिना प्रेषितो युद्धे	१.१२७.१८	शृणु राजन् वहितो	३.४६.२८	शेषश्च वासुकिश्चैव	२.१०६.१७	शैलवारुणसावित्रैस्तान्	२.१२६.६
शुशुभे दानवश्रेष्ठो	३.५८.४८	शूलैः प्रमथिताः	३.५६.८२	शृणु राजन् विधिमिमं	३.१३२.३	शेषः सत्यवृत्तिर्नामो	३.२८.३२	शैलानां च वनानां च	२.१०.३६

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

११५

शैलानां भूषणं शोषो	२.८.१७	श्रममभिविनिवर्तमानसं	३.६.२	श्रीवत्सकलिलं पुष्पं	३.३३.२६	श्रुति प्रीतिरिला कीतिः	३.६५.१७	श्रुत्वाभिषिक्तं राजेन्द्र	२.५५.१३
शैलानां हिमवन्त	१.४.६	श्रविष्ठायाश्च पुत्रो	३.१.१२	श्रीवत्सलक्षणं दृष्ट्वा	२.४.२२	श्रुतिमान्वर्मशीलवच	२.५३.३	श्रुत्वाभिषिक्तं राजेन्द्र	२.५५.१४
शैलैश्च श्रूयते राजन्	१.६.४०	श्राद्ध कर्माणि चोद्दिष्ट	१.११.१७	श्रीवत्सेनोरसि श्रीमान्	३.६६.३३	श्रुतो मे स्वस्य वंशस्य	१.४०.६४	श्रुत्वा वाणीं तु तां	३.६६.२
शैलोत्करसमाकीर्णं	१.४३.६	श्राद्धकाले मम पितुर्मया	१.१६.१६	श्रीवृत्ताः पावनाश्चैव	३.२१.६	श्रुतोऽयं पटपुरवचो रम्यो	२.८६.१	श्रुत्वा विनीतं वचन	२.५८.२६
शैवालनलिनैश्चापि वृक्षः	२.११.५५	श्राद्धस्य फलमुद्दिश्य नियतं	१.२०.१४२	श्रीश्च पद्यालया देवी	२.४१.२८	श्रुतोऽयमेव शतशस्तथा	२.१०२.३६	श्रुत्वा बाह्वस्वनं चोरम	३.३६.११
शोणितोक्ताः स्म दृश्यन्ते	२.६३.८०	श्राद्धानि चैव कुर्वन्ति	१.१६.१२	श्रुतधर्मोति नामान	१.३२.१००	श्रुत्वा कार्मुकनिर्घोषं	३.५६.२३	श्रुत्वा सुतुमुलं नादं सर्वं	२.५०.६६
शोणितोदां रणे	३.६२.१६	श्राद्धानि पुष्टिकामाश्च	१.१७.३६	श्रुतं चापि तयोर्वीर्यं	३.११५.१०	श्रुत्वा कृष्णभिषेकं तु	२.४६.६३	श्रुत्वा सुरगणानां तु	१.२८.१४
शोषयाम्येव मार्गं तं	२.११३.६	श्राद्धे प्रतिष्ठितो लोकः	१.२१.१	श्रुतं नः परमं ब्रह्मन्	३.१५.१	श्रुत्वा कृष्णस्तु तत्सर्वं	२.७२.७	श्रुत्वा सौभपतेर्वर्क्यं सर्वं	२.५२.३२
शोषितोवप्लुतगार्भः	२.१२६.१४६	श्राद्धे ये च प्रदास्यन्ति	१.१७.४०	श्रुतं ब्रह्मयुगं ब्रह्मन्युगानां	३.२१.१	श्रुत्वा च गदितं तस्या	३.१६.२३	श्रुत्वाहं तद्वचस्तस्य	२.२८.५५
शौचान्विता स सततं	२.८१.६	श्राद्धेः प्रीणति हि	१.१६.१०	श्रुतं म विश्वदेवानां	३.७.१६	श्रुत्वा चेदमुषाख्यानं	१.२४.३५	श्रुत्वाहं तेन वाक्येन	२.५३.५०
शौण्डीर्यं मे मया	३.५.२२	श्राद्धं राप्यायितः सोमो	१.१७.३८	श्रुतमेतन्मया हंसिनि	२.६२.५१	श्रुत्वा तं देवराजंस्तु	२.६४.७०	श्रुत्वाहमेवं कृष्णस्य	२.१११.१४
शोरिणा पृथिवीपाला	२.१०२.२	श्राद्धं राप्यायिताश्चैव	१.१७.३७	श्रुतवर्णो जघानाश्वां	२.६०.१३	श्रुत्वा तमयं मल्लि	१.२६.४५	श्रुत्वं तत्केशवो वाक्यं	२.४७.१२
श्मशानरतये नित्यं	३.८७.३१	श्राम्यते व्यक्तमेवेयं	१.५१.२६	श्रुतवन्तोऽयं वन्तश्च दातारः	२.३२.३६	श्रुत्वा तु वद्धं पीलस्त्यं	१.३३.३५	श्रुत्वं तद्भार्गवो रामस्तपो	२.३६.४४
श्यामपुत्रः समीकस्तु	१.३४.३६	श्रीकोस्तुभोद्भवश्चि	३.११४.३६	श्रुतश्वां च समुतां	२.७६.२४	श्रुत्वा तु याज्मानां तां	१.२४.४	श्रुत्वेतिहासं कात्स्न्येन	१.१.११
श्यामावदाता सा ह्यासी	२.५६.३८	श्रीदाममजयत् कृष्णः	२.१४.३१	श्रुत समागमः पूर्वमद्य	३.११७.१०	श्रुत्वा तु रामः कृष्णश्च	२.१०१.६२	श्रुत्वं वधुषो भंगकंसो	२.२७.६२
श्यामासुषारकेशा श्वी	२.१०८.११	श्रीफलं गोमयं दुन्दुभिः	२.१०६.१००	श्रुतसेनः सुपेणस्तु	२.१०४.४४	श्रुत्वा तु वचनं देवी	२.१०८.३०	श्रुत्वं वचनं तस्य	२.१२६.२६
श्यामो युवा लोहिताक्षो	१.४१.१०५	श्रीमत्स्वर्ग्यं सदा पुण्यं	२.१०६.१०६	श्रुतस्ते दैत्यसैन्यस्य	१.४४.१	श्रुत्वा तु वचनं तेषां	३.६६.१५	श्रूयतां कथयिष्यामि	२.३६.४५
श्रद्धाशनस्य राजेन्द्र	२.८८.३	श्री महेशं देवदेवमर्चयति	२.११७.६	श्रुतस्ते दैत्यसैन्यस्य	३.५२.१	श्रुत्वा निहतमद्युषं	३.१२६.१	श्रूयतां त्रिदशाः सर्वे	१.४८.६७
श्रद्धाशनेन वै भाव्य	३.१३२.५०	श्रीमादग्लानिः समुत्पन्ना	२.११७.५४	श्रुतार्थः स्वं विमानं तथा	२.६०.६	श्रुत्वा पञ्चविंशतं तु	१.३३.५६	श्रूयतां भो वृषश्चेष्टा	२.४८.५
श्रद्धया परया दत्तं	३.१३२.१७	श्रीमान् भीमस्य दायादो	१.२७.२	श्रुतार्थो देवगुह्यस्य	२.५८.२७	श्रुत्वा पितामहवचः सा	१.५३.६६	श्रूयतां भो वृषश्चेष्टा	२.११०.३१

श्रूयतामभिषास्यामि	३.८०.२१	श्लाघ्यश्च स हि ते	२.१.१६	श्वेतशैलप्रतीकाशः	३.५०.१०	षष्टिः पुत्रसहस्राणि	१.१५.११	संरन्धी तावुभौ दृष्ट्वा	१.३६.१३
श्रूयतामित्यथामभ्य दान	२.६२.४६	श्लोकं वा श्लोकपादं	३.१३२.७४	श्वेताः कैलाससंकाशाः	२.१०६.७१	षष्टि रथसहस्राणि	३.५०.५	संवत्सरपरं कालं कालजे	२.६५.२१
श्रूयतामुत्तरं वाक्यं श्रुत्वा	२.३६.६	श्लोकोऽपि चात्र गीतोऽयं	३.१.१७	श्वेताम्बरधरा दैत्याः	३.५१.५६	षष्टि रथसहस्राणि	३.५६.६३	संवत्सरस्य पर्यन्ते	१.११.३४
श्रूयते चास्य चरितं देवे	१.५०.२०	श्वफल्कः काशिराजस्य	१.३४.७	श्वेतेन तव पादेन वाससा	२.६६.३२	षष्टिर्वरसहस्राणि	१.२६.७५	संवत्सरात्कुमारास्ते	१.२६.३७
श्रूयते हि पुरा विष्णु	२.२२.३६	श्वफल्कः काशिराजस्य	१.३८.५०	श्वेतेन परिवारेण किशोर	१.३७.२१	षष्टिर्वपसहस्राणि	१.३२.३३	संवत्सरे ततः पूर्णं	२.८०.३१
श्रूयते हि वनं रम्यं	२.८.२२	श्वफल्कस्तु महाराज	१.३४.४	श्वेतेन युक्ता वृष शीणि तेन	२.८६.६३	षष्टिर्वर्गे गते काले	१.३६.३७	संवत्सरे ततः प्राप्ते	२.८०.३६
श्रूयन्ते पितरो देवा	१.१६.३५	श्वः प्रभातेयथा कामं	२.७४.६	श्वो भवविनि विवाहे च	२.५६.३३	षष्ठ्या च युगवक्रास	२.१०५.४६	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रूयन्ते विविधानि	२.११५.२	श्वभ्रे प्रपद्यमानश्च	३.१६.२६	ष		षष्ठं ते संप्रवक्ष्यामि	१.७.३०	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रूयन्ते हि स्त्रियो	२.२८.१०१	श्वशुराम्यां च चरणी	२.७८.२०	षट्पदोद्गद्गीतनिनदा	३.६६.२०	षष्ठी रथसहस्राणि	३.४६.३७	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रेणीभूताः प्रकाशन्ते	३.५५.६५	श्वमन्तो दुद्रुवुः	२.५६.२२	षट्पुरं नाम नगरं	२.७४.४३	षष्ठी रथसहस्राणि	२.५६.४२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रेण्यः प्रकृतयश्चैव	२.३३.३०	श्वापदप्रचुरत्वं च	३.३.१६	षट्पुरादपि निष्क्रान्ता दान	२.८४.१२	षष्ठिगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रेण्यः प्रकृतयश्चैव	२.४५.४	श्वापदोच्छिष्टसलिला	२.११.४०	षट् सुताः सुमहासत्त्वा	१.३.१०६	षष्ठिगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रेयस्तेऽद्य विषास्यामि	१.१८.७८	श्वानामुचसि बाले त्वं	२.११७.४३	षडेव देवकीभर्ताः षड्भर्मा	२.२.२३	षष्ठिगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रेयो हि मरणं मच्छं	२.११८.१३	श्वेनः कृतयुगे देवो रक्त	२.७१.३१	षड्ग्रामरागेण च तत्र कार्यं	२.८६.८२	षष्ठिगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रेष्ठो धनुष्मनः पार्यः	२.६०.१७	श्वेतप्रहरणोऽश्वप्य	२.१२२.७	षड्भिनिहत्य कारुषा	२.५६.७४	षष्ठिगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रोणीं विशालामन्विच्छेत्	२.८०.३७	श्वेतभानुहिमन्तुर्गर्भोति	१.४६.७	षड्भर्मा इति योऽयं व	२.२.२२	षष्ठिगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रोतव्यं यदि मातुश्च	२.७५.२६	श्वेतमोदः कपाली च	२.१०६.७६	षड्भर्मा दत्त्वा स्वयं	२.२.२०	षष्ठिगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रोतुकामा रहोवाक्यं स्थिता	२.५२.६	श्वेतमोदः कपाली च	२.१०६.७६	षड्भर्मान्निस्मृत्वा कंस	२.४.२	षष्ठिगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रोतुमिच्छामि तत्त्वेन	२.१२७.३	श्वेतलोहितकैवर्णेः	३.२१.१०	षण्णां ज्ञानाभिधीनाम	३.२७.४३	षष्ठिगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
श्रोण्यसे तया गोपो	३.६५.३६	श्वेतलोहितपर्यन्तः	२.११६.६५	षण्मासाधानुषितस्तत्र	२.६७.३६	षष्ठिगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६
		श्वेतवाहननामानं यश्च	२.८२.३१	षण्मासां श्वत्सुरो	३.२३.१४	षष्ठिगुण मस्तीति	३.१३२.३२	संवत्सरे ततो याते	२.७६.२६

संस्कृतश्च सुपर्णेन	१.४८.३२	स एक एव तस्यासीत्युत्रः	२.३७.४७	सकरीवांगरागासु व्रज	२.२०.१६	सकर्वण च कृष्ण च	२.३५.३७	सखी प्रियं विकीर्णन्ती	२.११८.६७
संस्कृतानां नित्यदा	२.७४.३०	स एव भगवान्विष्णुरालोक्य	२.४६.३५	सकाननदरीप्रस्थं श्वेता	२.४०.११	सकर्वणं तु स्कन्धेन	२.१४.२३	सखीभिः सहिता ह्युपा	२.११८.६६
संसिक्ता रुधिरार्धश्च	३.२६.२१	स एव भगवान्विष्णो देव्या	३.१७.२१	सकान्तैर्धर्तिराष्ट्रश्च	३.४१.६१	सकर्वणस्तु सुचिरं	२.३०.५२	सखी सा ब्रह्मदत्तस्य	१.२०.८२
संस्कृतव्यायुषागारा	२.३८.५६	स एवं चिन्तयाविष्टः	२.११६.८७	स कामुं कविनिर्मुक्तैः	३.५६.१५	सकर्वणस्य मतोक्तां भारतां	२.४६.३१	सख्या वै एवमुक्ता	२.११६.६५
संस्काराभिनयो तेषां	२.६३.१०	स एवमुक्तो मुनिभिर्मुनि	१.४५.३१	स कालयवनो नाम जने	१.३५.१६	सकर्वणात्तु गभस्य	२.२.३२	सख्युपमं बलाढ्यन्ता	३.६१.१५
संस्तम्भितमिवाभाति	१.४५.११	स एवमुक्तो यदुना	१.३०.२७	स कालयवनो नाम	२.५२.२६	सकर्वणाघोलजनन्दनानि	२.८६.८	स गजान् गदया	३.५६.४८
संस्थानं प्रकृति चास्याः	२.११६.४५	स एवमुक्तो राजवि	१.११.४१	स कालस्सर्वभूतानां निग्रहा	२.३२.४३	संकल्पयित्वा वत्सं त मनुं	१.६.१६	स गतस्तत्र रम्याणि ददशं	२.४६.२
संस्थाप्य धर्मान्मर्त्यैव	२.१०२.३१	स एवमुक्त्वा बहुधा	१.४८.२२	सकिकिणीकं विमलं	३.५१.७६	संकल्पायास्तु कौरव्य	३.३६.५५	स गत्वा जयतां श्रेष्ठ	१.११.४८
संस्मारितस्तु कृष्णेन	२.१४.५०	स एव यज्ञपालोऽभूत्क्षेत्र	१.३३.२४	सकिनरमहानागं	२.६८.६०	संकल्पायास्तु सर्वात्मा	१.३.३५	स गत्वा नारदस्तत्र	२.११६.१६६
संस्मृत्य स वरं शक्रा	२.५७.५४	स एव भगवान् ब्रह्मा	३.१७.२२	स कुक्षौ वृषभो दृष्टि	२.२१.१६	सकृतेरपि धर्मिमा	१.२६.५	स गत्वा ब्रह्मणो लोकं	१.४६.१२
संस्मृत्या संस्मृत्य शिरः	२.६५.५४	स एव भगवान्विष्णु	३.१८.१६	सकूवरोपस्करवन्धु रेधं	३.५२.१२	संकुडोर्देव्य सैन्यस्य	३.५५.२६	स गत्वा मथुरां रामो	२.४६.५५
संहतादयो निकुम्भस्य	१.१२.३	स एव भगवान्विष्णु	३.८२.३८	स कृत्वा प्रविभागं	३.३५.४६	संक्षेपेणैव तत्सर्वं	३.३६.५२	सगदो लांगली चक्री	३.२६.६
संहर्तव्या महासेना	३.११६.११	स एव रावणो घन्यो	१.५४.३७	स कृष्णं तत्र सहसा	२.२६.६०	संक्षेपेणैव ते वक्ष्ये	१.१६.३६	सगरस्तु सुतो बाह्वांजने	१.१३.३२
संहृष्य लोकान्सर्वान्त	३.३३.२२	स एव स महासेना	३.५.३३	स कृष्णं पुण्डरीकाक्ष	२.३२.१७	म खड्गं शतधा कृत्वा	३.१०१.६	सगरस्यात्मजा वीराः	१.१५.१
संहृष्टरोमा ग्लानाक्षी	२.१२२.७४	स एव सर्वशस्त्राणामवश्यः	२.८५.४०	स कृष्णस्तत्र बलवान्	२.३३.१	सखा च वसुदेवस्य	२.८३.४	सगरः स्त्वां प्रतिज्ञां	१.१४.१५
संह्लादश्च चतुर्थो	१.३.७३	स कंसस्तत्र संभूतस्त्वजा	१.५४.६६	स कृष्णस्तत्र बलवान्	२.३७.१	सखाऽऽस गालवो यस्य	१.२०.१३	स गाढविद्धो व्यथितो	२.११६.६४
संह्लादस्य तु दैत्यस्य	१.३.१०४	स कण्ठस्थेन निष्केण	३.६१.१०	सकृष्णस्तत्र सहितो रोहिणो	२.३४.१	सखा स देवराजस्य	२.७३.३१	स गात्रैर्भगवान्योगान्	३.२०.२०
संह्लादीयो महानादो	३.४७.६	स कदाचिद्धने तस्मिन्	२.११.१८	स कृष्णहस्तात्संप्राप्तं	१.३६.४०	सखीगण वृत्ता चैव सा	२.१२७.१६	स गाधिरभवद्वाजा	१.२७.१६
स इमां पृथिवीं कृत्स्नां	२.६०.२२	स कदाचिन्नुपसृक्ते	२.३७.५१	स कृष्णेनायतं कृत्वा	२.३०.७६	सखीजवनवृत्तां देवी	२.१०८.१४	स गालवस्य चरितं	१.२०.१४३
स उवाच ततो गोपान्	२.१७.२७	स कदाचिन्निशापाये	१.३८.१५	स कृष्णोप्यमनुजां तु	२.६७.४७				

स गृहीत्वांशं चैव	१.५४.५१	संग्रामेषु प्रहृत्यं तेन	२.७०.३५	स च स्वर्गी ततः	३.८३.३२	स ज्येष्ठः सर्वभूतानां	२.६८.३२	स तत्र भोगी नागन्द्रः	२.५५.६६
स गृह्यस्तकेशश्च कंसो	२.३०.७८	संघटनः संकुटनः	२.१०६.७८	स चाग्निविष्वित्तत्र	३.२६.४	सचित्तानि शवान्यासन्	३.१२२.१६	स तत्र प्रविशन्नेव	१.५०.७
स गृह कृष्ण नक्षत्रं	२.४०.४४	सचक्रकूरहा सध्वज	३.६०.४२	स चाग्निर्वैष्णवैर्लोकै	३.२८.६०	सचिन्तयति मध्यस्थो	३.१०.१६	स तत्र रजनीमेकामुपित्वा	२.८६.४३
स गृह्याधिरिषिर्बैव	३.३२.६	स चक्रमुशलो नाम संग्राम	२.३६.७५	स चास्पोरसि विस्तीर्णो	१.५२.३	सच्छाद्यमानः शस्त्रार्थे	३.५४.५६	स तत्र वयसा तुल्यैर्वत्स	२.११.२४
संगतश्चापि लोकानामा	२.२६.७०	स चक्रेण शिरस्तस्य	२.६०.६२	सचित्र भानुरशैलेन्द्रो	२.४२.५८	सच्छाद्यातीव तोयेन	३.१६.२६	स तत्र वासयामास इवफलक	१.३४.६
संगतिस्तव तस्यास्तु	३.१०६.१६	स चक्रेणार्कतुल्येन	२.४३.३६	सचित्राष्टास्त्रिचरणा	२.२६.२	सच्छिद्य पाशान्सर्वास्ता	२.६३.५६	स तत्र सहसा क्षिप्तस्ति	२.३७.५२
मंगरे निहतो देव	३.१३१.५	स च धोरः पिशाचोऽपि	३.८१.११	स चिन्तयित्वा धनुषो	२.२८.१	संजीवयामास मृतं पुत्रं	२.१०२.२७	स तत्र स्थापयित्वा	२.७५.४६
सगृह्य तमर्वाकार तादृच	२.४१.३५	स चर्त शोषयामास	२.३८.१५	स चिन्तयित्वा संरथो	२.१८.२७	संज्ञप्तमश्व तत्रास्थ	३.५.१२	स तत्राम्बुप्रतिप्रक्षयं	१.५०.४
संगृह्य ते कलत्राणि	२.५६.१६	स च तेनैव नाम्ना तु	२.७.३६	सचिवैः श्रावितास्सर्वे	२.५०.८१	संज्ञा तु पायिवी तात	१.६.२१	स तत्रैकेन पादेन शकटं	०.६.६
संगृह्य वचनं तस्य	२.५८.७४	स च दूतवचश्श्रुत्वा	२.२४.६	स चेतनां पुनः प्राप्य	२.१०६.६	संज्ञां पुनः समालम्ब्य	३.६७.६	स तथेति तदा देवमुक्त्वा	२.७५.२१
संगेषु भावमोहाभ्यां	३.२७.३४	स च दृष्ट्वा महोत्पातान्	३.४६.२६	स चोपेन्द्रो वृषं हत्वा	२.२१.२४	सङ्गिण्डमैः सभेरीकैः	३.३२.१०	स तथेति ब्रुवन्नेव	१.२८.१७
संग्रामकाले कालजः	३.२२.११	स चन्द्रविषयं राजन्	३.२८.४८	स चोरमपतिः क्रुद्धो	२.१२.५	स ततः षोडशको	३.१००.२६	स तथेति हरिविष्णुयंयो	३.१३१.११
संग्रामः पुष्करेऽस्माकं	३.११६.१४	स च पापान्महाधोरान्	३.११०.६	सच्छत्रासादिनक्षत्रैव	२.३५.८०	सततं दूषयन्विष्णुं	३.८०.२७	स तथैव यथापूर्वं	३.१०.२६
संग्रामं गच्छतां धोरमेतयो	३.१०५.१७	स च पुत्रो मम ज्याया	२.५.८	सच्छत्रोत्सेधिनस्सर्वे	२.४३.३०	सततं पीडयमानं च कंसं	२.२६.६	स तदन्तः पुरं सर्वं वदश	२.३७.७२
संग्राममयीं धोरः	३.५८.६८	स च प्रासादमुह्योऽथ	२.६८.४५	स चिह्नन्धन्वविरथः	२.६०.२३	सततं सहिनो देव्या	२.६८.३०	स तद्विशेषं हृष्टात्मा	१.५०.२
संग्रामयुक्तस्तेजस्वी दैत्य	२.४१.३८	स च बाणसहस्रैश्च	२.७५.६	स जरां प्रतिजग्राह	१.३०.३४	स तत्कारणमाचक्षुष्यो	१.२४.७	सतनुत्राणनिस्त्रिशास्सायुधा	२.४३.२६
संग्रामश्च महान्कृष्ण	२.३६.७२	स च विप्रसुतो राजन्	३.१०४.१६	स जलाम्भोदस्रश्च विद्युत्	१.४८.४	स तत्प्राप्य महद्राज्यं	१.२५.२३	सतनुत्रास्सनिस्त्रिशाः	२.३५.७६
संग्रामः सुमहानासीदित्युक्तं	३.१०३.७	स च विष्णु हृषीकेशं	३.१०५.२५	स जहाराथ वेगेन रौहिणेयं	२.१४.२६	स तत्र गास्तु प्रसभं	२.२१.११	स त पिता चक्रचरो	२.१०५.७७
संग्रामान् सुबहून् कृत्वा	१.३३.१३	स च समरपरिश्रमं	२.१०७.३२	स जातः सर्वकुहेवो ज्ञाता	२.७१.२४	स तत्र त्वरितं द्वारि	२.४.३०	स तं कुच्छ्रयत	३.७२.५६
संग्रामे युद्धशौण्डेन	३.५६.२४	स च मर्वास्त्रविनित्यं	३.१२८.११	सज्यगाण्डीवमेवाथ	२.८५.३१	स तत्र दानवः क्रीडन्वर्ष	१.५४.२५	स तं जघाह धर्मात्मा	२.६६.४०

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१४३

स तं दम्भं समुचितं	३.२६.१५	स तान्वाणानगणयन्वैनं	२.७३.८५	स तु देशस्तदा स्निग्धो	२.१३.५	स तेन विद्धो बाणो	३.१२५.८	सत्त्वतात्सत्त्वसंपन्नो	१.३७.१
स तं ददर्श राजेन्द्रो	२.३७.५६	स यान्त्वयामतेनाशु	३.३१.१६	स तु द्वादश वर्षाणि	१.१३.१३	स तेन वीरो महता वनुषा	२.७३.६४	सत्त्ववान् गुणसंपन्नो	१.४१.१५३
स तं बाहुमशक्तो वै	२.२४.३७	स ताम्बाः सहस्रबाण	१.२५.८	स तु द्वापरपर्यन्ते ज्ञात्वा	१.५०.३७	स तेन सुशुभे दैव्यो	३.४६.४७	सत्त्वस्थो नित्यमाशीस्त्व	२.१२७.७३
स तं व्यादिश्य तनयं	१.११.४३	स ताम्बां मुमुदे राजा	२.३४.७	स तु पञ्जनं हत्वा	२.३३.१७	स तेनाभिहतो वीरो	२.६७.६	सत्ये हि स्थिताः सर्वे	१.५१.२८
स तथा क्षामिलवितश्चवा	२.५६.१७	स ताम्बां मुमुदे राजा	३.१०.४४	स तु प्रह्मापयच्छलं	२.१२७.६३	स तेनैवानुबन्धेन	१.२४.३६	सत्य एव परोविद्धो	३.२७.४८
स तथा ताडितो	३.६७.८	स तां पतिरियं नान्या	१.५१.३१	स तु मां व्रीडित दृष्ट्वा	२.११२.२०	स ते बन्धुसहायव	२.१६.८१	सत्यकर्णस्य दायादः	३.१.६
स तथा निद्रयाच्छन	१.५०.३५	स तां पुरीं धनवतीं	२.३८.१७	स तु योगमयाजाना	३.१६.३०	स ते विन्ध्ये नगश्रेष्ठे	२.२.४६	सत्यकर्मसुतश्चापि सूत	१.३१.५८
स तथा प्लावितं दृष्ट्वा	१.३२.४५	स तामक्रोचजो धर्मः शुभां	१.५४.२६	स तु राजकुमारोऽसौ	३.१.११	स तेषां ता गिरः श्रुत्वा	१.४२.३०	सत्यकाद्विस्तरं श्रुत्वा	२.७५.५३
स तथा मालया वीरशुशुभे	२.११.६	स तामाह प्रसज्जन्तीक्षितः	२.२८.६८	स तुर्वसुं च दृष्ट्वा	१.३०.३०	स तेषां वचनं श्रुत्वा	२.५२.३३	सत्यकेतुसुतश्चापि विभुर्नाम	१.२६.८०
स तस्यो पर्वतश्रेष्ठे	२.७३.६४	स तामु जनयामास पुत्रि	१.३१.१६	स तु लोकस्थया कृष्ण	२.१६.३५	म तेषामनुपस्थानात्	१.४८.२	सत्यजित्सेनजिह्वैव	२.१०३.१२
स तस्मै धूम्रवर्णो वै	२.३७.६६	स तामु नागकन्यासु	२.३८.१	स तु शक्रवचः श्रुत्वा	१.२८.२१	स तेषामभवद्राजा	१.२०.३४	सत्यधर्मभृतां श्रेष्ठा	१.२३.८
स तस्य देहो विमुञ्चो	१.४८.५०	सती चैवं शुभा साध्वी	२.१०८.२४	स तु सत्यवतस्तात	१.१२.१८	स तैः परिवृतः श्रीमान्पुरीं	२.६३.२	सत्यभामोत्तमा स्त्रीणां	२.६६.२७
स तस्य वनुषः	३.५७.३३	सतीत्वं धर्मचरणं	२.७८.४	स तून्मुखैर्जयाशामि	२.१२२.२	स तैः परिवृतो राजा	२.५७.२१	सत्यभामा पु तद्वत्	१.३६.७
स तस्य पुरुषेन्द्रस्य	१.३३.४०	स तु केलिकिलो विप्रो	२.१.३०	स तूर्यस्तादृशः स्यां वै	२.६१.३२	स तोन्नैरिव मातंगो	३.५५.७	सत्यभामा पुनर्बन्धम	२.६८.४३
स तस्य प्रमुञ्चे पादं	२.२६.३४	स तु केशी भृगं श्रान्तः	२.२४.४४	स ते देशं तदा पुनैः	१.१४.२३	स तोयमेघप्रतिमोगनीनः	३.३८.३५	सत्यभामोत्तमा स्त्रीणां	१.३८.४७
स तस्यां पितृकन्यायां	१.१८.५२	स तु गृह्य मधे दोम्पां	१.५२.३७	स ते द्वे विपुत्रे पुरौ	२.३८.२३	स तो रयस्थावानीनो	२.२६.६२	सत्यं च यद्वरा वायु	२.६४.३३
स ताड्यमानोऽतिबलै	१.४८.३१	स तु च्छिदान्तरद्रेष्पुः	२.१४.१६	स तेन रथमुख्येन सागरा	१.२५.१५	सत्कृतोऽहं त्वया कृष्ण	२.४०.४६	सत्यं ब्रह्म च दिव्यं च	२.३.३१
स तानपश्यत्स्थविरान्	१.२३.४	स तु जातः सुरेशानः	३.६६.३२	स तेन रथमुख्येन	२.६६.४५	सत्कृत्य परिपूष्टस्तु	१.१.१८	सत्यं ब्रूहि सुतः कस्य	१.२५.४१
स तान्पतिषादूल	२.३८.६	स तु जन्मनि गर्भस्य	३.१.८	स तेन वज्रकल्पेन स्वेन	२.२६.३५	सत्कृत्य विधिवद्वाजन्म	२.५५.११६	सत्यरज्जुमयैः पाशैः कृत	२.४८.१६
स तानभाषत प्रीत्या यथा	२.४६.४	स तु तालवनं वीरं गदंभ	२.१३.१२	स तेन विचरन्मागनिकः	२.११६.१२२	सत्तत्त्वस्य सुतो राजा श्रीमो	२.३८.३८	सत्यवादी पुण्यमतिः काम्यः	१.२६.३

सत्यव्रतस्तु बाल्यावय	१.१३.५	स ददर्श गुरुं शैले विष्णुं	२.४१.४२	सदा चैव शुचिर्भूत्वा	३.१७.६१	सद्योजात महादेव	३.१०३.६	सनत्कुमारो धर्मात्मा	२.८४.१०
सत्यव्रतस्तु भक्तया च	१.१३.१	स ददर्श गृहे कृष्णं	२.३२.२	स दानवो बलश्लाघी घोरं	१.५४.२७	सद्यो निरतिरे कंसे	२.३८.६०	स ननाद महानाद	३.६०.५२
सत्यव्रतो महाबाहु	१.१२.२३	स ददर्श प्रियां दूरात्कोथा	२.६६.६	सद्यः सत्यं सपञ्चैव	३.८.४	सद्यो हृतानि पद्मानि	२.४६.२५	स नन्दगोपं त्वरितः प्रोवाच	२.५.२
सत्यशूरा रणो क्षूरा	३.४०.११	स ददर्श मलेष्वाग्रैरिज्य	१.४६.१४	स दिशः प्रदिसंश्चैव	१.४८.३७	सद्यः कृतमाश्रिताः सर्वे	३.१०.२८	स नन्दगोपस्य गृहं	२.२५.१५
सत्यसंघ महाभाग	२.१२१.११२	स ददर्श विपर्यस्तं	२.६.१३	स दृष्टो होषितपटुः केसरो	१.५४.७१	स धनुर्धन्विनां श्रेष्ठो	३.६०.१५	स नन्दगोपस्य गृहं	२.२६.१
सत्यसंघस्य तच्छ्रुत्वा	२.१६.१००	स ददर्श क्षुभे देशे	२.५.१७	स द्रुतः कथयामास	२.१.३	स धनुर्बद्धसन्नाहः	३.६४.११	सनातनः पुण्यविचिरित	२.७८.२
सत्या दशै तर्थावाय पुरो	२.८१.४२	स ददर्श सुपर्णस्थ	१.४८.३	स द्रुशः पुण्डरीकस्य गन्धेन	२.११.६	स धन्वो कवचो	१.२.२३	स नादं सुमहान्कृत्वा	२.८५.२५
सत्यार्जवरतो यत्तः	३.१३२.१८	स ददर्श सुरान्सर्वान्	१.५०.४४	स द्रष्ट्वा तूर्णमायान्तं रामं	२.४६.५७	स धर्मविजयो राजा	१.१४.२१	स नारदोऽय ब्रह्मणि	१.५४.१२
सत्ये धर्मे च निरतान्	१.५१.४	स ददर्शोष्णितान्पूषा	१.४६.१६	स द्रष्ट्वा भूषितं	२.२८.१०	स धन्वी कवचो जानः	१.५.२३	स निर्जलाम्बुदाकारं मतं	२.१६.२
सत्येनैव क्षपाम्यद्य	३.११२.५	स ददर्शोपविष्टं वै गोवर्द्धनं	२.१६.३	स द्रष्ट्वा मानुषं विष्णुं	२.४१.४३	स प्रूमाः पन्नगेन्द्रस्य	२.१२.१०	स निवेदित सर्वस्वो	३.११५.१
सत्राजिच्च प्रसेनश्च	२.३५.११०	स ददर्शोऽमूर्त्तस्य दीप्यमानं	१.४५.५४	स द्रष्ट्वा सर्वनिर्मुक्तं	२.२८.६	स चर्वणं सपताकं	३.१२०.४	स निष्कान्तस्वतो	३.२८.११
सत्राजितं ततो हत्वा	१.३६.३	स दसच्च स विजयेयः	३.३३.४०	स देवदानवा मर्त्या	२.११०.६३	स चर्वजः सायुधः	३.५५.२२	स निष्पतितमस्तिष्को	२.३०.५४
सत्राजितो दश त्वासन्	१.३८.४५	स दसच्चात्मनि श्रेष्ठः	३.३६.५	स देवदेवं भगवान्	२.८६.४२	स नक्षत्रपथं गत्वा दिव्यं	१.४७.५२	स नीतो यमुनातीरमुत्तमं	२.३२.५६
सत्रावसाने च मुनः	२.६६.१	स दसद्वावयुक्ताय पुराण	२.५१.५६	स देवं प्रष्टुमायाति	३.१०.२४	सनत्कुमार इति यः श्रुतो	१.१७.१३	स नृपस्तमुपानाम्य	२.५७.१३
सत्रिणां सत्रफलदः पवित्रं	१.४६.२४	स दस्यस्तत्र भगवान्	१.२५.२५	स देवान्मुन्ताय विविक्ते	१.५५.४६	सनत्कुमारं माध्यांश्च	१.५३.६८	स ततासारनिर्यतनः	२.१०.१५
सत्रेषु क्षीयः सौम्याः	२.६१.१७	स दस्यानां च विप्राणां	१.५३.१०	स दैत्यान् प्रमुखे हत्वा	१.५५.१३	सनत्कुमारम् च तथैव	२.८४.२६	संन्यते मायया मैत्रे	१.४५.२२
सत्रे समाप्तं च तदा	२.८५.७०	स दस्यान्तोऽम्यनृजाय	३.५.५	सद्यः फलन्ति कर्माणि	१.१८.३७	सनत्कुमारश्च विभुस्तत्र	३.३६.१३	संतानकलजो मालां	२.६५.२८
स त्वसौ येन तेन	३.६१.२८	स दस्यैस्यत्सदो व्यक्त	३.२३.२४	सद्यश्च योवनं प्राप्तं	२.६६.२१	सनत्कुमारश्च महानुभावो	१.४१.२३	संतापितास्ते नरसिंह-	३.४४.२७
सदक्षिणं ब्राह्मणाय परं	२.८०.४३	स दह्यमानश्शैलेन्द्रो मुमोच	२.४२.५७	स द्यां किरीटेन लिखन्	१.४८.३६	सनत्कुमारश्च महानुभावो	३.४३.१६	सन्ति ते बहवः पुत्रा	१.३०.२६
सदक्षिणस्य यज्ञस्य	१.४६.२८	स दह्यमानो दैत्येन	३.६१.२	सद्यो गभस्त्रिमुच्यते	३.७२.१००	सनत्कुमारस्य वपुः	२.१२२.८	संददर्श जले गुप्तान्	२.२.२५

श्रीहरिवंशपुराणम्: श्लोकानुक्रमणो

१४४

संदहरकामूकं चैव	२.१२५.३	सन्नाहजेरी कृष्णस्य	२.१२१.१६	स पर्वतगृहां कांचित्प्रविष्य	२.५७.४७	सप्तमं च ततो वायुमष्टमं	३.१४.४६	स प्रविष्टस्तु वेगेन तं व्रजं	२.४६.३
संदहे चापमादाय शरं	२.१०६.४	संनिक्कष्टानियान्यास	२.८.१२	स पर्वतनिभाकारो	३.५१.१५	सप्तमस्तारणो धीमानस्तत्र	३.११८.३८	स प्रहस्य ततो वाक्यं	२.१२७.६६
संदहे चापमानस्य	२.१०७.२४	संनिक्कष्टे ततो नागे	२.२६.२७	मपर्वतास्तस्मिन्मूर्त्तलता	३.६.११	सप्तमो देवकीगर्भो	२.२.३१	सफलं कर्म कुर्वाणं	३.२६.३६
संदष्टोष्ठपुटाः क्रोधाद्वराह	३.४६.३६	संनिक्कष्टे बने ते तु	२.२२.६२	स पारिजातपुष्पस्य	२.६६.१५	सप्तरात्रेण ते भीरु	२.११८.६०	सफेनं व्रजजं चैव वक्त्रं	२.२४.२७
संदष्टोष्ठपुटाः केचित	२.१२१.६८	संनिपाते तु तौ मल्लौ	२.३०.४६	स पारिजातं यदि न	२.६८.३६	सप्तरात्रे तु निवृत्ते	२.१८.६३	स फेनो वारिणाविश्य	३.२८.१२
संदष्टोष्ठपुटाः केचित	३.१२२.२५	संनिविष्टं विमानस्यं	१.१७.८	स पारि जातं यदि न	२.७०.६	सप्तर्वयो महाभागा	२.१२७.१२५	स बद्धांगदतिव्यूहादिष्व	२.२०.२१
संदष्ट स शरो दैत्यं	३.१२३.२१	संनिवृत्त्याथ दष्टोष्ठः	२.८५.१५	स पाटितो भुजेनाजौ	२.२४.४५	सप्तविंशतिशृङ्गाणि	२.१२०.१३	स बभौ तां गदां	३.५६.६०
संदष्टो बलिपुत्रेण	३.५१.३६	स पञ्चबलविशेषैर्विधुन	२.१२२.६	सपार्षदस्तवनाचारस्तव	१.२६.४०	सप्तविंशतिमिन्दोस्तु	१.२५.२२	स बभौ मूर्तिलिङ्गस्यः	२.६३.६
संदेहममरश्रेष्ठं भगवन्त	१.१८.२	स पञ्चबलविशेषैर्विहमाद्रि	२.६४.४५	स पितृव्यं गदबीरं	२.६४.४४	सप्तविंशति याः प्रोक्ता	१.३.६३	सबलास्ते महीपाला	२.३५.२५
संध्याकाले तु संप्राप्ते	२.८१.२२	स पञ्चवातसंक्षुब्धं	२.१००.३	स पीठे कांचने शुभ्रे	२.११०.३०	सप्त व्याघ्रा दशाण्येषु	१.२४.२०	सबलास्ते महीपाला	२.४२.१२
सन्ध्यारागे जपावर्णौ	२.११२.४	सपक्षिगणमातंजु समूहया	२.६४.४०	स पुण्यमतिस्त्रीभाग्यं	२.६८.५	सप्त सप्त च सप्ताथ	२.८१.२८	सबलेषु नरेन्द्रेषु शान्त	१.५३.५५
सन्धि च विग्रहं चैव	२.३६.७	स पञ्चकन्या मण्यस्थो	२.३७.७१	स पुत्रं भोजयित्वा	२.११३.३२	सप्तस्वरगता यस्य	३.६२.१४	सबालयुवतीवृद्धस्त च	२.१२.१६
सन्नति विनयं शीलं	२.६४.३१	सपनाकश्चजोदश सादित्य	१.४३.६	स पूज्यमानस्त्रिदशैः	२.६४.७१	सप्ताक्षिपः समाप्ति च	३.८४.२५	स बाला मोहिता राजान्	२.११७.३१
सन्नद्ध एव शोवाच ब्रह्म	२.८४.६६	सपत्नस्ते गुणोपेते	२.६५.३७	सप्तकिष्कुपरीणाहं	३.५५.११४	सप्ताक्षीतिसहस्राणि	३.१२२.२१	स बालो ब्रह्मदत्तस्य	१.२०.६४
सन्नद्धं तत्र यध्यन्तं	३.५७.२०	सपत्नीनामधि निय भवेयं	२.७६.१२	सप्त चैकोत्थिताः सूर्या	३.५३.२८	सप्ताहे जातमात्रे तु	२.१०४.५८	स बाहुशतमुखस्य सर्वा	१.४८.२६
सन्नद्धा कुशलाः सर्वे	३.१३३.३६	सपत्नीरक्षितेष्टेय पश्येय	२.८१.३३	सप्त ते सप्तमिश्रचैव	१.७.५३	सप्तेमान्दे वकीगर्भा	२.२.१०	स बृहस्पतिना साढं मन्त्र	२.६१.१६
सन्नद्धा नियंयुहृष्टाः	२.१०४.४३	स पश्ये पश्यनाभस्य नाभि	१.५२.२८	सप्तस्या शम्भुहृत्तारं	२.१०५.४१	सप्तैत यजतां श्रेष्ठं	१.१८.४	स भगस्य हयान्हुत्वा	३.५५.१३०
सन्नद्धाः समद्वयन्त	३.५४.३६	स पपात नरेन्द्राणां	२.११०.१६	सप्तद्वीपान्विचरति नटः	२.६२.५३	सप्तैते जनयन्ति स्म प्रजा	१.१.३६	स भवान् वयस्यस्तेतां	१.१६.१७
सन्नद्धतां बलं सर्वं	३.१२०.३	स पपात महाबाहुर्वंमुखा	२.६०.२५	सप्त द्वीपान्ससिन्धूश्च	२.११३.२०	स प्रदेशस्तु भगवान्	२.१२७.५	सभाक्षो भङ्गकारिस्तु	१.३८.४८
सन्नादयन्दिशस्सर्वां संवा	२.४२.८	स परोक्ष्य ततो वीरो	२.८४.२६	सप्तधूमनिभा घोराः	३.४६.११	स प्रविष्टः पुनः	३.१०.२५	सभागतास्तोमरविप्रकाशा	२.५२.२

स भाण्डीरवटप्रख्यं	२.१४.२५	स मण्डलानि चित्राणि	२.६०.४०	समरे बल संपन्नाः	३.१३३.४७	स मानामहदोषेण त्रेनः	१.५.३	समाश्लिष्टावधान्योन्यं	३.५५.११
सभानरस्य पुत्रस्तु	१.३१.१६	समतीतेषु राजेन्द्र	१.८.२०	समरे भिन्न गात्रास्ते	३.६१.३३	समादिश्य सर्वान् तां	१.६.१५	समाश्वास्य च ताः सर्वा	२.३७.७३
सभादाय देवाश्च प्रययु	२.५१.७०	स मत्तहस्ती दुष्टात्मा	२.२६.२४	समरे स महातेजा नृपाकं	२.५३.३३	समाधत्त शरं चैकं	२.६३.५२	समाः सहस्रं मयितं	३.३०.२७
सभायां भज्यमानायां	३.४४.५	स मत्तो बलिनां श्रेष्ठो	२.४६.२६	समर्थः पुत्रजनने स्वमे वां	१.२७.१५	समाधायात्मनात्मान	३.३०.१८	समासीनेषु सर्वेषु	२.१०१.२२
स भारमसहंस्यस्य	२.१४.२४	समनह्यत तेजस्वी	३.५०.१४	समर्थास्ते महात्मानः शत्रु	२.६०.१६	समाधायैतिकर्तव्यं वासवो	२.६३.४३	समाहृतस्ततो वारुणः	२.११६.१५३
सभावतरणं चैव कलशरा-	२.५५.६८	समनह्यन्महात्मानो	३.१३३.३७	समवायस्त्वमागन्ता	३.१८.१७	समाधियोगात्सङ्गाढा	३.२८.४४	समाहितमना ब्रह्मन्	३.१७.४४
स भिन्नगात्रो रुद्रेण	३.५८.६०	समनह्यन्महादेवो	३.१३३.३४	समवायीकृतास्सर्वे यमुना	२.३५.२८	समाधौ योजयामास	३.७८.२४	समाह्वयस्य गोविन्द	२.१२१.६४
स भिन्नशृंगो भगनास्यो	२.२१.२३	स मनोरहसा वीर	२.६७.६	समवायीकृतास्सर्वे गिरि	२.४२.१४	समाप्तमायो मायाजो	२.१०८.१	समोहमिति सर्वेषां भूताना	२.७०.१७
स भिन्न हृष्य सस्तांगो	२.१०५.७०	समन्त नश्वरप्यसुराश्च	३.५१.८७	समविश्वतो व्याधिशतं	३.५२.३४	समाप्य तत्तथः सर्वमेवमेव	३.८४.२७	समिद्धिः सोमकलशैः	३.२३.१८
स भीतः प्राञ्जलिभूत्वा	१.५.१८	समन्ताद्योजनं साग्रं देवै	२.११.४७	समस्तयुद्धकुशला	३.६४.५	समां च कुरु सर्वत्र	१.६.१०	समिधाय दशाहोऽथ द्वारकां	२.६०.६६
स भीमवेगश्च महाबलश्च	३.४६.४१	समंश्रयित्वैतदर्थं	२.६६.१४	समाकान्तं देवगणैः	३.१३१.७१	स मां परिभवन्नेव स्वां	१.५३.२०	समीक्ष्य तुमुलं	२.६०.१४
स भूमावन्तरिक्षे	३.३६.८	समपचार च गवां सम	२.५.१६	समागतस्तु तच्छ्रुत्वा	२.६६.११	स मां ब्रह्मणि रप्याह	१.५२.४६	समीपं वृषतेर्गत्वा	२.२७.५१
सभूता गतसर्वैश्च	३.५५.७७	समप्रभो विकुम्भाण्डो	३.४६.१०	समागतेषु सर्वेषु	२.४७.३	स मामुवाच धर्मात्मा	१.१६.३३	समीपं मानवेन्द्राणां	२.११०.१२
सभूयो विस्मयाविष्टं	३.१०.३२	समम्पयाज्ज रामघं शरै	२.३५.८३	समागम्य तदा वैश्वमन्य	१.५.२८	स मामुवाच धर्मात्मा	१.१७.२	समुक्तमणिविद्योत	१.५२.२
स भैमप्रवरो वीरस्तेः	२.६३.५३	समं समभिरोहन्ति	३.४६.१३	समांगुलि समनलः	३.८३.१७	स मामुवाच धर्मात्मा	१.१७.१०	स मुक्त्वा काल्पुनं	२.६०.६३
सं दृश्यते सुभ्रु तडिद्-	२.६५.३	स मयास्त्रप्रनापेन	१.२०.७१	समांगुलिः समनखो	२.१२१.१३७	स मामुवाचाम्बुचरः कूर्मो	२.११०.३७	समुच्छ्रितः सितं पीतैः	२.८८.६३
समकम्पन्त भीतानि	३.५५.११६	स मयेनासुरेन्द्रेण	१.४६.६१	समाजमुस्ततो भेरीः	१.४७.३४	समाह्वः स भगवान्	१.४४.७	समुत्पत्य जलं तत्र पतितं	२.६६.२५
समकूलजलोपेताः	२.६८.७१	समरस्य परः पारः	१.२०.२५	समाजमिव तं दृष्ट्वा	३.५५.१४	स मार्गमाणः कामानामन्तं	१.३०.३५	समुत्पन्नेन कोरव्य	१.५.२५
समशं नरदेवानां यथावृत्तं	२.४८.४०	समरे तत्र शूशराणामन्यो	३.५६.४	समात्रबाटे क्रीडित्वा	२.३०.८४	समाविष्टास्तु ता सर्वाः	१.२६.३५	समुत्पेतुर्बलं दृष्ट्वा	३.५८.३२
स मणिः स्थन्दते	१.३८.२५	समरेऽप्रतिरूपी तो विष्णु-	२.४३.१८	समाजवाटो निर्मलस्तसो	२.३०.५६	समाश्रित्य जरासन्धं	२.१०१.२७	समुत्सृजन्तो वसनं	२.६५.५१

समुत्सृज्य शतघ्नीश्च	२.८४.३६	समुद्राः क्षुभितास्सर्वे	२.५५.६०	स मे सुविदितः कृष्ण	२.४४.१८	संभारा यज्ञसिद्धयर्थं	३.११३.६	सरस्वत्या समायुक्तां	३.२८.६७
समुद्रतुं प्रधावन्तः	३.३०.१६	समुद्रे च श्रुतोऽस्माभिस्ति	२.४६.१२	संपुज्य तपसा देवाः	३.२६.१	संमाजिततला भूमिर्द्यौर्वन	२.१०.५	सरस्वत्याः समुद्रतुं	२.२७.२७
समुद्यतमहाशस्त्राः	२.३५.१००	समुद्रेऽहं पुरा पूर्वं वेला	१.५३.१५	संपुज्यमानो ह्युतिमान्	२.७५.४५	संपुष्णन् दानवं तेजः	१.४८.४६	स राजानमथान्विच्छन्स	१.२४.१६
समुद्यतायुधं दृष्ट्वा	३.३८.२०	समुद्रोद्धूतजनिता लोलाः	२.१०.३८	संपुजयित्वा विधिवद	२.७६.२	सम्पगाह महाबाहुदन्तवक्रो	२.४६.५८	स राजा परमप्रतिः	१.२४.३०
समुद्रतनयायां तु कुतदारो	१.२.३२	समुद्रो रभसश्चण्डो	३.४६.८	संपूर्णचन्द्रप्रतिभं	२.११७.४२	सम्पश्वतितुकामस्य	१.५४.३१	स राजा शोणितपूरे	२.११६.४६
समुद्र दश च द्वे च	२.५८.३६	स मुमोच शिलाश्शैलश्च	२.४२.६६	संपूर्णजलमेधाभः पवंत	२.२५.२०	स यदा द्यौवनस्यस्तु	२.१०४.१६	स राजा सहितस्ताम्याम	३.१०४.६
समुद्रः प्रत्युवाचैवं दैत्यः	२.३३.१५	स मुहूर्तात्ततः कृष्णो	२.११३.२७	संप्रदृश्यत सर्वत्र	३.२८.७	स यदुर्माषवे राज्यं विसृज्य	२.३८.३६	स राजा सागराकारः	२.३५.२२
समुद्रः प्राञ्जलिभूत्वा	२.३३.१४	स मुलकैर्दाडिममातुलिङ्गै	२.८६.६१	संप्रपद्येत मनसा	३.१७.६३	स यन्मलगुडाश्चैव	३.३१.१४	स राज्ञः पक्षपातेन	२.४७.३१
समुद्रं मेनिरे तं हि	२.१८.१३	स मुलपत्र शालाश्च	३.३०.१४	संप्रवृत्तमहावयं	२.१०.३४	स ययो मध्यरात्रेण	३.६३.११	स रामकरमुक्तेन निहतो	२.६१.५४
समुद्रमधनो नादी	३.४६.१२	स मृग्युना परीतायुर्मयया	२.१०.४५	संप्रवेश्याम्यहं योग	१.५५.१२	स याच्यमानो देवैश्च	१.२५.३१	सरीसृपाणां सर्वेषां	३.३७.११
समुद्रमध्ये दुष्टात्मा	२.११५.६	समुद्रचत्वरवती वेश्मोत्तम	२.५८.४८	संप्रहृष्य महातेजा	३.५६.१२	स युद्धकामी नृपतिः	१.३५.१८	सरीसृपेभ्यः कीटेभ्यः	२.५.१२
समुद्रमभिसरम्भान्दधनीमः	३.३०.१२	समुद्रस्तत्र कंसस्य	२.२६.४	संप्रहारस्तथा युद्धे	३.५८.७४	स रथः पीरवाणां तु	१.३०.८	स ह्मस्तसकमुद्यम्य	१.५४.५३
समुद्रमेघः स रराज राज	२.८६.४८	समुद्रो हि यदा राजा	२.५७.१६	संप्रहारभिसंतप्तो निपपात	२.७३.६१	स रथैर्नैमिषोर्वैश्च गर्जैश्च	२.४२.७	स ह्ममभिमग्याथ	२.११६.२५
समुद्रयात्रा कृष्णस्य	३.१३४.२५	स मेघनिचयस्तस्थोगिरि	२.१८.५२	संप्राप्ते तु तदा कृष्णे	२.६८.३	सरसं चन्दनं गुह्य	२.६६.१०	सरेवतीकोऽस्तु बलोऽर्द्धं	२.८६.३२
समुद्रयात्रार्थमथागतश्च	२.८६.१८	समेतास्तु प्रविष्टास्ते	२.८५.४६	संप्रेक्ष्यमाणौ रथिनाबुभौ	३.५५.१२३	सरः समीपमागम्य	३.१०६.१०	सरोषं हि तदा रामो	२.४२.७२
समुद्रयोनिर्मधुहा हृष्यभुक्	१.४४.३६	समेत्य च यथाग्यायं	२.६७.३	संबन्धं च गुरुत्वं च	२.८४.५२	सरसस्तस्य राजेन्द्र	३.१२०.१६	स रोपेण तु चाणूरः	२.३०.१०
समुद्रवसना बोर्वी	३.४८.३	समेत्य भवनं पश्या	२.१०८.३६	संबन्धो ह्यस्य वंशे	१.३२.६०	सरसेनायतापाङ्गि कान्तेन	२.६६.३३	सर्जनिम्बाजुंनवनं पाटली	२.४०.१४
समुद्रश्चार्धमादाय	१.१४.२६	समेत्य सहितैः सर्वैः	३.३०.२२	संभावमन्ये संप्राप्ता	३.३८.२७	सरस्वती चन्द्रभागा	२.१०६.२२	सर्जजुंनानाः कन्दुलाः	३.४१.७०
समुद्रस्त्वेवमुक्तस्तु	२.११०.४७	स मे मनोरथो भग्नस्त्वयि	१.२०.१०८	संनोष्य महाबाहुं	२.१०६.४३	सरस्वती च वाल्मीके	२.३.१८	सर्पन्तमिव सर्पेन्द्रं विकृष्या	२.५३.३१
समुद्राः क्षुभितास्सर्वे	२.४८.४५	स मेरुगिरिमासाद्य देव	२.६४.४८	संभग्नोरुकटिप्रीनो भग्न	२.१३.२०	सरस्वती स्वरैर्भ्यर्क्षरधीते	३.२८.६०	सर्पाणां दर्शनं तीव्रं	२.२३.२४

सपिथः पयसश्चैवः दध्नो	२.७६.४५	सर्वत्र त्रिलाल स्वर्ण	१.१३२.८१	सर्वभूतेषु राजेन्द्र हितो	३.३२.५६	सर्वलोकेषु विख्याता	२.६४.६२	सर्वाल्लोकांस्त्रीनिमान्	३.६२.३५
सपिथा पच्यमानेन	२.५.२८	सर्वत्रा नुगत तीक्ष्ण	३.२८.३५	सर्वं तच्च विज्ञानामि	१.५५.११	सर्वविद्यानुगं श्रुष्ट	१.२७.४०	सर्वाश्च देवानखिलात्स	३.३८.३४
सर्व एते महात्मानः	१.३२.६८	सर्वत्रैवाप्रमेयेण अत्यन्तं	३.२७.४५	सर्वं तद्भस्मसाद्भूतं	२.१०७.२८	सर्वव्यापी निरालम्बो	३.१६.१४	सर्वास्तान्वास्यामास	३.१२६.१६
सर्व एव सुरश्रेष्ठास्तेजो	१.५३.१३	सर्वथा काल एवायं	३.१०८.१०	सर्वं त्रिभुवनं राजन्	३.४३.१४	सर्वशास्त्रार्थं कृशन्	३.७३.२२	सर्वाभिः स्त्रीभिरारब्धं	२.११७.६३
सर्वकाञ्चनसंयुक्तं	३.५१.४५	सर्वथा कृतकृत्यास्ते	३.१०२.१७	सर्वं दर्शय यत्नेन	३.६६.६	सर्वसंहारमकरोत्स्व	३.६१.२४	सर्वयुधसमोपेतं	३.५१.१०
सर्वकामगुणोपेता यानानि	३.१३२.१४	सर्वथा कृतकृत्योऽहं	३.११४.३७	सर्वं सत्यपरं वाक्यं वर्णा	१.५१.२६	सर्वसंग्राममार्गज्ञो	२.११६.१८६	सर्वाश्चाप्सरसो राजन्नुत्स्य	३.८५.६
सर्वकामफलैर्बलैर्बलं	३.३५.१६	सर्वथा त्वद्विनेता	३.१०८.५	सर्वं मासीज्जगद्दान्तं	१.४१.१४६	सर्वसत्त्ववृत्तज्ञश्च	१.२२.६	सर्वाश्चमाधवासां च	२.५५.१०५
सर्वकाममयो ह्येष	३.७१.४	सर्वथा दुष्कृतं कर्म	३.७६.१६	सर्वमेतत्करिष्यामि	२.५८.३२	सर्वसत्त्ववृत्तज्ञस्तु राजा	१.२३.२२	सर्वाः सगर्भास्ताश्चैव	२.६६.१३
सर्वकामयुतां धुष्त्रां	३.४१.४६	सर्वथा देव वक्तव्यं भूयतां	२.७१.८	सर्वमेतदहं वीर	१.६.८	सर्वा गृणीरप्सरसां गीत	२.८३.३६	सर्वान् दिक्षु क्षतजोपमाक्ष	३.३५.५०
सर्वकामसमृद्धार्थं षट्पुत्रं	२.८२.१८	सर्वथा नयनं तत्र परिजातं	२.६६.६६	सर्वमेतद्यदुश्रेष्ठ	३.१३०.१२	सर्वं सर्वास्त्रिद्विंशतः	३.५८.८५	सर्वाः सुरतबिह्वलागयः	२.८८.१५
सर्वक्षत्रस्य जेतोऽसौ	१.३२.६८	सर्वथा पुण्यवानस्मि	३.८२.४१	सर्वमेव तु या गात्र	२.८०.४८	सर्वस्तरतु दुर्गाणि	३.१३२.१०१	सर्वास्त्रज्ञा महेश्वासा	१.५३.७५
सर्वज्योतींषि यानीह तपः	३.७१.५४	सर्वथा भगवांस्तावदुपायं	२.६८.३४	सर्वमेव मुखं कान्तं	२.८०.२७	सर्वागधारणां कृत्वा	३.२०.२	सर्वास्त्रविद्वान्वीरश्च	३.५६.६२
सर्वज्ञो बलवाञ्छूरः पात्रं	२.७०.४१	सर्वथा संस्तुता तेऽहं	२.११८.६३	सर्वरत्नवरः स्वर्गोपरिजात	२.६६.६२	सर्वाज्ञाहं यदाभक्तुः	२.७८.१	सर्वास्त्राणामथ श्रेष्ठं	३.४४.६
सर्वतः पाणिपादं	३.१६.६	सर्वदेवाधिदेवरथ	३.६७.१३	सर्वरत्नविचित्रेण	३.५१.१६	सर्वाणि श्रुतिशास्त्राणि	३.६६.४०	सर्वे कनकवर्णाभिः	२.१२२.१२
सर्वतः काञ्चनगुहं	३.३५.२०	सर्वपाणविनिर्मुक्ता	२.११८.३७	सर्वरत्नाकरवतीं सर्वकाम	२.५५.१०४	सर्वाण्येतानि कर्माणि	२.१२१.४४	सर्वे कान्तवर्णाभिः	३.१३३.३५
सर्वतः सारबिर्भूहं	२.२८.८	सर्वपुष्पमयं गन्धं	२.८३.३८	सर्वरोग प्रशमनं स्वकीति	२.१०६.१०७	सर्वानाकर्षयापास	३.६८.२२	सर्वे कालान्तकप्रख्या	३.५१.३२
सर्वतेजोमयीं दिव्या	३.६६.४४	सर्वभक्षो ह्यसंगुप्तो	३.४.१२	सर्वतु कुसुमाकीर्णाः	२.८८.८१	सर्वान्पारिषदान्संख्ये	३.५८.४७	सर्वे काञ्चनशैलाभाः	३.४६.२३
सर्वतो वेष्टिततनुर्न	२.११६.१८	सर्वभूतपिशाचानां	३.३७.८	सर्वलोकोहितं वाक्यं	३.४१.२४	सर्वाः पुत्रफला नार्यः	२.७६.४२	सर्वे चैव क्षिति घराः	३.३५.४८
सर्वत्रगः सदा चास्मि	३.६२.१७	सर्वभूतानि भूताष्य	३.१३३.४६	सर्वलोकोहितं वाक्यं श्रुत्वा	१.४१.६२	सर्वा भीययते सेनां	३.५५.१३८	सर्वे चौरकुले जाताश्चौर	३.३.१६
सर्वत्रगो निराबाधो	३.६२.६	सर्वभूतेस्वरत्नं	३.६३.७	सर्वलोकोद्भवस्त्वैव	३.६१.३	सर्वाल्लोकान्विचरते	३.१३२.३४	सर्वे ते क्षत्रियास्तात	१.१४.१६

सर्वे ते देवगन्धर्वा	३.६६.१४	सर्वेषामेव भूतानां	२.३३.२३	स वायुः सर्वभूतायु	१.४४.३१	स वै राजा हरिवचन्द्रश्चै	१.१३.२५	स शरैः सूर्यसंकाशैः	३.६१.४१
सर्वे ते यज्ञनिरताः	३.१०५.२७	सर्वे स्वयंभुजैस्तैषु	३.३७.३२	स वारितो जयन्तेन प्रवरेण	२.८५.१४	स वै वेगं समुद्रस्य	१.३३.२७	स शिष्ये शयने दिव्ये	१.५०.६
सर्वे ते हृष्टमनसो	३.६६.४५	सर्वे हिरण्यकवचाः	३.५०.१६	स विद्धस्तेन वाणेन	२.१०५.६८	स वै श्रवणसंस्पृष्टं	२.५८.५८	स शिलाजालविततां गण्ड	१.४६.२२
सर्वे नृपश्रियं प्राप्ता	२.३८.१२	सर्वे देवैर्महाराज विमान	१.३३.१८	स विद्धस्तेन वाणेन	३.३२.२४	स वै स्वायम्भुवस्ता	१.२.४	स शीघ्रयानः संप्राप्त	१.५४.४६
सर्वे ब्रह्म वदिष्यन्ति	३.३.१३	सर्वैः प्रहरणैश्चैव	३.३१.१६	स विद्धस्तेन वाणेन	३.३२.४६	सर्वं तु हंसो राजेन्द्रो	३.१२४.१७	स शूकले वाससो विभ्रछवेत	२.२६.१८
सर्वे मायाधरा दैत्याः	३.४६.२२	सर्वे ब्रह्मणिभिः सार्धं	१.४८.५७	स विप्रनष्टां देवानां	१.२८.१८	सर्वे चास्य रथः पादवै	१.४४.४	स शून्यमाश्रमं रम्यं	१.३३.४१
सर्वे मायाधराः शूराः	३.५१.५३	स लज्जाशोमुखी किंचित	२.६४.६	स विप्रो वैष्णवं सत्रं	३.१०४.७	सर्वेन तां समाकृष्य	३.६६.३६	स शूलशक्त्युष्टिगदा	३.६३.१५
सर्वे यज्ञा महाबाहो	१.३३.१७	स लब्धतेऽग्रा भगवान्	१.२५.१८	स विवाहोऽनिरुद्धस्य	२.१२७.२६	सर्वेन सात्त्वतां श्रेष्ठो	२.४३.१२	स शेषास्तत्र तिष्ठन्ति	१.८.२८
सर्वे रजतसंकाशः	३.५१.५४	स लब्ध्वा वरमभ्यग्नो	२.२७.२३	स विवेश पुरीं रम्यां	२.८५.७४	सर्वेनालम्ब्य महती	१.४४.३६	स श्रीमान्विरजा नाम	२.६८.५६
सर्वे वाणिज्यकारश्चैव	३.३.२१	स लम्बकैसरसटः कृष्णेन	२.२४.३४	स विव्याध चतुःषष्ट्यष्ट	२.६०.८	सर्वेनालम्ब्य हस्तेन कन्यां	२.६०.१४	स श्रुत्वा भगवान् वाक्यं	१.५२.५३
सर्वे वित्रासिता देवा	३.३८.३२	स लम्बमानः कृष्णस्य	२.१८.५१	स विवशेषं च धर्माणां	२.८१.१७	स ब्रजत्यग्धवर्षस्मादनन्धो	२.८६.११	स संवत्सरदीक्षायां दीक्षितः	२.८३.३
सर्वेषामेव बन्धानां	२.१२०.२७	स लोकपालानुत्साह	१.४७.५१	सर्वशेषं तया कामः	२.८४.३२	स ब्रजो ब्रजता भाति	२.६.१८	स संसक्तस्तु कृष्णेन	२.२४.३१
सर्वे वेदविदस्तत्र ब्रह्मण्याः	१.३२.४	स लोकपालैकवपुश्चन्द्र	१.४७.५८	सर्विस्फुलिङ्गं सागारं	१.११.३६	स शक्तिपरिधरास	३.१२२.११	स संसक्तस्तु कृष्णो वै	२.२१.१८
सर्वे वै बाहुबलिनः	३.१३३.७४	स लोहगन्धो राजर्षिः	१.३०.११	स विस्फुलिङ्गैर्नान्तैः	३.२८.२६	स शंखः केशवाङ्गानं	२.५८.५६	स संक्षिप्त जलं सर्वं	१.५०.४३
सर्वेषां चैव देवानां	३.१३३.६६	स बद्धी कवचो विष्णुः	३.३७.२	स विह्वलितसर्वांगो	३.६०.४६	स शंखः प्राञ्जलिर्भूत्वा	२.५८.६०	स संक्षेपं सविस्तारं	३.२१.२
सर्वेषां दंष्ट्रिणां शेषं	१.४.१४	सर्वत्सां धेनुकां श्वेतां	२.३६.२४	स बोचिविषमां कुर्वन्	१.५३.१८	स शङ्खः प्राञ्जलिर्भूत्वा	३.३२.११	स सत्यभामया वासं	२.७५.६३
सर्वेषां मनुजेन्द्राणामभयं	२.५०.४०	सर्वान् हवनं चैव हव्यं	१.४१.५	स वै तत्र निराहारो	१.२३.११	स शब्दधोरविस्तारा	३.५६.६०	स सत्यभामामथ केशवं	२.८६.२५
सर्वेषां राजतं पात्रमथवा	१.१८.७२	स वरं कन्यकाश्चैव लब्ध्वा	२.३७.७०	स वै तदा शत्रुबलादितं	३.६३.१३	स शरैः सधनुश्चैव	२.१२५.५	स संदिग्धमिवात्मानं	२.१४.३१
सर्वेषामस्त्रवीर्याणां	२.१२६.११	सर्वण्यऽऽवृत्त सामुद्री	१.२.३३	स वै बाहुसहस्रेण	१.३३.२५	स शरैर्वह्निःसंकाशैः	३.६१.४३	स सन्निपातस्तुमुलस्त्यक्त्वा	२.३५.१०२
सर्वेषामेव पक्षा	३.४०.१६	स वामुदीपितो बह्निस्त्यपात	२.४२.५५	स वै बद्धा धनुर्धर्माभिः	१.३३.३४	स शरैः सूर्यसंकाशैः	३.६१.३२	स सन्निपातस्तुमुलो बभूव	२.७३.२७

स संनोदयितव्यस्ते	२.२८.३२	सस्नुषोऽहं सभायंश्च	२.३२.२८	महस्ताप्रादिनिष्क्रान्तो	२.२६.३०	सहस्ररश्मिप्रतिमो	३.५७.६	सहस्राभरणैश्चान्यै	३.५५.१६६
स संप्रहारस्तुमुलः	३.५५.१६६	सस्मितं चैव प्रोवाच	२.१.२२	स हस्तालिगनं कृत्वा	२.५३.२२	सहस्ररश्मियुक्तेन भ्राज	१.४४.२३	सहस्रारं शतारं तदद्भुतं	३.१०१.२२
स समं वर्तमानस्तु	३.५६.४१	सस्मिता समुखीभूत्वा	२.२७.२७	सहस्रकिरणाभेन चक्रेण	२.४८.२५	सहस्रशिखरं चैव	३.३५.४२	सहसास्पस्सहसांग	२.१४.३६
स समागम्य कृष्णेन जल	२.४१.३६	स स्पन्दनवरो भाति	१.४४.१०	सहस्रकूटं विपुलं	३.३५.३५	सहस्रशिरसं नागं कृत्वा	२.६६.४४	सहाया वयमेवंते	३.११८.३६
स समीपगतस्तस्य दिव्य	२.१६.६	स स्यात्करवती स्कीता	१.६.४७	सहस्रगुणमप्यत्र दत्त्वा	३.२७.४४	सहस्रशिरसं देवं सहस्र	२.५१.५३	सहायो द्वौ महादेव	३.१०५.१५
स समुद्रात्समानीय	१.४७.५५	स स्वयं भूरिवाभाति	१.४७.५७	सहस्रचन्द्रायुतनारकश्च	२.१२४.५३	सहस्र शिरसं ब्रह्मन्	१.४०.२०	सहायो ब्रह्मवत्स्य पूर्व	१.२३.२०
स सर्वलोकाप्रतिचक्रचक्रो	३.३६.२३	सहः गोपैः सह धर्मात्मा	२.१०१.२६	सहस्रचन्द्रायुतनारकश्च	३.५१.६०	सहस्रशिरसं विन्ध्यं	३.३५.२५	स हि गोपो वृषा	३.६२.११
स सर्वलोकप्रभवो	३.८६.१८	सहजैर्बाध्यते सर्वः	१.५४.३३	सहस्रजिह्वं भास्वन्तं	१.४१.४	सहस्रशिरसा हन्तुं	३.६६.५	सहितः सर्वयादोभिः	२.१०२.१३
स सर्वलोक प्रभवो	३.११६.१६	स हत्वा दानवं संख्ये	१.५४.५४	सहस्रदस्य दायदास्यः	१.३३.२	सहस्रशीर्षा पुरुषः	३.६४.२७	सो हि ते सहजो मृत्यु	२.२२.६१
स सहायो मिष्यामि	१.२६.२२	स हर्तुरसुरैः सर्वैर्वर	२.८७.१६	सहस्रभूत पतिः	३.५२.१८	सहस्रशीर्षा पुरुषः	३.८८.३३	स हि दानवतिर्घन्यो यो	२.२३.३७
स साधनेन महता बृहद्रथ	२.३७.७	स हनो देवदेवेन हरेणां	२.६८.२८	सहस्रबुद्धं महातेजा	३.६.१४	सहस्रशीर्षा शेषश्च	३.३६.४१	स हि नागान्मनुष्येषु	१.३३.२६
स सामादिभिरेवावा बुधायै	१.२०.६६	सह स्वया गतः कालस्त्व	२.३१.१६	सहस्रधा च राजेन्द्र	३.१७.२६	सहस्रशृंग कैलासः	३.२७.११	स हि युद्धगतः श्रीमान्	१.४६.३०
स साय कमयैर्जालैश्चरो	३.५५.४	सहदेवस्य धर्मात्मा	१.२६.४	सहस्रपादः सुमुखः	३.४६.७	सहस्रशृंग च गिरि	३.३५.१०	स हि राजा स्थितो	२.३७.४३
स सिद्धः प्रोच्यते	३.१७.५५	सहदेवात्मजः श्रीमानुदायुः	१.३२.६६	सहस्रबाहुं कार्दम्यै	२.८६.१०	सहस्रशोऽथ शतशो	३.१८.१६	स हि वर्षायुतं तत्त्वा तपः	१.३३.१०
स सिंह इव वेगेन केशवो	२.३०.७२	सहस्रमानो नाराचैः	२.११६.१०१	सहस्रबाहुर्बाणैश्च	३.४६.२१	सहस्रसंख्यासंयुक्तैस्तपत	२.३५.१६	स हि वेदमथो यज्ञः	३.१७.५३
स स्रुतं सहि प्रचुम्नं	२.१०६.३२	सहयजक्रिया वेदाः	१.४१.१०७	सहस्रं क्षत्रियगणो विक्रान्त	१.१०.३०	सहस्रसंमितां दिव्याञ्जना	३.५८.२२	स हि वेदमयस्तात	१.२५.११
स सृजे मनसा ब्रह्मा	३.२०.७	स हरिः पुरुषो वीरः	१.३.१३६	सहस्रमायं समरे	३.५५.१४५	सहस्राक्षं पुरस्कृत्य	३.३८.२३	स हि वेदाश्च यज्ञाश्च	१.५०.२४
स सृष्टः पावकस्तेन	३.४५.२८	स हलेन नताप्रेण कूले	२.४६.३४	सहस्रमायो द्युतिमान	७.५५.१३४	सहस्राक्षं महाभागं	२.१२७.१२४	स हि सप्तसु द्वीपेषु	१.३३.२१
स सृष्टासु प्रजा स्वेहवमापवो	१.२.१	सहस्रैव तु कार्याणामारम्भो	२.७२.१६	सहस्रमूर्धा रक्ताक्षः	३.६६.४०	सहस्राक्षं सहस्राक्षं	१.४१.३	स हि सर्वस्त्रकुशलः	२.६१.६
ससैन्यं नोदयामास	२.१०५.१२	स हस्ततलविन्यस्तो	२.१८.३८	सहस्रयुगयोरग्नौ	३.१८.३५	सहस्राव्येव कृष्णं तु तथा	२.६०.५६	स हि स्वर्भानुदीहिजः	१.२८.६

सहोमसेनेन तदा	२.१०१.५२	सागरोदरगभीरा	३.५१.३४	सा तं पुत्रमवाप्यैवं हृष्टा	२.४.७	सात्यकिस्त्व विक्रान्तो	३.१२५.६	साधुवादाश्च मञ्चेषु	२.३०.३७
सहपृष्ठेषु रम्येषु	२.३६.१८	सा गोपी गोपबुद्धश्च	२.७.२७	सा तस्य वदनं दीनं मुत्सये	२.३१.४१	सात्यकेभ्युषु मद्राक्य	३.७५.१	साधु वीर महाबाहो	२.१०६.३५
सहमर्षानिलोद्भूतो	३.४४.१८	साधं वर्षसहस्रं च	३.२८.४३	सा तमध्वानमागम्य	२.११६.५५	सान्नाजिति प्रिया नाभ्या	२.६७.२२	साधु वृत्तं कृतयुगे	३.४.४७
स ह्यसौ प्राकृतः कश्चिद्यः	२.११८.३६	सांक्रुतिगलिवश्चैव मुद्गल	१.२७.४७	सा तमाहोत्थिता भीता न	२.२८.६४	सा त्वं शासनमास्थाय	१.६.६	साधु साध्विति पुत्रं च	२.८५.२२
सहस्य चोपरिष्ठातु	२.३८.८	साङ्कृत्यो गालवो राजन्	१.३२.५६	सा तमिध्वाकुषार्दूलं	२.३७.१६	सा त्वया प्रतिषिद्धेयं	२.१६.१७	साधु साध्विति बाणं	२.१२६.६०
स ह्याविष्टस्तदा तेन	२.१२३.३	सांख्ययोगे च या बुद्धि	३.४७.२१	सा ताम्यामुषभाक्षाम्यां	२.१०१.१०	सा ददर्श तयोर्मध्ये	२.७.२६	साधु साध्विति योगेन	३.५५.६६
सहोदयश्च भलयो	२.१०६.१६	साङ्गदेनाग्रहस्तेन पङ्कजोद्	२.११.३	सा तां कदाचित्प्रसूय	२.६२.१३	सा ददर्श विपर्यस्तं	२.६.८	साधु साध्विति रामाय	२.४६.५३
स ह्येव यमुनायास्तु	२.२६.४८	सांगोपांगश्चतुर्वेदाः	३.६६.३६	सा तु कन्या यशोदाया	२.२२.५२	सा दवाह तमः सर्व माया	१.४५.१६	साध्यस्य बाणानिहृत	३.५६.१४
सा कन्या बबूधे	२.४.४६	सांगोपनिषदा वेदा	३.३३.१७	सा तु दहतु मे पापं	२.१०६.३५	सा दद्यात्काञ्चनं चन्द्रं	२.७६.६७	साध्या रुद्राश्च विश्वे	१.७.३६
सा कन्या बबूधे तत्र	२.१०१.१३	सा च तं वडंयामास	२.१०४.१५	सा तु पुत्राग्निनी देवी	१.३२.८३	सादिनश्च पदातीक्ष्ण	२.५६.२८	साध्या विश्वे च कौरव्य	२.७४.१२
साक्षादिव जगन्नाथं	३.१०४.१६	सा च दुष्टेव भर्तारं	१.६.५७	सा तु प्रद्युम्नदुहिणी	२.१२८.१६	सादितानि महीं जग्मु-	३.५६.८८	साध्वहं श्रोतुमिच्छामि	३.२२.१
सा क्षिप्ता रौक्मिणेयेन	२.१०५.६६	सा च मग्नं स्थगुं	२.२७.३६	सा भतुं क्षिप्तां कृत्वा	१.१४.७	सादिता मोर वाः पाशा	२.१०२.१	साध्वो जगद्धारयति	२.७८.७
सागरप्रतिमोचन	३.५६.४८	सा च रात्रिरपक्रान्ता	१.८.३४	सा तु वर्षायुतं तप्त्वा	१.२.३	सा दीप्तसस्त्रप्रवरा	१.४७.१५	सा नदी निलिनां	३.३५.१४
सागरं स प्रविश्याधु	३.१०२.६	सा चित्रलेखया प्रोक्ता	२.११८.६१	सा तेन व्यभिचारेण	१.१८.३१	सा दृष्ट्वा परमस्तीर्णां	२.११६.३२	सानवो ब्रूयितास्तत्र	२.६८.२२
सागराणां नदीनां च	१.४.१३	सा जीवपुत्रा मुभगा भवत्य	२.७६.६३	सात्यकिं चोत्पुर्कं	२.१२७.१३५	सा दृष्ट्वा संप्रयातं	३.१.६	सानिध्वं कपयामास	२.१२०.३६
सागरानिलसवीतं सागरा	२.५६.२६	साङ्गलिप्रग्रहा देवी	२.४१.१६	सात्यकिं वासुदेवस्तु	३.६७.२	सा देवीं पूजयामास	२.७५.६४	सान्त्वयेव तु बालेषु	२.२२.६७
सागरानुपविपुलां	२.५५.१०३	सा तच्छ्रुत्वा तु वचन	२.११८.५१	सात्यकिश्च तथा राजन्	३.१२०.६	साधने चापि निर्माणे	३.२६.४७	सान्त्वयित्वा तु तं	२.११२.२८
सागराभां महासेनां	३.५४.४६	सा तत्र रमणीयेषु रुचिरं	२.२८.५६	सात्यकिश्चित्रकश्यपामो	२.३५.१०६	साधु यादव वीर्येण	२.६७.११	सान्त्वयित्वा तु वरदो	३.१३३.२३
सागरास्समकम्पन्त	२.४.१५	सा तत्र रमणीयेषु रुचिर	२.२८.६०	सात्यकिस्तं तथेत्युक्त्वा	३.११७.४	साधयामि महाबाहो भवतः	२.४०.४७	सान्त्वितो वासुदेवेन	२.७३.११
सागरेण तथेत्युक्ते	२.११३.१२	सा तथोक्ता तया भ्रात्रा	१.१८.१६	सात्यकिस्तु रथं विदृष्ट्वा	३.६६.२५	साधितं देवतानां हि	२.१६.१६	सान्दीपनिसुतश्चैव चिरनष्टो	२.४६.५२

सा पति भूपति वृद्धमुग्रसेनं	२.३१.४७	साम्बमाता च गान्धारी	२.६५.४०	सार्वकामिकमन्त्राद्यं	२.७६.४	सा सृष्टा पन्नगी माया	२.१०६.३१	सिंहनादं महाघोरं	३.१०१.१७
सा पतिस्निग्धहृदया तं	२.२८.६३	साम्बः समरमण्यस्थान	२.६७.२०	सा लोकान्द्रह्यलोकादीन्	१.५.४७	सा सृष्टा सिंहमाया	२.१०६.२१	सिंहनादं विमुञ्चतः	३.१२१.१८
सा वयन्निहृतं पुत्रं निष्प्रभं	२.३१.३६	साम्बाय दीयतां रामा	२.१२८.५	सा वचस्तथ्यमशिवं	२.११८.६५	सस्मि पूर्णेन योगेन	२.४१.२१	सिंहनादेन शूराणां	२.५५.५६
सा पातितनरेन्द्राणां	२.२१.३६	सा यत्र रोहिणी देवी	२.५.३२	सावतसैवियार्णवच	२.१६.४२	सस्मि वेद्यां समारोप्य	१.५२.४७	सिंहनादो महानासी	३.६४.३०
सा पुरो परमोदारा	१.५४.५७	सा यदा समतिक्रान्ता	२.४६.४३	सावरोहद्रुमं घोरं कीर्णं	२.११.५३	सा स्वप्नमिव तं दृष्ट्वा	२.४.४	मिहः प्रसेनमवधीत्	१.३८.३६
सा पृस्कुरितचाबोष्ठी	२.६६.२२	सा यथैवाण्यवगता तथैव	२.४१.२२	सावर्णा मनवस्तात पञ्च	१.७.४३	साहजनी नाम पुरी येन	१.३३.४	सिंहव्याघ्रगजाकीर्णं	१.४६.२३
सा ब्रह्मलोकं संभाव्य	३.१७.२५	सायं प्रातश्च तत्त्वज्ञो	३.१७.६२	सावशेषं तपो यस्य	२.७१.३६	साहं विज्ञापितवती	१.५२.५०	सिंहव्याघ्रवराहाणां	२.२२.५६
सा भीता सहसोत्थाय	२.७.२५	सायाह्ने चामरगर्णं	३.७६.३०	सावित्री चापि देवाना	२.३.१३	साहं विहीना विक्रान्तं	१.५२.५१	सिंहशार्दूलदर्पाणां	३.५६.३७
सा भूर्गवंभदेहैश्च तालं	२.१३.२२	सायुवग्रही वीरो	२.३५.६७	सावित्री व्रतकं कृत्वा	२.८१.२३	साहमद्यावहास्यामि सपत्नी	२.६७.७	सिंहशार्दूलदूतानां	२.४७.१०
सामर्गैश्च जपैश्चापि	३.६४.१२	सा यौवनगुणोपेता	२.३७.१४	सावित्रे नियमे पूर्णं यं	२.४४.६	सा हि तस्याभवज्ज्येष्ठा	२.६०.३६	सिंहगन्विद्रावयामासु	२.१०६.२६
सामदानादिभिः पूर्वमपि	१.२०.६३	सारथि चास्य विष्याद्य	२.६०.१६	सा विवर्णं तु तद्रूपं	१.६.१०	सा हि मे जननी धन्या	२.११४.६	सिंहान् व्याघ्रान्वराहाश्च	२.१०६.१६
सा मनुप्रभवं दिव्यं प्राप्ते	१.१२.५४	सारथि पञ्चमिर्बाणैर्बजं	२.६३.७०	सा विह्वलजलस्त्रोता	२.४६.३५	सा हि सत्यवती पुण्या	१.२७.३७	सिंहासदनमनन्यास्यं पुरं	२.५०.१५
सामन्तेषु नरेन्द्रेषु	२.३२.२०	सारथि सुमहातेजा	३.५५.१११	सा वै निरी तमोग्रस्ते	२.४.४१	सा ह्यदिष्टा पुरा भीष्म	१.२३.७	सिंहानापततो दृष्ट्वा	२.१०६.२५
सा मातुरुदरस्था तु	१.३४.८	सारथेश्च शिरः	३.६६.२७	साक्षमशब्दः शिलावर्षः	१.४६.२५	सिंहद्वयनंदस्तत्र	३.६८.२४	सिंहासनेषु चित्रेषु	२.११०.१५
सामर्ष्यं च न पश्यामि	३.२.२५	सारथेश्च शिरः कायादा-	३.१०१.६	साक्षमसंवातविषमा	१.४६.२७	सिंहनादं नदन् क्रुद्धो	२.११६.१३६	सिंहिका चाभवत्कन्या	१.३.७०
सामवेदं च जिह्वाग्रादथ	३.१७.४८	सारमेयं यथा दृष्ट्वा	२.१०५.८२	साक्षं हृतं प्रसेनं	१.३८.३३	सिंहनादं नदन्ति	३.६०.२४	सिंहिकातनयश्चैव	३.५१.४३
सामादयोम्युपायाश्च	२.५७.२७	सारसेनापि विहितं रम्यं	२.३८.२७	सा सदाऽह्नि निर्गत्य	१.२०.८३	सिंहनादं नदिस्था	३.४४.४	सिंहिकातनयो यस्तु	३.३७.१६
सामान्यास्ताः कुमारानां	२.८८.६	सारुढैस्सदिभिर्युक्तं प्रेक्षमाणः	२.४२.४	सा समुद्रोपसद्गो दिव्या	१.४७.१६	सिंहनादं प्रकुर्वन्तः	३.६३.२३	सिंहिका सुपुत्रे राहुं	२.३६.३६
सा मालाममसांगुहा	१.४१.२६	सार्तनादमहत्कृत्वा विदन्तो	२.२६.३६	सा सरोपा पुनर्भूत्वा	२.२८.१०४	सिंहनादं प्रकुर्वन्तः	३.६५.२०	सितद्रुमसमाकीर्णं	३.३५.३६
साम्प्रतं लिखमानाह	१.५२.४३	साढं कुबेरेण	३.८५.१०	सा सांभवानी गतिः पार्थ	२.११४.११	सिंहनादं महाघोर	३.६८.१२	सितवर्णाम्बुशोष्णीषं	२.१६.१७

ओहरिवंशपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणी

१५२

सिताभघनसकाशा	३.४१.५०	सुखश्राव्यतया धीर	३.२.३	सुतप्याम्बु नदभक्ति	३.५३.३६	सुनीयस्य तु दायादः	१.२६.७८	सुब्रह्मात्मा सुवर्चस्कः	३.६२.४
सितहंसेक्षणपाङ्गी	२.४६.३६	सुखासनं समाख्याय	३.८०.५८	सुतलं नाम पातालं	३.७२.३६	सुनीयोऽथ महाप्राज्ञो	२.४८.३६	सुभद्रायां रथो पार्थाय	१.३५.८
सिद्धचारणरक्षोभिस्सेवित-	२.४०.१८	सुखे दुःखे च रागे च	३.८०.८१	सुतलेनोच्छ्रितवता	१.४६.५६	सनेत्रः क्षत्रवृद्धिश्च	१.७.८२	सुमतेरपि धर्मात्मा	१.२०.४२
सिद्ध चारणसंधाना	२.१२१.१४५	सुखेन उषितः कृष्णस्तस्य	२.४७.४६	सुतस्तु तुर्वसोर्वर्जित्वं	१.३२.११७	सुपथः क्षणमुक्तिश्च	३.४६.१५	सुमध्यावशाहमध्याह्न	३.६६.१६
सिद्धचारण संधाश्च	२.१२४.३७	सुखोपविष्टं विश्रान्त	२.७२.५	सुताया भीष्मकस्याथ	२.५६.२	सुपथं वेगैर्विकृतं ज्वलन्नि	३.५५.५१	सुमनाश्चैव कोशल्या सर्व	२.६२.४७
सिद्धं मे जन्मनः कृत्यं	३.८१.१७	सुखोपविष्टास्ते स्त्रेषु	२.५०.८२	सुतीर्था स्वादुसलितां	२.११.३०	सुपर्णा विश्वरन्ति	२.१०६.३४	सुमनाः सुचिवाकू सुदः	१.२१.३६
सिद्धिं प्राप्य क्रमेयुस्ते	३.२७.४१	सुखोपविष्टोऽथ मुनिः	२.२८.४७	सुतो भीतरथस्यासी	१.३२.२३	सुपर्णा शतपत्राश्च	२.१०६.१०१	सुमनास्यो दिधिमुलस्तथा	२.१०६.१६
सिद्धिः सांवात्रिकाणा	२.३.१५	सुगन्धगन्धा च सदा	२.६०.७४	सुतो भीमरथस्यापि	१.२६.२६	सुप्रणश्च महात्मानो	२.६६.४	सुमहाञ्जने शब्दस्तेषा	३.१००.३
सिधुर्वैश्वती चैव	२.१०६.३०	सुग्रीवराज्यदाता त्वं	२.१२१.१२२	सुदर्शनः सुतस्तस्य	१.१५.३३	सुपानधारं विमलं	३.५४.५०	सुमहावृत्तनयनः स	३.५१.३८
सिधुचुः केशवं पत्न्यो	२.८८.२५	सुग्रीवस्य कृते येन वान	१.४१.१३३	सुदासस्य सुतस्त्वासी	१.१५.२१	सुपाश्वीं गिरिमुख्यस्तु	३.२३.४३	सुमोच हृदये तस्य	२.१०५.४७
सिधुचुर्यानि जलदा	२.१६.२८	सुघार्तं सुप्रसन्नायैः	३.५४.२८	सुद्युम्न इति विख्यात	१.१०.१५	सुपाश्वीं गिरिमुख्यस्तु	३.२७.२	सुयामुनं नाम नगं तव	२.२८.५८
सीदमानश्च सलिले	३.१६.२८	सुधारुचामी करपट्टनदां	३.५०.७	सुद्युम्नः कारयामास	१.१०.२४	सुप्तं मत्तं प्रमत्तं वा	१.२०.१२६	सुरथस्य तु विक्रान्त	१.३२.१०३
सुकाला नाम पितरो	१.१८.५७	सुधारुक्षा धर्मज्ञा	३.२७.२८	सुद्युम्नस्य स दायादा	१.१०.१८	सुप्तस्य शयने दिव्ये	२.४१.३६	सुरभिर्विनता च ताम्रा	१.३५.५
सुकुमारस्य पुत्रस्तु	१.२६.८१	सुजानुः पीनजघना	३.२२.३	सुधन्वनः सुतश्चासत्	१.१२.११	सुप्त्वा युगसहस्रं स	१.४१.२०	सुरभी कश्यपाद्भद्रानेका	१.३४.६
सुकेतोस्तनयश्चापि	१.२६.७६	सुतनुश्च सुतारा च	२.१०३.२५	सुधन्वनस्तु पायादः	१.३२.८६	सुप्रभाणि च ज्योतीनि	१.४२.३५	सुरभ्यपश्यन्ति ये तत्पुराणे	३.३६.५१
सुखं कृत्स्नं भूताना	३.८८.३६	सुतनू राष्ट्रपाली च	२.३७.३२	सुधर्माय सुधर्मा तां	२.५८.७६	सुप्रहाराहतं दुष्ट्वा	२.७४.७	सुरविप्रतिमः श्रीमान्भूमौ	३.६६.३५
सुखं दुःखं च भूतानां	३.३२.३१	सुतः पञ्चजनस्यासी	१.१५.१३	सुधात्रीणि च यक्षकै	१.४०.२६	सुप्रियवत पश्यामविचर	२.६४.३५	सुरसायाः सहस्रं तु	१.३.११०
सुखं यत्र मुदो यत्र	३.१३.१७	सुतपाश्वैव वासिष्ठः	१.७.८०	सुनामानममित्रघ्नं	२.१०१.४१	सुबन्धुरेण दीप्तेन	२.४४.५	सुराणामपि सुक्षेत्रा	२.५८.५०
सुखं स्वपिति निःशंकः	२.१२१.२२	सुतप्रसूतिमिच्छन् सुतं	१.३६.६	सुलोपविष्टस्तान्	२.१०१.२४	सुबाहु काञ्चबाहुश्च	३.४६.१४	सुराणामरयो मध्ये	३.१३३.५६
सुखमेधन्ति बहवो	१.६.२	सुतप्लजाञ्जनदत्तस्य	३.४६.३६	सुनिविष्टत बलरिपुमीक्ष्य	२.७१.५४	सुबाहुर्मधनादश्च	३.४६.३०	सुराणामसुराणां च	२.११०.१६

सुराणामुत्तमाङ्गानि	३.५७.१२	सुवर्णविन्दु विख्यातं	२.१०६.३८	सुसूक्ष्मानपारिष्यक्ता	१.१८.३३	सूर्यसोममंत्र तात कृत्स्नं	२.३२.४२	सेनां प्रभङ्गामालोक्य	२.५३.४१
सुराणामेककार्याणां	१.५३.११	सुवर्णमालाकुलभूषिताङ्गा	३.४४.२३	सुस्रोता नमंदा चैव	३.४६.४५	सूर्यस्य रश्मितुल्याभं	१.४८.४०	सेन्द्राशनिनिर्वाम्भोदो	२.२१.१३
सुराधिपस्तुभगवानाज्ञा	३.५२.२	सुवर्णवर्णान्वृषाप्रानद्य	२.१२६.४१	सुस्वधा नाम पितरं	१.१८.६४	सूर्याय सूर्यपुत्राय	३.६०.२१	सेयं निरामयं कृत्वा	१.५१.२३
सुराविशितपूण्यायां	२.२२.५४	सुवर्णं विकृतान् चित्रान्	३.५५.६२	सुस्विन्नशून्यान्महिषाश्च	२.८६.५८	सूर्याभिभिः पीयमाना	३.२८.५२	सेयं भारपरिश्रान्ता	१.५१.१८
सुरारणिर्गर्भमधत्त दिव्यं	१.४०.२५	सुवर्णं विकृतान्वायान्	३.५५.१८	सुहोत्रं च सुहोतारं	१.३२.१६	सूर्येन्दुसदृशाल्लोकांस्त	२.५१.५	सेयमस्मानपाहाय	१.६.२६
सुराष्टाद्वच सुवाङ्मनीकाः	३.४६.५५	सुवर्णं विकृतैश्चापि	३.५५.८०	सुहोत्रस्य बृहत्पुत्रो	१.३२.४१	सुवर्णसूत्र विप्राय कौमुद्यां	२.७६.५२	सेवकं द्वारदेशे तु तिष्ठे	२.६६.५
सुरासुरगणाः सर्वे	३.३०.२३	सुवर्णं शुद्धो हि	३.७१.५	सूचयन्तः पुनः सर्वे	२.११७.६०	सृजतो बाहुवीर्येण कः	२.५२.२३	सेवतोऽपि तथा राजन्	१.६.६२
सुरासुरगणा सर्वे	३.३०.२६	सुवर्णस्य च निष्कस्य	३.६१.१६	सूतं दशभिराहृत्य रथं	३.६८.३	मृजस्वयो रश्मिभिर्जा	३.६२.३७	सेवन्ते ययताहारा	३.६६.३६
सुरासुरगुरुर्ब्रह्मा पातु	२.१०६.६	सुवर्णाञ्जनचूर्णाभावान्यो	२.१४.५	सूतं मंचोदयामास	२.१०५.११	सृजन्तः सर्पपतयस्तीव्र	१.४४.३३	सेवितं चाप्सरः सर्वैः	३.१३२.३६
सुरासुरद्विजभृजगाप्सरो	३.३३.४७	सुवर्णेन च संयुक्तं	३.१३२.७३	सूतमागधकल्पश्च	२.११७.५	सृजेदपि परं लोकं	३.१६.४४	सेव्यमानं च सौभाग्यं	२.६५.२३
सुरासुरमनुष्येषु	२.१०२.३५	सुवार्तायां निवासं तं	२.६८.८४	सूतमागधवन्दीनामेकैक	२.५५.५१	सृज्यमानाः प्रजा नैव	१.१.४२	सेव्यमानो नवैर्वर्तिद्भुम	२.११.१७
सुरासुरेन्द्रयोर्दृष्ट्वा	३.६४.१७	सुवासिता वपुष्मन्त	२.२८.११	सूतमागधसंस्ताव	३.११८.२१	सृज्यस्याभवत्पुत्रो वीरो	१.३१.२०	सेव्यमानो मुनिगणैर्नित्यं	३.२६.४८
सुरासुरैष्यजितं	३.५६.७१	सुविभक्तवलयं च	२.१०५.१५	सूतमाह मुहूर्तं तु तिष्ठस्व	२.२८.८७	सुमरांश्चमरान्यंकुन्मात	२.२८.७५	सेव्यमानो वरस्त्रीणां	३.१३२.३६
सुरूपो बहुरूपांस्तां	३.२६.२७	सुव्यक्तं सन्निहृष्टः	२.४१.५०	सूतांश्चिच्छेद सङ्गेन	३.५६.३७	सेत्स्यते सर्वकार्यार्थो	२.१६.२०	सेव्यां देवैः सविर्गणैः	२.१२०.१०
सुरेणुरिति विख्याता	१.६.२	सुव्यक्तीकृतशब्दस्तु	१.३८.३७	सूतं मागधपुत्रैश्च	३.१२०.११	सेनस्कन्धोऽतिसेनश्च	२.१०४.४५	संयपक्ष हतास्तस्य	३.५६.३८
सुरेशस्य च यत्तेजस्त-	२.१२६.१०२	सुव्यक्तेनोभिधानेन	३.१३३.३१	सूत्रहस्तास्ततो मानं	२.५८.१२	सेनातिबलमालोक्य	२.४६.१२	सैन्यं तत्र संप्राप्तं	३.१२१.२६
सुरेशस्य च शक्रस्य	३.७१.२	सुश्लिष्टरथ्यां सञ्जीकां	२.१२७.१०६	सूर्यप्रभस्तु प्रासादः	२.६८.५०	सेनानीः कैशिकश्चैव कृष्णं	२.३५.८५	सैवमुक्ता मनुं देवं	१.१०.१०
सुवर्णं जालनिमुक्तं	३.५१.६	सुषुप्तेऽष्टौ महाभागा	३.३६.४४	सूर्यं भित्वा महोल्का	२.११६.६१	सेनानोस्तात मा मैवं	२.१२१.५०	सैवा गङ्गा फलं लेभे	३.२८.५६
सुवर्णेनेमिपर्यन्तं वज्र	१.४८.४१	सुवर्णे चारुगुप्तं च	२.६०.३८	सूर्यश्च यातुमे चक्षुः	३.८०.७०	सेनापतिरनाष्टुष्टिरिदं	२.१२१.४०	सैवा द्याया शशोभूता	३.२८.५०
सुवर्णपुंसाः पूषणस्ते	३.५५.१०४	सुसाधु दिक्षु सर्वास्तु	३.६५.२	सूर्यः सप्ताश्वयुक्तेन	१.४४.२१	सेनापतिरनाष्टुष्टिममृषे	२.८४.२४	सैवा दुविषहा माया	१.४५.७४

सैवा नारायणमुखे दृष्टा	१.५०.३३	सोऽय संपूजितः पूज्य	२.१०१.३३	सोऽभिपत्य महाबाहुर्दीर्घं	२.६४.७२	सोमो विषयमाक्षिप्य	३.२८.६	सोऽहं कदाचिद्देवानां	२.२८.४८
सोऽग्निं देवमुखे दृष्ट्वा	१.४७.५४	सोऽनलः पवनायस्तः	२.४२.५६	सोऽभिभूय राणे बाण	२.११६.१५१	सोमो हि भगवान् देवो	१.२४.३८	सोऽहं कुतूहलाविष्टो	२.११०.३६
सोऽग्निं प्राक्स्थिते दृष्ट्वा	१.४६.१३	सोऽग्निसोऽदूतवसनस्तस्यो	१.४७.४९	सोऽभिधास्तस्तदा राजन्मगरे	२.५७.६	सोऽयमग्निस्तदा	३.८८.११	सोऽहं कृष्णेन वै राश्री	२.२५.३८
सोऽग्निं दीप्य विभज्यांशू	३.२८.७६	सोऽग्निसोऽनलसंयुतः	१.४६.३५	सोऽभिपिक्तो महातेजा	१.५.२६	साऽयमेतेः शतमूर्णः	२.११८.४१	सोऽहं तत्र सितोष्णीवान्	२.१.१४
सोऽग्निर्वृं मागतस्तत्र	३.२८.७७	सोऽनुज्ञातो हि सत्कृत्य	२.१००.२	सोऽभिमुत्य गदा घोरा	२.६०.३३	सोऽक्षिणो वामुदेवेन	२.६५.१४	सोऽहं तं पाणिना स्पृष्ट्वा	२.११०.३५
सोऽग्निर्मनः समुद्भूतः	६.२८.७३	सोऽनुभूय भुजंगानां त्रं	२.२६.६१	सोऽभिपिको महाराज	१.२५.२१	सोऽर्जुनो नाम मे पुत्रः	२.१६.८७	सोऽहं पितामहं देवं	२.११०.६०
सोऽङ्गणान्निस्सृतः कृष्णः	२.७.१६	सोऽनुमान्य सुरान्सर्वान्	२.५८.७५	सोमदत्तस्य दायदः	१.३२.७८	सोऽनर्द्धत महातेजा	२.३७.४५	सोऽहं प्रजानिमित्तं त्वां	१.६.४
सोऽचिन्त्यदयैकान्ते	३.१०.३३	सोऽन्तरिक्षगतो भूत्वा	२.१०८.३	सोमपः सुमहातेजा	३.६२.८	सोऽवगाहत निशंक	२.१४.१४	सोऽहं प्रजापतिं गत्वा	२.११०.५६
सोऽचिरेणैव कालेन	३.४१.४०	सोऽन्तरिक्षात्समुत्पत्य	३.५७.६७	सोम पुत्राश्च चाद्राजन्	१.१०.१७	सोऽवगाह्य नरेन्द्राणां	२.११०.२१	सोऽहं युगस्य पर्यन्ते	१.१७.४
सोऽच्छ्रयन् प्रथमं पादं	१.४६.६०	सोऽन्तरिक्षान्निपतितः	२.१०८.४	सोममण्डलपर्यन्ता	३.१६.२६	सोऽवतीयं गजासूरां	२.६३.२६	सोऽहं वाक्यसमाप्त्यर्थं	२.११०.६१
सोऽज्ञापयत संक्रुद्धः पुरुषा	२.३०.६५	सोऽपकृष्यत वेगेन जले	२.३७.५३	सोमन्ये जहुः केचिन्ने	३.३२.१७	सो बाच ममविद्यास्ति	२.६४.३६	सोऽहं विष्णोर्गतिं	२.११०.८१
सोऽज्ञापयत संरक्षः	२.२.१	सोपविश्यासन्ते शुभ्रे	२.१२१.७५	सोममर्षाद्रथजालानि	३.५५.१५१	सोबाच सुभगा येन भवेयं	२.६७.५६	सोऽहं स्वयं भूवचनाद	२.११०.६६
सोऽतिकायस्तु संभूढो	२.२६.३१	सोऽऽव्यतं सुनं ज्येष्ठं	२.१०८.२१	सोमश्चाप्यथ रोहिण्या	२.६७.६६	सोऽसि ब्रह्मविदां	३.१११.३४	सौकुमार्यो तथा रूपे	३.३.२२
सोऽतिविढो बलवता	३.५७.१६	सोऽपश्यद् वृक्षाखंडांश्च	२.६८.१०	सोमः श्वेतहवैर्भाति स्यन्दने	१.४४.२४	सोऽसि चमं च जग्राह	२.७३.७०	सौते सुमहदाख्यानं	१.१.५
सोऽतिविढो महाबाहु	२.११६.१५४	सोपसृत्य नदीतीरं	२.१२.१	सोमस्य भगवान्वर्णा	१.३.४०	सोऽसुरान्मुमहातेजाः	२.८७.२	सौनन्द च ततश्श्रीमान्	२.३५.६३
सोऽतिविढो महेश्वासः	३.५७.६३	सोपानभूतं स्वर्गस्य गगना	२.३६.६६	सोमस्य भरतश्रेष्ठ	१.११.५२	सोऽस्त्रजालैर्वह्निर्विधंनुभि-	१.४७.४१	सौवर्णवेदिकारतम्भं	२.११६.२३
सोऽन्मागारयुक्ताभिः	२.२८.७	सोऽपि कंसस्तथायस्त	२.३०.७५	सोमस्याप्यायनं कृत्वा	१.१८.७३	सोऽस्त्रप्रहाराभिहतः	२.४४.२७	सौभप्रमाणं च हलामुद्यत्वं	२.८६.१३
सोऽत्यंता पृष्ठतो	२.६६.१७	सोऽजवीत्सहसा देवीं	२.१०८.२२	सोमस्येति महत्मानं	१.२५.४४	सोऽस्त्रं तदभिदीप्यन्त	२.७३.४६	सौभाग्यं परमाप्नोति	२.८०.३२
सोऽत्यन्तस्त्वग्ने	३.१४.१०	सोऽभवद्गालवो नाम	१.१२.२४	सोमात्सोमः समुत्पन्नो	३.१७.२३	सोऽस्त्राणां पारतत्त्वज्ञः	२.१६.७८	सौभाग्यं करधो जैत्रस्तव	२.६५.४१
सोऽदरे तु विशेषं तु पिता	२.७०.२८	सोऽभिद्रुतः प्रजाभिस्तु	१.५.४५	सोमेन सह संयुक्तो	३.३२.२८	सोऽहंकदाचिद्देवानां	२.१.१३	सौमवंशोद्भवो राजा	२.५७.६०

सौवर्णाः पानकुम्भाश्च	२.२६.११	स्तूपमानश्च यज्ञान्ते	३.२५.४	स्थाणुभ्यो हिमवान्	२.१६.२५	स्थितं तु कथयं	२.७५.२२	स्निग्धशीतानिलवनं सर्वं	२.८.२४
सौरच्छदः सध्वजकि	३.५२.४०	स्तूपमान स्तवैर्दिव्ये	२.१२१.१४०	स्थाणुभंगश्च भगवान्	३.६६.२५	स्थितं वग्ण्यां मेघामं	२.११.१६	स्निग्धांजनचयप्रस्य	२.१२२.६८
सौहोत्रिरश्वदीर्घंगा कडो	१.२७.६	स्तूः मानश्च विबुधैः	३.२६.४६	स्थानं तस्या नगे विष्ये	२.२२.५८	स्थितश्चक्रमहस्तात	२.१७.११	स्निग्धैश्च शास्त्र	१.२०.५८
सौहोत्रिरभवजुङ्गः	१.२७.४	स्तोतव्यो यदि तावत्	२.६७.११	स्थानभागं च नृपते	२.५५.४५	स्थिता धर्मपरा विप्रा	३.८.३	स्निग्धैस्त्वत्तरशूतसृष्टं	२.३६.३३
स्कन्धवन्तः सुगन्धश्च	३.४१.६७	स्तोतुमिच्छसि मां देव	२.१२१.१२६	स्थानीकेन महता	३.५१.२८	स्थितिरेवा हि भैमानां	२.८८.१०	स्तुषां चोत्थाप्य तां	२.१०८.३५
स्तनाविच्छति या नारी	२.८०.३०	स्निग्धगम्भीरनिर्घोष	३.६८.२	स्थाने त्वां वारिवाहिन्यः	२.११०.४६	स्थिते त्वयि महाबाहो	३.७५.२७	स्नेहपूर्णं मनसा स्थितां	२.५२.१०
स्तनी कक्षो च वेदाश्च	३.७१.५५	स्त्रियाः कामयमानायाः	२.११६.४२	स्थानेनेह न नः कार्यं	२.६.२	स्थिते देवगुरौ तच्छ	३.७८.५	स्पर्शः प्राणश्च चेष्टा	३.६.८
स्तम्भयन्तो च बलिनी	३.५४.७५	स्त्रियोऽपि यस्यां	२.६८.२६	स्थाने भारपरिभ्रान्ता	२.३५.१२	स्थिते भीष्म जरासंधे	३.११३.६	स्पन्दिताः पाशजालैश्च	१.४५.१०
स्तम्भयित्वानयद्वीरं गुहां	२.८४.२७	स्त्रियो द्विरप्य यानानि	२.३२.२४	स्थाने भारपरिभ्रान्ता	२.४१.६१	स्थितो ब्रह्मासने	३.१६.४	स्पृहणीयो हि लोकस्य	२.२५.३५
स्तम्भैर्मणिमयैर्दिव्यैः	३.४१.५३	स्त्रियो ह्या वाहयेत्	२.७६.२	स्थापयामास भागेषु	२.३८.१६	स्थितो भूमिगतेनैव यो	२.३०.१४	स्पृहाप्रेरितकर्माणाः	३.१११.२६
स्तनं देवाधिदेवस्य	३.७२.६०	स्त्रीणां चारित्रलुब्धानां	२.३१.१४	स्थापयित्वा द्वारवत्यामाहुकं	२.८३.५४	स्थितोऽस्थिमैदामिष	३.५२.३३	स्फटिकैर्मणिवर्णा	३.१८.८
स्तवेनानेन गच्छन्ति	३.७२.१०१	स्त्रीनिमित्तमितो	२.६६.५०	स्थापयित्वा द्विबाहुत्वे	१.१२७.१४०	स्थितो घनुगृहे सौम्यो	२.२७.५४	स्फाटिकस्तम्भविवृतो	२.६६.४
स्तुतं त्रिदशगन्धर्वैर्यस्यो	२.४०.२०	स्त्रीभूताश्च तनः	३.१६.३८	स्थापयित्वा बिलद्वारि	१.३८.३८	स्थित्वा तस्मिन्सु	३.१४.१	स्फीतक्रोडावलम्बेन	१.४४.४४
स्तुनयो विष्णुसंयुक्ताः	३.२६.२४	स्त्रीरत्नमणि रत्नानि	२.८६.५६	स्थापयिष्यामहे सर्वानि	३.१०७.२६	स्थिरप्रसादाश्च सदा	१.१८.७७	स्फीताम् जलपदान्	१.५१.७
स्तुस्या स्तुतं हरिं	३.१००.१२	स्त्रीवक्रवर्गैः सकलेन्दुकल्पैः	२.८६.४७	स्थापितं सत्सुमाहात्म्यं	२.३२.१६	स्थूणाकर्णैर्न बाणेन	२.१२२.३८	स्फूर्ते नयनं चास्य	२.१०५.२५
स्तुवन्तं केशिहन्तारं	२.१२७.१३७	स्त्रीवश्यता रम्याप्यमाना	२.६६.५४	स्थाप्यन्तां मुनिखाताश्च	२.२८.१३	स्नानस्त्वलङ्कृतस्त्रय	२.१२७.३०	स्फुरत्केयूररत्नार्चिः	३.११४.३४
स्तुवन्ति देवाः सनतं	३.८८.६५	स्त्रीसहस्रोपचर्येण वपुषा	२.२५.२४	स्थावर जंगमं चैव	३.१३२.६	स्नातो तु जाह्नवीनोये	२.७५.३०	स्फुरत्पद्महाबाहु	३.११४.२४
स्तुवन्ति मुनयश्चैव	२.५०.६५	स्त्रीहन्ता पशुहन्ता च	३.६५.३५	स्थावरा जङ्गमाश्चैव	३.२२.१७	स्नात्वाश्च वाससी	२.७६.१६	स्फुरन्तश्च तथा	३.१२२.५
स्तुवन्ति यान्तं	३.५२.२२	स्थ लजाः पक्षिणोऽज्जाश्च	१.३.११७	स्थावराणां च भूतानां	२.३२.३५	स्नात्वा स्त्री प्रातरुत्थाय	२.७८.१६	स्मयमानश्च शनैर्कैर्प्राहा	२.२८.६२
स्तूयते पुण्डरीकाक्षो	२.१२७.११३	स्थलीप्रायासु रथ्यासु	२.८.२१	स्थितमंगिरसं दृष्ट्वा	२.१२२.३५	स्निग्धगम्भीरनिर्घोषं	२.११६.४७	स्मरणं वनतेयस्य	२.१२१.६१

श्रीहरिवंशपुराणम् ॥ श्लोकानुक्रमणो

१५६

स्मरणादेव सर्वेषामंहसां	२.१.११	स्रवन्ति तत्र बाष्पण्य	२.६८.२२	स्वधर्मसंप्रयुक्तेषु	३.६५.७	स्वयंप्रभायाः शाण्डिल्या	३.६२.२	स्वयोनित्ते महातेजस्तोयं	३.६२.३६
स्मरतश्च हरे रूपं	३.११४.१४	स्रष्टा च योऽसौ	३.८०.४१	स्रष्टुमलिनैस्तीरैः	२.१६.२६	स्वयंभुवः परा वेदा	२.११०.७४	स्वरवर्णैर्द्विगताकारैर्निगूढो	२.६७.२६
स्मर त्वं पूर्वकं भावं	२.१०६.४६	स्रष्टा धर्मस्य कवचाव्यः	१.५.१२	स्वापित्येकार्णवे चैव	३.१०.१२	स्वयंभुवा शक्रपुराः	३.३७.३३	स्वरूपैश्चाप्यरूपैश्च	३.३२.७
स्मर मारायणात्मानं	२.१४.३६	स्रष्टारं सर्वभूतानां व्यक्ता	२.४८.३२	स्वप्नरूपेण तेषां वै	२.२.२६	स्वयंभुवे च विस्वाय	२.५१.५७	स्वर्गं चन्द्रेषु चान्येषु	२.८८.६७
स्मरन्ती पतिभावं	२.११७.३०	स्रस्तरश्मिप्रतीदो ती	१.२४.२३	स्वप्नायमानो जलदैः	२.१८.४७	स्वयंभुवोपीह परं	२.११०.७१	स्वर्गप्रकाशं कृत्वा च	३.२८.१८
स्मर तं विद्धि देवेश	३.८८.१४	स्वकर्मद्रव्ययुक्ताभिः	२.२६.५	स्वप्नेनापि न दृष्ट्वाहं	२.६७.१३	स्वयः परितोषाञ्च	३.६४.२४	स्वर्गं गताश्चाप्सरसां	२.८६.८८
स्मरन्ति ह्यात्मनो दोषं	१.१६.१७	स्वकर्मनिरताः सर्वे	१.२१.१६	स्वप्ने निदर्शयामास	१.२६.४७	स्वयंभूरिति विज्ञेयः	३.३३.३६	स्वर्गमारोग्यमेवाय	१.१८.७५
स्मर स्वप्रकृतिं पूर्वामि-	२.१२७.७२	स्वकायगनमूर्धां वै	२.४३.५६	स्वप्ने क्षीयते ह्येषा	१.५०.३१	स्वयंवरकृतं दोषं विदित्वा	२.५२.३	स्वर्गस्था पितरो ये च	१.१६.३
स्मरामि भामिनि वचो	२.११८.२३	स्वक्ष रथवरादग्रं	१.४३.४	स्वबलविद्रुतं दृष्ट्वा	२.१०५.३५	स्वयंवरकृतेनासौ विष्णु	२.४८.३७	स्वर्गस्यापि हि तत्स्वर्गं	१.८६.६३
स्मारितस्स पुरावृत्तममृत	२.४१.६	स्वक्षी भवेयमिति	२.८०.१८	स्वभावाज्जायतो सर्वं	३.१६.१३	स्वयंवरो च सा कन्या	२.६१.४३	स्वर्गाद्ब्रह्मं ब्रह्मलोको	२.१६.२६
स्मृतास्ते प्राच्यसामान्	१.२०.४४	स्वगतं कमहाभृग दुरारोहं	२.३६.६५	स्वभावात्क्षयमायाति	३.१६.३५	स्वयंवरो च नयस्ता त्वं	३.६२.१७	स्वर्गान्नीति पारिजातो	२.७७.३
स्मृतिः प्रत्यवमशश्च	१.२१.१८	स्वगृहे सर्वलोके वा	१.४८.७६	स्वभावेनाभवन्त्यास्या	१.६.१३	स्वयं विज्ञापितो गत्वा	२.६८.१५	स्वर्गस्तिदादानयित्वा	२.६७.३२
स्यन्दनैः काञ्चनापीडं	२.५६.१८	स्वच्छन्देन प्रवेशश्च न	२.६१.८	स्वभावोन्नत भावत्वाद्	२.५५.५८	स्वयं विष्णुर्भवान्नि	३.८८.४	स्वर्गीयानि च रत्नानि	२.६६.४५
स्यमन्तकं च नापयद्वत्वा	१.३६.२०	स्वच्छं चैव पुरं तत्र	२.३७.५७	स्व राज्य दातुकामी तु	२.५०.६	स्वयं शक्रेण देवेन	२.६७.३०	स्वर्गे तपोभूतां वासः फलं	२.३२.१०
स्नादामलम्बाभरणः	२.१४.२८	स्वजातिं चैव भावं	२.१२४.६	स्वं स्वं निवेशनं सर्वे	२.३८.१३	स्वयं स्वयंभुवा सृष्टं	१.४८.४३	स्वर्गे शक्रानुयानेषु	१.४४.८
स्नग्दाममालाभरणः	३.६१.७	स्वतन्त्रश्च विहङ्गोऽसौ	१.२१.४३	स्वयं च दक्षसंप्राप्तो	३.२३.७	स्वयं स्वयंभूर्भगवान् बुद्ध	२.१६.२४	स्वर्ग्यं यशस्यमायुष्य	१.४३.३३
स्रग्विणो बाग्मिनः	३.४२.१४	स्वतन्त्रस्त्वणुहाज्जज्ञे	१.२३.१८	स्वयं नष्टः परामूलं	३.१०८.४	स्वयं ही दर्शनं तेषां	२.८२.२४	स्वर्ग्यं रत्नविलोपेनधर्षणा	२.६६.५६
स्रजः पद्मपलाशानामा	३.५६.३५	स्वतेजस्तेजसा चैव	२.१६.३८	स्वयंपालाः स्वयं चोरा	३.४.२८	स्वयमागत्य देवेन्द्रो	२.५०.६७	स्वर्गशृंगी च कपिलां	३.१३५.८
स्रजं तदावध्यति	३.५१.७८	स्वदेशेभ्यः परिभ्रष्टा	३.४.२६	स्वमं प्रक्षालनं चापि	२.७८.२५	स्वयमात्मकृतं कर्म शुभं	२.३२.३६	स्वर्भानुना हते सूर्ये	१.३१.१३
स्रवत्यसितपत्रास्त्रि किमर्थं	२.६६.२७	स्वदोषेणैव दग्धस्य	२.३२.४४	स्वयं प्रक्षालयाना स्त्री	२.७६.६१	स्वयमेव हि यत्कर्म	३.३२.५०	स्वर्भानुर्वक्रयोषी तु	१.४३.२३

स्वर्भानुवृषपर्वा च	१.३.८५	स्वान्यायुधानि संगृह्य	१.४१.६८	हंसश्च डिम्भकश्चैव	३.१०५.२६	हताः केचिन्महाराज	३.१२२.१३	हर्तृदनिवमुख्यैश्च	३.५८.६५
स्वर्भानोस्तु प्रभा	१.३.६१	स्वामिनः कुत्रः वसतिः	३.७६.८	हंससारसपूर्णेषु नदीनां	२.१६.५२	हता नो बहवो गोपा	२.२४.५६	हर्तृविरिर्गजैरश्चैव	३.६०.७
स्वल्पमर्थं पुरस्कृत्य	२.७५.२५	स्वायंभुवेन योगेन यश्चायं	२.१६.१५	हंसस्य करदो विष्णुः	३.११४.१७	हतान्सर्वान्समालोक्य	३.६६.५	हर्तृवैषा यथा कन्या	२.४.३४
स्ववीर्यादिघ्नोर्दंष्ट्रो	३.५०.१६	स्वायंभुवो मनुः स्तात	१.७.४	हंसस्य डिम्भकस्याथ	३.१२१.१०	हता ब्रह्माद्विषः सर्वे	२.१००.७	हतो मधुवने वीरो	१.४१.१४०
स्ववीर्येणोदधेस्तुल्यः	३.५०.१७	स्वारोचिषस्य पुत्रास्ते	१.७.१५	हंसं हंसगतिं वीरं	३.१२४.७	हतायां सर्वमायायां	२.१०६.३६	हतोऽयमिति विज्ञाय	२.११६.१५६
स्ववेदमनि सुखासीनं	२.७२.२	स्वाहाकारस्य विषये	२.१२२.३१	हंसा गच्छामि वां हन्तुं	३.११६.१५	हतायामथ शक्त्या	३.५४.४६	हतोऽयमिति विज्ञाय	२.१०४.४२
स्वस्तिकायतनं दृष्ट्वा	२.२६.४५	स्वाहापतिः सामगीनः	३.६२.६	हंसाः परमहंसाश्च	३.१०७.१७	हताश्च तु रथं त्यक्त्वा	२.५६.६१	हतो हंसो हतो हंस	३.१२८.१२
स्वस्ति तेऽस्तिवति चोक्तो	१.३१.१४	स्वाहि पुत्रोऽभवद्वाजा	१.३६.३	हंसा परिचितां चक्रुस्तां	२.६२.१२	हतास्त्वोऽपि रणे वीरो	२.६३.११७	हतो च तव पुत्रत्व	१.५२.३६
स्वास्ति वाच्य द्विजानादो	३.१३२.५५	स्वेन नाम्ना परिज्ञान	१.५०.३	हंसी तथेति चोवाच	३.६३.४४	हतास्तु माया दैत्यानां	३.६३.२	हत्वा कंसं महावीर्यं देवै	२.५०.१
स्वस्ति वोऽस्तु गमिष्यामि	२.५१.४६	स्वेपु स्थानेषु	३.४०.१८	हंसेन डिम्भकेनाथ	३.१२७.७	हतास्ते यमदण्डेन	२.१२१.१३०	हत्वा गजं घोरमुदग्ररूपं	३.८२.३३
स्वस्त्यस्तु देवेभ्य इति	१.४४.५२	स्वेपु स्वेपु जगन्नाथ	३.८८.२६	हंसैः प्रहसितानीव	२.१६.१८	हते च त्रिपुरे देवैर्वाचो	३.१३३.८२	हत्वा गोपालकान्सर्वान्	३.११६.७
स्वस्त्यस्तु भवते	३.११२.१२	स्वैः प्रभावैश्च विविना	३.२६.१६	हंसैर्गत्वा तदारुणातं	२.६६.१५	हते त्वं शम्बरे वीरे	२.१०६.५३	हत्वा जरासन्धबलं	२.३१.२६
स्वस्त्यस्तु भवतो लोके	२.२४.६६	हंस एव प्रियो मम	३.११४.४	हंसो हि यत्र पतितस्तत्रासो	३.१२६.३	हते त्वयि ममास्त्रेण	२.१०५.७५	हत्वा दैत्यगणान्सर्वान्कंसं	२.५५.६२
स्वागतं च लेखरश्रेष्ठ	२.५५.६४	हंसकारण्डवोदघुष्टां	२.११.३१	हनदर्थं तु विज्ञाय	३.५६.१००	हते पितरि दुःखार्ता	१.३६.६	हत्वा निवेशयामास	१.२६.३४
स्वहस्तमुक्षतः परिधैः	१.४५.७	हंसकुवकुठबकत्राश्च	३.४५.३	हतपुत्रास्मि भगवन्देवैर्ध	२.८६.६	हते प्रमर्दने दैत्ये	२.१०५.८१	हत्वा निशुम्भं नरकं	३.८२.३७
स्वागतं ते महाबाहो यदूनां	२.४६.७	हंसकूटस्य यच्छङ्गमिन्द्र	२.६८.५६	हतः प्रसेनः सिंहेन	१.३६.१०	हते भीमे निसुन्दे च	२.६४.६	हत्वा पञ्चनदं नाम	२.६३.८६
स्वागतं ते सुरश्रेष्ठ पथ	१.४६.२५	हंसकेतुमयोवाच प्रष्टुम्न	२.६६.४२	हतं लक्षं महाराज	३.१२२.२२	हते शस्त्रे महाराज	२.१२६.६६	हत्वापि मां न शक्तस्त्वं	१.५.५४
स्वाहून्याय सुगन्धीनि	२.१३.८	हंसप्रभाय हंसाय चक्ररूपाय	२.५१.५८	हतशिष्टास्ततो दैत्याः	३.१२३.२२	हतेऽमवर्षे तुमुले	३.४५.२६	हत्वा मां ब्रूहि राजेन्द्र	३.१००.४३
स्वानि स्वानि बलाघ्राणि	२.५६.१६	हंसबायुमनोभिश्च	२.६७.२	हतस्त्वरिष्टो बलवान्निः	२.२२.३१	हतेष्वथ नृपेष्वेवं	३.७३.१७	हत्वा मृगान्वराहाश्च	१.१३.२
स्वान्यनीकानि शुक्लान्तः	३.५६.६५	हंसश्च डिम्भकश्चैव	३.१०५.१	हतस्सोऽयं मया कंस	२.३२.१४	हर्तृदनि वमुख्यैस्तु	३.५८.६२	हत्वा मृगान्सुबहुषो	३.१०६.८

वीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१५८

हत्वा रिपुगणास्तुष्टिर	३.५६.५६	हयग्रीवं च दितिं तया	२.६३.५८	हरितालाद्रपीतेन स	२.२०.२०	हर्तारः पररत्नानां	३.४.१६	हविर्मानात् षडाग्रेयो	१.२.२६
हत्वाष्टो तत्र योधानां	३.५५.८६	हयग्रीवं निशुम्भं च	३.१०२.२१	हरितोऽपि समुद्रस्य द्वीपं	२.३८.२६	हर्म्यपृष्ठे बद्धमाना	२.६६.२३	हविष्मान् काश्यपश्चापि	१.७.७०
हन्ते भोजने चैव	३.८१.८	हयग्रीवश्च सुमहान्	२.१२१.४३	हरितोऽयं महाबाहुस्त्वामरे	२.३८.१०	हर्म्येषु चान्ये शशि	२.६५.८	हवींष्यन्ते पिबन्त्येव	३.३२.१५
हनिष्यत्येव वा युद्धे	३.११८.४४	हयग्रीवस्तु दितिज	३.५३.१०	हरितो रोहितस्याय	१.१३.२८	हर्म्ये स्त्रीगणमप्यस्थं	२.११६.५४	हव्यकव्यबहुः श्रीमान्	३.४८.७
हन्त शृङ्ग प्रतीच्छति	२.७३.४४	हयग्रीवस्तु दितिजः	३.५५.८८	हरिनेत्रो हरिश्मश्रु	३.५२.१०	हर्म्यस्य तु दायादो	१.३१.५१	हसते जल्पते वीरी	१.२०.१३२
हन्त तस्मै प्रदास्यामि	३.६७.२६	हयग्रीवस्तु बलवान्	३.५०.८	हरिः पुराणः पुरुषोत्तमः	३.८०.४८	हर्म्यश्चरयसंयुक्ते सुपर्ण	१.४२.२६	हसन्तमेनमद्राक्षं करवं	३.११८.१४
हन्त ते कथयिष्यामि	१.४.३१	हयादस्मान्महेन्द्रोऽपि	२.२४.६३	हरिः प्रमुनेत्रसस्रचित्रो	३.५२.२१	हर्म्यश्चरय महातेजा	२.३७.३८	हसन्नुवाच भगवान्	१.२६.६५
हन्त ते कथयिष्यामि	१.१६.६	हयानां च सहस्राणि	२.१२१.३६	हरियुद्धं मातलिसुनो	२.६६.६०	हर्म्यश्चरेनाशुगतिना सक्तेन	२.४४.४	हस्तप्रमुक्तजल यन्त्रकैश्च	२.८६.५०
हन्त ते कीर्तयिष्यामि	१.३१.४	हयानां चाष्टसाहस्रं	२.१०५.२०	हरिरेको हरिश्मश्रुर्नामा	३.६४.१०	हर्म्यश्चेष्वथ नष्टेषु	१.३.२०	हस्ताभरणपूरान	१.१६.२०
हन्त ते कथयिष्यामि	१.४१.१७	हयानां द्वेयमाणां	३.५४.३०	हरिर्जिह्वाह कुपितो	२.१२४.२६	हर्म्यं वारि नेत्राभ्यां	२.३०.५८	हस्ताविच्छति या नारी	२.८०.३२
हन्त ते कथयिष्यामि	२.२८.५७	हयाश्च चतुरो हत्वा	३.६६.२६	हरिवंशसमाप्तो तु सहस्रं	३.१३२.७१	हर्म्यं पूरणं वक्त्रेण साश्रु-	२.२५.१६	हस्तिनां कलहे शोरे	२.२२.६८
हन्त ते वर्तयिष्यामि	२.६१.४	हयेभ्यो यवसं दत्त्वा	२.२६.४१	हरिवंशोऽत्र वृत्तान्ताः	३.१३४.१	हर्म्यं लेभे ततो देवी	१.६.४६	हस्तिभद्रः पितरकः	२.१०६.१८
हन्त यस्ते प्रवक्ष्यामि	३.१३२.५	हयो हयं गजो नागं	३.५७.३०	हरिवंशे पुराणे तु	३.१३५.१	हर्म्यं यन्त्रं तु सर्वेषां	२.१२१.६२	हस्तेन जिह्वामाकुच्य	३.१२६.१२
हन्ता सख्युर्महावीर्यो	३.६५.३६	हयग्रीवोऽनं श्रीराणि	३.१३०.११	हरिवंशे पुराणे तु	३.१३५.२	हर्म्यं विष्णुतनेत्रायाः	२.११६.६६	हस्तैः पार्श्वे	३.५७.३२
हन्तुकामो रणस्लाघो	३.६४.२१	हरं च हरिरूपेण	२.१२५.२६	हरिवंशे पुराणे तु	३.१३५.२	हर्म्यं संवर्तकं नाम सौमन्यं	२.३५.६०	हस्तोच्छ्रितमुखा वन्या	२.१०.२०
हन्तु मच्छज्जगन्नाथं	३.६३.१७	हरश्च बहुरूपश्च	१.३.५१	हरिवंशे पुराणे तु	३.१३५.२	हर्म्यं संवर्तकं नाम सौमन्यं	२.४३.६	हस्त्यश्चरयानादि	३.१३२.५१
हन्तुर्मच्छतदा दैत्यमादाय	३.१२३.२०	हरसि प्राणिनो देव	३.८८.४५	हरिश्मश्रुर्गन्तमन्तो	२.१०६.८२	हर्म्यं सिंहमुखं कस्य	२.१२१.१००	हस्त्यश्चरयवृन्दाश्च चकार	२.८४.६५
हन्यमाना हता राजन्	३.७८.२०	हराय भीतिरूपाय	३.८७.२६	हरिः सर्वत्रागो विष्णुर्द्वयं	३.६२.२१	हर्म्यं मुष्ण्य रामस्तु सपेन्द्र	२.३५.६६	हस्त्यश्चरयसंपूर्णं पदातिगण	२.३२.२२
हन्यमानोऽसुरगणैः	३.१३३.६१	हरालयं सुराः सर्वे	३.१३३.३०	हरिस्तु रयमाह्वय	३.१२०.८	हर्म्यं मुष्ण्य रामस्तु सपेन्द्र	२.४३.१६	हा गतिं कां गमिष्यामि	२.६७.१७
हम्भारवैश्चवत्सानां	२.१७.१७	हरिणाक्रीडनं नाम	२.१४.१८	हरे हर्म्यश्चरयैः निवर्णनं	२.१०.३०	हविर्धं सुकृति ज्योति	१.७.१४	हारशोभितसर्वाङ्गी मुकुटो	२.४.३८

हाराहोण च पीनने	२.२५.०३	हिमवन्तं च मेघं च	३.१२.५	हिरण्यगर्भो भगवान्	३.३६.५	हृतावाः स्म शोच्या	२.१२१.८	हृष्टाः संपरिमोदध्वं	३.५६.५६
हाराश्च मलयश्चैव चन्दना	२.६६.७१	हिमवन्तं च शैलेन्द्रं	३.३५.४६	हिरण्यगर्भो रूपज्ञो	२.१२१.१२८	हृतराज्यस्तदा राजा	१.१४.५	हृष्टेष्वमुरसधेयु नदस्तु	३.६५.८
हासितं कटजैर्वर्णैः	२.१०.६	हिमवांश्च महाशैलः	३.२७.८	हिरण्यकल्पमिश्र स	२.७६.७	हृतराज्याश्च दैतेया	३.३१.१३	हृष्टो जगाम राजाडय	१.२६.३८
हासं कुर्वन्तुष्वेव	३.११६.१	हिमवान् हिमसंपाने	३.२८.४१	हिरण्यरेतः सुमुख	३.६२.२६	हृताहिं क्रमता भूयस्तदा	१.४१.१६०	हृष्टो ह्यमिषभोजयानामभि	२.६६.५३
हास्य मेतद्यदुश्रेष्टा	३.११५.३३	हिमवान् हेमकूटश्च	२.१०६.१५	हिरण्यरेतास्त्रिशिखस्ततो	३.३३.१५	हृताहं क्रमता भूयस्तदा	१.५२.४२	हृष्यते वै महादेवी	१.२६.३६
हा हतास्म महाबाहो	२.३१.३	त्रिमांशुकुन्दप्रतिमं	३.५१.६०	हिरण्यरोम वेदशिराः	३.६६.७	हृतेन शम्बरो बाल्ये येन	२.६२.२५	हेतवश्च मया तस्य	२.७०.४
हाहाकारो महाशब्दो	३.५६.१०	हिरण्यकवचाः सर्वे	३.४६.२४	हिरण्यरोमा पर्जन्य	१.७.२६	हृतो यदेव प्रद्युम्नः	२.११०.१	हेतुः स नास्ति स्यात्तेन	२.६२.३७
हाहाभूतं जगत्सर्वं तत्काल	२.६०.४६	हिरण्यकशिपुर्द्वैत्यो	३.४५.१२	हिरण्यरोमेत्याहुयं दानिणा	२.५६.१३	हृत्वा स पृथिवीं कृत्स्नां	१.४१.१०२	हेमकर्महाघण्टैर्वाणिर्वारि	२.४२.३
हाहाभूतेषु सर्वेषु	२.१२६.१०	हिरण्यकशिपुर्द्वैत्या	१.४५.६६	हिरण्यवर्णमभवत्तदण्ड	१.१.२६	हृदयं शम्बरस्याय	२.१०७.२७	हेमकाञ्चनवृक्षाद्यं	३.३५.२१
हाहेति कुर्वन्तस्तस्य	२.२०.३३	हिरण्यकशिपुर्योऽसौ	१.३४.२६	हिरण्यवर्णा या देव्या	१.२५.१६	हृदयादसृजद्गावो	३.२०.१४	हेमातालो महादण्डः	३.५१.३१
हिसया विहृष्यन्तो	१.१६.५	हिरण्यकशिपुश्चैव दानवो	१.४५.२५	हिरण्यस्य सुवर्णस्य	२.३२.६२	हृदयाद्देवदेवस्य	३.३६.६	हेमातालो महादण्डः	३.५१.३१
हिसायोर्गैरयोगात्मा	३.१७.४२	हिरण्यकशिपुश्चैव महाबल	२.४८.१५	हिरण्याऽसुताः पञ्च	१.३.७६	हृदये ताडितस्तेन	२.१०६.५	हेमपत्रैरुपचितं घातु	२.४७.३४
हिडिम्बं ताडयामास	३.१२६.३६	हिरण्यकशिपुश्चैव रास	१.३.८८	हिरण्यालो हृते दैत्ये	३.३६.२२	हृदये निहितं वैद्याश्चन्द्रनं	२.११७.५५	हेमपुष्करसंच्छन्नं	३.४६.७०
हिडिम्बस्त्वय दुष्टात्मा	३.१२६.३४	हिरण्यकशिपुश्चैव व्याजहार	३.३१.१०	हीनप्रतिष्ठाः काल्लोकान्-	२.८५.४	हृषीकेशोऽपि भगवान्	३.८८.४७	हेमशृंगो महाशैलस्तथा	३.४६.६८
हिडिम्बो राक्षसेन्द्रस्तु	३.१२६.४	हिरण्यकशिपुस्त्रत	३.४२.८	हुंकारेणैव निर्भस्तस्य	३.३६.१६	हृषीकेशोऽपि भगवान्	२.८८.३३	हेमसूत्रा महाकाशवाप-	२.६४.१२
हितकेशोऽर्ध्ववक्त्रश्च	३.४६.४	हिरण्यकशिपोः पुत्रः	३.४३.५	हुनाशनं ज्वलितशिलो	३.११.१७	हृषुकुक्कुटसंनादं वनं	२.२२.५५	हेमसूत्रा महाकाशवाप-	२.६४.१२
हितानुबन्धसहितं कार्यं	२.७१.१०	हिरण्यकशिपोः पुत्रा	१.३.७२	हुताशनाकंभुनडिङ्गनामै	१.४१.१३२	हृष्टपुष्टं स्वरस्तत्र	३.६६.२५	हेमसूत्रा महाकाशवाप-	२.६४.१२
हिताय जगतोऽद्यापि लोके	२.७१.३६	हिरण्यकशिपोः पुत्राः	३.३६.३३	हुनाशमिक दीघन्त राज्य	३.६६.१०	हृष्टसैन्यो महाबाहुः	३.५८.२६	हेमसूत्रा महाकाशवाप-	२.६४.१२
हितार्थं मुरमत्यानां	१.४१.१४	हिरण्यकशिपोः पुत्राः	३.४८.१४	हुत्वाग्निं विधिवत्सा तु	१.३२.८४	हृष्टा प्रमुदिता सर्वापुरी	२.४५.६	हेमसूत्रा महाकाशवाप-	२.६४.१२
हित्वा गर्भतनुं सा तु सहसा	२.४.३७	हिरण्यगर्भो भगवानुषित्वा	१.१.३०	हुत्वाग्निं विधिवद्वाजा	२.५४.६	द्रष्टाः प्रमुदितास्सर्वे	२.४७.४२	हेमसूत्रा महाकाशवाप-	२.६४.१२

श्रीहरिवंशपुराणम् :: श्लोकानुक्रमणी

१६०

हं हयास्तालजडपादः	१.१३.३१	होताऽस्य भगवान्	१.२४.२४	ह्रस्वान्यति प्रमाणानि	१.४१.८	ह्रियेऽहं कृष्ण रत्येन	२.१४.३२	ह्रीः श्रीसंक्ष्मीः स्वया	२.१०६.१४
होता वैशाख नमुचिदूतः	३.५४.५	होत्राग्निदीप्त शिरसं	३.५.६	ह्रियमाणः प्रसम्भेन स	२.१४.३०	ह्रीः श्री षुतिस्तथा	२.७७.१६		
होता वैशामवद्राजन्	३.२३.२१	हृदयैव तु विक्रान्तः	३.३६.३४	ह्रियाभिभूतो राजेन्द्र	१२.५१.१७	ह्रीं श्रीं गंगां च गंधवा	२.१२०.१४		

इति श्रीहरिवंशपुराणम्, समाप्तम्,

